।। कोबातीर्थमंडन श्री महावीरस्वामिने नमः ।।

।। अनंतलब्धिनिधान श्री गौतमस्वामिने नमः ।। ।। गणधर भगवंत श्री सुधर्मास्वामिने नमः ।।

।। योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।। ।। चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीमद् कैलाससागरसूरीश्वरेभ्यो नमः ।।

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर

पुनितप्रेरणा व आशीर्वाद

राष्ट्रसंत श्रुतोद्धारक आचार्यदेव श्रीमत् पद्मसागरसूरीश्वरजी म. सा.

जैन मुद्रित ग्रंथ स्केनिंग प्रकल्प

ग्रंथांक : १



श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, गांधीनगर-३८२००७ (गुजरात)
(079) 23276252, 23276204
फेक्स : 23276249
Websiet : www.kobatirth.org
Email : Kendra@kobatirth.org

शहर शाखा

आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
शहर शाखा
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
त्रण बंगला, टोलकनगर
परिवार डाइनिंग हॉल की गली में
पालडी, अहमदाबाद – ३८०००७
(079) 26582355

भारत भैषज्य रत्नाकर

(चतुर्थो भाग)



रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह.
ऊंझा (गुजरात).

सत्यकी रक्षाके लिये

यह प्रकट कर देना उचित प्रतीत होता है

कि

इस ग्रन्थके तीसरे और चौथे भागकी तैयारीमें

मेरी अर्द्धाङ्गिनी

श्रीमती सुशीलादेवी, विदुषी विशारदा

ने

बहुत अधिक परिश्रम किया है

पुस्तकके टाइटिल पर मेरा अकेलेका नाम होना केवल

पुरुष स्वभावकी ज्यादती का द्योतक है।

वैद्य गोपीनाथ भिषग्रत्न
हल्दौर निवासी

विषयानुक्रमणिका

चिकित्सापथप्रदर्शिनी

पृ. ८२३ से ९०१ तक





भारत-भैषज्य-रत्नाकरः



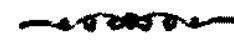
चतुर्थो भागः



॥ श्री धन्वन्तरये नमः ॥



अथ मङ्गलाचरणम्



प्रणम्य परमात्मानं सच्चिदानन्दविग्रहम् ।
रत्नाकरस्य भागोऽसौ चतुर्थः सम्प्रकाश्यते ॥
दृष्ट्वा गदगृहीतान्हि प्राणिनोऽनुजिघृक्षया ।
ग्रन्थप्रकाशनपरा प्रवृत्तिरियमादृता ॥





अथ मकारादिकषायप्रकरणम्

(४९७६) मञ्जिष्ठादिक्काथः (१)

(वृ. नि. र. त्वग्दो.; वृ. नि. र. वातरक्ता.; भा. प्र. म. खं. कुष्ठा.; यो. चि. म. अ. ४; ग. नि. कुष्ठा. ३६)

मञ्जिष्ठापिचुमन्दचन्दनघनच्छिन्नागवाक्षीविषा-
त्रायन्तीत्रिवृतासनद्विरजनीभूनिम्बपाठावृषैः ।
गायत्रीत्रिफलापटोलकटुकाकीटद्विषत्पर्पटै-
रुग्रावल्गुजया सवत्सकयुतैः क्काथं विदध्याद्भिषक् ॥
कण्डूमण्डलपुण्डरीककिटिभैः पामाविचर्चिव्रणैः
सिध्मश्वित्रविसर्पदद्रुरकसैर्व्याप्ताः प्रसुप्तत्वचः ।
ये चान्ये गलरोगचक्षुवदनघ्राणच्युताः कुष्ठिनः
प्राप्यैनं तु महाकषायमचिरात्स्युःकामरूपान्विताः॥

मजीठ, नीमकी छाल, लालचन्दन, नागरमोथा, गिलोय, इन्द्रायणकी जड़, अतीस, त्रायमाना, निसोत, असना वृक्षकी छाल, दोनों प्रकारकी हल्दी (हल्दी, दारु हल्दी), चिरायता, पाठा, बासा, खैरकी छाल, हर्र, बहेड़ा. आमला, पटोल (परवल,) कुटकी, बायबिड़ंग, पित्तपापड़ा, बच, बाबची और इन्द्रजौ समान भाग लेकर काथ बनावें ।

यह काथ कण्डू (खाज), मण्डल, पुण्डरीक कुष्ठ, किटिभकुष्ठ, पामा, विचर्चिका (खुजली), व्रण, सिध्म, श्वित्रकुष्ठ, विसर्प, दाद और रकसा तथा सुन्नबहरी (सुप्तता) आदि समस्त कुष्ठोंको नष्ट करता है । जो कुष्ठी गलरोग, चक्षुरोग और मुख रोगादिसे पीड़ित हों या जिनकी नासिका आदि गिर गई हों उनको भी इससे शीघ्र ही आराम हो जाता है ।

(४९७७) मञ्जिष्ठादिक्काथः (२)

(यो. र. आगन्तुकज्वर; ग. नि.[१] ज्वरा.)

मञ्जिष्ठाशिखिबालबिल्वकशठीशुण्ठीकरञ्जनिशा-
त्रायन्तीबृहतीवृषोषणकणाक्काथस्तु पेपीयते ।
यैः प्रातः प्रणिधाय लक्षितगदैः सद्वैद्यराट् सन्निधौ
तस्यापि प्रशमं व्रजन्ति सहसा सर्वाङ्गजा व्याधयः॥

मजीठ, चीतामूल, बेलगिरी, कचूर, सोंठ, करञ्जकी छाल, हल्दी, त्रायमाना, बनभंटा (बड़ी कटेली), वासा, कालीमिर्च और पीपलका काथ पीने से सर्वाङ्गगत रोग (ज्वरादि) नष्ट होते हैं ।

(यह काथ सन्निपात ज्वरके लिये विशिष्ट है)

(४९७८) मञ्जिष्ठादिक्काथः (३)

(र. का. धे. कुष्ठा. ४०)

मञ्जिष्ठा खदिरं कुष्ठं बाकुची देवदारुकम् ।
पाठापर्पटयष्ट्याह्वकटुकाराजवृक्षकम् ॥
सहदेवी निम्बविम्बा बदरी वृषभोऽमृता ।
वचा करञ्जकाकोली मञ्जिष्ठाख्यकषायकः ॥

मजीठ, खैरसार, कूठ, बाबची, देवदारु,

१. गद निग्रहमें हल्दीका अभाव है

पाठा, पित्तपापड़ा, मुलैठी, कुटकी, अमलतास, सहदेवी, नीमकी छाल, कन्दूरी, बेरीकी छाल, वासा, गिलोय, बच, करञ्जकी छाल और काकोली समान भाग लेकर काथ बनावें।

यह काथ कुष्ठको नष्ट करता है।

(४९७९) **मञ्जिष्ठादिक्वाथः** (मध्यम) (४)

(यो. त. त. ४१; व. से. कुष्ठा.; वृ. यो. त. त. ९१)

मञ्जिष्ठारिष्टवासात्रिफलदहनकं द्वे हरिद्रे गुडूची
भूनिम्बो रक्तसारः सखदिरकटुका बाकुची व्याधिघातः।
मूर्वादन्तीविशालाकृमिरिपुजटिलात्रायमाणः सपाठा
श्यामानन्तापटोलैः समरिचमगधैः साधितोऽयं कषायः॥
पीतो हन्यात्समस्तान्सकल-
तनुगतान्रक्तजातान्विकारान्।
कण्डूविस्फोटकादीनलसक-
विषमश्वित्रपामादिदोषान्॥

मजीठ, नीमकी छाल, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, दोनों हल्दी (हल्दी, दारुहल्दी), गिलोय, चिरायता, लालचन्दन, खैरसार, कुटकी, बाबची, अमलतास, मूर्वा, दन्तीमूल, इन्द्रायणमूल, बायबिड़ंग, बालछड़, त्रायमाना, पाठा, काली निसोत, अनन्तमूल, पटोल, काली मिरच और पीपल समान भाग लेकर काथ बनावें।

यह काथ कण्डू, विस्फोटक, अलसक, श्वित्र और पामा इत्यादि समस्त रक्तविकारोंको नष्ट करता है।

(४९८०) **मञ्जिष्ठादिक्वाथः** (मध्यम) (५)

(वृ. यो. त. त. १२०; भा. प्र. म. खं. कुष्ठा.)

मञ्जिष्ठा बाकुची चक्रमर्दत्वक्पिचुमन्दकः।
हरीतकी हरिद्रा च धात्री वासा शतावरी॥
बला नागबला यष्टी मधुकं क्षुरकोऽपि च।
पटोलस्य लतोशीरं गुडूची रक्तचन्दनम्॥
मञ्जिष्ठादिरयं काथः कुष्ठानां नाशनः परः।
वातरक्तस्य संहर्त्ता कण्डूमण्डलखण्डनः॥

मजीठ, बाबची, पवांड़, दालचीनी, नीमकी छाल, हर्र, हल्दी, आमला, बासा, सतावर, बला (खरैटी), नागबला (गुलसकरी), मुलैठी, ताल मखाना, पटोल, खस, गिलोय और लाल चन्दन समान भाग लेकर काथ बनावें।

यह काथ वातरक्त, कण्डू, मण्डल और समस्त कुष्ठोंको नष्ट कर देता है।

(४९८१) **मञ्जिष्ठादिक्वाथः** (लघु) (६)

(शा. ध. ख. २.; वृ. यो. त. त. १२०; वृ. नि. र.; भा. प्र. वातरक्ता.)

मञ्जिष्ठा त्रिफला तिक्ता वचा दारु निशाऽमृता।
निम्बश्चैषां कृतः काथः वातरक्तविनाशनः॥
पामाकपालिकाकुष्ठरक्तमण्डलजिन्मतः॥

मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, बच, देवदारु, हल्दी, गिलोय और नीमकी छाल समान भाग लेकर काथ बनावें।

यह काथ वातरक्त, पामा, कपालिकाकुष्ठ और रक्तमण्डलको नष्ट करता है।

(४९८२) **मञ्जिष्ठादिक्वाथः** (वृद्ध) (७)

(मञ्जिष्ठादिचतुःषष्टिक)

(वृ. नि. र. त्वग्दो.; वृ. यो. त. त. १२०; यो. चि. म. अ. ४)

मञ्जिष्ठा त्रिफला प्रियङ्गुरमृता ब्राह्मी वचा पौष्करं
भृङ्गाख्यस्त्रिकटुः किरातकविषानिर्गुण्डिकारग्वधाः।
त्रायन्ती खदिरं कटुत्वचटूकीपीताद्वयं रोहिणी
तिक्तापर्पटवासकेन्द्रफलिनीनन्ताविशालागदम् ॥
एरण्डं पिचुमन्दचित्रकवरीभार्गीमलेन्द्रीशटी
पिल्वानीधवमूलपाडलत्रिवृत्तेजस्विनीवालकम् ।
दन्तीमूलपलाशचन्दनयुगं मुण्डी विडङ्गं त्वचौ
अर्कयोररणी (?)करञ्जधवयोःपर्णानि मूलानि च
क्षुद्राह्वाद्वयदेवदारुजलदाकह्लारकं कोलक-
मेभिःसिद्धमिमं पटोलसहितं क्वाथं चतुष्षष्टिकम्।
अष्टांशेन विपाचयेच्च मतिमान्पक्त्वाऽल्पमृद्भाजने
पीत्वा हन्ति खुडं सपित्तपवनं कुष्ठानि चाष्टादश ॥

मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, फूलप्रियङ्गु, गिलोय, ब्राह्मी, बच, पोखरमूल, भंगरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चिरायता, अतीस, संभालु, अमलतास, त्रायमाना, खैरसार, कुड़ेकी छाल, पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, कुटकी, मूर्वा, पित्तपापड़ा, बासा, इन्द्रजौ, मेंहदी, अनन्तमूल, इन्द्रायनकी जड़, कूठ, अरण्डमूल, नीमकी छाल, चीता, शतावर, भारंगी, मलेन्द्री (?), कचूर, पीलुके फल, धवकी जड़, पाढल, निसोत, मालकंगनी, सुगन्धबाला, दन्तीमूल, ढाक (पलास) की छाल, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, मुण्डी, बायबिड़ंग, आककी जड़की छाल, अरणीकी छाल, करञ्ज और धवके पत्ते तथा मूल, छोटी और बड़ी कटेली, देवदारु, नागरमोथा, लालकमल, कंकोल और पित्तपापड़ा ये ६४ ओषधियां समान भाग लेकर सबको मिट्टीके पात्रमें मन्दाग्नि पर पकाकर अष्टमांशावशेष क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ वातरक्त, वातपित्त और अठारह प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

(४९८३) **मञ्जिष्ठादिक्वाथः** (बृहत्) (८)
(यो. त. त. ६२; बृ. यो. त. त. १२०; यो. र. वात.; यो. त. त. ४१; शा. सं. खं. २ अ. २; बृ. नि. र. वातरक्त.; यो. चि. म. अ. ४; भा. प्र. कुष्ठा.)

मञ्जिष्ठामुस्तकुटजगुडूचीकुष्ठनागरैः ।
भार्गीक्षुद्रावचानिम्बनिशाद्वयफलत्रिकैः ॥
पटोलकटुकामूर्वाविडङ्गासनचित्रकैः ।
शतावरीत्रायमाणाकृष्णेन्द्रयववासकैः ॥
भृङ्गराजमहादारुपाठाखदिरचन्दनैः ।
त्रिवृद्वरुणकैरातबाकुचीकृतमालकैः ॥
शाखोटकमहानिम्बकरञ्जातिविषाजलैः ।
इन्द्रवारुणिकानन्तासारिवापर्पटैः समैः ॥
एभिः कृतं पिबेत्क्वाथं कणागुग्गुलुसंयुतम् ।
अष्टादशसु कुष्ठेषु वातरक्तार्दिते तथा ॥
उपदंशे श्लीपदे च प्रसुप्तौ पक्षघातके ।
मेदोदोषे नेत्ररोगे मञ्जिष्ठादिः प्रशस्यते ॥

मजीठ, नागरमोथा, कुड़ेकी छाल, गिलोय, कूठ, सोंठ, भरंगी, कटेली, बच, नीमकी छाल, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, कुटकी, मूर्वा, बायबिड़ंग, असना वृक्षकी छाल, चीतामूल, सतावर, त्रायमाना, पीपल, इन्द्रजौ, वासा, भंगरा, देवदारु, पाठा, खैरसार, लाल चन्दन, निसोत, बरना, चिरायता, बाबची, अमलतास, शाखोट वृक्ष (सिहोड़ा) की छाल, बकायनकी

छाल, करञ्जकी छाल, अतीस, सुगन्धबाला, इन्द्रायणकी जड़, अनन्तमूल, सारिवा और पित्तपापड़ा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमें शुद्ध गूगल और पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे अठारह प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, उपदंश, श्लीपद, प्रसुप्ति (सुन्नबहरी), पक्षाघात, मेदोदोष और नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

मञ्जिष्ठादिनवकार्षिकक्वाथः

(वृ. यो. त. त. ९१)

प्र. सं. ३३४९ "नवकार्षिक क्वाथ" देखिये

(४९८४) **मण्डूकपर्ण्यादिक्वाथः**

(वै. म. र. पटल १६)

मण्डूकपर्णीमरिचकुलत्थैः साधु साधितः।
कषायः पीनसार्तिघ्नः कोष्णाम्बु पिबतां नृणाम्॥

मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी), काली मिर्च और कुलथी का मन्दोष्ण क्वाथ पीनेसे पीनस नष्ट होती है।

(४९८५) **मण्डूकपर्ण्यादि रसायनम्**

(च. द. रसायना. ६५)

मण्डूकपर्ण्याः स्वरसः प्रयोज्यः
क्षीरेण यष्टीमधुकस्य चूर्णम्।
रसो गुडूच्यास्तु समूलपुष्प्याः
कल्कः प्रयोज्यः खलु शङ्खपुष्प्याः॥
आयुःप्रदान्यामयनाशकानि
बलाग्निवर्णस्वरवर्धनानि।
मेध्यानि चैतानि रसायनानि
मेध्या विशेषेण तु शङ्खपुष्पी॥

मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी) का स्वरस अथवा दूधके साथ मुलैठीका चूर्ण या गिलोयका रस अथवा पुष्प और मूल सहित शंख पुष्पीका कल्क सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट होते और आयुकी वृद्धि होती है। ये समस्त प्रयोग बल, अग्नि और स्वरकी वृद्धि करने वाले, मेध्य और रसायन हैं। विशेषतः शंखपुष्पी बुद्धिवर्द्धक है।

(४९८६) **मण्डूकीरसयोगः**

(वै. म. र. पटल १०)

मधुना निशया धात्र्या क्षीरेण वा मिश्रितः प्रगे पीतः।
स्यान्मण्डूकी स्वरसः कामलिनां हितकरो नृणाम्॥

प्रातःकाल मण्डूकपर्णीके स्वरसमें शहद या हल्दीका चूर्ण अथवा आमला या दूध मिलाकर पीना कामलामें हितकारी है।

(४९८७) **मदनफलादियोगः** (१)

(व. से. अपस्मारा.)

मदनस्य च बीजानि चूर्णयित्वा तथैव च।
पिण्डितकस्य चाल्पस्य कर्षैकं पेषयेज्जले॥
ततोऽस्य पानमात्रेण नश्यतेऽपस्मृतिर्गदः॥

छोटे मैनफलके १। तोला बीजोंको पानीमें पीसकर पिलानेसे अपस्मार नष्ट होता है।

(४९८८) **मदनफलादियोगः** (२)

(व. से. विसर्प.; ग. नि. विसर्पा. ३९)

मदनं मधुकं निम्बं वत्सकस्य फलानि च।
वमनञ्च विधातव्यं विसर्पे कफसम्भवे॥

कफज विसर्प रोगमें मैनफल, मुलैठी, नीमकी छाल और इन्द्र जौसे वमन करानी चाहिये।

(४९८९) **मदयन्तिकादिप्रक्षालनम्**

(रा. मा. स्त्रीरोगा.)

मदयन्तिकाश्वगन्धामोचरसैः साधितं जलं स्त्रीणाम्।
प्रक्षालनेन योनेः सद्यः शैथिल्यमपहरति॥

मल्लिका (नेवारी), असगन्ध और मोचरसके काथसे धोनेसे योनिकी शिथिलता नष्ट हो जाती है।

(४९९०) **मदयन्तिकामूलकषायः**

(ग नि. रक्तपित्ता. ८)

मदयन्तिकमूलस्य कषायः पूतशीतलः ।
शर्करामधुसंयुक्तो रक्तपित्तप्रणाशनः ॥

मदयन्तिका (मल्लिका) की जड़के क्राथको छानकर ठण्डा करके उसमें खांड और शहद मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है ।

(४९९१) **मधुकादिकषायः** (१)

(ग. नि. ज्वरा. १)

मधुकं त्रायमाणां च पिप्पलीमूलमेव च ।
किराततिक्तकं मुस्तं पर्पटं सबिभीतकम् ॥
सशर्करं पीतमेतत्पित्तज्वरनिबर्हणम् ॥

मुलैठी, त्रायमाना, पीपलामूल, चिरायता, नागरमोथा, पित्तपापड़ा और बहेड़ा समान भाग लेकर क्राथ बनावें। इसमें मिश्री डालकर पिलानेसे पित्तज्वर नष्ट होता है।

(४९९२) **मधुकादिकषायः** (२)

(वृ. नि. र. जीर्णज्वरा.; व. से. ज्वरा.)

मधुकारग्वधद्राक्षातिक्तायाः सफलत्रिकैः ।
सपटोलैर्जलं भेदि ज्वरं हन्ति त्रिदोषजम् ॥

मुलैठी, अमलतास, मुनक्का, कुटकी, त्रिफला और पटोल पत्रका क्राथ पीनेसे मल निकल जाता है और सन्निपातज्वर नष्ट होता है.

(४९९३) **मधुकादिकषायः** (३)

(वृ. नि. र. जीर्णज्वर.)

मधुकं वल्कलं कुष्ठमुत्पलं चन्दनं वचा ।
त्रिफला दुर्लभा वासा द्राक्षा शिरीषं पद्मकम् ॥
मूर्वा यष्टिरयं काथो दाहं मूर्च्छां तृषां भ्रमम् ।
रक्तपित्तज्वरं हन्ति निपीतो मधुना सह ॥

मुलैठी, दालचीनी, कूठ, नीलोत्पल, लालचन्दन, बच, हर्र, बहेड़ा, आमला, धमासा, वासा, मुनक्का, सिरसकी छाल, पद्माक, मूर्वा और मुलैठी समान भाग लेकर क्राथ बनावें।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे दाह, मूर्च्छा, तृषा, भ्रम, रक्तपित्त और ज्वरका नाश होता है।

(४९९४) **मधुकादिक्वाथः** (१)

(भै. र. ज्वरा.)

मधुकं गुडूची तिक्ता एला पर्पटकं तथा ।
प्रत्येकं शाणमानेन तिक्ताया अर्द्धशाणकम् ॥
सार्धतोलकमेवश्च स्वर्णपत्र्याश्च ग्राहयेत् ।
मत्स्याण्डिकायास्तोलश्च प्रक्षिप्य पाययेद्भिषक् ॥
वातपित्तज्वरं घोरं नाशयेन्नात्र संशयः ।
रसायनकृते चापि ज्वरो यश्च न हीयते ॥
तं ज्वरं नाशयेदेतद् वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

मुलैठी, गिलोय, कुटकी, इलायची और पित्तपापड़ा ५-५ माशे; कुटकी २॥ माशे और सनाय १॥ तोला लेकर क्राथ बनावें।

इसमें १ तोला खांड मिलाकर पिलानेसे भयंकर वातपित्तज्वर अवश्य नष्ट हो जाता है।

जो ज्वर रसायन प्रयोगोंसे भी नहीं मिटता वह इससे अवश्य नष्ट हो जाता है।

(४९९५) **मधुकादिक्काथः** (२)

(भै. र. ज्वरा.)

मधुकं चन्दनं मुस्तं धात्री धान्यमुशीरकम् ।
छिन्नोद्भवं पटोलश्च क्वाथः समधुशर्करः ॥

ज्वरमष्टविधं हन्ति सन्तताद्यं सुदारुणम् ।
वातिकं पैतिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥

मुलैठी, लालचन्दन, नागरमोथा, आमला, धनिया, खस, गिलोय और पटोल समानभाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद और खांड मिलाकर पीनेसे सन्तताादि घोर ज्वर तथा वातज पित्तज कफज और सन्निपात आदि आठों प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

(४९९६) मधूकादि कल्कः

(व. से. रक्तपित्ता.)

कल्कं मधूकत्रिफलार्जुनानां निशि स्थितं लोहमये सुपात्रे ।
साज्यं विलिह्यानु पिबेत्सुशीतं सशर्करं छागपयः क्षुधार्त्तः ॥

महुवा, हर्र, बहेड़ा, आमला और अर्जुनकी छाल समान भाग लेकर सबको पानीमें पीसकर रातको लोहेके स्वच्छ पात्रमें रखदें और प्रातःकाल इसमें घी मिलाकर रोगीको चटावें तथा भूख लगनेपर बकरीके ठण्डे दूधमें मिश्री मिलाकर पिलावें ।

इस प्रयोगसे रक्तपित्त नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ तोला)

(४९९७) मधूकादिकषायः

(भा. प्र. म. खं. योनिरोगा.; व. से. स्त्रीरोगा.)

मधूकचन्दनोशीरसारिवापद्मपत्रकैः ।
शर्करामधुसंयुक्तैः कषायो गर्भिणीज्वरे ॥

महुवा, लालचन्दन, खस, सारिवा और कमलके पत्ते समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर उसमें खांड और शहद मिलाकर पिलानेसे गार्भिणीका ज्वर नष्ट होता है ।

(४९९८) मधूकादिफाण्टः [१]

(शा. ध. खं. २ अ. ३; वृ. नि. र. वातपि. ज्वरा.; भा. प्र. म. खं. ज्वरा.; व. से. ज्वरा.)

मधूकपुष्पं मधुकं चन्दनं सपरूषकम् ।
मृणालं कमलं लोध्रं गम्भारीं नागकेशरम् ॥
त्रिफलां सारिवां द्राक्षां लाजान् कोष्णे जले क्षिपेत् ।
सितामधुयुते पेयः फाण्टो वाऽसौ हिमोथ वा ॥
वातपित्तज्वरं दाहं तृष्णामूर्च्छारतिभ्रमान् ।
रक्तपित्तमिदं हन्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥

महुवेके फूल, मुलैठी, लाल चन्दन, फालसेकी छाल, कमलनाल, कमलपुष्प, लोध, खम्भारी, नागकेसर, हर्र, बहेड़ा, आमला, सारिवा, मुनक्का और धानकी खील समान भाग लेकर सबको (६ गुने) मन्दोष्ण पानीमें भिगोदें और थोड़ी देर बाद मलकर छान लें । इसमें अथवा इन ओषधियोंके शीत कषायमें मिश्री और शहद मिलाकर पीनेसे वातपित्त ज्वर, दाह, तृष्णा, मूर्च्छा, अरति, भ्रम और रक्तपित्त अवश्य नष्ट हो जाते हैं ।

(४९९९) मधूकादिफाण्टः (२)

(शा. ध. खं. २ अ. ३)

मधूकपुष्पगम्भारीचन्दनोशीरधान्यकैः ।
द्राक्षया च कृतः फाण्टः शीतः शर्करया युतः ॥
तृष्णापित्तहरः प्रोक्तो दाहमूर्च्छाभ्रमान् जयेत् ॥

महुवेके फूल, खम्भारी (कुम्हार) की छाल, लालचन्दन, खस, धनिया और मुनक्का समान भाग लेकर फांट बनावें ।

इसे ठण्डा करके खांड मिलाकर पीनेसे तृष्णा, पित्त, दाह, मूर्च्छा और भ्रमका नाश होता है ।

(फाण्ट बनाने की विधि प्रथम भागमें देखिये)

(५०००) **मधूकादि शीतकषायः**

(च. सं. चि. अ. ३ ज्वरा.; वा. भ. चि. अ. १)

मधूकमुस्तमृद्वीकाकाश्मर्याणि परूषकम् ।
त्रायमाणमुशीराणि त्रिफलां कटुरोहिणीम् ।
पीत्वा निशि स्थितं जन्तुर्ज्वरात् शीघ्रं विमुच्यते॥

महुवा, नागरमोथा, मुनक्का, खम्भारीके फल, फालसा [फल], त्रायमाना, खस, त्रिफला और कुटकी समानभाग लेकर सबको कूटकर रातको मिट्टीके बरतनमें पानीमें भिगो दें और दूसरे दिन मल छान कर पियें।

इसके सेवनसे ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। (यह कषाय पित्तज्वरके लिये है)

(५००१) **मधूदकयोगः**

(रा. मा. क्षुद्ररोगा. २९)

विज्ञाय यः शीतलिकोपसर्गं
प्रवृत्तमादौ मधुना विमिश्रम् ।
पिबेज्जलं पर्युषितं नरस्य
नो सम्भवन्ति ज्वरदर्शनेऽपि ॥

मसूरिका (माता) के निकलनेकी सम्भावना होते ही रातको पानीमें थोड़ा शहद मिलाकर रखदें और प्रातःकाल वह पानी रोगीको पिलावें।

यदि ज्वर हो जाने पर भी यह प्रयोग किया जाय तब भी शीतला नहीं निकलती।

(५००२) **मध्वादियोगः**

(वै. म. र. पटल १५)

मधुमधूकमागधीनां खर्जूरशतावरीकशेरुणाम् ।
सविदारीणां कल्कः पानादुन्मादमपहरति ॥

मुलैठी, महुआ, पीपल, खजूर, शतावर, कसेरु, और बिदारीकन्द को पीसकर शहदमें मिलाकर पीनेसे उन्माद नष्ट होता है।

(५००३) **मन्थादियोगः**

(यो. र. मूत्रकृच्छ्रा.)

मन्थं पिबेद्वा ससितं ससर्पिः
शृतं पयो वाऽर्धसिताप्रयुक्तम् ।
धात्रीरसं चेक्षुरसं पिबेद्वाऽ
भिघातकृच्छ्रे मधुना विमिश्रम् ॥

सत्तूमें थोड़ासा घी डालकर उसे शीतल जलमें घोल लें इसमें मिश्री मिलाकर पीनेसे अथवा दूधको पका कर उसमें उससे आधी मिश्री मिलाकर पीनेसे या आमले अथवा ईखके रसमें शहद मिलाकर पीनेसे अभिघातज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(५००४) **मयूरशिखामूलयोगः**

(ग. नि. । वन्ध्या. ५; रा. मा. । स्त्रीरोगा. ३०)

शिफां बर्हिशिखायास्तु क्षीरेण परिपेषिताम् ।
पिबेदृतुमती नारी गर्भधारणहेतवे ॥

मयूरशिखाकी जड़को दूधमें पीसकर ऋतुमती (रजस्वला) स्त्रीको पिलानेसे वह गर्भ धारण कर लेती है।

(५००५) **मरिचादिकषायः**

(ग. नि. । वाता. १९)

पिवति कषायं जन्तुर्मरिचमहादारुनागराणां यः।
तैलेनापि च मिश्रं स भवति वातेन निर्मुक्तः

काली मिर्च, देवदारु और सोंठके क्वाथमें तैल मिलाकर पीनेसे वातव्याधि नष्ट होती है।

(५००६) **मरिचादिक्वाथः** (१)

(भा. प्र. । म. खं. ज्वरा.)

मरिचं पिप्पलीमूलं नागरं कारवी कणा ।
चित्रकं कट्फलं कुष्ठं ससुगन्धि वचा शिवा ॥
कण्टकारीजटा शृङ्गी यवानी पिचुमन्दकः ।
एषां क्वाथो हरत्येव ज्वरं सोपद्रवं कफात् ॥

काली मिरच, पीपलामूल, सेंठ, कालाजीरा, पीपल, चीता, कायफल, कूठ, सुगन्धतृण, बच, हर्र, कटैलीकी जड़, काकड़ासिंगी, अजवायन और नीमकी छाल समान भाग लेकर काथ बनावें।

इसे सेवन करनेसे उपद्रवयुक्त कफज्वर नष्ट होता है।

(५००७) मरिचादिकाथः (२)

(वृ. नि. र. । सन्निपात.)

मरीचदशमूलमगधाफलत्रयनिशामहौषधीतिक्ता।
भूनिम्बसैन्धवयुतः कर्णकहन्ता भवेत्क्वाथः॥

काली मिर्च, दशमूल, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, सोंठ, कुटकी और चिरायता समान भाग लेकर काथ बनावें।

इसमें सेंधानमक मिलाकर पीनेसे कर्णक सन्निपात नष्ट होता है।

(५००८) मरिचादिहिमः

(शा, ध. । खं. २ अ. ४)

मरीचं मधुयष्टिं च काकोदुम्बरपल्लवैः।
नीलोत्पलं हिमस्तज्जस्तृष्णाछर्दिनिवारणः॥

काली मिरच, मुलैठी, कठूमर (कठूगूलर) के पत्ते और नीलोत्पल समान भाग लेकर सबको अधकुटा करके रातको मिट्टीके बरतनमें ६ गुने पानीमें भिगो दें और दूसरे दिन प्रातःकाल मलछान कर रोगीको पिला दें।

यह शीत कषाय तृष्णा और छर्दिको नष्ट करता है।

(५००९) मरीच्यादिकाथः

(वृ. नि. र. । वातज्वर.)

मरीचं रुचकं शुण्ठी किरातं च हरीतकी।
पिप्पली कटुकी चैव वातज्वरविनाशनम्॥

काली मिरच, सेंठ, चिरायता, हर्र, पीपल और कुटकीके काथमें काला नमक मिलाकर पीनेसे वातज ज्वर नष्ट होता है।

महाद्राक्षादिकाथः

(वै. र.; भा. प्र. । म. खं. ज्वरा.)

"द्राक्षादिकाथ" प्रयोग संख्या २९२० देखिये।

(५०१०) महानिम्बबीजयोगः

(यो. त. । त. ५१)

महानिम्बस्य बीजानि पेषयेत्तन्दुलाम्बुना।
सघृतान्यचिराद्धन्युः पानान्मेहांश्चिरन्तनान्॥

बकायनके फलोंकी मींग (गिरी) को चावलोंके पानीके साथ पीसकर उसमें घृत मिलाकर सेवन करनेसे पुराने प्रमेह भी शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(५०११) महानिम्बयोगः

(ग. नि. । वात. अ. १९; शा. ध. । ख. २ अ. ५)

बृहन्निम्बतरोर्मूलं वारिणा परिपेषितम्।
तत् पीतं नाशयेत्क्षिप्रमसाध्यामपि गृध्रीसीम्॥

बकायनकी जड़की छालको पानीके साथ पीसकर पीनेसे असाध्य गृध्रसी भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१ तोला)

(५०१२) महाबलादिकषायः

(यो. र. । वातव्या.; वृ. नि. र. । जीर्णज्वर.; भै. र. । ज्वरा.)

महाबलामूलमहौषधाभ्यां
क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम्।

शीतं सकम्पं परिदाहयुक्तं
विनाशयेद् द्वित्रिदिनप्रयुक्तः ॥

महाबलाकी जड़ और सोंठके क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिलाकर पीनेसे शीत, कम्प और दाहयुक्त ज्वर २-३ दिनमें ही नष्ट हो जाता है ।

महारास्नादिक्वाथः

रास्नादिक्वाथ (महा) देखिये

(५०१३) महावासादिक्वाथः

(वृ. यो. त. । त. १३१; वृ. नि. र. नेत्ररोगा.)

वासा घनं निम्बपटोलपत्रं
तिक्तामृता वत्सकचन्दनं च ।
कलिङ्गदार्वी दहनं च शुण्ठी
भूनिम्बधात्री विजया बिभीतम् ॥
यवांश्च निष्काथ्य तमष्टशेषं
पूर्वेऽह्नि संस्थापितमग्रिमेऽह्नि ।
प्रातः पिबेदर्बुदशुक्रकण्डू-
तैमिर्यदाहव्रणपिल्लरोगान् ॥
पिण्डोपनाहौ पटलानि नेत्र-
रोगानशेषानपरांश्च हन्यात् ॥

बासा (अडूसा), नागरमोथा, नीमकी छाल, पटोल पत्र, कुटकी, गिलोय, कुड़ेकी छाल, लाल चन्दन, इन्द्रजौ, दारुहल्दी, चीतामूल, सोंठ, चिरायता, आमला, हर्रे, बहेड़ा और जौ समान भाग ले कर सबको अधकुटा करके सायंकाल आठ गुने पानीमें पकावें । जब आठवां भाग पानी रह जाय तो छान लें ।

इसे दूसरे दिन प्रातःकाल सेवन करने से अर्बुद, नेत्रशुक्र, आंखकी खुजली, तिमिर, आंखोंकी दाह, आंखका घाव, पिल्ल और पटल आदि समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(५०१४) महौषधादिक्वाथः (१)

(वृ. मा. । आमाधि.)

महौषधगुडूच्योस्तु क्वाथं पिप्पलिसंयुतम् ।
पिबेदामे सरुक्शोफे कटीशूले विशेषतः ॥

सोंठ और गिलोयके क्वाथमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे पीड़ा और शोथ युक्त आमवात और विशेषतः कमरकी पीड़ा शान्त होती है ।

(५०१५) महौषधादिक्वाथः (२)

(भै. र. । ज्वरा.; ग. नि. । ज्वरा. १; वृ. नि. र. । विषमज्वर.; वृ. मा. । ज्वरा.)

महौषधामृतामुस्तचन्दनोशीरधान्यकैः ।
क्वाथं तृतीयकं हन्ति शर्करामधुयोजितः ॥

सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, लाल चन्दन, खस और धनिया समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें खांड और शहद मिलाकर पीनेसे तृतीयक (तिजारी) ज्वर नष्ट होता है ।

(५०१६) महौषधादिक्वाथः (३)

(वृ. मा. । मूर्च्छा.; ग. नि. मूर्च्छा. १६)

महौषधामृता क्षुद्रा पौष्करं ग्रन्थिकोद्भवम् ।
पिबेत्कणायुतं क्वाथं मूर्छायां च मदेषु च ॥

सोंठ, गिलोय, कटेली, पोखरमूल और पीपलामूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें पीपलका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे मूर्च्छा और मदका नाश होता है ।

(५०१७) मांस्यादिगणः

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

मांसीचन्दनशम्पाककरञ्जारिष्टसर्षपम् ।
यष्टीकुटजदार्वीभिर्हन्ति कण्डूमयं गणः ॥

जटामांसी, लाल चन्दन, अमलतास, करञ्जकी छाल, नीमकी छाल, सरसों, मुलैठी, कुड़ेकी छाल और दारुहल्दी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसे सेवन करने से कण्डू (खुजली) नष्ट होती है ।

(५०१८) मातुलफलयोगः

(रा, मा. विषरो.)

असनजटाजलपिष्टं
यः खादति मातुलस्य फलमेकम् ।
उन्मत्तसारमेयप्रभवं
विषमस्य शममेति ॥

धतूरे के एक फलको असना वृक्षकी जड़की छाल के स्वरस (या क्वाथ) में पीस कर पीनेसे पागल कुत्ते के काटने का विष नष्ट हो जाता है ।

(५०१९) मातुलुङ्गबीजयोगः

(रा. मा. अ. ९)

मातुलुङ्गस्य बीजानि कुमार्या सह पेषयेत् ।
क्षीरेण सह दातव्यं गर्भमाप्नोति न संशयः ॥

बिजौरे नीबूके बीजोंको घीकुमार (ग्वारपाठा) के रसके साथ पीसकर दूधके साथ पिलानेसे स्त्री अवश्य गर्भ धारण कर लेती है ।

(यह औषध मासिक धर्म होनेके पश्चात् कई रोज़ सेवन करानी चाहिये)

(५०२०) मातुलुङ्गमूलादिपाचनकषायः

(ग. नि. । ज्वरा.)

मूलानां मातुलुङ्ग्यास्तु पिप्पलीशृङ्गवेरयोः ।
अजमोदस्य च क्वाथः सक्षारः पाचनः कफे ॥

बिजौरे नीबूकी जड़, पीपल, अदरख (सोंठ) और अजमोदके क्वाथमें जवाखार मिलाकर पिलावें ।

यह क्वाथ कफज्वरपाचक है ।

(५०२१) मातुलुङ्गरसादियोगः (१)

(वृ. मा. । गुल्मा.)

मातुलुङ्गरसो हिङ्गु दाडिमं बिडसैन्धवम् ।
सुरामण्डेन पातव्यं वातगुल्मरुजापहम् ॥

बिजौरे नीबूके रसमें भुनी हुई हींग, अनारदाना, बिड नमक और सेंधानमकका चूर्ण मिलाकर चटावें और ऊपरसे सुरामण्ड पिलावें ।

इस प्रयोगसे वातज गुल्मकी पीड़ा शान्त होती है ।

(५०२२) मातुलुङ्गरसादियोगः (२)

(व. से. । शूलरोगा.; वृ. नि. र. । शूला.)

मातुलुङ्गरसः सर्पिः सहिङ्गुलवणान्वितम् ।
सुखोष्णं पाययेदेतद्विड्बन्धानुलोमनम् ॥
कुक्षिहृत्पार्श्वशूलेषु वेदना चोपशाम्यति ॥

बिजोरेका रस और घी (२-२ तोले) लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर उसमें ज़रा सा हींग और सेंधा नमक मिलाकर मन्दोष्ण करके पिलानेसे मलावरोध नष्ट होता, वायु खुलता और कोख, हृदय तथा पसलीकी पीड़ा शान्त होती है ।

(५०२३) मातुलुङ्गरसादियोगः (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

मातुलुङ्गरसं ग्राह्यं द्विगुणं तत्र काञ्जिकम् ।
हिङ्गुसौवर्चलयुतं पानं हन्ति विषूचिकाम् ॥

बिजौरेका रस १ भाग (२ तोले) और काञ्जी २ भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर उसमें हींग और काला नमक मिलाकर पीनेसे विषूचिका नष्ट होती है।

(५०२४) **मातुलुङ्गरसादियोगः** (४)

(वृ. मा. । शूला.; यो. र. । शूला; वृ. नि. र. । शूला.)

मातुलुङ्गरसो वाऽपि शिग्रुक्वाथस्ततः परः ।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्वस्तिशूलनुत् ॥

बिजौरेके रसमें अथवा सहंजनेकी छालके काथमें जवाखार और शहद मिलाकर पीनेसे पसली, हृदय और बस्तीका शूल नष्ट हो जाता है।

(५०२५) **मातुलुङ्गरसादियोगः** (५)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ७)

मातुलुङ्गरसं धात्रीरसं सैन्धवसंयुतम् ।
सौभाञ्जनकमूलस्य रसं च मरिचान्वितम् ॥
सक्षारमधुनोपेतं श्लेश्मशूलनिवारणम् ।
यकृत्क्षयोद्भवं शूलं नाशयत्याश्वसंशयम् ॥

बिजौरे नीबूका रस, आमलेका रस और सहंजनेकी जड़की छालका रस समान भाग (१-१ तोले) लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें सेंधा-नमक, काली मिर्च और जवाखार तथा शहद मिलाकर पीनेसे कफज शूल और यकृत्क्षय-जन्य शूल तुरन्त नष्ट हो जाता है।

(५०२६) **मातुलुङ्गरसादियोगः** (६)

(वृ. मा. । हिक्काश्वासा.)

मधुसौवर्चलोपेतं मातुलुङ्गरसं पिबेत् ।
हिक्कार्तो मधुना लिह्याच्छुण्ठीधात्रीकणान्वितम् ॥

बिजौरे नीबूके (२-३ तोले) रसमें ज़रासा, काला नमक और शहद मिलाकर पीनेसे अथवा सोंठ, आमला और पीपलके चूर्णको शहदमें मिला-कर चाटनेसे हिक्का (हिचकी) नष्ट हो जाती है।

(५०२७) **मातुलुङ्गादिकल्कः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५)

मातुलुङ्गस्य मूलानि रसोनः क्रिमिजित् त्रिवृत् ।
अजमोदा निम्बपत्रं गोमूत्रेण तु पेषयेत् ॥
पानमेतत् प्रशंसन्ति क्रिमिदोषनिवारणम् ।
ज्वरप्रोक्तानि पथ्यानि क्रिमिदोषे प्रदापयेत् ॥

बिजौरेकी जड़, ल्हसन, बायबिड़ंग, निसोत, अजमोद और नीमके पत्ते समान भाग ले कर सब को एकत्र मिला कर गोमूत्रके साथ पीस लें।

इसे (गौमूत्र या उष्ण जल के साथ) पीने से कृमिरोग नष्ट होता है।

कृमि रोगमें ज्वरके समान पथ्य देना चाहिये।

(मात्रा—१ तोले तक।)

(५०२८) **मातुलुङ्गादिकाथः** (१)

(वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

मातुलुङ्गादि भूनिम्बग्रन्थिकं देवदारु च ।
दशमूलाजमोदे च शुण्ठी शीताङ्गनाशनम् ॥

बिजौरे नीबूकी जड़, चिरायता, पीपलामूल, देवदारु, दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, अजमोद और सेंठ समान भाग लेकर काथ बनावें।

यह क्वाथ शीताङ्ग सन्निपातको नष्ट करता है।

(५०२९) **मातुलुङ्गादिक्वाथः** (२)

(व. से. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । कफज्वर.)

मातुलुङ्गशिफाविश्वकायस्थाग्रन्थिकोद्भवम् ।
कफज्वरेषु सक्षारं पाचनं वा कणादिकम् ॥

बिजौरे नीबूकी जड़, सोंठ, हर्र और पीपलामूलके क्वाथमें जवाखार मिलाकर पिलाने या कणादि क्वाथ पिलाने से कफज ज्वर नष्ट होता है ।

(५०३०) **मातुलुङ्गादिक्वाथः** (३)

(व. से. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । सन्निपात.)

मातुलुङ्गऽश्मभिद्बिल्वव्याघ्रीपाठारुबूकजः ।
क्वाथो लवणमूत्राढ्योऽभिन्यासानाहशूलनुत् ॥

बिजौरेकी जड़, पखानभेद, बेलकी छाल, कटेली, पाठा और अरण्डमूल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें सेंधा नमक और गोमूत्र मिलाकर पिलानेसे अभिन्यास सन्निपात, अफारा और शूल नष्ट होता है ।

(५०३१) **मातुलुङ्ग्यादियोगः**

(यो. र.; वृ. नि. र. । रक्तपित्त.)

मूलानि पुष्पाणि च मातुलुङ्ग्याः
समं पिबेत्तन्दुलधावनेन ।
घ्राणप्रवृत्ते जलमाशु देयं
सशर्करं नासिकयोः पयो वा ॥

बिजौरेकी जड़की छाल तथा फूलोंके कल्कको चावलोंके धोवनके साथ सेवन करनेसे अथवा खांडके शर्बत या दूधकी नस्य लेनेसे नकसीर बन्द होती है ।

(५०३२) **मालतीमूलयोगः**

(ग. नि. । अश्मरी.; रा. मा. । अ. १५)

ग्रीष्मोत्खातं मालतीमूलमाजे
क्षारे सिद्धं शर्कराचूर्णमिश्रम् ।
पीतं सद्यो मूत्रसंरोधजातां
हन्यात्पीडां पातयेदश्मरीं च ॥

ग्रीष्मकालमें उखाड़ी हुई मालती की जड़को बकरीके दूधमें पका कर उसमें मिश्री डाल कर पीनेसे मूत्र रोकनेसे उत्पन्न हुई पीड़ा नष्ट होती और पथरी निकल जाती है ।

(मालती की जड़ २ तोले, दूध १६ तोले, पानी ६४ तोले । एकत्र मिला कर पानी जलने तक पकावें ।)

(५०३३) **माषबलादियोगः**

(ग. नि. । वातरोगा. १९; वृ. मा. । वाता.; च. द. । वातव्या. अ. २२; र. र. । वातव्या.; यो. र. । पक्षाघात.)

माषबलाशुकशिम्बीकत्तृणरास्नाश्वगन्धोरुबूकाणाम्
क्वाथो नस्यनिपीतो रामठलवणान्वितः कोष्णः
अपहरति पक्षवातं मन्यास्तम्भं सकर्णनादरुजम् ।
दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति चावश्यम् ॥

उड़द, खरैटी, कौंचके बीज, कत्तृण, रास्ना, असगन्ध और अरण्डमूल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इस मन्दोष्ण क्वाथमें ज़रासा सेंधा नमक और हींग मिला कर नासिका द्वारा पीनेसे पक्षाघात (अधरंग), मन्यास्तम्भ, कर्ण पीड़ा, कर्णनाद, और कष्ट साध्य अर्दित (लक़वा) १ सप्ताहमें अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(५०३४) **माषादिक्काथः**

(व. से. । वातव्या.; भा. प्र. । म. खं. वातव्या.; वृ. यो. त. त. । ९०; वृ. मा. । वाता.)

माषात्मगुप्तामैरण्डशृतं वाट्यालकं तथा ।
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तं पक्षाघातं विनाशयेत् ॥

उड़द, कौंचके बीज, अरण्डमूल और खरैटी समानभाग लेकर काथ बनावें।

इसमें सेंधानमक और हींग मिलाकर पीनेसे पक्षाघात का नाश होता है।

(५०३५) **माहिषक्षीरमूत्रोपयोगः**

(ग. नि. । उदररोगा. १२)

सक्षीरं माहिषं मूत्रं निराहारः पिबेन्नरः ।
शाम्यत्यनेन जठरं सप्ताहादिति निश्चयः ॥

प्रातः काल खाली पेट भैंसके दूधमें भैंसका मूत्र मिलाकर पीनेसे १ सप्ताहमें उदररोग अवश्य नष्ट हो जाता है।

(इस प्रयोगकालमें अन्न पानादिका त्याग करना चाहिये। यह योग शोथोदरमें उपयोगी है)

(५०३६) **मुण्डितिकायोगः**

(ग. नि. । शिरोरो.)

पीत्वा मुण्डितिकोत्थं स्वरसं मरीचावचूर्णितं चोष्णम् ।
भक्तादौ सप्ताहात्सूर्यावर्तार्धभेदकौ हन्यात् ॥

गोरखमुण्डीके स्वरसको गरम करके उसमें काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर भोजनके पहले सेवन करनेसे सूर्यावर्त और अर्द्धावभेदक (आधासीसी) का नाश होता है।

पथ्य-दूध भात।

(५०३७) **मुद्गयूषयोगः**

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

वह्नौ तप्तेन लोहेन मुद्गयूषं सुवापितम् ।
पीत्वैवं सूतिका नारी सर्वव्याधीन्व्यपोहति ॥

लोहेको अग्निमें तपाकर मूंगके यूषमें बुझावें यह यूष प्रसूता स्त्रीको पिलानेसे उसके समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

(५०३८) **मुद्गादिकषायः**

(व. से. । छर्दि.)

विदलानि च मुद्गानां पिप्पल्यश्चैव कुट्टिताः ।
आशु तत्सलिलं पेयं समधुच्छर्दिनाशनम् ॥

मूंगकी दालके काथमें पीपलका चूर्ण तथा शहद मिलाकर पीनेसे छर्दि (वमन) तुरन्त रुक जाती है।

(पीपलका चूर्ण १ माशा शहद २ तोले।)

(५०३९) **मुद्गादिकषायः**

(वृ. नि. र. । छर्दि.; व. से. । अतिसारा., छर्द्य.; यो. र. । छर्दि.; वृ. यो. त. । त. ८३)

कषायो भृष्टमुद्गानां सलाजमधुशर्करः ।
छर्द्यतीसारदाहघ्नो ज्वरघ्नः संप्रकाशितः ॥

मूंगको भाड़में भुनवाकर उसका क्वाथ बनावें।

इस क्वाथमें धानकी खील, शहद और खांड मिलाकर पिलानेसे छर्दि, अतिसार, दाह और ज्वरका नाश होता है।

(५०४०) **मुद्गादिक्काथः**

(ग. नि. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । पित्तज्वर.; व. से. । ज्वरा.)

मुद्गानामञ्जलिं पूर्णां यष्टीमधुकसाधिताम् ।
पाक्यं शीतकषायं वा पिबेत्पित्तज्वरापहम् ॥

मूंग और मुलैठीका क्वाथ या शीत कषाय पीनेसे पित्तज्वर नष्ट होता है।

(५०४१) मुद्गादिशीतकषायः

(ग. नि. । रक्तपित्ता. ८; वृ. नि. र. । रक्तपित्ता.; च. सं. चि. अ. ४ रक्तपित्त.)

मुद्गाः सलाजाः सयवाः सकृष्णाः
सोशीरमुस्ताः सह चन्दनेन ।
बलाजले पर्युषितः कषायः
स रक्तपित्तं शमयत्युदीर्णम् ॥

५ तोले खरैटीको ४० तोले पानीमें पकावें। जब २० तोले पानी शेष रहे तो छानकर उसमें रातको मूंग, धानकी खील, इन्द्र जौ, पीपल, खस, नागरमोथा और लाल चन्दन समानभाग मिश्रित ३ तोले लेकर कूटकर भिगो दें और दूसरे दिन प्रातःकाल मलकर छान लें।

इसे पीनेसे प्रबल रक्तपित्त भी नष्ट हो जाता है।

(५०४२) मुद्गामलकयूषः

(वृ. मा. छर्दि.)

मुद्गामलकयूषो वा ससर्पिष्कः ससैन्धवः ॥

मूंग और आमलेके क्वाथमें घी तथा सेंधा नमक मिलाकर पीनेसे छर्दि (वमन) रुक जाती है।

(५०४३) मुशल्यादियोगः

(भै. र. ग्रहण्य.)

मुषलीं पेषयेत्तक्रैरथवा तण्डुलोदकैः ।
माषैकं योजयेच्चानु पथ्यं तक्रोदनं हितम् ॥

१ माशा मूसलीको तक्र या चावलोंके पानीके साथ पीसकर पीनेसे ग्रहणीरोग नष्ट होता है।

पथ्य—तक्रभात।

(५०४४) मुष्ककादिगणः

(वा. भ. सू. अ. १५; सु. सं. अ. ३८)

मुष्ककस्नुग्वराद्वीपिपलाशधवशिंशपाः ।
गुल्ममेहाश्मरीपाण्डुमेदोऽर्शःकफशुक्रजित् ॥

मोखा (मुष्कक) वृक्षकी छाल, थूहर (सेंड-सेहुंड), हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, ढाककी छाल, धवकी छाल और शीशमका बूरा (चूर्ण); यह ओषधिसमूह गुल्म, प्रमेह, अश्मरी, पाण्डु, मेद, अर्श, कफ और शुक्र—दोषोंको नष्ट करता है।

(नोट—सुश्रुतमें मैनफल अधिक लिखा है।)

(५०४५) मुस्तकमूलयोगः

(यो. र.; वृ. नि. र. अपस्मारा.)

उत्तरदिग्गतमुस्तकमूलं बुद्ध्या समुद्धृतं पेष्य ।
पीतं पयसा हन्यादपस्मृतिं गोः सवर्णवत्सायाः ॥

उत्तर दिशामें उत्पन्न हुवे नागरमोथेकी ताज़ी जड़को समान रंगके बछड़ेवाली गायके दूधमें पीस कर पीनेसे अपस्मार नष्ट होता है।

(५०४६) मुस्तकक्वाथः

(ग. नि. अतिसारा. ३)

क्वाथश्च मुस्तककृतः समधुः सुशीतः
पीतः प्रवृद्धमतिसारगदं निहन्ति ।

नागरमोथे के क्वाथको अच्छी तरह ठण्डा करके उसमें शहद मिला कर पीनेसे प्रवृद्ध अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

(५०४७) मुस्तादिक्वाथः (१)

(रा. मा. ज्वरा. २०)

पिबन्ति येऽब्दयवासकबालकान्
सकटुकांश्च महौषधसंयुतान् ।

शृतकषायवरान् ज्वरमस्य ते
व्यपनयन्त्यनलं च वितन्वते ॥

नागरमोथा, जवासा, सुगन्धबाला, कुटकी और सेंठ इनका क्वाथ पीनेसे ज्वर नष्ट होता और अग्नि दीप्त होती है ।

(५०४८) **मुस्तादिक्काथः** (२)

(हा. सं. स्था. ३ अ. ३१; भै. र. प्रमेहा.)

मुस्ता फलत्रिकनिशा सुरदारु मूर्वा
ऐन्द्री च लोध्रसलिलेन कृतः कषायः ।
पाने हितः सकलमेहभवे गदे च
मूत्रग्रहेषु सकलेषु नियोजनीयः ॥

नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, देवदारु, मूर्वा, इन्द्रायण की जड़ और लोध ।

इनका क्वाथ पीनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह और मूत्राघात नष्ट होते हैं ।

(५०४९) **मुस्तादिक्काथः** (३)

(ग. नि. ज्वरा.)

मुस्तमारग्वधोशीरं हरिद्रा दारुसाह्वयम् ।
पटोलपिचुमन्दौ च यष्टीमधुकमेव च ॥
कषायः एषः सिद्धः स्याद्वातपित्तोद्भवे ज्वरे ॥

नागरमोथा, अमलतास, खस, हल्दी, देवदारु, पटोल, नीमकी छाल और मुलैठी ।

इनका क्वाथ वातपित्तज्वरको नष्ट करता है ।

(५०५०) **मुस्तादिक्काथः** (४)

(ग. नि. ज्वरा.)

मुस्ताऽऽटरूषः सुरदारु कुष्ठं
निदिग्धिकानागरकाकजङ्घाः ।
द्राक्षामृतापिप्पलिकाकषायं
पिबेच्च वातज्वरयुक्तजन्तुः ॥

नागरमोथा, बासा (अडूसा), देवदारु, कूठ, कटेली, सेंठ, काकजंघा, मुनक्का, गिलोय और पीपल समानभाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वातज्वरको नष्ट करता है ।

(५०५१) **मुस्तादिक्काथः** (५)

(हा. सं. स्था. ३ अ. २)

मुस्ता गुडूची सहनागरेण
वासाजलं पर्पटकं च पथ्या ।
क्षुद्रा च दुःस्पर्शयुतः कषायः
पाने हितो वातकफज्वरस्य ॥

नागरमोथा, गिलोय, सेंठ, बासा (अडूसा), पित्तपापड़ा, हर्र, कटेली और धमासा ।

इनका काथ वातकफ-ज्वरको नष्ट करता है ।

(५०५२) **मुस्तादिक्काथः** (६)

(भा. प्र. म. खं.; वृ. नि. र. सन्निपाता.)

मुस्तैरण्डप्राणदावाणदारु-
च्छिन्नारास्नाभीरुकर्चूरतिक्ताः ।
वासाविश्वापञ्चमूलाऽश्वगन्धा
हन्युर्मन्यास्तम्भसन्धिग्रहार्तीः ॥

नागरमोथा, अरण्डमूल, हर्र, पियाबासा, देवदारु, गिलोय, रास्ना, शतावर, कचूर, कुटकी, बासा (अडूसा), सेंठ, पञ्चमूल (बेलकी छाल, सोनापाठाकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल, अरणी) और असगन्ध समानभाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ सन्निपात ज्वर, मन्यास्तम्भ और सन्धिग्रहको नष्ट करता है ।

(५०५३) **मुस्तादिक्काथः** (७)

(भै. र. बालरोगा.)

मुस्तकातिविषाशुण्ठीबालकेन्द्रयवैः कृतम् ।
क्वाथं शिशुः पिबेत्प्रातः सर्वातीसारनाशनम् ॥

नागरमोथा, अतीस, सोंठ, सुगन्धबाला और इन्द्रजौ समानभाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ प्रातःकाल पिलानेसे बच्चोंका अतिसार नष्ट होता है ।

(५०५४) **मुस्तादिक्काथः** (८)

(भै. र. ज्वरा.)

मुस्तपर्पटकोत्पलकिराताशीरचन्दनात् कर्षः ।
शर्करया च क्रियते वातपित्तज्वरे बहुधा दृष्टफलः॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, नीलोत्पल, चिरायता, खस और लाल चन्दन १।-१। तोला लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें खांड मिलाकर पिलानेसे वातपित्तज्वर नष्ट होता है । यह अनेकों बारका अनुभूत प्रयोग है ।

(५०५५) **मुस्तादिक्काथः** (९)

(भै. र.; वृ. नि. र.; व. से. ज्वरा.)

मुस्तं वत्सकबीजानि त्रिफला कटुरोहिणी ।
परूषकाणि च क्वाथः कफज्वरविनाशनः ॥

नागरमोथा, इन्द्रजौ, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, और फालसेके फल समानभाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कफज्वरको नष्ट करता है ।

(५०५६) **मुस्तादिक्काथः** (१०)

(यो. र. ज्वरा.; वृ. नि. र. ज्वरा.)

मुस्ता पर्पटको यष्टी गोस्तनी समभागतः ।
अष्टावशेषतः क्काथो निपीतो मधुना सह ॥
पित्तभ्रमं ज्वरं दाहं हन्ति छर्दिं समन्थराम् ॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, मुलैठी और मुनक्का समान भाग लेकर सबको अधकुटा करके आठगुने पानीमें पकावें और जब आठवां भाग पानी शेष रहे तो उतारकर छान लें ।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे चित्तभ्रम, ज्वर, दाह, छर्दि और मन्थरज्वर नष्ट होता है ।

(५०५७) **मुस्तादिक्काथः** (११)

(यो. र. सन्निपाता.)

जलदाह्वयपद्मकपर्पटकै-
र्मलयोद्भवजातिवरीमधुकैः ।
मधुनिम्बजलानलचन्दनकैः
कथितं मुखरक्तहरं सलिलम् ॥

नागरमोथा, पद्माक, पित्तपापड़ा, चन्दन, चमेली, शतावर और मुलैठी का अथवा मीठानीम, सुगन्धबाला, चीता और चन्दनका क्वाथ पीनेसे मुंहसे आता हुवा रक्त और सन्निपात (न्यूमोनिया) नष्ट होता है ।

(५०५८) **मुस्तादिक्काथः** (१२)

(यो. र. सन्निपा.)

जलधरमलयजनागर
सबालकोशीरपर्पटैः क्वथितम् ।
यः पिबति पयः शीतं
शाम्यति रुग्दाहकस्तस्य ॥

नागरमोथा, लाल चन्दन, सोंठ, सुगन्धबाला, खस और पित्तपापड़ा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसे ठण्डा करके पीनेसे रुग्दाह सन्निपात नष्ट होता है।

(५०५९) मुस्तादिक्काथः (१३)

(वृ. नि. र. बालरो.)

मुस्तकं चन्दनं वासा ह्रीवेरं यष्टिकामृता ।
एषां क्वाथस्तु पित्तघ्नस्तृषादाहज्वरापहः ॥

नागरमोथा, लालचन्दन, बासा (अडूसा), सुगन्धबाला, मुलैठी और गिलोय समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ पित्त, तृषा, दाह और ज्वरको नष्ट करता है।

(५०६०) मुस्तादिक्काथः (१४)

(भा. प्र. म. खं. अतिसार.; वृ. नि. र.; वं. से. अतिसारा.)

मुस्ता सातिविषा मूर्वा वचा च कुटजः समाः।
एषां कषायः सक्षौद्रः पित्तश्लेष्मातिसारनुत् ॥

नागरमोथा, अतीस, मूर्वा, बच और इन्द्रजौ समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

इस क्वाथमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तकफज अतिसार नष्ट होता है।

(५०६१) मुस्तादिक्काथः (१५)

(ग. नि.; भै. र.; वृ. नि. र. ज्वरा.; यो. चि. म. अ. ४; वं. से. ज्वरा.)

मुस्तपर्पटदुःस्पर्शगुडूचीविश्वभेषजम् ।
कफवातारुचिच्छर्दिदाहशोषज्वरापहम् ॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, धमासा, गिलोय और सोंठ समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कफ, वायु, अरुचि, छर्दि, दाह, शोष और ज्वरका नाश करता है।

(५०६२) मुस्तादिक्काथः (१६)

(वं. से. अतिसारा.)

मुस्तकातिविषाशुण्ठीवत्सकामयतिक्तकैः ।
सर्वातिसारहृल्लाससर्वशोफज्वरापहः ॥

नागरमोथा, अतीस, सोंठ, इन्द्रजौ, खस और पटोलपत्र समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ समस्त प्रकारके अतिसार, हृल्लास (जी मिचलाना), समस्त प्रकारके शोथ और ज्वरको नष्ट करता है।

(५०६३) मुस्तादिक्काथः (१७)

(भा. प्र. म. खं. वातरक्त.)

मुस्तामलकनिशाभिः क्वथितं तोयं समाक्षिकं पेयम् ।
जयति सदागतिरक्तं सकफं वा सततयोगेन ॥

नागरमोथा, आमला और हल्दी का क्वाथ बनाकर ठण्डा करके उसमें शहद मिलाकर कुछ दिनों तक निरन्तर सेवन करनेसे कफयुक्त वातरक्त नष्ट होता है।

(५०६४) मुस्तादिक्काथः (१८)

(वृ. नि. र. वातकफज्वर.)

जलदधान्यकिरातगुडूचिका नियमनं कटुकी च पटोलिका ।
क्वथितमेभिरिदं तु जलं हरे-त्पवनपित्तभवं ज्वरमुन्नतम् ॥

नागरमोथा, धनिया, चिरायता, गिलोय, नीमकी छाल, कुटकी और पटोल समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ प्रबल वातपित्त-ज्वरको नष्ट करता है।

(५०६५) **मुस्तादिक्काथः** (१९)

(वृ. मा.; यो. र. विसर्पा.; वृ. नि. र. विसर्पा.; ग. नि. विसर्पा. ४०)

मुस्तारिष्टपटोलानां क्वाथः सर्वविसर्पनुत्।
धात्रीपटोलमुद्गानामथवा घृतसंयुतः ॥

नागरमोथा, नीमकी छाल और पटोलका क्वाथ पीनेसे अथवा आमला, पटोल और मूंगके क्वाथमें घी डालकर पीनेसे हर प्रकारका विसर्प नष्ट होता है।

(५०६६) **मुस्तादिक्काथः** (२०)

(यो. र.; वृ. मा.; धन्व.; व. से. कृमि.; ग. नि. कृमि. ६)

मुस्ताखुपर्णीफलशिग्रुदारु-
क्वाथः सकृष्णाकृमिशत्रुकल्कः।
मार्गद्वयेनापि चिरप्रवृत्तान्
कृमीन्निहन्ति कृमिजांश्च रोगान् ॥

नागरमोथा, मूषापर्णी (चूहाकन्नी), हर्र, बहेड़ा, आमला, सहंजनेकी छाल और देवदारु समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमें पीपल और बायबिड़ंगका चूर्ण मिलाकर पीनेसे दोनों मार्गों (मुख और गुदा) की ओर जाने वाले कृमि और उनसे उत्पन्न होने वाले रोग नष्ट हो जाते हैं।

(५०६७) **मुस्तादिक्काथः** (२१)

(व. से. अतिसारा.)

मुस्तं वत्सकबीजानि भूनिम्बं सरसाञ्जनम्।
दार्वी दुरालभा बिल्वं बालकं रक्तचन्दनम् ॥
बालकं चन्दनं मुस्तं भूनिम्बं सदुरालभम्।
उशीरं चन्दनं लोध्रं नागरं नीलमुत्पलम् ॥
पाठा मुस्तं हरिद्रे द्वे पिप्पली कौटजं फलम्।
फलत्वचं वत्सकस्य शृङ्गवेरं घनं वचा ॥
षडेते पादिका योगा पित्तातीसारनाशनाः ॥

(१) नागरमोथा, इन्द्रजौ, चिरायता और रसौत।

(२) दारुहल्दी धमासा, बेलगिरी, सुगन्धबाला, और लाल चन्दन।

(३) सुगन्धबाला, लाल चन्दन, नागरमोथा, चिरायता और धमासा।

(४) खस, लालचन्दन, लोध, सोंठ और नीलोत्पल

(५) पाठा, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, पीपल और इन्द्रजौ।

(६) इन्द्रजौ, कुड़ेकी छाल, सोंठ, नागरमोथा और वच।

उपरोक्त ६ प्रयोगोंमें से किसीका भी क्वाथ बनाकर पिलानेसे पित्तातीसार नष्ट होता है।

(५०६८) **मुस्तादिक्काथः** (२२)

(वृ. नि. र. वातपित्तज्वर.)

मुस्तादुरालभाशुण्ठीक्वाथ एषां समांशतः।
हन्ति श्लेष्मज्वरं तीव्रं निपीतः पथ्यभोजने ॥

नागरमोथा, धमासा और सोंठ समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसे पीने और पथ्य पालन करनेसे तीव्र कफजज्वर नष्ट होता है।

(५०६९) **मुस्तादिक्काथः** (२३)

(वा. भ. चि. अ. २२)

मुस्तद्राक्षाहरिद्राणां पिबेत्क्वाथं कफोल्बणे।
सक्षौद्रं त्रिफलाया वा गुडूचीं वा यथा तथा ॥

नागरमोथा, मुनक्का और हल्दीका क्वाथ पीनेसे अथवा त्रिफला या गिलोयके क्वाथमें शहद मिलाकर पीनेसे कफप्रधान वातरक्तका नाश होता है।

(५०७०) **मुस्तादिक्वाथः** (२४)

(ग. नि.; व. से. रक्तपित्ता.)

मुस्तेन्द्रयवयष्ट्याह्वं मदनाह्वं पयो मधु ।
शिशिरं वमनं योज्यं रक्तपित्तहरं परम् ॥

नागरमोथा, इन्द्रजौ, मुलैठी और मैनफलके बीज समानभाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसे शीतल करके तथा शहद और दूध मिलाकर पीनेसे वमन होकर रक्त पित्त नष्ट हो जाता है।

(यह प्रयोग अधोगत रक्तपित्तमें उपयोगी है।)

(५०७१) **मुस्तादिक्वाथः** (२५)

(यो. र. शोफातिसा.; ग. नि. अतिसारा. २)

मुस्तं सातिविषा दार्वी वचा शुण्ठी च तत्समम्।
कषायं क्षौद्रसंयुक्तं पित्तवातातिसारिणे ॥

नागरमोथा, अतीस, दारुहल्दी, बच और सोंठ समानभाग लेकर काथ बनावें।

इसमें शहद मिलाकर पीनेसे पित्तवातज अतिसार नष्ट होता है।

(५०७२) **मुस्तादिक्वाथः** (२६)

(भै. र.; यो. र.; च. द.; र. र.; वं. से.; वृ. नि. र; वृ. मा. । ज्वरा.; शा. ध. ख. २ अ. २; यो. त. । त. २०; वृ. यो. त. । त. ९५; ग. नि. । ज्वरा.)

मुस्तामलकगुडूचीविश्वौषधकण्टकारिकाक्वाथः।
पीतः सकणाचूर्णः समधुर्विषमज्वरं हन्ति ॥

नागरमोथा, आमला, गिलोय, सोंठ और कटेली समानभाग लेकर काथ बनावें।

इसमें पीपलका चूर्ण और शहद मिलाकर पीनेसे विषमज्वर नष्ट होता है।

(५०७३) **मुस्तादिक्वाथः** (२७)

(वृ. नि. र. विषमज्वर.; ग. नि. । ज्वरा १)

मुस्तापाठाशिवाक्वाथश्चातुर्थिकज्वरापहः ।
दुग्धेन त्रिफला पीता हन्ति चातुर्थिकं ज्वरम् ॥

नागरमोथा, पाठा और हर्रका काथ पीनेसे अथवा दूधके साथ त्रिफलाका चूर्ण सेवन करनेसे चातुर्थिक ज्वर नष्ट होता है।

(५०७४) **मुस्तादिगणः**

(सु. सं. । सूत्र अ. ३८)

मुस्ताहरिद्रादारुहरिद्राहरीतक्यामलकबिभीतककुष्ठहैमवती वचापाठाकटुरोहिणीशार्ङ्गेष्टातिविषाद्राविडीभल्लातकानि चित्रकश्चेति ॥
एष मुस्तादिको नाम्ना गणः श्लेष्मनिषूदनः ।
योनिदोषहरस्तन्यशोधनः पाचनस्तथा ॥

नागरमोथा, हल्दी, दारु हल्दी, हर्र, आमला, बहेड़ा, कूठ, चोक, सफेद बच, पाठा, कुटकी, काकमाची (मकोय), अतीस, छोटी इलायची, भिलावा और चीतेकी जड़। इन ओषधियोंके समूहको " मुस्तादि गण " कहते हैं।

यह मुस्तादिगण कफनाशक, योनि और दुग्ध शोधक तथा पाचक है।

(५०७५) **मुस्तादिपाचनकषायः**

(ग. नि. । ज्वरा.)

पाक्यं शीतकषायं वा मुस्तपर्पटकं पिबेत् ॥

नागरमोथे और पित्तपापड़ेका काढ़ा अथवा शीतकषाय पीनेसे आमज्वर नष्ट होता है।

यह काथ दोषोंको पकाता है।

(५०७६) **मुस्तादिप्रमथ्या**

(शा. ध. । खं. २ अ. २)

मुस्तकेन्द्रयवैः सिद्धा प्रमथ्या पिप्पलोन्विता।
सुशीता मधुसंयुक्ता रक्तातीसारनाशिनी ॥

नागरमोथा और इन्द्रजौ २॥-२॥ तोले लेकर दोनोंको पानीमें भिगोकर पीस लें और फिर ४० तोले पानीमें पकावें । जब १० तोले पानी शेष रहे तो छान लें।

इसे ठण्डा करके शहद मिलाकर पीनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है।

(५०७७) **मुस्तादिषडङ्गपानीयम्** (१)

(भा. प्र. । म. खं. तृष्णा.)

मुस्तपर्पटकोदीच्यच्छत्राख्योशीरचन्दनैः ।
भृतं शीतं जलं दद्यात्तृड्दाहज्वरशान्तये ॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, सुगन्धबाला, सौंफ, खस और लाल चन्दन समान भाग-मिश्रित १। तोला लेकर २ सेर पानीमें पकावें और १ सेर पानी रहनेपर छान लें।

इस पानीको ठण्डा करके रक्खें और आवश्यकतानुसार थोड़ा थोड़ा रोगीको पिलाते रहें।

इसे पीनेसे तृष्णा, दाह और ज्वरका नाश होता है।

(५०७८) **मुस्तादिषडङ्गपानीयम्** (२)

(वृ. मा.; च. द. । ज्वरा.)

मुस्तापर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ।
भृतशीतं जलं दद्यात्पिपासाज्वरशान्तये ॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लाल चन्दन, नेत्रबाला और सोंठ बराबर बराबर लेकर सबको अधकुटा करलें और इसमेंसे १। तोला चूर्णको २ सेर पानीमें पकावें। जब १ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

इसे ठण्डा करके रक्खें और आवश्यकतानुसार थोड़ा थोड़ा रोगीको पिलाते रहें।

यह पानी पिपासा और ज्वरको नष्ट करता है।

(५०७९) **मुस्तादिहिमः**

(वृ. नि. र. । बालरो.)

मुस्तापर्पटकोशीरवारिपद्मकसाधितम् ।
शीतं वारि निहन्त्याशु त्रिधा दाहवमिज्वरान्॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, सुगन्धबाला और पद्माक समान भाग मिश्रित २ तोले लेकर, सबको अधकुटा करके रातको १२ तोले पानीमें मिट्टीके बरतनमें भिगो दें और प्रातःकाल मलकर छान लें।

इसे पिलानेसे बालकोंकी दाह, वमन और ज्वरका नाश होता है।

(५०८०) **मुस्ताद्यष्टादशाङ्गक्वाथः**

(च. द । ज्वरा. १; वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

मुस्तपर्पटकोशीरदेवदारुमहौषधम् ।
त्रिफलाधन्वयासश्च नीली कम्पिल्लकं त्रिवृत् ॥
किराततिक्तकं पाठा बला कटुकरोहिणी ।
मधुकं पिप्पलीमूलं मुस्ताद्यो गण उच्यते ॥
अष्टादशाङ्गमुदितमेतद्वा सन्निपातनुत् ।
पित्तोत्तरे सन्निपाते हितं चोक्तं मनीषिभिः ॥
मन्यास्तम्भे उरोघाते उरः पार्श्वशिरोग्रहे ॥

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, देवदारु, सोंठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, धमासा, नीलका पंचांग, कमीला,

निसोत, चिरायता, पाठा, सुगन्धबाला, कुटकी, मुलैठी और पीपलामूल। सब चीजें समान भाग लेकर क्राथ बनावें।

इसे "मुस्तादिगण" अथवा "मुस्तादि अष्टादशाङ्ग क्राथ" कहते हैं।

यह पित्तप्रधान सन्निपात, मन्यास्तम्भ, उरःक्षत, उरोग्रह, पार्श्वग्रह और शिरोग्रहमें हितकर है।

(५०८१) मूत्रविरजनीयो दशको महाकषायः।

(च. सं.। सू. अ. ४)

पद्मोत्पलनलिनकुमुदसौगन्धिकपुण्डरीक-शतपत्रमधुकप्रियङ्गुधातकीपुष्पाणीतिदशेमानि मूत्रविरजनीयानि भवन्ति।

सफेद कमल, नील कमल, लाल कमल, कुमुद (कमलभेद), सौगन्धिक, पुण्डरीक, शतपत्र, मुलैठी, फूलप्रियङ्गु और धायके फूल।

इनका कषाय पीनेसे मूत्र दोषरहित हो जाता है।

[५०८२] मूत्रविरेचनीयो दशको महाकषायः

(च. सं.। सू. अ. ४)

वृक्षादनीश्वदंष्ट्रावसुकवशिरपाषाणभेददर्भ कुशकाशगुन्द्रेत्कटमूलानीति दशेमानिमूत्रवि-रेचनीयानि भवन्ति।

बिदारीकन्द, गोखरु, वसुक (अगस्ती), हुलहुल, पखानभेद, दाभ, कुश, कांस, गुन्द्रपटेर और इत्कट। इनकी जड़ लेकर कषाय बनाकर प्रयुक्त करनेसे मूत्र खुलकर होता है।

(५०८३) मूत्रसंग्रहणीयो दशको महाकषायः

(च. सं.। सू. अ. ४)

जम्ब्वाम्रप्लक्षवटकपीतनोदुम्बराश्वत्थ-भल्लातकाश्मन्तकसोमवल्का इति दशेमानि मूत्रसंग्रहणीयानि भवन्ति।

जामन, आम, पिलखन, वट (बड़), अम्बाड़ा गूलर, पीपल वृक्ष, भिलावा, अम्लोट और खैर।

इनका कषाय मूत्रकी अधिकताको कम करता है।

[५०८४] मूर्वादिक्काथः

(च. सं.। चि. अ. २७ ऊरुस्तम्भ.)

मूर्वामतिविषां कुष्ठं चित्रकं कटुरोहिणीम्।
पूर्ववद्वा पिबेत्तोये रात्रिस्थितमथापि वा॥

मूर्वा, अतीस, कूठ, चीता और कुटकी के काथ अथवा शीतकषायमें शहद मिलाकर पीनेसे ऊरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है।

(५०८५) मूषिकर्णीमूलयोगः

(ग. नि.। वन्ध्या. ५)

गर्भाभावकृतान् दोषानेका एव हि नाशयेत्।
योनिमध्यस्थिता स्त्रीणां मूषिकर्णीशिफा ध्रुवम्॥

मूषाकर्णी की जड़को योनिमें रखनेसे वन्ध्यत्व (बांझपना) अवश्य नष्ट हो जाता है।

(५०८६) मृणालादिक्काथः (१)

(ग. नि.। ज्वरा.; रा. मा.। ज्वरा. २०)

मृणालधात्रीफलचन्दनैर्यः
शृतं गुडूचीघनपर्पटैश्च।

सधान्यकैरम्बु पिबेत्सिताढ्यं
मध्वन्वितं तस्य कुतो ज्वरार्तिः ॥

कमलनाल, आमला, लाल चन्दन, गिलोय, नागरमोथा, पितपापड़ा और धनियेके क्वाथमें मिश्री तथा शहद मिलाकर पीनेसे ज्वर नष्ट होता है।

(यह क्वाथ पित्तज्वरमें उपयोगी है।)

(५०८७) मृणालादिक्वाथः (२)

(रा. मा. । ज्वरा. २०)

मृणालमुस्तासहितं कदाचित्
तदेव हन्ति क्वथितं ज्वरार्तिम् ॥

कमलनाल और नागरमोथेका क्वाथ सेवन करनेसे ज्वर नष्ट होता है।

(५०८८) मृद्वीकादिक्वाथः

(यो. त. । त. ६)

मृद्वीकाकटुरोहिणीजलधरः शम्पाकमज्जाशिवा
कृष्णामूलपटोलिके त्रिवृदेलाहृश्चीयपत्रं समम् ।
संक्वाथ्याशु निपीत एष तु गणः संरेचयेदाश्वयं
ताम्बुलाशिनमग्निसेविनमिलागेहस्थितं मानवम् ॥

मुनक्का, कुटकी, नागरमोथा, अमलतासका गूदा, हर्र, पीपलामूल, पटोल, निसोत, इलायची और सनायकी पत्ती समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसे पीकर ऊपरसे पान चबाना, अग्नि तापना और निर्वात स्थानमें रहना चाहिये।

इससे शीघ्र ही अच्छी तरह विरेचन हो जाता है।

(५०८९) मृद्वीकादिहिमः

(ग. नि. । ज्वरा.)

मृद्वीका मधुकं निम्बं कटुकारोहिणी समम् ।
अवश्यायस्थितं पेयमेतत्पित्तज्वरापहम् ॥

मुनक्का, मुलैठी, नीमकी छाल और कुटकी समानभाग मिश्रित २॥ तोले लेकर सबको १५ तोले पानीमें भिगोकर ओसमें रख दें और दूसरे दिन प्रातः काल मलकर छान लें।

इसे पीनेसे पित्तज्वर नष्ट होता है।

(५०९०) मेघनादादिक्वाथः

(वै. म. र. पटल २)

मेघनादाभयापद्मकिञ्जल्कैः साधितं जलम् ।
सक्षौद्रं रक्तपित्तघ्नं बीजं वा वास्तुकोद्भवम् ॥

कांटे वाली चौलाई, हर्र और कमलकेसर समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमें शहद डालकर पीनेसे या बथुवेके बीज सेवन करनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है।

इति मकारादि कषाय प्रकरणम्

अथ मकारादिचूर्णप्रकरणम्

(५०९१) मञ्जिष्ठादिचूर्णम्

(यो. र.; वृ. नि. र. । कासा.)

मञ्जिष्ठमूर्वानतवह्निपाठा
कृष्णाहरिद्राविहितं तु चूर्णम् ।
क्षौद्रेण कासेऽवलिहेत्क्षतोत्थे
पिबेद् घृतं चेक्षुरसे विपक्वम् ॥

मजीठ, मूर्वा, तगर, चीता, पाठा, पीपल और हल्दी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर चाटने और ईखके रसके साथ पका हुवा घी सेवन करनेसे क्षतज खांसी नष्ट होती है।

(चूर्णकी मात्रा—२—३ माशा।)

(५०९२) मदनप्रकाशचूर्णम्

(नपु. मृता. । त. ३)

कोकिलाक्षस्य बीजानि मुसलीकन्दनागरम् ।
वाजिगन्धा कपिबीजं शाल्मलीपुष्पमेव च ॥
बला शतावरीमूलं मोचाह्वं च त्रिकण्टकम् ।
जातीफलं च माषान्नं मातुलानि तुगा तथा ॥
एतानि समभागानि सिता सर्वसमानिका ।
पयसा हि पिबेद्रात्रौ कर्षयुग्मं च नित्यशः ॥
बलवीर्यकरं पुंसां प्रमेहव्याधिनाशनम् ।
मदनप्रकाशचूर्णं हि प्रौढानां द्रावणं परम् ॥

तालमखाना, मूसली, बिदारीकन्द, सोंठ, असगन्ध, कौंचके बीज, सेंमलके फूल, खरैटी (बीजबन्द), शतावर, मोचरस, गोखरु, जायफल, उड़दकी दाल (घीमें भुनी हुई), भांग और बंसलोचन १—१ भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसे नित्य प्रति रात्रिके समय २॥ तोलेकी मात्रानुसार दूधके साथ सेवन करनेसे बल वीर्यकी वृद्धि और प्रमेहका नाश होता है।

इसके सेवनसे मनुष्य प्रौढा स्त्रियोंको भी द्रावित कर सकता है।

(व्यवहारिक मात्रा—६ माशेसे ९ माशे तक।)

मदनसन्दीपनचूर्णम्

(रस प्रकरणमें देखिये)

(५०९३) मधुकचूर्णम्

(वं. से.; वृ. मा. । वाजीकरणा.; नपुंसकामृता. । त. ३)

कर्षं मधुकचूर्णस्य घृतक्षौद्रसमन्वितम् ।
पयोनुपानं यो लिह्यान्नित्यवेगः स ना भवेत् ॥

मुलैठीका चूर्ण १। तोलेकी मात्रानुसार घी और शहदमें मिलाकर दूधके साथ सेवन करनेसे अत्यन्त कामवृद्धि होती है।

(घी ६ माशे । शहद ३—४ तोले ।)

(५०९४) मधुकादिचूर्णम् (१)

(वृ. नि. र. । कासा.)

मधुकं पिप्पलीमूलं दूर्वा द्राक्षा कणा समम् ।
घृतेन मधुना युक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

मुलैठी, पीपलामूल, दूर्वा, मुनक्का और पीपल समानभाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे पित्तज खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा-३-४ माशे । घी ६ माशे । शहद २ तोले ।)

(५०९५) मधुकादिचूर्णम् (२)

(व. से. । स्त्री.)

मधुकं त्रिफला लोध्रमुष्टं सौराष्ट्रिकां मधु ।
मद्यैर्निम्बगुडूच्यौ तु कफजेऽसृग्दरे पिबेत् ॥

मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला, लोध, ऊंटकटारा, सौराष्ट्री (सोरठ-सौराष्ट्र देशकी मिट्टी विशेष), नीमकी छाल और गिलोय समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर मद्यके साथ सेवन करनेसे कफज प्रदर नष्ट होता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(५०९६) मधुकादिचूर्णम् (३)

(ग. नि. । कासा. १०)

मधुकं पिप्पली द्राक्षा शठी शृङ्गी शतावरी ।
द्विगुणा च तुगाक्षीरी सिता सर्वैश्चतुर्गुणा ॥
प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां क्षतकासनिवृत्तये ॥

मुलैठी, पीपल, मुनक्का, कचूर, काकड़ासिंगी और शतावरका चूर्ण १-१ भाग, बंसलोचनका चूर्ण १२ भाग और खांड ७२ भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें ।

इसे शहद और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे क्षतज खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा-१ तोला । घी ६ माशे । शहद ३-४ तोले ।)

४

(५०९७) मधुकादियोगः

(ग. नि. । रक्तपित्ता. ८)

मधुकोत्पलरास्नाभिर्युक्तमुत्पलकन्दकम् ।
पीतं तण्डुलतोयेन सविशं रक्तपित्तजित् ॥

मुलैठी, नीलोत्पल, रास्ना, नीलोत्पलकी जड़, और कमलककड़ी (भिसण्डा) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है ।

(मात्रा-४-६ माशे ।)

(५०९८) मधुकादियोगः

(वृ. नि. र. । पित्तातीसार.; व. से.; यो. र. । अतिसारा.)

मधुकं कट्फलं लोध्रं दाडिमस्य फलत्वचौ ।
पित्तातिसारे मध्वाक्तं पाययेत्तन्दुलाम्बुना ॥

मुलैठी, कायफल, लोध, अनारदाना और अनारकी छाल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे पित्तातिसार नष्ट होता है ।

(मात्रा-४-६ माशे ।)

(५०९९) मधुत्रिफलागुडार्द्रकयोगः

(व. से. । मदात्यया.)

मधुना हन्त्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः।
सप्ताहात् पथ्यभुजो मदमूर्च्छाकामलोन्मादान्॥

रात्रिको शहदके साथ त्रिफलाका चूर्ण और प्रातः काल गुड़के साथ अदरक सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे १ सप्ताहमें मद, मूर्च्छा, कामला और उन्मादका नाश हो जाता है ।

(५१००) **मधुपिप्पलीयोगः** (१)

(भै. र. । ज्वरा.)

क्षौद्रोपकुल्यासंयोगः श्वासकासज्वरापहः ।
प्लीहानं हन्ति हिक्काञ्च बालानाञ्चापि शस्यते॥

पीपलके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे श्वास, खांसी, ज्वर, तिल्ली और हिचकीका नाश होता है।

यह प्रयोग बच्चोंके लिये भी हितकारी है।

(मात्रा १–१॥ माशा ।)

(५१०१) **मधुपिप्पलीयोगः**(२)

(वृ. नि. र.; यो. र. अम्लपित्ता.)

पिप्पलीमधुसंयुक्ता नाशयेदम्लपित्तकम् ।
जम्बीरस्वरसः पीतः सायं हन्त्यम्लपित्तकम् ॥

पीपलके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे अथवा सायङ्कालके समय जम्बीरीका स्वरस पीनेसे अम्लपित्त नष्ट होता है।

(चूर्णकी मात्रा–१–१॥ माशा ।)

(५१०२) **मधुयष्टिकादिचूर्णम्**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

मधुयष्टिकया लाक्षा शताह्वा कर्कटाह्वयम् ।
द्राक्षा शतावरी चैव द्विगुणा वंशरोचना ॥
सर्वैः सिता समा योज्या युक्तं च मधुसर्पिषा ।
क्षतकासे रक्तपित्ते राजक्षये विशेषतः ॥

मुलैठी, लाख, सौंफ, काकड़ासिंगी, मुनक्का, और शतावर १–१ भाग, बंसलोचन १२ भाग और खांड १८ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे क्षतज खांसी और रक्त पित्त तथा विशेषतः राजयक्ष्माका नाश होता है।

(मात्रा–६ माशे ।)

(५१०३) **मधुयष्टियोगः**

(ग. नि. । पाण्डु. अ. ७)

पाण्डुरोगहरं लिह्याच्चूर्णं क्षौद्रविमिश्रितम् ।
यष्ट्याह्वस्य प्रयत्नेन तत्क्वाथं वा पिबेन्नरः ॥

मुलैठीके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे अथवा मुलैठीका क्वाथ पीनेसे पाण्डुका नाश होता है।

(मात्रा–६ माशे ।)

(५१०४) **मधुवचायोगः**

(यो. र. । अपस्मारा.)

यः खादेत्क्षीरभक्ताशी माक्षिकेण वचारजः ।
अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद् ध्रुवम् ॥

बचका चूर्ण शहदमें मिलाकर सेवन करने और दूध भातका आहार करनेसे पुराना घोर अपस्मार (मिरगी रोग) भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

(मात्रा–१ माशा)

नोट--बचका चूर्ण अधिक मात्रामें लेनेसे वमन हो जाती है।

(५१०५) **मधूकादिचूर्णम्** (१)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

मधूकमथ ह्रीबेरमुत्पलानि मधूलिकाम् ॥
लीढ्वा चूर्णानि मधुना सर्पिषा वा जयेद्वमिम् ।
कफप्रसेकास्रक्पित्तहिक्काश्वासांश्च दारुणान् ॥

महुवा, सुगन्धबाला, नीलोत्पल और मुलैठी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहद या घीमें मिलाकर चाटनेसे वमन, कफ, मुंहसे लार बहना, रक्तपित्त और दारुण श्वास तथा हिचकीका नाश होता है।

(थोड़ा थोड़ा करके दिन भरमें १ तोले तक चटा सकते हैं)

(५१०६) मधूकादिचूर्णम् (२)

(वा. भ. । चि. अ. ३ कास; ग. नि. । कासा. १०)

कासी पर्वास्थिशूली च लिह्यात्सघृतमाक्षिकान्।
मधूकमधुकद्राक्षात्वक्क्षीरीपिप्पलीबलान् ॥

महुवा, मुलैठी, मुनक्का, बंसलोचन, पीपल और बला (बीजबन्द) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घी और शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे खांसी तथा जोड़ों और हड्डियोंकी पीड़ाका नाश होता है।

(मात्रा २–३ माशे ।)

मध्यमगङ्गाधरचूर्णम्

प्र. सं. १२३३ "गङ्गाधरचूर्णम् (मध्यम)" देखिये।

मध्यमनायिकाचूर्णम्

"लाईचूर्णम् (मध्यम)" देखिये।

मध्यमलाईचूर्णम्

"लाईचूर्णम् (मध्यम)" देखिये।

(५१०७) मन्दारमूलिकाद्यं चूर्णम्

(वृ. नि. र. । शूल.)

मन्दारमूलिकाचूर्णं भुक्तं दुग्धेन मिश्रितम।
वातशूलहरं देवीमूलं वा कर्णगोद्भवम् ॥

आकको जड़का चूर्ण अथवा सहदेवी या गोकर्णीकी जड़का चूर्ण दूधके साथ सेवन करनेसे वातज शूल नष्ट होता है।

(अर्कमूल चूर्णकी मात्रा—आधामाशा ।)

(५१०८) मरिचादिचूर्णम् (१)

(भै. र. । अर्शो.)

मरिचं पिप्पली कुष्ठं सैन्धवं जीरनागरम्।
वचाहिङ्गुविडङ्गानि पथ्या वह्न्यजमोदकम् ॥
एतेषां कारयेच्चूर्णं चूर्णस्य द्विगुणं गुडम्।
खादेन्माषद्वयञ्चापि पिबेदुष्णजलं ततः ॥
सर्वाण्यर्शांसि नश्यन्ति वातजानि विशेषतः ॥

काली मिर्च, पीपल, कूठ, सेंधानमक, जीरा, सोंठ, बच, हींग, बायबिड़ंग, हर्र, चीता और अजमोद १–१ भाग तथा गुड़ सबसे २ गुना लेकर चूर्ण बनावें।

इसे २ माशेकी मात्रानुसार उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारकी बवासीर और विशेषतः वातज बवासीर नष्ट होती है।

(५१०९) मरिचादिचूर्णम् (२)

(हा. स. । स्था. ३ अ. १२)

कर्षमेकं मरीचस्य कर्षार्धं पिप्पली तथा।
दाडिमस्य पलं योज्यं निर्गुण्डीनां पलद्वयम् ॥
क्षारं तथार्धकर्षं तु संयोज्यं यावशूकजम।
चूर्णं चोष्णजलेनैव योजयेन्मतिमान् भिषक् ॥

काली मिर्च १। तोला, पीपल ७॥ माशे, अनारदाना ५ तोले, संभालूके पत्ते (या मूल) १० तोले और जवाखार ७॥ माशे लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा २-३ माशे ।)

(५११०) मरिचादिचूर्णम् (३)

(च. सं. । चि. अ. १९ ग्रहण्य.)

मरिचः कुञ्चिकाम्बष्ठावृक्षाम्लकुडवाः पृथक् ॥
पलानि दश चाम्लस्य वेतसस्य पलार्द्धिकम् ।
सौवर्चलं विडम्पाक्यं यवक्षारः ससैन्धवः ॥
शटी पुष्करमूलानि हिङ्गु हिङ्गुशिवाटिका ।
तत् सर्वमेकतः सूक्ष्मं चूर्णं कृत्वा प्रयोजयेत् ॥
हितं वाताभिभूतायां ग्रहण्यामरुचौ तथा ॥

काली मिर्च, कालाजीरा, पाठा और तिन्तडीक २०-२० तोले, अम्लवेत ५० तोले तथा सञ्चल, विडनमक, खारी नमक, जवाखार, सेंधा नमक, कचूर, पोखरमूल, हींग (भुनी हुई) और हिंगुपत्री २॥-२॥ तोले लेकर चूर्ण बनावें।

इसको सेवन करनेसे वातज संग्रहणी और अरुचि नष्ट होती है।

(मात्रा १-१॥ माशा । अनुपान-घी ।)

(५१११) मरिचादिचूर्णम् (४)

(वृ. नि. र.; यो. र. । कासा.)

सेवितं मधुखण्डाभ्यां चूर्णं मरिचजं यदि ।
किमर्थं क्रियते चिन्ता कासश्वासपराजितैः ॥

काली मिर्चका चूर्ण और खांड समानभाग मिलाकर शहदके साथ चाटनेसे खांसी और श्वासका नाश हो जाता है।

(मात्रा-३ माशे ।)

(५११२) मरिचादिचूर्णम् (५)

(शा. ध. । खं. २ अ. ६)

तक्रेण यः पिबेन्नित्यं चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥
चित्रसौवर्चलोपेतं ग्रहणी तस्य नश्यति ।
उदरप्लीहमन्दाग्निगुल्मार्शोनाशनं भवेत् ॥

काली मिर्च, चीतामूल और सञ्चल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी, उदररोग, तिल्ली, मन्दाग्नि, गुल्म और अर्शका नाश होता है।

(मात्रा १॥-२ माशे ।)

(५११३) मरिचादिचूर्णम् (६)

(व. से. विष.)

सचतुर्मरिचः कर्षः चाङ्गेर्याः सह सर्पिषा ।
हन्ति पानप्रलेपाभ्यां चोग्रसर्पविषं भयम् ॥

काली मिरचोंके ५ तोले चूर्णको चूकेके रस और घीमें मिलाकर पिलाने तथा लेप करनेसे उग्र सर्पविष भी नष्ट हो जाता है।

(५११४) मरिचादियोगः

(व. से. । बालरोगा.)

मरिचं नवनीताढ्यं शोथघ्नं भक्षयेच्छिशुः ।

काली मिर्चके चूर्णको नवनीतमें मिलाकर चटानेसे बच्चोंका शोथ नष्ट होता है।

(५११५) मरिचाद्यंचूर्णम्

(व. से. । अजीर्णा.)

मरिचाग्निकणा पथ्या दाडिमश्च महौषधम् ।
हिङ्गुसौवर्चलोपेतं चूर्णमग्निकरं परम् ॥

कालीमिर्च, चीतामूल, पीपल, हर्र, अनारदाना, सोंठ, हींग (भुनी हुई) और सञ्चल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे सेवन करनेसे जठराग्नि तीव्र होती है ।

(मात्रा—२—३ माशे । अनुपान—उष्ण जल ।)

(५११६) मरिचाद्युद्धूलनम्

(वै. र. । ज्व; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

मरिचं पिप्पली शुण्ठी पथ्या लोध्रं सपुष्करम् ।
भूनिम्बं कटुका कुष्ठकर्चूरेन्द्रयवाशटी ॥
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
प्रस्वेदे कण्ठरोधे च सन्धिमर्दनमिष्यते ॥
एतदुद्धूलनं श्रेष्ठं सन्निपातहरं परम् ॥

मरिच, पीपल, सोंठ, हर्र, लोध, पोखरमूल, चिरायता, कुटकी, कूठ, कचूर, इन्द्र जौ और कपूर-कचरी । सब चीजें समान भाग लेकर महीन चूर्ण बना लीजिए ।

सन्निपात रोगमें जब अत्यधिक पसीना आता हो या कण्ठ रुक जाय तब इसकी मालिशसे लाभ होता है ।

(५११७) मर्कटीबीजयोगः

(ग. नि. । हिक्का.; वृ. नि. र. । श्वासा.; यो. र. । श्वासा.)

मार्कटानां तु बीजानां चूर्णं माक्षिकसर्पिषा ।
प्रलिह्यात् प्रातरुत्थाय श्वासार्तः स्वास्थ्यमाप्नुयात् ॥

कौचके बीजोंके चूर्णको शहद और घी में मिलाकर प्रातः काल सेवन करनेसे श्वास नष्ट होता है ।

(मात्रा—६ माशेसे १ तोले तक ।)

(५११८) मलशोधन चूर्णम्

(यो. त. । त. ७)

शिवाकृष्णामूलं त्रिकटुकमजाजीजलधर-
स्त्रिवृद्धात्रीभूमीतरुपटुविडङ्गामरसुमम् ।
दलं कुष्ठं हिङ्गुर्ज्वलन इति सम्पिष्य मृदुलं
जलैरावेग्युत्थैर्मलहरमिदं सूष्णपयसा ॥

हर्र, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, जीरा, नागरमोथा, निसोत, आमला, भुई आमला, सेंधा नमक, बायबिड़ंग, लौंग, तेजपात, कूठ, हींग और चीता समानभाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे विरेचन होकर मल निकल जाता है ।

(५११९) महाक्षारः (१)

(व. से. । ग्रहण्य.)

यवक्षारं दशपलं सैन्धवं द्विगुणं भवेत् ।
भल्लातकानि त्रिवृता चित्रकं त्रिफला त्वचः ॥
स्नुह्यर्कयोश्च दुग्धश्च तैलस्य च घृतस्य च ।
प्रस्थं प्रस्थं समावाप्य चूर्णैरेतैर्विमिश्रयेत् ॥
तद्दाहयेन्महाक्षारं पाययेच्च सुखाम्बुना ।
ग्रहणीदीपने श्रेष्ठो गुल्मार्शः कृमिनाशनः ॥

जवाखार ५० तोले, सेंधा नमक १०० तोले तथा भिलावा, निसोत, चीता, त्रिफला, दालचीनी सेंड (सेहुंड) का दूध, आकका दूध, तैल और घी ८०—८० तोले लेकर कूटने योग्य चीजोंको कुटवा लें और फिर सबको कपड़मिट्टी की हुई एक हांडीमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और उसे चूल्हेपर चढ़ाकर इतना पकावें कि जिससे सब चीजें जलकर भस्म हो जायं ।

तदनन्तर हाण्डीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे क्षारको निकालकर पिसवालें।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी दीप्त होती और गुल्म, अर्श तथा कृमिरोगका नाश होता है।

(मात्रा—१ माशा।)

(५१२०) महाक्षारः (२)

(वृ. यो. त. । त. १०५; वं. से. उदररोगा.)

तिलसर्षपनालानि यवनालं सुधाऽपि च।
दशमूलमपामार्गो दन्तिचित्रकमाढकी ॥
मधूकमैन्द्रीं त्रिफला त्रिवृता करवीरकम्।
पुनर्नवा वृश्चिकाली चार्ककम्पिल्लनिम्बकम् ॥
एषां दश पलान्भागान्युक्त्या दग्ध्वा समावपेत्।
गोमूत्रे द्रोणसंयुक्ते सप्तकृत्वस्तु पाचयेत् ॥
अथात्रेमानि चूर्णानि समावाप्य पुनः पचेत्।
वचामतिविषां पाठां द्वे हरिद्रे महौषधम् ॥
त्रिवृत्कम्पिल्लकं क्षारं तथैव लवणानि च।
महौषधं शिग्रुफलं कुष्ठं भल्लातकानि च ॥
पिप्पलीश्च विडङ्गानि त्रिफलां देवदारु च।
कटुकारोहिणीमुस्तं दन्तीहिङ्ग्वम्लवेतसम् ॥
दधिशुक्तारनालानामाढकाढकमावपेत्।
समसंज्ञेन भागेन सर्पिस्तैलं विपाचयेत् ॥
विगतार्चिर्यथा शान्तमथैनमवतारयेत्।
ततो विडालपदकं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥
मद्यैरम्लैश्च लाभेन क्षीरमूत्रेण वा पुनः।
महाक्षार इति ख्यातो जठराणां विनाशनः ॥
प्लीहोऽर्शांसि च गुल्मानि शूलं च हृदयग्रहम्।
यक्ष्माणं च प्रमेहं च पाण्डुरोगं भगंदरम् ॥
सकृमीन्ग्रहणीदोषान्वन्ध्योदावर्तकुण्डलान्।
मूत्रकृच्छ्रमपस्मारं क्षारोऽयं विनिवर्तयेत् ॥

तिल और सरसोंकी नाल (डण्डी), मकाकी नाल, थूहर (सेंड) का डंडा, दशमूलकी प्रत्येक औषधि, अपामार्ग (चिरचिटा), दन्तीमूल, चीतामूल, अरहर, महुवा, इन्द्रायण, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत, कनेर, पुनर्नवा (बिसखपरा), वृश्चिकाली, आक, कमीला और नीमकी छाल १०—१० पल (५०—५० तोले) लेकर मिट्टीके बरतनमें बन्द करके इतना पकावें कि सब चीज़ें जलकर भस्म हो जायं। तदनन्तर उस भस्ममें ३२ सेर गोमूत्र मिलाकर पुनः पकावें और जब गोमूत्र जल जाय तो पुनः उतना ही गोमूत्र और डालकर दुबारा पकावें। इसी प्रकार सात बार पाक करें और अन्तमें उसमें बच, अतीस, पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, सोंठ, निसोत, कमीला, जवाखार, पांचों नमक, सोंठ, सहंजनेकी फली, कूठ, भिलावा, पीपल, बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, कुटकी, नागरमोथा, दन्तीमूल, हींग और अम्लबेतका चूर्ण ५०—५० तोले तथा दही, सिरका, कांजी, घी और तैल ८—८ सेर मिलाकर पकावें। जब समस्त द्रव पदार्थ जलकर बिल्कुल शुष्क चूर्ण हो जाय तो अग्नि देनी बन्द कर दें और उसके स्वांग शीतल होनेपर औषधको निकालकर पिसवा लें।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार उष्ण जल या मद्य, कांजी, दूध अथवा गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे समस्त उदररोग, तिल्ली, अर्श, गुल्म, शूल, हृद्ग्रह, यक्ष्मा, प्रमेह, पाण्डु, भगन्दर, कृमिरोग,

ग्रहणी विकार, वन्ध्यत्व, उदावर्त, मूत्रकृच्छ्र, वातकुण्डलिका और अपस्मार आदि रोग नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा–१ से ३ माशे तक।)

(५१२१) महातालीशादिचूर्णम् ×

(व. से. । राजयक्ष्मा.)

तालीशं चित्रकं व्योषं दाडिमं तिन्तिडीयकम् ।
एतेषां पलिकान् भागान् दीप्यको गजपिप्पली॥
यवानी शतभेद्यश्च कृमिघ्नं ग्रन्थिकं तथा ।
चव्यश्च केसरश्चैव हपुषाचाज्यशान्यकम् ॥
जातीफलं लवङ्गश्च त्रिसुगन्धं कणा शुभा ।
एतेषां कर्षमेकन्तु द्विगुणा शर्करा भवेत् ॥
पीनसं राजयक्ष्माणं हृद्रोगं वातपैत्तिकम् ।
मूत्रकृच्छ्रान्नेत्ररोगान् पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव ह्येकादशगलग्रहान् ॥
ज्वरांश्छूलानि चार्शांसि भगन्दरांश्च शोषकान्।
वैस्वर्यहननश्चैव ऊरुस्तम्भं हनुग्रहम् ॥
महातालीशमित्येतत् सर्वान् व्याधीन् व्यपोहति॥

तालीस पत्र, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, अनारदाना और तिन्तड़ीक ५–५ तोले तथा अजमोद, गजपीपल, अजवायन, अमलवेत, बायबिड़ंग, पीपलामूल, चव, नागकेसर, हाऊबेर, जीरा, धनिया, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, तेजपात, पीपल और बंसलोचन १।–१। तोला एवं खांड सबसे दो गुनी (११५ तोले) लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण पीनस, राजयक्ष्मा, वातपित्तज हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, नेत्ररोग, पाण्डुरोग, हलीमक, ८० प्रकारके वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग, २० प्रकारके कफज रोग, ११ प्रकारके गलरोग, ज्वर, शूल, अर्श, भगन्दर, शोष, स्वरभंग, ऊरुस्तम्भ और हनुग्रहादि रोगोंको नष्ट करता है।

(मात्रा–९ माशे तक। साधारण अनुपान–शहद)

(५१२२) महानिम्बबीजयोगः

(वृ. नि. र. । अर्शो.)

महानिम्बस्य बीजानि षडष्टदशसङ्ख्यया ।
चूर्णितं सितया सार्द्धं पिबेद् रक्तार्शसां हितम्॥

बकायनके ६–८ या १० बीजोंके चूर्णको समानभाग खांडमें मिलाकर सेवन करनेसे रक्तार्श का नाश होता है।

(यह एक मात्रा है।)

(५१२३) महाषाडवं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा.; वं. से. । अरोचका.; शा. ध. । ख. २ अ. ६)

तालीसोषणचव्यनागलवणैस्तुल्यांशकैर्द्विस्ततः
कृष्णाग्रन्थिकतिन्तिडीकहुतभुक्त्वग्जीरकाख्यै–
र्युतः ।
विश्वैलाबदराम्लवेतसघनैर्धान्याजमोदायुतै-
स्त्र्यंशैर्दाडिमबीजपादसहितैः श्रेष्ठः सितार्धांशकः
कण्ठास्योदरहृद्विकारशमनः कायाग्निसन्दीपनो
गुल्माध्मानविषूचिकागुदरुजाश्वासक्रिमिच्छ–
र्दिहा ।
कासारुच्यतिसारमूढमरुतां हृद्रोगिणां कीर्तित-
श्चूर्णोऽयंभिषजामतीव दयितः ख्यातो महा–
षाडवः ॥

तालीसपत्र, कालीमिर्च, चव, नागकेसर और सेंधा नमक १–१ भाग तथा पीपल, पीपलामूल,

तिन्तड़ीक, चीता, दालचीनी और जीरा २-२ भाग; सोंठ, इलायची, बेर, अम्लबेत, नागरमोथा, धनिया और अजमोद ३-३ भाग एवं अनारदाना सबसे चौथाई (९॥ भाग) तथा खांड सबसे आधी (२३॥ भाग) लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण कण्ठरोग, मुखरोग, उदररोग, हृद्-यविकार, गुल्म, आध्मान, विषूचिका, अर्श, श्वास, छर्दि, कृमि, खांसी, अरुचि, अतिसार और मूढ-वात को नष्ट तथा जठराग्नि को दीप्त करता है।

(मात्रा -६ माशे तक । अनुपान—शहद)

(५१२४) महासरस्वतीचूर्णम्

(र. र. स. । अ. २४)

अश्वगन्धाजमोदा च वचा कुष्ठं कटुत्रयम् ।
शतपुष्पं ब्रह्मबीजं सैन्धवं च समं समम् ॥
एतदर्द्धं वचार्द्धं च चूर्णितं मधुसर्पिषा ।
भक्षयेत्कर्षमात्रं तु जीर्णान्ते क्षीरभोजनः ॥
सहस्रग्रन्थधारी स्यान्मूको वा वाक्पतिर्भवेत् ।
महासरस्वतीचूर्णं बुद्धिजाड्ये परं हितम् ॥

असगन्ध, अजमोद, बच, कूठ, सोंठ, मिर्च पीपल, सौंफ, ढाकके बीज (पलासपापड़ा) और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसमें उसके बराबर बचका चूर्ण मिला-कर रक्खें।

इसमें से नित्य प्रति १। तोला चूर्ण शहद और घीमें मिलाकर सेवन करने और औषध पचने पर दुग्धाहार करनेसे स्मरणशक्ति इतनी प्रबल हो जाती है कि हज़ारों ग्रन्थ कण्ठस्थ किये जा सकते हैं।

इसके सेवनसे गूंगा व्यक्ति अच्छी तरह बोलने लगता है।

यह चूर्ण बुद्धिकी मन्दता में बहुत ही उप-योगी है।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ माशे।)

महासुदर्शन चूर्णम्

" सुदर्शन चूर्णम् (महा)" देखिये।

माक्षिकादि चूर्णम्

(भै. र.; आ. वे. वि. । प्रमेहा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१२५) मागध्याद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । हिक्काश्वासा. ११)

मागधिका त्रिफलाकृतचूर्णं
यो मधुना सह भोजनकाले ।
खादति तस्य विनश्यति हिक्का
श्वासकफज्वरपीनसपीडा ॥

पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला समानभाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर भोजनके समय चाट-नेसे हिचकी, श्वास, कफ, ज्वर और पीनसका नाश हो जाता है।

(मात्रा—३-४ माशे।)

(५१२६) मातुलुङ्गकेसरादियोगः

(व. से.; वृ. मा. । ज्वरा.)

मातुलुङ्गफलकेसरो धृतः सिन्धुजन्ममरि-
चान्वितो मुखे ।
हन्ति वातकफरोगमास्यगं शोषमाशु
जडतामरोचकम् ॥

बिजौरे नीबूकी केसर, सेंधा नमक और काली मिर्चके चूर्णको मुखमें रखनेसे वातकफज मुखरोग, मुखशोष, मुखकी जडता और अरुचि नष्ट होती है ।

(५१२७) मातुलुङ्गमूलादियोगः

(ग. नि. । वन्ध्या. ५)

मातुलुङ्गशिफां नारी ऋत्वन्ते पयसा पिबेत् ।
नागकेसरपूरास्थिचूर्णं वा गर्भदं परम् ॥

बिजौरे नीबूकी जड़का या नागकेसर और बिजौरे के बीजोंका चूर्ण स्त्रीको मासिक धर्म होनेके पश्चात् दूधके साथ पिलानेसे वह गर्भ धारण कर लेती है ।

(५१२८) मातुलुङ्गादिचूर्णम् (१)

(यो. र.; वृ. मा. । स्त्रीरोगा.; वृ. नि. र. । स्त्री.; व. से. । स्त्रीरो.)

मातुलुङ्गस्य मूलं तु मधुकैः संयुतं तथा ।
घृतेन सहितं पीत्वा सुखं नारी प्रसूयते ॥

बिजौरेकी जड़ और मुलैठी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घृतके साथ पिलानेसे स्त्रीको सुखपूर्वक प्रसव हो जाता है ।

(५१२९) मातुलुङ्गादिचूर्णम् (२)

(वा. भ. । चि. अ. १० ग्रहण्य.)

मातुलुङ्गशठीरास्नाकटुत्रयहरीतकी ।
स्वर्जिकायावशूकाख्यौ क्षारौ पञ्चपटूनि च ॥
सुखाम्बुपीतं तच्चूर्णं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥

बिजौरेकी जड़, कचूर, रास्ना, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, सज्जीखार, जवाखार और पांचों नमक (सेंधा नमक, कांच लवण—कचलोना—सामुद्र लवण, बिड लवण तथा संचल नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—१॥ से ३ माशे तक ।)

(५१३०) मानकमूलादियोगः

(यो. र. । विद्रधिचि.)

शमयति मानकमूलं क्षौद्रयुतं तण्डुलाम्भसा पीतम् ।
अन्तर्भूतं विद्रधिमुद्धतमाश्वेव मनुजस्य ॥

मानकन्दके चूर्णको शहदमें मिलाकर चावलोंके पानीके साथ पीनेसे कष्टसाध्य अन्तर्विद्रधि भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(मात्रा—१ तोला)

मानसोल्लासचूर्णम्

(रसप्रकरणमें देखिये ।)

मार्कण्डेयचूर्णम्

(भै. र. । ग्रहण्य.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

मार्कवादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । क्षय.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५१३१) मालतीयोगः

(व. से. । स्त्रीरो.)

सूतायाः कुम्भमुदरं पीतं तक्रेण मालतीमूलम् ।
घृतमधुलीढा सहसा करोति धात्री शमं निशा चैव ॥

मालतीकी जड़का चूर्ण तक्रके साथ सेवन करानेसे अथवा आमले या हल्दीका चूर्ण शहद और घीमें मिलाकर चटानेसे प्रसूताका बढ़ा हुवा पेट घट जाता है।

(५१३२) **माषचूर्णम्**

(नपुंसकामृता. । त. ३)

त्रिपलं माषचूर्णं तु तत्समा श्वेतशर्करा ।
आलोड्य मधुसर्पिर्भ्यां पलार्द्धं भक्षयेन्नरः ॥
बलवीर्यकरं शश्वद्वलीपलितनाशनम् ॥

(घीमें भुनी हुई छिलके रहित) उड़दकी दालका चूर्ण और सफेद खांड १५-१५ तोले लेकर एकत्र मिलावें।

इसे २॥ तोलेकी मात्रानुसार शहद और घीमें मिलाकर सेवन करनेसे बलवीर्यकी वृद्धि और बलीपलितका नाश होता है।

(५१३३) **माषचूर्णयोगः**

(ग. नि. । वाजीकरणा.)

प्रसृतिं माषचूर्णस्य धात्रीस्वरसभावितम् ।
घृतक्षौद्रयुतं लीढ्वा प्रमदा दश गच्छति ॥

१० तोले उड़दके चूर्णको आमलेके स्वरसकी कई भावना देकर सुखा लें।

इसे घी और शहदमें मिलाकर चाटनेसे अत्यन्त कामवृद्धि होती है।

(व्यवहारिक मात्रा-१ से २ तोले तक।)

(५१३४) **माषपर्ण्यादिचूर्णम्**

(ग. नि. । वाजीकरणतन्त्र.)

समूलिका माषपर्णी सिता शृङ्गाटकं यवाः ॥
स्वगुप्तामूलयष्ट्याह्वविदारीक्षुरकाः समाः ।
सपियाला कृताश्चूर्णं पृथङ् मध्वाज्यषड्गुणाः ॥
पादाभ्यामस्पृशन्भूमिं लिहन्कोलमितं पुमान् ।
लभते बलमुत्साहं स्त्रीषु याति कुलिङ्गवत् ॥

माषपर्णी (बनउड़द), माषपर्णीकी जड़, मिश्री, सिंघाड़ा, जौ, कौंचकी जड़, मुलैठी, बिदारीकन्द और तालमखाना तथा चिरौंजी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें इससे ६ गुना घी और इतना ही शहद मिलाकर रात्रिको सोते समय चाटें और उसके बाद भूमि पर पांव न रक्खें।

इसे इस प्रकार सेवन करनेसे बल और उत्साह बढ़ता तथा मनुष्य कुलिङ्गवत् (बारबार) स्त्री समागम कर सकता है।

(मात्रा-१ तोला।)

(५१३५) **माषादिचूर्णम्** (१)

(वृ. यो. त. । त. १४७)

माषपिप्पलिशालीनां यवगोधूमयोस्तथा ।
शर्करापिप्पलीयुक्तं चूर्णं तद्वृष्यमिष्यते ॥

उड़द, पीपल और शाली चावल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें अथवा जौ, गेहूं, खांड और पीपल बराबर बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

यह दोनों चूर्ण कामशक्तिकी वृद्धि करते हैं।

(मात्रा-१ से २ तोले तक। अनुपान-घी और शहद।)

(५१३६) **माषादिचूर्णम्** (२)

(यो. र.; वं. से.; भा. प्र. । सोमरो.)

माषचूर्णं समधुकं विदारीमधुशर्कराम् ।
पयसा पाययेत्प्रातः सोमधारणमुत्तमम् ॥

उड़द, मुलैठी और बिदारीकन्द समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें खांड और शहद मिलाकर प्रातः काल दूधके साथ सेवन करने से स्त्रियोंका सोमरोग नष्ट होता है।

(मात्रा-१ तोला।)

मुक्तादिचूर्णम्

(च. सं. । चि. अ. २१)

रसप्रकरणमें देखिये।

(५१३७) मुखधावनयोगः

(ग. नि. । ज्वरा.)

हरीतकी प्रियङ्गुश्च पिप्पली रोध्रमेव च ।
दार्वी हरिद्रा तेजोह्वा सक्षौद्रं मुखधावनम् ॥
एतेन कटुभावाच्च मुखरोगश्च शाम्यति ।
वक्त्रं विशदतामेति भक्तच्छन्दश्च जायते ॥

हर्र, फूलप्रियङ्गु, पीपल, लोध, दारुहल्दी, हल्दी और तेजबल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर जिह्वा आदिपर मलकर कुल्ले करनेसे मुखरोगोंका नाश होता तथा भोजनमें रुचि उत्पन्न होती है एवं मुख स्वच्छ हो जाता है।

(५१३८) मुण्डयादिचूर्णम् (१)

(यो. स. । समुद्दे. ६)

मुण्डीकृष्णाभेषजानां रजोभिलीढं क्षौद्रं सुस्वरत्वं करोति ।

गोरखमुण्डी, पीपल और सोंठके चूर्णको शहदमें मिलाकर चाटनेसे स्वर मधुर हो जाता है।

(मात्रा-१॥ माशा। दिनमें ३-४ बार सेवन करें।)

(५१३९) मुण्डयादिचूर्णम् (२)

(यो. स. । समुद्दे. ७)

मुण्डीचूर्णं काञ्जिकेन प्रपीतं
हन्यात्क्षिप्रं वक्त्रदुर्गन्धिभावम् ।

गोरखमुण्डीके चूर्णको काञ्जीमें मिलाकर पीनेसे मुखकी दुर्गन्धि नष्ट होती है।

(मात्रा-६ माशेसे १ तोले तक)

(५१४०) मुण्डयादिचूर्णम् (३)

(यो. स. । समुद्दे. ७)

मुण्डी मुशल्यौ शतमूलिका च
भृङ्गार्कः सर्वमिदं समांशम् ।
विचूर्ण्य मुष्टिप्रमितं नराणा-
मन्त्रप्रवृद्धिं विनिहन्ति सद्यः ॥

गोरखमुण्डी, दोनों मूसली, शतावर और भंगरा समान भाग लेकर चूर्ण करके ५ तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अन्त्रवृद्धि रोग नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा-३ से ६ माशे तक)

(५१४१) मुद्गपुष्पादियोगः

(यो. र. । योनिरोगा.; भा. प्र. । म. खं. योनिरो.)

मुद्गपुष्पं सखदिरं पथ्या जातीफलं तथा ।
वृकी पूगं च सञ्चूर्ण्य वस्त्रपूतं क्षिपेद्भगे ॥
योनिर्भवति सङ्कीर्णा न स्रवेच्च जलं ततः ॥

मूंगके फूल, कत्था, हर्र, जायफल, पाठा और सुपारी समानभाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे योनिमें छिड़कनेसे योनि संकीर्ण हो जाती है और यदि उससे जलस्राव होता हो तो वह भी बन्द हो जाता है ।

(५१४२) मुशल्यादिचूर्णम्

(नपुंसकामृ. । त. ३; शा. ध. । ख. २ अ. ६)

मुसलीकन्दचूर्णं च गुडूचीसत्वसंयुतम् ।
वानरीगोक्षुराभ्यां च शाल्मलीशर्करामलः ॥
आलोड्य घृतदुग्धाभ्यां भक्षयेत्कामवृद्धये ॥

मूसली, बिदारीकन्द, गिलोयका सत, कौंचके बीज, गोखरु, सेंमलकी मूसली, खांड और आमला समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घीमें मिलाकर दूधके साथ पीनेसे कामवृद्धि होती है ।

(मात्रा-३ माशे ।)

(५१४३) मुशल्यादियोगः

(ग. नि.; यो. र. । अर्शो.)

तक्रेणार्शांसि निघ्नन्ति मुशलीकुटजाग्निकाः ।
पीता वा कुटजाब्दाग्निमञ्जिष्ठाः सपुनर्नवाः ॥

काली मूसली, इन्द्रजौ और चीता समान भाग लेकर चूर्ण बनावें अथवा इन्द्रजौ, नागरमोथा, चीता, मजीठ और पुनर्नवा (बिसखपरा) बराबर बराबर लेकर चूर्ण बना लें ।

इनमेंसे कोई एक चूर्ण तक्रके साथ सेवन करनेसे अर्शका नाश हो जाता है ।

(मात्रा-२-३ माशे ।)

(५१४४) मुष्टियोगौ

(भै. र. । मूत्राघाता.)

जलेन खदिरीबीजं मूत्राघाताश्मरीहरम् ।
मूलं रुद्रजटायाश्च तक्रं पीतं तदर्थकृत् ॥

अशोकके बीजोंके चूर्णको जलके साथ सेवन करने अथवा रुद्रजटाकी जड़के चूर्णको तक्रके साथ पीनेसे मूत्राघात और अश्मरी नष्ट होता है ।

(५१४५) मुस्तकादिचूर्णम्

(यो. र.; वं. से.; वृ. नि. र. । बालरो.)

मुस्तकातिविषायासे[१]कणाभृङ्गीरजो लिहन् ।
मधुना मुच्यते बालः कासैः पञ्चभिरुच्छ्रितैः ॥

नागरमोथा, अतीस, धमासा (पाठ भेदके अनुसार बासा), पीपल और काकड़ासिंगी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी ५ प्रकारकी खांसी नष्ट होती है ।

(५१४६) मुस्तादिचूर्णम् (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

मुस्ताटरूपकफलत्रिकदारुभार्गी
व्याघ्री सपुष्पफलमूलदलैरुपेता ।
रास्ना विषा मधुरसा सुरसादलानि
चूर्णं निहन्ति कथितेन जलेन कासम् ॥

नागरमोथा, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, भरंगी, कटेलीका पञ्चाङ्ग, रास्ना, अतीस, मूर्वा (अथवा मुलैठी) और तुलसीके पत्ते समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे खांसी नष्ट होती है ।

(मात्रा २-३ माशे ।)

---

१. यासेति पाठान्तरम् ।

(५१४७) **मुस्तादिचूर्णम्** (२)

(वृ. नि. र.; व. से.; भा. प्र. । ग्रहणी.; वृ. नि. र. । बालरोगा.)

मुस्तकातिविषाबिल्वकुटजं सूक्ष्मचूर्णितम् ।
मधुना च समालीढं ग्रहणीं सर्वजां हरेत् ॥

नागरमोथा, अतीस, बेलगिरी और इन्द्रजौ समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे सर्वदोषज ग्रहणी नष्ट होती है।

(मात्रा—३—४ माशे ।)

(५१४८) **मुस्तादिचूर्णम्** (३)

(वृ. नि. र. । शूला.)

मुस्तं वचा तिक्तकरोहिणी च
तथाभया निर्दहनं च तुल्यम्।
पिबेत्तु गोमूत्रयुतं कफोत्थे
शूले तथा यस्य च पाचनार्थम् ॥

नागरमोथा, बच, कुटकी, हर्र और शुद्ध भिलावा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे कफजशूल नष्ट होता है। यह चूर्ण आमको भी पचाता है।

(५१४९) **मुस्ताद्यं चूर्णम्**

(ग. नि. । कासा.)

मुस्ताटरूषसुरदारुशिरीषकाक-
जङ्घाविडङ्गकटुकत्रयपद्मकानि ।
भार्गी फलत्रयमिदं सकलं हि चूर्णं
मध्वान्वितं हरति पञ्चविधं च कासम् ॥

नागरमोथा, बासे की जड़की छाल, देवदारु, सिरसकी छाल, काकजंघा, बायबिड़ंग, सोंठ, मिर्च, पीपल, पद्माख, भरंगी, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ चाटनेसे पांच प्रकारकी खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा—३—४ माशे ।)

(५१५०) **मुस्तायोगः**

(रा. मा. । अ. ३८)

तन्दुलोदकयुतं परिपिष्टं
मूलमम्बुधरस्य घृताढ्यम् ।
पीयमानमतिदारुणवेगं
कृत्रिमं गरलमाशु निहन्ति ॥

नागरमोथेकी जड़को पीसकर थोड़ेसे घीमें मिलाकर चावलोंके पानीके साथ पीनेसे अति दारुण कृत्रिम विष नष्ट हो जाता है।

(५१५१) **मूर्वादिचूर्णम्**

(भा. प्र. । म. खं. वमना.)

सोद्गारायां भृशं छर्द्यां मूर्वाया धान्यमुस्तयोः ।
समधुकाञ्जनं चूर्णं लेहयेन्मधुसंयुतम् ॥

मूर्वा, धनिया, नागरमोथा, मुलैठी और सुरमा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे जिसमें डकार भी आती हों ऐसी भयङ्कर छर्दि नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१—१॥ माशा ।)

(५१५२) **मूर्वाद्यं चूर्णम्** (१)

(ग. नि. । पाण्डु.)

मूर्वाबलान्वितं चूर्णं चित्रकस्योष्णवारिणा ।
पाण्डुरोगविनाशाय प्रातरुत्थाय संपिबेत् ॥

मूर्वा, बला (बीजबन्द) और चीता समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे प्रातः काल उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे पाण्डु रोग नष्ट होता है।

(मात्रा-३ माशे।)

(५१५३) मूर्वाद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । कासा.)

मूर्वामागधचव्यचित्रकवचापाठाशिरीषं तथा।
भार्गीमागधमूलमुस्तमरिचं शुण्ठीविडङ्गानि च ॥
एला सेन्द्रयवानिका सकटुका स्याज्जीरकं रेणुका
चैतत्सातिविषं सहिङ्गु कफजे कासे हितं चूर्णितम् ॥

मूर्वा, पीपल, चव, चीतामूल, बच, पाठा, सिरसकी छाल, भरंगी, पीपलामूल, नागरमोथा, काली मिरच, सोंठ, बायबिडंग, इलायची, इन्द्रजौ, अजवायन, कुटकी, जीरा, रेणुका, अतीस और भुनी हुई हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण कफज खांसीको नष्ट करता है।

(मात्रा-३ माशे। शहदके साथ मिलाकर चाटें।)

(५१५४) मूर्वाद्युद्वर्तनम् (१)

(ग. नि. । बालग्रहा.)

मूर्वाबलाश्वगन्धासप्तच्छदमूलचोरकैः सजलैः।
उद्वर्तनं प्रदिष्टं शिशुगात्रवर्द्धनं ग्रहनुत् ॥

मूर्वा, खरैटीकी जड़, असगन्ध, सतौनेकी जड़की छाल और चोरक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे पानीमें मिलाकर बालकोंके शरीरपर मलनेसे उनका शरीर पुष्ट होता और ग्रहदोष दूर होते हैं।

(५१५५) मूर्वाद्युद्वर्तनम् (२)

(ग. नि. । बालग्रहा.)

मूर्वामूलहरिद्रासप्तच्छदसर्षपैस्तुल्यम्।
सर्वशिशुग्रहनाशनमुद्वर्तनमम्बुना पिष्टैः ॥

मूर्वाकी जड़, हल्दी, सतौनेकी जड़की छाल और सरसों समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे पानीमें मिलाकर बच्चोंके शरीर पर मलनेसे ग्रहदोष दूर होते हैं।

मृतसञ्जीवनचूर्णम्

(धन्व. । ग्रहण्य.)

प्रयोग संख्या ३४२३ " नागरादि चूर्णम (३) " देखिये।

(५१५६) मृदुविरेचनयोगः

(सु. सं. । सूत्र. अ. ४४)

शर्कराक्षौद्रसंयुक्तं त्रिवृच्चूर्णावचूर्णितम्।
रेचनं सुकुमाराणां त्वक्पत्रमरिचांशकम् ॥

निसोत, दालचीनी, तेजपात और काली मिरच समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमें खांड और शहद मिलाकर खानेसे सुख पूर्वक विरेचन हो जाता है।

यह योग सुकुमार व्यक्तियोंके लिये है।

(५१५७) मेघनादादिचूर्णम्

(व. से. । रक्तातिसा.)

मेघनादस्य मूलानि मधुना सितया सह।
निहन्ति शोणितस्रावं तण्डुलोदकपानतः ॥

कांटेवाली चौलाईकी जड़के चूर्णमें शहद और खांड मिलाकर उसे चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है।

(मात्रा-३ से ६ माशे तक।)

(५१५८) मेथिकाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । परिशि. चूर्णा.)

मेथिका शतपुष्पा च यवानी मधुयष्टिका ।
त्रिकटु त्रिफला मुस्ता त्रिजातं च पुनर्नवा ॥
ऋष्यप्रोक्ता समङ्गा च चन्दनं रक्तचन्दनम् ।
द्राक्षापुष्करमञ्जिष्ठाः समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
घृतखण्डेन पक्तव्यं काले स्त्रीणां च दापयेत् ।
वन्ध्यानां गर्भजननं स्त्रीणां बलविवर्द्धनम् ॥
रक्तवातप्रशमनं पित्तोपद्रवनाशनम् ।
त्रिदोषे रुद्धगर्भे च परमं सुखकारकम् ॥

मेथी, सोया, अजवायन, मुलैठी, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, तेजपात, दालचीनी, इलायची, पुनर्नवा, शतावर, लज्जावन्ती, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, मुनक्का, पोखरमूल और मजीठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसमें घी और खांड मिलाकर गरम करके सेवन करानेसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण करती है ।

इसके अतिरिक्त यह वातरक्त, पित्तविकार और त्रिदोष जन्य गर्भावरोधको भी नष्ट करता है। इसके सेवनसे स्त्रियोंकी बलवृद्धि भी होती है ।

इति मकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ मकारादिगुटिकाप्रकरणम्

मण्डूरवटकः

रस प्रकरणमें देखिये ।

मण्डूरगुटिका

रस प्रकरणमें देखिये ।

मदनमञ्जरीगुटिका

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५१५९) मदनमोदकः

(भै. र. । ग्रहण्य.; र. र. स. । अ. २७)

त्रैलोक्यविजयापत्रं सबीजं घृतभर्जितम् ।
समे शिलातले पश्चाच्चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥
त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी कुष्ठधान्यकसैन्धवम् ।
शठी तालीसपत्रं च कट्फलं नागकेसरम् ॥
अजमोदा यवानी च यष्टीमधुकमेव च ।
मेथी जीरकयुग्मं च गृहीत्वा श्लक्ष्ण चूर्णितम् ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावदेव तदौषधम् ।
तावदेव सिता देया यावदायाति बन्धनम् ॥
घृतेन मधुना युक्तं मोदकं परिकल्पयेत् ।
त्रिसुगन्धसमायुक्तं कर्पूरेणापि वासयेत् ॥
स्थापयेद्घृतभाण्डे च श्रीमन्मदनमोदकान् ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय वातश्लेष्मविनाशनम् ॥
कासघ्नं सर्वशूलघ्नं वलीपलितनाशनम् ।
आमवातविकारघ्नं संग्रहग्रहणीहरम् ॥
सदा निषेवयेद्धीमान् रुच्यमग्निविवर्धनम् ।
एतत्कामविवृद्ध्यर्थं नारदेन प्रकीर्तितम् ॥
तेन स्त्रीणां सहस्राणि रेमे स यदुनन्दनः ॥

घीमें भुनी हुई बीज सहित भांगकी पत्ती २० तोले, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, काकड़ासिंगी, कूट, धनिया, सेंधा नमक, कचूर, तालीसपत्र, कायफल, नागकेशर, अजमोद, अजवायन, मुलैठी, मेथी, सफेद ज़ीरा और काला ज़ीरा १-१ तोला ले कर सबका महीन चूर्ण बनावें और फिर (सबके बराबर) खांडकी चाशनी बनाकर उसमें यह चूर्ण मिला दें। जब ठण्डा हो जाय तो उसमें (१०-१० तोले) घी और शहद तथा १-१ तोला तेजपात, दालचीनी, इलायची और कपूरका बारीक चूर्ण मिलाकर छोटे छोटे मोदक बना लें और चिकने पात्रमें सुरक्षित रक्खें।

इन्हें प्रातःकाल सेवन करनेसे वातज और कफज रोग, खांसी, हरप्रकारका शूल, वलीपलित, आमवात और संग्रहणी का नाश तथा अग्निकी वृद्धि होती है।

नारद मुनि-कथित यह श्री मदन मोदक बहुत ही अधिक वाजीकरण है।

(मात्रा-३ से ६ माशे तक। अनुपान गर्म दूध।)

(५१६०) मदनवर्द्धनो मोदकः

(वै. र.। वाजीकरणा.)

गोक्षुरेक्षुरबीजानि वाजिगन्धा शतावरी।
मुसली वानरीबीजं यष्टी नागबला बला॥
एषां चूर्णं दुग्धसिद्धं गव्येनाज्येन भर्जितम्।
सितया मोदकं कृत्वा भक्ष्यं वाजीकरं परम्॥
चूर्णादष्टगुणं क्षीरं घृतं चूर्णसमं स्मृतम्।
सर्वतो द्विगुणं खण्डं खादेदग्निबलं यथा॥

गोखरु, तालमखाना, असगन्ध, सतावर, मूसली, कौंचके बीज, मुलैठी, नागबला और बला (बीजबन्द) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। तदनन्तर उसे उससे ८ गुने दूधमें मिलाकर पकावें। जब खोया (मावा) हो जाय तो उसे चूर्णके बराबर गोघृत में भूनें और फिर सबसे २ गुनी खांडकी चाशनी में मिलाकर (३-३ तोलेके) लड्डू बनालें।

इन्हें सेवन करनेसे कामशक्तिकी वृद्धि होती है।

मदनानन्दमोदकः

(भै. र.। वाजीकरण.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१६१) मधुकाद्या गुटिका

(व. से.। रक्तपित्ता.)

मधुकं मधूकं द्राक्षा त्वक्क्षीरी पिप्पली तथा।
त्रिजातस्य त्रयः कर्षाः शर्करायाः पलद्वयम्॥
द्राक्षामधुकखर्ज्जूरं पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम्।
मधुना गुटिका बद्धा हन्ति सा पित्तशोणितम्॥
कासश्वासारुचिच्छर्दिमूर्च्छाहिक्कामदभ्रमान्।
क्षतक्षयं स्वरभ्रंशं प्लीहानं दीर्घमारुतान्॥
रक्तनिष्ठीवहृत्पार्श्वरुक्पिपासाज्वरानपि॥

मुलैठी, महुवा, मुनक्का, बंसलोचन, पीपल, दालचीनी, तेजपात और इलायची १।-१। तोला, खांड १० तोले तथा मुनक्का, मुलैठी और खजूर ५-५ तोले लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूट छानकर चूर्ण बनालें और शेष चीज़ोंको पत्थरपर बारीक पीस लें और फिर सबको शहदमें मिलाकर (१-१ तोलेके) मोदक बनालें।

इनके सेवनसे रक्तपित्त, खांसी, श्वास, छर्दि, अरुचि, मूर्च्छा, हिचकी, मद, भ्रम, क्षतक्षय, स्वर-भंग, पुरानी वातव्याधि, रक्त थूकना, हृदय और पसलीकी पीड़ा, तृष्णा और ज्वरका नाश होता है।

मध्यपानीयभक्तगुटिका

(रसे. चि. म. । अ. ९)

प्रयोग संख्या ४३२४ पानीयभक्तवटी (मध्यम) देखिये।

(५१६२) मरिचादिगुटिका

(यो. त. । त. २८; वृ. यो. त. । त. ७८; वै. र.; च. द.; यो. र.; वृ. मा.; भा. प्र.; ग. नि.; र. र.; भै. र.; वं. से. । कासा; शा, ध. । खं. २ अ. ७; वृ. नि. र. । स्वरभेदा.; यो. चि. म. । अ. ३)

कर्षः कर्षांशपलं पलद्वयं स्यात्ततोऽर्धकर्षश्च ।
मरिचस्य पिप्पलीनां दाडिमगुडयावशूकानाम् ॥
सर्वौषधैरसाध्या ये कासाः सर्ववैद्यनिर्मुक्ताः ।
अपि पूयं छर्दयतां तेषामिदमौषधं पथ्यम् ॥

काली मिर्च १। तोला, पीपल १। तोला, अनारदाना ५ तोले× गुड़ १० तोले और जवा-खार ७॥ माशे लेकर गुड़के अतिरिक्त सब चीज़ोंका महीन चूर्ण करके उसे गुड़में मिलाकर १-१ माशे की गोलियां बनालें।

जिस खांसीको अन्य किसी भी औषधसे आराम न होता हो और जिसे वैद्योंने असाध्य कह दिया हो तथा जिसमें पीप आता हो वह भी इन गोलियों के उपयोगसे नष्ट हो जाती है।

×किसी किसी ग्रन्थमें अनारदाना २॥ तोले लिखा है।

(से. वि.—१-१ गोली मुंहमें रखकर रस चूसें दिन भरमें १२ गोलीसे अधिक न खावें।)

(५१६३) मरिचादिमोदकः

(यो. र. । अर्श.; हा. सं. । स्था. ३ अ. ११; वृ. नि. र. । अर्श.)

मरिचमहौषधचित्रकसूरणभागा यथोत्तरं द्विगुणाः।
सर्वसमो गुडभागः सेव्योऽयं मोदकः प्रसिद्धफलः॥

काली मिरच १ भाग, सोंठ २ भाग, चीता-मूल ४ भाग, और जिमीकन्द (सूरण) ८ भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनाकर उसे १५ भाग गुड़में मिला कर (१-१ तोलेके) मोदक बनालें।

इनके सेवन से अर्श नष्ट होती है।

(५१६४) मरिचादिवटी

(वृ. नि. र. । अर्श.; धन्व. । अर्श.)

मरिचं खदिरं सारं गैरिकं तार्क्ष्यजं तथा ।
समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णीकृतानि च ॥
कुक्कुरमर्दकरसैस्त्रिदिनं मर्दयेत् दृढम् ।
त्रिमाषिका वटी कार्या रक्तजार्शोविनाशिनी ॥

काली मिर्च, कत्था, गेरु और रसौत समान भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बना कर उसे ३ दिन कुकरौंदे के रसमें घोटें और फिर ३-३ माशे की गोलियां बना लें।

इन्हें सेवन करनेसे रक्तार्श नष्ट हो जाती है।

(५१६५) मरिचाद्या गुटिका (१)

(ग. नि. । गुटिका. ४)

मरिचं पिप्पली पाठा यवक्षारं सनागरम् ।
एला पत्रत्वचं पथ्या सैन्धवं चाम्लवेतसम् ॥
मधुना गुटिका ह्येषा कण्ठरोगविनाशिनी ॥

काली मिर्च, पीपल, पाठा, जवाखार, सोंठ, इलायची, तेजपात, दालचीनी, हर्र, सेंधा नमक और अम्लबेत समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे शहद में मिला कर (३-३ माशेकी) गोलियां बनालें।

यह गोलियां कण्ठरोगोंका नाश करती हैं।

(५१६६) मरिचाद्या गुटिका (२)

(ग. नि. । गुटिका. ४)

मरिचपिप्पलीनागरचित्रकान्
क्रमविवर्धितभागसुचूर्णितान् ।
शिखिचतुर्गुणसूरणयोजितान्
कुरु गुडेन गुडान् गुदजच्छिदे ॥

काली मिर्च १ भाग, पीपल २ भाग, सोंठ ३ भाग, चीतामूल ४ भाग और जिमीकन्द (सूरण) १६ भाग लेकर सबका महीन चूर्ण बनावें और उसे (दो गुने) गुड़में मिला कर (२-२ तोले के) मोदक बना लें।

इन्हें सेवन करनेसे अर्श नष्ट हो जाती है।

(५१६७) मलपाचनी गुटी

(र. प्र. सु. । अ. ८)

मिश्रदेशजमतीव शुद्धकं
नागफेनमपि नागरान्वितम् ।
घर्षितं तु वरचन्दनैर्युतं
कारये वटिकां सुशोभनाम् ॥
रक्तिकात्रयमितां च भक्षयेत्
पाययेत्तदनु तन्दुलोदकम् ।
हन्ति चैवमतिसारकं सदा
चामदोषमलनाशिनी भवेत् ॥

मिश्र देश की शुद्ध अफीम, और सोंठ तथा सफेद चन्दनका महीन चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर पानीकी सहायतासे ३-३ रत्ती की गोलियां बना लें।

इन्हें चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे अतिसार नष्ट होता है। ये गोलियां आमको पचाती और मलको दूर करती हैं।

(५१६८) मलयूफलमोदकम्

(यो. र. । प्रदर.; वृ. नि. र. । स्त्री रोगा.)

मलयूफलचूर्णस्य शर्करासहितस्य च ।
मधुना मोदकं कृत्वा खादेत्प्रदरनाशनम् ॥

कठूमर (कठगूलर) के फलोंका चूर्ण और खांड समान भाग ले कर दोनोंको शहदमें मिला कर (१-१ तोले के) मोदक बना लें।

इन्हें सेवन करने से स्त्रियोंका प्रदररोग नष्ट हो जाता है।

महाकल्याणवटी

रस प्रकरणमें देखिये।

महाकामेश्वरमोदकः

(धन्व.; र. र.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१६९) महाक्षारवटी

(यो. र. । उपदंश)

महाक्षारमाकल्लकं खादिरं च
क्रमाद्वर्धितं वारिणा पिष्टमेतत् ।
निषेवेत माषप्रमाणं घृतेन
महारोगनिघ्नं व्रणेषु व्रणघ्नम् ॥

गोधूमं गोघृतं पथ्यं मन्दं लवणमाचरेत् ।
द्विवारं ग्राहयेन्नित्यमुपदंशनिवृत्तये ॥

महाक्षार (शोरा या सावीन नामक द्रव्य) १ भाग, अकरकरा २ भाग और कत्था ३ भाग ले कर सबका महीन चूर्ण करके उसे पानी के साथ घोट कर १-१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इन्हें प्रातः सायं घृत के साथ खाने और घावों पर लगाने से उपदंश नष्ट हो जाता है ।

पथ्य—गेहूं की रोटी और गायका घी खाना चाहिये । नमक कम खाना चाहिये ।

(५१७०) महाखदिरवटिका

(व. से. । मुखरोगा.)

गायत्रिसारतुलयारिमवल्कलानां
सार्द्धं तुलायुगलमम्बुघटैश्चतुर्भिः ।
निःक्वाथ्य पादमवशेषसुवस्त्रपूतं
भूयः पचेदथ शनैर्मृदुपावकेन ॥
तस्मिन् घनत्वमुपगच्छति चूर्णमेषां
श्लक्ष्णं क्षिपेच्च कवलग्रहभागिकानाम् ।
एलामृणालसितचन्दनचन्दनानां
श्यामा तमालविकसानललोहयष्टी ॥
लज्जाफलत्रयरसाञ्जनधातकीनां
श्रीपुष्पगैरिककटाह्वयकट्फलानाम् ।
पद्माह्वलोध्रवटरोहयवासकानां
मांसीनिशासुरभिवल्कलसंयुतानाम् ॥
कङ्कोलजातिफलकोशलवङ्गकानां
चूर्णीकृतानि विदधीत पलांशकानाम् ।
शीतेऽवतार्य्य घनसारचतुष्पलञ्च
क्षिप्त्वा कलायसदृशीं गुटिकां प्रकुर्यात् ॥
शुष्का मुखे विनिहिता विनिवारयन्ति
रोगान् गलोष्ठरसनाद्विजतालुजातान् ।
कुर्य्यान्मुखे सुरभितां पटुतां रुचिञ्च
स्थैर्य्यान्वितञ्च दशनं रसनालघुत्वम् ॥

६। सेर खैरसार और १५ सेर ५० तोले दुर्गन्धित खैरकी छाल लेकर उसे अधकुटा करके दोनोंको एकत्र मिलाकर १२८ सेर पानीमें पकावें जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे कपड़ेसे छानकर पुनः मन्दाग्नि पर पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित चीज़ोंका अत्यन्त महीन चूर्ण मिलावें—

इलायची, खस, सफेद चन्दन और लाल चन्दन १।-१। तोला तथा पीपल, तेजपात, मजीठ, चीता, अगर, मुलैठी, लज्जावती, हर्र, बहेड़ा, आमला, रसौत, धायके फूल, सफेदकमल, गेरु, दारुहल्दी, कायफल, पद्माक, लोध, बड़के अंकुर, जवासा, जटामांसी (बालछड़), हल्दी, मौलसिरीकी छाल, कंकोल, जायफल, जावत्री और लौंग ५-५ तोले।

इन सब चीज़ोंका चूर्ण मिलाकर उसे अग्निसे नीचे उतार लें और ठण्डा होने पर २० तोले कपूरका चूर्ण मिलाकर मटरके समान गोलियां बनाकर सुखालें ।

इन्हें मुखमें रखनेसे गले ओष्ठ, जिह्वा, दांत और तालुके रोग नष्ट होते और मुख सुगन्धिमय हो जाता है । रुचि बढ़ती है तथा दांत मज़बूत होते हैं एवं जिह्वामें लघुता आ जाती है ।

महाभक्तपाककवटी

प्रयोग संख्या ६९३५ " भक्तविपाकवटी " देखिये ।

(५१७१) **महामदनमोदकः**

(ध. व.; र. र. । वाजीकरणा)

त्रैलोक्य विजयापत्रं सबीजं घृतभर्जितम् ।
समे शिलातलेपश्चाच्चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥
शतावरीरजश्चैव विदारीकन्दजं रजः ।
बलातिबलयोश्चैव मूलवल्कलजं रजः ॥
गोक्षुरक्षुरयोर्बीजाद्रजो वानरिबीजतः ।
एतदेकीकृतं यावत् शतावर्य्यादिजं रजः ॥
तस्माच्चतुर्गुणं कार्य्यं त्रैलोक्य विजयारजः ।
स्वरसेऽथ शतावर्या विदार्याः स्वरसे तथा ॥
पयसाथ समे तस्मिन् गोलयेच्चूर्णसञ्चयम् ।
गोलयित्वा सितां चैव शक्रचूर्णाच्चतुर्गुणाम् ॥
पचेदवहितो वैद्यो मन्दमन्देन वह्निना ।
ततः पाकक्रमं दृष्ट्वा भृष्ट्वा चैवाऽसितं तिलम् ॥
बुद्ध्वावतारितं दद्यात् मोदकार्थं भिषग्वरः ।
त्रिकटु त्रिसुगन्धं च सैन्धवं सधनीयकम् ॥
जातीकोषफलं चैव बालकं जीरकद्वयम् ।
शटी कुन्दुरुखोटिश्च मुस्ता मधुरिका मुरा ॥
मांसी तालीसपत्रं च पत्रवारेन्द्रमेव च ।
ग्रन्थिपर्णं शिवा चैव तथैव शतपुष्पिका ॥
चविका देवदारुश्च सप्रियङ्गु लवङ्गकम् ।
सरलः शैलजश्चैव सर्वमेतद्विचूर्णयेत् ॥
अत्र यद्भर्जने युक्तं द्रव्यं तद्गन्धवृद्धये ।
भर्जयित्वा कृतं चूर्णं शक्रचूर्णस्य पादिकम् ।
सैन्धवं स्वादुता योग्यं देयं कटुकमेव च ।
ततः सुमिलितं कुर्यान्मोदकं परिकल्पयेत् ॥
भूयस्त्रिजातके चूर्णे चूर्णे त्र्यूषणजे तथा ।
लोडयेन्मोदकानेतान् सिद्धार्थानर्थ सिद्धये ॥
काञ्चने राजते पात्रे कांस्येसम्पुटके न्यसेत् ।
रजस्त्रिजातानास्तीर्य्य कर्पूरेणाधिवासयेत् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय महामदनमोदकम् ।

शतावरका चूर्ण १ तोला, विदारीकन्दका चूर्ण १ तोला, खरैटी और कंघीकी जड़की छालका चूर्ण १-१ तोला, गोखरु, तालमखाना और कौंचके बीजोंका चूर्ण १-१ तोला तथा घीमें भुनी हुई बीजयुक्त भांगकी पत्तियोंका चूर्ण २८ तोले लेकर सबको एकत्र मिलावें और फिर उसमें २८ तोले शतावरका रस, २८ तोले विदारीकंदका रस तथा २८ तोले गायका दूध डालकर घोल दें फिर उसमें ११२ तोले खांड मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्नलिखित चीजोंका समान भाग मिश्रित चूर्ण ७ तोले मिलावें काले तिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, सेंधा नमक, धनिया, जायफल, जावित्री, सुगंधबाला, सफेद ज़ीरा, कालाज़ीरा, कचूर, कुन्दरु, नागरमोथा, सौंफ, मुरामांसी, जटामांसी, तालीसपत्र, तेजपात, वारेन्द्र (?), गठीवन, हर्र, सोया, चव, देवदारु, फूलप्रियङ्गु, लौंग, धूपसरल और छारछरीला। इनमें से तिल इत्यादि भूनने योग्य चीजोंको तवे पर भून लेना चाहिए और फिर चूर्ण करके उपरोक्त पकी हुई औषधमें मिला देना चाहिये इसे स्वादिष्ट बनानेके लिए उचित मात्रामें सेंधा नमक और सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण भी मिला देना चाहिए तत्पश्चात् मोदक बना कर उन्हें दालचीनी, तेजपात, इलायची, सोंठ, मिर्च और पीपलके चूर्णमें आलोडित करें। फिर सोने, चांदी या कांसीके पात्रमें दालचीनी, तेजपात, इलायची और कपूरका चूर्ण बिछा कर उसमें इन

मोदकों को भर कर रख दें एवं सुगंधित हो जाने पर सेवन करें।

मात्रा—१ तोला। समय—प्रातः काल।

(अनुपान—दूध)

इनके सेवनसे कामवृद्धि होती है।

महामृत्युञ्जया गुटिका

(र. सं. क. । उल्लास ५)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१७२) **महारतिवल्लभो मोदकः**

(धन्व.; यो. र. । वाजीक.)

समूलपत्रशाखायास्तुलां शक्राशनस्य च ।
संरुद्धयोदूखले छित्वाऽपां द्रोणे हि तथा च वै ॥
क्वाथं पादावशिष्टन्तु वस्त्रपूतं च कारयेत् ।
क्षीरप्रस्थं समादाय खण्डस्यार्द्धशतं न्यसेत् ॥
शतावरीरसस्याष्टौ पिप्पल्याः कुडवन्तथा ।
सर्वमेतत्समालोड्य घृतप्रस्थेन मेलयेत् ॥
औषधानान्ततश्चूर्णं दापयेत्पालिकं पृथक् ।
त्रिकटुत्रिफलाचव्यमेलात्वक्पत्रकेशरम् ॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं धान्यकाजाजिमेथिकाः ।
कुष्ठाब्दरेणुकाव्योषभार्ङ्गीतालीशकेशरम् ॥
तालमूली त्रिवृद्दन्ती श्रेयसी हिङ्गुपौष्करम् ।
लवङ्गजातिकोषश्च यमानी कारवी तथा ॥
शुभा जातीफलं चन्द्रं शृङ्गी चैव विदारिका ।
अष्टवर्गश्च कङ्कोलं श्लक्ष्णचूर्णश्च कारयेत् ॥
गुडवद्विपचेद्वैद्यो मोदकं कारयेत्ततः ।
अक्षमात्रश्च जग्ध्वैनं शीतलं पाययेज्जलम् ॥
नाशयेच्छुक्रदोषश्च षण्ढश्चैवातिदारुणम् ।
श्रीकरं लाघवकरं मेधाबुद्धिप्रवर्द्धनम् ॥

मूल पत्र और शाखायुक्त ६। सेर भांगको ओखलीमें कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तदनन्तर उस क्वाथमें २ सेर दूध, ३ सेर १० तोले खांड, १ सेर शतावरका रस, आधसेर पीपलका क्वाथ और २ सेर घी मिला कर पुनः पकावें। जब गाढा हो जाय तो निम्न लिखित प्रक्षेप द्रव्योंका चूर्ण मिलाकर १।—१। तोलेके मोदक बनाकर रक्खें।

प्रक्षेप द्रव्य—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव्य, इलायची, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, चीता, पीपलामूल, धनिया, जीरा, मेथी, कूठ, नागरमोथा, रेणुका, सोंठ, मिर्च, पीपल, भरंगी, तालीसपत्र, नागकेसर, काली मूसली, निसोत, दन्तीमूल, गजपीपल, हींग, पोखरमूल, लौंग, जावत्री, अजवायन, कालाजीरा, बंसलाचन, जायफल, कपूर, काकड़ासिंगी, बिदारीकन्द, अष्टवर्ग (मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली) और कंकोल १।—१। तोला।

इन्हें सेवन करनेसे शुक्रदोष और दारुण नपुंसकता दूर होती तथा सौन्दर्य, मेधा और बुद्धिकी वृद्धि होती है।

मात्रा—१ मोदक। अनुपान—शीतलजल

(५१७३) **महारसोनपिण्डः**

(भै. र.;[1]यो. र.। आमवाता.; यो. त. । त. ४२)

तुलाक्षुण्णरसोनस्य तदर्धं लुञ्चितास्तिलाः ।
पात्रे तु गव्यतक्रस्य पिष्टद्रव्यैः समं क्षिपेत् ॥

१ भैषज्य रत्नावलीमें सफेद जीरा ४ पल लिखा

त्र्यूषणं धान्यकं चव्यं चित्रकं गजपिप्पली ।
अजमोदा त्वगेला च ग्रन्थिकं च पलांशकम् ॥
शर्करायाः पलान्यष्टौ पञ्चाजाज्याः पलानि च ।
कृष्णाजाज्याश्च चत्वारि राजिकायास्तथैव च ॥
पलप्रमाणं दातव्यं हिङ्गोर्लवणपञ्चकम् ।
आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पिषोऽष्टौ पलानि च ॥
तिलतैलस्य तावन्ति शुक्तस्यापि च विंशतिः ।
सिद्धार्थकस्य चत्वारि द्विगुणं मधुनस्तथा ॥
एकीकृत्य दृढे भाण्डे धान्यराशौ निधापयेत् ।
द्वादशाहात्समुद्धृत्य प्रातः खादेद्यथाबलम् ॥
सुरां सौवीरकं चाथ मधु वाऽपि पिबेन्नरः ।
जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टकवर्जितम् ॥
एकमासोपयोगेन सर्वव्याधिहरो भवेत् ।
अशीतिर्वातजा रोगा चत्वारिंशच्च पित्तजाः ॥
विंशतिः श्लेष्मजांस्तद्वन्नश्यन्ते तस्य सेवनात् ।
योनिशूलं प्रमेहांश्च कुष्ठोदरभगन्दरान् ॥
अर्शोगुल्मक्षयांश्चापि जयेद्रुचिबलप्रदः ॥

छिला हुवा ल्हसन ६। सेर, छिलके रहित तिल ३ सेर १० तोले तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, चव, चीता, गजपीपल, अजमोद, दालचीनी, इलायची और पीपलामूल १-१ पल (५-५ तोले); खांड ८ पल, जीरा ५ पल, कालाजीरा ४ पल, राई ४ पल, एवं हींग और पांचों नमक (सेंधा नमक, काला नमक, खारी नमक, कचलोना, और सामुद्र लवण) ५-५ तोले, अदरक ४ पल, घी ८ पल, तिलकातेल ८ पल, सिरका २० पल, सरसों ४ पल और शहद ८ पल लेकर पीसने योग्य चीज़ोंको पत्थर पर पीसलें और कूटने योग्य चीज़ोंको कूट छानकर चूर्ण बना लें और फिर सब चीज़ोंको मिट्टीके चिकने पात्रमें भरकर उसमें ४ सेर तक डालकर पात्रका मुख बन्द करके उसे अनाजके ढेरमें दबा दें तथा १२ दिन पश्चात् निकालकर काममें लावें।

इसे प्रातः काल यथोचित मात्रानुसार सुरा, सौवीरककांजी या शहदके साथ सेवन करना और औषध पचने पर दही तथा पिट्ठीके बने पदार्थों के अतिरिक्त यथेच्छ भोजन करना चाहिये।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे ८० प्रकारके वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग, २० प्रकारके कफरोग, योनिशूल, प्रमेह, कुष्ठ, उदर-रोग, भगन्दर, अर्श, गुल्म और क्षयादि रोग नष्ट होकर रुचि और बलकी वृद्धि होती है।

(मात्रा-६ माशेसे १ तोले तक ।)

नोट १-समस्त पदार्थोंको पात्रमें भरकर धूपमें रख देना चाहिये और जलांश सूख जाने पर पात्रका मुख बन्द करके अनाजके ढेर में दबाना चाहिये।

२-ऊपर तक्र, शहद, घृतादि द्रव पदार्थों का जो परिमाण लिखा है उसे दूना कर लेना चाहिये।

महाराजवटी

रस प्रकरणमें देखिये।

महाविद्यागुटी

(र. र. स. । उ. खं. अ. १७)

रस प्रकरणमें देखिये।

है तथा काले जीरेकी जगह कूठ और १ पल काली मिर्च अधिक लिखी हैं एवं हींग और पंच लवणका परिमाण १-१ कर्ष (१।-१। तोला) लिखा है।

महाशङ्खवटी

(भै. र. । अग्निमान्द्या.; र. रा. सु. । अजीर्णा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

महोदधिवटी

रस प्रकरणमें देखिये ।

माक्षिकादिवटी

रस प्रकरणमें देखिये ।

माणादिगुटिका

मानकादि गुटिका देखिये ।

(५१७४) माणिभद्रमोदकः

(च. द. । अर्श.; ग. नि. । गुटिका. ४; व. से. । विरेचना.; वा. भ. । अ. १९ कुष्ठा.; भै. र. । अर्श.)

विडङ्गसारामलकाभयानां
पलं पलं स्यात्रिवृता त्रयं च ।
गुडस्य षड् द्वादशभागयुक्ता
मासेन त्रिंशद्गुटिका विधेयाः ॥
निवारणे यक्षवरेण सृष्टः
स माणिभद्रः किल शाक्यभिक्षवे ॥
अयं हि कासक्षयकुष्ठनाशनो
भगन्दरप्लीहजलोदरार्शसाम् ॥
यथेष्टचेष्टान्नविहारसेवी
अनेन वृद्धस्तरुणो भवेच्च ॥

बायबिड़ंगकी गिरी, आमला और हर्र १-१ पल (५-५ तोले) तथा निसोत ३ पल लेकर सबका महीन चूर्ण करके उसे ६ पल गुड़में मिलाकर सबके ३० मोदक बना लें।

इनमेंसे प्रति दिन १-१ मोदक सेवन करनेसे खांसी, क्षय, कुष्ठ, भगन्दर, प्लीहा, जलोदर और अर्श का नाश होता तथा वृद्ध पुरुष तरुणके समान हो जाता है।

इस पर यथेष्ट आहार विहार करना चाहिये। किसी विशेष परहेज़की आवश्यकता नहीं है।

(व्यवहारिक मात्रा—पावसे आधा मोदक तक।)

(५१७५) मानकादिगुटिका

(माणादि गुटिका)

(भै. र. । प्लीहयकृद्रो.; धन्व. । उदर.; च. द. । प्लीहा. ३८; व. से. । उदर.)

मानमार्गामृता वासा स्थिरा सैन्धवचित्रकम् ।
नागरं तालपुष्पञ्च प्रत्येकञ्च त्रिकार्षिकम् ॥
बिडसौवर्चलक्षारपिप्पल्यश्चापि कार्षिकाः ।
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं गोमूत्रस्याढके पचेत् ॥
सान्द्रीभूते गुडीं कुर्याद्दत्वा त्रिपलमाक्षिकम् ।
यकृत्प्लीहोदरहरो गुल्मार्शोग्रहणीहरः ॥
योगः परिकरो नाम्ना अग्निसन्दीपनः परः ॥

मानकन्द, लाल अपामार्ग (चिरचिटा), गिलोय, बासा (अडूसा) की जड़, शालपर्णी, सेंधा नमक, चीतामूल, सोंठ और ताड़के फूल ३-३ कर्ष तथा विडनमक, सञ्चल नमक, जवाखार और पीपल १-१ कर्ष (१।-१। तोला) लेकर सबका महीन चूर्ण बनावें और उसे ८ सेर गोमूत्र में मिलाकर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार लें और ठण्डा होने पर उसमें १५ तोले शहद मिलाकर गोलियां बना लें।

इन्हें सेवन करनेसे यकृत, प्लीहा, उदररोग, गुल्म, अर्श और ग्रहणी विकारका नाश तथा अग्निकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—३—४ माशे।)

(५१७६) मानकादिगुटिका (वृहत्)

(भै. र. । प्लीहा.)

मानमार्गस्थिरावह्निस्नुहीनागरसैन्धवम् ।
तालरण्डं क्रिमिघ्नश्च हवुषं चविका वचा ॥
बिडसौवर्चलक्षारपिप्पलीशरपुङ्खकम् ।
जीरकं पारिभद्रश्च प्रत्येकं कर्षकद्वयम् ॥
सार्द्धाढके गवां मूत्रे पचेत्सर्वं सुचूर्णितम् ।
सान्द्रीभूते क्षिपेदेषां चूर्णकं कर्षसम्मितम् ॥
अजाजी त्र्यूषणं हिङ्गु यमानी पुष्करं शटी ।
त्रिवृद्दन्ती विशाला च दत्त्वा त्रिपलमाक्षिकम् ॥
खादेदग्निबलापेक्षी बुद्ध्वा चानुपिबेन्नरः ।
यकृत्प्लीहोदरानाहगुल्मं पाण्डुं सकामलम् ॥
कुक्षिशूलञ्च हृच्छूलं पार्श्वशूलमरोचकम् ।
शोथञ्च श्लीपदं हन्ति जीर्णञ्च विषमज्वरम् ॥

मानकन्द, लाल अपामार्ग (चिरचिटा), शालपर्णी, चीता, सेहुंड (सेंड—थूहर) की जड़, सोंठ, सेंधा नमक, तालजटा, बायविडंग, हाऊबेर, चव, बच, बिड नमक, काला नमक (सञ्चल), जवाखार, पीपल, सरफोंका, जीरा और पारिभद्र (फरहद) की जड़की छाल २—२ कर्ष (२॥—३॥ तोले) ले कर सब का महीन चूर्ण बनावें और उसे १२ सेर गोमूत्रमें पकावें। जब वह गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, अजवायन, पोखरमूल, कचूर, निसोत, दन्तीमूल और इन्द्रायणकी जड़का १।-१। तोला चूर्ण मिलाकर अग्नि से नीचे उतार लें और ठण्डा होने पर उसमें ३ पल (१५ तोले) शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार उचित अनुपान के साथ सेवन करनेसे यकृत्, प्लीहा, उदररोग, अफारा, गुल्म, पाण्डु, कामला, कुक्षिशूल, हृदयका शूल, पसलीकी पीड़ा, अरुचि, शोथ, श्लीपद और पुराने विषम ज्वरका नाश हो जाता है।

(मात्रा—३—४ माशे।)

(५१७७) मार्कण्डीपत्रगुटिका

(ग. नि. । राजय. ६)

मार्कण्डीपत्रचूर्णस्य गुटिकां मधुना कृताम् ।
धारयेत्सततं वक्त्रे कासविष्टम्भशान्तये ॥

मार्कण्डी(सनाय) के पत्तों के चूर्णको शहदमें मिला कर गोलियां बना लें।

इन्हें मुखमें रखनेसे खांसी नष्ट होती है।

(५१७८) माषादिमोदकः

(शा. ध. । खं. २ अ. ७)

निस्तुषं माषचूर्णं स्यात्तथा गोधूमसम्भवम् ।
निस्तुषं यवचूर्णं च शालितन्दुलजं तथा ॥
सूक्ष्मं च पिप्पलीचूर्णं पलिकान्युपकल्पयेत् ।
एतदेकीकृतं सर्वं भर्जयेद्गोघृतेन च ॥
अर्धमात्रेण सर्वेभ्यस्ततः खण्डं समं क्षिपेत् ।
जलं च द्विगुणं दत्त्वा पाचयेच्च शनैः शनैः ॥
ततः पक्वं समुद्धृत्य वृत्तान् कुर्वीत मोदकान् ।
भुक्त्वा सायं पलैकं च पिबेत्क्षीरं चतुर्गुणम् ॥

वर्जनीयौ विशेषेण क्षाराम्लौ द्वौ रसावपि ।
कृत्वैवं रमयेन्नारीर्वह्निर्न क्षीयते नरः ॥

छिलके रहित उड़दकी दालका चूर्ण, गेहूंका आटा, तुष रहित जौका चूर्ण, शाली चावलोंका चूर्ण और पीपलका अत्यन्त बारीक चूर्ण ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर १२॥ तोले घीमें भूनें और फिर उसमें २५ तोले खांड तथा ५० तोले पानी मिला कर पकावें। जब पाक तैयार हो जाय तो ५-५ तोले के मोदक बना कर रक्खें।

इनमें से सायंकालको १ मोदक पावसेर दूध के साथ खाना और क्षार तथा अम्ल पदार्थों से परहेज़ करना चाहिये।

इन्हें सेवन करके स्त्री समागम करनेसे कामाग्नि क्षीण नहीं होती।

(नोट-खांड की पृथक् चाशनी बना कर उसमें ओषधियोंका चूर्ण मिला कर भी मोदक बनाये जा सकते हैं।)

मिहिरोदयवटी

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१७९) मुण्ड्यादिगुटिका

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य)

मुण्डीशतावरीमुस्तावानरीदुग्धिकामृता ।
यष्टीकं सैन्धवं तुल्यं सूक्ष्मचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
चूर्णस्य द्विगुणा योज्या विजया मृदुभर्जिता ।
घृतस्निग्धे पचेद्भाण्डे दुग्धं दशगुणं गवाम् ॥
यावत्पिण्डत्वमापन्ना तावन्मृद्वग्निना पचेत् ।
पिण्डतुल्यं तु सत्क्षौद्रं मिश्री निष्कत्रयं त्रयम् ॥
भक्षयेद्विजयेदेव द्वन्द्वजं ग्रहणीगदम् ।
पित्तवाते श्लेष्मपित्ते सम्यक् पित्ते च योजयेत् ॥

गोरखमुण्डी, शतावर, नागरमोथा, कौंचके बीज, दुद्धी, गिलोय, मुलैठी और सेंधा नमक समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें, और फिर उसमें उस समस्त चूर्णसे २ गुनी हल्की भुनी हुई भांगका चूर्ण मिलाकर सबको घृतसे चिकनी की हुई कढ़ाईमें दश गुने गोदुग्धमें मन्दाग्नि पर पकावें।

जब गाढ़ा होकर गोला सा हो जाय तो उसमें उसके बराबर शहद मिलाकर १-१ तोलेके मोदक बनालें।

इन्हें सेवन करनेसे द्वन्द्वज (पित्तवातज, और श्लेष्मपित्तज) संग्रहणी तथा पित्तका नाश होता है।

(५१८०) मुण्ड्यादिगुटिका

(र. र । मुखरोग.)

मुण्डी शुण्ठी वचा कुष्ठं पाठा क्षौद्रविनिश्चितम् ।
गुटिकां धारयेद्दन्ते कृमिशूलहरं भवेत् ॥

गोरखमुण्डी, सोंठ, बच, कूठ और पाठा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे शहदमें मिलाकर (बेरकी गुठलीके बराबर) गोलियां बना लें।

इनमें से एक एक गोली पीड़ा वाले दांतके नीचे रखनेसे दांतके कृमि और शूल नष्ट हो जाते हैं।

(५१८१) मुस्तकादिमोदकः

(भै. र. । ग्रहण्य.)

धान्यकं त्रिफला भृङ्गं त्रुटिः पत्रं लवङ्गकम् ।
केशरं शैलजं शुण्ठी पिप्पलीर्मरिचानि च ॥

जीरकं कृष्णजीरश्च यमानी कट्फलं जलम् ।
धातकीपुष्पकं व्याधिर्जातीकोषफले त्वचम् ॥
मधूरिका चाजमोदा हवुषं नागपर्ण्यपि ।
उग्रगन्धा शटी मांसी कुटजस्य फलं शुभा ॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् कुशलो भिषक् ।
सर्वचूर्णसमं देयं जलदस्यापि चूर्णकम् ॥
सिता च द्विगुणा देया मोदकं परिकल्पयेत् ।
महाग्निजननं ह्येतत्सरक्तां ग्रहणीं तथा ॥
अतीसारं ज्वरं घोरं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
क्रिमिरोगं रक्तपित्तर्शरोगं सुदुर्जयम् ॥
लोकानां गदशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकाशितम् ॥

धनिया, त्रिफला, भांगरा, छोटी इलायची, तेजपत्र, लौंग, नागकेसर, छारछरीला, सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, श्वेतजीरा, कालाजीरा, अजवाइन, कायफल, सुगन्धबाला, धाय के फूल, कूठ, जावित्री, जायफल, दारचीनी, सौंफ, अजमोद, हाऊबेर, पान, वच, कचूर, जटामांसी (बालछड़), इन्द्रजौ, वंशलोचन; प्रत्येक का चूर्ण १ तोला; मोथा ३२ तोले, खांड १२८ तोले। यथाविधि पाक करके मोदक बनावें। यह मोदक अग्निप्रदीपक हैं तथा सरक्त ग्रहणी, अतीसार, ज्वर, पाण्डु, हलीमक, क्रिमि, रक्तपित्त, अर्श आदि रोगों को नष्ट करते हैं। मात्रा—आधे तोले से एक तोले तक।

(५१८२) मुस्तकाद्यमोदकः

(भै. र. । ग्रहणी.)

त्रिकटु त्रिफला चित्रं लवङ्गं जीरकद्वयम् ।
यमान्यौ द्वे मधुरिका नागवल्लीदलं तथा ॥
शतपुष्पा वरी धान्यं चातुर्जातं तथा तुगा ।
मेथी जातीफलं ग्राह्यं प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ॥
मुस्तकं षट्पलं देयं सिता च द्विगुणा मता ।
ग्रहणीं हन्त्यतीसारं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
अजीर्णमामदोषञ्च विसूचीमपि दारुणाम् ।
पुष्टिं देहस्य जनयेद्बलवर्णाग्निवृद्धिकृत् ॥
वलिपलितदौर्बल्यं क्षपयेत् कृशतामपि ॥

त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, लौंग, श्वेतजीरा, काला जीरा, अजवाइन, अजमोद, सौंफ, पान, सोया, शतावरी, धनिया, दारचीनी, तेजपत्र, छोटी इलायची, नागकेसर, वंशलोचन, मेथी, जायफल; प्रत्येक १। तोला, और मोथा ३० तोले, तथा खांड १२० तोले लेकर कूटने योग्य चीज़ोंका चूर्ण बनाकर उसे खांडकी चाशनीसें मिलाकर मोदक बनावें। ये मोदक ग्रहणी, अतिसार, मन्दाग्नि, अरुचि, अजीर्ण, आमदोष, विसूचिका, वलीपलित, दुर्बलता तथा कृशता को दूर करते हैं। तथा देहको पुष्ट और बलवर्ण तथा अग्निकी वृद्धि करते हैं।

(५१८३) मुस्तादिवटी

(ग. नि. । मुखरो.; रा. मा. । मुखरो.)

मुस्तैलवालुमधुकैर्गदधान्यकाभ्यां
गुटया वटी विनिहिता वदनान्तराले
स्वभाविकोऽपि मुखमुज्झति पूतिगन्धो
वार्ता तु मद्यलशुनादिभवस्य कैव ॥

नागरमोथा, एलवालुक, मुलैठी, कूठ, धनिया और छोटी इलायची समान भाग लेकर कूट छानकर पानीके साथ गोलियां बना ले।

इन्हें मुखमें रखनेसे मुखकी स्वाभाविक दुर्गन्ध भी नष्ट हो जाती है फिर मद्य और ल्हसन आदिकी गन्ध की तो बात ही क्या है।

मुस्तादिवटी

(वृ. नि. र.)

रस प्रकरणमें देखिये।

मृतसञ्जीवनीवटी

रस प्रकरणमें देखिये।

मृद्वीकादिगुटी

(वृ. नि. र. रक्तपि.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१८४) मेथीमोदकः

(भै. र. । ग्रहणी.; धन्व.; र. र. । वाजीकरणा.)

त्रिकटुत्रिफलामुस्तजीरकद्वय धान्यकम् ।
कट्फलं पौष्करं शृङ्गी यमानी सैन्धवं विडम् ॥
तालीशकेशरं पत्रं त्वगेला च फलं तथा ।
जातीकोषं लवङ्गश्च मुरा कर्पूरचन्दनम् ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावदेव तु मेथिका ।
सञ्चूर्ण्य मोदकः कार्यः पुरातनगुडेन च ॥
घृतेन मधुना किञ्चित् खादेदग्निबलं प्रति ।
अग्निश्च कुरुते दीप्तं सामे मेदे महौषधम् ॥
बलवर्णकरो ह्येष संग्रहग्रहणीहरः ।
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति मूत्राघातं तथाश्मरीम् ॥
पाण्डुरोगं तथा कासं यक्ष्माणं हन्ति कामलाम् ।
स्तनौ च पतितौ गाढौ स्यातां तालफलोपमौ॥
दृष्टिप्रसादनश्चैव नारीणाश्चैव पुत्रदः ।
भाषितं कामदेवेन मेथीमोदकसंज्ञकः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, सफेद जीरा, काला जीरा, धनिया, कायफल, पोखरमूल, काकड़ा सिंगी, अजवायन, सेंधा नमक, बिडनमक, तालीसपत्र, नागकेसर, तेजपात, दालचीनी, इलायची, जायफल, जावत्री, लौंग, मुरामांसो, कपूर और सफेद चन्दनका चूर्ण १-१ भाग तथा मेथीका चूर्ण सबके बराबर और गुड़ समस्त पदार्थोंसे दो गुना लेकर गुड़की चाशनी बनाकर उसमें कपूरके अतिरिक्त समस्त चीज़ोंका चूर्ण डालकर अच्छी तरह मिलादें एवं जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें उपरोक्त कपूरका चूर्ण और थोड़ा थोड़ा घृत तथा शहद मिलाकर मोदक बना लें।

इन्हें यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अग्नि दीप्त और बल वर्णकी वृद्धि होती है।

यह मोदक मेदरोगमें अत्यन्त गुणकारी हैं। संग्रहणी, बीस प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, अश्मरी, पाण्डु, खांसी, राजयक्ष्मा और कामलाको नष्ट तथा दृष्टिको स्वच्छ करता है।

इसे सेवन करनेसे स्त्रीके शिथिल स्तन पुनः कठिन तालफलके समान हो जाते हैं तथा उसे पुत्र प्राप्ति होती है।

(मात्रा-आधेसे १ तोले तक।)

(५१८५) मेथीमोदकः (बृहत्)

(भै. र. । ग्रहणी.)

त्रिफला धान्यकं मुस्तं शुण्ठी मरिचपिप्पली ।
कट्फलं सैन्धवं शृङ्गी जीरकद्वयपुष्करम् ॥
यमानी केशरं पत्रं तालीशं बिडमेव च ।
जातीफलं त्वगेला च जयित्रीन्दुलवङ्गकम् ॥
शतपुष्पा मुरामांसी यष्टीमधुकपद्मकम् ।
चव्यं मधूरिका दारु सर्वमेतत्समं भवेत् ॥

यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रा तु मेथिका ।
सितया मोदकं कार्यं घृतमाध्वीक संयुतम् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय यथादोषानुपानतः ।
हन्ति मन्दानलान् सर्वानामदोषं विशेषतः ॥
महाग्निजननं वृष्यमामवातनिषूदनम् ।
ग्रहण्यर्शोविकारघ्नं प्लीहपाण्डुगदापहम् ॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति कासं श्वासञ्च दारुणम् ।
छर्द्यतीसारशमनं सर्वारुचिविनाशनम् ।
मेथीमोदकनामेदं पातञ्जलिमुनेर्मतम् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, धनिया, नागरमोथा, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, कायफल, सेंधा नमक, काकड़ा सिंगी, सफेद जीरा, काला जीरा, पोखरमूल, अजवायन, नागकेसर, तेजपात, तालीसपत्र, बायबिडंग, जायफल, दालचीनी, इलायची, जावत्री, कपूर, लौंग, सोया, मुरामांसी, मुलैठी, पद्माक, चव्य, सौंफ और देवदारुका चूर्ण १-१ तोला तथा मेथीका चूर्ण ३२ तोले और खांड १२८ तोले लेकर खांडकी चाशनी बनाकर उसमें कपूरके अतिरिक्त अन्य समस्त चीजोंका चूर्ण मिला दें और जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें कपूर तथा थोड़ा थोड़ा घी और शहद मिलाकर मोदक बनालें।

इन्हें प्रातः काल यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्य और विशेषतः आमका नाश होता और अग्निकी वृद्धि होती है यह मोदक आमवात, ग्रहणी, अर्श, प्लीहा, पाण्डु, २० प्रकारके प्रमेह, भयङ्कर खांसी तथा श्वास, छर्दि, अतिसार और हरप्रकारकी अरुचिको नष्ट करता है एवं वृष्य है। (मात्रा-आधेसे १ तोले तक।)

मेहमुद्गरवटिका

रस प्रकरणमें देखिये।

इतिमकारादिगुटिकाप्रकरणम् ।

अथ मकारादिगुग्गुलुप्रकरणम् ।

(५१८६) माहिषाख्यो गुग्गुलुः

(वृ. नि. र. । वातरक्त.)

प्रस्थमेकं गुडूच्याश्च सार्धप्रस्थं तु गुग्गुलुः ।
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च तत्प्रमाणं विनिर्दिशेत् ॥
सर्वमेकत्र संक्षिप्य क्वाथयेदुल्बणेम्भसि ।
पादशेषं परिस्राव्य कषायं ग्राहयेद्भिषक् ॥
पुनः पचेत्कषायं वा यावत्सान्द्रत्वमाप्नुयात् ।
दन्तीव्योषविडङ्गानि गुडूचीत्रिफलात्वचः ॥
ततश्चार्धपलं चूर्णं गृहणीयात्तु प्रति प्रति ।
चूर्णं कर्षं त्रिवृत्तायाः सर्वं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥
तस्मिन्सुसिद्धं विज्ञाय कोष्णं पात्रे विनिःक्षिपेत् ।
ततश्चाग्निबलं ज्ञात्वा तस्य मात्रां प्रयोजयेत् ॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं गुदजानग्निसादनम् ।
दुष्टव्रणं प्रमेहं च ह्यामवातं भगन्दरम् ॥
नाडयाढयवातान् श्वयथून् सर्वान्वातामयान् जयेत् ।
अश्विभ्यां निर्मितः पूर्वं माहिषाख्यश्च गुग्गुलुः ॥

गिलोय १ सेर, शुद्ध गूगल १॥ सेर तथा हर्र, बहेड़ा और आमला डेढ़ डेढ़ सेर लेकर गूगलको कपड़ेमें बांध लें और शेष चीज़ोंको अधकुटा करके ३२ सेर पानी में पकावें पकते समय उसमें गूगलकी पोटली भी डाल देनी चाहिये।

जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो क्काथको छान लें और उसमें पोटलीका बचा हुवा गूगल मिलाकर पुनः पकावें जब वह गाढ़ा हो जाय तो निम्न लिखित चीज़ोंका बारीक चूर्ण मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें

दन्तीमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला और दालचीनीका चूर्ण २॥-२॥ तोले तथा निसोतका चूर्ण १। तोला।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे वातरक्त, कुष्ठ, अर्श, अग्निमांद्य, दुष्टव्रण, प्रमेह, आमवात, भगन्दर, नाडीव्रण, आढचवात, शोथ और समस्त वातजरोगोंका नाश हो जाता है। (मात्रा-३ माशे।)

महायोगराजगुग्गुलुः

(योगराज गुग्गुलुः (महा) देखिये।)

इति मकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

अथ मकाराद्यवलेहप्रकरणम्।

(५१८७) मञ्जिष्ठाभयायोगः

(यो. र.। विसर्प.)

मञ्जिष्ठा कुटजो मुस्ता गुडूची रजनीद्वयम्।
कण्टकारी वचा शुण्ठी कुष्ठारिष्टपटोलकम्॥
नागी विडङ्गका माची मोरटा प्लक्षदारुकम्।
कलिङ्गभृङ्गत्रायन्तीपाठाकाश्मीरिका बलिः॥
गायत्री त्रिफला तिक्ता सारिवा नक्तमालकः।
वासोशीरमहावृक्षसोमराजीप्रियङ्गुकाः॥
चन्दनं पर्पटानन्ता विशाला त्रिवृता जलम्।
कटुत्रिकं खुरासानं पलमेकं पृथक्पृथक्॥
द्वात्रिंशतिपलां पथ्यां जलद्रोणे विपाचयेत्।
अष्टावशेषः कर्तव्यः क्काथः सद्भिषजा ततः॥
वस्त्रपूता शिवा कार्या तीक्ष्णलोहेन बेधयेत्।
मधुमध्ये विनिक्षिप्य दिनत्रिःसप्तसंख्यया॥
विनष्टं मधु संत्यज्य मधु श्रेष्ठं पुनः क्षिपेत्।
ततः सुस्वादसंपन्नां प्रभाते भक्षयेच्छिवाम्॥
विसर्पान्नाशयेत्सर्वान्कुष्ठान्यष्टादशापि च।
खुडं पामां च कण्डूं च दद्रुविस्फोटविद्रधीन्॥
अन्यांस्त्वग्दोषजान्रोगांस्तथा रक्तसमुद्भवान्॥

मजीठ, कुड़ेकी छाल, नागरमोथा, गिलोय, हल्दी, दारुहल्दी, कटेली, बच, सोंठ, कूठ, नीमकी छाल, परवल, बांझ ककोड़ेकी जड़, बायबिड़ंग, मकोय, मूर्वा, पिलखनकी छाल, देवदारु, इन्द्रजौ, भंगरा, त्रायमाना, पाठा, खम्भारीकी छाल, अरणी, खैरसार, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, सारिवा, करंजकी छाल, बासा (अडूसा), खस, सेहुंड (सैंड-थूहर) का डंडा, बाबची, फूलप्रियङ्गु, लाल चन्दन, पित्तपापड़ा, अनन्तमूल, इन्द्रायणकी जड़, निसोत, सुगन्धवाला, सोंठ, मिर्च, पीपल और खुरासानी अजवायन ५-५ तोले तथा हर्र

११० तोले लेकर हर्रके सिवाय सब चीज़ोंको अधकुटा करके और हर्रको साबित ही डालकर ३२ सेर पानीमें पकावें जब ४ सेर पानी शेष रहे तो हर्रोंको निकालकर उन्हें सुवे या लोहेकी सींखसे बींधें और फिर शहदमें डाल दें। २१ दिन पश्चात् पुराने शहदको फेंक दें और उनमें नया शहद डाल दें।

इस क्रियासे हर्रें अत्यन्त स्वादिष्ट हो जाती हैं।

इनमेंसे नित्य प्रति प्रातः काल १-१ हर्र सेवन करनी चाहिये।

इन्हें सेवन करनेसे समस्त प्रकारका विसर्प, अठारह प्रकारके कुष्ठ, खुडवात, पामा, खाज, दाद, विस्फोटक, विद्रधि तथा अन्य त्वग्रोग और रक्त विकार नष्ट हो जाते हैं।

मण्डूराद्यवलेहः

रसप्रकरणमें देखिये।

(५१८८) मधुकादिलेहः

(वृ. मा. । कासा.)

मधुकं पिप्पली द्राक्षा लाक्षा शृङ्गी शतावरी ॥
द्विगुणा च तुगाक्षीरी सिता सर्वैश्चतुर्गुणा।
लेहयेन्मधुसर्पिर्भ्यां क्षतकासनिवृत्तये ॥

मुलैठी, पीपल, मुनक्का, लाख, काकड़ासिंगी और शतावर १-१ तोला तथा बंसलोचन १२ तोले और खांड ७२ तोले लेकर मुनक्काको पत्थर पर पीसलें और अन्य चीज़ोंको कूट छानकर महीन चूर्ण बनावें तथा उसे घी और शहदमें मिलाकर रोगीको सेवन करावें।

इसे सेवन करनेसे क्षतज (उरःक्षतकी) खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा-१ तोला)

मधुकाद्यवलेहः

(भै. र. प्रदर.)

रसप्रकरणमें देखिये।

(५१८९) मधुपक्वहरीतकी (१)

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

कदम्बनिम्बचिञ्चानां त्वक्चूर्णं पलषोडशम् ।
अजागोमहिषीमूत्रं त्वक्षोडशगुणोत्तरम् ॥
क्वाथयेत्पादशेषं तु शुद्धं कृत्वा विनिःक्षिपेत् ।
अभयानां शतैकं तु क्वाथयेच्च कषायकम् ॥
जीर्यते ह्यभया पश्चाद्भित्त्वा अण्डं निवारयेत् ।
भृङ्गीसुवर्चलं चूर्णं तुल्यं तेन प्रपूरयेत् ॥
अभयां वेष्टयेत्सूत्रैर्मधुमध्ये त्र्यहं क्षिपेत् ।
नित्यं क्षौद्रसमं भक्ष्या त्रिदोषार्शःप्रशान्तये ॥

कदम्ब की छाल, नीमकी छाल और इमलीकी छाल समान-भाग-मिश्रित १ सेर लेकर सबको अधकुटा करके बकरी, गाय और भैंसके समान-भाग मिश्रित १६ सेर मूत्रमें पकावें और जब ४ सेर मूत्र शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें १०० हर्र डालकर पुनः पकावें जब हर्रें उसीज जायं तो उन्हें चाकूसे चीरकर उनके भीतर की गुठली निकाल डालें और उनमें भंग तथा सञ्चल (काले नमक) का समानभाग-मिश्रित चूर्ण भरकर उन्हें डोरेसे बांध दें और शहदमें डाल दें: एवं ३ दिन पश्चात् सेवन करावें।

इन्हें सेवन करनेसे त्रिदोषज अर्श का नाश हो जाता है।

(से. वि.-नित्य प्रति १-१ हर्र थोड़ेसे शहदके साथ खानी चाहिये।)

(५१९०) मधुपक्वहरीतकी (२)

(भा. प्र. । वाजीकर.)

दशमूलकणावह्निकपित्थश्च विभीतकम् ॥
धान्यकं देवकुसुमं राजवृक्षस्त्रिकण्टकम् ।
वृद्धदारु कुबेराक्षो मूलं वीरणिकाभवम् ॥
एतेषां पलयुग्मन्तु भेषजानां पृथक्पृथक् ।
आढकश्चापि पथ्यायास्तोये पञ्चाढके पचेत् ॥
स्विन्ना पथ्या भवेद्यावत्पश्चान्मधु विनिक्षिपेत् ।
गुरुपदेशाद्विधिवत्त्रिदिनश्च ततः परम् ॥
पुनः क्षिपेत्पञ्चदिनं तथा च दशवासर ् ।
संसिद्धा चाभया पश्चाद्घृतभाण्डे निधापयेत् ॥
विमले सुदृढे क्षौद्रपरिपूर्णे प्रयत्नतः ।
पश्चात्पूर्वोक्तभाण्डे तु क्षिपेद्बुद्धिपरायणः ॥
एषा हरीतकी चैव धन्वन्तरिकृता शुभा ।
भक्षयेद्यो नरो नित्यं रोगा नश्यन्ति सर्वशः ॥
श्वासं कासं क्षयं पाण्डुं हिक्कां छर्दिमदभ्रमान् ।
मुखरोगं तथा तृष्णामरुचिं वह्निमन्दताम् ॥
यकृत्प्लीहोदराणाश्च वातरक्तं सुदारुणम् ।
शिरोऽक्षिकर्णजां पीडां तथा बद्धगुदोदरम् ॥
ग्रहणीं दुर्विकाराश्च शोषं दोषत्रयोद्भवम् ।
मधुपकेति विख्याता हन्ति रोगाननेकशः ॥

दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, पीपल, चीता, कैथ, बहेड़ा, कायफल, काली मिरच, सोंठ, पीपलामूल, सेंधा नमक, लाल रुहेड़ा, दन्तीमूल, मुनक्का, जीरा, हल्दी, दारुहल्दी, आमला, बायबिड़ंग, चिरचिटा, काकड़ासिंगी, देवदारु, पुनर्नवा (बिसखपरा), धनिया, लौंग, अमलतास, गोखरु, विधारामूल, करंज और खस १०--१० तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर अधकुटा करलें और सबको ४० सेर पानीमें पकावें तथा पकाते हुवे उसमें ४ सेर हर्र कपड़ेमें बांधकर डाल दें।

जब हर्र उसीज जायं तो उनको जगह जगहसे (लोहेकी सींखसे बींधकर) शहदमें डाल दें। तीन दिन पश्चात् वह शहद निकाल डालें और दूसरा नया शहद भर दें तदनन्तर ५ दिन पश्चात् और फिर दश दिन बाद शहद और बदल दें और फिर हर्रोंको तैयार समझें।

इन्हें सेवन करनेसे श्वास, खांसी, क्षय, पाण्डु, हिचकी, वमन, मद, भ्रम, मुखरोग, तृष्णा, अरुचि, अग्निमांद्य, यकृत, प्लीहा, उदररोग, दारुण वातरक्त, शिरशूल, कर्णशूल, नेत्रकी पीड़ा, बद्धगुदोदर, ग्रहणी और त्रिदोषज शोष आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं।

(५१९१) मधुपक्कहरीतकी (३)

(वृ. नि. र. । संग्रहणी.)

हरीतकीनां च शतं दोलायन्त्रे शनैः पचेत् ।
सुस्विन्नं गोमये नीरे संसृष्टं वा पुनस्ततः ॥
पश्चात्क्षुद्रशलाकाभिश्छिद्रितं तत्समन्ततः ।
शतं पलानां मधुनो वस्त्रपूतं विनिःक्षिपेत् ॥
स्निग्धभाण्डे विनिःक्षिप्य क्षौद्रं देयं तथा तथा ।
यथा यथा हि मधुनो जलत्वं याति निश्चितम् ॥
पुनर्देयं मधु तथा यावन्नायाति विक्रियाम् ।
तिष्ठत्येवं तथा पथ्या कषायगुणवर्जिता ॥

पिप्पली मरिचं शुण्ठी लवङ्गं वंशलोचनम् ।
प्रत्येकं कर्षमात्रं हि चूर्णितं तत्र निःक्षिपेत् ॥
मधुपक्कभिधा पथ्या बलवर्णाग्निदीपनी ।
एकैकां भक्षयेत्प्रातः सर्वरोगनिवारिणीम् ॥
दुष्टवातं सङ्ग्रहं च तथामं दुष्टशोणितम् ।
जीर्णज्वरं प्रतिश्यायं व्रणं विस्फोटकं तथा ॥
वातशूलं सङ्ग्रहणीं सरुजां नाशयत्यपि ॥

१०० हर्रोंको कपड़ेकी पोटलीमें बांधकर दोलायन्त्रविधिसे गायके गोबरके रसमें पकावें। जब वे अच्छी तरह उसीज जायं तो उन्हें लोहेकी सलाईसे जगह जगहसे बींधकर (कुछ सुखाकर) चिकने बरतनमें सौ पल (१२॥ सेर) कपड़ेसे छने हुवे शहदमें डाल दें। जब वह शहद पतला हो जाय तो उसे निकालकर और नया शहद डाल दें। इसी प्रकार जब तक शहद बिगड़ना बन्द न हो तब तक बार बार बदलते रहें और अन्तमें उसमें १।-१। तोला पीपल, काली मिरच, सोंठ, लौंग और बंसलोचनका चूर्ण मिलादें।

इस विधिसे हर्र कषाय रस-रहित होजाती हैं और इन्हें सेवन करनेसे बल, वर्ण तथा अग्नि की वृद्धि होती और दुष्ट वात, आम, रक्तविकार, जीर्णज्वर, प्रतिश्याय, व्रण, विस्फोटक, वातज शूल और पीड़ा युक्त संग्रहणी आदि रोगोंका नाश होता है।

(मात्रा-१ हर्र।)

(५१९२) मधुपाकविधिः

(ग. नि. । लेहा. ५)

पाठाऽजमोदा मधुकं समङ्गा
मुस्ता जलोशीरविडङ्गधान्यकम् ।
बिल्वाग्निशुण्ठीमगधाः सरोध्र
श्यामाः कुधात्री करिकुङ्कुमं च ॥
जम्ब्वाम्रयोरस्थि सवल्कलं च
सर्वाणि चैतानि पलांशकानि ।
द्रोणे जलस्य प्रपचेत्कषाय-
मष्टावशेषं सितवस्त्रपूतम् ॥
क्षौद्रं क्षिपेदष्टपलप्रमाणं
पलार्धनागाह्वयचन्दनैलाः ।
सहैव सम्मर्द्य विधाय चूर्णं
क्षौद्रान्वितं तच्च पुनर्विपाच्यम् ॥
उत्तार्य लेहं घृतभाजने च
निधापयेत्सप्त दिनानि गुप्तम् ।
तं पाययेद्व्याधिबलं समीक्ष्य
जयेच्च सर्वान् ग्रहणीविकारान् ॥
अरोचकं जीर्णमथातिसारं
तृष्णाम्लपित्तं वमिहृद्ग्रहं च ॥

पाठा, अजमोद, मुलैठी, मजीठ, नागरमोथा, सुगन्धबाला, खस, बायबिड़ंग, धनिया, बेलगिरी, चीता, सोंठ, पीपल, लोध, अनन्तमूल, भुई आमला, नागकेसर, जामन और आमकी गुठली तथा छाल; हरेक वस्तु ५-५ तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर सफेद कपड़ेसे छानकर उसमें १ सेर शहद तथा २॥-२॥ तोले नागकेसर, सफेद चन्दन और इलायचीका चूर्ण मिलाकर पुनः पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसे ठण्डा करके चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और सात दिन पश्चात् काममें लावें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त प्रकारकी ग्रहणी, अरुचि, पुराना अतिसार, तृष्णा, अम्लपित्त, वमन और हृद्ग्रहका नाश होता है।

(५१९३) मधुहरीतकी (१)

(व. से. । रसायना.)

दुर्नामश्वासकासज्वरवमथुतृषापाण्डुतानेत्ररोगान्।
हिक्काकुष्ठातिसारभ्रममदसदृशाऽजीर्णशूलप्रदोषान्॥
तृष्णाशूलास्रपित्तं ज्वरविगतजरारोचकानाह-
वातान्।
हन्यादेतानवश्यं मधुनि परिगता
पूतना चाम्लपित्तम्॥

शहदके साथ हर्र सेवन करनेसे अर्श, श्वास, खांसी, ज्वर, वमन, तृष्णा, पाण्डु, नेत्ररोग, हिचकी, कुष्ठ, अतिसार, भ्रम, मद, अजीर्ण, शूल, रक्तपित्त, जरा, अरुचि, आनाह, वातव्याधि और अम्ल पित्तादि रोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

(५१९४) मधुहरीतकी (२)

(वै. र. । अतिसारा.)

त्रिकण्टकैरण्डबिल्वैः साधिता यवकाञ्जिके॥
आमातिसार शूलानि जयेत् क्षौद्रान्विता शिवा।
केवला वा तथा स्विन्ना मधुना ग्राहिणी मता॥

जौकी कांजीमें गोखरु, अरण्डकी जड़, और बेलगिरीका समानभाग मिश्रित चूर्ण मिलाकर उसमें स्रावित हरडेंको पकावें।

इन्हें यथोचित मात्रानुसार शहदके साथ सेवन करनेसे आमातिसार और शूल नष्ट होता है।

केवल हरडेंको भी जौकी कांजीमें पकाकर शहदके साथ सेवन किया जाए तो भी अतिसार नष्ट हो जाता है।

(कांजी समस्त चूर्णसे ४ गुनी लेनी चाहिये तथा इतना पकाना चाहिये कि हरडें नरम हो जाएं।)

मध्वादिलेहः

(ग. नि. । रा. य. ९)

रसप्रकरणमें देखिये।

मनःशिलादिलेहः

(व. से.; वृ. मा. । छर्दि.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५१९५) महाकल्याणको गुडः

(ग. नि. । गुटिका; वृ. यो. त. । त. ६७; भा. प्र.; वं. से. । ग्रहणी.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रको हस्ति पिप्पली।
धान्यकश्च विडङ्गानि यवानी मरिचानि च॥
त्रिफला चाजमोदा च नीलिनी जीरकं तथा।
सौवर्चलं सैन्धवं च सामुद्रं रुचकं विडम्॥
आरग्वधश्च त्वक्पत्रं सूक्ष्मैलामुपकुञ्चिकाम्।
नागरेन्द्रयवांश्चैव षड्विंशद्येककर्षसम्मिताः॥
मृद्वीकायाःपलान्यत्र चत्वारि कथितानि हि।
त्रिवृतायाः पलान्यष्टौ गुडस्यार्द्धतुलां तथा॥
तिलतैलपलान्यष्टावामलक्या रसस्य तु।
प्रस्थत्रयमिदं सर्वं शनैर्मृद्वग्निना पचेत्॥
औदुम्बरं चामलकं बदरश्च यथाबलम्।
तावन्मात्रमिदं खादेद्भक्षयेद्वा यथानलम्॥
निखिलान्ग्रहणीरोगान्प्रमेहांश्चैव विंशतिम्।
उरोघातं प्रतिश्यायं दौर्बल्यं वह्निसङ्क्षयम्॥

ज्वरानपि हरेत्सर्वान्कुर्यात्कान्तिं मतिं बलम् ।
पाण्डुरोगाश्ववाद्धन्ति रक्तपित्तश्च विड्ग्रहम् ॥
धातुक्षीणो वयःक्षीणः स्त्रीषु क्षीणः क्षयी च यः।
तेभ्यो हितश्च वन्ध्यायै महाकल्याणको गुडः ॥

पीपल, पीपलामूल, चीता, गजपीपल, धनिया, बायबिडंग, अजवायन, कालीमिर्च, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजमोद, नीलकी जड़, जीरा, कालानमक (संचल), सेंधा नमक, सामुद्र नमक, सज्जीखार, बिड नमक (बिरया संचर), अमलतास, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची, कलौंजी, सोंठ और इन्द्रजौ का चूर्ण १।-१। तोला; (पत्थर पर पिसी हुई) मुनक्का २० तोले; निसोतका चूर्ण ४० तोले; गुड़ ३ सेर १० तोले; तिलका तेल १ सेर और आमलेका स्वरस ६ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उतार कर ठण्डा करके चिकने पात्रमें भरकर रख दें।

इसे नित्य प्रति अग्निबलानुसार गूलर, आमला या बेरके बराबर सेवन करनेसे समस्त ग्रहणी रोग, बीस प्रकार के प्रमेह, उरःक्षत, प्रतिश्याय, निर्बलता, अग्निमांद्य, समस्त ज्वर, पाण्डु, रक्तपित्त और मलावरोधका नाश होता तथा कान्ति, मति और बलकी वृद्धि होती है।

जिनकी धातु क्षीण है, जिनकी आयु क्षीण हो चुकी है और जिनमें कामशक्ति की कमी है उनके लिये तथा क्षयी और वन्ध्या स्त्रियोंके लिये यह गुड़ अत्यन्त उपयोगी है।

(५१९६) महाभल्लातकावलेहः

प्रयोग संख्या ४८६२ "भल्लातकावलेह" देखिये।

(५१९७) माक्षिकाविडवलेहः

(यो. र. । छर्दि; वृ. यो. त. । त. ८३)

सिताचन्दनमध्वाढ्यं विलिहेन्मक्षिकाशकृत् ।
सोपद्रवा पित्तभवा छर्दिरेतेन शाम्यति ॥

मक्खीकी बीट (विष्ठा) में मिश्री और सफेद चन्दन मिलाकर शहदके साथ चटानेसे उपद्रवयुक्त पित्तज वमन नष्ट हो जाती है।

(५१९८) मागधिकादिलेहः

(ग. नि. । हिक्काश्वासा. ११)

मागधिका तन्मूलं नागरबिभीतकं च सञ्चूर्ण्य।
क्षौद्रयुतोऽवलेहः शमयति कासं त्रिरात्रेण ॥

पीपल, पीपलामूल, सोंठ और बहेड़ा समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर उसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे खांसी ३ दिनमें ही नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१॥ माशा । दिनमें ४—५ बार ।)

(५१९९) मातुलुङ्गादिलेहः

(वृ. नि. र. । कासा.)

मातुलुङ्गरसो हिङ्गुत्रिफला मधु शर्करा ।
सर्पिर्मध्वावलेहोयं पित्तकासविनाशकृत् ॥

बिजौरेका रस, भुनी हुई हींग, हर्र, बहेड़ा, आमला, मुलैठी और मिश्री समान भाग लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूट छानकर चूर्ण बनावें और फिर सबको घी और शहदमें मिलाकर सेवन करें।

यह अवलेह पित्तज खांसीको नष्ट करता है

(५२००) मातुलुङ्गाद्यवलेहः

(वृ. यो. त. । वातगु.)

मातुलुङ्गरसोहिङ्गु दाडिमं विडसैन्धवम् ।
सुरामण्डेन पातव्यं वातगुल्मप्रशान्तये ॥

बिजौरे नीबूका रस, हींग, अनारदाना, बिड लवण, और सेंधा नमक का अवलेह बनाकर सुरामण्डके साथ सेवन करनेसे वातज गुल्म नष्ट होता है।

(बिजौरेका रस अन्य समस्त औषधोंसे चार गुना लेना चाहिये।)

(५२०१) **मिश्यादिलेहः**

(ग. नि. । बालरोगा. ११; वृ. मा. । बाल.)

मिशिकृष्णाञ्जनैर्लाजशृङ्गीमरिचमाक्षिकैः ।
लेहः शिशोर्विधातव्यश्छर्दिकासज्वरापहः ॥

सौंफ, पीपल, सुरमा, धानकी खील, काकड़ासिंगी और काली मिर्च समान भाग लेकर, चूर्ण बनाकर, शहदमें मिलाकर चटानेसे बालकोंकी वमन, खांसी और ज्वरका नाश होता है।

(५२०२) **मुस्ताद्यो लेहः**

(ग. नि. । रक्तपित्ता. ८)

मुस्ताशृङ्गाटकद्राक्षालाजखर्जूरगैरिकाः ।
रक्तपित्तहरा लीढाः क्षौद्रेणैकद्विसर्वशः ॥

नागरमोथा, सिंघाड़ा, मुनक्का, धानकी खील, खजूर और गेरु माटी समान भाग लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूट छानकर चूर्ण बनावें और बाकीको पत्थरपर पीसलें फिर सबको एकत्र मिलाकर शहदके साथ सेवन करें।

यह लेह एक दोषज, द्विदोषज और सन्निपातज रक्तपित्तको नष्ट करता है।

(५२०३) **मूर्वाद्यवलेहः**

(वृ. यो. त. । त. १४४; ग. नि. बालरोगा. ११)

मूर्वाव्योषवचाकोलजम्बूत्वग्दारुसर्षपाः ।
सपाठा मधुना लीढाः स्तन्यदोषनिबर्हणाः ॥

मूर्वा, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, बेरकी गुठलीकी मींगी, जामनकी गुठलीकी मींगी, दालचीनी, देवदारु, सरसों और पाठा समान भाग लेकर, चूर्ण बनाकर उसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे स्तन्य दोष (दूधके विकार) नष्ट हो जाते हैं।

(५२०४) **मृगनाभ्यादिलेहः**

(भा. प्र. । म. खं. स्वरभेदा.)

मृगनाभिः ससूक्ष्मैला लवङ्गकुसुमानि च ।
त्वक्क्षीरी चेति लेहोऽयं मधुसर्पिःसमायुतः ॥
वाक्स्तम्भमुग्रं जयति स्वरभ्रंशसमन्वितम् ॥

कस्तूरी, छोटी इलायची, लौंग और वंशलोचन समान भाग लेकर, चूर्ण बनाकर, शहदमें मिलाकर चाटनेसे वाक्स्तम्भ (आवाज बन्द हो जाना) और स्वरभंगका नाश होता है।

(५२०५) **मृणालाद्यवलेहः**

(वृ. नि. र. । मूर्च्छा.)

शीतेन तोयेन भृशं मृणालं
कृष्णा च पथ्या मधुनावलिह्यात् ।
कुर्याच्च नासावदनावरोधं
क्षीरं पिबेद्वाप्यथ मानुषीणाम् ॥

मूर्च्छाको नष्ट करनेके लिये कमलनाल, पीपल और हर्रको शीतल जलके साथ पीसकर शहदमें मिलाकर चटाना; (क्षणभरके लिये) रोगीकी नासिकाके नथने और मुख बन्द कर देना और स्त्रीका दूध पिलाना चाहिये।

इति मकाराद्यवलेहप्रकरणम्

अथ मकारादिपाकप्रकरणम्

(५२०६) **मलाईपाकः**

(नपु. मृता. त. ८)

सन्तानिकाद्धर्द्धप्रस्थं सितां प्रस्थां च सम्पचेत् ।
चतुष्पलं घृतं दत्त्वा कुर्यात्पाकं विधानतः ॥
एलाद्वयं जातिपत्रीं काश्मीरं च लवङ्गकम् ।
प्रत्येककर्षमाचूर्ण्य दलांश्चैव सुवर्णजान् ॥
राजतान्मेलयित्वा च मोदकान्पलसम्मितान् ।
कारयित्वा विधानेन भक्षयेद्धनवांस्ततः ॥
वीर्यवृद्धिकरं शश्वद्वाजीकरणमुत्तमम् ॥

दूधकी मलाई आधासेर, मिश्री १ सेर और घी आधासेर (४० तोले) लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें ।

जब पाक तैयार हो जाय तो उसमें छोटी और बड़ी इलायची के दाने, जावत्री, केसर और लौंगका चूर्ण १।-१। तोला मिलाकर अन्तमें यथाशक्ति सोने चांदीके वर्क़ मिलाकर ५-५ तोलेके लड्डू बना लें ।

ये मोदक वीर्यवर्द्धक और उत्तम वाजीकरण हैं । (सोने चांदीके वर्क १०० से अधिक न मिलाने चाहियें ।)

महाकुष्माण्डपाकः

(वृ. यो. त. । त. १४७)

रसप्रकरणमें देखिये ।

(५२०७) **मुशलीपाकः** (१)

(यो. चि. म. । अ. १)

मुशल्यायाः पलान्यष्टौ तुलाक्षीरे विपाचयेत् ।
सर्पिर्द्विकुडवं देयं सिता कर्षशतं तथा ॥
गुन्दं पलचतुष्कं च मज्जा त्रीणि पलत्रयम् ।
जातीफलं लवङ्गं च कुङ्कुमं चैव तूवरम् ॥
मांसीमर्कटबीजानि चातुर्जातकटुत्रयम् ।
जातीपत्रकरम्भा च प्रत्येकं पिचुमात्रकम् ॥
द्विकर्षमोदकं कुर्यादेकैकं भक्षयेन्नरः ।
धातुक्षीणं बलक्षीणं क्षीणवीर्यमन्दानिलम् ॥
कासश्वासरुचिं पाण्डुदौर्बल्यं विषमज्वरम् ।
षण्ढो रमयते नारीशतं वा नात्र संशयः ॥
शुष्कगात्रं भवेत्पुष्टं मनोज्ञं कान्तिवर्द्धनम् ।
वातव्याधिषु सर्वेषु हितोयं नैव संशयः ॥
प्रमेहं शुष्कगात्रं च वलीपलितनाशनम् ।
मुशल्यादिरयं पाको वन्ध्या भवति पुत्रिणी ॥

सफेद मूसलीके ४० तोले चूर्णको ६। सेर दूधमें पकावें । जब मावा (खोवा) तैयार हो जाय तो उसे एक सेर घीमें भूनलें और फिर १२५ तोले (१ सेर ४५ तोले) खांडकी चाशनी बनाकर उसमें यह मावा तथा घीमें भुना हुवा २० तोले गूंद; गोला (खोपरा), बादामकी गिरी और चिरौंजी ५-५ तोले; जायफल, लौंग, केसर, तुम्बरु, बालछड़, कौंचके बीज, दालीचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, काली मीर्च, पीपल, जावत्री, और केलेकी मूसली (अथवा फली)का ५-५ तोले चूर्ण मिलाकर २॥-२॥ तोलेके मोदक बना लें ।

इनमेंसे १-१ मोदक नित्यप्रति सेवन करनेसे धातुक्षीणता, बलकी कमी, अग्निमांद्य, खांसी,

श्वास, अरुचि, पाण्डु, विषमज्वर, प्रमेह, वातव्याधि और बलिपलित का नाश होता तथा दुबले मनुष्यों का शरीर पुष्ट तथा कान्तिमान् हो जाता है।

इसके प्रभावसे नपुंसक पुरुषमें अनेक स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति आती और वन्ध्या स्त्रीको पुत्रकी प्राप्ति होती है।

मुशलीपाकः (२)

(नपुंस्कामृ. । त. ४)

रसप्रकरणमें देखिये।

(५२०८) **मेथीपाकः** (१)

(वृ. नि. र.; वै. र. । आमवात.)

मेथिकायाः पलान्यष्टौ शुण्ठ्या अष्टपलानि च।
तयोश्चूर्णं पटे पूतं दुग्धे मृद्वग्निना पचेत् ॥
दुग्धाढकयुतं गव्यं घृतमष्टपलं क्षिपेत्।
ततावत्सुपचेद्यावद्भवेदतिघनं पयः ॥
पुनः पचेच्छनैस्तत्र दत्त्वाढकमितां सिताम्।
ततः पाके सुविज्ञाते ज्वलनादवतारयेत् ॥
मरिचं पिप्पली शुण्ठी कणामूलं सचित्रकम्।
यवानी जीरको धान्यं कारवी शतपुष्पिका ॥
जातीफलं शठी त्वक्च पत्रकं भद्रमुस्तकम्।
गृह्णीयात्पलमेतेषां सर्वेषां च पृथक् पृथक् ॥
षडक्षं नागरं तत्र मरिचं च षडक्षकम्।
एषां चूर्णं परिक्षिप्य सर्वं सम्मिश्र्य रक्षयेत् ॥
एतत्तु भेषजं प्रोक्तं मेथिकापाकसंज्ञितम्।
भक्षयेत्पलमात्रं तद्यथा चाग्निबलं तथा ॥
आमवातं निहन्त्येतत् सर्वांश्च पवनामयान्।
ज्वरांश्च विषमान् हन्ति पाण्डुरोगं सकामलम् ॥
हन्त्युन्मादमपस्मारं प्रमेहान्वातशोणितम्।
अम्लपित्तं शिरःपीडां नासारोगं दृगामयम् ॥
प्रदरं सूतिकारोगं हन्यादेतन्न संशयः।
वपुषः पुष्टिकृद्बल्यं वीर्यवृद्धिकरं परम् ॥

मेथी और सोंठके ४०-४० तोले कपड़छन चूर्णमें १ सेर गोघृत तथा ८ सेर गोदुग्ध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध गाढ़ा हो जाय तो उसमें ४ सेर खांड मिलाकर पुनः पकावें और पाक तैयार हो जाने पर आगसे नीचे उतार कर उसमें काली मिरच, पीपल, सोंठ, पीपलामूल, चीता, अजवायन, जीरा, धनिया, काला जीरा, सौंफ, जायफल, कचूर, दालचीनी, तेजपात और नागरमोथे का चूर्ण ५-५ तोले तथा सोंठ और काली मिरचका चूर्ण साढ़े सात सात तोले मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें।

इसे ५ तोले या अग्निबलानुसार न्यूनाधिक मात्रामें सेवन करनेसे आमवात, समस्त वातव्याधियां, विषमज्वर, पाण्डु, कामला, उन्माद, अपस्मार, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, शिरशूल, नासारोग, नेत्ररोग, प्रदर और सूतिका रोगोंका नाश होता तथा बल वीर्यकी वृद्धि होती है। इसके सेवनसे मुखमण्डल पुष्ट हो जाता है।

मेथीपाकः (२)

(नपुंसकामृतार्णव)

रसप्रकरणमें देखिये।

इति मकारादिपाकप्रकरणम्।

अथ मकारादिघृतप्रकरणम् ।

(५२०९) मञ्जिष्ठादिघृतम्

(र. र. स. । उ. खं. अ. २५)

मञ्जिष्ठा तगरं कुष्ठं त्रिफला शर्करा वचा ।
मेदा यष्टी हरिद्रे द्वे दीप्यकं कटुरोहिणी ॥
पयस्या हिङ्गु काकोली वाजिगन्धा शतावरी ।
प्रत्येकं चूर्णयेत्कर्षं द्वात्रिंशत्पलकं घृतम् ॥
घृताच्चतुर्गुणं क्षीरं घृतशेषं विपाचयेत् ।
योनिशूले शुक्रदोषे गर्भिणीनां च पाययेत् ॥

कल्कद्रव्य—मजीठ, तगर, कूठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, खांड, बच, मेदा, मुलैठी, हल्दी, दारु हल्दी, अजवायन, कुटकी, क्षीरकाकोली, हींग, काकोली, असगन्ध और शतावर १।-१। तोला लेकर चूर्ण करलें।

४ सेर घृतमें यह कल्क और १६ सेर दूध मिलाकर पकावें । जब घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह घृत योनिशूल और शुक्र दोषोंको नष्ट करता तथा गर्भिणीके लिये हितकारी है ।

(५२१०) मञ्जिष्ठाद्यं घृतम् (१)

(ग. नि. । घृता.; यो. चि. म. । अ. ५)

मञ्जिष्ठा च हरिद्रा च देवदारु हरीतकी ।
शृङ्गवेरं ह्यतिविषा वचा कटुकरोहिणी ॥
हिङ्गुतश्चाक्षमात्रेण तत्सिद्धमवतारयेत् ।
एतन्माञ्जिष्ठकं सर्पिर्बहून् रोगान्नियच्छति ॥
हिक्कां श्वासं ज्वरं दुष्टं ग्रहणीं पाण्डुरोगताम् ।
प्रमेहान्मधुमेहांश्च कृमान् कुष्ठमरोचकम् ॥
कासं शोषमुदावर्तमपस्मारं तथैव च ।
अर्शांसि श्वयथुं चैव गण्डमालां प्लिहोदरम् ॥

कल्कद्रव्य—मजीठ, हल्दी, देवदारु, हर्र, सोंठ या अदरक, अतीस, बच, कुटकी और हींग १।-१। तोला लेकर चूर्ण बनावें ।

विधि—१ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और ४ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

गुण—यह घृत हिचकी, श्वास, दुष्ट ज्वर, संग्रहणी, पाण्डु, प्रमेह, मधुमेह, कृमि, कुष्ठ, अरुचि, खांसी, शोष, उदावर्त, अपस्मार, अर्श, शोथ, गण्ड-माला और तिल्ली इत्यादि बहुतसे रोगोंको नष्ट करता है ।

(५२११) मञ्जिष्ठाद्यं घृतम् (२)

(ग. नि. । घृता.; व. से.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

मञ्जिष्ठाऽतिविषा पथ्या वचा नागररोहिणी ।
देवदारु हरिद्रा च द्रोणेऽपां पलिकान् पचेत् ॥
क्वाथेऽस्मिन् साधयेत् पिष्टैर्घृतप्रस्थं पिचून्मितैः ।
शृङ्गवेरकणाहिङ्गुद्विक्षारपटुपञ्चकैः ॥
तत्कफाव्रतसर्वेत्थज्वरिणाममृतोपमम् ।
वर्ध्मगुल्मानिलश्वासकासपाण्डुविकारिणाम् ॥
गलग्रन्थिप्रमेहार्शः प्लीहापस्मारशोफिनाम् ।
उदावर्तपरीतानां मन्दाग्निकृमिकुष्ठिनाम् ॥

क्वाथ—मजीठ, अतीस, हरड़, बच, सोंठ, कुटकी, देवदारु और हल्दी ५-५ तोले लेकर,

सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाए तो छान लें।

कल्क—सोंठ, पीपल, हींग, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, समुद्र नमक, कांचलवण (मनीहारी लवण—कचलोना), विडलवण, सञ्चल (काला) नमक। प्रत्येक १। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

विधि—२ सेर गोघृतमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब पानी जल जाए तो घृतको छान लें।

गुण—यह घृत समस्त कफज्वरोंमें अमृतके समान गुणकारी है। तथा वर्ध्म गुल्म, वायु, श्वास, खांसी, पाण्डु, गलग्रन्थि, प्रमेह, अर्श, प्लीहा, अपस्मार, शोथ, उदावर्त, मन्दाग्नि, कृमि और कुष्ठ रोगमें हितकारी है।

(५२१२) **मञ्जिष्ठाद्यं घृतम्** (३)

(र. र. । सद्योव्रण. चिकि.; च. द. । व्रणशोथा. ४४)

मञ्जिष्ठाचन्दनं मूर्वां पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत् ।
सर्वेषामग्निदग्धानामेतद्रोपणमिष्यते ॥

मजीठ, सफेद चन्दन और मूर्वा ५-५ तोले लेकर सबको पीसलें और १२० तोले घीमें यह कल्क तथा ६ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

इसे लगानेसे समस्त अग्निदग्ध व्रण नष्ट होते हैं।

(५२१३) **मधुकादिघृतम्** (१)

(वा. भ. । चि. अ. ३ कास.; च. सं. । चि. अ. १६ क्षतक्षीण.)

मधुकाष्टपलं द्राक्षाप्रस्थक्वाथे पचेद् घृतम् ।
पिप्पल्यष्टपले कल्के प्रस्थं सिद्धे च शीतले ॥
पृथगष्टपलं क्षौद्रशर्कराभ्यां विमिश्रयेत् ।
समसक्तुक्षतक्षीणरक्तगुल्मेषु तद्धितम् ॥

४० तोले मुलैठी और ८० तोले बीज रहित दाख (मुनक्का) को १६ सेर पानीमें पकावें। जब ४ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। इस क्वाथमें २ सेर (१६० तोले) गायका घी तथा ४० तोले पीपलका चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घृतको छान कर, ठण्डा करके उसमें ४०-४० तोले शहद और खांड मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे समान भाग सत्तूमें मिलाकर सेवन करनेसे क्षतक्षीण और रक्तगुल्ममें लाभ होता है।

(५२१४) **मधुकादिघृतम्** (२)

(वा. भ. । चि. अ. ८ अर्श.)

मधुकोत्पलरोध्राम्बुसमङ्गाबिल्वचन्दनम् ।
चविकातिविषा मुस्तं पाठा क्षारो यवाग्रजः ॥
दार्वीत्वङ्नागरं मांसी चित्रको देवदारु च ।
चाङ्गेरीस्वरसे सर्पिः साधितं तैस्त्रिदोषजित् ॥
अर्शोऽतिसारग्रहणीपाण्डुरोगज्वरारुचौ ।
मूत्रकृच्छ्रे गुदभ्रंशे बस्त्यानाहे प्रवाहणे ॥
पिच्छास्रावेऽर्शसां शूले देयं तत्परमौषधम् ॥

कल्क—मुलैठी, नीलोफर (नीलोत्पल), लोध, सुगन्धबाला, मजीठ, बेलगिरी, सफेद चन्दन, चव, अतीस, नागरमोथा, पाठा, जवाखार, दारुहल्दी, दालचीनी, सोंठ, जटामांसी, चीता, और देवदारु। सब समान भाग मिश्रित १० तोले लेकर सबको एकत्र पीसलें।

१ सेर घीमें ४ सेर चाङ्गेरी (तिपतिया)का स्वरस और उपरोक्त कल्क मिलाकर

मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जावे तो घृतको छान लें।

यह घृत त्रिदोष जन्य अर्श (बवासीर), अतिसार, संग्रहणी, पाण्डु, ज्वर, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र, गुदभ्रंश (कांच निकलना), अफारा, रक्तातिसार, प्रवाहिका तथा शूल को नष्ट करता है।

(५२१५) मधुकादिघृतम् (३)

(व. से.; वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

आजं घृतं क्षीरपात्रं मधुकं सोत्पलानि च।
जीवकर्षभकौ मेदा पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत्॥
सर्वनेत्राभिघातेषु सर्पिरेतत्प्रशस्यते॥

बकरीका घी १ सेर, बकरी का दूध ४ सेर और मुलैठी, नीलोत्पल (नीलोफर), जीवक, ऋषभक तथा मेदाका[१] कल्क २-२ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत अभिघात जनित समस्त नेत्ररोगोंमें उत्तम गुणकारी है।

(५२१६) मधूकघृतम्

(व. से.; वृ. नि. र. । अपस्मार.)

मधूकद्विपले कल्के द्रोणे चामलकीरसे।
तस्मिन् सिद्धं घृतप्रस्थं पित्तापस्मारभेषजम्॥

महुवेके फूलोंका कल्क (पिट्ठी) १० तोले, आमलेका रस ३२ सेर तथा २ सेर गोघृत लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब रस जल जाय तो घृतको छान लें।

१ वृन्द माधवमें मेदाका अभाव है।

यह घृत पित्तापस्मार (मिरगी) में अधिक लाभदायक है।

मधूच्छिष्टाद्यं घृतम्

(व. से., वृ. मा. । व्रण.)

लेपप्रकरणमें देखिये।

(५२१७) मनःशिलादिघृतम्

(च. सं. । चि. अ. २१ हिक्का.)

मनःशिलासर्जरसलाक्षारजनिपद्मकैः।
मञ्जिष्ठैलैश्च कर्षांशैः प्रस्थः सिद्धो घृताद्धितः॥

मनसिल, राल, लाख, हल्दी, पद्माक, मजीठ और इलायचीका चूर्ण १।-१। तोला तथा गोघृत १ सेर (८० तोले) और पानी ४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें एवं पानी जल जाने पर घृतको छानकर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत हिक्का (हिचकी) में लाभ पहुंचाता है।

(५२१८) मरिचाद्यं घृतम् (१)

(च. द.; वृ. मा.; व. से. । ग्रहण्य.)

मरीचं पिप्पलीमूलं नागरं पिप्पली तथा॥
भल्लातकं यवानी च विडङ्गं हस्तिपिप्पली।
हिङ्गु सौवर्चलं चैव बिडसैन्धवचव्यकम्[१]॥
सामुद्रं सयवक्षारं चित्रको वचया सह।
एतैरर्धपलैर्भागैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥
दशमूलीरसे सिद्धं पयसा द्विगुणेन च।
मन्दाग्नीनां घृतं श्रेष्ठं ग्रहणीदोषनाशनम्॥
विष्टम्भमामदौर्बल्यप्लीहानमपकर्षति।
कासं श्वासं क्षयं चापि दुर्नाम सभगन्दरम्॥
कफजान्हन्ति रोगांश्च वातजान्क्रिमिसम्भवान्।
तान्सर्वान्नाशयत्याशु शुष्कं दावानलो यथा॥

१ सैन्धवदार्व्यथेति पाठान्तरम्।

कल्क–काली मिर्च, पीपलामूल, सोंठ, पीपल, भिलावा, अजवायन, बायबिडङ्ग, गजपीपल, हींग, काला नमक (सञ्चल), बिड नमक, सेंधा, चव (पाठान्तरके अनुसार दारुहल्दी), समुद्र नमक, जवाखार, चीता (चित्रक) और बच २॥–२॥ तोले लेकर एकत्र पीस लें।

२ सेर दशमूलको १६ सेर पानीमें पकाकर ४ सेर शेष रहने पर छान लें तत्पश्चात् २ सेर गोघृतमें यह क्वाथ, उपरोक्त कल्क और ४ सेर गायका दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत अग्निको दीप्त और ग्रहणी–दोषको नष्ट करता है तथा कब्ज़, दुर्बलता, तिल्ली, खांसी, श्वास, क्षय, अर्श (बवासीर), भगन्दर और कफज, वातज तथा कृमिजन्य रोगोंको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है।

(५२१९) मरिचाद्यं घृतम् (२)

(ग. नि. । गुल्मा. २५)

मरिचं पिप्पली शुण्ठी कटुकी वह्निहेमकौ।
सुवर्चला वचा क्षारः प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ॥
पलानि षोडशाज्यस्य सुपक्वं मृदुवह्निना।
वातगुल्मं कृमीन् हन्ति भुक्तं श्वासमसंशयम् ॥

काली मिर्च, पीपल, सोंठ, कुटकी, चीता (चित्रक), धतूरेके बीज, हुलहुल, बच और जवाखार १।–१। तोला लेकर एकत्र पीस लें तथा सबको १ सेर (८० तोले) घीमें डालकर उसमें ४ सेर पानी मिलादें और मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

इसे सेवन करनेसे वातज गुल्म, कृमि और श्वास का नाश होता है।

(मात्रा–१ तोला। दूधमें डाल कर पियें)

(५२२०) मसूरघृतम्

(व. से. । ग्रहण्य.)

विश्वाजाजी बिल्वपेशी कल्कसिद्धं घृतं हरेत्।
मसूरस्य कषायेण सङ्ग्रहग्रहणीगदम् ॥

कल्क-सोंठ, जीरा और बेलगिरी प्रत्येक ३। तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ–२ सेर मसूरको १६ सेर पानीमें पकाकर ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

१ सेर गोघृतमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत संग्रहणीको नष्ट करता है।

(५२२१) मसूरादिघृतम् (१)

(शा. ध. । खं. २ अ. ९; ग. नि.; वृ. मा. । ग्रहण्य.; वृ. नि. र. । अतिसार.; व. से. । ग्रहण्य.)

मसूराणां पलशतं नीरद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषं शृतं नीत्वा दत्त्वा बिल्वपलाष्टकम् ॥
घृतप्रस्थं पचेत्तेन सर्वातीसारनाशनम।
ग्रहणीं भिन्नविट्कां च नाशयेच्च प्रवाहिकाम् ॥

क्वाथ—१०० पल (६। सेर) मसूरको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

२ सेर (१६० तोले) गोघृत में उपरोक्त क्वाथ और ४० तोले बेलगिरी का चूर्ण मिलाकर

मन्दाग्निपर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत हर प्रकारके अतिसार, संग्रहणी और प्रवाहिकाको नष्ट करता है।

(मात्रा-१ तोला)

(५२२२) मसूरादिघृतम् (२)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

दध्यान्मसूरनिर्यूहं चूर्णितं कणसैन्धवम्।
तच्छृतं सघृतं भूयः पचेत्क्षौद्रं घने ततः॥
शीते चास्मिन्हितमिदं सर्वजे तिमिरे हितम्॥

४ सेर मसूरको ३२ सेर पानीमें पकाकर ८ सेर शेष रक्खें और फिर उसे छानकर उसमें २ सेर (१६० तोले) घृत तथा १०-१० तोले पीपल और सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर पुनः पकावें। जब पानी जल जाए तो घृतको छान लें। एवं ठण्डा होने पर उसमें (आधा सेर) शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत समस्त प्रकारके तिमिर रोगोंको नष्ट करता है।

(५२२३) मस्तुषट्पलघृतम्

(व. से. । अजीर्णा.; च. द. । अग्निमान्द्या. ६)

पलिकैः पञ्चकोलैस्तु घृतं मस्तु चतुर्गुणम्।
सक्षारसिद्धमल्पाग्नि कफं गुलमञ्च नाशयेत्॥

पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ और जवाखारका चूर्ण ५-५ तोले लेकर सबको २ सेर घृतमें मिलावें और उसमें ८ सेर मस्तु (दहीमें उससे दो गुना पानी डालकर बनाया हुआ तक्र) मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें तथा जलांश जल जाने पर छान लें।

यह घृत मन्दाग्नि और कफज गुल्मको नष्ट करता है।

(मात्रा-१ तोला)

(५२२४) महदग्निघृतम्

(व. से. । ग्रहण्य.)

चव्यचित्रकपाठानां तेजोवत्यास्तथैव च।
कणापिप्पलीमूलानां भागान्दद्याच्चतुष्पलान्॥
पलानि चाष्टौ मुस्तायाः सुनिशायष्टिकस्त्विह।
आस्फोतायाः प्रवालानां मालतीकरवीरयोः॥
सप्तपर्णकरआर्कतापसाऽक्षोटकस्य च।
एतान् संकुटय विपचेज्जलद्रोणचतुष्टये॥
चतुर्भागावशेषन्तु कुर्य्यान्मन्देन वह्निना।
कटुकातिविषे स्यातां प्रत्येकं त्रिपलोन्मिते॥
पिप्पलीनाञ्च कुडवं विडङ्गानां घनस्य च।
तथा वत्सकबीजानां कल्कार्थं सम्प्रदापयेत्॥
क्षारस्य यावशूकस्य स्वर्जिकायास्तथैव च।
विडसैन्धवयोश्चैव दद्याद्द्वे द्वे पले भृते॥
ततस्तेन कषायेण कल्कैरेभिश्च पेषितैः।
दधिमस्त्वम्लयुक्तैश्च पचेद्वैद्यो घृताढकम्॥
साम्बुकल्कं पिबेत्कर्षं विष्टम्भे द्विगुणं पिबेत्।
उष्णोदकानुपानञ्च कुर्याज्जीर्णेऽथ भोजनम्॥
अनेन ग्रहणीदोषाः सर्वे नश्यन्ति देहिनाम्।
कफवाताश्रयश्चैव गुल्मांश्चैव चतुर्विधः॥
अर्शांसि नाशयत्येव प्लीहानं शमयत्यपि।
महदग्निघृतं त्वेतद्भिषजा परिचक्ष्यते॥

क्वाथ--चव, चीता, पाठा, ज्योतिष्मती, (मालकंगनी), पीपल और पीपलामूल प्रत्येक २०-२० तोले तथा नागरमोथा, हल्दी, मुलैठी, कोयल, चमेली और कनेरके पत्ते एवं सतौना, करञ्ज, आक, हिङ्गोट और अखरोट ४०-४० तोले लेकर सबको अधकुटा करके ८ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें और जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क-कुटकी और अतीसका चूर्ण १५-१५ तोले, पीपलका चूर्ण २० तोले, बायबिड़ङ्ग, नागरमोथा, इन्द्रजौ, जवाखार, सज्जीखार, बिड लवण और सेंधा नमक का चूर्ण १०-१० तोले।

अन्य द्रव पदार्थ—दही ८ सेर, मस्तु (दहीमें उससे दो गुना पानी मिलाकर बनाया हुआ तक्र) ८ सेर, तथा काञ्जी ८ सेर।

विधि- उपरोक्त क्वाथ, कल्क तथा समस्त द्रव पदार्थ और ८ सेर घी को एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें जब जलांश जल जाय तो घृतको छानकर सुरक्षित रक्खें।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार खाकर ऊपरसे गरम पानी पीना चाहिये और घृतके पच जाने पर पथ्य भोजन करना चाहिये।

यदि कब्ज़ हो तो २॥ तोलेकी मात्रानुसार सेवन करना चाहिये। यह घृत सब प्रकारके ग्रहणी रोग, ४ प्रकारके गुल्म, अर्श और तिल्ली को नष्ट करता है।

(५२२५) **महाकल्याणघृतम्** (१)

(च. द.; व. से. । उन्मादा.; च. सं. । चि. अ. १४ उन्माद.)

एभ्य एव स्थिरादीनि जले पक्त्वैकविंशतिम् ।
रसे तस्मिन्पचेत्सर्पिर्गृष्टिक्षीरे चतुर्गुणे ॥
वीराद्धिमाषकाकोलीस्वयंगुप्तर्षभर्द्धिभिः ।
मेदया च समैः कल्कैस्तत्स्यात्कल्याणकं महत् ॥
बृंहणीयं विशेषेण सन्निपातहरं परम् ॥

कल्याणघृतोक्त २८ ओषधियोंमें से शालपर्णी इत्यादि २१ ओषधियों को ८ गुने पानीमें पकाकर चौथा भाग शेष रहने पर छान लें। ×

×स्थिरा नतं रजन्यौ द्वे सारिवे द्वे प्रियङ्गुका ॥
नीलोत्पलैलामञ्जिष्ठादन्तीदाडिमकेसरम् ।
तालीशपत्रं बृहती मालत्याः कुसुमं नवम् ॥
विडङ्गं पृश्निपर्णी च कुष्ठं चन्दनपद्मकम् ।

शालपर्णी, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, दो प्रकारकी सारिवा, प्रियङ्गु, नीलोफर, छोटी इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारदाना, नागकेशर, तालीसपत्र, बनभण्टा (बड़ी कटेली), चमेलीकी कलियां, बायबिडंग, पृष्ठपर्णी, कूठ, चन्दन और पद्माख।

ये सब ओषधियां समान भाग मिश्रित २ सेर (प्रत्येक ७॥ तोले) लेकर अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें। जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तत्पश्चात १ सेर गोघृतमें यह क्वाथ, ४ सेर दूध और उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब क्वाथ आदि जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत अपस्मार, ज्वर, खांसी, शोष, मन्दाग्नि, क्षय, वातरक्त, प्रतिश्याय, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर (तिजारी और चौथिया) छर्दि, अर्श, मूत्रकृच्छ्र, खुजली, पाण्डु, उन्माद, विष, प्रमेह, भूतोन्माद, गद्गदता और वीर्यह्रास इत्यादि रोगोंमें अत्यन्त गुणकारी है।

फिर इस क्वाथ और निम्नलिखित कल्क तथा एकबारकी ब्याही हुई गायके चार गुने दूधके साथ घृत सिद्ध करें ।

कल्क द्रव्य-पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, काकोली, कौंचके बीज, ऋषभक (अभावमें विदारीकन्द) वृद्धि (अभावमें बाराहीकन्द) और मेदा । सब चीजें १।-१। तोला लेकर एकत्र पीसलें ।

(५२२६) **महाकल्याणघृतम्** (२)

(वा. भ. । उ. त. अ. ६२ उन्माद.; सु. सं.)

विडङ्गत्रिफलामुस्तमञ्जिष्ठादाडिमोत्पलैः ।
श्यामैलवालुकैलाभिश्चन्दनामरदारुभिः ॥
वर्हिष्ठकुष्ठरजनीपर्णिनीशारिवाह्वयैः[1] ।
हरेणुकात्रिवृद्दन्तीवचातालीशकेशरैः[2] ॥
द्वि क्षीरं साधितं सर्पिर्मालतीकुसुमैः सह ।
गुल्मकासज्वरश्वासक्षयोन्मादनिवारणम् ॥
एतदेव हि सम्पक्वं जीवनीयोपसम्भृतम् ।
चतुर्गुणेन दुग्धेन महाकल्याणमुच्यते ॥
अपस्मारं ग्रहदोषं क्लैव्यं कार्श्यमबीजताम् ।
घृतमेतन्निहन्त्याशु ये चादौ गदिता गदाः ॥

बायबिड़ङ्ग, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, मजीठ, अनारदाना, नीलोफर (नीलकमल), फूलप्रियंगु, एलबालुक, इलायची, सफेद चन्दन, देवदारु, सुगन्धबाला, कूठ, हल्दी, पृष्ठपर्णी, शालपर्णी, शारिवा, रेणुका, निसोत, दन्तीमूल, बच, तालीसपत्र, नागकेसर और चमेलीके फूल १-१ तोला लेकर सबको एकत्र पीसलें, फिर २०० तोले (२॥ सेर) गायके घीमें यह कल्क और ५-५ सेर गाय और बकरीका दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाय तो घृतको छानकर सुरक्षित रक्खें ।

इसका नाम कल्याणघृत है ।

यदि उपरोक्त कल्ककी ओषधियोंमें १-१ तोला जीवनीय गणकी ओषधियां और बढ़ा दें तो इसीका नाम महाकल्याण घृत हो जाता है ।

यह घृत गुल्म, खांसी, ज्वर, श्वास, क्षय, उन्माद, अपस्मार, ग्रहदोष, क्लीवता, कृशता और वीर्यकी कमी को शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(जीवनीय गण-जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी ।)

(५२२७) **महाकल्याणघृतम्** (३)

(सु. सं. । उ. त. अ. ३९ ज्वर.)

एतैरेव यथाद्रव्यैः सर्वगन्धैश्च साधितम् ।
कपिलाया घृतप्रस्थं सुवर्णमणिसंयुतम् ॥
तत्क्षीरेण सहैकध्यं प्रसाध्य कुसुमैरिमैः ।
सुमनश्चम्पकाशोकशिरीषकुसुमैर्घृतम् ॥
तथा नलदपद्मानां केशरैर्दाडिमस्य च ।
तिथौ प्रशस्ते नक्षत्रे साधकस्यातुरस्य च ॥
कृतं मनुष्यदेवाय ब्राह्मणैरभिमन्त्रितम् ।
दत्तं सर्वज्वरान्हन्ति महाकल्याणकं घृतम् ॥
दर्शनस्पर्शनाभ्यान्तु सर्वरोगहरं शिवम् ।

यह वन्ध्या स्त्रियोंके लिये अत्यन्त हितकारी आयु और बलवर्द्धक है तथा समस्त ग्रहदोषोंको नष्ट करता है ।

(चरक कल्याणघृत).

१ "द्वयैः" इति पाठान्तरम् ।
२ "नागरैः" इति पाठान्तरम् ।

अधृष्यः सर्वभूतानां बलीपलितवर्जितः ॥
अस्याभ्यासाद् घृतस्येह जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥

महाकल्याणघृत नं. २ के अनुसार यथाविधि घृत सिद्ध करें परन्तु उसमें जीवनीय गणकी ओषधियां न डालें[1] तथा सर्वगन्ध (दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, कपूर, कङ्कोल, अगर, केसर और लौंग), चमेलीके फूल, चम्पकके फूल, अशोकके फूल, सिरसके फूल, जटामांसी, कमल-पुष्प, केसर और अनारके फूल १।-१। तोले का कल्क बढ़ादें एवं बकरीका दूध न लेकर केवल कपिला गायका १० सेर दूध लें। तथा घृत भी कपिला गायका ही ग्रहण करें और घृत तैयार होने पर उसमें यथाशक्ति और यथोचित मात्रामें स्वर्ण और मुक्तादि मणियोंका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

यह महाकल्याणघृत समस्त प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है इसे निरन्तर सेवन करनेसे बली-पलित और रोग रहित ३०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है।

(५२२८) महाकल्याणघृतम् (४)

(ब. से.; वृ. नि. र. । ज्वर.)

विडङ्गमुस्तत्रिफलामञ्जिष्ठादाडिमोत्पलैः ।
श्यामैलवालुकैलाभिः चन्दनामरदारुभिः ॥
बर्हिष्ठकुष्ठरजनीपर्णिनी शारिवाद्वयैः ।
हरेणुकात्रिवृद्दन्तीवचातालीशनागरैः ॥
बलाविशालाबृहती मालती पृश्निपर्णिभिः ।
एतैश्च कार्षिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
चतुर्गुणेन पयसा द्विगुणेन जलेन च ।
एतत्कल्याणकं नाम सर्पिः पक्वं त्रिदोषनुत् ॥
विषमज्वरश्वासकासगुल्मोन्मादज्वरापहम् ।
एतदेव हविः पक्वं जीवनीयोपसंस्कृतम् ॥
द्विपञ्चमूलक्वाथेन शतावर्य्या रसेन च ।
चतुर्गुणेन पयसा महाकल्याणमुच्यते ॥
अपस्मारग्रहं शोषं क्लैव्यं कार्श्यमजीवितम् ।
घृतमेतन्निहन्त्याशु ये चापि विषमज्वराः ॥
जीवनीयगणत्वेन काकोल्यादिगणग्रहः ।
महाकल्याणके कार्य्यो घृते तु दशकार्षिकः ॥

कल्क—बायबिडंग, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, मजीठ, अनारदाना, नीलोफर (नीलकमल), फूलप्रियङ्गु, एलवालुक, इलायची, सफेद चन्दन, देवदारु, सुगन्धबाला, कूठ, हल्दी शालपर्णी, २ प्रकारकी शारिवा, रेणुका, निसोत, दन्तीमूल, बच, तालीसपत्र, सोंठ, खरैटी, इन्द्रायणकी जड़, बनभण्टा (बड़ी कटेली), चमेलीके फूल, पृष्ठपर्णी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर-काकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलैठी। प्रत्येक १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

द्रव-पदार्थ—दशमूलका क्वाथ ८ सेर, शतावरका रस ८ सेर, गायका दूध ८ सेर और पानी ४ सेर।

विधि—२ सेर गायके घीमें उपरोक्त कल्क और द्रवपदार्थ मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें जब

[1] सुश्रुत संहिता उत्तर तन्त्र अ० ३९ में 'महाकल्याणघृत''से पहले 'कल्याणघृत''का पाठ है जिसकी ओर इस (नं० ५२२७ के) प्रयोगमें "एतैरेव" पदसे संकेत किया गया है। वह (कल्याणघृतका) प्रयोग नं. ५२२६ के समान है परन्तु उसमें जीवनीयगण नहीं है।

क्वाथ आदि जल जाए तो घृतको छानकर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत अपस्मार, शोष, क्लीवता, कृशता और विषमज्वरको नष्ट करता है।

(५२२९) महाकल्याणकं घृतम् (५)

(र. र. । दाह.)

चतुर्गुणे शतावर्यारसे क्षीरं चतुर्गुणम् ।
सर्पिः प्रस्थं बलाजाजीमञ्जिष्ठापीवरीनिशा ॥
काकोल्यौ मधु मेदे द्वे ऋद्धी द्वे देवदारु च ।
एषामष्टपलैः कल्कैः पचेत्कल्याणकं महत् ॥
बृंहणीयं विशेषेण परं पुष्टिकरं मतम् ।
अर्दितं कर्णशूलञ्च नेत्ररोगं सुदारुणम् ॥
दाहोन्मादमपस्मारं वातरुग्वातशोणितम् ।
उदावर्त्त गुल्मरोगं हृद्रुजं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥
मूत्रबद्धोपदंशं च ग्रहणीमतिदुस्तरम् ।
गुदाङ्कुरं मन्दमग्निं श्वासरुग्विषमज्वरौ ॥
हलीमकं तथा शूलं रक्तपित्तस्वरक्षयम् ।
कासञ्चैव स्वरं भिन्नं छर्दिं तृष्णां प्रमेहकम् ॥
स्त्रीणां रुजं जयेच्छीघ्रं क्षयरोगं सकामलम् ।
एकजं द्वन्द्वजं चैव तथैव सान्निपातिकम् ॥
सर्वरोगं निहन्त्येतन्महत्कल्याणकं घृतम् ॥

द्रव पदार्थ—सतावरका रस या क्वाथ ८ सेर और गायका दूध ८ सेर।

कल्क—खरैटी, जीरा, मजीठ, सतावर, हल्दी, काकोली, क्षीरकाकोली, मुलैठी, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि और देवदारु सब समान भाग मिश्रित ४० तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

विधि—२ सेर गायके घीमें उपरोक्त द्रव पदार्थ और कल्क मिलाकर मंदाग्नि पर पकावें जब द्रव पदार्थ जल जाएं तो घृतको छान लें।

यह घृत बृंहण और अत्यन्त पौष्टिक है। अर्दित (लकवा), कर्णशूल, भयंकर नेत्ररोग, दाह, उन्माद, अपस्मार, वातव्याधि, वातरक्त, उदावर्त्त, गुल्म, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रावरोध, उपदंश, भयंकर संग्रहणी, अर्श (बवासीर), मन्दाग्नि, श्वास, विषमज्वर, हलीमक, शूल, रक्तपित्त, स्वरक्षय, खांसी, स्वरभंग, छर्दि, तृष्णा और प्रमेह आदिको नष्ट करता है।

इनके अतिरिक्त यह घृत स्त्रीरोग, क्षय और कामलामें विशेष गुणकारी है तथा एकदोषज, द्विदोषज और सान्निपातिक अनेक रोगोंको नष्ट करता है।

(५२३०) महाकल्याणकं घृतम् (६)

(यो. चि. म. । अ. ५)

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता विडङ्गैला निशा द्वयम् ।
द्वे सारिवे तृवृद्दन्त्यनन्तापद्माकवानरी ॥
मञ्जिष्ठा मधुकं कुष्ठं ब्राह्मी तालीसबिल्वकम् ।
अष्टवर्गो जीवनीयो गणः स्याच्चन्दनद्वयम् ॥
द्राक्षामधूकपुष्पाणि बला पर्णीचतुष्टयम् ।
देवदारु सठी पाठा रेणुका जीरकद्वयम् ॥
अश्वगन्धाजमोदा च कटु दाडिमपारिकम् ।
इन्द्रवारुणिका शङ्खपुष्पी च बृहती द्वयम् ॥
चातुर्जातं शुभोशीरं शिरीषं बालकं तथा ।
प्रियङ्गु मालती जातीपुष्पं पुष्करमूलकम् ॥
विदारी कदलीकन्दं मुशली हस्तिपर्णिका- ।
तिविषं त्रपुषीबीजं कौन्ती मांस्येलबालुकम् ॥

एतैरक्षसमैः कल्कैर्घृतप्रस्थं चतुर्गुणे ।
क्षीरे च द्विगुणे नीरे तप्त्वा तद्गोमयाग्निना ॥
प्राप्ते च तत्समंयुक्तं पचेत् खादेच्च नित्यशः ।
सर्पिरेतन्नरो नारी पीत्वा कर्षं वृषायते ॥
या च वन्ध्या भवेन्नारी या च कन्या प्रसूयते ।
या चैव स्थिरगर्भा स्यात् या वा जनयते मृतम् ॥
अल्पायुषं वा जनयेत् या वा शूलान्वितं पुनः ।
ईदृशी जनयेत्पुत्रं तस्या दोषो व्यपोहति ॥
एतत्कल्याणकं नामघृतं शम्भुप्रकीर्त्तितम् ।
जीवद्वत्सैकवर्णाया घृतं तस्या तु गृह्यते ॥

कल्क-सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग, इलायची, हल्दी, दारुहल्दी, दोनों प्रकारकी सारिवा, निसोत, दन्ती-मूल, जवासा, पद्माख, कौंचके बीज, मजीठ, मुलैठी, कूठ, ब्राह्मी, तालीसपत्र, बेलगिरी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, जीवनीयगण, चन्दन, लाल चन्दन, मुनक्का, महुवेके फूल, खरैटी, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी माषपर्णी, देवदारु, कचूर, पाठा, रेणुका, सफेद जीरा, काला जीरा, असगन्ध, अजमोद, कुटकी, अनारदाना, इन्द्रायणकी जड़, शङ्खपुष्पी, कटेली, बड़ी कटेली, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नाग-केशर, बंसलोचन, खस, सिरसकी छाल, सुगन्धबाला, फूलप्रियंगु, चमेलीके फूल, जावित्री, पोखरमूल, बिदारीकन्द, केलेको जड़, मूसली, हस्तिपर्णी, अतीस, खीरेके बीज, रेणुका, जटामांसी और एलवालुक; प्रत्येक १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क, ८ सेर दूध और ४ सेर पानी मिलाकर कण्डोंकी अग्निपर पकावें जब दूध और पानी जल जाएं तो घृतको छानकर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत स्त्री, पुरुषोंमें वीर्य और कामशक्तिकी वृद्धि करता है।

जिस स्त्रीको सन्तान न होती हो अथवा जिसके कन्या ही कन्या उत्पन्न होती हो, जिसको गर्भ बहुत दिनों तक उदरमें ही स्थित रहता हो (ठीक समय बीत जाने पर भी प्रसव न होता हो) अथवा जिसके अल्पायु, रुग्ण या मृतसन्तान उत्पन्न होती हो उसे यह घृत सेवन कराने से ये समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं।

इस प्रयोगमें एक रंग वाली ऐसी गायका घृत लेना चाहिए जिसका बच्चा जीवित हो।

(५२३१) महाखादिरं घृतम्

(वृ. यो. त. । त. १२०, च. द.; व. से.; यो. र. । कुष्ठ.; वृ. नि. र. । त्वग्दोष; च. सं. । चि. अ. ७ कुष्ठ.)

खदिरस्य तुलाः पञ्च शिंशपासनयोस्तुले ।
तुलार्धाः सर्व एवैते करञ्जारिष्टवेतसाः ॥
पर्पटः कुटजश्चैव वृषः क्रिमिहरस्तथा ।
हरिद्रे कृतमालश्च गुडूची त्रिफला त्रिवृत् ॥
सप्तपर्णश्च संक्षुण्णो दशद्रोणे तु वारिणः ।
अष्टभागावशेषं तु कषायमवतारयेत् ॥
धात्रीरसं च तुल्यांशं सर्पिषश्चाऽऽढकं पचेत् ।
महातिक्तककल्कैस्तु यथोक्तैः पलसंमितैः ॥

निहन्ति सर्वकुष्ठानि पानाभ्यङ्गनिषेवणात् ।
महाखादिरमित्येतत्परं कुष्ठविकारनुत् ॥

खैर ५ तुला (३१। सेर), शीशम (शीशमका बुरादा) १ तुला (६। सेर), असना (शालभेद) १ तुला, करञ्जकी छाल ½ तुला (३ सेर १० तोले), नीमकी छाल ½ तुला, बेत ½ तुला, पित्तपापड़ा, कुड़ेकी छाल, बासा, बायबिडंग, हल्दी, दारुहल्दी, लताकरञ्ज, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, निसोत और सतौनाकी छाल आधा आधा तुला (प्रत्येक ३ सेर १० तोला) लेकर सबको एकत्र कूटकर १० द्रोण (३२० सेर) पानीमें पकावें । जब ४० सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—सतौनेकी छाल, अतीस, अमलतासका गूदा या छाल, कुटकी, पाठा, नागरमोथा, खस, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, धमासा, सफ़ेद चन्दन, पीपल, पद्माख, हल्दी, दारुहल्दी, वच, इन्द्रायण, सतावर, दो प्रकारकी सारिवा, इन्द्रजौ, वासा, मूर्वा, गिलोय, चिरायता, मुलैठी और त्रायमाणा १-१ पल (प्रत्येक ५ तोले) लेकर सबको एकत्र पीसलें ।

विधि—८ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और ८ सेर आमलेका रस मिलाकर पकावें । जब जलांश जल जाय तो घृतको छान लें ।

इसे पीने और मालिश करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं । यह कुष्ठ विकारों के लिए अत्यन्त उपयोगी औषध है ।

(५२३२) **महागुडूचीघृतम्**

(भा. प्र.; व. से. । वातरक्ता.)

अमृतायाः शतं प्राप्य जलद्रोणे विपाचयेत् ।
चतुर्भागावशिष्टन्तु घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
क्षीरं चतुर्गुणं तत्र दापयेन्मतिमान् भिषक् ।
कल्कश्चात्र प्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः ॥
काकोली क्षीरकाकोली जीवकर्षभकौ च यत् ।
शतावरी पयस्या च मधुकं नीलमुत्पलम् ॥
अश्वकन्दस्य मूलानि स्थिरां वा कटुरोहिणीम् ।
ऋद्धिं वृद्धिं तथा मेदे श्वदंष्ट्रां बृहतीद्वयम् ॥
गुडूचीं पिप्पलीं रास्नां वासकं चापि संहरेत् ।
तदेकस्थं समैर्भागैः पाचयेन्मृदुनाग्निना ॥
पानाभ्यञ्जननस्येषु परिषेके च दापयेत् ।
वातरक्तं सशोपाढ्यं सदाहं क्रोष्टुशीर्षकम् ॥
खञ्जोरुस्तम्भवातञ्च वातरक्तं सुदारुणम् ।
बहूदितं वातकृच्छ्रं गृध्रसीं वातकण्टकम् ॥
नाशयेद्योजितं सर्पिर्धन्वन्तरिवचो यथा ॥

६। सेर गिलोयको १ द्रोण (३२ सेर) पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह क्वाथ और ८ सेर गोदुग्ध तथा निम्नलिखित कल्क मिलाकर पकावें । जब दूध और क्वाथ जल जाए तो घीको छान लें ।

कल्क—काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, शतावर, बिदारीकन्द, मुलैठी, नीलोफर, असगन्ध, कुटकी, शालपर्णी, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, गोखरु, कटेली, बडी कटेली, गिलोय, पीपल, रास्ना, और वासा सब चीजें समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

इसे पीने, मालिश करने और नस्य द्वारा प्रयुक्त करनेसे वातरक्त, शोष, दाह, क्रोष्टुशीर्ष, खञ्जवात, ऊरुस्तम्भ, भयंकर वातरक्त, वातज मूत्रकृच्छ्र, गृध्रसी और वातकण्टक आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

महागौराद्यं घृतम्

(ग. नि. । घृता.)

लेप प्रकरणमें देखिये।

(५२३३) महाचाङ्गेरीघृतम्

(व. से. । अर्श.)

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थबदरीप्लक्षवेतसाः ।
एभ्यः प्रवालांस्तरुणांस्त्रिपलांश्च समाहरेत् ॥
अवाक्पुष्प्याः पलान्यष्टौ द्वे च दार्व्यास्तथैव च ।
शालपर्ण्याः पले द्वे तु सर्वमेतत्समावपेत् ॥
द्वे पले कालशाकस्य सर्वमेतत्समावपेत् ।
द्वि द्रोणे सलिले साध्यमष्टभागावशेषितम् ॥
घृतस्याऽर्धाढकश्च स्यात्सकषायं सुखाग्निना ।
कुचाङ्गेर्यम्लिकाभ्यांश्च स्वरसः स्नेहसम्मितः॥
देवदारु च मुस्तश्च चित्रकं बिल्वपेशिका ।
कट्फलं शृङ्गवेरश्च पिप्पली चन्दनं तथा ॥
सौवीरमञ्जनं मूलं पिप्पल्याः कटुरोहिणी ।
गन्धप्रियङ्गुपुष्पश्च शाल्मली जीवकाह्वया ॥
वत्सकस्य च बीजानि तथा चातिविषाभया ।
एषामक्षसमा भागाः पृथग्दत्वा विपाचयेत् ॥
वातगुल्ममतीसारं शूलं ज्वरमरोचकम् ।
स्त्रीणामसृग्दरं सर्वं रक्तपित्तप्रवाहिकाम् ॥
पाण्डुरोगं तथा कासं कृमिदोषांश्च नाशयेत् ।
छर्दिं माक्षिकसंयुक्तं शमयेद्दीपनं परम् ॥
गर्भाधानञ्च वन्ध्यानां करोत्यर्शो निवारणम् ।
चाङ्गेरीघृतमित्युक्तं तथा ह्यर्शोनिवारणम् ॥
बलमांसकरश्चैतद्रक्तगुल्महरं तथा ।
अर्शसां पित्तजातानां हितं तद्रक्तजेष्वपि ॥
सन्निपातसमुत्थेषु सर्वतो भिषजः क्रमः ॥

क्वाथ—बड़, गूलर, पीपल वृक्ष, बेरी, पिलखन और बेंतमें से हर एक के कोमल पत्ते ३–३ पल (प्रत्येक १५ तोले), सौंफ ८ पल (४० तोले), दारुहल्दी २ पल, शालपर्णी २ पल (१० तोले) और नाड़ीका शाक १० तोले लेकर सबको २ द्रोण (६४ सेर) पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। तत्पश्चात् ४ सेर घीमें यह क्वाथ और ४–४ सेर चांगेरी (चूका) और तिन्तड़ीक (इमलीके पत्तों) का स्वरस एवं निम्नलिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश जल जाए तो घृतको छान लें।

कल्क—देवदारु, नागरमोथा, चीता, बेलगिरी, कायफल, अदरक (या सोंठ), पीपल, सफेद चन्दन, सौवीराञ्जन (सुरमा), पीपलामूल, कुटकी, फूलप्रियङ्गु, सेंभलके फूल, जीरक, इन्द्रजौ, अतीस और हर्र प्रत्येक १।–१। तोला लेकर सबको एकत्र कूट लें।

यह घृत वातज गुल्म, अतिसार, शूल, ज्वर, अरुचि, स्त्रियोंका रक्तप्रदर, रक्तपित्त, पाण्डुरोग, प्रवाहिका, खांसी और कृमिदोषोंको नष्ट करता है।

इसे सेवन करनेसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण कर लेती है। इसे शहदके साथ सेवन करनेसे छर्दिका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है।

यह चाङ्गेरी घृत रक्तगुल्म और पित्तार्श तथा रक्तार्श एवं सन्निपातार्श में विशेष उपयोगी है। तथा बल मांसकी वृद्धि करता है।

(५२३४) महाचैतसं घृतम् (१)

(भै र. । उन्माद.; व. से.; वृ. मा. । अप.; च. द. । अपस्मार.)

शणस्त्रिवृत्तथैरण्डो दशमूली शतावरी।
रास्ना मागधिका शिग्रुः क्वाथ्यं द्विपलिकं भवेत्॥
विदारीमधुकं मेदे द्वे काकोल्यौ सिता तथा।
एभिः खर्जूरमृद्वीकाभीरुयुञ्जातगोक्षुरैः॥
चैतसस्य घृतस्याङ्गैः पक्तव्यं सर्पिरुत्तमम्।
महाचैतससंज्ञं तु सर्वापस्मारनाशनम्॥
गरोन्मादप्रतिश्यायतृतीयकचतुर्थकान्।
पापालक्ष्मीं जयेदेतत्सर्वग्रहनिवारकम्॥
श्वासकासहरश्चैव शुक्रार्त्तवविशोधनम्।
घृतमानं काथविधिरिह चैतसवन्मतः॥
कल्कश्चैतसकल्कोक्तद्रव्यैः सार्द्धश्च पादिकः।
नित्यं युञ्जातकाप्राप्तौ तालमस्तकमिष्यते॥

क्वाथार्थ—शणबीज (सन के बीज), निसोत, एरण्डमूल (रेंडी की जड), दशमूल, शतावर, रास्ना, पिप्पली, सहिंजने की जड़; प्रत्येक २ पल (१० तोले), पाकार्थ जल ३२ सेर। अवशिष्ट क्वाथ ८ सेर। कल्क—विदारीकन्द, मुलहठी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, खांड, खजूर, मुनक्का, शतावर, युञ्जातक (कन्दविशेष), गोखरु, तथा स्वल्पचैतस घृत में कहा कल्क[1];

[1] इन्द्रायण, हर्र, बहेड़ा, आमला, रेणुका, देवदारु, एलवालुक, शालपर्णी, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, २ प्रकारकी सारिवा, फूलप्रियंगु, नीलोफर, इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारदाना, नागकेसर, तालीसपत्र, बड़ी कटेली, चमेलीकी कलियां, बायबिडंग, पृष्टपर्णी, कूठ, सफेद चन्दन और पद्माक

सम्पूर्ण मिलित ४० तोले। इस से २ सेर घृत का पाक कर सेवन करावें। इस के सेवन से अपस्मार, गरदोष, उन्माद, प्रतिश्याय, तृतीयक ज्वर, चातुर्थक ज्वर, श्वास, कास आदि रोग नष्ट होते हैं। यह घृत वीर्य तथा रज का शोधक है। यदि युञ्जातक न प्राप्त हो तो उसके स्थान पर तालमस्तक डाला जाता है। मात्रा—आधा तोला।

महाचैतसं घृतम् (२)

(वृ. यो. त. । त. ८८; भा. प्र. । म. खं. उन्मादा.)

"चैतस घृत" प्र. सं. १७८३ देखिये।

उसमें और इसमें केवल इतना ही अन्तर है कि इसमें (महाचैतसमें) क्वाध्य द्रव्योंमें बेल-छाल, अरलुकी छाल, पाढलकी छाल और अरनी अधिक है।

(५२३५) महातिक्तकं घृतम् (१)

(वृ. मा.; च. द.; र. र.; वं. से.; यो. र. । कुष्ठा.; शा. ध. । ख. २ अ. ९; वृ. यो त. । त. १२०; च. सं. । चि. अ. ७. कुष्ठ; ग. नि. । घृता.; वा. भ. । चि. अ. १९.; सु. स. । चि. अ. ९.)

सप्तच्छदं प्रतिविषां शम्पाकं तिक्तरोहिणीं पाठाम्।
मुस्तमुशीरं त्रिफलां पटोलपिचुमन्दपर्पटकम्॥

धन्वयवासं चन्दनमुत्पकुल्यापद्मकं रजन्यौ च ।
षड्ग्रन्थां सविशालां शतावरीं सारिवे चोभे ॥
वत्सकबीजं वासां मूर्वाममृतां किराततिक्तं च ।
कल्कान्कुर्यान्मतिमान्यष्ट्याह्वं त्रायमाणां च ॥
कल्कस्तु चतुर्भागो जलमष्टगुणं रसोऽमृतफला-
नाम् ।
द्विगुणो घृतात्प्रदेयस्तत्सर्पिः पाययेत्सिद्धम् ॥
कुष्ठानि रक्तपित्तं प्रबलान्यर्शांसि रक्तवाहीनि ।
वीसर्पमम्लपित्तं वातासृक्पाण्डुरोगं च ॥
विस्फोटकान्सपामानुन्मादं कामलां ज्वरं कण्डूम् ।
हृद्रोगगुल्मपिटकानसृग्दरं गण्डमालां च ॥
हन्यादेतत्सद्यः पीतं काले यथाबलं सर्पिः ।
योगशतैरप्यजितान्महाविकारान्महातिक्तम् ॥

कल्क—सतौनेकी छाल, अतीस, अमलतासका गूदा या छाल, कुटकी, पाठा, नागरमोथा, खस, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, नीमकी छाल, पित्तपापड़ा, धमासा, सफेद चन्दन, पीपल, पद्माख, हल्दी, दारुहल्दी, बच, इन्द्रायणकी जड़, सतावर, दो प्रकारको सारिवा, इन्द्रजौ, वासा, मूर्वा, गिलोय, चिरायता, मुलैठी और त्रायमाणा× । प्रत्येक १–१ तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२४८ तोले (३ सेर ८ तोले) घीमें ६ सेर १६ तोले आमलेका रस और २४ शेर ६४ तोले पानी तथा उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश जल जाय तो घृतको छान लें ।

यह घृत सब प्रकार के कुष्ठ, रक्तपित्त, भयंकर रक्तार्श, विसर्प, अम्लपित्त, वातरक्त, पाण्डुरोग, विस्फोटक, पामा, उन्माद, कामला, कण्डू, ज्वर, हृद्रोग, गुल्म, पिडिका, स्त्रियोंका रक्तप्रदर और गण्डमालाको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है ।

उचित मात्रानुसार, यथोचित समय पर सेवन करानेसे यह घृत सैकड़ों प्रयोगोंसे आराम न होने वाले भयंकर रोगोंको भी नष्ट कर देता है ।

×सुश्रुत संहितामें खस, पीपलामूल और दारुहल्दीका अभाव है, सरिवा एक ही प्रकारकी लिखी है तथा बाराहीकन्द अधिक है ।

शा. ध. में बच का अभाव है और मजीठ तथा कचूर अधिक है ।

(५२३६) महातिक्तकं घृतम् (२)

(ग. नि. । घृता.; यो. चि. । अ. ५)

करञ्जसप्तच्छदपिप्पलीनां
मूलानि कृष्णा मधुकं विशाला ।
यवासकं चन्दनमुत्पलं च
स्यात्त्रायमाणा कटुका वचा च ॥
उशीरपाठातिविषारजन्यः
किराततिक्तं कुटजस्य बीजम् ।
निम्बासनारग्वधमालतीनां
पत्राणि मूलानि च कण्टकार्याः ॥
शतावरीपद्मकदेवदारु
मुस्तानि कालीयककेसराणि ।
वासागुडूचीनतसारिवाश्च
बला पटोलं त्रिफला च मूर्वा ॥
नीपं कदम्बो धववेतसौ च
कर्कोटकं पर्पटकं पयस्या ।
वाराहकन्दं मदयन्तिका च
ब्राह्मी समङ्गार्षभकं बला च ॥

एतैः समांशैरथ कार्षिकैश्च
घृतस्य पात्रं विपचेन्नरं च ।
द्रोणं जलस्याकलुषस्य दद्यात्
पात्रद्वयं चामलकीरसस्य ॥
पक्वं प्रशान्तं गतफेनशब्दं
प्रयोजयेत् कुष्ठहरं प्रशस्तम् ।
तद्रक्तपित्तानिलसन्निपात
विस्फोटशल्यामयविद्रधीनाम् ॥
किलासकासज्वरगण्डमाला
ग्रन्थ्यर्बुदानि त्वथ वातरक्तम् ।
हृत्पाण्डुरोगान् सभगन्दरांश्च
निषेव्यमाणं नियमेन काले ॥
घृतं महातिक्तमिदं प्रशस्तं
निहन्ति सर्वान् श्वयथूपदिष्टान् ।

कल्क—करंजकी जड़, सतौनेकी जड़की छाल, पीपलामूल, पीपल, मुलैठी, इन्द्रायण, जवासा, सफेद चन्दन, नीलोफर (नीलकमल), त्रायमाणा, कुटकी, बच, खस, पाठा, अतीस, हल्दी, चिरायता, इन्द्रजौ, नीमके पत्ते, असना वृक्षके पत्ते, अमलतासके पत्ते, चमेलीके पत्ते, कटेलीकी जड़, शतावरी, पद्माख, देवदारु, नागरमोथा, कृष्ण चन्दन (अगर), नागकेसर, बासा, गिलोय, तगर, सारिवा, खरैटी, पटोल, हर्र, बहेड़ा, आमला, मूर्वा, भूकदम्ब, कदम्ब, धव, बेर, ककोड़ा, पित्तपापड़ा, विदारीकन्द, बाराहीकन्द, मल्लिका (चमेली), ब्राह्मी, मजीठ, ऋषभक और खरैटी । प्रत्येक १। १। तोला लेकर एकत्र कूट लें ।

८ सेर घीमें १६ सेर आमलेका रस और ३२ सेर पानी तथा उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें ।

जब जलांश जल जाय और फेन आने बन्द हो जायं तो घृतको छान लें ।

यह घृत कुष्ट, रक्तपित्त, वायु, सन्निपातज विस्फोटक, विद्रधि, किलासकुष्ट, खांसी, ज्वर, गण्डमाला, ग्रन्थि, अर्बुद, वातरक्त, हृद्रोग, पाण्डुरोग, भगन्दर और सब प्रकारके शोथों को नष्ट करता है ।

(मात्रा—१ तोला.)

(५२३७) महातिक्तकं घृतम् (३)

(ग. नि. । परिशि. अ. १.)

निम्बः सप्तच्छदः पाठा गुडूची सशतावरी ।
कृतमालः करञ्जौ द्वौ खदिरो वत्सको धवः ॥
सपटोलः पर्पटको विशाला चित्रकस्तथा ।
एतानि समभागानि कषायमुपकल्पयेत् ॥
भेषजानि प्रवेष्याणि तत्रेमानि प्रदापयेत् ।
भूनिम्बः कटुका मुस्ता दन्ती पर्पटको वचा ॥
विशालातिविषे मूर्वा यष्ट्याह्वं सारिवाद्वयम् ।
अवल्गुजा हरिद्रे द्वे दुःस्पर्शा रक्तचन्दनम् ॥
कृमिघ्नः पिप्पली पाठा चित्रको देवदारु च ।
भल्लातकान्युशीरं च सम्पाकः कलिङ्गकः ॥
एतैरक्षप्रमाणैस्तु घृतस्यार्धाढकं पचेत् ।
धात्रीरसस्तु द्विगुणो घृतात्क्वाथश्चतुर्गुणः ॥
सर्पिरेतन्नरः पीत्वा सर्वकुष्ठैर्विमुच्यते ।
वातरक्तं सवीसर्पं रक्तस्रावं च दारुणम् ॥
पिताम्रकाम्लकण्डूगरान् योगशतैरपि ।
असाधितान् महारोगान् महातिक्तं प्रसाधयेत् ॥

क्वाथ—नीमके पत्ते, सतौना, पाठा, गिलोय, शतावर, छोटा अमलतास, लताकरञ्ज, नाटाकरंज, खैर, कुड़ेकी छाल, धव, पटोल, पित्तपापड़ा, इन्द्रायण और चीता। सब समान भाग मिश्रित ८ सेर लेकर सबको एकत्र कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी रह जाय तो छान लें।

कल्क—चिरायता, कुटकी, नागरमोथा, दन्तीमूल, पित्तपापड़ा, बच, इन्द्रायणकी जड़, अतीस, मूर्वा, मुलैठी, २ प्रकारकी सारिवा, बावची, हल्दी, दारु हल्दी, धमासा, लाल चन्दन, बायबिडंग, पीपल, पाठा, चीता, देवदारु, भिलावा, खस, अमलतास और इन्द्रजौ। प्रत्येक १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

४ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और ८ सेर आमलेका रस मिला कर पकावें।

यह घृत समस्त प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, विसर्प, भयंकर रक्तस्राव, रक्तपित्त, कामला, कण्डू और विष विकार इत्यादि सैकड़ों औषधोंसे न शान्त होने वाले भयंकर रोगों को भी नष्ट कर देता है।

महात्रैफलघृतम् (१)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

प्रयोग संख्या २४५१ देखिये।

महात्रैफलघृतम् (२)

(व. से.; च. द.; वृ. मा.; धन्व.; भै. र. । नेत्ररो.; वृ. यो. त. । त. १३१; यो. त. । त. ७१)

प्र. सं. २४५७ देखिये।

महात्रैफलघृतम् (३)

(ग. नि. । घृता.)

प्र. सं. २४४४ त्रिफलाघृत देखिये। उसमें इसकी अपेक्षा कल्क द्रव्यों में पुनर्नवा और दारुहल्दी अधिक हैं।

(५२३८) महादाडिमाद्यं घृतम्

(भै. र. । प्रमेहा.)

दाडिमस्य फलप्रस्थं प्रस्थश्च यवतण्डुलम्।
कुलत्थं प्रस्थमादाय घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥
शतावरीरसप्रस्थं गव्यदुग्धश्च तत्समम्।
कल्कः सार्द्धपिचुर्द्राक्षा खर्जूरं त्रिफला तथा॥
रेणुका चाष्टवर्गश्च देवदारु निशाद्वयम्।
बिम्बीकुष्ठकमेला च विदार्यतिबला तथा॥
शिला त्वचमुशीरञ्च शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णकम्।
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति मूत्राघातांस्त्रयोदश॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रश्च रक्तपित्तं सुदारुणम्।
वातजं पित्तजश्चैव श्लेष्मजं सन्निपातजम्॥
बृंहणश्च विशेषेण सर्वमेहहरं परम्।
अश्विभ्यां निर्मितं सिद्धं दाडिमाद्यमिदं महत्॥

क्वाथ—अनार, छिलके रहित जौ और कुलथी १-१ सेर लेकर सबको कूट कर २४ सेर पानीमें पकावें और जब ६ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—मुनक्का, खजूर, हर्र, बहेड़ा, आमला, रेणुका, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, कन्दूरी, कूठ, छोटी इलायची, बिदारीकन्द, कंघी (अतिबला), शिलाजीत, दालचीनी, खस

और शुद्ध कृष्णाभ्रक प्रत्येक २२॥ माशे लेकर सबको एकत्र पीस लें

विधि-२ सेर घीमें उपरोक्त काथ, २ सेर शतावरका रस और २ सेर गायका दूध तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत २० प्रकारके प्रमेह, १३ प्रकारके मूत्राघात, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, तथा वातज, पित्तज, कफज और सान्निपातिक भयंकर रक्तपित को नष्ट करता और वीर्यको बढ़ाता है।

(५२३९) **महादूर्वाद्यघृतम्**

(व. से. । रक्तपित्ता.)

दूर्वासेन्दीवरं पद्मं मञ्जिष्ठा सैलवालुका।
रास्ना मुस्ता तथोशीरं चन्दनं मधुकाह्वयम् ॥
पद्मकं लोध्रकुष्ठञ्च चन्दनं रजनीद्वयम्।
काकोल्यौ शारिवे चेति कल्कैरेभिश्च कार्षिकैः ॥
घृतप्रस्थमजाक्षीरं तंडुलोदकसंयुतम्।
दूर्वायाः स्वरसेनापि साधितं मृदुनाग्निना ॥
तत्पानं वमतो रक्तं नावनं नासिकागते।
कर्णाभ्यां यस्यगच्छेच्च तस्य कर्णौ प्रपूरयेत् ॥
रक्तस्रावीणि चार्शांसि लेपयेत्तेन सर्पिषा।
मेढ्रपायुप्रवृत्ते तु तदभ्यङ्गे प्रयोजयेत् ॥
पित्तजेषु विकारेषु स्फोटादिषु च बुद्धिमान्।
विषेषु कीटदोषेषु विसर्पेषु प्रयोजयेत् ॥

कल्क-दूर्वा (दूबड़ा घास), नीलकमल, लालकमल, मजीठ, एलवालुक, रास्ना, नागरमोथा, खस, सफेद चन्दन, मुलैठी, पद्माख, लोध, कूठ, लाल चन्दन, हल्दी, दारुहल्दी, काकोली, क्षीर-काकोली और दोनों प्रकारकी सारिवा प्रत्येक १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र कूट लें।

२ सेर घीमें बकरीका दूध २ सेर ५३ तोले, चावलोंका पानी २ सेर ५३ तोले, दूबका रस २ सेर ५३ तोले और उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश जल जाए तो घृतको छान लें।

इसकी नस्य लेने से नाकसे होने वाला रक्त-स्राव नष्ट होता है। इसे पीनेसे रक्तवमन बन्द होती है। यदि कानोंसे रक्त निकलता हो तो कानोंमें यह तेल डालना चाहिये। यदि बवासीरके मस्सोंसे अथवा लिंग और गुदासे रक्तस्राव होता हो तो उन स्थानोंमें इसकी मालिश करनी चाहिए।

यह साधारणतः समस्त पित्त विकारों और विस्फोटकादि में तथा विशेषतः कृमिदोष और विसर्पमें अत्यन्त गुणकारी है।

(५२४०) **महानीलघृतम्** (१)

(सु. सं. । चि. अ. ९.)

त्रिफलात्वक्त्रिकटुकासुरसामदयन्तिका।
वायस्यारग्वधानाञ्च तुलां कुर्य्यात् पृथक् पृथक्॥
काकमाच्यर्कवरुणदन्तीकुटजचित्रकान्।
दार्वीनिदिग्धिकाभ्यान्तु पृथग्दशपलन्तथा ॥
त्रिद्रोणेऽपां पचेद्यावत् षट्प्रस्थं परिशेषितम्।
शकृद्रसदधिक्षीरमूत्राणां पृथगाढकम् ॥
तद्वद्घृतस्य तत्साध्यं भूनिम्बव्योषचित्रकैः।
करञ्जफलनीलिकाश्यामावल्गुजपीलुभिः ॥
नीलिनीनिम्बकुसुमैः सिद्धं कुष्ठापहं घृतम्।
प्रक्षणादङ्गसावर्ण्यं श्वित्रिणां जयेन्नृणाम् ॥
भगन्दरं कृमीनर्शो महानीलं नियच्छति ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, तुलसी, मदयन्तिका (चमेली), सफेद चौंटली और अमलतास। प्रत्येक ६। सेर। मकोय, आक, बरनेकी छाल, दन्तीमूल, कुड़ेकी छाल, चीता, दारुहल्दी तथा कटेली ५०-५० तोले। सबको कूटकर ९६ सेर पानीमें पकावें जब १२ सेर पानी शेष रह जाय तो छानलें।

८ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, ८ सेर गायके गोबरका रस, ८ सेर गायका दही, ८ सेर गोदुग्ध और ८ सेर गोमूत्र तथा निम्नलिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश जल जाए तो घृतको छान लें।

कल्क—करञ्जवेकी गिरी (करञ्जफल), सम्भालु, काली निसोत, बावची, पीलु, नीलवृक्षका पञ्चांग और नीमके फूल। प्रत्येक ११॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

यह घृत कुष्ठ, भगन्दर और कृमि तथा अर्शको नष्ट करता है इसकी मालिश करनेसे श्वेत कुष्ठके चकतोंका रंग शरीरके रंगके समान हो जाता है।

(५२४१) महानीलघृतम् (२)

(वृ. यो. त. । त. १२०; वं. से. । कुष्ठा.)

आरग्वधं वायसी च सुरसा मदयन्तिका।
एकैकस्य तुलाऽऽदेया त्रैफलं चाऽऽढकत्रयम्॥
दन्ती दारुहरिद्रा च कुटजं वरुणत्वचः।
चित्रकश्चार्कमूलं च काकमाची निदिग्धिका॥
एषां दशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत्।
अष्टभागावशिष्टं तु पूतं पुनरधिश्रयेत्॥
दधि सर्पिश्च दुग्धं च गोमूत्रं च शकृद्रसम्।
एकैकमाढकं दद्यात्प्रत्येकं वस्त्रगालितम्॥
अवल्गुजं त्रिकटुकं नक्तमालफलानि च।
त्रिफला चित्रको दन्ती मुस्तं कटुकरोहिणी॥
पिचुमन्दश्च शिग्रुश्च तथेङ्गुदिफलानि च।
किराततिक्तकं श्यामा नीलिनी नीलमुत्पलम्॥
कल्कैरेतैर्घृतं सिद्धं पाययेच्छ्वित्ररोगिणम्।
महानीलमिति ख्यातमेतच्छ्वित्रापहं परम्॥
भगंदरं तथाऽर्शांसि कुष्ठान्यष्टादशैव तु।
अथर्वविहितो योगो ब्रह्मदण्ड इवाऽऽहितः॥
श्वित्रिणां श्वित्ररोगेषु पानाभ्यञ्जनतः स्मृतः॥

अमलतास, सफेद चौंटली, तुलसी और मदयन्तिका (चमेली भेद), प्रत्येक ६। सेर तथा हर्र, बहेड़ा और आमला ४-४ सेर; एवं दन्ती, दारुहल्दी, कुड़ेकी छाल, बरनेकी छाल, चीतेकी जड़, आककी जड़ मकोय और कटेली प्रत्येक ५०-५० तोले लेकर सबको अधकुटा करके १२८ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें और फिर उसमें ८-८ सेर दही, घी, दूध, गोमूत्र और गोबरका रस (हर एक चीज कपड़ेमें छनी हुई) तथा निम्नलिखित कल्क मिलाकर पुनः पकावें। जब जलांश जल जाय तो घृतको छान लें।

कल्क—बावची, सोंठ, मिर्च, पीपल, करञ्जके फल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, दन्तीमूल, नागरमोथा, कुटकी, नीमकी छाल, सहंजनेकी छाल, हिङ्गोटके फल, चिरायता, निसोत, नीलका पञ्चाङ्ग, और नीलोत्पल (नीलकमल)। सब समान भाग मिश्रित १ सेर (प्रत्येक ४ तोले २॥ माशे) लेकर सबको एकत्र पीस लें।

यह घृत श्वेत कुष्ठके लिए अत्यन्त गुणकारी है तथा भगन्दर, अर्श और १८ प्रकारके कुष्ठ नष्ट करता है।

श्वेत कुष्ठ में इसे पिलाना और इसकी मालिश करनी चाहिये।

(५२४२) **महानीलघृतम्** (३)

(ग. नि. । कुष्ठा.)

आरग्वधं वायसीं च बीजकं मदयन्तिका ।
एकैकस्य तुला देया प्रत्येकं त्रिफलाढकम् ॥
दन्ती दार्वी हरिद्रा च वरुणं कुटजत्वचम् ।
चित्रकं चार्कमूलं च काकमाची निदग्धिका ॥
एषां दशपलान् भागान् त्रिद्रोणेऽपां विपाचयेत् ।
अष्टभागावशिष्टं तु पुनरग्नावधिश्रयेत् ॥
धात्रीरसं वृषरसं जाती स्वरसमेव च ।
दधि सर्पिपश्च दुग्धं च गोमूत्रं गोशकृद्रसः ॥
आढकाढकमेतेषां गर्भं चेमं समावपेत् ।
अवल्गुजं त्रिकटुकं नक्तमालफलानि च ॥
पिचुमर्दं च जात्याश्च पीलुतिलवकपल्लवाः ।
किराततिक्तकं श्यामा नीलिकानीलपल्लवाः ॥
एतैः सिद्धं परिस्राव्य पाययेत्कुष्ठरोगिणम् ।
महानीलमिति प्रोक्तमेतत्कुष्ठापहं घृतम् ॥
भगन्दरमथार्शांसि कृमींश्चापि विनाशयेत् ।
अष्टादशैव कुष्ठानि सर्पिरेतन्नियच्छति ॥

अमलतास, सफेद चौंटली, विजयसार और मदयन्तिका (चमेली भेद) १००-१०० पल (प्रत्येक ६। सेर) तथा हर्र, बहेड़ा, और आमला ४-४ सेर एवं दन्तीमूल, दारुहल्दी, बरनेकी छाल, कुड़ेकी छाल, चीतामूल, आककी जड़, मकोय और कटेली प्रत्येक १० पल (५० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ९६ सेर पानीमें पकावें और जब १२ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

तत्पश्चात् इसमें ८-८ सेर आमलेका रस, बासेका रस, चमेलीका रस, दही, घी, दूध, गोमूत्र और गोबरका रस एवं निम्न लिखित चीजोंका कल्क मिलाकर पुनः पकावें। जब जलांश जल जाए तो घृतको छान लें।

कल्क—बाबची, सोंठ, मिर्च, पीपल, करञ्ज-फल, नीमके पत्ते, चमेलीके पते, पीलुके पत्ते और हिङ्गोटके पत्त तथा चिरायता, निसोत, संभालु और नीलके पत्ते सब समान भाग मिश्रित १ सेर (प्रत्येक ६। तोले) लेकर सबको एकत्र पीस लें।

यह घृत १८ प्रकारके कुष्ठ, भगन्दर, अर्श और कृमि रोगोंको नष्ट करता है।

महापञ्चगव्यं घृतम्

(ग. नि.; वं. से. । अपस्मा.; च. सं. । चि. अ. १५ अपस्मा.; वा. भ. । उ. अ. ७ अपस्मा.)

प्रयोग संख्या ४०५१ देखिये।

(५२४३) **महापटोलाद्यं घृतम्**

(व. से. । नेत्र.)

पटोलं कटुकं दार्वी निम्बवासाफलत्रिकम् ।
दुरालभा पर्पटकं त्रायन्ती घनचन्दनम् ॥
किराततिक्तयष्ट्याह्वे पिप्पलीकौटजं फलम् ।
लामज्जकं मृणालश्च तत्फलं च समं भवेत् ॥
एतैस्तु कार्षिकैः कल्कैर्विपचेत्सर्पिरुत्तमम् ।
आमलक्या रसं देयं शतावर्याः समन्वितम् ।

सुरदारुकषायश्च भृङ्गराजरसं तथा ।
प्रस्थं प्रस्थश्च मृद्वीयाद्द्विप्रस्थं सर्पिषः पचेत् ॥
पाने च भोजने दद्यात्सर्वमूर्धामयापहम् ।
विशेषादक्षिरोगघ्नं तिमिरं च त्रिदोषजम् ॥
पटलं रक्तराजिश्च व्रणशुक्रहरं तथा ।
काचार्म्मनात्त्यमान्ध्यश्च कण्डूपिल्लामयान्हरेत् ॥
वर्धमशोथ हरं चैव दृष्टिरोगकुलापहम् ।
आसन्नतिमिराणाञ्च यश्च दूरान्न पश्यति ॥
अदृष्टिं मन्ददृष्टिश्च सर्वनेत्रामयापहम् ।
बलवर्णकरं धन्यं दृष्टिपुष्टिविवर्द्धनम् ॥
महापटोलाद्यमिदं ख्यातं वैदेह निर्मितम् ॥

कल्क–पटोल, सोंठ, मिर्च, पीपल, दारुहल्दी, नीमकी छाल, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला, धमासा, पित्तपापड़ा, त्रायमाणा, नागरमोथा, सफेद चन्दन, चिरायता, मुलैठी, पीपल, इन्द्रजौ, पीली खस (लामज्जक), कमलनाल और कमलगट्टा प्रत्येक १।–१। तोला लेकर सबको पीस लें ।

४ सेर घीमें २–२ सेर आमलेका रस, शतावरका रस, देवदारुका क्वाथ और भंगरेका रस तथा उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृत को छान लें ।

इसे भोजनमें खिलाने और पिलानेसे समस्त शिरो रोग और विशेषतः नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

यह घृत त्रिदोषज तिमिर, पटल, लाल रेखायें, व्रण, फूला, काच, अर्म, रतौंधा, पिल्ल, पलकोंकी सूजन, दूरदृष्टि (Long Sight) आसन्न दृष्टि (Short Sight), दृष्टिकी मन्दता तथा अन्धता इत्यादि समस्त दृष्टि रोगोंको नष्ट करता और बल, वर्ण की वृद्धि करता है तथा नेत्र पौष्टिक है ।

(५२४४) महापद्मकघृतम्

(र. र; च. द. । विस्फोट.)

प्र. सं. ४०६९ पद्मकाद्यं घृतम् में कल्क द्रव्यों में लिहसौड़ा, सिरसकी छाल और कैथका फल मिला लेने से उसका नाम महापद्मक घृत हो जाता है ।

महापैशाचिकं घृतम्

(व. सं.; भै. र.; बृ. मा.; धन्व.; च. द.; यो. र.; बृ. नि. र.; र. र. । उन्माद.; च. सं. । चि. अ. १४ उन्माद.; यो. चि. म. । अ. ५; ग. नि. । परिशिष्ट घृता.; बृ. यो. त. । त. ८८)

प्र. सं. ४१०५ देखिये ।

महाभूतरावघृतम्

प्र. सं. ४८७९ देखिये ।

(५२४५) महामार्कवघृतम्

(र. र. । कुष्ठा.)

महौषधं महामेदा निम्बपत्रं च सर्षपाः ।
मनःशिला च सिन्दूरं पद्मचारिण्यवल्गुजम् ॥
हरिद्रे हरितालं च त्रिफला पीतगन्धकम् ।
एतानि समभागानि कर्षार्द्धश्च प्रयोजयेत् ॥
सर्पिषश्च पलान्यष्टौ देवदारुरसं शुभम् ।
द्विगुणं त्रिगुणं क्षीरं गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥
ताम्रभाण्डे तु संस्थाप्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
चतुर्भागावशेषन्तु सकल्कमवतारयेत् ॥
अग्नौ क्षिप्तन्तु निःशब्दं जलयुक्तं विचक्षणः ।
अभ्यङ्गपानयोगाच्च तदा सर्वगदाञ्जयेत् ॥

अष्टादशानां कुष्ठानां दद्रूणां श्वित्रिणां तथा ।
कुष्ठनाडीषु मर्त्यानां दुष्टानां कीटिनां तथा ॥
असृक्स्रावपरीता ये ये च त्यक्तभिषक्क्रियाः ।
विसर्पग्रहग्रस्तानां शीर्णाङ्गानां विशेषतः ॥
सर्वधातुगते कुष्ठे पतितभ्रूशिरोग्रहे ।
घर्घराव्यक्तघोषाणां तथा सर्वाङ्गपीडिनाम् ॥
पानेऽभ्यङ्गे तथा नस्ये बस्तिकर्मणि नित्यशः ।
सप्तरात्रप्रयोगेण सर्वकुष्ठानि नाशयेत् ॥
द्विसप्ताहप्रयोगेण पूर्णचन्द्रनिभाननः ।
जातकेशनखश्मश्रुर्भाति षोडशवर्षवत् ॥
अनङ्गसदृशः साक्षात्सर्वामयविवर्ज्जितः ।
एतद्घृतं महाश्रेष्ठं भार्गवेण विनिर्मितम् ॥
प्रजानाञ्च हितार्थाय सर्वव्याधिहरं शुभम् ।
महामार्करनामेदं घृतं सर्वापराजितम् ॥

सोंठ, महामेदा, नीमके पत्ते, सरसों, मनसिल, सिन्दूर, हल्दी, बाबची, हल्दी, दारुहल्दी, हरताल, हर्र, बहेड़ा, आमला और गन्धक ७॥-७॥ माशे लेकर सबको एकत्र पीस लें, फिर १ सेर घीमें २ सेर देवदारुका क्वाथ, ३ सेर दूध और ४ सेर गोमूत्र मिलाकर तांबेके पात्रमें मन्दाग्निपर पकावें और जब चौथा भाग शेष रह जाय तो अग्निसे नीचे उतारलें ।

यह जलयुक्त घृत अग्निपर डालने पर भी शब्द नहीं करता (?)

इसे पिलाने और मालिश करने से दाद, सफेद कुष्ठ, नाडी और कीटयुक्त रक्तस्रावी तथा वैद्योंसे त्यक्त कुष्ठ और विशेषतः शीर्णांग कुष्ठ कि जिसमें हाथ पैर इत्यादि भी गल गये हों, नष्ट हो जाता है ।

यदि कुष्ठीकी भौं (भ्रू) गिर गई हों, सिर जकड़ गया हो, शब्दमें घरघराट होती हो और समस्त अंगोंमे पीड़ा हो तो उसे यह घृत पिलाने, इसकी मालिश करने तथा नस्य और वस्ति देनेसे आराम हो जाता है ।

इसके सेवनसे प्रथम सप्ताहमें समस्त कुष्ठ नष्ट हो जाते हैं और दूसरे सप्ताहके पश्चात् कुष्ठीके बाल, नख, दाढी, इत्यादि निकल आते हैं; तथा वह समस्त रोग रहित, षोडश वर्षीय कुमार सदृश अत्यन्त रूपवान हो जाता है ।

(५२४६) महावज्रकघृतम् (१)

(ग. नि. । घृता. १)

त्रिफलात्रिकटुद्विकण्टकारी
कटुकाकुम्भनिकुम्भराजवृक्षैः ।
सवचातिविषाग्निकैः सपाठैः
पिचुभागैर्नव वज्रदुग्धमुष्टयाः ॥
पिष्टैः सिद्धं सर्पिषः प्रस्थमेभिः
क्रूरे कोष्ठे स्नेहनं रेचनं च ।
कुष्ठश्वित्रप्लीहवध्मार्शगुल्मा-
न्हन्यात्कृच्छ्रांस्तन्महावज्रकाख्यम् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, छोटी और बड़ी कटेली, कुटकी, निसोत, दन्तीमूल अमलतास, बच, अतीस, चीतामूल और पाठा । प्रत्येकका चूर्ण १।-१। तोला तथा थोहरका दूध १० तोले लेकर सबको २ सेर घीमें मिला कर उसमें ८ सेर पानी डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें ।

यह घृत स्नेहन और तीव्र रेचक है। इसे श्वेत कुष्ठ, तिल्ली, वर्ध्म, अश्मरी, गुल्म और मूत्र-कृच्छ्र वाले क्रूर कोष्ठ रोगियोंको सेवन कराना चाहिये।

(५२४७) महावज्रकघृतम् (२)

(वं. से. । कुष्ठा ; वा. भ. । चि. अ. १९ कुष्ठा.; ग. नि. । घृता.)

वासागुडूचीत्रिफलापटोल
निदग्धिकानिम्बकरञ्जतोये ।
वासादिकल्केन तु सिद्धमेतद्
घृतं महावज्रकमादिशन्ति ॥
तन्मासमात्रञ्च निषेव्यमाणो
हिताशनो नातिचिरेण कुष्ठी ।
विशीर्णकर्णाङ्गुलिनासिकोऽपि
भवेत्स सम्पूर्णतनुः शरीरी ॥
उदीर्णवेगानपि च प्रमेहां-
श्चिरप्रवृत्तान्विषमज्वरांश्च ।
तदेव सर्पिः सुजनैः प्रयुक्तं
विजित्य कुष्ठं बलमादधाति ॥

कल्क-वासा, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, कटैली, नीमकी छाल और करञ्जकी छाल सब समान भाग-मिश्रित पावसेर (प्रत्येक २। तोले । लेकर सबको एकत्र कूट लें।

क्वाथ—कल्ककी प्रत्येक वस्तु ३५॥ तोले (सब मिलाकर ४ सेर) लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो घृतको छान लें।

इसे सेवन करने और पथ्य पालन करने से गलित कुष्ठ (कि जिसमें कान, उंगली और नासिका गल गई हों) भी शीघ्र नष्ट हो जाता है; तथा यह प्रबल प्रमेह और विषमज्वरोंको भी नष्ट करके बलकी वृद्धि करता है।

(५२४८) महावासाद्यं घृतम्

(ग. नि. । घृता. १)

वासकस्वरसे सर्पिः पयसा सह पाचयेत् ।
कल्कैर्भूनिम्बकुटजमुस्तयष्टयाह्वचन्दनैः ॥
उदीच्यमधुकानन्तासारिवोत्पलपद्मकैः ।
त्रायन्त्युत्पलमूर्वाभिर्मदयन्त्याश्च पल्लवैः ॥
सिताक्षौद्रयुतं हन्याद्रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
पित्तं कासञ्च गुल्मञ्च स्वरभेदं हलीमकम् ॥
ये चाऽन्ये कीर्तिता रोगा रक्तपित्तकफाश्रयाः।
तान्सर्वान्नाशयत्येतत्पीयमानं हिताशिनः ॥

कल्क—चिरायता, कुड़ेकी छाल, नागरमोथा, मुलैठी, सफेद चन्दन, सुगन्धबाला, गिलोय, अनन्तमूल, सारिवा, नीलोत्पल, पद्माक, त्रायमाणा, नीलोत्पल, मूर्वा और मदयन्तिका (चमेली भेदके पत्ते) समान भाग-मिश्रित पावसेर (प्रत्येक १। तोला) लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें ४ सेर बासेका स्वरस और ४ सेर गायका दूध तथा उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें। इसमें शहद और मिश्री मिला कर सेवन करने से भयंकर रक्तपित्त, पित्तज

खांसी, गुल्म, स्वरभेद, हलीमक और अन्य रक्तपित्तज तथा कफज रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१ तोला।)

(५२४९) महाबिन्दुघृतम्

(भै. र. । उदर.; ग. नि. । घृता.)

स्नुहीक्षीरपले कल्के प्रस्थार्द्धश्चैव सर्पिषः ।
कम्पिल्लकं पलश्चैकं पलार्द्धं[1] सैन्धवस्य च ॥
त्रिवृतायाः पलश्चैकं कुडवं धात्रिकारसात् ।
तोयप्रस्थेन विपचेच्छनैर्मृद्वग्निना भिषक् ॥
शाणप्रमाणं दातव्यं जठरे प्लीहगुल्मयोः ।
तथा कच्छपरोगेषु युञ्जीत मतिमान् भिषक् ॥
एतद् गुल्मान् सनिचयान् सशूलान् सपरिग्रहान् ।
निहन्त्येष प्रयोगो हि वायुर्जलधरानिव ॥
पञ्चगुल्मवधार्थाय वज्रो मुक्तः स्वयम्भुवा ।
महाबिन्दुघृतं नाम सिद्धं सिद्धैश्च पूजितम् ॥

सेहुण्डका दूध २० तोले, कमीला ५ तोले, सैंधानमक २॥ तोले, निसोत ५ तोले, आंवलेका रस ४० तोले।

१ सेर घीमें उपरोक्त पदार्थ और २ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो घृतको छान लें।

इसे ५ माशेकी मात्रानुसार सेवन कराने से उदर रोग, तिल्ली, कच्छप रोग, उपद्रवयुक्त गुल्म और शूल नष्ट होता है। यह पांच प्रकारके गुल्मोंको नष्ट करने के लिये वज्रके समान प्रभावशाली है।

[1] शाणार्द्धमिति पाठान्तरम् ।

(५२५०) महाषट्पलकं घृतम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ५९; यो, र. । विषमज्वर.)

पूतीकाग्निकपञ्चकोलरुचकैः साजाजियुग्मोद्भिदैः
सक्षारैः सविडैः सहिङ्गुहपुषासिन्धूद्भवैः कल्कितैः ॥
सूक्तेनाऽऽर्द्रकसम्भवेन च रसेनैतन्महाषट्पलम्
सर्पिः पक्वमरोचकाग्निसदनप्लीहज्वरश्वासजित् ॥

करञ्जकी छाल, चीतामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, चव, चीतामूल, संचल नमक, सफेद जीरा, काला जीरा, खारी नमक, जवाखार, विड नमक, हींग, हाउबेर (हपुषा) और सैंधानमक १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीसलें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह कल्क और ४-४ सेर शुक्त तथा अद्रकका रस मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो उसे छान लें।

यह घृत अरुचि, अग्निमांद्य, तिल्ली, ज्वर और श्वासको नष्ट करता है।

(शुक्त बनानेकी विधि भा. भै. र. भाग १ पृ. ३५४ पर देखिये।)

(५२५१) महाषट्पलकं घृतम् (२)

(भै. र.; च. द. । ग्रहणी.)

सौवर्चलं पञ्चकोलं सैन्धवं हवुषं विडम् ।
अजमोदां यवक्षारं हिङ्गुजीरकमौद्भिदम् ॥
कृष्णाजाजीं सभूतीकं कल्कीकृत्य पलार्द्धिकम् ।
आर्द्रकस्वरसं चुक्रं क्षीरमस्त्वारनालकम् ॥
दशमूलकषायेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
भक्तेन सह पातव्यं निर्भक्तं वा विचक्षणैः ॥
कृमिप्लीहोदराजीर्ण ज्वर कुष्ठप्रवाहिकाः ।
वातरोगान् कफव्याधीन् हन्याच्छूलमरोचकम् ॥

पाण्डुरोगं क्षयं कासं दौर्बल्यं ग्रहणीगदम् ।
महाषट्पलकं नाम्ना वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

संचल (काला नमक), पिप्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, सेंधानमक, हाऊबेर, विड-नमक, अजमोद, जवाखार, हींग, सफेद जीरा, खारी नमक, काला ज़ीरा और अजवायन आधा आधा पल (प्रत्येक २॥ तोले) लेकर सबको एकत्र पीस लें। फिर २ सेर घीमें यह कल्क तथा अद-रकका रस, चुक्र, दूध, मस्तु, आरनाल और दश-मूलका क्वाथ २-२ सेर मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

इसे भातके साथ अथवा बिना भातके भी खिला सकते हैं। इसके सेवनसे कृमि, तिल्ली, उदररोग, अजीर्ण, ज्वर, कुष्ठ, प्रवाहिका, वातरोग, कफजरोग, शूल, अरुचि, पाण्डु, क्षय, खांसी, दुर्ब-लता और संग्रहणी इत्यादि रोग अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

(दशमूलका क्वाथ बनाने की विधि--१ सेर दशमूलको ८ सेर पानीमें पकाकर २ सेर शेष रहने पर छान लें।

चुक्र, मस्तु और आरनाल बनाने की विधि भारत भैषज्य रत्नाकर भाग १ पृ. ३५४ पर देखिये।)

(५२५२) महाषट्पलकं घृतम् (३)

(ग. नि. । घृता.)

नागरस्य तुलार्धं तु जलद्रोणे विपाचयेत् ।
चतुर्भागावशेषं तु कषायमवतारयेत् ॥
शुक्लेन मस्तुना चैव दाडिमैर्बदरोदकैः ।
चतुर्गुणैरिमैस्तोयैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
सौवर्चलं बिडं चैव पौतिकं चोषकस्तथा ।
अजाजी पिप्पली चैव अजगन्धा यवाग्रजः ॥
सैन्धवं पञ्चकोलं च हिङ्गुचौद्भिदमेव च ।
एतैः पलार्धकैर्द्रव्यैः शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥
कृमिप्लीहोदराजीर्णज्वरगुल्मप्रमेहकान् ।
वातरोगानशेषांश्च हिक्कां शूलमरोचकम् ॥
पाण्डुरोगं प्रतिश्यायं दौर्बल्यं वह्निसंक्षयम् ।
महाषट्पलमातङ्कान् भिनत्त्यशनिवद्गिरिम् ॥

५० पल (३ सेर १० तोले) सोंठ को अध-कुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तत्पश्चात् २ सेर घीमें यह क्वाथ तथा २१३॥ तोले मस्तु, २१३॥ तोले अनारका रस या क्वाथ, २१३॥ तोले बेरी की छालका क्वाथ और निम्न लिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

कल्क-संचल (काला नमक), बिड नमक, करञ्जकी छाल और सुहागा, ज़ीरा, पीपल, अज-मोद, जवाखार, सेंधा, पञ्चकोल (पीपल, पीपला-मूल, चव्य, चीता और सोंठ), हींग और खारी नमक। प्रत्येकका चूर्ण २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र मिलालें।

इसके सेवनसे कृमिरोग, तिल्ली, उदर, जीर्ण-ज्वर, गुल्म, प्रमेह, वातज रोग, हिचकी, शूल, अरुचि, पाण्डु, प्रतिश्याय, दुर्बलता और अग्निमांद्य का नाश होता है।

(५२५३) माणकघृतम्

(भै. र. । शोथा.; व. से.; वृ. मा. च. द.; र. र. । शोथा; भा. प्र. । म. खं. २ शोथा.)

माणकक्वाथकल्काभ्यां घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
एकजं द्वन्द्वजं शोथं त्रिदोषजमपोहति ॥

४ सेर मानकन्दको ३२ सेर पानीमें पकावें जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान कर उसमें २ सेर घृत और २० तोले मानकन्दका कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घृत को छान लें।

यह घृत एकदोषज, द्विदोषज और सन्निपातज शोथको नष्ट करता है।

(५२५४) मातुलुङ्गमूलघृतम्

(ग. नि. । वन्ध्या ५)

मातुलुङ्गशिफाकल्कसिद्धं गर्भप्रदं घृतम् ।
पिबेद्वन्ध्या प्रयत्नेन गर्भसञ्जननं परम् ॥

२ सेर घृतमें ८ सेर पानी और २० तोले बिजौरेकी जड़की छालका चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

इसे सेवन करनेसे वन्ध्या स्त्री को भी गर्भ रह जाता है।

(५२५५) मातुलुङ्गादिघृतम् (१)

(ग. नि. । हिक्काश्वासा. ११)

मातुलुङ्गरसे सर्जसैन्धवं घृतपाचितम् ।
हृद्दुःखदायिनी हिक्का तस्मिन् भुक्ते निवर्तते ॥

२ सेर घीमें ८ सेर बिजौरे नीबूका रस तथा १०-१० तोले राल और सेंधा नमकका चूर्ण मिला कर मन्दाग्निपर पकावें। जब पानी जल जाय तो घृत को छान लें।

इसे पीनेसे हृदयको दुःख देने वाली हिचकी नष्ट हो जाती है।

(५२५६) मातुलुङ्गादिघृतम् (२)

(वृ. नि. र. । शूल)

घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलुङ्गरसो दधि ।
शुष्कमूलककोलाम्लकषायो दाडिमाम्भसा ॥
विडङ्गं लवणं क्षारं पञ्चकोलयवानिभिः ।
पाठामूलककल्केन सिद्धं शूले घृतं मतम् ॥
हृत्पार्श्वशूलं वै श्वासं कासं हिक्कां तथैव च ।
वर्ध्मगुल्मप्रमेहार्शान्वातव्याधींश्च नाशयेत् ॥

बिजौरे नीबूका रस ८ सेर, दही २ सेर, सूखी मूलीका क्वाथ २ सेर, खट्टे बेरोंका क्वाथ २ सेर और अनारका रस २ सेर लेकर २ सेर घृतमें ये समस्त चीजें तथा निम्नलिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें और जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

कल्क—बायबिड़ंग, सेंधा नमक, जवाखार, पीपल, पीपलामूल, चव, चित्रक, सोंठ, अजवायन और पाठेकी जड़ २-२ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

यह घृत हृदय और पसलीके शूल, श्वास, खांसी, हिचकी, वर्ध्म, गुल्म, प्रमेह, अर्श और वातव्याधिको नष्ट करता है।

(५२५७) मालत्याद्यं घृतम्

(भै. र. । मुख.)

मालत्या द्रोणपुष्प्याश्च निम्बबब्बोलयोस्तथा ।
सहाचरस्य सर्जस्य स्वरसेन पृथक् पृथक् ॥
कल्कैर्मलयजोशीररक्तचन्दनचम्पकैः ।
अश्वत्थवटनीलीभीरजनीदारुसैन्धवैः ॥
दार्व्या विश्वाह्वकुष्ठाभ्यां कणया च पचेद् घृतम्
शनैस्ताम्रमये पात्रे कृतवङ्गविलेपने ॥
मालत्याद्यमिदं सर्पिर्गदान् मुखसमुद्भवान् ।
निहन्त्यात्रात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥

द्रव पदार्थ—मालतीके पत्तोंका रस २ सेर, गूमाका रस २ सेर, नीमके पत्तोंका रस २ सेर, बबूलके पत्तोंका रस २ सेर, पियावासेका रस २ सेर, शालका रस या क्वाथ २ सेर ।

कल्क—सफेद चन्दन, खस, लाल चन्दन, चम्पाका फूल, पीपल वृक्षकी छाल, बड़की छाल, नीलकी जड़, हल्दी, देवदारु, सेंधा नमक, दारु हल्दी, सोंठ, कूठ और पीपल । सब समान भाग मिश्रित २० तोले (प्रत्येक १।।-१।। तोला) लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

विधि-कलई किये हुए तांबेके पात्रमें २ सेर घृत और उपरोक्त समस्त द्रव पदार्थ तथा कल्क डालकर मन्दाग्निपर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाए ता घृतको छान लें ।

यह घृत समस्त मुखरोगोंको नष्ट करता है ।

(५२५८) माषघृतम्

(वृ. नि. र. । पानात्यय.)

कट्फलमुस्तगुडूचीमाषैः क्रमवर्धितैश्च तत्सवैंः ।
घृतमर्दितैर्माषघृतं हन्यादुगन्धं सुराभवं सपदि॥

कायफलका चूर्ण १ भाग, नागरमोथेका चूर्ण २ भाग, गिलोयका चूर्ण ३ भाग, और उड़दका चूर्ण ४ भाग लेकर सबको १० भाग घीमें घोट कर सेवन करनेसे सुरापानकी दुर्गन्ध तत्काल नष्ट हो जाती है ।

(५२५९) माषादिघृतम्

(व. से. वाजीकर.; नपु. मृता. । त. २; वृ. यो. त. । त. १४७)

माषाणामात्मगुप्तानां बीजानामाढकत्रयम् ।
जीवकर्षभकौ मेदे वीराद्धी शतावरी ॥
मधुकं चाश्वगन्धा च साधयेत्कुडवोन्मितम् ।
तमेवास्मिन्घृतप्रस्थे द्रव्याद्दशगुणं पयः ॥
विदारिणो दशप्रस्थं प्रस्थमिक्षुरकस्य च ।
दत्त्वा मृद्वग्निना साध्यं सिद्धं सर्पिर्निधापयेत् ॥
शर्करायास्तुगाक्षीर्याः क्षौद्रस्य च पृथक् पृथक् ।
भागांश्चतुष्पलांश्चात्र पिप्पल्याश्च द्वयं पलम् ॥
बलपूर्वमतो लीढ्वा ततोऽन्नमुपयोजयेत् ।
यदीच्छेदक्षयं शुक्रं शेफसश्चोत्तमं बलम् ॥

उड़द १२ सेर, कौंचके बीज १२ सेर; जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, वृद्धि, शतावर, मुलैठी और असगन्ध प्रत्येक २०-२० तोले लेकर सबको एकत्र कूट कर आठ गुने पानीमें पकावें । जब चौथा भाग पानी शेष रह जाय तो छान लें । तत्पश्चात् १ सेर घीमें यह क्वाथ, १० सेर विदारीकन्दका रस, १ सेर ईखका रस और २६१ सेर दूध[1] मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें ।जब

[1] दूध और उड़द तथा कौंचके बीजोंका परिमाण अधिक प्रतीत होता है । उड़द और कौंचके बीज ६-६ सेर तथा दूध १० सेर लेना उचित है ।

घृतमात्र शेष रह जाय तो छान लें। फिर उसमें २०-२० तोले खांड, बंसलोचन और शहद तथा १० तोले पीपलका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार खाकर बादको भोजन करना चाहिए।

इसके सेवनसे वीर्यवृद्धि होती और लिङ्गका बल बढ़ता है।

(५२६०) माहेश्वरघृतम् (१)

(र. र. । रक्तपित्त .)

वासानिम्बपटोलं च त्रायमाणादुरालभा।
धातकीपर्पटं मुस्तमुशीरं कटुरोहिणी॥
निशादारुनिशातुल्यं तोयैर्दशगुणं पचेत्।
पादशेषे हरेत्क्वाथं गोघृतं क्वाथपादिकम्॥
त्रिफलात्रिकटुनिम्बं चन्दनश्च पलोन्मितम्।
कल्कं तन्निक्षिपेत्तत्र घृतशेषं विपाचयेत्॥
घृतं माहेश्वरं नाम रक्तपित्तहरं पिबेत्॥

बासा, नीमकी छाल, पटोल, त्रायमाणा, धमासा, धायके फूल, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, खस, कुटकी, हल्दी और दारुहल्दी सब समान भाग मिश्रित ६ सेर ३२ तोले (प्रत्येक ४२॥। तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ६४ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमें ४ सेर गायका घी और निम्न लिखित कल्क मिलाकर पुनः मन्दाग्निपर पकावें। जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

कल्क-हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, नीमकी छाल और सफेद चन्दनका चूर्ण ५-५ तोले।

इसे पीनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है।

माहेश्वरघृतम् (२)

लेप प्रकरणमें देखिये।

(५२६१) मांस्यादिघृतम्

(यो. र.; वृ. नि. र. । अण्डवृद्धि.)

मांसी कुष्ठं पत्रकैला रास्ना शृङ्गी च चित्रकम्।
कृमिघ्नमश्वगन्धा च शैलेयं कटुरोहिणी॥
सैन्धवं तगरं चैव कुटजातिविषैः समैः।
एतैश्च कार्षिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥
वृषमुण्डीतकैरण्डनिम्बपत्रभवं रसम्।
कण्टकार्याश्चापि दुग्धं प्रस्थं प्रस्थं विनिक्षिपेत्॥
सिद्धमेतद् घृतं पीतमन्त्रवृद्धिं व्यपोहति।
वातवृद्धिं पित्तवृद्धिं मेदोवृद्धिमथापि वा॥
मूत्रवृद्धिं च हन्त्येतत्सर्पिराशु न संशयः॥

कल्क-जटामांसी, कूठ, तेजपात, इलायची, रास्ना, काकड़ासिंगी, चीता, बायबिड़ंग, असगन्ध, छारछरीला, कुटकी, सेंधानमक, तगर, कुड़ेकी छाल और अतीस प्रत्येकका चूर्ण १।-१। तोला।

द्रव पदार्थ-बासा, मुण्डी, अरण्डकी जड़, नीमके पत्ते और कटेलीका स्वरस अथवा क्वाथ २-२ सेर। दूध २ सेर।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क तथा द्रव पदार्थ मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

इसे पीनेसे अन्त्रवृद्धि, वातवृद्धि, पित्तवृद्धि, मेदोवृद्धि और मूत्र वृद्धिका नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

मिश्रकस्नेहः

(व. से. । गुल्म.)

प्र. सं. २४५९ " त्रिवृतादि मिश्रक स्नेहः" देखिये ।

(५२६२) मुण्ड्यादिघृतम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २३)

मुण्डी गुडूची बृहतीद्वयं च
रास्ना समङ्गा क्वथितः कषायः ।
समं च तेनापि विमिश्रितं च
दुग्धं दधि स्यान्नवनीतकं च ॥
पचेत्सुधीमान् मृदुवह्निना च
सिद्धं घृतं स्नेहनमेव पुंसाम् ।
कर्षप्रमाणं विहितं च पाने
चाभ्यञ्जने भोजनके तथैव ॥
बस्तौ हितं स्नेहनमेव पुंसां
सप्ताहकं वातविकारिणां च ॥

मुण्डी, गिलोय, छोटी और बड़ी कटेली, रास्ना तथा मजीठ ५–५ तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३ सेर पानीमें पकावें । जब पौन सेर (६० तोले) पानी शेष रह जाए तो छान लें । तत्पश्चात् यह क्वाथ और ६०–६० तोले गोदुग्ध, गायका दही, नवनीत (नौनी घी– मक्खन) और ६० तोले पानी एकत्र मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

इसे वात विकारोंमें स्नेहनके लिये पिलाना, मालिश करना, भोजनमें खिलाना और बस्तिमें प्रयुक्त करना चाहिये ।

मात्रा—१। तोला ।

इसे १ सप्ताह तक सेवन कराना चाहिये ।

(५२६३) मुद्गादिघृतम्

(यो. र. । प्रदर.; च. द. । असृग्दरा.; वं. से.; बृ. नि. र.; बृ. मा.; ग. नि. । प्रदरा.; बृ. यो. त. । त. १३४)

मुद्गमाषस्य निर्यूहे रास्नाचित्रकमुस्तकैः ।
सिद्धं सपिप्पलीबिल्वैः सर्पिः श्रेष्ठमसृग्दरे ॥

मूंग और उड़दका क्वाथ ४–४ सेर तथा रास्ना, चीता, नागरमोथा, पीपल और बेलगिरीका कल्क २० तोले (प्रत्येकका चूर्ण ४ तोले) लेकर सबको २ सेर घीमें मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब पानी जल जाए तो घृतको छान लें ।

यह घृत रक्त प्रदरको नष्ट करता है ।

(मात्रा–२ तोले । अनुपान–दूध।)

(क्वाथ बनानेके लिये २–२ सेर मूंग और उड़दको पृथक् पृथक् १६–१६ सेर पानीमें पकाकर ४–४ सेर शेष रक्खें)

(५२६४) मूर्वाद्यं घृतम्

(भै. र. वं. से.; च. द.; बृ. मा.; र. र.। पाण्डु.)

मूर्वातिक्तानिशायासकृष्णाचन्दनपर्पटैः ।
त्रायन्तीवत्सभूनिम्बपटोलाम्बुददारुभिः ॥
अक्षमात्रैः घृतं प्रस्थं सिद्धं क्षीरचतुर्गुणम् ।
पाण्डुताज्वरविस्फोटशोथार्शोरक्तपित्तनुत् ॥

कल्क–मूर्वा, कुटकी, हल्दी, धमासा, पीपल, सफेद चन्दन, पित्तपापड़ा, त्रायमाणा, कुड़ेकी छाल, चिरायता, पटोल, नागरमोथा और देवदारुका चूर्ण १।–१। तोला ।

२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और २ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत पाण्डु, ज्वर, विस्फोटक, शोथ, अर्श और रक्तपित्तको नष्ट करता है।

(५२६५) मूलकाद्यं घृतम्

(वं. से. । उदावर्त.; सुश्रुत । उत्तर. अ. ५५)

मूलकं शुष्कमार्द्रञ्च वर्षाभू पञ्चमूलकम् ।
आरेवतफलञ्चाप्सु पक्त्वा तेन घृतं पचेत् ॥
तत्पीयमानं शमयेदुदावर्तमसंशयम् ॥

सूखी मूली और हरा पुनर्नवा तथा लघु पंचमूल (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कटेली, कटैला, गोखरु) और अमलतास के फलोंका गूदा १-१ सेर लेकर सबको ६४ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

२ सेर घीमें यह क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो घतको छान लें।

इसे पीनेसे उदावर्त अवश्य नष्ट हो जाता है।

(५२६६) मृत्युपाशच्छेदिघृतम्

(भै. र.; वं. से.; भा. प्र.; यो. र. । विषा.)

अभयां रोचनां कुष्ठमर्कपत्रं[1] तथोत्पलम् ।
नलवेतसमूलानि गरलं सुरसां तथा ॥
सकलिङ्गां समञ्जिष्ठामनन्ताञ्च शतावरीम् ।
शृङ्गाटकं समङ्गाञ्च पद्मकेशरमित्यपि ॥
कल्कीकृत्य पचेत्सर्पिः पयो दद्याच्चतुर्गुणम् ।
सम्यक् पक्वेऽवतीर्णे च शीते तस्मिन्विनिःक्षिपेत्॥
सर्पिस्तुल्यं भिषक् क्षौद्रं कृतरक्षं निधापयेत् ।
विषाणि हन्ति दुर्गाणि गरदोषकृतानि च ॥
स्पर्शाद्धन्ति विषं सर्वं गरैरुपहतां त्वचम् ।
योगजं तमकं कण्डूं मांससादं विसंज्ञताम् ॥
नाशयत्यञ्जनाभ्यङ्गपानवस्तिषु योजितम् ।
सर्पकीटाखुलूतादिदष्टानां विषहृत्परम् ॥

कल्क-हर्र, गोलोचन,[2] कूठ, आक (मदार)के पत्ते), कमलकी जड़, नलकी जड़, बेंतकी जड़, शुद्ध बछनाग, तुलसी, इन्द्रजौ, मजीठ, अनन्तमूल, शतावर, सिंघाड़ा, लज्जालु और कमलकेसर ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीसलें।

८ सेर घीमें ३२ सेर दूध और उपरोक्त कल्क मिलाकर पकावें। जब दूध जल जाय तो घीको छानकर और ठण्डा करके उसमें घीके बराबर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत विष, संयोगज विष, विषजन्य तमक, कण्डू, अचेतना, मांससाद इत्यादिको नष्ट करता है। इसे अंजन, अभ्यङ्ग, पान और वस्तिद्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

यह घृत सर्प, कीट, मूषक और मकड़ी आदि सभी विषैले जन्तुओंके विषको नष्ट करता है।

१ अर्कपुष्पीमिति पाठान्तरम्।

२ वं. से. में गोरोचनके स्थानमें लोध लिखा है।

इति मकारादिघृतप्रकरणम्

अथ मकारादितैलप्रकरणम् ।

(५२६७) **मञ्जिष्ठादितैलम्** (१)

(यो. र. । कुष्ठा.; वृ. नि. र. । त्वग्दो.)

मञ्जिष्ठारुग्निशाचक्रमर्दारग्वधपल्लवैः ।
तृणकस्वरसे सिद्धं तैलं कुष्ठहरं परम् ॥

मजीठ, कूठ, हल्दी, पंवाड़के पते और अमलतासके पत्ते ४–४ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें । तत्पश्चात् २ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क तथा ८ सेर गन्धतृणका स्वरस या क्वाथ मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इस तेलकी मालिशसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(५२६८) **मञ्जिष्ठादितैलम्** (२)

(च. द.; धन्व.; र. र.; यो. र.; वृ. मा.; भै. र. । क्षुद्ररोगा.; वृ. यो. त. । त. १२७; यो. त. । त. ६८)

मञ्जिष्ठा मधुकं लाक्षा मातुलुङ्गं सयष्टिकम् ।
कर्षप्रमाणैरेतैस्तु तैलस्य कुडवं तथा ॥
आजं पयस्तद्द्विगुणं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
नीलिका पिडकाव्यङ्गानभ्यङ्गादेव नाशयेत् ॥
मुखं प्रसन्नोपचितं वलीपलितवर्जितम् ।
सप्तरात्रप्रयोगेण भवेत्कनकसन्निभम् ॥

कल्क–मजीठ, महुवे के फूल, लाख, बिजौरेकी छाल और मुलैठी १।–१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

आधा सेर (४० तोले) तेलमें १ सेर बकरीका दूध और उपरोक्त कल्क (तथा १ सेर पानी) मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब दूध और पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इस तेलकी मालिशसे मुखकी नीलिका, पिडिका और मुहासे नष्ट हो जाते हैं तथा केवल ७ दिनकी मालिशसे ही बली पलितका नाश होकर मुख सुन्दर, पुष्ट और कंचनके समान प्रभावान हो जाता है ।

(५२६९) **मञ्जिष्ठादितैलम्** (३)

(रा. मा. । मुखरो.)

मञ्जिष्ठामधुक सुचन्दनैः सलाक्षैः
काश्मीरप्रभवयुतैश्च कर्षमात्रैः ।
तैलस्य प्रमितपलाष्टकं विपक्वं
यत्क्षीरे द्विगुणमिते भवत्यजायाः ॥
अभ्यङ्गादनुदिवसं विधीयमानं
नारीणां वितरति सप्तभिर्दिनैस्तत् ।
वक्त्राब्जेष्वतनुकपोलभित्तिभासः
प्रस्फूर्जच्चसुभगत्वमत्युदारम् ॥

१ सेर तेलमें २ सेर बकरीका दूध, (२ सेर पानी) और निम्न लिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध और पानी जल जाए तो तेलको छान लें ।

कल्क–मजीठ, मुलैठी, सफेद चन्दन, लाख और केसर १।–१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

निरन्तर सात दिन तक इस तेलकी मालिशसे स्त्रियोंके कपोल पुष्ट और अत्यन्त शोभायमान हो जाते हैं ।

(५२७०) मञ्जिष्ठाद्यं तैलम् (१)

(ग. नि. । ग्रन्थ्या.)

मञ्जिष्ठाविषयुक्तेन पुण्डरीकान्वितेन तु ।
सैन्धवेन पचेत्तैलं गण्डमालाविनाशनम् ॥

कल्क–मजीठ, बछनाग, कमल और सेंधा नमक ५–५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ–उपरोक्त चारों ओषधियां २–२ सेर लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाए तो छान लें।

२ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल गण्डमालाको नष्ट करता है।

(५२७१) मञ्जिष्ठाद्यं तैलम् (२)

(ग. नि. । तैला. २)

मञ्जिष्ठा पद्मकं कुष्ठं चन्दनं गैरिकं बला ।
हरिद्रे द्वे प्रियङ्गुश्च नागं यष्टी सबाकुची ॥
दारु प्रपौण्डरीकं च पिष्ट्वाऽर्धपलिकानि तु ।
तैलप्रस्थं गवां क्षीरं दत्त्वा क्वाथं तथासनात् ॥
चतुर्गुणं भृङ्गरसं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
अस्य तैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥
केशशाते शिरोदुःखे मन्यास्तम्भे हनुग्रहे ।
दन्तकर्णाक्षिशूले च नस्येऽभ्यङ्गे च योजयेत् ॥
सुकुञ्चिताग्रान् सुस्निग्धान् केशान् संजनये-द्बहून् ।
पलिते चेन्द्रलुप्ते च तैलमेतत्प्रशस्यते ॥
मञ्जिष्ठाद्यमिदं नाम्ना शिरोरोगनिवारणम् ॥

कल्क–मजीठ, पद्माक, कूठ, सफेद चन्दन, गेरु, खरैटी, हल्दी, दारुहल्दी, फूलप्रियङ्गु, हाथी-दांतका चूर्ण, मुलैठी, बाबची, देवदारु और पुण्डरिया २॥–२॥ तोले लेकर सबको पीस लें।

२ सेर तेलमें गायका दूध, असनाका क्वाथ, और भंगरेका रस या क्वाथ समान भाग–मिश्रित ८ सेर (प्रत्येक २ सेर ५३। तोले) तथा उपरोक्त कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल गिरते हुवे बालोंको रोकता और शिरशूल, मन्या (गरदनकी नस) का स्तम्भ, हनुग्रह, दन्त शूल, कर्ण शूल, और आंखके दर्दको नष्ट करता है।

इसके व्यवहारसे केश स्निग्ध और घुंघराले होते तथा बढ़ते हैं। यह तैल पलित (बालोंका सफेद हो जाना) और इन्द्र लुप्त (गंज) रोगमें अत्युपयोगी और शिरो रोग नाशक है। इसकी नस्य लेनी और मालिश करनी चाहिए।

(५२७२) मञ्जिष्ठाद्यं तैलम् (३)

(र. र. । क्षुद्र रोगा.)

चतुर्गुणं गवां क्षीरं क्षीरार्द्धं× तिलतैलकम् ।
मञ्जिष्ठा द्वि निशा लोध्र तुवरी तालकं शिला ॥
लाक्षा गोरोचना कुष्ठं तथा च कुङ्कुमद्वयम् ।
गैरिकं शिखीतुत्थश्च वटवृक्षस्य पत्रकम् ॥
नागकेशरकालीयपद्मबीजश्च केशरम् ।
पारदं गन्धकं पत्रं त्वचञ्च प्रतिकार्षिकम् ॥
सर्वं पाच्यं तैलशेषं म्रक्षणान्मक्षिकापहम् ।
वदनश्चेन्दु तुल्यं स्यात्सप्तरात्रान्न संशयः ॥

× इस स्थान पर पाठ भ्रष्ट प्रतीत होता है।

कल्क–मजीठ, हल्दी, दारु हल्दी, लोध, गोपीचन्दन, हरताल, मनसिल, लाख, गोरोचन, कूठ, दो प्रकारकी केसर, गेरु, तूतिया, बड़के पत्ते, नागकेसर, अगर, कमलगट्टा, कमल केसर, पारद, गन्धक, तेजपात और दालचीनी १।–१। तोला लेकर पारे गन्धकको घोट कर कज्जली बना लें और अन्य पदार्थोंको पीस लें।

३ सेर तिलके तेलमें १२ सेर गायका दूध और उपरोक्त कल्क (पारे गन्धककी कज्जली समेत) मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो तेलको छान लें।

इसे सात दिन तक मुंह पर मलनेसे मक्षिका (मुंहके मस्से) का नाश होता और मुख चन्द्रमाके समान कान्तिमान हो जाता है।

(५२७३) मञ्जिष्ठाद्यं तैलम् (४)

(व. से. । क्षुद्र रोगा.)

मञ्जिष्ठाकेशरं लाक्षा सर्षपालोध्रचन्दनम् ।
प्रपौण्डरीकं मधुकं पतङ्गं गैरिकं वचा ॥
कार्पासास्थिशिलामज्जकर्षैः कल्कैर्द्वयोन्वितैः ।
पचेत्तैलस्य कुडवमजाक्षीरं चतुर्गुणम् ॥
सिद्धेऽवतारिते दद्यान्मधूच्छिष्टं द्विरंशकम् ।
म्रक्षयेन्मुखमेतेन सप्तरात्रमतन्द्रितः ॥
पिटकास्तेन शाम्यन्ति तिलकाव्यङ्गकालिकाः ।
मुखकार्ष्ण्यं जन्तुमणिपद्मिनीकण्टकास्तथा ॥
मञ्जिष्ठाद्यमिदं तैलं मुखवर्णप्रसादनम् ॥

कल्क–मजीठ, केसर, लाख, सरसो, लोध, सफेद चन्दन, पुण्डरिया, मुलैठी, पतङ्ग, गेरु, बच, बिनौला (कपासका बीज), मनसिल और माजूफल(?) का चूर्ण २॥–२॥ तोले।

४० तोले तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क और २ सेर (१६० तोले) बकरीका दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो तेलको छानकर उसमें २० तोले मोम मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे सात दिन तक मुखपर मलनेसे मुखकी पिटिकाएं, तिल, व्यङ्ग, कालक, कलौंस, जन्तुमणि और पद्मिनी कण्टक इत्यादि नष्ट हो कर मुखका रंग निखर जाता है।

(५२७४) मञ्जिष्ठाद्यं सूर्यपाकतैलम्

(ग. नि. । कुष्ठा.)

मञ्जिष्ठात्रिफलालाक्षानिशाशिलालगन्धकैः ।
चूर्णितैस्तैलमादित्यपाकं पामाहरं परम् ॥

१ सेर (सरसोंके) तेलमें ४ सेर पानी और १० तोले मजीठ, हर्र, बहेड़ा, आमला, लाख, हल्दी, मनसिल, हरताल और गन्धकका चूर्ण मिलाकर धूपमें रख दें। जब पानी सूख जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल पामा (खुजली) को नष्ट करता है। (कल्ककी प्रत्येक वस्तु १ तोला १॥ माशा लेनी चाहिये).

(५२७५) मथिततैलम्

(वृ. नि. र. । पानात्यय.)

मथितं गोदधिसहितं तैलं कर्पूरसम्मिश्रम् ।
आस्वाद्य पीतमाशु क्षपयति पानात्ययं रोगम् ॥

कपड़ेसे छना हुवा गायका दही, तिलका तेल और कपूरका चूर्ण मिलाकर पीनेसे पानात्यय रोग

(शराब पीनेसे उत्पन्न हुवा विकार नशा आदि) नष्ट होता है।

(दही १ पाव, तेल १ तोला, कपूर १ रत्ती। पहिले कपूरको तेलमें मिला लेना चाहिये)

(५२७६) **मधुकादितैलम्** (१)

(च. द.। क्षुद्र रोगा. ५४; शा. सं.। म. खं. अ. ९.)

तैलं सयष्टीमधुकैः क्षीरे धात्रीफलैः शृतम्।
नस्ये दत्तं जनयति केशान्श्मश्रूणि चाप्यथ ॥

१ सेर तिलके तेलमें ४ सेर गायका दूध और ५-५ तोले मुलैठी तथा आमलेका चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध और रस जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे केश और दाढ़ीके बाल निकल आते हैं।

(५२७७) **मधुकादितैलम्** (२)

(व. से.। वातरक्ता.)

मधुकाद्द्विगुणम् तैलं तैलादाजं पयो भवेत्।
यथथाग्निबलं पेयं वातरक्तरुजापहम् ॥

१ सेर तेलमें २० तोले मुलैठीका चूर्ण और २ सेर बकरीका दूध (तथा २ सेर पानी) मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसे पीनेसे वातरक्त नष्ट हो जाता है।

(५२७८) **मधुकादितैलम्** (३)

(ग. नि.। उपदंशा. ८)

मधुकं धातुकी रोध्रं मञ्जिष्ठा कट्फलं बला ॥
दार्वीहरिद्रापत्तङ्गत्रिफलामदयन्तिकाः।
गर्भेण तेन तत्तैलमभ्यङ्गाद् व्रणरोपणम् ॥

१०४ तोले (१ सेर २४ तोले) तिलके तेलमें ५। सेर पानी और १-१ तोला मुलैठी, धायके फूल, लोध, मजीठ, कायफल, खरैटी, दारुहल्दी, हल्दी, पतङ्ग, हर्ड, बहेड़ा, आमला और मदयन्तिका (चमेली भेद) का चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे लगानेसे उपदंश (आतशक) के घाव भर जाते हैं।

(५२७९) **मधुयष्ट्यादितैलम्**

(र. र.। क्षुद्र रोगा.)

मधुयष्टीपलं तद्वत् द्वात्रिंशच्च पलानि वै।
पादशेषो भवेत्क्वाथो क्वाथांशं तिलतैलकम् ॥
पुनर्मरिचमञ्जिष्ठे प्रत्येकं च पलार्द्धकम्।
तैलशेषं पचेत्सर्वं लेपोऽयं मुखवर्णकृत् ॥

५ तोले मुलैठी को ४ सेर पानीमें पकावें। जब १ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तत्पश्चात २० तोले तिलके तेलमें यह क्वाथ और २॥-२॥ तोले काली मिरच तथा मजीठका चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे मुखका रंग निखर आता है।

(५२८०) **मध्यमगुडूचीतैलम्**

(भै. र.। वातरक्ता.)

गुडूच्यास्तु तुलाक्वाथं जलद्रोणे विपाचयेत्।
तेन पादावशेषेण तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
शतपुष्पामयाव्योषरास्नाचन्दनमुस्तकम्।
अजमोदा हरिद्रे द्वे कुष्ठधान्यकपद्मकम् ॥

विडङ्गं तेजपत्रञ्च वचा मांसी कुचन्दनम् ।
एषां द्विकार्षिकैः कल्कैर्विपचेन्मतिमान् भिषक्॥
वातरक्तं निहन्त्याशु साध्यासाध्यमथापि वा ।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम् ॥
नाशयेत्तिमिरं घोरं गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥

क्वाथ–६। सेर गिलोयको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क–सोया, हर्र, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, रास्ना, सफेद चन्दन, नागरमोथा, अजमोद, हल्दी, दारु हल्दी, कूठ, धनिया, पद्माक, बायबिड़ंग, तेजपात, बच, जटामांसी और पतङ्ग २॥–२॥ तोले लेकर पीस लें।

विधि–२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल एकदोषज, द्विदोषज और सन्निपातज साध्य अथवा असाध्य हर प्रकारके वातरक्त और घोर तिमिर रोगको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

मध्यमदशमूलतैलम्

(भै. र.; धन्व. । शिरोरोगा.)

भा. भै. र. भाग ३ में प्र. सं. ३०८८ "दशमूल तैलम्" नं. ६ देखिये।

मध्यमनारायणतैलम्

भा. भै. र. भाग ३ में "नारायण तैल (मध्यम)" देखिये।

मध्यमनारायणतैलम्

(यो. त. । त. ४२; व. से. । वातव्या.; धन्व. । वातव्या.)

भा. भै. र. भाग ३ में प्रयोग संख्या ३५०२ "नारायण तैल मध्यम" देखिये।

मध्यमनारायणतैलम्

(भै. र. । वातव्या.)

भा. भै. र. भाग ३ प्र. सं. ३५०३ "नारायण तैलम् (मध्यम)" नं. ३ देखिये।

मध्यमलाक्षादितैलम्

(वृ. यो. त., यो. र.)

लाक्षादि तैल (मध्यम) देखिये।

मध्यमविष्णुतैलम्

(भै. र., धन्व.)

विष्णु तैल (मध्यम) देखिये।

(५२८१) मनःशिलादितैलम्

(र. का. । कुष्ठा.; र. चि. । स्तबक ४)

शिलाकम्पिल्लतालानि स्वर्जिकारजनीद्वयम् ।
[1]त्रिकटु गन्धकं सोमराजी च यावशूकजम् ॥
एतेषां कारयेच्चूर्णं क्वाथयेत्पादशेषितम् ।
तिलतैलं चतुर्थांशं रविदुग्धं च तत्समम् ॥
अनेन पाचयेत्तैलं घर्मं कृत्वा च किञ्चन ।
लेपयेत्कुष्ठिनं तेन घर्मं कृत्वा च रोगिणम् ॥
चित्रमौदुम्बरं कुष्ठं परुषं दद्रुमण्डलम् ।
पामासिध्मानि सर्वाणि दुर्निवारां विचर्चिकाम्॥
तद्गतानपि चान्यानि नाशयेदचिरेण तत् ॥

१. चित्रकमिति पाठान्तरम् ।

मनसिल, कमीला, हरताल, सज्जी, हल्दी, दारुहल्दी, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, गन्धक, बाबची और जवाखार का चूर्ण ३०-३० तोले लेकर सबको ३६ सेर पानीमें पकावें। जब ९ सेर पानी शेष रह जाए तो छानकर उसमें २। सेर तिलका तेल और इतना ही आकका दूध मिलाकर पुनः पकावें। जब तैल मात्र शेष रह जाय तो छान कर सुरक्षित रक्खें।

रोगीको धूपमें बिठलाकर इस तेलकी मालिश करनी चाहिये तथा मालिशके पश्चात् भी उसे थोड़ी देर तक धूपमें बिठलाना चाहिये।

यह तेल चित्रकुष्ठ, उदम्बर कुष्ठ, परुषता, दाद, मण्डल, पामा, सिध्म और कष्ट साध्य विचर्चिका आदिको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है।

(५२८२) **मनःशिलाद्यं तैलम्** (१)

(ग. नि. । तैला. २; वृ. नि. र.; यो. र.; वृ. मा. । क्षुद्र रोगा.)

मनःशिलालभल्लातसूक्ष्मैला गुरुचन्दनैः।
जातीपल्लवकल्कैश्च निम्बतैलं विपाचयेत् ॥
वल्मीकं नाशयत्येतद्बहुच्छिद्रं बहुस्रवम् ॥

कल्क—मनसिल, हरताल, भिलावा, छोटी इलायची, अगर, सफेद चन्दन और चमेलीके पत्ते ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीसलें।

३॥ सेर नीमके तेलमें उपरोक्त कल्क और १४ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल अत्यधिक स्राव और बहुतसे छिद्रों वाली बल्मीक नामक व्याधि को भी नष्ट कर देता है।

(५२८३) **मनःशिलाद्यं तैलम्** (२)

(यो. चि. । अ. ६ तैला.)

मनः शिलागन्धकसोमराजी
हेमाह्वाकम्पिल्लकचित्रकाश्च।
सतालसौभाग्यहरिद्रयुग्मं
आरक्तगुञ्जाफलमर्कमूलम् ॥
सतोरकासीसकसूक्ष्मचूर्णं
सस्निग्धदारुप्रपुन्नाटबीजम्।
धत्तूरमूलं नवसारयुक्तं
तैलं यवक्षारं च सर्जिकाभिः ॥
पचेत गोमूत्रचतुर्गुणेन
निहन्ति दद्रु किलाटान् सपामान्।
त्वग्दोषजां ये गलगण्डमाला
विचर्चिका कुष्ठत छर्दि संज्ञा ॥

कल्क—मनसिल, गन्धक, बाबची, सत्यानासी, कमीला, चीता, हरताल, सुहागा, हल्दी, दारुहल्दी, लाल चौंटली, आककी जड़, तोर (?), कसीस, देवदारु, पंवाड़के बीज, धतूरेकी जड़, नौसादर, जवाखार और सज्जीखार १-१ तोला लेकर पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गोमूत्र जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे दाद, किलाटकुष्ठ, पामा, त्वग्दोष, गण्डमाला, विचर्चिका और छर्दि (?) का नाश होता है।

(५२८४) मरिचादितैलम् (१)

(वा. भ. । चि. अ. १९ कुष्ठा.)

मरिचं तमालपत्रं कुष्ठं समनःशिलं सकासीसम् ।
तैलेन युक्तमुषितं सप्ताहं भाजने ताम्रे ॥
तेनालिप्तं सिध्मं सप्ताहाद्धर्मसेविनोऽपैति ।
मासान्नवं किलासं स्नानेन विना विशुद्धस्य ॥

१ सेर तिलके तेलमें २-२ तोले काली मिरच, तेजपात, कूठ, मनसिल और कसीसका चूर्ण मिलाकर, तांबेके बरतनमें भरकर (धूपमें) रख दें। सात दिन पश्चात् सबको अच्छी तरह घोटकर बोतलमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे मलकर रोगीको थोड़ी देर धूपमें बैठना चाहिये ।

इसकी १ सप्ताहकी मालिशसे सिध्म नष्ट हो जाता है । यदि १ मास तक नित्य इसकी मालिश की जाय और स्नान न किया जाय तो नवीन किलासकुष्ठ नष्ट हो जाता है ।

(५२८५) मरिचादितैलम् (२)

(यो. चि. । अ. ६)

मरिचचन्दनदारुनिशाद्वयं
जलजमेघशिलासशकृद्रसैः ।
त्रिवृतश्चाश्वहरार्कपयोविषैः
सुरभिमूत्रयुतं विपचेद्भिषक् ॥
कटुकतैलमिदं मरिचादिकं
कठिनचर्मदलारसकापहम् ।
बहुलमण्डलसिध्मविचर्चिका
प्रचुरकुष्ठकिलासविसर्पजित् ॥

कल्क-काली मिर्च, सफेद चन्दन, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, कमलपुष्प, नागरमोथा, मनसिल, गोबरका रस, निसोत, कनेरकी छाल, आकका दूध और बछनाग २-२ तोले लेकर कूटने योग्य चीज़ोंको कूट लें ।

२०८ तोले (२॥ सेर ८ तोले) सरसोंके तेलमें उपरोक्त कल्क और १० सेर ३२ तोले गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब मूत्र जल जाए तो तेलको छान लें ।

इस तेलकी मालिशसे कठिन चर्मदल, मण्डल, सिध्म, विचर्चिका, किलास कुष्ठ, और विसर्प नष्ट होता है ।

(५२८६) मरिचाद्यं तैलम् (१)

(ग. नि. । तैला.; शा. सं. । म. खं. अ. ९; च. द. । कुष्ठा.; धन्व. । कुष्ठा. वृ. मा.; भै. र.; व. से. । कुष्ठा.)

मरिचालशिलाब्दार्कपयोऽश्वारजटात्रिवृत् ।
शकृद्रसविशालारुकूनिशायुग्दारुचन्दनैः ॥
कटुतैलात् पचेत् प्रस्थं द्व्यक्षैर्विषपलान्वितैः ।
सगोमूत्रस्तदभ्यङ्गाद् दद्रुश्वित्र विनाशनम् ॥
सर्वेष्वपि च कुष्ठेषु तैलमेतत् प्रशस्यते ॥

कल्क-काली मिर्च, हरताल, मनसिल, नागरमोथा, आकका दूध, कनेरकी जड़, निसोत, गोबरका रस, इन्द्रायण, कूठ, हल्दी, दारु हल्दी, देवदारु तथा सफेद चन्दन २॥-२॥ तोले और विष ५ तोले लेकर पीसने योग्य चीज़ोंका चूर्ण करलें ।

२ सेर सरसोंके तेलमें ८ सेर गोमूत्र और उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब मूत्र जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे दाद और श्वेत कुष्ठादिका नाश होता है।

नोट—कुछ ग्रन्थोंमें कल्क द्रव्योंमें जटामांसी अधिक लिखी है तथा कल्ककी समस्त चीजोंका परिमाण आधा और गोमूत्र तैलसे दूना लिखा है एवं लोहपात्र या मृत्पात्रमें पकानेका आदेश है और इस तेलके गुण इस प्रकार लिखे हैं:-

तैलेनानेन नश्यन्ति रोगा देहे शरीरिणाम् ॥
पामा विचर्चिका चैव दद्रुविस्फोटकानि च।
अभ्यङ्गेन प्रणश्यन्ति श्यामलत्वं प्रजायते ॥
प्रच्छिन्नान्यपि श्वित्राणि तैलेनानेन म्रक्षयेत्।
चिरोत्थमपि यच्छ्वित्रं सवर्णं म्रक्षणाद्भवेत् ॥

यह तेल पामा, विचर्चिका, दाद, विस्फोटक आदिको नष्ट करता है और इसकी मालिशसे पुराना श्वेतकुष्ठ भी नष्ठ होकर त्वचाका रंग पूर्ववत् हो जाता है।

(५२८७) मरिचाद्यं तैलम् (२)

(रा. मा. । शिरोरो.)

भागेन युक्तं मरिचस्य यत्स्यात्काश्मीरजेन द्विगुणेन तैलम्।
अभ्यञ्जनात्तद्विनिहन्ति पुंसामल्पैर्दिनैर्दारुणकं सुघोरम् ॥

७२ तोले तिलके तेलमें ३ सेर पानी और ३ तोले मिर्चका चूर्ण तथा ६ तोले केसर मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे भयंकर 'दारुणक' रोग भी कुछ दिनोंमें ही नष्ट हो जाता है।

(५२८८) मरिचाद्यं तैलम् (बृहत्) (३)

(च. द. । कुष्ठा.; यो. चि. । अ. ६; व. से.; भै. र.; वृ. मा. । कुष्ठ.; भा. प्र. । वातरक्ता.; र. चि. म. । स्त. ९.)

मरिचं त्रिफला[1] दन्ती क्षीरमार्कं शकृद्रसः।
देवदारु हरिद्रे द्वे मांसी कुष्ठं सचन्दनम् ॥
विशाला करवीरं च हरितालं मनःशिला।
चित्रकोलाङ्गली लाक्षा[2] विडङ्गं चक्रमर्दकम् ॥
शिरीषकुटजो निम्बं [3]सप्तपर्णस्नुहामृताः।
शम्पाको नक्तमालश्च खदिरं पिप्पली[4] वचा ॥
ज्योतिष्मती च पलिका विषं च द्विपलं नयेत्।
आढकं कटुतैलस्य गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥
मृत्पात्रे लोहपात्रे वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
पक्त्वा तैलवरं ह्येतत् कर्षयेत्कौष्ठिकं व्रणम् ॥
पामा विचर्चिकाकण्डू दद्रुविस्फोटकानि च।
वलितं पलितं छायां नीलीं व्यङ्गत्वमेव च ॥
अभ्यङ्गेन प्रणश्यन्ति सौकुमार्यं च जायते।
प्रथमे वयसि स्त्रीणां नस्यमस्य तु दीयते ॥
परामपि जरां प्राप्य न स्तना यान्ति नम्रताम्।
बलिवर्दस्तुरङ्गो वा गजो वा वायुपीडितः ॥
त्रिभिरभ्यञ्जनैर्बाढं भवेन्मारुतविक्रमः ॥

कल्क—काली मिरच, हर्र, बहेड़ा, आमला (पाठान्तरके अनुसार त्रिफलाके स्थान में निसोत),

---

१ 'त्रिवृता' इति पाठान्तरम्। २ मुस्तमिति पाठान्तरम्। ३ 'स्नुही च कनकामृते' इति पाठान्तरम्। ४ 'बाकुची' इति पाठान्तरम्।

दन्तीमूल, आकका दूध, गोबरका रस, देवदारु, हल्दी, दारु हल्दी, जटामांसी, कूठ, सफेद चन्दन, इन्द्रायणकी जड़, कनेरकी जड़, हरताल, मनसिल, चीतामूल, लाङ्गली (कलिहारी), लाख (पाठान्तर के अनुसार मोथा) बायबिड़ंग, पंवाड़, सिरसकी छाल, कुड़ेकी छाल, नीमकी छाल, सप्तपर्णकी छाल (पाठान्तरके अनुसार धतूरा), स्नुही (सेंड–थोहर), गिलोय, अमलतास, करञ्जकी छाल, खैरसार, पीपल, (पाठान्तर के अनुसार बाबची), बच और मालकंगनी ५–५ तोले तथा बछनाग १० तोले ले कर चूर्ण करने योग्य चीजोंका चूर्ण कर लें।

८ सेर सरसोंके तेलमें ३२ सेर गोमूत्र और उपरोक्त कल्क मिला कर मट्टी या लोहेके पात्रमें मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलसे कुष्ठके व्रण, पामा, विचर्चिका, कण्डू (खाज), दाद, विस्फोटक, वली (झुर्रियां), पलित (बालोंका सफेद होना), छाया, नीली और व्यङ्गादि नष्ट होकर त्वचा कोमल हो जाती है।

यदि स्त्रीको किशोरावस्थामें इसकी नस्य दी जाय तो वृद्धावस्थामें भी उसके स्तन शिथिल नहीं होते। यह तेल बैल, घोड़े और हाथीके वातजनित रोगोंको भी नष्ट कर देता है।

नोट—र. चि. म. में बछनागका अभाव है तथा २० पल घृत एवं १ आढक कटु तैल को एकत्र पाक करनेका विधान है. एवं इस योगका नाम भी '**मरिचादि घृत**' लिखा है। इसके गुणोंका वर्णन भी इस प्रकार किया है।:—

श्वित्रे लिप्त्वा विशेषेण घर्मे स्थेयं निरन्तरम् ॥
माषान्नं भोजनं प्रोक्तं शाकं च कुष्ठनाशनम् ।
दद्रुमण्डलनाशाय श्वेतकुष्ठाय वा पुनः ॥
तिलतैलं कुलत्थांश्च चुक्रशाकं च भोजने ।
मेथिकायाः परं शाकं हितमुक्तं हि कुष्ठिने ॥
सार्षपं भुज्यते शाकं तथा वास्तुकजं शुभम् ।
धात्रीफलरसं शाके योजनीयं हितं च तत् ॥
ब्रह्मचर्यं सदा कुर्यान्मन आनन्दसंयुतम् ।
घृत महामरीचाख्यं सर्वत्वग्दोषनाशनम् ॥

अर्थात्–श्वेत कुष्ठ पर इसकी मालिश करके रोगीको धूपमें बिठलाना चाहिये। भोजनमें उड़दकी दाल और चावल तथा कुष्ठ नाशक शाक प्रयुक्त करने चाहियें।

दाद, मण्डलकुष्ठ तथा श्वेत कुष्ठ को नष्ट करनेके लिये इस घृतको सेवन करते हुवे निम्न लिखित पदार्थ खाने चाहियें—

तिलका तेल, कुलथी, चूकेका शाक, मेथी, (यह विशेष उपयोगी है।) सरसोंका शाक, बथुवेका शाक और आमलेका रस।

कुष्ठ रोगमें मनको प्रसन्न रखना और ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिये।

(५२८९) महाऽजमोदाद्यं तैलम्

(व. से. । गण्डमाला.)

अजमोदा स सिन्दूरं श्री वासं रजनीद्वयम् ।
क्षारद्वयमपामार्गं हरितालं मनःशिला ॥
आर्द्रकाऽगुरु वा शुण्ठी जालिनी सेन्द्रवारुणी ।
सर्वे द्रव्याः समानाः स्युर्भागाश्चार्द्ध पलोन्मिताः ॥

छागेनाष्ट गुणेनैव मूत्रेण मृदुवह्निना ।
कटुतैलं पचेदेभिः स्नुह्यर्कं पयसा सह ॥
उत्पाट्यमानामपचीं नस्याद्विपर्यये नृणाम् ।
उत्पन्नामामपक्वाश्च नस्याभ्यङ्गेन नाशयेत् ॥
विशीर्णकुथितात्यर्थं दुर्गन्धा पूयवाहिनी ।
चिरजाऽसाध्यकल्पापि तैलेनानेन साध्यते ॥
युक्ताहारविहारेण नस्यदानेन चैव हि ।
रोहिता क्षिप्रमेवं हि सप्तरात्रान्न संशयः ॥

कल्क-अजमोद, सिन्दूर, श्रीवास (धूप सरल), हल्दी, दारु हल्दी, सुहागा, सज्जीखार, चिरचिटेका खार, हरताल, मनसिल, अदरक, अगर सोंठ, कड़वी तोरी और इन्द्रायनकी जड़ २॥-२॥ तोले लेकर सबको पीस लें ।

४ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त कल्क, ३२ सेर बकरीका मूत्र, ४ सेर थोहर (सेंड) का दूध और ४ सेर आकका दूध मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाए तो तैलको छान लें ।

सात दिन तक इसकी नस्य लेने और मालिश करने तथा पथ्य पालन करनेसे नवीन, कच्ची, पक्की, फूटी हुई, दुर्गन्धित स्राव वाली, पुरानी और असाध्य अपची (गण्डमाला भेद) भी अवश्य नष्ट हो जाती है ।

(५२९०) महाकनकतैलम्

(भै. र. । शिरो.)

कनकस्य रसप्रस्थं प्रस्थं वर्षाभुवस्तथा ।
निर्गुण्डी स्वरसप्रस्थं दशमूलरसस्य च ॥
पारिभद्ररसप्रस्थं प्रस्थं वरुणकस्य च ।
तैलप्रस्थं समादाय भिषग्यत्नाद्विपाचयेत् ॥

कल्कैरर्द्धपलैरेतैः शुण्ठीमरिचसैन्धवैः ।
पुनर्नवाकर्कटकशैलुत्वक्पिप्पलीयुगैः ॥
तत्साधुसिद्धं विज्ञाय शुभे पात्रे निधापयेत् ।
वातश्लेष्मकृतं सर्वमामवातं भगन्दरम् ॥
सन्निपातभवं रोगं शोथमाशु विनाशयेत् ।
ये केचिद् व्याधयः सन्ति श्लैष्मिकाः सान्निपातिकाः ॥
तान् सर्वान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥

द्रव पदार्थ-धतूरेका स्वरस २ सेर, पुनर्नवा (बिसखपरे) का स्वरस २ सेर, सम्भालुका स्वरस २ सेर, (२ सेर दशमूलको ८ सेर पानीमें पकाकर २ सेर शेष रहा हुवा) दशमूल का क्वाथ २ सेर, फरहदकी छालका क्वाथ २ सेर और बरनेकी छालका क्वाथ २ सेर ।

कल्क-सोंठ, काली मिर्च, सेंधा नमक, पुनर्नवा (बिसखपरा), काकड़ासिंगी, लिहसौड़ेकी छाल, पीपल और गजपीपल २॥-२॥ तोले लेकर एकत्र पीस लें ।

विधि-२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त द्रव पदार्थ तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश जल जाए तो तेलको छान लें ।

गुण-यह तेल वातकफज, सन्निपातज और समस्त कफज रोगोंमें हितकारी है । आमवात, भगन्दर और शोथको नष्ट करता है ।

(५२९१) महाकल्याणकतैलम्

(व. से. । वातव्य.)

बलाश्वगन्धामरदारुरास्ना
स्थिरा वचा नागबला सलोहम् ।

आरुष्करं चन्दनपुष्कराख्यं
नतं गुडूची लवणोत्तमं च ॥
काकोलिमेदे मधुकं विदारी
सचित्रकं गुग्गुलुजीरकञ्च ।
द्राक्षाऽगुरुर्नागरधान्यकञ्च
एतानि सर्वाणि समानि कृत्य ॥
कल्कैः कषायैर्विधिना प्रयुक्तै-
स्तैलं पचेत्तोयचतुर्गुणञ्च ।
अम्लारणालं दधिदुग्धयुक्तं
दत्त्वा समांशं विधिवद्विधिज्ञः ॥
तन्नावनाभ्यञ्जननस्यपानै
र्निहन्ति घोरानचिरेण रोगान् ।
कल्याणकं नाम महच्च तैलं
स्तम्भं जयेत्कार्मुकनामधेयम् ॥
दण्डापतानार्दितवेपमानाः
सुपिण्डिताः पिण्डितकुब्जखञ्जाः ।
पुनर्युवानोऽतिमनोऽभिरामा
भवन्ति ते तैलवरेण सर्वे ॥
अश्वोऽपि भग्नः सकृदेव दन्ती-
भग्नो भवेन्मारुतविक्रमश्च ।
वन्ध्यापि पुत्रं लभते वराभं
दीर्घायुषं सर्वगुणैरुपेतम् ॥
अप्सु प्रवाताहतचञ्चलोर्मि-
र्महोदधिर्लङ्घयतीह वेलाम् ।
सवातजा एव हि तैलराजं
रोगा न वै लङ्घयितुं समर्थाः ॥

कल्क—खरैटी, असगन्ध, देवदारु, रास्ना, शालपर्णी, बच, नागबला (गंगेरन), अगर, भिलावा, सफेद चन्दन, पोखरमूल, तगर, गिलोय, सेंधा, काकोली, मेदा, मुलैठी, विदारीकन्द, चीता, गूगल, जीरा, मुनक्का, अगर, सोंठ और धनिया २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र कूट लें।

कषाय—उपरोक्त (कल्कवाली) समस्त ओषधियां २०-२० तोले लेकर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

अन्य द्रव पदार्थ—पानी ३२ सेर, आरनाल ८ सेर, दही ८ सेर और दूध ८ सेर।

विधि—८ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क, क्वाथ और अन्य द्रव पदार्थ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो तेलको छान लें।

गुण—इसे नस्य, अभ्यञ्जन, पान और नावन द्वारा प्रयुक्त करनेसे धनुःस्तम्भ, दण्डापतानक, अर्दित, कम्प, कुब्जता और खञ्जता आदि वातज रोग नष्ट होते हैं। यह तेल हाथी और घोड़ोंके रोगोंको भी नष्ट कर देता है। इसके प्रभावसे वन्ध्या स्त्रीको भी सुन्दर, दीर्घायु और सर्व-गुण-सम्पन्न पुत्रकी प्राप्ति हो सकती है।

(५२९२) महाकषायतैलम्

(ग. नि । तैला. २)

उदुम्बरो वटश्चैव प्लक्षः पिप्पल एव च ।
मधूक आम्रः सर्जश्च जम्बूद्वयमथार्जुनः ॥
कम्पिल्लकः पियालश्च कदम्बस्तिन्दुकस्तथा ।
पलाशो रोध्रसम्मिश्रं बदरं पद्मकेसरम् ॥
शिरीषो बीजकश्चैव तथा रक्तं च चन्दनम् ।
अमीषां क्वाथकल्काभ्यां तैलं मन्दाग्निसाधितम्॥

नाम्ना महाकषायं तु क्षिप्रमभ्यञ्जनाद्धरेत् ।
व्रणांस्तु देहिनामेतच्चिरकालभवानपि ॥

कल्क—गूलरकी छाल, बड़की छाल, पिलखनकी छाल, पीपलवृक्षकी छाल, महुवेकी छाल, आमकी छाल, चीड़ (सरल वृक्ष) का चूरा, छोटी और बड़ी जामनकी छाल, अर्जुनकी छाल, कमीला, पियाल (चिरौंजी) वृक्षकी छाल, कदम्बकी छाल, तेन्दुकी छाल, पलाश (ढाक) की छाल, लोध, बेरीकी छाल, कमलकेसर, सिरसकी छाल, विजयसार और लाल चन्दन। प्रत्येक २-२ तोला लेकर सबको एकत्र कूट लें।

क्वाथ—उपरोक्त समस्त ओषधियां समान भाग मिश्रित ८ सेर (प्रत्येक ३०॥ तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ६४ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

विधि—४ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो तेलको छान लें।

गुण—यह तेल पुराने घावोंको भी शीघ्र ही भर देता है।

महाचन्दनाद्यं तैलम्

(र. र.)

भा. भै. र. भाग २. प्र. सं. १७९९ " चन्दनाद्यं तैलम् " देखिये।

(५२९३) महातृणकतैलम् (१)

(च. द. । कुष्ठा. ४९)

हरिद्रात्रिफलादारुहयमारकचित्रकम् ।
सप्तच्छदश्च निम्बत्वक्करञ्जो वालकं नखी ॥
कुष्ठमेडगजाबीजं लाङ्गलीगणिकारिका ।
जातीपत्रं च दार्वी च हरितालं मनःशिला ॥
कलिङ्गातिलपत्रं च अर्कक्षीरं च गुग्गुलुः ।
गुडत्वङ्मरिचं चैव कुङ्कुमं ग्रन्थिपर्णकम् ॥
सर्जपर्णाशखदिरविडङ्गं पिप्पलीवचाम् ।
घनरेण्वमृतायष्टिकेशरं ध्यामकं विषम् ॥
विश्वकटुफलमञ्जिष्ठावोलस्तुम्बीफलं तथा ।
स्नुहीसम्पाकयोः पत्रं वागुजीबीजमांसिके ॥
एलाज्योतिष्मतीमूलं शिरीषो गोमयाद्रसः ।
चन्दने कुष्ठनिर्गुण्डी विशाला मल्लिकाद्वयम् ॥
वासाश्वगन्धा[१]ब्राह्मी च श्याहं चम्पककुड्मलम्।
एतैः कल्कैः पचेत्तैलं तृणकस्वरसद्रवम् ॥
सर्वत्वग्दोषहरणं महातृणकसञ्ज्ञितम् ॥

कल्क—हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, कनेरकी जड़, चीतामूल, सतौनेकी छाल, नीमकी छाल, करञ्जके बीज, सुगन्ध बाला, नखी, कूठ, पंवाड़के बीज, कलियारी, छोटी अरनीकी छाल, चमेली के पत्ते, दारु हल्दी, हरताल, मनसिल, इन्द्रजौ, तिलके पत्ते, आकका दूध, गूगल, दालचीनी, कालीमिर्च, केसर, गठिवन, राल, तुलसीके पत्ते, खैरकी छाल, बायबिड़ंग, पीपल, बच, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, गिलोय, मुलैठी, नागकेसर, बछनाग (मीठा विष), ध्यामक (गन्धतृण), सोंठ, कायफल, मजीठ, कड़वी तूम्बी, हीराबोल, थूहर (सेंड) के पत्ते, अमलतासके पत्ते, बाबची, जटामांसी, छोटी इलायची, मालकंगनीकी जड़, सिरसकी छाल, गायके गोबरका रस, सफेद चन्दन, लाल चन्दन,

[१] वासाश्वकर्णीति पाठान्तरम् ।

कूठ, सम्भालुके पत्ते, इन्द्रायनकी जड़, दो प्रकारकी चमेली (मोगरा, मोतिया), वासा, असगन्ध, ब्राह्मी, सरल निर्यास (धूप सरल) और चम्पक पुष्पकी कलियां। सब समान भाग मिश्रित १ सेर (प्रत्येक १ तोला २॥ माशे) लेकर सबको कूट लें।

क्वाथ—१६ सेर सुगन्धतृणको १२८ सेर पानीमें पका कर ३२ सेर शेष रहने पर छान लें।

८ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल समस्त त्वग्रोगोंको नष्ट करता है।

(५२९४) महातृणकतैलम् (२)

(वृ. मा. । कुष्ठाधिकार)

चतुर्गुणे तृणरसे कटुतैलं विपाचयेत्।
हरिद्राकुष्ठमञ्जिष्ठाशम्पाकसर्षपायुतैः॥
कासमर्दारिष्टपत्रैश्चक्रमर्दैः समैर्भिषक्।
अष्टादशानां कुष्ठानां तैलमेतद्विनाशनम्॥

क्वाथ—सुगन्ध तृण ४ सेर। पाकार्थ जल ३२ सेर, शेष क्वाथ ८ सेर।

कल्क—हल्दी, कूठ, मजीठ, अमलतासके पत्ते, सरसों, कसौंदीके पत्ते, नीमके पत्ते और पवांड़के बीज सब समान भाग मिश्रित २० तोले (प्रत्येक २॥ तोले) लेकर सबको पीस लें।

सरसोंके २ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल अठारह प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

महादशमूलतैलम्

भा. भै. र. भाग ३ में प्रयोग संख्या ३०८४ "दशमूलतैलम्" नं. २ देखिये।

महानारायणतैलम्

भा. भै. र. भाग ३ में "नारायणतैलम् (महा)" देखिये।

(५२९५) महानीलतैलम् (१)

(भै. र.; धन्व.; च. द. । क्षुद्र; ग. नि. । तैला. २)

आदित्यवल्ल्या मूलानि कृष्णशैरीयकस्य च।
सुरसस्य च पत्राणि फलं कृष्णशणस्य च॥
मार्कवः काकमाची च मधुकं देवदारु च।
पृथग्दशपलांशानि पिप्पल्यस्त्रिफलाञ्जनम्॥
प्रपौण्डरीकं मञ्जिष्ठा लोध्रं कृष्णागुरूत्पलम्।
आम्रास्थि कर्दमः कृष्णा मृणाली रक्तचन्दनम्॥
नीली भल्लातकास्थीनि काशीशं मदयन्तिका।
सोमराज्यशनं शस्त्रं[1] कृष्णौ पिण्डीतचित्रकौ॥
पुष्पाण्यर्जुनकाश्मर्योराम्र[2]जम्बूफलानि च।
पृथक् पञ्चपलैर्भागैः सुपिष्टैराढकं पचेत्॥
विभीतकस्य तैलस्य धात्रीरसचतुर्गुणम्।
कुर्यादादित्यपाकं वा यावच्छुष्को भवेद्रसः॥
लौहपात्रे ततः पूतं संशुद्धमुपयोजयेत्।
पाने नस्तक्रियायाञ्च शिरोऽभ्यङ्गे तथैव च॥
एतच्चक्षुष्यमायुष्यं शिरसः सर्वरोगनुत्।
महानीलमिति ख्यातं पलितघ्नमनुत्तमम्॥

१ सोमराज्यसनात् पुष्पमिति पाठान्तरम्।
२ "श्यामा" इति पाठान्तरम्।

कल्क-हुलहुलकी जड़, पियाबांसेकी जड़, तुलसीके पत्ते, काले सनके फल, भांगरा, मकोय, मुलैठी और देवदारु ५०-५० तोले। पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सुरमा, पुण्डरिया, मजीठ, लोध, अगर, नीलोफर (नीलकमल), आमकी गुठली, काली कीचड़ (कमलके नीचेकी मिट्टी), मृणाल (कमलनाल), लाल चन्दन, नीलका पंचांग, भिलावेकी मींगी, कसीस, मोतियाका फूल, बावची, असना वृक्षकी छाल (पाठभेदके अनुसार पुष्प), लोह चूर्ण, छोटे मैनफलके वृक्षकी छाल, चित्रक मूल, अर्जुनके फूल, खम्भारीके फूल, कच्चा आम (पाठान्तरके अनुसार निसोत) और कच्ची जामन। प्रत्येक ५-५ पल (२५-२५ तोले) लेकर सबको एकत्र पीस लें।

८ सेर बहेड़ेके तेलमें ३२ सेर आमलेका रस और उपरोक्त कल्क मिलाकर लोहेके पात्रमें भरकर धूपमें रख दें अथवा मन्दाग्निपर पकावें। जब पानी शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसे पीने, सिर पर मलने और इसकी नस्य लेनेसे समस्त शिरो रोग नष्ट होते हैं। यह तेल आंखोंके लिये हितकारी और उत्तम पलितनाशक है।

(५२९६) महानीलतैलम् (२)

(र. र. स. । अ. ३)

वटप्ररोहपिण्डोतमूलत्वक्कृष्णसैर्यकैः।
केतकीस्तनभृंगायःशकलत्रिफलार्जुनैः॥
पृथग्दशपलैः सार्द्धं चतुर्द्रोणेष्वपां पचेत्।
अष्टभागावशिष्टेऽस्मिन्भृंगस्वरसपेषितैः॥
त्रिफलानीलययश्चूर्णैः पृथग्द्विपलिकैर्युतम्।
तैलाढकं समक्षीरं पक्त्वाऽमृतरसान्वितम्॥
महानीलं सुभाण्डस्थं मण्डले धान्यमध्यगम्।
अभ्यंगविधियोगेन केशानां रंजनं परम्॥

बड़के अंकुर, मेंडकाकी जड़की छाल, पियाबांसा, केतकीकी कली, भांगरा, लोहचूर्ण, हर्र, बहेड़ा, आमला और अर्जुनकी छाल ५०-५० तोले लेकर सबको अधकुटा करके १२८ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें। तत्पश्चात् १०-१० तोले हर्र, बहेड़ा, आमला, नीलके पंचांग और लोहके चूर्णको भंगरेके रसमें घोटकर ८ सेर तेलमें मिला दें और उसमें उपरोक्त क्वाथ, ८ सेर दूध तथा ८ सेर आमलेका रस मिलाकर पुनः पकावें। जब जलांश शुष्क होजाय तो तेलको (बिना छाने ही) बोतल आदिमें भरकर और उसका मुख अच्छी तरह बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें। एवं ४० दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

इसे सफेद बालोंपर लगानेसे वे काले हो जाते हैं।

(५२९७) महापद्मकं तैलम् (१)

(ग. नि. । तैला. २)

दर्भवेतसमूलानि चन्दनं मधुकं बला।
फेनिलापद्मकोशीरमञ्जिष्ठा कमलोत्पलैः॥
कैंशुकं च विभागाः स्युः पृथक् पञ्चपलोन्मिताः
जलद्रोणे विपक्तव्यमष्टभागावशेषितम्॥
जीवकर्षभकौ मेदां रोध्रं भल्लातकं तथा।
कालीयकं प्रियङ्गुं च दद्यात्केशरमेव च॥

प्रपौण्डरीकं मधुकं पद्मकं पद्मकेशरम् ।
सुरभिं कुङ्कुमं चैव मञ्जिष्ठां मदयन्तिकाम् ॥
मांसीं पत्रं च तुल्यांशं द्विगुणं कुङ्कुमं भवेत् ।
चतुर्गुणा तु मञ्जिष्ठा सौवीरं तैलसम्मितम् ॥
तैलप्रस्थं पचेदेभिः कषायेणाथ पेषितैः ।
एतदभ्यञ्जनं तैलम् विषमज्वरनाशनम् ॥
महापद्ममिदं ख्यातमेतत्तैलं महागुणम् ।
वर्णप्रसादजननं सौकुमार्यविवर्धनम् ॥
पानाभ्यञ्जनबस्तौ च नस्यकर्मणि च स्मृतम् ।
वातपित्तभवं क्षिप्रं ज्वरमेतन्नियच्छति ॥

क्वाथ—दाबकी जड़, बेतकी जड़, लाल चन्दन, मुलैठी, खरैटी, बाबची, पद्माक, खस, मजीठ, कमल, नीलोत्पल और केसूके फूल २५—२५ तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ४ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—जीवक, ऋषभक, मेदा, लोध्र, भिलावा, अगर, फूलप्रियङ्गु, नागकेसर, पुण्डरिया, मुलैठी, पद्माक, कमलकेसर, गूगल, मोतिया, जटामांसी और तेजपात प्रत्येक १—१ तोला; केसर ३ तोले और मजीठ ५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें। २ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा २ सेर सौवीरक कांजी मिला कर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इस तेलकी मालिशसे विषमज्वर और वात-पित्तज-ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है तथा चेहरेका रंग निखरता और कोमलताकी वृद्धि होती है। इसे पान, अभ्यंग और बस्ति द्वारा प्रयुक्त किया जा सकता है।

महापद्मकं तैलम् (२)

(भा. प्र.; ग. नि. । तैला. २)

भा. भै. र. भाग ३ प्र. सं. ४११६ " पद्मक तैलम् (महा) " देखिये ।

(५२९८) महापिण्डतैलम्

(भै. र. । वातरक्ता.)

अमृतायाः पलशतं सोमराजीतुलां तथा ।
प्रसारण्याः पलशतं जलद्रोणे पृथक् पचेत् ॥
पादशेषं गृहीत्वा च तैलप्रस्थं पचेद्भिषक् ।
क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा मन्दमन्देन वह्निना ॥
पिण्डशालजनिर्यासमिन्धुवारफलत्रयम् ।
विजया बृहती दन्ती कक्कोलकपुनर्नवाः ॥
वह्निग्रन्थिककुष्ठानि निशे द्वे चन्दनद्वयम् ।
पूतिपूतीकसिद्धार्थवाकुचीचक्रमर्दकम् ॥
वासानिम्बपटोलानि वानरीबीजमेव च ।
अश्वाह्वा सरलं सर्वं प्रतिकर्षमितं पचेत् ॥
एतत्तैलवरं हन्ति वातरक्तमसंशयम् ।
कुष्ठमष्टादशविधं ग्रन्थिवातं सुदारुणम् ॥
कायग्रहश्चामवातं भगन्दरगुदामयम् ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति मर्दनान्नात्र संशयः ॥

क्वाथ (१) ६। सेर गिलोयको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

(२) ६। सेर बाबचीको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

(३) ६। सेर गन्धप्रसारिणीको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—शिलारस, राल, संभालु, हर्र, बहेड़ा, आमला, भांग, बड़ी कटेली, दन्तीमूल, कङ्कोल,

पुनर्नवा, चित्रकमूल, पीपलामूल, कूठ, हल्दी, दारुहल्दी, सफेद और लाल चन्दन, करंज, खदाशी (जुन्दबेदस्तर), सफेद सरसो, बाबची, पंवाड़ (पंवाड़के बीज), बांसा, नीमकी छाल, पटोल, कौंचके बीज, असगन्ध और सरल वृक्ष (चीड़) का चूर्ण प्रत्येक १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र कूट लें। २ सेर तैलमें उपरोक्त तीनों क्वाथ, ८ सेर दूध और कल्क मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल वातरक्तको अवश्य नष्ट कर देता है। इसके अतिरिक्त इसकी मालिशसे १८ प्रकारके कुष्ठ, भयंकर ग्रन्थिवात, शरीरका जकड़ जाना, आमवात, भगन्दर, अर्श और आठों प्रकारके ज्वर भी नष्ट हो जाते हैं।

महापिण्डतैलम्

(भा. प्र. । वातरक्ता)

भा. भै. र. भाग ३ प्रयोग संख्या ४१२३ देखिये।

(५२९९) महापिप्पल्याद्यं तैलम्

(भा. प्र. । वातरक्ता.)

पिप्पलीमधुकं द्राक्षा शुभ्रा जीवकर्षभकौ।
सोत्पलं पुण्डरीकश्च मधुपर्णीफलत्रयम् ॥
धावनीक्षीरकाकोली मञ्जिष्ठाबृहतीबलाः।
पुनर्नवा शताह्वा च विडङ्गं गोक्षुरस्थिरा ॥
एतान्यर्द्धपलानीह श्लक्ष्णपिष्टानि पाचयेत्।
त्रिफलाभृङ्गवासानां प्रपीड्य प्रस्थसम्मितान् ॥
बीजसारो वरस्तस्य प्रस्थमेकं तु दापयेत्।
गृष्टीक्षीरस्य प्रस्थौ च द्वौ द्वौ तस्य प्रदापयेत् ।।
तिलतैलं समादाय शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
त्रिफलाद्येन पयसा सम्यग्दष्टन्तु मानवम् ॥
मोदकेनाभयाद्येन कृत्वा संशोधनं ततः।
यथोक्तेन विधानेन भिषग्वश्यं प्रदापयेत् ॥
तिमिरे च सनक्तान्ध्ये शुक्रे काचे चतुर्विधे।
आसन्नं यो न पश्येत यश्च दूरान्न पश्यति ॥
प्रकाशमायतं वा यो नष्टदृष्टिश्च मानवः।
मन्ददृष्टिः स्तब्धदृष्टिरधोदृष्टिश्च योजयेत् ॥
अतिरिक्ते प्रदिष्टे च रक्ते वाताश्रिते तथा।
वातपित्तप्रदुष्टेक्षिण पित्तश्लेष्मप्रदूषिते ॥
कंडूयते च स्रवति पित्तेनात्याकुलाक्षता।
विद्युत्खद्योतवत्पश्येत्सूर्यचन्द्रसमप्रभाम ॥
सर्वदा चक्रता दृष्टिः सर्वनेत्रविकारनुत् ॥

कल्क-पीपल, मुलैठी, मुनक्का, बंसलोचन, जीवक, ऋषभक, नीलोत्पल, कमल, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, पृष्टपर्णी, क्षीरकाकोली, मजीठ, कटेली, खरैटी, पुनर्नवा, सोया, बायबिड़ंग, गोखरु और शालपर्णी २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

द्रव-पदार्थ-त्रिफलाका क्वाथ २ सेर, भंगरेका रस २ सेर, बासेका रस २ सेर, बिजयसारका रस २ सेर तथा पहली बार की ब्याही हुई गायका दूध ४ सेर।

२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क और द्रव पदार्थ मिलाकर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

रोगीको अभयादि मोदक देकर पहले उसका कोठा शुद्ध करें और फिर यह तेल सेवन करावें।

इसके सेवनसे तिमिर, रतौंधा, फूला, काच, आसन्न दृष्टि (Short Sight), दूर दृष्टि (Long Sight), मन्द दृष्टि, स्तब्ध दृष्टि और अधो दृष्टि इत्यादि नेत्ररोग नष्ट हो जाते हैं।

वातरक्त, वातपित्त और वातकफसे उत्पन्न समस्त नेत्र रोग, नेत्रोंकी खुजली, पानी बहना तथा पित्त दूषित दृष्टि आदि नेत्र रोगोंमें यह तेल उपयोगी है।

(५३००) महाबलातैलम् (१)

(व. से. । वातव्या.)

बलाग्निमन्थमैरण्डबृहतीद्वयगोक्षुरम् ।
बिल्वनागबलाभीरु स्योनाकं पारिभद्रकम् ॥
पाटला साश्वगन्धा च केतकी च प्रसारणी ।
पृष्ठपर्णी स्थिरा चैव बृहती सहचरद्वयम् ॥
एषां दशपलान्भागान्वारिद्रोणद्वये पचेत् ।
पादशेषं परिस्राव्य तैलं प्रस्थद्वयं पचेत् ॥
कल्कानि जीवनीयानि रास्नासैन्धवदारु च ।
कुष्ठं मांसी वचाग्रन्थिमञ्जिष्ठासरलानि च ॥
त्वक्पत्रकं वराङ्गश्च एलामुस्तकवालुकम् ।
एतैः कल्कैः सुपिष्टैश्च पाचयेन्मृदुनाग्निना ॥
क्षीरश्च द्विगुणं दद्याच्छतावर्य्या रसस्य च ।
एतत्तैलवरं तेषां रोगाणां वातजन्मनाम् ॥
नाशयेद्वातरक्तश्च आमवातं सुदारुणम् ।
गृध्रसीपीठसर्पेषु चाढचवाते सदा हितम् ॥
पाने बस्तौ तथाभ्यङ्गे नस्ये चैव प्रयोजयेत् ॥

क्वाथ—खरैटीकी जड़, अरनीकी जड़, अरण्डमूल, छोटी और बड़ी कटेली, गोखरु, बेलछाल, नागबला (गंगेरन), शतावर, अरलु को छाल, फरहदकी छाल, पाढलकी छाल, असगन्ध, केतकीकी जड़, गन्ध प्रसारणी, पृष्टपर्णी, शालपर्णी, बैंगन तथा काले और पीले फूलका बासा ५०-५० तोले लेकर सबको अधकुटा करके ६४ सेर पानीमें पकावें। जब १६ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—जीवन्ती, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मुलैठी, रास्ना, सेंधानमक, देवदारु, कूठ, जटामांसी, बच, गठीवन, मजीठ, सरल निर्यास (धूप सरल), दालचीनी, तेजपात, अम्लवेत, छोटी इलायची, नागरमोथा और एलबालुक समान भाग मिश्रित ४० तोले (प्रत्येक १॥ तोला) लेकर सबको एकत्र पीस लें।

विधि—४ सेर तिल-तैल में उपरोक्त क्वाथ, कल्क और ८-८ सेर दूध तथा शतावरीका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल वातव्याधि, भयङ्कर वातरक्त, आमवात, गृध्रसी और आढचवातादिमें उपयोगी है।

इसे रोगी को पिलाना तथा बस्ति, अभ्यङ्ग और नस्य द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

महाबलातैलम् (२)

(वृ. नि. र.; यो. त. । त. ४०; धन्व.; यो. र.)

भाग ३ में प्रयोग संख्या ४६८४ "बलातैलम् (४)" देखिये।

(५२०१) महाबलाद्यं तैलम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २३)

भागाश्चाष्टौ बलामूलं चत्वारो दशमूलकम् ।
काथश्चतुर्गुणे तोयेऽथवा द्रोणस्य संख्यया ॥
तत्राढकं क्षिपेत् क्षीरमाढकं मिश्रयेद्दधि ।
आढकं माषकुल्माषयूषं पर्युषितं क्षिपेत् ॥
तैलं तिलानां द्रोणं तु कटाहे पाचयेच्छनैः ।
जीवन्ती जीवनीया च काकोल्यौ जीवकर्षभौ॥
मेदे द्वे सरलं दारु शल्लकश्च कुचन्दनम् ।
कालीयकं सर्जरसं मञ्जिष्ठा त्रिसुगन्धिकम् ॥
मांसी शैलेयकं कुष्ठं वचा कालानुसारिवा ।
शतावरी चाश्वगन्धा शतपुष्पा पुनर्नवा ॥
किण्वकं च सुरा मुस्ता तथा तालीसपत्रकम् ।
कटुत्रयं वालकौ च सर्वं तत्रव मिश्रयेत् ॥
सिद्धं सर्वगुणं श्रेष्ठं कृत्वा मङ्गलवाचनम् ।
सौवर्णे राजते कुम्भे वाथवा मृण्मयायसे ॥
सुगुप्तं धारयित्वा तु पानाभ्यङ्गे निरूहके ।
बस्तौ वापि प्रयोक्तव्यं मनुष्यस्य यथाबलम् ॥
वातार्दितेऽथवा भग्ने भिन्ने वापि प्रदापयेत् ।
या बन्ध्या च भवेन्नारी पुरुषश्चाल्परेतसः ॥
क्षीणो वा दुर्बलो वापि तथा जीर्णज्वरातुरः ।
आमवातातुराणां च तथा पक्षमकुञ्चके ॥
प्रतानके प्रयोक्तव्यं तथा शुष्के हनुग्रहे ।
कर्णशूले चाक्षिशूले मन्यास्तम्भे च पार्श्वगे ॥
सर्ववातविकाराणां हितं तैलं यथामृतम् ।
हन्ति श्वासं च कासं च गुल्मार्शों ग्रहणीगदम्॥
अष्टादशानि कुष्ठानि शीघ्रं वापि नियच्छति ।
ग्रहभूतपिशाचाश्च डाकिनी शाकिनी तथा ॥
दूरदेशे पलायन्ते बलातैलस्य दर्शनात् ।
अपस्मारादिदोषांश्च तच्च दूरे नियच्छति ॥
वृद्धा युवानो भवन्ति वन्ध्या च लभते सुतम् ।
तैलं महाबलाद्यं च महावातहरं स्मृतम् ॥

काथ—(१) खरैटी की जड़ ८ भाग (३२ सेर) लेकर अधकुटा करके २५६ सेर पानीमें पकावें । जब ६४ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें ।

(२) ४ भाग (१६ सेर) दशमूलको १२८ सेर पानीमें पकावें । जब ३२ सेर पानी शेष रह जाए तो छान लें ।

(३) ४ सेर उड़दको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाए तो छान लें ।

(४) ४ सेर कुलथीको ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—जीवन्ती, हर्र, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, धूपसरल, देवदारु, शल्लकी (शिलारस), लाल चन्दन, तगर, राल, मजीठ, दालचीनी, इलायची, तेजपात, जटामांसी, भूरिछरीला, कूठ, बच, तगर, शतावर, असगन्ध, सोया, पुनर्नवा (विसखपरा), सुराबीज (किण्व), सुरा, नागरमोथा, तालीसपत्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, तथा २ प्रकारकी सुगन्धबाला । सब समान भाग--मिश्रित ४ सेर (प्रत्येक ८ तोले) लेकर सबको एकत्र कूट लें ।

विधि—३२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त चारों काथ, कल्क, और ८-८ सेर दूध तथा दही मिला-

कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

नोट--उड़द और कुलथीका क्वाथ पहले दिन बना कर रख लेना चाहिए और दूसरे दिन तेल पकाना चाहिये।

इसे पान, अभ्यंग और निरूहण बस्तिमें प्रयुक्त करनेसे अर्दित और भग्नादि वातज रोग नष्ट होते हैं। वन्ध्या स्त्री और क्षीणवीर्य पुरुषोंके लिए यह तैल अत्यन्त हितकारी है।

यह तैल जीर्णज्वर, आमवात, पक्षसंकोच, प्रतानक, शरीरका सूख जाना, हनुग्रह, कर्णशूल, अक्षिशूल, मन्यास्तम्भ, पार्श्व शूल, श्वास, खांसी, गुल्म, अर्श, ग्रहणीदोष, १८ प्रकारके कुष्ठ, अपस्मार और अन्य समस्त वातज रोगोंको नष्ट करता है।

इसके प्रभावसे भूत, पिशाच और डाकिनी, शाकिनी इत्यादि दूर भाग जाते हैं एवं वृद्ध पुरुष युवाके समान हो जाते हैं और वन्ध्या स्त्रीको पुत्रकी प्राप्ति होती है।

(५३०२) महाभल्लाततैलम्

(र. र. स. । उ. खं. अ. २०)

यत्नाद्विखण्डितं कुर्याद्भल्लातशतपञ्चकम् ।
क्षिप्त्वा पच्याच्छनैर्वह्नौ तैले द्वादशपालिके ॥
यावत्तरन्ति ते पक्त्वा तत्तैलं पाचयेत्पुनः ।
मधुपाके तु सम्प्राप्ते ह्यवतार्य तु तत्क्षणात् ॥
सर्वकुष्ठं निहन्त्याशु महाभल्लाततैलकम् ॥

५०० भिलावोंको टुकड़े टुकड़े करके १२० तोले तिलके तेलमें डालकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब भिलावे तेलके उपर तरने लगें तो तेलको छान लें। एवं इस तेलको पुनः थोड़ी देर तक मन्दाग्नि पर पका कर अग्निसे नीचे उतार लें। जब तेल ठण्डा हो जाए तो उसे शीशो में भर कर सुरक्षित रक्खें।

यह तैल समस्त प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

नोट--भिलावों को सावधानीपूर्वक तोड़ना और पकाना चाहिये। उनका तेल या धुवां आंखों आदि पर न लगने पावे।

महामरिचादितैलम्

(भा. प्र.)

मरिचाद्यं तैलम् (बृहत्) देखिये।

(५३०३) महामार्तण्डतैलम्

(र. र. स. । उ. खं. अ. २०)

शाकं निम्बाङ्कोलवह्निराजवृक्षाक्षस्नुग्भवम् ।
गर्भशुष्कं शुभं खण्डं नारिकेलं प्रियालकम् ॥
वातारिचक्रमर्दस्य वीजं बाकुचिजं तथा ।
समं पातालयन्त्रेण तैलं ग्राह्यं प्रयत्नतः ॥
प्रस्थौ द्वौ तिलतैलस्य कुष्ठचूर्णं पलद्वयम् ।
स्वर्णक्षीरीपलैकं च क्षिप्त्वा पक्त्वाऽवतारयेत् ॥
पूर्वतैले चतुष्प्रस्थे तैलीभूते विनिःक्षिपेत् ।
महामार्तण्डतैलं हि लेपात्कुष्ठं नियच्छति ॥
अतिकण्डूं कृमिं पाकं स्फोटकानि च नाशयेत् ॥

(१) सागोनके बीज, नीमकी निबौली, हिंगोटके फल, भिलावेके फल, अमलतासके बीज, बहेड़ेकी मींग और थोहर (सेंड) के सूखे हुवे टुकड़े तथा नारयल (गोला), चिरौंजी, अरण्डके

छिले हुवे बीज, पवांड़के बीज और बाबची समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर पाताल यन्त्रसे तेल निकालें।

(२) ४ सेर तिलके तेलमें १६ सेर पानी तथा १० तोले कूठका चूर्ण और ५ तोले स्वर्णक्षीरी (सत्यानाशी) का कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

८ सेर तेल नं. १ में ४ सेर तेल नं. २ मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे लगानेसे कुष्ठ, खुजली, कृमि, पाक और विस्फोटक आदिका नाश होता है।

(५३०४) महामाषतैलम्

(व. से. । वातव्या.)

माषद्रोणं समादाय अश्वगन्धाप्रसारिणी।
द्विपञ्चमूल्यात्मगुप्ता बला गन्धर्वहस्तकः॥
एषां दशपलान्भागान्वारिद्रोणे चतुष्टये।
क्वाथमेभिः प्रकुर्वीत चतुर्भागावशेषितम्॥
यष्ट्याह्वदारुकुष्ठैलारास्नामांसीबलावचाः।
शताह्वा चात्मगुप्ता च चाश्वगन्धा च चन्दनम्॥
शठ्युरुबुकवृक्षाम्लत्र्यूषणागुरुवृश्चिकम्।
सिन्धूद्भवं विदारी च प्रसारिणी शतावरी॥
वृद्धदारुकातिबलाविडङ्गसरलानि च।
कल्कैरेतैः पलैर्भागैस्तैलाढकसमायुतैः॥
क्षीरतुल्यं समायुक्तं शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
पाने बस्तौ तथाऽभ्यङ्गे नस्ये भोज्ये च पूजितम्
अर्दिते कर्णशूले च शिरोरोगे हनुग्रहे।
मुखरोगेषु सर्वेषु मन्यास्तम्भेऽपबाहुके॥
मन्दश्रवणबाधिर्ये कर्णरोगातिपीनसे।
हृद्रोगं गृध्रसीश्चैव आमवातं कटिग्रहम्॥
जङ्घोरुपादपृष्ठेषु पार्श्वशूलमतीव च।
अन्त्रवृद्ध्यण्डवृद्धिश्च वातरक्तं सुदारुणम्॥
विश्वाचीखञ्जपङ्गूर्वाशीतिं वातजान्हरेत्।
बलीपलितखालित्यं केशानां पतनं परम्॥
बलमांसकरश्चैव शुक्रवृद्धिकरं परम्।
अपत्यजननं श्रेष्ठं गर्भिणीनां परं हितम्॥
हस्त्यश्वोष्ट्रादिव्यायामैर्भग्नसन्धिप्रसाधनम्।
तैलमात्रोपयोगेन व्याधिर्निर्मूलतां नयेत्॥
सर्वातङ्क विनाशाय वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
महामाषमिदं तैलं कृष्णात्रेयेण पूजितम्॥

क्वाथ–उड़द १६ सेर, असगन्ध, प्रसारणी, दशमूल, कौंचके बीज, बला (खरैटी) और अरण्डमूल ५०–५० तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर १२८ सेर पानी में पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क–मुलैठी, देवदारु, कूठ, इलायची, रास्ना, जटामांसी, खरैटी, बच, सोया, कौंचके बीज, असगन्ध, सफेद चन्दन, कचूर, अरण्डमूल, तिंतड़ीक, सोंठ, मिर्च, पीपल, अगर, पुनर्नवा, सेंधा, विदारीकन्द, प्रसारणी, शतावर, विधारामूल, अतिबला (कंघी), बायबिड़ंग और धूप सरल, प्रत्येक ५–५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

८ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क और ८ सेर गायका दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

आवश्यकतानुसार इसे पिलाने, भोजनमें खिलाने और इसकी बस्ति तथा नस्य देने एवं

मालिश करनेसे अर्दित, कर्णशूल, शिरो रोग, हनुग्रह, समस्त मुखरोग, मन्यास्तम्भ, अपबाहुक, मन्द श्रवण, वधिरता, कर्णरोग, पीनस, हृद्रोग, गृध्रसी, आमवात, कटिग्रह, जंघाशूल, उरुशूल, पादशूल, पृष्ठशूल, प्रवृद्धपार्श्वशूल, अन्त्रवृद्धि, अण्डवृद्धि, वातरक्त, विश्वाची, खञ्जवात, और पङ्गुता आदि ८० प्रकारके वातरोग; बली, पलित, खालित्य (गंज) और बालोंका गिरना आदि रोग नष्ट होते तथा बल, मांस तथा शुक्रकी वृद्धि होती है।

यह तेल गर्भिणी स्त्रियोंके लिये हितकारी और सन्तान दाता है। व्यायामसे उत्पन्न हुई सन्धिशिथिलता इससे शीघ्र ही दूर हो जाती है।

(५३०५) महामाषतैलम् (२)

(च. द. । वातव्या. २२)

द्विपञ्चमूलीं निःक्वाथ्य तैलात्षोडशभिर्गुणैः।
माषाढकं साधयित्वा तन्निर्यूहं चतुर्गुणम् ॥
ग्राहयित्वा तु विपचेत्तैलप्रस्थं पयः समम्।
कल्कार्थं च समावाप्य भिषग्द्रव्याणि बुद्धिमान्॥
अश्वगन्धां शठीं दारु बलां रास्नां प्रसारणीम्।
कुष्ठं परूषकं भार्ङ्गी द्वे विदार्यौ पुनर्नवाम् ॥
मातुलुङ्गफलाज्याज्यौ रामठं शतपुष्पिकाम्।
शतावरीगोक्षुरकं पिप्पलीमूलचित्रकम् ॥
जीवनीयगणं सर्वं संहृत्यैव ससैन्धवम्।
तत्साधुसिद्धं विज्ञाय माषतैलमिदं महत् ॥
बस्त्यभ्यञ्जनपानेषु नावने च प्रयोजयेत्।
पक्षाघाते हनुस्तम्भे अर्दिते सापतन्त्रके ॥
अपबाहुकविश्वाच्योः खञ्जपङ्गुलयोरपि।
हनुमन्याग्रहे चैवमधिमन्थे च वातिके ॥
शुक्रक्षये कर्णनादे कर्णशूले च दारुणे।
कलायखञ्जशमने भैषज्यमिदमादिशेत् ॥
दशमूलाढकं द्रोणे निःक्वाथ्य पादिको भवेत्।
क्वाथश्चतुर्गुणस्तैलान्माषक्वाथेऽप्ययं विधिः ॥

क्वाथ (१) ४ सेर दशमूलको ३२ सेर पानीमें पकावें जब ८ सेर जल शेष रहे तो छान लें।

(२) ४ सेर उड़दों को कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें जब ८ सेर जल शेष रहे तो छान लें।

कल्क—असगन्ध, कचूर, देवदारु, खरैटीकी जड़, रास्ना, प्रसारिणी, कूठ, फालसा, भरंगी, बिदारीकन्द, क्षीर बिदारी, पुनर्नवा, बिजौरेका फल, जीरा, हींग, सोया, शतावर, गोखरु, पीपलामूल, चीतामूल, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, मुलैठी और सेंधानमक। सब समान भाग मिश्रित आधा सेर (प्रत्येक १। तोला) लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तिलके तैलमें उपरोक्त दोनों क्वाथ, २ सेर दूध और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे बस्ति, अभ्यंग, पान और नस्य द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

गुण—यह तैल पक्षाघात, हनुस्तम्भ, अर्दित, अपतन्त्रक, अपबाहुक, विश्वाची, खञ्जता, पंगुता, मन्याग्रह, वातज अधिमन्थ, शुक्रक्षय, कर्णनाद,

भयंकर कर्णशूल और कलायखंज इत्यादि रोगोंको नष्ट करता है।

(५३०६) महासुगन्धतैलम्

(ग. नि. । तैला.; व. से.; यो. र. । मेदरोगा.; वृ. यो. त. । त. १०४)

चन्दनं कुङ्कुमोशीरं प्रियङ्गुस्त्रुटिरोचनाः ।
तुरुष्कागुरुकस्तूर्यः कर्पूरं जातिपत्रिका ॥
जातीकङ्कोलपूगानां लवङ्गस्य फलानि च ।
नलिका नलदं कुष्ठं हरेणुस्तगरः प्लवम् ॥
नखं व्याघ्रनखं स्पृक्का बोलो दमनको मुरा ।
[1]स्थोणेयकं चोरकं च शैलेयं सैलवालुकम् ॥
[2]सरलः सप्तपर्णश्च लाक्षा तामलकी तथा ।
[3]लामज्जकं पद्मकं च धातक्याः कुसुमानि च ॥
प्रपौण्डरीकं कर्चूरः समांशैः शाणमात्रकैः ।
महासुगन्धमित्येतत्प्रस्थं तैलस्य साधयेत् ॥
प्रस्वेदमलदौर्गन्ध्य कण्डू कुष्ठहरं परम् ।
अनेनाभ्यक्तगात्रः स्याद्वृद्धः सप्ततिकोऽपि वा॥
युवा भवति शुक्राढ्यः स्त्रीणां चात्यन्तवल्लभः।
सुभगो दर्शनीयश्च गच्छेच्च प्रमदाशतम् ॥
वन्ध्यापि लभते गर्भं षण्ढोऽपि पुरुषायते ।
अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥

कल्क—सफेद चन्दन, केसर, खस, फूलप्रियङ्गु, छोटी इलायची, गोलोचन, शिलारस, अगर, कस्तूरी, कपूर, जावित्री, जायफल, कंकोल, सुपारी, लौंग, नालीका शाक, जटामांसी, कूठ, रेणुका, तगर, नागर मोथा, नख, नखी, स्पृक्का, बोल, दौना, मुरामांसी, गठिवन, चोरक, भूरिछरीला, एलवालुक, सरलकाष्ठ (चीड़का बुरादा), सप्तपर्ण (सतौनेकी छाल), लाख, भुई आमला, लामज्जक (पीली खस), पद्माक, धायके फूल, पुण्डरिया और कचूर। प्रत्येक ५-५ माशे लेकर सबको एकत्र कूट लें।

२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इस तेलकी मालिशसे स्वेद, मल, शरीरकी दुर्गन्ध, खाज और कुष्ठ आदिका नाश तथा सौन्दर्य की वृद्धि होती है एवं सत्तर वर्षका वृद्ध भी युवाके समान सुन्दर और वीर्यवान हो जाता है। वन्ध्या स्त्री इसके प्रभावसे गर्भ धारण करनेमें समर्थ हो जाती है और नपुंसक पुरुषमें पुरुषत्व आ जाता है तथा पुत्रहीन को दीर्घ जीवी पुत्रकी प्राप्ति होती है।

(५३०७) महासुगन्धितैलम्

(वृ. मा.; धन्व.; यो. र.; र. र. । वाजीकरण.; यो. त. । त. ८०; वृ. यो. त. । त. १४७; नपुंसका. । त. २)

कर्पूरागुरुचोचबोलनलिकालाक्षाशठीधातकी-
पुष्पैः सप्तदलैलवालुसरलाशैलेय मांसीपुरैः ।
एलाकुङ्कुमरोचनादमनक श्रीवासजातीफलैः
कङ्कोलक्रमुकोजटामदमुराकान्तालवङ्गामयैः ॥
तैलोशीरहरेणुकापलयजस्थौणेयचण्डानखै-
र्जातीकोशकुलीरपद्मकनतैः स्पृक्कान्वितैः पालिकैः
लाक्षायोजनवल्लिलोध्रसलिले तैलं विपाच्याढकं
तेनाभ्यज्य तनुं जरन्नपि भवेत्स्त्रीणां परं वल्लभः॥

[1], [2], [3] कुछ ग्रन्थोंमें यह तीन पंक्तियां नहीं हैं तथा "त्रुटि"की जगह "सठी" पाठ है।

शुक्राढयोद्युतिमाननल्पतनयःषण्ढोऽपि रत्युत्स्को
वन्ध्या गर्भवती भवेदपि तथा वृद्धापि सूते
सुतम् ।
कण्डूस्वेदविचर्चिकामयहरं दौर्गन्ध्यकुष्ठापह-
मश्विभ्यां परिकीर्तितं बहुगुणं तैलं सुगन्धं महत्॥

कल्क—कपूर, अगर, दालचीनी, बोल, नालीका शाक, लाख, कचूर, धायके फूल, सतौना, एलवालुक, काली तुलसी, भूरिछरीला, जटामांसी, गूगल, छोटी इलायची, केसर, गोलोचन, दौना, श्रीवास (धूपसरल), जायफल, कंकोल, सुपारी, शतावर, कस्तूरी, मुरामांसी, नागरमोथा, लौंग, कूठ, शिलारस, खस, रेणुका, सफेद चन्दन, गठीवन, चीड़, नखी, जावित्री, काकड़ासिंगी, पद्माख, तगर और मालती के फूल ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—लाख, मजीठ और लोध; तीनों समान भाग मिश्रित १६ सेर लेकर सबको अधकुटा करके १२८ सेर पानीमें पकावें। जब ३२ सेर पानी रह जाय तो छान लें।

८ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे वृद्ध पुरुष भी युवाके समान कान्ति और वीर्यवान हो जाता है। तथा नपुंसक पुरुषको कामोत्तेजना होने लगती है।

इसके प्रभावसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण कर लेती है और वृद्धा भी पुत्रोत्पन्न कर सकती है।

इसके अतिरिक्त यह तैल खुजली, पसीना, विचर्चिका, दुर्गन्धि और कुष्ठको भी नष्ट करता है।

(५३०८) महासुगन्धिलक्ष्मीविलास तैलम्

(च. द.; धन्व.; र. र. वातव्या.)

जिङ्गीचोरकदेवदारुसरलं-
व्याघ्रीवचाचेलक-
त्वक्पत्रैः सह गन्धपत्रकशठी-
पथ्याक्षधात्रीघनैः ।
एतैः शोधितसंस्कृतैः पलयुगे-
त्याख्यातया संख्यया
तैलप्रस्थमत्रस्थितैः स्थिरमतिः
कल्कैः पचेद्गान्धिकैः ॥
मांसीमुरादमनचम्पकसुन्दरीत्वक्-
ग्रन्थ्यम्बुरुङ्मरुवकैर्द्विपलैः सपृक्कैः ।
श्रीवासकुन्दुरुनखीनलिकामिश्रीणां
प्रत्येकतः पलमुपार्ज्य पुनः पचेत्तु ॥
एलालवङ्गचलचन्दनजातिपूति-
कक्कोलकागुरुलताघुसृणैः पलार्धैः ।
कस्तूरीकाक्षसहितामलदीप्तियुक्तैः
पक्त्वा तु मन्दशिखिनैव महासुगन्धम् ॥

(पञ्चद्विकेन वार्धेन मदात्कर्पूरमिष्यते ।
कर्पूरमदयोरर्धं पत्रकल्कादिहेष्यते ॥
पक्वपूतेऽप्युष्ण एव सम्यक्पेषणवर्तितम् ।
दीयते गन्धवृद्ध्यर्थं पत्रकल्कं तदुच्यते ॥

प्रागुक्तौ शुद्धिसंस्कारौ गन्धानामिह तैः पुनः।
द्विगुणैर्लक्ष्मीविलासः स्यादयं तैलसत्तमः ॥
पञ्चपत्राम्बुना चाद्यो द्वितीयो गन्धवारिणा ।
तृतीयोऽपि च तेनैव पाको वा धूपिताम्बुना ॥)

तैलयुग्ममिदं तूर्णं विकारान् वातसम्भवान् ।
क्षपयेज्जनयेत् पुष्टिं कान्तिं मेधां धृतिं धियम्॥

प्रथम पाक—मजीठ, चोरपुष्पी, देवदारु, सरल-काष्ठ (चीड़का बुरादा), नखी, बच, सुपारीके फूलकी छाल, तेजपात, गन्ध पत्र (तुलसी—मरवे के पत्ते अथवा सुगन्धित पत्र विशेष; बंगाली 'पचापाता') कचूर, हर्र, बहेड़ा, आमला और नागरमोथा । १०—१० तोले लेकर सबको एकत्र पीसलें । तत्पश्चात् २ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ८ सेर "पञ्च पल्लव[1] क्वाथ" डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें ।

द्वितीय पाक—जटामांसी, मुरामांसी, दमना, चम्पाके फूल, फूलप्रियंगु, दालचीनी, गठीवन, सुगन्ध बाला, कूठ, मरवक (तुलसी भेद) और स्पृक्का । १०—१० तोले तथा धूप सरल, नखी, कुन्दरु, नलिका और सौंफ ५—५ तोले । समस्त ओषधियों को एकत्र कूटकर उपरोक्त तेलमें मिला-कर उसमें ८ सेर "गन्धोदक[2]" डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

तृतीयपाक—छोटी इलायची, लौंग, शिलारस, सफेद चन्दन, जावित्री, खट्टाशी (जुन्द बेदस्तर), कंकोल, अगर, लताकस्तूरी तथा केशर २॥—२॥ तोले और कस्तूरी १। तोला एवं कपूर ६ माशे या ७॥ माशे लेकर सबको एकत्र पीस-कर उपरोक्त तेलमें मिला कर उसमें ८ सेर "गन्धोदक" या "धूपिताम्बु" डालकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें ।

(इस प्रयोगमें 'कर्पूर', कस्तूरीका पंचद्विक ($\frac{2}{5}$) भाग अथवा आधा लेना चाहिये ।

कपूर और कस्तूरी का मान 'तैलकल्कमें' 'पत्रकल्क' की अपेक्षा आधा लिया जाता है।

---

१ पञ्चपल्लवक्वाथ.

आम्रजम्बुकपित्थानां बीजपूरकबिल्वयोः ।
गन्धकर्मणि सर्वत्र पत्राणि पञ्चपल्लवम् ॥

आम, जामन, कैथ, बिजौरा और बेल । इन पांच वृक्षोंके पत्तोंके योगको पंचपल्लव कहते हैं ।

क्वाथ विधि.

पांचों वृक्षोंके १—१ सेर पत्ते लेकर सबको अधकुटा करके ४० सेर पानीमें पकावें । जब १० सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

२ गन्धोदक.

गन्धोदकन्तु त्वक्पत्री पत्रकोशीरमुस्तकम् ।
प्रत्येकं बालकं चैव पलानि पञ्चविंशतिः ॥
कुष्ठार्द्धभागोऽत्र जल प्रस्थास्तु पञ्चविंशतिः ।
अर्धावशिष्टाः कर्त्तव्याः पाके गन्धाम्बु कर्मणि ॥

दालचीनी, तेजपात, खस, नागरमोथा और सुगन्धबाला २५—२५ पल (प्रत्येक १२५ तोले) तथा कूठ १२॥ पल लेकर सबको ५० सेर पानीमें पकावें । जब २५ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें । इसीको गन्धोदक अथवा गन्धाम्बु कहते हैं ।

पत्रकल्क–तेलके सिद्ध हो जाने पर, गन्ध-वृद्धिके लिये उसे छान कर गरम गरममें ही जो कस्तूरी आदिका कल्क डाला जाता है उसे 'पत्रकल्क' कहते हैं।

तैलकल्क–जो 'कल्क' तेलमें डालकर पकाया जाता है उसे 'तैलकल्क' कहते हैं।

इस (महा सुगन्धि) तेल में भी गन्ध द्रव्योंको पूर्वोक्त विधि के अनुसार शुद्ध कर लेना चाहिए।×

×गन्धद्रव्यशुद्धिः–

पञ्चपल्लवतोयेन गन्धानां क्षालनं तथा।
शोधनञ्चापि संस्कारो विशेषाश्चात्र वक्ष्यते॥

नखीशुद्धिः–

चण्डीगोमयतोयेन यदि वा तिन्तडीजलैः।
नखं संक्वाथयेदेभिरभावे मृण्मयेन तु॥
पुनरुद्धृत्य प्रक्षाल्य भर्जयित्वा निषेचयेत्।
गुडपथ्याम्बुना ह्येवं शुध्यते नात्र संशयः॥

वचाशुद्धिः–

गोमूत्रे चाल्म्बुपके पक्त्वा पञ्चदलोदके।
पुनः सुरभितोयेन बाष्पस्वेदेन स्वेदयेत्॥
गन्धोग्रा शुध्यते ह्येवं रजनी च विशेषतः।

मुस्तकशुद्धिः–

मुस्तकं तु मनाक् क्षुण्णं काञ्जिके त्रिदिनोषितम्॥
पञ्चपल्लवपानीयस्विन्नमातपशोषितम्।
गुडाम्बुना सिच्यमानं भर्जयेच्चूर्णयेत्ततः॥
आजशोभाञ्जनजलैर्भावयेच्चेति शुध्यति।

शैलजशुद्धिः–

काञ्जिके कथितं शैलं भृष्ट्वा पथ्यागुडाम्बुना॥
सिञ्चेदेवं पुनः पुष्पैर्विविधैरधिवासयेत्।

यदि उपरोक्त तेलमें कल्क द्रव्योंका परिमाण दूना कर दिया जाय तो इसीका नाम **लक्ष्मीविलास** तैल हो जाता है।

खट्टाशीशुद्धिः–

यथालाभमपामार्गस्नुह्यादिक्षारलेपितम्॥
बाष्पस्वेदेन संस्वेद्य पूतिं निर्लोमतां नयेत्।
दोलापक्वं पचेत्पश्चात्पञ्चपल्लववारिणि॥
खलः साधुमिवोत्पीड्य ततो निःस्नेहतां नयेत्।
आजशोभाञ्जनजलैर्भावयेच्च पुनः पुनः॥
शिग्रुमूले च केतक्याः पुष्पपत्रपुटे च तम्।
पचेदेवं विशुद्धः सन्मृगनाभिसमो भवेत्॥

तुरुष्कादिशोधनम्

तुरुष्कं मधुना भाव्यं काश्मीरं चापि सर्पिषा।
रुधिरेणायसं प्राज्ञैर्गोमूत्रैर्ग्रन्थिपर्णकम्॥
मधूदकेन मधुरीं पत्रकं तण्डुलाम्बुना।

कस्तूरिकायाः प्राशस्त्यस्वरूपम्

ईषत्क्षारानुगन्धा तु दग्धा याति न भस्मताम्॥
पीता केतकगन्धा च लघुस्निग्धा मृगोत्तमा।

कर्पूरस्य स्वरूपम्

पक्वात्कर्पूरतः प्राहुरपक्वं गुणवत्तरम्॥
तत्रापि स्याद्यदक्षुद्रं स्फटिकाभं तदुत्तमम्।
पक्वं च सदलं स्निग्धं हरितद्युति चोत्तमम्॥
भङ्गे मनागपि न चेन्निपतन्ति ततः कणाः।

कुष्ठचन्दनागुरूणां प्राशस्त्यम्

मृगभृङ्गोपमं कुष्ठं चन्दनं रक्तपीतकम्॥
काकतुण्डाकृतिः स्निग्धो गुरुश्चैवोत्तमोऽगुरुः।

कुङ्कुमादीनां लक्षणम्

स्निग्धाल्पकेशरं त्वस्रं शालिजो वृत्तमांसलः॥
मुरा पीता वरा प्रोक्ता मांसी पिङ्गजटाकृतिः।

इस तेलमें प्रथम—पाक 'पंचपल्लव क्वाथके' साथ और दूसरा "गन्धोदक"के साथ तथा तीसरा पाक 'गंन्धोदक' या धुपिताम्बु के साथ करना चाहिए।)

रेणुकादीनां लक्षणम्

रेणुका मुद्गसंस्थाना शस्तमानूर्जं धनम् ॥
जातीफलं सशब्दञ्च स्निग्धं गुरु च शस्यते ।

एलादीनां प्राशस्त्यम्

एला सूक्ष्मफला श्रेष्ठा प्रियङ्गुः श्यामपाण्डुराः ॥
नखमश्वखुरं हस्तिकर्णश्चैव प्रशस्यते ।
एतेषामपरेषाञ्च नवता प्रबलो गुणः ॥

गन्ध द्रव्य 'पंचपल्लव' क्वाथसे धोनेसे साधारणतः शुद्ध हो जाते हैं। विशेष शुद्धि नीचे दी जाती है।

नखी शुद्धि.

नखीको भैंसके गोबरके रस या तिन्तिड़ीक (इमली) के पत्तोंके रसमें (दोलायन्त्र विधि से) स्वेदित करें। यदि ये दोनों चीजें न मिल सकें तो पानीमें काली मिट्टी घोलकर उसी पानीमें स्वेदित कर लेना चाहिए। तत्पश्चात् उसे स्वच्छ पानीसे धोकर मिट्टीके पात्रमें मन्दाग्निपर भूनें और फिर थोड़े समय तक गुड़मिश्रित हर्रके क्वाथमें भिगोदें। (एवं धूपमें सुखालें).

बचका शोधन.

बचको क्रमशः गोमूत्र, गोरखमुंडीके क्राथ और 'पंचपल्लव' काथमें पृथक् पृथक् पकावें और फिर उसे गन्धोदकसे वाष्पस्वेद दें अर्थात् एक हांडीमें गन्धोदक भर कर उसपर एक कपड़ा बांध दें और इसके ऊपर उपरोक्त बचको रख कर उस पर एक अन्य हाण्डी उलटी करके ढक दें और दोनोंकी सन्धिको कपड़मिट्टीसे बंद कर दें एवं हाण्डीको चूल्हे पर चढ़कर नीचे अग्नि जलावें। (इसके पश्चात् बचको निकाल कर धूपमें सुखा कर रक्खें)। हल्दीका शोधन भी इसी प्रकार किया जाता है।

नागरमोथेका शोधन.

नागरमोथे को अधकुटा करके कांजीमें डाल दें और ३ दिन पश्चात् निकाल कर 'पंचपल्लव' काथमें स्वेदित करके धूपमें सुखा लें। तत्पश्चात् उसे गुडाम्बु (गुड़के शर्बत) में डाल दें और थोड़ी देर पश्चात् निकाल कर मन्दाग्नि पर भूनकर चूर्ण कर लें। तदनन्तर उसे बकरीके मूत्र और सहंजनेकी छालके काथकी पृथक् पृथक् एक एक भावना दे कर सुखालें।

शैलज शुद्धि.

शैलजको कांजीमें पका कर (जलसे धो कर) मन्दाग्नि पर भून लें तत्पश्चात् उसे थोड़ी देर तक गुड़मिश्रित हर्रके काथ में भिगो कर सुखा लें और फिर उसे सुगन्धित फूलोंके बीचमें रख कर अधिवासित (सुगन्धित) बना लें।

खट्टाशी (जुन्द बेदस्तर) का शोधन.

खट्टाशी के नाफे (नाभि गोलक) के ऊपर अपामार्ग (चिरचिटे) के क्षार और स्नुही (थोहर) के क्षार इत्यादि क्षारोंका लेप करके उसे जलवाष्प द्वारा (वचा शोधन विधिमें कथित रीति से) स्वेदित करें। तदनन्तर उसके बालोंको साफ करदें और दोलायन्त्र विधि से पंचपल्लव काथमें पकावें।

ये दोनों (महा सुगन्धि तथा लक्ष्मी विलास) तैल वात विकारों को अत्यन्त शीघ्र नष्ट करके

इसके पश्चात् उसे अच्छी तरह निचोड़ें कि जिससे वह स्नेहरहित हो जाए। अब इसे बकरीके मूत्र और सहिंजने को छालके काथकी अनेक (३ या ७) भावनाएं दें। तदनन्तर उसे सहिंजनेकी जड़के कल्ककी (लुगदी) के बीचमें रखकर उसके ऊपर केवड़े के फूलों की पत्तियां लपेट कर पुट-पाक विधि से पकावें अर्थात् कुशसे लपेट कर उसके ऊपर आध अंगुल मोटा मिट्टीका लेप करदें; और सुखाकर कण्डोंकी निर्धूम अग्निमें दबा दें। जब ऊपरकी मिट्टी लाल हो जाए तो ठण्डा करके उसमें से खट्टाशीको निकाल लें। इसप्रकार शुद्ध की हुई खट्टाशीमें कस्तूरीके समान गन्ध आने लगती है।

शिलारस आदिका शोधन--तुरुष्क (शिलारस) को शहदकी भावना देनेसे; केसरको घृतकी; अगरको केसरके पानीकी; गठीवनको गोमूत्रकी; और सौंफको मधुमिश्रित जलकी भावना देनेसे ये शुद्ध हो जाते हैं।

कस्तूरीकी परीक्षा—जिस कस्तूरीमें सुगन्धके पश्चात् ज़रा एक क्षार जैसी गन्ध आती हो, जलानेसे जो बिल्कुल राख न हो जाय, रंगमें पीली हो और जिसकी गंध केवड़े के फूलकी गन्ध के समान हो, जो वज़नमें हल्की और स्निग्ध हो वह उत्तम होती है।

कपूर—पक्व कपूरकी अपेक्षा अपक्व श्रेष्ठ होता है और उसमें भी जिसके दल बड़े बड़े और बिल्लौरके समान स्वच्छ हों वह अत्युत्तम होता है।

जो पक्व कपूर दलदार, स्निग्ध, हरे रंगकी झलक लिए हो और तोड़ने से जिसके कण न झड़ें वह भी उत्तम होता है।

उत्तम कूठ आदिकी पहचान--जो कुष्ठ (कूठ) हरिन के सींग के समान (कठोर और भारी) हो वह उत्तम होता है। जिस चन्दनका रंग रक्ताभा (ललाई) लिये हुए पीला हो वह उत्तम होता है। कौवेकी चोंचके समान एवं स्निग्ध और भारी अगर उत्तम माना जाता है। (उत्तम अगर लोहेके समान पानीमें डूब जाता है।)

उत्तम केसर आदि के लक्षण.

जिस केसरके फूलमें केसर थोड़ी और स्निग्ध हो वह उत्तम मानी जाती है। खट्टाशीका गोल और मांसल होना श्रेष्ठताका लक्षण है। **मुरामांसी** पीले रंगकी और जटामांसी (बालछड़) पिंगल वर्ण वाली एवं जटाके समान उत्तम मानी जाती है।

उत्तम रेणुकादिके लक्षण।

जिसके दाने मूंगके बराबर हों वह उत्तम होती है। (मरिचके समान बड़े दानों वाली और गन्ध रहित रेणुका निकृष्ट होती है)। आनूप (जलके समीपवर्ती) प्रदेशों में उत्पन्न नागरमोथा उत्तम होता है।

जो जायफल शब्दयुक्त स्निग्ध और भारी हो उसे श्रेष्ठ समझना चाहिए।

श्रेष्ठ इलायची आदिके लक्षण।

छोटे फल वाली इलायची, और श्याम तथा किंचित पाण्डु वर्ण वाली प्रियंगु उत्तम होती है।

नखी नामक गन्ध द्रव्य वह अच्छा होता है

पुष्टि, कान्ति, मेधा, धृति और बुद्धि का विकास करते हैं।

(५३०९) मागध्याद्यं तैलम्

(ग. नि. । तैला. २; सु. स. । चि. अ. ८)

मागधी मधुकं रोध्रं कुष्ठमेला हरेणवः ।
समङ्गा धातकी चैव सारिवा रजनीद्वयम् ॥
प्रियङ्गवः सर्जरसः पद्मकं पद्मकेशरम् ।
मातुलुङ्गस्य पत्राणि[1] मधूच्छिष्टं ससैन्धवम् ॥
एतत्सम्भृत्य सम्भारं तैलं धीरो विपाचयेत् ।
एतद्धि गण्डमालासु मण्डलेष्वथ मेहिषु ॥
रोपणार्थे हितं तैलं भगन्दरविनाशनम् ॥

कल्क-पीपल, मुलैठी, लोध, कूठ, छोटी इलायची, रेणुका, मजीठ, धायके फूल, सारिवा, हल्दी, दारुहल्दी, फूलप्रियङ्गु, राल, पद्माक, कमलकेसर, बिजौरेके पत्ते, मोम और सेंधा नमक सब समान भाग मिश्रित ४० तोले (प्रत्येक २। तोले) ले कर सबको एकत्र कूट लें।

४ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और १६ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें। यह तेल गण्डमाला, प्रमेह-पिडिका और भगन्दरको नष्ट करता है।

जिसका आकार घोड़ेके खुर अथवा हाथीके कानके समान हो।

इन तथा अन्य औषधियोंकी उत्तमता उनकी नवीनता पर विशेष निर्भर होती है।

१ सुधावचालाङ्गलकीमिति पाठान्तरम् ।

(५३१०) मार्कवतैलम्

(वृ. मा. । क्षुद्ररोगा.)

क्षीरात्समार्कवरसाद् द्वे प्रस्थे मधुकोत्पले ।
तैलस्य कुडवं पक्वं तन्नस्यं पलितापहम् ॥

आधा सेर तिलके तेलमें २ सेर गोदुग्ध और २ सेर भंगरेका रस तथा १० तोले मुलैठीका कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे पलित रोग नष्ट होता है।

(५३११) मालत्यादितैलम्

(वृ. मा.; र. र.; भै. र.; च. द.; धन्व. । क्षुद्ररोगा.; वा. भ. । उ. अ. २४)

मालतीकरवीराग्निनक्तमालैर्विपाचितम् ।
तैलमभ्यञ्जने शस्तमिन्द्रलुप्तापहं परम् ॥
इदं हि त्वरितं हन्ति दारुणं नियतं नृणाम् ॥

चमेली, कनेर, भिलावा और करंजफल के कल्क तथा क्वाथसे सिद्ध तैलकी मालिश से इन्द्रलुप्त (गंज) और दारुण नामक रोग अवश्य और शीघ्र नष्ट हो जाता है।

क्वाथार्थ-प्रत्येक वस्तु १ सेर, पाकार्थ जल ३२ सेर। शेष क्वाथ ८ सेर।

कल्कार्थ-प्रत्येक वस्तु ५ तोले। तेल २ सेर।

(५३१२) माषतैलम् (१)

(च. द. । वातव्या.)

माषात्मगुप्तातिविषोरुबूक-
रास्नाशताह्वालवणैः सुपिष्टैः ।

चतुर्गुणे माषबलाकषाये
तैलं कृतं हन्ति च पक्षवातम् ॥

क्वाथ—उड़द और खरैटीकी जड़ २-२ सेर लेकर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—उड़द, कौंचके बीज, अतीस, एरण्ड-मूल, रास्ना, सोया और सेंधानमक सब समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको एकत्र कूट लें।

२ सेर तैलमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल पक्षाघातको नष्ट करता है।

(५३१३) माषतैलम् (२)

(भै. र.; च. द.; धन्व. । वातव्या.)

माषप्रस्थं समावाप्यं पचेत् सम्यक् जलाढके।
पादशेषे रसे तस्मिन् क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ॥
प्रस्थश्च तिलतैलस्य कल्कं दत्त्वाक्षसम्मितम्।
जीवनीयानि यान्यष्टौ शतपुष्पां ससैन्धवाम् ॥
रास्नात्मगुप्तामधुकं बलाव्योषत्रिकण्टकम्।
पक्षाघातार्दिते वाते कर्णशूले च दारुणे ॥
मन्दश्रुतौ चाश्रवणे तिमिरे च त्रिदोषजे।
हस्तकम्पे शिरःकम्पे विश्वाच्यामपबाहुके ॥
शस्तं कलायखञ्जे च पानाभ्यञ्जनबस्तिभिः।
माषतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥

क्वाथ—१ सेर उड़दोंको कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें। जब २ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, सोया, सेंधा-नमक, रास्ना, कौंचके बीज, मुलैठी, खरैटी, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और गोखरु १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र कूट लें।

२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल पक्षाघात, अर्दित, भयंकर कर्णशूल, मन्दश्रवण, वधिरता, त्रिदोषज तिमिर, हस्तकम्पन, शिरोकम्प, विश्वाची, अपबाहुक, कलायखञ्ज और ऊर्ध्वजत्रुगत रोगोमें अत्युपयोगी है।

इसे पान, अभ्यंग और बस्तिद्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

(५३१४) माषतैलम् (बृहत्) (३)

(ग. नि. । तैला. २)

प्रस्थे द्वे खण्डमाषाणां क्वाथयेत्सलिलार्मणे।
चतुर्भागावशेषेण तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
मस्तुनस्त्वाढकं दत्त्वा तत्समं चाम्लकाञ्जिकम्।
औषधानि च पेष्याणि तत्रेमानि प्रदापयेत् ॥
सैन्धवं मदनं रास्ना शताह्वा त्र्यूषणं वचा।
तगरं चोरबुकं च मञ्जिष्ठा पद्मकेशरम् ॥
बला गोक्षुरकं पाठा सरलं देवदारु च।
साजगन्धाऽश्वगन्धा च पुष्करं सपुनर्नवम् ॥
एतानि चाक्षमात्राणि कल्कीकृत्य प्रयोजयेत्।
नस्ये पाने तथाऽभ्यङ्गे बस्तिकर्मणि योजयेत् ॥
अर्दितं कर्णशूलं च मन्यास्तम्भं हनुग्रहम्।
बाधिर्यं पक्षघातं च गृध्रसीं खञ्जपङ्गुलम् ॥

सर्वानेतान् जयेच्छीघ्रं वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
माषतैलमिदं नाम्ना सर्ववातविकारनुत ॥

२ सेर उड़दों को कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें । तदनन्तर २ सेर तिलके तेलमें यह क्वाथ, ८ सेर मस्तु (दहीमें उसके बराबर पानी मिला कर बनाया हुआ तक्र) ८ सेर कांजी और निम्नलिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

कल्क–सेंधा नमक, मैनफल, रास्ना, सोया, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, बच, तगर, अरण्डमूल, मजीठ, कमलकेसर, खरैटी, गोखरु, पाठा, सरलकाष्ठ (चीड़का बुरादा), देवदारु, अजमोद, असगन्ध, पोखरमूल और पुनर्नवा १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र कूट लें ।

इसे नस्य, पान, अभ्यंग और बस्तिकर्म द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये ।

यह तेल अर्दित (लकवा), कर्णशूल, मन्यास्तम्भ, हनुग्रह, बधिरता, पक्षाघात, गृध्रसी, खञ्जता और पङ्गुता इत्यादि समस्त विकारों को नष्ट करता है ।

(५३१५) माषतैलम् (स्वल्प) (४)

(च. द. । वातव्या.)

तैलं सङ्कुचितेऽभ्यङ्गो माषसैन्धवसाधितम् ।
बाहुशीर्षगते नस्यं पानं चौत्तरभक्तिकम् ॥
क्वाथोऽत्र माषनिष्पाद्यः सैन्धवं कल्कमेव च ॥

४ सेर उड़दोंको कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें । तदनन्तर २ सेर तिलके तेलमें यह क्वाथ और २० तोले सेंधानमकका चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें ।

यदि वायुसे कोई अङ्ग संकुचित हो गया हो तो इस तेलकी मालिश करनी चाहिये और बाहु तथा शीर्षगत वात-व्याधिमें इसकी नस्य लेनी और पान कराना चाहिये ।

(५३१६) मांसीतैलम्

(ब. से. । क्षुद्ररोगा.)

मांसीस्वरससंसिद्धं कटुतैलं चतुष्पलम् ।
मनःशिला तथा मांसी राजीवजश्च गन्धकम् ॥
शाणमात्रैस्तदभ्यङ्गाद्धन्त्यवश्यमरूंषिकाम् ।
पामां विचर्चिकाञ्चैव तथान्याञ्छिरसोत्रणान् ॥

जटामांसीका स्वरस (या क्वाथ) २ सेर, सरसोंका तैल आधा सेर और मनसिल, जटामांसी, कमलगट्टा तथा गन्धकका चूर्ण ५-५ माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें । यह तैल अरुंषिका (सिरकी छोटी छोटी फुंसियां) को नष्ट करता है ।

(५३१७) मिश्याद्यं तैलम्

(ग. नि. । अजीर्णा.)

मिशिं मधूच्छिष्टमरुष्करं च
ससैन्धवं क्षारमथाम्लवृक्षम् ।
तैलं विपक्वं मधुशुक्तयुक्तं
खल्लीं प्रवृद्धां शमयेद्धिसद्यः ॥

३ सेर तिलके तेलमें १२ सेर मधुशुक्त तथा ५-५ तोले सौंफ, मोम, भिलावा, सेंधानमक,

जवाखार और तिन्तड़ीक का कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे खल्ली (हैजे इत्यादि में होने वाली हाथ पैरोंकी ऐंठन) तुरन्त शान्त हो जाती है।

('मधुशुक्त' बनानेकी विधि "मकारादि आसवारिष्ट प्रकरण" में देखिये।)

मिश्रकस्नेहः

(यो. त. । तं. ४६; बृ. यो. त.; यो. र.)

भा. भै. र. भाग ३ प्रयोग संख्या २४५९ "त्रिवृतादि मिश्रक स्नेह" देखिये।

(५३१८) मुण्डीतैलम्

(र. र. । स्त्री रोगा.)

मुण्डीमूलं दशपलं जले पच्याच्चतुर्गुणे।
अर्द्धशेषं हरेत्क्वाथं क्वाथार्द्धं तिलतैलकम् ॥
तैलशेषं भवेत्तच्च नस्ये पाने च दापयेत्।
पतितं यौवनं स्त्रीणां मासादुत्तिष्ठते स्वयम् ॥

५० तोले मुण्डीकी जड़को कूट कर ४०० तोले (५ सेर) पानीमें पकावें। जब २॥ सेर पानी शेष रह जाए तो छान लें।

१। सेर तिलके तैलमें यह क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य देने और इसे पिलानेसे १ मास में स्त्रियोंके शिथिल स्तन स्वयमेव ही कठोर हो जाते हैं।

(५३१९) मुस्तकादितैलम्

(व. से. । नेत्ररो.)

मुस्ता तेजोवती पाठा कट्फलं कटुका वचा।
सर्षपा पिप्पलीमूलं पिप्पली सैन्धवाग्निकौ ॥
तुत्थं करञ्जबीजञ्च लवणं भद्रदारु च।
एतैः कृतं कषायञ्च कवले तच्च धारयेत् ॥
हितं शिरोविकारे च तैलमेभिर्विपाचयेत् ॥

नागरमोथा, मालकंगनी, पाठा, कायफल, कुटकी, बच, सरसो, पीपलामूल, पीपल, सेंधानमक, चीतामूल, नीलाथोथा, करञ्जबीज, सेंधा नमक और देवदारु समान भाग लेकर, सबको अधकुटा करके ८ गुने पानीमें पकावें। जब चौथा भाग शेष रह जाए तो छान लें।

इस क्वाथके कवल धारण करने अथवा इन्हीं ओषधियोंसे सिद्ध तेलकी मालिश करनेसे शिरोरोग (प्रतिश्याय) नष्ट होता है।

क्वाथार्थ—प्रत्येक ओषधि ३२ तोले, जल ४८ सेर, शेष १२ सेर।

कल्कार्थ—प्रत्येक ओषधि २ तोले।

तेल—३ सेर

(५३२०) मूलकाद्यं तैलम् (१)

(च. द. । वातव्या.; च. स.)

मूलकस्वरसं तैलं क्षीरदध्यम्लकाञ्जिकम्।
तुल्यं विपाचयेत्कल्कैर्बलाचित्रकसैन्धवैः ॥
पिप्पल्यतिविषारास्नाचविकागुरुचित्रकैः।
भल्लातकवचाकुष्ठश्वदंष्ट्रा विश्वभेषजैः ॥
पुष्कराह्वशठीबिल्वशताह्वानतदारुभिः।
तत्सिद्धं पीतमत्युग्रान्हन्ति वातात्मकान्गदान् ॥

कल्क–खरैंटीकी जड़, चीतामूल, सेंधानमक, पीपल, अतीस, रास्ना, चव, अगर, चीतामूल, (पाठ भेदके अनुसार सहंजनेकी जड़), भिलावा, बच, कूठ, गोखरु, सोंठ, पोखरमूल, कचूर, बेलकी छाल, सोया, तगर और देवदारु। प्रत्येक २ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

४ सेर तिलके तेलमें ४ सेर मूलीका रस, ४ सेर गोदुग्ध, ४ सेर खट्टी दही, ४ सेर कांजी और ऊपर लिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसे पीनेसे अत्यन्त प्रबल वातव्याधियां भी नष्ट हो जाती हैं।

(५३२१) मूलकाद्यं तैलम् (२)

(व. से. । वातव्या.; ग. नि. । तैला. २)

वातमूलकमापीडय तैलं दध्याम्लकाञ्जिकम् ।
क्षीरञ्चैवाढकं दद्यात्पचेत्कल्कैः पलोन्मितैः ॥
रास्नाभल्लातकं शिग्रु सैन्धवं गजपिप्पली ।
बलाचातिबलाशुण्ठी पिप्पली चित्रकं वचा ॥
श्वदंष्ट्रा चेति तत्पक्वं वातश्लेष्मामयापहम् ।
व्रध्मगृध्रसीपङ्गुत्वं खञ्जं वै सापतानकम् ॥
कट्युरुस्तम्भनं शोषं पर्वस्तम्भप्रकम्पनम् ।
हन्याद्गुल्मञ्च वातोत्थं बलवर्णाग्निवर्धनम् ॥
वन्ध्यानां पुत्रदञ्चैव तैलं मूलकसाह्वयम् ॥

द्रव पदार्थ–छोटी (कच्ची) मूलीका स्वरस ८ सेर, खट्टा दही ८ सेर, कांजी ८ सेर और दूध ८ सेर।

कल्क–रास्ना, भिलावा, सहंजनेकी छाल, सेंधानमक, गजपीपल, खरैंटी, अतिबला (कंघी), सोंठ, पीपल, चीतामूल, बच और गोखरु। प्रत्येक ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

८ सेर तेलमें उपरोक्त द्रव पदार्थ तथा कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल वातकफज रोगोंको नष्ट करता है। इसकी मालिशसे व्रध्म, गृध्रसी, पंगुता, खञ्जता, अपतानक, कटिस्तम्भ, उरुस्तम्भ, शोष, सन्ध्य-स्तम्भ, प्रकम्पन और वातज गुल्म नष्ट होता तथा वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

इसके प्रभावसे वन्ध्या स्त्रीको पुत्र प्राप्त हो सकता है।

(५३२२) मृणालादितैलम्

(रा. मा. । स्त्रीरो.; यो. त. । त. ७६.)

मृणालपद्मोत्पलबीजयुक्तं
तैलं तथोशीरयुतं विपक्वम् ।
पैच्छिल्यशैथिल्यविगन्धतादि
नाशं करोति स्मरमन्दिरस्य ॥

मृणाल (कमल नाल), पद्म, कमलगट्टा और खसके कल्क तथा क्वाथसे सिद्ध तैल योनिकी पिच्छिलता (चिपचिपाहट), शिथिलता और दुर्गन्धी को नष्ट करता है।

कल्कार्थ–प्रत्येक वस्तु २॥ तोले।

क्वाथार्थ–प्रत्येक वस्तु आधा सेर। पाकार्थ जल १६ सेर। शेष क्वाथ ४ सेर। तेल १ सेर।

(५३२३) मेध्याविकतैलम्

(व. से. । क्षुद्ररोगा.)

मूलकं बीजमुद्धृत्य चोन्मत्तकदलानि तु ।
सूर्य्यावर्त्तशुकाख्याश्च मेध्यावीरसपाचितम् ॥
तैलं मेध्याविकं नाम वराहद्विजनाशनम् ।
कण्डूकुष्ठप्रशमनं कृच्छ्रं दद्रुविनाशनम् ॥
बलवर्णकरश्चैव कृष्णात्रेयेण भाषितम् ॥

मूलीके बीज, धतूरेके पत्ते, हुलहुल, शुकनासा (कौंचके बीज) और ब्राह्मी १-१ सेर लेकर, सबको अधकुटा करके ४० सेर पानीमें पकावें। जब १० सेर पानी शेष रहे तो छान लें। इसमें २॥ सेर तेल मिलाकर पुनः पकावें और पानी जल जाने पर तेलको छान लें।

यह तेल शूकरदंष्ट्रा (भगन्दरवत् रोग विशेष), खुजली, कुष्ठ, और दादको नष्ट करके बल वर्णकी वृद्धि करता है।

(५३२४) मेषरोममषीतैलयोगः

(व. से. । नाडीव्रणा.)

मेषरोममषी तस्यां कटुतैलविपाचितम् ।
नाडीव्रणं चिरोद्भूतं जयेत्तूलकसङ्गमात् ॥

कड़वे तेलमें भेड़के बालोंकी स्याही (अध जली राख) पकाकर सुरक्षित रक्खें। इस तेलमें रुईकी बत्ती भिगोकर नाड़ीव्रण (नासूर) में भरनेसे पुराना नासूर भी शीघ्र ही भर जाता है।

(५३२५) मेषशृङ्गीतैलम्

(सु. स. । चि. अ. ९)

तत्रप्रथममेव कुष्ठिनं स्नेहपानविधानेनोपपादयेत्। मेषशृङ्गीश्वदंष्ट्रासार्ङ्गेष्टागुडूचीद्विपञ्चमूलीसिद्धं तैलं घृतं वा वातकुष्ठिनां पानाभ्यङ्गयोर्विदध्यात्।

मेंढासिंगी, गोखरु, करञ्जफल, गिलोय और दशमूलकी प्रत्येक वस्तु समान भाग लेकर उनके क्वाथ तथा कल्कसे तैल या घृत सिद्ध करें।

क्वाथार्थ—सब चीजें समान भाग मिश्रित ७ सेर (प्रत्येक आधा सेर), जल ५६ सेर, शेष क्वाथ १४ सेर।

कल्कार्थ—प्रत्येक वस्तु २॥ तोले। (सब मिलित ३५ तोले) घी या तेल—३॥ सेर।

प्रथम कुष्ठीको स्नेह पानादि कराके यह घृत खिलावें और इस तेलकी मालिश करावें। इससे वात कुष्ठ नष्ट होता है।

(५३२६) मेहमिहिरतैलम्

(धन्व. । प्रमेह.)

पञ्चमूल्यमृताधात्रीदाडिमानां तुलां पचेत् ।
जलद्रोणे स्थिते पादे तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
क्षीरं तैलसमं कल्कान् भूनिम्बगोक्षुरम् ।
दाडिमं रेणुकं बिल्वं दारुदार्वीबलाह्वकान् ॥
त्रिफला तगरं द्राक्षा जम्ब्वाम्रवल्कलाभयात् ।
नाम्नेदं मेहमिहिरं सर्वमूत्रामयान् जयेत् ॥
हस्तपादशिरोदाहं दौर्बल्यं कृशतां तथा ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्राः स्त्रीक्षीणाश्चापि ये नराः॥
तेषां बल्यकरं वृष्यं वयः स्थापनमेव च ॥

शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला और गोखरु तथा गिलोय, आमला और अनारकी छाल प्रत्येक ६२॥ तोले (१२॥ छटांक) लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। २ सेर तेलमें यह क्वाथ, २ सेर दूध और निम्नलिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—नीमकी छाल, चिरायता, गोखरु, अनार, रेणुका, बेलकी छाल, देवदारु, दारुहल्दी, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, तगर, मुनक्का, जामनकी छाल, आमकी छाल और हर्र। सब समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

यह तेल समस्त मूत्ररोग; हाथ, पैर और सिरकी दाह, दुर्बलता तथा कृशताको नष्ट करता है।

क्षीणेन्द्रिय, नष्ट-शुक्र और अधिक स्त्री समागम के कारण क्षीण हुए पुरुषोंके लिये यह तैल बल्य, वृष्य और आयु स्थापक है।

इति मकारादितैलप्रकरणम्।

अथ मकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(५३२७) मण्डूरारिष्टः

(र. का. धे.; यो. र.। कामला; ग. नि.। आसवा.)

मण्डूरस्य तु शुद्धस्य तुलार्धं परिकल्पितम्।
तद्वल्लोहस्य पत्राणि तिलोत्सेधप्रमाणतः॥
गुडाजीर्णात्तु पंचाशत् कोलप्रस्थत्रयं तथा।
निकुम्भचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते॥
पिप्पलीनां विडङ्गानां कुडवं कुडवं पृथक्।
त्रींश्चापि त्रिफला प्रस्थान् जलद्रोणे समावपेत्॥
अर्धमासस्थितो धान्ये पेयोरिष्टः प्रमाणतः।
ऊर्ध्वाधोदोषनिर्हन्ता पाण्डुरोगं नियच्छति॥
कृमीनर्शांसि कुष्ठं च कासश्वासकफामयान्।
एषोऽरिष्टस्तु माण्डूरः शोफपाण्ड्वामयापहः॥

शुद्ध मण्डूर ३ सेर १० तोले, शुद्ध लोहचूर्ण ३ सेर १० तोले, पुराना गुड़ ३ सेर १० तोले, बेरीकी जडकी छाल ३ सेर; दन्तीमूल और चीतेकी जड़ १०-१० तोले; पीपल और बायबिडंग २०-२० तोले और हर्र, बहेड़ा तथा आमला १-१ सेर लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूटकर सबको ३२ सेर पानीमें मिलाकर चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके उसे अनाजके ढेरमें दबा दें और १५ दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

यह अरिष्ट (आसव) उर्ध्व तथा निम्न दोषनाशक है एवं पाण्डु, कृमि, अर्श, कुष्ठ, खांसी, श्वास, कफरोग, और शोथका नाश करता है।

(५३२८) मधुशुक्तयोगः

(वं. से.; ग. नि.; यो. र.। कर्णरो.)

जम्बीराणां फलरसः प्रस्थैकः कुडवोन्मितम्।
माक्षिकं तत्र दातव्यं पिप्पली च पलोन्मिता॥
घृतभाण्डे विनिःक्षिप्य धान्यराशौ निधापयेत्।
मासेन तज्जातरसं मधुशुक्तमुदाहृतम्॥

जम्बीरी नीबूका रस २ सेर, शहद आधा सेर और पीपलका चूर्ण ५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर घृतके पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके उसे अनाजके ढेरमें दबा दें और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें।

इसको मधुशुक्त कहते हैं।

(यह क्षारतैल में पड़ता है।)

(५३२९) **मध्वरिष्टः**

(च. स. । चि. अ. १५ ग्रहणी.; वं. से. । ग्रहणी.)

नवे पिप्पलिमध्वाक्ते कलसेऽगुरुधूपिते ।
मध्वाढकं जलसमं चूर्णानीमानि दापयेत् ॥
कुडवार्धं विडङ्गानां पिप्पल्याः कुडवं तथा ।
चतुर्थकांशां त्वक्क्षीरीं केशरं मरिचानि च ॥
त्वगेलापत्रकशटीक्रमुकातिविषाघनम् ।
हरेण्वेलुकतेजोह्वापिप्पलीमूलचित्रकान् ॥
कार्षिकांस्तान् स्थितं मासमत ऊर्ध्वं प्रयोजयेत् ।
मन्दं सन्दीपयत्यग्निं करोति विषमं समम् ॥
हृत्पाण्डुग्रहणीरोगकुष्ठार्शःश्वयथुज्वरान् ।
वातश्लेष्मामयांश्चान्यान्मध्वरिष्टो व्यपोहति ॥

शहद ८ सेर, पानी ८ सेर, बायबिड़ंग १० तोले, पीपल २० तोले तथा बंशलोचन, नागकेसर और काली मिर्च ५-५ तोले एवं दालचीनी, इलायची, तेजपात, कचूर, सुपारी, अतीस, नागरमोथा, रेणुका, एलबालुक, तेजबल, पीपलामूल और चीतामूल १।-१। तोला लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूट लें और फिर शहदमें पीपलका चूर्ण मिलाकर एक नये मटकेमें लेप कर दें तथा उसे अगरकी धूनी दे कर उसमें उपरोक्त समस्त चीजें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और एक मास पश्चात् छानकर काममें लावें ।

इसे सेवन करनेसे मन्दाग्नि, प्रदीप्त और विषमाग्नि समान हो जाती है । इसके अतिरिक्त यह अरिष्ट (आसव) हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणी दोष, कुष्ठ, अर्श, ज्वर, शोथ और अन्य वातकफज रोगोंको भी नष्ट करता है ।

(५३३०) **मध्वासवः** (१)

(च. सं. । चि. अ. १५ ग्रहणी.; वा. भ. । चि. अ. १०; वं. से. । ग्रहणी.)

द्रोणं मधूकपुष्पाणां विडङ्गानां ततोऽर्धतः ।
चित्रकस्य ततोऽर्धं स्यात् तथा भल्लातकाढकम् ॥
मंजिष्ठा त्रिपलं चैव त्रिद्रोणेऽपां विपाचयेत् ।
द्रोणशेषे तु तच्छीतं मध्वर्धाढकसंयुतम् ॥
एलामृणालागुरुभिश्चन्दनेन च रूषिते ।
कुम्भे मासस्थितं जातमासवं तं प्रयोजयेत् ॥
ग्रहणीं दीपयत्येष बृंहणः कफपित्तजित् ।
शोथं कुष्ठं किलासं च प्रमेहांश्च प्रणाशयेत् ॥

महुवेके फूल १६ सेर, बायबिड़ंग ८ सेर, चीतामूल ४ सेर, शुद्ध भिलावा ४ सेर और मजीठ १५ तोले (वाग्भटके मतानुसार ४० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ९६ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी रहने पर छानकर, ठण्डा करके, उसमें ४ सेर शहद मिलादें और एक मटकेमें इलायची, खस, अगर और सफेद चन्दनका लेप करके उसमें इसे भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें । तथा १ मास पश्चात् निकालकर छान लें ।

यह आसव ग्रहणीको दीप्त करता तथा कफ, पित्त, शोथ, कुष्ठ, किलास और प्रमेहका नाश करता एवं कामशक्तिको बढ़ाता है ।

(५३३१) **मध्वासवः** (२)

(चरक । चि. अ. ७ कुष्ठ.)

खदिरसुरदारुसारं श्रपयित्वा तद्रसेन तोयार्थम् ।
क्षौद्रप्रस्थे कार्यः कार्ये ते चाष्टपलिके च ॥

तत्रायश्चूर्णानामष्टपलं प्रक्षिपेत्तथाऽमूनि ।
त्रिफलैले त्वङ्मरिचं पत्रं कनकं च कर्षांशम् ॥
मत्स्यण्डिका मधुसमा तन्मासमायसे भाण्डे ।
मध्वासवमाचरतः कुष्ठकिलासे शमं यातः ॥

खैरसार और देवदारु सार आधा आधा सेर लेकर दोनोंको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें २ सेर शहद और १ सेर खांड, ४० तोले लोहचूर्ण (भस्म) और १।-१। तोला हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची, दालचीनी, काली मिरच, तेजपात और धतूरेका चूर्ण मिलाकर सबको लोह पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १ मास पश्चात् छान लें ।

इसके सेवनसे कुष्ठ और किलास का नाश होता है ।

(५३३२) मध्वासवः (३)

(गदनिग्रह । आसवा. ६)

विशालातिविषाभार्गीकुष्ठमुस्ताप्रियङ्गवः ।
विडङ्गत्रिफलाकृष्णचव्यग्रन्थिकदीप्यकाः ॥
अक्षांशान् सलिलद्रोणे पक्त्वा पादावशेषिते ।
दत्त्वा क्षौद्रं तदर्धं हि स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥
एष मध्वासवो हन्ति मेहं द्विपलयोगतः ॥

इन्द्रायणकी जड़, अतीस, भरंगी, कूठ, नागरमोथा, फूल प्रियङ्गु, बायबिडंग, त्रिफला, पीपल, चव, पीपलामूल और अजवायन १।-१। तोला लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें ४ सेर शहद मिलाकर सबको चिकने बरतनमें भरकर, उसका मुख बन्द करके रख दें, और १ मास पश्चात् निकाल कर छान लें । यह आसव प्रमेहको नष्ट करता है ।

मात्रा—१० तोले । (व्यवहारिक मात्रा—३-४ तोले ।)

(५३३३) मध्वासवः (लोध्रासव) (४)

(च. सं. । चि. अ. ६ प्रमेह.)

लोध्रं शठीं पुष्करमूलमेलां
मूर्वां विडङ्गं त्रिफलां यवानीम् ।
चव्यं प्रियङ्गुं क्रमुकं विशालां
किराततिक्तं कटुरोहिणीञ्च ॥
भार्गीं नतं चित्रकपिप्पलीनां
मूलं सकुष्ठातिविषं सपाठम् ।
कलिङ्गकान् केशरमिन्द्रसाह्वां
नखं सपत्रं मरिचं प्लवञ्च ॥
द्रोणेऽम्भसः कर्षसमानि पक्त्वा
पूते चतुर्भागजलावशेषे ।
रसेऽर्धभागं मधुनः प्रदाय
पक्षान्निधेयो घृतभाजनस्थः ॥
मध्वासवोऽयं कफपित्तमेहान्
क्षिप्रं विहन्याद् द्विपलप्रयोगात् ।
पाण्ड्वामयार्शांस्यरुचिं ग्रहण्या
दोषं किलासं विविधञ्च कुष्ठम् ॥

लोध, कचूर, पोखरमूल, इलायची, मूर्वा, बायबिडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजवायन, चव, फूलप्रियङ्गु, सुपारी, इन्द्रायणकी जड़, चिरायता, कुटकी, भरंगी, तगर, चीतामूल, पीपलामूल, कूठ, अतीस, पाठा, इन्द्रजौ, नागकेसर, इन्द्रायण, नखी,

तेजपात, काली मिरच और केवटीमोथा १।-१। तोला लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छानकर उसमें ४ सेर शहद मिलाकर सबको चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें। और १५ दिन पश्चात् निकालकर छान लें।

इसे १० तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे कफज और पित्तज प्रमेह तथा पाण्डु, अर्श, अरुचि, ग्रहणी, किलास कुष्ठ और अन्य अनेक प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा-३-४ तोले।)

(५३३४) मध्वासवः (५)

(वा. भ. । अ. १० ग्रहणी.; च. सं. । चि. अ. १९ ग्रहण्य.; वं. से. । ग्रहण्य.)

मधूकपुष्पस्वरसं शृतमर्द्धक्षयीकृतम् ।
क्षौद्रपादयुतं शीतं पूर्ववत्सन्निधापयेत् ॥
तत्पिबन्ग्रहणीदोषाञ्जयेत्सर्वान्हिताशनः ॥

१६ सेर महुवेके फूलोंके स्वरसको पकाकर आधा शेष रक्खें और फिर उसे ठण्डा करके उसमें २ सेर शहद मिलाकर चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें। इसे सेवन करने और पथ्य पालन करने से समस्त ग्रहणी विकार नष्ट होते हैं।

(५३३५) मस्त्वासवः

(गदनिग्रह । आसवा.)

वंशपत्रीप्रतीकाशमस्तु द्रोणे सुनिर्मले ।
क्षिपेद् गुडतुलां भाण्डे वचा कुष्ठविलेपिते ॥
तस्मिन् दद्यात्तु कृष्णायाः प्रस्थं प्रस्थत्रयं तथा ।
त्रिफलाया विडंगानां कुडवं मरिचस्य च ॥
काश्मरीफलमृद्वीकापरूषकफलानि च ।
वत्सकस्य च बीजानि समानि मरिचेन तु ॥
पञ्चमूलं च षड्ग्रन्थां दन्तीं चित्रकमेव च ।
द्वे द्वे पले च भल्लाताद्भिषक् समुपकल्पयेत् ॥
यवपल्ले स्थितः पेयोऽरिष्टो मात्रा बलं प्रति ।
पाण्डुरोगोदरे हन्ति ग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥
परं भगन्दरप्लीहशोषकासामयापहः ।
अग्निसन्दीपनः पथ्यो बाधिर्यस्थौल्यनाशनः ॥
मस्त्वासव इति ख्यातो लेखनो मेदुरे हितः ॥

३२ सेर अत्यन्त निर्मल और सफेद मस्तु (दहीका पानी) ले कर उस में ६। सेर गुड़ तथा १ सेर पीपल; १-१ सेर हर्र, बहेड़ा, आमला; २० तोले बायबिड़ंग, २० तोले काली मिर्च और २०-२० तोले खम्भारीके फल, मुनक्का, फालसेके फल और इन्द्रजौ तथा १०-१० तोले शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला (बनभंटा), गोखरु, पीपलामूल, दन्तीमूल, चीतामूल और शुद्ध भिलावा कूट कर मिलादें। फिर सबको बच तथा कूटके चूर्णका लेप किये हुवे मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और उसे अनाजके ढेरमें दबा दें तथा १ मास पश्चात् निकालकर छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे पाण्डु, उदररोग, ग्रहणी-विकार, अर्श, भगन्दर, प्लीहा, शोष, खांसी, आम, बधिरता और स्थूलताका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

(५३३६) महाद्राक्षासवः (१)

(योग चिन्तामणि । अ. ७)

द्राक्षायाश्च पलशतं सितायास्तच्चतुर्गुणम् ।
कर्कन्धूमूलं तस्यार्धं मूलार्धं धातुपुष्पको ॥
क्रमुकं च लवङ्गं च जातिपुष्पफलानि च ।
चातुर्जातं त्रिकटुकं मस्तकी करहाटकम् ॥
आकल्लकरभं कुष्ठं पलानि दश चाहरेत् ।
एभ्यश्चतुर्गुणतोयं भाण्डे चैव विनिःक्षिपेत् ॥
स्थापयेद् भूमिमध्ये तु चतुर्दशदिनानि च ।
ततो जातरसं शुद्धं क्षिपेत्कच्छपयन्त्रके ॥
धराधो निक्षिपेत्तस्य मृगनाभिं सकुङ्कुमम् ।
एतत्सिद्धं क्षिपेद्धीमान् काचभाण्डे निधापयेत् ॥
त्रिदिनेषु व्यतीतेषु तत्पेयं पलसंख्यया ।
मध्यान्हे द्विपलं ग्राह्यं सन्ध्याकाले चतुष्पलम् ॥
गरिष्ठस्निग्धमाहारं भक्षयेदस्य सेवकः ।
वीर्याभिवृद्धिः प्रभवेन्नराणां रामा सुवश्या ॥
एते धन्या मनुजा नरेन्द्रा द्राक्षासवं ये किल सेवयन्ति ॥

मुनक्का ६। सेर, मिसरी २५ सेर; बेरीकी जड़ ३ सेर १० तोले, धायके फूल १ सेर ४५ तोले तथा सुपारी, लौंग, जावत्री, जायफल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, सोंठ, मिर्च, पीपल, रूमीमस्तगी, धतूरा, अकरकरा और कूठ १०-१० पल (५०-५० तोले) ले कर सबको कूटकर सबसे ५ गुने पानीमें मिलादें और चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके उसे भूमिमें दबा दें एवं १४ दिन पश्चात् निकालकर उसका अर्क खींच लें। अर्क खींचते समय भबके (अर्कपातन यन्त्र) के मुखमें केसर और कस्तूरीकी पोटली लगा देनी चाहिये।

इसे अर्क निकालने के ३ बाद सेवन करना चाहिये। इसमेंसे २ पल दोपहरको और ४ पल शामको सेवन करने तथा गरिष्ठ और स्निग्ध आहार करनेसे अत्यन्त वीर्य वृद्धि होती है। इसके प्रभावसे मनुष्य अनेकों स्त्रियोंसे समागम कर सकता है।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ तोले।)

महाद्राक्षासवः (२)

प्रयोग संख्या ३१३२ "द्राक्षासव (महा) ५" देखिये।

(५३३७) माचिकासवः

(गदनिग्रह। आसवा.)

माचिकायाः शतार्धं तु द्रोणेऽपां च विपाचयेत्।
तस्मिंश्चतुर्थशेषे तु पूते शीते प्रदापयेत् ॥
गुडस्य द्विशतं दत्वा तत्सर्वं घृतभाजने ।
विडङ्गपिप्पलीकृष्णात्वगेलापत्रकेसरैः ॥
मरिचैश्च तथा चूर्णं सम्यक्कृत्वा विचक्षणः ।
क्षिपेच्च पालिकैर्भागैर्घटनीयं समन्ततः ॥
ततो यथाबलं पीत्वा कासश्वासगलामयान् ।
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रमुरःसन्धानकारकः ॥
माचिकासव इत्येष ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ।

३ सेर १० तोले मकोयको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें १२॥ सेर गुड़; १० तोले पीपलका चूर्ण तथा ५-५ तोले बायबिड़ंग, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर

और काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर सबको घृतसे चिकने किये हुवे मिट्टीके पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और फिर (१ मास पश्चात्) निकालकर छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे खांसी, श्वास, गलरोग, उग्र राजयक्ष्मा और उरःक्षतका नाश होता है।

(५३३८) मुस्तकारिष्टः

(भैषज्यरत्नावलि । अग्निमांद्य.)

मुस्तकस्य तुलाद्वन्द्वं चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ।
पादशेषे रसे तस्मिन् क्षिपेद् गुडतुलात्रयम् ॥
धातकीं षोडशपलां यमानीं विश्वभेषजम् ।
मरिचं देवपुष्पं च मेथीं वह्निं च जीरकम् ॥
पलयुग्ममितं क्षिप्त्वा रुद्धभाण्डे निधापयेत् ।
संस्थाप्य मासमात्रन्तु ततः संस्रावयेद्भिषक् ॥
अजीर्णमग्निमान्द्यञ्च विषूचीमपि दारुणाम् ।
ग्रहणीं विविधां हन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥

१२॥ सेर नागरमोथेको १२८ सेर पानीमें पकावें और जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो उसे छानकर उसमें १८॥ सेर गुड़; १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण तथा १०-१० तोले अजवायन, सोंठ, काली मिर्च, लौंग, मेथी, चीतामूल और जीरेका चूर्ण मिलाकर सबको चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और फिर १ मास पश्चात् निकालकर छान लें।

इसे सेवन करनेसे अजीर्ण, अग्निमांद्य, भयङ्कर विसूचिका और अनेक प्रकारके ग्रहणी रोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

मूलासवः

(च. सं. । चि. अ. १५ ग्रहणी; ग. नि. । आसवा. ६)

दश मूलासव सं. ३१२३ देखिये । उसमें क्वाथ्य ओषधियोंमें चीता पड़ता है परन्तु इसमें उसके स्थानमें जीरा पड़ता है तथा उसमें गुड़ केवल २० तोले पड़ता है जो उचित प्रतीत नहीं होता, परन्तु मूलासव के पाठमें गुड़ १२॥ सेर लिखा है और यही ठीक मालूम होता है। उसमें प्रक्षेप द्रव्योंका परिमाण ५-५ तोले लिखा है और मूलासवमें १०-१० तोले। तथा इसमें उसकी अपेक्षा नागरमोथा अधिक लिखा है। वस्तुतः वह 'दशमूलासव' इसीका रूपान्तर मालूम होता है।

(५३३९) मृगमदासवः

(र. रा. सु.; भै. र. । ज्वर.)

मृतसञ्जीवनी ग्राह्या पञ्चाशत् पलसम्मिताः ।
तदर्द्धं मधु सङ्ग्राह्यं तोयं मधुसमं तथा ॥
कस्तूरी कुडवं तत्र मरिचं देवपुष्पकम् ।
जातीफलं पिप्पलीत्वक् भागं द्विपलिकं क्षिपेत् ॥
भाण्डे संस्थाप्य रुध्वा च निदध्यान्मासमात्रकम्
विशूचिकायां हिक्कायां त्रिदोषप्रभवे ज्वरे ॥
वीक्ष्य कोष्ठबलं चैव भिषक् मात्रां प्रयोजयेत् ॥

मृतसञ्जीवनी सुरा (अथवा रेक्टी फाइड स्प्रिट) ५० पल (६। सेर), शहद ३ सेर १० तोले, पानी ३ सेर १० तोले, कस्तूरी २० तोले तथा काली मिर्च, लौंग, जायफल, पीपल और दालचीनीका चूर्ण १०-१० तोले लेकर प्रथम

कस्तूरीको सुरामें घोल लें और फिर सब चीज़ोंको कांचके पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें एवं एक मास पश्चात् निकालकर छान लें।

यह आसव विसूचिका, हिचकी और सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है।

(मात्रा-१५-२० बूंद ।)

(५३४०) **मृतसञ्जीवनीसुरा** (१)

(भैषज्य रत्नावली । ज्वरा.; र. रा. सु. । ज्वर ।)

गुडं द्रोणमितं ग्राह्यं वर्षादूर्ध्वं पुरातनम् ।
बावरीत्वचमादाय दापयेत्पलविंशतिम् ॥
दाडिमं वृषमोचश्च बरा क्रान्तारुणा तथा ।
अश्वगन्धा देवदारुबिल्वश्योनाकपाटलाः ॥
शालिपर्णी पृश्निपर्णी बृहतीद्वयगोक्षुरम् ।
बदरीन्द्रवारुणी चित्रं स्वयंगुप्ता पुनर्नवा ॥
एषां दशपलान् भागान् कुट्टयित्वा उदूखले ।
सुगम्भीरे च मृद्भाण्डे तोयमष्टगुणं क्षिपेत् ॥
गुडसंगोलनं कृत्वा एतैः सम्पूरयेद्बुधः ।
मुखे शरावकं दत्वा रक्षयेद्दिनविंशतिम् ॥
षोडसादिवसादूर्ध्वं द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
पूगप्रस्थद्वयं चात्र कुट्टयित्वा विनिः क्षिपेत् ॥
धुस्तूरं देवपुष्पं च पद्मकोशीरचन्दनम् ।
शतपुष्पा यमानी च मरिचं जीरकद्वयम् ॥
शठी मांसी त्वगेला च सजातीफलमुस्तकम् ।
ग्रन्थिपर्णी तथा शुण्ठी मेथी मेषी च चन्दनम् ॥
एषां द्विपलिकान् भागान् कुट्टयित्वा विनिक्षिपेत् ।
मृण्मये मोचिका यन्त्रे मयूराख्येऽपि यन्त्रके ॥
यथाविधि प्रकारेण चालनं दापयेद्बुधः ।
बुद्धिमान् सोजलं कृत्वा उद्धरेत् विधिवत्सुराम् ॥
एतन्मद्यं पिबेन्नित्यं यथाधातुवयः क्रमम् ।
देहदार्ढ्यकरं पुष्टिबलवर्णाग्निवर्धनम् ॥
सन्निपातज्वरे घोरे विषूच्याश्च मुहुर्मुहुः ।
शीते देहे प्रयोक्तव्यं मृतसञ्जीवनी सुरा ॥

१ सालसे अधिक पुराना गुड़ १६ सेर, कीकरकी छाल १। सेर तथा अनारकी बकली, बासा, मोचरस, त्रिफला, बड़ी इलायची, अतीस, असगन्ध, देवदारु, बेलछाल, अरलुकी छाल, पाढलकी छाल, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कटेली, कटेला (बनभंटा), गोखरु, बेरीकी छाल, इन्द्रायण-मूल, चीता, कौंचके बीज और पुनर्नवा (बिसखपरा) १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर गुड़के अतिरिक्त सब चीजोंको कूट लें और गुड़को सबसे १६ गुने पानीमें घोलकर उसमें अन्य सब चीजें मिलाकर सबको एक बड़े मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें। और १६ दिन पश्चात् उसका मुख खोलकर उसमें २ सेर सुपारी, तथा १०-१० तोले धतूरेकी जड़, लौंग, पद्माक, खस, सफेद चन्दन, सोया, अजवायन, काली मिरच, सफेद और काला जीरा, कचूर, जटामांसी, दालचीनी, इलायची, जायफल, नागरमोथा, ग्रन्थिपर्णी (गठिवन), सोंठ, मेथी, मेढासिंगी और लाल चन्दनका चूर्ण मिलाकर पुनः उसका मुख बन्द कर दें और (१५ दिन पश्चात्) मोचिका यन्त्र अथवा मयूरयन्त्र (भवके)से उसका अर्क खींच लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे देह दृढ़ होती और पुष्टि, अग्नि, वर्ण तथा बलकी वृद्धि होती है। सन्निपात ज्वर अथवा विसूचिकामें

शरीर ठण्डा हो जाय तो इसे थोड़ी थोड़ी देरमें बार बार पिलाना चाहिये ।

(५३४१) **मृतसञ्जीवनीसुरा** (२)

(नपुंसकामृता. । त. ९)

नवं गुडं च सङ्गृह्य शतमेकं पलं तथा ।
बर्बुरीत्वचं च सङ्गृह्य बदरीत्वचमेव च ॥
प्रस्थं प्रस्थं प्रदातव्यं पूगं देयं यथोचितम् ।
दत्त्वा लोध्रं च कुडवमार्द्रकं च पलद्वयम् ॥
तोयमष्टगुणं दत्त्वा गुडं संघोलयेत्सुधीः ।
प्रथमे चार्द्रकं दद्याद्द्वितीये बर्बुरीत्वचम् ॥
तृतीये बदरीं दत्त्वा गोलयित्वा भिषग्वरः ।
मुखे शरावकं दत्त्वा यत्नात्कृत्वा च बन्धनम् ॥
मुखं सम्बन्धनं कृत्वा स्थापयेद्दिनविंशतिम् ।
मृण्मये मोचिकायन्त्रे मयूराख्येऽपि यन्त्रके ॥
यथाविधि प्रकारेण मन्दमन्देन वह्निना ।
चुहूलीमध्ये निधातव्यं मृत्तिका दृढभाजने ॥
तदौषधं च तन्मध्ये समुद्धृत्य विनिःक्षिपेत् ।
नले च युगलं दत्त्वा कुम्भौ च गजकुम्भवत् ॥
कुम्भमध्ये निधातव्यं पूगं च शैलवालुकम् ।
देवदारुं लवङ्गं च पद्मकोशीरचन्दनम् ॥
शतपुष्पा यवानीका मरिचं जीरकद्वयम् ।
शठी मांसी त्वगेला च जातीफलसमुस्तकम् ॥
ग्रन्थिपर्णी तथा शुण्ठी मेथी मेषी च चन्दनम् ।
एषां चार्द्धपलान्भागान्कुट्टयित्वा विनिःक्षिपेत् ॥
यथाविधिप्रकारेण चालनं दापयेत्सुधीः ।
बुद्धिमान्सौजलं कृत्वा उद्धरेद्विधिवत्सुराम् ॥
एतन्मद्यं पिबेन्नित्यं यथाधातुवयःक्रमम् ।
आरोग्यजननं देहदार्ढ्यकृद्बलवर्द्धनम् ॥
धात्वग्निस्मृतिकृद्वीर्यशुक्रकृद्वातनाशनम् ।
बलपुष्टिकरं चैव कामदं दीपनं परम् ॥
दश स्त्री रमयेन्नित्यमानन्दमुपजायते ।
रणे तेजोमयः सद्यो यथा भीमपराक्रमः ॥

नवीन गुड़ ६। सेर, तथा बबूलकी छाल, बेरीकी छाल और सुपारी १-१ सेर एवं लोध २० तोले और अदरक १० तोले लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूट लें और अदरकको पत्थर पर पीस लें । तत्पश्चात् सबसे ८ गुने (१६ गुने) पानीमें प्रथम गुड़ घोलें और फिर उसमें क्रमशः अदरक, बबूलकी छाल, बेरीकी छाल तथा अन्य ओषधियां मिला दें और सबको चिकने मटकेमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें । एवं २० दिन पश्चात् निकालकर उसे मयूर यन्त्र अथवा मोचिका यन्त्र (भबके) में डालकर मन्दाग्नि पर अर्क खींचें । उस समय (अर्क खींचते समय) उसमें निम्न लिखित चीजोंका चूर्ण भी डाल देना चाहिये—

सुपारी, एलवालुक, देवदारु, लौंग, पद्माक, खस, सफेद चन्दन, सोया, अजवायन, काली मिरच, सफेद और काला जीरा, कचूर, जटामांसी, दारचीनी, इलायची, जायफल, नागरमोथा, गठौना, सोंठ, मेथी, मेढासिंगी और चन्दनका चूर्ण २॥-२॥ तोले ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे

स्वास्थ्यकी वृद्धि होती है। यह शरीरको दृढ़ करता, तथा बल, धातु, अग्नि, स्मृति और वीर्यको बढ़ाता एवं वायुको नष्ट करता है। अत्यन्त वाजीकरण है।

मृद्वीकासवः

(शा. ध. । खं. २ अ. १०.)

प्रयोग संख्या ३१३० द्राक्षासव (३) देखिये।

इति मकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम् ।

अथ मकारादिलेपप्रकरणम्

(५३४२) **मञ्जिष्ठादिलेपः** (१)

(वृ. मा. । श्लीपद.; व. से.; यो. र. । श्लीपद.)

मञ्जिष्ठां मधुकं रास्नां सहिंस्रां सपुनर्नवाम् ।
पिष्ट्वाऽऽरनालैर्लेपोऽयं पित्तश्लीपदशान्तये ॥

मजीठ, मुलैठी, रास्ना, जटामांसी और पुनर्नवाकी जड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे काञ्जीमें पीसकर लेप करनेसे पित्तज श्लीपद नष्ट होता है ।

(५३४३) **मञ्जिष्ठादिलेपः** (२)

(रा. मा. । विष.)

मञ्जिष्ठागजकेसरपत्रकरजनीप्रलेपिता लूता ।
नश्यति गण्डस्तु नृणां कृतेङ्गुदीत्वक्प्रलेपानाम् ॥

मजीठ, नागकेसर, तेजपात और हल्दी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसका लेप करनेसे मकड़ीका विष नष्ट होता है ।

हिंगोटकी छालका लेप करनेसे 'गलगण्ड' नष्ट हो जाता है।

(५३४४) **मदनफलादिलेपः**

(वृ. मा.; व. से. । शूलरोगा.)

नाभिलेपाज्जयेच्छूलं मदनः काञ्जिकान्वितः ।
जीवन्तीमूलकल्की वा सतैलः पार्श्वशूलहा ॥

मैनफलको काञ्जीमें पीसकर (गर्म करके) नाभिपर लेप करनेसे शूल नष्ट हो जाता है ।

जीवन्तीकी जड़को पीसकर तेलमें मिलाकर लेप करनेसे पसलीका शूल नष्ट होता है ।

(५३४५) **मदनादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र. । श्लीपद. क्षुद्र रो.)

मदनं च तथा सिक्थं सामुद्रलवणं तथा ।
महिषीनवनीतेन संतप्तं लेपने हितम् ॥
सप्ताहात्स्फटितौ पादौ जायेते कमलोपमौ ॥

१२ तोले भैंसके नवनीत (नौनी घी) को गरम करके उसमें १ तोला मोम मिला दें और जब वह पिघल जाए तो उसमें १-१ तोला मैनफल और समुद्र लवण का चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे निरन्तर १ सप्ताह तक लगानेसे दाह शान्त होती और फटे हुवे पैर कमलके समान हो जाते हैं।

(५३४६) **मदनादिलेपः** (२)

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११)

मदनस्य फलं तिक्तां पिष्ट्वा काञ्जिकवारिणा।
कोष्णं कुर्यान्नाभिलेपं शूलशान्तिर्भवेत्ततः ॥

मैनफल और कुटकीका समान भाग चूर्ण एकत्र मिला कर, उसे कांजीमें पीसकर, जरा गर्म करके नाभि पर लेप करनेसे शूल शान्त हो जाता है।

(५३४७) **मदनादिलेपः** (३)

(वै. जी । वि. ४)

मदनसैन्धव गुग्गुलगैरिका–
ज्यमधुवालकपङ्कविलेपनात् ।
स्फुटितमप्यखिलं चरणद्वयं
विकचतामरसप्रतिमं भवेत् ॥

मोम, सेंधानमक, गूगल, गेरु, और सुगन्धबाला (या खस) के चूर्ण को घी और शहदमें मिलाकर पैरों पर लेप करनेसे पैरोंकी बिवाई नष्ट होकर पैर कोमल हो जाते हैं।

(पहिले घीको गरम करके उसमें गूगल मिलावें, फिर मोम मिला दें तथा अन्तमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण और शहद मिलाकर खूब घोटें।)

(५३४८) **मधुकादिलेपः** (१)

(वृ. मा.; व. से. । क्षुद्ररो.)

मधुकेन्दीवरं मूर्वा तिलाज्यगोक्षीरभृङ्गलेपेन ।
अचिराद्भवन्ति केशा घनदृढमूलायता ऋजवः ॥

मुलैठी, स्थलपद्म, मूर्वा, तिल और भंगरेके समान–भाग–मिश्रित चूर्णको घी और दूधमें मिलाकर लेप करनेसे केश शीघ्रही घने, दृढ़, लम्बे और सीधे हो जाते हैं।

(५३४९) **मधुकादिलेपः** (२)

(ग. नि. । ज्वरा.)

मधुकं रजनी मुस्तं दाडिमं साम्लवेतसम् ।
अञ्जनं तिन्तिडीकं च नलदं पत्रमुत्पलम् ॥
त्वचं व्याघ्रनखं चैव मातुलुङ्गरसं मधु ।
दिह्यादेभिर्ज्वरार्तस्य मस्तुशुक्तयुतैः शिरः ॥
शिरोभितापसम्मोहवमिहिक्काप्रवेपनुत् ।
प्रदेहो नाशयत्येष ज्वरितानामुपद्रवान् ॥

मुलैठी, हल्दी, नागरमोथा, अनार, अम्लबेत, सुरमा, तिन्तड़ीक, खस, तेजपात, नीलोत्पल, दारचीनी और नखी नामक गन्ध द्रव्यके समान भाग मिश्रित चूर्णको शहद और बिजौरे नीबूके रसमें अथवा मस्तुशुक्तमें मिलाकर मस्तकपर लेप करनेसे शिरकी तपन, सम्मोह, वमन, हिक्का और कम्पन आदि ज्वरके उपद्रव शान्त हो जाते हैं।

(५३५०) **मधुकादिलेपः** (३)

(यो. र.; वृ. नि. र.; व. से. । मसूरिका.)

मधुकं त्रिफला मूर्वा दार्वीत्वङ् नीलमुत्पलम् ।
उशीरलोध्रमञ्जिष्ठाः प्रलेपाश्च्योतने हिताः ॥
नशयन्त्यनेन दृग्जाता मसूर्यो न भवन्ति च ॥

मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला, मूर्वा दारुहल्दीकी छाल, नीलोत्पल, खस, लोध और मजीठके समान भाग–मिश्रित चूर्णका (पानीमें पीसकर) लेप करने और इन्हीं ओषधियोंके जलको आंखमें डालनेसे आंखोपर निकली हुई मसूरिका नष्ट हो जाती है और नवीन नहीं निकलती।

(५३५१) मधुकादिलेपः (४)

(ग. नि. । प्रदरा.)

मधुकोत्पलबीजानि त्रपुषस्य शतावरी ।
विदारीमिक्षुमूलं च कल्कैर्धौतघृताप्लुतः ॥
योनौ शिरसि गात्रे च प्रदेहोऽसृग्दरापहः ॥

मुलैठी, नीलोत्पल, खीरेके बीज, सतावर, विदारीकन्द और ईखकी जड़ समान भाग लेकर सबको पत्थर पर पीसकर (१०१ बार) धुले हुवे घीमें मिलाकर योनि, शिर और शरीरमें लेप करनेसे रक्त प्रदर नष्ट हो जाता है ।

(५३५२) मधुसिक्थकादिलेपः

(वृ. नि. र. । क्षुद्ररो.)

मधुसिक्थकसैन्धवघृतगुडमहिषाख्यरालनिर्यासैः।
गैरिकसहितैर्लेपः पादस्फुटनापहः सिद्धः ॥

मोम, सेंधा, घी, गुड़, गूगल, राल और गेरु समान भाग लेकर पहिले घीको गरम करके उसमें गूगल पीसकर मिलावें, जब वह मिल जाय तो मोम मिला दें; फिर गुड़, और अन्तमें सेंधा, राल तथा गेरुका चूर्ण मिलावें । (यदि आवश्यकता प्रतीत हो तो घी अधिक भी ले सकते हैं ।)

इसे लगानेसे पैरोंका फटना बन्द हो जाता है।

(५३५३) मधूच्छिष्टाद्यघृतम्

(व. से. । अग्निदग्ध व्रण.; वृ. मा. । आगंतुकव्रणा.; यो. र.; वृ. नि. र. । अग्निदग्ध.)

मधूच्छिष्टं समधुकं लोध्रं सर्जरसं तथा ।
मञ्जिष्ठां चन्दनं मूर्वां पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत् ॥
सर्वेषामग्निदग्धानां व्रणरोपणमुत्तमम् ॥

मोम, मुलैठी, लोध, राल, मजीठ, सफेद चन्दन, और मूर्वाके कल्क तथा ४ गुने पानीके साथ घृत सिद्ध करें ।

इसे लगानेसे हर प्रकारका अग्नि-दग्ध-व्रण भर जाता है ।

(मोम और रालके चूर्णको घी तैयार होनेके पश्चात् उसमें मिलाकर थोड़ी देर पुनः पका लेना चाहिये ।)

(५३५४) मनःशिलादिगुटिका

(यो. त. । त. ७८; रा. मा. । विषरोगा. २८; वृ. नि. र. । विषरोगा.)

मनः शिलाकुष्ठकरञ्जबीज-
शिरीषकाश्मीरभवैः समांशैः ।
विनिर्मितास्ये विधृताविलिप्ता
संहारिणी वृश्चिकवैकृतस्य ॥

मनसिल, कूठ, करञ्ज बीज, सिरसकी छाल और केसरका चूर्ण समान भाग लेकर सबको (पानीमें पीसकर) गोलियां बनावें । (और छाया में सुखालें ।)

बिच्छूके काटे हुवे स्थान पर इस गोलीको मुहकी लार (थूक) में घिसकर लेप करनेसे विष उतर जाता है ।

(५३५५) मनःशिलादिलेपः (१)

(धन्व. । वाजी.)

मनःशिला वचाकुष्ठं सैन्धवं च पुनस्तथा ।
मधुनालेपयेल्लिङ्गं द्रावयेत् कामिनीजनम् ॥

मनसिल, बच, कूठ और सेंधानमकका समान-भाग चूर्ण एकत्र मिलाकर उसे शहदमें

घोटकर लिंग पर लेप करनेके थोड़ी देर बाद स्त्री-समागम करनेसे स्त्री द्रवित हो जाती है।

(५३५६) **मनःशिलादिलेपः (२)**

(वृ. नि. र. । त्वग्दो.; व. से. । कुष्ठ.)

मनःशिलालं मरिचानि तैल-
मार्कं पयः कुष्ठहरः प्रसिद्धः ।
करञ्जबीजैडगजं सकुष्ठं
गोमूत्रपिष्टं च वरः प्रदेहः ॥

(१) मनसिल, हरताल और काली मिर्चका चूर्ण तथा आकका दूध और सरसोंका तेल समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर लेप करनेसे कुष्ठ (श्वेत कुष्ठ) नष्ट हो जाता है ।

(२) करञ्ज बीज, पंवाड़के बीज और कूटके समान-भाग-मिश्रित चूर्णको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे भी कुष्ठ नष्ट हो जाता है।

(५३५७) **मनःशिलादिलेपः (३)**

(व. से. । कुष्ठ.)

समनःशिला विडङ्गं कासीसरोचनाकनकपुष्पी च ।
श्वित्राणां प्रशमार्थं ससैन्धवं लेपनं दद्यात् ॥

मनसिल, बायबिडंग, कसीस, गोलोचन, कनेरकी जड़ और सेंधा नमकके समान-भाग-मिश्रित बारीक चूर्णको (पानीमें पीसकर) लेप करनेसे (श्वेत कुष्ठ) नष्ट होता है ।

(५३५८) **मनःशिलादिलेपः (४)**

(च. द. । कुष्ठा. ४९)

मनःशिलात्वक्कुटजात्सकुष्ठा-
त्सलोमशः सैडगजः करञ्जः ।
ग्रन्थिश्च भौर्जः करवीरमूलं
चूर्णानि साध्यानि तुषोदकेन ॥
पलाशनिर्दाहरसेन वापि
कर्षोद्धृतान्याढकसम्मितेन ।
दार्वीप्रलेपं प्रवदन्ति लेप-
मेतत्परं कुष्ठविनाशनाय ॥

मनसिल, कुड़ेकी छाल, कूठ, कसीस, पंवाड़के बीज, करञ्जफल, भोजपत्र वृक्षकी गांठ और कनेरकी जड़का चूर्ण १।-१। तोला लेकर सबको ८ सेर कांजी या पलाश-निर्दाह रसमें पकावें । जब अवलेहके समान गाढ़ा होकर करछीको लगने लगे तो अग्निसे नीचे उतार लें ।

यह लेप कुष्ठोंको नष्ट करनेके लिये अत्यन्त उपयोगी है ।

(पलाशनिर्दाह-रसकी निर्माण-विधि)
पलाश (ढाक) के वृक्षकी प्रधान जड़में एक बड़ा गढ़ा करके उसमें एक घड़ा रख दें और फिर वृक्षमें आग लगादें । इससे जो रस वृक्षसे निकल कर घड़ेमें जमा हो उसे निकाल लें । यही 'पलाश-निर्दाह रस' है ।)

(५३५९) **मनःशिलादिलेपः (५)**

(वृ. मा.; च. द.; वृ. नि. र.; र. र.; यो. र.; व. से. । व्रणशोथा.; वृ. यो. त. । त. १११)

मनःशिला समञ्जिष्ठा सलाक्षा रजनीद्वयम् ।
प्रलेपः सघृतक्षौद्रस्त्वग्विशुद्धिकरः परः ॥

मनसिल, मजीठ, लाख, हल्दी और दारुहल्दीके समान भाग मिश्रित बारीक चूर्णको घी और शहदमें मिलाकर लेप करनेसे, घावको आराम

होनेके बाद जो निशान रह जाता है वह दूर हो कर त्वचाका रंग ठीक हो जाता है।

(५३६०) मनःशिलादिवर्त्तिः

(व. से. । विषरोगा.)

मनोह्वासैन्धवं हिङ्गुजातीपत्रं सनागरम् ।
गोशकृद्रससम्पिष्टं गुटिका वृश्चिकार्तिनुत् ॥

मनसिल, सेंधानमक, हींग, जावित्री और सोंठका चूर्ण समान भाग लेकर सबको गायके गोबरके रसमें घोट कर गोलियां बना लें।

इन्हें (गायके गोबरके रस या पानीमें) घिस कर लगानेसे बिच्छूका विष उतर जाता है।

(५३६१) मरिचादिगुटिका

(वै. म. र. । पटल १६)

मरिचस्य हरिद्रायाः शुण्ठ्या वा
रेणुभिः कृता गुलिका ।
तैलाक्ता संलिप्ता ललाटपट्टे शिरोरुजं हन्यात् ॥

काली मिर्च, हल्दी, सोंठ और रेणुकाका समान भाग मिश्रित बारीक चूर्ण लेकर (पानीमें घोटकर) गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इन्हें पीसकर तेलमें मिलाकर मस्तक पर लेप करनेसे शिरपीड़ा शान्त हो जाती है।

(५३६२) मरिचादिलेपः (१)

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११)

मरिचं सैन्धवं कृष्णा तगरं बृहतीफलम् ।
अपामार्गस्तिलाः कुष्ठं यवा माषाश्च सर्षपाः ॥
अश्वगन्धा च तच्चूर्णं मधुना सह योजयेत् ।
अस्य सन्ततलेपेन मर्दनाच्च प्रजायते ॥
लिङ्गवृद्धिः स्तनोत्सेधः संहतिर्भुजकर्णयोः ॥

काली मिर्च, सेंधा, पीपल, तगर, कटेलीके फल, चिरचिटेकी जड़, तिल, कूठ, जौ, उड़द, सरसों और असगन्ध । सबका समान-भाग-मिश्रित महीन चूर्ण शहदमें मिलाकर लेप और मर्दन करनेसे लिंग बढ़ता, स्तन पुष्ट (मोटे) होते और भुजा तथा कान मांसल हो जाते हैं।

(५३६३) मरिचादिलेपः (२)

(यो. र. । शिरोरोगा.)

मरिचं भृङ्गजद्रावैर्मरिचं शालितण्डुलैः ।
अर्धशीर्षव्यथां हन्ति लेपो वा शुण्ठिवारिणा ॥

काली मिर्चके चूर्णको भंगरेके रस अथवा चावलोंके पानीके साथ पीसकर या सोंठको पानीमें घिसकर लेप करनेसे आधे शिरकी पीड़ा शान्त होती है।

(५३६४) मरिचादिलेपः (३)

(यो, र.; व. से. । नेत्र रोगा.)

सञ्चूर्ण्य मरिचाक्षे च रजन्या रसमर्दिते ।
लेपनादर्मणां नाशं करोत्येष प्रयोगराट् ॥

हल्दीके स्वरस या काथमें काली मिर्च और बहेड़ेके समान-भाग-मिश्रित चूर्णको पीसकर लेप करनेसे अर्म नामक नेत्ररोग नष्ट होता है। यह एक अत्यन्त प्रभावशाली योग है।

(५३६५) मरिचादिलेपः (४)

(व. से. । क्षुद्ररो.)

इन्द्रलुप्ते शिरां मूर्ध्नि स्निग्धस्विन्नस्य मोक्षयेत् ।
कल्कैः समरिचैर्दिह्याच्छिलाकाशीसतुत्थकैः ॥

इन्द्र लुप्त (गंज) रोगमें पहिले रोगीको यथा-विधि स्निग्ध और स्विन्न करके शिरमें शिरावेध

(फस्त—रक्त-मोक्षण) करावें, एवं तत्पश्चात् काली मिर्च, मनसिल, कसीस और तूतियाके समान-भाग-मिश्रित चूर्णका (पानीमें पीसकर) लेप करें।

(५३६६) **मरिचादिलेपः** (५)

(वा. भ. । चि. अ. १८)

मरिचं तमालपत्रं कुष्ठं समनःशिलं सकासीसम् ।
तैलेन युक्तमुषितं सप्ताहं भाजने ताम्रे ॥
तेनालिप्तं सिध्मं सप्ताहाद्धर्म्मसेविनोऽपैति ।
मासान्नवं किलासं स्नानेन विना विशुद्धस्य ॥

काली मिर्च, तमालपत्र (तेजपात), कूठ, मनसिल और कसीस के ५-५ तोले चूर्णको तेलमें मिलाकर मल्हम सा बनावें और उसे ताम्र-पात्रमें भरकर रख दें; तथा सात दिन पश्चात् काममें लावें।

इसका लेप करके थोड़ी देर धूपमें बैठनेसे एक सप्ताहमें सिध्म (सीध) नामक कुष्ठ और एक मासमें नवीन किलास कुष्ठ नष्ट हो जाता है। इन दिनोंमें स्नान नहीं करना चाहिये।

(५३६७) **मरिचादिलेपः** (६)

(ग. नि. । विषा.; रा. मा. । विषरो.)

मरिचतगरशुण्ठीकेसरैस्तोयपिष्टै-
र्यदि भवति विलिप्तं मक्षिकादष्टमङ्गम् ।
विषमुपशममेति द्राक्तदानीं तदीयं
घृतयुतशतपुष्पासैन्धवालेपनाद्वा ॥

काली मिर्च, तगर, सोंठ और केसरके समान-भाग-मिश्रित महीन चूर्णको पानीमें पीस-कर लेप करनेसे अथवा सोयेके बीज और सेंधा नमकके चूर्णको घीमें मिलाकर लगानेसे मक्खीके दंशको तुरन्त आराम हो जाता है।

(५३६८) **मरिचादिलेपः** (७)

(वृ. नि. र. । विष.; ध. व. । विष.)

मरिचं नागरोपेतं सिन्धुसौवर्चलान्वितम् ।
फणिवल्लीरसैर्लेपाद्धन्ति तद्वरटीविषम् ॥

काली मिरच, सोंठ, सेंधा नमक और सञ्चल (काला) नमक के समान भाग मिश्रित चूर्णको पानके रसमें घोट कर लेप करनेसे वरटी (भिर्र—भिड़—ततैन) का विष नष्ट हो जाता है।

(५३६९) **मसूरादिलेपः** (१)

(व. से. । वातव्या.)

मसूरविदलैः पिष्टैः शृतशीतेन वारिणा ।
चरणौ लेपयेत्सम्यक् पाददाहप्रशान्तये ॥

पैरोंमें दाह होती हो तो मसूरकी दालको उबाले हुवे ठंडे पानीमें पीसकर पैरों पर (तलुवोंमें) लेप करना चाहिये।

(५३७०) **मसूरादिलेपः** (२)

(वृ. मा.; धन्व. । क्षुद्ररोगा.)

मसूरैः सर्पिषा पिष्टैर्लिप्तमास्यं पयोन्वितैः ।
सप्तरात्रेण भवति पुण्डरीकदलप्रभम् ॥

मसूरके चूर्णको घीमें पीस कर, दूधमें मिला-कर मुखपर लेप करनेसे सात दिनमें मुख कमलके समान शोभायमान हो जाता है।

(५३७१) **मसूरादिलेपः** (३)

(ग. नि. । विसर्पा.)

मसूरैः खण्डितैर्मुद्गैश्चणकैः समकुष्ठकैः ।
यवैश्च निस्तुषैस्तद्वल्लेपो वीसर्पनाशनः ॥

मसूर, मूंग, चना, मोठ और छिलके-रहित जौ के (समान भाग मिश्रित अथवा पृथक् पृथक्) चूर्णको (घीमें मिलाकर) लेप करनेसे विसर्प नष्ट होता है।

(५३७२) महा गौर्याद्यं घृतम्

(ग. नि. । घृता.)

गौरी हरिद्रा मञ्जिष्ठा मांसी कटुकरोहिणी ॥
प्रपौण्डरीकं मधुकं भद्रमुस्तं सचन्दनम् ।
जातीनिम्बपटोलञ्च कारञ्जं बीजमेव च ॥
कट्फलं समधूच्छिष्टं समभागानि कारयेत् ।
पञ्चवल्ककषायेण घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
क्षीरद्विप्रस्थसंयुक्तं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
एतद्गौरं महावीर्यं सर्वव्रणविशोधनम् ॥
आगन्तुसहजाश्चैव शिरःश्लिष्टाश्च ये व्रणाः ।
विषमामपि नाडीं च रोहयेच्छीघ्रमेव च ॥

कल्क—दारु हल्दी, हल्दी, मजीठ, जटामांसी, कुटकी, पुण्डरिया, मुलैठी, नागरमोथा, सफेद चन्दन, जावत्री, नीमके पत्ते, पटोल, करञ्जबीज, कायफल और मोम समान भाग मिश्रित २० तोले (प्रत्येक १ तोला ४ माशे) लेकर, मोमके अतिरिक्त सब चीजोंको कूट लें ।

क्वाथ--बड़, पीपलवृक्ष, गूलर, पिलखन और बेतकी छाल समान भाग मिश्रित ४ सेर (प्रत्येक ६४ तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

२ सेर घीमें ४ सेर दूध और उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाए तो घीको छानकर उसमें मोम (कल्कमें कथित) मिलादें ।

यह घृत समस्त प्रकारके व्रणोंको नष्ट कर देता है । आगन्तुक व्रण, सहज व्रण, शिरके व्रण और विषम नाडीव्रण (नासूर) भी इसके प्रभावसे शीघ्र ही भर जाते हैं ।

(५३७३) महाराष्ट्र्यादिलेपः

(र. चि. । स्क. १०)

महाराष्ट्रीसकर्पूरा ह्येकचिञ्चाफलद्रवः ।
द्रावयेल्लिङ्गलेपेन सद्यो हि बहुकामिनीः ॥

जलपीपल और कपूर के समान भाग मिश्रित चूर्णको इमलीके फलके रसमें घोटकर लिंग पर लेप करके स्त्री-समागम करनेसे स्त्री शीघ्र ही द्रवित हो जाती है ।

(५३७४) माकन्दफलादिलेपः

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११)

माकन्दफलसंयुक्तमधुकर्पूरलेपनात् ।
गतेऽपि यौवने स्त्रीणां योनिर्गाढातिजायते ॥

आमका फल और कपूरके चूर्णको शहदमें मिलाकर लेप करनेसे गतयौवना स्त्रीकी योनि भी अत्यन्त संकीर्ण हो जाती है ।

(५३७५) माकन्दबीजादिलेपः

(रा. मा. । शिरो.)

माकन्दबीजसहितामलकप्रलिप्त-
मूर्ध्नि शिरोरुहभरः समुपैति वृद्धिम्।

आमकी गुठली और आमले को पानीमें पीसकर लेप करनेसे केश खूब बढ़ते हैं ।

(५३७६) माजुफलादिलेपः (१)
(यो. त. । त. ७३)

पलत्रयं माजुफलं हरीतक्याः पलं तथा ।
आमलक्यास्तु सप्तैव पलैकं खदिरस्य च ॥
तुत्थस्यापि पलैकं तु नीलीवट्या दशैव तु ।
नवसादरकस्यैकं लोहचूर्णस्य चैककम् ॥
तुवर्याः पलमेकं तु पलं ताम्रविशस्तथा ।
अतिश्लक्ष्णमिदं घृष्टं भृङ्गराजरसैश्चिरम् ॥
सन्धितं त्रिदिनं लौहे भिन्नाञ्जनसमप्रभम् ।
रूक्षीकृत्य कचानादौ पुनस्तेनावलेपयेत् ॥
वातारिपत्रैरावेष्ट्य सुप्तिं कुर्याद्विचक्षणः ।
प्रातस्तैलामलैः स्नात्वा नरो जायेत निश्चितम्॥
भिन्नकज्जलभृङ्गालीनिभकुन्तलसन्ततिः ॥

माजूफल १५ तोले, हर्र ५ तोले, आमला ३५ तोले, खैरसार ५ तोले, नीला थोथा ५ तोले, नीलकी टिकिया ५० तो., नौसादर ५ तोले, लोहचूर्ण ५ तोले, गोपीचन्दन ५ तोले, ताम्रचूर्ण ५ तोले और चांदीका चूर्ण ५ तोले लेकर सबका अत्यन्त महीन चूर्ण करके उसे कई दिन तक भंगरेके रसमें घोट कर कज्जलसा काला करलें। तत्पश्चात् लोह—पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और ३ दिन पश्चात् काममें लावें।

बालोंको (साबुन आदिसे धोकर) चिकनाई—रहित करके यह लेप लगावें और ऊपरसे अरण्डका पत्ता बांधकर सो रहें। दूसरे दिन प्रातः काल बालोंको तैल मिश्रित आमलेका चूर्ण लगाकर स्नान कर लें।

इस प्रकार इस लेपके प्रयोगसे सफेद बाल भौंरेसे काले हो जाते हैं।

(५३७७) माजुफलादिलेपः (२)
(वै. वल्लभ । वि. ७)

घृष्टं माजूफलं व्रीहिवारिणा कृतलेपनात् ।
नृणां तारुण्यजां हन्ति पिडिकां वदनोद्भवाम् ॥

माजूफलको चावलोंके पानीमें घिसकर लेप करनेसे तारुण्य—पिडिकाओं (मुखके मुहासों) का नाश हो जाता है।

(५३७८) मातुलुङ्गकेसरादियोगः
(व. से. । पित्तज्वर.)

जिह्वातालुगलक्लोमशोषे मूर्ध्नि च दापयेत् ।
केसरं मातुलुङ्गस्य मधुसैन्धवसंयुतम् ॥

बिजौरे नीबूकी केसर और सेंधा नमकके चूर्ण को शहदमें मिलाकर शिर पर लेप करनेसे जिह्वा, तालु, गले और क्लोमके शोष (खुशकी) का नाश होता है।

(५३७९) मातुलुङ्गरसादियोगः
(व. से. । ज्वरा. ; ग. नि. । ज्वरा.)

स्वरसं मातुलुङ्गस्य संयुक्तं मधुसर्पिषा ।
तालुशोषे प्रदेहोऽयं मूर्ध्नि दाहेससैन्धवः ॥

बिजौरे नीबूके स्वरसमें समान भाग शहद और घी तथा ज़रासा सेंधानमक मिलाकर शिरपर लेप करनेसे तालुशोष और दाहका नाश होता है।

(५३८०) मातुलुङ्गादिलेपः (१)
(व. से. । स्त्री रो.)

मातुलुङ्गस्य मूलन्तु मल्लिकामूलमेव च ।
बिल्वमुस्तमिदं लेपं शिरोरोग विनाशनम् ॥

बिजौरे नीबूकी जड़, मल्लिका की जड़, बेल छाल और नागरमोथेको बारीक पीस कर (शिर-

पर) लेप करनेसे शिरोरोग (प्रसवके पश्चात् होने वाली मक्कल शूलान्तर्गत शिर पीड़ा) का नाश होता है।

(५३८१) मातुलुङ्गादिलेपः (२)

(व. से. । मसूरिका.; ग. नि. । मसूरि.)

सौवीरेण तु सम्पिष्टं मातुलुङ्गस्य केशरम् ।
प्रलेपात्पाचयत्याशु दाहं चापि नियच्छति ॥

बिजौरे नीबूकी केसरको सौवीरक कांजीमें पीस कर लेप करनेसे मसूरिका शीघ्र पक जाती है और दाह शान्त होती है।

(५३८२) मातुलुङ्गादिलेपः (३)

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११; वृ. नि. र. । क्षुद्ररो.; वं. से.; वृ. मा. । क्षुद्र रोगा.)

मातुलुङ्गजटा सर्पिः शिला गोशकृतो रसः ।
मुखकान्तिकरो लेपः पिटिकाव्यङ्गकालजित् ॥

बिजौरे नीबूकी जड़ और मनसिलका चूर्ण तथा घी और गायके गोबरका रस समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर लेप करने से मुखकी कान्ति बढ़ती और पिडिका, व्यङ्ग तथा कालक आदिका नाश होता है।

(५३८३) मातुलुङ्गादिलेपः (४)

(वृ. मा. । व्रणशोथा.; वृ. नि. र.; व. से.; यो. र.; ग. नि. । व्रणशोथ.)

मातुलुङ्गाग्निमन्थौ च सुरदारु महौषधम् ।
अहिंस्रा चैव रास्ना च प्रलेपो वातशोथजित् ॥

बिजौरेकी जड़, अरनीकी जड़, देवदारु, सोंठ, कटेली और रास्ना का समान भाग मिश्रित चूर्ण लेकर (पानीमें या घी कुमारके रसमें पीस कर) लेप करनेसे वातज शोथ नष्ट होता है।

(५३८४) मायाफलादियोगः

(रा. मा. । स्त्री रोगा. ३०)

मायाफलैर्यद्घनसारपुष्प-
सारान्वितैर्लेपितमादरेण ।
तद्वृद्धभावेऽपि वलीविमुक्तं
स्त्रीणां वराङ्गं श्लथतां न याति ॥

माजूफल और कपूरके चूर्णको शहदमें मिलाकर लेप करनेसे स्त्रीकी योनि वृद्धावस्थामें भी बलि रहित हो जाती है और शिथिल नहीं होती।

(५३८५) माषमस्यादिलेपः

(रा. मा. । शिरो.)

अन्तर्धूमविदग्धमाषसुमसीमध्येऽर्कदुग्धं क्षिपे-
त्तैलं सर्षपसम्भवं च विमलं तेन प्रलिम्पेच्छिरः।
रोगान्मूर्ध्नि समुद्भवान्बहुविधांस्तद्वच्च वक्त्रो-द्भवान्
खालित्यं पलितानि चोपशमयत्येतत्प्रयुक्तं नृणाम् ॥

उड़दोंको हाण्डी में बन्द करके इस प्रकार फूंकें कि धुंवा बाहर न निकले । तत्पश्चात् इस राखमें (समान भाग) आकका दूध और सरसोंका तेल मिलावें।

शिर पर इसका लेप करनेसे खालित्य (गंज), और पालित्य (बाल सफेद होना) इत्यादि बहुतसे रोग नष्ट होते हैं।

(५३८६) **माहेश्वरो लेपः**

(वैद्यामृत । विषय ४०)

गन्धं सूतं शिलालौ मरिच-
मपि निशायुग्मसिन्दूरतुत्थाः ।
दद्रुघ्नो वाकुचीतज्जरणयुगमिदं
निम्बु तोयाज्ययुक्तम् ॥
लौहे लौहेन मर्द्यं प्रहरमितमथो
हन्ति माहेश्वराख्यम् ।
दद्रुं कण्डूं च पामां हर इव
पटली संस्मृतः पातकानाम् ॥

गन्धक, पारा, मनसिल, हरताल, स्याह मिर्च, हल्दी, दारुहल्दी, सिन्दूर, नीलाथोथा, पंवाड़, बावची, जीरा और स्याह जीरा समान भाग लेकर चूर्ण करके सबको लोहेके खरलमें डालकर नीबूके रस और घीके साथ लोहेकी मूसलीसे १ पहर तक खरल करें।

यह माहेश्वर नामक योग दाद, पामा और खाजको इस प्रकार नष्ट कर देता है जिस प्रकार परमेश्वरका स्मरण पाप-समूह को।

(५३८७) **मांस्यादिलेपः** (१)

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११; यो. र.; वृ. नि. र.; विसर्पा.; वृ. यो. त. । त. १२३)

मांसी सर्जरसो लोध्रं मधुकं सहरेणुकम् ।
मूर्वा नीलोत्पलं पद्मं शिरीषकुसुमानि च ॥
एतैः प्रदेहः कथितो वह्निवीसर्पनाशनः ॥

जटामांसी, राल, लोध, मुलैठी, रेणुका, मूर्वा, नीलोत्पल, कमल और सिरसके फूल समान भाग लेकर सबको पीसकर (सौ बार धोये हुवे घीमें मिलाकर) लेप करनेसे अग्निविसर्प नष्ट होता है।

(५३८८) **मांस्यादिलेपः** (२)

(यो. त. । त. ७३)

मांसी कुष्ठं तिलाः कृष्णाः सारिवामूलमुत्पलम्
सक्षौद्रक्षीरपिष्टानि केशसंवर्धनं परम् ॥

जटामांसी, कूठ, काले तिल, सारिवाकी जड़ और नीलोत्पल समान भाग लेकर सबको दूधमें पीसकर शहदमें मिलाकर लेप करनेसे केशवृद्धि होती है।

(५३८९) **मांस्यादिलेपः** (३)

(व. से. । विसर्प.)

मांसी सर्जरसं लोध्रं मधुकं सह रेणुभिः ।
हरेणवो मसूराश्च मुद्गाश्चैव सशालयः ॥
पृथक् लेपा विसर्पघ्नाः सर्वे वा सर्पिषा सह ॥

जटामांसी, राल, लोध, मुलैठी, रेणुका, पित्त-पापड़ा, मसूर, मूंग और शाली चावल सब समान भाग मिश्रित अथवा पृथक् पृथक् (चाहे जो) लेकर पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे विसर्प नष्ट होता है।

(५३९०) **मांस्यादिलेपः** (४)

(रा. मो. । शिरो.; यो. त. । त. ७३)

मांसीबलाकुवलया[1]मलकैः सकुष्ठैः
पुंसः प्रलिप्तशिरसो न पतन्ति केशाः ।
स्निग्धायताश्च कुटिलाकृतयो भवन्ति
ते प्रत्युतास्य तरुणालिकुलप्रकाशाः ॥

जटामांसी, खरैटीकी जड़, कमल, आमला और कूठ समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें।

---

१ "बकुलजा" इति पाठान्तरम् ।

बालों पर इसका लेप करनेसे बाल गिरने बन्द हो जाते हैं तथा केश स्निग्ध, लम्बे, घुंघराले और काले होते हैं ।

(५३९१-५४११) **मुखकान्तिकरालेपाः**

(र. र. । क्षुद्र.)

(१)

माक्षिकं तालकं तुत्थं राजावर्त्तशिलाजतु ।
महिषाक्षं सर्वतुल्यं पेषयेन्महिषीपयैः ॥
सप्ताहं मर्दयेद्गाढं व्यङ्गघ्नं कान्तिवर्द्धनम् ।
महिषीक्षीरमथितमेतदुद्वर्त्तनं हितम् ॥
मुखवर्णकरं स्त्रीणां तिलकालं च नाशयेत् ॥

(२-३)

मधुनादाडिमार्द्रत्वग्लेपोव्यङ्गविनाशनः ।
व्यङ्गजिद्वरुणत्वग्वा छागदुग्धप्रपेषिता ॥

(४)

केवलात्पयसापिष्ट्वा तीक्ष्णान् शाल्मलिकण्टकान् ।
आलिप्तं त्र्यहमेतेन भवेत्पद्मोपमं मुखम् ॥

(५)

श्वेतं पुनर्नवामूलं सर्पाक्षीमूलसंयुतम् ।
उद्वर्त्तनं हरेत्स्त्रीणां अक्षिच्छायाश्च दुःसहाः॥

(६)

महिषीक्षीरसम्पिष्टमञ्जनं रक्तचन्दनम् ।
कृतो लेपो निहन्त्याशु मक्षिकां गण्डयोः स्थिताम् ॥

(यो. त. । त. ६९)

(७)

प्रियङ्गुकाश्मीरजकोलमज्जा
ह्रीबेरकैश्चन्दनभागयुक्तैः ।
पिष्टैः प्रलेपो विहितो मुखस्य
द्युतिं शशाङ्कादधिकां विधत्ते ॥

(च. द. । क्षुद्र. ५४)

(८)

कालीयकोत्पलामयदधि
सखदरास्थिमध्यफलिनीभिः ।
लिप्तं भवति च वदनं
शशिप्रभं सप्तरात्रेण ॥

(९)

तुषरहितमसृणयवचूर्ण-
सयष्टीमधुकलोध्रलेपेन ।
भवति मुखं परिनिर्जित-
चामीकरचारुसौभाग्यम् ॥

(१०)

रक्षोघ्नशर्वरीद्वयं
मञ्जिष्ठागैरिकाह्वयैस्तु पयः ।
सिद्धेन लिप्तमानन-
मुद्यद्विधुबिम्बवद्विभाति ॥

(११)

परिणतदधिशरपुंखैः
कुवलयदलकुष्ठचन्दनोशीरैः ।
मुखकमलकान्तिकारी
भ्रुकुटीतिलकालकाञ्जयति ॥

(च. द.; र. र. । क्षुद्र.)

(१२)

नवनीतगुडक्षौद्रकोलमज्जप्रलेपनम् ।
व्यङ्गजिद्वरुणत्वग्वा छागक्षीरप्रपेषिता ॥

(१३-१४)

जातीफलकल्कलेपो नीलिव्यङ्गादिनाशनः।
सायं च कटुतैलेनाभ्यङ्गो वक्त्रप्रसादनः॥

(चरक; र. र. । क्षुद्ररो.)

(१५-१६)

लोध्रधान्यवचालेपस्तारुण्यपिडकापहः।
तद्वद्गोरोचनायुक्तं मरिचं मुखलेपतः॥

(१७)

सिद्धार्थकवचालोध्रसैन्धवैश्च प्रलेपनम्।
वमनं च निहन्त्याशु पिडकां यौवनोद्भवाम्॥

(१८-२०)

व्यङ्गेषु चार्जुनत्वग्वा मञ्जिष्ठा वा समाक्षिका।
लेपः सनवनीता वा श्वेताश्वखुरजा मसी॥

(२१)

रक्तचन्दनमञ्जिष्ठालोध्रकुष्ठप्रियङ्गवः।
वटाङ्कुरमसूराश्च व्यङ्गघ्ना मुखकान्तिदाः॥

(१)

सोनामक्खी, हरताल, नीला थोथा, राजावर्त, शिलाजीत और भैंसिया गूगल समान भाग लेकर सबको भैंसके दूधमें महीन पीसकर मुखपर अच्छी तरह मलनेसे एक सप्ताहमें व्यङ्ग (झांई) और तिल, कालक आदिका नाश हो कर मुखकी कान्ति बढ़ती है।

(२)

अनारकी ताजी छालको पीसकर शहदमें मिलाकर लेप करनेसे व्यङ्ग (चेहरेकी झांई) का नाश होता है।

(३)

बकरीके दूधमें बरनेकी छालको पीसकर लेप करनेसे व्यङ्ग (मुखकी झाईं) का नाश होता है।

(४)

सेंमलके तीक्ष्ण कांटोंको दूधमें पीसकर लेप करनेसे ३ दिनमें ही मुख कमलके समान सुन्दर हो जाता है।

(५)

सफेद पुनर्नवाकी जड़ तथा सर्पाक्षीकी जड़को पीस कर मलनेसे स्त्रियोंकी अक्षिच्छाया (आंखोंके पासकी कलौंस) नष्ट होती है।

(६)

सुरमे और लाल चन्दनके समान-भाग-मिश्रित चूर्णको भैंसके दूधमें पीसकर लेप करनेसे गण्डस्थित मक्षिका (चेहरेके मस्सों) का नाश होता है।

(७)

फूल प्रियङ्गु, केसर, बेरकी गुठलीके भीतरकी गिरी, सुगन्धवाला और लाल चन्दनके समान-भाग-मिश्रित-चूर्णको (पानी या दूधमें) पीस कर लेप करनेसे मुखकान्ति चन्द्रमासे भी उज्ज्वल हो जाती है।

(८)

दारु हल्दी, नीलोत्पल, कूठ, दहीकी मलाई, बेरकी गुठलीके भीतरकी गिरी और फूल प्रियंगु समान-भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

सात दिन तक निरन्तर इसका लेप करनेसे मुख चन्द्रमाके समान दीप्तिमान हो जाता है।

(९)

तुष-रहित जौ, मुलैठी और लोधके समान-भाग-मिश्रित अत्यन्त महीन चूर्णका (पानी या दूधमें पीसकर) लेप करनेसे मुख अत्यन्त सुन्दर हो जाता है ।

(१०)

सफेद सरसों, हल्दी, दारु हल्दी, मजीठ और गेरु के समान-भाग--मिश्रित चूर्णको दूधमें घोट कर लेप करनेसे मुख चन्द्रमाके समान दीप्तिमान हो जाता है ।

(११)

सरफोंका, नील कमलके पत्ते, कूठ, लाल चन्दन और खस के समान-भाग-मिश्रित चूर्णको खट्टी दहीमें घोट कर लेप करनेसे भ्रकुटी (मस्तकको बलि) और तिल कालक आदि नष्ट हो कर मुखकी शोभा बढ़ती है ।

(१२)

नवनीत (नौनी घी), गुड़, शहद और बेरकी गुठलीकी गिरी समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर लेप करनेसे अथवा बरनेकी छालको बकरीके दूधमें घोट कर लेप करनेसे व्यङ्ग नष्ट होता है ।

(१३-१४)

जायफलको पानीमें पीसकर लेप करनेसे नीलिका, व्यङ्गादि रोग नष्ट होते हैं ।

सायंकालको मुखपर सरसोंके तेलकी मालिश करनेसे भी मुखकी शोभा बढ़ती और चेहरा स्वच्छ हो जाता है ।

(१५)

लोध, धनिया और बचके समान-भाग-मिश्रित चूर्णको (पानी या दूधमें घोट कर) लेप करनेसे तारुण्यपिडका (मुहांसे) नष्ट हो जाती हैं ।

(१६)

गोलोचन और काली मिर्चको एकत्र पीसकर लेप करनेसे भी मुहांसे नष्ट हो जाते हैं ।

(१७)

तारुण्य पिडका (मुंहासों) को नष्ट करनेके लिये सरसों, बच, लोध, और सैंधानमकके समान-भाग मिश्रित चूर्णको (पानीमें) पीसकर लेप करना चाहिये ।

वमन करानेसे भी मुंहासे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ।

(१८-२०)

अर्जुनकी छालके चूर्ण या मजीठके चूर्णको शहदमें मिलाकर लेप करनेसे अथवा सफेद घोड़ेके खुरकी राखको मक्खनमें मिलाकर लेप करनेसे व्यङ्ग नष्ट होता है ।

(२१)

लाल चन्दन, मजीठ, लोध, कूठ, फूलप्रियङ्गु, बड़के अंकुर और मसूर । इनका लेप करनेसे मुखकान्ति बढ़ती और व्यङ्ग का नाश होता है ।

(५४१२) मुण्डीघृतम्

(वृ. नि. र. । त्वग्दो.)

मुण्डीरसेन संसिद्धं घृतं हन्ति विपादिकाम् ॥

१ सेर मुण्डीके स्वरस (या क्वाथ) में १ पाव घी मिलाकर पकावें । जब रस जल जाए तो घीको छान लें ।

इसे लगानेसे विपादिका (पैरोंकी बिवाई) नष्ट होती हैं।

(५४१३) **मुण्डीमूललेपः**

(वृ. नि. र.; यो. र.। गण्डमाला.)

निजद्रवेण सम्पिष्टं मुण्डीमूलं प्रलेपयेत्।
गण्डमाला क्षयं याति तद्रसं च पिबेत्पलम् ॥

मुण्डीकी जड़को उसी (मुण्डी) के रसमें घोट कर लेप करने और नित्य प्रति मुण्डीका ५ तोले रस पीनेसे गण्डमाला नष्ट होती है।

(५४१४) **मुद्गादिप्रलेपः**

(ग. नि.। ज्वरा.)

मुद्गामलकचूर्णानि प्रसिक्तानि घृतेन तु।
अम्लकाञ्जिकयुक्तानि प्रदेहो दाहनाशनः ॥

मूंग और आमले के समान–भाग–मिश्रित चूर्णको घीसे चिकना करके काञ्जीमें मिला कर मोटा मोटा लेप करनेसे ज्वरकी दाह नष्ट होती है।

(५४१५) **मुशल्यादिलेपः**

(यो. र.। कर्णरो.)

माहिषनवनीतयुतं सप्ताहं धान्यराशिपर्युषितम्।
नवमुसलिकन्दचूर्णं वृद्धिकरं कर्णपालीनाम् ॥

नवीन मूसलीके चूर्णको भैंसके मक्खनमें मिलाकर किसी पात्रमें बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और सात दिन पश्चात् निकाल कर काममें लावें।

इसकी मालिशसे कानोंकी पाली बड़ी हो जाती हैं।

(५४१६) **मुस्तादिलेपः**

(यो. र.। बाल.)

मुस्तकूष्माण्डबीजानि भद्रदारुकलिङ्गकान्।
पिष्ट्वा तोयेन संलिम्पेल्लेपोऽयं शोथहृच्छिशोः

नागरमोथा, पेठेके बीज, देवदारु और इन्द्रजौ के समान भाग–मिश्रित चूर्णको पानीमें पीसकर लेप करनेसे बच्चोंका शोथ नष्ट होता है।

(५४१७) **मूलकक्षारादिलेपः**

(वं. से.। अर्बुदा.)

मूलकस्य कृतः क्षारो हरिद्रायास्तथैव च।
शङ्खचूर्णेन संयुक्तो लेपः सिद्धोऽर्बुदापहः ॥

मूलीका क्षार, हल्दीका क्षार और शंखका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर लेप करनेसे अर्बुद (रसौली) का नाश हो जाता है।

(५४१८) **मूलकबीजादिलेपः** (१)

(शा. सं.। उ. खं. अ. ११)

मूलकस्य च बीजानि तक्रेणाम्लेन पेषयेत्।
गण्डमालार्बुदं गण्डं लेपेनानेन शाम्यति ॥

मूलीके बीजोंको खट्टी छाछमें पीसकर लेप करनेसे गण्डमाला, अर्बुद और गलगण्डका नाश होता है।

(५४१९) **मूलकबीजादिलेपः** (२)

(ग. नि.। कुष्ठा. ३६; रा. मा.। कुष्ठा. ८)

पिष्टैर्मूलकबीजैः प्रत्यक्पुष्पीरसान्वितैर्लेपः।
सिध्मानि हरति यदि वा रम्भाक्षारेण निशया च॥

चिरचिटेके पत्तोंके रसमें मूलीके बीज पीस कर लेप करनेसे अथवा केलेके क्षार और हल्दीका लेप करनेसे सिध्म नष्ट हो जाता है।

(५४२०) **मूलकबीजादिलेपः** (३)

(व. से. । कुष्ठा. वृ. नि. र. । त्वग्दो. ; ग. नि. । कुष्ठा.)

बीजानि वा मूलकसर्षपाणां
लाक्षा रजन्यौ प्रपुन्नाटबीजम् ।
श्रीवेष्टकव्योषविडङ्गकुष्ठं
पिष्ट्वा च[1] मूत्रेण सुलेपनं स्यात् ॥
दद्रूणि सिध्मान् ।कटिभानि
पामां कपालकुष्ठं विषमं च हन्यात् ॥

मूलीके बीज, सरसों, लाख, हल्दी, दारुहल्दी, पंवाड़के बीज, श्रीवेष्ट (धूप सरल या राल), सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिडंग और कूठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे बकरेके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे दाद, सिध्म, किटिभ, पामा और कपालकुष्ठका नाश हो जाता है ।

(५४२१) **मूलकबीजादिलेपः** (४)

(व. से. । कुष्ठा. ; वृ. नि. र. । त्वग्दो. ; यो. र. । कुष्ठ.)

बीजं मूलकजं निम्बपत्राणि सितसर्षपान् ।
गृहधूमश्च सम्पेष्य जलेनाङ्गं प्रलेपयेत् ॥
उद्वर्त्य नवनीतेन क्षालयेदुष्णवारिणा ।
त्र्यहादनेन सिध्मानि शाम्यन्त्याशु शरीरिणाम् ॥

मूलीके बीज, नीमके पत्ते, सफेद सरसों और घरका धुवां समान भाग लेकर सबको पानीमें पीस कर सिध्म पर लेप करें फिर (दूसरे दिन) उस स्थानपर नवनीत (मक्खन) मलकर गरम पानीसे धो डालें । तीन दिन तक यही उपचार करनेसे सिध्म नष्ट हो जाता है ।

(५४२२–२३) **मृणालादिलेपः**

(वं. से.; ग. नि.; वृ. मा । शिरो.)

मृणालबिसशालूकचन्दनोत्पलकेशरैः ।
स्निग्धशीतैः शिरो दिह्यात्तद्वदामलकोत्पलैः ॥

कमलनाल, कमलकन्द (भिसण्डा), कसेरु, लाल चन्दन, और कमलकेसर समान भाग लेकर सबको पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे अथवा आमले और कमलको पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे शिर पीड़ा नष्ट होती है ।

(५४२४) **मृणालादिलेपः**

(शा. सं. । उ. खं. अ. ११)

मृणालं चन्दनं लोध्रमुशीरं कमलोत्पलम् ।
सारिवामलकी पथ्या लेपः पित्तविसर्पनुत् ॥

मृणाल (कमल नाल), लाल चन्दन, लोध, खस, कमल, नीलोत्पल, सारिवा, आमला और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसका लेप करनेसे पित्तज विसर्प नष्ट होता है ।

(५४२५) **मोचरसादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र. ; यो. र. । मेदो)

हितो मोचरसो युक्तश्चूर्णैरुदधिफेनजैः ।
प्रलेपेन निहन्त्याशु देहदुर्गन्धमुत्कटम् ॥

मोचरस, और समन्दर झागके समान भाग मिश्रित चूर्णका लेप करनेसे शरीरकी दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है ।

---

१ पिष्ट्वाजमूत्रेणेति पाठान्तरम् ।

(५४२६) **मोचरसादिलेपः** (२)

(यो. र. । उपदंशा.)

मोचा पूगविभूतिं च कोलत्वक्शङ्खजीरकम् ।
पिष्टोपदंशे लेपोऽयं पयसा पानमेव च ॥
नाशयेदुष्णतां तूर्णं शुष्कान्कुर्याद्व्रणानपि ॥

मोचरस, सुपारीकी राख, बेरीकी छाल और शंखजीरा (संगजराहत) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे दूधके साथ पीने और घावों पर लगानेसे आतशककी गरमी तुरन्त शान्त होती और घाव सूख जाते हैं ।

इति मकारादिलेपप्रकरणम्

अथ मकारादिधूपप्रकरणम्

(५४२७) **मनःशिलादिधूपः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

मनःशिला सनागरं सगुग्गुलं ससार्षपम् ।
सदेवदारु पौष्करं विशल्यासर्जिके रसम् ॥
घृतेन धूपयेद् गुदं गुदामयं भगन्दरम् ।
निहन्ति दुष्टपीनसं व्रणं सपूयगन्धिकम् ॥

मनसिल, सोंठ, गूगल, सरसों, देवदारु, पोखरमूल, लांगली (कलिहारी), राल और रसौत समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसमें घी मिलाकर धूनी दें ।

गुदाको इसकी धूप (धूनी) देनेसे अर्श और भगन्दर नष्ट होता है ।

यह धूप दुष्ट पीनस और दुर्गन्धित पीप युक्त व्रणोंको भी नष्ट करती है ।

(५४२८) **मर्कटपुरीषादिधूपः**

(वृ. नि. र. । बाल.)

मर्कटोलूकगृध्राणां पुरीषाणि पितृग्रहे ।
धूमः सुज्ञजनैः कार्यो बालस्य हितमिच्छुभिः ॥

घरमें बन्दर, उल्लू और गीधकी विष्ठाकी धूनी देना बालकके लिये हितकारी है ।

(यह प्रयोग ' स्कन्दापस्मार ' में उपयोगी है ।)

(५४२९) **मशकहरधूपः**

(व. से. । कृमि.)

ककुभकुसुमं विडङ्गं लाङ्गलीं भल्लातकं तथोशीरम् ।
श्रीवेष्टकं सर्जरसं मदनश्चैवाष्टमं दद्यात् ॥
एष सुगन्धो धूपो मशकानां नाशनः श्रेष्ठः ।
शय्यासु मत्कुणानां शिरसि वस्त्रे च यूकानाम् ॥

अर्जुनके फूल, बायविडंग, लांगली, भिलावा, खस, धूपसरल, राल और मोम समान-भाग-लेकर चूर्ण करें ।

यह सुगन्धित धूप मशक, खाटके खटमल और शिर तथा कपड़ोंकी जू (यूका) को नष्ट करती है ।

(५४३०) **मसूरधूपः**

(वृ. नि. र. । विषमज्व.)

मसूरातूषकैर्धूपः सर्वज्वरगदापहः ।

तुषयुक्त मसूरकी धूप देनेसे समस्त ज्वर नष्ट होते हैं।

(५४३१) मसूरिकान्तकधूपः

(व. से. । मसूरिका.)

वेणुत्वक् सुरसा लाक्षा कार्पासास्थि मसूरिकाः।
यवपिष्टं विषं सर्पिर्वचा ब्राह्मी सुवर्चला ॥
धूपनार्थे यथालाभं धूममेतत्प्रयोजयेत् ।
आदावेतत्प्रयोक्तव्यं नश्यन्त्याशु मसूरिकाः ॥
न गृह्णन्ति विषं केचिद्यथालाभश्रुतेरिह ॥

बांसकी छाल, तुलसी, लाख, कपासके बीज (बिनौले), मसूर, जौका आटा, अतीस, घी, बच, ब्राह्मी और सुवर्चला (हुल हुल) मेंसे जितनी चीजें मिलें वे सब समान भाग लेकर घीके अतिरिक्त समस्त पदार्थोंको कूट लें और फिर उसमें घी मिला दें।

मसूरिकाके प्रारम्भमें इसकी धूप (धूनी) देनेसे मसूरिका शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

कुछ वैद्य इसमें अतीस नहीं डालते।

(५४३२) मार्जारविष्ठाधूपः

(वृ. नि. र. । विषमज्वर)

वैडालं वा शकृद्योज्यं वेपमानस्य धूपने ।

बिल्लीकी विष्टाकी धूनी देनेसे ज्वर सम्बन्धी कम्पन नष्ट होता है।

(५४३३) माहेश्वरधूपः (१)

(वै. र. । ज्वर. वृ. नि. र. ।
विषमज्व. ; व. से. । ज्वरा.)

रुद्रजटागोशृङ्गं विडालविष्ठोरगस्य निर्मोकः ।
मदनफलभूतकेश्यौ वंशत्वग्रुद्रनिर्माल्यम् ॥
घृतयवमयूरचन्द्रकच्छगलकलोमानि सर्षपा सवचा
हिङ्गुगवास्थिमरीचाः समभागाश्छागमूत्रसम्पिष्टाः
धूपविधिना शमयन्त्येते सर्वज्वरान्नियतम् ।
ग्रहडाकिनीपिशाचप्रेतविकारानयं धूपः ॥

रुद्रजटा, गायका सींग, बिल्लीकी विष्टा, सांपकी कांचली, मैनफल, जटामांसी, बांसकी छाल, शिवनिर्माल्य, घी, जौ, मोरके पंखका चन्द्रक, बकरेके बाल, सरसों, बच, हींग, गायकी हड्डी और काली मिरच समान भाग लेकर घीके अतिरिक्त समस्त ओषधियोंको एकत्र कूट लें और फिर उसमें घी मिलाकर बकरेके मूत्रमें घोटें।

इसकी धूपसे समस्त ज्वर और डाकिनी, पिशाच तथा प्रेतादिक उपद्रव शान्त हो जाते हैं।

(५४३४) माहेश्वरधूपः (२)

(र. र. स. । उ. खं. अ. २२.)

श्रीवेष्टदारुबाह्लीकमुस्ताकटुकरोहिणी ।
सर्षपा निम्बपत्राणि मदनस्य फलं वचा ॥
बृहत्यौ सर्पनिर्मोककार्पासास्थियवास्तुषाः ।
गोशृङ्गं खररोमाणि बर्हिपिच्छं बिडालविट् ॥
छागरोमघृतं चेति बस्तमूत्रेण भावितम् ।
एष माहेश्वरो धूपः सर्वग्रहनिवारणः ॥

धूप सरल, देवदारु, केसर, नागरमोथा, कुटकी, सरसो, नीमके पत्ते, मैनफल, बच, छोटी और बड़ी कटेली, सांपकी कांचली, कपासके बीज (बिनौले), जौकी भूसी, गायका सींग, गधेके बाल, मोरके पंख, बिलावकी विष्टा और बकरेके बाल १-१ भाग लेकर सबको एकत्र कूट लें और फिर

उसमें १ भाग घी मिलाकर सबको बकरेके मूत्रमें घोटें।

इसकी धूप देनेसे समस्त ग्रह-दोष नष्ट होते हैं।

(५४३५) **माहेश्वरधूपः** (३)

यो. र. । उन्माद ; व. से. ; वृ. नि. र. । विषमज्व. ; यो. त. । त. ७७)

कार्पासास्थि मयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्य पिण्डीतक-त्वङ्मांसी वृषदंशविण्नखवचाकेशाहिनिर्मोचनैः।
नागेन्द्रद्विजभृङ्गहिङ्गुमरिचैस्तुल्यैस्तु धूपः कृतः स्कन्दोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नः स्मृतः॥

बिनौले (कपासके बीज), मोरके पंख, कटेली, शिवनिर्माल्य, तगर, दालचीनी, जटामांसी, बिल्लीकी विष्टा, नखी, बच, मनुष्यके बाल, सांपकी कांचली, हाथीदांत, (गायका) सींग, हींग और काली मिरच समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसकी धूप देनेसे स्कन्दोन्माद; पिशाच राक्षस और सुरावेश तथा ज्वर नष्ट होता है।

इति मकारादिधूपप्रकरणम्

अथ मकारादिधूम्रप्रकरणम्

(५४३६) **मनःशिलादिधूमम्** (१)

(भै. र.। कास.; वृ. नि. र.; वृ. मा. ; यो. र.। कासा. ; वा. भ.। चि. अ. ३)

मनः शिलालमरिच[१]मांसीमुस्तेङ्गुदैः पिबेत्।
धूमं त्र्यहश्च तस्यानु सगुडञ्च पयः पिबेत्॥
एष कासान् पृथग्द्वन्द्वसर्वदोषसमुद्भवान्।
शतैरपि प्रयोगानां साधयेदप्रसाधितान्॥

मनसिल, हरताल, काली मिरच, जटामांसी, नागरमोथा और हिंगोटके फल समान भाग लेकर कूट लें। इसका धूम्रपान करके गुडयुक्त दूध पीनेसे एक दोषज, द्वि दोषज और सान्निपातिक कास (खांसी) नष्ट होती है।

सैकड़ों प्रयोगोंसे न नष्ट होने वाली खांसी भी इससे केवल ३ दिनमें नष्ट हो जाती है।

१ वाग्भटमें मरिच की जगह मुलैठी लिखी है।

(५४३७) **मनःशिलादिधूमम्** (२)

(भै. र. ; वृ. मा. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । कासा.)

मनः शिला लिप्तदलं बदर्या उपशोषितम्।
सक्षीरं धूमपानञ्च महाकासनिबर्हणम्॥

बेरीके पत्तों पर मनसिलका लेप करके छायामें सुखा लें। इनका धूम्रपान करके बादमें दूध पीनेसे महाकास नष्ट होती है।

इति मकारादिधूम्रप्रकरणम्

अथ मकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(५४३८) मञ्जिष्ठाद्यञ्जनम्

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

मञ्जिष्ठामधुकोत्पलोदधिमलत्वक्सेव्यगोरोचना-
मांसीचन्दनशङ्खपत्रगिरिमृत्तालैः सपुष्पाञ्जनैः ।
सर्वैरेव समांशमञ्जनमिदं शस्तं सदा चक्षुषो-
र्हन्ति क्लेदमथाशु शोणितरुजः पिल्लार्मशुक्रा-
पहम् ॥

मजीठ, मुलैठी, कमल, समन्दरझाग, दालचीनी, खस, गोलोचन, जटामांसी, लाल चन्दन, शंख, तेजपात, गेरु, (शुद्ध) हरताल और पुष्पाञ्जन । प्रत्येकका अत्यन्त महीन कपड़छन चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर अञ्जन बनावें ।

इसे आंखमें लगानेसे आंखोंका क्लेद (चिपचिपाहट), रक्तज पीड़ा, अर्म और शुक्रादिका नाश होता है ।

(५४३९) मनःशिलाद्यञ्जनम् (१)

(वृ. नि. र. । सन्निपात ज्वर.)

तुरङ्गलालासहिता मनःशिला
निहन्ति तन्द्रा सकृदञ्जनेन ।

मनसिलको घोड़ेकी लार (थूक) में घिसकर केवल १ बार अञ्जन लगानेसे सन्निपात ज्वरकी तन्द्रा दूर होती है ।

(५४४०) मनःशिलाद्यञ्जनम् (२)

(ग. नि. । विषमज्वर.)

मनःशिलासैन्धवपिप्पलीनां
चूर्णं सतैलं समभागभाजाम् ।
नेत्राञ्जनं तद्विहितं मुनीन्द्रैः
सुखाय पुंसां विषमज्वरेषु ॥

मनसिल, सेंधानमक और पीपलका अत्यन्त महीन कपड़छन चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको १ भाग (सरसोंके) तेलमें मिलाकर घोटें ।

इसका अञ्जन लगानेसे विषमज्वर नष्ट होता है ।

(५४४१) मनःशिलाद्यञ्जनम् (३)

(ग. नि. । उन्माद. ; यो. र. ; व. से. ; वृ. मा. । अपस्मा.)

मनोह्वा तार्क्ष्यजं चैव शकृत्पारावतस्य च ।
अञ्जनं हन्त्यपस्मारमुन्मादं च विशेषतः ॥

मनसिल, रसौत और कबूतरकी विष्ठा समान भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर अञ्जन बनावें ।

इसे लगानेसे अपस्मार और विशेषतः उन्माद नष्ट होता है ।

(५४४२) मनःशिलाद्यञ्जनम् (४)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

मनोह्वातुत्थकस्तूरीमांसीमलयनागरम् ।
समांशं शङ्खकर्पूरमशीतिगुणमञ्जनम् ॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं षड्विधे तिमिरे हितम् ॥

शुद्ध मैनसिल, तूतिया (शुद्ध), कस्तूरी, जटामांसी, सेंभलकी मूसली, सोंठ, शंख और कपूर समान भाग लेकर यथा विधि अञ्जन बनावें।

यह अञ्जन ६ प्रकारके तिमिर रोगोंको नष्ट करता है।

(५४४३) **मनःशिलाद्यञ्जनम्** (५)

(व. से. । नेत्र. ; यो. र. । नेत्र. ; बृ. नि. र. । नेत्र.)

शिलासैन्धवकासीसशङ्खव्योषरसाञ्जनैः।
सक्षौद्रैः काचशुक्रार्मतिमिरघ्नी रसक्रिया॥

शुद्ध मनसिल, सेंधानमक, शुद्ध कसीस, शंख, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और रसौत के १—१ भाग चूर्णको एकत्र मिलाकर १ भाग शहदमें घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसे आंखमें लगानेसे काच, शुक्र, अर्म और तिमिर रोग नष्ट होता है।

(५४४४) **मनःशिलाद्या वर्तिः**

(वं. से. ; ग. नि. । बाल रोगा. ११)

मनःशिला शङ्खनाभिः पिप्पल्योऽथ रसाञ्जनम्।
वर्तिः क्षौद्रेण संयुक्ता बाले सर्वाक्षिरोगजित्॥

शुद्ध मनसिल, शंखनाभि, पीपल और रसौत समान भाग लेकर, महीन चूर्ण करके शहदमें घोटकर बत्तियां बनावें।

यह वर्ति बालकोंके समस्त नेत्र रोगोंको नष्ट करती है।

(५४४५) **मरिचादिचूर्णाञ्जनम्**

(व. से. ; यो. र. । नेत्र रोगा; वा. भ. । उ. अ. १३)

शाणार्द्धं मरिचं द्वौ च पिप्पल्यर्णवफेनयोः।
शाणार्धं सैन्धवाच्छाणं नव सौवीरकाञ्जनात्॥
पिष्टं सूक्ष्मं शिलायाश्च चूर्णाञ्जनमिदं शुभम्।
कण्डूकाचकफार्त्तानां मलानाश्च विशोधनम्॥

काली मिर्चका चूर्ण आधी शाण, पीपलका चूर्ण १ शाण, समन्दर झाग १ शाण, सेंधा नमकका चूर्ण आधी शाण और सौवीराञ्जन (सुरमा) ९ शाण लेकर सबको एकत्र खरल करके अञ्जन बनावें।

यह अञ्जन आंखोंकी खुजली, काच, कफविकार और मैलको नष्ट करता है।

(५४४६) **मरिचाद्यञ्जनम्** (१)

(ग. नि. । नेत्र रोगा.)

मरिचांशः शिलार्धेन योजितः सुप्रचूर्णितः।
नेत्रस्रावं हरत्याशु नराणामयमञ्जनात्॥

१ भाग शुद्ध मनसिल और २ भाग काली मिरचके चूर्णको एकत्र घोटकर अञ्जन बनावें।

इसे आंखोंमें लगानेसे नेत्रस्राव (ढलका—पानी बहना) बन्द हो जाता है।

(५४४७) **मरिचाद्यञ्जनम्** (२)

(व. से. । नेत्र रोगा. ; यो. र.)

दध्ना विघृष्टं मरिचं रात्र्यन्ध्याञ्जनमिष्यते।
पिप्पल्योऽपि हितास्तद्वद्गोशकृद्रसभाविताः॥

काली मिरचको दहीमें घोटकर अथवा गायके गोबरके रसमें पीपलको घोट कर लगानेसे रतौंधा नष्ट होता है।

(५४४८) मालत्याद्यञ्जनम्

(यो. र. । नेत्र.)

नक्तान्धतां जयेदेतदञ्जनं साधु योजितम् ।
मालतीपत्रक्षौद्रं च निशाद्वयरसाञ्जनैः ॥

चमेलीके पत्ते, शहद, हल्दी, दारु हल्दी और रसौत समान भाग लेकर अञ्जन बनावें।

यह अञ्जन रतौंधेको नष्ट करता है।

(५४४९) मुक्तादिमहाञ्जनम्

(वृ. यो. त. । त. १३१ ; यो. र. ; वृ. नि. र.; व. से. । नेत्र.)

मुक्ताकर्पूरकाचागुरुमरिचकणासैन्धवं सैलवालं
शुण्ठीकङ्कोलकांस्यत्रपुरजनिशिला-
शङ्खनाभ्यभ्रतुत्थम् ।
दक्षाण्डत्वक् च साक्षक्षतजयुतशिवाक्लीतकं-
राजवर्तं
जातीपुष्पं तुलस्याः कुसुममभिनवं
बीजमस्यास्तथैव ॥
पूतीक निम्बाञ्जनभद्रमुस्तं
सताम्रसारं रसगर्भयुक्तम् ।
प्रत्येकमेषां खलु माषकैकं
पलेन पिष्यान्मधुनाऽतिसूक्ष्मम् ॥
भवन्ति रोगा नयनाश्रिता ये
नितान्तमात्रोपचिताश्च तेषाम् ।
विधीयते शान्तिरवश्यमेव
मुक्तादिनाऽनेन महाञ्जनेन ॥

मोती, कपूर, काच, अगर, काली मिर्च, पीपल, सैंधा नमक, एलवालुक, सोंठ, कंकोल, कांसीकी भस्म, बंग भस्म, हल्दी, मनसिल, शंखनाभि, अभ्रक भस्म, नीले थोथेकी भस्म, मुरगीके अण्डेके छिलके, बहेड़ा, केसर, हर्र, मुलैठी, राजावर्त, चमेलीके फूल, तुलसीकी नवीन मंजरी, तुलसीके बीज, करंज वीज, नीमके बीज (निबौली), सुरमा, नागरमोथा, ताम्र भस्म और रसौत प्रत्येकका महीन चूर्ण १-१ माषा लेकर सबको ४ तोले शहदमें घोटकर अञ्जन बनावें।

यह अञ्जन अत्यन्त प्रवृद्ध समस्त नेत्र रोगोंको अवश्य नष्ट कर देता है।

(५४५०) मेषशृङ्गाद्यञ्जनम् (१)

(वृ. मा. । नेत्र.)

मेषशृङ्गस्य पुष्पाणि शिरीषधवयोरपि ।
मालत्याश्चैव तुल्यानि मुक्तावैडूर्यमेव च ॥
अजाक्षीरेण सम्पिष्य ताम्रे सप्ताहमावपेत् ।
प्रविधाय च तद्वर्तिं योजयेदञ्जने भिषक् ॥

मेढासिंगीके फूल, सिरसके फूल, धवके फूल, मालतीके फूल, मोती और वैडूर्यमणि समान भाग लेकर सबको तांबेके खरलमें डालकर सात दिन तक बकरीके दूधमें घोटें।

(यह अञ्जन नेत्रोंको स्वच्छ करता है।)

(५४५१) मेषशृङ्गाद्यञ्जनम् (२)

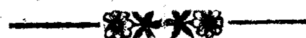
(व. से । नेत्र. ; वृ. नि. र. ।)

समेषशृङ्गाञ्जनभागसम्मितः
शङ्खञ्जनः काचमलं व्यपोहति ॥

मेढासिंगी, रसौत, शंख और सुरमा समान भाग लेकर अञ्जन बनावें।

यह अञ्जन काच और नेत्रमलको नष्ट करता है।

इति मकाराद्यञ्जनप्रकरणम्



अथ मकारादिनस्यप्रकरणम्

(५४५२) मक्षिकाविट्नस्यम्

(वृ. नि. र. । हिक्का.)

स्तन्येन माक्षिकाविष्टा नस्ये वालक्तकाम्बुना ।
योज्या हिक्काभिभूतेभ्यः स्तन्यं वा चन्दनान्वितम् ॥

स्तन्य (स्त्रीके दूध) के साथ मक्खीकी विष्टा या सफेद चन्दन घिसकर अथवा लाखके पानीके साथ मक्खीकी विष्टा घिसकर नस्य देनेसे हिक्का (हिचकी) शान्त होती है।

(५४५३) मधुकादिनस्यम् (१)

(यो. त. । त. २९; वृ. मा. । हिक्का.)

मधुकं मधुसंयुक्तं पिप्पली शर्करान्विता ।
नागरं गुडसंयुक्तं हिक्काघ्नं नावनत्रयम् ॥

मुलैठीके चूर्णको शहदमें मिलाकर या पीपलके चूर्णको समान भाग खांडमें मिलाकर अथवा सोंठके चूर्णको गुड़में मिलाकर नस्य देनेसे हिचकी नष्ट होती है।

(५४५४) मधुकादिनस्यम् (२)

(वै. म. । पटल १६)

वातपित्तजनितं शिरोरुजं
नाशयेन्मधुकल्कसाधितम् ।
नारिकेलपयसा शृतं त्विदं
तैलमर्दितहरं च नावनात् ॥

मुलैठीका चूर्ण १० तोले, नारयलका दूध ४ सेर और तिलका तैल १ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे वातपित्तज शिर-शूल और अर्दित नष्ट होता है।

(५४५५) मधूकादिनस्यम्

(च. द. । ज्वर; ग. नि. । ज्वरा. ; व. से. । ज्वर; भा. प्र. । म. खं. २)

मधूकसारसिन्धूत्थवचोषणकणाः समाः ।
श्लक्ष्णं पिष्ट्वाम्भसा नस्यं
कुर्यात्संज्ञाप्रबोधनम् ॥

महुवेका सार (पुष्प रस), सेंधानमक, बच, काली मिर्च और पीपल समान भाग लेकर सबको अत्यन्त बारीक पीसें।

इसे पानीमें मिलाकर नस्य देनेसे बेहोशी दूर होती है।

(५४५६) मनःशिलादिनस्यम्

(ग. नि. । शिरो.)

नस्यं मनःशिलारोध्रं पिप्पलीमरिचान्वितम् ।
यः करोति हरेदेव तस्यार्धशिरसो व्यथाम् ॥

मनसिल, लोध, पीपल और काली मिरच समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

इसकी नस्य लेनेसे आधासीसी (आधे मस्तककी पीड़ा) नष्ट होती है।

(५४५७) मरिचादिनस्यम् (१)

(व. से. । वातव्या. ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

मरिचं शिग्रुबीजानि विडङ्गश्च फणिज्जकम् ।
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि दद्याच्छीर्षविरेचने ॥

काली मिरच, सहंजनेके बीज, बायबिड़ंग और बनतुलसी के पत्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसकी नस्य देनेसे शिरोविरेचन हो जाता है। (यह योग अपतन्त्रक रोगमें बेहोशी दूर करनेके लिये प्रयुक्त किया जाता है।)

(५४५८) मरिचादिनस्यम् (२)

(भा. प्र.। सन्निपात ; वृ. नि. र.। सन्निपात)

अशिशिरजल परिमृदितं मरिचकणाजीरसिन्धुजम्
नस्यविधि सेवितं ननु कर्णकरुग्राशकृद्गदितम्॥

काली मिरच, पीपल, जीरा और सेंधेके समान भाग मिश्रित बारीक चूर्णको उष्ण जलमें पीसकर नस्य देनेसे ' कर्णक-सन्निपात ' नष्ट होता है।

(५४५९) मरिचादिनस्यम् (३)

(वै. म र. । पटल ९)

स्तन्यनिघृष्टं मरिचं नसि निहितं नाशयेच्छूलम्।
गुडमरिचविहितकल्कः कोष्णजलैः पीतं आशु नाशयति॥

काली मिरचको स्तन्य (स्त्रीके दूध) में घोटकर उसकी नस्य देने और गुड़में काली मिरचका चूर्ण मिलाकर उष्ण जलके साथ पीनेसे शूल तुरन्त नष्ट हो जाता है ।

(५४६०) मरिचादिनस्यम् (४)

(वृ. नि. र. । सन्निपात.)

मरीचकं च पचंपचा वचा रुक्
कृमिहरनागरशर्वरीगवाक्ष्यः ।
छागलकजलकान्विता नितान्त
नसि निहिता ननु तन्द्रिकं जयन्ति ॥

काली मिर्च, दारुहल्दी, बच, कूठ, बायबिड़ंग, सोंठ, हल्दी और इन्द्रायणकी जड़ समान भाग लेकर बकरेके मूत्रमें पीसकर नस्य देनेसे ' तन्द्रिक सन्निपात ' नष्ट होता है ।

(५४६१) मरिचादिनस्यम् (५)

(यो र. । ज्वरा.)

मरिचतुरगगन्धा मागधीसिन्धुजातं
लशुनमधूकसारैरुग्रगन्धार्द्रकाभ्याम् ।
छगलकजलपिष्टः संयुतः शास्त्रविद्भिः
सपदि भवति नस्यो भुग्ननेत्रप्रमाथी ॥

काली मिर्च, असगन्ध, पीपल, सेंधा नमक, ल्हसन, महुवेका गोंद, बच और अद्रकके समान-भाग मिश्रित चूर्ण (कल्क) को बकरेके मूत्रमें पीसकर नस्य देनेसे "भुग्ननेत्र सन्निपात" शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(५४६२) महौषधादिनस्यम्

(वृ. मा. । शिरो.)

महौषधं सस्वरसं वचापिप्पलिभिः कृतम् ।
अवपीडं प्रदातव्यं सूर्यावर्तनिषूदनम् ॥
एष एव विधिः कृतस्नः कार्यश्चार्धावभेदके॥

सोंठ, बच, और पीपलके चूर्णको अदरकके रसमें घोटकर, कपड़ेसे निचोड़कर रस निकालें ।

इसकी नस्य लेनेसे सूर्यावर्त और अर्धावभेदक (आधा सीसी)का नाश होता है ।

(५४६३) मातुलुङ्गादिनस्यम्

(वृ. नि. र. सन्निपात.)

मातुलिङ्गार्द्रकरसं कोष्णं त्रिलवणान्वितम् ।
अन्यद्वा सिद्धविहितं नस्यं तीक्ष्णं प्रयोजयेत् ॥

तेन प्रभिद्यते श्लेष्मा प्रभिन्नश्च प्रसिच्यते ।
शिरोहृदयकण्ठास्यपार्श्वरुक् चोपशाम्यति ॥

सन्निपात रोगीको बिजौरे और अदरकके मन्दोष्ण रसमें त्रिलवण (सेंधा नमक, काला नमक और विडलवण) का चूर्ण मिला कर उसकी अथवा अन्य किसी तीक्ष्ण औषधकी नस्य देनेसे कफ ढीला होकर निकल जाता है और शिर पीड़ा, हृदयशूल, कण्ठ तथा मुखका दर्द एवं पार्श्व वेदना आदि नष्ट हो जाती है ।

(५४६४) मुण्डीतैलनस्यम्

(वै. म. र. । पटल १७)

तैलं कषाये मुण्डिन्याः तत्कल्कं साधितं नसि ।
दत्तं पीतं च कुचयोः पतनं विनिवर्तयेत् ॥

मुण्डीके कल्क और क्काथसे सिद्ध तेलकी नस्य देने और पिलानेसे स्त्रीके शिथिल स्तन दृढ़ हो जाते हैं ।

(५४६५) मोहान्धसूर्यनस्यम्

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

गन्धेशौ लसुनाम्भोभिर्मर्दयेद्याममात्रकम् ।
तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतिबोधकृत् ॥

समान भाग पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे १ पहर तक ल्हसनके रसमें घोटें ।

इसे ल्हसनके रसमें मिलाकर नस्य देनेसे सन्निपातकी मूर्च्छा नष्ट होती है ।

इति मकारादिनस्यप्रकरणम्

अथ मकारादिरसप्रकरणम्

मकरध्वजो रसः (१)

(र. मं.; भै. र. । वाजीकर.)

प्र. सं. १९०८ "चन्द्रोदयो रसः" देखिये ।

भै. र. में गन्धक पारदसे तीन गुना लिखा है । भैषज्य रत्नावली; धन्व; तथा र. रा. सु. के ज्वराधिकारमें कथित "मकरध्वजो रसः" भी नं. १९०८ के समान ही है परन्तु उसमें सेवन विधि में कर्पूर आदि अनुपान–द्रव्योंका वर्णन नहीं है । तथा कज्जलीको केवल घृत कुमारी–रसकी भावना देनेके लिये लिखा है ।

(५४६६) मकरध्वजो रसः (२)

(र. र. रसा. । उपदेश ६)

वज्रहेमार्कसूताभ्रलोहभस्मक्रमोत्तरम् ।
सर्वं कन्याद्रवैर्मर्द्यं शाल्मल्याश्च द्रवैस्त्र्यहम् ॥
तद्रुद्ध्वा काचकुप्यन्तर्वालुकायां त्र्यहं पचेत् ।
तत्कल्कं मुशलीक्वाथैर्वज्राऽर्कक्षीरसंयुतैः ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे रुद्ध्वाऽन्तर्भूधरे पुटेत् ।
यामादुद्धृत्य सञ्चूर्ण्य सिताकृष्णात्रिजातकैः ॥
समैः समं विमिश्र्याथ माषैकं भक्षयेत्सदा ।
मागधी मुशली यष्टी वानरीबीजकं समम् ॥

चूर्ण सिताज्य गोक्षीरैः पलार्ध पाययेदनु ।
कामिनीनां सहस्रैकं रममाणो न मुह्यति ॥
सेवनाद्दृढकायः स्याद्रसोऽयं मकरध्वजः ॥

हीरकी भस्म १ भाग, स्वर्णभस्म २ भाग, ताम्रभस्म ३ भाग, पारदभस्म ४ भाग, अभ्रक-भस्म ५ भाग और लोहभस्म ६ भाग लेकर सबको ३-३ दिन घृतकुमारी और सेंभलकी मूसलीके स्वरस में खरल करके आतशी शीशीमें भरकर यथा विधि ३ दिन तक वालुका-यन्त्रमें पकावें ।

तदनन्तर शीशीमें से रसको निकालकर उसे १-१ दिन क्रमशः मूसलीके क्काथ, थोहरके दूध और आकके दूधमें घोटकर भूधरयन्त्रमें एक पहर की अग्नि दें ।

तत्पश्चात् उसे निकाल कर उसमें मिश्री, पीपल, दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण (समान भाग मिश्रित उपरोक्त सिद्ध (तैयार) रसके बराबर) मिलाकर अच्छी तरह खरल करें ।

अनुपान-पीपल, मूसली, मुलैठी और कौंचके बीजोंका चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र मिला कर रक्खें ।

सेवनविधि-उपरोक्त रसमें से १ माशा खाकर उपरसे २॥ तोले अनुपान-चूर्ण फांक कर मिश्री और घृतयुक्त गोदुग्ध पियें ।

इसके सेवनसे सहस्रों रमणियों के साथ काम-केलि करनेकी शक्ति प्राप्त होती है तथा दीर्घकाल तक सेवन करने से शरीर दृढ़ होता है ।

(**व्यवहारिक मात्रा**-रस २ रत्ती । अनुपान चूर्ण ६ माशे ।)

(५४६७) मकरध्वजो रसायनः

(भै. र. । रसायना.; र. रा. सु. । रसायन.; न. मृता. । त. ५)

स्वर्णस्य भागौ वङ्गश्च मौक्तिकं कान्तलौहकम् ।
जातीकोषफले रूप्यं कांस्यकं रससिन्दूरम् ॥
प्रवालं कस्तूरी चन्द्रमभ्रकश्चैकभागिकम् ।
स्वर्णसिन्दूरतो भागांश्चत्वारः कल्पयेद् बुधः॥
नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिसूदनः ।
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्त्तितः ॥

स्वर्णभस्म २ भाग तथा बङ्गभस्म, मोतीभस्म, कान्तलोह-भस्म, जावित्री और जायफलका चूर्ण, चांदी भस्म, कांसी भस्म, रससिन्दूर, प्रवाल (मूंगा) भस्म, कस्तूरी, कपूर और अभ्रक-भस्म १-१ भाग एवं स्वर्ण सिन्दूर ४ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इसके समान सर्वरोगनाशक अन्य औषध नहीं है ।

(मात्रा-२ रत्ती)

(५४६८) मञ्जिष्ठादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । अश्मरि.)

मञ्जिष्ठा त्रापुषं बीजं जीरकः शतपुष्पिका ।
धात्रीफलं वदरकं[1] गन्धकं च मनःशिला ॥
एतेषां समभागानां चूर्ण टङ्कमितं नरः ।
भक्षयेन्मधुना सार्द्धं पतेत्तस्याश्मरी ध्रुवम् ॥

मजीठ, खीरेके बीज, जीरा, सोया, आमला, सूखाबेर (पाठान्तरके अनुसार शुद्ध हिंगुल), शुद्ध

१ धात्रीफलञ्च दरदमिति पाठान्तरम् ।

गन्धक, और शुद्ध मनसिल के समान भाग चूर्णको एकत्र मिलाकर खरल करें।

इसे ५ माशेकी मात्रानुसार शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे पथरी अवश्य निकल जाती है।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा)

(५४६९) मणिपर्पटी रसः

(र. र. स. । उ. ख. अ. २४ नासारो.)

वज्रं मरकतं पुष्पमिन्द्रनीलं सुचूर्णितम् ।
रसहिङ्गुलगन्धश्च कज्जलीं कारयेद्भिषक् ॥
द्रावयेत्तां लोहपात्रे पर्पटयाकारतां नयेत् ।
निर्गुण्डी तुलसीशिग्रुधत्तूररविवह्निजैः ॥
रसैर्व्योषवरारम्भासुरसैरपि भावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनापि सप्तधा परिभावयेत् ॥
एवं सिद्धो रसो नाम्ना विख्याता मणिपर्पटी।
सेविता गुञ्जया तुल्या निहन्यान्नासिकागदान् ॥
पथ्योपचारादिवशात्सर्वव्याधीन्विशेषतः ॥

हीराभस्म, मरकत (पन्ना) भस्म, पुष्पमणि (पुखराज) भस्म, और नीलम भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक और हिंगुलकी कज्जली बनावें और फिर उसे (बेरीकी अग्नि पर) लोहपात्रमें पिघलाकर उसमें अन्य रत्नों की भस्में मिला दें एवं गोबरके ऊपर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर ढालकर, ऊपरसे दूसरा कदलीपत्र ढककर गोबरसे दबा दें। जब शीतल हो जाय तो निकालकर उसे संभालू, तुलसी, सहंजनेकी छाल, धतूरा, आक, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला केला, तुलसी, तथा अदरकके रसकी सात सात भावना देकर सुरक्षित रक्खें। (जिनके स्वरस न मिल सकें उनके काथ लेने चाहियें। भावना प्रत्येक रसकी पृथक् पृथक् देनी चाहिये।)

इसे १ रत्ती मात्रानुसार यथोचित अनुपानके साथ सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे समस्त नासा—रोग नष्ट होते हैं।

(५४७०) मण्डूरगुटिका

(व. से.; र. का. धे. । पाण्डु.)

विडङ्गमुस्तत्रिफलादेवदारुषडूषणैः ।
निर्वाप्य सप्तधा मूत्रे मण्डूरं ग्राह्यमिष्यते ॥
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
तैरक्षमात्रां गुटिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने ॥
कामलापाण्डुरोगार्त्तः सुखमाप्नुयते क्षणात् ॥

बायबिडंग, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और काली मिर्च का चूर्ण १—१ भाग तथा सातबार गोमूत्रमें बुझा हुवा मण्डूर १२ भाग और लोह-भस्म २४ भाग लेकर सबको १६ गुने गोमूत्रमें पकावें। जब गाढ़ा हो जाए तो १।—१। तोले की गुटिका बना लें।

इनके सेवन से पाण्डु और कामला रोग नष्ट होता है। (व्यवहारिक मात्रा ३ रत्ती)

(५४७१) मण्डूरचूर्णम्

(र. र. । शोथा.)

श्लक्ष्ण चूर्णञ्च मण्डूरं गोमूत्रैः पाचयेद्दिनम् ।
वज्रवल्या रसैः पेष्यं चित्रकुड्मलसंयुतम् ॥
भक्षितश्चाक्षमात्रश्च ह्यसाध्यं श्वयथुं जयेत् ।

मण्डूर भस्मको १ दिन गोमूत्रमें पकाकर वज्र-वल्ली (हड़जोड़ी) के रसमें घोटकर रक्खें।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार चीतेकी कलियों के चूर्णके साथ सेवन करनेसे असाध्य शोथ भी नष्ट हो जाता है।

(व्यवहारिक मात्रा-१ माशा।)

(५४७२) **मण्डूरमारणविधिः (१)**

(रसे. सा. सं.; र. मं.)

**ये गुणा मारिते मुण्डे ते गुणामुण्डकिट्टके।
तस्मात्सर्वत्र मण्डूरं रोगशान्त्यै प्रयोजयेत्॥
शतोर्द्ध्वमुत्तमं किट्टं मध्यश्चाशीतिवार्षिकम्।
अधमं षष्टिवर्षीयं ततो हीनं विषोपमम्॥
दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसन्तु
गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान्।
विचूर्ण्य लीढं मधुनाऽचिरेण
कुम्भाह्वयं[१] पाण्डुगदं निहन्ति[२]॥
किट्टाद्दशगुणं मुण्डं मुण्डात्तीक्ष्णं शताधिकम्।
तीक्ष्णाल्लक्षगुणं कान्तं भक्षणात्कुरुते गुणम्॥**

मुण्डकिट्ट (मण्डूर) में भी मुण्डलोह-भस्मके समान ही गुण होते हैं अत एव (लोह-भस्म के स्थान में) मण्डूर भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

सौ वर्षसे अधिक पुराना मण्डूर उत्तम, अस्सी वर्ष का मध्यम, ६० वर्षका निकृष्ट और इससे कम पुराना विषके समान हानिकारक होता है।

मण्डूरको बहेड़ेकी लकड़ियोंकी अग्नि में तपा तपा कर आठ बार गोमूत्रमें बुझानेसे वह सेवन योग्य हो जाता है। इसे चूर्ण करके शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे पाण्डु और कुम्भकामला शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

मण्डूरसे दशगुना गुण मुण्ड लोहमें, मुण्डसे १०० गुना तीक्ष्ण लोहमें और तीक्ष्णसे लाख गुना गुण कान्त लोह में होता है।

(५४७३) **मण्डूरमारणविधिः (२)**

(र. र. स. । अ. ५)

**गोमूत्रैस्त्रिफला क्वाथ्या तत्क्वाथे सेचयेच्छनैः।
लोहकिट्टं सुसंतप्तं यावज्जीर्यति तत्त्रयम्॥
तच्चूर्णं जायते पेष्यं मण्डूरोयं प्रयोजयेत्॥**

त्रिफलाको (८ गुने) गोमूत्रमें पकावें। जब चौथा भाग शेष रहे तो छान लें फिर मण्डूरको बार बार अग्निमें तपा तपा कर इस क्वाथमें बुझावें; और जब वह भस्मके समान हो जाय तो खरल करके रख लें।

(५४७४) **मण्डूरमारणविधिः (३)**

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

**अक्षाङ्गारैर्धमेत्किट्टं लोहजं तद्गवां जलैः।
सेचयेदक्षपात्रान्तः सप्तवारं पुनः पुनः॥
मण्डूरोयं समाख्यातश्चूर्णं श्लक्ष्णं नियोजयेत्॥**

बहेड़ेके कोयलोंमें मण्डूरको बार बार तपाकर बहेड़ेकी लकड़ीके पात्रमें गोमूत्रमें बुझावें। इस प्रकार सात बार बुझानेसे मण्डूर सेवन योग्य हो जाता है। इसे भली भांति खरल करके रक्खें और आवश्यकतानुसार काममें लावें।

(५४७५) **मण्डूरमारणविधिः (४)**

(यो. चि. म. । अ. ७)

**अक्षाङ्गारैर्धमेत्किट्टं लोहजं तद्गवां जलैः।
सेचयेत्तप्ततप्तं च सप्तवारं पुनः पुनः॥**

---

१ नृणां क्षयमिति पाठान्तरम्।

२ यह योग सु. सं.; वृ. मा.; ग. नि. और भा. प्र. में भी है।

चूर्णयित्वा ततः क्वाथैर्द्विगुणैस्त्रिफलाभवैः ।
पचेत्ततश्चार्कदुग्धैर्मण्डूरं जायते परम् ॥

मण्डूरको बहेड़ेकी लकड़ीकी अग्निमें तपा तपाकर सात बार गोमूत्रमें बुझावें और फिर उसे २ गुने (४ गुने) त्रिफलाके काथमें पकावें। जब शुष्क हो जाय तो उसे आकके दूधमें घोटकर (शराव सम्पुट करके गजपुटमें) पकावें। इस प्रकार उत्तम मण्डूरभस्म तैयार हो जाती है।

(५४७६) **मण्डूरमारणविधिः** (५)

(यो. र.)

अक्षाङ्गारैर्धमेत्किट्टं लोहजं तद्गवां जलैः ।
सेचयेदक्षपात्रान्तः सप्तवारं पुनः पुनः ॥
चूर्णयित्वा ततः क्वाथैर्द्विगुणैस्त्रिफलोद्भवैः ।
आलोडच भर्जयेद्वह्नौ मण्डूरं जायते वरम् ॥
मण्डूरं शिशिरं रुच्यं पाण्डुश्वयथु शोषजित् ।
हलीमकं कामलां च प्लीहानं कुम्भकामलाम् ॥

मण्डूरको बहेड़ेकी लकड़ियोंकी अग्नि में तपा तपा कर सात बार बहेड़ेकी लकड़ीके पात्रमें गोमूत्रमें बुझावें। तत्पश्चात् उसे बारीक करके २ गुने (चार गुने) त्रिफला काथ में पकावें जब शुष्क हो जाय तो खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मण्डूर शीतल, रुचिकारक तथा पाण्डु, शोथ, शोष, हलीमक, कामला, कुम्भ कामला और प्लीहा—नाशक है।

(५४७७) **मण्डूरयोगः** (१)

(र. का. धे. । पाण्डु.)

अतिरिक्तं यदाऽर्शोभ्यो निपतत्यसिपीडनात् ।
दृश्यन्ते रक्तमत्यन्तं लोहकिट्टं तदाऽऽनयेत् ॥
गवां मूत्रेण तत्पक्त्वा बहुशः सूक्ष्मचूर्णितम् ।
अतिसूक्ष्ममिदं तस्य त्रिफलाकटुकान्वितम् ॥
किट्टस्यार्धेन संमिश्र्य चूर्णं शर्करया युतम् ।
दीयते त्रिदिनादूर्ध्वं रक्तं तिष्ठति नान्यथा ॥
मुद्गान्नं च मसूरान्नं दीयते पथ्यभोजनम् ।
अर्शांसि प्रशमं यान्ति कार्श्यं चैवातिवेगतः ॥
अत्यन्तं बलमाप्नोति रतिरत्यन्तमुद्यते ॥

शुद्ध मण्डूर को १ दिन गोमूत्रमें पका कर अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण करें तदनन्तर ४ भाग यह मण्डूर और १-१ भाग त्रिफला तथा कुटकीका चूर्ण एवं ६ भाग खांड लेकर सबको एकत्र खरल करें।

यदि बवासीरके मस्सों पर किसी प्रकारका दबाव पड़नेसे उनसे बहुत अधिक रक्त निकलने लगे तो उपरोक्त चूर्ण खिलानेसे वह तीन दिनमें अवश्य बन्द हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह चूर्ण अर्श और कृशताको भी नष्ट करता है।

पथ्यमें मूंग और मसूरकी दाल देनी चाहिये (मात्रा—१॥ माशा।)

(५४७८) **मण्डूरयोगः** (२)

(ग. नि. । ग्रन्थ्य.; वृ. मा. । गलगण्ड.)

महिषीमूत्रविमिश्रं लोहमलं संस्थितं घटे मासम् ।
अन्तर्धूमविदग्धं लिह्यान्मधुनाऽथ गलगण्डी ॥

शुद्ध मण्डूर को भैंसके (८ गुने) मूत्रमें मिलाकर, घड़ेमें भर कर उसका मुख बन्द करके रख दें तथा १ मास पश्चात् उसे इस प्रकार भस्म करें कि धुवां बाहर न निकले।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे गलगण्ड नष्ट होता है।

(मात्रा४-६ रत्ती ।)

(५४७९) मण्डूरयोगः (३)

(वृ. मा. । शूल.; यो. र. । शूला.; वृ. यो. त. । त. ९४)

गोमूत्रशुद्धं मण्डूरं त्रिफलाचूर्णसंयुम् ।
विलिहन्मधुसर्पिर्भ्यां शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥

गोमूत्रमें शुद्ध किये हुवे मण्डूरका चूर्ण और त्रिफला का चूर्ण समान भाग लेकर एकत्र खरल करें।

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करने से त्रिदोषज शूल नष्ट होता है।

(मात्रा-४-६ रत्ती)

(५४८०) मण्डूरयोगः (४)

(ग. नि. । पाण्डु ७)

शतवर्षं समादाय लोहसिङ्घाणकं शुभम् ।
पलानि पञ्च तच्चूर्णं तुल्यक्षौद्रसमन्वितम् ॥
भल्लातकास्थ्यष्टशतं विनिक्षिप्य विदाहयेत् ।
तदक्षमात्रं तक्रेण पीत्वा जीर्णे च तक्रभुक् ॥
एवं लभेत् सप्ताहात् पाण्डुरोगी सुखं परम् ॥

सौ वर्षका पुराना उत्तम शुद्ध मण्डूर ५ पल (२५ तोले) लेकर उसे २५तोले शहद में मिलावें और फिर उनमें ८०० भिलावों की मींगी मिला कर यथा विधि भस्म करें।

इसमें से नित्य प्रति १। तोला औषध तक्र के साथ सेवन करने और औषध पचने पर तक्र पान करने (केवल तक्र पर ही रहने) से सात दिन में पाण्डु नष्ट हो जाता है।

(५४८१) मण्डूरयोगः (५)

(र. च. । परिणाम शूल.)

लौहकिट्टं पलान्यष्टौ गोमूत्रस्याढके पचेत् ।
परिणामभवं शूलं सद्यो हन्ति न संशयः ॥

४० तोले शुद्ध मण्डूर को ८ सेर गोमूत्रमें पकावें। जब शुष्क हो जाय तो खरल करलें।

यह योग परिणाम शूलको निस्सन्देह शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

(मात्रा-४-५ रत्ती । अनुपान शहद)

(५४८२) मण्डूरलवणम्

(वृ. यो. त. ।त. ७४)

कृत्वाऽग्निवर्णं मलमायसन्तु
मूत्रे निषिञ्चेद्बहुशो गवां च ।
तत्रैव सिन्धूत्थ समं विपाच्यं
निरुद्धधूमं च बिभीतकाग्नौ ॥
तक्रेण पीतं मधुनाथ वाऽपि
विभीतकाख्यं लवणं प्रयुक्तम् ।
पाण्ड्वामयिभ्यो हितमेतदस्मा-
त्पाण्ड्वामयघ्नं न हि किञ्चिदन्यत् ॥

मण्डूरको (बहेड़े की) अग्निमें तपा तपा कर बार बार गोमूत्रमें बुझावें। जब मण्डूरका चूर्ण हो जाए तो उसमें उसके बराबर सेंधा नमकका चूर्ण मिला कर सबको (उस गोमूत्र युक्त)हाण्डी में बन्द करके बहेड़ेकी अग्नि पर इतना पकावें कि वह शुष्क हो जाए। तदनन्तर उसे पीस कर रक्खें।

इसे छाछ (तक्र) अथवा शहदमें मिला कर पीनेसे पाण्डु नष्ट होता है। पाण्डु के लिये इस से उत्तम एक भी औषध नहीं है।

(मात्रा—२ माशे तक ।)

(५४८३) मण्डूरवटकः

(व. से.; र. का. धे. । पाण्डु.)

पुनर्नवात्रिवृद्व्योषविडङ्गं दारुचित्रकम् ।
कुष्ठं हरिद्रे त्रिफला दन्ती चव्यं कलिङ्गकम् ॥
कटुकापिप्पलीमूलं मुस्तश्चेति पलोन्मितम् ।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाद् गोमूत्राधाढके पचेत् ॥
गुडवद्वटकान् कृत्वा तक्रेणाऽऽलोड्य तान् पिबेत् ।
ते पाण्डुरोगं प्लीहानमर्शांसि विषमज्वरम् ॥
श्वयथुं ग्रहणीदोषं हन्युः कुष्ठक्रमींस्तथा ॥

पुनर्नवा (बिसखपरा), निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, देवदारु, चीतामूल, कूठ, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, चव, इन्द्रजौ, कुटकी, पीपलामूल और नागरमोथेका चूर्ण ५-५ तोले तथा शुद्ध मण्डूर सबसे दो गुना (२०० तोले) लेकर सब को ४ सेर गोमूत्रमें पकावें जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाए तो गोलियां बनालें।

इन्हें तक्रमें मिला कर सेवन करने से पाण्डु रोग, तिल्ली, अर्श, विषमज्वर, शोथ, संग्रहणी, कुष्ठ और क्रिमि रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा-१ माशा ।)

मण्डूरवटकः (बृहद्)

(बृ. मा.; ब. से. । पाण्डु.; यो. त. । त. २८; च. सं.; र. का. धे.; भै. र.; भा. प्र.; च. द.; ग. नि.; यो. र. । पाण्डु; बृ. यो. त. । त. ७४ वै. क. द्रु. । स्कन्ध २.)

प्रयोग संख्या २७८७ " त्र्यूषणादि मण्डूर-वटिका " देखिये ।

(५४८४) मण्डूरवटिका

(भै. र. । शूला.)

लौहकिट्टपलान्यष्टौ गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
चविकानागरक्षारपिप्पलीमूलपिप्पलीः ॥
सञ्चूर्ण्य निक्षिपेत्तस्मिन् पलांशः सान्द्रतां गते।
गुडिकाः कल्पयेत्तेन पक्तिशूलनिवारिणी ॥

४० तोले शुद्ध मण्डूरको ८ सेर गोमूत्रमें पकावें । जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें ५-५ तोले चव, सोंठ, जवाखार, पीपलामूल और पीपलका चूर्ण मिला कर गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे पक्तिशूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(५४८५) मण्डूरवज्रवटकः

(रसे. सा. सं.; वृ. मा.; व. से. । पाण्डु.; वै. र.; र. र.; धन्व.; र. चं.; र. रा. सु.; र. का. धे. । पाण्डु.)

पञ्चकोलं समरिचं देवदारुफलत्रिकम् ।
विडङ्ग[१]मुस्तयुक्ताश्च भागास्त्रिपलसम्मिताः ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरद्विगुणं ततः ।
पक्त्वा चाष्टगुणे मूत्रे घनीभूते तदुद्धरेत् ॥
ततोक्षमात्रान्वटकान्पिबेत्तक्रेण तक्रभुक् ।
पाण्डुरोगं जयत्याशु मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमुरुस्तम्भमथापि वा ।
क्रिमिं प्लीहानमानाहं गलरोगञ्च नाशयेत् ॥
मण्डूरवज्रनामायं रोगानीकप्रणाशनः ॥

---

१ "हिङ्गु" इति पाठान्तरम् ।

पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, देवदारु, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिडंग (पाठान्तरके अनुसार हींग) और नागरमोथा इनका चूर्ण १५-१५ तोले और शुद्ध मण्डूर सबसे २ गुना (३६० तोले) लेकर सबको ५७६० तोले (७२ सेर) गोमूत्रमें पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाए तो १।-१। तोलेके मोदक बना लें।

इन्हें तक्रके साथ सेवन करने और केवल तक्र पर ही रहनेसे पाण्डु रोग, मन्दाग्नि, अरुचि, अर्श, ग्रहणी विकार, उरुस्तम्भ, कृमि, प्लीहा, आनाह और गलरोग नष्ट होते हैं।

(५४८६) मण्डूराद्यवलेहः

(ग. नि. । पाण्डु. अ. ७)

मण्डूरलोहाग्निविडङ्गपथ्या
व्योषांशकः सर्वसमानताप्यः।
मूत्रश्रृतोऽयं मधुनावलेहो
पाण्ड्वामयं हन्त्यचिरेण घोरम् ॥

मण्डूर भस्म, लोहभस्म, चीतामूल का चूर्ण बायबिडंगका चूर्ण, हर्र और त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण १-१ भाग तथा सोनामक्खी भस्म सबके बराबर लेकर सब को (आठ गुने) गोमूत्रमें पकावें जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाए तो उतार लें।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे घोर पाण्डु भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(मात्रा-६ रत्ती)

(५४८७) मदनकामदेवो रसः (१)

(र. र. स. । उ. खं. अ. २७;)

गोलं गन्धकसूतयोस्त्रिकटुकक्वाथेन बध्वाऽथभू-
कुष्माण्डान्तरवस्थितं विपिहितं तेनैव लिप्त्वो-परि।
माषैर्द्व्यङ्गुलमाज्यपक्वमथ तत्कूष्माण्डमध्याद्धरे-
त्तच्चूर्णेन च सम्मिते सुरकृताचूर्णस्य मुष्टि-द्वयम् ॥
जया शतावरी कृष्णा कपिकच्छूफलं तिलाः।
प्रत्येकं पलसम्माना यवाः पञ्चपलोन्मिताः ॥
तावन्मोचफलं द्वे च यष्टी मुष्टिद्वयां शुभाम्।
निक्षिप्य सप्त सप्ताऽत्र भावनाः क्रमशश्चरेत् ॥
महाबलाबलानागबलाभिर्द्राक्षयाऽपि च।
कृष्णाधात्रीक्षुभिश्चापि दन्तपात्रे निवेश्य च ॥
मत्स्यण्डिकायुतं वल्लद्वयमानं भजेन्निशि।
अनुपानमिह प्रोक्तं धारोष्णं सुरभेः पयः ॥
दोषमार्तवजं हत्वा कुर्याद्वीर्यप्रवर्धनम्।
ध्वजोत्साहं तथा स्त्रीषु वाजीकरणमुत्तमम् ॥
अलं मलयवायुना कुमुदबान्धवेनाप्यलम्।
मधुव्रतसखायिनः कलितपञ्चमाः के पिकाः ॥
अतो भज विशङ्कितं रतिसरोजिनीभास्करम्।
मनोजपरिदैवतं मदनकामदेवं रसम् ॥

समान भाग पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) के क्वाथमें घोटकर गोला बनावें और उसे (सुखाकर) भूमि-कुष्माण्ड (विदारी कन्द) के भीतर रख दें तथा उसके मुखको उसीके कटे हुवे टुकड़ेसे बन्द करके उस पर उड़दकी पिट्ठीका २ अंगुल मोटा लेप

करदें और घी में पकावें। जब पिट्ठी खूब लाल हो जाय तो आग जलानी बन्द कर दें। और उसके स्वांग शीतल होने पर कज्जलीके गोलेको निकालकर खरल करें। तदनन्तर १० तोले तुलसी और ५-५ तोले भांग, शतावर, पीपल, कौंचके बीज और तिलका चूर्ण तथा, २५ तोले जौका चूर्ण, २५ तोले सूखे केलेका चूर्ण, तथा १०-१० तोले दोनों प्रकारकी मुलैठीका चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिला लें। अब उपरोक्त कज्जली में (उसके बराबर) यह चूर्ण मिलाकर उसे निम्न लिखित ओषधियों के रस या क्वाथ की ७-७ भावना देकर, सुखाकर हाथीदांतकी शीशी में भरकर सुरक्षित रक्खें।

भावना द्रव्य–महाबला, बला (खरैंटी), नागबला (गुलसकरी), मुनक्का, पीपल, आमला और ईख।

इसे नित्य प्रति रात्रिके समय ६ रत्ती मात्रानुसार खांडमें मिलाकर खाना और ऊपरसे गायका धारोष्ण दूध पीना चाहिये।

इसके सेवनसे रज और वीर्यके दोष नष्ट होते तथा वीर्य और काम शक्तिकी अत्यन्त वृद्धि होती है।

यह इतना कामोत्तेजक है कि इसके सेवन करते हुवे मलयपवन, चन्द्र, भ्रमर और कोकिल आदि कामोत्तेजक साधनोंकी तनिक भी आवश्यकता नहीं रहती।

(५४८८) मदनकामदेवो रसः (२)

(मदनकामेश्वरो रसः)

(र. रा. सु.; र. मं.; यो. र. । वाजीकरण.; वृ. यो. त. । त. १४७)

तारं वज्रं सुवर्णञ्च ताम्रं सूतं सगन्धकम् ।
लौहश्च क्रमवृद्धानि कुर्य्यादेतानि मात्रया ॥
विमर्द्य कन्यकाद्रावैर्न्यसेत् काचमये घटे ।
विमुद्र्य पिठरीमध्ये धारयेत्सैन्धवैर्भृते ॥
वह्निं शनैः शनैः कुर्याद्दिनैकं तत्समुद्धरेत् ।
स्वाङ्गशीतञ्च तच्चूर्णं भावयेदर्कदुग्धकैः ॥
अश्वगन्धा च काकोली वानरी मुसली क्षुरा ।
त्रित्रिवेलं रसैरेषां शतावर्य्याश्च भावयेत् ॥
पद्मकन्दकसेरूणां रसैः काशस्य भावयेत् ।
कस्तूरीव्योषकर्पूरं कङ्कोलैलालवङ्गकम् ॥
पूर्वचूर्णादष्टमांशमेतत् चूर्णं विमिश्रयेत् ।
सर्वैः समां शर्कराञ्च दत्वा शाणोन्मितं पिबेत् ॥
गोदुग्धद्विपलेनैव मधुराहारसेवकः ।
अस्य प्रभावात्सौन्दर्यं बलं तेजोऽभिवर्द्धते ॥
तरुणीरमयेद्बह्वीर्न च हानिः प्रजायते ॥

चांदी भस्म १ भाग, हीरा भस्म २ भाग, स्वर्ण भस्म ३ भाग, ताम्र भस्म ४ भाग, शुद्ध पारद ५ भाग, शुद्ध गन्धक ६ भाग और लोह भस्म ७ भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको घृतकुमारी के रसमें घोटकर ६-७ कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर दें; एवं उसका मुख बन्द करके उसे कपड़मिट्टी की हुई हाण्डी में रखकर उसे (हाण्डीको) सेंधा नमकके

चूर्णसे भरदें। अब उसे चूल्हे पर चढ़ाकर धीरे धीरे अग्नि बढ़ाते हुवे १ दिन पाक करें। फिर जब शीशी स्वांगशीतल हो जाय तो उसमें से रसको निकालकर उसे आकके दूध तथा असगन्ध, काकोली, कौंच, मूसली, तालमखाना, शतावर, पद्मकन्द, कसेरु और कासके स्वरस या क्वाथकी ३-३ भावना दें। तत्पश्चात् उसमें कस्तूरी, सोंठ, मिर्च, पीपल, कपूर, कंकोल, छोटी इलायची और लौंगका समान भाग-मिश्रित चूर्ण उससे (रससे) आठवां भाग तथा मिश्री समस्त मिश्रण के बराबर मिलाकर अच्छी तरह घोट कर रक्खें।

इसे ५ माशेकी मात्रानुसार १० तोले गोदुग्धके साथ सेवन करने और मधुराहार करनेसे सौन्दर्य, बल और तेजकी वृद्धि होती है।

इसके प्रभावसे पुरुष बहुतसी स्त्रियों के साथ बिना किसी प्रकारकी हानिके रमण कर सकता है।

(५४८९) मदनकामदेवो रसः (३)

(र. स. क. । उल्लास ४)

पारदाद्द्विगुणं गन्धं दत्वा कार्पासिकाद्रवैः ।
पूर्ववत्पाचितो ह्येष तदा मदनकामदः ॥

१ भाग पारद और २ भाग गन्धक की कज्जली करके उसे कपासके फूलोंके रसकी भावना देकर हरगौरी रस के समान बालुकायन्त्रमें पाक किया जाय तो मदन-कामदेव रस तैयार हो जाता है।

(५४९०) मदनकामो रसः

(र. र. रसा. । उपदेश ६)

पद्मबीजं कसेरुं च कन्दं नालं च कर्णिकाम् ॥
मुशली भृङ्गराड् द्राक्षा पक्वं श्लेष्मातकं फलम् ।
विजयामर्कटीमाषाः शणबीजानि वै तिलाः ॥
कोकिलाक्षस्य बीजानि भूकूष्माण्डी शतावरी ।
शृङ्गाटकं चिर्भिटं फञ्जीबीजानि चाश्वगन्धिका ॥
एतत्सर्वं समं चूर्ण्य पादांशं चाहरेत्पृथक् ।
पादांशस्याष्टमांशेन शुद्धं सूतं विमिश्रयेत् ॥
पारदादष्टमांशं च कर्पूरं तत्र निःक्षिपेत् ।
चातुर्जातकमेकैकं कर्पूराद्द्विगुणं भवेत् ॥
सूततुल्या सिता योज्या मर्द्यं रम्भाद्रवैर्दिनम् ।
तद्गोलं डामरे यन्त्रे क्रमवृद्धाग्निना पचेत् ॥
दिनान्ते चोर्ध्वलग्नं तद्ग्राह्यं रम्भाद्रवैर्दृढम् ।
मर्दितं सितया तुल्यं माषैकं भक्षयेत्सदा ॥
रसो मदनकामोऽयं बलवीर्यविवर्धनः ।
दिव्यरूपा भजेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः ॥

कमलगट्टा, कसेरु, कमलकन्द, कमलनाल, मूसली, भंगरा, मुनक्का, लिहसौड़ेके पक्के फल, भांग, कौंचके बीज, उड़द, सनके बीज, तिल, तालमखाना, बिदारीकन्द, शतावर, सिंघाड़ा, कचरिया, फञ्जी (विधारा भेद) के बीज, और असगन्ध का चूर्ण ८-८ तोले तथा शुद्ध पारद १ तोला, कपूर १॥ माशा, दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसरका चूर्ण ३-३ माशे और मिश्री १ तोला लेकर सबको एक दिन केलेके रसमें घोटकर गोला बनावें और उसे डमरुयन्त्रमें बन्द करके एक दिन क्रमवृद्धाग्नि पर पकावें। २४ घण्टेके बाद जब यन्त्र स्वांगशीतल हो जाय तो उसे खोलकर उसके भीतर ऊपरके पात्रमें लगे हुवे रसको छुड़ाकर सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे नित्यप्रति १ माषा रस समानभाग

मिश्रीमें मिलाकर सेवन करनेसे बल वीर्य और कामशक्तिकी वृद्धि होती है।

(५४९१) मदनकामेश्वरः

(वृ. यो. त. । त. १८७)

बलिं पारदं नागफेनं समांशं
विमर्द्याहिवल्लीरसैर्यामपात्रम्।
वटी वल्लमात्रा सिताढ्या हि सेव्या
पुनर्भोजनं नैव कार्यं तदन्ते॥
पयो माहिषं सेवनीयं निशादौ
भजेन्मैथुनं निम्बुनीरं सिताढ्यम्।
पिबेद्वीजमुक्त्यै पुनर्मैथुनं च
रसः कामदेवेश नाम्ना प्रसिद्धः॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद और अफीम समान भाग लेकर कज्जली बनावें और उसे पानके रसमें १ पहर घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमें से १ गोली मिश्रीके साथ खाकर उसके पश्चात् किसी प्रकारका भोजन न करें और रात होने पर भैंसका दूध पियें। इस प्रकार यह गोली खाकर मैथुन किया जाय तो जब तक मिश्रीयुक्त नीबूका रस न पिया जायगा तब तक वीर्यपात नहीं होगा।

मदनकामेश्वरो रसः

(वृ. यो. त. । त. १४७)

"मदन कामदेवो रसः" सं. ५४८८ देखिये।

(५४९२) मदनमञ्जरीगुटिका
(भैरवानन्दरसः)

(वृ. यो. त. । त. १४७; यो. त. । त. ८०; वै. र. । वाजीकरणा.; भा. प्र. । उ. खं.)

चत्वारो व्योमभागास्तदनु
निगदितं भागयुग्मं च वङ्गं
भागैकं शम्भुबीजं त्रितय-
मपि मृतं तत्समा सिद्धमूली।
चातुर्जातं सजातीफलम-
रिचकणानागरं देवपुष्पं
जातीपत्रं च भागद्वितयम-
थ पृथक्सर्वमेकत्र चूर्णम्॥
सर्वद्व्यंशा सिता स्याद्घृत-
मधुसहिता मोदकीकृत्य चैतत्
खादेदग्निं समीक्ष्य प्रसभ-
मभिनवानन्दसंवर्धनाय।
योगो वाजीकराख्योऽयमिह
निगदितो भैरवानन्दनाम्ना
निःशेषव्याधिहन्ता दलित-
बहुवधूद्दामकन्दर्पदर्पः॥

अभ्रकभस्म ४ भाग, बंग-भस्म २ भाग, पारद-भस्म (अभावमें रस सिन्दूर) १ भाग, सतावरका चूर्ण ७ भाग तथा दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, जायफल, काली मिर्च, पीपल, सोंठ, लौंग और जावित्रीका चूर्ण २-२ भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर उसमें सबसे दो गुनी (६८ भाग) खांड एवं आवश्यकतानुसार घी और शहद मिलाकर मोदक बनावें।

इन्हें सेवन करनेसे कामशक्ति अत्यन्त प्रबल हो जाती है।

(मात्रा-३-४ माशे।)

(५४९३) मदनमुन्मदरसः

(र. र. स. । उ. खं. अ. २७)

मासार्धमात्रं हरजं विमर्द्य
रसेन मोचस्य रसेन तेन।

त्रिःसप्त संख्यानि दिनानि गन्धं
तत्सम्मितं गोघृतमध्यपक्वम् ॥
विभाव्य तेनैव विशोष्य युञ्ज्या-
त्काचस्थयोर्नागलतादलेन
तयोर्विमर्द्याथ निषेव्य दुग्धं
पिबेन्निशायां कदलीफलं तत् ॥
मदनं मदयन्मदमुज्ज्वलय-
न्प्रमदानिवहानतिविह्वलयन् ।
सुरतैः सुखदैर्गतविच्यवनै-
र्भवसारजुषामयमेव सुहृत् ॥

आधा माशा शुद्ध पारदको २१ दिन सेंभलकी छालके रसमें घोटें। इसी प्रकार गोघृतमें शुद्ध गन्धकको भी २१ दिन तक सेंभलके रसमें घोटें और जब घोटते घोटते दोनों सूख जाएं तो दोनोंको एकत्र घोटकर कज्जली बनालें और उसे कांचके खरलमें डालकर (१ दिन) पानके रसमें घोटकर सुखा लें।

रात्रिके समय इसे केलेकी पक्की फलीके साथ खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे कामशक्तिकी इतनी वृद्धि होती है कि एक पुरुष अनेकों स्त्रियोंके साथ रमण कर सकता है।

(५४९४) मदनसन्दीपनचूर्णम्

(र. र.; धन्व.। वाजीकरणा.)

गोक्षुरः क्षुरको मेघो मर्कटी शतपुत्रिका ।
मधुकं क्षीरकाकोली तालमूल्यमृताम्बु च ॥
शाल्मली लौहगगने विदारीतालमस्तकम् ।
हस्तिकर्णो बला धात्री जातीफलकशेरुकम् ॥
भृङ्गाटको मासपर्णी भृङ्गराट् कुङ्कुमं वचा ।
शिलाजतु शिवाबीजं पारदं धातुमाक्षिकम् ॥
वटस्यकोमलाः पादा एलायष्टिकतण्डुलाः ।
रक्तशालि च गोधूममाषका यवकास्तथा ॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं सितशर्करया समम् ।
बिडालपदकं खादेत्सर्पिषा मधुना सह ॥
शीतं पयोऽनुपानञ्च कामिनीं कामयेन्नरः ।
वीर्यहीनो भवेद्यस्तु जीर्णो व्याधिप्रपीडितः ॥
प्रमेही मूत्रकृच्छ्री च स्त्रीदोषात्पतितध्वजः ।
साशीतिवार्षिको वृद्धो युवेव रमतेऽङ्गनाः ॥
पुत्रं जनयते वीरमरोगं दीर्घजीविनम् ।
भेषजैर्विविधैः किं स्यादन्यैश्च शतसङ्ख्यकैः ॥
फलं न किञ्चित्तत्रास्ति केवलं गौरवं बहु ।
बालसस्यं यथा तोयैर्वर्द्धते च दिने दिने ॥
तथानेन नृणां देहः पुष्टो भवति नान्यथा ।
योऽस्ति मण्डलमात्रन्तु सगच्छेत्प्रमदाशतम् ॥
जगतस्तु हितार्थाय चूर्णं मदनदीपनम् ॥

गोखरु, तालमखाना, नागरमोथा, कौंचके बीज, शतावर, मुलैठी, क्षीरकाकोली, तालमूली, गिलोय, सुगन्धबाला, सेंभलकी मूसली, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, विदारीकन्द, तालमस्तक, हस्तिकर्ण (पलाश भेद) की छाल, बीजबन्द (खरैटी के बीज), आमला, जायफल, कसेरु, सिंघाड़ा, माषपर्णी, भंगरा, केसर, बच, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, सोनामक्खी भस्म, बड़की कोमल जटा, छोटी इलायची, मुलैठी, (बासमती के) चावल, साठी चावल, गेहूं, उड़द और (छिलके रहित) जौ। समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें और उसमें उसके बराबर मिश्री मिला लें।

नोट—चूर्ण योग्य चीज़ोंका पृथक् पृथक् चूर्ण लेकर तोलना चाहिये और पारे गन्धककी कज्जली बना कर उसमें समस्त ओषधियां मिला कर अच्छी तरह घोटना चाहिये।

इसमें से नित्य प्रति १। तोला चूर्ण घी और शहद के साथ सेवन करने तथा ऊपरसे शीतल दुग्ध पान करने से कामशक्तिकी अत्यन्त वृद्धि होती है। इसके प्रभाव से वीर्य हीन, व्याधि-पीड़ित, प्रमेही, मूत्रकृच्छ्री, और अस्सी वर्षका वृद्ध पुरुष भी युवाके समान स्त्री–समागम कर सकता है। स्त्री दोषसे उत्पन्न हुई क्लीवता भी इसके सेवनसे नष्ट हो जाती है।

यदि इसे स्त्री सेवन करे तो वह वीर, स्वस्थ और दीर्घ जीवी पुत्रको जन्म देती है।

इस चूर्णकी विद्यमानतामें अन्य सैकड़ों पौष्टिक औषधें बिल्कुल व्यर्थ हो जाती हैं। केवल एक इसी प्रयोगके सेवनसे शरीर दिनों दिन इस प्रकार पुष्ट होने लगता है जैसे पानीसे नवीन शस्य।

यदि इसे ४० दिन तक सेवन किया जाय तो पुरुष एक सौ स्त्रियोंके साथ रमण करनेमें समर्थ हो सकता है।

(व्यवहारिक मात्रा—६ माशे।)

(५४९५) मदनसुन्दररसः (१)

(र. र. । बाजीकर,; धन्व. । वाजीकरण.)

माक्षिकं धातुमाक्षिकं च लौहचूर्णं शिलाजतु।
पारदं च विडं चैव गन्धकश्च समं समम्॥
घृतेन भावयित्वा तु पात्रे कृत्वा तु चायसे।
विडालपदमात्रन्तु भक्षयेच्च पुनः पुनः॥
मासमात्रं पिबेन्नित्यं वीर्यवृद्ध्यै दिने दिने।
सपुमान् रमयेन्नारीमजस्रं चटको यथा॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म, रौप्यमाक्षिक भस्म, लोह चूर्ण (भस्म), शिलाजीत, शुद्ध पारद, बायबिडंगका चूर्ण और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर उसे लोहे के खरलमें डाल कर घीके साथ मर्दन करें।

इसे १। तोले की मात्रानुसार १ मास तक सेवन करने से कामशक्ति अत्यन्त तीव्र हो जाती है।

(५४९६) मदनसुन्दररसः (२)

(र. र. स. । उ. खं. अ. २७)

गन्धकेन रसः पिष्टः कल्हाररसमर्दितः।
विपक्वो वालुकायन्त्रे वृष्यो मदनसुन्दरः॥

शुद्ध पारद और गन्धक की कज्जलीको कुमुदके स्वरसमें घोट कर (रस सिन्दूर की भांति) वालुका यन्त्र में पकावें।

यह रस वृष्य (मन को प्रहर्षित और कामोत्तेजन करने वाला) है।

(५४९७) मदनाङ्कुशटङ्कणरसः

(र. का. धे. । स्वरभेदा. ३६)

टङ्कणात्तु तृतीयांशं सैन्धवं लवणं न्यसेत्
पञ्चमांशं सोमपलं षडंशं हरितालकम्॥

एकादशांशसूतं च मर्दयेच्च शिवाम्बुना ।
रसोनभल्लातरसे वातहारिरसे पुनः ॥
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य वह्निं यामांस्तु षोडश:।
दत्त्वा तज्जातसीवर्णं टङ्कणं मदनाङ्कुशम् ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन स्वरभेदादिनाशनम् ॥

१। तोला सुहागा, ५ माशे सेंधा नमक, ३ माशे शुद्ध संखिया, ७॥ तोले शुद्ध हरताल और १३॥। तोले शुद्ध पारद लेकर सबको (१-१ दिन) हर्र के क्वाथ, रसोन (लहसन) के स्वरस, भिलावे और अरण्डकी जड़के क्वाथ में घोट कर सुखाकर कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसे बालुका यन्त्र में १६ पहरकी अग्नि दें। तदनन्तर यन्त्र के स्वांग शीतल होने पर शीशीमें से रसको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार सेवन करनेसे स्वर-भेदादि रोग नष्ट होते हैं।

(५४९८) मदनानन्दमोदकम् (१)

(भै. र. । वाजीकरणा.)

सूतो गन्धकस्तथा लौहं त्रिसमं शुद्धमभ्रकम् ।
कर्पूरं सैन्धवं मांसी धात्र्येला च कटुत्रयम् ॥
जातीकोषफलं पत्रं लवङ्गं जीरकद्वयम् ।
यष्टीमधु वचा कुष्ठं हरिद्रा देवदारुकम् ॥
ऐज्जलं टङ्कणं भार्गी नागरं पुष्पकेशरम् ।
शृङ्गी तालीशपत्रञ्च द्राक्षाग्निदन्तिमूलकम् ॥
बला चातिबला चोचं धनिकेभकणा शटी ।
सजलं जलदं गन्धा विदारी च शतावरी ॥
अर्कवानरीबीजञ्च गोक्षुरं वृद्धदारकम् ।
त्रैलोक्यविजयाबीजं समांशं पेषयेद् भिषक् ॥
शतावरीरसं दत्त्वा श्लक्ष्णचूर्णं समाचरेत् ।
शाल्मलीमूलचूर्णन्तु चूर्णाङ्घ्रिसममाहरेत् ॥
चूर्णार्द्धं विजयाचूर्णं विशुद्धं तत्र दापयेत् ।
सर्वमेकत्र संयोज्य छागीक्षीरेण पेषयेत् ॥
मोदकार्थे सिता देया पाकयोग्या तथा मधु ।
नातिवाह्यञ्च धूमान्ते पाचयेन्मन्दवह्निना ॥
चातुर्जातं सकर्पूरं सैन्धवं सकटुत्रयम् ।
सञ्चूर्ण्य च ततो देयं हव्यं किञ्चिन्निधापयेत् ॥
पाकं ज्ञात्वा शाणमिदं मोदकं परिकल्पयेत् ।
भूतनाथे सुरपतौ रतिनाथे तथैव च ॥
ज्वलनं गणनाथे च मोदकाग्रं निवेदयेत् ।
मूलमन्त्रं समुच्चार्य ज्वलने तु समर्पयेत् ॥

ततोऽभिमन्त्रितम् । "ॐ ह्रीं शं सःअ-मृतं कुरु कुरु अमृते अमृतोद्भवाय नमः ह्रीं अमृतं कुरु कुरु अमृतेश्वराय स्वाहा । ॐ स्वाहा ।" इति मन्त्रेणाभिमन्त्रितं कृत्वा पात्रा-न्तरे स्थापयेत् ॥

काञ्चने राजते काचे मृद्भाण्डे वा निधापयेत् ।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा हरगौरीं प्रपूजयेत् ॥
कालानलभवं बीजं सतिलं घृतसंयुतम् ।
गव्यक्षीरं सितायुक्तमनुपेयञ्च पायसम् ॥
विलासार्थे प्रदोषे च मोदकं परिसेवयेत् ।
त्रिसप्ताहप्रयोगेण कामान्धो जायते नरः ॥
कामज्वरो भवेत्तावद्यावन्नारीं न गच्छति ।
स सहस्रवरारोहा रमयत्यपि सोद्यमः ॥
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं वेगवीर्यं विवर्द्धयेत् ।
प्रमदाप्राणबाहुल्यं मत्तवारणविक्रमः ॥
वामावश्यकरो रम्य ऊर्ध्वरेता भवेन्नरः ।
कामतुल्यं भवेद्रूपं स्वरः परभृतोपमः ॥

खगतुल्या भवेद् दृष्टिर्वृद्धोऽपि तरुणायते ।
अष्टोत्तरं भजेद्यस्तु भवेत्तस्य सुधोपमम् ॥
वीर्यवृद्धिकरं श्रेष्ठं जरामृत्युविनाशनम् ।
अपस्मारज्वरोन्मादक्षयानिलगदापहम् ॥
कासं श्वासं सशोथञ्च भगन्दरगुदामयम् ।
अग्निमान्द्यमतीसारं विविधं ग्रहणीगदम् ॥
बहुमूत्रं प्रमेहञ्च शिरोरोगमरोचकम् ।
हन्ति सर्वगदान् घोरान् वातपित्तबलासजान् ॥
वन्ध्या च मृतवत्सा च नष्टपुष्पा च या भवेत् ।
बहुपुत्रा जीववत्सा भवेदस्य निषेवणात् ॥
हरते सूतिकारोगं वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
मोदकं मदनानन्दं सर्वरोगे महौषधम् ॥
कथितं देवदेवेन रावणस्य हितार्थिना ॥

पारद, गन्धक, लौहभस्म, प्रत्येक १ तोला, अभ्रकभस्म ३ तोले, कर्पूर, सेन्धा नमक, जटामांसी, आंवला, छोटी इलायची, सोंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, जावित्री, जायफल, तेजपत्र, लौंग, जीरा, कालाजीरा, मुलहठी, वच, कूठ, हल्दी, देवदारु, हिज्जलबीज, सुहागा, भारंगी, सोंठ, नागकेसर, काकड़ासिंगी, तालीशपत्र, द्राक्षा, चित्रकमूल, दन्तीमूल, बला, अतिबला, दारचीनी, धनियां, गजपिप्पली, कचूर, सुगन्धबाला, मोथा, प्रसारणी, विदारीकन्द, शतावर, मदार की जड़, कौंचके बीज, गोखरू, विधाराबोज, और भांग के बीज; प्रत्येक का चूर्ण १ तोला। इस सम्पूर्ण चूर्ण को शतावर के रस से मर्दन कर शुष्क करलें और पुनः बारीक चूर्ण करके उसमें इस चूर्ण से चतुर्थांश सेंभल की मूसली का चूर्ण मिलावें। एवं इस सम्पूर्ण चूर्ण से आधा विशुद्ध भांग का चूर्ण डालकर एकत्र मिश्रित कर बकरी के दूध से पेषणकर शुष्क करलें। तदनन्तर सम्पूर्ण चूर्ण से दुगनी खांड को खांड से चौगने दूध में घोलकर मन्द मन्द अग्नि पर पकावें। चाशनी हो जाने पर उपर्युक्त चूर्ण का प्रक्षेप दें और अच्छी प्रकार आलोडन कर नीचे उतार लें। पश्चात् दारचीनी, तेजपत्र, छोटी इलायची, नागकेसर, कर्पूर, सेन्धानमक, और त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण (समान-भाग—मिश्रित २ तोले) मिलादें। अन्त में उपयुक्त मात्रा में घृत एवं मधु मिला मोदक बनावें। मात्रा २ माशे से आधे तोले तक। पाक करने के पश्चात् शिव, इन्द्र, कामदेव, अग्नि तथा गणेश प्रभृति देवों के लिये नैवेद्य दें तथा अग्नि के मूलमन्त्र द्वारा मोदक को अभिमन्त्रित करके अग्नि को समर्पण करें। ओं ह्रो. इत्यादि मन्त्र द्वारा अभिमन्त्रित करके सुवर्ण, रजत, कांच अथवा मट्टी के पात्र में रख दें। अगले दिन प्रातःकाल शुद्ध होकर शिव तथा पार्वती की पूजा करें। अनुपान—कालानल (रुद्राक्ष) बीज, तिल तथा घी (एकत्र मिश्रित) अथवा खांड युक्त गोदुग्ध अथवा पायस (खीर)। सम्भोग के लिये सायंकाल मोदक सेवन करना चाहिये। तीन सप्ताह तक इसका प्रयोग करने से मनुष्य कामान्ध होजाता है। इस के सेवन से वीर्यवृद्धि होती है एवं रतिशक्ति बढ़ती है। इसके सेवन करने वाले का रूप कामदेव के समान सुन्दर, स्वर कोयल के समान मधुर तथा गरुड़ के समान दीर्घ दृष्टि होती है। इसके सेवन से वृद्ध पुरुष भी युवा के समान सामर्थ्ययुक्त होता है। एवं १०८ मोदक सेवन करने पर यह अमृत के समान गुण करता है। यह

वीर्यवर्द्धक, रसायन है । इसके सेवन से अपस्मार, ज्वर, उन्माद, क्षय, वातव्याधि, कास, श्वास, शोथ, भगन्दर, अर्श, अग्निमान्द्य, अतिसार, ग्रहणी, बहुमूत्र, प्रमेह, शिरोरोग, अरुचि, तथा अन्य वातज, पैत्तिक, श्लैष्मिक रोग नष्ट होते हैं । इस के सेवन से जो स्त्री वन्ध्या, मृतवत्सा (जिन के बच्चे पैदा होकर मर जाते हों) अथवा नष्टपुष्पा (नष्टार्त्तवा) हो वह भी बहुपुत्रा तथा जीववत्सा होती है । यह मोदक सूतिकारोग को नष्ट करता है और सम्पूर्ण रोगों की उत्कृष्ट औषध है ।

मदनानन्दमोदकम् (२)

(रस रत्नाकर, रसा. ख. । उपदे. ६)

प्रयोग संख्या ७५५ "कामेश्वरो मोदकः" देखिये ।

(५४९९) मदनोदयरसः

(र. र. रसा. । उपदेश ६; र. मं.)

शुद्धसूतं समं गन्धं रक्तोत्पलदलद्रवैः ।
यामं मर्द्य पुनर्गन्धं सार्धं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥
पूर्वद्रावैर्दिनं मर्द्य रसार्धं गन्धकं पुनः ।
दत्त्वा तद्वद्दिनं मर्द्य काचकूप्यां निरोधयेत् ॥
दिनैकं वालुकायन्त्रे पक्वमुद्धृत्य चूर्णयेत् ।
भूकूष्माण्डी कषायेण भावयेद्दिनसप्तकम् ॥
छायायां तत्सिता तुल्यं निष्कैकं भक्षयेत्सदा× ।
शणमूलं सबीजं च[१] मुशली शर्करा समम् ॥
गवां क्षीरैः पलार्धं तु अनु रात्रौ सदा पिबेत् ।
अनन्तं वर्धते वीर्यं रसोऽयं मदनोदयः ॥

५-५ तोले शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक को एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ पहर लाल कमल के रसमें घोटें । इसमें पुनः २॥ तोले गन्धक मिलाकर पूर्ववत् लाल कमलके रसमें १ दिन घोटें । अब इसमें २॥ तोले गन्धक और डाल कर पुनः एक दिन लाल कमलके रसमें घोटें । जब कज्जली सूख जाए तो उसे कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शीशी में भर कर १ दिन बालुकायन्त्र में पकावें । एवं शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमें से रसको निकाल कर उसे सात दिन बिदारी कन्दके रसमें छायामें घोट कर सुरक्षित रक्खें ॥

इसे नित्य प्रति ५ माशेकी मात्रानुसार समान भाग मिश्रीमें मिलाकर सेवन करना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा-२ रत्ती ।)

अनुपान-सनकी जड़, सनके बीज और मूसली का चूर्ण तथा मिश्री समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर रक्खें । इसमें से २॥ तोले चूर्ण उपरोक्त रस खानेके बाद गोदुग्ध के साथ फांकना चाहिये । (अनुपानकी व्यवहारिक मात्रा-५-६ मासे) इस रसके सेवनसे अनन्त वीर्यवृद्धि होती है ।

(५५००) मदेभसिंहरसः

(र. चं. । पाण्डु; यो. र. । गुल्म., पाण्डु.; र. रा. सु. । पाण्डु)

रसगन्धवराटताम्रशङ्ख-
विषवङ्गाभ्रककान्ततीक्ष्णमुण्डम् ।

× "भूकूष्माण्डी........सदा" रस मंजरी में यह श्लोक नहीं हैं ।

१ "समूलं वानरी बीजमिति" पाठान्तरम् ।

अहिहिङ्गुलटङ्कणं समांशं
सकलैः स्यात्रिगुणं पुराणकिट्टम् ॥
पशुमूत्रविशोधितं सुमृष्ट्वा
त्रिफलाभृङ्गरसार्द्रकोत्थनीरैः ।
सुविशोष्य वरामृतालिवासा-
स्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥
पृथगग्निकृतं घनं विपाच्य
गुलिका गुञ्जमिता निजानुपानैः ।
ज्वरपाण्डुतृषास्रपैत्यगुल्मं
क्षयकासस्वरमग्निसादमूर्च्छाम् ॥
पवनादिकदुस्तराष्टरोगान्
सकलं पित्तहरं मदात्ययं च ।
बहुना किमसौ यथार्थनाम
सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कौड़ी भस्म, ताम्र भस्म, शंख भस्म, शुद्ध वछनागका चूर्ण, बंग भस्म, अभ्रक भस्म, कान्त लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, मुण्ड लोह भस्म, नाग (सीसा) भस्म, शुद्ध हिङ्गुल और सुहागेकी खील १--१ भाग तथा गोमूत्रमें शुद्ध पुराना मण्डूर सबसे ३ गुना (४२ भाग) ले कर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करें । तदनन्तर उसे त्रिफला, भंगरा और अदरक के रसकी पृथक् पृथक् एक एक भावना दे कर सुखा लें।

अब उसमें उससे आठ गुना त्रिफला-क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें, जब यह क्वाथ जल जाय तो उतना ही (रससे ८ गुना) गिलोयका स्वरस या क्वाथ डाल कर पुनः पकावें । इसी प्रकार भंगरे, बासे और पुनर्नवा का भी आठ आठ गुना रस डाल कर पृथक् पृथक् पकावें । अन्त में जब गाढ़ा हो जाए तो १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे ज्वर, पाण्डु, तृषा, रक्तपित्त, गुल्म, क्षय, खांसी, स्वर भंग, अग्निमांद्य, मूर्च्छा, वातव्याधि और अष्ट महा रोगों एवं समस्त पित्त रोगों तथा मदात्ययका नाश होता है।

(५५०१) मधुकाद्यं लोहम्

(भै. र. । नेत्र.)

मधुकं त्रिफलाचूर्णं लोहचूर्णं तथैव च ।
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यामक्षिरोगशान्तये ॥

मुलैठी, हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण तथा लोह भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इसे घी और शहद के साथ सेवन करनेसे नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा-५ से १० रत्ती तक। घी ६ माशे। शहद २ तोले ।)

(५५०२) मधुकाद्यवलेहः

(भै. र. । स्त्री.)

मधुकं चन्दनं लाक्षा रक्तोत्पलरसाञ्जनम् ।
कुशवीरणयोर्मूलं बलावासकयोस्तथा ॥
कोलमज्जाम्बुदं बिल्वं पिच्छा दार्वी च धातकी ।
अशोकवल्कलं द्राक्षा जवाकुसुममस्फुटम् ॥

आम्रजम्बूकिशलयं कोमलं नलिनीदलम् ।
शतमूली विदारी च रजतं लौहमभ्रकम् ॥
एषां कोलमितं चूर्णं द्विगुणा सितशर्करा ।
वरीरसस्य प्रस्थार्द्धे पचेन्मन्देन वह्निना ॥
घनीभूते क्षिपेच्चूर्णं शीतीभूते पलं मधु ।
मधुकाद्यवलेहोऽयं महादेवेन भाषितः ॥
दुस्तरं प्रदरं हन्ति नानावर्णं सवेदनम् ।
योनिशूलं कुक्षिशूलं बस्तिशूलं सुदुःसहम् ॥
रक्तातिसारं रक्तार्शो रक्तपित्तं चिरोद्भवम् ।
मूत्ररोगानशेषांश्च दाहं मोहं वमिं भ्रमिम् ॥
नाशयेन्नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥

मुलैठी, सफेद चन्दन, लाख, लाल कमल के फूल, रसौत, कुशाकी जड़, खस, खरैटी की जड़, बासे की जड़, बेरकी गुठली की गिरी, नागरमोथा, बेलगिरी, मोचरस, दारु हल्दी, धायके फूल, अशोकको छाल, मुनक्का, गुडहलकी कलियां, आम और जामनकी कोंपलें, कमलिनीके कोमल पत्ते, शतावर और विदारीकन्द। इनका चूर्ण तथा चांदी भस्म, लोह भस्म और अभ्रक भस्म आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) ले कर सबको एकत्र मिलालें। तदनन्तर २६ कर्ष (३२॥ तोले) खांड को १ सेर (८० तोले) शतावरके रसमें घोल कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब अवलेहके समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें उपरोक्त चूर्ण मिलाकर अग्निसे नीचे उतार लें। जब यह अवलेह ठंडा हो जाय तो इसमें ५ तोले शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे वेदना युक्त लाल, पीला आदि अनेक वर्ण वाला भयंकर, प्रदर, योनिशूल, कुक्षिशूल, दुस्सह बस्तिशूल, रक्तातिसार, रक्तार्श, पुराना रक्तपित्त, मूत्र रोग, दाह, मोह और वमनादि रोग नष्ट होते हैं।

(मात्रा-१ तोला।)

(५५०३) मधुपक्वहरीतकी

(यो. चि म. । अ. १)

सुपक्वपथ्यापलपञ्चकं च
मूत्रे गवां प्रस्थमिते विपाच्यम् ।
प्रस्थे पुनः कांजिकदुग्धतक्रे
पक्त्वा ततो निष्कुलिकां विधेया ॥
व्योषं यवानिं कुटजस्य बीजं
मुस्ता जलं दाडिमथाम्लवेतसम् ।
सधातुकीपुष्पमजाजियुग्मं
कणाजटा मोचरसं सबिल्वम् ॥
सौवर्चलं सैंधवमश्मवल्कं
जम्ब्वाम्र मज्जातिविषा च पाठा ।
लवङ्गजातीफलतुर्यजाता-
न्येतानि तुल्यानि विचूर्णितानि ॥
कपित्थमाण्डूरमयोदशांशं
समस्तचूर्णार्द्धमिता सिता च ।
एतैश्च पथ्या परिपूरणीया
सूत्रेण युक्त्या परिवेष्टनीया ॥
स्थाल्यां ततस्ताः क्रमशो निधाय
तृणानि मुक्त्वा परितो विमुच्य ।
मन्दाग्निना याममथो विपाच्य
विहाय शीता मधुनिःक्षिपेच्च ॥
ताःसेव्यमाना ग्रहणी प्रमेह
कासापहा अग्निकराः सवृष्याः ।

पाण्ड्वामवातापहराश्च पुष्टो-
प्रदायका मध्वभयाः प्रदिष्टाः ॥

भली भांति पकी हुई बड़ी (पीली) साबित हर्रें ५ पल (२५ तोले) लेकर उन्हें २ सेर गोमूत्रमें पकावें । (जब एक चौथाई गोमूत्र जल जाए तो हर्रोंको निकाल लें ।) तदनन्तर उन्हें इसी प्रकार क्रमशः २–२ सेर कांजी, गोदुग्ध और गायके तक्रमें पृथक् पृथक् पकावें । अब उन्हें चाकूसे चीर कर उनके भीतर की गुठली निकाल दें और उनमें निम्न लिखित चूर्ण भर कर डोरसे बांध दें:–

चूर्ण–सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, इन्द्रजौ, नागरमोथा, सुगन्ध बाला, अनार दाना, अम्लवेत, धायके फूल, सफेद और काला जीरा, पीपला मूल, मोचरस, बेलगिरी, सञ्चल (काला) लवण, सेंधा नमक, पाषाण भेद, जामन और आमकी गुठलीकी गिरी, अतीस, पाठा, लौंग, जायफल, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण १--१ भाग (प्रत्येक १ तोला) तथा कैथका गूदा, मण्डूर भस्म और लोह भस्म १०–१० भाग (१०–१० तोला) एवं समस्त चूर्णसे आधी (२९ तोले) मिश्री लेकर सबको एकत्र घोट लें । उपरोक्त हर्रों में यह चूर्ण जितना आ सके उतना भर कर उन पर कच्चा सूत लपेट देना चाहिये कि जिससे चूर्ण निकल न जाए ।

अब एक हाण्डीमें घास बिछाकर उसके ऊपर उक्त हर्रों की तह जमा दें एवं उसके ऊपर पुनः घास बिछा कर दूसरी तह जमावें । इसी प्रकार समस्त हर्रें हाण्डीमें रख कर घाससे ढक दें । इस हाण्डीको मन्दाग्निपर चढ़ाकर एक पहर तक पकावें । इसके बाद जब वे शीतल हो जाएं तो उन्हे शहदमें डाल दें ।

इन्हें सेवन करनेसे संग्रहणी, प्रमेह, खांसी, पाण्डु और आमवातका नाश होता तथा अग्नि और बल वीर्य की वृद्धि होती है ।

(५५०४) मधुमण्डूरम्

(यो. र.; वृ. नि. र.; र. रा. सु. । पाण्डु कामला.)

गृहीत्वा भिषक्प्रस्थमण्डूरभागं
भृते त्रैफले मर्दयित्वा च यामम् ।
पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ
पुटानीह देयानि चन्द्राक्षिवारम् ॥
तथा धेनुमूत्रे कुमारीरसे च
विधेयश्च पञ्चामृते योगराजः ।
भवेत्सिन्धुनागैः पुटैः सिद्धदोऽय-
मचिन्त्यप्रभावश्च मण्डूर एषः ॥
मधुमण्डूर एष कणामधुना
चिरपाण्डुगदं ननु हेममितः ।
जनको रुधिरस्य निहन्ति परं
विविधार्तिहरस्त्वनुपानबलैः ॥

१ सेर मण्डूरको १ पहर तक त्रिफले के क्वाथमें घोटकर सम्पुटमें बन्द करके, उसे सुखाकर इस प्रकार पुटदें कि २ पहरमें अग्नि शान्त हो जाय । इसी प्रकार त्रिफलेके क्वाथमें घोट कर २१ पुट दें । इसी प्रकार गोमूत्र, घृतकुमारी के रस और पञ्चामृतकी २१–२१ पुट दें । हर पुटमें इतनी अग्नि देनी चाहिये कि जो दो पहरमें शान्त हो जाय ।

इसे १। माशेकी मात्रानुसार पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे पुराना पाण्डु भी नष्ट हो जाता और नवीन रक्तकी वृद्धि होती है।

इसका प्रभाव अचिन्त्य है और यह अनुपान भेदसे अनेकों रोगोंको नष्ट करता है।

(**पञ्चामृत**—गोखरु, मुण्डी, मूसली, गिलोय और शतावर। सब समान भाग ले कर एकत्र कूट लें।)

(५५०५) मधुयष्ट्यादिचूर्णम्

(नपु. मृ. । त. ३)

मधुयष्टी तुगाक्षीरी धात्री गोक्षुरकं तथा।
वङ्गमभ्रं कपिबीजं धात्रीरसविभावितम् ॥
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यां ततश्चानुपयः पिबेत्।
वीर्यवृद्धिकरं पुंसां क्लीवत्वनाशनं परम् ॥

मुलैठी, बंसलोचन, आमला, गोखरु और कौंचके बीज। इनका चूर्ण तथा बंग भस्म और अभ्रक भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर उसे आमले के रस की भावना दें।

इसे शहद और घीमें मिला कर चाटने और ऊपरसे दूध पीनेसे वीर्य वृद्धि होती और नपुंसकताका नाश होता है।

(मात्रा—१ माशा)

(५५०६) मध्यमकस्तूरीभैरवरसः

(धन्व. । ज्वर.; र. रा. सु. । ज्वरा.)

मृतं वङ्गं खर्परं च हिरण्यं तारतालकम्।
एतेषां समभागेन कर्षमेकं पृथक्पृथक् ॥
मृतं कान्तं पलं देयं हेमसारं द्विकार्षिकम्।
रसभस्मलवङ्गं च जातिकाफलमेव च ॥
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम्।
द्रोणपुष्पीरसैर्वापि नागवल्या रसेन च ॥
द्विश्चन्द्रं त्रिकटुर्देयो यत्नतो वटिकां चरेत्।
वातात्मके सन्निपाते महाश्लेष्मगदेषु च ॥
त्रिदोषजनिते घोरे सन्निपातातिदारुणे।
नष्टगर्भे नष्टशुक्रे प्रमेहे विषमज्वरे ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे महाशोथे महागदे।
स्त्रीणां शतं गच्छति च न च शुक्रक्षयो भवेत्॥
एतान् सर्वान् निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥

बंग भस्म, शुद्ध खपरिया, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म और हरताल भस्म १।-१। तोला, कान्त लोह भस्म ५ तोले, स्वर्णमाक्षिक भस्म २॥ तोले, तथा पारद भस्म, लौंगका चूर्ण, और जायफलका चूर्ण २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर सात सात दिन गूमा और पानके रसमें पृथक् पृथक् खरल करें और फिर उसमें २॥ तोले कपूर तथा २॥ तोले त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण मिला कर गोलियां बना लें।

ये गोलियां वातप्रधान सन्निपात, कफज रोग, भयंकर सन्निपात, गर्भ विनाश, शुक्र क्षय, प्रमेह, विषम ज्वर, खांसी, श्वास, क्षय, गुल्म, और दुस्साध्य शोथ को नष्ट करके काम शक्ति को बढ़ाती हैं।

मध्यमद्रावकरसः

(भै. र.)

" द्रावकरसः (मध्यम) " देखिये।

(५५०७) मध्वादिलेहः

(ग. नि. । राजय. अ. ९.)

मधुताप्यविडङ्गाश्मजतुलोहघृताभयाः ।
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमाना हिताशिना ॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म, बायबिड़ंगका चूर्ण, शुद्ध शिलाजीत, लोह भस्म और हर्रका चूर्ण समान भाग ले कर एकत्र खरल करें ।

इसे शहद और घी के साथ सेवन करने तथा पथ्य पालन करनेसे भयंकर राजयक्ष्मा रोग भी नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा–५ से १० रत्ती तक)

(५५०८) मनःशिलादिचूर्णम्

(व. से. । छर्दि.; च. सं. । चि. स्था., छर्दि.)

मनःशिलायाः फलपूरकस्य
रसैः कपित्थस्य च पिप्पलीनाम् ।
क्षौद्रेण चूर्णं मरिचैश्च युक्तं
लिह्यात्कफच्छर्दिमुदीर्णवेगम् ॥

शुद्ध मनसिल के (१ रत्ती) चूर्ण को बिजौरे नीबूके रस तथा कैथके रसके साथ चाटनेसे अथवा पीपल और काली मिर्चके चूर्णको शहदके साथ मिलाकर चाटनेसे भयंकर कफज छर्दि नष्ट हो जाती है ।

(५५०९) मनःशिलादिज्वराङ्कुशः

(र. रा. सु. । ज्वर.)

मनःशिलाबलिरसैर्भागैर्वह्निकरेन्दुभिः ।
कुमारीरससम्पिष्टैः कृत्वा गोलन्तु शोभनम् ॥
युगभागमिते सूक्ष्मे ताम्रसम्पुटके न्यसेत् ।
ततस्तुवालुकायन्त्रे पचेद्यामं तु चाष्टकम् ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चूर्णयित्वा निधापयेत् ।
गुञ्जात्रयं शर्करया ह्यार्द्रकस्य रसेन च ॥
दद्यात्समस्तविषमान् ज्वरान्हन्ति न संशयः ।
पथ्यं क्षीरोदनं देयं मुद्गयूषो तथोदनम् ॥

शुद्ध मनसिल ३ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध पारद १ भाग लेकर तीनों की कज्जली बनावें और उसे (१ दिन) घृतकुमारीके रसमें घोट कर गोला बना (कर सुखा) लें । अब इस गोलेको २ भाग शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके ८ पहर बालुका यन्त्र में पकावें । जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो सम्पुटको निकाल कर पीस लें ।

इसे ३ रत्ती मात्रानुसार खांड और अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे समस्त विषम ज्वर अवश्य नष्ट हो जाते हैं ।

पथ्य–दूध भात तथा मूंगका यूष और भात ।

(५५१०) मनःशिलादियोगः

(वं. से.; यो. र. छर्दि.; ग. नि. । छर्द्य. १४)

मनः शिलामागधिकोषणानां
चूर्णं कपित्थाम्लरसेन युक्तम् ।
लाजैः समांशैर्मधुनाऽवलीढं
छर्दिं प्रसक्तामसकृन्निहन्ति ॥

शुद्ध मनसिल, पीपल और काली मिर्चका चूर्ण १–१ भाग, धानकी खीलोंका चूर्ण ३ भाग तथा खट्टे कैथका रस १ भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें ।

इसे शहदमें मिला कर चाटनेसे छर्दि (वमन) शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

मनःशिलाया नामलक्षणगुणाः शोधनं च।

मनःशिलानामानि

(आ. वे. प्र.)

मनःशिला मनोगुप्ता मनोह्वा नागजिह्विका।
नेपाली कुनटी गोला शिला दिव्यौषधीः स्मृता॥

मनःशिलास्वरूपम्

(आ. वे. प्र. । अ. ६; भा. प्र. । प्र. खं.)

तालकस्यैव भेदोऽस्ति मनोह्वा च तदन्तरम् ।
तालकं त्वतिपीतं स्याद्भवेद्रक्ता मनःशिला ॥

मनःशिलाभेदाः

(आ. वे. प्र. । अ. ६.)

मनःशिला त्रिधा प्रोक्ता श्यामाङ्गी करवीरिका।
द्विखण्डाख्या च तासां तु लक्षणानि निबोधत॥
श्यामा हिङ्गुलवद्रक्ता किंचित्पीताऽतिदीप्तिका।
करवीरा रक्तवर्णा चूर्णरूपाऽतिभारयुक् ॥
किंचिद्रक्ता च गौरा च द्विखण्डा भारवत्तरा।
त्रिविधासु च श्रेष्ठा स्यात्करवीरमनःशिला ॥

गुणाः—

(आ. वे. प्र.। अ. ६; यो. र.; बृ. यो. त.।
त. ४१; भा. प्र. । प्र. खं.)

मनःशिला गुरुर्वर्ण्या सरोष्णा लेखनी कटुः।
तिक्ता स्निग्धा विषश्वासकासभूतकफास्रनुत् ॥

अशुद्धमनःशिलागुणाः

(आ. वे. प्र. । अ. ६; यो. र., बृ. यो. त. ।
त. ४१; रसे. सा. सं.; भा. प्र. । प्र. खं.)

मनःशिला मन्दबलं करोति
जन्तुं ध्रुवं शोधनमन्तरेण ।
मलस्य बन्धं किल मूत्ररोधं
सशर्करं कृच्छ्रगदं च कुर्यात् ॥

(५५११) मनःशिलाशोधनम् (१)

(आ. वे. प्र. । अ. ६; र. प्र. सु. । अ. ६;
यो. र.; बृ. यो. त. । त. ४१; यो. चि. म. ।
अ. ७; भा. प्र. । प्र. खं.)

पचेत्त्र्यहमजामूत्रे दोलायन्त्रे मनःशिलाम् ।
भावयेत्सप्तधा मूत्रैरजायाः शुद्धिमृच्छति ॥

(५५१२) मतान्तरम् (२)

जयन्तिकाद्रवे तैले दोलायन्त्रे मनःशिला ।
दिनमेकमजामूत्रे भृङ्गराजरसेऽपि च ॥

(५५१३) मतान्तरम् (३)

(आ. वे. प्र. । अ. ६; यो. र.; बृ. यो. त. ।
त. ४१; र. मं.; र. र. स. । अ. ३)

अगस्त्यपत्रतोयेन भाविता सप्तवारकम् ।
शृङ्गवेररसैर्वापि विशुध्यति मनःशिला ॥

(५५१४) मतान्तरम् (४)

(आ. वे. प्र. । अ. ६.)

भृङ्गागस्त्यजयन्तीनामार्द्रकस्वरसेषु च ।
दोलायन्त्रेण संस्विन्ना विशुध्यति मनःशिला ॥

(५५१५) मतान्तरम् (५)

(रसे. सा. सं. ; र. र. स. । अ. ३)

जयन्ती भृङ्गराजोत्थै रक्तागस्त्यरसैः शिला ।
दोलायन्त्रे दिनं पाच्या यामं छागस्य मूत्रके ॥
क्षालयेदारणालेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

मनसिलके नाम

मनःशिला, मनो गुप्ता, मनोह्वा, नागजिह्विका, नेपाली, कुनटी, गोला, शिला और दिव्योषधि।

मनसिल क्या है ?

मनसिल हरतालकी जातिकी ही ओषधि है। हरताल अत्यन्त पीली होती है परन्तु मनसिलका रंग लाल होता है।

मनसिलके भेद

मनसिल तीन प्रकारकी होती है:—

(१) जो किञ्चित् पीत वर्ण और सिंगरफ (हिंगुल) के समान लाल तथा अत्यन्त दीप्तिमान हो उसे **श्यामा** कहते हैं।

(२) जो अत्यन्त भारी और चूर्ण के रूप में लाल रंगकी आती है उसे **करवीरा** कहते हैं।

(३) तीसरे प्रकारकी मनसिल किञ्चिद्रक्तवर्ण श्वेत और अत्यन्त भारी होती है उसे **द्विखण्डिका** कहते हैं।

इन तीनों में '**करवीरा**' नामक मनसिल श्रेष्ठ होती है।

मनसिलके गुण

मनसिल गुरु, वर्ण को स्वच्छ करने वाली, सर, उष्ण, लेखनी, कटु तिक्त रस वाली, स्निग्ध तथा विष, श्वास, खांसी, भूतबाधा, कफरोग और रक्तदोष नाशक होती है।

अशुद्धमनसिलके दोष

अशुद्ध मनसिलके सेवनसे बल घटता और मलावरोध, मूत्ररोध, मूत्रकृच्छ्र, तथा शर्करा (पथरी भेद) रोग उत्पन्न होता है।

मनःशिलाशोधन (१)

मनसिलको ३ दिन तक दोला-यन्त्र-विधिसे बकरीके मूत्रमें पकावें और फिर उसे बकरीके मूत्रकी सात भावना दें। इस प्रकार मनसिल शुद्ध हो जाती है।

मनसिलशोधन (२)

मनशिलको पृथक् पृथक् १-१ दिन जयन्तिके रस, तिलके तेल, बकरीके मूत्र और भंगरेके रसमें दोला यन्त्र-विधिसे पकानेसे वह शुद्ध हो जाती है।

मनशिलशोधन (३)

मनसिलको अगस्ति (अगथिया) के पत्तोंके रस या अदरकके रसकी सात भावना देनेसे वह शुद्ध हो जाती है।

मनसिलशोधन (४)

मनसिलको पृथक् पृथक् (१-१ दिन) भंगरेके रस, अगस्ती (अगथिया) के रस, जयन्तीके रस और अदरकके रस में दोला यन्त्र-विधिसे स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाती है।

मनसिलशोधन (५)

मनसिलको एक एक दिन जयन्ती, भंगरा, और लाल अगस्ति के रसमें, दोलायन्त्र-विधिसे स्वेदित करनेके पश्चात् १ पहर बकरीके मूत्रमें पकाकर काञ्जीसे धो डालें।

(५५१६) मनःशिलासत्त्वपातनम्

(आ. वे. प्र. । अ. ६; र. प्र. सु. । अ. ६; र. र. स. । अ. ३.)

तालवच्च शिलासत्त्वं ग्राह्यं तैरेव चौषधैः ।

रसपद्धत्याम्—अष्टमांशेन गुडगुग्गुल-लोहकिट्टेन सर्पिषा सह मर्दयित्वा मूषायां दत्त्वाऽन्धयित्वा कोष्ठ्यां ध्माता सत्त्वं मुञ्चेत्।

मनसिलका सत्व भी हरताल-सत्व पातन-विधिसे, उन्हीं ओषधियोंके योगसे निकाला जाता है।

अथवा-

मनसिलमें उसका आठवां भाग गुड़, गूगल और मण्डूर मिलाकर सबको घीके साथ घोटकर अन्ध मूषामें बन्द करके धमानेसे सत्व निकल आता है।

(५५१७) मन्थानभैरवरसः (१)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं लोहं ताम्रं च सीसकम्।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं समभागानि चूर्णयेत् ॥
अर्द्धभागं विषं दद्यान्मर्दयेद्वासरद्वयम् ।
शृङ्गवेरानुपानेन दद्याद्गुञ्जाद्वयोन्मितम् ॥
नवज्वरे महाघोरे सन्निपाते सुदारुणे ।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मशूले त्रिदोषजे ॥
वांच्छितं भोजनं दद्यात् कुर्य्याच्चन्दनलेपनम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, ताम्र-भस्म, सीसा भस्म, काली मिर्चका चूर्ण, पीपलका चूर्ण और सोंठका चूर्ण ५-५ तोले तथा शुद्ध बछनाग (मीठा विष) २॥ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर दो दिन खरल करें ।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे घोर नवीन ज्वर, भयंकर सन्निपात, शीत ज्वर, दाहपूर्व ज्वर, गुल्म और त्रिदोषज शूल नष्ट होता है।

इसके सेवनमें किसी विशेष परिहार (परहेज़) की आवश्यकता नहीं है।

इसके खानेके पश्चात् यदि दाह हो तो शरीर पर चन्दनका लेप करना चाहिये ।

(५५१८) मन्थानभैरवरसः (२)

(र. च. । कफ रोग.; र. रा. सु. । कास; र. का. धे. । अम्लपित्त. अ. ११; र. प्र. सु. । अ. ८; र. मं. । अ. ६; र. र. स. । उ. ख. अ. १३; रसे. चि. म. । अ. ९.)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं हिङ्गुपुष्करमूलकम् ।
सैन्धवं गन्धकं[1] तालं कटुकीं[2] चूर्णयेत्समम् ॥
पुनर्नवा देवदारु[3] निर्गुण्डी तण्डुलीयकैः ।
तिक्तकोशातकीद्रावैर्दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ॥
माषमात्रं लिहेत्क्षौद्रैः रसो मन्थानभैरवः ॥

पारद भस्म (अभावमें रस सिन्दूर), ताम्र भस्म, भुनीहुई हींग, पोखरमूल, सेंधा नमक, शुद्ध गन्धक (पाठान्तरके अनुसार बंग भस्म,) शुद्ध हरताल और कुटकी (पाठान्तरके अनुसार त्रिकुटा अथवा सुहागा) समान भाग ले कर सबको पुनर्नवा[4] (बिसखपरा), देवदारु, संभालु, कांटे वाली चौलाई और कड़वी तोरीके रसमें पृथक् पृथक् १-१ दिन घोट कर १-१ माशेकी गोलियां बनालें।

---

१ वङ्गकमिति पाठान्तरम् ।

२ कटुकमिति पाठान्तरम् । २ टङ्कणमिति पाठान्तरम् ।

३ देवदालीति पाठान्तरम्

४ रस प्रकाश सुधाकरमें भावना द्रव्यों में पुनर्नवाका अभाव है ।

इनमेंसे १-१ गोली शहदके साथ खा कर ऊपर से नीमका काथ पीनेसे कफ-रोग शान्त होते हैं।

(५५१९) मन्थानभैरवरसः (३)

(भैरवरसः; महाज्वराङ्कुशः)

(र. रा. सु. । सन्निपाता.; रसे. चि. म. । अ. ९)

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं समं टङ्कणगन्धकम् ।
जम्बीरफलमध्यस्थं दोलायन्त्रे पचेद्दिनम् ॥
मर्दयेद्भावयेद्द्रावैः शिग्रुवासार्द्रनिम्बुजैः ।
सर्पाक्षी विजया ब्राह्मी मीनाक्षी हंसपादिका ॥
हस्ति शुण्डी रुद्रजटा धूर्त्तवातारिवायसी ।
दिनैकं मर्दयेदासां लोहसम्पुटगं पचेत् ॥
दिनैकं वालुकायन्त्रे समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
तालकं दीप्यकं व्योषं विषं जीरकचित्रकौ ॥
एभि रससमैर्मिश्रं त्रिगुञ्जं भक्षयेत्सदा ।
सन्निपातज्वरं हन्ति मुद्गयूषाशिनः सुखम् ॥

शुद्ध पारद, ताम्र भस्म, सुहागेकी खील और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर कज्जली बनावें और उसे चार तह किये हुवे कपड़ेमें बांध कर पोटली बनालें। इस पोटली को जम्बीरी नीबूके भीतर रख कर उस (नीबू) पर सुतली आदि लपेट दें। और इस नीबूको १ दिन दोलायन्त्र विधिसे जम्बीरी के रसमें पकावें। तत्पश्चात् पोटलीमें से रसको निकाल कर उसे निम्न लिखित ओषधियोंके रसमें एक एक दिन घोटें— सहंजना, बासा, अद्रक, नीबू, सर्पाक्षी, भांग, ब्राह्मी, मछेछी, हंसपादी, हाथीसुण्डी, रुद्रजटा, धतूरा, अरण्ड-मूल और मकोय। इनमेंसे जिनके स्वरस मिलें उनके स्वरस और शेषके काथ में १-१ दिन खरल करना चाहिये।

तदनन्तर उसे लोह सम्पुट में बन्द करके उस पर कपड़ मिट्टी करके सुखा लें और बालुका यन्त्र में एक दिन की अग्नि दें। यन्त्र के स्वांग शीतल हो जाने पर सम्पुटमेंसे औषधको निकाल कर उसमें शुद्ध हरताल, लाल चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध बछनाग, जीरा और चीतामूलका समान-भाग-मिश्रित चूर्ण उपरोक्त रसके बराबर मिलाकर भली भांति खरल करें।

इसे ३ रत्ती मात्रानुसार सेवन करानेसे सन्निपात नष्ट होता है।

पथ्य-मूंगका यूष।

(५५२०) मन्मथाभ्ररसः

(श्रीमन्मथरसः)

(भै. र.; र. र. स. । वाजी.)

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं पलमेकं[1] सुशोधितम् ।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात् पलार्द्धश्च विचक्षणः ॥
कर्पूरं तोलकं[2] दद्याद् वङ्गञ्च कोलसम्मितम् ।
ताम्र तोलार्द्धकं तत्र निःशेषं मारितं पुनः ॥
लौहकर्षं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकजीरकम् ।
विदारीं शतमूलीञ्च क्षुरबीजं बलां तथा ॥
मर्कट्यतिविषां[3]चैव जातीकोषफले तथा ।
लवङ्गं विजया बीजं श्वेतसर्जं यमानिकाम् ॥
शाणभागान् गृहीत्वैतान् एकीकृत्यैव पेषयेत् ।
गुञ्जाद्वयन्तु कर्त्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिबेदनु ॥

१ कर्षमेकमिति पाठान्तरम् । २ शाणकमिति पाठान्तरम् । ३ "मर्कट्यतिबला" इति पाठान्तरम् ।

गृहे यस्य शतं नार्यो विद्यन्तेऽतिव्यवायिनः ।
न तस्य लिङ्गशैथिल्यमौषधस्यास्य सेवनात् ॥
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ।
कामरूपी भवेन्नित्योवृद्धः षोडशवर्षवत् ॥
रसायनवरो बल्यो वाजीकरण उत्तमः ।
रसः श्रीमन्मथाभ्रोऽयं महेशेन प्रकाशितः ॥
अस्य भक्षणमात्रेण काष्ठं जीर्यति तत्क्षणात् ।
नाशयेद् ध्वजभङ्गादीन् रोगान् योगकृतानपि ॥

शुद्ध पारद और गन्धक २॥-२॥ तोले, अभ्रक भस्म २॥ तोले, कपूर ७॥ माशे, बंग भस्म ७॥ माशे, ताम्र भस्म ३॥ माशे, लोह भस्म १। तोला तथा विधारा मूल, जीरा, बिदारीकन्द, शतावर, तालमखाना, बीजबन्द (खरैंटीके बीज), कौंचके बीज, अतीस, जावत्री, जायफल, लौंग, भांगके बीज, सफेद राल और अजवायन; सबका चूर्ण ५-५ माशे लेकर सबको एकत्र घोट लें।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार खाकर ऊपरसे मन्दोष्ण दूध पीना चाहिये।

यह रस अत्यन्त बलकारक और वाजीकरण है। इसको सेवन करने वाला पुरुष सौ स्त्रियोंके साथ समागम करे तो भी न तो लिङ्ग-शैथिल्य ही होता है, न वीर्य की कमी होती है और न ही बलह्रास होता है।

इसे सेवन करने से वृद्ध पुरुष भी षोडशवर्षीय युवाके समान (वीर्यवान) हो जाता है। दुष्ट प्रयोगोंसे उत्पन्न नपुंसकता भी इसके सेवनसे नष्ट हो जाती है।

इससे जठराग्नि भी इतनी प्रबल हो जाती है कि काष्ठ भी पचा सकती है।

(५५२१) मरिचादिवटी

(वृ. नि. र. । अतिसारा.)

मरीचं खर्परं नागफेनं तन्दुलतज्जलैः ।
मर्द्यं तन्दुलतोयेन गुटी सर्वातिसारजित् ॥

काली मिरचका चूर्ण, शुद्ध खपरिया और अफीम समान भाग लेकर सबको चावलोंके पानीमें घोट कर (काली मिर्चके बराबर) गोलियां बना लें।

इसे चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं।

(५५२२) मलभेदीरसः

(र. चि. म. । स्तबक १०)

पारदं गन्धकं चैव सौभाग्यं पिप्पली समम् ।
समांशं जयपालं च क्रियते रेचनं परम् ॥
शीतेन रेचयेत्सम्यगुष्णेनैव प्रशामयेत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा ४ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको भली भांति खरल करके गोलियां बना लें।

इन्हें ठण्डे पानीके साथ खिलानेसे विरेचन होता है और उष्ण जल पिला देनेसे दस्त बन्द हो जाते हैं।

(मात्रा-१ रत्ती)

(५५२३) मल्लचन्द्रोदयः (१)

(रसायन सार । सन्निपात.)

नैम्बूकनीरेण दिनत्रयन्तु
श्वेतादिरूपांश्चतुरोऽपि मल्लान् ।

यथोत्तरं तूग्रबलान्मिथस्तान्
समांशसूतेन विमर्दयेत ॥
ताभ्यां समानेन सुगन्धकेन
कृत्वा मसीं कूपिकया पचेत ।
सर्वार्थकार्यां खलु कोष्ठिकायां
यामत्रयं शीतलमुद्धरेत ॥
मल्लादिचन्द्रोदयमामनन्ति
सर्वौषधेभ्योऽपि प्रधानवीर्यम् ।
विसूचिकासन्निपतत्त्रिदोषान्
व्याधीनपाकर्तुमनन्यशस्त्रम् ॥

श्वेत, पीला, लाल और काला संखिया (सोमल) १-१ भाग और शुद्ध पारद ४ भाग लेकर सबको ३ दिन नीबूके रसमें घोटें और फिर उसमें ८ भाग शुद्ध गन्धक मिलाकर कज्जली बनावें। इस कज्जलीको आतशी शीशीमें भर कर सर्वार्थकरी भ्राष्ट्री[1] पर ३ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो औषधको निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

यह रस विसूचिका और सन्निपातादि रोगोंको नष्ट करनेके लिये अद्वितीय औषध है।

(५५२४) **मल्लचन्द्रोदयः** (२)

(रसायन सार.)

स्नुहीपयस्स्वर्कपयस्सु मल्लं
त्रिर्भावितं मर्दनशुष्करूपम् ।
बुभुक्षुसूतद्विगुणेन शुद्ध-
गन्धेन घृष्ट्वा च मसिं विदध्यात् ॥

[1] सर्वार्थकरी भ्राष्ट्रीकी विधि भा. भै. र. भाग २ में पृष्ठ ४१८ पर देखिये।

तां कूपिकास्थां सिकताऽऽख्य यन्त्रे
यथावहिर्धूमविधि प्रबोद्धा ।
पिपक्षुरह्नोऽर्द्धमतो ददीत
शीशीमुखे मृत्कवलीं सुरुद्धाम् ॥
अर्द्धद्वितीयं दिनमग्नितापं
बबूरकाष्ठस्य ददीत तीव्रम् ।
कृत्वा स्वयं शीतमथोर्द्ध्वशीशी-
गलस्थचन्द्रोदयमाददीत ॥
कर्पूरजातीफलदेवपुष्प-
कस्तूरिकानक्रमदैलिकाभिः ।
लिह्यादिमं माममशक्तशुक्र
आरोग्यहेतोर्मधुना मनुष्यः ॥

संखिये (सोमल) को ३-३ बार सेंड (थोहर) और आकके दूधमें पृथक् पृथक् घोट घोटकर सुखावें। तदनन्तर उसमें उसके बराबर बुभुक्षित पारद और दो गुना शुद्ध गन्धक मिलाकर कज्जली बनालें। इसे आतशी शीशीमें भर कर बालुका यन्त्रमें पकावें। ४ पहर तक तो शीशीका मुख खुला रक्खें और फिर डाट लगाकर १॥ दिन तक बबूलकी लकड़ियोंकी तीव्राग्नि दें। तत्पश्चात् शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसे सावधानी पूर्वक तोड़ कर उसके गलेमें लगे हुवे चन्द्रोदयको निकाल लें।

अनुपान—कपूर, जायफल, लौंग, कस्तूरी, अम्बर और इलायचीका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर रक्खें।

उक्त चन्द्रोदयको इस अनुपानमें मिलाकर शहदके साथ सेवन करनेसे शुक्रकी क्षीणता (नपुंसकता) नष्ट होती है।

(५५२५) मल्लपञ्चरत्नरसः

(र. चं. । वातरोगा.)

स्फाटिको धवलश्चैव दाडिमः कृष्णपीतकौ ।
एते पञ्चाखुपाषाणाः गृह्णीयात्समभागकाः ॥
खल्ले किञ्चिद्विचूर्ण्याथ क्षिपेद्डुमरुयन्त्रके ।
रम्भाकन्दरसश्चैव प्रतिकर्षे चतुर्गुणम् ॥
दापयेत्तत्समं चैव लिङ्गिनीस्वरसं तथा ।
सन्धिलेपं ततः कृत्वा चूल्योपरि निधापयेत् ॥
मन्दाग्नौ पाचयेद्यामचतुष्टयविधानतः ।
मूर्ध्नि दत्त्वाऽऽर्द्रवस्त्रं तु स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
सर्ववातविकारेषु वातश्लेष्मगदे तथा ।
श्वासे कासेऽथ विषमज्वरे चैव त्रिदोषजे ॥
देयं गुञ्जार्धगुञ्जं वा पथ्यं तक्रोदनं हितम् ।
घृतशर्करया देयं सर्ववातगदेषु च ॥
पेयं शीतोदकं चात्र पञ्चरत्नरसोत्तमे ॥

स्फटिकाके समान चमकदार सफेद रंगका, भूरे रंगका, अनारके फूलके समान लाल रंगका और काला तथा पीला सोमल (संखिया) समान भाग लें और पांचोंको खरलमें डालकर जरा देर घोटकर (मोटा चूर्ण बनाकर) एक मिट्टीके शरावमें डालें और उसमें समस्त औषधसे चार गुना केलेकी जड़का रस तथा उतना ही शिवलिङ्गीका रस डालकर उसके ऊपर दूसरा शराव उलटा करके ढक दें और दोनोंकी सन्धिको कपड़ मिट्टीसे अच्छी तरह बन्द करदें।

इसे चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे मन्दाग्नि जलावें और ऊपर वाले प्याले पर चार तह किया हुवा कपड़ा पानीमें भिगोकर रक्खें तथा ज्यों ज्यों वह सूखता जाय त्यों त्यों उसे बार बार भिगोते रहें। ४ पहरके पश्चात् अग्नि देनी बन्द करदें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो दोनों प्यालोंको सावधानीसे खोलकर ऊपरके प्यालेमें लगे हुवे संखियेके फूल (जौहर) को छुड़ा लें।

इसे आधी रत्ती या एक रत्ती मात्रानुसार घी और खांडमें मिलाकर खिलानेसे समस्त वातज और वातकफज रोग तथा श्वास, खांसी और सन्निपातज विषम ज्वर नष्ट होते हैं।

दाह हो तो शीतल जल पीना चाहिये।

पथ्य—तक्र भात।

नोट—अग्नि बहुत धीमी जलानी चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा—२—३ चावल भर। १ रत्ती औषधको १ तोला खांडमें मिलाकर अच्छी तरह घोटकर उसकी ४ पुड़िया बना लेनी चाहियें। इस प्रकार तोलकर मात्रा बनानेसे अधिक दिये जानेका भय नहीं रहेगा।)

(५५२६) मसूरिकारिरसः

(र. का. धे. । मसूरिका.)

बिल्वपत्ररसेनैव मूर्छितः पारदेश्वरः ।
हिलमोचीरसेनैव पीतो मधुसमायुतः ॥
मसूरीं सर्वजां हन्ति अस्थिजां सर्वदेहजाम् ॥

रस सिन्दूर अथवा कज्जलीको बेलके पत्तोंके रसमें घोटकर यथोचित मात्रानुसार शहदमें मिलाकर हुलहुलके रसके साथ पिलानेसे सर्व दोषज और सर्व देहमें फैली हुई अस्थिगत मसूरिका भी नष्ट हो जाती है।

(५५२७) मस्कमृगाङ्कोरसः

(र. रा. सु. । प्रमेह.)

सुशुद्धं पारदं चैव सुशुद्धं गन्धकं भवेत् ।
रङ्गं शुद्धं समादाय नवसादरमेव च ॥
समभागानि सर्वाणि मर्दयित्वा सुखल्लके ।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य पावके स्थापयेद्बुधः॥
मुखे मुद्रा च नो देया धूमं संलक्षयेत्ततः ।
निर्धूमे जायमाने तु सिद्धो मस्कमृगाङ्ककः ॥
मधुमेहन्तु मेहानां गणं नाशयते ध्रुवम् ।
मधुना भक्षयेच्चैव सूक्ष्मैला चूर्णकेन च ॥
रससागरग्रन्थे तु सुश्रेष्ठं स्वर्णभस्म च ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बंग (कलई) और नौसादर समान भाग लेकर प्रथम बंगको आगपर पिघलाकर पारदमें डालदें और अच्छी तरह घोटें । जब रांग पारदमें मिल जाय तो उसमें गन्धक और नौसादर डालकर घोटें । जब अत्यन्त महीन कज्जली हो जाय तो उसे आतशी शीशीमें भरकर बालुका यन्त्रमें पकावें । शीशीका मुख बन्द न करना चाहिए और उससे निकलने वाले धुएं को देखते रहना चाहिए । जब धुंआ निकलना बन्द हो जाय तो रसको तैयार समझें । तदनन्तर शीशीके स्वांग–शीतल हो जाने पर उसमेंसे औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें ।

(यह सुनहरे रंगकी भस्म होगी इसीको स्वर्णवङ्ग और स्वर्ण राजबङ्गेश्वर भी कहते हैं ।)

इसे छोटी इलायचीके चूर्णमें मिलाकर शहदके साथ सेवन करनेसे मधुमेह और अन्य समस्त प्रकारके प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं । (मात्रा– १–२ रत्ती).

(५५२८) महाकनकसिन्दूररसः

(यो. र.; र. रा. सु.; बृ. नि. र. । क्षय.)

रसगन्धकनागाश्च रसको माक्षिकाभ्रके ।
कान्तविद्रुममुक्तानां बंगभस्म च तारकम् ॥
भस्म कृत्वा प्रयत्नेन प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
सर्वतुल्यं शुद्धहेमभस्म कृत्वा प्रयोजयेत् ॥
मर्दयेत्त्रिदिनं सर्वं हंसपादीरसैर्भिषक् ।
ततो वै गोलकान्कृत्वा काचकूप्यां विनिक्षिपेत्॥
रुद्ध्वा तत्काचकूपीं च सप्तवस्त्रेण वेष्टिताम् ।
ततो वै सिकतायन्त्रे त्रिदिनं चोक्तवह्निना ॥
पश्चात्तं स्वाङ्गशीतं च पूर्वोक्तरसमर्दितम् ।
विनिक्षिप्य करण्डेऽथ सम्पूज्य रसराजकम् ॥
महाकनकसिन्दूरो राजयक्ष्महरः परः ।
पाण्डुरोगं श्वासकासं कामलाग्रहणीगदान् ॥
क्रिमिशोफोदरावर्तगुल्ममेहगुदाङ्कुरान् ।
मन्दाग्निं छर्दिमरुचिमामशूलहलीमकान् ॥
ज्वरान्द्वन्द्वादिकान्सर्वान्सन्निपातांस्त्रयोदश ।
पैत्यरोगमपस्मारं वातरोगान्विशेषतः ॥
रक्तपित्तप्रमेहांश्च स्त्रीणां रक्तस्रवांस्तथा ।
विंशतिश्लेष्मरोगांश्च मूत्ररोगान्निहन्त्यसौ ॥
हेमवर्ण्यश्च बल्यश्च आयुःशुक्रविवर्धनः ।
महाकनकसिन्दूरः काश्यपेन विनिर्मितः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सीसा भस्म, शुद्ध खपरिया, स्वर्ण माक्षिक भस्म, अभ्रक भस्म, कान्त लोह भस्म, प्रवाल (मूंगा) भस्म, मोती भस्म, बंग भस्म और चांदी भस्म १।–१। तोला तथा स्वर्ण भस्म सबके बराबर (१३॥। तोले) लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर समस्त औषधोंको एकत्र मिलाकर ३ दिन हंसपादी (लाल

लज्जालु) के रसमें घोटकर छोटी छोटी टिकिया बना लें और उन्हें सात (कपड़ मिट्टी) की हुई आतशी शीशीमें भरकर बालुका यन्त्रमें ३ दिनकी मृदु, मध्यम, तीव्र अग्नि दें। जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे एक दिन हंसपादीके रसमें घोटें।

इसके सेवनसे राजयक्ष्मा, पाण्डु, श्वास, खांसी, कामला, संग्रहणी, कृमि, शोथ, उदर रोग, गुल्म, प्रमेह, अर्श, मन्दाग्नि, छर्दि, अरुचि, आम, शूल, हलीमक, द्वन्द्वजादि ज्वर, १३ प्रकारके सन्निपात, पित्तरोग, अपस्मार, वात रोग, रक्तपित्त, प्रमेह, स्त्रियोंका रक्तस्राव, २० प्रकारके कफ रोग और समस्त मूत्र रोग नष्ट हो जाते हैं।

यह राजयक्ष्माकी परमौषध और वात रोगोंमें विशेष उपयोगी है।

इसके अभ्याससे शरीरकी कान्ति, बल, आयु और वीर्यकी वृद्धि होती है।

(५५२९) महाकनकसुन्दररसः

(र. र. स. । अ. २७)

कान्तकाञ्चनगन्धाश्मजारितं मारितं रसम्।
चतुर्निष्कमितं चाथ स्वर्णं निष्कमितं मृतम् ॥
निक्षिप्य कान्तपात्रे तु पञ्चाशन्निष्कसम्मितम्।
जारयेद्गन्धकं शुद्धमन्धेन बडवाग्निना ॥
निष्कतुल्यमिदं चूर्णं श्लक्ष्णीकृत्य प्रयत्नतः।
निक्षिपेन्मधु सम्पूर्णे घृतसुस्निग्धभाण्डके ॥
अनेनैव प्रकारेण पथ्यानां षष्ठिसंयुतम्।
त्रिशतं साधयेद्यत्नाच्छास्त्रदृष्टविधानतः ॥
त्रिधा विभाज्य तत्रैकां समादाय हरीतकीम्।
एकपादं दिनाभ्यां च द्वितीयं दिवसैस्त्रिभिः ॥
तृतीयं च ततः पादं चतुर्भिर्दिवसैर्भजेत्।
एकैकां च ततः पथ्यां भजेदावत्सरं नरः ॥
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितवर्जितः।
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो नित्यं स्त्रीशतसेवकः ॥
बलवान्वीर्यवांश्चैव पूर्णसर्वेन्द्रियोदयः ॥
जायते नात्र सन्देह आज्ञेयं पारमेश्वरी ॥
हन्यादक्षिगदांश्च कुष्ठमखिलं मासान्तमासेवितः।
पाण्डुं च ग्रहणीं प्रमेहगुदजान्गुल्मांश्च शूलामयान
स्थूलत्वं च तथा महाग्निसदनं रोगांस्तथैवापरा-
न्कुर्याद्दीपनपाचनं खलु नृणां भाव्यामयारोधनम्
अयं रसायनं दिव्यं महाकनकसुंदरः ॥

कान्त लोह स्वर्ण और गन्धक जारित पारद भस्म ४ निष्क (२० माशे) और स्वर्ण भस्म ५ माशे लेकर दोनोंको एकत्र घोटें। तदनन्तर उसमें कान्त लोह-निर्मित अन्धमूषा द्वारा ५० निष्क शुद्ध गन्धक जारण करें।

अब इसमेंसे १ निष्क (५ माशे) औषधका अत्यन्त महीन चूर्ण करके घृतसे स्निग्ध किये हुवे उत्तम मृत्पात्रमें डालें और उसे शहदसे भरकर अच्छी तरह हिला दें कि जिससे वह औषध शहद में अच्छी तरह मिल जाए।

इसके पश्चात् ३६० हर्रोंको (सिजाकर) उसमें डाल दें। (शहद इतना होना चाहिये कि जिसमें हर्रें भली भांति डूब जाएं।) जब हर्रें शहदमें अच्छी तरह रच जाएं तो उन्हें सेवन योग्य समझें।

एक हर्रके ३ भाग करके उनमेंसे १ भाग पहिले और दूसरे दिन (आधा आधा करके) खावें, तीसरे दिन दूसरा भाग और चौथे दिन तीसरा भाग खावें तथा इसके पश्चात् नित्य प्रति १ हर्र १ वर्ष तक खाते रहें।

इस प्रयोगसे मनुष्य बलि पलित-रहित और सर्व रोगोंसे विमुक्त १०० वर्षकी आयु प्राप्त कर सकता है। उसकी सर्वेन्द्रियां पूर्ण विकसित रहती हैं तथा वह बलवान और वीर्यवान होकर नित्य प्रति १०० स्त्रियोंसे समागम करनेमें समर्थ हो सकता है।

यह प्रयोग समस्त नेत्र रोग और कुष्ठोंको केवल १ मासमें ही नष्ट कर देता है।

इसके अतिरिक्त यह पाण्डु, संग्रहणी, प्रमेह, अर्श, गुल्म, शूल, स्थूलता और अग्निमांद्य आदि अनेक रोगोंको नष्ट करता और शरीरको रोगोंके हमलेसे बचाता है।

(५५३०) महाकल्कनामकरसः

(नपु. मृता. । तं. ९)

महाकल्कं प्रवक्ष्यामि श्रूयतां शिष्यसत्तम ।
धान्याभ्रकं विनिक्षिप्य मुसलीरसमर्दितम् ॥
स्थाल्यां क्षिप्त्वा निरुध्याथ पिधान्या मध्यरन्ध्रया
स्थाल्यधो ज्वालयेद्वह्निं यामपर्यन्तमुद्धतम् ॥
ततः क्षिपेत्पिधान्यां हि व्योम्नस्त्वष्टगुणं पयः।
जीर्णे पयसि पिष्ट्वा तत्तालमूलीरसैः पुनः ॥
इत्थं हि साधयेद्व्योम त्रिवारमतियत्नतः ।
अजादुग्धपुटैः पश्चाद्वाराणि विंशतिः खले ॥
कम्पिल्लेन रसेनापि विष्णुक्रान्तारसेन च ।
कदलीकन्दतोयेन तालमूलीरसेन च ॥
शतवारं पुटं देयं भवेद्व्योमरसायनम् ।
तद्व्योमभस्मितं ताप्यभस्म ताम्रस्य भस्म च ॥
कान्तभस्म च तत्सर्वं समांशं परिकल्पयेत् ।
भावयेत्सप्तधा निम्बरसैर्लोध्ररसेन च ।
त्रिफलायाः कदल्याश्च केतक्या मार्कवस्य च ॥
कोरकस्यापि सारेण तावद्वाराणि यत्नतः ॥
इति निष्पन्नकल्केऽस्मिंस्तत्समां त्रिफलां क्षिपेत्
भस्मसूतं सिताव्योषं चित्रकं च पृथक् पृथक् ॥
मधुना गुटिकाः कार्याः शाणेन प्रमिताः खलु ।
महाकल्क इति ख्यातो ह्यश्विभ्यां परिकीर्तितः॥
विधिना वर्षपर्यन्तं भक्षयेन्मतिमान्नरः ।
बलवृद्धिकरः शश्वत्सर्वरोगनिवारकः ॥
मेहानर्शस्तथा पाण्डुकासश्वासहलीमकान् ।
उपदंशं फिरङ्गं च कुष्ठं वापि निहन्त्यसौ ॥

शुद्ध धान्याभ्रकको मूसलीके रसकी भावना देकर कपड़ मिट्टी की हुई हाण्डीमें भरदें; और उसके ऊपर एक शराव ढक कर दोनोंके जोड़को (उड़दके आटेसे) बन्द करदें। इस ढकनेके बीचमें एक छिद्र होना चाहिये।

अब इस हाण्डीको चूल्हे पर चढ़ाकर उसके नीचे १ पहर तक तीव्राग्नि जलावें और तत्पश्चात् ऊपर वाले शरावके छिद्रसे उसमें थोड़ा थोड़ा दूध डालें। जब अभ्रकसे आठ गुना दूध शुष्क हो जाए तो आग जलानी बन्द करदें और हाण्डीके स्वांग शीतल हो जाने पर उसमेंसे अभ्रकको निकाल लें।

इस अभ्रकको पुनः मूसलीके रसमें घोट कर उपरोक्त विधिसे हाण्डीमें पकावें और जब ८ गुना दूध शुष्क हो जाय तो निकाल लें तथा एक बार फिर तालमूलीके रसमें घोटकर उपरोक्त विधिसे उसमें ८ गुना दूध शुष्क करें।

इस प्रकार ३ बार दूधके साथ पाक करनेके पश्चात् उसे बकरीके दूधमें घोटकर यथा विधि गजपुटमें फूंक दें। इसी प्रकार बार बार दूधमें घोटकर बीस पुट दें। बकरीके दूधके पश्चात् २० पुट कमीलेके रसकी दें और तदनन्तर क्रमशः कोयल, केलेकी मूसली और तालमूली (मूसली) के रसकी २०-२० पुट दें।

उपरोक्त विधिसे पांचों द्रव्योंकी २०-२० पुट (कुल १०० पुट) लग जानेपर अभ्रकभस्म तैयार हो जायगी।

तब यह अभ्रक भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, ताम्र भस्म और कान्त लोह भस्म समान भाग ले कर सबको नीमकी छाल, लोध, त्रिफला, केला, केतकी, भंगरा और कमलनालके रसकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दें। तत्पश्चात् उसमें त्रिफलाका चूर्ण, पारद भस्म (अभावमें रससिन्दूर), मिश्री, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) और चित्रकका चूर्ण १-१ भाग (प्रत्येकका चूर्ण उपरोक्त तैयार रसके बराबर) मिलाकर सबको एकत्र शहदमें घोटकर ५-५ माशेकी गोलियां बना लें।

इन्हें (यथोचित मात्रानुसार) १ वर्ष तक सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट होकर बल वीर्यकी वृद्धि होती है।

इसके सेवनसे प्रमेह, अर्श, पाण्डु, खांसी, श्वास, हलीमक, उपदंश और कुष्ठादि रोग नष्ट होते हैं।

(५५३१) महाकल्परसः

(र. का. धे. । वातरक्ता.)

गण्डदूर्वा भृङ्गराजः कुमारी कण्टकारिका।
त्रिफला काकमाची च कदली वाजिगन्धिका॥
भार्गव्याश्च रसैरेतैर्मुसल्या च पुनर्नवैः।
प्रत्येकं मर्दयेदेतैः पारदं प्रतिवासरम्॥
प्रस्थमानमतिश्लक्ष्णं गाढं गाढं निरन्तरम्।
अनन्तरं सैन्धवेन प्रस्थद्वयमितेन च॥
एकैकं गैरिकं प्रस्थं खटिकामिष्टिकां तथा।
कन्यकाद्रवमाकृष्य सरसं मर्दयेच्च तत्॥
दिनत्रयमतिश्लक्ष्णं नष्टपिष्टं च खल्वके।
नालिकायन्त्रमारोप्य मुद्रयेत्तन्मुखं भृशम्॥
त्रयोदशदिनं यावद्वह्निं कुर्यान्निरन्तरम्।
यन्त्रादादाय सूतेन्द्रं प्रकुर्यात्तस्य पूजनम्॥
गुरूणां महतां पश्चाद्योगिनां क्रोधवर्जितः।
मदमात्सर्यमुत्सृज्याऽहङ्कारं मानमेव च॥
ब्रह्मचर्यं च कर्तव्यं वैश्ववृन्दस्य पूजनम्।
अर्धगुञ्जं रसं दद्याद् दिवसक्रमवर्धितम्॥
रक्तिकां कारयेद्वादे नाधिकां तां कदाचन।
भुक्तं भुक्तं च भुञ्जीत मुद्गान्नं च शृतं घृतम्॥
शर्करामधुखण्डानि पथ्यार्थं तत्र योजयेत्।
एकविंशदिने याते तन्नखानि पतन्ति च॥
चत्वारिंशद्दिनेऽतीते तत्केशाः प्रक्षरन्ति च।
एवं षष्टिदिनप्रान्ते त्वचो यान्ति शीर्णताम्॥

अशीतिदिवसस्यान्ते तद्दन्ताः प्रच्यवन्ति च ।
आलस्यमरुचिर्देहे जायते सप्तकद्वयात् ॥
अंशेन च भवेद्देहे छर्दनं च मुखेन च ।
भवेत्तन्मनुजस्यापि सेवनाच्च रसायनम् ॥
एवं षण्मासपर्यन्तं सेवयेत्तं रसेश्वरम् ।
मासत्रये समायान्ति नूतनाः केशसञ्चयाः ॥
दृढा दन्ता जायन्ते नवीनाः पुण्यभागिनः ।
पुनर्नवं वपुः कुर्याद् द्वितीयो मीनकेतनः ॥
सिद्धमण्डलसिद्धाङ्गो ब्रह्मायुः कल्पपारगः ।
दन्तावलबलः प्राज्ञो हरिवेगो दृढेन्द्रियः ॥
निरामयो महोत्साहो महाशिवमनोहरः ।
वनितानां शतं गच्छेत्पुत्राणां शतमाप्नुयात् ॥
कालालिकुलसंकाशकुटिलालकपल्लवः ।
विशालशालसद्बाहुमण्डितोरःस्थलः सदा ॥
कपालप्रतिमप्रौढहृदयावनिशोभितः ।
प्रत्युन्नतवपुर्यष्टिर्विलासिनयनाम्बुजः ॥
निर्गुण्डिकापत्ररसं त्रिलोहमनु पाययेत् ।
औषधस्य क्षणं स्थित्वा फलताम्बूलचर्वणम् ॥
कर्पूरसकलं चास्ये निर्मले विनिवेशयेत् ।
अमले सुखदे तल्पे वामशायी भवेत्क्षणम् ॥
भारतं भारतं वाऽपि भव्यकाव्यकथा सुखम् ।
गीतं सङ्गीतकं चापि रामायणपरायणः ॥
नाटकं शाटकं चैव शृणोति च निरीक्षते ।
महागन्धयुतो भाति कुसुमैः सुमनोहरम् ॥
मनोभिरामा वा निर्विकारमना मताः ।
अनाकुलमनाः कामं चित्रं वा वीक्षते सुखम् ॥
अनन्यस्यास्य कल्पस्य सेवनं कुरुतेऽनिशम् ।
अपथ्यं न च कर्तव्यमतथ्यं सर्वमेव तत् ॥
जायते तत्तदा कल्पे सत्वेष्वपि महत्स्वपि ।
अनिच्छा देहिनः शास्त्रे दौर्मनस्यं शुभेऽपि च॥
एतदर्थं निषेधोऽस्ति कथितः पूर्वसूरिभिः ।
कर्तव्यस्यापि कर्तव्यः सङ्कल्पः कल्पपूर्ववत् ॥
भविष्यति न सन्देहो मोह उत्सृज्यते यदि ।
अष्टदशानि कुष्ठानि वातरक्तं महामयम् ॥
साध्यासाध्यं नाशयति महाकल्परसो भृशम् ॥

१ सेर पारदको क्रमशः गण्डदूर्वा, भंगरा, घीकुमार, कटेली, त्रिफला, मकोय, केला, असगन्ध, भरंगी, मूसली और पुनर्नवा के रसमें पृथक् पृथक् एक एक दिन खरल करें। तदनन्तर उसमें २ सेर सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर घृतकुमारीके रसके साथ ३ दिन घोटें और उसके पश्चात् १-१ सेर गेरु, खिड़िया मिट्टी और ईंटका चूर्ण मिलाकर प्रत्येकके साथ ३-३ दिन मर्दन करें। हर बार घृतकुमारीका रस अवश्य मिला लेना चाहिये। तदनन्तर उसे नालिका यन्त्रमें चढ़ाकर, उसका मुख बन्द करके निरन्तर १३ दिन पाक करें। इसके पश्चात् यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे रसको निकालकर उसका पूजन करें; तथा क्रोध मद, मात्सर्य, अहंकार और अभिमानका त्याग करके ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक गुरु, महात्मा, योगी और वैद्य वृन्दका पूजन करके इस रसको आधी रत्तीकी मात्रानुसार सेवन करना प्रारम्भ करें। यह रस बढ़ाकर अधिकसे अधिक १ रत्ती तक सेवन किया जा सकता है इससे अधिक कदापि न खाना चाहिये।

अनुपान—रसको खानेके पश्चात संभालुके पत्तोंके रसमें स्वर्ण, चांदी और ताम्रकी भस्म

मिलाकर सेवन करना चाहिये और जरा देर बाद पानमें सुपारी और कपूर रख कर खाना चाहिये।

पथ्य—मूंग, भात, घी, खांड, शहद, मिश्री। उत्तम सुखदायक पलंग पर बांई करवट सोना; मनोहर काव्य, कथा, रामायण और संगीत श्रवण करना; नाटकादि देखना और विकार रहित मनसे सुन्दर चित्रोंका अवलोकन करना चाहिये।

इस रसके सेवनमें अपथ्य कदापि न करना चाहिये।

गुण—इसके सेवनसे २ सप्ताह बाद आलस्य और अरुचि उत्पन्न हो जाती है तथा छर्दि होने लगती है। २१ दिन पश्चात् नख गिरने लगते हैं। ४० दिन पश्चात् बाल गिर जाते हैं। ६० दिन बाद खाल गल जाती है तथा अस्सी दिनके पश्चात् दांत भी गिर जाते हैं। इस प्रकार निरन्तर ३ मास तक सेवन करते रहनेसे ये समस्त उपद्रव शान्त हो कर नवीन केश, और दृढ़ दांत निकल आते हैं तथा शरीर अत्यन्त स्वरूपवान कामदेव सदृश हो जाता है। आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है। सैकड़ों स्त्रियोंसे समागम करने और सैकड़ों पुत्रोत्पादनकी शक्ति आ जाती है।

इसे ६ मास तक सेवन करना चाहिये।

यह रस १८ प्रकारके कुष्ठ और असाध्य वातरक्तको भी नष्ट कर देता है।

(५५३२) महाकल्याणवटी

(भै. र. । मदात्यया.)

हेमाभ्रश्च रसं गन्धमयो मौक्तिकमेव च।
धात्रीरसेन सम्मर्द्य गुञ्जामात्रां वटीं चरेत्॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय तिलक्षोदमधुप्लुताम्।
सिताक्षौद्रयुतां वापि नवनीतेन वा सह॥
अयथापानजा रोगा वातजाः कफपित्तजाः।
गदाः सर्वे विनश्यन्ति ध्रुवमस्य निषेवणात्॥

स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म और मोती भस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको आमलेके रसमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालें।

इन्हें प्रातःकाल तिलके चूर्ण और शहदके साथ अथवा खांड और शहदके साथ या नवनीत (नौनी घी) के साथ सेवन करनेसे वातज और कफपित्तज मदात्यय (सुरा पानसे उत्पन्न रोग) अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

(५५३३) महाकामेश्वरः

(बृ. यो. त. । त. १४७; वै. र. । वाजीकरण.)

एतस्मिन्रतिवल्लभे यदि
पुनः सम्यक्खुरासानिका
धत्तूरस्य तु बीजमर्कक-
रभः पाथोऽब्धिशोषस्तथा।
सन्माजूफलकं तथा खस-
फलं पक्त्वाऽपि[1] यः क्षिप्यते
चूर्णार्धा विजया तदा स हि
भवेत्कामेश्वरः सञ्ज्ञया॥

यदि " **रति वल्लभ पूगी पाक** " में निम्न ओषधियोंका चूर्ण और मिला दिया जाय तो उसका नाम "महा कामेश्वर मोदक" हो जाता है।

[1] "फलं त्वक्चापि" इति पाठान्तरम्।

खुरासानी अजवायन, धतूरेके बीज, अकरकरा, समन्दर सोख, माजूफल, और पोस्तका डोढा ५-५ तोले तथा भांग समस्त चूर्णसे आधी ।

(५५३४) महाकामेश्वरो मोदकः

(वृ. यो. त. । त. १४७)

कङ्कोलो बृहदेलिकागजबलावीरावरीन्दीवरी-
वासावत्सकबीजवारणकणाविश्वोपकुल्योषणम् ।
बीजानि त्रपुसत्रिकण्टकशणामाषेक्षुराणां तथा
मज्जानो बदरीबिभीतकशिवाधात्रीप्रियालोद्भवाः
तालीसं शिवकन्दलामृतलतागाङ्गेरुकीबीजकं
शृङ्गीधान्यकचित्रकं समुसलीहीरासटीमेथिकाः ।
दार्वीयुग्वृषभोऽथ मेदसुमहामेदे च काकोलिका
तद्वत्क्षीरकवायसी निगदिता वृद्धिस्तथा मृद्धिका
शालूकद्वयराजिकाद्वयपृथग्जीराजमोदाद्वयं
श्रीखण्डद्वयमब्धिशोषमुसली मांसी सर्वांशी
मिसिः ।
जातीपत्रिलवङ्गमकर्करभः काश्मीरकं दाडिमं
चातुर्जातकलोणिकाकुमुदिकाजातीफलं यष्टिका ॥
द्राक्षाखाखसवल्कलं मदनकं भृङ्गाटशुभ्रोपणं
जम्बूपद्मकपुष्कराह्वकदलीकन्दाश्वगन्धास्तिलाः ।
माषाः शाल्मलिबीजवल्कलरसामूलं च पौनर्नवम्
कर्षांशं विजयाऽखिलार्धतुलया देयाऽथ शुक्त्यं-
शकाः ॥

रसरसकभुजङ्गास्तारतापीजवङ्गा
गगनतरणिसारा वेधमुख्यास्तुषाराः ।
द्विगुणितसितमेतच्चूर्णगोलं विदध्या-
त्तदनु मधुहविर्भ्यां प्राश्य पेयं पयोऽनु ॥

यक्ष्माणं ग्रहणीगदं गुदरुजामानाहप्लीहोदरा-
ण्युन्मादानलसाददीर्घकसनापस्मारमेहाश्मरीः ।
शूलं श्वासमरोचकं ज्वरमुरोरोगं क्रिमिं कामलां
पाण्डुत्वं च हलीमकं च जयति श्रीमानयं लीलया ॥
रेतःक्षीणमलं करोति मदनोन्मादेन मन्दानलं
पक्त्या गुर्वशनस्य दीनवपुषं कान्त्या जडं मेधया
कार्नाटीशतसङ्गसङ्गरजयोद्दामश्रिया कामिनं
दुर्बीजं शुभरेतसं सुतनयं कुर्याच्चवलङ्कारिणम् ॥
पारीन्द्रं च पराक्रमेण तुरगं वेगेन तारापतिं
कान्त्या च द्विरदं बलेन शिखिनं नादेन बुद्ध्या-
बुधम् ।
नासत्याबधरी करोति वपुषा लावण्यलक्ष्मीजुषा
श्रीकामेश्वरसेवया गतवया अप्येति यूनः श्रियम् ॥

कंकोल, बड़ी इलायची, नागबला (गंगेरन), अतिबला, शतावर, महा शतावर, वासा, इन्द्रजौ, गजपीपल, सोंठ, पीपल, काली मिरच, खीरेके बीज, गोखरु, सनके बीज, उड़द, तालमखाना, बेरकी गुठलीकी गिरी, हर्र और आमलेकी गुठलीकी गिरी चिरौंजी, तालीस पत्र, आमला, कमलगट्टा, गिलोय, गंगेरन, बिजयसार,, काकड़ासिंगी, धनिया, चीता, काली मूसली, हीराबोल, कचूर, मेथी, दारुहल्दी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, काकजंघा, वृद्धि, मुनक्का, कसेरु, कमलकन्द, सफेद सरसों, राई, सफेद जीरा, काला जीरा, अजवायन, अजमोद, दो प्रकारका सफेद चन्दन*, समन्दरसोख, सफेद मूसली, जटामांसी, बंसलोचन, सौंफ, जावत्री, लौंग, अकरकरा, केसर,

*एक वह जो तोडनेसे भीतरसे नरम निकलता है और दूसरा जो सूखा निकलता है ।

अनार दाना, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, लोनियाके बीज, कुमुदनी (नीलोफर), जायफल, मुलैठी, द्राक्षा (किशमिश), पोस्तका डोडा, धतूरेके बीज, सिंघाड़ा, सफेद विधारामूल, पीपलामूल, जामनकी गुठली, पद्माक, पोखरमूल, केलेकी मूसली (सूखी हुई), असगन्ध, तिल, उड़द, सैंभलके बीज, सैंभलकी छाल, शिलारस और पुनर्नवाकी जड़। प्रत्येकका कपरछन चूर्ण १। तोला। शुद्ध भांगका चूर्ण सबसे आधा (५६। तोले) और पारद भस्म (या रससिन्दूर), शुद्ध खपरिया, सीसा भस्म, चांदी भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, बंग भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म, कस्तूरी और कपूर आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) लेकर सम्पूर्ण ओषधियोंको एकत्र घोट लें और फिर सबसे दो गुनी (४ सेर ३१। तोले) खांडकी चाशनी बनाकर उसमें उक्त सम्पूर्ण चूर्ण मिलाकर (१-१ तोलेके) मोदक बना लें।

इन्हें घी और शहदमें मिलाकर दूधके साथ खाना चाहिये।

ये मोदक यक्ष्मा, संग्रहणी, अर्श, आनाह, प्लीहोदर, उन्माद, अग्निमांद्य, पुरानी खांसी, अपस्मार, प्रमेह, अश्मरी, शूल, श्वास, अरुचि, ज्वर, हृद्रोग, कृमि, कामला, पाण्डु और हलीमकको नष्ट करते हैं।

इनके सेवनसे क्षीणवीर्य पुरुष भी काममत्त हो जाते हैं; मन्दाग्नि व्यक्ति दुष्पाच्य आहार पचा डालते हैं; कान्ति हीन पुरुषोंके मुख कान्तिमान् हो जाते हैं; जड़ बुद्धि मनुष्य बुद्धिमान हो जाते हैं; दुष्ट वीर्य पुरुषोंका वीर्य शुद्ध होकर उन्हें शुभ लक्षण युक्त पुत्रोंकी प्राप्ति होती है और वृद्ध पुरुष युवाके समान हो जाते हैं।

इसके प्रभावसे बल, पौरुष, कान्ति, बुद्धि और काम शक्तिको अत्यन्त वृद्धि होती है।

(मात्रा-१ मोदक।)

(५५३५) महाकालरसः (१)

(र. का. धे. । कुष्ठ.)

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं कुष्ठं गन्धकटङ्कणम् ।
पिप्पली च समं मर्द्यं मातुलुङ्गद्रवैर्दिनम् ॥
त्रिफला सर्वतुल्या स्यादेकीकृत्याथ मर्दयेत् ।
निष्कैकं लेहयेच्चानु मध्वाज्यैर्वाकुची रसम् ॥
कुष्ठं वैपादिकं हन्ति महाकालो रसो ह्ययम् ॥

शुद्ध पारद, ताम्र भस्म, कूठ, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील और पीपल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन बिजौरेके रसमें घोटें; तत्पश्चात् उसमें उसके बराबर त्रिफलेका चूर्ण मिलाकर भली भांति खरल करके रक्खें।

इसे शहदके साथ चाटकर ऊपरसे ५-५ माशे शहद, घी और बाबचीका स्वरस एकत्र मिलाकर चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे वैपादिक कुष्ठ× नष्ट होता है।

(मात्रा-१-१॥ माशा)

× वैपादिकं पाणिपादस्फुटनं तीव्रवेदनम् । [मा. नि.]

(५५३६) महाकालरसः (२)

(र. का. धे. । कुष्ठ. ४०)

गन्धबद्धं तु सूतेन्द्रं सत्त्वं तालकसम्भवम् ।
ताम्रभस्म च तुल्यांशमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥
दिनं च बाकुचीतैले गुञ्जामात्रं च भक्षयेत् ।
भूतारिवृक्षमूलं च राजवृक्षत्वचा समम् ॥
गुडेन सह कर्षैकं भक्षयेदनुपानकम् ।
गलत्कुष्ठहरः ख्यातो महाकालो महारसः ॥

समान भाग पारद और गन्धककी कज्जली, हरताल सत्व और ताम्र भस्म बराबर बराबर लेकर सबको १-१ दिन आकके दूध और बाबचीके तेलमें घोटें ।

इसमेंसे १ रत्ती रस खाकर ऊपरसे भूतारि (हींग) के पेड़की जड़ और अमलतासकी छालका १। तोला चूर्ण गुड़में मिलाकर खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे गलत्कुष्ठ नष्ट होता है ।

(५५३७) महाकालेश्वरो रसः

(भै. र. । कास.; र. चं. । श्वास.; र. का. धे. । सन्निपात.)

मृतं लौहं मृतं वङ्गं मृतार्कं मृतमभ्रकम् ।
शुद्धसूतश्च गन्धश्च माक्षिकं हिङ्गुलं विषम् ॥
जातीफलं लवङ्गश्च त्वगेलानागकेसरम् ।
उन्मत्तस्य च बीजानि जयपालश्च शोधितम् ॥
एतानि समभागानि मरिचं हरनेत्रकम् ।
सर्वद्रव्यं क्षिपेत्खल्ले लौहदण्डेन मर्दयेत् ॥
शक्राशनस्य स्वरसैर्भावयेदेकविंशतिम् ।
गुञ्जामात्रा प्रदातव्या आर्द्रकस्य रसैर्युता ॥
तदर्द्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं यथोचितम् ।
पञ्चकासान् क्षयं श्वासं राजयक्ष्माणमेव च ॥
सन्निपातं कण्ठरोगमभिन्यासमचेतनम् ।
महाकालेश्वरो हन्ति कालनाथेन भाषितः ॥

लोह भस्म, बंग भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध बछनाग (मीठा विष); तथा जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, नागकेसर, शुद्ध धत्तूर-बीज और शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण १-१ भाग+ एवं काली मिर्चका चूर्ण ३ भाग लेकर सबको लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे घोटकर भांगके काथको २१ भावना दें और १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर सुखा लें ।

इनमेंसे पूर्ण वयस्क रोगीको १ गोली तथा बालक और वृद्धको आधी आधी गोली अद्रकके रसके साथ खिलानेसे पांच प्रकारकी खांसी, क्षय, श्वास, राजयक्ष्मा, सन्निपात, कण्ठ रोग, अभिन्यास और मूर्च्छाका नाश होता है ।

(५५३८) महाकूष्माण्डपाकः

(वृ. यो. त. । त. १४९)

कूष्माण्डस्य पचेलिमस्य
बृहतःखण्डांस्तुलासम्मितां-
स्तद्बीजान्विगतत्वचश्च
विपचेन्मन्देनसप्तार्चिषा ।
पक्वान्किञ्चिदमूनमूढ-
हृदयः पिष्ट्वा शिलायां शनै-
स्तत्कल्कं सुरभीघृतेन
कुडवद्वन्द्वेन संभर्जयेत् ॥

+रस कामधेनुमें टङ्कण अधिक लिखा है ।

शीते तत्र वरा वरी सठि
मिशीश्रीखण्डवंशीबला
वेलाह्लाघनषट्कटुक्षुर
हयोशाराजमोदात्रिवृत् ॥
कुष्ठं कट्फलमूसलीगज-
कणातालीसजीरद्वय-
द्राक्षागोक्षुरवृद्धदारु
हुतभुग्यष्टीलवङ्गाम्बुजम् ।
शृङ्गीचारजवानरीकु-
मुदिकाखर्जूरबैभीतकं
कङ्कालो हपुषाविदारि
लवणश्रेष्ठश्चतुर्जातकम् ॥
जातीकोशसुवर्णमाक्षिक-
युगं शृङ्गाटकं शाल्मली
त्वक्चैषां मृदुलं रजः पिचु-
मितं प्रत्येकमत्र क्षिपेत् ।
अभ्रं वाऽपि पलप्रमाण-
ममलं ताम्रं सलोहं मृतं
प्रत्येकं पिचुयुग्मकं च
सितया साकं तुलामानया॥
सपाच्यानलयोगतो वि-
रचयेच्चक्रीं यथाग्नि प्रगे
तामद्यादपि सायमम्बु
कियदाचामेच्च ताम्बूलभुक् ।
कूष्माण्डस्य रसायनं निग-
दितं वाजीकरं स्त्रीजुषा-
मश्विभ्यां कफवातपित्त
गदजिच्छुक्रार्तवातङ्कनुत् ॥
वृष्यं चाप्यतिबृंहणं क्षय-
हरं जीर्णज्वरघ्नं वमि-
मेहच्छेदि च रक्तपित्त-
विजयि स्यादम्लपित्तापहम् ।
रक्तार्शो च विडामयप्र-
दरयोः पाण्डौ प्रसूत्यामये
मन्दाग्नौ जठरामयेऽरुचि
शिरःपीडाङ्गपीडासु च ॥
आबल्ये पलिते बलीषु
नयनश्रोत्रामये शस्यते
दाहे सर्वशरीरजेऽपि
पवनाम्ने पाण्डुकृच्छ्रेषु च ॥

पके पेठेके छिले हुवे और बीज रहित ६। सेर बड़े बड़े टुकड़े ले कर उन्हें मन्दाग्निपर पकावें और उसीज जाने पर उन्हें पत्थर पर पीस लें तदनन्तर उस पिट्ठीको १ सेर गायके घीमें भूने। जब वह अच्छी तरह भुन जाय तो ठण्डा करके उसे ६। सेर खांडकी चाशनीमें मिला दें एवं उसमें निम्न लिखित ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

चूर्णकी ओषधियां—हर्र, बहेड़ा, आमला, शतावर, कचूर, सौंफ, सफेद चन्दन, बंसलोचन, बीजबन्द (खरैटीके बीज), बायबिड़ंग, धनिया, नागरमोथा, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, चव, चीता, पीपलामूल, तोलमखाना, असगन्ध, खस, अजमोद, निसोत, कूठ, कायफल, मूसली, गजपीपल, तालीसपत्र, सफेद जीरा, काला जीरा, मुनक्का, गोखरु, विधारामूल, चीतामूल, मुलैठी, लौंग, कमल, काकड़ासिंगी, चिरौंजी, कौंचके बीज, कुमुदनी, खजूर, बहेड़ा, कंकोल, हपुषा (हाऊबेर), विदारीकन्द, सेंधा नमक, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर,

जावत्री, सोनामक्खी—भस्म, रूपामक्खी भस्म, सिघाड़ा, और सेंभलकी छालका बारीक चूर्ण १—१ कर्ष (प्रत्येक १। तोला); अभ्रक भस्म ५ तोले, ताम्र भस्म २।। तोले और लोह भस्म २।। तोले। सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लें। और उसे उपरोक्त पाकमें मिलाकर (१—१ तोलेकी)टिकिया बना लें।

१—१ टिकिया सायङ्कालको खा कर ऊपरसे २—४ चुल्लू पानी पीना और फिर पान खा लेना चाहिये।

यह पाक कफज रोग, वातज रोग, पित्तज विकार, शुक्रदोष, रज सम्बन्धी रोग, क्षय, जीर्ण ज्वर, वमन, प्रमेह, रक्तपित्त, अम्लपित्त, रक्तविकार, मलावरोध, प्रदर, पाण्डु, प्रसूत रोग, अग्निमांद्य, अरुचि, उदर रोग, शिर पीड़ा, बली, पलित, नेत्र रोग, कर्ण रोग और समस्त शरीर गत दाहको नष्ट करता है। यह अत्यन्त वाजीकरण है।

(५५३९) महागन्धकम्

(भै. र.; र. सा. सं.। अतिसा.; रा. रा. सुं.। ग्रहण्य.)

रसगन्धकयोः कर्ष ग्राह्यमेकं सुशोधितम्।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥
जात्याः फलं तथा कोषं लवङ्गारिष्टपत्रके।
सिन्धुवारदलञ्चैव एलाबीजं तथैव च।[1]
एतेषां कर्षमात्रेण तोयेन सह मर्दयेत् ॥
मुक्तागृहे पुनः स्थाप्यं पुटपाकेन साधयेत्।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥
एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम्।
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव बलवर्णप्रसादनम् ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम्।
सूतिकाञ्च जयेदेतदपि वैद्यविवर्जिताम् ॥
कासश्वासातिसारघ्नं वाजीकरणमुत्तमम्।
बालरोगं निहन्त्याशु सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां ये विघातकाः।
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां त्यजन्ति ते ॥
बालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चापि विशेषतः।
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिषूदनम् ॥

नोट—रसेन्द्र सार संग्रह और रसचंडांशुका "ग्रहणी शार्दूल रस" भी लगभग इस प्रयोगके समान ही है। उसमें १६ वां भाग स्वर्ण अधिक है तथा संभालु पत्रका अभाव है। (प्रयोग सं. १६१३ देखिये।)

१।—१। तोला शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धककी कज्जली बनाकर उसे अत्यन्त मन्दाग्नि पर पिघलावें और फिर उसमें जायफल, जावित्री, लौंग, नीमके पत्ते, संभालुके पत्ते और छोटी इलायचीके बीजोंका १। १। तोला चूर्ण मिलाकर सबको पानीकी सहायतासे घोटकर पङ्कवत् (लुगदी) बना लें और उसे दो सीपियों (मुक्ता गृह) में बन्द करके उस पर केलेका पत्ता लपेट कर, कुशसे बांधकर उसके ऊपर मिट्टीका १ अंगुल मोटा लेप करदें। तदनन्तर उसे लघु पुटमें पकावें। जब ऊपर वाली मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो उसे अग्निसे बाहर निकाल लें और ठंडा होने पर उसके भीतरसे औषधको निकालकर पीस कर रक्खें।

[1] र. रा. सु. और भै. र. में यह पंक्ति नहीं है।

यह औषध बच्चोंको रोगोंके आक्रमणसे बचानेके लिये अत्यन्त प्रभावशाली है।

इसके सेवनसे ज्वर नष्ट होता, अग्नि दीप्त होती और बल वर्णकी वृद्धि होती है।

यह रस दुस्साध्य संग्रहणी, प्रवाहिका, वैद्योंसे त्यक्त सूतिका रोग, श्वास, अतिसार और उपद्रव सहित बाल रोगोंको नष्ट कर देता है। रोगग्रस्त बालकों और स्त्रियोंके लिए विशेष हितकारी है।

बालकोंका अनिष्ट करने वाले पिशाच, दानव और दैत्य इसे देखते ही पलायन कर जाते हैं।

यह औषध वाजीकरण भी है।

पूर्ण मात्रा—६ रत्ती।

महागुल्मकालानलो रसः

(र. रा. सुं.; र. सा. सं.; रसें. चि. म.; धन्व. । गुल्मरो.)

प्रयोग सं. १५६८ देखिये।

महाचन्द्रकलारसः

(यो. त. । त. ४८; वै. र. । दाह.; वृ. यो. त. । त. १००)

'चन्द्रकला रस' सं. १८८५ देखिये। उसमें भावना द्रव्योंमें दूर्वा और रामशीतली भी हैं जो 'महा चन्द्रकला' में नहीं हैं, उनके स्थानमें इसमें खस और तालमूलीकी भावना लिखी हैं। शेष प्रयोग समान है।

(५५४०) महाचन्द्रप्रभावटी

(र. का. धे. । वातरक्ता. ३९)

भूनिम्बामरदारुसैन्धववचाव्योषेभकृष्णाशटी-
चित्राणि त्रिफलविडङ्गचविकादार्वीत्रिभण्डी विषा
अक्षग्रन्थिकताप्यधान्यरजनी क्षारद्वयाम्भोमुचां
कर्षांशैः कुडवः पुरस्य च पलं वांश्या घृतेनान्विता ॥
प्राप्तेयं गुटिका प्रसाद्य शशिना चन्द्रप्रभाख्यां भृशं
हन्त्यर्शः क्षयकुष्ठमेहजठरप्लीहाग्निसादोदरान्।
मूत्राघातविसूचिकागलशिरःकर्णाक्षिनेत्रामयान्
श्वासानाहभगन्दरारुचिवमिच्छर्दिभ्रमं पाण्डुताम्
दद्रूकुष्ठहलीमकं कृमिगदोन्मादामवातादिकान्
वातासृक्पवनामयार्तितिमिरानाहाश्मरीपीनसान्
शूलारोचकशोथदाहवमिनिःस्रस्ताम्लपित्तारतीः
स्थूलं स्थूलतरं कृशं समतनुं कुर्याद्भृशं सेविता॥

चिरायता, देवदारु, सेंधानमक, बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, गजपीपल, कचूर, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिडंग, चव, दारुहल्दी, निसोत, अतीस, बहेड़ा, पीपलामूल, सोनामक्खी—भस्म, धनिया, हल्दी, जवाखार, सुहागा और नागरमोथा। प्रत्येक का चूर्ण १।—१। तोला तथा शुद्ध गूगल २० तोले और बंसलोचनका चूर्ण ५ तोले लेकर सब चूर्णोंको एकत्र मिला लें और फिर गूगलमें थोड़ा थोड़ा यह चूर्ण तथा आवश्यकतानुसार घी डालते हुवे खूब कूटें। जब समस्त चूर्ण और गूगल मिल कर एक—जीव हो जाए तो (१—१ माशेकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे क्षय, कुष्ठ, अर्श, प्रमेह, उदर-रोग, प्लीहा, अग्निमांद्य, मूत्राघात, विसूचिका, गल-रोग, कर्ण रोग, नेत्र रोग, शिरो रोग, श्वास, अफारा, भगन्दर, अरुचि, छर्दि, भ्रम, पाण्डु, हलीमक, दाद, कुष्ठ, कृमि रोग, उन्माद, आमवात, वातरक्त, वातव्याधि, तिमिर, अश्मरी, पीनस, शूल, शोथ, दाह और अम्लपित्तका नाश होता है तथा स्थूल, स्थूल तर और कृश पुरुष समशरीर हो जाते हैं।

(५५४१) महाज्वराङ्कुशः (१)

(र. रा. सु. । ज्वर.; र. र. । ज्वरा.; र. र. स. । अ. १२; रसें. चि. म. । अ. ९; र. चं. । ज्वरा.; रसें. सा. सं. । ज्वरा.; यो. र. । ज्वरा.; वृ. नि. र. । विषम ज्वरा.; वृ. यो. त. । त. ५९; र. का. धे. । विषम ज्वरा.; यो. त. । त. २०; वै. र. । ज्वर.; र. मं. । ज्वरा.)

सूतं गन्धं विषं तुल्यं धत्तूर्बीजं त्रिभिः समम् ।
चतुर्णां द्विगुणं[1] व्योषं[2] चूर्णं गुञ्जाद्वयं हितम्[3]॥
जम्बीरस्य तु मज्जाभिरार्द्रकस्य रसेन तु ।
महाज्वराङ्कुशो नाम ज्वराणां मूलकृन्तनः ॥
एकाहिकं द्वाहिकं च त्र्याहिकं च चतुर्थकम् ।
रसो दत्तोनुपानेन ज्वरान्सर्वान् व्यपोहति ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) १-१ तोला; धतूरेके शुद्ध बीज ३ तोले तथा सोंठ, काली मिर्च और पीपलका चूर्ण ४-४ तोले (पाठान्तरके अनुसार २-२ तोले) लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको भली भांति खरल करके रक्खें ।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार जम्भीरी नीबूकी मज्जा और अदरकके रसके साथ देनेसे एकाहिक (इकतरा) द्वयाहिक, तृतीयक (तिजारी) और चातुर्थिक आदि समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

(५५४२) महाज्वराङ्कुशः (२)

(भै. र. । ज्वर.; र. सा. सं.; र. र. । ज्वरा.)

पारदं गन्धकं ताम्रं हिङ्गुलं तालमेव च ।
लौहं[1] वङ्गं माक्षिकञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥
मृताभ्रकं गैरिकञ्च टङ्कणं हेमतारकम्[2] ।
सर्वाण्येतानि तुल्यानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥
जम्बीरतुलसीचित्रविजयातिन्तिडीरसैः ।
एभिर्दिनत्रयं रौद्रे निर्जने खल्लगह्वरे ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्कांश्च कारयेत् ।
महाग्निजननी चैषां सर्वज्वरविनाशिनी ॥

---

१ र. र. स. में व्योष (त्रिकुटा) चारोंके समान लिखा है। पथ्यमें दही भातका आदेश है और इस रसको वातकफज ज्वरोंमें उपयोगी बतलाया है।

२ र. रा. सु.; वै. र.; वृ. नि. र.; शा. सं.; भा. प्र. में महाज्वराङ्कुशका एक अन्य पाठ भी है। वह प्रयोग लगभग इसके समान ही है। केवल इतना ही अन्तर है कि उसमें व्योष (त्रिकुटे) के स्थानमें हेमाह्व (चोक) पड़ती है तथा अनुपानमें जीरेका चूर्ण भी लिखा है।

३ वृ. यो. त; यो. र.; योगतरंगिणी; र. का. धे. में स्वर्णक्षीरी की चार भावना देनेके लिये लिखा है।

१ रसेन्द्र सार सं. में लोहका अभाव है तथा र. र. में लोहके स्थानमें तुत्थ लिखा है एवं भावना द्रव्योमें जम्बीरी तथा चित्रकके स्थानमें जयन्ती और शालपर्णी लिखी हैं।

२ टङ्कणं दन्तिबीजकमिति पाठान्तरम् ।

एकजं द्वन्द्वजश्चैव चिरकालसमुद्भवम् ।
एकाहिकं द्वाहिकञ्च त्रिदोषप्रभवं ज्वरम् ॥
चातुर्थकं तथात्युग्रं जलदोषसमुद्भवम् ।
सर्वान् ज्वरान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥
नातः परं किञ्चिदस्ति ज्वरनाशाय भेषजम् ।
महाज्वराङ्कुशो नाम रसोऽयं मुनिभाषितः ॥

शुद्ध पारद, शु गन्धक, ताम्र भस्म, शुद्ध हिंगुल, हरताल भस्म, लोह भस्म, बंग भस्म, सोनामक्खी भस्म. शुद्ध खपरिया, मनसिल, अभ्रक भस्म, गेरु, सुहागेकी खील, स्वर्ण भस्म और चांदी भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके पृथक् पृथक् ३-३ दिन जम्बीरी नीबू, तुलसी, चीतामूल, भांग और तिन्तड़ीक के स्वरस या क्वाथमें धूपमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखा लें ।

ये गोलियां जठराग्निको अत्यन्त तीव्र करती और समस्त ज्वरोंको नष्ट कर देती हैं ।

इनके सेवनसे एक दोषज, द्विदोषज और सन्निपातज जीर्ण ज्वर, एकाहिक, द्वाहिक, चातुर्थिक और अत्युग्र जलदोष-जनित ज्वर अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ।

(५५४३) महाज्वराङ्कुशः (३)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

ताम्रपत्राणि तालं च सममम्लेन मर्दयेत् ।
तयोस्तुल्यं च भल्लातमधोर्ध्वं तच्च दापयेत् ॥
शरावसम्पुटे दग्धं स्वाङ्गशीतं विचूर्णयेत् ।
वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य भूधरे तत्पुटेत् पुनः ॥
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन वा ।
महाज्वराङ्कुशो नाम सर्वज्वरनिकृन्तनः ॥
एकाहिकं द्वाहिकं च तृतीयकं चतुर्थकौ ।
अन्तर्वेगं धातुगं च विषमं च नियच्छति ॥

शुद्ध ताम्र पत्र और शुद्ध हरताल १-१ भाग तथा भिलावे २ भाग ले कर हरतालको नीबूके रस (या कांजी) में घोट कर ताम्र पत्रों पर लेप करदें और फिर ऊपर नीचे भिलावे रख कर उन पत्रोंको शरावसम्पुट में बन्द करके उसके ऊपर कपरमिट्टी कर दें; एवं गजपुटमें फूंक दें । सम्पुटके स्वांग-शीतल होने पर उसमेंसे ताम्रको निकाल कर उसे स्नुही (सेंड-थोहर) के दूधमें घोट कर टिकिया बनावें और उन्हें सुखा कर सम्पुटमें बन्द करें । इस पुटको १ बार भूधर-पुटमें× पका कर स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे ५ रत्ती मात्रानुसार अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे एकाहिक, द्वाहिक, तृतीयक, चातुर्थिक, अन्तर्वेग, धातुगत और विषम-ज्वर आदि समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

(५५४४) महाज्वराङ्कुशः (४)

(र. रा. सु. । ज्वर.)

पलैकं हरितालं च स्नुहीक्षीरेण भावयेत् ।
भावना त्रि प्रदातव्यं ततो मुद्रां प्रकल्पयेत् ॥

× **भूधर पुट**— भूमिमें गजपुटके समान एक गढा खोद कर उसके भीतर एक अन्य छोटासा गढा खोदें और उसमें सम्पुट रख कर उसे मिट्टीसे ढक दें तथा बड़े गढ़ेमें उपले भरकर अग्नि लगादें ।

शरावसम्पुटे कृत्वा ततो गजपुटे पचेत् ।
स्वाङ्गशीतलकं ज्ञात्वा पुनः खल्वे विनिक्षिपेत् ॥
तुलसीपत्रतोयेन मर्दयेद्याममात्रकम् ।
ततो मात्रां प्रयुञ्जीत गुञ्जात्रयमितां बुधैः ॥
महाज्वराङ्कुशो नाम सर्वज्वरनिवारणः ॥

५ तोले शुद्ध हरतालको स्नुही (थोहर–सेंड) के दूधकी ३ भावना देकर टिकिया बना कर सुखा लें और उन्हें सम्पुट में बन्द करके गज पुट में फूंक दें। जब सम्पुट स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषध निकाल कर उसे १ पहर तुलसी–पत्र के स्वरसमें घोट कर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना कर (छायामें) सुखा लें।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं।

(५५४५) **महाज्वराङ्कुशः** (५)

(र. रा सु. । ज्वर.)

पारदो गन्धकश्चैव विषं कनकक्षीरिका ।
कनकस्य च बीजानि रोहिणी शरपुङ्खिका ॥
रामसेनोऽमृताजाजी कारवी वरवर्णिनी ।
विश्वा च चपला तीक्ष्णं मागधीमूलमक्षकः ॥
शिवादन्त्योद्भवं बीजं धात्री वै ताम्रभस्मकम् ।
कान्तोभस्म रौप्यभस्म सर्वं चैव समांशकम् ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायाथ जम्बीरेण विमर्दयेत् ।
त्रियामान्ते वटिं कुर्याद्गुञ्जामानं प्रमाणतः ॥
सर्वज्वरघ्नी वटिका तुलसी स्वरसेन च ।
पित्तज्वरं निहन्त्याशु सितया दाहपूर्वकम् ॥
विश्वया च यदायुक्ता तु श्लेष्माणं हन्ति सत्वरम् ।
शीतपूर्वं दाहपूर्वं ज्वरमष्टविधं तथा ॥
अनुपानविशेषेण हन्ति सत्यं न संशयः ।
महाज्वराङ्कुशो नाम्ना विख्यातो रसराजके ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), चोक (स्वर्णक्षीरी की जड़), धतूरेके बीज, कुटकी, सरफोंका, चिरायता, गिलोय, जीरा, काला जीरा, हल्दी, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, पीपलामूल, बहेड़ा, हर्र, शुद्ध जमाल गोटा, आमला, ताम्र भस्म, कान्त लोह भस्म और चांदी–भस्म समान भाग ले कर सबको ३ पहर जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें तुलसीके रसके साथ देनेसे समस्त ज्वर नष्ट होते हैं। मिश्री के साथ खिलानेसे दाहपूर्व पित्त ज्वर, और सोंठ के चूर्णके साथ देनेसे कफ-ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

रोगोचित अनुपानके साथ खिलानेसे ये गोलियां शीत–पूर्व और दाह–पूर्वादि सभी प्रकारके ज्वरोंको नष्ट कर देती हैं।

नोट--प्रत्येक ओषधिका चूर्ण पृथक् पृथक् तोल कर लेना चाहिये सबको एकत्र मिला कर न कूटना छानना चाहिये।

(५५४६) **महाज्वराङ्कुशः** (६)

(र. का. धे.; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धतुल्यं च टङ्कणम् ।
रसतुल्यं विषं योज्यं मरिचं पञ्चधा विषात् ॥
कट्फलं दन्तिबीजं च प्रत्येकं मरिचोन्मितम् ।
महाज्वराङ्कुशो ह्येष चूर्णयेद्याममात्रकम् ॥
यामैकेन निहन्त्याशु ज्वरं जीर्णं त्रिदोषजम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक दो भाग, सुहागेकी खील २ भाग, शुद्ध बछनाग, (मीठा विष) १ भाग, काली मिर्चका चूर्ण ५ भाग तथा कायफलका चूर्ण और शुद्ध जमाल गोटा ५-५ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर १ पहर खरल करके रक्खें।

इसके सेवनसे सन्निपातज जीर्णज्वर १ पहर में नष्ट हो जाता है।

(मात्रा २ रत्ती। अनुपान शीतल जल)

महाज्वराङ्कुशः (७)

(र. का. धे. ज्वर.)

" मन्थान भैरव रस " संख्या ५५१९ देखिये।

उसमें और इसमें केवल इतना ही अन्तर है कि इसमें अभ्रक भस्म भी पड़ती है और लोह सम्पुटमें पाक करनेके पश्चात् हरिताल आदिका चूर्ण नहीं मिलाया जाता। शेष प्रयोग तथा पाठ लगभग समान ही है।

महाज्वराङ्कुशः (८)

(भै. र. । ज्वर. ; र रा. सु. । ज्वर.)

प्रयोग संख्या २१६६ " ज्वराङ्कुश रस (१०) " देखिये।

(५५४७) महातालकेश्वररसः (१)

(र. का. धे. । विषम ज्वर.)

अशुद्धपारदं तालं मर्दयेद्वासरं दृढम् ।
कारवल्लीमार्कवयोर्भावयेद् वारसप्तकम् ॥
द्रवैस्तद्गोलकाकारं कारयेन्मतिमान्भिषक् ।
भाण्डार्धे वालुकापूर्णे कृत्वोपरि निवेशयेत् ॥
तच्चक्रिकां तदूपरि स्थापयेद्रसगोलकम् ।
तमर्कपत्रपिहितं सन्धौ लिप्त्वा पचेच्छनैः ॥
मध्याग्निना चतुर्यामं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
गुञ्जाद्वयं ददीतास्य सिताजीरकसंयुतम् ॥
दाहपूर्वं ज्वरं शीतं शीघ्रं च विषमं जयेत् ।
तुलसीसितमरिचैर्देयः शीतज्वरेऽपि च ॥
विषमं नाशयत्येव दधिदुग्धस्य भक्षणात् ॥

अशुद्ध पारद और हरतालको सात सात दिन करेले और भंगरेके रसमें पृथक् पृथक् खरल करके गोला बना कर (सुखा लें)।

एक मजबूत कपड़मिट्टीकी हुई हाण्डी के अर्ध भागको बालू (रेत) से भरकर उसके ऊपर (शुद्ध ताम्रकी चक्री रख कर उस पर) उपरोक्त गोला रख दें और उसे ताम्र-पत्रसे ढक कर सन्धिको भली भांति बन्द कर दें एवं (हाण्डीको शरावसे ढक कर उसके जोड़को बन्द करके) ४ पहर मध्यमाग्नि पर पकावें। जब हाण्डी स्वांग-शीतल हो जाय तो उसमेंसे हरताल-भस्मको निकाल कर खरल करके रक्खें।

इसे जीरेके चूर्ण और मिश्रीके साथ देनेसे दाहपूर्व ज्वर, शीतज्वर, और विषम ज्वर नष्ट होता है।

इसे शीत ज्वरमें तुलसी पत्रके रस और श्वेत मिर्च (सहंजनेके बीज) के चूर्ण के साथ भी दे सकते हैं। इसके सेवनमें विषम ज्वरमें दही और दूध पथ्य हैं।

मात्रा-२ रत्ती।

(५५४८) महातालकेश्वररसः (२)

(भै. र. ; धन्व. । कुष्ठा.)

सम्मर्द्य तालकं शुष्कं वंशपत्राख्यमुत्तमकैः ।
कूष्माण्डनीरैः सम्भाव्य त्रिदिनं शोषयेत्पुनः ॥
घृतकन्याद्रवैर्भूयो भावयेच्च दिनत्रयम् ।
सम्मर्द्य काञ्जिकेनैव दध्नाम्लेन विमर्दयेत् ॥
सम्मर्द्य चूर्णसलिले रसे पौनर्णवे पुनः ।
त्रिदिनं मर्दयित्वा तु कारयेत्गुटिका कृतिम् ॥
स्थाल्यां दृढतरायान्तु पलाशक्षारसञ्चयम् ।
उपर्यधस्तालकस्य क्षारं दत्त्वा शरावकैः ॥
पिधाय लेपयेद्यत्नात्पूरयेत्क्षारसञ्चयम् ।
पुना रुद्धं शरावेण लेपयेत्तद् दृढं ततः ॥
द्वात्रिंशद्यामपर्यन्तं वह्निज्वाला प्रदीयते ।
एवं सिद्धेन तालेन गन्धतुल्येन मेलयेत् ॥
द्वयोस्तुल्यं जीर्णताम्रं वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
अयं तालेश्वरो नाम रसः परमदुर्लभः ॥
हन्त्यष्टादशकुष्ठानि वातशोणितनाशनः ।
रक्तमण्डलमत्युग्रं स्फुटितं गलितं तथा ॥
बहुरूपं सर्वजातं नाशयेदविकल्पतः ।
दुष्टव्रणश्च वीसर्पं त्वग्दोषश्च विनाशयेत् ॥
दृष्टो वारसहस्रश्च रोगवारणकेशरी ॥

उत्तम वंशपत्री हरतालका चूर्ण करके उसे पेठेके रसमें ३ दिन घोट कर सुखा लें। तत्पश्चात् क्रमशः घृत कुमारीके रस, काञ्जी, खट्टी दही, चूनेके पानी और पुनर्नवाके रसमें पृथक् पृथक् ३-३ दिन घोट कर गोला बना लें। (प्रत्येक रसमें घोटनेके पश्चात् सुखा लेना चाहिये।)

अब एक मज़बूत कपड़मिट्टी की हुई हाण्डीमें पलाश (ढाक) का क्षार (राख) डाल कर उसके ऊपर उक्त गोला रख दें और उसे पलाशक्षारसे ढक कर उसके ऊपर मिट्टीका शराव ढक दें तथा हाण्डी और शरावकी सन्धि को भली भांति बन्द कर दें एवं हाण्डीके शेष भागको मुंह तक पलाश क्षारसे भर दें और हाण्डीके मुख पर शराव ढक कर उसकी सन्धिको भी मज़बूत बन्द करके उसके ऊपर मिट्टीका लेप कर दें।

अब इस हाण्डीको चूल्हे पर चढ़ाकर ३२ पहरकी अग्नि दें और फिर हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे सावधानी पूर्वक हरताल-भस्मको निकाल लें।

यह हरताल भस्म १ भाग, शुद्ध गन्धक १ भाग और ताम्र भस्म २ भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर बालुका यन्त्र में पकावें।

यह रस अठारह प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, उग्र रक्त मण्डल, स्फुटित कुष्ठ, गलित कुष्ठ, तथा अनेक प्रकारके सर्व दोषज कुष्ठ, दुष्ट व्रण, वीसर्प और त्वग्दोषोंको नष्ट करता है।

यह सहस्रों बारका अनुभूत प्रयोग है।

(मात्रा-१ रत्ती ।)

महातालेश्वररसः (१)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. । वातरक्त)

प्रयोग सं. ५५४८ महातालकेश्वर के समान है परन्तु इसमें हरताल भस्म पलाश क्षारमें न बनाकर प्र. सं. २६६४ में कथित विधिसे बनानी चाहिये।

(५५४९) **महातालेश्वररसः** (२)

(र. र. स. । उ. खं. अ. २०)

तालताप्यशिलाटङ्करसेन्द्रलवणं समम् ।
तालकाद्द्विगुणं ताम्रं मृतं तद्वच्च गन्धकम् ॥
अम्लेन पञ्चशः पिष्टं जम्बीरस्य पुटे पचेत् ।
लोहचूर्णस्य चत्वारो भागाः सिद्धरसस्य षट् ॥
अष्टौ नेपालताम्रस्य गन्धकेन हतस्य च ।
जम्बीराम्लेन तत्सर्वं मर्दितं पुटपाचितम् ॥
एकत्रिंशांशगरलं माषद्वितयसम्मितम् ।
मदनेन वमिं कुर्याद्विरेकं पथ्ययाऽपि च ॥
शुद्धः संशोधनं कुर्वन्मध्ये मध्ये च भक्षयेत् ।
सन्निपाते मधूकेन व्योषेण पवने हितः ॥
ग्रहणीकामलापाण्डुगुल्मार्शांसि हलीमकम् ।
क्षयं च शमयत्येष महातालेश्वरो रसः ॥

शुद्ध हरताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध मनसिल, सुहागा, शुद्ध पारद और सेंधा नमकका चूर्ण १-१ भाग तथा ताम्र भस्म और शुद्ध गन्धक २-२ भाग लेकर प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर भूधर पुटमें पकावें । इसी प्रकार जम्बीरीके रसमें घोट कर ५ पुट दें । तत्पश्चात् यह सिद्ध रस ६ भाग, लोह भस्म ४ भाग और गन्धक द्वारा मारित नेपाली ताम्र भस्म ८ भाग ले कर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर भूधर पुटमें पकावें । इसके पश्चात् उसमें उसका ३१ वां भाग शुद्ध बछनाग का चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

प्रथम रोगीको मैनफलसे वमन और हर्रसे विरेचन कराके शुद्ध करें; तदनन्तर २ माशेकी मात्रानुसार यह रस सेवन करावें तथा सेवन कालमें भी बीच बीच में वमन विरेचन भी कराते रहें ।

इसे त्रिदोषज रोगोंमें महुवेकी छालके क्वाथ के साथ और वातज रोगोंमें त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) के क्वाथ या चूर्णके साथ सेवन कराना चाहिये ।

इसके सेवनसे संग्रहणी, कामला, पाण्डु, गुल्म, अर्श, हलीमक और क्षयका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१—२ रत्ती ।)

(५५५०) **महातालेश्वररसः** (३)

(भै. र.; र. रा. सु.; रसे. सा. सं.; र. चं. । कुष्ठा.)

तालताप्यशिलासूतं शुद्धटङ्कणसैन्धवम् ।
समं सञ्चूर्णयेत् खल्ले सूताद् द्विगुणगन्धकम् ॥
गन्धाद् द्विगुणलौहश्च जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ।
ततो लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
त्रिंशदंशं विषश्चात्र क्षिप्त्वा सर्वं विचूर्णयेत् ।
महिषाज्येन सम्मिश्रं गुञ्जैकं भक्षयेत् सदा ॥
मध्वाज्यैर्बाकुचीचूर्णं माषमात्रं लिहेदनु ।
सर्वान् कुष्ठान् निहन्त्याशु महातालेश्वरो रसः ॥

शुद्ध हरताल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध मनसिल, शुद्ध पारद, सुहागेकी खील और सेंधा नमकका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक २ भाग और लोह भस्म ४ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर

लघु पुटमें पाक करें । तदनन्तर उसमें उसका तीसवां भाग शुद्ध बछनाग (मीठा विष) का चूर्ण मिला कर खरल करें ।

इसे १ रत्ती मात्रानुसार भैंसके घीके साथ खा कर ऊपरसे १ माशा बावचीका चूर्ण शहद और घीमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

महातालेश्वररसः (४)

(धन्व. । वातरक्त.)

भा. भै. र. भाग २ प्रयोग संख्या २६८१ " तालेश्वरो रसः न. ४ " देखिये ।

महातालेश्वररसः (५)

(र. र. । कुष्ठ. ; र. का. धे. । कुष्ठा. ; र. र. स. । अ. २० ; वृ. यो. त. । त. १२० ; यो. त. । त. ६२)

भा. भै. र. भाग २ प्र. सं. २६५२ "तालकेश्वरो रसः (महान) नं. १३ " देखिये ।

महातालेश्वररसः (६)

(र. चि. म. । स्त. २)

भा. भै. र. भाग २ में प्रयोग सं. २६५४ ' तालकेश्वरो रसः ' नं. १५ देखिये ।

महात्रिगन्धरसः

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

भा. भै. र. भाग २ प्रयोग संख्या २७१५ " त्रिगन्ध रसः " देखिये ।

उसमें इसकी अपेक्षा गन्धक अधिक है ।

(५५५१) **महात्रिपुरभैरवरसः**

(र. का. धे. । शूला.)

भागौ रसस्य भागः स्याद्धेम्नः पिष्टीं विधाय च
तया द्वादशभागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥
उर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा पत्रमात्रं समन्ततः ।
सिञ्चेन्मत्स्याक्षिनीरेण रुद्ध्वा यामचतुष्टयम् ॥
क्षारस्य मृगभृङ्गस्य चूर्णे योज्यं समन्ततः ।
पचेच्छूलहरः सूतो महात्रिपुरभैरवः ॥
माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोऽस्य परिणामजम्।
अन्ये त्वेरण्डतैलेन हि त्रययुतो हि सः ॥

२ भाग शु पारद में १ भाग शुद्ध स्वर्णपत्र मिलाकर इतना घोटें कि सबकी कोमल पिट्ठी बन जाए । अब १२ भाग ताम्रपत्रों पर इसका लेप करके उन्हें, नीचे ऊपर सेंधा नमकका चूर्ण भर कर हाण्डीमें रक्खें और उसके ऊपर मछेछी (मत्स्याक्षि) का रस डाल कर हाण्डीके मुख पर शराव ढक कर सन्धिको अच्छी तरह बन्द कर दें। तदनन्तर इसे ४ पहरकी अग्नि दे कर, हाण्डीके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे ताम्र पत्रोंको निकाल लें; और उन्हें फिर उसी हाण्डीमें मृगशृंगकी भस्मके बीचमें रख कर ४ पहरकी अग्नि दें ।

इसे १ माशेकी मात्रानुसार शहद और घीके साथ खिलानेसे परिणाम शूल नष्ट होता है । अन्य प्रकारके शूलोंमें इसे अरण्डके तेल और हिंगुत्रय (हींग, हिंगुपत्री, और नाड़ीहिंगु) के साथ देना चाहिये । (व्यवहारिक मात्रा १ रत्ती)

महाद्रावकरसः

(भै. र.)

मकारादि मिश्रप्रकरणमें देखिये ।

महानाराचरसः (१)

(र. रा. सु. । गुल्म; धन्व. । गुल्मा.; रसें. सा. सं. । गुल्मा.; रसें. चि. म. । अ. ९)

भा. भै. र. भाग ३ प्रयोग संख्या ३६४१ "नाराचरस (१)" देखिये

महानाराचरसः (२)

(र. रा. सु. । गुल्म. ; धन्व. । गुल्मा. ; रसें. सा. सं. । गुल्मा. ; रसें. चि. म. । अ. ९)

प्र. सं. ३६४४ "नाराचरस" (४) देखिये।

महानाराचरसः (३)

(वृ. नि. र. । वातव्या. ; भा. प्र. । वातव्या. ; वृ. यो. त. । त. ९०)

प्रयोग सं. ३६४८ "नाराच रस" सं. (८) देखिये ।

(५५५२) महानिम्बादिचूर्णम्

(र. र. स. । उ. खं. अ. २०)

महानिम्बस्य सारेण मर्दितां गन्धपिष्टिकाम् ।
अमृतावाकुचीकान्तात्रिफलाचूर्णसंयुताम् ॥
भक्षयेदायसे न्यस्तां कुष्ठे पाणितलोन्मिताम् ।
सा कुर्याल्लेपनात्कान्ति षण्मासाद्वृद्धिमायुषः॥

शुद्ध गन्धक ६ भाग तथा गिलोय, बाबची, फूल प्रियङ्गु, हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको (एक दिन) बकायनके स्वरसमें घोटें ।

इसमेंसे १। तोला चूर्ण रात्रिको पानीमें भिगोकर लोह पात्रमें रख दें और प्रातःकाल खावें और उसका कुष्ठ पर लेप भी करें ।

इससे ६ मासमें कुष्ठ नष्ट हो कर शरीर कान्तिमान हो जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा ।)

(५५५३) महापर्पटीरसः

(र. का. धे. प्रदर; र. चि. म. । स्तवक ७.)

वेदमाषो रसो ग्राह्यो गन्धस्तस्माद् द्विभागिकः।
कृत्वा कज्जलिकां सूक्ष्मां घृताक्तां वह्निना द्रवाम्
लोहपात्रे स्थितां तां च पर्पटी क्रियते रसः ।
[१]तस्य द्वादश माषाः स्युच्छुण्ठीचूर्णन्तु माषकम्[२]
पिप्पली मरिचं चैव सैन्धवं ससुवर्चलम् ।
स्वर्जिका बिडमेतानि प्रत्येकं शुण्ठिकासमम्[३] ॥
सर्वं च गृह्यते पिष्टं शुद्धं चापि तथाभ्रकम् ।
तदेकी क्रियते सूक्ष्मं बहुपिष्टाऽथमिश्र्यते ॥
गन्धद्रुते शुभे भाण्डे तच्च सर्वं निधीयते ।
खादेदग्निबलापेक्षी काञ्जिकेनाम्भसाऽथवा ॥
अर्शःसु गुदपीडासु ह्युदरेषु च शस्यते ।
स्थौल्ये पाण्ड्वामये जातश्लैष्मिकेऽजीर्णदूषिते।
येषु रोगेषु याक्तव्यस्तेषु योग्यौषधैः समम् ॥
कामलायां ग्रहण्यां च मन्दाग्नौ च प्रयुज्यते।
महापर्पटिकाख्योऽयं रसो योग्यानुपानतः ॥

शुद्ध पारद ४ माशे और शुद्ध गन्धक ८ माशे लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके महीन कज्जली बनावें और एक लोह पात्रमें घी चुपड़ कर उसमें वह कज्जली डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब कज्जली पिघल जाए तो उसे शीघ्रता

---

१ 'जया' इति पाठान्तरम् ।
२ स्याच्छुण्ठी षण्माषका भवेत् ।
३ प्रत्येकं च चतुष्टयमिति पाठान्तरम् ।

पूर्वक गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला कर दूसरे कदलीपत्रसे ढक दें और उस पर तुरन्त गायका ताजा गोबर बिछा दें। जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो दोनों पत्तोंके बीचसे पर्पटी को निकाल कर पीस लें।

अब यह पर्पटी १२ माशे और सोंठका चूर्ण, पीपल, मरिच, सेंधा नमक, सञ्चल (काला नमक), सज्जी और विड नमकका चूर्ण एवं अभ्रक भस्म १-१ माशा लेकर सबको एकत्र खरल करके अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण बना लें और एक पात्रमें गन्धक पिघला कर उसमें यह औषध भर कर सुरक्षित रक्खें।

(पात्रके भीतर घी चुपड़ कर उसमें गन्धक पिघला कर उसे चारों ओरको अच्छी तरह घुमावें कि जिससे गन्धक समस्त पात्रमें लिप्त हो जाय।)

इसे यथोचित मात्रानुसार काञ्जी अथवा पानीके साथ सेवन करनेसे अर्श, गुदपीड़ा, उदर रोग, कामला, संग्रहणी, अग्निमांद्य, स्थूलता, पाण्डु और कफज अजीर्णका नाश होता है।

इसे अन्य रोगोंमें भी तत्तद्रोगनाशक औषधोंके साथ मिलाकर उचित अनुपानसे दे सकते हैं।

(५५५४) महाबलविधानाभ्रकम्
(वं. से. । रसाय.)

गगनं कज्जलसन्निभं स्निग्धमदोषं विशोधितम्।
बहुशो दूर्वालम्बुषमूलैर्युक्तं वस्त्रे विबद्धञ्च ॥
दत्वा सलिलं तावत्करेण घर्षञ्च पङ्कतां नीतम्।
निपुणं गृहीतमुदकादञ्जनपुञ्जघनीभूतम् ॥
द्वित्रिवारपरिपुटितं रवितरुमथिताल्पदुग्धका-
दिरसे।
चूर्णितमथितं शिलायां कुडवमेकं तदादाय ॥
प्रथमं चतुरष्टगुणे गोमूत्रे वा पचेन्मृदुज्वालम्।
निपुणमनलं दत्वा समुद्रयामं तथा दुग्धे ॥
श्लक्ष्णं विडङ्गचूर्णं गगनार्धं त्रिकटुसम्भवञ्च
रजः।
त्रिकटुसमं त्रिफलोत्थं पृथक्तदर्द्धञ्च वन्ध्यायाः॥
नतकरिकर्णीवृद्धरक्तानलनीलिकानाञ्च।
मूलस्य तालमूलीरक्ताश्वमारहपुषानाञ्च ॥
पत्रकसुवाजिगन्धाशतावरीमूलसम्भवञ्चापि।
अमलिनपुनर्नवार्कतर्कारीसवाट्यालमूलस्य ॥
चूर्णं कण्टकपर्णीभवं सामृताभृङ्गराजस्य।
त्रिवृताख्यायास्त्रिभुवनविजयस्य केशराजस्य ॥
सुविदितपाकं शीतं गगनचूर्णञ्च भाजने सर्वम्।
समधुसितैरनुरूपैः सम्मिश्रं सर्पिषोऽष्टबिल्वेन ॥
पिष्टं तदनु शिलायां स्निग्धभाण्डे निधाय
सुविधिज्ञः।
सोत्साहः सुविनीतो गृह्णीयादभ्रकं कल्पम् ॥
मृदुकृतवमनविरेकं वैद्यप्रदिष्टेन सात्म्ययोगेन।
याति शरीरविशुद्धिं दीपितदेहानलो नीरुक् ॥
पूजितगुरुदेवाऽनलवितिथिसिद्धसाधुमान्यजनः।
स्निग्धौदनपरितृप्तः दीनग्लानिरहितः सत्कृत्यः॥
स्थिरसङ्कल्पविनीतः प्रशान्तसर्वेन्द्रियःसर्वात्मा च
परिकृतपरोपकारः परिहितत्रासाः समुज्झित-
क्रोधः ॥
श्रद्धावानश्नीयाद्द्विजराजस्य माषकानष्टौ।
पुण्ये दिवसे कृत्वा गुटिकां तथा भक्षयेत्प्रातः॥

अनुपानं शीतजलं सततमन्नातिभोजनं नात्र ।
हिता हिताद्यं सुखदं शाकाम्लदधिपरिहीनश्च ॥
अतितिक्तकटुकषायक्षाराभिष्यन्दितीक्ष्णरूक्षाणि।
वातलविदाहिदुर्जरगुरूण्यसेव्यानि वस्तूनि ॥
पानं दूराध्ययनं रतिमतिशीतलं दिवास्वप्नम् ।
प्रत्युपदेशं द्वेषं वातातपजागरणोद्भतान् ।
चिन्ताशोकविशादव्यायाममदकरोन्मादकरान् ।
पिशितश्चानूपदेशं शीतपानं वर्जयेदनिशम ॥
स्वस्तिकषष्टिकलोहितशालीनतिनिस्तुषान्मु-
द्गान् ॥
क्रमुकफलानि द्राक्षापकाम्रफलानि चैव श-
स्तानि ।
स्वादु च परिणति मधुरं केलिकरश्चापि वाऽऽ-
स्रवन्तोयम् ॥
प्रतिसप्ताहकमेतत्क्रमाद्वा प्रवर्द्धयेद्धीमान् ।
युक्तिविचाराभिज्ञो भेषजस्य पर्य्यन्तं भवति ॥
रसायनराजं कुर्वन् मनुजो मनोभिलाषं प्राप्नोति
नागार्जुनोपदिष्टं षण्मासोपविहितविधिना च।
अपगतसकलव्याधिर्बलिपलितवर्जितोऽति
महातेजाः ।
शूरः प्राज्ञो वाग्मी त्रिवर्गफलभाजनो दक्षः ॥
मदमत्तकुञ्जर बलः सौकुमार्योत्साहसम्पन्नश्च ।
षोडशवर्षकरो बहु प्रसूतः सुचिरजीविनोपेतः ॥
जीवेद्वर्षसहस्रं सतताभ्यासाच्च सर्वसम्पन्नः ।
चन्द्रकमनीयकान्तिः पवनबलो धामसमधामा ॥
शोषयकृदतिसारप्लीहापस्मारसिध्मयक्ष्मणः ।
कासश्वासविसर्पग्रहणीगुल्माश्मरीशोथान् ॥
प्रदरजलोदरभस्मकवमिपामाश्लीपदप्रमेहांश्च ।
विबन्धभगन्दरकुष्ठविषमज्वरपाण्डुरोगांश्च ॥
श्रुतिवदनोदरलोचनमस्तकरोगान्समूत्रकृच्छ्रांश्च।
आशु रसायनराजः शमयति युक्त्या प्रयुक्तस्तु ॥

सामं समीरमुपहन्ति कफं सपित्तं
सास्रञ्च पित्तमथ जाठरवह्निमान्द्यम् ।
वातप्रकोपजनितान्कफजांश्च सर्वान्
पितोद्भवांश्च निखिलान्सगदांस्तथैव ॥
नागार्जुनोदितरसायनसंहिताया-
मालोच्यचात्मनि समस्तरुजाविधाने।
राजानमेनमुपयुज्य रसायनानां
श्रीविश्वरूपमुपसंस्कृतवान्कृतार्थः ॥

कज्जलके समान काले और स्निग्ध शुद्ध कृष्णाभ्रकमें दूर्वा और मुण्डीकी बहुतसी जड़ें मिलाकर कपड़ेकी पोटलीमें बांध कर उसे पानीसे भरे हुवे पात्रमें दोनों हाथोंसे अच्छी तरह मसलें, यहां तक कि समस्त अभ्रक बारीक हो कर पानी वाले पात्रमें आ जाए । अब ऊपरसे पानी नितार दें और जो कीचड़सी रह जाए उसे धूपमें सुखा लें । इस प्रकार अभ्रक खूब बारीक कज्जलके समान हो जायगा ।

तदनन्तर आकके वृक्षोंको कूट कर उनका रस और दूध निकालें और इस दुग्धयुक्त अर्करसमें उक्त अभ्रकको घोट घोट कर यथा विधि २-३ पुट दें; और अन्तमें पत्थर पर बारीक पीस लें ।

(नोट—अभ्रक निश्चन्द्र हो जाना चाहिये ।)

अब यह अभ्रक चूर्ण १ पाव (२० तोले) लेकर उसे चार गुने या ८ गुने गोत्रमूमें मन्दाग्नि पर पकावें । और फिर उसे चार पहर गोदुग्धमें पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न

लिखित द्रव्योंका अत्यन्त महीन चूर्ण डाल देना चाहिये।

बायबिडंग १० तोले, त्रिकुटेका चूर्ण १० तोले, हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण १०–१० तोले, बांझ ककोड़ेकी जड़का चूर्ण ५ तोले, तथा तगर, गजकगा (कन्द शाक विशेष अथवा मूषाकर्णी), विधारामूल, लाल चीताकी जड़, नीलकी जड़, तालमूळी, लाल कनेरकी जड़, हपुषा, तेजपात, असगन्ध, शतावर, निर्मलीके फल, पुनर्नवा, आक, अरणी, बलामूल (खरैंटोकी जड़), कटेली, गिलोय, भंगरा, निसोत, भांग और काला भंगरा। प्रत्येकका चूर्ण ५–५ तोले। (दूध इतना डालना चाहिये कि ४ पहर तक अभ्रकको पकानेके पश्चात् भी वह इतना पतला रहे कि उसमें उक्त समस्त चूर्ण आसानीसे मिल सके।)

चूर्ण मिलानेके पश्चात् जब वह ठंडा हो जाय तो उसमें ४० तोले घी, और शहद तथा मिश्री (४०–४० तोले) मिलाकर सबको पुनः पत्थर पर पीसकर चिकने पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इस औषधको उत्साह पूर्वक विनीत भावसे ग्रहण करना चाहिये और सेवन प्रारम्भ करनेसे पूर्व किसी योग्य वैद्यकी देखरेखमें मृदु वमन विरेचन द्वारा शरीर शुद्धि कर लेनी चाहिये। इसे सेवन करनेसे पूर्व अग्नि दीप्त और शरीर रोग रहित होना आवश्यक है।

प्रथम गुरु, अग्नि, अतिथि, सिद्ध, साधु और मान्य जनोंका पूजन करके; घृत युक्त भातका भोजन करके; दीन भाव और ग्लानिको छोड़कर; दृढ़ संकल्प के साथ इसका सेवन प्रारम्भ करना चाहिये।

इसके सेवन कालमें इन्द्रियोंको वशमें और आत्माको शान्त रखना चाहिये। परोपकार करना और क्रोधका त्याग करना चाहिये।

इसे प्रातःकाल ८ माशेकी मात्रानुसार शीतल जलके साथ खावें।

पथ्यापथ्य–नियमित भोजन करें। शाक, खटाई, दही, अत्यन्त तिक्त, कटु, कषाय, क्षार, अभिष्यन्दी, तीक्ष्ण, रूक्ष, वातकारक, विदाही और दुर्जर अन्नपानका त्याग करें। मद्यपानसे परहेज़ करें। जोर जोर न पढ़ें। ब्रह्मचर्यसे रहें। अत्यन्त शीतल पदार्थ न खावें। दिनको न सोएं। द्वेष, तीक्ष्ण पवन, तेज धूप, रात्रि जागरण, चिन्ता, शोक, विषाद, (शक्तिसे अधिक) व्यायाम, मदकारी और उन्मत करने वाले पदार्थ और आनूप देशज जन्तुओंका मांस तथा शीतल पान (बरफ आदि) का त्याग करना चाहिए।

शिरवारी शाक, साठीके चावल, मूंगकी धुली हुई दाल, सुपारी, मुनक्का, पक्के आम, स्वादु और पक्के फल, उत्साहकारक पदार्थ और भूमिसे ऊपर ग्रहण किया हुवा बरसातका जल पथ्य है।

औषधकी मात्रा प्रति सप्ताह थोड़ी थोड़ी बढ़ाते हुवे ६ मास तक सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे समस्त व्याधियों और वलि पलितका नाश होकर तेज, शौर्य, बुद्धि और वाक्शक्तिकी अत्यन्त वृद्धि होती है। मद मत्त हाथीके

समान बल आ जाता है। सुकुमारता और उत्साहकी वृद्धि होती है। शरीर षोडश वर्षीय युवकके समान सुन्दर हो जाता है और बहुत सी सन्तानें उत्पन्न करनेकी शक्ति प्राप्त होती है। आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है। मुखकी कान्ति चन्द्रमाके समान देदीप्यमान हो जाती है।

यह औषध शोष, यकृत्, अतिसार, प्लीहा, अपस्मार, सिध्म, यक्ष्मा, कास, श्वास, विसर्प, ग्रहणी, गुल्म, अश्मरी, शोथ, प्रदर, जलोदर, भस्मक, वमन, पामा, श्लीपद, प्रमेह, विबन्ध, भगन्दर, कुष्ठ, विषम ज्वर, पाण्डु, कान मुख उदर नेत्र और मस्तकके रोग तथा मूत्रकृच्छ्र एवं आमवात, रक्त पित्त, अग्निमान्द्य, वातज रोग, कफज रोग और पित्तज रोगोंको शीघ्र ही नष्ट कर देती है।

(५५५५) महाब्रह्मरसः

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

पलाशबीजचूर्णं च गोघृतेन समन्वितम् ।
ताभ्यां तुल्यं मृतं सूतं स्निग्धभाण्डे निरोधयेत्॥
धान्यराशौ स्थितं मासं निष्कैकं भक्षयेत्सदा ।
भक्षयेच्च यथाशक्ति महाब्रह्मरसो ह्ययम् ॥
पथ्यं घृतौदनं क्षीरं गलत्कुष्ठहरं परम् ।
अष्टादशानि कुष्ठानि हन्ति मृत्युजरामयान् ॥

पलाश (ढाक) के बीजोंका चूर्ण और गोघृत १-१ भाग तथा पारद भस्म (अभावमें रस सिन्दूर) २ भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें तथा अनाजके ढेरमें दबा दें।

इसे १ मास पश्चात् निकाल कर ५ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ और विशेषतः गलत्कुष्ठ नष्ट होता है।

पथ्य—घी, चावल और दूध।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती।)

महाभक्तपाकवटी

(रसे. सा. सं. । अजीर्णा.)

प्रयोग संख्या ४९३५ "भक्त विपाकवटी" देखिये।

महाभूताङ्कुशरसः

(र. का. धे. । उन्मादा.)

प्रयोग सं. ४९६१ "भूताङ्कुश रस (२)" देखिये। इस (महा भूताङ्कुश) में

(१) अभ्रक और मुक्ताके स्थानमें स्वर्ण भस्म और (२) समन्दरझागके स्थानमें अफीम पड़ती है तथा रसाञ्जन और तुत्थका अभाव है। शेष प्रयोग समान है।

(५५५६) महाभैरवरसः

(र. का. धे. । सन्निपाता.)

रसेन्द्रविषशुल्बाभ्रलोहैर्वासारसप्लुतैः ।
सप्तकृत्वस्त्रिदोषान्तकृद्रसो भैरवो महान् ॥
कर्षैकं वा द्वयं दद्याज्जातीफलसमायुतम् ।
रोगी वैद्योत्तमैस्त्यक्तः सोऽपि जागर्ति तत्क्षणात्

पारद भस्म (या रस सिन्दूर), शुद्ध बछनाग, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म और लोह भस्म समान भाग लेकर सबको बासेके स्वरसकी सात भावना देकर सुखाकर रक्खें।

इसे १ या २ कर्ष मात्रानुसार जायफलके चूर्णके साथ देनेसे उत्तम वैद्यों द्वारा त्यक्त सन्निपात रोगी भी शीघ्र ही स्वस्थ हो जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती)

(५५५७) **महाभ्रवटी** (१)

(भै. र. । स्त्री.; रसे. चि. म. । अ. ९; र. रा. सु.; रसे. सा. सं. । सूतिका.)

मृतमभ्रश्च लौहश्च कुनटी ताम्रकस्तथा ।
रसगन्धकटङ्कश्च यवक्षारफलत्रिकम् ॥
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यमूषणं पञ्चतोलकम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रत्येकेन विभावयेत् ॥
ग्रीष्मसुन्दरसिंहास्यनागवल्ल्या रसेन च ।
रक्तिकैकप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
योजयेत्सर्वथा वैद्यः सूतिकारोगशान्तये ॥

अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध मनसिल, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, जवाखार तथा हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण १–१ तोला एवं काली मिर्चका चूर्ण ५ तोले लेकर सबको एकत्र मिला कर गूमा, बासे और पानके रसमें पृथक् पृथक् १–१ दिन घोट कर १–१ रत्तीकी गोलियां बनावें । इनके सेवनसे सूतिका रोग नष्ट होता है ।

(५५५८) **महाभ्रवटी** (२)

(भै. र. । ग्रहणी.; र. र. । राजय.; र. रा. सु. । संग्रह.; र. सा. सं.; र. रा. सु. । सूतिका.)

अभ्रकं पुटितं ताम्रं लौहं गन्धकपारदम् ।
कुनटी टङ्कणक्षारं त्रिफला च पलं पलम् ॥ १
गरलस्य तथा माषचतुष्कञ्चैव चूर्णितम् ।
दृढपाषाणपात्रे च भूयोभूयः सुचूर्णितम् ॥ २
तत्सर्वं भावयेदेषां रसैः प्रत्येकशः पलैः ।
देवराजाशनाख्यस्य केशराजाख्यकस्य च ॥ ३
सोमराजस्य भृङ्गाख्यराजस्य श्रीफलस्य च ।
पारिभद्राग्निमन्थस्य वृद्धदारस्य तुम्बुरोः ॥ ४
मण्डूकपर्णीनिर्गुण्डीपूतिकोन्मत्तकस्य च ।
श्वेतापराजितायाश्च जयन्त्याश्चित्रकस्य च ॥ ५
ग्रीष्मसुन्दरकस्याटरूषकस्य रसेन तु ।
रसैस्ताम्बूलवल्ल्याश्च पत्रोत्थैर्भावयेत् पृथक् ॥६
द्रवे किञ्चित् स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत्
ततश्चैव वटी कुर्यान्मात्रां दद्यात् यथोचिताम् ॥
ज्वरे चैवातिसारे च कासे श्वासे क्षये तथा ।
सन्निपातज्वरे चैव विविधे विषमज्वरे ॥
क्षय रोगेषु सर्वेषु क्षीणशुक्रे च यक्ष्मणि ।
ग्रहण्याश्चिरभूतायां सूतिकायां विशेषतः ॥
शोथे शूले तथा साध्ये स्थविरे चामवातके ।
मन्दानलेऽबले चैव सकले श्लेष्मजे गदे ॥
पीनसेऽपीनसे चैव पक्वेऽपक्वे विशेषतः ।
वातश्लेष्मणि वाते वा विविधे चेन्द्रियस्थिते ॥
वातवृद्धे वृते पित्ते बलासेनावृतेऽपि च ।
अष्टसूदररोगेषु कण्ठरोगे प्रशस्यते ॥
अजीर्णे कर्णरोगे च कृशे स्थूले च यक्ष्मणि ।
अयं सर्वगदेष्वेव रसो वै परिकीर्तितः ॥
महाभ्रवटिका सेयं परं श्रेष्ठा रसायने ।

नोट—र. रा. सु. तथा रसें. सं. में. श्लोक सं. ३–४–५ नहीं हैं । एवं गुण भी इस प्रकार लिखे हैं—

सर्वातीसारशमनं सर्वशूलनिवारणम् ॥

सूतिकाशोथपाण्डुत्वं सर्वज्वरविनाशनम् ।
नाशयेत्सूतिकातङ्कं वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, शुद्ध मनसिल, सुहागेकी खील, जवाखार तथा हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण ५-५ तोले एवं शुद्ध बछनाग (मीठे विष) का चूर्ण ५ माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर पत्थरके उत्तम खरलमें अच्छी तरह घोटें और फिर उसमें भांग, काला भंगरा, बाबची, भंगरा, बेलपत्र, पारिभद्र (फरहद), अरणी, विधारा, तुम्बरु, मण्डूकपर्णी, निर्गुण्डी (संभालु), करञ्ज, धतूरा, श्वेत अपराजिता (कोयल), जयन्ती, चीता, गूमा, बासा और पानमेंसे प्रत्येकका ५-५ तोले रस डालें तथा रस डालनेके थोड़ी देर पश्चात् उसमें ५ तोले काली मिर्चका चूर्ण डालकर सबको अच्छी तरह खरल करें और (२--२ रत्तीकी) गोलियां बनाकर रक्खें ।

इनके सेवनसे ज्वर, अतिसार, खांसी, श्वास, क्षय, सन्निपात, अनेक प्रकारके विषम ज्वर, शुक्र-क्षय, पुराना ग्रहणी रोग, विशेषतः सूतिका रोग, शोथ, शूल, आमवात, अग्निमांद्य, निर्बलता, समस्त कफज रोग, पीनस, पक्व और अपक्व प्रतिश्याय, वातकफज और विविध प्रकारके वातज रोग, पित्तावृत तथा कफावृत्त प्रवृद्ध वायु, आठ प्रकारके उदर रोग, कण्ठ रोग, अजीर्ण, कर्ण रोग, कृशता और स्थूलता आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

यह एक उत्तम रसायन है ।

महामृगाङ्करसः

(मृगाङ्क रसः (महा) देखिये ।)

(५५५९) महामृत्युञ्जयरसः (१)

(रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । प्लीहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

रसगन्धकलोहाभ्रं कुनटीतुत्थताम्रकम् ।
सैन्धवञ्च वराटञ्च वागुजीविडशङ्खकम् ॥
चित्रकं हिङ्गु कटुकी द्विक्षारं कट्फलन्तथा ।
रसाञ्जनं जयन्ती च टङ्कणं समभागिकम् ॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ दिनमेकं विभावयेत् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुना सह ।
नानारोगप्रशमनो यकृद्गुल्मोदराणि च ॥
अग्रमांसं तथा प्लीहमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
महामृत्युञ्जयो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध मनसिल, तुत्थ भस्म, ताम्र भस्म, सेंधा नमकका चूर्ण, कौड़ी भस्म, बाबचीका चूर्ण, बिड लवणका चूर्ण, शंख भस्म तथा चीता मूल, हींग, कुटकी, जवाखार, सज्जीखार, कायफल, रसौत, जयन्ती और सुहागेकी खीलका महीन चूर्ण समान भाग लेकर सबको १-१ दिन अदरक और गिलोयके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे यकृत्, गुल्म, उदर रोग, अग्रमांस, प्लीहा, अग्निमांद्य और अरुचि आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

(५५६०) **महामृत्युञ्जयरसः (२)**

(र. चि. म. । स्त. ७; र. रा. सु. । ज्व)

सूतकं च विषं नागं गन्धकं च चतुष्टयम् ।
समं सर्वं विघृष्टव्यं शिखिना तद्दिनद्वयम् ॥
तस्य कल्कस्य पादैकं मृन्मये दृढभाजने ।
क्षिप्त्वा हेम्नोऽपि कर्तव्या पत्रस्य समपत्रिका ॥
दातव्या तस्य कल्कस्य ह्युपरिष्टाद्दृढीयसी ।
पुनः शरावकं दत्त्वा कुर्यात् सन्धिनिरोधनम् ॥
विशोष्य वालुकां दद्यादुपरिष्टात्समन्ततः ।
याममेकमथो चुल्ल्यां पाचयेन्मन्दवह्निना ॥
अनेनैव विधानेन पत्रिकां मारयेत्क्रमात् ।
अवशिष्टस्य कल्कस्य तस्याऽप्युपरि पत्रिकाम् ॥
समावस्थं च सकलं हेमचूर्णं रसस्य च ।
विषं भागैकमेकं च चतुर्भागं च मौक्तिकम् ॥
गन्धकं भागमेकं स्यात्पश्चात्सर्वं तदौषधम् ।
मर्दयेदेकतः कृत्वा चित्रकस्य रसेन च ॥
पुटित्वा किंचिदेवैतत् पिष्टरूपं तदुद्धरेत् ।
क्षये कासेऽम्लपित्ते च श्वासे कण्ड्वामयेषु च ॥
शाल्मलीद्रवसंमिश्रं पुष्टिहेतोः प्रयोजयेत् ।
मरिचेन समं देयो कफरोगेषु पारदः ॥
शूले च परिणामे च घृताक्तमधुमिश्रितः ।
गुडूचीजीरकैर्युक्तः स्वरभङ्गे प्रदापयेत् ॥
पित्ताधिकेषु रोगेषु शाल्मलीद्रवमिश्रितः ।
अन्यान्सर्वानयं रोगान् रोगयोग्यानुपानतः ॥
नाशयत्यचिरेणायं दुस्तराननतिवेगतः ।
तैलं राजीव बिल्वं च वर्जयेदम्लसेवनम् ॥
अयं मृत्युञ्जयो नाम रसो रोगारिरुत्तमः ।
वारणप्रतिमं कुर्याच्छरीरमजरामरम् ॥
शक्यन्ते न गुणा वक्तुं रसस्यास्य नरैर्ध्रुवम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग (मीठे विष) का चूर्ण, शुद्ध सीसा और शुद्ध गन्धक १-१ भाग लेकर प्रथम सीसेको पिघला कर पारदमें डालें और खूब घोटें । जब दोनों मिल जाएं तो गन्धक और विष डालकर, घोटकर कज्जली बनावें तथा उसे २ दिन चीतेके काथमें खरल करके उसके चार भाग करें ।

अब कपरमिट्टी की हुई एक मजबूत हाण्डीमें उपरोक्त कज्जलीका १ भाग रख कर उसके ऊपर १ भाग शुद्ध स्वर्णका वृक्षपत्रके समान बारीक पत्र रखकर ज़ोरसे दबा दें और उसके ऊपर कपड़ मिट्टी किया हुवा एक मज़बूत ढक्कन ढक कर सन्धिको गुड़ चूने आदिसे अच्छी तरह बन्द करके सुखा कर हाण्डीके शेष भागमें रेत भर दें तथा उसे चूल्हे पर चढ़ाकर १ पहरकी मन्दाग्नि दें ।

तदनन्तर हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंके स्वर्ण पत्रको निकाल लें और पुनः उपरोक्त विधिसे १ भाग कज्जलीके ऊपर इस स्वर्ण पत्रको रख कर पूर्वोक्त प्रकारसे १ पहरकी अग्नि दें । इसी प्रकार ४ बार अग्नि दें । हर बार स्वर्ण पत्रके नीचे कज्जलीका एक भाग रखना चाहिये । इस विधिसे ४ बारमें स्वर्ण भस्म तैयार हो जायगी । (यदि कमी रहे तो अधिक बार इसी प्रकार करना चाहिये ।)

अब यह स्वर्ण भस्म (सम्पूर्ण), शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध बछनाग १ भाग, मुक्ता भस्म ४ भाग, और शुद्ध गन्धक १ भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर १ दिन चीतेके काथमें घोटें और उसे शराव सम्पुटमें बन्द करके लघु पुटमें पकावें ।

इसके सेवनसे क्षय, कास, अम्लपित्त, श्वास और कण्डु (खुजली) का नाश होता है।

इसे—

पुष्टिके लिये सेंभलके रसके साथ; **कफज रोगोंमें** काली मिर्चके चूर्णके साथ; **शूल और परिणाम शूल** में घी तथा शहदके साथ; **स्वर-भंगमें** गिलोय और जीरेके साथ; **पित्तज रोगोंमें** सेंभलके रसके साथ और अन्य रोगोंमें रोगोचित अनुपानके साथ सेवन कराना चाहिये।

यह रस दुस्साध्य रोगोंको भी शीघ्र ही नष्ट कर देता है तथा इसके अभ्याससे शरीर हाथीके समान बलशाली हो जाता है।

अपथ्य—तेल, कमल, बेल और खटाई।

(मात्रा—१—रत्ती।)

(५५६१) महामृत्युञ्जयलौहम्

(रसें. सा. सं.; भै. र.; र. रा. सु. । प्लीहा.)

शुद्धसूतं समं गन्धं जारिताभ्रं समं समम्।
गन्धकाद्द्विगुणं लौहं मृतताम्रश्चतुर्गुणम्॥
द्विक्षारं टङ्कणविडं वराटमथ शङ्खकम्।
चित्रकं कुनटीतालकटुकीरामठन्तथा॥
रोहितकन्त्रिवृच्चिञ्चा विशालाधवमङ्कोठम्।
अपामार्गं तालमूलं मल्लिका च निशायुगम्॥
कानकन्तुत्थकञ्चैव यकृन्मर्दं रसाञ्जनम्।
एतानि समभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत्॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च।
मधुनः कुडवैर्भाव्यं वटिका माषमात्रतः॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषानुसारतः।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकम्॥
प्लीहानं ज्वरमुग्रञ्च कासञ्च विषमज्वरम्।
चिरजं कुलजञ्चैव श्लीपदं हन्ति दारुणम्॥
रोगानीकविनाशाय धन्वन्तरिकृतं पुरा।
मृत्युञ्जयमिदं लौहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम्॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और अभ्रक भस्म १—१ भाग; लोह भस्म २ भाग; ताम्र भस्म ४ भाग; तथा जवाखार, सज्जी खार, सुहागेकी खील, बिड लवण, कौड़ी भस्म, शंख भस्म, चित्तामूलका चूर्ण, शुद्ध मनसिल, शुद्ध हरताल, कुटकीका चूर्ण भुनी हुई हींग, रोहितक (रुहेड़े) की छाल, निसोत, इमलीकी छाल, इन्द्रायणकी जड़, धव, अंकोटकी जड़, अपामार्ग (चिरचिटा), ताल मूली, मल्लिका, हल्दी, दारु हल्दी, धतूरेके शुद्ध बीज, शुद्ध तूतिया, यकृन्मर्द (रुहेड़ामूल*) और रसौत १—१ भाग लेकर सबको १—१ दिन अद-रक और गिलोयके रसमें घोटकर १ कुडव (आव-श्यकतानुसार) शहदमें खरल करके १—१ माशेकी गोलियां बना लें।

इन्हें प्रातःकाल यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे तिल्ली, उग्र ज्वर, खांसी, विषमज्वर तथा पुराना और वंशानुगत श्लीपद नष्ट होता है।

भै. र. व. में—

(१) टंकण (सुहागे) के स्थानमें सैंधव है।

(२) फूलप्रियंगु, इन्द्रजौ, हर्र, अजमोद और अजवायन अधिक है।

(३) धतूरेके स्थानमें शरपुंखा है।

(४) मधु आधा कुडव है।

*सरफोका भी ले सकते हैं।

(५५६२) महामृत्युञ्जया गुटिका

(र. सं. क. । उल्लास ५)

त्रिफलाविडङ्गसोमाभल्लातकवह्निविश्वानाम् ।
अष्टौ शुक्लवचाया भागा स्युः सद्विषस्यैकः ॥
सर्पविषूचिगदार्ते दुष्टाजीर्णहते त्रिदुष्टेऽपि ।
सद्यो जीवति पुरुषो मृतोऽपि गुटिकाप्रभावेण॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिडंग, सोमा (बावची या ब्राह्मी), शुद्ध भिलावा, चीतामूल और सोंठका चूर्ण १-१ भाग; सफेद बचका चूर्ण ८ भाग; तथा शुद्ध बछनागका चूर्ण १ भाग लेकर सबको भली भांति पानीमें घोट कर गोलियां बना लें।

ये गोलियां सर्प-विष, त्रिदोषज विसूचिका और अजीर्णको नष्ट कर देती हैं। इनके प्रभावसे मृतप्रायः रोगी भी बच जाता है।

(५५६३) महारसः

(र. रा. सु. ; वृ. नि. र. । वातातिसार.)

भस्मसूतस्य तीक्ष्णस्य मरिचाज्यं समं समम् ।
स्नुक्क्षीरकाकमाचीभ्यां मर्दयेद्याममात्रकम् ॥
निरुध्य भूधरे पाच्यं दिनैकेन महारसम् ।
निष्कार्द्धं भावयेच्चानु पाययेद्दधिसंयुतम् ॥
सर्पाक्षीं कर्षमात्रं तु पीत्वा वातातिसारनुत् ॥

पारद भस्म (अथवा रस सिन्दूर), तीक्ष्ण लोह भस्म, काली मिर्चका चूर्ण और घी समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके १-१ पहर सेंड (थोहर-सेहुंड) और मकोय के रसमें घोटें और फिर १ दिन भूधरयन्त्रमें पकावें।

इसे आधी निष्क मात्रानुसार दहीमें मिला कर सेवन करनेसे वातज अतिसार नष्ट होता है।

अनुपान-दवा खानेके पश्चात् १। तोला सर्पाक्षी को (पानीमें पीसकर) पीना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा-१ रत्ती)

(५५६४) महाराजनृपतिवल्लभरसः (१)
(सर्वतोभद्ररसः)

(रसें. सा. सं. ; भै. र. । ग्रहणी.)

कर्षत्रयं मृतं कान्तं मृताभ्रं मृतताम्रकम् ।
मृतं तारं माक्षिकञ्च कर्षं कर्षं प्रदापयेत् ॥
मृतं स्वर्णं मृतं तारं टङ्कणं भृङ्गमेव च ।
वसिरं दन्तिमूलञ्च मरिचं तेजपत्रकम् ॥
यमानी वालकं मुस्तं शुण्ठकञ्च सधान्यकम् ।
सिन्धूद्भवं सकर्पूरं विडङ्गं चित्रकं विषम् ॥
पारदं गन्धकञ्चैव तोलमानं प्रदापयेत् ।
तोलद्वयं त्रिवृच्चूर्णं लवङ्गं तच्चतुर्गुणम् ॥
जातीकोषफलञ्चैव वराङ्गकन्तु तत्समम् ।
सर्वेषामर्द्धभागन्तु बिडकं तत्र मिश्रयेत् ॥
सर्वमेकीकृतं यच्च त्रुटिचूर्णञ्च तत्समम् ।
भावना च प्रदातव्या छागीदुग्धेन सप्तधा ॥
मातुलुङ्गरसैः पश्चाद्भावयेत्सप्तवारकम् ।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा भक्षयेद्दशरक्तिकाम् ॥

मन्दानलं संग्रहणीं प्रवृद्धा-
मामानुबन्धीं क्रिमिपाण्डुरोगम् ।
छर्द्यम्लपित्तं हृदयामयञ्च
गुल्मोदरानाहभगन्दरञ्च ॥
अर्शांसि वै पित्तकृतानशेषा-
न्सोमं सशूलाष्टकमेव हन्ति ।

साजीर्णविष्टम्भविसर्पदाहं
विलम्बिकाश्चाप्यलसं प्रमेहम् ॥
कुष्ठान्यशेषाणि च कासशोषं
हन्यात्सशोथं ज्वरमूत्रकृच्छ्रम् ।
मतान्तरे सर्वतोभद्रनाम
महेश्वरेणैव विभाषितोयम् ॥

कान्त लोह भस्म ३॥ तोले; अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, चांदी भस्म और स्वर्ण माक्षिक भस्म, १।-१। तोला तथा स्वर्ण भस्म, मोती भस्म, सुहागेकी खील, मृगशृंग-भस्म; गजपीपल, दन्तीमूल, काली मिर्च, तेजपात, अजवायन, सुगन्धबाला, मोथा, सोंठ, धनिया, सेंधा नमक, कपूर, बायबिड़ंग, चीतामूल और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) का चूर्ण एवं शुद्ध पारद और गन्धक प्रत्येक ७॥ माशे; निसोतका चूर्ण १। तोला; लौंगका चूर्ण तथा जावत्री, जायफल और दालचीनीका चूर्ण ५-५ तोले एवं विडनमक सबसे आधा तथा इन समस्त ओषधियोंके बराबर छोटी इलायचीका चूर्ण लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको बकरीके दूध और बिजौरेके रसकी सात सात भावना दे कर ५-५ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें ।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, आमयुक्त प्रवृद्ध संग्रहणी, कृमि रोग, पाण्डु, छर्दि, अम्लपित्त, हृदय रोग, गुल्म, उदर रोग, अफारा, भगन्दर, पित्तज अर्श, सोम रोग, आठ प्रकारके शूल, अजीर्ण, विष्टम्भ, विसर्प, दाह, विलम्बिका, अलसक, प्रमेह, समस्त कुष्ठ, खांसी, शोष, शोथ, ज्वर और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है ।

मात्रा-२ गोली ।

(५५६५) महाराजनृपतिवल्लभः (२)
(नृपवल्लभः)

(रसे. सा. सं. ; भै. र. । ग्रह.)

माक्षिकं लौहमभ्रञ्च वङ्गं रजतहाटकम् ।
ग्रन्थिर्यमानिका चोचं ताम्रं नागरटङ्कणम् ॥
सैन्धवं वालकं मुस्तं धन्याकं गन्धकं रसम् ।
शृङ्गी कर्पूरकश्चैव प्रत्येकं माषकोन्मितम् ॥
माषद्वयं रामठं स्यान्मरिचानां चतुष्टयम् ।
जातीकोषं लवङ्गञ्च पत्रञ्च तोलकोन्मितम् ॥
नाभिशङ्खं विडङ्गञ्च शाणं माषद्वयं विषम् ।
कर्षषट्कं सत्रिमाषं सूक्ष्मैलानां ततः क्षिपेत् ॥
विडं कर्षद्वयं सर्वं छागीक्षीरेण पेषयेत् ।
चतुर्गुञ्जमितं खादेत्सानाहग्रहणीं जयेत् ॥
शम्भुना निर्मितो ह्येष पूर्ववद्गुणकारकः ।
नाम्ना महाराजपूर्वो नृपवल्लभ उच्यते ॥

स्वर्ण माक्षिक-भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, बंग भस्म, चांदी भस्म, स्वर्ण भस्म, पीपला मूल, अजवायन, दालचीनी, ताम्र भस्म, सोंठ, सुहागेकी खील, सेंधा नमक, सुगन्ध बाला, नागरमोथा, धनिया, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, काकड़ासिंगी और कपूर १-१ माशा, भुनी हुई हींग २ माशे, काली मिर्च ४ माशे, जावत्री, लौंग और तेजपात ८-८ माशे; शंख नाभिकी भस्म और बायबिड़ंग ४-४ माशे; शुद्ध बछनाग २ माशे और छोटी इलायची ९९ माशे तथा बिड नमक ३२ माशे

लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर बकरीके दूधमें घोट कर ४-४ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे आनाह (अफारा) और संग्रहणी तथा पूर्वोक्त (महाराज नृपति वल्लभ में कथित) रोग नष्ट होते हैं।

(५५६६) महाराजवटी (१)

(भै. र.; र. चं.; रसे. सा. सं. । ज्वर.)

रसगन्धकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥
स्वर्णताम्रकर्पूरञ्च प्रत्येकं कर्षपादिकम् ।
शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥
कोकिलाक्षं विदारी च मूशली शुकशिम्बिकम् ।
जातीफलं तथा कोषं बला नागबला तथा ॥
माषद्वयमितं भागं तालमूल्या रसेन च ।
पिष्ट्वा च वटिका कार्या चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥
मधुना भक्षयेत्प्रातर्विषमज्वरशान्तये ।
धातुस्थांश्च ज्वरान् सर्वान् हन्यादेव न संशयः॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैवं श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
ज्वरं नानाविधं हन्ति कासं श्वासं क्षयन्तथा ॥
बलपुष्टिकरं नित्यं कामिनीं रमयेत्सदा ।
न च शुक्रक्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ॥
ऊर्ध्वगं श्लेष्मजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं रक्तपित्तकम् ॥
महाराजवटी ख्याता राजयोग्या च सर्वदा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और अभ्रक भस्म १६-१६ माशे; विधारा बीज, बंग भस्म और लोह भस्म ८-८ माशे; स्वर्ण भस्म, ताम्र भस्म और कपूर प्रत्येक ४-४ माशे तथा भांग, शतावर, सफेद राल, लौंग, तालमखाना, विदारीकन्द, मूसली, कौंचके बीज, जायफल, जावत्री, बला (खरैटी) और नागबला (गंगेरन) प्रत्येक २-२ माशे लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको तालमूलीके रसमें घोट कर ४-४ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इन्हें प्रातःकाल शहदके साथ सेवन करनेसे विषमज्वर नष्ट होता है।

इसके अतिरिक्त इनके सेवनसे धातुगत समस्त ज्वर; वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातज आदि अनेक प्रकारके ज्वर अवश्य नष्ट हो जाते हैं। ये गोलियां खांसी श्वास और क्षय को भी नष्ट करती हैं तथा बल और पुष्टिकी वृद्धि करती हैं। इनके सेवनसे मैथुन शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि नित्य प्रति स्त्री-समागम करने पर भी बल, वीर्यकी हानि नहीं होती। ये कामला, पाण्डु रोग और राजयक्ष्मामें भी गुणकारी तथा राजाओंको सेवन कराने योग्य हैं।

(५५६७) महाराजवटी ? (२)

(यो. र. । वाजीकरणा.; वृ. यो. त. । त. १४७)

बीजं ब्रह्मतरोर्विधाय बहुधा खण्डं त्रियामोषितं
छागे दुग्धवरेऽथ शुष्कमथ तद्गन्धेन तिर्थ्यंशिना॥
युक्तं काचघटीयुतं हुतभुजो योगेन च त्वान्ततः।
सत्त्वं तस्य निगृह्य काचघटिते भाण्डे सुखं स्थापयेत् ॥

तत्तैलं वल्लमात्रं तु ताम्बूलीपत्रगं चरेत् ।
क्षिप्त्वा तत्र रसं वल्लमङ्गुल्यग्रेण मर्दयेत् ॥
युक्त्या तां कज्जलीं भुक्त्वा ताम्बूलं शीलयेदनु।
शाकाम्लं माषषट्कादिवर्जितं पथ्यमाचरेत् ॥
अनेन योगराजेन षण्ढोऽपि पुरुषायते ।
अपूर्ववच्छतं गच्छेद्वनितानां मदोद्धतम् ॥
वलीपलितविध्वंसी योगोऽयं क्षयकुष्ठजित् ।
वातपित्तकफातङ्कहस्तिपञ्चाननः परम् ॥
नास्त्यनेन समं लोके किंचिदन्यद्रसायनम् ॥

१ भाग ढाकके बीजोंके छोटे छोटे टुकड़े करके उन्हें बकरीके दूधमें भिगो दें और ३ पहर पश्चात् निकाल कर छायामें सुखा लें । अब इनमें १५ भाग शुद्ध गन्धक मिलाकर सबको आतशी शीशीमें भर कर (पाताल यन्त्र विधिसे) तैल निकालें ।

इसमेंसे ३ रत्ती तैल पानमें लगा कर खाना चाहिये । अथवा हथेली पर ३ रत्ती शुद्ध पारद गन्धककी कज्जली रख कर उस पर ३ रत्ती यह तैल डालकर दोनोंको उंगलीसे अच्छी तरह रगड़ें और दोनोंके एक जीव हो जाने पर खाकर ऊपरसे पान खावें ।

इसे ६ मास तक इसी प्रकार सेवन करने और शाक तथा अम्ल रसका त्याग करनेसे नपुंसक पुरुष भी अपूर्व शक्तिशाली हो कर सैकड़ों मदमत्त रमणियोंसे समागम करनेमें समर्थ हो जाता है ।

इसके सेवनसे बलि, पलित, कुष्ठ, क्षय, वातज, पित्तज और कफज रोग नष्ट होते हैं। यह सर्वश्रेष्ठ रसायन है ।

(५५६८) महारौद्रेश्वररसः

(र. का. धे. । कुष्ठ.)

शुद्धसूतं समं कान्तं गन्धं व्योम च मारितम् ।
मण्डूरं बाकुचीबीजं निशा श्लेष्मान्तबीजकम् ॥
विडङ्गं त्रिवृतावह्निभृङ्गाः कृष्णतिलाऽभया ।
शणस्य कुसुमं तुल्यं चूर्णयेच्च शिलायुतम् ॥
कान्तपात्रे स्थितं खादेत्कर्षांशं मधुसर्पिषा ।
सर्वकुष्ठहरः सोऽयं महारौद्रेश्वरो रसः ॥

शुद्ध पारद, कान्त लोह भस्म, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, मण्डूर भस्म, बाबची, हल्दी, रीठा (लिहसोडा), बायबिडंग, निसोत, चीतामूल, भंगरा, काले तिल, हर्र, सनके फूल और शुद्ध मनसिल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह घोटें ।

इसमेंसे १। तोला रस शहद और घीमें मिला कर (रातको) लोह-पात्रमें रख दें और प्रातःकाल सेवन करें ।

इसके सेवनसे समस्त कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(व्यवहारिक मात्रा-५-६ रत्ती)

(५५६९) महालक्ष्मीविलासरसः (१)

(रसें. सा. सं. । कफरो. ; रस. चि. म. । स्त. ११; रसें. चि. म. । अ. ९.)

पलं वज्राभ्रचूर्णस्य तदर्द्धं गन्धकं भवेत् ।
तदर्द्धं वङ्गभस्मापि तदर्द्धं पारदन्तथा ॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्द्धं ताम्रभस्मकम् ।
रससाम्यञ्च कर्पूरं जातीकोषफले तथा ॥

वृद्धदारकबीजञ्च बीजं स्वर्णफलस्य च ।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्वर्णञ्च शाणकम् ॥
निष्पिष्य वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
निहन्ति सन्निपातोत्थान्गदान्घोरान्सुदारुणान् ॥
गलोत्थानन्त्रवृद्धिञ्च तथातीसारमेव च ।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान्विंशतिन्तथा ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजन्तथा ।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥
कासपीनसयक्ष्मार्शःस्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तनुत् ।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैजाड्यमेव च ।
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ।
अनुपानमिह प्रोक्तं माषं पिष्टं पयो दधि ॥
वारिभक्तं सुराशीधुसेवनात्कामरूपधृक् ।
वृद्धोपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रक्षयो भवेत् ॥
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् ।
नित्यं गच्छेच्छतं स्त्रीणां मत्तवारणविक्रमः ॥
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकस्तथा ।
प्रोक्तः प्रयोगराजोयं नारदेन महात्मना ॥
रसो लक्ष्मीविलासोयं वासुदेवो जगत्पतिः ।
प्रसादादस्य भगवान्लक्षनारीषु वल्लभः ॥

वज्राभ्रक-भस्म ५ तोले, शुद्ध गन्धक २॥ तोले, बंग-भस्म १। तोला, शुद्ध पारद ७॥ माशे, शुद्ध हरताल ७॥ माशे, ताम्र भस्म ३॥। माशे, कपूर ७॥ माशे, जावत्री और जायफल प्रत्येक ७॥ माशे तथा बिधारेके बीज और धतूरेके बीज १।-१। तोला एवं स्वर्ण भस्म ५ माशे लेकर प्रथम पारे और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको अच्छी तरह घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे भयंकर सन्निपातज गलरोग, अन्त्रवृद्धि, अतिसार, ११ प्रकारके कुष्ठ, २० प्रकारके प्रमेह, पुराना और वंशानुगत कफवातज श्लीपद, नाड़ी व्रण, भयंकर व्रण, अर्श, भगन्दर, खांसी, पीनस, क्षय, स्थूलता, शरीरकी दुर्गन्धि, रक्त विकार, हर प्रकारका आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदर रोग; कर्ण नासिका अक्षि और मुखकी जड़ता, समस्त प्रकारके शूल, शिरपीड़ा और स्त्री रोग नष्ट होते हैं।

इनमेंसे नित्य प्रति प्रातः काल १-१ गोली खाकर उड़दकी पिट्ठीके पदार्थ, दूध, दही, मांड-युक्त भात, सुरा और शीधु सेवन करनेसे मनुष्य कामदेवके समान सुन्दर हो जाता है; वृद्ध पुरुष युवकोंकी प्रतिस्पर्द्धा करने लगता है; शुक्र क्षय और लिंग शैथिल्य नहीं होता; केश सफेद नहीं होते, तथा नित्य प्रति सैकड़ों स्त्रियोंसे समागम करनेकी शक्ति आ जाती है एवं दृष्टि अत्यन्त तीक्ष्ण हो जाती है।

(५५७०) महालक्ष्मीविलासरसः (२)×

(रसें. सा. सं. ; भै. र., र. र.; र. रा. सु. । शिरोरोगा.)

लौहमभ्रं विषं मुस्तं फलत्रयकटुत्रयम् ।
धुस्तूरं वृद्धदारञ्च बीजमिन्द्राशनस्य च ॥

× र. र. में इस रसका अनुपान इस प्रकार लिखा है-
अनुपाने प्रयोक्तव्यं शुण्ठीचूर्णं द्विमाषकम् ।
आर्द्रकस्य रसञ्चैव तोलकद्वयमेव च ॥
अर्थात् इसे खाकर ऊपरसे २ तोले अदरकके रसमें २ माशे सोंठका चूर्ण मिलाकर पीना चाहिये।

गोक्षूरकद्वयश्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
एतत्सर्वं समं ग्राह्यं रसे धुस्तूरकस्य च ॥
भावयित्वा वटी कार्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
महालक्ष्मीविलासाऽयं शिरोरोगविनाशकः ॥

लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, धतूरेके बीज, बिधारे के बीज भांगके बीज, छोटा गोखरु, बड़ा गोखरु और पीपलामूल समान भाग लेकर सबको (१ दिन) धतूरेके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे (वातज और कफज) शिरोरोग नष्ट होते हैं ।

महावङ्गेश्वररसः

(वृ. नि. र. ; यो. र. । प्रमेह; नपु. मृ. । त. ७)
" वङ्गेश्वर रस (महा) " देखिये ।

(५५७१) महावज्रपाणिरसः

(र. का. धे. । कुष्ठ.)

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं मृतं तालं समं समम् ।
मर्दयेद्वाकुचीतैले यामैकं कृतगोलकम् ॥
द्विगुणे पाचयेद्गन्धे सतैले लोहपात्रके ।
गन्धतैले विजीर्णेशं तद्गोलांशं मृतायसम् ॥
पञ्चाङ्गनिम्बसंयुक्तं मधुना गुटकीकृतम् ।
निष्कैकं किटिभं हन्ति वज्रपाणिर्महारसः ॥

शुद्ध पारद (रस सिन्दूर), ताम्र भस्म और हरताल भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर १ पहर बावचीके रसमें घोट कर गोला बनावें और फिर लोहेकी कढ़ाईमें गोलेसे २ गुना शुद्ध गन्धकका चूर्ण तथा तेल डाल कर उसमें वह गोला पकावें । जब गन्धक और तेल जल जाय तो ठंडा होने पर गोलेको पीस लें और उसमें उसके बराबर लोह भस्म तथा इतना ही नीमके पञ्चाङ्गका चूर्ण मिलाकर शहदमें घोटकर १-१ निष्ककी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे किटिभ कुष्ठ नष्ट होता है ।

(५५७२) महावह्निरसः (१)

(र. प्र. सु. । अ. ८)

चत्वारः सूतभागास्तदनु
बलिवसा चाष्टभाग विधेया
गौरीश्रेष्ठाशिवानां कथित-
मिदमहो त्रित्रिभागं क्रमेण ।
एकीकृत्य विचूर्णयेच्च
सकलं स्नुग्वह्निभृङ्गद्रवैर्भाव्यं
सप्तदिनावधि क्रमगतं वातारितैलेन वै ॥
एषःस्याद्धि महाग्निनाम
रसराट् पथ्ये जलं शीतलं
वर्ज्यं क्षारमथाम्लकं
शमयते सम्मूढवातं खलु ॥

शुद्ध पारद ४ भाग, शुद्ध गन्धक ८ भाग, हल्दी ३ भाग, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) ३ भाग और भुई आमला ३ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको स्नुही (सेंड-सेहुंड) के दूध, चीता और भंगरेके रस तथा अण्डीके तेलमें पृथक् पृथक् सात सात दिन घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे शीतल जलके साथ सेवन करनेसे मूढ़वातका नाश होता है।

इसके सेवन कालमें क्षार और अम्ल पदार्थोंसे परहेज करना चाहिये।

(५५७३) **महावह्निरसः** (२)

(रसे. सा. सं. । उदर. ; र. र. स. । अ. १९)

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनीत्रिफला शिलाः[1]
प्रत्येकन्तु त्रिभागं[2] स्याद्दन्तीत्र्यूषणजीरकम् ॥
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
जयन्तीस्नुक्पयोभृङ्गवह्निवातारितैलकैः ॥
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक्पृथक् ।
महावह्निरसो नाम निष्कमुष्णजलैः पिबेत् ॥
विरेचनं भवेत्तेन तक्रमुष्णं ससैन्धवम् ।
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम् ॥
सर्वोदरहरः प्रोक्तो मूढवातहरः परः ॥

शुद्ध पारद ४ भाग; शुद्ध गन्धक ८ भाग; हल्दी ३ भाग, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) ३ भाग, शुद्ध मनसिल ३ भाग, दन्तीमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और जीरा ८-८ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको पृथक् पृथक् सात सात दिन जयन्तीके रस, सेहुंड (थोहर) के दूध, भंगरेके स्वरस, चीतेके क्वाथ और अण्डीके तेलमें घोट कर सुरक्षित रक्खें।

इसे १ निष्क मात्रानुसार उष्ण जलके साथ खिलानेसे विरेचन हो कर समस्त उदर और मूढ़वात रोग नष्ट होते हैं।

१ 'शिवा' इति पाठान्तरम् ।
२ द्विभागमिति पाठान्तरम् ।

इसे खिलाकर सायंकालको उष्ण तक्रमें सेंधानमक मिलाकर पिलाना चाहिये। शीतल जल न देना चाहिये।

(५५७४) **महावह्निरसः** (३)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२; रसे. चि. म. । अ. ९; र. रा. सु.; रसे. सा. सं. । उदरा.)

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ[1] रजनी त्रिफला शिवा[2]।
प्रत्येकं च द्विभागं स्यात् त्रिवृज्जैपालचित्रकम् ॥
प्रत्येकं च त्रिभागं स्यात् त्र्यूषणं दन्तिजीरकम् ।
प्रत्येकमष्टभागं[3] स्यादेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥
जयन्तीस्नुक्पयोभृङ्गवह्निवातारितैलकैः ।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक् पृथक् ॥
महावह्निरसो नाम निष्कमुष्णजलैः पिबेत् ।
विरेचनं भवेत्तेन तक्रभक्तं ससैन्धवम् ॥
दिनान्ते दापयेत्पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम् ।
सर्वोदरहरः प्रोक्तो मूढवातहरः परः ॥

शुद्ध पारद ४ भाग, शुद्ध गन्धक ८ भाग; हल्दी २ भाग, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) २ भाग, भुई आमला (पाठान्तरके अनुसार हरताल) २ भाग; निसोत, जमालगोटा और चीतामूल ३-३ भाग तथा त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), दन्तीमूल और जीरा ८-८ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको जयन्तीके रस, सेंड (सेहुंड-थोहर) के दूध,

१ सूतस्य गन्धकस्याष्टौ इति पाठान्तरम् ।
२ 'शिला' इति पाठान्तरम् ।
३ सप्तभागमिति पाठान्तरम् ॥

भंगरेके रस, चीतेके क्वाथ और अण्डोके तेलकी क्रमशः सात सात भावना दें।

इसे १ निष्क मात्रानुसार उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे विरेचन हो कर उदर रोग और मूढ-वातका नाश होता है।

पथ्य—सायंकालको सेंधा नमक मिला कर तक्र और भात खिलाना तथा शीतल जलसे परहेज़ करना चाहिये।

नोट—ये तीनों "महावह्निरस" बहुत कुछ समान ही हैं तथापि प्रत्येकमें कुछ विशेषता है।

(५५७५) महावातगजाङ्कुशरसः

(र. चं. ; धन्व.; रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । वातरो.)

मृताभ्रतीक्ष्णताम्रं च सूततालकगन्धकम् ।
भार्ङ्गी शुण्ठी बला धान्यं कट्फलं चाभयाविषम्॥
सम्पिष्य चपलाद्रावैः निष्कैकां भक्षयेद्वटिम् ।
वातश्लेष्महरो ह्येष महावातगजाङ्कुशः ॥

अभ्रक भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध हरताल, शुद्ध गन्धक, भरंगी सोंठ, बला (खरैटी), धनिया, कायफल, हर्र और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको पीपलके क्वाथमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे १ निष्क मात्रानुसार सेवन करनेसे वात-कफज रोग नष्ट होते हैं। (व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती).

(५५७६) महाविजयपर्पटीरसः

(र. का. धे.; र. रा. सुं. । सन्निपात.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं खल्वे कृत्वा तु कज्जलीम् ।
लोहपात्रे घृताभ्यक्ते तद्दर्व्या चालयन्पचेत् ॥
सूततुल्यं मृतं ताम्रं ताम्रपादं विषं क्षिपेत् ।
रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावन्मृद्वग्निना पचेत् ॥
पातयेत्कदलीपत्रे गोमयासनसंस्थिते ।
आच्छाद्य तेन पत्रेण ऊर्ध्वं देयं च गोमयम् ॥
आदाय चूर्णितं सिद्धं महाविजयपर्पटी ।
त्रिगुञ्जं भक्षयेदेनं सन्निपातनिवृत्तये ॥
मधुसारैः पञ्चकोलैर्लीढं स्यादनुलेहयेत् ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक १-१ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली बनावें और लोह पात्रमें घृत चुपड़ कर उसमें वह कज्जली डाल कर मन्दाग्निपर पकावें तथा लोहेकी करछीसे चलाते रहें। जब कज्जली पिघल जाए तो उसमें १ भाग ताम्र भस्म और चौथाई भाग शुद्ध बछनागका महीन चूर्ण मिला दें तथा मन्दाग्नि पर पकावें। जब उसका रंग लाल हो जाए तो गायके गोबर पर केलेका पत्ता बिछाकर उस पर वह कज्जली डाल कर फुरतीसे फैला दें और उसके ऊपर दूसरा कदली-पत्र रख कर उसे गोबरसे दबा दें। थोड़ी देर पश्चात् पत्तोंके बीचमें से पर्पटीको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे ३ रत्ती औषध खाकर ऊपरसे महुवेके फूलोंके रसमें पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ) का चूर्ण मिला कर चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे सन्निपात नष्ट होता है।

(५५७७) महाविषमारिरसः

(र. का. धे. । ज्वर.)

अशोधितं रसं तालं खर्परं च मनःशिलाम् ।
माक्षिकं हिङ्गुलं गन्धं शिखितुत्थं यथाक्रमम् ॥
मर्दयेद्याममेकं तु भिषक्सम्यग्गुरूक्तितः ।
इन्द्राणिकाभृङ्गराजकारवल्लीजयारसैः ॥
वेदघस्रं विमर्देत ततः कुर्यात्सुगोलकम् ।
भाण्डमध्यगतं ताम्रपात्रेणैनं पिधापयेत् ॥
अभयारूष्करखटीकल्कैः सन्धिं लिम्पेद्गुरूक्तितः
सिकता पूरितं कृत्वा पात्रं किञ्चित्प्रदर्शयेत्
तत्र त्रिचतुरा सम्यङ्निवेश्याः शालयः शुभाः।
दीप्ताग्निना पचेत्तावद्यावल्लाजा भवन्ति ताः ।
स्वभावशीतलं ग्राह्यमपक्वार्कं न मेलयेत् ॥
इन्द्राणिकाकारवल्लीस्वरसेन विमर्दयेत् ॥
गुञ्जात्रयं कोलकेन तुलसीरसतोऽपि वा ।
निर्गुण्डीमरिचाभ्यां वा रसोनेन गुडेन वा ॥
ज्वरांश्च विषमान्सर्वान्नाशयेच्छीतपूर्वकान् ।
दाहपूर्वांश्छीतयुक्तान् नाशयेद्विषमज्वरान् ॥
पथ्यं ददीत गोक्षीरैः स्नेहाम्लौ वर्जयेद्ध्रुवम्।
स्त्रीसङ्गो दूरतस्त्याज्यः शीताम्भः सम्परित्यजेत्॥
विषमारिर्महान् प्रोक्तः शम्भुना रससागरे ॥

अशुद्ध पारद, हरताल, खपरिया, मनसिल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, हिंगुल, गन्धक और नीलाथोथा (तूतिया) समान भाग लेकर सबको १ पहर खरल करके कज्जली बनावें और उसे इन्द्रायण, भंगरा, करेला और जयाके रसमें ४–४ पहर घोट कर गोला बनावें तथा उस गोलेको एक हाण्डीमें रखकर तांबेकी कटोरीसे ढक दें और दोनोंकी सन्धिको हर्र, भिलावा तथा खड़िया मिट्टीके कल्क (गारे) से अच्छी तरह बन्द कर दें। अब हाण्डी में गले तक रेती भरकर उस पर ३–४ धानके दाने डाल दें। इसे चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे तीव्राग्नि जलावें । जब धानकी खील हो जाएं तो अग्नि देनी बन्द कर दें और हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल लें । ताम्रका जो भाग कच्चा हो उसे ग्रहण न करें और शेष भागको साथ में खरल कर लें । अब इसे इन्द्रायण और करेलेके स्वरसकी १–१ भावना दे कर सुरक्षित रक्खें ।

इसमेंसे ३ रत्ती रस बेरके क्वाथके साथ, या तुलसीरसके साथ, या संभालूके रस और काली मिर्चके चूर्णके साथ अथवा लहसन और गुड़के साथ खिलानेसे समस्त शीत-पूर्व, और दाह-पूर्व शीतयुक्त विषम ज्वर नष्ट होते हैं ।

पथ्य—गोदुग्धके साथ पथ्याहार (भातादि) खिलावें और स्नेह तथा अम्ल पदार्थोंसे परहेज़ करावें । शीतल जल न पिलावें और स्त्रीप्रसंगका तो नाम भी त्याग करा दें ।

(नोट—यद्यपि मूल पाठमें "अशोधितं रसं" लिखा है, तथापि समस्त रसोपरस शुद्ध लिये जाएं तो अधिक उत्तम है ।)

(५५७८) महावीररसः

(र. र. स. । अ. १४ ; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

निष्कौ द्वौ तुत्थभागस्य रसादेकं सुसंस्कृतात् ।
निष्कं विषस्य द्वौ तीक्ष्णात् कर्षांशं गन्ध-
मौक्तिकात् ॥

अग्निपर्णीहरिलताभृङ्गार्द्रसुरसारसैः ।
मर्दितं लाङ्गलीकन्दमलिप्ते सम्पुटे पचेत् ॥
अर्धपादं च पोटल्याः काकिन्यौ द्वे विषस्य च ।
लिहेन्मरिचचूर्णं च मधुना पोटलीसमम् ॥
क्षयग्रहण्यतीसारवह्निदौर्बल्यकासिनाम् ।
पाण्डुगुल्मवतामेष महावीरो हितो रसः ॥
अतिस्थूलस्य पूयासृक्कफानुद्वमतः क्षये ।
न योजयेत्क्षीररसान्विरुद्धक्रमतत्त्वतः ॥

शुद्ध तूतिया १० माशे, शुद्ध पारद ५ माशे, शुद्ध बछनाग (मीठा विष) ५ माशे, तीक्ष्ण लोह-भस्म १० माशे तथा शुद्ध गन्धक और मोती १।-१। तोला ले कर पारे गन्धककी कज्जली बनाकर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको १-१ दिन अग्निपर्णी (आगिया), विष्णुक्रान्ता, भंगरा, अदरक और तुलसीके रसमें घोटकर गोला बनावें। तदनन्तर दो शरावों के भीतर लांगली-कन्द (कलियारीकी जड़) का लेप करके उसमें इस गोलेको रख कर यथा विधि सम्पुट बनाकर (लघु पुटमें) फूंक दें। एवं पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर उसमें उसका आठवां भाग 'मृगाङ्क पोटली रस' तथा २ रत्ती शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर खरल करें।

इसे यथोचित मात्रानुसार काली मिर्चके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे क्षय, संग्रहणी, अतिसार, अग्निमांद्य, कास, पाण्डु औ गुल्मका नाश होता है।

यदि क्षयका रोगी अत्यन्त स्थूल हो या पीप, खून और कफकी वमन करता हो तो उसे मांस रस और दूध देना हितकारी नहीं है।

महाशङ्खद्रावकः

" शङ्खद्रावक (महा) " देखिये।

महाशङ्खवटी

" शङ्खवटी (महा) " देखिये।

(५५७९) महाशार्दूलरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । सूतिका.)

अभ्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धश्च पारदम् ।
शिला टङ्कं यवक्षारं त्रिफलायाः पलं पलम् ॥
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धतोलकसम्मितम् ।
त्वगेलापत्रकश्चैव जातीकोषलवङ्गकम् ॥
मांसी तालीशपत्रश्च माक्षिकश्च रसाञ्जनम् ।
एषां द्विकार्षिकं भागं देयश्चापि विचक्षणैः ॥
द्रवे किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।
भावना च प्रदातव्या पूर्वोक्तेन रसेन च ॥[1]
निहन्ति विविधान्रोगाञ्ज्वरान्दाहान्वमिं भ्रमिम् ।
तथातिसारकश्चैव वह्निमान्द्यमरोचकम् ॥
विशेषाद्गर्भिणीरोगं नाशयेदचिरेण च ॥

अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, स्वर्ण भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, शुद्ध मनसिल, सुहागेकी खील, जवाखार और हर्रे, बहेड़े तथा आमलेका चूर्ण ५-५ तोले; शुद्ध बछनाग ३।। माशे; दालचीनी इलायची, तेजपात, जावित्री, लौंग, जटामांसी, तालीस पत्र, स्वर्णमाक्षिक भस्म और रसौत

---

१ पूर्वोक्तेन रसेन चः—
ग्रीष्मसुन्दरकस्यापि नागवल्लीरसेन च ।
भावयेत्सप्तधा.................. ॥

२॥-२॥ तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको गूमा और पानके रसकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दें और अन्तमें जब थोड़ा द्रव शेष रह जाए तो ५ तोले काली मिर्चका चूर्ण मिलाकर खरल करें।

इसके सेवनसे ज्वर, दाह, वमि (छर्दि), भ्रम, अतिसार, अग्निमांद्य, अरुचि और विशेषतः गर्भिणी स्त्रीके रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(मात्रा-३-४ रत्ती)

(५५८०) महाशीतज्वराङ्कुशो रसः

(यो. त. । त. २० ; वृ. यो. त. । त. ५९)

अष्टौ तालकमेतदर्द्धममलं शम्बूकचूर्णं क्षिपे-
त्पश्चादत्र नवांशको वरशिखी सर्वं पुनः पेषयेत्।
तोयैस्तच्च कुमारिकादलभवैः पक्वं गजाख्ये
पुटेप्येकद्वित्रिचतुर्थशीतहरणः शीताङ्कुशोऽयं रसः॥
ज्वरं धातुगतं चित्तभ्रमं पित्तास्रजान्गदान्।
रक्तातिसारग्रहणीदुर्नामास्राणि नाशयेत्॥
गुञ्जाद्वयमितं दद्यात्सितया सह वारिणा।
सहजीरकेण दध्यन्नं पथ्यं शीतज्वराङ्कुशे॥

शुद्ध हरताल ८ भाग, शुद्ध शंख चूर्ण ४ भाग और शुद्ध नीलाथोथा ९ भाग लेकर सबको एक दिन घृतकुमारीके रसमें घोट कर यथा विधि ४ गजपुट दें। हर बार घृतकुमारीके रसमें घोटना चाहिये।

इसके सेवनसे धातुगत ज्वर, चित्तभ्रम सन्निपात, पित्तज और रक्तज रोग (अथवा रक्तपित्त), रक्तातिसार, ग्रहणी और रक्तार्शका नाश होता है।

मात्रा—२ रत्ती।

अनुपान—मिश्रीमें मिलाकर पानीसे खाना चाहिये।

पथ्य—जीरा मिलाकर दही भात खाना पथ्य है।

(५५८१) महाश्लेष्मकालानलरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । कफ ; रसे. चि. म. । अ० ९)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं शिलागन्धकटङ्कणम्।
ताम्रं वङ्गं तथाभ्रश्च स्वर्णमाक्षिकतालकम्॥
धूस्तूरं सैन्धवं कुष्ठं हिङ्गु पिप्पली कट्फलम्।
दन्तीबीजं सोमराजी वनराजफलत्रिवृत्॥
वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य वटिकां कारयेद्भिषक्।
कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथाबलम्॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
मदसिंहो यथारण्ये मृगाणां कुलनाशनः॥
तथायं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान्॥

हिङ्गुलोत्थ पारद, शुद्ध मनसिल, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, ताम्र भस्म, बंग भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, धतूरेके बीज, सेंधा नमक, कूठ, हींग, पीपल, कायफल, शुद्ध जमालगोटा, बावची, बड़के फल और निसोत समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको थोहर (सेंड—सेहुंड) के दूधमें घोटकर मटरके समान गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली(या यथोचित मात्रानुसार) खिलानेसे सन्निपात (शीताङ्ग सन्निपात) नष्ट होता है ।

जिस प्रकार इन्द्रका वज्र (बिजली) वृक्षको और सिंह वनके पशुओंको नष्ट कर देता है उसी प्रकार यह रस रोगसमूह को नष्ट करनेमें समर्थ है ।

(५५८२) महाश्वासारिलौहम्

(र. रा. सु. ; भै. र. । श्वासा.)

कर्षद्वयं लौहचूर्णं कर्षार्द्धमभ्रमेव च ।
सिता कर्षद्वयञ्चैव मधु कर्षद्वयं तथा ॥
त्रिफला मधुकं द्राक्षा कणा कोलास्थिवंशजा ।
तालीशपत्रं वैडङ्गमेला पुष्करकेशरम् ॥
एतानि श्लक्ष्णचूर्णानि कर्षार्द्धश्च समांशिकम् ।
लौहे च लौहदण्डेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥
ततो मात्रां लिहेत्क्षौद्रैर्बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ।
इदं श्वासारिलौहश्च महाश्वासं विनाशयेत् ॥
कासं पञ्चविधञ्चैव रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम् ॥
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥

लोह भस्म २॥ तोले, अभ्रक भस्म ७॥ माशे, मिसरी २॥ तोले, शहद २॥ तोले; हर्र, बहेड़ा, आमला, मुलैठी, मुनक्का, पीपल, बेरकी गुठलीकी गिरी, बंसलोचन, तालीस पत्र, बायबिडंग, छोटी इलायची, पोखरमूल और नाग केसरका चूर्ण आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) ले कर सबको लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे २ पहर घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे एक दोषज, द्विदोषज और सन्निपातज महा श्वास, पांच प्रकारकी खांसी और रक्तपित्त, नष्ट होता है ।

अनुपान---शहद ।

(मात्रा---१ माशेसे डेढ़ माशे तक ।)

(५५८३) महासिद्धेश्वररसः

(र. का. धे. । कुष्ठ.)

शुद्ध सूतं शिला ताप्यं मृताभ्रं मर्दयेत्समम् ।
जातीफलं लवङ्गैला मसूका तद्द्विभागकम् ॥
चूर्णयेत्सर्वमेकत्र रसः सिद्धेश्वरो महान् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेत्क्षौद्रैरनुपानमथोच्यते ॥
पटोलद्विनिशानिम्बतिक्तकोशातकीवचा ।
पथ्यायष्टिसमं क्वाथं वस्त्रपूतं तदाहरेत् ॥
क्वाथपादयुतं चाज्यं पचेदाज्यावशेषकम् ।
एतदाज्यं पलार्धं तु ह्यनुपानं च कुरुत ॥
लेपं सिद्धरसेनैव सुप्तस्थाने प्रकारयेत् ।
तत्पृष्ठे रसोनपिण्डं बद्ध्वा स्फोटः प्रजायते ॥
पुनर्लेपं पुनर्बद्ध्वा विनश्येत्सुप्तिमण्डलम् ॥

शुद्ध पारद (रस सिन्दूर), शुद्ध मनसिल, सोनामक्खी भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग तथा जायफल, लौंग, छोटी इलायची और असगन्धका चूर्ण २-२ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर घोटें ।

इसे शहदके साथ खाने और इसीका लेप करनेसे सुप्ति और मण्डल कुष्ठ नष्ट होता है ।

लेप लगाकर ऊपरसे लहसन पीसकर बांध देना चाहिये । इससे छाला पड़ जायगा । (उससे पानी निकल जाने पर मक्खन लगा दें और जब

तक उसे आराम न हो जाए पुनः लेप न लगावें ।) इसी प्रकार जब तक कुष्ठको आराम न हो तब तक दवा खाते और लेप लगाते तथा ल्हसन बांधते रहें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

अनुपान—पटोल, हल्दी, दारुहल्दी, नीमकी छाल, कड़वी तोरी, बच, हर्र और मुलैठी ५–५ तोले लेकर सबको ४ सेर पानीमें पकावें । जब १ सेर पानी शेष रहे तो छान लें । इसमें २० तोले घी मिलाकर पानी जलने तक पकावें और फिर छानकर रक्खें ।

औषध खानेके पश्चात् इसमेंसे २॥ तोले घी पीना चाहिये ।

(५५८४) महासूर्यप्रभरसः

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

विष्णुक्रान्ता देवदाली सर्पाक्षी तण्डुलि मुनिः।
नीली ब्राह्मी पलाशं च यथालाभं द्रवं हरेत् ॥
द्वित्रीणामेव निर्यासैः सूतकं मर्दयेद्दिनम् ।
सूताद्द्विगुणगन्धोऽयमेकीकृत्य क्षणं पचेत् ॥
लोहपात्रे द्रुतं तावद्यावच्छुल्वाभ्रकौ स्मृतौ ।
प्रत्येकं सूतपादांशं कर्पूरं च विनिक्षिपेत् ॥
अग्नावुत्तारयेच्चूर्णं रसः सूर्यप्रभो महान् ।
पुण्डरीकहरो निष्कमनुपानं च पूर्ववत् ॥

कोयल, बिंडाल, सर्पाक्षी (गंध नाकुली), चौलाई, अगस्ति, नील, ब्राह्मी और पलाशमें से जिन २–३ ओषधियों के स्वरस मिल सकें उनके स्वरस लेकर उनमें १ भाग शुद्ध पारदको पृथक् पृथक् १–१ दिन घोटें । तदनन्तर उस पारदमें २ भाग शुद्ध गन्धक मिलाकर दोनोंकी कज्जली बनावें और एक लोहपात्रमें घी लगाकर उसमें यह कज्जली डालकर मन्दाग्नि पर पिघलावें । जब कज्जली पिघल जाय तो उसमें पारदसे चौथाई ताम्र भस्म और उतनी ही अभ्रक भस्म तथा कपूर मिलाकर अग्निसे नीचे उतारकर खरल कर लें ।

इसे ५ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे 'पुण्डरीक कुष्ठ' नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

(५५८५) महासेतुरसः (मेहसेतुरसः)

(र. चि. म. ; र. र. स. ; र. का. धे. । प्रमेह.)

एकः सूतो द्विधा वङ्गो सर्वद्विगुणगन्धकः ।
कूपीपक्वो महासेतु वङ्गस्थानेऽथवा विधुः ॥

१ भाग शुद्ध पारद, २ भाग शुद्ध बंग और ६ भाग शुद्ध गन्धक लेकर प्रथम बंगको पिघलाकर पारदमें मिलावें और फिर उसमें गन्धक मिलाकर कज्जली बना लें । तथा उसे आतशी शीशीमें भरकर बालुका यन्त्रमें पकावें ।

यह रस प्रमेहको नष्ट करता है ।

इसमें बङ्ग (रांग) के स्थानमें कपूर भी डाल सकते हैं ।

(५५८६) महाहेमगर्भरसः
(महागर्भपोटली)

(र. चं. ; यो. र. । कास.)

शुद्धं सूतं पलैकं स्यात्पादांशं शुद्धहेमकम् ।
शुद्धगन्धस्य माषैकं प्रतिकर्षं प्रयोजयेत् ॥

त्रयमेकत्र कुर्वीत सूक्ष्मं खल्वे विमर्दयेत् ।
सुदृढे बन्धयेद्वस्त्रे स्थाप्य लोहजसम्पुटे ॥
मर्दितं गन्धकपलं तस्योपरि प्रदापयेत् ।
सम्पुटं मुद्रितं कृत्वा भूधराख्यपुटे पचेत् ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य दग्धगन्धं परित्यजेत् ।
वेष्टयित्वा पुनर्वस्त्रं सूत्रे बद्ध्वा च गोलकम् ॥
तत्तुल्यं च पुनर्गन्धं सम्पुटे निक्षिपेद्भिषक् ।
मुद्रितं सम्पुटं कृत्वा पुनर्यन्त्रेण पाचयेत् ॥
हेमगर्भरसो नाम्ना सर्वव्याधिनिवारणः ।
रोगराजादिकं हन्ति इतरेषां तु का कथा ॥

शुद्ध पारद ५ तोले और शुद्ध स्वर्णपत्र १। तोला लेकर दोनोंको एकत्र खरल करें। जब स्वर्ण पारदमें मिल जाय तो उसमें (प्रतिकर्ष १ माशेके हिसाबसे) ६। माशे शुद्ध गन्धक मिलाकर कज्जली बनावें और उसे मज़बूत कपड़ेमें बांधकर लोहेके सम्पुटमें रक्खें; तथा पोटलीके ऊपर ५ तोले शुद्ध गन्धकका चूर्ण डालकर सम्पुटको बन्द करके भूधर पुटमें पकावें । तत्पश्चात् पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसके ऊपरसे जले हुवे गन्धक और कपड़ेकी राखको साफ कर दें तथा उसे पुनः कपड़ेमें बांधकर पूर्ववत् लोह सम्पुट में बन्द करके भूधरपुटमें पकावें । इस बार भी रसकी पोटलीके ऊपर उसके बराबर गन्धकका चूर्ण डालना चाहिये। जब पुट स्वांग शीतल हो जाए तो उसमेंसे औषधको निकालकर उसके ऊपरसे गन्धक और कपड़ेकी राखको हटाकर शेष रसको खरल कर लें ।

इसके सेवनसे राजयक्ष्मादि समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(५५८७) महेश्वररसः (१)

(महाशूलहररसः)

(र. का. धे. ; वृ. नि. र. । शूल.)

रसं गन्धकं टङ्कणं श्वेतकाचं
विडं भारशृङ्गं तथा खं वराटम् ।
रविः शम्बुकं शृङ्गमेणस्य शङ्खं
स्नुही सूर्यदुग्धैर्दिनैकं विमर्द्य ॥
पुटेदेव पश्चाद्विषव्योषयुक्तं
समांशं च सर्वस्य सर्वं प्रदद्यात् ।
मरीचाज्ययुक्तो महाशूलहर्त्ता
प्रमेहेषु सर्वेषु शूलेषु धीमान् ॥
क्षये दुर्निवारे विकारे च पाण्डौ
तथा मन्दवह्नौ प्रदत्तं च हन्यात् ।
सुपुष्टिं बलं धातुवृद्धिं विदध्या-
द्रसोऽयं महेशादि नाम प्रसिद्धः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागा, सफेद कांच, बिड नमक, बारहसींगेका सींग, अभ्रक भस्म, कौड़ी, ताम्रभस्म, घोंघे, हरिनका सींग और शंख समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला-कर सबको १-१ दिन स्नुही (थोहर सेंड) और आकके दूधमें घोट कर टिकिया बनाकर सुखा लें एवं उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल और शुद्ध बछनागका समान भाग-मिश्रित चूर्ण रसके बराबर मिलाकर खरल करें ।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ खानेसे प्रमेह, शूल, क्षय, पाण्डु और मन्दाग्निका नाश होता तथा वीर्यकी वृद्धि होती है।

(५५८८) **महेश्वररसः** (२)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । रसायन.)

रसं भस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम् ।
लौहं कर्षद्वयं ताम्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥
सुवर्णं जारितं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणः ।
अभ्रं कर्षद्वयं दद्याच्छाणार्द्धं चन्द्रचूर्णकम् ॥
श्यामाबीजं वरीश्चैव बलामतिबलां तथा ।
एलाश्च शङ्खपुष्पश्च शाणमानं विनिःक्षिपेत् ॥
जलेन वटिकां कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत् ।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥
सहस्रं याति नारीणामुत्साहो जायतेऽधिकः ।
नित्यं स्त्रीसेवनाद्यस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥
महाशुक्री भवेत्सोपि सेवनादस्य नान्यथा ।
महाबलो महाबुद्धिर्जायते नात्र संशयः ॥
स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः ।
रसो विनाशयेद्रोगान्सप्तसप्ताहभक्षणात् ॥

पारद भस्म (या रस सिन्दूर) २ शाण, शुद्ध गन्धक २ शाग, लोह भस्म ८ शाण, ताम्र-भस्म १ शाण, सुवर्ण भस्म आधी शाण, अभ्रक-भस्म ८ शाण, कपूर आधा शाण तथा विधारेके बीज, शतावर, खरैटी, अतिबला (कंघी), इलायची और शंखपुष्पीका चूर्ण १-१ शाण लेकर सबको पानीके साथ एकत्र घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इसके सेवनसे मनुष्य अत्यन्त स्वरूपवान हो जाता है; तथा अत्यन्त उत्साह वृद्धि होती और सहस्रों स्त्रियोंसे समागम करनेकी शक्ति आ जाती है।

अत्यन्त स्त्रीप्रसंगसे जिनका शुक्र क्षीण हो गया है उनमें इस रसके सेवनसे अत्यन्त शुक्रवृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त यह रस बल बुद्धिको बढ़ाता और स्थूल शरीरको सम तथा कृशको पुष्ट करता है।

(५५८९) **महोदधिरसः** (१)

(भै. र. । तृष्णा. ; रसें. सा. सं.; धन्व. । तृष्णा.)

ताम्रञ्च वङ्गकञ्चैव सूतं तालं सतुत्थकम् ।
वटाङ्कुररसैर्भाव्यं तृष्णाहृद्रक्तिपादतः ॥

ताम्र भस्म, बंग भस्म, रससिन्दूर, शुद्ध हरताल और नीलाथोथा (तूतिया) भस्म समान भाग लेकर सबको बड़के अङ्कुरोंके स्वरसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें।

इसे २ चावल मात्रानुसार खिलानेसे तृष्णा शान्त होती है।

(५५९०) **महोदधिरसः** (२)

(भै. र. । वृद्धि.)

रसं गन्धं तथा हेम वज्रविद्रुममौक्तिकम् ।
गृहीत्वा समभागेन मर्दयेत् त्रिफलाम्बुना ॥
गुञ्जार्द्धप्रमिताः कुर्याद् वटाश्छायाप्रशोषिताः ।
एकैकां दापयेदासां यथादोषानुपानतः ॥
रुद्धान्त्रत्वमन्त्रवृद्धिं तथान्यानन्त्रजान् गदान् ।
वातपित्तकफोत्थांश्च सर्वान् हन्ति महोदधिः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण भस्म, हीरा-भस्म, मूंगा भस्म और मोती भस्म समान भाग

लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको त्रिफलेके काथमें घोटकर आधी आधी रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें।

इनमेंसे एक एक गोली दोषोचित अनुपानके साथ खिलानेसे अन्त्रावरोध, अन्त्रवृद्धि और अन्य वातज, पित्तज तथा कफज समस्त अन्त्ररोग नष्ट होते हैं।

(५५९१) **महोदधिरसः** (३)

(महोदधिवटी)

(र. सा. सं. । अजीर्ण. ; र. चं. । अग्निमान्द्या.; र. रा. सु.। अजीर्ण. ; र. मं. । अ. ६; रसे. चि. म. । अ. ९; भै. र. । अग्निमा.)

एकैकं विषसूतञ्च जातीटङ्कं द्विकं द्विकम् ।
कृष्णा त्रिकं विश्वषट्कं गन्धं कपर्दकं द्विकम्॥
देवपुष्पं वाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
महोदधिवटी नाम्ना नष्टमग्निं प्रदीपयेत् ॥

शुद्ध बछनाग (मीठा विष) १ भाग, शुद्ध पारद १ भाग, जावत्री और सुहागेकी खील २-२ भाग, पीपल ३ भाग, सोंठ ६ भाग, शुद्ध गन्धक और कौड़ी भस्म २-२ भाग तथा लौंग ५ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको पानीके साथ घोटकर १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे नष्टाग्नि भी प्रदीप्त हो जाती है।

(५५९२) **महोदधिरसः** (बृहत्) (४)

(महोदधिवटी)

(र. रा. सु. । अजीर्णा. ; वृ. यो. त. । त. ७१)

दन्तीबीजमकल्मषं सदहनं शुण्ठी लवङ्गं समम् ।
गन्धं पारदटङ्कणं च मरिचं श्रीवृद्धदारुं विषम् ॥
खल्वे यामयुगं विमर्द्य विधिना दन्तीद्रवैर्भावनाः
देयाः पञ्चदशानु निम्बुकजलैस्त्रेधा त्रिधा चित्रकैः
त्रेधा चार्द्रकजै रसैः शुभधिया सप्तैव चावेगिनः।
पश्चाच्छुष्ककलायसम्मितवटी कार्य्या भिषक्-सम्मिता॥
क्षुद्बोधं प्रकरोति शूलशमनी जीर्णज्वरध्वंसिनी
कासारोचकपाण्डुतोदरगदः सामामरुङ्नाशिनी॥
बस्त्याटोपहलीमकामयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी ।
सिद्धेयं तु महोदधि प्रकटिता सर्वामयघ्नी सदा॥

शुद्ध जमालगोटा, चीतामूल, सोंठ, लौंग, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, सुहागा, काली मिरच, विधारा और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) समान भाग लेकर प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको दो पहर घोट कर दन्तीमूलके काथकी १५ भावना तथा नीबूके रस, चीतेके काथ, और अदरकके रसकी ३-३ भावना एवं विधारेके रसकी सात भावना देकर मटरके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे भूख खुलती और शूल, जीर्णज्वर, कास, अरुचि, पाण्डु, उदर रोग, आम, बस्तिका आटोप (अफारा), हलीमक और अग्निमान्द्यका नाश होता है।

महोदधिरसः (५)

(र. म. ; र. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. । कास. ; र. रा. सु. । श्वासा. ; र. च. । अर्श.)

'गुण महोदधि रस' सं. १५६६ देखिये। जिन ग्रन्थोंमें 'महोदधि' नामसे लिखा है उनमें प्रायः प्रथम पंक्तिमें वराङ्गकम् (दालचीनी) के स्थानमें वराटकम् (कौड़ी भस्म) लिखी है एवं प्रायः सभी ग्रन्थोंमें "गन्धक लौहश्चैव" पाठ है अर्थात् महोदधि रस में १ भाग लोह भस्म भी डालनी चाहिये ।

महोदधिवटी (बृहत्)

(र. सा. सं. । अजीर्णा.)

प्रयोग संख्या ५५९२ के समान है परन्तु इसमें मरिचका अभाव है । दन्तीकी १४ भावना तथा विधारेकी ५ हैं । शेष प्रयोग समान है।

(५५९३) महोदयप्रत्ययसाररसः

(र. र स. । अ. १५)

रसग्रस्तसमुद्गीर्णगन्धकस्य पलत्रयम् ।
मृतमृताभ्रताम्रायः कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥
पलं हिङ्गुलचूर्णस्य माक्षिकस्य पलत्रयम् ।
पलं कम्पिल्लकस्यापि विषस्यार्धपलं तथा ॥
सप्ताहं मर्दयेत्सर्वं दत्वा चूर्णोदकं मुहुः ।
ततस्तद्गोलकं कृत्वा सप्ताहं चातपे क्षिपेत् ॥
गुडचूर्णं शिलाचूर्णं लिम्पेदङ्गुलिकाघनम् ।
त्रिपलं गन्धकं दत्वा क्रौंच्यामथ च गोलकम् ॥
गोलकस्योपरिष्टाच्च क्षिपेत्तालं पलत्रयम् ।
संरुध्याऽतिप्रयत्नेन दद्याद्गजपुटं खलु ॥
स्वाङ्गशीतलमाहृत्य गोलकं लेपनैः सह ।
विचूर्ण्य सप्तवारं हि विषतिन्दुफलोद्भवैः ॥
द्रवैरथाऽऽतपे शुष्कं क्षिपेद्रम्ये करण्डके ।
त्रिंशदंशेन वैक्रान्तभस्म तस्मिन्विनिक्षिपेत् ॥
अयं हि नन्दीश्वरसम्प्रदिष्टो
रसो विशिष्टः खलु रोगहन्ता ।
निःशेषरोगेष्वहतप्रभावो
महोदयप्रत्ययसारनामा ॥
हन्यात्सर्वगुदामयान्क्षयगदं कुष्ठं च मन्दाग्नितां
शूलाध्मानगदं कफं श्वसनतामुन्मादकापस्मृती ।
सर्वा वातरुजो महाज्वरगदान्नानाप्रकारांस्तथा
वातश्लेष्मभवं महामयचयं दुष्टग्रहण्यामयम् ॥

समान भाग पारद गन्धककी कज्जली १५ तोले, पारद भस्म (रस सिन्दूर), अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म और लोह भस्म १।-१। तोला; शुद्ध हिंगुल ५ तोले, स्वर्ण माक्षिक भस्म १५ तोले, कमीला ५ तोले और शुद्ध बछनाग २॥ तोले लेकर सबको एकत्र खरल करके थोड़ा थोड़ा चूनेका स्वच्छ पानी डालते हुवे सात दिन तक घोटें और उसका गोला बना कर सात दिन कड़ी धूपमें सुखावें । तदनन्तर गुड़ और शुद्ध मनसिल बराबर बराबर लेकर दोनोंको पानीके साथ बारीक पीस लें और उपरोक्त गोले पर इसका १ अंगुल मोटा लेप करके सुखा लें । अब एक मूषामें १५ तोले शुद्ध गन्धकका चूर्ण डालकर उस पर वह गोला रख दें और गोलेके ऊपर १५ तोले शुद्ध हरतालका चूर्ण डाल कर मूषाको अच्छी तरह बन्द कर दें और उस पर कपड़ मिट्टी करके गजपुटकी अग्नि दें । जब सम्पुट स्वांग शीतल हो जाय तो उस-

मेंसे गोलेको निकालकर उसे गुड़ और हरतालके लेप सहित पीस लें ।

अब इसे कुचलेके रसकी सात भावना देकर धूपमें सुखा कर उसमें उसका तीसवां भाग वैक्रान्त-भस्म मिला कर मजबूत शीशीमें भरकर रक्खें ।

इसके सेवनसे अर्श, क्षय, कुष्ठ, अग्निमांद्य, शूल, अफारा, कफ, श्वास, उन्माद, अपस्मार, वात व्याधि, दुष्ट ज्वर, वात कफज अनेक रोग और ग्रहणीका नाश होता है ।

(५५९४) माक्षिकादिचूर्णम्

(भै. र. ; आ. वे. वि. । प्रमेहा.)

माक्षिकं रससिन्दूरं खर्परं रजतन्तथा ।
शिलाजत्वभ्रलौहानि शाल्मल्याः कुसुमं त्वचम्॥
विदारीं गोक्षुरं बीजं चैकत्र परिमर्दयेत् ।
वल्लमात्रं प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनिवृत्तये ॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म, रससिन्दूर, खपरिया, चांदी भस्म, शुद्ध शिलाजीत, अभ्रक भस्म, लोह-भस्म, सेंभलके फूल, सेंभलकी छाल, बिदारी कन्द और गोखरु । सबके समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र खरल कर लें ।

इसमेंसे ३—३ रत्ती औषध (शहदके साथ) सेवन करनेसे शुक्रमेह नष्ट होता है ।

(५५९५) माक्षिकादिवटी

(भै. र. । कर्ण.)

माक्षिकं तोलकमितं तदर्द्धं गन्धकं रसम ।
तथाभ्रञ्च समादाय मुक्तास्वर्णौ च पादिकौ ॥
काकमाची पत्ररसैस्त्रिधा सम्भाव्य यत्नतः ।
रक्तिद्वयमिता कार्या माक्षिकादि वटी शुभा ॥
वेष्टिता पद्मपत्रेण धान्यराशौ निधापिता ।
यथायोगानुपानेन सेविता संहरेन्नृणाम् ॥
नेत्ररोगांश्च निखिलान् नानोपद्रवसंयुतान् ॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म १ तोला, शुद्ध गन्धक ६ माशे, शुद्ध पारद ६ माशे; अभ्रक भस्म ६ माशे तथा मोती और स्वर्ण भस्म ३—३ माशे लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको मकोयके पत्तोंके स्वरसकी ३ भावना देकर २—२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें कमलके पत्तोंमें लपेट कर अनाजके ढेरमें दबा दें (और १ मास पश्चात् काममें लावें ।)

इन्हें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे अनेक उपद्रव युक्त समस्त नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

(५५९६) माणशूरणाद्यं लौहम्

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । अर्श.)

माणशूरणभल्लातत्रिवृद्दन्तीसमन्वितम ।
त्रिकत्रयसमायुक्तमयो दुर्नामनाशनम् ॥

मानकन्द, जमीकन्द, शुद्ध भिलावा, निसोत, दन्तीमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीतामूल, बायबिडंग और नागरमोथा। इन सबका चूर्ण १—१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर (१४ भाग) लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इनके सेवनसे बवासीर नष्ट होती है ।

(मात्रा—४ रत्ती ।)

(५५९७) माणिक्यतिलकरसः

(र. र. स. । अ. २०)

रसगन्धकताप्यालकान्ततीक्ष्णाभ्रभस्मकम् ।
हिङ्गुलं मधुकं कुष्ठं सर्वं समविभागिकम् ॥
शतमूलीनिजद्रावैर्मञ्जिष्ठादिकषायतः ।
त्रिदिनं त्रिदिनं सम्यक् परिमर्द्य विशोष्य च ॥
ततस्तु पक्वमूषायां सन्निरुध्यातियत्नतः ।
प्रक्षिप्य वालुकायन्त्रे प्रपुटेद्दिवसद्वयम् ॥
माणिक्यतिलको नाम रसो नासत्यकीर्तितः।
एष कुष्ठं हरत्याशु सन्मित्रमिव हृद्व्यथाम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण माक्षिक भस्म, हरताल भस्म, कान्त लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध हिंगुल तथा मुलैठी और कूठका चूर्ण समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको ३-३ दिन शतावरके स्वरस और मञ्जिष्ठादि क्वाथ में खरल करके सुखा लें। तदनन्तर उसे एक दृढ़ मूषामें बन्द करके दो दिन बालुका यन्त्रमें पकावें ।

इसके सेवनसे कुष्ठ शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(५५९८) माणिक्यरसः (१)

(रसमाणिक्यम्)

(भै. र ; रसे. सा. सं. ; र. चं. ; धन्व । कुष्ठा.)

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा वा त्रिधा वापि दध्नाम्लेन तथैव च ॥
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृतिः ।
ततः शरावके यन्त्रे स्थापयेत्कुशलो भिषक् ॥
बदरीपल्लवोत्थेन लेपनं कारयेत्ततः ।
अरुणाभमधःपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभो भवेद्रसः ।
घृतक्षौद्रेण सम्मर्द्य खादयेद्रक्तिकामितम् ॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते ।
स्फुटितं गलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥
नाडीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम् ।
नासास्यसम्भवान् रोगान् क्षतान् हन्यात्सुदारुणान् ॥
पुण्डरीकश्च चर्माख्यं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥

वंशपत्री (तबकी) हरतालको सात सात या तीन तीन बार पेठेके रस, खट्टी दही और कांजीमें पृथक् पृथक् दोलायन्त्र विधिसे पका कर शुद्ध करें। तत्पश्चात् उसके चावलके समान बारीक टुकड़े कर लें और एक मृत्पात्रमें (नीचे सफेद अभ्रक बिछा कर उस पर) यह हरताल फैलाकर (उसके ऊपर दूसरा अभ्रक पत्र रख कर) पात्रको शरावसे ढक दें तथा जोड़को बेरीके पत्तोंके कल्कसे बन्द कर दें। अब इस पात्रको (कण्डोंकी अग्नि पर) इतना पकावें कि नीचेका भाग (तली) लाल हो जाय। इसके पश्चात् पात्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे रसको निकाल कर सुरक्षित रक्खें । यह रस माणिक्यके समान दीप्तिमान होता है।

इसमेंसे नित्य प्रति १-१ रत्ती रस घी और शहदके साथ सेवन करनेसे स्फुटित और गलित कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाड़ीव्रण (नासूर), व्रण, उपदंश, विचर्चिका, नासा रोग, मुख रोग, पुण्डरीक

कुष्ठ, चर्म कुष्ठ, विस्फोटक और मण्डल कुष्ठादि का नाश होता है।

(५५९९) माणिक्यरसः (२)

(रसमाणिक्यम्)

(र. च. । राजयक्ष्मा; र. रा. सु. । राजय.)

शुद्धसूतं पलान्यष्टौ कुनटी तस्य तत्समः ।
नागपत्रं चाष्टपलमष्टौ स्याच्छुद्धगन्धकः ॥
एकत्र कज्जलीं कृत्वा काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रमध्ये तु अग्निः षोडशयामकम् ॥
भवेन्माणिक्यवर्णोऽयं शुक्रस्तम्भं करोति च ।
जराव्याधिविनाशाय राजरोगकुलान्तकृत् ॥
दशरात्रप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ।
रक्तिकार्द्धं सदा पथ्यं वृद्धः संयाति यौवनम् ॥

शुद्ध पारा ४० तोले, शुद्ध मनसिल ४० तोले शुद्ध शीसा ४० तोले और शुद्ध गन्धक ४० तोले लेकर प्रथम सीसेको पिघलाकर पारेमें डालकर घोटें। जब वह उसमें मिल जाय तो अन्य औषधें मिलाकर कज्जली बनावें। एवं उसे आतशी शीशीमें भरकर १६ पहर तक बालुका यन्त्र में पकावें। तदनन्तर शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे रसको निकालकर सुरक्षित रक्खें। यह माणिक्यके समान चमकदार होगा।

इसके सेवनसे जरा व्याधि नष्ट हो कर वृद्ध पुरुष भी युवाके समान हो जाता है।

यह रस राजयक्ष्माको केवल १० दिनमें ही नष्ट कर देता है तथा वीर्यस्तम्भक है।

मात्रा—आधी रत्ती।

(५६००) माणिक्यरसः (३)

(र. चं. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; भै. र. । कुष्ठ. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

पलं तालं पलं गन्धं शिलायाश्च पलार्धकम् ॥
चपलं शुद्धशीसं च ताम्रमभ्रमयोरजः ।
एतेषां कोलभागं च वटक्षीरेण मर्दयेत् ॥
ततो दिनत्रयं घर्मे निम्बक्वाथेन भावयेत् ।
गुडूचीबालहिन्तालवानरीनीलझिण्टिका ॥
शोभाञ्जनमुराजाजिनिर्गुण्डीहयमारकम् ।
एषां शाणमितं चूर्णमेकीकृत्य सरित्तटे ॥
मृत्पात्रे कठिने कृत्वा मृदम्बरयुते दृढे ।
एकाकी पाकविद्वैद्यो नग्नः शिथिलकुन्तलः ॥
पचेदवहितो रात्रौ यत्नात्संयतमानसः ।
शनैर्मध्यमवेगेन वह्निना प्रहरद्वयम् ॥
प्रातः सम्पूज्य मार्तण्डं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
यदि भाग्यवशादेतन्माणिक्याभं शुभं भवेत् ॥
तद्धि जानीहि भैषज्यं सर्वकुष्ठविनाशनम् ।
सर्पिषा मधुना लौहपात्रे तद्दण्डमर्दितम् ॥
द्विगुञ्जं सर्वकुष्ठानां नाशनं बलवर्द्धनम् ।
शीतलं सारसं तोयं दुग्धं वा पाकशीतलम् ॥
आनीतं तत्क्षणादाजमनुपानं सुखावहम् ।
वातरक्तं शीतपित्तं हिक्कां च दारुणां जयेत् ॥
ज्वरान्सर्वान्वातरोगान्पाण्डुं कण्डुं च कामलाम् ।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो बहुयत्नतः ॥

शुद्ध हरताल ५ तोले, शुद्ध गन्धक ५ तोले, शुद्ध मनसिल २॥ तोले; तथा चपल (पारद), शुद्ध सीसा, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म और लोह भस्म आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) लेकर

प्रथम सीसेको पिघलाकर पारदमें डालकर घोटें और जब दोनों एकजीव हो जाएं तो उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको एकत्र घोट कर कज्जली बनावें। तदनन्तर उसे १ दिन बड़के दूधमें घोट कर तीन दिन नीमके काथकी धूपमें भावना दें। (धूपमें रख कर काथमें भिगो दें और ज्यों ज्यों काथ सूखता जाय और डालते रहें।)

अब इसमें गिलोय, सुगन्धबाला, हिन्ताल (ताल), कौंच, पियाबासा, सहंजना, मुरामांसी, जीरा, संभालु और कनेरका पृथक् पृथक् ५-५ माशे कपड़ छन चूर्ण मिलाकर सबको एकत्र घोट कर दृढ़ शराव-सम्पुट में बन्द करें और उस पर कपड़ मिट्टी करके सुखा लें। इस सम्पुटको (बालुका यन्त्रमें रखकर) रात्रिके समय नदीके किनारे पर, एकान्तमें २ पहरकी मृदु मध्यम तीव्राग्नि दें। प्रातःकाल यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे रसको निकाल लें।

यदि भाग्यवश पाक ठीक हो जाए और माणिक्यके समान रस तैयार निकले तो उसे कुष्ठ नाशक श्रेष्ठ औषध समझें।

इसे लोहेके खरलमें लोहेकी मूसलीसे घी और शहदके साथ घोटकर २ रत्ती मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, शीत पित्त, भयंकर हिचकी, समस्त ज्वर, वात रोग, पाण्डु, खाज और कामलाका नाश होता तथा बल बढ़ता है।

अनुपान—सरोवरका शीतल जल या पकाकर ठंडा किया हुवा बकरीका ताज़ा दूध।

(५६०१) मानसोल्लासचूर्णम्

(नपुंसका मृता. । त. ३; वै. र. । वाजीकरणा.)

त्वक् पिप्पली लवङ्गैला चन्दनं च शिवा पलम्।
सारसार्द्धपलं भङ्गा सार्द्धद्विपलसम्मिता ॥
कर्पूरो मृगनाभिश्च दशमाषमितः पृथक्।
सर्वं तुल्यसिताचूर्णं मानसोल्लाससञ्ज्ञकम् ॥
वृष्यं वाह्नप्रदं चैतत्कामोद्दीपनकारकम् ॥

दालचीनी, पीपल, लौंग, छोटी इलायची, सफेद चन्दन और आमलेका चूर्ण ५-५ तोले, लोह भस्म ७॥ तोले, भंग १२॥ तोले तथा कपूर और कस्तूरी १२॥-१२॥ माशे लेकर सबको एकत्र खरल करें और फिर उसमें उसके बराबर मिश्री मिला लें।

यह चूर्ण वृष्य, अग्नि दीपक और कामोत्तेजक है। (मात्रा-१-१। माशा)

(५६०२) मानिनीमानमर्दनरसः

(र. स. क. । उल्लास ४)

कज्जलीं सूतगन्धाभ्यां तुल्यमुन्मत्तबीजकम्।
तत्तैलमर्दितं सेव्यं द्विवल्लं ससितापयः ॥
मेहौघं नाशयेद्वीर्यं स्तम्भयेद्द्रावयेत्स्त्रियम्।
रसः कामप्रदो नृणां मानिनीमानमर्दनः ॥

समान भाग पारे गन्धककी कज्जली ५ तोले और शुद्ध धतूरेके बीजोंका चूर्ण ५ तोले लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर १ दिन धतूरेके बीजोंके तेलमें घोटें।

इसे ६ रत्ती मात्रानुसार मिश्रीयुक्त दूधके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रमेह नष्ट होते, कामेच्छा

उत्तेजित होती और वीर्यस्तम्भन होता है। यह उत्तम स्त्री द्रावक औषध है।

(५६०३) **मार्कण्डेयचूर्णम्**

(भै. र. । ग्रहणी.)

शुद्धसूतश्च गन्धश्च हिङ्गुलं टङ्कणं तथा ।
व्योषं जातीफलञ्चैव लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥
एलाबीजं चित्रकश्च मुस्तकं गजपिप्पली ।
नागरं सजलश्चाभ्रं धातक्यतिविषा तथा ॥
शिग्रुजं शाल्मलश्चैवमहिफेनं पलांशकम् ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥
खादेदस्मात् प्रतिदिनं माषकं सितशा सह ।
सङ्ग्रहग्रहणीं हन्ति मन्दाग्निश्च विनाशयेत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल, सुहागेकी खील, सोंठ, मिर्च, पीपल, जायफल, लौंग, तेजपात, छोटी इलायची के बीज, चीतामूल, नागरमोथा, गज पीपल, सोंठ, सुगन्ध बाला, अभ्रक भस्म, धायके फूल, अतीस, सहंजनेका गोंद, मोचरस और अफीम समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अफीम मिला कर घोट कर अन्य औषधोंका चूर्ण मिला दें तथा अच्छी तरह घोट कर रक्खें।

इसके सेवनसे संग्रहणी और अग्निमांद्यका नाश होता है।

मात्रा--१ माशा। मिश्रीमें मिला कर खाना चाहिये।

(५६०४) **मार्तण्डभैरवरसः**

(र. चि. म. । स्त. ११; र. रा. सुं. ; वृ. नि. र. । सन्निपा.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं गन्धात्पादांशटङ्कणम् ।
ताम्रपा क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्यालोडयेद्द्रवैः ॥
शिग्रुमूलरसेनाऽथ भावयेच्च खरात्तपे ।
कटुत्रयस्य वासाया वह्निरुद्रजटाद्रवैः ॥
तिलपर्ण्या तथा जातीपिप्पलीपत्रमूलकैः ।
द्रवैरेत्र तु सप्ताहं शोष्यं शोष्यं विभावयेत् ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गोलं विशोषयेत् ।
बद्ध्वा वस्त्रमृदा चाथ भूधरे स्वेदयेत्पुटे ॥
म्रियमान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेदौषधैः सह ।
विषकर्पूरजात्येला रसस्य दशमांशतः ॥
भावयेद्विजयाद्रावैर्दिनमेकं च भक्षयेत् ।
चतुर्गुञ्जं सकर्पूरं मधुना सन्निपातजित् ॥
मार्तण्डभैरवो नाम रसोऽसाध्यं च साधयेत् ।
दशमूलं पिबेच्चानु पथ्यं स्यान्मुद्गयूषकम् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक ४-४ भाग तथा सुहागेकी खील १ भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर ताम्रके पात्रमें डाल दें और उसमें जयन्तीका रस मिला कर धूपमें रख दें। जब रस सूख जाय तो पुनः डाल दें। इसी प्रकार सात दिन तक जयन्तीके रसकी भावना दें और फिर इसी विधिसे सात सात दिन तेज धूपमें सहंजनेकी जड़के रस, त्रिकुटेके क्वाथ, बांसेके रस, चीतेके क्वाथ, रुद्र जटाके क्वाथ (या रस), चन्दनके क्वाथ, चमेलीके रस, पीपलके क्वाथ, तेजपातके क्वाथ और खसके क्वाथकी भावना दें। तदनन्तर उसका गोला बना-

कर सुखा लें और उसके ऊपर कपड़ा लपेट कर उस पर मिट्टीका लेप करके २ पहर भूधर पुटमें स्वेदित करें। इसके पश्चात् पुटके स्वांग शीतल हो जाने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसमें शुद्ध बछनाग, कपूर, जावत्री और इलायचीका चूर्ण प्रत्येक उस तैयार रसका दसवां भाग मिला कर अच्छी तरह घोटें; और उसे एक दिन भांगके रसमें खरल करके रक्खें।

इसमेंसे ४ रत्ती रसमें जरासा कपूर मिला कर शहदके साथ सेवन करनेसे असाध्य सन्निपात भी नष्ट हो जाता है।

अनुपान—दशमूलका क्वाथ।

पथ्य—मूंगका यूष।

(५६०५) मार्तण्डेश्वररसः

(र. र. स. । अ. २१ ; र. चं. ; र. रा. सु. । वातव्या.)

समताप्ययुतं शुल्वं पलविंशतिमानकम्।
प्रध्मातं हि चतुर्वारं खण्डयित्वा ततश्चरेत्॥
तत्तुल्यं माक्षिकोपेतं पुटेद्विंशतिवारकम्।
गन्धकेन पुटेत्तद्वद्गृह्णीयात्तत्पलं ततः[1]॥
क्षिपेत्पलमितं तत्र गन्धकेन हतं रसम्।
शाणमात्रं मृतं वज्रं सर्वमेकत्र मर्दयेत्॥
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं मार्तण्डेश्वरनामवान्।
कीर्तितो लोकनाथेन लोकानां हितकाम्यया॥
मरीचघृतसंयुक्तः सेवितो मण्डलार्धतः।
वाताद्यष्टमहारोगाञ्छ्वासकासयुतं क्षयम्॥
हलीमकं च पाण्डुं च ज्वरानपि सुदुस्तरान्।
इत्यादिकगदान्सर्वान्विनाशयति निश्चितम्॥
करोति दीपनं तीव्रं दीपानलशतोपमम्।
सन्निपातं जयत्याशु व्योषार्द्रकसमन्वितः॥
सर्वसौख्यकरो नृणां स्त्रीणां बन्ध्यत्वनाशनः॥

१००-१०० तोले शुद्ध ताम्र और स्वर्ण माक्षिक को एकत्र मिलाकर सम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी अग्नि दें। इसी प्रकार ४ पुट देनेके पश्चात् उसे पीस कर समान भाग शहदमें घोट कर सम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी आंच दें। इसी प्रकार २० पुट शहदकी और फिर २० पुट× गन्धककी दें। हर बार समान भाग गन्धक डालना चाहिये।

अब यह ताम्र भस्म ५ तोले, गन्धक द्वारा मारित पारद ५ तोले और हीरा भस्म ५ माशे ले कर सबको एकत्र करके अच्छी तरह घोट कर सुरक्षित रक्खें।

इसे घी और काली मिर्चके चूर्णके साथ केवल २० दिन सेवन करनेसे वातादि अष्ट महा रोग, श्वासखांसी-युक्त क्षय; हलीमक, पाण्डु, भयङ्कर ज्वर और स्त्रियोंका बन्ध्यत्व नष्ट होता तथा अग्नि अत्यन्त तीव्र होती है।

इसे त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) के चूर्ण और अद्रकके रसके साथ सेवन करनेसे सन्निपात नष्ट होता है।

१. गन्धकेन पुटेत्तावद्यावत्पलमितं भवेदिति. पाठान्तरम्।

× पाठान्तरके अनुसार गन्धककी इतनी पुटें देनी चाहियें कि केवल १ पल (५ तोले) औषध शेष रह जाय।

मालतीवसन्तरसः

मालिनीवसन्तरसः

वसन्त मालती रस देखिये ।

(५६०६) मिहिरोदयवटी

(आ. वे. वि. । शिरोरो.)

लौहमभ्रं सुवर्णञ्च विद्रुमं राजपट्टकम् ।
सर्वं समं प्रदातव्यं सिन्दूरश्च द्विभागिकम् ॥
एरण्डमूलजेनैव रसेन परिभावयेत् ।
क्वाथैस्तथा जटामांस्या वटी रक्तिद्वयात्मिका ॥
पथ्या पयोऽनुपानेन वटीयं मिहिरोदया ।
अर्द्धावभेदकं हन्ति पीता वातमनन्तकम् ॥
सूर्यावर्त्तं तथा शङ्खश्चैकजश्च द्विदोषजम् ।
त्रिदोषजं शिरोरोगं साध्यासाध्यं न संशयः ॥

लोह भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, विद्रुम (मूंगा) भस्म और कान्त पाषाण (चुम्बक) भस्म १-१ भाग तथा रससिन्दूर २ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके एक एक दिन अरण्डमूल और जटामांसीके क्वाथमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इन्हें हर्रके चूर्ण (अथवा हर्रके मुरब्बे) और दूधके साथ सेवन करनेसे अर्द्धावभेदक; अनन्तवात, सूर्यावर्त और शङ्खक आदि एक दोषज, द्वि दोषज और सन्निपातज साध्य अथवा असाध्य शिरोरोग नष्ट होते हैं ।

(५६०७) मुक्तादिचूर्णम्

(च. स. । चि. अ. १७ हिक्काश्वा.)

मुक्ताप्रवालवैडूर्यशङ्खस्फटिकमञ्जनम् ।
ससारगन्धकाचार्कसूक्ष्मैलालवणद्वयम् ॥
ताम्रायोरजसी रूप्यं सौगन्धिककशेरुकम् ।
जातीफलं शणाद्बीजमपामार्गस्य तण्डुलाः ॥
एषां पाणितलं चूर्णं तुल्यानां क्षौद्रसर्पिषा ।
हिक्कां श्वासं च कासं च लीढमाशु नियच्छति ॥
अञ्जनात्तिमिरं काचं नीलिकां पुष्पकं तमः ।
पैल्यं कण्डुमभिष्यन्दमर्मं चैव प्रणाशयेत् ॥

मोती, प्रवाल, वैडूर्य मणि, शंखनाभि, स्फटिका (बिल्लौर), अञ्जन (सुरमा), चन्दन, काचमणि, आककी जड़की छाल, छोटी इलायची, सेंधा नमक, काला नमक, ताम्र, लोह, चांदी, सौगन्धिक (कमल भेद), कसेरु, जायफल, सनके बीज और अपामार्ग (चिरचिटे) के तुष रहित बीज समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीके साथ खानेसे हिचकी, खांसी और श्वास नष्ट होता है तथा इसका अंजन लगानेसे तिमिर, काच, नीलिका, फूला, पैल्य (रोहे), आंखोंकी खाज, नेत्राभिष्यन्द और अर्म आदि नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

नोट—इस प्रयोगमें ताम्रकी भस्म और अन्य धातुओंका अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण लेना चाहिये । लोहकी भी भस्म ले सकते हैं ।

(५६०८) मुक्तापञ्चामृतरसः

(यो. र. ; वृ. नि. र. । जीर्ण ज्वर.)

मुक्ताप्रवालखुरवङ्गककम्बुशुक्ति-
भूतिं वसूदधिदृगिन्दुसुधांशुभागाम् ।
इक्षो रसेन सुरभेः पयसा विदारी-
कन्यावरीसुरसहंसपदीरसैश्च ॥

सम्मर्द्य यामयुगलं च वनोपलाभि-
र्दद्यात्पुटानि मृदुलानि च पञ्च पञ्च।
पञ्चामृतं रसविभुं भिषजा प्रयुज्य
गुञ्जाचतुष्टयमितं चपलारजश्च ॥
पात्रे निधाय चिरसूतपयस्विनीनां
दुग्धेन च प्रपिबतः खलु चाल्पभोक्तुः।
जीर्णज्वरः क्षयमियादथ सर्वरोगाः
स्वीयानुपानकलिताश्च शमं प्रयान्ति॥

मोती भस्म ८ भाग, मूंगा भस्म ४ भाग, हिरनखुरी बंग (रांग) की भस्म २ भाग तथा शंख और सीपकी भस्म १–१ भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर २ पहर ईखके रसमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें फूंकें। इसी प्रकार ईखके रस गायके दूध तथा विदारीकन्द, घृतकुमारी, शतावर, तुलसी (या संभालु) और हंस पदी (लाल लज्जालु) के रसमें खरल करके पांच पांच पुट दें।

४ रत्ती यह रस पीपलके चूर्णमें मिलाकर बहुत दिनोंकी ब्याही हुई गायके दूधके साथ सेवन करनेसे और स्वल्पाहार करनेसे जीर्ण ज्वर और क्षयादि रोग नष्ट होते हैं।

(५६०९) मुक्ताभस्मयोगः (१)

(वै. र. । रक्तातिसा. ; वृ. नि. र.। त्रिदोष. अति.)

मुक्ताभस्मेतिनामेदं दोषं दृष्ट्वा प्रकल्पयेत्।
गुञ्जार्धमेकगुञ्जं वा कर्पूरेण सुवासितम् ॥
जातीफलादिसंयुक्तं रहस्यं परममतम् ॥

दोष विवेचना करके एक या आधी रत्ती मोतीकी भस्ममें जरासा कपूर मिलाकर उसे जायफल इत्यादि ग्राही औषधोंके साथ देनेसे अतिसार नष्ट होता है।

यह एक गुप्त प्रयोग है।

(५६१०) मुक्ताभस्मयोगः (२)

(र. चं. । हिक्का.)

कटुकागैरिकाभ्यां च मुक्ताभस्म तथैव च।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम् ॥

कुटकी और गेरुका चूर्ण तथा मोती भस्म समान भाग मिला कर (२–३ रत्ती मात्रानुसार) बिजौरेके रसके साथ देनेसे अथवा शहदके साथ ताम्र भस्म चटानेसे हिचकी नष्ट हो जाती है।

(५६११) मुखरोगहरोरसः

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु । मुखरोगा. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु।
गोमूत्रेण विमर्द्याथ सप्तधार्कद्रवेण[1] च ॥
जातीनिम्बमहाराष्ट्रीरसैः सिध्यति पाकहा।
कणामधुयुतो हन्ति मुखपाकं सुदारुणम् ॥
चतुर्गुञ्जं घृतं वक्त्रे सद्यो हन्ति वटी गदान्।
महाराष्ट्र्याश्च कल्केन मुखञ्च प्रतिसारयेत् ॥
धारणात्सेवनाच्चापि वटी हन्ति मुखामयान् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक १–१ भाग तथा शुद्ध शिलाजीत ४ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें शिलाजीत मिला कर उसे गोमूत्र, आकके पत्तोंके रस (पाठान्तरके अनुसार अद्रकके रस), चमेली और नीमके पत्तोंके रस तथा महाराष्ट्री (जल पीपल) के रसकी पृथक्

१ सप्तधार्द्रद्रवेण चेति पाठान्तरम्।

पृथक् सात सात भावना देकर ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक एक गोली पीपलके चूर्ण और शहदमें मिला कर खाने तथा मुखमें रखनेसे भयंकर मुख पाक भी नष्ट हो जाता है।

मुख पाकमें महाराष्ट्रीके कल्कसे घर्षण करना भी हितकारी है।

(५६१२) मुखरोगारिरसः

(र. र. स. । अ. २४)

ताप्याभ्रतुत्थकुनटीराजावर्तशिलाजतु।
गुग्गुलुर्हरवीर्यं च मुखरोगनिबर्हणम् ॥

सोनामक्खी भस्म, अभ्रक भस्म, तुत्थ (तूतिया) भस्म, शुद्ध मनसिल, राजावर्त भस्म, शिलाजीत, रस सिन्दूर और गूगल समान भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे मुख रोग शान्त होते हैं।

(५६१३) मुद्राघोटको रसः

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वर.)

पारदो गन्धकश्चैव त्रिक्षारं लवणत्रयम् ।
गुग्गुलुर्वत्सनाभश्च प्रत्येकन्तु द्विमाषकम् ॥
कृष्णोन्मत्तजटानीरैर्भावयेत्सप्तवासरम् ।
गोक्षुरेन्द्रकमारीषं करञ्जचित्रतेजिका ॥
भूकुरवकलताभिश्च त्रिफलाबृहतीरसैः ।
मर्दिता वटिका कार्या कृष्णलाफलसन्निभा ॥
तत एकां वटीं दत्त्वा यत्नैः पाटयादिभिर्हतः ।
रसः सर्वज्वरं हन्ति क्षणमात्रान्न संशयः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सज्जीखार, सुहागा, जवाखार, सेंधा नमक, काला नमक, विड नमक, शुद्ध गूगल और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर सबको काले धतूरेकी जड़के रसमें सात दिन घोटें और फिर उसे गोखरु, इन्द्रजौ, मरसा शाक, करञ्ज, चीतामूल, तेजिका (माल कंगनी), झिण्टी, मजीठ, त्रिफला और बड़ी कटेली (बन भण्टे) के रसमें १-१ दिन घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे रोगीको १ गोली खिलाकर कम्बल इत्यादि गर्म कपड़ा उढ़ा देना चाहिये।

इनके सेवनसे ज्वर अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(५६१४) मुशलीपाकः (१)

(नपु. मृता. । त. ४)

सुतालमूलीद्वयचूर्णमेव
सुवस्त्रपूतं विनिगृह्य प्रस्थम् ।
गोदुग्धप्रस्थैर्वसुभिश्च पाच्यं
यावद्घनं तत्प्रसमीक्ष्य सर्वम् ॥
पलाष्टकेनाथ घृतेन भृष्ट्वा
पलैकमानानि तथौषधानि ।
संवक्ष्यमाणानि गुरूक्तयुक्त्या
खण्डं द्विमानं सकलौषधीभ्यः ॥
गोकण्टकं चेक्षुशतावरीभ्यां
शिवाकणावानरबीजपत्रैः ।
लवङ्गखार्जूरसुजातपत्री
मज्जात्रयैश्चन्दनगोस्तनीभ्याम् ॥

जातीफलैलानतवङ्गयुक्तं
ग्राह्यं यथोक्तं सकलं पलैकम् ।
पलद्वयं मोदकमस्य प्रातः
सायं समश्नाति समाक्षिकाज्यम् ॥
वृद्धोपि तारुण्ययुतस्तरुण्या
युक्तोपि चान्यास्तरुणीरिरंसुः ।
वीर्यप्रमोदैर्बलपौरुषाभ्यां
युक्तः सुदृग्रोगगणैर्विमुक्तः ॥

दोनों प्रकारकी (काली और सफेद) मूसलीका कपड़ छन चूर्ण १ सेर (प्रत्येक आधा सेर) लेकर ८ सेर गोदुग्धमें पकावें । जब वह गाढ़ा (खोवेके समान) हो जाए तो उसमें १ सेर गोघृत मिलाकर भूनें । तत्पश्चात् सम्पूर्ण औषधसे २ गुनी (१० सेर ३० तोले) खांडकी चाशनी बनाकर उसमें यह खोवा और निम्न लिखित ओषधियोंका चूर्ण मिलावें ।

चूर्णकी ओषधियां—गोखरु, तालमखाना, शतावर, आमला, पीपल, कौंचके बीज, तेजपात, लौंग, खजूर, जावत्री, बादामकी गिरी, पिस्ता, चिरौंजी, सफेद चन्दन, मुनका, जायफल, इलायची और तगरका कपड़छन बारीक चूर्ण तथा बंग भस्म ५-५ तोले ।

यह चूर्ण मिलाकर ५-५ तोलेके मोदक बना लें ।

इनमेंसे १-१ मोदक घी और शहदमें मिलाकर प्रातः सायं सेवन करनेसे वृद्ध पुरुष भी तरुणके समान स्त्री समागम कर सकता है तथा उसे पुनः पुनः तरुणी-समागमकी इच्छा उत्पन्न होती है ।

इसके अतिरिक्त इनके सेवनसे बल, वीर्य, आनंद और पौरुषकी वृद्धि होती तथा नेत्र रोग नष्ट होते हैं ।

मुशलीपाकः (२)

(वृ. यो. त.)

" वृहन्मुशली पाकः " देखिये ।

(५६१५) मुस्तादिगुटी

(वृ. नि. र. । अतिसार.)

मुस्तं मोचरसं लोध्रं धातुकी बिल्वकौटजम् ।
अहिफेनं रसं गन्धं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
वल्लमात्रमिदं खादेत् गुडतक्रसमन्वितम् ।
अतिसारे प्रवाहे च ग्रहण्यां च विशेषतः ॥

नागरमोथा, मोचरस, लोध, धायके फूल, बेलगिरी, इन्द्रजौ, अफीम, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अफीम तथा अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह घोट कर रक्खें ।

इसे ३ रत्ती मात्रानुसार गुड़ युक्त तक्रके साथ सेवन करनेसे अतिसार, प्रवाहिका और संग्रहणीका नाश होता है ।

(५६१६) मुस्तादिचूर्णम् (१)

(र. र. स. । अ. १६)

मुस्तावत्सकपाठाग्निव्योषप्रतिविषाविषम् ।
धातकीमोचनिर्यासश्चूतास्थिग्रहणीहरम् ॥

नागरमोथा, कुड़ेकी छाल, पाठा, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, अतीस, शुद्ध बछनाग

(मीठा विष), धायके फूल, मोचरस और आमकी गुठलीकी गिरी समान भाग लेकर कूट छान कर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे संग्रहणी रोग नष्ट होता है।

(मात्रा-१॥ माशा ।)

(५६१७) मुस्तादिचूर्णम् (२)

(र. र. स. । अ. १९)

मुस्ताऽमृताचित्रकयष्टिपिप्पली
विडङ्गशुण्ठीत्रिफलैर्यथोत्तरम् ।
चूर्णं सहायोरजसा च संयुतं
समाक्षिकं पाण्डुगदापहं परम् ॥

नागरमोथा १ भाग, गिलोय २ भाग, चीतामूल ३ भाग, मुलैठी ४ भाग, पीपल ५ भाग, बायबिड़ंग ६ भाग, सोंठ ७ भाग, हर्र ८ भाग, बहेड़ा ९ भाग, आमला १० भाग, और लोहभस्म ५५ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे पाण्डुरोग नष्ट होता है।

(मात्रा-३ रत्ती ।)

(५६१८) मुस्ताद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । कृमिरो.)

मुस्ताखुपर्णिसुरदारुकणाविशाला-
श्रीसिन्दुवाररविमूलनिशाद्वयं च ।
शिग्रुः पलाशबलिवेल्लवचाग्निमन्थ-
सौवर्चलं कृमिशतं शमयेत् सहिङ्गु ॥

नागरमोथा, मूषाकर्नी, देवदारु, पीपल, इन्द्रायणकी जड, संभालुके पत्र; आककी जड़, हल्दी, दारु हल्दी, सहंजनेकी छाल, ढाकके बीज, शुद्ध गन्धक, बायबिड़ंग, बच, अरणी मूलकी छाल, काला नमक और हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे कृमि रोग नष्ट होता है।

(५६१९) मूत्रकृच्छ्रहरः

(भै. र. ; धन्व. । मूत्रकृच्छ्रा.)

विदारी गोक्षुरं यष्टी केशरञ्च समं पचेत् ।
तत्कषायं पिबेत्क्षौद्रे रसभस्मयुतं पुनः ॥
मूत्रकृच्छ्रहरं ख्यातं सप्ताहात् पित्तजं जयेत् ॥

विदारी कन्द, गोखरु, मुलैठी और नागकेसर समान भाग (१-१ तोला) लेकर सबको ३२ तोले पानीमें पकावें। जब ८ तोले पानी शेष रहे तो छान लें।

इस क्वाथमें शहद डालकर उसके साथ पारद भस्म (अभावमें रससिन्दूर) सेवन करनेसे १ सप्ताहमें पित्तज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(५६२०) मूत्रकृच्छ्रहरलौहम्

(र. र. । मूत्रकृच्छ.)

अयोरजः श्लक्ष्णचूर्णं मधुना सह योजितम् ।
मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्येतत् त्रिभिर्लोहैर्न संशयः॥

लोह भस्मको शहदके साथ सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ अवश्य नष्ट होजाता है।

(५६२१) मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (१)

(भै. र. ; र. का. धे. । मूत्रकृच्छ्र.)

सूतं स्वर्णञ्च वैक्रान्तं गन्धतुल्यं विमर्दयेत् ।
चाण्डालीराक्षसीद्रावैर्द्दिंयामान्ते तु गोलकम् ॥

शुष्कं बद्ध्वा पुटेद्वाहः करीषाग्नौ लघौ पुटे।
गुञ्जार्द्धं तु लिहेत्क्षौद्रैर्मूत्रकृच्छ्रप्रशान्तये ॥

शुद्ध पारद, स्वर्ण भस्म, वैक्रान्त भस्म, और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बना लें और फिर उसमें स्वर्ण तथा वैक्रान्त मिलाकर उसे २–२ पहर मुरामांसी और शिवलिंगीके रसमें घोट कर गोला बना लें तथा उसे सुखाकर सम्पुटमें बन्द करके लघु पुटमें पकावें।

इसे आधी रत्ती मात्रानुसार शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(५६२२) मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (२)

(र. सा. सं. ; र. चं. । मूत्रकृच्छ्रा.)

रसगन्धयवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत्।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि निहन्ति नियतं नृणाम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और जवाखार समान भाग ले कर कज्जली बनावें।

इसे मिश्रीयुक्त तक्रके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके मूत्रकृच्छ्र निस्सन्देह नष्ट हो जाते हैं।

(मात्रा–३ रत्ती)

(५६२३) मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (३)

(मूत्रकृच्छ्रारिरसः)

(रसे. सा. सं. ; र. च. ; र. का. धे. ; र. र.। मूत्रकृच्छ्रा. ; रसे. चि. म. । अ. ९; र. रा. सु. । मूत्र कृ.)

शतावरीरसैः पिष्ट्वा मृतसूतञ्च तालकम्[1]।
शिखितुत्थञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ॥
तद्गोलं सार्षपे तैले पाच्यं यामञ्च चूर्णयेत्।
मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चास्य क्षौद्रैर्गुञ्जा चतुष्टयम् ॥
भक्षणान्नात्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्यलम्।
तुलसीतिलपिण्याकं बिल्वमूलं तुषाम्बुना ॥
कर्षैकं वानुपानेन सुरया वा सुवर्च्चलः ॥

पारद भस्म (अभावमें रस सिन्दूर), शुद्ध हरताल, और शुद्ध तूतिया समान भाग लेकर सबको १ दिन शतावरके रसमें घोट कर गोला बना कर सुखा लें। तदनन्तर उसे १ पहर सरसोंके तेलमें पकावें और फिर चूर्ण करके रक्खें।

इसे ४ रत्ती मात्रानुसार शहदके साथ मिला कर निम्न लिखित अनुपानके साथ सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र अवश्य नष्ट हो जाता है।

अनुपान–तुलसी, तिलकी खल और बेलकी जड़की छालका समान भाग मिश्रित चूर्ण १। तोला लेकर उपरोक्त रस खानेके पश्चात्, कांजीमें मिलाकर पियें। अथवा–मद्यमें सञ्चल (काला नमक) डालकर पियें।

(रसकी व्यवहारिक मात्रा–१ रत्ती)

(५६२४) मूर्च्छान्तकरसः

(र. चं. । मूर्च्छा.)

सिन्दूरं माक्षिकं हेम शिलाजत्वायसी तथा।
शतमूल्या विदार्याश्च स्वरसेन विभावयेत् ॥
श्लक्ष्णं पिष्ट्वा ततः कुर्याद्वटिका रक्तिसम्मिता।
रसो मूर्च्छान्तको हन्यादसौ मूर्च्छां शिवोदितः

रस सिन्दूर, स्वर्ण माक्षिक भस्म, स्वर्ण भस्म,

[1] ताम्रमिति पाठान्तरम्।

शिलाजीत और लोह भस्म समान भाग लेकर सबको शतावर और विदारी कन्दके रसकी पृथक् पृथक् १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे मूर्च्छा नष्ट होती है।

(५६२५) मूर्छाहररसः

(र. का. धे. । मूर्छा.)

सूतं कणामधुयुतं मूर्छादाहहरं परम् ।
शीतशेकावगाहादि सर्वं वा पीडनं हठात् ॥

रससिन्दूरमें पीपलका चूर्ण और शहद मिलाकर सेवन करनेसे मूर्च्छा तथा दाहका नाश होता है।

मूर्च्छा रोगमें शीतल जलका शेक और अवगाहन, एवं पीडन करना हितकर है।

(५६२६) मूर्तिरसः

(वृ. यो. त. । त. १०४)

सूतं गन्धमयोभस्म समं सम्मेल्य भावयेत् ।
निर्गुण्डीपत्रतोयेन मुसलीकन्दवारिणा ॥
ततः सिद्धममुं माषमात्रं रसमनुत्तमम् ।
लीढ्वा क्षौद्रेण चाश्नीयाच्चूर्णमेषां पिचून्मितम्॥
षट्कटुत्रिफलापञ्चलवणावल्गुजस्य तत् ।
मेदः शोथाग्निमान्द्यामवात श्लेष्मगदप्रणुत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और लोह भस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें लोह भस्म मिलाकर सबको संभालूके पत्तों और मूसलीके रसमें १-१ दिन घोटकर सुरक्षित रक्खें।

इसे १ माशा मात्रानुसार शहदमें मिलाकर निम्न लिखित अनुपानके साथ सेवन करनेसे मेद, शोथ, अग्निमांद्य, आमवात और कफज रोग नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा-१-२ रत्ती।)

अनुपान—पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, हर्र, बहेड़ा, आमला, पांचो नमक (सेंधा, काला नमक, काच लवण, विड नमक और समुद्र नमक) और बावचीका चूर्ण बराबर बराबर लेकर सबको एकत्र मिला लें।

उपरोक्त रस खा कर १। तोला अनुपान चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये।

(अनुपानकी व्यवहारिक मात्रा-३-४ माशे।)

(५६२७) मूलकुठाररसः

(र. र. स. । अ. १५)

वरनागं तथा व्योमसत्त्वं शुल्बं च तीक्ष्णकम् ।
सर्वमेकत्र विद्राव्य क्षिप्त्वाऽऽलं चाल्पमल्पकम्॥
चालयेदनिशं यावत्तालकं त्रिगुणं खलु ।
ततस्तेन विमर्द्याथ पिष्टीं कुर्याद्रसेन तु ॥
ततो भल्लातकीवृक्षमूलान्तस्थां खनेच्च ताम् ।
मासादाकृष्य तां पिष्टीं गव्यदुग्धे विनिक्षिपेत्॥
ततो भल्लातकातैलं हृतं पातालयन्त्रतः ।
आयसे भाजने स्निग्धे पिष्टिकां तां निवेश्य च॥
प्रस्थमात्रं हि तत्तैलं जारयेदतियत्नतः ।
तत्तैलभावितैर्गन्धैः पुटित्वा भस्मतां नयेत् ॥
ततः कार्तिकमासोत्थकोरण्टदलजैः रसैः ।
रसं सम्मर्द्य सम्मर्द्य घर्मे संस्थाप्य मारयेत् ॥

तद्भस्म मेलयेत्पूर्वभस्मना समभागिकम् ।
वनसूरणनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीभकर्णिका ॥
वज्रवल्ली शिखीश्चैषां रसैः पिष्ट्वा विशोषयेत् ।
त्रिवारं मार्कवद्रावैर्भावयित्वा विशोषयेत् ॥
चूर्णीकृत्वा प्रयत्नेन क्षिपेत्काचकरण्डके ॥
सोयं मूलकुठारको रसवरो दीप्याग्निवेल्लोत्तमा-
संयुक्तः सघृतश्च वल्लतुलितः संसेवितो नाशयेत् ।
अर्शांस्याननासिकाक्षिगुदजान्यत्युग्रपीडानि च
प्लीहानं ग्रहणीं च गुल्मयकृतौ मान्द्यं च कुष्ठामयान् ॥

(१)

उत्तम जातिका शुद्ध सीसा, अभ्रक सत्व, शुद्ध ताम्र और तीक्ष्ण लोह समान भाग लेकर सबको एकत्र करके अग्निपर पिघलावें और उसमें थोड़ा थोड़ा शुद्ध हरतालका चूर्ण डालकर करछीसे चलाते रहें। जब समस्त धातुओंसे ३ गुनी हरताल का चूर्ण समाप्त हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतारकर उसमें उसके बराबर पारद मिलाकर भली भांति घोटकर पिष्टी (पिट्ठी) बनावें और उसे (मिट्टीके दृढ़ पात्रमें बन्द करके) भिलावेके वृक्षकी जड़में गाड़ दें, एवं १ मास पश्चात् निकालकर गोदुग्धमें डाल दें।

(१–२ दिन पश्चात्) लोहेकी कढ़ाईमें पाताल यन्त्रसे निकाला हुवा भिलावेका १ सेर तेल डालकर उसमें उक्त पिष्टी डालें और इतना पकावें कि समस्त तैल शुष्क हो जाय।

अब उपरोक्त विधि–निर्मित भल्लातक तैलमें घुटा हुवा शुद्ध गन्धक उपरोक्त पिष्टीके बराबर लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके यथा विधि सम्पुटमें बन्द करके पुट दें। बार बार इसी प्रकार गन्धक योगसे पुट देकर भस्म तैयार कर लें।

(२)

कार्तिक मासमें उत्पन्न हुवे पियाबांसेके पत्तोंके रसमें पारदको घोट घोटकर धूपमें सुखा कर भस्म बनावें।

(३)

अब नं. १ और नं. २ की भस्में बराबर बराबर लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके बनसूरण (जंगली जिमीकन्द); संभालू, महाराष्ट्री (जलपीपल), हस्तिकर्णी, वज्रवल्ली (हड़जोड़ी), चित्तामूल और भंगरेके रसकी ३–३ भावना देकर सुखावें और चूर्ण करके सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे ३–३ रत्ती रस अजवायन, चीता-मूल और बायबिड़ंगके चूर्ण तथा घृतके साथ नित्य सेवन करनेसे अर्श; मुख, नासिका और आंखोंके रोग; प्लीहा, संग्रहणी, गुल्म, यकृत्, अग्नि-मांद्य और कुष्ठ नष्ट होता है।

(५६२८) मृगजरसः

(र. र. । र. पि.)

मृतं सूतं मृतं तीक्ष्णं तुल्यं वासाद्रवैर्दिनम् ।
मर्दितं माषमात्रन्तु भक्षयेन्मृगजं रसम् ॥
सर्पाक्षीमधुना लेह्यमनु स्याद्रक्तपित्तके ॥

पारद भस्म (या रस सिन्दूर) और तीक्ष्ण लोह भस्म समान भाग लेकर दोनोंको १ दिन वासेके रसमें घोटें।

इसे १ माशा मात्रानुसार सेवन करनेसे रक्त-पित्त नष्ट होता है । (व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् सर्पाक्षी (गन्ध नाकुली) का चूर्ण शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

(५६२९) मृगमालारसः

(र. र. । प्रमेह.)

मार्कण्डीं त्रपुसं शीर्षं सुदग्धं मृगशृङ्गकम् ।
कार्पासबीजमज्जाश्च तुल्यमङ्कोलबीजकम् ॥
पेषयेन्महिषीतक्रैर्दिनैकं वटकीकृतम् ।
माषद्वयं सदा खादेन्मृगमाला प्रमेहजित् ॥
अक्षपाठाभयादार्वीकषायमनुपाययेत् ॥

मार्कण्डी (भुईं खेखसा) का चूर्ण, सीसा-भस्म, अगरका चूर्ण और हरिनके सींगकी भस्म तथा कार्पास बीज (बिनौले) की गिरी और अंकोल (ढेरा वृक्ष) के बीज समान भाग लेकर सबको एक दिन भैंसके तक्रमें खरल करके २-२ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे नित्य प्रति १ गोली खाकर बहेड़ा, पाठा, हर्र और दारुहल्दीका क्वाथ पीना चाहिये।

इनके सेवनसे प्रमेह नष्ट होता है ।

(५६३०) मृगशृङ्गभस्मयोगः

(र. र. । आमवाता.)

दग्धमनिर्गतधूमं मृग-
शृङ्गं गोघृतेन सह पीतम् ।
हृदयनितम्बजशूलं
हरति शिखीदारुनिवहमिव ॥

हरिनके सींगको इस प्रकार भस्म करें कि धुवां बाहर न निकले ।

इसे गोघृतके साथ पीनेसे हृदय और नितम्बकी पीड़ा तुरन्त शान्त हो जाती है ।

(मात्रा—२ से ४ रत्ती तक ।)

(५६३१) मृगाङ्कपोटलीरसः (१)

(वृ नि. र. ; र. का. धे. । क्षय. ; यो. चि. म. । अ. ७; र. प्र. सु. । अ. ८)

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत् ।
तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत् ॥
काञ्चनाररसेनैव ज्वालामुख्यारसेन वा ।
लाङ्गल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥
ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत् ।
पिष्टमौक्तिकचूर्णं च हेमद्विगुणमावपेत् ॥
तेषु सर्वसमं गन्धं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् ।
तेषां कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥
पश्चान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत् ।
शरावसम्पुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥
लवणापूरिते भाण्डे धारयेत्तं च सम्पुटम् ।
मुद्रां दत्वा शोषयित्वा बहुभिर्गोमयैः पुटेत् ॥
ततः शीते समाहृत्य गन्धं सूतसमं क्षिपेत् ।
धृतं च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्गजपुटेन च ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा गुञ्जायुग्मं प्रकल्पयेत् ।
अष्टभिर्मरिचैर्युक्तो कृष्णात्रययुतोथवा ॥
विलोक्य देयो दोषादीनेकैका रसरक्तिका ।
सर्पिषा मधुना वापि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥
लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ।
श्लेष्माणं ग्रहणीं कासं श्वासं क्षयमरोचकम् ॥
मृगाङ्कोयं रसो हन्यात्कृशत्वं बलहानिताम् ॥

४ भाग शुद्ध पारदमें ४ भाग शुद्ध सोनेके कण्टकवेधी पत्र डालकर अच्छी तरह घोटें। जब स्वर्ण पारदमें मिल जाए तो उसे १-१ दिन कचनार, हुलहुल और कलियारीके रसमें घोट कर उसमें १ भाग सुहागा और ८ भाग मोतीका चूर्ण× तथा १७ भाग शुद्ध गन्धक डालकर खरल करें। तदनन्तर उसका गोला बनाकर उसके ऊपर चार तह किया हुवा कपड़ा लपेट दें और उस पर मिट्टीका लेप करके सुखा लें।

अब इस गोलेको एक सम्पुटमें बन्द करके उसके ऊपर ३-४ कपड़ मिट्टी करके सुखालें। फिर इस सम्पुटको सेंधा नमकके बारीक चूर्णसे भरी हुई हाण्डीमें नमकके बीचमें दबा दें और हाण्डीके मुखपर शराव ढक कर सन्धिको अच्छी तरह बन्द कर दें; एवं सुखाकर गजपुटमें फूंक दें।

इसके पश्चात् पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसमें ४ भाग शुद्ध गन्धक मिलाकर पूर्वोक्त रसोंमें १-१ दिन खरल करें और उसी प्रकार शरावसम्पुटमें बन्द करके उसे लवणकी हाण्डीमें रख कर गजपुटकी अग्नि दें। जब पुट स्वांग शीतल हो जाय तो रसको निकालकर पीसकर सुरक्षित रक्खें।

इसे दोषादिका विचार करके १ या २ रत्ती मात्रानुसार ८ काली मिर्चोंके चूर्ण या ३ पिप्पलीके चूर्णके साथ मिला कर दोषानुसार घी या शहदमें चटानेसे कफ, ग्रहणी दोष, खांसी, श्वास, क्षय, अरुचि, कृशता और निर्बलताका नाश होता है।

×रसप्रकाशसुधाकरमें मोतीका अभाव है।

इस पर "लोकनाथ रस" के समान पथ्य पालन करना चाहिये।

(५६३२) मृगाङ्कपोटलीरसः (२)

(र. र. स. । अ. १४)

शङ्खनाभिं गवां क्षीरैः पेषयेन्निष्कषोडश।
तेन मूषा प्रकर्तव्या तन्मध्ये भस्मसूतकम्॥
निष्कार्धं गन्धकात्त्रीणि चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत्
रुध्वा तद्वेष्टयेद्वस्त्रे मृत्तिकां लेपयेद्बहिः॥
शोष्यं गजपुटे पच्यान्मूषया सह चूर्णयेत्।
गुञ्जामात्रः क्षयं हन्ति मृगाङ्कपोटलीरसः॥

१६ निष्क शंखकी नाभिको गोदुग्धमें अत्यन्त महीन पीसकर उसकी मूषा (ढकन समेत) बना कर सुखा लें। अब आधा निष्क (२॥ माशे) पारद भस्म (या रस सिन्दूर) और ३ निष्क शुद्ध गन्धक को एकत्र खरल करके उस मूषामें डालकर उसके मुखको अच्छी तरह बन्द करदें एवं उस पर कपड़ा लपेट कर उसके ऊपर मिट्टीका (२ अंगुल मोटा) लेप करके सुखा लें।

अब इसे गजपुटमें फूंक दें और स्वांग शीतल होने पर निकाल कर ऊपरसे मिट्टी और कपड़ेकी राखको छुड़ाकर शंखकी मूषा सहित औषधको पीस लें।

इसके सेवनसे क्षय रोग नष्ट होता है।

मात्रा १ रत्ती।

(५६३३) **मृगाङ्करसः** (१)

(रसे. सा. सं. ; र मं ; भै. र. । यक्ष्मा. ; यो. तं. । त. २७ ; र. का. धे. । क्षय. ; र. चं. ; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा. ; वृ. यो. त. । तं. ७६; यो. र. । राजयक्ष्मा.)

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् ।
गन्धकश्च समं तेन१ रसतुल्यन्तु* टङ्कणम् ॥
तत्सर्वं गोलकं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णेथ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥
मृगाङ्कसंज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
गुञ्जाचतुष्टयश्चास्य मरिचैः सह भक्षयेत् ॥
पिप्पलीदशकैर्व्वापि मधुना सह लेहयेत् ।
वृन्ताकबिल्वतैलानि कारवेल्लञ्च वर्जयेत् ।
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चापि विवर्जयेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध स्वर्णके पत्र दो भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर घोटें । जब स्वर्ण पारदमें मिल जाय तो उसमें २ भाग मोतीका चूर्ण और १ भाग (या ४ भाग) शुद्ध गन्धक एवं १ भाग सुहागा मिलाकर सबको काञ्जीमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखाकर शराव सम्पुटमें बन्द करके सेंधा नमकके चूर्णसे भरी हुई हाण्डीमें नमकके बीचमें रखकर ४ पहर पाक करें । तदनन्तर जब हाण्डी स्वांग-शीतल हो जाय तो सम्पुटमें से औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे काली मिर्चके (आधा माशा) चूर्ण या १० पिप्पलीके चूर्णमें मिलाकर शहदके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्माका नाश होता है ।

मात्रा—४ रत्ती । (४ रत्तीकी २-३ मात्रा करें ।)

परहेज—बैंगन, बेल, तेल और करेला न खावें । स्त्री समागमका नाम भी न लें और क्रोध न करें ।

(५६३४) **मृगाङ्करसः** (२)

(र. चं. । वात.)

श्वेतमल्लस्तु भागैको तत्समं तालकं शिला ।
कांक्षिका मल्लभागा तु सर्वं खल्ले विचूर्णयेत्॥
पञ्चरत्नस्य विधिना पाचयेन्मन्दवह्निना ।
स्वर्णाभो ऊर्ध्वगो ग्राह्यो मृगाङ्को रस उत्तमः ॥
सर्ववातगदे चैव हिक्काया कुष्ठरोगिणे ।
घृतशर्करया देयो दुग्धान्नं पथ्यमुत्तमम् ॥
तक्रान्नं वा शीतवारि उष्णद्रव्यं विवर्जयेत् ॥

शुद्ध सफेद सोमल (संखिया), शुद्ध हरताल, शुद्ध मनसिल और फिटकरी समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर "**मल्ल पञ्च रत्न**" में कथित विधिके अनुसार मन्दाग्निपर पाक करें और फिर ऊपरके पात्रमें लगे हुवे सुनहरे रंगके फूल (जौहर) को छुड़ाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह रस समस्त वातज रोगों, हिक्का और कुष्ठको नष्ट करता है ।

---

* रसपादमिति पाठान्तरम् ।

१. 'गन्धकश्च समं तेन' का अर्थ कई टीकाकारोंने "**गन्धक मोतीके बराबर**" किया है परन्तु इसका अर्थ '**गन्धक पारदके समान**' भी हो सकता है और अनेक ग्रन्थोंमें "रस प्रमाणाबलिः" पाठ है भी । कई टीकाकारोंने गन्धक ४ भाग भी लिखा है ।

अनुपान-घी और खांड ।

पथ्य-दूध, भात या तक्र भात और शीतल जल ।

अपथ्य-उष्ण द्रव्य ।

(**मात्रा**-२ चावल ।)

(५६३५) मृगाङ्करसः (३)

(वृ. नि. र. । क्षय.)

रसवलितपनीयं योजयेत्तुर्यभागं
तदनु युगलभागं मौक्तिकानां शुभानाम् ।
यवजचरणभागं मर्दयेत्सर्वमेतद्-
दिनमपि तुषवारा गोलकं लघ्वमत्रे ॥
विधाय मुद्रां विदधीत भाण्डे
चुल्यां समुद्रे लवणेन पूर्णे ।
दिनं पचेच्चानु मृगाङ्कनामा
क्षयाग्निमान्द्यग्रहणीविकारे ॥
योज्यः सदा वल्लिजसर्पिषा वा
कृष्णा मधुभ्यां सततं त्रिगुञ्जः ।
वर्ज्यं सदा पित्तकरं हि वस्तु
लोकेशवत्पथ्यविधिर्निरुक्तः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और शुद्ध स्वर्ण पत्र १-१ भाग, मोतीका चूर्ण २ भाग तथा जवाखार चौथाई भाग लेकर प्रथम पारदमें सुवर्ण डालकर घोटें और जब दोनों मिल जाएं तो अन्य औषधियां डालकर सबको १ दिन काञ्जीके साथ घोटकर गोला बना लें । इसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके उसे समुद्र नमकके चूर्णसे भरी हुई हाण्डीमें नमकके बीचमें रक्खें और उस हाण्डीको चूल्हे पर चढ़ाकर १ दिनकी अग्नि दें । तत्पश्चात् हाण्डीके स्वांग शीतल हो जानेपर सम्पुटमें से औषधको निकालकर खरल करके रक्खें ।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ अथवा पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे क्षय, अग्निमांद्य और संग्रहणीका नाश होता है ।

मात्रा-३ रत्ती ।

पथ्यापथ्य-इस पर 'लोकनाथ रस' के समान पथ्य पालन करना और पित्तकारक द्रव्योंका त्याग करना चाहिये ।

(५६३६) मृगाङ्करसः (४)

(हेममृगाङ्करसः)

(र. र. । क्षय.)

रसभस्म स्वर्णभस्म निष्कं निष्कं प्रकल्पयेत् ।
शङ्खगन्धकमुक्तानां द्वौ द्वौ निष्कौ तु चूर्णयेत् ॥
मुक्ताभावे[1] वराटी वा रसपादं च टङ्कणम् ।
वह्निचारनाल[2]क्वाथेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥
तद्गोलकं विशोष्याथ भाण्डे लवणपूरिते ।
पचेद्यामचतुष्कञ्च मृगाङ्कोयं महारसः ॥
रोगराजनिवृत्त्यर्थं चतुर्गुञ्जामितं घृतैः ।
दातव्यं मरिचैः सार्धं पिप्पली मधुनापि वा ॥

पारद भस्म (या रस सिन्दूर) और स्वर्ण भस्म १-१ निष्क तथा शङ्ख भस्म, शुद्ध गन्धक और मोतीका चूर्ण; मोतीके अभावमें कौड़ी भस्म २-२ निष्क और सुहागा चौथाई निष्क लेकर सबको एकत्र पीसकर चीतामूलके क्वाथ और

---

१ मुक्तापादमिति पाठान्तरम् ।

२ वरारसेनेति पाठान्तरम् ।

कांजीमें २-२ पहर घोटकर गोला बनावें और उसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके ४ पहर लवण यन्त्रमें पकावें और फिर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ अथवा पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्माका नाश होता है।

मात्रा-४ रत्ती।

(५६३७) मृगाङ्करसः (५) (महा)

(र. चं. ; र. सा. सं. ; भै. र.; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

निरुत्थभस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्मसूतकम्।
द्विगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपुच्छं चतुर्गुणम् ॥
मृततार्क्ष्यं च पञ्चांशं तारभस्म चतुर्गुणम्।
सप्तभागं प्रवालं च रसतुल्यं च टङ्कणम् ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥
लवणैः पात्रमापूर्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत्।
तन्मुखं तु मृदा रुध्वा पचेद्यामचतुष्टयम् ॥
आकृष्य चूर्णयेत् शुद्धं चतुःषष्टीविभागतः।
वज्रं वा तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशिकम् ॥
महामृगाङ्कः खलु एष सिद्धः
श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम्।
वल्लास्य सेव्यो मरिचाज्ययुक्तः
सेव्योऽथ वा पिप्पलिकासमेतः ॥
तत्रोपचाराः कर्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः।
बल्यं वृष्यं च भोक्तव्यं त्यजेत्सूतविरोधि यत् ॥
यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वर-
गदं गुल्मं तथा विद्रधिम्।
मन्दाग्निं स्वरभेदकासम-
रुचिं वान्तिं च मूर्च्छां भ्रमिम् ॥
अष्टावेव महागदान्ग्रहं
गदान् पाण्ड्वामयं कामलान्।
पित्तोत्थांश्च समग्रकान् बहु-
विधानन्यांस्तथा नाशयेत् ॥

निरुत्थ स्वर्ण भस्म १ भाग, पारद भस्म २ भाग, मुक्ता भस्म २ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, स्वर्ण माक्षिक भस्म ५ भाग, चांदी भस्म ४ भाग, प्रवाल (मूंगा) भस्म सात भाग और सुहागा २ भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर ३ दिन बिजौरे नींबूके रसमें घोटें और उसका गोला बनाकर तेज धूपमें सुखा लें। तदनन्तर इस गोलेपर कपड़ा लपेटकर उसपर १ अंगुल मोटा मिट्टीका लेप कर दें और उसे सुखाकर नमकके चूर्णसे भरी हुई हाण्डीमें नमकके बीच में रख दें; तथा हाण्डीके मुख पर शराव ढक कर सन्धिको मिट्टीसे बन्द करके ४ पहरकी अग्नि दें। तत्पश्चात् हाण्डीके स्वांग शीतल होनेपर उसमेंसे औषधको निकालकर उसमें उसका ६४ वां भाग हीराभस्म* और उसके अभावमें १६ वां भाग वैक्रान्त भस्म मिलाकर खरल करके रक्खें।

मात्रा-३ रत्ती।

अनुपान-काली मिर्चका चूर्ण और घी अथवा पीपलका चूर्ण और घी।

*भै. र. व. में हीरक भस्म १ भाग लिखी है।

इसके सेवनसे बहुरूपयक्ष्मा, ज्वर, गुल्म, विद्रधि, अग्निमांद्य, स्वर-भेद, खांसी, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, भ्रम, अष्ट महारोग, ग्रहपीड़ा, पाण्डु, कामला, पित्तज रोग और अन्य अनेक रोग नष्ट होते हैं।

इसके सेवन कालमें क्षय रोगोचित पथ्यादि पालन करना; और रसविरुद्ध आहार विहारका त्याग करके बल-वीर्य-वर्द्धक आहार सेवन करना चाहिये।

(५६३८) मृगाङ्करसः (६) (महा)

(र. र.; र. का. धे. । राजयक्ष्मा; रसे. चि. म. ।× अ. ९; यो. चि. म. । अ. ७)

शुद्धं सूतं स्वर्णभस्मजम्बीरैर्मर्दयेद्दिनम् ।
तयोर्द्विगुणितं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यन्तु गन्धकम् ॥
टङ्कणं गन्धकार्द्धञ्च सर्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ।
मर्द्यं यामैश्चतुर्भिस्तद्वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत् ॥
दोलायन्त्रे चारनाले यामादुद्धृत्य शोषयेत् ।
ततो मृन्मयभाण्डान्तर्लवणञ्चाङ्गुलद्वयम् ॥
ऊर्द्ध्वाधः पृष्ठतः कृत्वा गोलकं वस्त्रवेष्टितम् ।
लवणैः पूरयेद्भाण्डमन्धयित्वा दिनं पचेत् ॥
चुल्ल्यां क्रमाग्निसिद्धः स्याद्रसो महामृगाङ्कः ।
अनेनैव प्रकारेण मृगाङ्कान्पाचयेद्रसान् ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थं देयं सिता घृतन्तु तैः ।
दशभिर्मरिचैः सार्द्धं पिप्पलीमधुनापि वा ॥

× रस कामधेनु, रसे. चि. म. में-
(१) ताम्रके स्थानमें मुक्ता है।
(२) सुहागा स्वर्णसे आधा है।

शुद्ध पारद और स्वर्ण भस्म १-१ भाग लेकर दोनोंको एकत्र करके एक दिन जम्बीरी नींबूके रसमें घोटें और फिर उसमें ४ भाग ताम्र भस्म, ६ भाग शुद्ध गन्धक और ३ भाग सुहागा मिलाकर सबको ४ पहर जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर गोला बनावें; और उसे (सुखाकर) चार तह किये हुवे कपड़े में लपेट कर दोलायन्त्र-विधिसे १ पहर कांजीमें पकावें। तत्पश्चात् इस गोलेको सुखाकर एक कपड़ेमें लपेटें और उस पर मिट्टीका एक अंगुल मोटा लेप करदें। अब इसे सुखा कर, एक हाण्डीमें नीचे दो अंगुल सेंधा नमकका चूर्ण बिछाकर, उसपर रक्खें और हाण्डीको मुंह तक सेंधा नमकके चूर्णसे भर दें। इसके पश्चात् हाण्डीके मुखको बन्द करके, उसे चूल्हेपर चढ़ाकर १ दिन क्रमशः मृदु मध्यम तीव्राग्नि दें। तदनन्तर जब हाण्डी स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे रसको निकाल कर खरल करें।

इसे १० काली मिर्चोंके चूर्ण और घी तथा मिश्रीमें मिलाकर अथवा पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा रोग नष्ट हो जाता है।

(५६३९) मृगाङ्करसः (७) (स्वल्प)

(र. र.; र. चं.; र. का. धे.; र. रा. सु. । क्षय.)

रसभस्महेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं पृथक् ।
पूर्ववदनुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः ॥

समान भाग पारद भस्म और स्वर्ण-भस्म एकत्र मिलाकर पीपलके चूर्ण और शहदके साथ

अथवा काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा रोग नष्ट होता है ।

मात्रा २ रत्ती ।

नोट—"**राज मृगाङ्क रस**" रकारादि रस-प्रकरणमें और "**स्वर्ण राज मृगाङ्क रस**" सकारादि रस प्रकरणमें देखिये ।

(५६४०) मृतकन्दर्पजीवनरसः

(र. चं. । वाजीकरण.)

रसभस्माभ्रकं वङ्गं तीक्ष्णं कस्तूरिकाञ्चनम् ।
आकल्लकं लवङ्गं च दरदं जातिपत्रिका ॥
जातिफलं धूर्तबीजं सममेकत्र मर्दयेत् ।
ताम्बूलीस्वरसेनैव तथाऽऽर्द्रकरसेन वै ॥
वल्लैकप्रमिता मात्रा लेहयेन्मधुसर्पिषा ।
भृतशीतं पयः पीत्वा ताम्बूलं भक्षयेत्सुधीः ॥
मासमात्रप्रयोगेन मृतकन्दर्पजीवनम् ।
रमेद्रामाशतं नित्यं कामतुल्यो नरो भवेत् ॥
सतताभ्यासयोगेन वृद्धोऽपि तरुणायते ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितवर्जितः ॥
सर्वरोगान्निहन्त्याशु नात्र कार्या विचारणा ।
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
स्निग्धान्नं योजयेन्नित्यं तैलाम्लं वर्जयेत्सुधीः ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, बङ्ग भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, कस्तूरी, स्वर्ण भस्म, अकरकरा, लौंग, शुद्ध हिंगुल, जावत्री, जायफल और धतूरके शुद्ध बीज, समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर १-१ दिन पान और अदरकके रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे शहद और घीमें चाटकर ऊपरसे पका कर ठंडा किया हुवा दूध पीना और फिर पान खाना चाहिये ।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे सैकड़ों स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति प्राप्त होती तथा शरीर कामदेव-सदृश रूपवान हो जाता है ।

इसे दीर्घ काल तक सेवन करनेसे वृद्ध पुरुष युवाके समान हो जाता है । इसके सेवनसे बलि-पलित-रहित १०० वर्षकी रोग रहित आयु प्राप्त होती है ।

इसे यथोचित अनुपानके साथ अनेक रोगोंमें प्रयुक्त कर सकते हैं ।

इस पर नित्य स्निग्धान्न सेवन करना और तेल तथा खटाईका त्याग करना चाहिये ।

(५६४१) मृतजीवनरसः

(र. र. स. । अ. १२)

कुष्माण्डचूर्णतिलजैः प्रविशुद्धतालं
गाढं विमर्द्य सुषवीसलिलेन तुल्यम् ।
सूतेन हिङ्गुलभुवा सिकताख्ययन्त्रे
गोलं विधाय परिवृत्तकपालमध्ये ॥
पत्रेण तं दिनपतेश्च पिधाय रुध्वा
सन्धिं तयोर्गुडसुधाखटिकाशिवाभिः ।
वह्नौ पचेन्मृदुनि पात्रशिरःस्थशाली-
वैवर्ण्यमात्रमवधिं प्रविधाय धीमान् ॥
वल्लं ततः सुरसमिश्रममुष्य दद्या-
त्सर्पिः सिताकणमधूनि पयोऽनुपेयम् ।
जेतुं ज्वरान्प्रविषमानिह वान्तिशान्त्यै
मौलौ सुशीतलजलस्य ददीत धाराम् ॥

अथामयान्तं रसराजमौलिं
भूषामणिं तं मृतजीवनाख्यम्।
सुधारसेनेव रसेन येन
सञ्जीवनं स्यात्सहसाऽऽतुराणाम् ॥

पेठेके रस, चूनेके पानी और तिलके तेलमें शुद्ध की हुई हरताल तथा हिंगुलोत्थ पारद समान भाग लेकर दोनोंको करेलेके रसके साथ एकत्र घोट कर गोला बनावें; और उसे सुखाकर एक मृत्पात्रमें रक्खें तथा उसके मुख पर शुद्ध ताम्रका ढक्कन ढककर दोनोंकी सन्धिको गुड़, चूना, खिड़िया मिट्टी और हर्रके कल्कसे बन्द कर दें। तदनन्तर उसे बालुकायन्त्रमें रखकर उसके ऊपर दो चार धानके दाने डालकर उस यन्त्रको अग्नि पर चढ़ा दें और उस समय तक मन्दाग्नि पर पकावें जब तक कि वे धान विकृत न हो जाएं। तत्पश्चात् पात्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस कर रक्खें।

इसे १ वल्ल (३ रत्ती) मात्रानुसार तुलसीके स्वरसके साथ खिलाकर ऊपरसे दूधमें घी, मिश्री, पीपलका चूर्ण और शहद डालकर पिलाना चाहिये।

इसके सेवनसे विषम ज्वर और वमन नष्ट होते हैं।

यदि दाह हो तो शिर पर शीतल जलकी धार छोड़नी चाहिये।

(५६४२) मृतप्राणदायी रसः

(वृ. नि. र. । सर्व ज्वरा.)

रसं गन्धकं टङ्कणं वत्सनाभं
समं मर्दयेद्धूर्तबीजेन यामम्।
ततो वत्सनाभेन हैमैश्च बीजै
रसैर्भावयेच्च त्रिवारं त्रिवारम् ॥
कटुत्र्यादिजैः पञ्चवारं ततःस्या-
दयं सूतराजो मृतप्राणदायी।
ज्वरे सन्निपाते ज्वरे नूतने वा
महाश्लेष्मरोगे च गुञ्जाप्रमाणम् ॥
पयः पायसं दाधिकं तक्रभक्तं
सिता वा नवे हि ज्वरे चाऽऽर्द्रनीरैः।
ज्वरे चातिसारे घनद्रावयुक्तं
ग्रहण्यर्शसां क्षौद्रयुक्तं सिताऽऽढ्यम् ॥
चले स्नायुगे त्रिकटुवह्निपीतं
प्रकम्पेऽपबाहूकएकाङ्गवाते।
अपस्मारमुन्मादवातं निहन्ति
प्रयुक्तः सितापञ्चभिर्धूर्तबीजैः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग (मीठा विष) और धतूरेके शुद्ध बीजोंका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर १ पहर खरल करें और फिर उसे क्रमशः बछनाग तथा धतूरके बीजोंके काथकी ३-३ एवं त्रिकुटेके काथकी ५ भावना दें।

मात्रा–१ रत्ती।

पथ्य–दूध, खीर, दही, तक्र, भात और मिश्री।

अनुपान–इसे नवीन ज्वरमें अद्रकके रसके साथ; ज्वरातिसारमें मोथेके काथके साथ; ग्रहणीमें शहदके साथ; अर्शमें मिश्रीके साथ; स्नायुगत वायुमें त्रिकटु और चीतेके काथके साथ एवं प्रकम्प (कम्पवात), अपबाहुक, एकाङ्गवात, अपस्मार

और उन्मादमें धतूरेके ५ बीजोंके चूर्ण और मिश्रीके साथ देना चाहिये।

यह रस नवीन ज्वर, सन्निपात और कफ रोगोंमें उत्तम है।

(५६४३) **मृतसञ्जीवनरसः** (१)

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

नागं सुद्रावितं कृत्वा शुद्धं सूतं समं क्षिपेत् ।
सूताद्द्विगुणगन्धं च चूर्णीकृत्य शनैः शनैः ॥
निक्षिप्य चालयेद्दण्डैः सार्द्रनिर्गुण्डिसम्भवैः ।
नागं सूतं मृतं ज्ञात्वा हिमज्वालानिवर्तितम् ॥
चुल्ल्यादुत्तार्य यत्नेन क्षारं धवलनाभिजम् ।
चूर्णितं सूततुल्यं च निक्षिपेन्मर्दयेत्तथा ॥
दरदं पारदं तुल्यं योजयेत्सम्प्रदायवित् ।
यवनेष्टभवं चूर्णं तत्तुल्यं योज्य यत्नतः ॥
विमर्द्य वस्त्रपूतं च कृत्वा रक्षेत् सुभाजने ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा आर्द्रकस्य रसेन च ॥
जिह्वके सन्निपाते च प्रकुर्यात्प्रतिसारणम् ।
प्रकृतिं चानयेज्जिह्वास्तम्भं चापि हनुग्रहम् ॥
तथा च पिच्छलास्यं च मन्यास्तम्भशिरोग्रहम्।
अर्दितं च जयेदाशु श्रीमद्गोरक्षशासनात् ॥
गुञ्जामात्रं च दातव्यं बहुदोषे धृते सति ।
शुष्कां विचेष्टितां जिह्वां शुकजिह्वोपमां तथा ॥
प्रकृतिं चानयेत्क्षिप्रं नात्र कार्य्या विचारणा ।
मृतसञ्जीवनो ह्येष सम्प्रदायक्रमागतः ॥
नागादिद्रावणार्थेषु लोहपात्रं प्रकल्पयेत् ॥

१ भाग शुद्ध सीसेको लोहेकी कढ़ाईमें पिघला कर उसमें १ भाग शुद्ध पारद डालें और फिर थोड़ा थोड़ा शुद्ध गन्धकका चूर्ण डालकर संभालुके हरे (ताज़े) डण्डेसे चलाते रहें। जब दो भाग गन्धक जल जाय और पारद तथा सीसेकी भस्म हो जाय तो अग्नि देनी बन्द कर दें और कढ़ाईको चूल्हेसे नीचे उतार लें तथा उसमें १ भाग शंखनाभिकी भस्म मिलाकर घोटें फिर १-१ भाग शुद्ध हिंगुल और पारद तथा ल्हसनका चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें और सूक्ष्म चूर्ण हो जाने पर कपड़ेसे छान कर सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे १-२ रत्ती रस अद्रकके रसमें मिलाकर जिह्वक सन्निपातमें रोगीकी जिह्वा पर मलनेसे जिह्वा-स्तम्भ, गलग्रह, पिच्छिलास्यता (मुंहकी चिपचिपाहट), मन्यास्तम्भ, शिरोग्रह और अर्दितका नाश हो कर जिह्वा प्रकृतिस्थ हो जाती है।

यदि दोषोंकी प्रबलता हो तो इसमेंसे १ रत्ती रस खिलाना भी चाहिये। इसके खिलानेसे जिह्वाकी शुष्कता और जड़ता दूर हो जाती है तथा उसका रंग भी ठीक हो जाता है।

(५६४४) **मृतसञ्जीवनरसः** (२)

(यो. र. ; रसें. सा. स. । ज्वरातिसार. ; वृ. यो. त. । त. ६४ ; र. र. ; भै. र. । ज्वरा. ; रसें. चि. म. । अ. ९; र. का. धे. । अति.)

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत् ।
सर्व्वतुल्यं मृतञ्चाभ्रं मर्द्यं धूस्तूरजैर्द्रवैः ॥
सर्पाक्ष्याश्च द्रवैर्यामं कषायेणाथ भावयेत् ।
धातक्यतिविषा मुस्तं शुण्ठी जीरकबालकम् ॥
यमानी धान्यकं बिल्वं पाठा पथ्या कणान्वितम्
कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं बालदाडिमम् ॥

प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्कुट्टितं क्वाथयेज्जलैः ।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादावशेषितम् ॥
अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम् ।
रुद्ध्वा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥
मृतसञ्जीवनो नाम चास्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥
षट्प्रकारमतीसारं साध्यासाध्यं जयेद्ध्रुवम् ॥
नागरातिविषा मुस्तं देवदारु कणावचा ।
यमानी बालकं धान्यं कुटजत्वक् हरीतकी ॥
धातकीन्द्रयवौ बिल्वं पाठा मोचरसं समम् ।
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपानं सुखावहम् ॥

शुद्ध पारद और गन्धक ४-४ भाग, शुद्ध बछनाग (मीठा विष) १ भाग और अभ्रक भस्म ९ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें बछनाग तथा अभ्रक मिलाकर सबको १-१ पहर धतूरे और सर्पाक्षीके रसमें घोटें और फिर धायके फूल, अतीस, नागरमोथा, सोंठ, जीरा, सुगन्धबाला, अजवायन, धनिया, बेलगिरी, पाठा, हर्र, पीपल, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, कैथ और कच्चा अनार १।-१। तोला लेकर सबको कूट कर आठ गुने पानीमें पकावें और जब चौथा भाग रह जाए तो छान लें, तदनन्तर इस क्वाथसे उक्त रसको ३ दिन खरल करके शराव-सम्पुटमें बन्द करें और उसे थोड़ी देर बालुका यन्त्रमें मन्दाग्नि पर पका लें ।

इसमेंसे ४ रत्ती औषध उचित अनुपानके साथ देनेसे छः प्रकारके असाध्य अतिसार भी नष्ट हो जाते हैं ।

अनुपान—सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पीपल, बच, अजवायन, सुगन्धबाला, धनिया, कुड़ेकी छाल, हर्र, धायके फूल, इन्द्रजौ, बेलगिरी, पाठा और मोचरस समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

उपरोक्त रस खा कर यह चूर्ण (१-१॥ माशा) शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

(५६४५) **मृतसञ्जीवनो रसः** (३)

(भै. र.; र. का. धे.; र. चं., र. म. । ज्वरा.; र. रा. सु. । ज्व.)

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो जेपालस्य त्रयो मताः।
द्वौ भागौ टङ्कणस्यैव भागैकममृतस्य च ॥
तत्सर्वं मर्दयेत्सूक्ष्मं शुष्कं यामं भिषग्वरः ।
शृङ्गवेराम्बुना देयो व्योषचित्रकसैन्धवैः ॥
गुञ्जाद्वयमितस्तापं हरत्येष विनिश्चयः ।
घनसारेण युक्तेन चन्दनेन विलेपयेत् ॥
विदध्यात्कांस्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं भिषक् ।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिक्षुसंयुतम् ॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे ।
आमवाते वातशूले गुल्मे प्लीह्नि जलोदरे ॥
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सततज्वरे ।
अग्निमांद्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः ॥
मृतसञ्जीवनं नाम ख्यातोऽयं रससागरे ॥

शुद्ध हिंगुल ४ भाग, शुद्ध जमालगोटा ३ भाग, सुहागेकी खील २ भाग और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) १ भाग लेकर सबको १ पहर तक अच्छी तरह खरल करके महीन चूर्ण बनावें ।

इसे सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता और सेंधा नमकके चूर्णमें मिलाकर अदरकके रसके साथ देनेसे सन्निपात, विषमज्वर, आमवात, वात शूल, गुल्म, प्लीहा; जलोदर, शीतपूर्व और दाह पूर्व ज्वर और अग्निमांद्य तथा वायुका नाश होता है।

मात्रा–२ रत्ती।

यदि ज्वरमें सन्ताप अधिक हो तो चन्दन और कपूरको एकत्र घिसकर शरीर पर लेप करना तथा नाभिपर कांस्य पात्र रखकर उसमें शीतल जलकी धारा छोड़नी चाहिये।

पथ्य–शालि चावलोंका भात, तक्र और ईखका रस।

(५६४६) **मृतसञ्जीवनो रसः** (४)

(वृ. नि. र. । ज्वरा. ; रसे. सा. सं. ; भै. र. । ज्वरा. ; र. रा. सु. । ज्वरा. ; र. का. धे. । ज्वरा. ; र. र. स. । अ. १२)*

शुद्धसूतं द्विधागन्धं खल्वे तत्कज्जलीकृतम्।
अभ्रलोहकयोर्भस्म ताम्रभस्मसमं समम् ॥
विषं तालं वराटञ्च शिलाहिङ्गुलचित्रकान्।
हस्तिशुण्डी चातिविषा त्र्यूषणं हेममाक्षिकम् ॥
चूर्णं विमर्दयेद्द्रावैरार्द्रकस्य दिनत्रयम्।
निर्गुण्डीं विजयाद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत्पुनः ॥

*र. का. धे. तथा र. रा. सु. में-(१) कौड़की भस्मके स्थानमें कंकुष्ठ लिखा है।

(२) "भृंगी कुम्भी मेघनादं प्रति चूर्णं रसांशकम्" पाठ चौथी पंक्तिके पश्चात् अधिक है।

(३) छठी पंक्तिके पश्चात् "जम्बीरस्य च चाङ्गेर्या द्रवैः सम्मर्दयेद्दिनम्" पाठ अधिक है।

काचकूप्यां निवेश्याथ वालुकायन्त्रगे पचेत्।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मर्दयेदार्द्रकैर्द्रवैः ॥
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं शङ्करोदितः।
मृतोपि सन्निपातार्त्तो जीवत्येव न संशयः ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें १-१ भाग अभ्रक भस्म, लोह भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध बछनाग, शुद्ध हरताल, कौड़ी भस्म, शुद्ध मनसिल, शुद्ध हिंगुल, चीता, हाथीसूंडी, अतीस, सोंठ, मिर्च, पीपल और स्वर्णमाक्षिक भस्म मिलाकर सबको ३-३ दिन अदरक, संभालू और भांगके रसमें घोट कर आतशी शीशीमें भरकर बालुका-यन्त्रमें २ पहरकी अग्नि दें। तदनन्तर शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे १ दिन अदरकके रसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें।

इसे खिलानेसे मृतप्रायः सन्निपात रोगी भी स्वस्थ हो जाता है।

(५६४७) **मृतसञ्जीवनो रसः** (५)

(र. चं. ; र रा. सु. । वातव्याधि)

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धं विषसंयुतम्।
टङ्कणं दन्तिबीजं च ह्यार्द्रकस्य रसेन वै ॥
एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे मर्दयेत्प्रहरद्वयम्।
भानुदुग्धैर्महोदर्या द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥
वातव्याधिमूरुस्तम्भमामवातं विशेषतः।
ग्रहण्यर्शोविकाराश्च ज्वरमष्टविधं तथा ॥
निहन्ति तत्क्षणादेव तमः सूर्योदयो यथा।
मृतसञ्जीवनो नाम प्रख्यातो रससागरे ॥

शुद्ध हिंगुल ४ भाग, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), सुहागेकी खील और शुद्ध जमालगोटा १-१ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके अदरकके रस, आकके दूध और महा शतावरके रसमें २-२ पहर घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे वातव्याधि, ऊरुस्तम्भ, आमवात, ग्रहणी, अर्श और आठ प्रकारके ज्वरोंका नाश होता है।

(५६४८) **मृतसञ्जीवनीगुटिका**

(र. सं. क.। उल्लास ५.; र. का. धे.। ज्वर. अ. १)

रसराजशुल्बगन्धकसुर-
तिक्तैः पीतभृङ्गमरिचैश्च ।
ब्राह्मीद्वितयरसाढ्या
गुटिकाः कार्याश्च चणकाभाः ॥
एका देया प्रथमं त्रिदोष-
विकलस्य मूर्च्छितस्यापि ।
अन्या मुहूर्तपरतः प्रहरादन्याऽपरा नैव ॥
जीवति मृतोऽपि पुरुष-
स्त्रिदोषजान्विततन्द्रिकायुक्तः ।
श्रीनागार्जुनगदिता गुटिका
मृतसञ्जीवनी ख्याता ॥

शुद्ध पारा, ताम्र भस्म, शुद्ध गन्धक, देवदारु, कुटकी, हरताल भस्म और पीले फूलका भंगरा तथा काली मिर्च समान भाग लेकर सबको १-१ दिन ब्राह्मी और मण्डूकपर्णीके रसमें घोटकर चनेके समान गोलियां बना लें।

सन्निपात ज्वरसे मूर्च्छित रोगीको प्रथम एक गोली दें; यदि इससे होश न आवे तो एक पहर पश्चात् दूसरी गोली दें। इससे भी होश न आवे तो एक पहर पश्चात् तीसरी गोली भी खिला दें। इससे अवश्य चेतना आ जायगी। तीन गोलीसे अधिक कदापि न दें।

यह गोली मृतप्रायः पुरुषको भी जिला देती हैं।

(५६४९) **मृतसञ्जीवनीवटिका**

(भा. प्र. । म. खं. । वृ. यो. त. । त. ५९)

विषं त्रिकटुकं गन्धं टङ्कणं मृतशुल्बकम् ।
धत्तूरस्य च बीजानि हिङ्गुलं नवमं स्मृतम् ॥
एतानि समभागानि दिनैकं विजयाद्रवैः ।
मर्दयेच्चणकाकारा कर्तव्या वटिकाथ सा ॥
भक्षणीयाऽनुपातव्यो रविमूलकषायकः ।
मृतसञ्जीवनी नाम्ना सन्निपातज्वरान्तकृत् ॥

शुद्ध बछनाग (मीठा विष), सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा, ताम्र भस्म, धतूरेके शुद्ध बीज और शुद्ध हिंगुल समान भाग लेकर सबको एक दिन भांगके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलियां बना लें।

इन्हें आककी जड़के काथके साथ देनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

(५६५०) **मृतसञ्जीवनीवटी**

(र. चं.। ज्वरातिसार.; रसें. सा. सं.; भै. र.। ज्वरातिसार)

मागधीं वत्सनाभं च तयोस्तुल्यं च हिङ्गुलम् ।
मृतसञ्जीवनी ख्याता जम्बीररसमर्दिता ॥
मूलकस्य च बीजानां वटिका तुल्यरूपिणी ।
पानीया शीततोयेन ज्वरातिसारनाशिनी ॥
विषूच्यां सन्निपाते च ज्वरे चैवातिदुस्तरे ॥

पीपल और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) १-१ भाग तथा शुद्ध हिंगुल २ भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें खरल कर मूलीके बीजके समान गोलियां बनावें।

इन्हें शीतल जलके साथ खिलानेसे ज्वरातिसार, हैज़ा और भयंकर सन्निपात नष्ट होता है।

(५६५१) **मृतोत्थापनरसः** (१)

(र. रे. स. । अ. १८)

अभ्रं ताम्रं तथा लोहं प्रत्येकं मारितं पलम् ।
सुसंस्कृतं सर्वमेतद्गृह्णीयात्कुशलो भिषक् ॥
आज्ये पलद्वादशके दुग्धे तत्स्वरसंख्यके ।
पक्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनतन्तुना ॥
विडङ्गत्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च ।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतान्यथासंमिश्रतां नयेत् ॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेत्तद्विचक्षणः ।
आत्मनः शोभने चाह्नि पूजयित्वा गुरुं रविम् ॥
घृतेन मधुना मध्वैः पाययेन्माषकादिकम् ।
अष्टौ माषान्क्रमेणैव वर्धयेत्तत्समाहितः ॥
अनुपानं च दुग्धेन नारिकेरोदकेन वा ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलं च आमवातं कटिग्रहम् ॥
गुल्मशूलं शिरःशूलं यकृत्प्लीहानमेव च ।
अग्निमांद्यं क्षयं कुष्ठं कासं श्वासं विचर्चिकाम् ॥
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च योगेनानेन साधयेत् ॥

अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म और लोह भस्म ५-५ तोले तथा ६० तोले घी और ३५ तोले गोदुग्ध लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें और गाढ़ा होने पर उसमें निम्न लिखित औषधोंका अत्यन्त महीन कपड़छन चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह घोटकर सुरक्षित रक्खें।

चूर्णकी ओषधियां-बायबिडंग, त्रिफला, चीता, और त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल) ५-५ तोले।

शुभ मुहूर्तमें गुरु और सूर्यदेवकी पूजा करके इसमेंसे १ माशा औषध नारियलके पानी या गोदुग्धके साथ सेवन करें और फिर नित्य थोड़ी थोड़ी मात्रा बढ़ाते रहें। आठ माशेसे अधिक न बढ़ावें।

इसके सेवनसे हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्मशूल, शिरशूल, यकृत्, प्लीहा, अग्निमांद्य, क्षय, कुष्ठ, कास, श्वास, विचर्चिका, अश्मरी और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है।

(५६५२) **मृतोत्थापनरसः** (२)

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

विषं च दरदं तुल्यं मर्दयेद्वासरद्वयम् ।
अम्लवेतसजम्बीरचाङ्गेरीणां रसेन च ॥
निर्गुण्डीहस्तिशुण्ड्याश्च एवं घर्मे विपाचयेत् ।
चित्रकस्य कषायेण द्वियामं मर्दयेत्ततः ॥
माषमात्रप्रदातव्यो हिङ्गुव्योषार्द्रकद्रवैः ।
किञ्चित्कर्पूरसंयुक्तो मृतोत्थापनको रसः ॥
पीडितः सन्निपातेन मृतो याति यमालयम् ।
प्रत्येति तत्क्षणादेव रसस्यास्य प्रभावतः ॥

शुद्ध बछनाग (मीठा विष) और हिंगुल समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र करके २-२ दिन अम्लबेत, जम्बीरी, चांगेरी (चूका), सम्भालु और हाथीसुण्डीके रसमें घोटकर धूपमें सुखाकर २ पहर चित्रकके क्वाथमें पकावें और फिर खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे १ माशा रसमें हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल और कपूरका चूर्ण मिलाकर अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे मृतप्राय: सन्निपात रोगी भी स्वस्थ हो जाता है।

(मात्रा रोगीकी अवस्थानुसार निश्चित करनी चाहिये ।)

(५६५३) **मृतोत्थापनरसः** (३)

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

शुद्धसूतं द्विधागन्धं शिला च विषहिङ्गुलम् ।
मृतकान्ताभ्रताम्रायः तालकं माक्षिकं समम् ॥
अम्लवेतसजम्भीरचाङ्गेरीणां रसेन च ।
निर्गुण्डीहस्तिशुण्ड्योश्च द्रवैर्मर्द्य दिनत्रयम् ॥
रुद्ध्वा तु भूधरे पाच्यो दिनान्ते तं समुद्धरेत्।
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥
गुञ्जार्द्धं च प्रदातव्यं हिङ्गुव्योषार्द्रकद्रवैः ।
सकर्पूरानुपानं स्यान्मृतस्योत्थापने रसे ॥
पीडितं सन्निपातेन गतं वापि यमालयम् ।
तत्क्षणात् जीवयत्येष पथ्यं क्षीरैः प्रयोजयेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध मनसिल, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), शुद्ध हिंगुल, कान्तलोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म, शुद्ध हरताल तथा स्वर्णमाक्षिक-भस्म १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको अम्लबेत, जम्बीरी, चाङ्गेरी (चूका), निर्गुण्डी और हाथीसूंडीके रसमें ३-३ दिन घोट कर शराव-सम्पुटमें बन्द करके भूधर यन्त्रमें १ दिनकी अग्नि दें और फिर उसके स्वांग शीतल हो जाने पर औषधको निकाल कर उसे २ पहर चीतामूलके क्वाथमें घोट कर आधी आधी रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनमेंसे १-१ गोली हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल और कपूरके चूर्ण तथा अदरकके रसके साथ खिलानेसे मृतप्राय: सन्निपात रोगी भी स्वस्थ हो जाता है।

(५६५४) **मृत्युञ्जयरसः** (१)

(महारसः)

(र. र. स. । अ. १२; र. रा. सु. । ज्वरा.)

तार्प्यतालकजेपालवत्सनाभमनःशिलाः ।
ताम्रगन्धकसूतं च मुसलीरसमर्दितः ॥
मृत्युञ्जय इति ख्यातः कुक्कुटीपुटपाचितः ।
वल्लद्वयं प्रयुञ्जीत यथेष्टं दधिभोजनम् ॥
नवज्वरं सन्निपातं हन्यादेष महारसः ।

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), शुद्ध मनसिल, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद और गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको १ दिन मूसलीके रसमें घोटकर, शरावसम्पुटमें बन्द करके कुक्कुटपुटमें पकावें ।

इसे ६ रत्ती मात्रानुसार खिलानेसे नवीन ज्वर और सन्निपात नष्ट हो जाता है । (व्यवहारिक मात्रा-२ रत्ती ।)

इस पर यथेष्ट दधि खिलानी चाहिये।

मृत्युञ्जयरसः (२)

(भै. र; र. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. । इत्यादि)

"पञ्च वक्त्र रसः" (२) प्र. सं. ४२६५ देखिये। उसमें धतूरेके रसमें घोटनेके लिये लिखा है परन्तु मृत्युंजय रसमें धतूररसकी भावना नहीं लिखी। इसमें १ भाग पारदके स्थानमें २ भाग 'हिंगुल' भी डाल सकते हैं। बस यही अन्तर है।

(५६५५) मृत्युञ्जयरसः (३)

(र. रा. सु. । प्रमेह.; र. स. क. । उल्लास ४)

एकांशं प्रक्षिपेत्स्वर्णं रौप्यं वज्रञ्च[1] तत्समम् ।
मुसल्या चाखुकर्ण्या च भाव्यं लुङ्गरसैस्त्र्यहम् ॥
मोचात्मगुप्ता स्वरसैस्तदा मृत्युञ्जयो रसः ।
सर्वरोगहरो ह्येष सेवितः पथ्यशालिभिः ॥
राजयक्ष्मादिरोगांश्च प्रमेहान् विंशतिस्तथा ।
जीर्णज्वरानतीसारान् ग्रहणीं बहुमूत्रताम् ॥
तेन तेनानुपानेन नाशयेन्नात्र संशयः ।
किमत्र बहुनोक्तेन जरामृत्युहरस्तथा ॥
वज्रदेहो भवेत्सेवी द्रावयेद्वनिताशतम् ।
नरेतसः क्षयस्तस्य षण्ढोऽपि तरुणायते ॥
ऊर्द्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेल्ललनायाः प्रियो भवेत् ।
तप्तहाटकसंकाशः श्रीधीमेधाविभूषितः ॥
हयवेगो मयूराक्षो वाराहश्रुतिरेव सः ।
अपरः कामदेवो वा मानिनीमानमर्द्दनः ॥
गोधूमजान्विकारांश्च माषान्नं कदलीफलम् ।
पनसं चापिखर्ज्जूरं वातामं नालिकेरकम् ॥
मधुरञ्च भजेत्प्राज्ञो वर्षमात्रमतिन्द्रतः ।
मात्रास्य माषप्रमिता सदा सेव्या नरोत्तमैः ॥

[1] ताम्रञ्चेति पाठान्तरम् ।

स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, और हीरा भस्म (पाठान्तरके अनुसार ताम्र भस्म) समान भाग ले कर सबको मूसली, मूषाकर्णी (चूहाकन्नी), बिजौरा नीबू, केला और कौंचके रसमें ३-३ दिन खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसे उचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, प्रमेह, जीर्ण ज्वर, अतिसार, संग्रहणी और बहुमूत्रादि अनेक रोग नष्ट होते हैं। अधिक तो क्या कहें, यह जरा मृत्युको भी नष्ट कर देता है।

इसके सेवनसे शरीर वज्रके समान दृढ़ होता और सैकड़ों स्त्रियोंको द्रवित करनेकी शक्ति प्राप्त होती है। वीर्य क्षीण नहीं होता और नपुंसक पुरुष भी रमणी-प्रिय हो जाता है तथा सदैव ऊर्ध्वलिंग रहता है। यह रस सौन्दर्य, बुद्धि, मेधा, दृष्टि, गमन शक्ति और श्रवण शक्ति आदिकी अत्यन्त वृद्धि करता है।

पथ्य-गेहूंके पदार्थ, उड़द, केला, पनस, खजूर, बादाम, नारियल तथा मधुर पदार्थ।

इसे १ वर्ष तक सेवन करना चाहिये।

मात्रा-१ माशा।

(व्यवहारिक मात्रा-आधी या १ रत्ती।)

(५६५६) मृत्युञ्जयरसः (४)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

कर्षं शम्भूद्भवस्यैकं कर्षं स्याद्दरदस्य च ।
जैपालस्य च शुद्धस्य त्रयमेतद्दिनद्वयम् ॥
वृद्धदारुकनीरेण खल्वे कृत्वा विमर्दयेत् ।
ततोदुम्बरपर्णैश्च स्वरसेन विभावयेत् ॥

शृङ्गवेररसेनामुं रविवारं विमर्दयेत् ।
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा सितया सह भक्षयेत् ॥
मृत्युञ्जयरसो नाम नवज्वरहरः परः ॥

शुद्ध पारद, हिंगुल और जमालगोटा समान भाग लेकर तीनोंको २–२ दिन विधारा और गूलर के पत्तोंके रसमें तथा १ दिन अदरकके रसमें खरल करके १–१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इन्हें मिश्रीके साथ सेवन करनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है।

(५६५७) मृत्युञ्जयरसः (५)

(र. र. स. । अ. १९; र. रा. सु. । ज्वर.)

द्विक्षारं त्र्यूषणं पञ्चलवणं शतपुष्पिकाम् ।
समभागमिदं सर्वं पटचूर्णं समाचरेत् ॥
तत्समौ रसगन्धौ च कृत्वा कज्जलिकां शुभाम्।
सर्वमेकत्र सम्मेल्य मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥
अयं मृत्युञ्जयो नाम्ना रसः शीघ्रफलप्रदः ।
कथितो मलयार्येण सन्निपातहरः परः ॥
सन्निपाते प्रयोक्तव्यो रक्तिकापञ्चमात्रकः ।
चित्रकार्द्रकसिन्धुत्थकटुभिर्वा समन्वितः ॥
पीततोयं त्रिदोषार्तं निर्वाते वासयेत्ततः ।
पथ्यं दध्योदनं देयं याचमानाय नान्यथा ॥
गुणो न जायते यस्य तस्य देयो रसः पुनः ।
हन्याद्वातगदं तथा कफगदं मन्दानलत्वं ज्वरम्॥
शूलं सर्वमहामयाञ्जठरजां पीडां यकृत्पाण्डुताम् ।
शोफं गुल्मरुजं तथा ग्रहणिकां प्लीहामयं विड्ग्रहम् ॥
वान्तिं गुल्मकृतां सकासमभितः श्वासं च हिक्कामपि ।
आदौ सर्वोदराणां च देयमुक्तं विरेचनम् ॥
गोमूत्रैर्वाऽथ गोक्षीरैर्योज्यमेरण्डतैलकम् ।
कर्षमात्रं प्रयत्नेन शुद्धे देयो रसः पुनः ॥

सज्जीखार, जवाखार, सोंठ, मिर्च, पीपल, पांचों लवण (सेंधा, काला नमक, सामुद्र लवण, काच लवण, बिड लवण) और सोयेका कपड़छन बारीक चूर्ण १–१ भाग तथा २–२ भाग पारद और गन्धककी कज्जली लेकर सबको एकत्र मिलाकर ३ दिन तक खरल करके सुरक्षित रक्खें।

यह रस सन्निपात ज्वरमें शीघ्र फल प्रदर्शित करता है।

इसमेंसे ५ रत्ती रस चीता, अदरक, सेंधा, सोंठ, मिर्च और पीपलके चूर्णके साथ सन्निपात ज्वर वाले रोगीको खिला कर निर्वात स्थानमें सुला दें और भूख लगने पर केवल दूध भात खिलावें और कोई पदार्थ खानेको न दें। यदि एक मात्रामें लाभ प्रतीत न हो तो (उचित समय तक प्रतीक्षा करनेके पश्चात्) पुनः दूसरी मात्रा दें।

सन्निपातके अतिरिक्त यह रस वातज और कफज रोग, अग्निमांद्य, शूल, उदर पीड़ा, यकृत, पाण्डु, शोथ, गुल्म, संग्रहणी तिल्ली, मलावरोध, गुल्मरोग–जनित वमन, कास, श्वास और हिचकीको भी नष्ट करता है।

यदि इसे उदर रोगोंमें देना हो तो प्रथम रोगीको गोमूत्र या गोदुग्धमें अरण्डीका तेल मिलाकर पिलावें और उससे विरेचन हो जानेके पश्चात् १। तोला मात्रानुसार यह रस खिलावें।

(मात्राका निर्णय रोगीका बलाबल देखकर करना चाहिये।)

(५६५८) मृत्युञ्जयरसः (६)

(र. र. स. । अ. १२)

तालं ताम्ररजो रसश्च गगनं
गन्धश्च जैपालकं
दीनारप्रमितं तदर्धमुदितं
टङ्कं शिला माक्षिकम् ।
दीनारद्वितयं विषस्य शिखिनः
पिष्ट्वा रसैः पाचितो
यश्चिन्तामणिवज्ज्वरौघविजयी
नाम्ना तु मृत्युञ्जयः ॥

शुद्ध हरताल, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक और जमाल गोटा १-१ तोला; सुहागा, शुद्ध मनसिल और स्वर्णमाक्षिक भस्म ६-६ माशे तथा शुद्ध बछनाग (मीठा विष) २ तोले लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको १ दिन चीतेके क्वाथमें घोट कर शराव-सम्पुटमें बन्द करें और उसे भूधरपुटमें पकावें ।

यह रस समस्त प्रकारके ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(५६५९) मृत्युञ्जयरसः (७)

(आ. वे. प्र. । अ. १; बृ. यो. त. । त. १४७; रसे. चि. म. । अ. ८)

बलिः सूतो निम्बूरसविमृदितो भस्मसिकता-
ह्वये यन्त्रे कृत्वा समरविकणाटङ्कणरजः ।
त्रिघस्रं लुङ्गाम्भोलवकदलितः क्षौद्रहविषाऽ
वलिढो माषैकं दरयति समस्तं गदगणम् ॥
जरां वर्षैकेन क्षपयति च पुष्टिं वितनुते
तनौ तेजस्फारं रमयति वधूनामपि शतम् ।
रसः श्रीमान्मृत्युञ्जय इति गिरीशेन कथितः
प्रभावं को वाऽन्यः कथयितुमपारं प्रभवति ॥
लुङ्गाम्भोलवकदलित इति मातुलुङ्गद्रवं कणशो दत्वा त्रिदिनं मर्दयेदित्यर्थः ॥

समान भाग शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे नीबूके रसमें घोटकर आतशी-शीशीमें भर कर (चन्द्रोदय बनानेकी विधिके अनुसार) बालुका यन्त्रमें पकावें । जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो उसे तोड़कर उसके गलेमें लगे हुवे रससिन्दूरको निकाल लें ।

अब १ भाग यह रससिन्दूर और १-१ भाग ताम्र भस्म, पीपलका चूर्ण तथा सुहागेकी खील लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसमें थोड़ा थोड़ा (बूंद बूंद) नीबूका रस डालते हुवे ३ दिन तक खरल करें ।

इसे १ माशेकी मात्रानुसार घी और शहदके साथ १ वर्ष तक सेवन करनेसे समस्त रोग और जरा नष्ट हो कर शरीर पुष्ट और तेजस्वी होता तथा सैकड़ों रमणियोंसे समागम करनेकी शक्ति आ जाती है ।

(व्यवहारिक मात्रा-४ रत्ती ।)

(५६६०) मृत्युञ्जयरसः (८)

(र. प्र. सु. । अ. ८.)

वज्रभस्म रसभस्म मौक्तिकं
मर्दितं च खलु निम्बुवारिणा ।
तच्च कुक्कुटपुटेन पाचितं
चूर्णयेन्मधुयुतं हि वल्लकम् ॥

वर्षमात्रमपि सेवितं जये-
न्मृत्युमेव सकला रुजा अपि ॥

हीरा भस्म, पारद भस्म और मोती भस्म समान भाग लेकर सबको नीबूके रसमें घोटकर सम्पुटमें बन्द करके कुक्कुटपुट में पकावें ।

इसे ३ रत्ती मात्रानुसार शहदके साथ १ वर्ष तक सेवन करनेसे अकाल मृत्यु और समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(५६६१) मृत्युञ्जयरसः (९)

(यो. र. । क्षय.)

त्रिकटु त्रिफला सूतगन्धकौ टङ्कणं विषम् ।
यष्टी निशा कुबेराक्षो दन्तिबीजमथापि च ॥
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥
गुटिका माषमात्रास्तु छायाशुष्काश्च कारयेत् ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
मृत्युञ्जयो रसो नाम सर्वरोगविदारणः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), मुलैठी, हल्दी, लताकरञ्जके बीज और शुद्ध जमालगोटा समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको ३ दिन भंगरेके रसमें घोटकर १–१ माशेकी गोलियां बना लें और उन्हें छायामें सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इन्हें रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करानेसे समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(५६६२) मृत्युञ्जयरसः (१०)

(भै. र. ; र. रा. सु. ; धन्व. । ज्वरा.)

सूतं गन्धकटङ्कणं शुभविषं धुस्तूरबीजं कटुं
नीत्वा भाग यथोत्तरद्विगुणितं चोन्मत्तमूला-
म्बुना ।
कुर्यान्माषवटीं सुखातिसुखदां सर्वान् ज्वरा-
न्नाशयेदेष
श्रीशिवशासनात् प्रजनितः सूतश्च मृत्युञ्जयः ॥
नारिकेलसितायुक्तं वातपित्तज्वरं जयेत् ।
मधुना श्लेष्मपित्तोत्थं ज्वरं सन्नाशयेत् ध्रुवम् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं नाशयेदार्द्रनीरतः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, सुहागेकी खील ४ भाग, शुद्ध बछनाग (मीठा विष) ८ भाग, धतूरेके बीज १६ भाग और त्रिकुटा (समान भाग मिश्रित सोंठ, मिर्च, पीपल) ३२ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको धतूरेकी जड़के रसमें घोटकर १–१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

इन्हें—

वातपित्त ज्वरमें नारियलके पानी और मिश्रीके साथ;

कफपित्त ज्वरमें शहदके साथ; और

सन्निपात ज्वरमें अदरकके रसके साथ देना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा–२–३ रत्ती ।)

(५६६३) मृद्विरेचनरसः

(र. च. । पाण्डु. ; वृ. नि. र । बालरो.)

इन्दुलोचननेत्राणि शिखी भागं च योजयेत् ।
स्फटिगन्धकमुर्दाडशतपुष्पाविचूर्णिताः ॥
माषद्वयं गवां दुग्धैः सेवयेद्दिनपञ्चकम् ।
रेचयेन्मृत्तिकां शुद्धां शिशूनां हितमौषधम् ॥

छोटी इलायची १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्ध मुरदासिंघ २ भाग और सोया ३ भाग लेकर सबको खरल करके रक्खें।

इसे २ माशेकी मात्रानुसार गायके दूधके साथ ५ दिन तक सेवन करानेसे बच्चोंकी खाई हुई मिट्टी विरेचन द्वारा निकल जाती है।

(५६६४) मेघडम्बररसः

(र. रा. सु. ; र. र. ; र. मं. ; र. का. धे. ; र. चं. । हिक्का श्वास.; रसे. चि. म. । अ. ९)

तण्डुलीयद्रवे पिष्टं सूततुल्यं च गन्धकम् ।
वज्रमूषागतं चैव भूधरे भस्मतां नयेत् ॥
दशमूलकषायेण भावयेत्प्रहरद्वयम् ।
गुञ्जाद्वयं हरत्याशु हिक्कां श्वासं ज्वरं किल ॥
अनुपानेन दातव्यो रसोऽयं मेघडम्बरः ।
नागरं[1] पिप्पलीं भार्गीपुष्करं कर्कटी सटी ॥
शर्कराष्टगुणं चूर्णमनुपाने प्रकल्पयेत् ॥

समान भाग शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे कांटे वाली चौलाईके रसमें घोटें और फिर वज्रमूषामें बन्द करके भूधरपुटमें पकाकर भस्म करें। तदनन्तर उसे दशमूलके क्वाथमें २ पहर घोटकर सुरक्षित रक्खें।

१ अभया इति पाठान्तरम्।

इसे निम्नलिखित अनुपानके साथ खिलानेसे हिक्का, श्वास और ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

अनुपान—सोंठ (पाठान्तरके अनुसार हर्र), पीपल, भरंगी, पोखरमूल और काकड़ासींगी तथा कचूर १-१ भाग तथा खांड ८ भाग लेकर सबको खरल करके चूर्ण बनावें।

रसकी मात्रा—२ रत्ती।

(**अनुपानकी मात्रा**—३-४ माशे।)

नोट—शहदके साथ मिला कर चाटना चाहिये।

(५६६५) मेघनादरसः (१)

(भै. र. ; र. का. धे. । ज्वर.; रसे. चि. म. । अ. ९; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । ज्वर.)

तारं[1] कांस्यं मृतं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यश्च गन्धकम् ।
क्वाथेन मेघनादस्य पिष्ट्वा रुद्ध्वा पुटे पचेत् ॥
षड्भिः[2] पुटैर्भवेत्सिद्धो मेघनादो ज्वरापहः ।
भक्षयेत्पर्णखण्डेन विषमज्वरनाशनम् ॥
अस्य मात्रैकगुञ्जा स्यात्पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
नागरातिविषामुस्तभूनिम्बामृतवत्सकैः ॥
सर्वज्वरातिसारघ्नं क्वाथमस्यानुपाययेत् ।
तरुणं वा ज्वरं जीर्णं तृष्णां दाहश्च नाशयेत् ॥

चांदी भस्म, कांसी भस्म और ताम्र भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक ३ भाग लेकर

१ तालमिति पाठान्तरम्। ताल = हरताल

१ आरं इति पाठान्तरम्। आर = पीतल

१ अभ्रं इति पाठान्तरम्

२ कई ग्रन्थोंमें पुटोंकी संख्याका निर्देश नहीं है।

सबको कांटे वाली चौलाईके रसमें घोट कर, शरावसम्पुटमें बन्द करके भूधरपुटमें पकावें। इसी प्रकार चौलाईके रसमें घोट घोट कर ६ पुट दें।

इसे पानमें रखकर खिलानेसे विषम ज्वर, तरुण ज्वर, जीर्ण ज्वर, तृष्णा, दाह और ज्वरातिसार नष्ट होता है।

मात्रा—१ रत्ती।

अनुपान—सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय और इन्द्र जौ का क्वाथ बनाकर रस खानेके पश्चात् पियें।

पथ्य—दूध भात।

(५६६६) मेघनादरसः (२)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । प्रमेह. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

भस्मसूतं समं कान्तमभ्रकन्तु शिलाजतु।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषत्रिफलाङ्कोठजीरकम् ॥
कार्पासबीजं रजनीचूर्णं भाव्यञ्च वह्निना।
विंशतिधा विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह ॥
माषमात्रं हरेन्मेहं मेघनादरसो महान् ॥

पारद भस्म (या रस सिन्दूर), कान्त लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध मनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, ढेरा, जीरा, कपास बीज (बिनौलेकी मज्जा) और हल्दीका चूर्ण समान भाग लेकर सबको चीतामूलके क्वाथकी २० भावना देकर सुखाकर रक्खें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे प्रमेह नष्ट होता है।

मात्रा—१ माशा।

(५६६७) मेघनादरसः (३)

(र. र. स. । अ. १२)

सूतांशको साररविः समांश-
गन्धो विपक्वः स्वकषायपिष्टः।
रसः क्रमान्माषमितोऽनिलादि-
ज्वरेषु नाम्ना किल मेघनादः ॥

शुद्ध पारद, फौलाद भस्म और ताम्र भस्म समान भाग तथा गन्धक सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य दोनों भस्में मिलाकर खरल करें। तदनन्तर इसे जिस प्रकारके ज्वरमें प्रयुक्त करना हो उसको नष्ट करने वाली ओषधियोंके क्वाथमें घोटकर शराव-सम्पुटमें बन्द करके भूधर पुटमें पकावें।

यह रस समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है।

मात्रा—१ माशा। (व्यवहारिक मात्रा २ रत्ती।)

(५६६८) मेघनादरसः (४)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

अभ्रकं सूतकं तालं त्रिभिस्तुल्यं तु गन्धकम्।
रसेन मेघनादस्य पिष्ट्वा रुद्ध्वा पुटे पचेत् ॥
सञ्चूर्ण्य पर्णखण्डेन दातव्यो विषमापहः।
अत्र मात्रा द्विगुञ्जा स्यात्पथ्यं दुग्धोदनं हितम् ॥
पञ्चामृतं पलं चैकमनुपानं प्रयोजयेत् ॥

अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद और शुद्ध हरताल १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक ३ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य दोनों औषधें मिलाकर सबको कांटे वाली चौलाईके रसमें घोटकर शराव-सम्पुटमें बन्द करके भूधर पुटमें पकावें।

इसे पानमें रख कर खिलानेसे विषम ज्वर नष्ट होता है।

अनुपान-रस खिलानेके पश्चात् गिलोय, गोखरु, मूसली, मुण्डी और शतावरका काथ पिलाना चाहिये।

मात्रा-२ रत्ती। **पथ्य**-दूध भात।

(५६६९) मेघनादरसः (५)

(यो. र. ; र. चं. । रेचका.)

दरदं टङ्कणं चैव सैन्धवं च कटुत्रयम्।
त्रिफला हारहूरा च कृमिघ्नं रामठं तथा ॥
दस्यु दीप्यं समानं च दन्ती सर्वार्धभागिका।
जम्बीरवारा सम्मर्द्य चणकस्य प्रमाणतः ॥
उष्णोदकानुपानेन कृम्यामान्तं विरेचनम्।
तस्योपरि हितं देयं पथ्यं दध्योदनं परम् ॥
उदरे पाण्डुशोफे च शोफोदरजलोदरे।
सर्वज्वरे च विषमे मेघनादः प्रशस्यते ॥

शुद्ध हिंगुल, सुहागेकी खील, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, द्राक्षा (मुनक्का), बायबिडंग, हींग, चोरक और अजमोद १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा सबसे आधा (७ भाग) लेकर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलियां बनावें।

इन्हें उष्ण जलके साथ देनेसे विरेचन हो कर आम और कृमि निकल जाते हैं।

यह रस उदर रोग, पाण्डु, शोथ, शोथोदर, जलोदर, विषम ज्वर और अन्य समस्त ज्वरोंमें उपयोगी है।

पथ्य--दही भात।

मेघनादरसः (६)

(र. का. धे. ; यो. र. । प्रमेह; वृ. यो. त. । त. १०३; वृ. नि. र. । प्रमे. ; यो. त. । त. ५१.)

प्रयोग सं. ४४६४ "प्रमेह बद्ध रस" देखिये।

मेघबन्धरसः

(र. र. । प्रमेह.)

"प्रमेह बद्ध रसः" प्रयोग संख्या ४४६४ देखिये।

(५६७०) मेथीपाकः

(नपु. मृता. । त. ४)

मेथी प्रस्थमिता पलद्वयमितं चूर्णं वरीसम्भवम्
त्वक्पत्राऽनलविश्वजीरमगधाद्राक्षाशिवागो-
क्षुरम्।
धात्रीनागकणाप्रियङ्गुमुसलीकीनाशबीजैः समैः
पिष्टैः सूक्ष्मतरं पलैकतुलितैः
सर्वैः पृथक् पाचयेत् ॥
गोदुग्धेन चतुर्गुणेन विधिना
मन्दाग्निना वैद्यराट्
यावच्चद्घनतामियादथ ततः सर्वद्विभागा सिता।
पाच्यापाच्य सुशीतमेतदखिलं दृष्ट्वा तदेलाद्वयं
मज्जाचारुभवाथ देवकुसुमं खार्जूरवातामकम् ॥
जातीपत्रसमं विदल्यदलितं प्राग्गोघृतैर्भर्जिते
युक्तांशैरवधूल्यमेव सकलं तन्मोदकान्कल्पयेत्।
वङ्गाभ्रेण पलार्द्धकेन सहितान्सम्भक्ष्य यावद्बलम्
कान्तासङ्गविलासभोगचपलो वृद्धो युवा वै
भवेत् ॥

मेथी १ सेर; शतावर १० तोले; तथा दालचीनी, तेजपात, चीतामूल, सोंठ, जीरा, पीपल, द्राक्षा, हर्र, गोखरु, आमला, गजपीपल, फूलप्रियंगु, मूसली और कौंचके बीज ५-५ तोले। सबका महीन चूर्ण ले कर उसे उससे ४ गुने (८ गुने) दूधमें मन्दाग्नि पर पकावें। जब खोवा हो जाय तो उसे गायके घीमें भूनकर ठंडा करके सबसे २ गुनी खांडकी चाशनीमें मिला कर उसमें निम्न लिखित द्रव्योंका प्रक्षेप दें।

प्रक्षेप द्रव्य—छोटी और बड़ी इलायची, पिस्ता, लौंग, खजूर, (छुवारा), बादामकी गिरी और जावत्रीका चूर्ण तथा बंग और अभ्रक भस्म २॥-२॥ तोले। सबका महीन चूर्ण उपरोक्त पाकमें मिला कर मोदक बनावें।

इन्हें अग्नि बलोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे वृद्ध पुरुष भी युवाके समान स्त्री समागम कर सकता है।

(५६७१) मेदिनीसाररसः

(र. र. स. । अ. २०)

पलत्रयं मृतं लोहं मृतं शुल्वं पलत्रयम्।
भृङ्गराजाम्बुगोमूत्रत्रिफलाक्कथितैः पृथक् ॥
पुटेत्रिवारं यत्नेन ततस्तस्मिन्विनिक्षिपेत्।
अत्यम्लकाञ्जिकं पश्चात्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥
ततश्च तुल्यगन्धेन पुटानां विंशतिं पचेत्।
पलमात्रं मृतं सूतं रुद्रांशममृतं तथा ॥
कटुत्रयं समं सर्वैः पिष्ट्वा सम्यग्विधारयेत्।
रसोयं मेदिनीसारो नन्दिना परिकीर्तितः ॥
सेवितोवल्लमानेन घृतत्रिकटुकान्वितः।
हन्ति कुष्ठानि सर्वाणि श्वित्राणि विविधानि च
गुल्मं प्लीहामयं हिक्कां शूलकुक्ष्यामयं तथा।
उदावर्तं महावातं कफं मन्दानलं तथा ॥
सर्पादिकं विषं घोरं व्रणं लूता भगन्दरम्।
विद्रधिं चान्त्रवृद्धिं च शिरस्तोदं च नाशयेत् ॥

१५-१५ तोले लोह भस्म और ताम्र भस्म एकत्र मिला कर उसे भंगरेके रस, गोमूत्र और त्रिफलाके काथकी ३-३ भावना दें। और फिर उसे ४ पहर तक खट्टी कांजीमें पकावें। तदनन्तर उसमें उसके बराबर शुद्ध गन्धक मिला कर खरल करें और शरावसम्पुटमें बन्द करके (लघुपुटमें) फूंक दें। इसी प्रकार बार बार गन्धक डाल कर २० पुट दें। तत्पश्चात् उसमें ५ तोले पारद भस्म और सम्पूर्ण औषधको ग्यारहवां भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण एवं सबके बराबर त्रिकुटेका चूर्ण मिला कर खरल करके रक्खें।

इसे सेवन करनेसे कुष्ठ, श्वित्र कुष्ठ, गुल्म, तिल्ली, हिक्का (हिचकी), शूल, कुक्षिगत रोग, उदावर्त, महावात, कफ, अग्निमांद्य, सर्पादि का भयंकर विष, व्रण, लूता (मकड़ी) का विष, भगन्दर, विद्रधि, अन्त्रवृद्धि और शिरशूलका नाश होता है।

मात्रा—३ रत्ती।

अनुपान—त्रिकुटे (सौंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण और घी।

(५६७२) मेदोहररसः

(र. का. धे. । मेदो.)

सूतः समांशात् सबलिः सवेल्लः
सूर्याम्बुघृष्टोऽस्य च वल्ल एकः।

क्षौद्रेण हन्त्युद्धतमेदुरत्वं
मध्वम्बु तस्यानु पिबेत् त्रिरात्रम् ॥

शुद्ध पारद, गन्धक और बायबिडंगका चूर्ण समान भाग ले कर सबको आकके रसमें खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे शहदके साथ मिला कर सेवन करनेसे प्रवृद्ध मेदरोग भी नष्ट हो जाता है ।

मात्रा—३ रत्ती ।

अनुपान—शहदका शरबत ।

मेहकुलान्तकरसः (१)
(प्रमेहकुलान्तको रसः)
(र. र. ; र. का. धे. । प्रमेह)

" प्रमेह कुलान्तको रसः " प्र. सं. ४४६० देखिये ।

मेहकुलान्तकरसः (२)
(प्रमेहकुलान्तको रसः)
(धन्व.; भै. र. । प्रमेह. ; नपु. मृता. । त. ७)

" प्रमेह कुलान्तको रसः (२) " प्र. सं. ४४६१ देखिये ।

मेहकुञ्जरकेसरीरसः
(यो. र. ; र. चं. ; बृ. नि. र. । प्रमेह)

"प्रमेह कुञ्जर केसरी रस " प्र. सं. ४४५९ देखिये ।

(५६७३) मेहकेसरीरसः
(प्रमेहगजकेसरीरसः)
(भै. र.; रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. । प्रमेह. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

मृतवङ्गं सुवर्णञ्च कान्तलौहञ्च पारदम् ।
मुक्ता गुडत्वचश्चैव सूक्ष्मैलापत्रकेशरम् ॥
समभागं विचूर्ण्याथ कन्यानीरेण भावयेत् ।
द्विमाषां वटिकां खादेद्दुग्धान्नं प्रपिबेत्ततः ॥
प्रमेहं नाशयत्याशु केशरी करिणं यथा ।
शुक्रप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्रान्नात्र संशयः ॥
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥

वङ्ग भस्म, सुवर्ण भस्म, कान्तलोह भस्म, रससिन्दूर, मोती (भस्म या पिष्टी), तथा दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर घृतकुमारीके रसमें घोट कर २-२ माशेकी गोलियां बना लें ।

इन्हें खा कर ऊपरसे दूध भात खाना चाहिये ।

इनके सेवनसे पुराना प्रमेह और मधुमेह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है । यह रस शुक्र प्रवाहको केवल ३ दिनमें ही बन्द कर देता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(५६७४) मेहद्विरदसिंहो रसः
(र. र. । प्रमेह.)

पारदाभ्रकयोर्भस्म मृतं लौहाष्टकं समम् ।
टङ्कश्चैव मध्वाज्यं प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥
चण्डालीराक्षसीपुष्पैर्दिनं मर्द्य निरुध्य च ।
मूषायामन्तरे पक्वं दिनैकं तच्च चूर्णयेत् ॥
मेहद्विरदसिंहोऽयं रसः क्षौद्रैर्द्विमाषकम् ।
लिहेच्चानु पिबेत्तक्रैर्निष्कैकं टङ्कणं सदा ॥
पञ्चवक्त्र रसोऽप्यत्र देयं शुक्रप्रमेहजित् ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, अष्ट लोह (स्वर्ण, चांदी, ताम्र, बंग, सीसा, कान्तलोह, मुण्डलोह

और तीक्ष्णलोह) की भस्म एवं सुहागेकी खील तथा घी और शहद समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर १-१ दिन शिवलिंगी और चोरकके फूलोंके रसमें घोट कर मूषामें बन्द करें और उसे १ दिन (भूधरपुटमें) पकावें।

इसे २ माशेकी मात्रानुसार शहदमें चाट कर ऊपरसे ५ माशे सुहागेकी खील तक्रमें मिला कर पीनी चाहिये।

इसके सेवनसे प्रमेह नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा-२ रत्ती।)

(५६७५) मेहनाशनरसः

(र. प्र. सु । अ. ८.)

लोहभस्म रसभस्म ताप्यकं
गन्धकेन सहितं समांशकम् ।
वत्सबीजकरसेन भावितं
लेहितं सकलमेहनाशनम् ॥

लोह भस्म, पारद भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर सबको एकत्र करके इन्द्रजौ के काथमें घोट कर रक्खें।

इसे (शहदके साथ) सेवन करनेसे समस्त प्रमेह नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१-२ रत्ती।)

मेहबद्धरसः

(वृ. नि. र. । प्रमेह. ; र. चि. म. । स्तवक ११ ; र. का. धे.)

"प्रमेह बद्ध रसः" प्र. सं. ४४६४ देखिये।

(५६७६) मेहभैरवो रसः

(र. रा. सु. । प्रमेह.)

रसं गन्धं विषं लोहं जातीपत्रं च तत्फलम् ।
अब्धिशोषाहिफेनं च खुरासानं च चित्रकम् ॥
देवपुष्पं समं सर्वं सर्वैस्तुल्यं मृताभ्रकम् ।
भावयेत्सप्तधा सर्वं चित्रमूलकषायकैः ॥
यथा सात्म्येन संयोज्य सर्वमेहापनुत्तये ।
अर्शांसि ग्रहणीशोथपाण्डुशुक्रक्षये नृणाम् ॥
यथानुपानतो योज्यः सिद्धः श्रीमेहभैरवः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), लोहभस्म; जावत्री, जायफल, समन्दर सोख, अफीम, खुरासानी अजवायन, चीता और लौंग समान भाग तथा अभ्रक भस्म सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर सबको चीतामूलके काथकी सात भावना दें।

इसे रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे समस्त प्रमेह, अर्श, ग्रहणी, शोथ, पाण्डु और शुक्रक्षयका नाश होता है।

(५६७७) मेहमुद्गरो रसः
(मेहमुद्गरवटिका)

(र. र. ; भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. । प्रमेह. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसाञ्जनं बिडं देवदारु बिल्वगोक्षुरदाडिमम् ।
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लौहचूर्णन्तु तत्समम् ।
पलैकं गुग्गुलुं दत्त्वा घृतेन वटिकां कुरु ॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति साध्यासाध्यं तथापि वा ।
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्थश्च ज्वरं जयेत् ॥

हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम् ।
ग्रहणीमामदोषश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
एतान् सर्वान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

रसौत, बायबिड़ंग, देवदारु, बेलगिरी, गोखरु, अनार, चिरायता, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और निसोत का चूर्ण आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) और लोह भस्म सबके बराबर तथा शुद्ध गूगल ५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर और आवश्यकतानुसार घी डाल कर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे साध्यासाध्य बीस प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुगत ज्वर, हलीमक, रक्तपित, वातज पित्तज और कफज ग्रहणी, आमदोष, अग्निमांद्य और अरुचि आदि रोग नष्ट होते हैं ।

मेहवज्रो रसः

(धन्व. । प्रमेह.; रसे. चि. म. । अ. ९; रसे. सा. सं.)

" प्रमेह बद्ध रसः " प्र. सं. ४४६४ देखिये ।

मेहसेतुरसः

(र. चं. । प्रमेह.)

" महा सेतु रसः " प्र. सं. ५५८५ देखिये ।

(५६७८) मेहाङ्कुशरसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

वङ्गभस्म रसभस्म गन्धकं
धातकीस्वरसकेन मर्दितम् ।
लेहितं मधुयुतं हि मेहजि-
द्वल्लयुग्ममतिसारनाशनम् ॥

बङ्ग भस्म, पारद भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर सबको एकत्र करके एक दिन धायके फूलों के रसमें घोट कर रक्खें ।

इसे शहदमें मिला कर सेवन करनेसे प्रमेह और अतिसार नष्ट होता है ।

मात्रा—६ रत्ती ।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

(५६७९) मेहानलो रसः (मेहारिरसः) (१)

(भै. र. । प्रमेह. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । प्रमेह ।.)

भस्मसूतं मृतं वङ्गं तुल्यं क्षौद्रेण मर्दयेत् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं मेहं हन्ति चिरोत्थितम् ॥
गुञ्जामूलं पिबेच्चानु क्षीरैरेवं प्रशाम्यति ॥

पारद भस्म और बंग भस्म समान भाग ले कर दोनोंको शहदमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे पुराना प्रमेह नष्ट हो जाता है ।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् चौंटलीकी जड़ दूधमें पीस कर पीनी चाहिये ।

(५६८०) मेहारिरसः (२)

(र. चं. । प्रमेह. ; र. प्र. सु. । अ. ८.)

टङ्कणं च रसराजगन्धकं
सीसकं च रसकेन संयुतम् ।
नागवल्लिजरसेन मर्दितं
सर्वमेहकृतरोगनाशनम् ॥

सुहागा, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सीसा भस्म और खपरिया समान भाग ले कर सबको पानके रसमें घोट कर रक्खें ।

इसके सेवनसे समस्त प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(५६८१) मेहारिरसः (३)

(र. र. स. । अ. १७)

सूतं बाहुमितं बलिं शशि-
भितं सम्मर्द्य तत्कज्जलीं
कृत्वा कृष्णहिरण्यतोय-
सहितां सम्मर्द्य घस्त्रं पुनः ।
कूप्यां कालिकामभ्रक
सुपिहितां मृत्स्नांशुकैः सप्तभिः
सम्वेष्ट्य त्रिदिनं विशोष्य
लवणापूर्णे क्षिपेद्भाण्डके ॥
दग्ध्वा यापचतुष्टये च
शिशिरां भित्वा च तां कूपिकां
तं सूतं द्विलवं लवं च
गगनं लोहं लवं मर्दयेत् ।
सिद्धो वल्लमितः सिता च
मधुना वत्सादनीसत्त्वतो
नोचेत्क्षौद्रकणायुतश्च
तरसा सर्वप्रमेहाञ्जयेत् ॥
रोगाधीश्वरपाण्डुकामल-
हरिद्राभत्वपित्तोद्भवान्सर्वांश्च
प्रदरामयान्विजयते मेहारिनामा रसः ॥

शुद्ध पारद २ भाग और शुद्ध गन्धक १ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसे १ दिन काले धतूरेके रसमें घोट कर (सुखाकर) आतशी शीशीमें भर दें तथा उसके मुख पर अभ्रकका पत्र रख कर शीशी पर सात कपड़ मिट्टी कर दें। और इसे ३ दिन तक सूखने दें। फिर शीशीको लवण यन्त्रमें रख कर ४ पहरकी अग्नि दें। तदनन्तर जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो उसे तोड़ कर उसमें से रस निकाल लें।

अब २ भाग यह रस और १-१ भाग अभ्रक तथा लोह भस्म ले कर सबको एकत्र घोट लें।

इसे मिश्री, गुडूची सत्व और शहदके साथ अथवा पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रमेह, पाण्डु, कामला, हलीमक, समस्त पित्तज रोग और प्रदर नष्ट होते हैं।

मात्रा—३ रत्ती

(५६८२) मोरेश्वररसः

(वृ. नि. र. । सन्निपात.)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं दिनैकं चार्द्रकद्रवैः ।
मर्दयित्वा च तं गोलं गोलार्धे ताम्रसम्पुटे ॥
क्षिप्त्वा निरुध्य तत्सन्धिं मृन्मूषायां निरुध्य च।
रात्रौ गजपुटे पाच्यं मातरादाय चूर्णयेत् ॥
गुञ्जैकं नागरसमं सघृतं सन्निपातनुत् ।
अनुपानं पिबेत्पश्चात्तप्तं वारिपलद्वयम् ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तृषायां शीतलं जलम् ।
कृशं च कुरुते स्थूलं नरं मोरेश्वरो रसः ॥

शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसे १ दिन अदरकके रसमें घोट कर गोला बनावें तथा उसे १॥ भाग शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके सन्धिको

अच्छी तरह बन्द कर दें । तदनन्तर उस सम्पुटको मिट्टीकी मूषामें बन्द करके रातको गजपुटमें रख कर अग्नि लगा दें और प्रातःकाल निकाल कर खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

(ताम्रका जो भाग कच्चा रहा हो उसे ग्रहण न करें ।)

इसे सोंठके चूर्ण और घीके साथ खिलानेसे सन्निपात नष्ट होता है ।

मात्रा--१ रत्ती ।

अनुपान--औषध खानेके पश्चात् १० तोले गर्म जल पियें ।

पथ्य-दही भात । प्यासमें शीतल जल दें ।

इसके सेवनसे कृश मनुष्य स्थूल हो जाते हैं ।

इति मकारादिरसप्रकरणम्

अथ मकारादिकल्पप्रकरणम्

(५६८३) मृणालकल्पः

(र. चि. म. । स्त. ९)

भवन्ति कालनामानि मृणालानि समानयेत् ।
तद्रसन्तिलचूर्णेन समं कुर्याद्रसायनी ॥
सर्पिस्तेन समं दद्यान्मधुखण्डं तथैव च ।
आयसे भाजने सर्वं विनिक्षिप्य निरुध्यते ॥
तुषं तस्याऽथ भाण्डस्य स्थापयेद्वह्निसन्निधौ ।
एकविंशदिनेऽतीते पश्चात्तद्भक्षयेत्सदा ॥
योग्यमात्रां गृहीत्वाऽथ तस्योपरि च शर्कराः ।
कोशकारांश्च पश्चाद्धि गृह्णीयात्पथ्यभुग्नरः ॥
अम्लं च वर्जयेन्नित्यं नित्यं क्षारं च वर्जयेत् ।
क्रोधं च मैथुनं कल्पसेवी नित्यं विवर्जयेत् ॥
शीतस्थानं समाश्रित्य तिष्ठत्यविरतं बुधः ।
मासत्रयेप्यतिक्रान्ते केशाः कालाः सुकोमलाः॥
शरीरं दृढवच्च स्याज्जायते सुमनोहरम् ।
अतिगौरं महोत्साही तस्य केशाः कदाचन ॥
यावज्जीवं सिता न स्युः शुक्रवृद्धिः परा भवेत्
बलाभप्रतिमं भूयाद्वपुः कालवशं न च ॥
गच्छेन्न जायते रोगास्तस्य देहे कदा च न ।
राजयोग्योस्त्ययं कल्पो विशेषात्पूज्य उत्तमः॥

काल नामक कमलनाल (मृणाल) को कूट कर रस निकालें और उसमें तिल चूर्ण, घी, शहद और खांड; प्रत्येक उस रसके बराबर मिलाकर सबको लोह पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें और इस पात्रको तुषके ढेरमें ऐसे स्थान पर दबा दें जिसके पास नित्य अग्नि जलती हो ।

जब २१ दिन बीत जाएं तो औषधको सेवन योग्य समझें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार खा कर ऊपरसे खांड और कोशकार (ईख विशेष-कुशिया) खानी चाहिये । तथा पथ्य पूर्वक रहना चाहिये ।

इसके सेवन कालमें अम्ल और क्षार पदार्थ, क्रोध तथा मैथुनका त्याग करना आवश्यक है । शीत स्थानमें रहना चाहिये ।

इसे निरन्तर ३ मास तक सेवन करनेसे सफेद बाल काले और कोमल हो जाते हैं; शरीर दृढ़ और मनोहर हो जाता है; शरीरका रङ्ग अत्यन्त गौर हो जाता है तथा उत्साह अत्यधिक बढ़ जाता है ।

इसको सेवन करने वालेके केश जीवन पर्यन्त सफेद नहीं होते ।

इसके सेवनसे बल और वीर्यकी अत्यधिक वृद्धि होती है तथा जो इसे सेवन करता है उसे कोई रोग नहीं होता ।

यह कल्प राजाओंको सेवन कराने योग्य है ।

इति मकारादिकल्पप्रकरणम्

अथ मकारादिमिश्रप्रकरणम्

(५६८४) मञ्जिष्ठाद्योऽगदः

(व. से. । विषरोगा.)

मञ्जिष्ठैला निशा द्राक्षा मांसी यष्टी हरेणुका ।
क्षौद्रं चेति विषघ्नोऽयमगदः काशिकोऽब्रवीत् ॥

मजीठ, इलायची, हल्दी, मुनक्का, जटामांसी, मुलैठी और रेणुका समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । इसे शहदमें मिला कर खिलानेसे विष नष्ट होता है ।

(५६८५) मणिबन्धदहनम्

(वै. म. र. । पटल १०)

किमौषधगणैः कृतैः सकलमन्त्रवादैश्च किं
चिरेण वत जीवितुं यदि महाभिलाषोऽस्ति वः
सुवर्णवलयेन वा रजतकेन ताम्रेण वा
दहेत मणिबन्धने सपदि कामलारोगिणः ॥

कामला रोगीके लिये औषधोंका प्रयोग करना व्यर्थ है, मन्त्रादि की भी कोई आवश्यकता नहीं है; केवल सुवर्ण, रजत या ताम्रके कड़ेसे उसके मणिबन्ध (पहुंचे) को दाग देना चाहिये ।

(५६८६) मण्डयोगः

(ग. नि. । अजीर्णा.)

अन्नमण्डं पिबेदुष्णं हिङ्गुसौवर्चलान्वितम् ।
विषमोऽपि समस्तेन मन्दो दीप्येत पावकः ॥

क्षुद्बोधनो बस्तिविशोधनश्च
प्राणप्रदः शोणितवर्धनश्च ।
ज्वरापहारी कफपित्तहन्ता
वायुं जयेदष्टगुणो हि मण्डः ॥

सुतण्डुलानां प्रसृतीद्वयं च
तदर्धमुद्गः कुडवं च तक्रम् ।
कुस्तुम्बरी सैन्धवहिङ्गु तैलमे-
भिश्च सर्वैः क्रियते च मण्डः ॥

चावलोंके उष्ण मण्ड× में हींग और काला नमक मिला कर पिलानेसे विषमाग्नि सम और मन्दाग्नि दीप्त हो जाती है ।

उत्तम भुने हुवे चावल २० तोले, भुनी हुई मूंग १० तोले और तक्र ४० तोले लेकर सबको एकत्र मिला कर उसमें ४॥ सेर पानी डाल कर पकावें और उसमें आवश्यकतानुसार धनिया, सेंधा, हींग तथा तेल मिला कर मण्ड तैयार करें ।

यह मण्ड क्षुधाको जाग्रत और बस्तिको शुद्ध करता है । तथा प्राणप्रद, रक्तवर्द्धक, ज्वरनाशक, कफ पित्त हन्ता और वायु शामक है ।

(५६८७) मदनादिफलवर्तिः

(वं. से. ; भा. प्र. ; वृ. मा. । उदावर्ता. ; वृ. यो. त. । त. ९६; यो. त. । त. ४५; यो. र. । उदावर्त.)

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्षपाः ।
गुडक्षारसमायुक्ता फलवर्तिः प्रशस्यते ॥
आनाहं च गुदे शूलं कुक्षिशूलकमेव च ।
तस्यवातमुदावर्त्तं योगेनानेन शाम्यति ॥

मैनफल, पीपल, कूठ, बच, सफेद सरसों, गुड़ और जवाखार समान भाग लेकर चूर्णयोग्य चीज़ोंके चूर्णको गुड़में मिला कर बत्तियां बनावें ।

इनमेंसे १-१ बत्ती मलमार्गमें रखनेसे अफारा, गुदाकी पीड़ा, कुक्षिशूल, वायु और उदावर्त नष्ट होता है ।

×अन्नको १४ गुने पानीमें इतना पकावें कि उसमें मोटे कण बाकी न रहें । इसीका नाम मण्ड है ।

(५६८८) मद्यमदप्रतीकारः

(रा. मा. । विषरोगा. २८)

लीढ्वा घृतं शर्करया समेतं
निषेवते यो मदिरां प्रकामम् ।
उद्दामदर्पाऽपि न तस्य सा स्या-
न्मदस्य हेतुः परिपीयमाना ॥

यदि घी और खांड मिलाकर चाटनेके पश्चात् उग्र मदिरा भी यथेच्छ परिमाणमें पी जाय तो उसका नशा नहीं चढ़ता ।

(५६८९) मधुकादियोगः

(व. से. । नेत्ररोगा.)

मधुकामलकस्नानं पित्तघ्नं तिमिरापहम् ।

मुलैठी और आमलेके साथ पके पानीसे स्नान करनेसे पित्त और तिमिर रोग नष्ट होता है ।

(५६९०) मधुयोगः (१)

(वै. जी. । विलास ४)

मदनज्वरकारिनामधेये
रसिके रत्नकले प्रभातकाले ।
शिशिराम्बु पिबन्मधुप्रयुक्तं
गणनाथोपि भवेत्किलास्थिशेषः ॥

शीतल जलमें शहद मिलाकर प्रातःकाल पीनेसे अत्यन्त प्रवृद्ध स्थूलता भी नष्ट हो जाती है ।

(५६९१) मधुयोगः (२)

(यो. त. । त. ७५)

मधुच्छागीपयः पीतं किंवा श्वेताद्रिकर्णिका ।
पारावतमलं पीतं त्र्यहं तण्डुलवारिणा ॥
गर्भिणीगर्भतो रक्तं स्तम्भयेन्निपतद्द्रुतम् ॥

बकरीके दूधमें शहद डाल कर पीनेसे, अथवा सफेद कोयल या कबूतरकी विष्ठाको चावलोंके पानीमें पीस कर पीनेसे ३ दिनमें गर्भिणीका रक्त-स्राव बन्द हो जाता है।

(५६९२) मधुसर्पिरादियोगः

(वृ. मा. । ज्वरा.)

मधु सर्पिः सिता कृष्णा भृतक्षीरविलोडिता।
विषमज्वरहृद्रोगक्षतकासज्वरापहा ॥

शहद, घी, मिश्री (२-२ तोला) और पीपलका चूर्ण (१।। माशा) लेकर सबको पके हुवे दूधमें मिला कर सेवन करनेसे विषमज्वर, हृद्रोग और क्षतज कासका नाश होता है।

(५६९३) मरिचशोधनम्

(यो. र. । प्रथम भाग.)

मरीचं चाम्लतक्रेण भावितं घटिकात्रयम्।
मरीचं निस्तुषं कृत्वा शुद्धं भवति निश्चितम् ॥

काली मिर्चोंको ३ घड़ी तक खट्टे तक्रमें भिगो कर छील लेनेसे वे शुद्ध हो जाती हैं।

(५६९४) मसूरसक्तुयोगः

(वृ. यो. त. । त. ८३)

मसूरसक्तवः क्षौद्रं मर्दितं दाडिमाम्भसा।
पीता निवारयन्त्याशुच्छर्दिं दोषत्रयोद्भवाम् ॥

मसूरके सत्तूमें शहद और अनारका रस मिला कर पिलानेसे त्रिदोषज छर्दि शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(५६९५) महाऽगदः

(वं. से ; वृ. मा. । विषा. ; ग. नि. सर्पविष. ३., आ. वे. वि. । चि. अ. ८२)

त्रिवृद्विशल्या मधुकं हरिद्रे
माञ्जिष्ठवर्गो लवणं च सर्वम्[1]।
कटुत्रिकं चैव विचूर्णितानि
शृङ्गे निदध्यान्मधुसंयुतानि ॥
एषोऽगदो हन्त्युपयुज्यमानः
पानाञ्जनाभ्यञ्जननस्ययोगैः।
अवार्यवीर्यो विषवेगहन्ता
महागदो नाम महाप्रभावः ॥

निसोत, गिलोय, मुलैठी, हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको शहदमें मिलाकर सींगमें भर कर रख दें।

यह अगद सर्पादिके भयंकर विषको भी नष्ट कर देता है। अत्यन्त प्रभावशाली है।

इसे पान, अञ्जन, अभ्यंग और नस्य द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

(५६९६) महागन्धहस्तीनामाऽगदः

(च. सं. । चि. अ. २३)

पत्रागुरुमुस्तैला निर्यासाः पञ्च चन्दनं स्पृका।
त्वङ्नलदोत्पलबालकहरेणुकोशीरव्याघ्रनखाः॥
सुरदारुकनककुङ्कुमध्यामककुष्ठप्रियङ्गवस्तगरम्।
पञ्चाङ्गानि शिरीषाद्वयोषालमनःशिलाजाज्यः॥
श्वेताकटभी करञ्जो रक्षोघ्नः सिन्धुवारिका रजनी।
सुरसरसाञ्जनगैरिकमञ्जिष्ठानिम्बपत्रनिर्यासाः ॥

[1] १—रक्ता नरेन्द्री लवणञ्च वर्गः

वंशत्वगश्वगन्धा हिङ्गु दधित्थाम्लवेतसं लाक्षा।
मधुमधूकसोमराजीवचारुहारोचनातगरम् ॥
अगदोऽयं वैश्रवणायाख्यातस्त्रयम्बकेण षष्टचङ्गः
अप्रतिहतप्रभावः ख्यातो महागन्धहस्तीति ॥
पित्तेन गवां पेष्या गुलिकाः कार्यास्तु पुष्य-
योगेन।
पानाञ्जनप्रलेपैः प्रसाधयेत्सर्वकर्माणि ॥
पिल्लं कण्डूं तिमिरं रात्र्यन्ध्यं काचमर्बुदं पटलम्
हन्ति सततप्रयोगाद्धितमितपथ्याशिनां पुंसाम् ॥
विषमज्वरानजीर्णान्ददुकण्डूविसूचिकापामाः।
कुष्ठं किटिभं श्वित्रं विचर्चिकां चोपहन्ति नृणाम्
विषं मूषिकलूतानां सर्वेषां पन्नगानां च।
आशु विषं नाशयति मूलजमथ कन्दजं सर्वम् ॥
एतेन लिप्तगात्रः सर्पान् गृह्णाति भक्षयेच्च विषम्
कालपरीतोऽपि नरो जीवति नित्यं निरातङ्कः॥
आनद्धे गुदलेपो योनौ लेपश्च मूढगर्भाणाम्।
मूर्च्छार्तिषु च ललाटे लेपनमाहुः प्रधानतमम् ॥
भेरीमृदङ्गपटहान् छत्राण्यमुना तथा ध्वजपताकाः
लिप्त्वाऽहिविषनिरस्त्यै प्रध्वनयेद्दर्शयेन्मतिमान्॥
यत्र च सन्निहितोऽयं न तत्र बालग्रहा न रक्षांसि
न च कार्मणवेताला भजन्ति नाथर्वणा मन्त्राः
सर्वग्रहा न तत्र प्रभवन्ति न चाग्निशस्त्रनृपचौराः
लक्ष्मीश्च तत्र भजते यत्र महागन्धहस्त्यस्ति ॥
पिष्यमाण इमं चात्र सिद्धं मन्त्रमुदीरयेत्।
मम माता जया नाम विजयो नाम मे पिता ॥
सोऽहं जयो जयापुत्रो विजयोऽथ जयामि च।
नमः पुरुषसिंहाय विष्णवे विश्वकर्मणे ॥
सनातनाय कृष्णाय भवाय विभवाय च।
तेजो वृषाकपेः साक्षात्तेजो ब्रह्मेन्द्रयोर्यमे ॥
यथाहं नाभिजानामि वासुदेवपराजयम्।
मातुश्च पाणिग्रहणं समुद्रस्य च शोषणम् ॥
अनेन सत्यवाक्येन सिध्यतामगदो ह्ययम्।
हिलिहिलिमिलिमिलिसंसृष्टे रक्ष सर्वं भेष-
जोत्तमे स्वाहा ॥

इति महागन्धहस्ती नामाऽगदः।

तेजपात, अगर, नागरमोथा, इलायची, पञ्च-निर्यास (राल, गूगल, सिल्हक, लोबान और अफीम), चन्दन, स्पृक्का (असवरग), दालचीनी, जटामांसी, कमल, सुगन्धबाला, रेणुका, खस, नखी नामक गन्ध द्रव्य, देवदारु, धतूरा, केसर, गन्धतृण, कूठ, फूलप्रियङ्गु, तगर, सिरसका पंचांग (छाल, फूल, पत्र बीज, जड़); सोंठ, मिर्च, पीपल, हरताल, मनसिल, जीरा, अपराजिता (सफेद फूलकी कोयल), कटभी (अपराजिता भेद या छोटी माल कंगनी), करञ्ज, सफेद सरसो, संभालु, हल्दी, तुलसी, रसौत, गेरु, मजीठ, नीमके पत्तोंका रस, बांसकी छाल, असगन्ध, हींग, कैथ, अम्लवेत, लाख, मुलैठी, महुवेके फूल, बावची, वच, रुहा (दूर्वा या मांसरोहिणी) गोरोचन और तगर; पुष्य नक्षत्रमें ये साठ ओषधियां समान भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें और उसे गोपित्तमें* घोटकर गोलियां बना लें।

इसे पान अञ्जन और प्रलेप द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

इसे हित मित पथ्य भोजन करते हुवे आंखमें

*मूल पाठमें गोपित्त शब्द है परन्तु १० वर्षका पुराना गोघृत मिलानेसे भी गुण दायक सिद्ध होगा।

लगानेसे पिल्ल, आंखकी खुजली, तिमिर, रतौंधा, काच, अर्बुद और पटलादि नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

यह अगद विषम ज्वर, अजीर्ण, दाद, खुजली, विसूचिका, पामा, कुष्ठ, किटिभ, श्वेत कुष्ठ, विचर्चिका, चूहेका विष, मकड़ीका विष, समस्त प्रकारके सर्पोंका विष, मूलविष और कन्द विष इत्यादिको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

इस अगदका शरीर पर लेप करके सर्पको पकड़ लिया जाय या विष भक्षण कर लिया जाय तो भी प्राण हानि नही हो सकती।

यदि विषके प्रभावसे मृतप्राय: व्यक्ति पर भी इसे प्रयुक्त किया जाय तो वह स्वस्थ हो जाता है। आध्मान रोगमें गुदा पर और मूढगर्भमें योनिपर इसका लेप करना चाहिये। मूर्च्छा और शिर पीड़ामें शिर पर इसका लेप करना अत्यन्त लाभदायक है।

भेरी, मृदङ्ग और ढोल आदि बाजों पर इसका लेप करके उन्हें सर्पविष–ग्रस्त मनुष्यके सामने बजाने और छत्र, ध्वजा तथा पताका पर लेप करके उसे दिखानेसे विष नष्ट हो जाता है।

जिस स्थानमें यह अगद रहता है वहां बालग्रह, राक्षस कार्मण, बेताल और विरोधियों द्वारा प्रयुक्त अथर्व वेदोक्त मन्त्र किसी प्रकारकी हानि नहीं कर सकते।

इसकी विद्यमानतामें अग्नि शस्त्र, राजा और चोरादि भी हानि नहीं पहुंचा सकते। (जिसके पास यह औषध होगी उससे सभी लोग अपने स्वार्थ वश या उसकी महत्ताके विचारसे मित्र भाव रक्खेंगे और उसे राजा तथा चोरादि भी हानि न पहुंचाएंगे, न उस पर कोई शस्त्र प्रहार करेगा और न अग्नि लगायगा।)

जिसके पास यह अगद होगा उसे धनकी कमी न रहेगी।

इसे तैयार करते समय " मम माता........ स्वाहा " मन्त्रका जाप* करते रहना चाहिये।

(५६९७) महाद्रावकम् (१)

(भै. र. । प्लीह. ; धन्व. । उदर.)

यवक्षारस्य भागौ द्वौ स्फटिकारिस्त्रयो मताः।
एकीकृत्य प्रपिष्यापि मूत्रैर्वत्सतरीभवैः ॥
शुष्कं कृत्वा क्षिपेत्पात्रे शैशके वस्त्रलेपिते।
अन्यशीशकपात्रेण मुखं सम्मेलयेद् बुधः ॥
पात्रस्याधःप्रदीप्ताग्नेः सौषधान्नलिकान्वितात्।
पात्रेऽन्यस्मिन् रसो याति बाष्परूपेण सञ्चितः॥
ततो रसं विनिष्कृष्य स्थापयेत्स्निग्धभाजने।
लवङ्गेन वटीं कुर्यादथवा मृतताम्रकैः ॥
प्लीहादिस्थूलरोगेषु दापयेद्रक्तिकां भिषक्।
दूरीकरोति रोगश्च महाद्रावकसंज्ञकः ॥
श्वित्रे च दद्रुरोगे च प्रलेपं द्रावकस्य च।
वह्निवज्ज्वलनं तस्य दधि दत्त्वा प्रलापयेत् ॥

२ भाग जवाखार और ३ भाग फटकीको

---

*मन्त्र जापको मिथ्यावाद न समझना चाहिये। मन्त्र, हिप्नोटिज्मका एक प्रधान अंग है। इसीको " सजेशन " कहते हैं। यदि सजेशन या मन्त्रका प्रयोग सन्देह रहित विश्वासके साथ विधिवत किया जाय तो अवश्य फलदायक होता है।

एकत्र पीस कर बछियाके मूत्रमें घोट कर सुखा लें और फिर उसे कपड़ मिट्टीकी हुई आतशी शीशीमें भर दें तथा उसके मुखमें एक तिरछी (कुहनी वाली) नली लगा कर उसका दूसरा सिरा एक अन्य शीशीके मुखमें लगा दें एवं औषधवाली शीशीको चूल्हे पर रक्खें और उसके नीचे अग्नि जलावें तथा दूसरी शीशीको पानीसे भरे हुवे पात्रमें रक्खें; पानी शीशीके गले तक रहना चाहिये।

इस क्रियासे औषध वाले पात्रसे वाष्प निकल कर खाली शीशीमें जायगी और द्रवरूप हो कर एकत्रित होती रहेगी। यह ध्यान रखना चाहिये कि वाष्प शीशीके बाहर इधर उधर न जाने पावे।

जब भाप उठनी बन्द हो जाय तो अग्नि बन्द कर दें। और "द्राव (अर्क)" को शीशीमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

(यह एक प्रकारका तेज़ाब है अतः ध्यान रखना चाहिये कि त्वचा और आंख इत्यादि को न लगे। इसे पानी या किसी अन्य औषधमें मिलाए बिना कदापि न पीना चाहिये।)

इसे लवङ्गके चूर्ण या ताम्र भस्ममें मिलाकर घोट कर गोलियां बना लेनी चाहियें।

इसे खानेसे प्लीहादि रोग और लगानेसे श्वित्र तथा दाद नष्ट होता है।

इसे लगानेसे तीव्र दाह होती है, उस पर दहीका लेप करनेसे वह शान्त हो जाती है।

(पानीमें डालकर या उपरोक्त लेखानुसार गोलियां बनाकर सेवन करना चाहिये।)

मात्रा—१ रत्ती (१ बूंद)।

(५६९८) महाद्रावकम् (२)

(धन्व. । उदर. ; भै. र. । उदरा.)

वृषश्चित्रमपामार्गं चिञ्चा कूष्माण्डनाडिका।
स्नुही तालस्य पुष्पश्च वर्षाभूर्वेतसं तथा॥
एतेषां क्षारमाहृत्य लिम्पाकस्वरसेन च।
क्षालयित्वा क्षारतोयं वस्त्रपूतश्च कारयेत्॥
चण्डातपेन संशोष्य ग्राह्यं तद् द्रवणोचितम्।
एतस्य द्विपलं ग्राह्यं यवक्षारपलद्वयम्॥
स्फटिकारिपलश्चैव नरसारपलन्तथा।
पलार्द्धं सैन्धवं ग्राह्यं टङ्कणं तोलकद्वयम्॥
काशीशं तोलकश्चैव मुद्राशङ्खश्च तोलकम्।
दारुमोचं कर्षकश्च तोलं समुद्रफेनकम्॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य वकयन्त्रेण साधयेत्।
महाद्रावकमेतद्धि योज्यश्च रसजारणे॥
हन्ति गुल्मादिकान् रोगान् यकृत्प्लीहोदरानि च

वासा, चीता, अपामार्ग (चिरचिटा), इमलीकी छाल, पेठेकी बेलकी डंडी (डंठल), सेंड (थोहर), तालके पुष्प, पुनर्नवा और बेत; इनके क्षार समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर नीबूके स्वरसमें घोल कर छान लें और फिर उस जलको प्रचण्ड धूपमें शुष्क करें।

अब यह क्षार १० तोले, यवक्षार १० तोले, फटकी ५ तोले, नौसादर ५ तोले, सेंधा नमक २॥ तोले, सुहागा १। तोला, कसीस ७॥ माशे, मुर्दाशंख ७॥ माशे, शुद्ध संखिया १। तोला और समुद्र फेन ७॥ माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर कांचके बकयन्त्र (भपके) से (पूर्व प्रयोगमें कथित विधिके अनुसार) अर्क खींचे।

यह द्रावक (अर्क) पारद जारणमें प्रयुक्त

होता है । तथा इसे सेवन करनेसे गुल्म, यकृत्, प्लीहा और उदर रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१ बूंद । पानीमें डालकर पिलावें ।)

(५६९९) महाद्रावकरसः

(भै. र. । प्लीहा.)

शुद्धं काञ्चनमाक्षिकं मृदुतरं कांस्याभिधं तत्तथा ।
सिन्धूत्थं विमलं रसाञ्जनवरं फेनः स्रवन्तापतेः ॥
क्षारौ सर्जिकसाम्भलौ सुविमलौ भागास्त्वमीषां समाः ।
सप्तानां सदृशन्तु टङ्कणमिहास्यार्द्धो नृसारः सितः ॥
तत्तुल्या स्फटिकारिका त्रिसदृशः शुक्लो यवस्याग्रजः ।
काशीशत्रितयं यवाग्रजसमं सञ्चूर्ण्य सर्वं न्यसेत्
पात्रे काचमये मृदम्बरवृते यन्त्रे बकाख्ये भिषक्
ज्वालेन क्रमवर्द्धिनात्यवहितोऽमीषां रसं पातयेत्
यो द्राग् भस्म वराटिकां प्रकुरुते सोऽयं महाद्रावकः ।
को वक्तुं प्रभवेदमुष्य नितरां सम्यग् गुणान् भूतले ॥
प्रासंग्यात् कथयामि तान् शृणु गुणानस्यैव कांश्चित्परान् ।
एतद्वल्लचतुष्टयं सह गिलेत् शुण्ठ्या लवङ्गेन वा
तत्पश्चात्परिवासितं बहुगुणं ताम्बूलकं भक्षयेत् ॥
निःशेषं विनिहन्त्यसौ चिरभवान्यष्टोदराणि ध्रुवम् ।
गुल्मं पाण्डुहलीमकं सुकठिनामष्ठीलिकां कामलां
मन्दाग्निं विषमाग्नितां बहुविधान् शोथांश्च शूलानपि ॥
सर्वार्शांसि भगन्दरान् क्रिमिगदान् पञ्चैव कासांस्तथा
हिक्काश्लीपदकोषवृद्धिमरुचिव्याधिं महादारुणम् ।
नव्यं वा चिरजं ज्वरं बहुविधं छर्दिं क्रिमीन् विंशतिं
यक्ष्माणं चिरजामवातपिडकावीसर्पविस्फोटकम् ॥
उन्मादं स्वरभेदमर्ब्बुदमपि स्वेदश्च हृत्पाणिजं
जिह्वास्तम्भगलग्रहं चिरभवं ग्रीवारुजामुल्वणाम् ।
नासाकर्णशिरोऽक्षिवक्त्रजगदान् क्षुद्रामयांश्चापरान्
हन्यादेव चिरोत्थितान् बहुविधानन्यांश्च रोगानपि ॥
एकः स्यादपरो हि टङ्कणमुखैर्द्रव्यैः परैः सप्तकैरन्यस्तु स्फटिकारिटङ्कणयवक्षाराग्रकाशीसकैः ।
जानीयाद् गुरुतो विभागमनयोर्यन्त्रादिकं चापरं
निर्दिष्टास्त्रय एव भेषजवराः स्वल्पो महान् मध्यमः ॥

टङ्कणादिकासीसान्तैः सप्तद्रव्यैर्मध्यमः । स्फटिकारिकाशीशान्तश्चतुर्द्रव्यै स्वल्पः । स्वर्णमाक्षिकादिकासीसत्रितयान्तैर्महान् ।

शुद्ध स्वर्ण माक्षिक और कांस्य माक्षिकका अत्यन्त महीन चूर्ण, सेंधा नमक, रसौत, समन्दर झाग, सज्जीखार और सांभलक्षार १–१ भाग सुहागा ७ भाग, नौसादर ३॥ भाग, फटकी ३॥ भाग, सफेद जवाखार १४ भाग और तीनों प्रकारके कसीस (कसीस, धातु कसीस, पुष्प कसीस) समान–भाग–मिश्रित १४ भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर, कपर मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें

भर कर (पूर्व प्रयोगमें कथित विधि के अनुसार) बकयन्त्र (भपके) द्वारा अर्क खींच लें। इसके नीचे प्रथम मन्दाग्नि जलानी और फिर उसे धीरे धीरे बढ़ाते जाना चाहिये ।

यह रस (अर्क) कौड़ियोंको शीघ्रही भस्म कर देता है। इसके पूर्ण गुणोंका वर्णन तो संसारमें कोई भी नहीं कर सकता तथापि यहां कुछ गुणोंका उल्लेख किया जाता है।

इसमेंसे ३ वल्ल रस शुण्ठी या लवंगके चूर्णके साथ खा कर सुगन्ध युक्त पुराना पान खाना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा—२—३ बूंद)

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके पुराने उदर रोग अवश्य नष्ट हो जाते हैं । यह रस गुल्म, पाण्डु, हलीमक, कठिन अष्ठीला, कामला, मन्दाग्नि, विषमाग्नि, अनेक प्रकारके शोथ, शूल, हर प्रकारके अर्श,भगन्दर, कृमि, पांच प्रकारकी खांसी, हिचकी, श्लीपद, अण्ड वृद्धि, अरुचि और नवीन तथा पुराना ज्वर, अनेक प्रकारकी छर्दि, यक्ष्मा, पुराना, आमवात (गठिया), पिडका, विसर्प, विस्फोटक, उन्माद, स्वरभेद, अर्बुद, (निर्बलतासे उत्पन्न होने वाला) छाती और हाथ पैरोंका पसीना, जिह्वा-स्तम्भ, गलग्रह, गर्दनकी पीड़ा, नाक कान शिर आंख और मुंहके रोग और बहुतसे क्षुद्र रोग तथा अन्य अनेक प्रकारके जीर्ण रोगोंको नष्ट करता है।

यह द्रावक ३ प्रकारका होता है—(१) महान (२) मध्यम और (३) स्वल्प ।

उपरोक्त सम्पूर्ण औषधोंसे निर्मित रसको महा द्रावक कहते हैं। सुहागा, नौसादर, फटकी, जवाखार और तीनों कसीससे निर्मित मध्यम द्रावक और फिटकी, सुहागा, जवाखार तथा कसीससे निर्मित स्वल्प द्रावक कहलाता है।

इनके बनानेकी विधि गुरुसे सीखनी चाहिए।

(५७००) महाशाल्वणयोगः

(यो. र. । वातव्या. ; शा. ध.)

कुलत्थमाषगोधूमैरतसीतिलसर्षपैः ।
शतपुष्पादेवदारुशेफालीस्थूलजीरकैः ॥
एरण्डबिल्वमूलैश्च रास्नामूलैश्च शिग्रुभिः ।
मिशिकृष्णाकुठेरैश्च लवणैरम्लसंयुतैः ॥
प्रसारण्यश्वगन्धाभ्यां बलाभिर्दशमूलकैः ।
गुडूच्या वानरीबीजैर्यथालाभं समाहृतैः ॥
क्षुण्णैः स्विन्नैश्च वस्त्रेण धृतैः संस्वेदयेन्नरम् ।
महासाल्वणसंज्ञोयं योगः सर्वानिलार्तिजित् ॥

कुलथी, उड़द, गेहूं, अलसी, तिल, सरसों, सोया, देवदारु, शेफालिका (संभालु), कलौंजी, अरण्डमूल, बेलकी जड़की छाल, रास्नामूल, सहं-जनेकी जड़, सौंफ, पीपल, बनतुलसी, पांचों नमक, प्रसारणी, असगन्ध, बला (खरैटी) दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, गिलोय और कौंचके बीज। इनमेंसे जितनी औषधियां मिल सकें वे सब समान भाग ले कर कूट कर कांजीमें पकावें। (पकाकर पुल-टिसके समान बना लें।)

इसे वस्त्र पर फैला कर उससे वातपीड़ित अङ्गको स्वेदित करनेसे हर प्रकारकी वातज पीड़ा नष्ट होती है।

(५७०१) मातुलिङ्गादिकवलः

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

अरुचौ मातुलुङ्गस्य केसरं साज्य सैन्धवम् ।

धात्रीद्राक्षासितानां वा कल्कमास्ये तु धारयेत् ॥

बिजौरे नीबूकी केसरको पीस कर उसमें घी और (स्वाद योग्य) सेंधा नमक मिला कर मुखमें धारण करनेसे अथवा आमले, मुनक्का और मिसरीको पीस कर मुखमें धारण करनेसे अरुचि नष्ट होती है ।

(५७०२) **मानमण्डः**

(धन्वन्तरि । शोथा. ; व. से. । शोथा., उदर रोगा.)

पुराणं मानकं पिष्ट्वा द्विगुणीकृततण्डुलम् ।
साधितं क्षीरतोयाभ्यामभ्यसेत् पायसं तु तत् ॥
हन्ति वातोदरं शोथं ग्रहणीं पाण्डुतामपि ।
सिद्धो भिषग्भिराख्यातः प्रयोगोऽयं निरत्ययः॥

१ भाग पुराने मानकन्दको पीस कर २ भाग चावलोंमें मिलावें और फिर उसमें सात गुना दूध तथा उतनाही पानी मिलाकर पकावें ।

यह मण्ड* वातोदर, शोथ, ग्रहणी दोष और पाण्डुको नष्ट करता है ।

(५७०३) **माषपायसः**

(रा. मा. । रसा. वाजीकर. ३२; र. र. रसा. ख. । उ. ६.)

माषैर्द्विधा विदलितैर्घृतसम्प्लुतैर्यः
संसाध्य पायसमतुच्छघृतं सिताढ्यम् ।
अश्नात्यसावविरतं रतमातनोति
योषिच्छतेन सममप्रतिबद्धवेगः ॥

उड़दकी दालको घीमें चिकना करके (भून-कर) दूधमें पकावें । जब खीर तैयार हो जाय तो उसमें खूब घी डाल कर तथा मिसरीसे मीठा करके खाएं ।

यह पायस (खीर) इतनी वाजीकरण है कि इसे सेवन करनेसे सैकड़ों स्त्रियोंसे रमण करनेकी शक्ति आ जाती है ।

(५७०४) **माषादियोगः**

(सु. सं. । अ. २६ वाजीकर.)

माषान् विदारीमपि सोच्चटाश्च ।
क्षीरे गवां क्षौद्रघृतोपपन्नाम् ॥
पीत्वा नरः शर्करया सुयुक्ताम् ।
कुलिङ्गवद्दृष्यति सर्वरात्रम् ॥

उड़द, विदारी कन्द और चौंटलीको पीस कर गोदुग्धमें पका कर खीर बनावें और उसमें घी, शहद तथा (स्वाद योग्य) मिश्री मिलाकर पियें ।

इसे खानेसे काम शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि मनुष्य रातभर कुलिङ्ग वत बार बार स्त्रीसमागम कर सकता है ।

नोट—चौंटली बहुत थोड़े परिमाणमें (आधा माशा) लेनी चाहिये ।

(५७०५-६) **मुखधावनयोगौ**

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

कारञ्जं दन्तकाष्ठं च विधेयमरुचौ सदा ।
किञ्चिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत् ॥
तेन गण्डूषकं कुर्यादास्य वैरस्य शान्तये ॥

(१) अरुचिमें सदैव करञ्जकी दातौन करनी चाहिये ।

(२) काञ्जीमें जरासा नमक डालकर पकाकर उसके गण्डूष (कुल्ले) करनेसे अरुचि नष्ट होती है ।

*मण्ड बनानेके लिये अन्नसे १४ गुना पानी डालकर इतना पकाना चाहिये कि उसमें मोटे कण न रहने पावें ।

(५७०७) मुखधावनयोगः

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

अजाजी मरिचं कुष्ठं बिडं सौवर्चलं तथा ।
मधुकं शर्करा तैलं वातिके मुखधावनम् ॥

जीरा, काली मिर्च, कूठ, बिडलवण, सञ्चल (काला नमक), मुलैठी और खांड समान भाग ले कर, चूर्ण बनाकर उसमें तेल मिलाकर उससे मुख स्वच्छ करनेसे वातज अरुचि नष्ट होती है ।

(५७०८) मुशल्यादियोगः

(नपुंसका मृता. । त. ३; यो. र. । वाजीक.)

मुसलिकोकिलगोक्षुरचूर्णकं
शशिविलोचनरामभितं पचेत् ।
पयसि प्रातरिदं यदि कोष्णके
सुसितया खलु टङ्कषट्कया ॥
त्रिगुणसप्तदिनं परिभक्षय-
न्छतवया अपि कांक्षति कामिनीम् ।
किमिह चित्रमुदित्वरयौवनः
शशिमुखीं शयनान्न जहाति सः ॥

काली मूसली १ भाग, तालमखाना २ भाग और गोखरु तीन भाग लेकर सबको कूट छानकर दूधमें पकावें और उसमें २॥ तोले मिश्री मिलाकर मन्दोष्ण करके प्रातःकाल पियें ।

इसे २१ दिन तक सेवन करनेसे १०० वर्षके वृद्ध पुरुषको भी स्त्री समागमकी शक्ति प्राप्त हो जाती है ।

(चूर्णकी मात्रा—६ माशे।)

(५७०९)मुष्टियोगः

(भै. र. । ज्वरातिसा.)

गुञ्जामितमहिफेनं छगलीदुग्धेन युञ्जानम् ।
अतिसरणं बहुवेगं दुर्वारं धारयत्याशु ॥
अहिफेनातियोगेन नातिसारो निवर्तते ।
किन्त्वस्य बहुभिर्योगैर्मामृतो मृत एव सः ॥

१ रत्ती अफीमको बकरीके दूधके साथ देनेसे तीव्र वेग वाला भयङ्कर अतिसार भी रुक जाता है ।

अफीम अधिक मात्रामें सेवन न करानी चाहिये क्यों कि इससे अतिसार बन्द नहीं होता बल्कि हानि ही होती है । (थोड़ी मात्रामें देनेसे ही लाभ होता है ।)

(५७१०) मुस्ताद्युद्वर्तनम्

(वा. भ. । चि. अ. १९; ग. नि. । कुष्ठा. २६)

मुस्तामृतासङ्गकटङ्कटेरी
कासीसकम्पिल्लककुष्ठरोध्राः ।
गन्धोपलः सर्जरसो विडङ्गं
मनःशिलाले करवीरकत्वक् ॥
तैलाक्तगात्रस्य कृतानि चूर्णा-
न्येतानि दद्यादवचूर्णनार्थम् ।
दद्रूः सकण्डूः किटिभानि पामा
विचर्चिका चैव तथैति शान्तिम् ॥

नागरमोथा, नीलाथोथा, हल्दी, कसीस, कमीला, कूठ, लोध, गन्धक, राल, बायबिड़ंग, मनसिल, हरताल और कनेरकी छाल समान भाग ले कर महीन चूर्ण बनावें ।

शरीर पर तैलकी मालिश करके यह चूर्ण मलनेसे दाद, खाज, किटिभ, पामा और विचर्चिका आदि रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(५७११) मूत्रयोगः

(वृ. मा. । कर्णरो.)

अष्टानामपि मूत्राणां मूत्रेणान्यतमेन च ।
कोष्णेन पूरयेत्कर्णं कर्णशूलोपशान्तये ॥

अष्ट मूत्र (गो, बकरी, भेड़, भैंस, घोड़ी, हथिनी, ऊंटनी और गधीके मूत्र) में से किसी एकको थोड़ा गर्म करके कानमें भरनेसे कर्ण शूल नष्ट होता है ।

(५७१२) मूलिकाबन्धनम्

(ग. नि. ; भै. र. । ज्वरा.)

काकजङ्घा बला श्यामा ब्रह्मदण्डी कृताञ्जलिः।
पृष्ठिपर्ण्यपामार्गस्तथा भृङ्गरजोऽष्टमः ॥
एषामन्यतमं मूलं पुष्येणोद्धृत्य यत्नतः ।
रक्तसूत्रेण संवेष्ट्य बद्धमेकाहिकं जयेत् ॥

काकजंघा, बला (खरैटी), बिधारा, ब्रह्मदण्डी, लज्जालु, पृष्ठपर्णी, अपामार्ग (चिरचिटा) और भंगरे में से किसी एककी जड़को पुष्य नक्षत्रमें उखाड़ कर लाल डोरेमें बांध कर रोगीके (शिर पर) बांधनेसे इकतरा ज्वर नष्ट होता है ।

(५७१३) मूलिकादिधारणम्

(वृ. नि. र. । गुल्म.)

लाङ्गल्या वापामार्गोत्थैरिन्द्रवारुणिकापि वा ।
शूलं योनिगतं स्त्रीणां धारणं पुष्परोधनुत् ॥

लांगली (कलियारी) की जड़, या चिरचिटेकी जड़ अथवा इन्द्रायणकी जड़ योनिमें रखनेसे योनि शूल नष्ट होता और रुका हुवा ऋतुस्राव खुल जाता है ।

(५७१४) मूषकपुरीषयोगः

(यो. र. । प्रदरा.)

आखोः पुरीषं पयसा निपीय
वह्नेर्बलादेकमहर्द्व्यहं वा ।
स्त्रियस्त्र्यहं वा प्रदरं स्रवन्त्यः
प्रसह्य पारं परमाप्नुवन्ति ॥

चूहेकी मींगन (विष्ठा) को अग्नि बलानुसार १, २ या ३ दिन दूधके साथ पीनेसे स्त्रियोंका प्रदर रोग नष्ट हो जाता है ।

(५७१५) मृत्पिण्डप्रयोगः

(व. से. । बालरो.)

मृत्पिण्डेनाग्निवर्णेन क्षीरसिक्तेन सोष्मणा ।
स्वेदयेदुत्थितां नाभिं शोथस्तेनोपशाम्यति ॥

मिट्टीके ढेलेको अग्निमें तपा कर लाल करें और फिर उस पर दूध छिड़कें; इससे जो भाप (वाष्प) निकले उससे बालककी नाभिको सेंकनेसे नाभि शोथ नष्ट होता है ।

(५७१६) मृतसञ्जीवनोऽगदः

(च. स. । चि. अ २३)

स्पृक्काप्लवस्थौणेयकाकाक्षी शैलेयरोचनातगरम्
ध्यामककुङ्कुममांसीसुरसाग्रैलालकुष्ठघ्नम् ॥
बृहती शिरीषपुष्पं श्रीवेष्टकपद्मचारटिविशाला
सुरदारुपद्मकेशरसावरकमनःशिलाकौन्त्यः ॥
जात्यर्कपुष्परसरजनीद्वयहिङ्गुपिप्पलीलाक्षाः ।
जलमुद्गपर्णिचन्दनमधूकमदनसिन्धुवाराश्च ॥
शम्पाकलोध्रमयूरकगन्धफलीनाकुलीविडङ्गाश्च
पुष्ये संहृत्य समं पिष्ट्वा गुलिका विधेयाः स्युः
सर्वविषघ्नो जयकृद्विषमृतसञ्जीवनो ज्वरनिहन्ता
ग्रेयविलेपनधारणधूमग्रहणैर्गृहस्थश्च ॥

भूतविषजन्त्वलक्ष्मीकार्मणमन्त्राग्न्यशन्यरीन्ह-न्यात् ।
दुःस्वप्नस्त्रीदोषानकालमरणाम्बु चौरभयम् ॥
धनधान्यकार्यसिद्धिः श्रीपुष्ट्यायुर्विवर्धनो धन्यः ।
मृतसञ्जीवन एष प्रागमृताद्ब्रह्मणा विहितः ॥

स्पृक्का (असबरग), केवटी मोथा, थुणेर, गोपीचन्दन, छारछरीला, गोरोचन, तगर, ध्यामक (गन्ध तृण), केसर, जटामांसी, तुलसीकी मञ्जरी, इलायची, हरताल, पंवाड़के बीज, बड़ी कटेली, सिरसके फूल, श्रीवेष्ट (श्रीवास), पद्मचारटी (स्थल पद्म), इन्द्रायणकी जड़, देवदारु, कमल केसर, सावरलोध, मनसिल, रेणुका, चमेलीके फूलोंका रस, आकके फूलोंका रस, हल्दी, दारुहल्दी, हींग, पीपल, लाख, सुगन्ध बाला, मुद्गपर्णी, चन्दन, महुवेके फूल, मैनफल, संभाळु, अमलतास, पठानी लोध, चिरचिटा, फूलप्रियंगु, नाकुली, (नाई) और बायबिड़ंग ।

पुष्य नक्षत्रमें ये सम्पूर्ण चीजें समान भाग ले कर अत्यन्त महीन पीस कर गोलियां बनावें । (और छायामें सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।)

यह अगद समस्त प्रकारके विषोंको नष्ट करता है । इसके अतिरिक्त यह ज्वर, भूत, कृमि (रोग जीवाणु), विपरीत मन्त्रोंके दुष्ट प्रभाव, अलक्ष्मी, शत्रु, अग्नि, अशनि, दुःस्वप्न, स्त्री दोष, अकाल मृत्यु, जल भय और चोरभय को भी दूर कर देता है ।

इसके प्रभावसे धन धान्य, कार्य सिद्धि, श्री, पुष्टि और आयुकी वृद्धि होती है ।

आवश्यकतानुसार इसे सूंघना, इसका लेप और धूम्र पान करना चाहिये ।

(५७१७) मेघनादमूलबन्धनम्

(वै. जी. । विलास १)

क्षणमपि चलतां जहीहि मुग्धे
शृणु वचनं मम तन्वि सावधाना ।
वसति शिरसि मेघनादमूले
व्रजति तरां विषमो विलासदृष्टे ॥

चौलाईकी जड़को शिरपर बांधनेसे विषमज्वर नष्ट हो जाता है ।

(५७१८) मेघनादमूलयोगः

(वै. म. र. । पटल १६)

मेघनादशिफासमानतडागशुक्तियुतं पयः ।
सेचितं च निहन्ति तोदमसह्यमक्षिभवं नृणाम् ॥

मेघनाद (चौलाई) की जड़को दूधमें पीसकर उसमें शुक्ति (सीप) घिसकर आंखमें डालनेसे असह्य नेत्र पीड़ा भी शान्त हो जाती है ।

(५७१९) मोचरससिद्धक्षीरम्

(ग. नि. । र. पि. ८)

विशेषतो विट्पथसंप्रवृत्ते
पयो हितं मोचरसेन सिद्धम् ।
वटावरोहैर्वटशुङ्गकैर्वा
ह्रीवेरनीलोत्पलनागरैर्वा ॥

१ तोला मोचरसको कूटकर १६ तोले दूधमें मिलावें और उसमें ६४ तोले पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब सब पानी जल जाय तो दूधको छान लें ।

यह दूध मलमार्गसे निकलने वाले रक्तमें विशेष उपयोगी है ।

इसीके समान बड़के अंकुर, या बड़की कोंपल अथवा सुगन्धबाला, नीलोत्पल और सोंठसे सिद्ध दूध भी गुदासे जाने वाले रक्तको बन्द करता है।

(५७२०) **मोचरसादियवागूः**

(ग. नि. । बाल रोगा. ११; यो. चि. म. । अ. ४ ; भा. प्र. । म. खं. बालरोगा. ; च. द. । बालरोगा. ६३.)

मोचरसः समङ्गा च धातकी पद्मकेसरम् ।
पिष्टैरेतैर्यवागूः स्याद्रक्तातीसारनाशनी ॥

मोचरस, मजीठ, धायके फूल और कमल-केसर समान भाग ले कर पीस कर उससे यवागू बना कर देनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है।

इति मकारादिमिश्रप्रकरणम्

य

अथ यकारादिकषायप्रकरणम्

(५७२१) **यवादिक्वाथः** (१)

(वृ. नि. र. । पित्तकफज्वर.)

यवपद्मकधान्याकं द्वे हरिद्रे द्वे सुचन्दने ।
गुडूचीदेवकाष्ठं च तेजोह्वा सदुरालभा ॥
श्रपयित्वा पिबेत्क्वाथं कफपित्तज्वरापहम् ।
पिपासाछर्दिदाहघ्नं वृष्यं वह्नि विदीपनम् ॥

जौ, पद्माख, धनिया, हल्दी, दारुहल्दी, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, गिलोय, देवदारु, चव्य और धमासा । ये सब ओषधियां समान भाग ले कर आठ गुने पानीमें पकावें और जब चौथा भाग शेष रहे तो छान लें।

यह क्वाथ पियास, छर्दि, दाह और कफ-पित्तज-ज्वरको नष्ट करता है। यह वृष्य और अग्निदीपक भी है।

(प्रत्येक वस्तु १ तोला । पानी ८८ तोले। शेष २२ तोले।)

(५७२२) **यवादिक्वाथः** (२)

(वृ. मा. । अम्लपित्त. ; यो. र. । अम्ल. ; यो. त. । त. ६४; ग. नि. ; वृ. नि. र. । अम्लपि;. वृ. यो. त. । त. १२२)

निस्तुषयववृषधात्रीक्वथितं
सलिलं त्रिगन्धमधुसहितम् ।
द्रुततरमपि हरति वमिं
सञ्जनितामम्लपित्तेन ॥

छिलके रहित जौ, बासा और आमला समान भाग लेकर क्वाथ बनावें

इसमें त्रिगन्ध (दालचीनी, इलायची, तेजपात) का चूर्ण और शहद मिलाकर पिलानेसे अम्लपित्त जनित वमन नष्ट होती है।

(यवादि प्रत्येक वस्तु २-२ तोले। पानी ४८ तोले। शेष १२ तोले। शहद २ तोले। दालचीनी आदि प्रत्येक वस्तुका चूर्ण १ माशा.)

(५७२३) यवादिक्वाथः (३)

(यो. र. । मूत्रकृच्छ्र. ; वृ. नि. र.)

यवोरुबूकस्तृणपञ्चमूली
पाषाणभेदैः सशतावरीभिः ।
कृच्छ्रेषु गुल्मेष्वभयाविमिश्रैः
कृतः कषायो गुडसंप्रयुक्तः ॥

जौ, अरण्डमूल, तृणपञ्चमूल (कुशा, कास, ईख, शरकंडा और दाभकी जड़) पाषाण भेद, शतावर और हर्रे के क्वाथमें गुड़ मिला कर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और गुल्म नष्ट होता है।

(जौ इत्यादि प्रत्येक वस्तु आधा तोला। पानी ४० तोले। शेष १० तोले।)

(५७२४) यवादिक्वाथः (४)

(वृ. मा. । अम्लपित्त. ; यो र. ; ग. नि. ; वृ. नि. र.)

यवकृष्णापटोलानां क्वाथं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
नाशयेदम्लपित्तं च अरुचिं च वमिं तथा ॥

जौ, पीपल और पटोल के क्वाथ में शहद डाल कर पीनेसे अम्लपित्त, अरुचि और वमन का नाश होता है।

(जौ इत्यादि प्रत्येक वस्तु २-२ तोला। पानी ४८ तोले शेष १२ तोले।)

(५७२५) यवादिक्वाथः (५)

(वृ. नि. र. । पित्तकफज्वर.)

यवः पर्पटकं धान्यं पटोलारिष्टसाधितम् ।
पिबेत्सशर्करक्षौद्रं पित्तश्लेष्मज्वरापहम् ॥

जौ, पित्तपापड़ा, धनिया, पटोल और नीमकी छाल, समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें खांड और शहद मिलाकर पीनेसे पित्त कफज ज्वर नष्ट होता है।

(जौ आदि प्रत्येक वस्तु १ तोला। पानी ४० तोले। शेष १० तोले।)

(५७२६) यवादिशीतकषायः

(ग. नि. । ज्वर.)

यवान् भृष्टानुशीराणि समङ्गां काश्मरीफलम् ।
निदध्यादप्सु चालोड्य निशा पर्युषितं ततः ॥
क्षौद्रेण युक्तं पिबतो ज्वरः पैत्तः प्रशाम्यति ॥

भुने हुवे जौ, खस, मजीठ और खम्भारीके फल समान भाग ले कर सबको एकत्र कूट कर रात्रिके समय मिट्टीके बरतनमें स्वच्छ पानीसे भिगो दें। दूसरे दिन प्रातः काल औषधोंको मल कर छान लें।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे पित्त ज्वर शान्त होता है।

(जौ आदि प्रत्येक वस्तु आधा तोला, पानी १२ तोले। शहद १॥ तोला।)

(५७२७) **यवान्यादिक्वाथः**

(भा. प्र. ; वृ. नि. र. । कफ ज्वर.)

यवानी पिप्पली वासा तथा खाखसवल्कलम् ।
एषां क्वाथं पिबेत्कासे श्वासे च कफजे ज्वरे ॥

अजवायन, पीपल, बासा और पोस्तका डोढा समान भाग लेकर काथ बनावें ।

यह क्वाथ खांसी, श्वास और कफज ज्वरको नष्ट करता है ।

(अजवायन आदि प्रत्येक वस्तु १। तोला । पानी ४० तोले । शेष काथ १० तोले ।)

(५७२८) **यवान्यादिदीपनकषायः**

(वृ; नि. र. ; यो. र. । आमातिसार.)

यवानीनागरोशीरधानिकातिविषाघनैः ।
बालबिल्वद्विपर्णीभिर्दीपनं पाचनं भवेत् ॥

अजवायन, सोंठ, खस, धनिया, अतीस, नागरमोथा, कच्चे बेलकी गिरी, शालपर्णी और पृष्ठपर्णी समान भाग ले कर काथ बनावें ।

यह काथ आमको पचाता और अग्निको दीप्त करता है ।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला । पानी आधा सेर । शेष काथ १० तोले ।)

(५७२९) **यवासकादिप्रक्षालनम्**

(ग. नि. । उपदंश.)

यवासकं शिरीषं च ककुभं खदिरासनौ ।
पिचुमन्दपलाशौ च धात्री सोन्दुरकर्णिका ॥
एतानि समभागानि कषायमुपसाधयेत् ।
तेन प्रक्षालनं कुर्यादुपदंशेषु बुद्धिमान् ॥
एतेनैव कषायेण व्रणतैलं विपाचयेत् ॥

जवासा, सिरसकी छाल, अर्जुनकी छाल, खैरसार, असना वृक्षका सार, नीमके पत्ते, पलाश (ढाक) की छाल, आमला और चूहाकन्नी समान भाग लेकर काथ बनावें ।

इस काथसे उपदंशके व्रण धोने चाहियें ।

इसी काथसे तैल पकाकर उपदंशके व्रणों पर लगाना चाहिये ।

(प्रत्येक ओषधि २ तोले । पाकार्थ जल १४४ तोले । शेष काथ ३६ तोले । तैल पाकार्थ यही काथ ४ सेर; तिल तेल १ सेर ।)

(५७३०) **यवासादिक्वाथः**

(वैद्यामृत.)

वातज्वरं हन्ति यवासविश्वा
मुस्ता गुडूची जनितः कषायः ।

जवासा, सोंठ, नागरमोथा और गिलोय समान भाग लेकर काथ बनावें ।

यह काथ वात ज्वरको नष्ट करता है ।

(प्रत्येक ओषधि १। तोला । पाकार्थ जल ४० तोले । शेष काथ १० तोले ।)

(५७३१) **यष्टयादिक्वाथः** (१)

(यो. र.; वृ. नि. र. । शीतपित्त.)

यष्टी मधूकपुष्पं च सरास्नं चन्दनद्वयम् ।
निर्गुण्डी सकणाक्वाथं शीतपित्तहरं पिबेत् ॥

मुलैठी, महुवेके फूल, रास्ना, सफेद चन्दन, लाल चन्दन और संभालु समान भाग लेकर काथ बनावें ।

इसमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे शीत–पित्त (पित्ती उछलना रोग) नष्ट होता है ।

(प्रत्येक ओषधि १ तोला । पाकार्थ जल ४८ तोले । शेष काथ १२ तोले । पीपलका चूर्ण १ माशा ।)

(५७३२) **यष्ट्यादिक्वाथः** (२)

(यो. र. ; व. से. । नेत्र)

यष्टीं गुडूचीं त्रिफलां सदार्वी-
मक्ष्यामये सर्वभवे पिवेद्वा ।
आश्चोतनं सान्द्ररसेन दार्व्याः
शस्तं सदा क्षौद्रयुतं नराणाम् ॥

मुलैठी, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला और दारुहल्दी समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसे पीनेसे सर्व दोषज नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

दारुहल्दीके स्वरस या काथको गाढ़ा करके उसमें शहद मिलाकर आंखमें डालना भी हितकारी है ।

(प्रत्येक ओषधि १ तोला, पाकार्थ जल ४८ तोले, शेष काथ १२ तोले ।)

(५७३३) **यष्ट्यादिक्वाथः** (३)

(ग. नि. । वातपित्त ज्वर.)

मधुयष्टिर्निशायुग्मं पटोलं व्याधिघातकः ।
मुस्तनिम्बामृताक्वाथो वातपित्तज्वरापहः ॥

मुलैठी, हल्दी, दारुहल्दी, पटोल, अमलतासका गूदा, नागरमोथा, नीमकी छाल और गिलोय समान भाग लेकर काथ बनावें ।

यह काथ वातपित्त-ज्वरको नष्ट करता है ।

(प्रत्येक ओषधि ९ माशे; पाकार्थ जल ४८ तोले; शेष काथ १२ तोले ।)

(५७३४) **यष्ट्यादिक्वाथः** (४)

(वृ. नि. र. । त्रिदोषातिसार.)

यष्टीमधुसितालोध्रं मधूकं नीलमुत्पलम् ।
अजाक्षीरेण क्वथितं रक्तातीसारशान्तये ॥

मुलैठी, लोध, मिसरी, महुवेके फूल, और नीलकमल समान भाग ले कर बकरीके दूधमें पकावें ।

इसके सेवनसे रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला; बकरीका दूध २० तोले; जल १ सेर; सबको एकत्र मिलाकर पकावें और दूध मात्र शेष रहने पर छान लें ।)

(५७३५) **यष्ट्यादिक्वाथः** (५)

(वृ. नि. र. । विषमज्वर.)

यष्टीदुरालभावासात्रिफलावालकामृता ।
मुस्ताक्वाथः सितायुक्तो विषमज्वरनाशनः ॥

मुलैठी, धमासा, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला सुगन्धबाला, गिलोय ओर नागरमोथा समान भाग लेकर काथ बनावें ।

इसमें मिसरी मिलाकर पीनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है ।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला; पाकार्थ जल ३६ तोले । शेष काथ ९ तोले ।)

(५७३६) **यष्ट्यादिक्वाथः** (६)

(वृ. नि. र. । सन्निपात ज्वर.)

यष्टीपटोलकटुकाघननिम्बसुराह्वधान्यः ।
अपहरन्ति मोहपित्तं ज्वरमुग्रं सन्निपातोत्थम्॥

मुलैठी, पटोल, कुटकी, नागरमोथा, नीमकी छाल, देवदारु और पृष्ठपर्णी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ उग्र सन्निपात ज्वर, मोह और पित्तको नष्ट करता है।

(प्रत्येक ओषधि ९ माशे; पाकार्थ जल ४० तोले; शेष क्वाथ १० तोले।)

(५७३७) **यष्ट्यादिक्वाथः** (७)

(वै. म. र. । पटल ७)

यष्ट्याह्वैलैर्वारुबीजेक्षुकाण्डैः
शीतः क्वाथो नालिकेराम्बुजन्मा।
पैत्तं कृच्छ्रं दाहतृष्णोष्णवातं
रक्तस्रावं मूत्रसादं हिनस्ति॥

मुलैठी, छोटी इलायची, ककड़ीके बीज और ईखकी पोरी (टुकड़े) समान भाग लेकर सबको कूटकर सायंकालको नारियलके पानीमें भिगो दें और दूसरे दिन प्रातः काल मलकर छान लें।

यह क्वाथ पित्तज मूत्रकृच्छ्र, दाह, तृष्णा, उष्णवात, रक्तस्राव और मूत्रावरोधको नष्ट करता है।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला; नारियलका पानी १२ तोले)

(५७३८) **यष्ट्यादिक्षीरम्**

(ग. नि.; वृ. नि. र. । रक्तपित्त.)

यष्टीमधुसमायुक्तं क्षीरं संक्वाथ्य शीतलम्।
शर्करामधुसम्मिश्रं रक्तपित्तापहं पिबेत्॥

मुलैठीके चूर्णके साथ दूध पकाकर ठण्डा करके उसमें खांड और शहद मिलाकर पीनेसे रक्तपित्त नष्ट होता है।

(मुलैठी २ तोले; दूध १६ तोले, पानी ६४ तोले लेकर सबको एकत्र मिला कर पकावें और जब पानी जल जाए तो दूधको छान लें।)

(५७३९) **यष्ट्यादियोगः**

(वृ. नि. र. । तृष्णा.)

यष्ट्याह्वां चन्दनोपेतां सम्यक् क्षीरेण पेषिताम्।
तेनैवालोड्य पातव्यं रुधिरच्छर्दिनाशनम्॥

मुलैठी और सफेद चन्दनको दूधमें बारीक पीसकर और दूधमें घोलकर पिलानेसे रक्तवमन नष्ट होती है।

(५७४०) **यष्ट्याद्याश्च्योतनम्**

(यो. र. । नेत्र.)

यष्ट्याह्वदार्व्युत्पलपद्मलाक्षा
प्रपौण्डरीकं नलदाम्बुना च।
आश्च्योतनं स्त्रीपयसा विपक्वं
निहन्ति तत्सव्रणदाहशुक्रम्॥

मुलैठी, दारुहल्दी, नीलोत्पल, पद्म (कमल), लाख, पुण्डरिया, खस, और सुगन्ध बाला समान भाग लेकर सबको स्त्रीदुग्धमें पका कर छान कर आंखमें डालनेसे दाह युक्त सव्रण नेत्रशुक्र (फूला) नष्ट होता है।

(५७४१) **यूथीमूलयोगः**

(ग. नि. । अश्मर्य. १९)

यूथीमूलं ग्रीष्मकालोद्गृहीतं
छागीक्षीरे सम्यगुत्क्वाथ्य पीतम्।

मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं सशूलं
हन्यात्क्षिप्रं शर्करामश्मरीं च ॥

ग्रीष्म कालमें उखाड़ी हुई जूहीकी जड़को बकरीके दूधमें पकाकर पीनेसे मूत्राघात, शूल युक्त मूत्रकृच्छ्र और शर्करा तथा अश्मरीका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

(जूहीकी जड़ ५ तोले, दूध ४० तोले, पानी १६० तोले। एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो दूधको छान लें।)

योगराजक्वाथः

(भा. प्र. । सन्निपात.)

प्र. सं. ३३६७ "नागरादि क्वाथः (१३)" देखिये।

(५७४२) योनिशूलहरो योगः

(वृ. नि. र. । स्त्रीरो.)

धात्रीरसं सितायुक्तं योनिदाहे पिबेत्सदा ।
सूर्यक्रान्ताभवं मूलं पिबेद्वा तण्डुलाम्बुना ॥

(१) आमलेके रसमें मिश्री मिलाकर पीनेसे योनिदाह नष्ट होती है।

(२) सूर्यकान्त (सूरजमुखी) की जड़को चावलोंके पानीमें पीसकर सेवन करनेसे भी योनिदाह नष्ट हो जाती है।

(५७४३) योनिसङ्कोचकक्वाथः

(र. रा. सु. । स्त्री.)

प्रक्षालयेद्भगं नित्यं पथ्यामलकवल्कलैः ।
वृद्धापि कामिनी कापि बालावत्कुरुते रतिम् ॥

हर्र और आमलेके क्वाथसे योनिको धोनेसे वृद्धा स्त्रीकी योनि भी बालिकाके समान हो जाती है।

(५७४४) योनिसङ्कोचकयोगः

(वृ. नि. र. । स्त्री रोग)

कपिकच्छूभवं मूलं क्वाथयेद्विधिना भिषक् ।
योनिः सङ्कीर्णतां याति क्वाथेनानेन धावनात् ॥

कौंचकी जड़को आठ गुने पानीमें पकावें और जब चौथा भाग शेष रहे तो छान लें।

इस क्वाथसे धोनेसे योनि सङ्कीर्ण हो जाती है।

इति यकारादिकषायप्रकरणम्



अथ यकारादिचूर्णप्रकरणम्

(५७४५) यमानिकादिचूर्णम्

(यो. र. ; व. से. ; ग. नि.; भै. र. । प्लीह.; वृ. मा. । उदर. ; वृ. नि. र. ; धन्व. । उदर.; वृ. यो. त. । त. १०५)

यमानिकाचित्रकयावशूकं
षड्ग्रन्थिदन्तीमगधोद्भवानाम् ।
प्लीहानमेतद्विनिहन्ति चूर्ण-
मुष्णाम्बुना मस्तुसुरासवैर्वा ॥

अजवायन, चीतामूल, जवाखार, वच, दन्तीमूल और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जल या मस्तु अथवा मद्य या

आसवके साथ सेवन करनेसे प्लीहा (तिल्ली) को आराम होता है।

(मात्रा—१—१॥ माशा ।)

(५७४६) यमान्यादिचूर्णम्

(भै. र. । क्षुद्र रोगा. ; वृ. नि. र. । शूला. ; भै. र. । गुल्म. ; ग. नि. । शूला. ; ग. नि. । गुल्म. ; वृ. मा. । गुल्म.)

यमानीहिङ्गुसिन्धूत्थक्षारसौवर्चलाभयाः ।
सुरामण्डेन पातव्या वातशूलनिषूदनाः ॥

अजवायन, भुनी हुई हींग, सेंधा नमक, जवाखार, काला नमक (संचल) और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे सुरामण्ड (मद्यके ऊपरवाले स्वच्छ भाग) के साथ सेवन करनेसे वातज शूल (और गुल्म) नष्ट होता है।

मात्रा—१ माशा।

(५७४७) यवक्षारयोगः (१)

(व. से. । बाल. ; यो. र. । मुख पाक.)

तालुपाके यवक्षारं मधुना प्रतिसारणम् ।

जवाखारको शहदमें मिलाकर मलनेसे तालुपाक नष्ट होता है।

(५७४८) यवक्षारयोगः (२)

(व. से. । गुल्म, उदर.)

क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपञ्चकम् ।
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

जवाखार, सज्जीखार, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, नीलकी जड़, सेंधा नमक, काला नमक (संचल), बिड लवण, कांच लवण और समुद्र लवण समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके गुल्म नष्ट होते हैं।

अनुपान—घीमें मिलाकर सेवन करें।

(**मात्रा**—२ माशे ।)

(५७४९) यवक्षारयोगः (३)

(व. से. । मूत्रकृच्छ्र. ; वृ. मा. ; ग. नि. ; वृ. नि. र.)

सितातुल्यो यवक्षारः सर्वकृच्छ्रप्रणाशनः ।
द्राक्षासितोपलाकल्कं कृच्छ्रघ्नं मस्तुना युतम् ॥

(वृ. मा. में श्लोकका उत्तरार्द्ध इस प्रकार है—

"निदिग्धिका रसो वाऽथ सक्षौद्रः कृच्छ्रनाशनः"

(१) जवाखार और मिसरी समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके मूत्रकृच्छ्र नष्ट होते हैं।

(मात्रा—१॥ माशा । अनुपान—मस्तु या उष्ण जल)

(२) मुनक्का और मिसरीको पत्थर पर पीसकर मस्तुके साथ सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(३) कटेलीके रसमें (या इलायचीके क्वाथमें) शहद मिला कर सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(५७५०) यवक्षारयोगः (४)

(राजमा. । स्त्री.)

मक्कलः प्रशममुपैति कामिनीनां
पीतेन क्वथितजलोपयोजितेन ।
अभ्युद्यन्नवशूकसम्भवेन
क्षारेण ध्रुवमथवा घृतान्वितेन ॥

नवीन यवोंसे तैयार किये हुवे जवाखारको पके हुवे जल या घीमें मिलाकर पिलानेसे मक्कल शूल* अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा-४-६ रत्ती ।)

(५७५१) यवक्षारादिचूर्णम्

(रा. मा. । अर्श.)

प्रातर्यवक्षारमहौषधाभ्यां
चूर्णेन तुल्येन विमिश्रतः यः ।
लेढी घृतं तस्य न शाम्यति
क्षुद्यो वा पिबत्युष्णजलेन शुण्ठीम् ॥

जवाखार और सोंठका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर रक्खें ।

प्रातः काल यह चूर्ण घीमें मिला कर चाटनेसे अथवा उष्ण जलके साथ सोंठका चूर्ण सेवन करनेसे क्षुधा अत्यन्त प्रबल हो जाती है ।

(मात्रा-१ माशा ।)

*प्रसवके पश्चात् प्रसूताके हृदय, मस्तक और वस्तिमें होने वाले शूलको "मक्कल" कहते हैं ।

(५७५२) यवक्षारादियोगः

(व. से. । जलदोषा.)

महार्द्रकयवक्षारौ पीत्वा चैवोष्णवारिणा ।
नानादेशोद्भवश्चैव वारिदोषमपोहति ॥

सोंठका चूर्ण और जवाखार समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके रक्खें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे देश देशान्तरोंका जलदोष नष्ट होता है । (परदेशका पानी विकार नहीं करता ।)

(मात्रा-१ माशा ।)

(५७५३) यवक्षाराद्यं चूर्णम् (१)

(वैद्यामृत.)

यवक्षारो यवानी च सैन्धवं चाम्लवेतसम् ।
हरीतकी वचा हिङ्गु चूर्णमुष्णेन वारिणा ॥
सप्ताहाद्गुल्मनिचयं सशूलं सपरिग्रहम् ।
भिनत्ति नात्र सन्देहो वह्निवृद्धिं करोति च ॥

जवाखार, अजवायन, सेंधा, अम्लबेत, हर्र, बच और घीमें भुनी हुई हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे १ सप्ताहमें शूल और उपद्रव युक्त प्रवृद्ध गुल्म भी अवश्य नष्ट हो जाता है ।

यह प्रयोग जठराग्निको भी प्रदीप्त करता है ।

अनुपान-उष्ण जल ।

(मात्रा-१ माशा ।)

(५७५४) यवक्षाराद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । चूर्णा.)

यवक्षारं यवानी च पिबेदुष्णेन वारिणा ।
एतेन वातजं शूलं गुल्मश्चैव चिरोत्थितः ॥
भिद्यते सप्तरात्रेण पवनेन यथा घनः ॥

जवाखार और अजवायन समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे सात दिनमें पुराना गुल्म और वातज शूल अवश्य नष्ट हो जाता है।

(मात्रा—१-१॥ माशा ।)

(५७५५) यवादिचूर्णम्

(रा. मा. । राजयक्ष्मा.)

खादन्ति ये सयवनागबलातुरङ्ग-
गन्धांस्तिलान् गुडविमिश्रितमाषयुक्तान्।
पीत्वा पयोऽपि नचिरेण भवन्ति वन्य-
मातङ्गभङ्गपटवः स्वबलातिरेकात् ॥

जौ, नागबला, असगन्ध, तिल, गुड़ और उड़द समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे शरीर बहुत शीघ्र हृष्ट पुष्ट और अत्यधिक बलशाली हो जाता है।

(५७५६) यवानिकाद्युद्धूलनम्

(वृ. नि. र. । सन्निपात. ; वृ. यो. त. । त. ५९)

यवानिका वचा शुण्ठी पिप्पली कारवी तथा।
एतैरुद्धूलनं श्रेष्ठं त्रिदोषोत्थे ज्वरे नृणाम् ॥

अजवायन, बच, सोंठ, पीपल और कलौंजी समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

इसकी मालिशसे सन्निपात ज्वरमें लाभ होता है।

(जब पसीना अधिक आने लगता है तो इसकी मालिशसे रुक जाता है।)

(५७५७) यवानीखाण्डवचूर्णम्

(यमानिषाडवः)

(यो. र. ; वृ. मा. ; भै. र. ; र. र. ; च. द. । अरोचका.; हारीत संहिता । स्था. ३ अ. ६; वृ. यो. त. । त. ७६; वृ. यो. त. । त. ८३; चरक सं । चि. स्था. ६. अ. ८)

यवानी तिन्तिडीकं च नागरं चाम्लवेतसम् ।
दाडिमं बदरं साम्लं कार्षिकाण्युपकल्पयेत् ॥
धान्यसौवर्चलाजाजीवराङ्गं चार्धकार्षिकम् ।
पिप्पलीनां शतं चैकं द्वे शते मरिचस्य च ॥
शर्करायाश्च चत्वारि पलान्येकत्र चूर्णयेत् ।
यवानीखाण्डवकाख्यं तु चूर्णमेतदरोचकम् ॥
हन्त्येव प्रातरेतत्तु स्थापितं च मुखे मुहुः ।
जिह्वाविशोधनं हृद्यं दीपनं भक्तरोचकम् ॥
हृत्पीडापार्श्वशूलघ्नं विबन्धानाहनाशनम् ।
कासश्वासहरं ग्राहि ग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥

अजवायन, तिन्तड़ीक, सोंठ, अम्लबेत, अनारदाना और खट्टे बेर १।-१। तोला; धनिया[1], सञ्चल (काला नमक), जीरा और दारचीनी आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे); पीपल १०० नग; काली मिर्च २०० नग, और खांड २० तोले लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें।

प्रातः काल बार बार यह चूर्ण मुखमें धारण करनेसे अरुचि अवश्य नष्ट हो जाती है।

इसके अतिरिक्त यह चूर्ण जिह्वाको शुद्ध करता है तथा हृद्य, और दीपन है एवं हृत्पीडा,

१—हारीत संहितामें धनियेका अभाव है।

पार्श्वशूल, विबन्ध, अफारा, खांसी, श्वास, ग्रहणी और अर्शको नष्ट करता है तथा ग्राही है।

(५७५८) **यवानीचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । अर्श; धन्व. । अतिसार.)

यवानीन्द्रयवं पाठा बिल्वं शुण्ठी रसाञ्जनम्।
चूर्णं शूले हितं पेयं प्रवृद्धे चातिशोणिते ॥

अजवायन, इन्द्रजौ, पाठा, बेलगिरी, सोंठ और रसौत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण शूलयुक्त अत्यन्त प्रवृद्ध रक्तातिसारको नष्ट करता है।

(मात्रा-१॥ माशा । अनुपान-चावलोंका पानी।)

(५७५९) **यवान्यादिचूर्णम्** (१)

(वृ. नि. र. । शूल.)

यवानी सैन्धवं दारु यवक्षारं सुवर्चलम्।
विश्वैरण्डशिफा हिङ्गुलवणं बिडपूर्वकम् ॥
एतच्चूर्णं समं श्लक्ष्णं गुडूचीक्वाथपानतः।
सर्वशूलानि नश्यन्ति महारोगान्न संशयः ॥

अजवायन, सेंधा नमक, देवदारु, जवाखार, सञ्चल (काला नमक), सोंठ, अरण्डमूल, भुनी हुई हींग और बिड नमक समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे गिलोयके क्वाथके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

(मात्रा-१-१॥ माशा।)

(५७६०) **यवान्यादिचूर्णम्** (२)

(ग. नि. । ग्रहणी.)

यवान्यजाजीकारव्यश्चव्यपिप्पलिनागरम्।
श्लेष्मजां ग्रहणीं हन्ति पीतं तक्रेण संयुतम् ॥

अजवायन, जीरा, कलौंजी, चव, पीपल और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण कफज संग्रहणीको नष्ट करता है। अनुपान-तक्र।

(मात्रा-१-१॥ माशा।)

(५७६१) **यवान्यादिचूर्णम्** (३)

(हारीत संहिता। स्था. ३ अ. २९)

यवानी चोग्रगन्धा च तथा च कटुकत्रयम्।
पाचनं श्लैष्मिके गुल्मे पीतं चोष्णं निशासु च ॥

अजवायन, बच, सोंठ, मिर्च और पीपल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे रात्रिके समय सेवन करनेसे कफज गुल्म नष्ट होता है।

(मात्रा-१-१॥ माशा । अनुपान-उष्ण जल।)

(५७६२) **यवान्यादिचूर्णम्** (४)

(वृ. नि. र. । संग्रहण्य.)

यवानीपिप्पलीमूलं चातुर्जातकनागरैः।
धातुकीतिन्तडी कृष्णा बालकश्चैकभागिकः ॥
सिताषड्भागसंयुक्तं सर्वचूर्णं प्रकल्पयेत्।
कर्षैकं भक्षयेन्नित्यमजाक्षीरं पिबेदनु ॥
नाशयेद् ग्रहणीरोगं पित्तोत्थं सप्रवाहिकम् ॥

अजवायन, पीपलामूल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, सोंठ, धायके फूल, तिन्तड़ीक, पीपल और सुगन्धबाला १-१ भाग तथा मिसरी ६ भाग ले कर यथाविधि चूर्ण बनावें।

इसे नित्य १। तोलेकी मात्रानुसार बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे पित्तज ग्रहणी और प्रवाहिकाका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा-२ माशे।)

(५७६३) **यवान्यादिचूर्णम्** (५)

(यो. चि. म. । अ. २)

यवानी पिप्पलीमूलं चातुर्जातकनागरैः ।
मरीचेन्द्रयवाजाजीधान्यसौवर्चलैः समम् ॥
वृक्षाम्लधातुकीकृष्णाबिल्वदाडिमदीप्यकैः ।
त्रिगुणैः षड्गुणैः सिद्धैः कपित्थाष्टगुणैः स्मृताः॥
चूर्णमतीसारग्रहणीक्षयगुल्मगलामयान् ।
कासश्वासाग्निमन्दार्शःपीनसारोचकान् जयेत् ॥

अजवायन, पीपलामूल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, सोंठ, काली मिर्च, इन्द्रजौ, जीरा, धनिया और सञ्चल (काला नमक) १–१ भाग; तिन्तड़ीक, धायके फूल, पीपल, बेलगिरी, अनारदाना और चीता ३–३ भाग तथा गुड़ ६ भाग और कैथका गूदा ८ भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अतिसार, ग्रहणी, क्षय, गुल्म, गल-रोग, कास, श्वास, अग्निमांद्य, अर्श, पीनस और अरुचिको नष्ट करता है ।

(मात्रा–३–४ माशे । अनुपान उष्ण जल ।)

(५७६४) **यवान्यादिचूर्णम्** (६)

(वृ. नि. र. । बाल.)

यवानीजीरकं व्योषं कुटजं विश्वभेषजम् ।
एतन्मधुयुतं पीतं बालानां ग्रहणीं जयेत् ॥

अजवायन, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, इन्द्रजौ और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर पिलानेसे बालकोंकी संग्रहणी नष्ट होती है ।

(५७६५) **यवान्यादिचूर्णम्** (७)

(यो. र. । गुल्म. ; वृ. नि. र. । गुल्म. ; वं. से. । गुल्म.)

यवानीं चूर्णितां तक्रे बिडेन लवणीकृताम् ।
श्लेष्मगुल्मे पिबेद्वातमूत्रवर्चोनुलोमनीम् ॥

तक्रमें स्वाद योग्य बिड लवण मिला कर उसके साथ अजवायनका चूर्ण पीनेसे कफज गुल्म नष्ट होता तथा वायु मूत्र और मल स्वमार्गमें प्रवृत्त हो जाते हैं ।

(५७६६) **यष्टीमधुकयोगः**

(ग. नि. । वाजीकरण.)

कर्षं मधुकचूर्णस्य घृतक्षौद्रसमन्वितम् ।
पयोनुपानं यो लिह्यान्नित्यवेगः स ना भवेत् ॥

१। तोला मुलैठीके चूर्णको घी और शहदमें मिला कर चाटनेसे कामाग्नि अत्यन्त प्रज्वलित हो जाती है ।

अनुपान–दूध

(घी १ तोला । शहद २ तोले ।)

(५७६७) **यष्ट्यादिचूर्णम्** (१)

(यो. त. । त. २९)

यष्ट्याह्वं वा माक्षिकेणावलीढं
कृष्णाचूर्णं शर्कराढ्यं च किंवा ।
सर्पिः कोष्णं क्षीरमुष्णं रसो वा
इन्यादिक्षोः पानतः पञ्च हिक्काः ॥

(१) मुलैठीके चूर्णको शहदमें मिलाकर चा-टनेसे या (२) पीपल के चूर्णमें समान भाग मिसरी मिला कर सेवन करनेसे या (३) मन्दोष्ण घी पीनेसे अथवा (४) उष्ण दूध या (५) ईखका रस पीनेसे पांच प्रकारकी हिचकी नष्ट होती है ।

(५७६८) **यष्ट्यादिचूर्णम्** (२)

(व. से. । अतिसारा.)

यष्टीमधु तिलाः कृष्णा पद्मकेसरमुत्पलम् ।
क्षौद्रमत्स्यण्डिकायुक्तमाजेन पयसा पिबेत् ॥

मुलैठी, काले तिल, कमलकेसर और नीलोत्पल तथा मिसरीका चूर्ण समान भाग लेकर शहद में मिलाकर खानेसे अतिसार नष्ट होता है।

अनुपान--बकरीका दूध ।

(यह प्रयोग पित्तातिसारमें उपयोगी है।)

(५७६९) **यष्ट्यादिचूर्णम्** (३)

(व. से. । स्त्रीरो.)

यष्टिर्निम्बं हरिद्रा च निर्गुण्डी धातकी समम् ।
चूर्णं स्तनव्रणे देयं रोपणं कुरुते भृशम् ॥

मुलैठी, नीमकी छाल, हल्दी, संभालु और धायके फूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण स्तनके व्रणको भर देता है।

(यदि व्रणसे मवाद अधिक आता हो तो सूखाही लगाना चाहिये अन्यथा घीमें मिलाकर लगावें । रोज़ाना व्रणको साफ़ अवश्य करते रहें।)

(५७७०) **यष्ट्यादिचूर्णम्** (४)

(वै. जी. । वि. ३)

मध्वाज्ययष्टीमधुलुङ्गमूलं
निपीय सूते सुमुखी सुखेन ।
सुतण्डुलाम्भः सितधान्यकल्क
पानाद्वमिर्गच्छति गर्भिणीनाम् ॥

मुलैठी और बिजौरेकी जड़का समान भाग चूर्ण ले कर एकत्र मिलावें ।

इसे शहद और घीमें मिलाकर (प्रसवके समय) चाटनेसे पीड़ा रहित प्रसव होता है।

(मात्रा--चूर्ण ३ माशे । घी ६ माशे, शहद १ तोला।)

मिश्री और धनियेका चूर्ण समान भाग ले कर एकत्र मिलावें ।

इसे चावलोंके पानीके साथ पिलानेसे गर्भिणीकी वमन नष्ट होती है ।

(मात्रा-३-४ माशे।)

(५७७१) **यष्ट्यादिचूर्णम्** (५)

(रा. मा. । राजयक्ष्मा.)

यष्ट्यश्वगन्धा सहिताऽर्कपुष्पी
चूर्णीकृता क्षीरयुता प्रदत्ता ।
कृशोऽप्यसौ पीवरतां दधाति
पयः कृताहारतयैव मासात् ॥

मुलैठी, असगन्ध और अर्कपुष्पी (सूर्यमुखी) समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे दूधके साथ सेवन करानेसे राजयक्ष्मासे कृश हुवा रोगी पुष्ट हो जाता है ।

इसके सेवन कालमें दुग्धाहार करना चाहिये।

(५७७२) **योगराजः**

(वृ. नि. र. । स्नायु.)

रामठं टङ्कणक्षारं प्रत्येकं शाणसम्मितम् ।
चूर्णयित्वा सप्त दिनं खादेत्सन्ध्याद्वयं नरः ॥
अनेन योगराजेन स्नायुको नश्यति ध्रुवम् ॥

भुनी हुई हींग, सुहागेकी खील और जवाखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

नित्य प्रति दोनों समय (प्रातः सायं) यह चूर्ण खानेसे सात दिनमें स्नायुक (नहरवा) अवश्य नष्ट हो जाता है ।

इति यकारादिचूर्णप्रकरणम् ॥

अथ यकारादिगुटिकाप्रकरणम्

(५७७३) यवाग्रजाद्या गुटिका
(यवक्षारादिगुटी)

(ग. नि. । मुख रोगा. ; वृ. नि. र. । मुख. ; व. से. । मुख. ; भै. र. । मुख.)

यवाग्रजं तेजवतीं सपाठां
रसाञ्जनं दारुनिशां सकृष्णाम् ।
क्षौद्रेण कुर्याद्गुटिकां मुखेन
तां धारयेत्सर्वगलामयेषु ॥

जवाखार, चव्य, पाठा, रसौत, दारुहल्दी और पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र करके शहदमें घोट कर गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली मुखमें रख कर रस चूसना चाहिये।

इनके सेवनसे समस्त गलरोग नष्ट होते हैं।

(५७७४) यवादिवटकः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५०)

यवगोधूममाषाणां निस्तुषाणां च चूर्णकम् ।
दुग्धेनेक्षुरसेनापि संस्कृत्य तु घृतेन तु ॥
पाचितं वटकश्रेष्ठं भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
तस्योपरि पयः पानं पिप्पलीशर्करान्वितम् ॥

छिलके रहित जौ, गेहूं और उड़द समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे (चार चार गुने) गोदुग्ध तथा ईखके रसमें पका कर मावा बना लें। तदनन्तर उसमें घी डाल कर भूनें और फिर (स्वाद योग्य मिश्री मिला कर) मोदक बना लें।

प्रातः काल ये मोदक खा कर ऊपरसे मिश्री और पीपलका चूर्ण मिला हुवा दूध पीना चाहिये।

इसके सेवनसे वीर्य और काम शक्तिकी अत्यन्त वृद्धि होती है।

(५७७५) यवान्याद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटिका.)

यवानीं धान्यकं बिल्वं चविकात्रुटिवल्कलम् ।
अम्लवेतसवृक्षाम्लं त्रिफला शिखिग्रन्थिकम् ॥
सौवर्चलं सैन्धवं च हपुषां च हरीतकीम् ।
यष्टिकां सातलां स्पृक्कां पलमानानि चूर्णयेत् ॥
गुडस्य तु पलान्यत्र दापयेद्द्विगुणानि तु ।
यवानीगुटिका ह्येषा ग्रहणीनाशनी परा ॥

अजवायन, धनिया, बेलगिरी, चव, छोटी इलायची, दालचीनी, अमलबेत, तिंतिड़ीक, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, पीपलामूल, सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, हपुषा, हर्र, मुलैठी, सातला और स्पृक्का (असबरग); इन सबका चूर्ण १-१ पल (५-५ तोले) लेकर सबको दो गुने (४० पल) गुड़में मिला कर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे संग्रहणी नष्ट होती है।
(मात्रा-४-५ माशे ।)

(५७७६) योगराजगुटिका

(र. का. धे. । अपस्मा.)

विश्वाऽब्दधातकीदारुयवान्यम्बुकणा वचा ।
कुटजो धान्यकं बिल्वं पाठेन्द्रयवशाल्मलीः ॥
विषाभयासमं चैषां चूर्णेन मधुना सह ।
ग्रहणीरोगहृत्सर्वं योज्यं तच्चातिसारके ॥

सोंठ, नागरमोथा, धायके फूल, दारुहल्दी, अजवायन, सुगन्धबाला, पीपल, बच, कुड़ेकी छाल, धनिया, बेलगिरी, पाठा, इन्द्रजौ, सेंभलका गोंद (मोचरस), अतीस और हर्र; इनके समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिला कर शहदमें घोट कर गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे संग्रहणी और अतिसार नष्ट होता है।

(मात्रा-१॥ माशा।)

इति यकारादिगुटिकाप्रकरणम्

अथ यकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(५७७१) योगराजगुग्गुलुः (१)

(ग. नि.। गुटिका. ४; र. र. स.। अ. २१; वै. म. र.।* अ. १६; यो. चि. म.। अ. ७)

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः।
पाठाविडङ्गेन्द्रयवहिङ्गुभार्गीवचान्वितैः॥
सर्षपातिविषाजाजिजीरकै रेणुकायुतैः।
गजकृष्णाजमोदाभ्यां कटुमूर्वासमन्वितैः॥
समभागान्वितैरेतैस्त्रिफला द्विगुणा भवेत्।
त्रिफलासहितैरेतैः समभागस्तु गुग्गुलुः॥
एतच्चूर्णीकृतं सर्वं मधुना च परिप्लुतम्।
योगराजमिमं विद्वान्भक्षयेत्प्रातरुत्थितः॥
अर्शांसि वातगुल्मं च पाण्डुरोगमरोचकम्।
नाभिशूलमुदावर्तं प्रमेहान्वातशोणितान्॥
कुष्ठं क्षयमपस्मारं हृद्रोगं ग्रहणीगदम्।
महान्तमग्निसादं च श्वासकासभगन्दरान्॥
रेतोदोषाश्च ये पुंसां योनिदोषाश्च योषिताम्।
निहन्याचाशु तान्सर्वान्दुर्वारानप्यसंशयम्॥
एष निष्परिहारस्तु पानभोजनमैथुने।
सतताभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनः॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता सोंठ, पाठा, बायबिड़ंग, इन्द्रजौ, हींग, भरंगी, बच, सरसों, अतीस, जीरा, काला जीरा, रेणुका, गजपीपल, अजमोद, सोंठ, मिर्च, पीपल और मूर्वा १-१ भाग; त्रिफला (समान भाग मिलित हर्र, बहेड़ा, आमला) २ गुना (४४ भाग) और शुद्ध गूगल ६६ भाग ले कर गूगलमें आवश्यकतानुसार शहद और थोड़ा थोड़ा उपरोक्त द्रव्योंका चूर्ण मिला कर कूटें। जब सम्पूर्ण चूर्ण अच्छी तरह मिल जाए तो सुरक्षित रक्खें।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे अर्श, वातज गुल्म, पाण्डु, अरुचि, नाभि शूल, उदावर्त, प्रमेह, वातरक्त, कुष्ठ, क्षय, अपस्मार, हृद्रोग, संग्रहणी, अग्निमांद्य, श्वास, खांसी, भगन्दर, शुक्र दोष और योनि दोष नष्ट होते हैं।

*वै. म. र. में—

(१) रेणुकाके स्थानमें कूठ, तथा (२) मूर्वा के स्थानमें सित (भोजपत्र, या धव) लिखा है और (३) त्रिफला सबके बराबर है।

इस पर खान पान और मैथुनादिका कोई विशेष परहेज़ नहीं है।

इसे दीर्घ काल तक सेवन करनेसे बलि और पलितका भी नाश हो जाता है।

(५७७८) योगराजगुग्गुलुः (२)

(वृ. मा. ; भै. र. । आमवाता. ; र. र स. । अ. २१; च. द. । आमवाता. ; यो. र. ; वं. से. ; र. र. । आमवाता.)

चित्रकं पिप्पलीमूलं यमानी कारवी तथा ।
विडङ्गान्यजमोदा च जीरकं सुरदारु च ॥
चव्येला[1] सैन्धवं कुष्ठं रास्नागोक्षुरधान्यकम्।
त्रिफला मुस्तकं व्योषं त्वगुशीरं यवाग्रजम् ॥
तालीशपत्रं पत्रश्च श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रन्तु गुग्गुलुम् ॥
सम्मर्द्य सर्पिषा गाढं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
अतो मात्रां प्रयुञ्जीत यथेष्टाहारवानपि ॥
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ।
आमवाताढ्यवातादीन् क्रिमिदुष्टव्रणानि च ॥
प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत् ।
अग्निश्च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धिं बलं तथा ॥
वातरोगान् जयत्येष सन्धिमज्जगतानपि ॥

चीता, पीपलामूल, अजवायन, सोया, बायबिड़ंग, अजमोद, जीरा, देवदारु, चव (पाठान्तरके अनुसार बच), इलायची, सेंधा नमक, कूठ, रास्ना, गोखरु, धनिया, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, खस, जवाखार, तालीस पत्र और तेजपात; इन सबका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर (२८ भाग) ले कर गूगलमें आवश्यकतानुसार थोड़ा थोड़ा घी और थोड़ा थोड़ा उपरोक्त चूर्ण डाल कर कूटें। जब सम्पूर्ण चूर्ण गूगलमें अच्छी तरह मिल जाय तो स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे आमवात, उरुस्तम्भ, कृमि, दुष्ट व्रण, तिल्ली, गुल्म, उदर रोग, अफारा, अर्श और अस्थि तथा मज्जागत वातज रोग नष्ट हो जाते हैं।

यह अग्निको दीप्त करता और बल तथा तेजकी वृद्धि करता है।

(अनुपान-उष्ण जल या दूध । मात्रा-१ माशा ।)

(५७७९) योगराजगुग्गुलुः (३)

(वृ. नि. र. । ग्रहणी.)

कणागजकणावह्निविडङ्गेन्द्रयवायवैः ।
कटुकापिप्पलीमूलं भार्ङ्गीपाठाजमोदकम् ॥
मूर्वाशुण्ठीहिङ्गुचव्यं समं सर्वांशगुग्गुलुः ।
चूर्णयेन्मधुना खादेत्कर्षांशं योगराजकम् ॥
रक्तवातार्शसोगुल्मग्रहणीपाण्डुजिद्भवेत् ॥

पीपल, गजपीपल, चीता, बायबिड़ंग, इन्द्रजौ, जौ, कुटकी, पीपलामूल, भरंगी, पाठा, अजमोद, मूर्वा, सोंठ, हींग और चव; इनका चूर्ण एक एक भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर गूगलमें आवश्यकतानुसार शहद और थोड़ा थोड़ा यह

[1] -' वचैला ' इति पाठान्तरम् ।

चूर्ण मिला कर कूटें । जब सम्पूर्ण चूर्ण गूगलमें मिल जाय तो उसे स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे वातार्श, रक्तार्श, गुल्म, ग्रहणी और पाण्डुका नाश होता है ।

मात्रा—१ कर्ष ।

(व्यवहारिक मात्रा—१—१॥ माशा । अनुपान—उष्ण जल या दूध ।)

(५७८०) योगराजगुग्गुलुः (४) (महा)

(शा. सं. । म. खं. अ. २; वृ. नि. र. । वातव्या.)

नागरं पिप्पलीमूलं पिप्पली चव्यचित्रकौ ।
भृष्टं हिङ्ग्वजमोदा च सर्षपा जीरकद्वयम् ॥
रेणुकेन्द्रयवाः पाठा विडङ्गं गजपिप्पली ।
कटुकातिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वेति भागतः ॥
प्रत्येकं शाणिकानि स्युर्द्रव्याणीमानि विंशतिः।
द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत्॥
एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयश्च गुग्गुलुः ।
वङ्गं रौप्यं च नागं च लोहसारस्तथाभ्रकम् ॥
मण्डूरं रससिन्दूरं प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
गुडपाकसमं कृत्वा इमं दद्याद्यथोचितम् ॥
एकपिण्डं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने ।
गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः॥
गुग्गुलुर्योगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ।
मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते ॥
सर्वान्वातामयान्कुष्ठानर्शांसि ग्रहणीगदम् ।
प्रमेहं वातरक्तं च नाभिशूलं भगन्दरम् ॥
उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ।
मन्दाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥
रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाम् ।
पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥
रास्नादिक्वाथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ।
काकोल्यादिशृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥
दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पाण्डुताम् ।
मेदोवृद्धिं च मधुना कुष्ठं निम्बशृतेन वा ॥
छिन्नाक्वाथेन वातास्रं शोथं शूलं कणाशृतात् ।
पाटलाक्वाथसहितो विषं मूषकजं जयेत् ॥
त्रिफलाक्वाथसहितो नेत्रार्तिं हन्ति दारुणाम् ॥

सोंठ, पीपलामूल, पीपल, चव, चीता, भुनी हुई हींग, अजमोद, सरसों, सफेद जीरा, काला जीरा, रेणुका, इन्द्रजौ, पाठा, बायबिड़ंग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भरंगी, बच और मूर्वा; इनका चूर्ण १—१ भाग; त्रिफला (समान भाग मिलित हर्र, बहेड़ा, आमला) का चूर्ण सबसे दो गुना (४० भाग); शुद्ध गूगल ६० भाग; बंग भस्म, रौप्य भस्म, नाग (सीसा) भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, मण्डूर और रस सिन्दूर १६—१६ भाग ले कर गूगल और काष्ठादि चूर्णोंको एकत्र मिलावें ओर उसमें आवश्यकतानुसार पानी डाल कर पकावें । जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें भस्में मिला कर अच्छी तरह कूट कर एक जीव कर लें ।

तदनन्तर ३—३ माशेकी गोलियां बनाकर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

(व्यवहारिक मात्रा—१॥ माशा ।)

यह " योगराज गुग्गुलु " त्रिदोष नाशक और रसायन है ।

इसके सेवन कालमें खान पान और मैथुनका परहेज़ नहीं है।

इसके सेवनसे समस्त वातज रोग, कुष्ठ, अर्श, ग्रहणी विकार, प्रमेह, वातरक्त, नाभि शूल, भगन्दर, उदावर्त, क्षय, गुल्म, अपस्मार, उरोग्रह, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अरुचि, शुक्रदोष और रजोदोष नष्ट होते हैं।

इसके सेवनसे पुरुषोंमें सन्तानोत्पादन शक्ति उत्पन्न होती और स्त्रियोंका वन्ध्यत्व नष्ट होता है।

इसे—

रास्नादि क्वाथके साथ सेवन करनेसे वातज रोग नष्ट होते हैं।

काकोल्यादि गणके साथ सेवन करनेसे पित्तज रोग नष्ट होते हैं।

आरग्वधादि गणके साथ सेवन करनेसे कफज रोग नष्ट होते हैं। तथा

दारुहल्दीके क्वाथके साथ देनेसे प्रमेह; गोमूत्र के साथ देनेसे पाण्डु; शहदके साथ खानेसे मेद; नीमके क्वाथके साथ देनेसे कुष्ठ, गिलोयके क्वाथके साथ सेवन करनेसे वातरक्त; पीपलके क्वाथके साथ खानेसे शोथ और शूल; पाढलके क्वाथके साथ सेवन करनेसे चूहेका विष और त्रिफलाके क्वाथके साथ खानेसे नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

(५७८१) योगराजगुग्गुलुः (५) (महा)

(भा. प्र. । म. खं. वातव्या.; वै. र. । वातव्या.; वृ. नि. र. । वातव्या.; र. र. । वातव्या.)

नागरं पिप्पलीमूलं चव्यमूषणचित्रकम् ।
भृष्टं हिङ्ग्वजमोदा च सर्षपो जीरकद्वयम् ॥
रेणुकेन्द्रयवौ पाठा विडङ्गं गजपिप्पली ।
कटुकाऽतिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वा च पत्रकम् ॥
देवदारु कणा कुष्ठं रास्ना मुस्ता च सैन्धवम् ।
एला त्रिकण्टकं पथ्या धान्यकञ्च बिभीतकम् ॥
धात्री च त्वगुशीरञ्च यवक्षारोऽखिलान्यपि ।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावानेवात्र गुग्गुलुः ।
सम्मर्द्य सर्पिषा पश्चात्सर्वं संमिश्रयेच्च तत् ॥
एकं पिण्डञ्च तत्कृत्वा धारयेद् घृतभाजने ।
गुटिकाष्टङ्कमात्रास्तु खादेत्तास्तु यथोचिताः ॥

सोंठ, पीपलामूल, चव, काली मिर्च, चीता, भुनी हुई हींग, अजमोद, सरसों, सफेद जीरा, काला जीरा, रेणुका, इन्द्रजौ, पाठा, बायबिड़ंग, गज पीपल, कुटकी, अतीस, भरंगी, बच, मूर्वा, तेजपात, देवदारु, पीपल, कूठ, रास्ना, नागरमोथा, सेंधा नमक, इलायची, गोखरु, हर्र, धनिया, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, खस और जवाखार १—१ भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर उसे सबके बराबर शुद्ध गूगलमें मिलाकर थोड़ा थोड़ा घी डालते हुवे खूब कूटें और चिकने पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे ४ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे वातज रोग नष्ट होते हैं।

(५७८२) योगराजगुग्गुलुः (६) (बृहद्)

(भै. र. । आमवाता.)

त्रिकटु त्रिफला पाठा शताह्वा रजनीद्वयम् ।
अजमोदा वचा हिङ्गु हवुषा हस्तिपिप्पली ॥
उपकुञ्चिका शटी धान्यं विडं सौवर्चलं तथा ।
सैन्धवं पिप्पलीमूलं त्वगेलापत्रकेशरम् ॥

फणिज्झकश्च लौहश्च सर्जकश्च त्रिकण्टकम् ।
रास्ना चातिविषा शुण्ठी यवक्षाराम्लवेतसम् ॥
चित्रकं पुष्करं चव्यं वृक्षाम्लं दाडिमं रुबु ।
अश्वगन्धा त्रिवृद्दन्ती बदरं देवदारु च ॥
हरिद्रा कटुका मूर्वा त्रायमाणा दुरालभा ।
विडङ्गं मृतवङ्गश्च यमानी वासकाभ्रकम् ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
शोधितं गुग्गुलुश्चैव सर्वचूर्णसमं नयेत् ॥
घृतेन पिट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः ॥
एकाङ्गं शुष्यते येषां कुष्ठं वापि क्षतोत्तरम् ।
पादौ विस्तारितौ येषां येषां वा गृध्रसीग्रहः ॥
सन्धिवातं क्रोष्टुशीर्षं वातं सर्वशरीरगम् ।
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः ।
अयं बृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पाठा, सोया, हल्दी, दारुहल्दी, अजमोद, बच, हींग, हपुषा, गजपीपल, काला जीरा, कचूर, धनिया, विड नमक, सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, पीपलामूल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, तुलसी, लोह भस्म, राल, गोखरु, रास्ना, अतीस, सोंठ, जवाखार, अमलबेत, चीतामूल, पोखरमूल, चव, तिन्तड़ीक, अनारदाना, अरण्डमूल, असगन्ध, निसोत, दन्तीमूल, बेर, देवदार, हल्दी, कुटकी, मूर्वा, त्रायमाणा, धमासा, बायबिड़ंग, बंग भस्म, अजवायन, वासामूलकी छाल और अभ्रक भस्म; सबका बारीक चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर (५६ भाग) ले कर गूगलमें आवश्यकतानुसार घी और थोड़ा थोड़ा चूर्ण डालकर कूटें । जब सम्पूर्ण चूर्ण मिल जाय तो स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे आमवात, कटि भग्न, एकाङ्ग-शोष, कुष्ठ, क्षत, पैरोंका बेकार हो जाना, गृध्रसी, सन्धिवात (गठिया), क्रोष्टु शीर्ष, समस्त शरीरगत वायु, ८० प्रकारके 'वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग और २० प्रकारके कफज रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१—१॥ माशा ।

अनुपान—उष्ण जल या दूध)

(५७८३) योगोत्तमा गुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

त्र्यूषणं त्रिफला क्षारौ लवणान्यथ चित्रकम् ।
तालीसं चविकं शृङ्गी निशे द्वे गजपिप्पली ॥
एला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम् ।
ताप्यकं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमयोरजः ।
तावच्छिलाजतुर्देयः सर्वैस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥
संकुट्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः ।
खादेन्ना मधुना युक्त्या तोयक्षीररसाशनः ॥
निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वर्तुषु निरत्ययम् ।
अशीतिं वातजान्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ।
उदराणि तथा चाष्टौ श्वयथुं पवनात्मकम् ॥
विंशतिं मूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीव्रणानि च ।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥

कासं श्वासं तथा हिक्कां हृच्छूलं छर्घरोचकम् ।
गुल्मांश्च पाण्डुरोगं च जयेत्पञ्चप्रकारजम् ॥
चत्वारो ग्रहणीदोषाः षडर्शांसि तथैव च ।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु तमः सूर्योदयो यथा ॥
तथाऽर्बुदं गण्डमालां विद्रधिं सभगन्दरम् ।
हरते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
योगोत्तमेति विख्याता गुटिका वैद्यपूजिता ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, जवाखार, सज्जीखार, पांचों नमक (सेंधा नमक, काला नमक, समुद्र नमक, काच लवण, बिड नमक), चीता मूल, तालीस पत्र; चव, काकड़ासिंगी, हल्दी, दारुहल्दी, गजपीपल, इलायची, दालचीनी, बायबिड़ंग, पोखरमूल, नागकेसर, सोनामक्खी भस्म, अजवायन और नागरमोथा; सबका बारीक चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म और शिलाजीत २८-२८ भाग एवं शुद्ध गूगल ८४ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर (आवश्यकतानुसार घी या शहद डालकर) अच्छी तरह कूटें। जब सब मिलकर एक जीव हो जाएं तो ११-१। तोलेकी गुटिका बना लें।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे ८० प्रकारके वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग, २० प्रकारके कफज रोग, २० प्रकारके प्रमेह, आठ प्रकारके उदर रोग, वातज शोथ, सब प्रकारके मूत्रकृच्छ्र, दुष्ट नाड़ी व्रण, १८ प्रकारके कुष्ठ, सात प्रकारके क्षय, खांसी, श्वास, हिचकी, हृदयशूल, छर्दि, अरुचि, गुल्म, पांच प्रकारके पाण्डु, चार प्रकारके ग्रहणी विकार, ६ प्रकारकी अर्श, अर्बुद, गण्डमाला, विद्रधि और भगन्दर आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा-४-६ रत्ती ।)

इति यकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्



अथ यकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(५७८४) यवान्यादिलेहः

(वृ. नि. र. । बाल.)

यवानीकुटजारिष्टसप्तपर्णपटोलकैः ।
लेहश्छर्दिमतीसारं ज्वरं बालस्य नाशयेत् ॥

अजवायन, कुड़ेकी छाल, नीमकी छाल, सतौनेकी छाल और पटोलका चूर्ण समान भाग लेकर सबको शहदमें मिलाकर अवलेह बनावें।

इसे चटानेसे बालकोंकी छर्दि, अतिसार और ज्वरका नाश होता है।

(५७८५) यष्ट्यादिलेहः

(वृ. नि. र. । बालरोग)

यष्टीमधुतुगाक्षीरीलाजाञ्जनसिताकृतः ।
लेहः प्रदत्तो बालानामशेषज्वरनाशनः ॥

मुलैठी, बंसलोचन, धानकी खील, सुरमा और मिश्रीका चूर्ण समान भाग ले कर (सबको शहदमें मिला कर) अवलेह बनावें।

इसे चटानेसे बालकोंके समस्त ज्वर नष्ट होते हैं।

(५७८६) योगसारामृतः

(ग. नि.; व. से.; च. द. । वातव्या.; वृ. मा.; र. र.; वृ. नि. र. । वातरक्त.)

शतावरी नागबला वृद्धदारुकमुच्चटा ।
पुनर्नवाऽमृता कृष्णा वाजिगन्धा त्रिकण्टकः ॥
पृथग्दशपलान्येषां सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
तदर्धशर्करायुक्तं चूर्णं संमर्दयेद्बुधः ॥
स्थापयेत्सुदृढे भाण्डे मध्वाधाढकसंयुतम् ।
घृतप्रस्थेन चालोड्य त्रिसुगन्धिपलेन च ॥
तं खादेदिष्टचेष्टान्नो यथावह्निबलं नरः ।
वातरक्तं क्षयं कुष्ठं कार्श्यं पित्तास्रसम्भवम् ॥
वातपित्तकफोत्थांश्च रोगानन्यांश्च तद्विधान् ।
हत्वा करोति पुरुषं वलीपलितवर्जितम् ॥
योगसारामृतो नाम लक्ष्मीकान्तिविवर्धनः ।
दिवास्वप्नाग्निसन्तापं व्यायामं मैथुनं तथा ॥
कटूष्णगुर्वभिष्यन्दिलवणाम्लानि वर्जयेत् ॥

शतावर, नागबला, विधारामूल, मुई, आमला, पुनर्नवा (बिसखपरा), गिलोय, पीपल, असगन्ध और गोखरुका चूर्ण १०-१० पल (५०-५० तोले) तथा मिश्री सबसे आधी लेकर सबको एकत्र मिलावें। तदनन्तर एक दृढ़ मृत्पात्रमें यह चूर्ण और ४ सेर शहद तथा २ सेर घी एवं ५ तोले त्रिसुगन्ध (दालचीनी, इलायची, तेजपात) का चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह आलोडित करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे अग्नि बलोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे वातरक्त, क्षय, कुष्ठ, रक्तपित्त जनित कृशता, वातज पित्तज और कफज अनेक रोग तथा बलि पलितका नाश हो कर शरीरकी कान्ति बढ़ती है ।

परहेज—दिनको सोना, अग्नि तापना, व्यायाम, मैथुन, कटूष्ण और भारी आहार, अभिष्यन्दि पदार्थ तथा लवण और अम्ल पदार्थोंसे परहेज़ करना चाहिए ।

इति यकाराद्यवलेह-प्रकरणम्



अथ यकारादिघृतप्रकरणम्

(५७८७) यवक्षारादिघृतम्

(ग. नि. । स्वरभङ्ग. १२)

पीतं घृतं हन्त्यनिलं सिद्धं मार्कवजे रसे ।
यवक्षाराजमोदाभ्यां चित्रकामलकेषु च ॥
स्वरोपघातेऽनिलजे भक्तोपरि घृतं पिबेत् ॥

कल्क—जवाखार, अजमोद, चीता और आमला ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर भंगरेका रस मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो घृतको छान लें ।

यह घृत वातज स्वर भंगको नष्ट करता है ।

(५७८८) यवादिघृतम् (१)

(र. र. । प्रसूति.)

यवकोलकुलत्थानां शालिमूलं तथैव च ।
क्वाथयेदप्रमत्तश्च सुपूते सलिलाढके ॥
तत्पादावस्थितं क्वाथं सर्पिर्युक्तं सजीरकम् ।
पक्वं घृताक्षमात्रेण सैन्धवेन समायुतम् ॥
एतेनैव च यूषेण चाश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ।
सूतिकोपद्रवं हन्ति भुक्तमात्रान्न संशयः ॥

जौ, बेरका गूदा, कुलथी और शाली धानकी जड़ समान भाग मिश्रित १ सेर लेकर सबको कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें । जब २ सेर क्काथ शेष रह जाय तो छान लें ।

अब इस क्काथमें आधा सेर घी और ५ तोले जीरेका कल्क तथा १। तोला सेंधा नमक मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

इसे शाली अथवा साठी चावलोंके भातमें डाल कर वह भात उपरोक्त द्रव्योंके यूषके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे सूतिका रोग तुरन्त शान्त हो जाता है ।

(५७८९) यवादिघृतम् (२)

(च. सं. । चि. अ. १८.)

यवकोलकुलत्थानां पञ्चमूलरसेन च ।
सुरासौवीरकाभ्यां च सिद्धं वापि पिबेद् घृतम्॥

जौ, बेरका गूदा और कुल्थीके कल्क तथा पञ्चमूलके कषाय और सुरा एवं सौबीरक कांजीके साथ घृत सिद्ध कर लें ।

यह घृत उदर रोग नाशक है ।

(५७९०) यवादिघृतम् (३)

(वृ. नि. र. । अश्मरी.)

यवकोलकुलित्थानि कतकस्य फलानि च ।
चतुर्थांशकषायेण पाच्यमेतच्छृतं घृतम् ॥

जौ, बेरका गूदा, कुलथी और निर्मलीके बीज १-१ सेर लेकर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

इसमें २ सेर घी मिला कर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

यह घृत पथरीको नष्ट करता है ।

(५७९१) यष्टीमधुकादिघृतम्

(हा. सं. । स्था. ३ कर्ण रोगा. ७४ अ.)

यष्टीमधुकुष्ठमरिष्टपत्रं
निशाविशालासुमनः प्रवाला ।
विपाचितं कर्णभवे च शूले
सपैत्तिके वा घृतमेव शस्तम् ॥

कल्क—मुलैठी, कूठ, नीमके पत्ते, हल्दी, इन्द्रायणकी जड़ और जाती (जाई) के पत्ते २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

क्काथ—उपरोक्त कल्क वाली ओषधियां आधा आधा सेर (मिलित ३ सेर) लेकर सबको कूट

कर २४ सेर पानीमें पकावें और ६ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

विधि—१२० तोले घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत पित्तज कर्णशूलको नष्ट करता है।

(५७९२) यष्ट्यादिघृतम् (१)

(यो. र. । हृद्रोग; वृ. नि. र. । हृद्रोगा.)

यष्टीनागबलो दीच्यार्जुनैः सर्पिः सुसाधितम्।
हृद्रोगक्षयपित्तास्रश्वासकासज्वरार्तिजित् ॥

कल्क—मुलैठी, नागबला, सुगन्धबाला और अर्जुनकी छाल ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त कल्ककी ओषधियां १-१ सेर (मिलित ४ सेर) ले कर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

विधि—२ सेर घीमें उपरोक्त कल्क तथा क्वाथ मिला कर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत हृद्रोग, क्षय, रक्तपित, श्वास, कास और ज्वरको नष्ट करता है।

(५७९३) यष्ट्यादिघृतम् (२)

(ग. नि. । शिरोरोगा. १०; व. से.; वृ. नि. र. । शिरो.)

यष्ट्याह्वचन्दनानन्ताक्षीरसिद्धं घृतं हितम्।
नावनं शर्कराद्राक्षामधुकैर्वापि पित्तजे ॥

कल्क—मुलैठी, सफेद चन्दन और अनन्त मूल ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

१२० तोले (१॥ सेर) घीमें यह कल्क और ६ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो घीको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे पित्तज शिरोरोग नष्ट होता है।

खांड, मुनक्का और मुलैठीको पानीमें पीस कर नस्य लेनेसे भी पित्तज शिरोरोग नष्ट होता है।

(५७९४) यष्ट्यादिघृतम् (३)

(ग. नि. । कासा. १०; यो. र. । उरःक्षत; व. से. । क्षत क्षय.; वृ. यो. त. । त. ९९; वा. भ. । चि. अ. ३ कासा.)

यष्ट्याह्वनागबलयोः क्वाथे क्षीरसमे घृतम्।
पयस्यापिप्पलीवांशीकल्कसिद्धं क्षते हितम्॥

क्वाथ—मुलैठी और नागबला २-२ सेर ले कर, एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—क्षीरकाकोली, पीपल और बंसलोचन समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

विधि—२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और २ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध और पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत क्षतज खांसीको नष्ट करता है।

(५७९५) **यष्ट्यादिघृतम्** (४)

(वृ. मा. । आगन्तुव्रणा.)

सद्यःक्षतं व्रणं वैद्यः सशूलं परिषेचयेत् ।
यष्टीमधुकयुक्तेन किञ्चिदुष्णेन सर्पिषा ॥

मन्दोष्ण घृतमें मुलैठीका बारीक चूर्ण मिला कर उससे ताज़े घावको तर करनेसे घावकी पीड़ा शान्त होती है ।

(५७९६) **यष्ट्यादिघृतम्** (५)

(वृ. मा.)

यष्टीमधुबलारास्नादशमूलाम्बुसाधितम् ।
मधुरैश्च घृतं सिद्धमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥

काथ—मुलैठी, खरैटी, रास्ना और दशमूलकी प्रत्येक औषध १०–१० तोले ले कर सबको १३ सेर पानीमें पकावें । जब ३। सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

कल्क—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णा, माषपर्णी जीवन्ती और मुलैठी समान भाग मिश्रित १६। तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

विधि—६५ तोले घीमें उपरोक्त काथ तथा कल्क मिला कर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

यह घृत ऊर्ध्वजत्रुगत रोगोंको नष्ट करता है ।

(५७९७) **यष्ट्याद्यं घृतम्**

(ग. नि. । बालरो.; वा. भ. । उ. अ. २)

यष्ट्याह्वपिप्पलीरोध्रपद्मकोत्पलचन्दनैः ।
तालीससारिवाभ्यां च साधितं शोषजिद्घृतम् ॥

कल्क—मुलैठी, पीपल, लोध, पद्माक, कमल, सफेद चन्दन, तालीस पत्र और सारिवा ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

काथ—उपरोक्त कल्ककी औषधियां १–१ सेर (मिलित ८ सेर) ले कर सबको एकत्र कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें । जब १६ सेर पानी शेष रह जाए तो छान लें ।

विधि—४ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और काथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

यह घृत बालकोंके शोषको नष्ट करता है ।

इति यकारादिघृतप्रकरणम्



अथ यकारादितैलप्रकरणम्

(५७९८) **यवादितैलम्** (१)

(वै. क. द्रु. । स्क. २)

यवचूर्णार्द्धकुडवं मञ्जिष्ठार्द्धपलेन तु ।
तैलप्रस्थं शतगुणे काञ्जिके साधितं जयेत् ॥
ज्वरं दाहं महावेगमङ्गानां च प्रहर्षनुत् ॥

२ सेर तिलके तेलमें ४०० सेर (१० मन) काञ्जी और १० तोले जौ तथा २॥ तोले मजीठका चूर्ण मिला कर पकावें । जब काञ्जी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसको मालिशसे ज्वर और प्रबल दाह तथा अंगोंका प्रहर्ष नष्ट होता है ।

(क्राथार्थ प्रत्येक वस्तु ५ तोले; पानी ९ सेर; शेष २। सेर।

कल्कार्थ-प्रत्येक वस्तु ३।। माशे (मिलित ५ तोले ७॥ माशे) तेल-४५ तोले।

इति यकारादितैलप्रकरणम्

अथ यकाराद्यासवप्रकरणम्

(५८०५) योगराजासवः

(ग. नि. । आसवा. ६)

द्राक्षायाः शर्करायाश्च गुडस्य च पृथक् पृथक् ।
पलानि दश कार्याणि पथ्यापलचतुष्टयम् ॥
लवङ्गबदरीसर्जार्जुनानां छल्लिकाभवम् ।
पलं पलं पृथग्ग्राह्यं देवदारुपलं तथा ॥
चित्रकस्य च लोध्रस्य पिप्पलीमूलकस्य च ।
धातकीकुसुमानां च तद्वद्देयं पलं पलम् ॥
तथा पूगफलानां तु कषायाणां पलं मतम् ।
मञ्जिष्ठायाः पले द्वे तु क्वाथ्यसंज्ञानि तानि च॥
लवङ्गकलिकाजातीपत्रैलानागकेशरम् ।
पिप्पलीशुण्ठिमरिचत्वङ्मांसीचव्यमुस्तकम् ॥
कुष्ठं जातीफलं ग्रन्थिपर्णं स्नुक् कटुरोहिणी ।
एषां पलं पलं ग्राह्यं तज्ज्ञेयं चूर्णसंज्ञितम् ॥
ततस्तु क्वाथ्यद्रव्येभ्यो जलमष्टगुणं क्षिपेत् ।
क्वाथं तदुदके कुर्यादर्धभागावशेषितम् ॥
तत्क्वाथं वस्त्रपूतं तु भाण्डेऽन्यस्मिन्मनोहरे ।
कृत्वाऽत्र प्रक्षिपेच्चूर्णं तद्भाण्डं धान्यराशिगम्॥
कृत्वा सप्तदिनं शीते काले चोष्णमये तथा ।
यावद्दिनानि त्रीणि स्युः पश्चाद्भाण्डं समुद्धरेत् ॥
पुनस्तद्वस्त्रपूतं तु भाण्डे कर्पूरवासिते ।
निक्षिप्य सेवयेत्प्रातः पलमात्रोपलक्षितम् ॥
स दत्तो वातपित्तघ्नो दीपनो रक्तरोगनुत् ।
योगराज इति ख्यात आसवोऽयं गुणोत्तरः ॥

क्वाथ्य द्रव्य--द्राक्षा, खांड और गुड़ १०-१० पल (५०-५० तोले); हर्र ४ पल, लौंग, बेरकी छाल, चीड़, अर्जुनकी छाल, देवदारु, चीतामूल, लोध, पीपलामूल, धायके फूल और सुपारी १-१ पल (५-५ तोले) और मजीठ २ पल ।

सबको अधकुटा करके आठ गुने (२३ सेर) पानीमें पकावें और जब ११॥ सेर पानी शेष रहे तो छान लें ।

प्रक्षेप द्रव्य--लौंगकी कली, जावत्री, तेजपात, इलायची, नागकेसर, पीपल, सोंठ, मिर्च, दालचीनी, जटामांसी, चव, नागरमोथा, कूठ, जायफल, गठीवन, थूहरका डंडा और कुटकी ५-५ तोले लेकर चूर्ण बनावें ।

विधि--एक स्वच्छ मृत्पात्रमें उपरोक्त क्वाथ और प्रक्षेपद्रव्य डाल कर सबको अच्छी तरह मिलाकर पात्रका मुख बन्द कर दें और उसे अनाजके ढेरमें दबा दें। यदि शीतकाल हो तो सात दिन पश्चात् और ग्रीष्म काल हो तो ३ न२

पश्चात् आसवको निकाल कर छानकर कर्पूरवासित पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे वात पित्तज रोग और रक्त-विकार नष्ट होते तथा अग्नि दीप्त होती है।

मात्रा—५ तोले। समय—प्रातःकाल.

(व्यवहारिक मात्रा—२ तोले।)

इति यकाराद्यासवप्रकरणम्



अथ यकारादिलेपप्रकरणम्

(५८०६) **यवपिष्टलेपः**

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

यवपिष्टयवक्षारलेपस्तक्रेण संयुतः ।
उष्णीकृतो हरेत्सद्यो जठरार्ति सुदुर्जयाम् ॥

जौ के चूर्ण और जवाखारको तक्रमें मिला-कर गर्म करके लेप करनेसे दुस्तर उदर—शूल भी तुरन्त नष्ट हो जाता है।

(५८०७) **यवभस्मादिलेपः**

(यो. र. । अग्नि दग्ध., धन्व. । व्रण.; शा. सं। खं. ३ अ. ११.)

दग्धयवभस्मचूर्णं तिलतैलाक्तं प्रलेपनादचिरात् ।
हरति शिखिदाहदग्धं भूयोभ्यङ्गाद्व्रणं चाऽऽशु॥

जौको जला कर भस्म करें और फिर उसे अत्यन्त बारीक करके तिलके तेलमें मिला लें।

इसे लगानेसे अग्निदग्ध व्रण शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(५८०८) **यवादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र. । व्रणशोथ; यो. र. । व्रण.)

यवगोधूमचूर्णं च क्षारं दारणं पृथक् ।
हरिद्राभस्मचूर्णाभ्यां प्रलेपो दारणः परः ॥

जौ और गेहूंका चूर्ण तथा जवाखारका लेप लगानेसे व्रण (व्रण शोथ) फट जाता है।

हल्दीकी राख और चूनेको एकत्र मिला कर लेप करनेसे भी व्रण (व्रण शोथ) फट जाता है।

(५८०९) **यवादिलेपः** (२)

(यो. र.। विद्रधि.; वृ. मा. । विद्रधि.)

यवगोधूममुद्गैश्च सिद्धपिष्टैः प्रलेपयेत् ।
विलीयते क्षणेनैवमपक्वश्चैव विद्रधिः ॥

जौ, गेहूं और मूंगको पका कर पीस कर लेप करनेसे अपक्व विद्रधि अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाती है।

(५८१०) **यवादिलेपः** (३)

(वैद्यामृत । वृद्ध्य.)

यवतिलऋतुजन्मैरण्डबीजैः सुखोष्णै-
र्हरति कृत विलेपः काञ्जिकेन प्रपिष्टैः ॥

जौ, तिल, पुनर्नवाकी जड़ और अरण्डके छिलके रहित बीज समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर काञ्जीमें पीस लें।

इसे मन्दोष्ण करके लेप करनेसे अण्ड वृद्धि नष्ट होती है।

(५८११) यवादिलेपः (४)

(व. से. । क्षुद्ररो.)

यवान्सर्जरसं लोध्रमुशीरं चन्दनं मधु ।
घृतं गुडश्च गोमूत्रे पचेदादर्विलेपनम् ॥
तदभ्यङ्गान्निहन्त्याशु नीलिकां व्यङ्गदूषिकाम् ।
मुखं करोति पद्माभं पादौ पद्मदलोपमौ ॥

जौ, राल, लोध, खस और लाल चन्दनका चूर्ण तथा शहद, घी और गुड़ समान भाग लेकर सबको (४ गुने) गोमूत्रमें पकावें और जब करछीको लगने लगे तो उतार कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे मलनेसे नीलिका और व्यङ्ग (झाईं) आदि नष्ट हो कर मुख कमलके समान शोभायमान हो जाता है ।

इसे पैरोंमें लगानेसे (पैरोंकी बिवाई आदि नष्ट हो कर) वे कमलदल सदृश कोमल हो जाते हैं ।

(५८१२) यवादिलेपः (५)

(व. से. । व्रण.)

यवचूर्णं समधुकं सह तैलेन सर्पिषा ।
दद्यात्प्रलेपनं कोष्णं दाहशूलोपशान्तये ॥

जौ और मुलैठीका चूर्ण समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र करके तेल और घीमें मिला लें ।

इसे मन्दोष्ण करके लेप करनेसे व्रणकी दाह और पीड़ा शान्त हो जाती है ।

(नोट—तेल और घी बराबर बराबर ले कर एकत्र मिला लेने चाहियें ।)

(५८१३) यष्ट्यादिलेपः (१)

(व. से. । व्रण.)

यष्टी तिलाः सुपिष्टा वा सघृताव्रणरोपणे ।
धातकीचन्दनबलाः समङ्गामधुकोत्पलैः ॥
दार्वीमेदातिलैर्लेपः ससर्पिर्व्रणरोपणः ॥

मुलैठी और तिलके महीन चूर्णको घीमें मिलाकर लेप करनेसे व्रण भर जाते हैं ।

धायके फूल, लाल चन्दन, खरैटी, मजीठ, मुलैठी, नील कमल, दारुहल्दी, मेदा और तिल; सबके समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिला कर घीमें मिला लें ।

इसका लेप करनेसे व्रण भर जाते हैं ।

(५८१४) यष्ट्यादिलेपः (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१.)

यष्टीमधु तथा कुष्ठं चन्दनं रक्तचन्दनम् ।
उशीरं कत्तृणं चैव रक्तधातुमृणालकम् ॥
क्षीरमण्डकसंयुक्तं यथालाभं भिषग्वर ! ।
लेपनं पित्तरक्तानां मेहदाहः प्रशाम्यति ॥

मुलैठी, कूठ, सफेद और लाल चन्दन, खस, गन्धतृण, गेरु और कमलनाल समान भाग लेकर सबको अत्यन्त बारीक पीस कर दूध या माण्डमें मिला कर लेप करनेसे पित्तरक्तज प्रमेहकी दाह शान्त होती है ।

यदि उपरोक्त समस्त ओषधियां प्राप्त न हो सकें तो जितनी मिल जाएं उन्हींसे काम चलाना चाहिए ।

(५८१५) **यष्ट्यादिलेपः** (३)

(शा. ध. । खं. ३ अ. ११)

यष्टीन्दीवरमृद्वीकातैलाज्यक्षीरलेपनैः ।
इन्द्रलुप्तः शमं याति केशाः स्युः सघनाः दृढाः ॥

मुलैठी, कमल और मुनक्का १—१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अत्यन्त बारीक पीस कर उसमें १—१ भाग तेल, घी और दूध मिला कर लेप करनेसे इन्द्रलुप्त नष्ट होता और केश घने तथा दृढ़ होते हैं ।

(५८१६) **यष्ट्यादिलेपः** (४)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

यष्टीगैरिकसिन्धूत्थदार्वीतार्क्ष्यैः समांशकैः ।
जलपिष्टैर्बहिर्लेपः सर्वनेत्ररुजापहः ॥

मुलैठी, गेरु, सेंधा नमक, दारुहल्दी और रसौत समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ पीस लें ।

इसका नेत्रोंके बाहर लेप करनेसे हर प्रकारकी नेत्र-पीड़ा नष्ट होती है ।

(५८१७) **यष्ट्यादिलेपः** (५)

(वृ. मा. । शोथा.)

यष्टीदुग्धतिलैर्लेपो नवनीतेन संयुतः ।
शोथमारुष्करं हन्ति वृन्तैः शालदलस्य वा ॥

मुलैठी और तिल समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिला कर दूधके साथ अत्यन्त बारीक पीस लें ।

इसे नवनीत में मिला कर लेप करनेसे भिलावेकी सूजन नष्ट हो जाती है ।

शाल वृक्षके पत्तोंके डण्ठलोंका लेप करनेसे भी भिलावेकी सूजन नष्ट हो जाती है ।

इति यकारादिलेपप्रकरणम्



अथ यकारादिधूपप्रकरणम्

(५८१८) **यवादिधूपः** (१)

(वृ. यो. त. । १११.)

वाताभिभूतान्सास्रावान्धूपयेदुग्रवेदनान् ।
यवाज्यभूर्जमदनश्रीवेष्टकसुराह्वयैः ॥

जौ, भोजपत्र, मैनफल, श्रीवेष्ट, और देवदारु समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । इसे घीमें मिला कर स्राव और तीव्र वेदना युक्त वातज व्रणोंको इसकी धूनी देनी चाहिये ।

(५८१९) **यवादिधूपः** (२)

(वैद्यामृत.)

यवसर्षपरुक्शिवावचाजतुनिम्बाज्यभवं प्रधूपनम्
ज्वरनाशकरं परं स्मृतं विविधोपायकरैश्चिकित्सकैः ॥

जौ, सरसो, कूठ, हल्दी; बच, लाख और नीमके पत्ते समान भाग लेकर सबको एकत्र कूट कर घीमें मिलावें।

इसकी धूप (धूनी) देनेसे ज्वर नष्ट होता है।

इति यकारादिधूपप्रकरणम्



अथ यकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(५८२०) यष्ट्याद्यञ्जनम्

(वृ. यो. त. । त. ८९; वृ. मा. । अपस्मार; व. से.; यो. र.)

यष्टीहिङ्गुवचावज्री शिरीषलशुनामयैः ।
साजमूत्रैरपस्मारे सोन्मादे नावनाञ्जनम् ॥

मुलैठी, हींग, बच, हडजोड़ी, सिरसके बीज, ल्हसन और कूठ समान भाग ले कर सबको बकरेके मूत्रमें अत्यन्त बारीक पीस लें।

इसकी नस्य लेने और इसे आंखमें लगानेसे उन्माद और अपस्मार नष्ट होता है।

इति यकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

अथ यकारादिनस्यप्रकरणम्

(५८२१) यवकादिनस्यम्

(वृ. नि. र. । ज्वर.)

यावकस्य रसेनापि नस्यतो हन्ति हिक्किकाम्

कुलथी (या उड़द) के क्वाथकी नस्य देनेसे हिचकी नष्ट होती है।

इति यकारादिनस्यप्रकरणम्

अथ यकारादिरसप्रकरणम्

(५८२२) यकृत्प्लीहारिलौहम् (१)

(भै. र. । प्लीहयकृ.; र. र.; धन्व.)

लौहार्द्धमभ्रकं शुद्धं सूतमप्यर्द्धभागिकम् ।
त्रिगुणामयसश्चूर्णात् त्रिफलां साभ्रकात्तथा ॥
द्विरष्टवारिणो भागमष्टशिष्टन्तु कारयेत् ।
तेन चाष्टावशिष्टेन समेनाज्येन यत्नतः ॥
रसेन बहुपुत्राया द्विगुणक्षीरसंयुतम् ।
लौहपात्रे पचेद्दर्व्या लौहमय्या विधानतः ॥

अभ्रकं निहतं शुद्धं पारदश्च सुमूर्च्छितम् ।
अयसोऽर्द्धमितं चूर्णमादौ पाके विनिक्षिपेत् ॥
कन्दं कापालिकां चव्यं विडङ्गं सबृहद्दलम् ।
शरपुङ्खा च पाठा च चित्रकं समहौषधम् ॥
लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदारकम् ।
दीप्यकश्च तथा सीधुं लौहाभ्रकसमं क्षिपेत् ॥
प्लीहोदरयकृद्गुल्मान् हन्ति शस्त्राग्निभिर्बिना ।
प्रयोज्योऽयं महावीर्यो लोहो लोहविदां वरैः ॥
प्लीहोदरविनाशाय दद्यात् द्वे द्वे पुटे पृथक् ।
मानेन घण्टकर्णेन शूरणेन पृथक् पृथक् ॥

४५ तोले (९ छटांक) त्रिफलाको १६ गुने (९ सेर) पानीमें पकावें और जब आठवां भाग (१ सेर १० तोले) पानी शेष रहे तो उसे छानकर उसमें उसके बराबर (१ सेर १० तोले) घी और उतनाही शतावरका रस तथा २ गुना (२। सेर) दूध और ११ तोले लोहभस्म तथा ५ तोले अभ्रक भस्म एवं ५ तोले रस सिन्दूर मिला कर लोहेकी कढ़ाईमें मन्दाग्नि पर पकावें और लोहेकी करछीसे चलाते रहें। जब पाक तैयार हो जाए तो उसमें निम्न लिखित द्रव्योंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

चूर्ण द्रव्य----लोह भस्म ५ तोलो तथा जिमीकन्द, कण्टकपाली, चव्य, बायबिड़ंग, पठानी लोध, सरफोंका, पाठा, चीता, सोंठ, पांचों नमक (सेंधा नमक, काला नमक, बिड नमक, सामुद्र लवण, काच लवण), जवाखार, विधारा बीज, अजवायन और थोहर (सेंड) की जड़; इनका चूर्ण १५–१५ तोले।

इसके सेवनसे प्लीहा, यकृत् और गुल्मका नाश होता है।

इस प्रयोगमें डालनेके लिये लोहको मानकन्द, घण्टकर्ण और जिमिकन्दके रसोंके साथ घोट घोट कर पृथक् पृथक् २–२ पुट देनी चाहियें।

(५८२३) यकृत्प्लीहारिलौहम् (२)

(भै. र.; धन्व. । प्लीहयकृद्रो.)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकं लौहमभ्रकम् ।
तुल्यं द्विगुणताम्रन्तु शिला च रजनी तथा ॥
जयपालं टङ्गणश्च शिलाजतु समं रसात् ।
एतत्सर्वं समाहृत्य चूर्णीकृत्य विमिश्रयेत् ॥
दन्तीत्रिवृचित्रकश्च निर्गुण्डी त्र्यूषणं तथा ।
आर्द्रकं भृङ्गराजश्च समैरेषाः पृथक् पृथक् ॥
भावयित्वा वटीं कुर्याद् गुञ्जाद्वयमितां भिषक्।
प्लीहानं यकृतश्चैव चिरकालानुबन्धिनम् ॥
एकजं द्वन्द्वजश्चैव सर्वदोषभवं तथा ।
हन्यादष्टोदरानाहज्वरं पाण्डुश्च कामलाम् ॥
शोथं हलीमकं हन्ति मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
यकृत्प्लीहारिनामेदं लौहं जगति दुर्लभम् ॥

हिंगुलोत्थ पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म और अभ्रक भस्म १–१ भाग; ताम्र भस्म २ भाग तथा शुद्ध मनसिल, हल्दीका चूर्ण, शुद्ध जमालगोटा, सुहागेकी खील और शिलाजीत १–१ भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें और फिर उसे दन्तीमूल, निसोत, चीता, संभालु, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), अदरक और भंगरके रसकी पृथक् पृथक् एक एक भावना दे कर दो दो रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे तिल्ली, पुराना यकृत, आठ प्रकारके उदर रोग, आनाह, ज्वर, पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता है।

(५८२४) **यकृत्प्लीहोदरारिलौहम्**

स्वर्णं रौप्यं तथा ताम्रं वङ्गश्चाभ्रं समाक्षिकम् ।
सर्वार्द्धं जारितं लौहं कल्पयेत्कुशलो भिषक् ॥
शृङ्गवेररसेनापि शेफालीदलजै रसैः ।
स्वरसैर्बिल्वपत्राणां क्वाथैश्च कटुतिक्तजैः ॥
रसेन बहुमञ्जर्याः भावयेच्च त्रिधा त्रिधा ।
वल्लमात्रं प्रदातव्यं पर्पटक्वाथसंयुतम् ॥
प्लीहानं यकृतं श्वासं कासञ्च विषमज्वरम् ।
गुल्मशोथोदरानाहमग्रमांसमरोचकम् ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च चिरकालानुबन्धिनम् ।
सर्वान् रोगान्निहन्त्याशु वातपित्तकफोद्भवान् ॥

स्वर्ण भस्म, रौप्य भस्म, ताम्र भस्म, बंग भस्म, अभ्रक भस्म और स्वर्ण माक्षिक भस्म १-१ भाग तथा लोह भस्म सबसे आधी (३ भाग) ले कर सबको एकत्र मिला कर उसे अदरकके रस, शेफाली (हार सिंहार) के पत्तोंके रस, बेल पत्रके रस, चिरायतेके क्वाथ और तुलसीके रसकी पृथक् पृथक् ३-३ भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान-पित्तपापड़ेका क्वाथ ।

इनके सेवनसे प्लीहा, यकृत्, श्वास, खांसी, विषम ज्वर, गुल्म, शोथ, उदर, आनाह, अग्रमांस (हृद्रोग विशेष), अरुचि, कामला और पुराने पाण्डु का नाश होता है।

(५८२५) **यकृदरिलौहम्**

(भै. र.; र. चं.; र. सा. सं.; र. रा. सु. । यकृत्प्लीहा.; रसें. चि. म. । अ. ९.)

द्विकर्षं लौहचूर्णस्य गगनस्य पलार्द्धकम् ।
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्रं लिम्पाकाङ्घ्रित्वचः पलम् ॥
मृगाजिनभस्मपलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
यकृत्प्लीहोदरश्चैव कामलाश्च हलीमकम् ।
कासं श्वासं ज्वरं हन्ति बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥
यकृदरिनाम लौहं सर्वव्याधिनिषूदनम् ॥

लोह भस्म और अभ्रक भस्म २॥-२॥ तोले, ताम्र भस्म १। तोला तथा बिजौर नीबूकी जड़की छालका चूर्ण और मृग चर्मकी भस्म ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र करके पानीके साथ घोट कर ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे यकृदुदर, प्लीहोदर, कामला, हलीमक, खांसी, श्वास और ज्वरका नाश होता तथा बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

(५८२६) **यकृदरिलौहम्** (बृहत्)

(भै. र. । प्लीहयकृ.)

पारदं गन्धकश्चाभ्रं त्र्यूषणं कटुकीं तथा ।
त्रायमाणां विषां पाठां पिचुमर्दं हरीतकीम् ॥
चित्रकं पर्पटं मुस्तं समभागं प्रकल्पयेत् ।
सर्वार्द्धं जारितं लौहं गुडूचीस्वरसैर्दिनम् ॥
निष्पिष्य वटिका कार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ।
प्लीहोदरयकृद्गुल्मान् सर्वोपद्रवसंयुतान् ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकं चातुराहिकम् ।
सर्वान् ज्वरान्निहन्त्याशु भक्षणादार्द्रकद्रवैः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म और सोंठ, मिर्च, पीपल, कुटकी, त्रायमाणा, अतीस, पाठा, नीमकी छाल, हर्र, चीतामूल, पितपापड़ा, और नागरमोथा, इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबसे आधी (७॥ भाग) लेकर सबको एकत्र मिलाकर १ दिन गिलोयके क्वाथमें घोटें और ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे प्लीहोदर, यकृत, गुल्म, तथा एकाहिक द्वयाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर नष्ट होता है।

अनुपान-अदरकका रस।

(५८२७) यक्ष्मकेसरी रसः

(धन्व. । राजयक्ष्मा.)

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः।
नवभागोन्मितैस्तुल्यं लोहपारदसिन्दुरम् ॥
मधुना क्षयरोगांश्च हन्त्ययं यक्ष्मकेशरी ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची, जायफल और लौंग, इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म, पारद भस्म और रससिन्दूर ३-३ भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे क्षय रोग नष्ट होता है।

अनुपान-मधु।

(मात्रा-२ रत्ती।)

(५८२८) यक्ष्महरो रसः

(र. प्र. सु. । अ. ८; र. चं. । राजयक्ष्मा.)

शुद्धसूतविषके च हाटकं
गन्धकेन सहितं समांशकम्।
मर्द्य चार्द्रकरसेन चित्रकैः
प्रक्षिपेच्च सुदृढे सुभाजने ॥
ताम्रभाजनमथोपरिस्थितं
रोधयेत्पटमृदा सदैव हि।
याममात्रपुटितं शनैः शनै-
र्निक्षिपेच्च जलमूर्ध्वभाजने ॥
ताम्रपत्रकुहरे रसो भवे-
द्रोगराजविनिबर्हणक्षमः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), स्वर्ण भस्म और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें बछनाग तथा स्वर्ण मिला कर उसे १-१ दिन अदरक और चीतेके रसमें घोटें। तदनन्तर उसे मिट्टीके दृढ़ पात्रमें डालकर उसके ऊपर शुद्ध ताम्रकी कटोरी ढक दें और दोनोंकी सन्धिको अच्छी तरह बन्द करके उस पर कपड़मिट्टी कर दें एवं ताम्रकी कटोरीमें पानी भर दें। अब उसे चूल्हे पर चढ़ाकर उसके नीचे १ पहर तक धीमी अग्नि जलावें। एक पहर पश्चात् पात्रके स्वांग शीतल होने पर उसका मुख खोल कर उसके भीतर ताम्र-पात्रमें लगे हुवे रसको छुड़ाकर सुरक्षित रक्खें।

यह रस राजयक्ष्माको नष्ट करता है।

(मात्रा-१ रत्ती।)

(५८२९) यक्ष्मान्तकलोहः

(भै. र. । राजयक्ष्मा.)

रास्नातालीशकर्पूरभेकपर्णीशिलाह्वयैः।
त्रिकत्रयसमायुक्तैर्लौहो यक्ष्मान्तको मतः ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम्।

हन्ति कासं स्वराघातं क्षयकासं क्षतक्षयम् ।
बलवर्णाग्निपुष्टीनां साधनो दोषनाशनः ॥

रास्ना, तालीसपत्र, कपूर, मण्डूकपर्णी, मनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग, नागरमोथा और चीतामूल; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसके सेवनसे वैद्योंसे त्यक्त और सर्व उपद्रव युक्त क्षय भी नष्ट हो जाता है।

इसके अतिरिक्त यह रस खांसी, स्वरभंग, क्षय कास और क्षतक्षयको भी नष्ट करता है। तथा इसके सेवनसे बल, वर्ण, अग्नि और पुष्टिकी वृद्धि होती है।

(मात्रा-२ रत्ती।
अनुपान-मधु।)

(५८३०) यक्ष्मारिलौहम्

(भै. र. । राजयक्ष्मा.)

मधुताप्याविडङ्गाश्मजतुलोहघृताभयाः ।
घ्नन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमाना हिताशिना ॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म, बायबिड़ंगका चूर्ण, शिलाजीत, लोह भस्म और हर्रका चूर्ण तथा शहद और घी समान भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर सेवन करनेसे प्रबल यक्ष्माका भी नाश हो जाता है।

(५८३१) यवान्यादियोगः

(रसे. चि. म. । अ. ९.)

यवानीगुडसम्मिश्रो सूतभस्म द्विवल्लकम् ।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलविलेपनम् ॥

१ भाग पारद भस्म (अभावे रस सिन्दूर) में १-१ भाग अजवायनका चूर्ण और गुड़ मिलाकर खरल करें।

इसके सेवनसे शीत पित्त (पित्ती उछलना) रोग नष्ट होता है।

मात्रा-६ रत्ती।

शीत पित्तमें शरीर पर सरसोंके तेलकी मालिश भी करनी चाहिये।

(५८३२) यशदमारणम् (१)

(र. रा. सु.)

जसदस्य चतुर्थांशं पारदं गन्धकं मिये ।
मर्दयेत्खल्वके सम्यक् कन्यानिम्बुरसैः पृथक् ॥
लेपयेत्तेन पत्राणि गजाह्वे पाचयेत्पुटे ।
एकमेवपुटेनैव भस्मसाज्जसदं भवेत् ॥

गुञ्जाद्वयं तु जसदं सर्वरोगान् व्यपोहति ।
जसदं तुवरं तिक्तं शीतलं कफपित्तहृत् ॥
चक्षुष्यं परमं मेहं पाण्डुं श्वासं च नाशयेद् ।

पुराणे गोघृते नेत्र्यं ताम्बूलेन प्रमेहजित् ॥
अग्निमन्थेनाग्निकरं त्रिसुगन्धैस्त्रिदोषनुत् ।
सतन्दुलहिमैर्हन्ति खर्जूरैर्मायुजं ज्वरम् ॥
यवानिका लवङ्गाभ्यां युतं शीतज्वरं जयेत् ।
खर्जूरतण्डुलहिमै रक्तातीसारनाशकृत् ॥
शर्कराजाजिसंयुक्तमतिसारं वमिं जयेत् ॥

१-१ भाग पारद और गन्धककी कज्जली करके उसे १-१ दिन घृत कुमारी और नीबूके

रसमें घोटें। तदनन्तर ४ भाग शुद्ध जशदके पत्रों पर इस कज्जलीका लेप करके उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करें और गजपुटमें फूंक दें।

इस विधिसे एकही पुटमें यशादकी भस्म हो जाती है।

जस्त कसेला, कड़वा, शीतल और कफ पित्त नाशक है। आंखोंके लिये अत्यन्त हितकारक है तथा प्रमेह, पाण्डु और श्वासको नष्ट करता है।

मात्रा—२ रत्ती।

यशद भस्मको—

नेत्र रोगोंमें—पुराने गोघृतके साथ;

प्रमेहमें—पानके साथ;

अग्निमांद्यमें—अरणीकी जड़के क्वाथके साथ;

त्रिदोषमें—दालचीनी, इलायची और तेजपातके चूर्णके साथ;

पित्तज ज्वरमें—खजूर और चावलोंके शीतकषायके साथ;

शीत ज्वरमें—अजवायन और लौंगके साथ;

रक्तातिसारमें—खजूर और चावलोंके हिमके साथ;

अतिसार और वमनमें—मिश्री और जीरेके चूर्णके साथ सेवन करना चाहिये।

(५८३३) यशदमारणम् (२)

(र. रा. सु.)

जसदं लोहजे पात्रे द्रावयित्वा पुनर्धमेत्।
अत्यन्ततप्ते निम्बस्य पत्रमेकं विनिक्षिपेत्॥
घर्षणाल्लोहदण्डेन वह्निरुत्तिष्ठति ध्रुवम्।
यथा यथा भवेत् घृष्टिर्भस्मीभावस्तथा तथा॥
भस्मी भूतं पृथक् कृत्य घर्षयेत्तत्पुनः पुनः।
नेत्रयोगेषु सर्वेषु भस्मीभूतमिदं शुभम्॥

यशदको लोह-पात्रमें पिघलावें और फिर उसके नीचे खूब तेज़ अग्नि कर दें। जब वह खूब तप्त हो जाए तो उसमें १-१ करके नीमके पत्ते डालें ओर लोहेके डण्डेसे घोटते रहें। इससे उसमें से ज्वाला निकलेगी और जस्तकी भस्म होती जायगी ज्यों ज्यों भस्म होती रहे उसको अलग निकालते रहें। और अन्तमें सबको खरल करके रक्खें।

यह भस्म आंखमें डालनेके लिये उपयोगी है।

(५८३४) यशदविकारोपायः

(र. रा. सु.)

अपक्वं जसदं रोगान् प्रमेहाजीर्णमारुतान्।
वमिं भ्रमिं करोत्येनं शोधयेन्नागवत्ततः॥
बालाभयां सितायुक्तां सेवयेद्यो दिनत्रयम्।
जसदस्य विकारोस्य नाशमायाति नान्यथा॥

अशुद्ध और अपक्व जस्त खानेसे प्रमेह, अजीर्ण, वायु, वमन और भ्रम इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं।

यशदका शोधन भी नागके समान ही करना चाहिये।

छोटी हरड़का चूर्ण और मिश्री मिला कर ३ दिन तक सेवन करनेसे यशदके विकार शान्त हो जाते हैं।

(५८३५) यशादशुद्धिः

(र. रा. सु.)

**खर्परं द्विविधं प्रोक्तं जसदं शवकं तथा ।
जसदं प्रोक्तं खर्परं च गुणात्मकम् ॥
जसदं गालयेत्पूर्वं दुग्धमध्ये तु ढालयेत् ।
एकविंशतिवारांश्च खर्परं शुद्धिमिष्यते ॥**

खपरियाके दो भेद हैं, उन्हीं में से एकका नाम यशद है । दूसरे भेदको 'शवक' कहते हैं।

यद्यपि खपरिया और यशद (जसत) एकही वस्तु के दो भेद हैं परन्तु खपरिया यशदकी अपेक्षा अधिक गुणदायी होता है ।

जस्तको पिघला कर दूधमें बुझावें । इसी प्रकार २१ बुझाव देनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(५८३६) योगराजगुटिका

(च. सं. । चि. अ. २० पाण्डु ; वै. क. द्रु. । स्क. २; च. द. ; र. रा. सुं. । पाण्डु.; भै. र. । पाण्डु ; ग. नि.)

**त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटुकस्य च ।
भागाश्चित्रकमूलस्य विडङ्गानां तथैव च ॥
पञ्चाश्मजतुनो भागास्तथा रूप्यमलस्य च ।
माक्षिकस्य विशुद्धस्य लौहस्य रजसस्तथा ॥
अष्टौ भागाः सितायाश्च तत्सर्वं श्लक्ष्णचूर्णितम्।
माक्षिकेणाप्लुतं स्थाप्यमायसे भाजने शुभे ॥
उदुम्बरसमां मात्रां ततः खादेद्यथाग्निना ।
दिने दिने प्रयोगेण जीर्णे भोज्यं यथेप्सितम् ॥
वर्जयित्वा कुलत्थांश्च काकमाचीकपोतकान् ।
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ।
पाण्डुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमज्वरम् ॥
कुष्ठान्यजरकं मेहं श्वासं हिक्कामरोचकम् ।
विशेषाद्धन्त्यपस्मारं कामलां गुदजानि च ॥**

हर्र, बहेड़ा, आमला १-१ भाग; सोंठ, मिर्च, पीपल १-१ भाग; चीतेकी जड़ १ भाग, बायबिड़ंग १ भाग; शुद्ध शिलाजीत ५ भाग, रौप्यमल (रूपामक्खी भस्म) ५ भाग, स्वर्ण-माक्षिक (भस्म) ५ भाग, शुद्ध लोह (भस्म) ५ भाग, शुद्ध चांदी (भस्म) ५ भाग और मिश्री ८ भाग लेकर महीन चूर्ण बनावें ।

इसे मधुमें मिला कर स्वच्छ और उत्तम लोह-पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे अग्नि बलोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे पाण्डु, विष, खांसी, यक्ष्मा, विषम ज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, श्वास, हिचकी और अरुचिका नाश होता है ।

यह प्रयोग अपस्मार, कामला और अर्शमें विशेष उपयोगी है ।

साधारण मात्रा-१। तोला ।

इस प्रयोगमें किसी विशेष परहेज़की आवश्यकता नहीं है । औषध पच जाने पर यथारुचि आहार करना चाहिये । केवल कुलथी, मकोय और कपोत मांसका त्याग कर देना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा-४ रत्ती)

योगराजलोहम्

(र. र. । कृमि.)

"त्रिफलादि लेहः" प्र. सं. २७४५ देखिये।

(५८३७) योगराजलौहः

(र. र. । कुष्ठा.)

त्रिफलावाकुचीबीजं भृङ्गराजकटुत्रिकम् ।
गुडूच्यैडगजाबीजं केशराज समुस्तकम् ॥
धात्रीखदिरसिन्धूत्थं यमानीजीरकद्वयम् ।
कान्तक्रामविडङ्गानि सर्वचूर्णानि कारयेत् ॥
लोहं सर्वसमं ह्येष योगराज इति स्मृतः ।
सर्वकुष्ठविकारेषु विहितो लोहकोविदैः ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, बाबची, भंगरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, गिलोय, पमाड़के बीज, काला भंगरा, नागरमोथा, आमला, खैरसार, सेंधा नमक, अजवायन, जीरा, काला जीरा, चुम्बक भस्म, सुपारीकी जड़ और बायबिड़ंग; इन सबका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर (२१ भाग) लेकर सबको एकत्र खरल करके रक्खें ।

इसके सेवनसे समस्त कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(५८३८) योगामृतरसः

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धताम्रं पलद्वयम् ।
चूर्णितं सूतकं मर्द्य कुर्यात्तन्नष्टपिष्टकम् ॥
शुद्धगन्धं द्विद्विपलं तत्तुल्यं कटुतैलकम् ।
तयोर्मध्ये ताम्रपिष्टीं लोहपात्रेऽल्पवह्निना ॥
पचेद्यावद्द्रवं जीर्णं समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।
विषं वचा त्र्यूषतुल्या भद्रमुस्ता विडङ्गकम् ॥
विषस्य त्रिगुणं योज्यं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
सर्वं सूतसमं चूर्णं क्षौद्रमिश्रं वटी कृतम् ॥
द्विगुञ्जं भक्षितं हन्ति प्रसुप्तिं मण्डलं तथा ।
रसो योगामृतो नाम्ना ह्यनुपानं च पूर्ववत् ॥

शुद्ध पारद ४० तोले और शुद्ध ताम्र चूर्ण १० तोले ले कर दोनोंको एकत्र मिलाकर इतना घोटें कि दोनों एक जीव हो जाएं । तदनन्तर उसका गोला बना लें और एक लोहेकी कढ़ाईमें १० तोले शुद्ध गन्धकका चूर्ण बिछा कर उस पर वह गोला रख दें तथा उसके ऊपर भी १० तोले शुद्ध गन्धकका चूर्ण डाल कर उस पर २० तोले सरसोंका तेल डाल दें और कढ़ाईको चूल्हे पर चढ़ा कर उसके नीचे मन्दाग्नि जलावें । तदनन्तर जब तेल शुष्क हो जाए तो अग्नि देनी बन्द कर दें और कढ़ाईके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे गोलेको निकाल कर पीस लें ।

अब शुद्ध बछनाग (मीठा विष), बच, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा नागरमोथे और बायबिड़ंगका चूर्ण ३-३ भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें और यह चूर्ण तथा उपरोक्त सिद्ध रस समान भाग ले कर दोनोंको शहदमें घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे सुप्ति और मण्डल कुष्ठका नाश होता है ।

(५८३९) योगीश्वरोरसः

(भै. र. । प्रमेह.)

मृतसूताभ्रनागानां तुल्यभागं प्रकल्पयेत् ।
महानिम्बस्य बीजोत्थं चूर्णं योज्यं त्रिभिःसमम्॥
मधुना लेहयेद् गुञ्जाद्वयं मेहप्रशान्तये ।
सक्षौद्ररजनी चाथ लेह्यं माषत्रयं सदा ॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्याद् योगीश्वरो रसः ॥

पारद भस्म (अभावमें रस सिन्दूर), अभ्रक भस्म, और सीसा भस्म १-१ भाग तथा बकायनके बीजोंका चूर्ण ३ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

मात्रा-२ रत्ती।

अनुपान-रसको शहदके साथ चाटकर ऊपरसे ३ माशे हल्दीका चूर्ण शहदके साथ मिलाकर चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे असाध्य प्रमेह भी नष्ट हो जाता है।

(५८४०) योगेन्द्ररसः

(धन्व. । वातव्याधि. ।)

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्धं शुद्धहाटकम्।
तत्समं कान्तलोहं च तत्समं चाभ्रमेव च ॥
विशुद्धं मौक्तिकं चैव वङ्गं च तत्समं मतम्।
कुमारीकारसैर्भाव्यं धान्यराशौ दिनत्रयम् ॥
ततो रक्तिद्वयमितां वटिं कुर्याद्विचक्षणः।
योगवाही रसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥
वातपित्तभवान् रोगान् प्रमेहान् बहुमूत्रताम्।
मूत्राघातमपस्मारं भगन्दरगुदामयम् ॥
उन्मादं मूर्छां यक्ष्माणं पक्षघातं हतेन्द्रियम्।
शूलाम्लपित्तकं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥
त्रिफलारसयोगेन शुभया सितयापि वा।
भक्षयित्वा भवेद्रोगी कामरूपी सुदर्शनः ॥
रात्रौ सेव्यं गवां क्षीरं कृशानां च विशेषतः।
योगेन्द्राख्यो रसो नाम्ना कृष्णात्रेयविनिर्मितः॥

रस सिन्दूर २ भाग तथा स्वर्ण भस्म, कान्त लोह भस्म, अभ्रक भस्म, मोती भस्म और बंग भस्म १-१ भाग ले कर सबको एक दिन घृतकुमारीके रसमें घोट कर गोला बनावें और उसे (अरण्डके पत्तोंमें लपेट कर) अनाजके ढेरमें दबा दें एवं ३ दिन पश्चात् निकाल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह रस योग वाही है और अनुपान भेदसे समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

इसके सेवनसे वातज रोग, पित्तज रोग, प्रमेह, बहुमूत्र, मूत्राघात, अपस्मार, भगन्दर, अर्श, उन्माद, मूर्च्छा, यक्ष्मा, पक्षाघात, इन्द्रियनाश, शूल और अम्लपित्तका नाश होता है।

इसे त्रिफलेके क्वाथ, बंसलोचन और मिश्रीके साथ सेवन करनेसे रोगी कामदेव सदृश रूपवान हो जाता है।

कृश पुरुषोंको इसके सेवन कालमें रात्रिको गोदुग्ध पीना चाहिये।

(५८४१) योगेश्वररसः

(रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । प्रमेह. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

सूतकं गन्धकं लौहं नागश्चापि वराटिकाम्।
ताम्रकं बंगभस्मापि व्योमकञ्च समांशिकम् ॥
सूक्ष्मैलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेशरम्।
रेणुकामलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः।
भावना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥
मात्रा चणकतुल्या च गुटिकेयं प्रकीर्त्तिता।
प्रमेहं बहुमूत्रञ्च अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥

व्रणं हन्ति महाकुष्ठं अर्शांसि च भगन्दरम् ।
योगेश्वरो रसो नाम महादेवेन भाषितः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, सीसा भस्म, कौड़ी भस्म, ताम्र भस्म, बंग भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग; तथा छोटी इलायची, तेजपात, नागरमोथा, बायबिडंग, नागकेसर, रेणुका, आमला और पीपलामूल; इनका चूर्ण २-२ भाग लेकर सबको १ दिन आमलेके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे प्रमेह, बहुमूत्र, अश्मरी, मूत्र कृच्छ्र, व्रण, कुष्ठ, अर्श और भगन्दरका नाश होता है।

इति यकारादिरसप्रकरणम्



अथ यकारादिमिश्रप्रकरणम्

(५८४२) यवक्षारयोगः (१)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्र.)

माषमेकं यवक्षारं कूष्माण्डस्वरसं पलम् ।
शर्कराकर्षसंयुक्तं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥

५ तोले पेठेके स्वरसमें १ माशा जवाखार और १। तोला खांड मिला कर पियें।

इस प्रयोगसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(५८४३) यवक्षारयोगः (२)

(वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्र.)

यवक्षारसमायुक्तं पिबेत्तक्रं च कामतः ।
मूत्रकृच्छ्रविनाशाय तथैवाश्मरिनाशनम् ॥

तक्रमें जवाखार मिलाकर यथेच्छ परिमाणमें पीनेसे मूत्रकृच्छ्र और अश्मरिका नाश होता है।

(यवक्षारकी मात्रा—१ माशा।)

(५८४४) यवक्षारादियवागू

(व. से. । उदावर्त.)

क्षारचित्रकहिङ्ग्वाम्लवेतसैर्भेदनी मता ।
यवागूः साधिता वापि तत्रारग्वधपल्लवैः ॥

जवाखार, चीता, हींग और अम्लबेतसे सिद्ध यवागू अथवा अमलतासके पत्तोंसे तैयार की हुई यवागू भेदनी (दस्तावर) होती है।

(५८४५) यवशक्तुयोगः

(वृ. मा. । परिणाम शूल.)

यः पिबति सप्तरात्रं सक्तूनेकान्कलाययूषेण ।
स जयति परिणामरुजं चिरजामपि किमुत नूतनजाम् ॥

सात दिन तक केवल मटरके यूषके साथ सत्तू ही पीनेसे पुराना परिणाम शूल भी नष्ट हो जाता है; नवीनकी तो बात ही क्या है।

(अन्य आहार बन्द रखना चाहिये।

(५८४६) यवादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । क्षय.)

यवगोधूमचूर्णं वा क्षीरसिद्धं घृतप्लुतम् ।
तत्कृत्वा सर्पिषा क्षौद्रसिताक्तं क्षयशान्तये ॥

जौ और गेहूंके चूर्णको दूधमें पकाकर उसमें घी, शहद और मिश्री मिला कर सेवन करनेसे क्षयरोग नष्ट होता है।

(५८४७) **यवादिमन्थः**

(शा. ध. । खं. २ अ. ३)

प्लावितैः शीतनीरेण सघृतैर्यवसक्तुभिः ।
नातिसान्द्रद्रवैर्मन्थस्तृष्णादाहास्रपित्तहा ॥

जौ के सत्तूको ठण्डे पानीमें घोलकर उसमें घी मिला कर पीनेसे तृष्णा, दाह और रक्तपित्तका नाश होता है।

सत्तू न अधिक गाढ़ा होना चाहिये और न अधिक पतला।

(स्वाद योग्य मिश्री भी मिला लेनी चाहिये।)

(५८४८) **यवादियूषः**

(व. से. । स्त्री.)

यवकोलकुलित्थानां शालिमूलं तथैव च ।
क्वाथयेदप्रमत्तस्तु सुपूते सलिलाढके ॥
तत्पादावस्थितं क्वाथं सर्पिर्युक्तं सजीरकम् ।
पक्वं घृताक्षमात्रेण सैन्धवेन समायुतम् ॥
एतेनैव च यूषेण चाश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ।
सूतिकोपद्रवं हन्ति भुक्तमात्रान्न संशयः ॥

जौ, बेर, कुलथी और शालिधानकी जड़ (२०-२० तोले) लेकर सबको कूटकर ८ सेर छने हुवे पानीमें पकावें। जब २ सेर पानी शेष रह जाय तो छान कर उसमें आधा सेर घी और ५ तोले जीरा मिला कर पुनः पकावें और जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

इन्हीं ओषधियोंसे सिद्ध यूषमें १। तोला उपरोक्त घी और (स्वाद योग्य) सेंधा नमक मिला कर उसके साथ शाली और साठी चावलोंका भात खानेसे सूतिका रोग नष्ट होता है।

(५८४९) **यवादियोगः**

(ग. नि. । कास १०.)

यवानां चूर्णमामानां क्षीरसिद्धं घृतप्लुतम् ।
ज्वरदाहे सिताक्षौद्रसक्तुमत् पयसा पिबेत् ॥

कच्चे (अधपके) जौके चूर्णको दूधमें पकाकर उसमें घी, मिश्री, शहद और सत्तू मिला कर तथा दूधसे पतला करके पीनेसे ज्वरकी दाह शान्त होती है।

(५८५०) **यवान्यादिपेया**

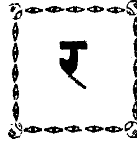
(वा. भ. । चि. स्था. अ. ३)

यवानीपिप्पलीबिल्वमध्यनागरचित्रकैः ।
रास्नाजाजीपृथक्पर्णीपलाशशठिपौष्करैः ॥
सिद्धां स्निग्धाम्ललवणां पेयामनिलजे पिबेत्
कटिहृत्पार्श्वकोष्ठार्तिश्वासहिध्माप्रणाशिनीम् ॥

अजवायन, पीपल, बेलगिरी, सोंठ, चीता, रास्ना, जीरा, पृष्ठपर्णी, पलाशकी छाल, कचूर और पोखरमूलसे सिद्ध पेयामें घृत, अनारका रस और सेंधा नमक मिलाकर पिलाना वातज रोगोंमें तथा कमर, हृदय, पार्श्व और कोष्ठकी पीड़ा एवं श्वास और हिचकीमें हितकर है।

इति यकारादिमिश्रप्रकरणम्





अथ रकारादिकषायप्रकरणम्

(५८५१) रक्तनारिकेलजलयोगः

(वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्र.)

रक्तस्य नारिकेलस्य जलं कतकसंयुतम् ।
शर्करैला समायुक्तं मूत्रकृच्छ्रहरं विदुः ॥

लाल नारियलके पानीमें इलायची और निर्मलीके फलका चूर्ण तथा खांड (मिश्री) मिला कर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है ।

(चूर्णकी मात्रा—२ माशे ।)

(५८५२) रक्तशालिपिष्टयोगः

(रा. मा. । स्त्री रोगा. ३०)

क्षीरे स्थितं लोहितशालिपिष्टं
सुशीतलं माक्षिकसंयुतं च ।
पीतं निहन्ति प्रदरामयोत्था-
मतिप्रवृत्तामसृजः प्रवृत्तिम् ॥

लाल चावलोंको दूधमें भिगो दें और जब वे अच्छी तरह फूल जाएं तो उन्हें पीस लें । इसमें शहद मिला कर पीनेसे रक्त प्रदर सम्बन्धी प्रबल रक्तस्राव भी बन्द हो जाता है ।

(५८५३) रजन्यादिक्वाथः

(यो. चि. म. । अ. ४)

हरिद्रामुस्तभूनिम्बत्रिफलारिष्टवासकम् ।
कण्टकारीद्वयं भार्ङ्गी कटुकं नागरं कणा ॥
पटोलं पर्प्पटं शृङ्गी देवदारु सरोहिषम् ।
विधन्विकं बला बिल्वं कुम्भकारी हरीतकी ॥
कट्फलं कुटजं श्यामा सर्वमेकैकभागिकम् ।
रास्नाभागद्वयं चात्र दत्त्वा क्वाथं च साधयेत्॥
व्योषचूर्णयुतः क्वाथो ज्वरं हन्ति त्रिदोषजम्।
त्रयोदश महाघोरान् अन्धकारान्यथा रविः ॥
वमिः स्वेदो प्रलापं च स्तैमित्यं शीतगात्रता ।
मोहतन्द्रातृषाश्वासकासदाहाग्निमन्दहा ॥
हृत्पार्श्वशूलविष्टम्भं कण्ठकुब्जत्रिकं तथा ।
जिह्वास्फुटनकं कर्णशूलं चाशु विनाशयेत् ॥
नातः परतरं किञ्चिदौषधं सन्निपातजित् ।
रजन्यादि गणो ह्येष धन्वन्तरिविनिर्मितः ॥

हल्दी, नागरमोथा, चिरायता, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, बासा, कटेली, कटेला (बड़ी कटेली), भरंगी, कुटकी, सोंठ, पीपल, पटोल, पित्तपापड़ा, काकड़ासिंगी, देवदारु, गन्धतृण, जवासा, बला, बेलकी छाल, बनकुलथी, हर्र, कायफल, कुड़ेकी छाल, और निसोत १—१ भाग तथा रास्ना २ भाग ले कर सबको एकत्र करके अधकुटा कर लें ।

(इसमेंसे २ तोले चूर्णको १६ तोले पानीमें पकावें और ४ तोले पानी शेष रहने पर छान लें ।)

इस क्वाथमें सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

यह क्वाथ १३ प्रकारके सन्निपात, वमन, स्वेद, प्रलाप, स्तैमित्य (शरीरका भीगे कपड़ेसे लिपटा हुवा सा प्रतीत होना), शरीरका ठण्डा हो जाना, मोह, तन्द्रा, तृषा, श्वास, कास, दाह, अग्निमांद्य, हृदयशूल, पार्श्वशूल, विष्टम्भ, जिह्वा-स्फुटनम् और कर्णशूलको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

सन्निपात ज्वरके लिये इससे श्रेष्ठ अन्य औषध नहीं है।

(५८५४) रम्भाकन्दयोगः

(वृ. नि. र. । छर्दि कर्म.)

रम्भाकन्दरसो वापि मधुना छर्दिनाशकृत् ॥

केलेकी जड़के रसमें शहद मिला कर पीनेसे छर्दि नष्ट होती है।

(५८५५) रम्भादियोगः

(व. से. । श्वास.)

रम्भाकुन्दशिरीषाणां कुसुमं पिप्पलीयुतम् ।
पिष्ट्वा तण्डुलतोयेन पीत्वा श्वासमपोहति ॥

केलेका फूल, कुन्दके फूल, सिरसके फूल और पीपल समान भाग लेकर सबको चावलोंके पानीमें पीस कर पीनेसे श्वास नष्ट होता है।

(५८५६) रसोनकल्कः

(शा. सं. । खं. २ अ. ५)

पक्वकन्दरसोनस्य गुलिका निस्तुषीकृता ।
पाटयित्वा च मध्यस्थं दूरीकुर्यात्तदङ्कुरम् ॥
तदुग्रगन्धनाशाय रात्रौ तक्रे विनिक्षिपेत् ।
अपनीय च तन्मध्याच्छिलायां पेषयेत्ततः ॥
तन्मध्ये पञ्चमांशेन चूर्णमेषां विनिक्षिपेत् ।
सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिङ्गु सैन्धवम् ॥
कटुत्रिकं जीरकं च समभागानि चूर्णयेत् ।
एकीकृत्य ततः सर्वकल्कं कर्षप्रमाणतः ॥
खादेदग्निबलापेक्षी ऋतुदोषाद्यपेक्षया ।
अनुपानं ततः कुर्यादेरण्डभृतमन्वहम् ॥
सर्वाङ्गैकाङ्गजं वातमर्दितं चापतन्त्रकम् ।
अपस्मारमथोन्मादमूरुस्तम्भं च गृध्रसीम् ॥
उरःपृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिशूलान् कृमीञ्जयेत् ।
अजीर्णमातपं रोषमतिनीरं पयोगुडम् ॥
रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतन्निरन्तरम् ॥

सुपक्व ल्हसनको छीलकर उसके भीतरका तन्तु और अङ्कुर निकाल दें और फिर उसकी तीव्र गन्ध दूर करनेके लिये उसे रातको तक्रमें डाल दें तथा दूसरे दिन प्रातःकाल पीस लें। अब इसमें इसका पांचवां भाग निम्न लिखित चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

चूर्ण—सञ्चल (काला नमक), अजवायन, भुनी हुई हींग, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल और जीरा। सब चीजें समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें।

इस कल्कमें से १। तोला अथवा ऋतुदोष इत्यादिके अनुसार न्यूनाधिक मात्रानुसार खा कर ऊपरसे अरण्ड मूलका क्वाथ पीना चाहिये।

इसके सेवनसे सर्वाङ्ग वात, एकाङ्गवात, अर्दित, अपतन्त्रक, अपस्मार, उन्माद, उरुस्तम्भ,

गृध्रसी, उरः शूल, पृष्ठ शूल; कटी और पार्श्व शूल तथा कृमि रोग नष्ट होता है।

अपथ्य—ल्हसन के सेवन कालमें अजीर्ण न होने देना चाहिये तथा धूप, क्रोध, अत्यधिक जल पान, दूध और गुड़से परहेज़ करना चाहिये।

(५८५७) **रसोनयोगः** (१)

(वृ. मा. । शूला.)

रसोनं मद्यसम्मिश्रं पिबेत्प्रातः प्रकांक्षितः।
वातश्लेष्मभवं शूलं निहन्तुं वह्निदीपनम्॥

प्रातः काल भूखके समय ल्हसनको पीस कर मद्यमें मिला कर सेवन करनेसे वातकफज शूल नष्ट होता और अग्नि दीप्त होती है।

(५८५८) **रसोनयोगः** (२)

(ग. नि. । ज्वरा.)

प्रातः प्रातः ससर्पिष्कं रसोनमुपयोजयेत्।

प्रातः प्रातः ल्हसनको पीस कर घीमें मिला कर सेवन करनेसे ज्वर नष्ट होता है।

(यह प्रयोग म्लेरियामें अधिक उपयोगी है।)

(५८५९) **रसोनरसः स्नुहीरसश्च**

(रा. मा. । कर्णरोगा.)

आवेष्ट्य सूर्यतरुपत्रचयेन वह्ना-
वातापितात्स्रवति यत्सलिलं रसोनात्।
यद्वा स्नुहीशकलतो गलितं तदाशु
कर्णव्यथां हरति पूरणतः प्रभाते॥

ल्हसन पर आकके पत्ते लपेट कर (उस पर एक अंगुल मोटा मिट्टीका लेप करके) अग्निमें स्वेदित करें और फिर उसका रस निकाल लें।

यह रस कानमें डालनेसे कर्ण-पीड़ा तुरन्त शान्त हो जाती है।

इसी विधिसे स्नुही (सेंड—थोहर) के डण्डेका रस निकाल कर कानमें डाला जाय तो भी पीड़ा शान्त हो जाती है।

(५८६०) **रसोनसप्तकम्**

(वृ. यो. त. । त. ९०; व. से. । वातव्या. यो. त. । त. ४०)

पलमर्धपलं वाऽपि रसोनस्य सुकुट्टितम्।
हिङ्गुजीरकसिन्धूत्थसौवर्चलकटुत्रिकैः॥
चूर्णितैर्माषकोन्मानैरवचूर्ण्यं विलोडितम्।
यथाग्नि भक्षितं प्रातः रुबुकाथानुपानतः॥
दिने दिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरन्तरम्।
वातामयं निहन्त्येवमर्दितं चापतन्त्रकम्॥
एकाङ्गरोगिणां रोगं तथा सर्वाङ्गरोगिणाम्।
उरुस्तम्भं गृध्रसीं च शूलं द्वन्द्वं कृमीनपि॥
कटिपृष्ठामयं हन्याज्जाठरं च समीरणम्॥

हींग (घीमें भुनी हुई), जीरा, सेंधा नमक, काला नमक (सञ्चल), सोंठ, काली मिर्च और पीपल; इन सबका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें।

अब ५ तोले या २॥ तोले ल्हसनको छील कर अच्छी तरह कूट कर उसमें उपरोक्त चूर्ण १। माशा मिला कर दोनोंको एक जीव कर लें।

इसे अग्नि बलोचित मात्रानुसार प्रातः काल अरण्ड मूलके काथके साथ सेवन करनेसे १ मासमें

अर्दित, अपतन्त्रक, एकाङ्ग वात, सर्वाङ्ग वायु, उरुस्तम्भ, गृध्रसी, द्वन्द्वज शूल, कृमि, कटि शूल, पृष्ठ शूल और वातोदर इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

(५८६१) रसोनादिकल्कः (१)

(वृ. मा. । नाडी व्रण.; वृ. नि. र. । भग्नरोगा.)

रसोनमधुलाक्षाज्यसिताकल्कं समश्नताम् ।
छिन्नभिन्नच्युतास्थीनां सन्धानमचिराद्भवेत् ॥

ल्हसन, शहद, लाख, घी और मिश्री समान भाग लेकर पीसने योग्य चीज़ोंको पीस कर सबको एकत्र मिला लें।

इसे सेवन करनेसे छिन्न, भिन्न और अपने स्थानसे हटी हुई हड्डी ठीक हो जाती है।

(५८६२) रसोनादिकल्कः (२)

(यो. र.; ग. नि.; व. से. । ज्वरा. ; शा. सं. । खं. २ अ. ५)

रसोनकल्कं तिलतैलमिश्रं
योऽश्नाति नित्यं विषमज्वरार्त्तः ।
प्रमुच्यते सोऽप्यचिराज्ज्वरेण
वातामयैश्चापि सुघोररूपैः ॥

रसोन (ल्हसन) के कल्क को तिलके तेल* में मिला कर सेवन करनेसे विषम ज्वर और भयंकर वातज रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

*मतान्तरके अनुसार तिल तैलके स्थान पर घृत भी ले सकते हैं।

(५८६३) राजवृक्षादिपाचनक्वाथः

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

राजवृक्षोऽश्वत्थसारोऽमृताऽरिष्टो हरीतकी ।
वासाखदिरमञ्जिष्ठाव्याघ्र्यः कुष्ठेषु पाचनम् ॥

अमलतास, अश्वत्थ (पीपल वृक्ष) का सार, गिलोय, नीमकी छाल, हर्र, बासा, खैरसार, मजीठ और कटेली समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कुष्ठमें दोषोंको पचाता है।

(प्रत्येक ओषधि ६ माशे। पाकार्थ जल ३६ तोले। शेष क्वाथ ९ तोले।)

(५८६४) रास्नादशमूलक्वाथः

(व. से. । आमवात.; वृ. नि. र. । शिरोरोगा.)

रास्नाविश्वविडङ्गानि रुबुकत्रिफला तथा ।
दशमूलं पृथक् श्यामा क्वाथो वातामयापहः ॥
अर्द्धावभेदके चाढ्ये अर्दिते वातखञ्जके ।
नेत्ररोगे शिरःशूले ज्वरापस्मारयोस्तथा ॥
मनोभ्रंशे च विविधे क्वथितश्च सुखप्रदम् ॥

रास्ना, सोंठ, बायबिडंग, अरण्ड मूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु, बेलकी छाल, सोना पाठा, खम्भारी, पाढल और अरनी), और निसोत समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(इसमेंसे २॥ तोले चूर्णको २० तोले पानीमें पकावें और ५ तोले शेष रहने पर छान लें।)

यह क्वाथ वातज रोग अर्द्धावभेदक, आढ्य-वात, अर्दित, खञ्जता, नेत्र रोग, शिरशूल, ज्वर, अपस्मार, और मनोभ्रंश को नष्ट करता है।

(५८६५) रास्नादिकल्कः (१)

(यो. र. । विषम ज्वरा.)

रास्नानागरकृष्णाणां कल्कमुष्णाम्बुना पिबेत् ।
श्वासकासाग्निमान्द्यं च शीतज्वरहरं भवेत् ॥

रास्ना, सोंठ और पीपलके कल्कको गरम पानीके साथ पीनेसे श्वास, खांसी, अग्निमांद्य और ज्वर नष्ट होता है।

(प्रत्येक ओषधि १॥ माशा)

(५८६६) रास्नादिकल्कः (२)

(वृ. नि. र. । विषम ज्वर)

रास्नानागरकृष्णाणां कल्कमुष्णाम्बुना पिबेत् ।
श्वासकासाग्निमान्द्यं च ज्वरं शीतं विनाशयेत् ॥

रास्ना, सोंठ और पीपलके कल्कको उष्ण जलके साथ पीनेसे श्वास, खांसी, अग्निमांद्य और शीत ज्वर नष्ट होता है।

(५८६७) रास्नादिक्वाथः (१)

(व. से. । आमा.)

रास्नाश्यामाकपथ्या मरिचमिसि-
शिवावेल्लकश्चाश्वगन्धा ।
यासं छिन्नाजमोदासुमुखमति-
विषा वृद्धदारुबृहत्यौ ॥
शुण्ठी तिक्ता यवानी सहचर-
चविकैरण्डदार्व्याजकर्णा ।
ऊरुस्तम्भामवातं जठर-
रुजकटीपृष्ठशूलान्त्रवृद्धिम् ।
वातामश्वासशोथान्कफपवन-
रुजादण्डकाश्चाशु हन्यात् ॥

रास्ना, श्यामाक (क्षुद्र धान्य), हर्र, काली मिर्च, सौंफ, आमला, बायबिडंग, असगन्ध, जवासा, गिलोय, अजमोद, सुमुख(तुलसी भेद), अतीस, विधारा, कटेली, सोंठ, कुटकी, अजवायन, पियाबांसा, चव, अरण्ड मूल, दारु हल्दी और असना। सब समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(इसमेंसे २॥ तोले चूर्णको २० तोले पानीमें पकावें और ५ तोले शेष रहने पर छान लें।)

यह क्वाथ उरुस्तम्भ, आमवात, जठररुजा, कटी शूल, पृष्ठ शूल, अन्त्रवृद्धि, श्वास, शोथ, और कफ वातज रोगोंको नष्ट करता है।

(५८६८) रास्नादिक्वाथः (२)

(व. से.; वृ. मा.; च. द. । वृद्ध्य. ३९; वृ. नि. र. । अण्डवृद्ध्य.)

रास्नायष्ट्यामृतैरण्डबलागोक्षुरसाधितः ।
क्वाथोऽन्त्रवृद्धिं हन्त्याशु रुबुतैलेन मिश्रितः ॥

रास्ना, मुलैठी, गिलोय, अरण्डमूल, खरैटी और गोखरु। ये सब चीजें समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(२॥ तोले यह चूर्ण ले कर उसे २० तोले पानीमें पकावें और ५ तोले शेष रहने पर छान लें।)

इस क्राथमें अरण्डका तेल मिला कर पीनेसे अन्त्रवृद्धि शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(५८६९) **रास्नादिक्वाथः** (३)

(व. से.; वृ. नि. र. । वृद्धय.)

रास्नायष्ट्यमृतैरण्डपटोलं रेणुकाबला ।
वृषः स्यात्कथितो वृद्धिं हन्याच्चित्रतैलवान् ॥

रास्ना, मुलैठी, गिलोय, अरण्ड मूल, पटोल-पत्र, रेणुका, खरैटी और बासा । सब समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(इसमेंसे २॥ तोले चूर्ण लेकर उसे २० तोले पानीमें पकावें और ५ तोले शेष रहने पर छान लें।)

इस क्राथमें अण्डीका तेल मिला कर पीनेसे वृद्धि रोग नष्ट होता है।

(५८७०) **रास्नादिक्वाथः** (४)

(ग. नि. । ज्वर.)

रास्नारग्वधसंयुक्ता सारिवा च फलत्रयम् ।
आटरूषमिति क्वाथो वातपित्तज्वरापहः ॥

रास्ना, अमलतास, सारिवा, हर्र, बहेड़ा, आमला और बासा।

इनका क्राथ वात पित्त ज्वरको नष्ट करता है।

(प्रत्येक वस्तु ६ माशे । पाकार्थ जल २८ तोले । शेष क्राथ ७ तोले।)

(५८७१) **रास्नादिक्वाथः** (५)

(ग. नि. । ज्वरा.)

रास्ना वृषोऽथ त्रिफला राजवृक्षफलैः सह ।
कषायः साधितः पीतो वातपित्तज्वरं जयेत् ॥

रास्ना, बासा, हर्र, बहेड़ा, आमला और अमलतासका गूदा समान भाग ले कर क्राथ बनावें।

यह क्राथ वात पित्त ज्वरको नष्ट करता है।

(प्रत्येक वस्तु १ तोला । पाकार्थ जल २४ तोले । शेष क्राथ ६ तोले ।)

(५८७२) **रास्नादिक्वाथः** (६)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

रास्ना वृक्षादनी दारु सरलं सैलवालुकम् ।
कोष्णं सगुडसर्पिष्कं पिबेद्वातज्वरापहम् ॥

रास्ना, बन्दा, देवदारु, सरल काष्ठ (चीड़) और एलवालुक समान भाग ले कर क्राथ बनावें।

इसमें गुड़ और घी मिला कर पीनेसे वात-ज्वर नष्ट होता है।

यह क्राथ मन्दोष्ण ही पीना चाहिये।

(प्रत्येक वस्तु ६ माशे । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्राथ ५ तोले । गुड़ २ तोले । घी १ तोला।)

(५८७३) **रास्नादिक्वाथः** (७)

(वृ. नि. र. । आमवात.; वै. मृ. । आमा.)

रास्नारग्वधदेवदारु ऋतुभूच्छिन्नोद्भवागोक्षुरै-
रेरण्डयुतैः कषायकवरो विश्वारजोमिश्रितः ।
नानासन्धिरुजान्वितं विजयते घोरामवातामयं
स्वर्णाङ्गीकुचपद्मकुड्मलरुचिर्दीपोन्धकारं यथा ॥

रास्ना, अमलतास, देवदारु, पुनर्नवा, गिलोय, गोखरु और अरण्डकी जड़ समान भाग ले कर क्राथ बनावें।

इसमें सोंठका चूर्ण मिला कर पीनेसे अनेकविध सन्धि पीड़ा युक्त भयंकर आमवात नष्ट होता है।

(प्रत्येक वस्तु ६ माशे। पाकार्थ जल २८ तोले। शेष क्वाथ ७ तोले। सोंठका चूर्ण १-१॥ माशा।)

(५८७४) **रास्नादिक्वाथः** (८)

(ग. नि. । ज्वरा. १; यो. र. । सन्निपात.; वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

रास्नाशुण्ठीगुडूचीसहचरजलदाभीरुपथ्यासुराह्वै-स्तिक्ताकर्चूरवासानिलरिपुसहितैः पञ्चमूलीद्वयेन एभिर्द्रव्यैः कषायस्त्वरितमपहरेत्पीतमात्रः प्रभाते मन्यास्तम्भान्त्रवृद्धिं ज्वरपिटककटीसन्धिसर्वाङ्गपीडाम् ॥

रास्ना, सोंठ, गिलोय, पियाबासा, नागरमोथा, शतावर, हर्र, देवदारु, कुटकी, कचूर, बासा, अरण्डमूल और दशमूलकी प्रत्येक वस्तु; ये सब चीज़ें समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(यह चूर्ण २॥ तोले। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले।)

इसे प्रातःकाल सेवन करनेसे मन्यास्तम्भ, अन्त्रवृद्धि, ज्वर, कटी पीड़ा, सन्धि पीड़ा और सर्वांग पीड़ाका नाश होता है।

(५८७५) **रास्नादिक्वाथः** (९)

(वृ. नि. र. । सन्निपात.)

रास्नाश्वगन्धाघनकण्टकारी
भार्ङ्गीवचापौष्करोहिणीनाम् ।
क्वाथः कृतः भृङ्ग्यभयानां
पीतो जयेत्कर्णकसन्निपातम् ॥

रास्ना, असगन्ध, नागरमोथा, कटेली, भरंगी, बच, पोखरमूल, कुटकी, काकड़ासिंगी और हर्र समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कर्णक सन्निपातको नष्ट करता है। (प्रत्येक ओषधि ३ माशे। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले।)

(५८७६) **रास्नादिक्वाथः** (१०)

(यो. र. । कर्णरोगा.)

रास्नाबृहतीपथ्याव्योष
कटुकाघनपुष्कराह्वैश्च ।
भृङ्गीधाराभार्गीक्वाथः कर्णकरुजं हरेत्पानात् ॥

रास्ना, कटेली, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, कुटकी, नागरमोथा, पोखरमूल, काकड़ासिंगी, गिलोय और भरंगी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कर्णक सन्निपातको नष्ट करता है।

(प्रत्येक वस्तु ३ माशे। पाकार्थ जल २४ तोले। शेष क्वाथ ६ तोले।)

(५८७७) **रास्नादिक्वाथः** (११)

(यो. र. । सन्निपात. ; वृ. नि. र. । सन्निपात.)

रास्नागुडूचीशठिवृद्धदारु
सुराह्वविश्वात्रिफलावरीभिः ।
क्वाथं पिबेद्गुग्गुलुसम्प्रयुक्तं
समस्तसन्धिग्रहसन्निपाते ॥

रास्ना, गिलोय, कचूर, विधारा, देवदारु, सोंठ, हर्र, बहेड़ा, आमला और शतावर समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शुद्ध गूगल मिला कर पीनेसे सन्धिग्रह और सन्निपात नष्ट होता है ।

(प्रत्येक ओषधि ३ माशे । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

(५८७८) **रास्नादिक्वाथः** (१२)

(वृ. मा. । वातरक्ता.)

रास्नागुडूचीचतुरङ्गुलाना-
मेरण्डतैलेन पिबेत्कषायम् ।
क्रमेण सर्वाङ्गजमप्यशेषं
जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥

रास्ना, गिलोय और अमलतासका गूदा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें अरण्डीका तेल मिला कर पीनेसे सर्वाङ्गगत वातरक्त भी नष्ट हो जाता है ।

(प्रत्येक वस्तु १ तोला । पानी २४ तोले । शेष क्वाथ ६ तोले ।)

(५८७९) **रास्नादिक्वाथः** (१३)

(वृ. मा. । वातव्या.)

रास्नैरण्डकणाभयासहचराक्षुद्रामृतासारणी-
मुस्तापुष्करदारुगुग्गुलुवचाब्राह्मीहरिद्राशठी ।
आभा ग्रन्थिकपञ्चमूलहपुषा यासः शताह्वा विषा
वर्षाभूःसयवानिका शतपदी कर्ण्यश्वगन्धाः समा ॥
एष रास्नादिकगणः सर्ववातनिषूदनः ।
कुब्जे च वामने चैव पक्षघाते हनुग्रहे ॥
शुष्यमानेषु गात्रेषु सन्धीनां बन्धनेषु च ।
ऊरुस्तम्भेऽग्निसादे च नासाभङ्गे गलग्रहे ॥
शोफे पाण्ड्वनिले चोर्ध्वे सामवाते सशोणिते ।
खञ्जे च कुब्जके चैव मूकत्वे गद्गदेऽपि च ॥
उदावर्तं च शूले च सन्निपातज्वरेषु च ।
नराणां रुधिरस्रावे योनिदोषे भगन्दरे ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषे तथा कोष्ठकजेषु च ।
एष क्वाथो मया प्रोक्तः प्राणिनां हितकाम्यया॥

रास्ना, अरण्डमूल, पीपल, हर्र, पियाबांसा, कटेली, गिलोय, गन्धप्रसारणी, नागरमोथा, पोखरमूल, देवदारु, गूगल, बच, ब्राह्मी, हल्दी, कचूर, कीकरकी छाल, पीपलामूल, बेलकी छाल, सोनापाठाकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल, अरणी, हपुषा, धमासा, सोया, अतीस, पुनर्नवाकी जड़, अजवायन, शतावर, अमलतास और असगन्ध समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें ।

(यह चूर्ण २॥ तोले । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

यह क्वाथ कुब्जता, वामनता, पक्षवात, हनुग्रह, गात्रका सूखना, सन्धियोंकी जकड़ाहट, ऊरुस्तम्भ, अग्निमांद्य, नासाभंग, गलग्रह, शोथ, पाण्डु, ऊर्ध्ववात, आमवात, वातरक्त, खञ्जता (लंगड़ापन), गूंगापना, गद्गद् शब्द (हकलाना), उदावर्त, शूल, सन्निपात, रक्तस्राव, योनिदोष, भगंदर, अर्श, संग्रहणी और कोष्ठगत वायुको नष्ट करता है ।

(५८८०) **रास्नादिक्वाथः** (१४)

(वृ. नि. र. । हिक्का.)

रास्नामृतानागरवातशत्रु
कटण्कटेरीजनितः कषायः ।
एरण्डतैलेन समन्वितोयं
भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

रास्ना, गिलोय, सोंठ, अरण्ड मूल और दारुहल्दी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें अरण्डीका तेल मिला कर पीनेसे आमवातका नाश होता है ।

(प्रत्येक ओषधि ६ माशे । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

(५८८१) **रास्नादिक्वाथः** (१५)

(वृ. नि. र. । हिक्का.)

रास्नामरदारुराजवृक्ष
त्रिकटूवैरण्डपुनर्नवामृतानाम् ।
क्वथितं जलमामवात एषां
शमयेन्नागरकल्कमिश्रमाशु ॥

रास्ना, देवदारु, अमलतास, सोंठ, मिर्च, पीपल, अरण्डकी जड़, पुनर्नवा और गिलोय समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें सोंठका कल्क मिला कर सेवन करनेसे आमवात शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(५८८२) **रास्नादिक्वाथः** (१६)

(धन्व. । आमवाता.)

रास्नापुनर्नवा शुण्ठी गुडूच्येरण्डकं शृतम् ।
सप्तधातुगते वाते सामे सर्वाङ्गगे पिबेत् ॥

रास्ना, पुनर्नवा, सोंठ, गिलोय और अरण्डकी जड़ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ सप्त धातु और सर्वाङ्गगत आमवातको नष्ट करता है ।

(प्रत्येक ओषधि ६ माशे । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

(५८८३) **रास्नादिक्वाथः** (१७)

(वृ. मा. । वाता.)

रास्नायुक्पञ्चमूलीमिशिवरुण
बलामेघपथ्यायवानी-
शुण्ठीपाठाजमोदासहचरा
हपुषाभङ्गुरावाजिगन्धाः ।
आभावृश्चीवसोग्राविषम-
मृतशठीसारणीवृद्धदारु
रास्नाशम्पाककषायैः शता-
वरी पौष्करैरण्डचव्यैः ॥
एतत्सर्वं समांशं विधिव-
त्क्वथितं मुष्टिमात्रं जलेन
चूर्णं चाभादिमस्मिन्प्रपिबति-
मनुजो गुग्गुलुं वा तथैव ।
आमं पक्षाभिघातं हनुगत-
पवनं चार्दितं जानुशूलं
गृध्रस्यूरुत्रिकार्तिकफपवन-
रुजो हन्ति सन्ध्यस्थिसंस्थाः ॥

रास्ना, दशमूल, सौंफ, बरनेकी छाल, बला (खरैटी), नागरमोथा, हर्र, अजवायन, सोंठ, पाठा, अजमोद, पियाबासा, हपुषा, भरंगी, असगन्ध, कीकरकी छाल, पुनर्नवा, बच, अतीस, गिलोय,

कचूर, प्रसारणी, विधारा, रास्ना, अमलतास, शतावर, पोखरमूल, अरण्डमूल और चव समान भाग ले कर सबको एकत्र करके अधकुटा कर लें।

(यह चूर्ण २॥ तोले। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले।)

इसमें आभा गुग्गुलु अथवा इस गुग्गुलुमें कथित आभा आदि औषधोंका चूर्ण मिला कर पीनेसे आमवात, पक्षाघात, हनुर्वात, अर्दित, जानुशूल, गृध्रसी, उरुस्तम्भ, त्रिक पीड़ा, और सन्धि अस्थिगत कफ वातज पीड़ा शान्त होती है।

(५८८४) **रास्नादिक्वाथः** (१८) **(महा)**

(शा. सं. । खं. २ अ. २ ; व. से.; वृ. मा.; वृ. नि. र. । वातव्या; वृ. यो. त. । त. ९३.)

रास्नाद्विगुणभागा स्यादेकभागास्तथाऽपरे ।
धन्वयासबलैरण्डदेवदारुशठीवचाः ॥
वासको नागरं पथ्या चव्या मुस्ता पुनर्नवा ।
गुडूची वृद्धदारुश्च शतपुष्पा च गोक्षुरः ॥
अश्वगन्धा प्रतिविषा कृतमालः शतावरी ।
कृष्णा सहचरश्चैव धान्यकं बृहतीद्वयम् ॥
एभिः कृतं पिबेत्क्वाथं शुण्ठीचूर्णेन संयुतम् ।
कृष्णाचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाऽथवा ॥
आजमोदादिना वाऽपि तैलेनैरण्डजेन वा ।
सर्वाङ्गकम्पे कुब्जत्वे पक्षघातेऽपबाहुके ॥
गृध्रस्यामवाते च श्लीपदे चापतानके ।
अन्त्रवृद्धौ तथाऽऽध्माने जङ्घाजानुगदेऽर्दिते ॥
शुक्रामये मेढ्वाते वन्ध्यायोन्यामयेषु च ।
महारास्नादिराख्यातो ब्रह्मणा गर्भधारणे ॥

रास्ना २ भाग तथा धमासा, बला (खरैटी), अरण्डमूल, देवदारु, कचूर, बच, बासा, सोंठ, पथ्या (हर्र), चव, नागरमोथा, पुनर्नवा, गिलोय, विधारा, सोया, गोखरु, असगन्ध, अतीस, अमलतास, शतावर, पीपल, पियाबांसा, धनिया तथा छोटी और बड़ी कटेली समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(यह चूर्ण २॥ तोले। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले।)

इस क्वाथमें सोंठ या पीपलका चूर्ण अथवा योगराज गूगल या अजमोदादि चूर्ण मिला कर सेवन करनेसे अथवा अरण्डीका तेल मिला कर पीनेसे सर्वाङ्ग कम्प, कुब्जता, पक्षाघात, अपबाहुक, गृध्रसी, आमवात, श्लीपद, अपतानक, अन्त्रवृद्धि, अफारा, जंघा और जानुकी पीड़ा, अर्दित, शुक्रदोष, मेदवायु, बन्ध्यत्व और योनि दोषोंका नाश होता है।

(५८८५) **रास्नादिक्वाथः** (१९) **(महा)**

(यो. र.; वृ. नि. र. । वातव्या.)

रास्नैरण्डामृतोग्रासहचरचविकारामसेनाब्दभार्गी-
दीप्यानन्तायवानीवृकिसुरकृमिजिच्छृङ्गिशुण्ठी-
बलाभिः
मूर्वातिक्तासमङ्गाद्विविषशठिवरापिप्पलीयावशूकै
रक्तश्रीखण्डकारग्वधकटुकफलैर्वत्सवृश्चीवयुक्तैः ॥
सर्वैरेतैर्दशांघ्रिप्रयुतसमलवैः साधितोऽष्टावशेषः
क्वाथो रास्नादिरादौ महदुपपदवान्कौशिकोक्तो
निहन्ति ।

सर्वाङ्गैकाङ्गवाताऽश्वसनकसनहृत्स्वेदशैत्यादि
तन्द्राशूलं तूनीप्रतूनीगलगदनिखिलाङ्गव्यथा-
कम्पखल्लीः ॥
विश्वाचीश्लीपदामानिलनिखिलमहासूतिकारोग
सुप्तिं जिह्वास्तम्भापतानं स्फुटनविमथनक्लीवता-
क्षेपकौब्जम् ।
शोफाटोपापतन्त्रार्दितखुडहनुरुग्गृध्रसीपादशूलं
वायुश्लेष्मोत्थरोगानपि गिरितनयावल्लभेनो-
पदिष्टः ॥

रास्ना, अरण्डमूल, गिलोय, बच, पियाबासा, चव, चिरायता, नागरमोथा, भरंगी, अजवायन, अनन्तमूल, अजमोद, पाठा, देवदारु, बायबिड़ंग, काकड़ासिंगी सोंठ, खरैटी, मूर्वा, कुटकी, मजीठ, अतीस, कचूर, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल, जवाखार, लाल चन्दन, अमलतास, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, पुनर्नवा और दशमूलकी प्रत्येक वस्तु समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें ।

(यह चूर्ण ५ तोले । पाकार्थ जल ४० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

इस क्वाथमें गूगल मिलाकर सेवन करनेसे सर्वांग वात, एकांग वात, श्वास, खांसी, पसीना, शैत्य, तन्द्रा, शूल, तूनी, प्रतूनी, गलरोग, अंगव्यथा, कम्प, खल्ली, विश्वाची, श्लीपद, आमवात, सूतिका रोग, सुप्ति, जिह्वास्तम्भ, अपतानक, शरीरकी हड-फूटन और व्यथा, कुब्जता, आक्षेप, शोथ, आटोप, अपतन्त्रक, अर्दित, खुड्डवात, उरुग्रह, हनुग्रह, गृध्रसी, पादशूल और अन्य वातकफज रोग नष्ट होते हैं ।

(५८८६) रास्नादिक्वाथः (२०) (लघु)

(ग. नि. । आमवाता. २२; व. से. । आम वात; यो. त. । त. २२; वृ. मा.)

रास्नैरण्डशतावरीसहचरादुस्पर्शवासामृता-
देवाह्वातिविषाभयाघनशठीशुण्ठीकषायकृतः ।
पीतः सोरुबुतैल एष विहितः सामे सशूलेऽनिले
कट्यूरुत्रिकपृष्ठपार्श्वजठरक्रोडेषु वातार्तिजित् ॥

रास्ना, अरण्डकी जड़, शतावर, पियाबासा, धमासा, बासा, गिलोय, देवदारु, अतीस, हर्र, नागरमोथा, कचूर और सोंठ समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें ।

(यह चूर्ण २॥ तोले । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

इस क्वाथमें अरण्डीका तेल मिला कर पीनेसे शूल युक्त आमवात, तथा कटि, उरु, त्रिकस्थान, पृष्ठ, पार्श्व और जठरकी वातज पीड़ा शान्त होती है ।

(५८८७) रास्नादिक्वाथः (२१)
(रास्नादिद्वात्रिंशकः)

(ग. नि. । वातरोगा. १९)

रास्ना गुडूची देवाह्वमेरण्डमभया शठी ।
बला चारग्वधः शुण्ठी शतपुष्पा पुनर्नवा ॥
पञ्चमूली विषा मुण्डी सैरेयकदुरालभे ।
यवानी पौष्करं मूलं वाजिगन्धा प्रसारणी ॥
गोक्षुरश्चाटरूषश्च हपुषा वृद्धदारुकम् ।
शतावरी समङ्गा च गुग्गुलुर्गिरिजं तथा ॥
समभागैरिमैः सर्वैः कषायमुपकल्पयेत् ।
पिबेत्सर्वाङ्गगे वाते सामे सन्ध्यस्थिमज्जगे ॥

वातरोगेषु सर्वेषु कम्पे शोफेऽपतानके ।
मन्यास्तम्भे च हृद्रोगे पक्षाघातेऽपतन्त्रके ॥
अर्दिताक्षेपके कुब्जे हनुग्रहशिरोग्रहे ।
गृध्रस्यां जानुरोगे च गुल्मे शूले कटिग्रहे ॥
सामे चैव निरामे च सप्तधातुगतेऽनिले ।
आवृतेऽनावृते चैव वातरक्ते विशेषतः ॥
एष द्वात्रिंशकः क्वाथः कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

रास्ना, गिलोय, देवदारु, अरण्डमूल, हर्र, कचूर, खरैटी, अमलतास, सोंठ, सोया, पुनर्नवा, पञ्चमूल (बेलकी छाल, सोनापाठा, खम्भारी, पाढल, अरणी) अतीस, मुण्डी, पियाबासा, धमासा, अजवायन, पोखरमूल, असगन्ध, प्रसारणी, गोखरु, वासा, विधारा, हपुषा, शतावर, मजीठ, गूगल और शिलाजीत समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह सर्वाङ्ग वायु, आमवात, सन्धिगत, अस्थिगत और मज्जागत वायु, कम्प, शोथ, अपतानक, मन्यास्तम्भ, हृद्रोग, पक्षाघात, अपतन्त्रक, अर्दित, आक्षेपक, कुब्जता, हनुग्रह, शिरोग्रह, गृध्रसी, जानु रोग, गुल्म, शूल, कटिग्रह, तथा साम और निराम सप्त धातु गत वायु एवं विशेषतः वातरक्तको नष्ट करता है।

(सब ओषधियां समान भाग लेकर अधकुटा कर लें। यह चूर्ण २॥ तोले। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले। गूगल और शिलाजीत क्वाथ तैयार होने पर मिलानी चाहिये।)

(५८८८) रास्नादिदशमूलम्

(भै. र. । आमवात. ; र. र. । आमवात; च. द. । आमवाता. २५; वृ. मा.; धन्व. । आमवाता.)

दशमूल्यमृतैरण्डरास्नानागरदारुभिः ।
क्वाथो रुबुकतैलेन सामं हन्त्यनिलं गुरुम् ॥

दशमूलकी प्रत्येक वस्तु (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, छोटी और बड़ी कटेली, गोखरु, बेल छाल, सोनापाठाकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल, अरणी), गिलोय, अरण्डकी जड़, रास्ना, सोंठ, और देवदारु समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा कर लें।

(यह चूर्ण २॥ तोले। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले।)

इस क्वाथमें अरण्डीका तेल मिला कर पीनेसे आमवात नष्ट होता है।

(५८८९) रास्नाद्वादशककषायः

(यो. र.; वृ. नि. र. । आमवात.)

रास्ना शतावरी वासा गुडूच्यतिविषाऽभया ।
शुण्ठीदुरालभैरण्डदेवदारुवचाघनैः ॥
क्वाथः पीतो जयत्याशु आमवातं सुदारुणम् ।
कट्युरुत्रिकजङ्घाङ्घ्रिगुल्फजानुसमाश्रितम् ॥

रास्ना, शतावर, बासा, गिलोय, अतीस, हर्र, सोंठ, धमासा, अरण्डकी जड़, देवदारु, बच और नागरमोथा; सब चीजें समान भाग ले कर सबको अधकुटा कर लें।

(यह चूर्ण २॥ तोले । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

यह क्वाथ कटि, उरु, त्रिक, जांघ, गुल्म और जानु स्थित आमवातको शीघ्र ही नष्ट कर देता है ।

(५८९०) रास्नापञ्चकम्

(शा. सं. । खं. २ अ. २; भै. र. । आमवात.; र. र. । आमवात ; च. द. । आमवाता. २५; वृ. मा.; व. से. । आमवा.; यो. र. । आमवाता.; ग. नि. । आम. २२; वृ. यो. त. । त. ९३)

रास्नागुडूचीमेरण्डं देवदारुमहौषधम् ।
पिबेत्सार्वाङ्गिके वाते सामे सन्ध्यस्थि मज्जगे॥

रास्ना, गिलोय, अरण्डमूल, देवदारु और सोंठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ सर्वाङ्ग वात, आमवात और सन्धि अस्थि तथा मज्जागत वायुको नष्ट करता है ।

(प्रत्येक ओषधि ६ माशे । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

(५८९१) रास्नापञ्चदशकषायः

(यो. र. । आमा. ; वृ. नि. र. । हिक्का. ; वै. जी. । वि. ३)

रास्नामृतानागर देवदारु
पञ्चाङ्घ्रियुग्मेन्द्रयवैः कषायः ।
एरण्डतैलेन समन्वितोयं
भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

रास्ना, गिलोय, सोंठ, देवदारु, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु और इन्द्रजौ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें अरण्डीका तेल मिलाकर पीनेसे आमवातका नाश होता है ।

(प्रत्येक वस्तु ३ माशे । पाकार्थ जल ३० तोले । शेष क्वाथ ७॥ तोले । अरण्डीका तेल २–३ तोले ।)

(५८९२) रास्नासप्तकम्

(शा. सं. । खं. २ अ. २; भै. र. । आमवात ; च. द. । आमवाता. २५; र. र.; व. से.; वै. र. । आमवात.; वृ. यो. त. । त. ९३; यो. त. । त. ४२; वृ. मा.; यो. र. । आम.; ग. नि. । आमवाता २२)

रास्नामृतारग्वध देवदारु
त्रिकण्टकैरण्ड पुनर्नवाणाम् ।
क्वाथं पिबेन्नागरचूर्णमिश्रं
जङ्घोरुपार्श्वत्रिकपृष्ठशूली ॥

रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरु, अरण्डमूल और पुनर्नवा समान भाग लेकर क्काथ बनावें ।

इसमें सोंठका चूर्ण मिलाकर पीनेसे जंघा, उरु, पार्श्व, त्रिक और पृष्ठशूल नष्ट होता है ।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला । पानी २८ तोले । शेष काथ ७ तोले । सोंठका चूर्ण १॥ माशा ।)

(५८९३) रोध्रादिक्वाथः (१)

(व. से. । ज्वराधिकार.)

रोध्रोत्पलामृतापद्मशारिवाणां सशर्करः ।
क्वाथः पित्तज्वरं हन्यादथवा पर्पटोद्भवः ॥

लोध, नीलोत्पल, गिलोय, पद्म और सारिवा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमें खांड मिला कर पीनेसे पित्त ज्वर नष्ट होता है।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला। पाकार्थ जल २० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले। खांड १। तोला।)

इसी प्रकार पित्तपापड़ेका क्वाथ पीनेसे भी पित्त ज्वर नष्ट होता है।

(५८९४) **रोध्रादिक्वाथः** (२)

(वृ. मा. । प्रमेहा.)

रोध्रार्जुनोशीरकुचन्दनाना-
मरिष्टसेव्यामलकाभयानाम्।
धात्र्यर्जुनारिष्टकवत्सकानां
नीलोत्पलैलातिनिशार्जुनानाम्॥
चत्वार एते विहिताः कषायाः
पित्तप्रमेहे मधुसम्प्रयुक्ताः॥

(१) लोध, अर्जुनकी छाल, खस, और लाल चन्दन;

(२) नीमकी छाल, खस, आमला और हर्र;

(३) आमला, अर्जुन, नीमकी छाल और इन्द्रजौ;

(४) नीलोत्पल, इलायची, तिनिश (सांदन वृक्ष) की छाल और अर्जुनकी छाल।

इनमेंसे किसी एक क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे पित्त प्रमेह नष्ट होता है।

(५८९५) **रोध्रादिक्वाथः** (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २९)

रोध्रार्जुनः खदिरमागधिकासमङ्गा।
क्वाथोऽम्लवेतसमधुघृतसम्प्रयुक्तः॥
गुल्मं सरक्तमपि चाथ निहन्ति चाशु।
हृत्क्लेदनं च विनिहन्ति यकृत्सरक्तम्॥

लोध, अर्जुनकी छाल, खैरसार, पीपल, मजीठ और अम्लवेत समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें घी और शहद मिलाकर पीनेसे रक्त गुल्म, हृद्क्लेद और यकृत रोग नष्ट होता है।

(प्रत्येक ओषधि ६ माशे। पाकार्थ जल २४ तोले। शेष क्वाथ ६ तोले। मधु २ तोले, घृत १ तोला)

(५८९६) **रोध्रादिगणः**

(वा. भ. । सूत्र अ. १५)

रोध्रशावररोध्रपलाशाजिङ्गिणी सरलकट्‌-
फलयुक्ताः।
कुत्सिताम्बकदलीगतशोकाः सैलवालुपरिपेल-
वमोचाः॥
एष रोध्रादिको नाम मेदः कफहरो गणः।
योनिदोषहरः स्तम्भी वर्ण्यो विषविनाशनः॥

लोध, सावर लोध, ढाक (पलाश), जिंगणी, सरलकाष्ठ (चीर), कायफल, कदम्ब, केला, अशोक, एलवालु, नागरमोथा और मोचरस, इन ओषधियोंके समूहको 'रोध्रादि गण' कहते हैं।

यह गण मेद, कफ और योनि दोषनाशक तथा स्तम्भक, वर्ण्य और विषनाशक है।

(५८९७) रोहिण्यादिकषायः

(ग. नि. ज्वर.)

रोहिणी नागरं मुस्ता पटोली कण्टकारिका ।
आटरूषगुडूचीन्द्रयवभार्गीकिरातकाः ॥
चन्दनं च हरत्येष कासं दाहं तृषान्वितम् ॥

कुटकी, सोंठ, नागरमोथा, पटोल, कटेली, बासा, गिलोय, इन्द्रजौ, भरंगी, चिरायता और लाल चन्दन समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कास दाह और तृषा युक्त ज्वरको नष्ट करता है ।

(प्रत्येक ओषधि ३ माशे । पाकार्थ जल २४ तोले । शेष क्वाथ ६ तोले ।)

(५८९८) रोहिण्यादिपाचनः

(वृ. नि. र. । सर्वातिसार.)

रोहिण्यतिविषापाठावचाकुष्ठसमुद्भवः ।
क्वाथः पीतो निहन्त्येव सर्वातीसारजां रुजम् ॥

कुटकी, अतीस, पाठा, बच और कूठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ समस्त प्रकारके अतिसारोंको नष्ट करता है ।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला । पाकार्थ जल २० तोले । शेष क्वाथ ५ तोले ।)

(५८९९) रोहितकादिकल्कः

(वं. से. । स्त्री. रो.)

रोहितकान्मूलकल्कं पाण्डुरेऽसृग्दरे पिबेत् ।
जलेनामलकीबीजकल्कं वा ससितामधु ॥
पिबेद्दिनत्रयेणैव श्वेतप्रदरनाशनम् ॥

(१) रुहेड़ेकी जड़को पानीके साथ पीसकर कल्क बनावें ।

इसमें मिश्री और शहद मिलाकर पीनेसे सफेद प्रदर नष्ट होता है ।

(२) इसी प्रकार आमलेके बीजोंको पीस कर उसमें शहद और मिश्री मिलाकर पीनेसे भी श्वेत प्रदर नष्ट होता है ।

ये दोनों प्रयोग केवल ३ दिन प्रयुक्त करनेसे ही प्रदर नष्ट हो जाता है ।

(५९००) रोहिषादिक्वाथः

(भा. प्र. । म. खं. २.)

रोहिषधन्वयवासकवासा
पर्पटगन्धलताकटुकाभिः ।
शर्करया सममेष कषायः
क्षतजष्ठीविन उद्यदुपायः ॥

रोहिष तृण (गन्ध तृण), धमासा, वासा, पित्तपापड़ा, फूलप्रियंगु और कुटकी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमें खांड मिला कर सेवन करनेसे क्षतज रक्तष्ठीवन (रक्त थूकना) शान्त होता है ।

(प्रत्येक ओषधि आधा तोला । पाकार्थ जल २४ तोले । शेष क्वाथ ६ तोले । खांड १॥ तोला ।)

इति रकारादिकषायप्रकरणम्



अथ रकारादिचूर्णप्रकरणम्

(५९०१) रक्तचन्दनादिचूर्णम्

(ग. नि. । वाता. १८)

आरक्तकं चन्दनमुस्तशालि-
पर्ण्यस्तथा लाङ्गलिकाऽजमोदा ।
पाठाऽश्वगन्धा च शतावरी च
कङ्कोलकं मागधि देवदारु ॥
एला यवानी शतपुष्पिका च
मूलं वचा सैन्धवपद्मकं च ।
कुष्ठं समङ्गा सुरुदारु भव्यं
रास्नाऽरलुर्नागरकं गुडूची ॥
श्लोकद्वये चूर्णकमेतदुक्तं
कर्षार्धमात्रं घृतसम्प्रयुक्तम् ।
तक्रान्वितं सोष्णजलानुपानं
निहन्ति सर्वाङ्गमरुद्विकारम् ॥

लाल चन्दन, नागरमोथा, शालपर्णी, कलिहारी, अजमोदा, पाठा, असगन्ध, शतावर, कंकोल, पीपल, देवदारु, इलायची, अजवायन, सोया, पीपलामूल, बच, सेंधा नमक, पद्माक, कूठ, मजीठ देवदारु, करेला, रास्ना, अरलुकी छाल, सोंठ और गिलोय; समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

मात्रा—७॥ माशे ।

इसे घीमें मिलाकर तक्रमें घोलकर सेवन करनेसे सर्वाङ्गगत वात विकार नष्ट होते हैं ।

अनुपान—उष्ण जल ।

(५९०२) रजन्यादिचूर्णम् (१)

(व. से. । अश्मरी.)

पिबेद्रजनीं सम्यक्सगुडान्तुषवारिणा ।
तस्याशु चिररूढापि यात्यन्तं मेदूशर्करा ॥

हल्दीके चूर्णको गुड़में मिला कर कांजीके साथ पीनेसे पुरानी और प्रवृद्ध शर्करा भी नष्ट हो जाती है ।

(५९०३) रजन्यादिचूर्णम् (२)

(वृ. मा.; बं. से. । श्लीपदा.)

रजनीं गुडसंयुक्तां गोमूत्रेण पिबेन्नरः ।
वर्षोत्थं श्लीपदं हन्ति दद्रुकुष्ठं विशेषतः ॥

हल्दीके चूर्णको गुड़में मिला कर गोमूत्रके साथ पीनेसे १ वर्षका पुराना श्लीपद और विशेषतः दाद नष्ट होता है ।

(५९०४) रजन्यादिचूर्णम् (३)

(भै. र. ; वृ. मा. । बालरो.)

रजनीदारुसरलश्रेयसीबृहतीद्वयम् ।
पृश्निपर्णीशताह्वा च लीढं माक्षिकसर्पिषा ॥
ग्रहणीदीपनं हन्ति मारुतार्तिं सकामलाम् ।
ज्वरातिसारपाण्डुत्वं बालानां सर्वरोगजित् ॥

हल्दी, देवदारु, सरलकाष्ठ (चीरका बुरादा), हर्र, छोटी कटेली, बड़ी कटेली (बनभण्टा), पृश्निपर्णी और सोया; सबका चूर्ण १—१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला लें ।

इसे शहद और घीके साथ मिलाकर चटानेसे बालकोंकी ग्रहणी दीप्त होती और वातज पीड़ा, कामला, ज्वरातिसार तथा पाण्डुका नाश होता है।

रसाञ्जनादिचूर्णम् (१)

(ग. नि. । कासा. १०)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५९०५) रसाञ्जनादिचूर्णम् (२)

(भा. प्र. । अतिसा.; र. र. । अतिसा.; वृ. यो. त. । त. ६७; वृ. नि. र. । पित्त ग्रहणी.; वं. से.। ग्रहण्य.; अतिसारा.; धन्वन्त.। अतिसारा.; ग. नि. । अतिसा. २; वृ. यो. त. । त. ६४.; यो. र. । अतिसा. ; यो. र. । रक्काति. ; यो. र. । पित्तग्रह.)

रसाञ्जनं प्रतिविषं कुटजस्य फलत्वचौ ।
धातकीशृङ्गवेरश्च पाययेत्तण्डुलाम्बुना ॥
माक्षिकेण युतं हन्यात्पित्तातीसारमुल्बणम् ।
मन्दं सन्दीपयेदग्निं शूलं चाशुनिवर्तयेत् ॥

रसौत, अतीस, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, धायके फूल और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसमें शहद मिला कर चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे पित्तातीसार और शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है और अग्नि दीप्त होती है ।

(५९०६) रसाञ्जनादियोगः (१)

(वृ. नि. र. । स्त्री.)

रसाञ्जनं च लाक्षा च छागेन पयसा पिबेत् ।
कल्कपत्रैर्घृतभृष्टै राजादनकपित्थयोः ॥
पित्तानिल हरावेतौ सर्व चैवास्रपित्तजित् ॥

रसौत और लाखका चूर्ण समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिला लें ।

इसे बकरीके दूधके साथ पीनेसे वात पित्तज विकार और रक्त प्रदर नष्ट होते हैं ।

अथवा खिरनी और कैथके पत्तोंको घीमें भूनकर पीसकर सेवन करनेसे भी रक्त प्रदर नष्ट होता और वात विकार शान्त होते हैं ।

(५९०७) रसाञ्जनादियोगः (२)

(वृ. मा. । प्रदरा.; यो. चि. म. । अ. ४)

रसाञ्जनं तण्डुलकस्य मूलं
क्षौद्रान्वितं तण्डुलतोयपीतम् ।
असृग्दरं सर्वभवं निहन्ति
श्वासं च भार्गी सहनागरेण ॥

रसौत और कांटे वाली चौलाईकी जड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिला कर चावलोंके पानीके साथ पीनेसे सब प्रकारका रक्त प्रदर नष्ट होता है ।

(मात्रा—२-१॥ माशा ।)

भरंगी और सोंठका चूर्ण सेवन करनेसे रक्त प्रदर और श्वास नष्ट होता है ।

रसादिचूर्णम्

(यो. र. । तृषा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

रसामृतचूर्णम्

(यो. त. । त. ६४,)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५९०८) **रसायनचूर्णम्**

(रा. मा. । रसा. वाजी.)

यः कुष्ठचूर्णं रजनीविरामे
मध्वाज्यसम्मिश्रितमत्ति नित्यम् ।
स मत्तमातङ्गबलः सुगन्धि-
र्वाग्मी चिरायुश्च भवेन्मनुष्यः ॥

प्रातः काल कूठके चूर्णको शहद और घीमें मिला कर सेवन करनेसे शरीर अत्यन्त बलवान और सुगन्धित हो जाता है ।

इसके सेवनसे वाचा शक्ति और आयु भी बढ़ती है ।

रसेन्द्रचूर्णम्

(भै. र. । ग्रहण्य.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५९०९) **रसोनपञ्चकः**

(यो. त. । त. ४०)

कन्दः सार्षपतैलं च लशुनं शृङ्गवेरकम् ।
सर्वाष्टमांशं सिन्धूत्थं सन्धितं दिनसप्तकम् ॥
सञ्चूर्ण्य घर्ममध्ये तु प्रातः खादेद्यथाबलम् ।
एष निर्गन्धतामेत्य सर्ववातामयाञ्जयेत् ॥
स्निग्धभोजी मासमात्रं सेवनाद्वातजिद्भवेत् ।
अजीर्णमातपं रोषमतिनीरं पयो गुडम् ॥
रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतन्निरन्तरम् ॥

शलगम (या प्याज़), सरसोंका तेल, छिला और अङ्कुरादि निकाला हुवा ल्हसन तथा सोंठका चूर्ण १-१ भाग और सबका आठवां भाग सेंधा-नमक लेकर सबको एकत्र मिलाकर किसी पात्रमें बन्द करके रख दें एवं आठवें दिन निकालकर धूपमें सुखा कर चूर्ण बना लें ।

इस चूर्णमें ल्हसनकी उग्र गन्ध नहीं रहती और यह समस्त वातज रोगोंको नष्ट करता है ।

इसे अग्नि बलोचित मात्रानुसार १ मास तक सेवन करना चाहिये ।

पथ्यापथ्य--इस प्रयोगके सेवनकालमें स्निग्धाहार करना और अजीर्ण न होने देना चाहिये; तथा धूप, क्रोध, अधिक जलपान, गुड़ और दूधसे परहेज़ करना चाहिये ।

(५९१०) **रामठादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । संग्रहणी.)

रामठातिविषापथ्यावचेन्द्रयवचूर्णकम् ।
वारिपीतं निहन्त्येव ग्रहणीं वातसम्भवाम् ॥

भुनी हुई हींग, अतीस, हर्र, वच और इन्द्रजौ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे पानीके साथ पीनेसे वातज संग्रहणी नष्ट होती है ।

(मात्रा--५ रत्तीसे १ माशा तक ।)

(५९११) **रामठादियोगः**

(र. च.; यो. र. । विसर्प.)

रामठं टङ्कणं क्षारं प्रत्येकं शाणसम्मितम् ।
चूर्णयित्वा सप्तदिनं खादेत्सन्ध्याद्वये नरः ॥

भुनी हुई हींग, सुहागेकी खील, और जवाखार समान भाग लेकर एकत्र मिला कर चूर्ण बनावें ।

इसे दोनों समय (प्रातः सायं) सात दिन तक सेवन करनेसे विसर्प नष्ट होता है ।

मात्रा—१। तोला

(व्यवहारिक मात्रा—आधा माशा ।)

(५९१२) रामठाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

रामठं रुचकं वह्निर्वचाजीरकनागरम् ।
विडङ्गं चित्रकं कुष्ठं कणामरिचवेतसम् ॥
दीप्यकं चेति सर्वाणि समभागानि कारयेत् ।
चूर्णमुष्णाम्बुना पीतं वह्निवृद्धिकरं परम् ॥

भुनी हुई हींग, काला नमक (सञ्चल), चीता, बच, जीरा, सोंठ, बायबिड़ंग, चीता, कूठ, पीपल, काली मिर्च, अमलबेत और अजवायनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें ।

यह चूर्ण अत्यन्त अग्निवर्द्धक है ।

(मात्रा-१॥-२ माशे ।)

अनुपान-उष्ण जल ।

(५९१३) रालयोगः

(वृ. नि. र. । अतिसार.)

चिरोत्थितमतीसारं रालो हन्यात् सितायुतः ।

राल और मिश्री समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण पुराने अतिसारको नष्ट करता है ।

(मात्रा—२-३ माशे ।)

रास्नादिचूर्णम् (१)

(वृ. नि. र. । क्षय.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५९१४) रास्नादिचूर्णम् (२)

(यो. र. । संग्रहण्या.)

रास्ना पथ्या सटी व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च ।
ग्रन्थिकं मातुलुङ्गस्य रसमेकत्र चूर्णयेत् ॥
पिबेदुष्णेन तोयेन श्लैष्मिके ग्रहणीगदे ॥

रास्ना, हर्र, कचूर, सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, काला नमक, काच लवण, विड लवण, समुद्र लवण और पीपलामूल समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें । तथा उसे बिजौरेके रसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफज ग्रहणी नष्ट होती है ।

(मात्रा-१॥-२ माशे ।)

(५९१५) रास्नादिचूर्णम् (३)

(यो. र. । वात रोगा.)

रास्नाकुष्ठनतद्रुषट्कटुशठीपाठावचासारिवा-
भूनिम्बत्रिफलाबलादशजटा निर्गुण्डिकैरण्डकम्
हिङ्ग्वम्लार्द्रकबस्तगन्धकवरी क्षारौ पटूनां त्रयं
चूर्णं पुष्करतैलयुक्तमखिलान्वातानशीतिं जयेत् ॥

रास्ना, कूठ, तगर, सोंठ, मिर्च, पीपल, चव, चीता, पीपलामूल, कचूर, पाठा, बच, सारिवा, चिरायता, हर्र, बहेड़ा, आमला, खरैटी, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, संभालु, अरण्डकी जड़, हींग, अमलबेत, अदरक, अजमोद, बनतुलसी, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, संचल (काला नमक), और बिड लवण; सबका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिला लें ।

इसे पोखरमूलके तेलके* साथ सेवन करनेसे ८० प्रकारके वातरोग नष्ट होते हैं।

(५९१६) रास्नाद्यं चूर्णम् (१)

(ग. नि. । राजयक्ष्मा. ९)

रास्नामुस्तमुशीरं पद्मकलवङ्गान्यश्वगन्धा सिता भार्गी सत्रिफला कटुत्रययुता तद्वद्विडङ्गानि च। एलापत्रकनागकेसरमहद्दार्वन्विता पिप्पली-मूलं सद्विगुणा सिता च हरते सश्वासकासं क्षयम् ॥

रास्ना, नागरमोथा, खस, पद्माक, लौंग, असगन्ध, मिश्री, भरंगी, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, इलायची, तेजपात, नागकेसर, देवदारु और पीपलामूलका चूर्ण १-१ भाग तथा मिश्री सबसे २ गुनी लेकर सबको एकत्र मिला लें।

यह चूर्ण श्वास, खांसी और राजयक्ष्माको नष्ट करता है।

(मात्रा—६ माशे।)

(५९१७) रास्नाद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । वाता. २०)

रास्ना शतावरी दारु कङ्कोल्लं लाङ्गली कणा। रक्तचन्दनमञ्जिष्ठावृद्धिसैन्धवपद्मकम् ॥

*पोखरमूलका तेल—१ सेर पोखरमूलको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी रहने पर छान लें। आधा सेर तेलमें यह क्वाथ और १० तोले पोखरमूलका कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

अश्वगन्धाऽमृता पाठा मुस्तैला शालिपर्णिका। शतपुष्पाऽजमोदा च शुण्ठी कुष्ठं समांशतः ॥ सघृतं चूर्णमेतेषां भक्षितं तप्तवारिणा। त्वगस्थिस्नायुसन्धिस्थं मारुतं हन्ति वेगतः ॥

रास्ना, शतावर, देवदारु, कंकोल, लांगली (कलियारी), पीपल, लाल चन्दन, मजीठ, वृद्धि, सेंधानमक, पद्माक, असगन्ध, गिलोय, पाठा, नागरमोथा, इलायची, शालपर्णी, सोया, अजमोद, सोंठ, और कूठ; इन सबका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें।

इसे घीमें मिला कर उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे त्वग अस्थि स्नायु और सन्धिगत वायु शीघ्रही नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—१॥-२ माशे।)

(५९१८) रुचकादिचूर्णम् (१)

(वृ. नि. र. । ग्रहणी रो.)

रुचकाग्निमरीचानां चूर्णं तक्रेण सेवितम्। ग्रहण्युदरगुल्मार्शःक्षुन्मान्द्यप्लीहनाशनम् ॥

सञ्चल (काला नमक), चीता और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी दोष, उदर रोग, गुल्म, अर्श, अग्निमांद्य और प्लीहा (तिल्ली) का नाश होता है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

(५९१९) रुचकादि चूर्णम् (२)

(वृ. नि. र. । शूलरोगकर्म.)

चूर्णं समं रुचकहिङ्गुमहौषधाना-मुष्णाम्बुना कफसमीरणसम्भवासु।

हृत्पार्श्वपृष्ठजठरार्तिविषूचिकासु
पेयं तथा यवरसेन च विड्विबन्धे॥

काला नमक (सञ्चल), भुनी हुई हींग और सोंठ समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफवातज हृदय पीड़ा, पार्श्व शूल, पृष्ठ शूल और उदर शूल तथा विसूचिकाका नाश होता है।

यदि मलावरोध हो तो इसे जौके काथके साथ सेवन करना चाहिये।

(मात्रा—१॥-२ माशे।)

(५९२०) रेणुकादियोगः

(ग. नि. । वन्ध्या. ५)

रेणुकां रोध्रसम्मिश्रां लक्ष्मणां परियोजिताम्।
गर्भदां क्षीरसर्पिर्भ्यां पिबेद्रक्तवटाङ्कुरान्॥

रेणुका, लोध और लक्ष्मणा समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें।

इसे अथवा रक्त बटके अंकुरोंको घृत मिले हुवे दूधके साथ सेवन करनेसे वन्ध्या स्त्री गर्भ धारण कर लेती है।

(५९२१) रेणुकाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णाधि. ३)

हरेणुश्चोरकं मुस्तं सूक्ष्मैलासठिनागरम्।
त्वगेला पुष्करं भृङ्गी ह्रीबेरागरुकेसरम्॥
यमान्यामलकीभार्गी पिप्पली सुरसा तथा।
सिताचतुर्गुणं चूर्णं तत्पीतं लीढमेव वा॥
अन्नपानप्रयुक्तं वा भक्षितं वापि केवलम्।
कासहिकाज्वर श्वासपार्श्वशूलं च नाशयेत्॥

रेणुका, चोरक, नागरमोथा, छोटी इलायची, कचूर, सोंठ, दालचीनी, बड़ी इलायची, पोखरमूल, काकड़ासिंगी, सुगन्ध बाला, अगर, नागकेसर, अजवायन, आमला, भरंगी, पीपल और तुलसी; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा मिश्री सबसे चार गुनी लेकर सबको एकत्र मिला लें।

इसे पीने, चाटने, खाने या अन्नादिमें मिला कर सेवन करनेसे खांसी, हिचकी, ज्वर, श्वास और पार्श्व शूलका नाश होता है।

(मात्रा—६ माशे।)

रोचनादिचूर्णम्

(वं. से. । नेत्र रो.)

मिश्र प्रकरणमें देखिये।

(५९२२) रोहीतकादियोगः

(यो. त. । त. ५३; यो. र. । उदररो.)

रोहीतकाभयाशुण्ठीः पिबेन्मूत्रेण शक्तितः।
सर्वोदरहरं प्लीहमेहार्शः कृमिगुल्मनुत्॥

रुहेड़ाकी छाल, हर्र और सोंठ समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें।

इसे यथोचित मात्रानुसार गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके उदर, प्लीहा, प्रमेह, अर्श, कृमि और गुल्मका नाश होता है।

इति रकारादिचूर्णप्रकरणम्

अथ रकारादिगुटिकाप्रकरणम्

(५९२३) रक्तबोलादिगुटिका

(यो. र. । सूतिका.)

शोणं बोलं सघृतं सगुडं
गुटकी कृतं गिलितम् ।
मक्कल्लाभिधशूलं हन्ति
समूलं सशोणितातङ्कम् ॥

रक्तबोल (बोल गूंद) को पीसकर उसमें उसके बराबर गुड़ और आवश्यकतानुसार घी मिला कर गोली बना लें ।

यह गोली निगलनेसे प्रसूताका मक्कल शूल और रक्त विकार (अत्यधिक रक्तस्राव) नष्ट होता है ।

(५९२४) रजःप्रवर्त्तिनीवटी

(भै. र. । स्त्री रोगा.)

कन्यासारं च काशीसं रामठं टङ्कणं तथा ।
समादाय समं सर्वं पेषयेत्कन्यकाद्रवैः ॥
निर्मापयेद्भिषग्वर्यो रक्तिद्वयमितावटीः ।
शीलितेयं तु वटिका विनिहन्ति सुदारुणाम् ॥
रजोरोधव्यथां कष्टरजः स्रावव्यथां तथा ।
रजः प्रवर्त्तिनी ह्येषा नीलकण्ठेन भाषिता ॥

एलवा, कसीस, हींग और सुहागा, समान भाग ले कर सबको घृतकुमारीके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे रजोनिरोध (नष्टार्तव), कष्टार्तव, और पीडितार्तवका नाश होता है ।

(५९२५) रतिवल्लभमोदकः (महा)
(रतिवल्लभविजयापाकः)

(धन्वन्तरि । वाजीकरण; नपुंस्का. त. ४.)

समूलपत्रशाखायास्तुलां शक्राशनस्य च ।
संरुद्धयोलूखले छित्त्वाऽपां द्रोणे हि तथा च वै ॥
क्वाथं पादावशिष्टं तु वस्त्रपूतं च कारयेत् ।
क्षीरप्रस्थं समादाय खण्डस्यार्द्धं शतं न्यसेत् ॥
शतावरीरसस्याष्टौ पिप्पल्याः कुडवं तथा ।
सर्वमेतत्समालोड्य घृतप्रस्थेन मेलयेत् ॥
औषधानां ततश्चूर्णं दापयेत्कलिकं पृथक् ।
त्रिकटु त्रिफला चव्यमेलात्वक्पत्रकेशरम् ॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं धान्यकाजाजिमेथिकाः ।
कुष्ठाब्द रेणुका व्योषभार्ङ्गीतालीशकेशरम् ॥
तालमूली त्रिवृद्दन्ती श्रेयसी हिङ्गु पौष्करम् ।
लवङ्गजातिकोषं च यवानी कारवी तथा ॥
शुभा जातीफलं चन्द्रं भृङ्गी चैव विदारिका ।
अष्टवर्गं च काकोलं श्लक्ष्णचूर्णं च कारयेत् ॥
गुडवद्विपचेद्वैद्यो मोदकं कारयेत्ततः ।
अक्षमात्रं च जग्ध्वैनं शीतलं पाययेज्जलम् ॥
नाशयेच्छुक्रदोषं च षण्ढं चैवातिदारुणम् ।
श्राकरं लाघवकरं मेधाबुद्धिप्रवर्धनम् ॥

मूल पत्र और शाखायुक्त ६। सेर भांगको ओखलीमें कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें । तदनन्तर उसमें २ सेर दूध, ५० पल (३ सेर १० तोले) खांड, १ सेर शतावरका रस, २ सेर घी और २० तोले

पीपलका चूर्ण मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित ओषधियोंका चूर्ण मिला कर १।-१। तोलेके मोदक बना लें।

चूर्णकी ओषधियां–सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव, इलायची, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, चीता, पीपलामूल, धनिया, जीरा, मेथी, कूठ, नागरमोथा, रेणुका, सोंठ, मिर्च, पीपल, भरंगी, तालीस पत्र, नागकेसर, तालमूली, निसोत, दन्तीमूल, गजपीपल, हींग, पोखरमूल, लौंग, जावत्री, अजवायन, काला जीरा, बंसलोचन, जायफल, कपूर, काकड़ासिंगी, विदारीकन्द, अष्टवर्ग और काकोली; प्रत्येकका चूर्ण १।-१। तोला।

इनके सेवनसे शुक्रदोष और दारुण षण्ढत्व (नपुंस्कत्व) का नाश होता तथा सौन्दर्य, लघुता, मेधा और बुद्धिकी वृद्धि होती है।

अनुपान–शीतल जल।

मात्रा–एक मोदक।

रतिवल्लभो मोदकः

(भै. र. । वाजीकरणा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रतिवृद्धिकरो मोदकः

(यो. र.)

गोक्षुरादिलेहः प्र. सं. १३४५ देखिये

रत्नप्रभावटी

(भै. र. । स्त्री. रो.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रविसुन्दरवटी

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसकर्पूरगुटिका

(र. का. धे. । उपदंशा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसगुटिका

(भै. र. । अर्श.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसगुटिका

(रसें. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । कासा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसचन्द्रिकावटी

(रसें. सा. सं. ; र. चं. ; भै. र. । शिरो.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसाञ्जनादिगुटिका

(यो. चि. म. । अ. ३)

अञ्जन प्रकरणमें देखिये।

(५९२६) रसाञ्जनादिवटी

(वृ. नि. र. । अर्शो.)

रसाञ्जनं महानिम्बफलं शक्रयवं तथा।
मरिचं कुटजत्वक् च तथा लघ्वी हरीतकी॥
समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णीकृतानि च।
रसे कुक्कुरभृङ्गाख्ये मर्दयेत्तु दिनत्रयम्॥
माषमात्रा वटी कार्या तां वटीं भक्षयेत्प्रगे।
रक्तार्शसां नाशिनी स्यात्पथ्याशी यदि वै नरः॥

रसौत, बकायनके फलकी गिरी, इन्द्रजौ, काली मिर्च, कुड़ेकी छाल और छोटी (काली) हर्र; प्रत्येकका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर ३ दिन कुकुर-भंगरेके रसमें घोट कर १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

यदि पथ्य पालन करते हुवे इन्हें सेवन किया जाय तो रक्तार्श नष्ट हो जाती है।

रसादिगुटिका

(र. रा. सु. । वात रोगा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसादिगुटी

(वै. र. ; वृ. नि. र. ; र. रा. सु. ; यो. र. । दाह; वृ. यो. त. । त. ८७)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसादिगुटी

(वृ. नि. र. । स्पर्शवाता.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसादिगुटी

(यो. र. ; वृ. नि. र. । तृष्णा. ; वृ. यो. त. । त. ८४.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसादिवटी

(वृ. नि. र. । ज्वरा)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसाभ्रगुटिका

(र. र.; धन्व. । रसायना.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसाभ्रवटी

(रसें. सा. सं. । ग्रहण्य.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसेन्द्रगुटिका (वृहद्)

(र. र. । कासा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसेन्द्रवटी

(भै. र. । मुखरो.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसेश्वरीगुटिका

(र. र. र. । उपदे. ३)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५९२७) रसोनपिण्डः

(रसोनासवः)

(च. द.; वै. र.; व. से. । आमवात.; वृ. मा. । आमवाता.; धन्व.; र. र. । आमवाता.)

निस्तुषस्य रसोनस्य नयेत्पलशतं बुधः ।
तिलानां कुडवं चात्र प्रक्षिपेच्च पलं पलम् ॥
प्रत्येकं त्र्यूषणं हिङ्गु क्षारौ द्वौ शतपुष्पिका ।
लवणानि च पञ्चैव कुष्ठग्रन्थिकचित्रकम् ॥
अजमोदा यवानी च धान्याकं च विचूर्णितम् ।
एकत्र पिण्डितं सर्वं घृतभाण्डे विनिःक्षिपेत् ॥
यावत्स्युः षोडशाहानि ततस्तैलं च काञ्जिकम् ।
प्रस्थार्द्धं च पृथग् देयं खादेत्कर्षप्रमाणकम् ॥
जलं चानुपिबेत्तस्य जयेद्वातामयांस्ततः ।
आमवातं च सर्वाङ्गवातमेकाङ्ग मारुतम् ॥

अपस्मारं तथोन्मादं कासं श्वासामयं तथा ।
भग्नवातं तथा शूलं विनिहन्ति न संशयः ॥

निस्तुष (छिलके रहित) ल्हसन ६। सेर, तिल २० तोले तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, जवाखार, सज्जीखार, सोया, पांचो नमक (सेंधा, काला नमक (संचल), विड लवण, समुद्र लवण और काच लवण), कूठ, पीपलामूल, चीता, अजमोद, अजवायन और धनिया; इनका चूर्ण ५-५ तोले लेकर ल्हसन और तिलोंको एकत्र कूट कर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह कूटें और फिर सबको घृतके चिकने पात्रमें भर कर अनाजके ढेरमें दबा दें।

१६ दिन बीत जाने पर औषधको निकाल कर उसमें १-१ सेर तिल तैल और कांजी मिला कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा---१। तोला।

अनुपान---शीतल जल।

इसे सेवन करनेसे समस्त वातज रोग, आमवात, सर्वाङ्ग वात, एकांग वात, अपस्मार, उन्माद, खांसी, श्वास, भग्नवात और शूल नष्ट होता है।

रसोनपिण्ड (महा—बृहत्)

(महा रसोनपिण्ड प्र. सं. ५१७३ देखिये।)

रसोनवटकः

(वृ. नि. र.)

मिश्र प्रकरणमें देखिये।

रसोनाष्टकम्

(वै. र. । वातव्या.)

रसोनकल्क प्र. सं. ५८५६ देखिये।

(५९२८) राजयोगः

अहिफेनं वत्सनागः केशरं चव्यचित्रकम् ।
धत्तूरभृङ्गशिग्रूणां बीजानि सितजीरकम् ॥
कपिकच्छ्वश्वगन्धा कलिङ्गकलवङ्गकम् ।
अजमोदाकर्करभो मुशली च शतावरी ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं चातुर्जातकसंयुतम् ।
कटाहे मधुना पक्त्वा कुर्यात्पूगोपमा वटीः ॥
भोजनानन्तरं वक्त्रे गुटी धार्या घटीद्वयम् ।
जातीपत्री विशेषेण धारणीया मुखे सदा ॥
क्षाराम्लदधिवर्ज्जं च कार्यं भोजनमुत्तमम् ।
षण्ढत्वं स्वल्पवीर्यत्वं हन्याच्छीतशिवानलः ॥
अतिसारे प्रमेहे च मन्दाग्नौ राजयक्ष्मणि ।
आमवाते पाण्डुरोगे महावाते शिरोगदे ॥
प्लीह्नि पानीयजे रोगे सर्वाङ्गवात इष्यते ।
ईश्वरेण भगवता कार्तिकेयाय सुन्दरः ॥
एष द्वात्रिंशको नाम योगराजः प्रकीर्तितः ॥

अफीम, शुद्ध बछनाग, केसर, चव्य, चीता, धतूरेके बीज, भांगके बीज, सहंजनेके बीज, सफेद जीरा, कौंचके बीज, असगन्ध, इन्द्रजौ, लौंग, अजमोद, अकरकरा, मूसली, शतावर, पीपल, पीपलामूल, दालचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसर; इनका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको शहदमें मिला कर लोहेकी कड़ाईमें मन्दाग्नि पर पका कर बड़ी बड़ी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली भोजनोपरान्त २ घड़ी पर्यन्त मुखमें रखनी चाहिये। तथा सदैव मुखमें जावत्री रख कर उसका रस चूसते रहना चाहिये।

इसके सेवन कालमें क्षार, अम्ल, और दहीसे परहेज़ करना तथा उत्तम पौष्टिक आहार करना चाहिये।

इस प्रयोगसे स्वल्प वीर्यत्व और नपुंस्कता इस प्रकार नष्ट हो जाती है जिस प्रकार अग्निसे शीत।

इसके अतिरिक्त यह प्रयोग अतिसार, प्रमेह, मन्दाग्नि, राजयक्ष्मा, आमवात, पाण्डु रोग, शिरो रोग, प्लीहा, जल विकार और सर्वांग वातको भी नष्ट करता है।

राजवल्लभगुटिका

(र. का. धे. । आनाह.)

रस प्रकरणमें देखिये।

राजशेखरवटी

(र. का. धे. । पाण्डु; र. चि. म. । स्त. ९)

रस प्रकरणमें देखिये।

राजशेखरवटी

(र. च. ; र. रा. सुं. । अजीर्णा. ; र. र. स. । अ. १८)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५९२९) राजिकादिगुटी

(वृ. नि. र. । श्वास कर्म.)

राजिका क्षीरकन्दश्च चपला च रसोनकम्।
ऊषणातिविषा देवकुसुमं च विचूर्णितम्॥
मार्कवार्ककुमारीभिर्निर्गुण्डीमुण्डीचित्रकैः।
भावयित्वा पृथक् सर्वैः श्वासकासनिकृन्तनम्॥

राई, क्षीरविदारी, पीपल, ल्हसन, काली मिर्च, अतीस और लौंगका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर भंगरे, आक, घीकुमार, संभालु, गोरख मुण्डी और चीतेके रसकी एक एक भावना देकर (४-४ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे श्वास और खांसीका नाश होता है।

रुजादलनवटी

(र. रा. सुं. । प्रमेह ; रसें. चि. म. । अ. ९)

रस प्रकरणमें देखिये।

रुद्रवटी

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५९३०) रेचनीवटी

(रस. चि. म. । स्तबक ९)

अभया चूर्णमादाय नूतनैर्जयपालकैः।
पञ्चमांशैश्च मिलितैः स्नुहीदुग्धेन पाचितम्॥
गुटिकास्तस्य कल्कस्य कर्तव्याष्टकसम्मिताः।
गोल्यैकया गुणः प्रोक्तो रेचने उत्तमः खलु॥
नोत्क्लेदो न च दाहः स्यान्न च मूर्छा न च क्लमः।
वेगतः सारयत्येषा विशेषादामनाशिनी॥

५ भाग हर्रके चूर्णमें १ भाग शुद्ध जमालगोटा मिला कर दोनोंको स्नुही (सेहुंड) के दूधमें पका कर ४-४ माशेकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १ गोली खानेसे बिना उत्क्लेश, मूर्च्छा और क्लम आदिके वेग पूर्वक उत्तम विरेचन हो जाता है।

ये गोलियां विशेषतः आमनाशक हैं।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

रोगेभसिंहवटी

(र. रा. सु. । वाता.)

रस प्रकरणमें देखिये।

इति रकारादिगुटिकाप्रकरणम्



अथ रकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

रसगुग्गुलुः

(भै. र. । उपदंशा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

रसाभ्रगुग्गुलुः

(भै. र. । वातरक्ता.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(५९३१) **रास्नाद्यो गुग्गुलुः** (१)

(ग. नि. । वाता. १९; वृ. नि. र.; वृ. मा.; यो. र.; र. र. । वातव्या.; वृ. यो. त. । त. ९०)

रास्नायास्तु पलं चैकं कर्षान् पञ्च च गुग्गुलोः।
सर्पिषा वटकान् कृत्वा खादेद्वा गृध्रसीहरान्॥

रास्नाका चूर्ण ५ तोले और शुद्ध गूगल ६। तोले लेकर दोनोंको एकत्र मिला कर उसमें आवश्यकतानुसार घी डालकर कूटें।

इसके सेवनसे गृध्रसी नष्ट होती है।

(मात्रा—१॥–२ माशा ।)

(अनुपान—उष्ण जल ।)

(५९३२) **रास्नाद्यो गुग्गुलुः** (२)

(यो. र.; र. र. । कर्ण.; यो. त. । त. ४०; ग. नि. । गुटिका. ४; यो. र.; वृ. नि. र. । वातव्या.; वृ. यो. त. । त. १३१, ९०)

रास्नामृतैरण्डसुराह्वविश्वं
तुल्यं पुरेणाथ विमृद्य खादेत् ।
वातामयीकर्णशिरोगदी च
नाडीयुतश्चैव भगन्दरी च ॥

रास्ना, गिलोय, अरण्डमूल, देवदारु और सोंठ, सबका चूर्ण १–१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर (५ भाग) (एवं आवश्यकतानुसार घी) ले कर सबको एकत्र मिलाकर कूटें।

इसे सेवन करनेसे वात रोग, कर्ण रोग, शिरो रोग, नाड़ी व्रण और भगन्दरका नाश होता है।

(मात्रा—१॥–२ माशा ।)

(अनुपान—उष्णजल ।)

इति रकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्



अथ रकाराद्यवलेहप्रकरणम्

(५९३३) रक्तप्रवाहिकान्तकलेहः

(यो. त. । त. ७७.)

लेहस्तैलसिताक्षौद्रतिलयष्ट्याह्व कल्कतः ।
बालस्य रुन्ध्यान्नियतं रक्तस्रावं प्रवाहिकाम् ॥

मिश्री, तिल और मुलैठीके कल्कमें तिलका तेल और शहद मिला कर अवलेह बनावें ।

यह लेह बालकोंकी रक्तप्रवाहिकाको नष्ट करता है ।

(५९३४) रजन्यादिलेहः

(ग. नि. । बालरोगा. ११)

रजनीदारुसरलश्रेयसीबृहतीद्वयम् ।
पृश्निपर्णी शताह्वा च लीढं माक्षिकसर्पिषा ॥
ग्रहणीदीपनं श्रेष्ठं मारुतस्यानुलोमनम् ।
अतीसारज्वरश्वासकामलापाण्डुरोगजित् ॥
बालानां सर्वरोगेषु पूजितं बलवर्णदम् ॥

हल्दी, देवदारु, सरल (चीर), हर्र, दो प्रकारकी कटेली, पृश्निपर्णी और सौंफ; सबका समान भाग चूर्ण लेकर शहद और घीमें मिलाकर अवलेह बनावें ।

यह अवलेह ग्रहणीको दीप्त और वायुको अनुलोम करता तथा अतिसार, ज्वर, श्वास, कामला, पाण्डु आदि समस्त बाल रोगोंको नष्ट करता है ।

रतिवल्लभपूगपाकः

(यो. र.; वृ. यो. त.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५९३५) रसोनपाकः (१)

(लशुनपाकः)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

निस्तुषं लशुनं प्रस्थं क्षीरकुम्भे पचेत्सुधीः ।
घृतं पलचतुष्कं च पचेच्च मृदुवह्निना ॥
सुनिष्पन्नो मधुनिभो खण्डं प्रस्थद्वयं क्षिपेत् ।
त्र्यूषणं च चतुर्जातं ग्रन्थिकं चव्यचित्रकम् ॥
विडङ्गं रजनीयुग्मं हपुषा वृद्धदारुकम् ।
पौष्करं दीप्यपुष्पं च सुरदारु पुनर्नवा ॥
श्वदंष्ट्रा निम्बरास्ना च शतपुष्पा वरी सठी ।
अश्वगन्धात्मगुप्ता च द्रव्याणि पिचुमात्रया ॥
शुक्रे यथाबलं सेव्यं रसोनाख्यं रसायनम् ।
सर्वान्वातामयान् शूलमपस्मारमुरः क्षतम् ॥
गुल्मोदरवमिप्लीहवर्ध्मवृद्धिकृमीन् जयेत् ।
विबन्धानाह शोफांश्च वह्निमान्द्यं बलक्षयम् ॥
हिक्कां श्वासं च कासांश्च अपतन्त्रकमेव च ।
धनुर्वातं तथा यामं पक्षघातापतानकम् ॥
अर्दिताक्षेपकं कुब्जं हनुग्रहशिरोग्रहम् ।
विश्वाची गृध्रसी खल्ली पङ्गुवातं च सन्धिजम् ॥
बाधिर्यं सर्वशूलं च नाशयेदतिवेगतः ।
वातव्याधिगजेन्द्रस्य केसरीव कृतः शुभः ॥
कफव्याधिप्रशमनो बलपुष्टिकरः स्मृतः ॥

१ प्रस्थ छिलके रहित ल्हसनको पीस कर १ कुम्भ (६४ सेर) दूधमें मिलाकर उसमें ४० तोले घी मिलावें और फिर सबको मन्दाग्नि पर पकावें । जब पकते पकते शहदके समान गाढ़ा

हो जाय तो उसमें २ सेर खांड मिला दें एवं जब पाक लगभग तैयार हो जाय तो उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, पीपलामूल, चव, चीता, बायबिड़ंग, हल्दी, दारुहल्दी, हपुषा, विधारा, पोखरमूल, अजवायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवा, गोखरु, नीमकी छाल, रास्ना, सोया, सतावर, कचूर, असगन्ध और कौंचके बीज; इनका १।-१। तोला चूर्ण मिला दें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त वातज रोग, शूल, अपस्मार, उरःक्षत, गुल्म, उदर रोग, वमन, प्लीहा, वर्ध्म, वृद्धि, कृमि, विबन्ध, आनाह, शोथ, अग्निमांद्य, बलक्षय, हिचकी, श्वास, खांसी, अपतन्त्रक, धनुर्वात, बहिरायाम, अन्तरायाम, पक्षाघात, अपतानक, अर्दित, आक्षेप, कुब्ज, हनुग्रह, शिरोग्रह, विश्वाची, गृध्रसी, खल्लीशूल, पङ्गुवात, सन्धिवात, वधिरता और समस्त शूल इत्यादि वातज रोग एवं कफज रोग नष्ट होते और बल बढ़ता तथा शरीर पुष्ट होता है।

(५९३६) **रसोनपाकः** (२)
(लशुनपाकः)

(वृ. नि. र. । वातव्या. ; यो. चि. म. । अ. ७.)

तेषूग्रगन्धनाशाय रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत् ।
प्रातर्निष्कास्य तत्पिष्ट्वा ततो दुग्धे विपाचयेत् ॥
निस्तुषं लशुनं प्रस्थं क्षीरं प्रस्थचतुष्टयम् ।
विपाच्य सान्द्रीभूतेस्मिन् सर्पिषः कुडवं क्षिपेत् ॥
रास्ना वरी वृषा छिन्ना शठी विश्वा सुरद्रुमम् ।
वृद्धदारुकदीप्याग्निशताह्वा सपुनर्नवा ॥
फलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्षसम्मितम् ।
विचूर्ण्य शीते मधुनः कुडवं तत्र योजयेत् ॥
सितया भक्षयेन्मात्रामाढ्यवाते हनुग्रहे ।
आक्षेपकादिभग्ने च कट्यूरुस्तम्भहृद्ग्रहे ॥
सर्वाङ्गे सन्धिभङ्गे च वातजाशीतिरोगिणः ।
पथ्यो लशुनपाकोयं वर्णायुः पुष्टिकारकः ॥

१ प्रस्थ छिलके रहित ल्हसनको रातको तक्रमें डाल दें और दूसरे दिन प्रातः तक्रसे निकालकर (धो कर) पीस लें।

तदनन्तर उस ल्हसनको ८ सेर दूधमें पकावें और गाढ़ा हो जाने पर उसमें ४० तोले घी मिला दें। जब पाक लगभग तैयार हो जाए तो उसमें रास्ना, शतावर, बासा, गिलोय, कचूर, सौंठ, देवदारु, विधारा, अजवायन, चीता, सोया, पुनर्नवा, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल और बायबिडंगका १।-१। तोला चूर्ण मिलावें एवं पाकके ठण्डा हो जानेपर उसमें ४० तोले शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसमें मिश्री मिला कर यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे आढ्यवात, हनुग्रह, आक्षेपक, भग्न, कटिस्तम्भ, उरुस्तम्भ, हृद्ग्रह, सर्वाङ्ग वात, सन्धिभङ्ग, और अस्सी प्रकारके वातज रोग, नष्ट होते तथा वर्ण, आयु और पुष्टिकी वृद्धि होती है।

(५९३७) **राजरसायनम्**

(व. से. । नासा.)

चित्रककषायपलशतममृताजातीरसश्च तुल्यांशम् ।
प्रक्षिप्य गुडशतञ्च द्विपञ्चमूलीकषायेण ॥
तत्तुल्येन च हरीतक्याढकमेकं विपाच्य गुडपाकम् ।
अर्द्धप्रस्थं मधुनस्तस्मिन् दद्यात्ततो वैद्यः ॥

द्वे द्वे पले निदध्यादेलात्वक्पत्रत्रिकटुकानाम् ।
यवक्षाराद्र्द्धपलं प्रयोजयेदग्निवर्द्धनं पुंसाम् ॥
एतद्रसायनोत्तममश्विभ्यां निर्मितं सुविख्यातम् ।
उपयुक्तवतां पुंसां चक्रणकाष्ठान्यपि च जीर्य्यति
अजितमपि भेषजशतैः पीनसरोगं त्र्यहाज्जयति ।
नृपतिरसायनमेतदाहारयन्त्रणारहितश्च ॥

चीतामूलका काथ १२॥ सेर, गिलोयका काथ १२॥ सेर, चमेलीका रस १२॥ सेर, दश-मूलका काथ १२॥ सेर, गुड़ ६। सेर और हर्रका चूर्ण ४ सेर ले कर सबको एकत्र मिलाकर मन्दा-ग्निपर पकावें । जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें इलायची, दालचीनी, तेजपात, सोंठ, मिर्च तथा पीपलका चूर्ण १०-१० तोले और २॥ तोले जवाखार मिला दें । जब पाक तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर ठण्डा करके उसमें १ सेर शहद मिला दें ।

यह अवलेह अत्यन्त पाचक है और सैकड़ों औषधोंसे आराम न होने वाली पीनस इससे ३ दिनमें ही नष्ट हो जाती है ।

इस पर किसी विशेष परहेज़की आवश्यकता नहीं है ।

राजावर्तावलेहः

(र. रा. सु. । प्रमेह.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(५९३८) रोहितकावलेहः

(ग. नि. । लेहा. ५)

पक्त्वा शतं रोहितवल्कलानां
पथ्याशतं माहिषमूत्रमग्नौ ।
पादावशेषं तु सपञ्चकोलैरुद्धृत्य
मूत्रं सह दन्तिनीभिः ॥
भूयः पचेद्यावदुपैति लेहः
पथ्याद्वयं नित्यमथोपयुज्य ।
पश्चाल्लिहेल्लेहहितं हिताशी
प्लीहोदरं हन्ति यकृच्च शीघ्रम् ॥

६। सेर रुहेड़ेकी छाल और १०० हर्रोंको आठ गुने भैंसके मूत्रमें पकावें; जब चौथा भाग शेष रहे तो छान कर उस काथमें उपरोक्त १०० हर्रें और पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और दन्तीमूलका चूर्ण मिला कर पुनः पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उतार लें ।

इसमेंसे नित्य प्रति २ हर्रं खाकर अवलेह चाटना चाहिये ।

इसके सेवनसे प्लीहोदर और यकृतोदर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

इति रकाराद्यवलेहप्रकरणम्



अथ रकारादिघृतप्रकरणम्

(५९३९) रजनीत्रिफलाघृतम्

(व. से. । पाण्डु.)

रजनीक्वाथकल्काभ्यां घृतं पाण्ड्वामयापहम् ।
त्रिफलाकल्कगोमूत्रसिद्धं वा माहिषं घृतम् ॥

हल्दीके क्वाथ और कल्कसे घृत सिद्ध करके रक्खें ।

यह घृत पाण्डुको नष्ट करता है ।

(क्वाथार्थ—हल्दी १ सेर, पाकार्थ जल ८ सेर । शेष क्वाथ २ सेर ।

कल्कार्थ—हल्दी चूर्ण १० तोले । घी ४० तोले ।)

त्रिफलाके कल्क और गोमूत्रके साथ सिद्ध किया हुवा भैंसका घी भी पाण्डुको नष्ट करता है ।

(त्रिफलाका कल्क २० तोले । भैंसका घी २ सेर । गोमूत्र ८ सेर ।)

(५९४०) रसोनाद्यं घृतम्

(च. द. । गुल्मा. २९)

रसोनस्वरसे सर्पिः पञ्चमूलरसान्वितम् ।
सुरारनालदध्यम्लमूलकस्वरसैः सह ॥
व्योषदाडिमवृक्षाम्लयमानीचव्यसैन्धवैः ।
हिङ्ग्वम्लवेतसाजाजी दीप्यकैश्च पलान्वितैः ॥
सिद्धं गुल्मग्रहण्यर्शः श्वासोन्मादक्षयज्वरान् ।
कासाऽपस्मार मन्दाग्निप्लीहशूलानिलाञ्जयेत् ॥

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, अनार दाना, तिन्तड़ीक, अजवायन, चव, सेंधा नमक, हींग, अम्लबेत, जीरा और अजवायन प्रत्येक ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

द्रव पदार्थ—ल्हसनका स्वरस ६ सेर, बृहत्पञ्चमूलका क्वाथ ६ सेर (पञ्च मूल ३ सेर, पानी २४ सेर, शेष ६ सेर), सुरा ६ सेर, आरनाल (कांजी) ६ सेर, खट्टी दही ६ सेर और मूलीका स्वरस ६ सेर ।

विधि—६ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और समस्त द्रव पदार्थ मिला कर पकावें । जब द्रवांश जल जाए तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे गुल्म, ग्रहणी, अर्श, श्वास, उन्माद, क्षय, ज्वर, खांसी, अपस्मार, अग्निमांद्य, प्लीहा, शूल और वायुका नाश होता है ।

(५९४१) रास्नादिघृतम् (१)

(व. से. । वातव्या.)

रास्नापुष्करबिल्वाग्निशिग्रुसैन्धवगोक्षुरैः ।
कृष्णां पिष्ट्वा पचेत्सर्पिः कृत्स्नं वातार्तिनाशनम् ॥

रास्ना, पोखरमूल, बेलकी छाल, अरनी, सहंजनेकी छाल, सेंधा नमक, गोखरु और पीपलके कल्कके साथ घी पका कर रक्खें ।

इसके सेवनसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(प्रत्येक वस्तु ५ तोले । घी ४ सेर । पानी १६ सेर ।)

(५९४२) रास्नादिघृतम् (२)

(ग. नि. । राजयक्ष्मा. ९)

रास्नाबलागोक्षुरकस्थिरावर्षाभूसाधितम् ।
जीवन्तीपिप्पलीगर्भं सक्षीरं शोषजिद्घृतम् ॥

क्राथ—रास्ना, खरैटीकी जड़, गोखरु, शालपर्णी और पुनर्नवा, १६–१६ तोले लेकर सबको अधकुटा करके ७ सेर पानीमें पकावें और जब २ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—जीवन्ती और पीपल २॥–२॥ तोले लेकर एकत्र पीस लें।

आधा सेर घीमें आधा सेर दूध और उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिला कर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे शोष नष्ट होता है।

(५९४३) रास्नादिघृतम् (३)

(वा. भ. । उ. अ. ३ बाल रोगा.)

रास्नाद्वयंशुमतीवृद्धपञ्चमूलवचाघनात् ।
क्वाथे सर्पिः पचेत्पिष्टैः सारिवाव्योषचित्रकैः॥
पाठाविडङ्गमधुकपयस्याहिङ्गुदारुभिः ।
सग्रन्थिकैः सेन्द्रयवैः शिशोस्तत्सततं हितम् ॥
सर्वरोगग्रहहरं दीपनं बलवर्णदम् ॥

क्राथ—दो प्रकारकी रास्ना, शालपर्णी, बेल-छाल, सोनापाठा छाल, खम्भारी छाल, पाढलकी छाल, अरणी बच और नागरमोथा १६–१६ तोले ले कर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें। जब ४ सेर पानी शेष रहे तो क्राथको छान लें।

कल्क—सारिवा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, पाठा, बायबिड़ंग, मुलैठी, क्षीरकाकोली, हींग, देवदारु, पीपलामूल और इन्द्रजौ; सब समान भाग मिश्रित १० तोले (प्रत्येक ९। माशे) ले कर सबको एकत्र पीस लें।

विधि–१ सेर घीमें क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत बच्चोंके लिये हितकारी है। इसके सेवनसे बालकोंके समस्त ग्रह नष्ट होते, तथा अग्नि दीप्त और बल वर्णकी वृद्धि होती है।

(५९४४) रास्नाद्यं घृतम् (१)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

रास्नाफलत्रयक्वाथे दशमूले च तत्कृते ।
कल्के च जीवनीयानां घृतं तिमिरनाशनम् ॥

रास्ना, त्रिफला और दशमूलके क्वाथ तथा जीवनीय गणके कल्कके साथ घृत सिद्ध करें।

यह घृत तिमिर नामक नेत्र रोगको नष्ट करता है।

(क्वाथ ८ सेर, घी २ सेर, कल्क २० तोले।)

नोट–जीवनीय गण जकारादि क्वाथ प्रकरणमें देखिये।

(५९४५) रास्नाद्यं घृतम् (२)

(व. से. । कासा.)

द्रोणेऽपां साधयेद्रास्नां दशमूली शतावरीम् ।
पलिकां मानिकांशांस्त्रीन्कुलित्थान्बदरान् यवान् ॥

तुलार्द्धं राजमाषस्य पादशेषेण तेन तु ।
घृताढकं समक्षीरं जीवनीयैः पलोन्मितैः ॥
सिद्धं तद्दशभिः कल्कैः नस्यपानानुवासनैः ।
समीक्ष्य वातरोगेषु यथावस्थं प्रयोजयेत् ॥
पञ्चकासाञ्छिरः कम्पं शूलं वंक्षणयोनिजम् ।
सर्वाङ्गैकाङ्गरोगांश्च सप्लीहोर्ध्वानिलं जयेत् ॥

क्वाथ—रास्ना, दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, और शतावर ५–५ तोले; कुलथी, बेर और जौ आधा आधा सेर तथा लोबिया ३ सेर १० तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

कल्क—जीवनीय गणकी प्रत्येक ओषधि ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

विधि—८ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क तथा ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें।

इसे वातज रोगोंमें रोगीकी अवस्थानुसार नस्य, पान अथवा अनुवासन द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

इसके सेवनसे पांच प्रकारकी खांसी, शिरका कांपना, वंक्षण शूल, योनि शूल, सर्वांग वायु, एकांग वायु, प्लीहा और ऊर्ध्व वातका नाश होता है।

(५९४६) **रास्नाद्यं घृतम्** (३)

(व. से. । बालरोगा.)

रास्नाश्वगन्धाकाकोलीपयस्यामुद्गपर्णिभिः।
विडङ्गजीरकाभ्याञ्च घृतमृषभकेण च ॥
शिशूत्तमाङ्गनिर्यूहे सिद्धं पुष्टिविवर्द्धनम् ॥

रास्ना, असगन्ध, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, बायबिड़ंग, जीरा और ऋषभक २०–२० तोले लेकर सबको १६ सेर पानीमें पकावें और जब ४ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

इसमें १ सेर घी मिला कर मंदाग्नि पर पकावें और जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

बच्चोंके शिर पर इसकी मालिश करनेसे वे पुष्ट होते हैं।

(५९४७) **रास्नाद्यं घृतम्** (४)

(वा. भ. । अ. २१)

रास्नामहौषधद्वीपिपिप्पलीशठिपौष्करम् ।
पिष्ट्वा विपाचयेत्सर्पिर्वातरोगहरं परम् ॥

रास्ना, सोंठ, चीता, पीपल, कचूर और पोखरमूल ५–५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

३ सेर घीमें यह कल्क और १२ सेर पानी मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत वातज रोगोंको नष्ट करता है।

(५९४८) **रास्नाद्यं घृतम्** (५)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

रास्नापौष्करशिग्रुमूलदहनं सिन्धूत्थगोक्षुरकम् ।
पिष्ट्वा पिप्पलिसंयुतं चलगदे पेयं सदा सर्पिषा ॥
सम्पाच्याथ चतुर्गुणेन पयसा वा वाजिगन्धायुतम्
सर्पिः पेयमसाध्यवातगदजे शुक्रक्षये दारुणे ॥

रास्ना, पोखरमूल, सहंजनेकी छाल, चीता, सैंधा, गोखरु और पीपल समान भाग लेकरे चूर्ण बनावें।

इसे घीमें मिला कर पीनेसे वातज रोग नष्ट होते हैं।

अथवो उपरोक्त समस्त ओषधियां और असगन्ध ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें और फिर ४ सेर घीमें यह कल्क तथा १६ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे असाध्य वातव्याधियां और भयंकर शुक्रक्षय रोगका नाश होता है।

(५९४९) रास्नाद्यं घृतं तैलञ्च

(र. र. । शूला.)

रास्नाश्वगन्धा कपिकच्छुभूमि-
कूष्माण्डगोकण्टकशालपर्णी ।
छिन्नारुहैरण्डबलाशताह्वा-
पुनर्नवानां विधिनोद्धृतानाम् ॥
प्रत्येकशः पञ्चपलं गृहीत्वा
पचेद्घटेऽपां कृतपादशेषे ॥
शतावरीरसं पूतं दत्त्वात्रपलषोडशम् ।
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं तैलमेरण्डमेव वा ॥
दत्त्वाष्टवर्गकल्कञ्च गुग्गुलोर्वा पलाष्टकम् ।
सिद्धं घृतं च तैलं वा दद्याद्वातगदातुरे ॥
एकजं द्वन्द्वजं चैव सर्वगञ्च विशेषतः ।
आमवातं गदं हन्ति घृतमेतदनुत्तमम् ॥
पार्श्वशूलञ्च हृच्छूलं कटिशूलञ्च नाशयेत् ।
पादमन्याभिसन्धीनां शूलं हन्ति न संशयः ॥

क्वाथ—रास्ना, असगन्ध, कौंचके बीज, भुई-कुम्हेड़ा, गोखरु, शालपर्णी, गिलोय, अरण्डमूल, खरैटी, सोया और पुनर्नवा २५-२५ तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो उसे छान लें।

कल्क—अष्टवर्गकी प्रत्येक ओषधि ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

विधि—२ सेर घी या अरण्डके तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा २ सेर शतावरका रस मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो छान लें।

नोट-उपरोक्त कल्कके स्थानमें ४० तोले शुद्ध गूगल भी डाल सकते हैं।

इस घृत अथवा तैलके सेवनसे एक दोषज, द्विदोषज, और सर्व दोषज आमवात, पार्श्वशूल, हृदयशूल, कटिशूल, पादशूल, मन्याशूल और सन्धीशूल नष्ट होता है।

(५९५०) रोहिण्यादिघृतम् (१)

(च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ५)

रोहिणीकटुका निम्बं मधुकं त्रिफलात्वचः ।
कार्षिका त्रायमाणा च पटोला त्रिवृता पले ॥
द्विपलञ्च मसूराणां साध्यमष्टगुणेऽम्भसि ।
घृताच्छेषं घृतसमं सर्पिषश्च चतुष्पलम् ॥
पिबेत् सम्मूर्छितं तेन गुल्मः शाम्यति पैत्तिकः।
ज्वरस्तृष्णा च शूलं च भ्रममूर्च्छारुचिस्तथा ॥

क्वाथ—कुटकी, नीमकी छाल, मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला और त्रायमाणा १।-१। तोला तथा पटोल और निसोत १०-१० तोले एवं

मसूर १० तोले लेकर सबको अधकुटा करके २ सेर पानी में पकावें और जब आधा सेर पानी शेष रहे तो छानकर उसमें आधा सेर घी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे पैत्तिक गुल्म, ज्वर, तृष्णा, शूल, भ्रम, मूर्च्छा और अरुचिका नाश होता है।

(५९५१) रोहिण्यादिघृतम् (२)

(वृ. नि. र. । बालरोगा.)

रोहिणीनिम्बखदिरपलाशककुभत्वचः।
निःक्वाथ्य तस्मिन्निःक्वाथे सक्षीरं विपचेद् घृतम्॥

कुटकी, नीमकी छाल, खैरसार, पलाशकी छाल और अर्जुनकी छाल १६-१६ तोले लेकर सबको ८ सेर पानीमें पकावें और जब २ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

आधा सेर घीमें यह क्वाथ और आधा सेर दूध मिलाकर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाए तो छान लें।

यह घृत बालकोंके लिये हितकारी है।

(५९५२) रोहितकघृतम् (१)

(भै. र. ; च. द. ; र. र. । प्लीहा. ; वं. से.; वृ. मा. ; वृ. नि. र. । उदरा. ; वृ. यो. त. । त. १०५; ग. नि. । घृता.)

रोहीतकात्पलशतं क्षोदयेद्बदराढकम्।
साधयित्वा जलद्रोणे चतुर्भागावशेषितम्॥
घृतप्रस्थं समावाप्य छागक्षीरं चतुर्गुणम्।
तस्मिन् दद्यादिमान् कल्कान् सर्वांस्तानक्षसम्मितान्॥
व्योषं फलत्रिकं हिङ्गु यमानी तुम्बरु बिडम्।
अजाजी कृष्णलवणं[1] दाडिमं देवदारु च॥
पुनर्नवा विशाला च यवक्षारं सपौष्करम्।
विडङ्गं चित्रकश्चैव हवुषा चविका[2] वचा॥
एभिर्घृतं विपकन्तु स्थापयेद्भाजने शुभे।
द्वितोलकमितां मात्रां व्याधिं बलमवेक्ष्य च॥
रसकेनाथ यूषेण पयसा वापि भोजयेत्।
उपयुक्तघृते त्वस्मिन् व्याधीन् हन्यादिमान् बहून्॥
यकृत्प्लीहोदरश्चैव प्लीहशूलं यकृत्तथा।
कुक्षिशूलश्च हृच्छूलं पार्श्वशूलमरोचकम्॥
विबन्धशूलं शमयेत्पाण्डुरोगं सकामलम्।
छर्द्यतीसारशूलघ्नं तन्द्राज्वरविनाशनम्॥
महारोहीतकं नाम प्लीहानं हन्ति दारुणम्॥

क्वाथ--(१) १०० पल (६। सेर) रुहेड़ेकी छालको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

(२) ४ सेर बेरोंको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क--सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हींग, अजवायन, तुम्बरु, बिड नमक, जीरा, काला नमक, अनार दाना, देवदारु, पुनर्नवा इन्द्रायणकी जड़, जवाखार, पोखरमूल, बायबिड़ंग,

---

१ अजाजीकुष्ठलवणमिति पाठान्तरम्।

२ कारवीति पाठान्तरम्।

चीतामूल, हपुषा, चव और बच, प्रत्येक ओषधि १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

विधि--२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क और ८ सेर बकरीका दूध मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

मात्रा--२ तोले।

अनुपान--यूष अथवा दूध।

इसके सेवनसे यकृत, प्लीहोदर, प्लीहशूल, यकृच्छूल, कुक्षिशूल, हृच्छूल, पार्श्वशूल, अरुचि, विबन्ध, पाण्डु, कामला, छर्दि, अतिसार, तन्द्रा और ज्वरका नाश होता है।

नोट--मूल पाठमें अनुपानमें मांसरस भी लिखा है; परन्तु जो मांसाहारी नहीं हैं उनके लिये उसकी आवश्यकता नहीं है।

(५९५३) **रोहितकघृतम्** (२)

(वा. भ. । चि. अ. १५; ग. नि. । घृता. १; च. सं. । चि. ६ अ. १८; भै. र. । प्लीहा.; व. से. । उदररोगा.; च. द. । प्लीहा. ३८; वृ. मा.)

रोहीतकत्वचः कृत्वा पलानां पञ्चविंशतिम्।
कोलद्विप्रस्थसंयुक्तं कषायमुपकल्पयेत् ॥
पालिकैः पञ्चकोलैस्तु तैः सर्वैश्चापि तुल्यया।
रोहीतकत्वचापिष्टैः घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
प्लीहाभिवृद्धिं शमयत्येतदाशु प्रयोजितम्।
तथा गुल्मोदरश्वासक्रिमिपाण्डुत्व कामलाः ॥

क्वाथ--रुहेड़ेकी छाल २५ पल (१२५ तोले) और बेर २ सेर लेकर दोनोंको अधकुटा करके आठ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

कल्क--पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता और सोंठ ५-५ तोले तथा रुहेड़ेकी छाल २५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत अत्यन्त प्रवृद्ध प्लीहाको शीघ्र ही नष्ट कर देता है। इसके अतिरिक्त यह गुल्म, श्वास, क्रिमि, पाण्डु और कामलामें भी गुणकारी है।

इति रकारादिघृतप्रकरणम्

अथ रकारादितैलप्रकरणम्

(५९५४) **रतिवल्लभाख्यं तैलम्**

(वृ. यो. त. । त. १७४)

सितचन्दनागरुकुङ्कुमामरदारुसिह्लकसारिवा-
मृगनाभिरक्तपटीरवालकमुस्तकुन्दुरुधान्यकैः।
तगरैलवालुकबोलकुष्ठपतङ्गभृङ्गलवङ्गकैः
रजनीशवीरणमूलपीतपटीरयोजनवल्लिभिः ॥
दलनागकेसरजातिकोशमुरासठीबहुलानखै-
र्झलिकाविडालजटावचावरशीघ्रजातिफलैरपि।

मृदुपेषितैस्तिलजं चतुर्दधिवारिधारिजतूदकेन समेन साधु विपाचयेदिदमाख्यया रतिवल्लभम् ॥

रतिवल्लभस्य विलेपनादचिरेण पञ्चशरप्रभवोऽबलासु नरो चिरप्यबलो बली भवतीन्द्रवत् मन्थरप्रमदागणेन न तुष्यति प्रसभं रतौ शतहायनोऽपि समीरपित्तकफामयेन समुज्झितः

कल्क——सफेद चन्दन, अगर, केसर, देवदारु, सिल्हक, शारिवा, कस्तूरी, लाल चन्दन, सुगन्धबाला, नागरमोथा, कुन्दरु, धनिया, तगर, एलबालुक, बोल, कूठ, पतङ्ग काष्ठ, दारचीनी, लौंग, कपूर, खस, पीला चन्दन, मजीठ, तेजपात, नागकेसर, जावत्री, मुरामांसी, कचूर, इलायची, नख नामक सुगन्ध द्रव्य, सुपारी, खट्टासी (जुन्द बेदस्तर), जटामांसी, बच, केसर, पीली खस और जायफल प्रत्येक २ तोले २ माशे लेकर सबको एकत्र पीसकर बारीक कल्क बनावें।

८ सेर तिलके तेलमें यह कल्क, ३२ सेर दही और ८-८ सेर नागरमोथेका क्वाथ तथा लाखका पानी मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे पुरानी नपुंस्कता भी नष्ट हो जाती और कामशक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है।

(५९५५) रसाञ्जनाद्यं तैलम्

(व. से. । नासा रोगा.)

रसाञ्जने सातिविषे मुस्तायां देवदारुणि ।
तैलं विपक्वं नस्यार्थे विदध्याचात्र बुद्धिमान् ॥

कल्क——रसौत, अतीस, नागरमोथा, और देवदारु ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ——उपरोक्त प्रत्येक वस्तु १ सेर लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

२ सेर तेलमें यह कल्क और क्वाथ मिला कर मंदाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी नस्यसे प्रतिश्याय नष्ट होता है।

(५९५६) रसोनतैलम्

(व. से.; वृ. मा. । वाता.; ग. नि. । वाता. १९; च. द. । वातव्या. २२)

रसोनकल्कस्वरसेन पक्वं
तैलं पिबेद्यस्त्वनिलामयार्तः ।
तस्याशु नश्यन्ति हि वातरोगा
ग्रन्था विशाला इव दुर्गृहीताः ॥

ल्हसनके कल्क और स्वरसके साथ तैल सिद्ध करें।

इसे पीनेसे वातज रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(ल्हसनका कल्क १० तोले। तेल १ सेर। ल्हसनका स्वरस ४ सेर।)

(५९५७) रसोनाद्यं तैलम्

(वृ. नि. र. । आमवाता.)

दधिमस्तुगुडक्षीरपोतकामाषपिष्टकम् ।
लशुनस्य तुलामेकां जलद्रोणे विपाचयेत् ॥

चतुर्भागावशेषं तु कर्षयेदवतारयेत् ।
तत्कषायं परिश्राव्य विपचेत्ताम्रभाजने ॥
चित्रतैलाढकं दद्याद्भेषजानि प्रदापयेत् ।
त्रिफला त्र्यूषणं हिङ्गु सूक्ष्मैला चित्रकं बिडम् ॥
सौवर्चलं विडङ्गानि दीप्यकं ग्रन्थिकं तथा ॥

क्वाथ—गुड, पोईका शाक, उड़दकी पिट्ठी और ल्हसन प्रत्येक १ सेर ४५ तोले (मिलित ६। सेर) ले कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, छोटी इलायची, चीता, बिड लवण, संचल (काला नमक), बायबिड़ंग, अजवायन और पीपलामूल समान भाग मिश्रित ४० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

८ सेर अण्डीके तेलमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क तथा ८-८ सेर दहीका पानी, और दूध मिलाकर मंदाग्नि पर ताम्र पात्रमें सिद्ध करें ।

(इसे पीनेसे आमवात रोग नष्ट होता है ।)

राजवल्लभतैलम्

(वृ. मा. । नेत्र रोगा.)

प्र. सं. ३५२४ " नृपवल्लभ तैलम् " देखिये ।

(५९५८) रालतैलम् (१)

(नपुंसकामृतार्णव । त. ६)

श्वेतचन्दनचूर्णं च चतुःपलप्रमाणतः ।
द्विगुणं सालनिर्यासं लोबानं द्विपलं तथा ॥
लवङ्गं वै द्विकर्षं च सर्वान्सञ्चूर्ण्य भावयेत् ।
संकर्ष्य विधिना तैलं वृक्कशिश्नं च लेपयेत् ॥
षण्ढत्वनाशनं ज्ञेयं वृषणबलप्रदं परम् ॥

सफेद चन्दनका चूर्ण २० तोले, राल ४० तोले, लोबान १० तोले और लौंग २॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस कर पातालयन्त्रसे तेल निकालें ।

इसे वृक्क (गुरदों) तथा शिश्न पर लेप करनेसे नपुंसकता नष्ट होती है ।

(५९५९) रालतैलम् (२)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

समुद्धरेत्सर्जतैलं यन्त्रे च नलिकाभिधे ।
विमर्दनं तेन तनौ पक्षाघातं विनाशयेत् ॥

नलिका यन्त्र (भबके) से रालका तेल निकाल कर मालिश करनेसे पक्षाघात नष्ट होता है ।

(५९६०) रास्नातैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

रास्नामूलस्य कुर्वीत द्वे शते च बलाशतम् ।
शतावरीगुडूचीभ्यां वरुणाच्च शतं शतम् ॥
निर्गुण्डीशिग्रुकैरण्डशिरीषारग्वधादपि ।
श्वदंष्ट्राभूतिकाभ्यां च पृथक् पञ्चपलं क्षिपेत् ॥
तोयद्रोणेषु शतसु साधयेत्सूक्ष्मकुट्टितम् ।
द्रोणावशेषे तैलस्य शुद्धस्यार्धार्मणं पचेत् ॥
द्रोणा दश च दुग्धस्य घृतस्यार्धाढकं तथा ।
तदैकध्यं विपक्तव्यं गर्भं चात्र समावपेत् ॥
मधुकं मालतीपुष्पं मञ्जिष्ठां मदयन्तिकाम् ।
काश्मर्याण्यजमोदां च लवलीं तालमस्तकम् ॥

आत्मगुप्ताफलं मूर्वां वार्ताकानि मधूलिकाम् ।
सहदेवामथैरण्डं रोहिषं नवमालिकाम् ॥
कायस्थां च वयस्थां च मधुपर्णी च चित्रकम् ।
महापुरुषदन्तां च बलां सकदलीफलाम् ॥
देवदार्वगरुश्रेष्ठं चन्दनं परिपेलवम् ।
नीलोत्पलमुशीराणि मृद्वीकां साम्लवेतसाम् ॥
एभिः पलशतैः पिष्टैः सम्यक् तैलं विपाचयेत् ।
भोजनाभ्यञ्जने पाने बस्तौ नस्ये च शस्यते ॥
वातव्याधिषु सर्वेषु क्षतक्षीणे शिरोग्रहे ।
अपस्मारे रक्तगुल्मे पुंसां नष्टे च रेतसि ॥
रास्नातैलमिदं श्रेष्ठं बलमांसविवर्धनम् ॥

क्वाथ—रास्नामूल १२॥ सेर, खरैटीकी जड़ ६। सेर, शतावर ६। सेर, गिलोय ६। सेर, बरनेकी छाल ६। सेर तथा संभालु, सहंजनेकी छाल, अरण्डमूल, सिरसकी छाल, अमलतास, गोखरु और अजवायन ५-५ पल (२५-२५ तोले) ले कर सबको एकत्र कूट कर बारीक करें और फिर उसे १०० द्रोण (८० मन) पानीमें पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो क्वाथको छान लें।

कल्क—मुलैठी, मालतीके फूल, मजीठ, मदयन्तिका, खम्भारीके फल, अजमोद, लवलीफल (हरफारेवड़ी), ताल मस्तक, कौंचके बीज, मूर्वा, बैंगन, जलमुलैठी, सहदेवी, अरण्डमूल, रोहिष तृण, नवमल्लिका, काकोली, क्षीरकाकोली, गिलोय, चीता, महाशतावर, खरैटी, केलेकी फली, देवदारु, अगर, चन्दन, मोथा, नीलोफर, खस, मुनक्का और अम्लबेत सब समान भाग मिश्रित ६। सेर ले कर सबको पीस लें।

विधि—१६ सेर शुद्ध तिल तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा १० द्रोण (८ मन) दूध और ४ सेर घी मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो छान लें।

इसे भोजन, पान, नस्य, अभ्यंग और बस्ति द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

यह तेल वातव्याधि, क्षतक्षीण, शिरोग्रह, अपस्मार, रक्तगुल्म और शुक्रनाशमें उपयोगी है।

इसके सेवनसे बल और मांसकी वृद्धि होती है।

(५९६१) रास्नादितैलम्

(च. स. । चि. स्था. ६ अ. २८)

रास्नाशिरीषयष्ट्याह्वशुण्ठीसहचरामृताः ।
श्योनाकदारुसम्पाकाहयगन्धात्रिकण्टकाः ॥
एषां दशपलान् भागान् कषायमुपकल्पयेत् ।
ततस्तेन कषायेण सर्वगन्धैश्च कार्षिकैः ॥
दध्यारनालमाषाम्बुमूलकेक्षुरसैः शुभैः ।
पृथक् प्रस्थोन्मितैः सार्द्धं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
प्लीहमूत्रग्रहश्वासकासमारुतरोगनुत् ॥

क्वाथ—रास्ना, सिरसकी छाल, मुलैठी, सोंठ, पियाबांसा, गिलोय, सोनापाठा, देवदारु, अमलतास असगन्ध और गोखरु १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर सबको अधकुटा करके ८ गुने (५५ सेर) पानीमें पकावें और जब चौथाई पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, कपूर, कंकोल, अगर, सिल्हक और लौंग १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

विधि--२ सेर तिल तैल में उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा २-२ सेर दही, आरनाल, उड़दका क्वाथ, मूलीका रस और ईखका रस मिला कर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल प्लीहा, मूत्रावरोध, श्वास, खांसी और वातज रोगोंको नष्ट करता है।

(५९६२) रास्नापूतिकतैलम्

(यो. र.)

दशमूलबलादारु अश्वगन्धा शतावरी।
वरुणैरण्डनिर्गुण्डीतर्कारीशिग्रुमोरटम्॥
सहाचरं चित्रमूलं करञ्जाङ्कोलमूलकम्।
पुनर्नवां च भूपीलु अर्कपुष्पी दुरालभा॥
जीवन्ती विषतिन्दुश्च वातारिर्हिंस्राशिग्रुकम्।
अलर्कयवकोलं च कुलित्थानां कषायकम्॥
एतेषां च समां रास्नां पूतिकं च तयोः समम्।
अष्टभागावशेषं तु कषायमवतारयेत्॥
तत्पादं तिलतैलं च त्वजाक्षीरं च तत्समम्।
गुग्गुलुं तगरं मांसीं त्रिकटुत्रिफलानि च॥
चातुर्जातं कचोरं च विडङ्गामरदारु च।
हिङ्गुरास्नावचातिक्तापाठायष्टिकचित्रकम्॥
प्रियङ्गु पिप्पलीमूलं चन्दनं चव्यदीप्यकम्।
वरालं चम्पकं कुष्ठं मञ्जिष्ठामिशिसर्षपम्॥
जातीफलं सुगन्धं च पाठोशीरं समांशकम्।
एतत्तैलस्य षष्ठांशं कल्कद्रव्याणि दापयेत्॥
सुमुहूर्ते सुनक्षत्रे नववस्त्रेण पीडयेत्।
पानलेपननस्याद्यशिरोबस्तिषु पूजितम्॥
धनुर्वातान्तरायामं गृध्रसीमपबाहुकम्।
आक्षेपके व्रणायामे विश्वाच्यामपतन्त्रके॥
आढ्यवाते हनुस्तम्भे शिरोवातापतानके।
भ्रूशंखकर्णनासाक्षिजिह्वास्तम्भेऽपबाहुके॥
कलायखञ्जतापङ्गु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुते।
अर्दिते पादहर्षे च पक्षघाते प्रशस्यते॥
उरुस्तम्भं सुप्तवातं नाशयेन्नात्र संशयः।
रास्नापूतीकनामैतत्तैलमात्रेयनिर्मितम्॥

दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, खरैटी, देवदारु, असगन्ध, शतावर, बरनेकी छाल, अरण्डकी जड़, संभालु, अरणी, सहंजनेकी छाल, क्षीरमोरट, पियाबांसा, चीतेकी जड़, करंज, अंकोलकी जड़, पुनर्नवा, भूपीलु, सूरजमुखी, धमासा, जीवन्ती, कुचला, लाल अरण्डकी जड़, जटामांसी, सहंजनेकी छाल, सफेद आक, जौ, बेर और कुलथी १-१ तोला; रास्ना ३७ तोले और पूतिकरंजकी छाल ७४ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ८ गुने (१४ सेर ६४ तोले) पानीमें पकावें और जब १४८ तोले पानी शेष रह जाय तो छान लें।

तदनन्तर इस क्वाथमें ३७ तोले तिलका तेल, ३७ तोले बकरीका दूध और निम्न लिखित कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

कल्क द्रव्य---गूगल, तगर, जटामांसी, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, कचूर, बायबिड़ंग, देवदारु, हींग, रास्ना, बच, कुटकी, पाठा, मुलैठी, चीता, फूलप्रियंगु, पीपलामूल, सफेद चन्दन, चव, अजवायन, लौंग, चम्पा, कूठ, मजीठ, सौंफ. सरसों, जायफल, सुगन्ध तृण, पाठा और खस;

सब समान भाग मिश्रित तेलका छठा भाग (प्रत्येक २ माशे) लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

इसे पान, लेपन, नस्य और शिरोबस्तिमें प्रयुक्त करना चाहिये।

इसके सेवनसे धनुर्वात, अन्तरायाम्, गृध्रसी, अपबाहुक, आक्षेपक, व्रणायाम, विश्वाची, अपतन्त्रक, भ्रूस्तम्भ; शंख, कर्ण, नासा, अक्षि, और जिह्वा स्तम्भ; कलायखञ्जता, पंगुता सर्वांग वात, एकांग वात, आढ्य वात, हनुस्तम्भ, शिरो वात, अपतानक, अर्दित, पादहर्ष, पक्षवात, उरुस्तम्भ और सुप्तवातका नाश होता है।

(५९६३) **रुद्रगुडूचीतैलम् (महा)**

(भै. र. । वातरक्ता.)

अमृतायास्तुलां सम्यग् जलद्रोणे विपाचयेत् ।
पिचुमर्दत्वचं क्षुण्णां भाजनप्रमितां तथा ॥
जलद्रोणे विनिष्क्वाथ्य ग्राह्यं पादावशेषितम् ।
प्रस्थश्च कटुतैलस्य गोमूत्रश्चापि तत्समम् ॥
अमृता वाकुची कुम्भी करवीरफलत्रिकम् ।
दाडिमं निम्बबीजश्च रजन्यौ बृहतीद्वयम् ॥
नागबला त्रिकटुकं पत्रं मांसी पुनर्नवा ।
ग्रन्थिकं विकसाश्वाह्वा शतपुष्पा च चन्दनम् ॥
शारिवे द्वे सप्तपर्णो गोमयस्य रसस्तथा ।
एषां कर्षमितैर्भागैः साधयेन्मृदुनाग्निना ॥
वातरक्तं निहन्त्याशु सर्वोपद्रवसंयुतम् ।
कुष्ठश्चाष्टादशविधं विसर्पश्च व्रणामयम् ॥
महारुद्रगुडूच्याख्यं तैलं भुवनदुर्लभम् ॥

क्वाथ—(१) ६। सेर गिलोयको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

(२) ४ सेर नीमकी छालको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और आठ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—गिलोय, बाकुची, दन्तीमूल, कनेरकी जड़, हर्र, बहेड़ा, आमला, अनारका फल, नीमके बीज (निबौली), हल्दी, दारुहल्दी, कटेली, बड़ी कटेली, नागबला, सोंठ, मिर्च, पीपल, तेजपात, जटामांसी, पुनर्नवा, पीपलामूल, मजीठ, असगन्ध, सोया, सफेद चन्दन, दो प्रकारकी सारिवा और सतौनेकी छालका चूर्ण १।-१। तोला तथा गायके गोबरका रस २॥ तोले ।

विधि—२ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त दोनों क्वाथ कल्क और २ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल सर्वोपद्रव युक्त वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ठ, विसर्प और व्रणोंको नष्ट करता है।

(५९६४) **रुद्रतैलम्** (१)

(भै. र. । शिरोरो.)

जेपालद्रोणधुस्तूरशिग्रुशक्राशनस्य च ।
सूर्यावर्त्तस्य सूर्यस्य पत्राणां स्वरसं पृथक् ॥
जम्बीरशृङ्गवेरस्य रसं दत्त्वा समं समम् ।
कटुतैलस्य पात्रन्तु शोधयित्वा पचेद् भिषक् ॥
रजनीद्वयमञ्जिष्ठाकटुफलं कृष्णजीरकम् ।
त्रिकटुः पिप्पलीमूलं शारिवे द्वे विडङ्गकम् ॥

रास्ना दारुबला निम्बं मुस्तकं चन्दनं तथा ।
परशू द्वौ स्नुहीमूलं मूर्वापामार्गमूलकम् ॥
स्वरसद्रव्यमेतेषां कल्कं दत्त्वा तु पादिकम् ।
मृत्पात्रे सुदृढे चैव पाचयेत्तीव्रवह्निना ॥
बलासमूर्द्ध्वगश्चैव नाशयेत् त्रिदिनाद्ध्रुवम् ।
मुखकर्णाक्षिरोगांश्च कफशोणितसंस्रवान् ॥
शिरोरोगं सन्निपातं श्लीपदं गलगण्डकम् ।
अभ्यङ्गान्नाशयेदेतान् पानात् कासं व्यपोहति ॥
कालाग्निरुद्रेण प्रोक्तं रुद्रतैलमिदं पुरा ॥

द्रवपदार्थ—जमालगोटेके पत्तोंका रस ८ सेर, गूमा (द्रोण पुष्पी) के पत्तोंका रस ८ सेर, धतूरके पत्तोंका रस ८ सेर, सहंजनेके पत्तोंका रस ८ सेर, भांगके पत्तोंका रस ८ सेर, हुलहुलके पत्तोंका रस ८ सेर और आकके पत्तोंका रस ८ सेर तथा जम्बीरी नीबू और अदरकका रस ८-८ सेर ।

कल्क—हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, कायफल, काला जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, दो प्रकारकी सारिवा, बायबिड़ंग, रास्ना, देवदारु, खरैंटी, नीमकी छाल, नागरमोथा, सफेद चन्दन, कोदालिया, कुडालिया (कन्द गुडूची), सेहुण्ड (सेंड) की जड़, मूर्वा, अपामार्ग (चिरचिटे) की जड़, और पूर्वोक्त जमालगोटा इत्यादि समस्त ओषधियां (जिनके रस प्रयुक्त हुवे हैं) समान भाग मिश्रित १ सेर ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

विधि—८ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त समस्त द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर दृढ़ मृत्पात्रमें तीव्राग्नि पर पकावें। जब द्रव पदार्थ जल जाएं तो तेलको छान लें ।

यह तेल ऊर्ध्व जत्रुगत कफ रोगोंको तीन दिनमें ही नष्ट कर देता है । यह तेल मुख रोग, कर्ण रोग, नेत्र रोग, कफस्राव, रक्तस्राव, शिरोरोग, सन्निपात, श्लीपद और गलगण्डको मालिश करनेसे, तथा खांसीको पीनेसे नष्ट करता है ।

(५९६५) रुद्रतैलम् (२)

(भै. र. । वातरक्ता.)

पुनर्नवा निशा निम्बं वार्त्ताकुबृहतीत्वचम् ।
कण्टकारी करञ्जश्च निर्गुण्डी वृषमूलकम् ॥
अपामार्गं पटोलश्च धुस्तूरं दाडिमीफलम् ।
जयन्तीमूलकं दन्ती प्रत्येकं कार्षिकद्वयम् ॥
त्रिफलायाः प्रदातव्यं द्विकर्षश्च पृथक् पृथक् ।
दत्वा छिन्नसहायाश्च द्वात्रिंशच्च पलानि च ॥
पाचयेत् भाजने तोये चतुर्भागावशेषितम् ।
कटुतैलस्य च प्रस्थं दुग्धश्च तत्समं भवेत् ॥
वासकस्वरसप्रस्थं मन्दमन्देन वह्निना ।
गन्धं शटी च कक्कोलं चन्दनं ग्रन्थिकं नखी ॥
पूतिकं केशरं कुष्ठं हन्त्यस्थिमज्जगं पुनः ।
हस्तपादाङ्गुलीसन्धिगलितं स्फुटितं तथा ॥
कृष्णश्वेतं तथा रक्तं नानावर्णं सदाहकम् ।
पामां विचर्चिकां कण्डूं छायां त्वचश्च कालिनीम् ॥
मसूरिकां मण्डलश्च ज्वलनश्च विसर्पकम् ।
नाडीव्रणं घर्महीनं गात्रवैवर्ण्यदद्रुकम् ॥
निहन्ति रक्तदोषश्च भास्करस्तिमिरं यथा ॥

कल्क—पुनर्नवा, हल्दी, नीमकी छाल, बैंगन,

बड़ी कटेली, दालचीनी, छोटी कटेली, करञ्ज, संभालु, बासेकी जड़, अपामार्ग (चिरचिटा), पटोल, धतूरा, अनारका फल, जयन्तीकी जड़, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा और आमला २।।-२।। तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—२ सेर गिलोयको ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें।

विधि—२ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त कल्क, क्वाथ, २ सेर दूध और २ सेर बासेका रस मिला कर मन्दाग्नि पर सिद्ध करें।

इस तेलमें गन्धार्थ अगर, कचूर, कंकोल, सफेद चन्दन, गठीवन, नखी, खट्टासी (जुन्द बेद-स्तर), केसर और कूठ भी डालना चाहिये।

यह तैल अस्थि और मज्जागत गलित कुष्ठको (कि जिसमें हाथ पैरोंकी अंगुलियां और जोड़ गल जाते हैं या स्फुटित हो जाते हैं उसे) भी नष्ट कर देता है; तथा कृष्ण, श्वेत और रक्त कुष्ठ, अनेक रंगवाला कुष्ठ, दाह युक्त कुष्ठ, पामा, विच-र्चिका, कण्डू, छाया, मसूरिका, मण्डल, अग्नि वि-सर्प, नाड़ीव्रण, पसीना न आना, गात्र विवर्णता, दाद, और रक्त दोषोंको नष्ट करता है।

(५९६६) रुद्रतैलम् (३) (महा)

(भै. र. ; धन्व. । वातरक्ता.)

पुनर्नवा निशा निम्बं वार्त्ताकुदाडिमीफलम् ।
बृहत्यौ पूतिकामूलं वासकं सिन्दुवारकम् ॥
पटोलपत्रं धुस्तूरमपामार्गं जयन्तिका ।
दन्ती वरा पृथक् सर्वं कर्षद्वयमितं पुनः ॥
विषस्य द्विपलं देयं पृथक् व्योषं पलत्रयम् ।
प्रस्थश्च सार्षपं तैलं प्रस्थाम्बु वृषपत्रजम् ॥
गुडूच्यास्तु चतुःषष्टिपलक्वाथरसेन च ।
वारिप्रस्थेन पक्तव्यं महारुद्रमिदं शुभम् ॥
वातरक्तं निहन्त्याशु नानादोषसमुत्थितम् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं हन्ति वर्णाग्निवर्द्धनम् ॥
क्रिमिं दुष्टव्रणञ्चैव दाहं कण्डूं निहन्ति च ।
अस्वेदनं महास्वेदमभ्यङ्गादेव नश्यति ॥

कल्क—पुनर्नवा, हल्दी, नीमकी छाल, बैंगन, अनारका फल, छोटी और बड़ी कटेली, कर-ञ्जकी जड़, बासा, संभालु, पटोल पत्र, धतूरा, अपामार्ग (चिरचिटा), जयन्ती, दन्तीमूल, हर्र, बहेड़ा और आमला २।।-२।। तोले; विष (बछ-नाग) १० तोले और सोंठ, मिर्च, पीपल १५-१५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

द्रव पदार्थ—बासेके पत्तोंका रस २ सेर, गिलोयका क्वाथ या स्वरस ८ सेर और पानी २ सेर।

विधि—२ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त कल्क तथा द्रव पदार्थ मिला कर मंदाग्नि पर पकावें और जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल विविध दोषोंसे उत्पन्न वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ठ, कृमि, दुष्ट व्रण, दाह, कण्डू, अस्वेद (पसीना न आना) और अधिक स्वेद आना आदि विकारोंको नष्ट करके सौंदर्य और अग्निकी वृद्धि करता है।

इति रकारादितैलप्रकरणम्

अथ रकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(५९६७) रसायनारिष्टः

(गदनिग्रह)

समूलां पिप्पलीं शृङ्गीं बृहतीमश्मभेदकम् ।
पाटलां देवकाष्ठञ्च श्वदंष्ट्रामभयां तथा ॥
षोडशपलमेकैकं कोलानामाढकं पृथक् ।
दन्तीचित्रकमूलानां पलानि पञ्चविंशतिम् ॥
चतुर्गुणे जले पक्त्वा ग्राह्यमर्धावशेषितम् ।
शीते समावपेद्भाण्डे प्रलिप्ते मधुसर्पिषा ॥
खण्डस्य द्विशतं शुद्धं तद्वल्लोहस्य दापयेत् ।
पत्रीकृतं तिलोत्सेधं सूक्ष्मचूर्णान्यमूनि च ॥
प्रियङ्गुं पिप्पलीं लोध्रं मृद्वीकां चैलवालुकम् ।
क्रमुकं शतपुष्पां च निम्बं तेजस्विनीमपि ॥
पलिकं देवदारोश्च खदिराच्च चतुष्पलम् ।
क्षौद्रप्रस्थद्वयं चापि समावाप्य घटे शुभे ॥
सौम्ये पुष्ये तथा हस्ते रोहिण्यामुत्तरासु च ।
दशरात्र स्थितः पेयोऽरिष्टश्चात्रेयपूजितः ॥
अश्विभ्यां कथितः पूर्वं रसायनवरो ह्ययम् ।
गात्राऽग्निबलापेक्षी पिबेद्स्य हिताशनः ॥
धन्यः पुष्टिकरो बल्यो वलीपलित नाशनः ॥

पीपल, पीपलामूल, काकड़ासिंगी, बड़ी कटेली, पाषाणभेद, पाढलकी छाल, देवदारु, गोखरु, और हर्र १-१ सेर तथा बेर ४ सेर, एवं दन्तीमूल और चीतेकी जड़ २५-२५ छटांक (प्रत्येक १ सेर ९ छटांक) ले कर सबको अधकुटा करके ८ गुने (१२९ सेर) पानीमें पकावें और जब आधा (६४॥ सेर) पानी शेष रहे तो छान लें।

तदनन्तर उसके ठण्डा हो जाने पर एक मटकेमें घी और शहदका लेप करके उसमें यह क्वाथ और निम्न लिखित प्रक्षेप द्रव्य डालकर सबको अच्छी तरह मिला कर मटकेका मुख बन्द कर दें और १० दिन पश्चात् छान लें।

प्रक्षेप द्रव्य--खांड १२॥ सेर, शुद्ध लोह चूर्ण १२॥ सेर तथा फूलप्रियंगु, पीपल, लोध, मुनक्का, एलवालु, सुपारी, सोया, नीमकी छाल, मूर्वा और देवदारु ५-५ तोले एवं खैरसार २० तोले और शहद ४ सेर।

यह आसव रसायन, बलकारक, पौष्टिक और बलिपलि नाशक है।

रसोनसन्धानम्

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

प्र. सं. ५१७३ " रसोन पिण्ड (महा) " देखिये ।

(५९६८) रसोनसुरा

(चक्रदत्त । आमवाता.)

वल्कलायाः सुरायास्तु सुपक्वायाः शतं घटे ।
ततोऽर्धेन रसोनन्तु संशुद्धं कुट्टितं क्षिपेत् ॥
पिप्पलीपिप्पलीमूलमजाजीकुष्ठचित्रकम् ।
नागरं मरिचं चव्यं चूर्णितञ्चाक्षसम्मितम् ॥
सप्ताहात्परतः पेया वातरोगामनाशिनी ।
कृमिकुष्ठक्षयानाहगुल्मार्शःप्लीहमेहनुत् ॥
अग्निसन्दीपनी चैव पाण्डुरोगविनाशिनी ॥

एक शुद्ध घड़ेमें (१२॥ सेर) बल्कला नामक निर्मल सुरा और ३ सेर १० तोले कुटा हुवा छिलके रहित ल्हसन एवं १।-१। तोला पीपल, पीपलामूल, जीरा, कूठ, चीतामूल, सोंठ, काली मिर्च, और चवका चूर्ण डालकर सबको अच्छी तरह मिलाकर घड़ेका मुख बन्द करके रख दें और सात दिन पश्चात् निकाल कर छान लें।

इसके सेवनसे आमवात, कृमि, कुष्ठ, क्षय, आनाह, गुल्म, अर्श, प्लीहा और प्रमेह तथा पाण्डु-का नाश होता एवं अग्नि दीप्त होती है।

रसोनासवः

(वृ. नि. र. । आमवात.)

रसोन पिण्ड प्र. सं. ५१७३ तथा प्र. सं. ५९२७ देखिये।

(५९६९) रोध्रासवः

(ग. नि. । आसवा. ६; वा. भ. । चि. अ. १२ प्रमेहा.)

रोध्रं शठीं पुष्करमूलमेलां
मूर्वां विडङ्गं त्रिफलां यवानीम्।
चव्यं प्रियङ्गुं क्रमुकं विशालां
किराततिक्तं कटुरोहिणीं च॥
भार्गीनतं चित्रकपिप्पलीनां
मूलं सकुष्ठातिविषां च पाठाम्।
कलिङ्गकान् केसरमिन्द्रसाह्वं
नखं सपत्रं मरिचं[1] प्लवं च॥

[1] वा. भ. में मरिच के स्थानपर दालचीनी है।

द्रोणेऽम्भसः कर्षसमानि पक्त्वा
पूते चतुर्भागजलावशेषे।
रसेऽर्धभागे मधुनः प्रदाय
पक्षं निधेयो घृतभाजनस्थः॥
रोध्रासवोऽयं कफपित्तमेहा-
न्क्षिप्रं निहन्याद्द्विपल प्रयोगात्।
पाण्ड्वामयार्शांस्यरुचिं ग्रहण्या
दोषं किलासं विविधं च कुष्ठम्॥

लोध, कचूर, पोखरमूल, इलायची, मूर्वा, बायविडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजवायन, चव, फूलप्रियंगु, सुपारी, इन्द्रायणकी जड़, चिरायता, कुटकी, भरंगी, तगर, चीता, पीपलामूल, कूठ, अतीस, पाठा, इन्द्रजौ, नागकेसर; कुड़ेकी छाल, नखी, तेजपात, काली मिर्च, और मोथा १।-१। तोला लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

तदनन्तर उसमें ४ सेर शहद मिला कर सबको घृतसे चिकने किये हुवे पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द करके रख दें और १५ दिन पश्चात् निकाल कर छान लें।

मात्रा—१० तोला।

इसके सेवनसे कफज और पित्तज प्रमेह अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त यह पाण्डु, अर्श, अरुचि, ग्रहणी दोष, किलास और अनेक प्रकारके कुष्ठोंको भी नष्ट करता है।

(व्यवहारिक मात्रा—२—तोले।)

(५९७०) **रोहितकारिष्टः**

(भैषज्य रत्नावलि, शा. सं. । खं. २ अ. १०)

रोहीतकतुलामेकां चतुर्द्रोणेजले पचेत् ।
पादशेषे रसे पूते शीतेपलशतद्वयम् ॥
दद्याद् गुडस्य धातक्याः पलषोडशिका मता ।
पञ्चकोलं त्रिजातञ्च त्रिफलाञ्च विनिक्षिपेत् ॥
चूर्णयित्वा पलांशेन ततो भाण्डे निधापयेत् ।
मासादूर्ध्वं च पिबतां सर्वोदररुजां जयेत् ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाग्रहण्यऽर्शांसि कामलाम् ।
कुष्ठशोफारुचिहरो रोहीतकारिष्ट संज्ञितः ॥

६। सेर रुहेड़ेकी छालको अधकुटा करके ८ द्रोण (१२८ सेर) पानीमें पकावें और जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

तदनन्तर जब वह काथ ठंडा हो जाय तो उसमें १२॥ सेर गुड़, १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण तथा ५-५ तोले पीपल पीपलामूल, चव, चीतामूल, सोंठ, दालचीनी, इलायची, तेजपात, हर्र, बहेड़ा और आमलेका चूर्ण, मिला कर सबको घृतसे चिकने किये हुवे मिट्टीके पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें; और १ मास पश्चात् निकाल कर छान लें।

इसके सेवनसे प्लीहा, गुल्म, अष्ठीला, ग्रहणी, अर्श, कामला, कुष्ठ, शोथ, और अरुचिका नाश होता है।

(मात्रा—२ तोले ।)

(५९७१) **रोहीतकासवः** (१)

(गदनिग्रह.)

रोहीतकतुलामेकां चतुर्द्रोणेऽम्भसःपचेत् ।
द्रोणशेषे रसे तस्मिन् पूते शीते प्रदापयेत् ॥
पलानि खलु धातक्या षोडश द्विशतं गुडात् ।
पलं पृथक् त्रिजातस्य पञ्चकोलपलं तथा ॥
चूर्णीकृतं क्षिपेत्सर्वं घृतलिप्ते तु भाजने ।
पक्षादूर्ध्वं पिबेचापि ततो मात्रां यथाबलम् ॥
प्लीहं प्लीहोदरं चैव प्लीहशूलं तथैव च ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च तथा सर्वमरोचकम् ॥
हन्ति विबन्धशूलञ्च पाण्डुरोगं सकामलम् ।
नाशयेच्छर्द्यतीसारं ज्वरं जीर्णं तथैव च ॥
रोहीतकासवो ह्येष प्लीहं च शमयेद् ध्रुवम् ॥

६। सेर रुहेड़ेकी छालको १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छान लें; एवं उसके शीतल हो जाने पर उसमें निम्न लिखित प्रक्षेप द्रव्य मिला कर सबको मिट्टीके स्वच्छ और घृतसे चिकने पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १५ दिन पश्चात् निकाल कर छान लें।

प्रक्षेप द्रव्य—धायके फूलोंका चूर्ण १ सेर, गुड़ ६। सेर तथा दालचीनी, तेजपात, इलायची, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठका चूर्ण ५-५ तोले।

इसके सेवनसे प्लीहा, प्लीहोदर, प्लीहाशूल, हृच्छूल, पार्श्वशूल, हर प्रकारकी अरुचि, मलावरोध, शूल, पाण्डु, कामला, छर्दि, अतिसार, तथा जीर्ण-ज्वर नष्ट होता है।

यह आसव तिल्लीको तो अवश्यमेव नष्ट कर देता है।

(मात्रा—२ तोले ।)

नोट—रोहित्कारिष्ट और इस प्रयोगमें बहुत ही थोड़ा भेद है।

(५९७२) **रोहीतकासवः** (२)

(गदनिग्रह)

रोहीतकशतमेकं क्वथितं द्रोणे चतुर्थशेषे तु।
तस्मिन्गुडशतमेकं योज्यं शेषैः सचूर्णितैरेभिः ॥
पलमेकं त्रिफलाया देयं त्रिपलश्च धातकीपुष्पात्
पलिकश्च पञ्चकोलाद् घृतभाण्डे स्थापयेत् पक्षम्॥
ज्वरगुल्मार्शःप्लीहरुगस्थिग्रहपाण्डुरोगघ्नः ॥

६। सेर रुहेड़ेकी छालको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

तदनन्तर उसमें ६। सेर गुड़, ५-५ तोले हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण, १५ तोले धायके फूलोंका चूर्ण, और ५-५ तोले पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल और सोंठका चूर्ण मिलाकर सबको घृतसे चिकने मिट्टीके पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और १५ दिन पश्चात् छान लें।

इसके सेवनसे ज्वर, गुल्म, अर्श, प्लीहा, अस्थिग्रह और पाण्डु रोग नष्ट होता है।

(मात्रा--२ तोले।)

(५९७३) **रोहीतकासवः** (३)

(गदनिग्रह)

तुलाद्वयं रोहितमूलकानां
द्विद्रोणमात्रेण जलेन पक्त्वा।
क्षेप्यं गुडस्य द्विशतं पलाना-
मष्टादश स्युस्त्रिफला पलानि ॥
लवङ्गजातीफलधातकीनां
पलानि लोहस्य षडेव दद्यात्।
देयं चतुर्जातकपञ्चकोलं
पृथक् पृथक् पञ्चपलं तथैव ॥
गुल्मज्वरारोचकहृद्विकार-
भगन्दरप्लीहनिपीडितानाम्।
रक्तामयश्वासनीपीडितानां
सदासवोऽयं विधिनाप्रयोज्यः ॥

१२॥ सेर रुहेड़ेकी छालको ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

तदनन्तर उसमें १२॥ सेर गुड़; ६-६ पल (३०-३० तोले) हर्र, बहेड़ा, आमला, लौंग, जायफल, धायके फूल और लोहका चूर्ण तथा २५-२५ तोले दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, पीपल, पीपलामूल, चव, चीना और सोंठका चूर्ण मिला कर सबको घृतसे चिकने मिट्टीके पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें। (और १५ दिन पश्चात् छान लें।)

इसके सेवनसे गुल्म, ज्वर, अरुचि, हृद्विकार, भगन्दर, तिल्ली, रक्तदोष, और श्वास नष्ट होता है।

(मात्रा--२ तोले।)

इति रकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्



अथ रकारादिलेपप्रकरणम्

(५९७४) **रक्तचन्दनादिलेपः**

(शा. सं । ख. ३ अ. ११)

चन्दनोशीरयष्ट्याह्वबलाव्याघ्रनखोत्पलैः ।
क्षीरपिष्टैः प्रलेपः स्याद्रक्तपित्तशिरोरुजि ॥

लाल चन्दन, खस, मुलैठी, खरैटीकी जड़, नखी और नीलोत्पल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर दूधके साथ पीस लें।

इसका लेप करनेसे रक्तपित्त और शिरपीड़ा नष्ट होती है।

(५९७५) **रक्तचन्दनादिशिरोलेपः**

(रा. मा. । छर्दि.)

अरुणचन्दनचन्दनवालकै-
र्नलदपद्मकतुल्यकृतांशकैः ।
शिरसि लेपनमाचरतां नृणां
तृट् प्रयात्युपशान्तिमसंशयम् ॥

लाल चन्दन, सफेद चन्दन, सुगन्धबाला, खस, और पद्माक समान भाग ले कर सबको (पानीके साथ) एकत्र पीस लें।

शिर पर इसका लेप करनेसे तृषा अवश्य नष्ट हो जाती है।

(५९७६) **रक्ताश्वमारपुष्पादिलेपः**

(वृ. मा. । ज्वरा.)

रक्ताश्वमारपुष्पं च धात्री धान्यं वचामयम् ।
पिष्ट्वा कोष्णो ज्वरे कार्यो लेपो मूर्धरुजापहः ॥

लाल कनेरके फूल, आमला, धनिया, बच, और कूठ समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला-कर पानीके साथ पीस लें।

इसे मन्दोष्ण करके लेप करनेसे ज्वर सम्बन्धी शिर पीड़ा शान्त होती है।

(५९७७) **रक्षोघ्नादिलेपः**

(वृ. मा. । क्षुद्र रोगा.)

रक्षोघ्नशर्वरीद्वयमञ्जिष्ठागैरिकाज्यबस्तपयः।
सिद्धेन लिप्तमाननमुद्यच्छरदिन्दुबिम्बवद् भाति॥

सरसों, हल्दी, दारु हल्दी, मजीठ और गेरु का समान भाग चूर्ण ले कर उसे घीमें घोटें।

इसे बकरीके दूधमें मिला कर लेप करनेसे मुख शरदके चन्द्रमाके समान दीप्तिमान हो जाता है।

(५९७८) **रजन्यादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र.; व. से. । विषा.)

रजनीद्वयमञ्जिष्ठापतङ्गगजकेशरैः ।
शीताम्बुपिष्टैरालेपः सद्यो लूतां विनाशयेत् ॥

हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, पतङ्ग और नाग-केसर; समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें।

इसे ठण्डे पानीमें पीस कर लेप करनेसे मकड़ीका विष शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(५९७९) **रजन्यादिलेपः** (२)

(वृ. नि. र. । क्षुद्र रोगा.)

रजनीमार्कवं मूलं पिष्टं शीतेन वारिणा ।
तल्लेपाद्धन्ति वीसर्पं वाराहदशनाह्वयम् ॥

हल्दी और भंगरेकी जड़ समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर शीतल जलके साथ पीस लें।

इसका लेप करनेसे वीसर्प और वराहदंष्ट्रा नामक रोग नष्ट होता है।

(५९८०) **रसाञ्जनादिकल्कः**

(वृ. नि. र. । भगन्द. ; यो. र. ; भै. र. । भगन्द. ; ग. नि. । भगन्द. ; वृ. मा. । भगन्द.)

रसाञ्जनं हरिद्रे द्वे मञ्जिष्ठा निम्बपल्लवाः ।
त्रिवृत्तेजोवती दन्ती कल्को नाडीव्रणापहः ॥

रसौत, हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, नीमके पत्ते, निसोत, मालकंगनी और दन्तीमूल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ अत्यन्त महीन पीस कर कल्क बनावें।

इसका लेप करनेसे नाडीव्रण (नासूर) नष्ट होता है।

(५९८१) **रसाञ्जनादिलेपः** (१)

(वृ. यो. त. । त. ११९ शूकरोगा.)

रसाञ्जनं साह्वयमेकमेव
प्रलेपमात्रेण नयेत्प्रशान्तिम् ।
सपूतिपूयव्रणशोथकण्डू
शूलान्वितं सर्वमनङ्गरोगम् ॥

रसौतका लेप करनेसे दुर्गन्ध और पीप तथा खुजली युक्त उपदंशके व्रण नष्ट होते हैं।

(५९८२) **रसाञ्जनादिलेपः** (२)

(ग. नि. । नेत्र रोगा. ३.)

रसाञ्जनाभयादारुगैरिकं सैन्धवान्वितम् ।
जलपिष्टैर्बहिर्लेपः सर्वनेत्रामयापहः ॥

रसौत, हर्र, देवदारु, गेरु और सेंधानमकका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर पानीके साथ पीस लें।

नेत्रोंके बाहर इसका लेप करनेसे समस्त नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

(५९८३) **रसाञ्जनादिलेपः** (३)

(यो. र. ; वृ. नि. र. ; व. से. । उपदंशा.)

रसाञ्जनं शिरीषेण पथ्यया वा समन्वितम् ।
सक्षौद्रं लेपनं योज्यं सर्वानङ्गगदापहम् ॥

रसौत और सिरसकी छाल, अथवा रसौत और हर्रका चूर्ण समान भाग ले कर सबको शहदमें मिलाकर लेप बनावें।

इसे लगानेसे उपदंशके व्रण नष्ट होते हैं।

(५९८४) **रसाञ्जनादिलेपः** (४)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

रसाञ्जनेन वा लेपः पथ्या विश्वदलैरपि ।
वचाहरिद्राविश्वाभिस्तथानागरगैरिकैः ॥

कफाभिष्यन्दमें नेत्रोंके बाहर रसौतका या हर्र और अदरकके पत्तोंका अथवा बच, हल्दी और सोंठका किंवा, सोंठ और गेरुका लेप करना चाहिये।

(५९८५) **रसादिलेपः** (१)

(र. चं. । विषा. ; वृ. नि. र. । विषा.)

रसं गन्धं निशाबन्धुं गृहधूमं शिरीषजम् ।
बीजं दिनकरक्षीरैर्मर्दयित्वा विलेपनम् ॥
विशेषान्मूषकविषं हन्यादन्यान्विषोद्भवान् ॥

पारा, गंधक, कपूर, घरका धुंवां और सिरस-

के बीज समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको आकके दूधमें घोटें।

इसका लेप करनेसे विशेषतः चूहेका विष और साधारणतः अन्य विष भी नष्ट होते हैं।

(५९८६) **रसादिलेपः** (२)

(वृ. नि. र. । शूला.)

रसं गन्धं विषं म्लेच्छं मणिमन्थं च टङ्कणम् ।
सौराष्ट्रं मरिचं नागं हरितालं मनःशिलाम ॥
जेपालं कौशिकं तुत्थं नवसारं पृथक् समम् ।
एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे आरनालेन पेषयेत् ॥
उदरे लेपनं कुर्याच्छीघ्रतः सर्वशूलजित् ॥

पारा, गंधक, बछनाग, हिंगुल, सेंधानमक, सुहागा, कुन्दरु, काली मिर्च, सीसा, हरताल, मनसिल, जमालगोटा, गूगल, नीलाथोथा और नौसादर समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर खरलमें डालकर कांजीके साथ घोंटलें।

पेट पर इसका लेप करनेसे समस्त शूल नष्ट होते हैं।

(५९८७) **रसादिलेपः** (३)

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

रसगन्धकहेमं च साभ्रकं कटुतैलतः ।
मर्दितं मर्दनात्तस्य कुष्ठजातं विनश्यति ॥

पारद, गन्धक, स्वर्णपत्र और अभ्रक समान भाग लेकर सबको एकत्र घोटकर कज्जली बनावें।

इसे सरसोंके तेलमें घोट कर लेप करनेसे कुष्ठ नष्ट होता है।

(५९८८) **रसादिलेपः** (४)

(यो. र. । क्रिमि रोगा. ; यो. त. । त. २४.)

रसेन्द्रेण समायुक्तो रसो धत्तूरपत्रजः ।
ताम्बूलपत्रजो वाऽपि लेपनाद्यूकनाशनः ॥

पारदको धतूरेके पत्तोंके रसमें घोट कर लेप करनेसे यूका (जू) नष्ट होती हैं।

इसी प्रकार पारदको पानके रसमें घोट कर लेप करनेसे भी यूका नष्ट हो जाती हैं।

(५९८९) **रसादिलेपः** (५)

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

रसोषणं सैन्धवं च विडङ्गश्चामृतारसः ।
काञ्जिकेन विमर्द्याथ लेपः सिध्मविनाशनः ॥

पारद तथा काली मिर्च, सेंधा नमक और बायबिडंगका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर घोटें और फिर उसे गिलोयके रसकी भावना दें।

इसे काञ्जीमें घोट कर लेप करनेसे सिध्म नष्ट होता है।

(५९९०) **रसादिलेपः** (६)

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

रसगन्धकयोः पिष्टिं कटुतैलेन भृङ्गजैः ।
द्रवैः सम्मर्द्य तल्लेपात्सर्वं कुष्ठं विनश्यति ॥

समान भाग पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे भंगरेके रसमें घोटें।

इसे सरसोंके तेलमें मिला कर लेप करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

(५९९१) **रसोनादिलेपः**

(वै. म. र. । पटल ९)

केवलानिलसमुत्थे शूले महति प्रलेपयेन्मतिमान्
तुङ्गद्रुमतरुणजले रसोनकल्कं वयो बलं वीक्ष्य॥

केवल वात जन्य प्रवृद्ध शूलमें रोगीकी आयु और बलादिका विचार करके ल्हसनको नारियलके ताजे जलमें पीस कर लेप करना चाहिये ।

(५९९२) **राजिकादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा. ; यो. र. । कुष्ठा.)

राजिकागुडयुक्तेन सैन्धवेन प्रलेपितम् ।
विजलं चर्मणा बद्धं नाशं चर्मदलं व्रजेत् ॥

राई, गुड़ और सेंधा नमकका चूर्ण समान भाग लेकर सबको पानी मिलाए बिना ही एकत्र पीस लें ।

इसे लगा कर चमड़ेसे बांध देना चाहिये ।

इस प्रयोगसे चर्मदल नष्ट हो जाता है ।

(५९९३) **राजिकादिलेपः** (२)

(यो. र. । शूला.)

राजिका शिग्रुकल्कं च गोतक्रेण च पेषितम् ।
तेन लेपेन हन्त्याशु शूलं वातसमुद्भवम् ॥

राई और सहंजनेकी छालको गायके तक्रके साथ पीस कर लेप करनेसे वातज शूल नष्ट होता है ।

(५९९४) **रालादिमलहरः**

(वै. र. । व्रणशोथा.)

कटुतैलसमं नीरं पाणिभ्यां मर्दयेद्दृढम् ।
पञ्चशुक्तिमितं तस्मिन्रालचूर्णं च निःक्षिपेत् ॥
खदिरं पलमानं च कङ्कुष्ठं च पलार्द्धकम् ।
क्षिप्त्वा सम्यग्विनिर्मथ्य स्थाप्यो मलहरः परः॥
शोधनो रोपणो सर्वव्रणानां नास्त्यतः परम् ॥

सरसोंके तेलमें बराबर पानी मिला कर दोनोंको भली भांति हाथसे फेटें और फिर उसमें १२॥ तोले रालका चूर्ण, ५ तोले कत्था और २॥ तोले मुरदाशंखका चूर्ण, मिला कर खरल करें ।

यह मल्हम व्रणोंको शुद्ध करके भरनेके लिये अत्यन्त गुणकारी है ।

(तैल सबके बराबर लेना चाहिये ।)

(५९९५) **रालादिलेपः** (१)

(वृ. नि. र. । मुख रोगा.)

रालं मधूच्छिष्टं गुडेन पक्वं
तैलं घृतं वा विनिहन्ति लेपात् ।
त्वक्तोदपारुष्य रुजोऽधरस्य
पूयास्रसंस्रावमपि प्रसह्य ॥

राल, मोम, और गुड़को तेल या घीमें पकाकर मल्हम बनावें ।

इसे लगानेसे होठोंकी तोद, परुषता (खरदरापन), पीड़ा, और पीप या रक्तस्राव अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(तीनों ओषधियां १-१ तोला । घी या तेल २४ तोले ।)

(५९९६) **रालादिलेपः** (२)

(र. का. धे. । अ. ४०)

रालालाक्षाचक्रमर्दमूलकोद्भवबीजतः ।
षष्टितण्डुलकं तक्रपिष्टं दद्रुहर परः ॥

राल, लाख, पमाड़के बीज, मूलीके बीज और साठीके चावल समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर तक्रके साथ पीस कर लेप करनेसे दाद नष्ट होता है।

(५९९७) **रास्नादिलेपः** (१)

(व. से. । वातरक्ता.)

रास्नागुडूचीमधुकं पले द्वे
सजीरकं सार्षपकं पयश्च ।
घृतं सुसिद्धं मधुशेषयुक्तं
रक्तानिलार्त्तं प्रणुदेत्प्रदेहम् ॥

रास्ना, गिलोय, मुलैठी, जीरा और सफेद सरसों २-२ पल (१०-१० तोले) लेकर सबको एकत्र पीस कर कल्क बनावें।

तदनन्तर ५ सेर घीमें यह कल्क और २० सेर दूध मिलाकर पकावें। जब दूध जल जाए तो घृतको छान लें।

इस घीमें (१० तोले) मोम मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसका लेप करनेसे वातरक्त नष्ट होता है।

(५९९८) **रास्नादिलेपः** (२)

(वृ. यो. त. । त. १२३. ;
व. से. । विसर्पा.; शा. सं. । खं. ३ अ. ११;
वृ. नि. र. ; यो. र. । विसर्पा.)

रास्नानीलोत्पलं दारुचन्दनं मधुकं बला ।
घृतक्षीरयुतो लेपो वातवीसर्पनाशनः ॥

रास्ना, नीलोत्पल, देवदारु, लाल चन्दन, मुलैठी और खरैटीकी जड़ समान भाग लेकर सबको बारीक पीस कर घी तथा दूधमें मिलाकर लेप करनेसे वातज वीसर्प नष्ट होता है।

(५९९९) **रास्नादिलेपः** (३)

(वैद्य जीवन । विलास १)

रास्नानागरलुङ्गमूलहुतभुग्दार्व्यग्निमन्थैः सभै-
र्लेपः स्यादरविन्दवन्द्यनयने शोथव्यथाध्वंसनः॥

रास्ना, सोंठ, बिजौरे नीबूकी जड़, चीतामूल, दारुहल्दी और अरनीकी जड़; इन सबका समान भाग चूर्ण ले कर सबको (पानीके साथ) एकत्र पीस लें।

इसका लेप करनेसे सन्निपातके पश्चात् उत्पन्न होने वाला कर्णमूलका शोथ नष्ट होता है। (लेपको ज़रा गर्म कर लेना चाहिये।)

(६०००) **रेचनयोगः**

(यो. र. । बालरोगा.)

पिष्ट्वा गन्धर्वबीजानि त्वाखुविण्निम्बुवारिणा।
नाभौ गुदे वा लेपेन शिशूनां रेचनं परम् ॥

अरण्डीके बीजोंकी गिरी और चूहेकी विष्ठा समान भाग ले कर दोनोंको नीबूके रसमें पीसकर बालककी नाभि या गुदा पर लेप करनेसे उसे विरेचन हो जाता है।

इति रकारादिलेपप्रकरणम्



अथ रकारादिधूपप्रकरणम्

(६००१) राजवल्लभधूपः

(र. स. क. । उल्ला. ५)

कस्तूरीन्दुश्च वाह्लीकं नखं मांसी च सर्जकम्।
मुस्ताऽगुरु सिता सर्वं क्रमवृद्धं समं पुरम् ॥
स्तोकं स्तोकं क्षिपेत्तैलं दिनैकमथ कुट्टयेत् ।
वर्तिं कुर्यात् प्रदीप्ता सा दिव्यं धूमं विमुञ्चति॥
सर्वदेवप्रियः सर्वमन्त्रसिद्धिप्रदायकः ।
स्नाने वस्त्रे रतागारे धूपोऽयं राजवल्लभः ॥

कस्तूरी १ भाग, कपूर २ भाग, केसर ३ भाग, नखी ४ भाग, जटामांसी ५ भाग, राल ६ भाग, नागरमोथा ७ भाग, अगर ८ भाग और मिश्री ९ भाग तथा गूगल सबके बराबर (४५ भाग) लेकर गूगलके अतिरिक्त सब चीजोंका बारीक चूर्ण बना लें और फिर उसे गूगलमें मिला कर उसमें थोड़ा थोड़ा तेल डालते हुवे दिन भर कूटें । तदनन्तर उसकी बत्तियां बनाकर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें जलानेसे अत्युत्कृष्ट सुगन्धियुक्त धूम्र निकलता है ।

यह धूप सर्व-देवप्रिय और सर्वमन्त्र सिद्धिदायक है। एवं स्नान-जल, वस्त्र तथा रतागारको सुगन्धित करनेके लिये उपयोगी है ।

(६००२) रालादिधूपः (१)

(यो. र. । अर्शो. ; वृ. यो. त. । त. ७१)

रालाचूर्णस्य तैलेन सार्षपेण युतस्य च ।
धूमदानेन युक्त्याऽर्शो रक्तस्रावी निवर्त्तते ॥

रालके चूर्णको सरसोंके तैलमें मिला कर धूनी देनेसे अर्श (बवासीर) का रक्तस्राव बन्द हो जाता है ।

(६००३) रालादिधूपः (२)

(वृ. नि. र. । मसूरिका.)

रालहिङ्गुरसोनैश्च धूपयेत्ता मसूरिकाः ।
कृमयो न पतन्त्यत्र जाताः शाम्यन्ति ते लघुः ॥

राल, हींग और ल्हसन समान भाग लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

इसकी धूप देनेसे मसूरिकामें कृमि उत्पन्न नहीं होते और यदि हो गए हों तो नष्ट हो जाते हैं ।

(६००४) रुगादिधूपः

(वै. जी. । विला. १)

अयि कुशाग्रसमानमते मते
मतिमतामतिमन्मथमन्थरे ।
ज्वरहरं रुगरिष्टशिवावचा-
यवहविर्जतुसर्षपधूपनम् ॥

कूठ, नीमके पत्ते, हर्र; बच, जौ, लाख और सरसों समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घीमें मिलाकर धूप देनेसे ज्वर नष्ट होता है ।

इति रकारादिधूपप्रकरणम्

अथ रकारादिधूम्रप्रकरणम्

(६००५) रात्र्यादिधूमः

(यो. त. । त. २८; यो. र. । कासा.)

रात्रिद्वयशिलाधूमपानात्कासस्रुतिः कृतः ।

हल्दी, दारु हल्दी और मनसिल समान भाग लेकर सबको एकत्र पीस लें।

इसका धूम्रपान करनेसे खांसी नष्ट होती है।

इति रकारादिधूम्रप्रकरणम्



अथ रकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(६००६) रक्तचन्दनाद्या वर्तिः

(ग. नि. ; रा. मा. । नेत्ररोगा.)

अरुणचन्दनमागधिकानिशाः
कतकबीजयुतागगनाम्भसा ।
समभिपेष्य कृता नयनामयान्
हरति वर्तिरुदीर्णतरानपि ॥

लाल चन्दन, पीपल, हल्दी और निर्मलीके बीज; इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर बरसातके स्वच्छ पानीमें घोट कर बत्तियां बना लें।

इन्हें आंखमें आंजनेसे आंखोके भयंकर रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

(६००७) रक्ताञ्जनम्

(र. र. स. । उ. खं. अ. २३)

भृङ्गराजरसैर्घृष्टं पलैकं रक्तचन्दनम् ।
ताम्रपात्रे स्थितं भाव्यं तद्रसेन पुनः पुनः ॥
शतधा भावयेद्यत्नात्पेष्य पेष्य पुनः पुनः ।
मधुनाप्यञ्जनं हन्ति षड्विधं तिमिरामयम् ॥

५ तोले लाल चन्दनके चूर्णको तांबेके खरलमें भंगरेके रसमें घोटें। जब एक बारका रस सूख जाय तो पुनः नवीन रस डालें। इसी प्रकार भंगरेके रसकी १०० भावना दें।

इसे शहदमें मिलाकर आंखमें आंजनेसे ६ प्रकारका तिमिर रोग नष्ट होता है।

(६००८) रसकेश्वरवर्तिः

(वैद्यामृत । विषय ५१)

रसकं सैन्धवं तुत्थं टङ्कणं कटुकत्रयम् ।
मर्दयेन्निम्बुनीरेण वटी छायावशोषिता ॥
अञ्जिता मधुना नेत्रे नेत्ररोगविनाशिनी ।
रूक्षत्वमर्बुदं पुष्पं दुर्मांसं तिमिरार्जुने ॥
पटलं नेत्रवातं च काचबिन्दूदकानि च ।
अन्यानपि महारोगान्नाशयेद्रसकेश्वरः ॥

खपरिया, सेंधा नमक, नीलाथोथा, सुहागा, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर नीबूके रसमें खरल करें और फिर बत्तियां बना कर छायामें सुखा लें।

इन्हें शहदमें घिसकर आंखमें आंजनेसे नेत्रोंकी रूक्षता, अर्बुद, फूला, दुर्मांस, तिमिर, अर्जुन, पटल, नेत्रवात, काच, और बिन्दु तथा आंखों पर पानी आ जाना इत्यादि नेत्र रोग नष्ट होते हैं।

(६००९) **रसाञ्जनादिगुटिका**

(सु. सं. । चि. अ. ८; यो. चि. म. । अ. ३; शा. सं. । खं. ३ अ. १३; वृ. नि. र. । व. से. ; यो. र. । नेत्र रोगा.)

रसाञ्जनं हरिद्रे द्वे मालतीनिम्बपल्लवाः[1] ।
गोसकृद्रससंयुक्ता वर्तिर्नक्तान्ध्यनाशिनी ॥

रसौत, हल्दी, दारुहल्दी, चमेलीके पत्ते और नीमके पत्ते समान भाग ले कर सबको अत्यन्त बारीक पीस कर गायके गोबरके रसमें घोट कर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखमें आंजनेसे नक्तान्ध्य (रतौंधा) नष्ट होता है।

(६०१०) **रसाञ्जनाद्यञ्जनम्** (१)

(यो. र. । नेत्ररो. ; व. से.)

रसाञ्जनं घृतक्षौद्रतालीसस्वर्णगैरिकैः ।
गोशकृद्रससंयुक्तं पित्तोपहतदृष्टये ॥

रसौत, तालीस पत्र और सोना गेरुका अत्यन्त बारीक चूर्ण तथा घी, शहद और गायके गोबरका रस समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे आंखमें लगाना पित्त विदग्ध दृष्टिके लिये हितकर है।

(६०११) **रसाञ्जनाद्यञ्जनम्** (२)

(व. से.; वृ. नि. र. । नेत्र रोगा.)

रसाञ्जनं शिला दारु[1] जातीपत्ररसो मधु ।
नक्तान्ध्यतां जयेदेतदञ्जनं साधुयोजितम् ॥

रसौत, मनसिल, देवदारु, चमेलीके पत्तोंका रस और शहद समान भाग लेकर अंजन बनावें।

इसे आंखमें आंजनेसे नक्तान्ध्य (रतौंधा) नष्ट होता है।

(चूर्ण योग्य द्रव्योंका पृथक् पृथक् चूर्ण करके लेना चाहिये ।)

(६०१२) **रसाञ्जनाद्यञ्जनम्** (३)

(शा. ध. । खं. ३ अ. ११; यो. र. ; वं. से. । नेत्र रो.)

रसाञ्जनं व्योषयुतं सम्पेष्य वटकीकृतम् ।
कण्डूपाकान्वितां हन्ति नूनमञ्जननामिकाम् ॥

रसौत; सोंठ, मिर्च, और पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र पीसकर गोली बनावें।

इसे (पानीमें घिस कर) लगानेसे खुजली और पाक युक्त अञ्जननामिका (अञ्जनहारी) नष्ट होती है।

(६०१३) **रसाञ्जनाद्यञ्जनम्** (४)

(वं. से; यो. र. । नेत्र रो.; ग. नि.। नेत्ररोगा. ३.)

रसाञ्जनं सर्जरसो जातीपुष्पं मनःशिला ।
समुद्रफेनो लवणं गैरिकं मरिचानि च ॥

---

[1] " मधुपल्लवाः " इति पाठान्तरम् ।

[1] निशादार्वेति पाठान्तरम् ।

एतत्समांशं मधुना पिष्ट्वा प्रक्लिन्नवर्तमनि ।
अञ्जनं क्लेदकण्डूघ्नं पक्ष्मणां च प्ररोहणम् ॥

रसौत, राल, चमेलीके फूल (शुष्क), मनसिल, समुद्र फेन, सेंधा नमक, गेरु और काली मिर्च; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर शहदमें घोट लें ।

इसका अञ्जन लगानेसे आंखोंके क्लेद (चिपचिपाहट), और कण्डू (खाज) का नाश होता तथा पलकोंके गिरे हुवे बाल पुनः निकल आते हैं ।

यह योग क्लिन्नवर्त्ममें भी उपयोगी है ।

(६०१४) रसाञ्जनाद्यञ्जनम् (५)

(हा. सं. । स्थान ३ अ. ४८)

रसाञ्जनं सकट्फलं हरीतकी मनःशिला ।
गुडेन कट्फलं तथा निहन्ति नेत्रप्रच्छदम् ॥

(१) रसौत, कायफल, हर्र और मनसिल समान भाग ले कर अञ्जन बनावें ।

इसे आंखमें लगानेसे नेत्रपटल रोग नष्ट होता है ।

(२) कायफलका चूर्ण और गुड़ समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल कर लें ।

इसे आंखमें लगानेसे भी नेत्रपटल नष्ट हो जाता है ।

(६०१५) रसाञ्जनाद्यञ्जनम् (६)

(वा. भ. । उत्त. स्था. अ. १६)

रसाञ्जनं सर्जरसो रीतीपुष्पं मनःशिला ।
समुद्रफेनं लवणं गैरिकं मरिचानि च ॥
अञ्जनं मधुना पिष्टं क्लेदकण्डूघ्नमुत्तमम् ।
अभयारसपिष्टं वा तगरं पिल्लनाशनम् ॥
भावितं बस्तमूत्रेण सस्नेहं देवदारु च ॥

रसौत, राल, पुष्पाञ्जन, मनसिल, समुद्रझाग, सेंधा नमक, गेरु, और काली मिर्च; इन सबके बारीक चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर शहदमें खरल करके रक्खें ।

इसे आंखमें लगानेसे क्लेद (आंखोंकी चिपचिपाहट) और नेत्रकण्डू (खाज) नष्ट होती है ।

तगरको हर्रके रसमें पीस कर आंखमें लगानेसे पिल्ल रोग नष्ट होता है ।

स्नेहयुक्त देवदार (तेलिया देवदारु) को बकरेके मूत्रकी भावना दे कर उसे आंखमें आंजनेसे भी पिल्ल रोग नष्ट होता है ।

(६०१६) रसादिवर्तिः

(यो. त. । त. ७१)

रसटङ्कणसिन्धूत्थ व्योषखर्परतुत्थकैः ।
सवेतसाम्लैः सक्षौद्रैर्वर्तिर्नेत्रगदापहा ॥

पारा, सुहागेकी खील, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, खपरिया और नीलाथोथा तथा अम्लबेत; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको शहदमें मिलाकर वत्तियां बनावें ।

इन्हे आंखमें आंजनेसे नेत्ररोग नष्ट होते हैं ।

(६०१७) राजिकाद्यञ्जनम्

(यो. चि. म. । अ. ३)

राजिकामरिचं कृष्णा सैन्धवं भूतनाशनम् ।
नरमूत्रेण सम्पिष्य अञ्जनं ज्वरनाशनम् ॥

राई, काली मिर्च, पीपल, सेंधानमक और सरसों; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको मनुष्यके मूत्रमें पीस कर अंजन बनावें।

इसे आंखमें लगानेसे ज्वर नष्ट होता है।

(६०१८) रास्नाद्यञ्जनम्

(यो. र. । सन्निपाता.)

रास्नामनःशिलैलाञ्जनमेतात्तन्द्रिकेऽपीष्टम् ॥

रास्ना, मनसिल और इलायची समान भाग लेकर सबको एकत्र घोट कर अत्यन्त बारीक अञ्जन बनावें।

यह अञ्जन तन्द्रिक सन्निपातमें उपयोगी है।

(६०१९) रोध्राद्यञ्जनम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५७)

रोध्रं रसाञ्जनं धात्री गैरिकं मधुना युतम् ।
अञ्जनं चैव बालानां नेत्ररोगनिवारणम् ॥

लोध, रसौत, आमला और गेरुका चूर्ण समान भाग लेकर सबको शहदमें घोट कर अंजन बनावें।

यह अंजन बालकोंके समस्त नेत्र रोगोंको नष्ट करता है।

(६०२०) रोपणी कुसुमिकावर्तिः

(शा. सं. । खं. ३ अ. १३)

तिलपुष्पाण्यशीतिः स्युः षष्टिसंख्या कणाकणाः
जातीकुसुमपञ्चाशत् मरिचानि च षोडश ॥
सूक्ष्मं पिष्ट्वा जले वर्तिः कृता कुसुमिकाभिधा ।
तिमिरार्जुन शुक्राणां नाशिनी मांसवृद्धिहृत् ॥

तिलके फूल ८०; पीपलके कण (चावल) ६०, चमेलीके फूल ५० और काली मिर्च १६; इन सबको पानीके साथ अत्यन्त बारीक पीस कर बत्तियां बनावें।

इन्हें आंखमें लगानेसे तिमिर, अर्जुन, शुक्र और मांस वृद्धिका नाश होता है।

(६०२१) रोहिण्यादिवटी

(वै. म. र. । पटल १६)

रोहिणीतुत्थकह्लारोत्पलकेसरनिर्मिता ।
दार्वीक्वाथेन गुटिका पित्तार्मव्रणनाशिनी ॥

कुटकी, नीलाथोथा, कुमुद, नीलोत्पल और केसरका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर दारुहल्दीके काथमें घोट कर गोलियां बना लें।

इसे आंखमें लगानेसे पित्तज अर्म और नेत्रव्रण नष्ट होता है।

इति रकाराद्यञ्जनप्रकरणम्



अथ रकारादिनस्यप्रकरणम्

(६०२२) रक्तकरवीरयोगः

(यो. र. । नासा.)

रक्तकरवीरपुष्पं जात्यं वा तथा मल्लिकायाः ।
एतैः समं तिलतैलं नासार्शो नाशनं परम् ॥

लाल करवीर (कनेर) के फूल, जातिके फूल और मल्लिका के फूल समान भाग लेकर उन्हें सबके बराबर तिल तैलमें घोट लें। (अथवा इनके कल्कसे तैल सिद्ध करें।)

इसकी नस्य लेनेसे नासार्श नष्ट होती है।

(६०२३) रक्ताम्रस्वरसादियोगः

(यो. र. । नासा.)

रक्ताम्रस्वरसः शुद्धस्तक्रेण सह नस्यतः ।
तस्य पर्णानि पिष्ट्वा च बध्नीयान्नासिकामुखे ॥
पतन्ति कीटकाः सद्यो योगोऽयं त्रिदिनैर्हितः।
पीनसान्मुच्यते रोगी शतशोऽनुमितं त्विदम्॥

कोशाम्र (वनाम्र-कोशंभ) के स्वरसको छानकर तक्रमें मिलाकर उसकी नस्य लेने तथा उसीके पत्तोंको पीसकर नासिकाके मुख पर बांधनेसे नासिकासे कृमि निकल कर ३ दिनमें पीनस नष्ट हो जाती है।

यह प्रयोग शतशोऽनुभूत है।

(६०२४) रेचनसञ्ज्ञकनस्यम् (१)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ८)

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपाः कुष्ठमेव च ।
बस्तमूत्रेण पिष्टानि नस्यं तन्द्रानिवारणम् ॥

सेंधा नमक, सहंजनेके बीज, सरसों और कूठ; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको बकरेके मूत्रमें खरल करें।

इसको नस्य देनेसे तन्द्रा नष्ट होती है।

(६०२५) रेचनसञ्ज्ञकनस्यम् (२)

(शा. सं.। खं. ३ अ. ८)

मधूकसारकृष्णाभ्यां बचामरिचसैन्धवैः ।
नस्यं कोष्णजले पिष्टं दद्यात्सञ्ज्ञाप्रबोधनम् ॥
अपस्मारे तथोन्मादे सन्निपातेऽपतन्त्रके ॥

महुवेका सार, पीपल, बच, काली मिर्च और सेंधा नमक; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे मन्दोष्ण जलमें पीसकर नस्य देनेसे अपस्मार, उन्माद, सन्निपात और अपतन्त्रककी बेहोशी दूर हो जाती है।

(६०२६) रेचनसञ्ज्ञकनस्यम् (३)

(शा. सं.। खं. ३ अ. ८)

नस्यं स्याद् गुडशुण्ठीभ्यां पिप्पलीसैन्धवेन च।
जलपिष्टेन तेनाक्षिकर्णनासाशिरोगदाः ॥
हनुमन्यागलोद्भूता नश्यन्ति भुजपृष्ठजाः ॥

गुड़ और सोंठके चूर्णको एकत्र मिलाकर उसकी अथवा पीपल और सेंधा नमकके समान भाग-मिश्रित चूर्णकी नस्य लेनेसे नेत्र, कर्ण, नासा, शिर, हनु, मन्या, गला, भुजा और पीठके रोग नष्ट होते हैं।

उपरोक्त चूर्णोंको पानीमें पीस कर नस्य देनी चाहिये।

इति रकारादिनस्यप्रकरणम्



अथ रकारादिरसप्रकरणम्

(६०२७) रक्तपित्तकुलकण्डनरसः
(रक्तपित्तकुठारो रसः)

(र. का. धे. ; वृ. नि. र. ; र. रो. सु. ; यो. र. ; र. चं. । रक्तपित्ता. ; वृ. यो. त. । त. ७६; यो. त. । त. २६)

शुद्धपारदबलिप्रवालकं
हेममाक्षिकभुजङ्गरङ्गकम् ।
मारितं सकलमेतदुत्तमं
भावयेत् पृथक् पृथक्द्रवैस्ततः ॥
चन्दनस्य कमलस्य मालती-
कोरकस्य वृषपल्लवस्य च ।
धान्यवारणकणाशतावरी
शाल्मलीवटजटामृतस्य च ॥
रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो
जायते रसवरोऽस्रपित्तिनाम् ।
प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं
सेवितस्तु वसुकृष्णनिर्मितः ॥
नास्त्यनेन सममत्र भूतले
भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, प्रवाल (मूंगा) भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, सीसा भस्म और बङ्ग भस्म १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको चन्दन, कमल, मालतीको कलियां, बासेके पत्ते, धनिया, गजपीपल, सतावर, सेंभलकी छाल और बड़की दाढ़ी; इनके क्काथ या स्वरस तथा घीकी पृथक् पृथक् एक एक भावना देकर सुरक्षित रक्खें।

अनुपान—शहद और बासेका रस ।

यह रस रक्तपित्तको नष्ट करता है । रक्त पित्तके लिये इससे उत्तम अन्य औषध नहीं है ।

(६०२८) रक्तपित्तहररसः

(र. रा. सु. । रक्तपित्ता.)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तीक्ष्णं वासारसैर्दिनम् ।
मर्दितं माषमात्रं तु भक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥

पारद भस्म (अभावमें रस सिन्दूर), ताम्र भस्म, और तीक्ष्ण लोह भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर एक दिन बासेके रसमें खरल करें ।

मात्रा—१ माषा ।

इसके सेवनसे रक्तपित नष्ट होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१-२ रत्ती ।)

(६०२९) रक्तपित्तान्तकलौहम्

(भै. र. । रक्तपित्ता.)

धात्री च पिप्पलीचूर्णं तुल्यायः सितया सह ।
रक्तपित्तहरं लौहमम्लपित्तं विनाशयेत् ॥

आमले और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिला कर रक्खें ।

इसे मिश्रीमें मिलाकर सेवन करनेसे रक्तपित्त और अम्लपित्तका नाश होता है ।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

(६०३०) रक्तपित्तान्तको रसः

(धन्व. ; र. चं. ; भै. र. । रक्तपित्ता. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । रक्तपित्ता.)

मृताभ्रं मुण्डतीक्ष्णञ्च माक्षिकं रसतालकम् ।
गन्धकश्च भवेत्तुल्यं यष्टिद्राक्षामृताद्रवैः ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्ले सिताक्षौद्रसमन्वितम् ।
गुञ्जाद्वयं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥
ज्वरं दाहं क्षतक्षीणं तृष्णां शोषमरोचकम् ॥

अभ्रक भस्म, मुण्ड लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध पारद, हरताल-भस्म (या शुद्ध हरताल) और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको मुलैठी, द्राक्षा (मुनक्का) और गिलोयके स्वरस या क्वाथमें पृथक् पृथक् १-१ दिन घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे मिश्री और शहदके साथ सेवन करनेसे भयङ्कर रक्तपित्त भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

इसके अतिरिक्त यह रस ज्वर, दाह, क्षत, क्षीणता, तृषा, शोष और अरुचिको भी नष्ट करता है ।

मात्रा--२ रत्ती ।

रक्तमारेश्वररसः

(रक्तकुमारीश्वररसः)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

" मोरेश्वर रसः " प्रयोग संख्या ५६८२ देखिये ।

इसमें (रक्तमारेश्वर रसमें) ताम्रसंपुटका वजन गोलेके बराबर लिखा है । शेष प्रयोग समान है ।

(६०३१) रक्तरसः

(र. प्र. सु. । अ. ३)

रसविदाऽपि रसः परिशोधितो
विगतदोषकृतोऽपि हि गन्धकः ।
विमललोहमये कृतखर्परे
ह्यमलसाररजः परिमुच्यताम् ॥
अतिकृशाग्नियुते द्रवति स्वयं
तदनु तत्र रसः परिमुच्यताम् ।
विशदलोहमयेन च दर्विणा
विघटयेत्प्रहरत्रयसम्मितम् ॥
तदनु काचघटीं विनिवेश्य
वै सिकतयन्त्रवरेण हि पाचितः ।
द्विदशयाममधः कृतवह्निना
भवति रक्तरसस्तलभस्मसात् ॥
गतबलेन नरेण हि सेवितो
भवति वाजिकरः सुखदः सदा ।
स च बलिपलितानि च नाशये-
च्छतशरत्सु निरामयकृत्परम् ॥

समान भाग शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक लेकर प्रथम गन्धकको लोहेकी स्वच्छ कढ़ाईमें डाल कर अत्यन्त मन्दाग्नि पर पिघलावें । जब वह पूर्णतः पिघल जाय तो उसमें पारद डाल कर दोनोंको ३ पहर तक लोहेके स्वच्छ करछेसे घोटें । तदनन्तर उसे आतशी शीशीमें भर कर बालुका यन्त्रमें १२ पहरकी अग्नि दें ।

इस विधिसे तलस्थ रक्त भस्म तैयार होगी। उसे निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

इसे सेवन करनेसे निर्बल व्यक्ति भी बलवान हो जाते हैं। यह अत्यन्त वाजीकर और बलि-पलित—नाशक है। इसे सेवन करने वाले व्यक्ति रोगरहित १०० वर्ष की आयु प्राप्त करते हैं।

(६०३२) **रक्तवर्णहेमगर्भरसः**

(यो. र. । क्षया.)

हिङ्गुलं कर्षमात्रं तु मर्दयेत्खल्वमध्यगम् ।
सुवर्णं माषमेकं च तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥
मर्दयित्वा क्षिपेत्तत्र गन्धकं ह्यर्धमाषकम् ।
मर्दयेदर्कजक्षीरैर्बन्धयेत्पट्टमध्यगे ॥
भूधरे पाचयेद्यन्त्रे कुक्कुटोपुटितेन च ।
पुनर्वस्त्रेण सम्वेष्टय तस्योपरि च गन्धकम् ॥
वस्त्रमेकत्र बध्नीयात् पुनर्यन्त्रेण पूर्ववत् ।
हेमगर्भरसो नाम तरुणारुणसन्निभः ॥
सर्वरोगेषु दातव्य एकैके द्वित्रिदोषजे ।
त्रिदोषे आर्द्रकरसैर्मधुयुक्तैः प्रयोजयेत् ॥

१। तोला शुद्ध हिंगुलको खरल करके उसमें १। माशा सुवर्ण पत्र और १। माशा शुद्ध पारद मिला कर पुनः खरल करें। तदनन्तर उसमें ५ रत्ती शुद्ध गंधक मिला कर अच्छी तरह खरल करें और फिर उसे आकके दूधमें घोट कर गोला बनावें तथा उसे सुखा कर कपड़ेमें बांध कर पोटली बनावें। अब इस पोटलीको सम्पुटमें बन्द करके भूधर यन्त्रमें कुक्कुट पुट दें।

इसके पश्चात् यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे पुनः कपड़ेमें बांधकर पोटली बनावें और इस पोटलीको शुद्ध गंधकके बीचमें रख कर एक दूसरे कपड़ेमें बांध दें तथा उपरोक्त विधिसे पुनः कुक्कुट पुटमें पकावें।

इसे अदरकके रस और शहदके साथ सेवन कराना चाहिये।

यह रस एकदोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(६०३३) **रक्तसूतशेखररसः**

(र. च. । कफरोगा.)

अभ्रकं रससिन्दूरं सुवर्णं शुल्बमुत्तमम् ।
लोहं कम्बुजभूतिं च विषं कनकबीजकम् ॥
चतुर्जातं टङ्कणं च शठी व्योषं च केसरम् ।
सर्वं समं तु कस्तूर्यास्तुर्यांशं प्रक्षिपेत्खले ॥
घस्रा द्रावेण सम्मर्द्य मार्कवस्य रसैर्दिनम् ।
सूतशेखरनामाऽयं तरुणारुणसन्निभः ॥
गुञ्जामानेन मध्वाक्तो मध्वार्द्रकरसेन वा ।
जयेद्वातकफोद्रेकं तथा खण्डार्द्रयोगतः ॥
वातपित्तामयं हन्यात्तथा रास्नाकषायतः ।
वातं गुडूचीसत्त्वेन मधुना सर्वमेहनुत् ॥
गोदुग्धखण्डयोगेन पित्तोद्रेकं जयेद् ध्रुवम् ।
क्षयं पाण्डुं मेहरुजं जीर्णज्वरमथारुचिम् ॥
प्रदरं हन्ति मान्द्यं च सोमरोगं शिरोग्रहम् ।
अनुपानविशेषेण पूर्वोक्तानामयाञ्जयेत् ॥

अभ्रक भस्म, रस सिन्दूर, सुवर्ण भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म, शंख भस्म, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), शुद्ध धतूरेके बीज, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, सुहागा, कचूर, सोंठ, मिर्च,

पीपल और केसर ४-४ भाग तथा कस्तूरी १ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर १-१ दिन केसरके पानी और भंगरेके रसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

अनुपान.

वात कफकी अधिकतामें—शहद, या अदरक के रस और शहदके साथ दें।

वात पित्तज रोगोंमें—अदरकके रस और मिश्रीके साथ दें।

वातज रोगोंमें—रास्नाके काथके साथ सेवन करावें।

प्रमेहमें—गुडूची सत्व और शहदके साथ खिलाना चाहिये।

पित्तकी अधिकता—मिश्री युक्त गोदुग्धके साथ देनेसे पित्तकी अधिकता अवश्य शान्त हो जाती है।

यह रस उचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे क्षय, पाण्डु, प्रमेह, जीर्ण ज्वर, अरुचि, प्रदर, अग्निमांद्य सोमरोग और शिरोग्रहको नष्ट करता है।

(६०३४) रक्तारिरसः

(र. स. क. । उल्लास. ४; र. का. धे. । व्रणा.)

सूतं गन्धं तथा शुद्धं क्रमादेकद्विभागिकम्।
तुल्यार्कं भावयेदार्द्ररसैश्चापि त्रिसप्तधा ॥
गोलं कृत्वाऽन्धमूषायां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत्।
घृतशुण्ठ्या च गुञ्जैकं शीतोदं ससितं ह्यनु ॥
त्रिदोषं नाशयेच्छीघ्रं क्रियां शीतां प्रयोजयेत्।
स्थूलं कृशं कृशं स्थूलं करोत्यग्निप्रदीपनम् ॥
त्रिदोषात्पतितं रक्तं व्रणनाड्यभिघातजम्।
यकृत्प्लीहोत्थितं यच्च यच्च कुष्ठकरं त्वसृक् ॥
शोधयेद् दुष्टरक्तं तद्रसो रक्तारिसञ्ज्ञकः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और ताम्र भस्म ३ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और फिर उसे २१ दिन तक अदरकके रसमें घोट कर गोला बना कर सुखा लें। अब उसे अन्धमूषामें बन्द करके गजपुटमें पकावें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे सोंठके चूर्ण और घीके साथ मिला कर खाना और बादको खांडका ठण्डा शर्बत पीना चाहिये और इसीके साथ अन्य शीतल क्रियाएं भी करनी चाहियें।

इसके सेवनसे स्थूल पुरुष कृश, और कृश पुरुष स्थूल होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

यह रस व्रण, नासूर और अभिघात (चोट आदि) से बहने वाले त्रिदोषज रक्तको बन्द करता और यकृत् तथा प्लीहा-गत रक्तस्रावको शान्त करता है एवं कुष्ठादि रोगोंको उत्पन्न करने वाले रक्तदोषोंको नष्ट करके रक्तको शुद्ध कर देता है।

(६०३५) रक्तोदरकुठाररसः

(र. र. स. । अ. १८)

पारदं शिखितुत्थं च जेपालं पिप्पली समम्।
आरग्वधफलान्मज्जा वज्रीदुग्धेन भावयेत् ॥

सूक्ष्ममात्रां वटीं खादेत्स्त्रीणां हन्याज्जलोदरम्।
चिञ्चाफलरसं चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥
रक्तोदरकुठारोपि कठिनं रेचयत्ययम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध तूतिया (भस्म), शुद्ध जमालगोटा, पीपलका चूर्ण और अमलतासका गूदा समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर सेंड (थूहर-सेहुंड) के दूधमें खरल करें और अत्यन्त सूक्ष्म (सरसों समान) गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे तीव्र रेचन हो कर स्त्रियोंका जलोदर नष्ट हो जाता है।

अनुपान—रस खानेके पश्चात् इमलीका पानी पीना चाहिये ।

पथ्य—दही भात ।

(६०३६) रघुनाथरसः

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसगन्धकरात्र्यूषैः रघुनाथो भवेद्रसः ।
विषमज्वरमन्दाग्निकासश्वासनिवारणः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, हल्दी और रेह मिट्टी समान भाग लेकर प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर खरल करें ।

इसके सेवनसे विषम ज्वर, अग्निमांद्य, खांसी और श्वास नष्ट होते है ।

(६०३७) रजतादिलौहम्

(रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं सर्वमाज्येन युक्तम् ।
लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥

चांदी भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग, तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला २-२ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे घीमें मिला कर प्रातः काल सेवन करने से यक्ष्मा, पाण्डु, उदर, अर्श, श्वास, खांसी, नेत्र रोग और समस्त पित्त रोगोंका नाश होता है ।

नोट--प्रयोगका नाम "रजतादि लोह" है, परन्तु इसके पाठमें लोहका अभाव है अतः पाठ भ्रष्ट हो गया प्रतीत होता है। साधारण परिपाटीके अनुसार इसमें सबके बराबर लोह भस्म भी मिलानी चाहिये।

(मात्रा--२-३ रत्ती ।)

(६०३८) रतिकामरसः

(र. र. रसा. खं. । उपदेश ६)

प्रारम्भरजसा स्त्रीणां मर्दयेद्भस्म सूतकम् ।
मृतं ताम्रं च तारं च गन्धकं च समं दिनम् ॥
सितामध्वाज्यसंयुक्तं निष्कं भुक्त्वा पिबेत्पयः ।
रतिकामरसो नाम कामिनीरमणे हितः ॥
वानरीमूलगोधूमं कोकिलाक्षस्य बीजकम् ।
माषाश्चेक्षुरसैः सर्वं लोडितं पाचयेद्घृतैः ॥
तेनैव वटकाः कार्या नित्यं खादेद्द्वयं द्वयम् ।
अनुपानमिदं सिद्धं सेवनाद्रमयेच्छतम् ॥

स्त्रीके प्रथम बारके रज (आर्तव) में खरल की हुई पारद भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग,

चांदी भस्म १ भाग और शुद्ध गन्धक १ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

मात्रा--१ निष्क।

अनुपान--औषधको मिश्री, शहद और घीमें मिलाकर खानेके पश्चात् दूध पीना चाहिये।

विशेष अनुपान--कौंचकी जड़का चूर्ण, गेहूंका आटा, तालमखानेका चूर्ण और उड़दका आटा समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर ईखके रसमें सान कर उसके (छोटे छोटे) पूड़े बनाकर घीमें तलकर रक्खें।

नित्य प्रति औषध खानेके पश्चात् इसमेंसे २ पूड़े खाने चाहियें।

इस प्रकार इस रसको सेवन करनेसे स्त्री-रमण-शक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है।

(६०३९) रतिवल्लभपूगपाकः

(यो. र.। वाजीकरण. ; वृ. यो. त.। त. १४७; नपुंस्का। त. ४)

पूगं दक्षिणदेशजं दशपलोन्मानं भृशं कर्तयेत्
तच्छिन्नं जलयोगतो मृदुतरं सङ्कुट्य चूर्णीकृतम्
तच्चूर्णं पटशोधितं वसुगुणे गोशुद्धदुग्धे पचेत्
गव्याज्याञ्जलिसंयुतेऽतिनिबिडे दद्यात्तुलार्धां सिताम्॥

पक्वं तज्ज्वलनात्क्षितिं प्रति नयेत्तस्मिन्पुनः प्रक्षिपेद्
दद्यात्तदुदीरयामि बहुला दृष्टाऽऽदरात्संहिताः
एला नागबला बलासचपला जातीफलं लिंगिता
जातीपत्रकपत्रपत्रकयुगं तच्च त्वचा संयुतम्॥

विश्वावीरणवारिवारिदवरा वांशी वरी वानरी
द्राक्षा सेक्षुरगोक्षुराऽथ महती खर्जूरिका क्षीरिका
धान्याकं सकसेरुकं समधुकं शृङ्गाटकं जीरकं
पृथ्वीकाऽथ यवानिका वरटिका मांसी मिसी मेथिका॥

कन्देष्वत्र विदारिकाऽथ मुशली गन्धर्वगन्धा तथा
कर्चूरं करिकेसरं समरिचं चारस्य बीजं नवम्।
बीजं शाल्मलिसम्भवं करिकणा बीजं च राजीवनं
श्वेतं चन्दनमत्र रक्तमपि च श्रीसंज्ञपुष्पैः समम्॥

सर्वं चेति पृथक्पृथक्पलमितं सञ्चूर्ण्य तत्र क्षिपेत्
सूतं वङ्गभुजङ्गलोहगगनं सन्मारितं स्वेच्छया॥
कस्तूरीघनसारचूर्णमपि च प्राप्तं तथा प्रक्षिपेत्
पश्चादस्य तु मोदकान्विरचयेद् बिल्वप्रमाणानथ
तान्भुक्त्वाऽति सदा यथानलबलं भुञ्जीत नाम्लं रसं

पूर्वस्मिन्नशिते गते परिणतिं प्राग्भोजनाद्भक्षयेद्
नित्यं श्रीरतिवल्लभाख्यकमिमं यः पूगपाकं भजेत्
स स्याद्वीर्यविवृद्धिवृद्धमदनो वाजीव शक्तो रतौ
दीप्ताग्निर्बलवान्बली विरहितो हृष्टः सुपुष्टः सदा
वृद्धो योऽपि युवेव सोऽपि रुचिरः पूर्णेन्दुवत्सुन्दरः॥

१० पल (५० तोले) दखिनी सुपारी लेकर उनके छोटे छोटे टुकड़े करके पानीमें भिगो दें और फिर जब वे फूल कर कोमल हो जाएं तो उन्हें अच्छी तरह कूट कर सुखा लें और फिर कपड़छन चूर्ण तैयार कर लें।

तदनन्तर उसमें १० सेर गोदुग्ध और ४० तोले घी डाल कर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें ३ सेर १० तोले खांड मिलाकर थोड़ी

देर और पकावें और पाक लगभग तैयार हो जाने पर अग्निसे नीचे उतार कर उसमें निम्न लिखित चीज़ोंका चूर्ण मिलाकर ५-५ तोलेके मोदक बना लें।

चूर्णकी ओषधियां—इलायची, नागबला (गंगेरन), खरैटी, पीपल, जायफल, शिवलिंगी, जावित्री, तेजपात, तालीसपत्र, दालचीनी, सोंठ, खस, सुगन्धबाला, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, बंसलोचन, शतावर, कौंचके बीज, मुनक्का, तालमखाना, गोखरु, बड़ी खजूर, खिरनी, धनिया, कसेरु, मुलैठी, सिंघाड़ा, जीरा, बड़ी इलायची, अजवायन, कुसुम्भके बीज, जटामांसी, सौंफ, मेथी, विदारी कन्द, मूसली, असगन्ध, कचूर, नागकेसर. काली मिर्च, चिरौंजी, सेंभलके बीज, गजपीपल, कमलगट्टा, सफेद चन्दन, लाल चन्दन और लौंग; प्रत्येकका चूर्ण ५-५ तोले तथा रससिन्दूर, बंग-भस्म, सीसा भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, कस्तूरी और कपूर यथोचित परिमाणमें ले कर सबको एकत्र मिला लें।

इन्हें यथोचित मात्रानुसार, प्रथम बार किया हुवा भोजन पच जानेके पश्चात् और दूसरी बारके भोजनसे पूर्व खाना चाहिये।

अपथ्य—अत्यम्ल पदार्थ।

ये मोदक अत्यन्त वीर्य वर्द्धक और वाजीकरण हैं। इनके सेवनसे अग्नि दीप्त होती, बल बढ़ता तथा झुर्रियां नष्ट हो जाती हैं। एवं वृद्ध पुरुष भी युवाके समान हो जाता है।

(६०४०) रतिवल्लभो मोदकः

(भै. र. । वाजीकरणा.)

शक्राशनस्य बीजानां चूर्णान्यष्टपलानि च ।
हविषः कुडवञ्चैकं सिताप्रस्थं प्रगृह्य च ॥
शतावरीरसप्रस्थं तथा शक्राशनस्य च ।
गव्यमाजं पयःप्रस्थं ततः प्रस्थद्वयं पचेत् ॥
धात्री द्विजीरकं मुस्तं त्वगेलापत्रकेशरम् ।
आत्मगुप्ता चातिबला तालाङ्कुरकशेरुकम् ॥
शृङ्गाटकं त्रिकटुकं धान्यमभ्रञ्च वङ्गकम् ।
पथ्या द्राक्षा च काकोल्यौ खर्जूरं क्षुरकं तथा ॥
कटुका मधुकं कुष्ठं लवङ्गं सारसैन्धवम् ।
यमानी चाजमोदा च जीवन्ती गजपिप्पली ॥
प्रत्येकं कर्षमेकन्तु चूर्णितानि शुभानि च ।
कुडवार्द्धं पाकशेषे मधुनः प्रक्षिपेत्ततः ॥
मृगाण्डजं सकर्पूरं यथालाभं विनिक्षिपेत् ।
रतिवल्लभनामायं सेव्यमानो महारसः ॥
परमोजस्करो बल्यो वातव्याधिविनाशनः ।
वातपित्तहरो वृष्यो दृप्तिसन्दीपनः परः ॥
पित्तश्लेष्मास्रपित्तघ्नो विषगुल्मज्वरापहः ।
पातव्य एष मन्दाग्निरोगाणां क्षयहेतुकः ॥
न भवेल्लिङ्गशैथिल्यं वृद्धानां पुष्टिवर्द्धनम् ।
यस्य गेहे सदा बह्वयः पत्न्यः स्युः सुमनोहराः ॥
रसः सेव्यः सदैवायं मोदको रतिवल्लभः ॥

भांगके बीजोंका चूर्ण आधा सेर, घी आधा सेर, मिश्री १ सेर, शतावर और भांगका रस २-२ सेर, एवं गायका दूध २ सेर और बकरीका दूध ४ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पाक लगभग तैयार हो जाए तो उसमें निम्न लिखित प्रक्षेप द्रव्योंका चूर्ण मिला दें—

प्रक्षेप द्रव्य---आमला, सफेद जीरा, काला जीरा, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, कौंचके बीज, अतिबला (कंघी) की जड़, तालके अंकुर, कसेरु, सूखा सिंघाड़ा, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनियां, अभ्रक भस्म, बंग भस्म, हर्र, द्राक्षा (मुनक्का), काकोली, क्षीरकाकोली, खजूर (पिण्ड खजूर), तालमखाना, कुटकी, मुलैठी, कूठ, लौंग, लोह भस्म, सेंधा नमक, अजवायन, अजमोद, जीवन्ती और गजपीपल; इनका चूर्ण १।-१। तोला ।

यह चूर्ण मिलानेके पश्चात् जब पाक ठण्डा हो जाए तो उसमें २० तोले शहद और सुगन्ध योग्य कपूर तथा कस्तूरी मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

यह मोदक अत्यन्त ओज वर्द्धक और बलकारक है । तथा इसके सेवनसे वातव्याधि, वातपित्तज रोग, पित्तकफज रोग, रक्तपित्त, विषविकार, गुल्म, ज्वर और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

यह अत्यन्त वृष्य (वीर्य वर्द्धक), दृष्टि वर्द्धक, और पौष्टिक है ।

इसे सेवन करनेसे कभी लिङ्ग-शैथिल्य नहीं होता ।

जिनके यहां अनेकों पत्नियां हों उन्हें यह रस अवश्य सेवन करना चाहिये ।

(मात्रा---१ तोलो ।)

(अनुपान---मिश्रीयुक्त दूध ।)

(६०४१) रत्नगर्भपोटलीरसः

(भै. र. ; र. चं. ; र. र. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । राजयक्ष्मा. ; र. का. धे. । क्षय. ; वृ. यो. त. । त. ७६; रसे. चि. म. । अ. ९; यो. त. । त. २७; वृ. नि. र. । क्षय.)

रसं वज्रं हेम तारं नागं लौहञ्च ताम्रकम्[1] ।
तुल्यांशं मारितं[2] योज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥
***शङ्खञ्च तुत्थं[3] तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ।**
मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेन पूर्या वराटिका ॥
टङ्कणं रविदुग्धेन पिष्ट्वा तन्मुखमन्धयेत् ।
मृद्भाण्डे तं निरुध्याथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥
आदाय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्याः सप्तभावनाः ।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः ॥
द्रवैर्भाव्यं ततः शोष्यं देयं गुञ्जैकसम्मितम् ।
यक्ष्मरोगं निहन्त्याशु साध्यासाध्यं न संशयः॥
योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैस्तथा ।
महारोगाष्टके कासे ज्वरे श्वासेऽतिसारके ॥
पोट्टलीरत्नगर्भोऽयं योगवाहे नियोजयेत् ॥

रस सिन्दूर, हीरा भस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, सीसा भस्म, लोह भस्म, ताम्र भस्म, मोती भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, प्रवाल भस्म, शंख भस्म और शुद्ध तूतिया (तुत्थ) समान भाग लेकर

---

१ लोहं तथा अभ्रकमिति पाठान्तरम् ।

२ तुल्यांशं मरिचमिति पाठान्तरम् ।

* कई ग्रन्थोंमें "राजावर्तं च वैक्रान्तं गोमेदं पुष्परागकम् ।" यह पंक्ति अधिक है.

३ शङ्खं च तुल्य तुल्यांशमिति पाठान्तरम् ।

सबको एकत्र मिला कर सात दिन चीतेके क्वाथमें घोटें और फिर उसे सुखा कर बड़ी बड़ी कौड़ियों में भर दें एवं सुहागेको आकके दूधमें घोट कर उससे उन कौड़ियोंका मुंह बन्द कर दें। तदनन्तर उनको शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें।

इसके पश्चात् पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे (कौड़ी समेत) पीस लें और फिर उसे संभालुके रसकी सात भावना, अदरकके रसकी सात और चीतेके क्वाथकी २१ भावना दे कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

अनुपान—पीपल और काली मिर्चका चूर्ण तथा घी और शहद।

इसके सेवनसे साध्यासाध्य हर प्रकारका यक्ष्मा रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

इसके अतिरिक्त यह रस अष्ट महारोग, खांसी, ज्वर, श्वास और अतिसारको भी नष्ट करता है तथा योगवाही है।

(६०४२) रत्नगिरिरसः

(र. म. । अ. ६; भै. र.; र. का धे.; र. रा. सु. । ज्वरा.; रसे. चि. म. । अ. ९.)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रहाटकम्।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यात् सूतार्द्धं मृतलौहकम् ॥
लौहार्द्धं मृतवैक्रान्तं मर्दयेद् भृङ्गजद्रवैः।
पर्पटीरसवत्पाच्यं चूर्णितं भावयेत् पृथक् ॥
शिग्रुवासकनिर्गुण्डीवचा[1]ग्निभृङ्गमुण्डिकैः।
[2]द्राक्षामृताजयन्तीभिर्मुनिब्राह्मीसुतिक्तकैः[3] ॥
कन्यायाश्च द्रवैर्भाव्यं प्रतिवारैस्त्रिधा त्रिधा।
रुद्ध्वा लघुपुटे पाच्या वालुकायन्त्रमध्यगा ॥
यन्त्रे निरुद्ध्य यत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
चूर्णं नवज्वरे देयं रक्तिमात्रं रसस्य वै ॥
कृष्णाधान्यसमायुक्तं मुहूर्त्तान्नाशयेज्ज्वरम्।
अयं रत्नागरिर्नाम रसो योगस्य वाहकः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म और स्वर्ण भस्म ४–४ भाग; लोह भस्म २ भाग तथा वैक्रान्त भस्म १ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको भंगरेके रसमें घोट कर पर्पटी रसके समान पकावें। (घृतलिप्त करछी-में मन्दाग्नि पर पिघला कर, गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर डाल दें और उसके ऊपर दूसरा कदलीपत्र रख कर गोबरसे दबा दें। जब शीतल हो जाय तो निकाल लें।)

तदनन्तर उसे बारीक करके सहंजनेके रस, बासेके रस, संभालुके रस, बचके रस, चीतेके क्वाथ, भंगरे और गोरखमुण्डीके रस तथा द्राक्षा, गिलोय, जयन्ती, अगस्ति, ब्राह्मी, पटोल और घृतकुमारी-के रसकी पृथक् पृथक् ३–३ भावना देकर शराव-सम्पुटमें बन्द करें और फिर उस पुटको बालुका-यन्त्रमें रख कर, यन्त्रका मुख बन्द कर दें तथा लघुपुटमें पकावें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो औषधको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

---

१ कई ग्रन्थोंमें वचका अभाव है।

२ कई ग्रन्थोंमें क्षुद्रा (कटेली) पाठ है।

३ र. म. में. चित्रक पाठ है.।

मात्रा—१ रत्ती।

यह रस योगवाही है। इसे पीपल और धनिये के चूर्णके साथ देनेसे १ पहरमें ज्वर नष्ट हो जाता है।

(६०४३) रत्नप्रभा वटिका

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

स्वर्णं मौक्तिकमभ्रञ्च नागं वङ्गञ्च पित्तलम्।
माक्षिकं रजतं वज्रं लोहं तालञ्च खर्परम्॥
कदल्याः काकमाच्याश्च वासकस्योत्पलस्य च।
स्वरसेन जयन्त्याश्च कर्पूरसलिलेन च॥
भावयित्वा यथाशास्त्रमहोरात्रगतः परम्।
सम्मर्द्यातन्द्रितः कुर्याद् भिषग् गुञ्जामिता वटीः॥
एकैकाञ्च प्रयुञ्जीत प्रातराशं बलाम्बुना।
उष्णेन पयसा वापि केशराजरसेन वा॥
इयं रत्नप्रभा नाम्नी वटिका सर्वसिद्धिदा।
सर्वस्त्रीरोगहन्त्री च बल्या वृष्या रसायनी॥

स्वर्ण भस्म, मोती भस्म, अभ्रक भस्म, सीसा भस्म, बंग भस्म, पीतल भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, चांदी भस्म, हीरा भस्म, लोह भस्म, हरताल भस्म और खपरिया भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर केला, मकोय, बासा (अडूसा), नीलोत्पल, और जयन्तीके स्वरस तथा कपूरके पानीमें १-१ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें प्रातः काल सेवन करना चाहिये।

मात्रा—१ गोली।

अनुपान—बला (खरैटी) का क्वाथ या गर्म दूध अथवा भांगरेका रस।

यह वटी समस्त स्त्रीरोगोंको नष्ट करती और बल बढ़ाती है। यह वृष्य और रसायनी भी है।

(६०४४) रत्नभागोत्तररसः

(र. र. स. । उ. ख. अ. २२; र. चं. । स्त्रीरोगा.)

वज्रं मरकतं पद्मरागं पुष्पं च नीलकम्।
वैडूर्यं चाथ गोमेदं मौक्तिकं विद्रुमं तथा॥
पञ्चगुञ्जामितं सर्वं रत्नं भागोत्तरं परम्।
तत्तन्त्रोक्तविधानेन भस्मीकुर्यात्प्रयत्नतः॥
सर्वस्माद्ष्टगुणितं भस्म वैक्रान्तसम्भवम्।
तत्तुल्यं ताप्यजं भस्म तद्वद्विमलभस्म च॥
सर्वतस्त्रिगुणां तुल्यां रसगन्धककज्जलीम्।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य छागीदुग्धेन तद्द्व्यहम्॥
विधाय पर्पटीं यत्नात्परिचूर्ण्य प्रयत्नतः।
वन्ध्याकर्कोटकीचूर्णक्वाथेन परिमर्दयेत्॥
काननोत्पलविंशत्या पुटेत्षोडशवारकम्।
एवं रसो विनिष्पन्नो रत्नभागोत्तराभिधः॥
महावन्ध्यादिवन्ध्यानां सर्वासां सन्ततिप्रदः।
देवीशास्त्रे विनिर्दिष्टः पुंसां वन्ध्यत्वरोगनुत्॥
सोऽयं पाचनदीपनो रुचिकरो वृष्यस्तथा गर्भिणी-
सर्वव्याधिविनाशनो रतिकरः पाण्डुप्रचण्डार्तिनुत्
धन्योबुद्धिकरश्च पुत्रजननः सौभाग्यकृद्योषितां
निर्दोषः स्मरमन्दिरामयहरो योगादशेषार्तिनुत्॥

हीरा भस्म ५ रत्ती, पन्ना भस्म ६ रत्ती, माणिक्य भस्म ७ रत्ती, पुखराज भस्म ८ रत्ती, नीलम भस्म ९ रत्ती, वैदूर्य मणि-भस्म १० रत्ती, गोमेदमणि भस्म ११ रत्ती, मोती भस्म १२ रत्ती और प्रवाल भस्म १३ रत्ती तथा वैक्रान्त भस्म,

स्वर्णमाक्षिक भस्म और विमल (रौप्य माक्षिक) भस्म ८१-८१ माशे (प्रत्येक पौने सात तोले) और समान भाग पारद गंधकसे बनी हुई कज्जली सबसे तीन गुनी (६३ तोले ३ माशे ३ रत्ती) ले कर सबको एकत्र मिला कर २ दिन बकरीके दूधमें घोटें और फिर उसकी यथाविधि पर्पटी बनावें। (घृत-लिप्त लोहपात्रमें औषधको पिघला कर गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैलावें और उसके ऊपर दूसरा कदली पत्र रख कर उसे गोबरसे दबा दें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो निकाल कर पीस लें।)

अब इसे बांझ ककोड़ेकी जड़के काथमें खरल करके शराव-सम्पुटमें बन्द करके २० अरने उपलोंकी अग्निमें पकावें। इसी प्रकार १६ पुट दें।

यह रस वन्ध्यत्व रोगको नष्ट करनेके लिये अत्यन्त प्रभावशाली है।

इसके अतिरिक्त यह पाचन, दीपन, रुचि-वर्द्धक, वृष्य, गर्भिणी रोग-नाशक, तथा पाण्डु और योनिदोष-विनाशक एवं कामशक्ति और बुद्धि-वर्द्धक है।

रविताण्डवरसः

(र. चं.; र. र. । भगन्दरा. ; र. र. स. । उ. ख. अ. २४; यो. त. । त. ६१)

"चित्रविभाण्डको रसः" प्र. सं. १९२० देखिये।

(६०४५) रविसुन्दरवटी

(र. रा. सु. । अजीर्णा.)

विषं गन्धो रसः शुण्ठी भेदीमरिचसंयुतम्।
पिप्पली चात्र दातव्या वज्रीक्षीरे विभावितम्॥
धत्तूरस्य च बीजानि सर्वान्येकत्र कारयेत्।
भावना च त्रिधा देया दन्तीमूलस्य सप्तधा॥
चित्रकस्यापि हेम्नश्च त्रिवृत्तश्चार्द्रकस्य च।
मुद्गप्रमाणा वटिका रविसुन्दरसञ्ज्ञिका॥
करोत्यग्निबलं पुंसां ज्वरं कासं व्यपोहति।
वातश्लेष्मभवान् रोगान् यानन्यान् श्लेष्मसम्भवान्॥
अजीर्णं षड्विधं जित्वा कोष्ठाग्निं वर्द्धयेत्सदा।
सर्वं मन्दानलं हन्ति वज्रेणेन्द्रो यथाऽसुरान्॥

शुद्ध बछनाग (मीठा विष), शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद तथा सोंठ, अम्लबेत, काली मिर्च, पीपल और धतूरेके बीजोंका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको स्नुही (थोहर—सेंड) के दूधकी ३ और दन्तीमूल, चीता, धतूरा, निसोत तथा अदरकके रसको सात सात भावना देकर मूंगके बराबर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अग्नि बलकी वृद्धि होती और ज्वर, खांसी, वात कफज रोग, कफज रोग, छः प्रकारके अजीर्ण और अग्निमांद्यका नाश होता है।

(६०४६) रविसुन्दरो रसः (१)

(र. च. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

ससिन्धुजं चित्रकबीजशङ्खं
मरीचयुक्तं विषभागयुक्तम्।

दन्तीरसैर्भावनया त्रियुक्तं
रसः प्रसिद्धो रविसुन्दरोऽयम् ॥
वातज्वरार्तिं सकलामयत्वं
मन्दानलत्वं शिरसो गुरुत्वम् ।
सर्वं निहन्त्युग्रतरं विकारं
गुञ्जाप्रमाणा वटकी कृता वा ॥
कुलित्थयूषं त्वथ वा तु
कृष्णशाल्योत्थमण्डं प्रपिबेद्धि तेन ।
कोष्ठाग्निवृद्धिं विदधाति रूपं
निहन्ति वातज्वरवातदोषम् ॥

सेंधा नमक, चित्रक बीज, शंख भस्म, काली मिर्चका चूर्ण और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर दन्ती-मूलके क्वाथ की ३ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे वातज्वर, अग्निमांद्य और शिरका भारीपन नष्ट होता है ।

अनुपान—कुलथीका यूष अथवा कालेधान (कलधन) के चावलोंका मांड ।

(६०४७) रविसुन्दरो रसः (२)

(र. म. । अ. ६; वृ. नि. र.; र. रा. सु. । ज्वरा.)

द्विभागतालेन हतं च ताम्रं
रसं च गन्धं च समानमाहुः ।
विषं समं तद्द्विगुणं च ताम्रं
त्रिसप्तवारेण दिवाकरांशौ ॥
विमर्द्यारिष्टस्वरसेन चूर्णं
गुञ्जैकमानं सितया समेतम् ।
ज्वराङ्कुशोऽयं रविसुन्दराख्यो
ज्वरान्निहन्त्यष्टविधान्समग्रान् ॥

दो गुनी हरतालके योगसे की हुई ताम्रकी भस्म २ भाग तथा शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और शुद्ध बछनाग १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको धूपमें नीमके रसमें २१ बार पुट दें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

अनुपान—खांड ।

इनके सेवनसे ८ प्रकारका ज्वर नष्ट होता है ।

(६०४८) रसकर्पूरगुटिका

(र. का. धे. । उपदंशा.)

रसदीपकभल्लातकुशमूलैः कृता वटी ।
बदरीफलमानेन नाशयेदुपदंशकम् ॥

रसकपूर, केसर, भिलावा और कुशाकी जड़ समान भाग ले कर बेरके समान गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे उपदंश नष्ट होता है ।

(६०४९) रसकर्पूरयोगः

(वै. र. । मसूरिका.)

गोधूमचूर्णं सन्नीय विदध्यात्सूक्ष्मकूपिकाम् ।
तन्मध्ये रसकर्पूरं चतुर्गुञ्जामितं क्षिपेत् ॥
ततस्तु गुटिकां कुर्य्याद्यथा न स्याद्रसो बहिः ।
लवङ्गसूक्ष्मचूर्णेन तां वटीमवधूलयेत् ॥
दन्तस्पर्शो यथा न स्यात्तथा तामम्भसा गिलेत् ।
ताम्बूलं भक्षयेत्पश्चाच्छाकाम्ललवणं त्यजेत् ॥
श्रममातपमध्वानं विशेषात्स्त्रीनिषेवणम् ।
फिरङ्गसञ्ज्ञको रोगः सर्वथा प्रशमं व्रजेत् ॥
भक्षितोऽनेन विधिना मुखशोथं न विन्दति ।
पञ्चवल्ककषायेण गण्डूष कारयेद्भिषक् ॥

पलार्द्धं जीरकं चैव खदिरं माषमात्रकम् ।
जलेन पेषयित्वा तु कवलं कारयेद्भिषक् ॥
तेनैवोपशमं याति मुखपाकं सुदारुणम् ॥

गेहूंके आटेको पानीसे सान कर उसकी एक छोटीसी कूपिका बना लें अर्थात् १ गोली बना कर उसमें गढ़ा कर लें । तदनन्तर इस गढ़ेमें ४ रत्ती शुद्ध रसकपूर रख कर उस कूपिकाकी गोली इस प्रकार बना लें कि दवा उससे बाहर न निकले । तत्पश्चात् उस गोलीको लौंगके बारीक चूर्णमें रौंद लें कि जिससे उसके चारों ओर चूर्ण लग जाए ।

अब इस गोलीको पानीके साथ इस प्रकार निगल जाएं कि दांतोंको न लगे; और गोली खानेके पश्चात् पान चबा लें ।

अपथ्य---शाक, अम्ल, लवण, परिश्रम, धूप, मार्ग चलना और विशेषतः स्त्री-सहवासका त्याग करें ।

(पथ्य---बेसनकी रोटी और घी ।)

इस प्रकार रसकपूर खानेसे मुखशोथ उत्पन्न नहीं होता और उपदंश रोग समूल नष्ट हो जाता है ।

यदि किसी कारणवश मुख-पाक हो भी जाए तो पञ्चवल्कल (पीपल, पिलखन, बड़, गूलर और बेत) की छालके काथके कुल्ले करने चाहियें तथा २॥ तोला जीरा और १। माशा कत्था, ले कर दोनोंको पानीमें पीस कर मुखमें रखना चाहिये । इससे भयंकर मुख शोथ भी नष्ट हो जाता है ।

नोट--४ रत्ती मात्रा अधिक है अतः मात्राका निर्णय रोगीकी अवस्थानुसार करना चाहिये ।

(६०५०) रसकर्पूरविधिः (१)

(यो. त. । त. १७)

शुद्धसूतसमं तुत्थं घनक्वाथेन सप्तधा ।
भावयित्वा न्यसेत्कूप्यां मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥
वालुकायन्त्रमध्ये तु यामार्कं ज्वालयेदधः ।
रसकर्पूर विख्यातः खोटबद्धो रसः ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध तूतिया समान भाग ले कर दोनोंको खरल करके नागरमोथेके काथकी सात भावना दें और फिर उसे कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसके मुख पर डाट लगा कर उसे गुड़ चूनेसे मज़बूत कर दें । तदनन्तर इस शीशीको बालुका यन्त्र में रख कर १२ पहर की अग्नि दें । जब शीशी स्वांग शीतल हो जाए तो उसमेंसे रस कपूर को निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

(६०५१) रसकर्पूरविधिः (२)

(यो. त. । त. १७)

यन्त्रे सुसिद्धे डमरूसमाख्ये
निधाय सूतस्य पलानि पञ्च ।
वल्मीकमृत्स्नाखटिकेष्टिकानां
सगैरिकाणां तुवरीयुतानाम् ॥
ससैन्धवानां समभागिकानां
चूर्णाढकं चोपरितो निदध्याद् ।
अम्लेन दध्ना महिषीभवेन
पिष्टं रसोनस्य शरावमेकम् ॥

समक्रमेणात्र निधाय खण्डै-
राच्छादयेत्खर्परजैर्विसन्धिः ।
चूर्णप्रलिप्तोदरमूर्ध्वभाण्डं
संस्थाप्य संमुद्रय दृढं सुचुल्ल्याम् ॥
प्रज्वालयेद्वह्निमधः क्रमेण
संस्थाप्य यन्त्रोपरि वस्त्रमार्द्रम् ।
वह्निं प्रदद्याद्दिनषट्कमत्र
तत्स्वाङ्गशीतं परिगृह्य बुद्ध्या ॥
तं द्रोणपुष्पी पयसा प्रपिष्टं
कूप्यां विदध्यान्नवसादरं च ।
कर्षप्रमाणं प्रहरत्रयं च
वह्निं प्रदद्यादथ शीतलाङ्गीम् ॥
निष्कास्य कूपीं सिकताख्ययन्त्रा-
दास्फोटय कण्ठस्थममुं प्रगृह्यात् ।
कर्पूरनामा रसनायकोऽयं
वल्लः पुराणेन गुडेन भुक्तः ॥
निर्वात् भाजा सरुजा च पथ्य-
शीलेन कुष्ठामयनाशनः स्यात् ।
फिरङ्गकरिकेसरी सकलकुष्ठकालानलोऽ-
खिल व्रणविनाशकृद्व्रणजगर्तपूर्तिप्रदः
सुवर्णसमवर्ण कृद्बलहुताशतेजस्करः ।
समस्त गद तस्करी रसपतिः स कर्पूरकः ॥

बल्मीक मृत्तिका (बमीकी मिट्टी), खिड़िया, ईंटका चूरा, गेरु, फिटकी और सेंधा नमक; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें ।

कपड़ मिट्टीकी हुई एक मज़बूत हाण्डीमें २५ तोले शुद्ध पारद डाल कर उसके ऊपर उपरोक्त बल्मीक मृत्तिका आदिका मिश्रण ४ सेर डालें और फिर भैंसके खट्टे दहीमें ल्हसनको पीस कर उससे बना हुवा शराव उसके ऊपर ढक दें। तथा सन्धि स्थान पर मिट्टीके ठीकरे रख कर अच्छी तरह बन्द कर दें।

तत्पश्चात् एक हाण्डीके भीतर चूनेको लेप करके उसे उपरोक्त हाण्डी पर उलटी ढक दें और दोनोंकी सन्धिको कपड़ मिट्टीसे या गुड़ चूने आदिसे अच्छी तरह बन्द कर दें ।

अब इस यन्त्रको चूल्हे पर चढ़ा कर उसके नीचे क्रमवर्द्धित अग्नि जलावें और ऊपरकी हाण्डी पर भीगा कपड़ा ढक दें । ज्यों ज्यों कपड़ा गरम होता रहे त्यों त्यों उसे ठण्डे पानीमें भिगो कर ठण्डा करते रहें ।

इस प्रकार छः दिन तक अग्नि जलानेके पश्चात् यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसे खोल कर ऊपरकी हाण्डीमें लगे हुवे रसको निकाल लें ।

तदनन्तर उस रसमें १। तोला नौसादर मिला कर दोनोंको द्रोणपुष्पी (गूमा) के रसमें घोट कर कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर दें और उसे बालुकायन्त्रमें रख कर ३ पहरकी अग्नि दें।

इसके पश्चात् यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे शीशीको निकाल कर उसे सावधानी पूर्वक तोड़ कर उसके गलेमें लगे हुवे रसकर्पूरको निकाल लें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे पुराने गुड़में लपेट कर खाना चाहिये । (औषध दांतको न लगे यह ध्यान रखना चाहिये ।)

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ, और व्रण नष्ट होते हैं। यह रस फिरङ्ग रोग (उपदंश) में अत्यन्त उपयोगी है।

इसके सेवनसे शरीर काञ्चनसदृश तेजवान होता और अग्नि दीप्त होती है।

(पथ्य—लवण, खटाई आदि रहित बेसन की रोटी और घी खाना तथा धूप परिश्रम आदिसे बचना चाहिये।

मात्राका निर्णय रोगीकी अवस्था देख कर करना चाहिये।)

(६०५२) रसकर्पूरविधिः (३)

(भा. प्र.। प्र. खं.)

शुद्धसूतसमं कुर्यात्प्रत्येकं गैरिकं सुधीः।
इष्टिकां खटिकां तद्वत्स्फटिकां सिन्धुजन्म च॥
वल्मीकं क्षारलवणं भाण्डरञ्जकमृत्तिकाम्।
सर्वाण्येतानि सञ्चूर्ण्य वाससा चापि शोधयेत्॥
एभिश्चूर्णैर्युतं सूतं यावद्यामं विमर्दयेत्।
तच्चूर्णसहितं सूतं स्थालीमध्ये परिक्षिपेत्॥
तस्याः स्थाल्या मुखे स्थालीमपरां धारयेत्समाम्
सवस्त्रकुट्टितमृदा मुद्रयेदनयोर्मुखम्॥
संशोष्यमुद्रयेद्भूयो भूयः संशोष्य मुद्रयेत्।
सम्यग्विशोष्य मुद्रां तां स्थालीं चुल्ल्यां वि-
धारयेत्॥
अग्निं निरन्तरं दद्याद्यावद्दिनचतुष्टयम्।
अङ्गारोपरि तद्यन्त्रं रक्षेद्यत्नादहर्निशम्॥
शनैरुद्घाटयेद्यन्त्रमूर्ध्वस्थालीगतं रसम्।
कर्पूरवत्सुविमलं गृह्णीयाद्गुणवत्तरम्॥
तद्देवकुसुमचन्दनकस्तूरीकुङ्कुमैर्युक्तम्।
खादन्हरति फिरङ्गं व्याधिं सोपद्रवं सपदि॥
विन्दति वह्नेर्दीप्तिं पुष्टिं वीर्यं बलं विपुलम्।
रमयति रमणीशतकं रसकर्पूरस्य सेवकः स-
ततम्॥

शुद्ध पारद, गेरु मिट्टी, ईंटका चूर्ण, खिड़िया मिट्टी, फिटकरा, सैंधा नमक, बल्मीक मृत्तिका (बामीकी मिट्टी), खारी नोन और बरतन रंगनेकी मिट्टी समान भाग ले कर पारके अतिरिक्त अन्य समस्त ओषधियोंको कूट कर कपड़ेसे छान लें और फिर उस चूर्णमें पारद मिलाकर १ पहर तक खरल करें।

अब इस चूर्णको एक कपड़मिट्टी की हुई हाण्डीमें भर कर उसके ऊपर उसीके बराबर दूसरी हाण्डी उलटी करके ढक दें और दोनोंके जोड़को कपड़मिट्टीसे बन्द कर दें। एककपड़मिट्टी सूख जाने पर दूसरी बार करें। इसी प्रकार ३ कपड़मिट्टी लगा कर दोनोंके जोड़को अच्छी तरह बन्द करें।

तदनन्तर कपड़मिट्टीको अच्छी तरह सुखा कर यन्त्रको चूल्हे पर चढ़ा दें और निरन्तर चार दिन तक पकावें।

इसके पश्चात् अग्नि देनी बन्द कर दें और २४ घण्टे तक यन्त्रको अंगारोंपर ही रहने दें। तत्पश्चात् हाण्डी के स्वांगशीतल होने पर, जोड़को सावधानी पूर्वक खोल कर ऊपरकी हाण्डीमें लगे हुवे कपूरके सदृश रसको निकाल लें। इसीका नाम रसकर्पूर है।

इसे लौंग, सफेद चन्दन, कस्तूरी और केसरके चूर्णके साथ खानेसे उपद्रवयुक्त फिरंग रोग (उपदंश) शीघ्र ही नष्ट हो जाता तथा अग्नि, बल, वीर्य और काम शक्तिकी वृद्धि होती है।

(रसकर्पूर सदैव किसी योग्य वैद्य की देखरेखमें ही सेवन करना चाहिये।)

(६०५३) रसकर्पूरविधिः (४)

(रसे. सा. सं.)

टङ्कणं मधु लाक्षा च ऊर्णागुञ्जायुतो रसः।
मर्दितो भृङ्गजद्रावैर्दिनं सम्पुटमागतम् ॥
ध्मातो भस्मत्वमाप्नोति शुद्धकर्पूरसन्निभम् ।

सुहागा, शहद, लाख, ऊन, चौंटली (गुञ्जा) और शुद्ध पारद समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर भंगरेके रसमें खरल करें और फिर उसे सम्पुटमें बन्द करके उस सम्पुटको कोयलोंकी अग्नि पर रख कर धौंकनीसे धौंकते रहें। इसी प्रकार (३-४ पहर) पकानेसे पारदकी भस्म हो जायगी जो शुद्ध कपूरके समान होगी।

(६०५३ अ.) रसकर्पूरविधिः (५)
(सुधानिधिरसः)

(रसे. सा. सं. । पूर्व खण्ड.)

पिष्टं पांशुपटु प्रगाढममलं वज्र्याम्बुना नैकशः
सूतं धातुगतं खटीकवलितं तं सम्पुटे रोधयेत् ॥
अन्तःस्थं लवणस्य तस्य च तले प्रज्वाल्य वह्निं दृढं।
घस्रं ग्राह्यमथेन्दुकुन्दधवलं भस्मोपरिस्थं शनैः ॥
तद्वल्लद्वितयं लवङ्गसहितं प्रातः प्रयुक्तं भजे-
दूर्ध्वं रेचयति द्वियाममसकृत्पेयं जलं शीतलम्॥

पांशु लवण और पारद समान भाग ले कर दोनोंको थोहर (सेंड) के दूधमें कई बार घोट कर लोहेके सम्पुटमें रक्खें और उसे खिड़िया मिट्टीके चूर्णसे ढक कर सम्पुटको बन्द करके उसके ऊपर कपड़ मिट्टी कर दें। तदनन्तर एक हाण्डीमें आधी दूर तक सेंधा नमकका चूर्ण भर कर उस पर वह सम्पुट रक्खें और फिर हाण्डीको गले तक सेंधा नमकके चूर्णसे भर दें। एवं उसे चूल्हे पर चढ़ा कर नीचे एक दिन तीव्राग्नि जलावें। तत्पश्चात् यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे सम्पुटको निकालकर सावधानी पूर्वक खोल लें। इसमें ऊपरके कटोरेमें अत्यन्त स्वच्छ सफेद रंगकी भस्म मिलेगी। इसे 'रसकर्पूर' कहते हैं।

मात्रा--६ रत्ती।

इसे लौंगके चूर्णके साथ प्रातःकाल खाना चाहिये। तथा औषध खानेके पश्चात् शीतल जल पीना चाहिये।

इससे दो पहर पश्चात् रेचन हो कर दोष निकल जाते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा--आधीसे १ रत्ती तक।)

रसकर्पूरसेवनविधिः

(न. मृ. । त. ८)

केवलं रसकर्पूरमूर्द्ध्वपातनकारितम् ।
रक्तिकार्द्धप्रमाणेन पक्वगोधूमवेष्टितम् ॥
अथवा रक्तिकामानं पक्वचूर्णेन वेष्टितम् ।
विधिना भक्षयेद्रोगी लवङ्गचूर्णसंयुतम् ॥
अलवणं भक्षयेच्चान्नं अथवा घृतसंयुतम् ।
स्नातको ब्रह्मचारी च तिष्ठेद्विधियुतो बुधः ॥

पूर्वं विरेचनं कुर्यात्तत्पश्चाद्भक्षयेद्वटीम् ।
उपदंशफिरङ्गघ्नीमुत्तमेयं प्रकीर्तिता ॥

डमरुयन्त्र द्वारा उड़ाया हुवा रसकपूर आधी या १ रत्ती ले कर गेहूंकी रोटीके भीतरके गूदेमें इस प्रकार लपेटें कि बाहर न निकले, फिर उसे लौंगके चूर्णमें लपेट कर इस प्रकार निगल जाएं कि दांतोको न लगे। (आवश्यकता हो तो दवा के साथ १–२ घूंट ताज़ा पानी पिया जा सकता है।)

औषध खानेके पूर्व विरेचन द्वारा शरीर शुद्धि अवश्य कर लेनी चाहिये।

पथ्यापथ्य—लवण रहित रूखी अथवा घृतयुक्त रोटी खानी और ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना चाहिये।

इस प्रकार रसकर्पूर खानेसे उपदंश रोग नष्ट होता है।

(नोट—रसकर्पूर बनानेकी अनेक विधियां हैं; परन्तु वह चाहे जिस विधिसे बना हो उपरोक्त रीतिसे ही सेवन करना चाहिये।)

(६०५४) रसकेशरी

(भै. र. । अरोचका.)

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीकाथेन मर्दयेत् ।
देवपुष्पं वार्णमितं रसपादं तथामृतम् ॥
गुञ्जामात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ।
सर्वारोचकशूलार्त्तिमामवातं विनाशयेत् ॥
विसूचीमग्निमान्द्यञ्च भक्तद्वेषं सुदारुणम् ।
रसो निवारयत्येष केशरी करिणं यथा ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक १–१ भाग लेकर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर उसे दन्तीमूलके काथकी भावना दे कर उसमें ५ भाग लौंगका चूर्ण और चौथाई भाग शुद्ध बछनाग (मीठा विष) मिला कर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें सोंठ अथवा गुड़के साथ सेवन करना चाहिये।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारकी अरुचि, शूल और आमवातका नाश होता है।

(६०५४ अ) रसकेश्वररसः

(यो. र. । ज्वरा.)

खर्परं मानुषे मूत्रे स्थितं घस्रत्रिसप्तकम् ।
निस्त्वक्तदर्धमरिचं नवनीतेन मर्दयेत् ॥
शतधा भावयेन्निम्बुरसैः स्याद्रसकेश्वरः ।
पिप्पलीमधुयुग्दत्तः ससितो वाऽस्य भेषजम् ॥
ज्वरं धातुगतं पित्तं भ्रमं पित्तास्रजान्गदान् ।
रक्तातिसारं ग्रहणीं दुर्नामास्रं निवारयेत् ॥
अनम्लं दधि वा दुग्धं पथ्यं चास्मिन्प्रयोजयेत् ॥

खपरियाको २१ दिन तक मानवमूत्रमें भिगोए रक्खें और फिर उसमें उससे आधा छिलके-रहित काली मिर्चका चूर्ण मिला कर उसे नींबूके रसकी सौ भावना दें।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ या मिश्रीके शाथ खिलाना चाहिए।

इसके सेवनसे धातुगत ज्वर, पित्त, भ्रम, रक्तपित्त, रक्तातिसार, ग्रहणी और अर्शका रक्तस्राव आदि रोग नष्ट होते हैं।

पथ्य—मीठा दही या दूध।

(६०५५) रसगन्धककज्जलीयोगः

(यो. र. । उपदंशा.)

कर्षमात्रो रसः शुद्धो द्विकर्षो गन्धकस्तथा ।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा तां च गोघृतसंयुताम् ॥
माषमात्रां प्रतिदिनं दद्यादेवं त्रिसप्तकम् ।
गोधूमान्नं घृतं पथ्यं कारयेल्लवणं विना ॥
उपदंशापहः श्रेष्ठो योगोऽयं मुनिभिः स्मृतः ॥

शुद्ध पारद १। तोला और शुद्ध गन्धक २॥ तोले लेकर दोनोंकी कज्जली बनावें ।

मात्रा--१। माशा ।

इसे गायके घीमें मिलाकर २१ दिन तक सेवन करनेसे उपदंश रोग नष्ट होता है।

पथ्य--गेहूंकी रोटी घीसे खानी और नमकका त्याग करना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा--१ रत्ती ।)

(६०५६) रसगन्धकयोगः

(यो. र. । विद्रधि.)

वरुणादिकषायेण रसगन्धककज्जलीम् ।
भुक्त्वा निहन्ति माषैकां वाह्यमन्तश्च विद्रधिम्
अपक्वे त्वेतदुद्दिष्टं पक्वे तद् व्रणवत्क्रिया ॥

समान भाग पारद गन्धककी कज्जली बना कर उसे वरुणादि गणके क्वाथके साथ सेवन करनेसे बाह्य विद्रधि तथा अन्तर्विद्रधि नष्ट होती है।

मात्रा--१ माशा ।

यह क्रिया अपक्व विद्रधिमें हितकारी है; पक्व विद्रधिकी चिकित्सा तो व्रणचिकित्साके समान करनी चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा--१ रत्ती ।)

(६०५७) रसगुग्गुलुः

(भै. र. ; धन्व. । उपदंशा.)

ग्राह्यः पातनयन्त्रेण शुद्धश्चन्द्रसमो रसः ।
रक्तिकादश चैतस्य शर्करा त्रिगुणा भवेत् ॥
ततश्चतुर्गुणो ग्राह्यो गुग्गुलुर्महिषाक्षकः ।
घृतं रससमं दद्यान्मर्दयेच्च प्रयत्नतः ॥
विंशतिर्वटिकाः कार्यास्तिस्रस्तिस्रो दिनत्रयम् ।
एकादशदिनैरन्या देया एकादशैव ताः ॥
सप्ताहद्वयमेवञ्च कारयेद्भिषजां वरः ।
लवणं वर्जयेत्पथ्ये पादार्द्धाशनमिष्यते ॥
दिनद्वये व्यतीते तु पादोनं पथ्यमाचरेत् ।
मसूरसूपं सगुडं व्यञ्जनं चाथ कल्पयेत् ॥
पुनर्णवापटोलानि तिक्तपत्री च गोक्षुरम् ।
पुटपत्रीं कोकिलाक्षं शाकार्थे घृतभर्जितम् ॥
शर्करालवणस्थाने वेशवारे धनीयकम् ।
लवङ्गाजाजिहिङ्गूनि धान्यकं जीरकानि च ॥
पाकार्थे सम्प्रदातव्यं संस्कारार्थं भिषग्वरैः ।
भैरवस्य रसस्यान्याः क्रिया अत्र प्रयोजयेत् ॥
रसगुग्गुलुरेवं हि सर्वान् जित्वामयानयम् ।
कुष्ठोपदंशनामानं व्रणं वातादिसंयुतम् ॥
कामदेवप्रतिकाशश्चिरजीवी भवेन्नरः ॥

पातनयन्त्र द्वारा शोधित पारद १० रत्ती, खांड ३० रत्ती और शुद्ध भैंसिया गूगल ४० रत्ती ले कर प्रथम पारद और खांडको अच्छी तरह खरल करें । जब दोनों मिल जाएं और पारदके कण दिखलाई न दें तो उसमें गूगल और १० रत्ती घी मिला कर खूब कूटें और सबके एकजीव हो जाने पर समस्त औषधकी २० गोलियां बना लें ।

इनमेंसे प्रथम ३ दिन ३-३ गोलियां और फिर उसके पश्चात् ११ दिन तक प्रतिदिन १-१ गोली खिलावें। इस प्रकार १४ दिनमें ये २० गोलियां सेवन करनी चाहियें।

पथ्यमें लवणका त्याग करना और मसूरकी दाल, गुड़युक्त व्यञ्जन; पुनर्नवाका शाक और पटोल (परवल), तिक्तपत्री (ककोड़ा), गोखरु, पुटपत्री और तालमखाना; इनके शाक घीमें बनाकर सेवन करने चाहियें।

नमकके स्थानमें खांड और मसालेमें धनियां, लौंग, जीरा, हींग और काला जीरा आदि प्रयुक्त करना चाहिये।

इस औषधके सेवन कालमें अन्य नियम भैरव रसके समान पालन करने चाहियें।

इसमें प्रथम दिन अपने साधारण आहारसे चौथाई, और दूसरे दिन आधा तथा तीसरे दिन पौन भोजन करना चाहिये।

इसके सेवनसे कुष्ठ, उपदंश, तथा वातज व्रण नष्ट होते हैं।

(६०५८) रसगुटिका (१)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । कासा.)

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत् ।
त्रिभागा पिप्पली पथ्या चतुर्भागा बिभीतकः ॥
पञ्चभागस्त्वामला च षड्गुणा सप्तभागिका ।
भार्ङ्गीचूर्णं सर्वमिदं भाव्यं बब्बूलजैर्द्रवैः ॥
एकविंशतिवारं च मधुना गुटिका कृता ।
बिभीतकप्रमाणेन प्रातरेकां तु भक्षयेत् ॥
कासं श्वासं हरेत् क्षुद्राक्काथस्तदनुकृष्णया ।

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, पीपलका चूर्ण ३ भाग, हर्रका चूर्ण ४ भाग, बहेड़ेका चूर्ण ५ भाग, आमला ६ भाग और भरंगी सात भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको बबूल (कीकर) के रसकी २१ भावना दें और फिर शहदमें मिला कर बहेड़ेके समान गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल सेवन करनेसे खांसी और श्वासका नाश होता है।

अनुपान--औषध खानेके पश्चात् पीपलका चूर्ण मिला कर कटेलीका क्वाथ पीना चाहिये।

(६०५९) रसगुटिका (२)

(भै. र. । अर्शा.)

रसस्तु पादिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाभ्रकाः ।
गङ्गापालङ्कजरसे खल्लयित्वा पुनः पुनः ॥
रक्तिमात्रा गुदार्शोघ्नी वह्नेरत्यर्थदीपनी ॥

रस सिन्दूर १ भाग और बायबिडंग तथा काली मिर्चका चूर्ण एवं अभ्रक भस्म ४-४ भाग ले कर सबको जंगली पालकके रसकी बहुतसी भावनाएं दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे अर्शका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है।

(६०६०) रसचण्डांशु

(वङ्गेश्वररसः)

(र. चं. । प्रमेहा.)

रसमेकं त्रयो वङ्गं वङ्गसाम्येन गन्धकम् ।
मर्दयेद् दिनमेकं तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥

संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रुन्धयेत्तु दृढं मुखम् ।
पाचयेद्वालुकायन्त्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय सम्पूज्य द्विजदेवताः ।
पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥
क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमनल्पक्षारवर्जितम् ।
रसो वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तनः ॥

शुद्ध पारद १ भाग और बंग भस्म तथा शुद्ध गन्धक ३-३ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके एक दिन घृतकुमारीके रसमें घोटें और फिर उसका एक गोला बना कर उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करें तथा उस सम्पुटको बालुका यन्त्रमें रख कर १ दिन तीव्राग्निपर पकावें । इसके पश्चात् यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर खरल करके रक्खें ।

ब्राह्मण और देवताका पूजन करके इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

पथ्यापथ्य——यथा सम्भव लवणका त्याग करना और दूध भात खाना चाहिये ।

(मात्रा——१ रत्ती ।)

(६०६१) रसचन्द्रिकावटी

(रसे. सा. स. ; र. च. । शिरोरोगा.; भै. र. । शिरोरोगा.)

त्रैलोक्यविजयाबीजं बीजमुन्मत्तकस्य च ।
कण्टकारीबीजकञ्च इज्जलबीजमेव च ॥
बीजञ्च वृद्धदारस्य समौ गन्धकपारदौ ।
आर्द्रकैर्वटिका कार्य्या कलायपरिमाणतः ॥
एषा तोयानुपानेन प्रातः खाद्या हिताशिना ।
चिरजं सर्वरोगञ्च सन्निपातं सुदारुणम् ॥
आमवातं शिरोरोगं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ।
ग्रहणीं श्लीपदं हन्ति त्वन्त्रवृद्धिं भगन्दरम् ॥
कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसार्शोगुदामयान् ।
वटिका चन्द्रिका नाम वासुदेवेन भाषिता ॥

भांगके बीज, धतूरेके बीज, कटेलीके बीज, समुद्रफलके बीज, विधारेके बीज, शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको अदरकके रसमें घोट कर मटरके बराबर गोलियां बना लें ।

इन्हें प्रातः काल सेवन करना और पथ्य पूर्वक रहना चाहिये ।

अनुपान——जल ।

इनके सेवनसे समस्त जीर्ण रोग, सन्निपात, आमवात, शिरोरोग, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, ग्रहणी, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पाण्डु, पीनस और अर्शादि रोग नष्ट होते हैं ।

(६०६२) रसतालेश्वररसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

गुञ्जाशङ्खकरञ्जचूर्णरजनीभल्लातकाग्नेः शिखा
कन्यासूर्य्यपयः पुनर्नवरजो गन्धन्तथा सूतकम्
गोमूत्रे पाचितं विडङ्गमरिचैः क्षौद्रश्च तत्तुल्यकं
हन्यादाशु विचर्चिकारुजमिदं कण्डूं तथा कैटिभम् ॥

शुद्ध चौंटली, शंख भस्म, करञ्जके बीज, हल्दी, शुद्ध भिलावा, कलिहारी, घीकुमारका गूदा

आकका दूध, पुनर्नवा, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद समान भाग ले कर पीसने योग्य चीज़ोंको पीस लें और फिर पारद गन्धककी कज्जली बनाकर सबको एकत्र मिलाकर आठ गुने गोमूत्रमें पकावें और गोमूत्र शुष्क हो जाने पर उसमें बायबिडंग और काली मिर्चका चूर्ण तथा शहद समान भाग मिला कर रक्खें।

यह रस विचर्चिका, कण्डू और कुष्ठको नष्ट करता है।

(६०६३) रसपर्पटिका

(भै. र. ; र. रा. सु. ; र. सा. स. ; रसें. चि. म. ; वं. से. ; भा. प्र. ; वृ. नि. र. । ग्रहणीरो.)

श्रीविन्ध्यवासिपादौ नत्वा धन्वन्तरिञ्च सुरभिषजम्।
रसगन्धकपर्पटिकापरिपाटीपाटवं वक्ष्ये ॥
मग्नं रसे जयन्त्याः पश्चादेरण्डसम्भूते।
आर्द्रकरसे च सूतं पत्ररसे काकमाच्याश्च ॥
मग्रमुदितानुपूर्व्या मर्दनशुष्कं करेण गृह्णीयात्।
प्रस्तरभाजनमध्ये शुद्धिरियं पारदस्योक्ता ॥
शुकपुच्छसमच्छायो नवनीतसमद्युतिः।
मसृणः कठिनः स्निग्धः श्रेष्ठो गन्धक इष्यते ॥
कृत्वा भद्रं गन्धकमतिकुशलः क्षुद्रतण्डुलाकारम्।
तद्भृङ्गराजरसैरनन्तरं भावयेत्पात्रे ॥
तदनु च शुष्कं कुर्याद् धूलिसमानञ्च सप्तधा रौद्रे।
तदनु च शुष्कं चूर्णं कृत्वा विन्यस्य लौहिकामध्ये ॥
निर्धूमबदरकाष्ठाङ्गारे न्यस्तं विलाप्य तैलसमम्।
पात्रस्थितभृङ्गराजमध्ये ढालयेन्निपुणः ॥
तस्मिन् प्रविष्टमात्रं कठिनत्वं याति गन्धकचूर्णम्।
पुनरपि रौद्रे शुष्कं केतकरजसा समानतां नीतम् ॥
शुद्धे सूते शोधितगन्धकचूर्णेन तुल्यता कार्या।
तावन्मर्दनमनयोर्यावन्न कणोऽपि दृश्यते सूते ॥
पश्चात् कज्जलसदृशं चूर्णं लौहीस्थितं यत्नेन।
निर्धूमबदरकाष्ठाङ्गारे न्यस्तं विलाप्य तैलसमम् ॥
सद्यो गोमयनिहिते कदलिदले ढालयेन्मृदुनि।
लौहीस्थितमवशिष्टं कठिनं तन्न ग्रहीतव्यम् ॥
पश्चात्पर्पटिरूपा पर्पटिका कीर्त्यते लोकैः।
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं यत्र तु दृश्यते ॥
तत्र सिद्धिं विजानीयाद्वैद्यो नैवात्र संशयः।
समुदितपात्रे भरणाद्वदनीया पर्पटी मनुजैः ॥
जीरकगुञ्जे हिङ्गोरर्द्धं खादेच्च वातले जठरे।
जीरकहिङ्गोरशने त्वनुपानं सलिलधारया कार्यम्
रसगन्धकपर्पटिका भक्षणमात्रे तु नाम्भसः पानम् ॥
प्रथमं गुञ्जायुगलं प्रतिदिनमेकैकवृद्धितो भक्ष्यम्
दशगुञ्जापरिमाणान्नाधिकमशनीयमेकविंशतिदिनानि ॥
वातातपकोपमनश्चिन्तनमाहारसमयवैषम्यम्।
व्यायाममथायासः स्नानं व्याख्यानमहितमत्यन्तम्
पाके स्तोकं सर्पिर्जीरकधन्याकवेशवारैश्च।
सिन्धूद्भवेन रन्धनमोदनधान्यानि शालयो भक्ष्याः ॥

कृष्णं वार्तिङ्गनफलमविद्धकर्णा च वास्तूकम् ।
अक्षतमुद्गः सहितः फलदलसहितं पटोलश्च ॥
क्रमुकफलशृङ्गवेरौ भक्ष्यौ शाकेषु काकमाची च
नीरक्षीरं व्यञ्जनमदनीयं पक्वकदलश्च ॥
रम्भाफलदलवल्कलमूलानां वर्जनं कार्यम् ।
तिक्तनिम्बादिकमपि नाम्रं नोष्णं तथान्नश्च ॥
आनूपमांसजलचरपतत्रिपललश्च सर्वथा त्याज्यम् ।
स्त्रीणां सम्भाषणमपि गडकश्च कृष्णमत्स्येषु ॥
नाम्लं न दधिशाकं पर्पट्या भक्षणे भक्ष्यम् ।
गुडखण्डशर्करादिक इक्षुविकारा न भक्ष्य इक्षुश्च
न दलं न फलं न लताप्यदनीया कारवेल्लस्य ।
स्तोकं घृतमिह भक्ष्यं पथ्ये साकाङ्क्षमुत्थानम्॥
क्षुत्पीडायां भोजनमवश्यकार्यं महानिशायाश्च ।
समजलमिश्रं पक्वं क्षीरं यद्वाधिकजलपक्वश्च ॥
कथमपि भोजनसमयातिक्रमजाते ज्वरे विरेके च
वमने च नारिकेलसलिलं दुग्धश्च पातव्यम् ॥
स्वप्ने जाते रमिते विरेकतः क्षीरमेव पातव्यम्
न ज्ञायते बुभुक्षा लक्ष्या प्रतीयते यदि वा ॥
अशक्ति झिनिझिनिमस्तकशूलाद्यैर्नूनमवधार्या ।
किम्बहु वाच्यं रोगी यदा यदा भवति साकाङ्क्षः ॥
पाययितव्यं दुग्धं तदा तदा निर्भयीभूय ।
विहिताकरणे चास्यामविहितकरणे च रोगखिन्नानाम् ॥
व्यापत्तयोऽपि बहुधा दृष्टाः प्रामाणिकैर्बहुशः ।
तस्मादवधातव्यं भवितव्यं भोजने निपुणैः ॥
एवमियं क्रियमाणा भवति श्रेयस्करी नियतम् ।
अर्शोरोगं ग्रहणीं सामां सातिसारां शूलं च ॥

कामलपाण्डुव्याधिं प्लीहानञ्चातिदारुणं हन्ति ।
गुल्मजलोदरभस्मकरोगं हन्त्यामवातांश्च ।
अष्टादशैव कुष्ठान्यशेषशोथादिरोगांश्च ॥
इयमम्लपित्तशमनी त्रिदोषदमनी क्षुधातिकमनीया ।
अग्निं निमग्नमुदरे ज्वालाजटिलं करोत्याशु ॥
रसगन्धकपर्पटिका त्वपवार्य व्याधिसंघातम् ।
वलीपलितशून्यं पुरुषं दीर्घायुषं कुरुते ॥
व्याधीप्रभावहरणादपमृत्युत्रासनाशकरणाच्च ।
मर्त्यानाममृतवटी रसगन्धकपर्पटी जयति ॥
शम्भुं प्रणम्य भक्त्या पूजां कृत्वा च विष्णुचरणाब्जे ।
रसगन्धकपर्पटिका भक्ष्या तेनातिसिद्धिदा भवति ॥
नृणां सरुजां ध्रुवमियमारोग्यं सततशीलिता कुरुते ।
श्रीवत्साङ्कविनिर्मितसम्यग्रसपर्पटी श्रेष्ठा ॥
उक्तमेव हि कर्तव्यं नानुरागतया तथा ।
औषधक्रिययैवात्र कर्तव्या चोत्तरक्रिया ॥
प्रत्यवायविनाशार्थं क्षेत्रपालबलिं न्यसेत् ।
कृतमङ्गलकः प्रातर्योगिनीनामतः परम् ॥

भक्षणपूर्वबलिदानमन्त्रः—ॐ क्षं क्षें क्षेत्रपालाय नमः इति क्षेत्रपालस्य सामान्य बलिमन्त्रः । ॐ ह्रीं ह्रें दिव्याभ्यो योगिनीभ्यो मातृभ्यः क्षेत्रीभ्यो भूतेभ्यः शालिकीभ्यो नमो नमो ह्रीं इति सामान्य योगिनीनां बलिः ॥ ॐगन्धकमहाकालाय स्वाहा । ॐ ब्रह्मकोषिणि रक्ष रक्ष स्वाहा इति विशेषबलिः ।

अत्र पारदस्य नैसर्गिकदोषत्रयशोधनश्चावश्यकं कार्यम् । यदुक्तं—

मलशिखिविषनामानो रसस्य नैसर्गिका दोषाः।
मूर्च्छां मलेन कुरुते शिखिना दाहं विषेण हिक्काश्च ॥
गृहकन्या हरति मलं त्रिफला वह्निं चित्रकश्च विषम् ।
तस्मादेभिर्योगान् सम्मूर्छयेत् सप्त सप्तैव ॥'इति'

गृहकन्या घृतकुमारी । तस्या दलरसेन खल्लनम् । त्रिफलायाश्चूर्णेन खल्लनं, चित्रकस्य पत्ररसेन मूर्च्छनम् । तदेव नैसर्गिकदोषापहारानन्तरं जयन्त्यादिद्रव्यचतुष्टयरसेन मूर्च्छनमधिगन्तव्यम् ॥

श्री व्याडिमुनि तथा धन्वन्तरि को प्रणाम करके रसगन्धकपर्पटिका की निर्माण विधि को कहता हूं ।

रसपर्पटिका को तैयार करने से पूर्व पारद के तीन नैसर्गिक दोषों अर्थात् मलदोष, वह्निदोष तथा विषदोष का निवारण कर लेना चाहिये क्यों कि इन दोषोंसे क्रमशः मूर्च्छा, दाह तथा हिक्का आदि उपद्रव होने का भय रहता है । अतः घीकार के रस से मलदोष के निवारण के लिये, त्रिफलाचूर्ण से अग्निदोष के निवारण के लिये एवं चित्रक के पत्तों के रस से विषदोष के निवारण के लिये सात २ बार मूर्च्छन करें । पश्चात् यथाक्रम पत्थर के बर्तन में जयन्तीपत्र, एरण्डपत्र, अदरख तथा मकोय के पत्तों के रसमें पारद को मग्न कर मर्दन करें और शुष्क कर लें ।

रस पर्पटिका में वह गन्धक प्रयुक्त करना चाहिये कि जो शुकपुच्छ के समान तथा कान्ति वाला, मक्खन के समान प्रभा वाला, चिकना, कठिन तथा स्निग्ध हो । इस प्रकारके गन्धक के चावल के समान छोटे २ खण्ड करके भांगरे के रससे सात भावना दे कर श्लक्ष्ण चूर्ण कर धूप में सुखा लें । तत्पश्चात् गन्धकचूर्ण को लोहे की करछी में रखकर निर्धूम बेरीकी लकड़ी के अङ्गारों पर पिघलावें । पिघल जाने पर पात्र में स्थित भृङ्गराज के रस में डाल दें । तब गन्धक पुनः कठिन हो जायगी । इसे धूप में सुखाकर बारीक चूर्ण करें ।

इस प्रकार शोधित पारद तथा शोधित गन्धक को समपरिमाण में लेकर अच्छी प्रकार तबतक मर्दन करें जबतक पारद अदृश्य तथा निश्चन्द्र न हो जाय । इस कज्जली को लोहे की करछी में रख निर्धूम बेरी की लकड़ी के अङ्गारों पर पिघला कर तैलके समान कर लें । पश्चात् गायके गोबर पर एक नरम केले का पत्ता बिछादें तथा एक दूसरे पत्तेमें गोबर को रख उस पत्ते की पोटली बनावें । तदनन्तर बिछे हुए पत्र पर उसे थोड़ा २ डालें और पोटली से दबाते जावें । करछी में बचे हुए कठिन भाग को न ग्रहण करना चाहिये । इस प्रकार यह रसपर्पटिका तय्यार होती है ।

मयूरपुच्छ की चन्द्रिका के समान यदि पर्पटी हो तो समझना चाहिये कि पर्पटी सिद्ध हो गई है ।

एक पत्थर के पात्र में अच्छी प्रकार पीस कर रखना तथा भरणी नक्षत्र में पर्पटी का प्रयोग करना चाहिये ।

अनुपान—वातोदर में जीरा २ रत्ती तथा हींग १ रत्ती।

जब पर्पटी का सेवन जीरा और हिंगुके साथ करते हैं तब साथ ही जल भी पीना चाहिये। परन्तु साधारण नियम यह है कि रसपर्पटिका के बाद ही जलपान न करना चाहिये।

मात्रा—दो रत्ती से प्रारम्भ करके क्रमशः प्रतिदिन एक २ रत्ती बढ़ाकर दस रत्ती तक सेवन करावें और फिर प्रतिदिन १-१ रत्ती कम करें।

रसपर्पटिका में पथ्यापथ्य:—रस पर्पटीके सेवन कालमें वायु सेवन, आतप सेवन, क्रोध, चिन्ता, अकाल में भोजन करना, व्यायाम, अत्यन्त परिश्रम, स्नान, तथा व्याख्यान (अधिक बोलना) न करना चाहिये। घृत, जीरा, धनियां, सैन्धव आदि द्वारा पकाये हुए व्यञ्जनादि, शालि चावल, काला बैंगन, अविद्धकर्णा (पाठ), वास्तुक (बथुआ), मूंग, पटोल फल, पटोल पत्र, सुपारी, अदरख, शाकों में मकोय, जलसे सिद्ध दुग्ध, पका हुआ केला आदि पथ्य हैं।

अपथ्य—कच्चा केला, केलेके पत्ते, मूल तथा वल्कल, निम्ब आदि तिक्त पदार्थ, उष्ण अन्न, आनूपमांस, जलचर पक्षियोंका मांस, मैथुन, कृष्ण वर्णकी मछलियों में गडकमत्स्य, अम्ल दधि, शाक, गुड़, खांड, शर्करा तथा अन्य इक्षु विकार, गन्ना, करेला आदि। इसके व्यवहार काल में स्त्रियोंसे सम्भाषण भी न करना चाहिये। पथ्य के साथ किञ्चित् घृतका सेवन करें। जब भूख लगे तभी भोजन कर लेना चाहिये। अर्द्ध रात्रिमें भी यदि भूख लगे तब उस समय भी आहारार्थ सम परिमाण जलसे पक्व दुग्ध अथवा अधिक परिमाण जलसे सिद्ध दुग्धका अवश्य पान करना चाहिये। यदि कदाचित भोजनके समयका व्यतिक्रम हो जाय तब, एवं ज्वर, वमन तथा अतिसार में नारियलके जल का तथा दुग्धका पान करना चाहिये। यदि कदाचित स्वप्नमें वीर्यस्राव हो तो उस पर दुग्धपान कराना उचित है। भूख है कि नहीं? यदि ये बोध न हो, निर्बलता, शरीर में झिनिझिनि के समान बोध हो तथा शिरोवेदना आदि हो तो भी दुग्धपान कराना चाहिये। अधिक क्या कहना जब २ भूख लगे तथा आवश्यक्तानुसार दुग्धपान ही उचित है।

इसके सेवन कालमें जो २ नियम बताये गये हैं उन्हें पालन न करनेसे तथा अविहित (निषिद्ध) आहार विहारके करनेसे कई प्रकारके उपद्रव हो जाते हैं अतः भोजनादिमें सर्वदा सावधान रहना चाहिये।

इस प्रकार विधिपूर्वक सेवन करनेसे यह ग्रहणीमें अत्यन्त फलप्रद है।

इस रसपर्पटीके सेवन करनेसे अर्श, ग्रहणी, शूल, अतीसार, कामला, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म, जलोदर, भस्मक, आमवात, कुष्ठ तथा शोथ आदि रोग नष्ट होते हैं। यह अम्लपित्तको शान्त करती है, प्रवृद्ध वात, पित्त तथा कफका दमन करती है, क्षुधाको बढ़ाती है तथा अग्निको प्रदीप्त करती है। यह रसपर्पटी व्याधि समूहको नष्ट कर रसायनके समान प्रभाव दिखलाती है।

यह रस सेवन करनेसे पूर्व विघ्न विनाशार्थ क्षेत्रपाल और योगिनीको बलि देनी चाहिये। क्षेत्रपालको बलि देनेके समय "ॐ क्षं क्षें.... स्वाहा इति" यह मन्त्र बोलना चाहिये।

नोट——रसपर्पटीके अनेक पाठ मिलते हैं, जो वास्तवमें उक्त प्रयोगको ही विभिन्न प्रकारसे प्रकट करते हैं। उन सबमें उक्त पाठही सबसे अधिक विस्तृत और पूर्ण है।

किसी किसी ग्रन्थमें गायके गोबरके स्थानमें भैंसके गोबर पर पर्पटी बनानेका विधान भी मिलता है।

कई ग्रन्थोंमें रस खानेके पश्चात् विशेष रूपसे सुपारी भक्षणकी अनुमति दी गई है।

(६०६४) **रसपर्पटी** (१)

(र. चं.; यो. र.। ग्रहण्य.)

शुद्धपारदगन्धाभ्यां कृता पर्पटिका नृणाम्।
निहन्ति ग्रहणीं क्षौद्रयुक्ता पथ्यभुजां नृणाम्॥

शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बनाकर उसे घृतलिप्त लोहपात्रमें पिघलावें और फिर गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्तेपर फैलाकर उस पर दूसरा कदली-पत्र रख कर उसे गोबरसे दबा दें तथा थोड़ी देर पश्चात् निकाल लें।

इसे शहदके साथ सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे ग्रहणी रोग नष्ट होता है।

(६०६५) **रसपर्पटी** (२)

(रविताण्डवरसः)

(र. रा. सु.; वृ. नि. र.; र. सा. सं.। ज्वरा.)

शुद्धसूतं द्विधागन्धं मर्द्य भृङ्गरसेन च।
मृतं ताम्रं लोहभस्म पादांशेन तयोःक्षिपेत्॥
लोहपात्रे च विपचेच्चालयेल्लोहचाटुना।
तत्क्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयोपरिसंस्थिते॥
पश्चात्तच्चूर्णयेत्खल्ले निर्गुण्ड्याभावयेद्दिनम्।
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभार्ङ्गीकटुत्रिकैः॥
भृङ्गाग्निमूलं मुण्डिभिर्भावयेद्दिनसप्तकम्।
अङ्गारैः स्वेदयेत्किञ्चित्पर्पटाख्यो महारसः॥
चतुर्गुञ्जामितं भक्ष्यं सम्यक् श्लेष्मज्वरं जयेत्।
पथ्याशुण्ठ्यमृताक्वाथमनुपानं प्रयोजयेत्॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और फिर उसे भंगरेके रसकी १ भावना दें। तदनन्तर उसमें पौन पौन भाग (कज्जलीका चतुर्थांश) ताम्र भस्म तथा लोह भस्म मिला कर खरल करें और फिर उसे (घृतसे चिकनी की हुई) लोहेकी कढ़ाईमें डाल कर लोहेकी करछीसे चलाते हुवे मन्दाग्नि पर पकावें। जब औषध अच्छी तरह पिघल जाए तो गायके गोबरके ऊपर केलेका पत्ता बिछा कर उस पर वह औषध डाल दें तथा तुरन्त उस पर दूसरा कदलीपत्र ढक कर उसे गोबरसे दबा दें। एवं औषधके स्वांग शीतल हो जानेपर उसे निकाल कर खरल कर लें।

अब इसे एक दिन संभालुके रसमें घोटें और फिर जयन्ती, त्रिफला, घृतकुमारी, बासा, भरंगी, त्रिकुटा, भंगरा, चीतामूल और मुण्डीके रसकी सात सात दिन भावना दे कर थोड़ी देर अंगारों पर स्वेदित करें।

मात्रा——४ रत्ती।

इसके सेवनसे कफज्वर नष्ट होता है।

अनुपान—हर्र, सोंठ और गिलोय समान भाग लेकर क्काथ बनावें। औषध खानेके पश्चात् यह क्काथ पीना चाहिये।

(१०६६) रसपर्पटी (२)

(र. प्र. सु. । अ. ३)

[illegible]वरं पलयुग्ममितं शुभं
रुचिरताम्रमयः समभागिकम् ।
बलित्रसां च घृतेन विमर्दये-
दतिकृशाग्निकृते द्रवति स्वयम् ॥
तदनु ताम्ररसौ विनिवेश्यतां
त्रयमिदं सरसं च विमर्दितम् ।
द्रुतमयं च सदायसभाजने
तदनु सूतकृतां वरकज्जलीम् ॥
विघट्टयेदथ लोहमुदर्विणा
तनुमोचदलोपरि ढाल्यते ।
भवति सारतमा रसपोटली
सकलरोगविघातकरी हि सा ॥
कुरु समानकटुत्रयसंयुतां
मरिचयुग्ममितां सुखदां सदा ॥
अनुपाने मयोक्तव्या त्रिफला क्षौद्रसंयुता ।
पर्पटीं भक्षयेत्प्रातस्तथा त्र्यूषणसंयुताम् ॥
सन्निपातहरा सा तु पञ्चकोलेन संयुता ।
भक्षिता मधुना सार्धं सर्वज्वरविनाशिनी ॥
कणाक्षौद्रेण सहिता सर्वशोफान्निकृन्तति ।
श्यामात्रिकटुकेनाऽपि वातजां ग्रहणीं जयेत् ॥
गुग्गुलुत्रिफलासार्धं वातरक्तं विनाशयेत् ।
वातशूलहरा सम्यग्घिङ्गुपुष्करसंयुता ॥
व्योषै कन्यारसैर्वाऽपि कफामयविनाशिनी ।
दशमूलशृतेनापि वातज्वरनिबर्हणी ॥
बाकुचीबीजकल्केन कण्डुपामे विनाशयेत् ।
आरुष्करेण सहिता सा तु सिध्मविनाशिनी ॥
गोमूत्रेणानुपानेन चार्शसां हि विनाशिनी ।
नवमाल्यर्जुनश्चैव चित्रको भृङ्गराजकः ॥
शाल्मलीनिम्बपञ्चाङ्गकल्हारश्च गुडूचिका ।
निर्गुण्डी च समांशानि कारयेद्भिषगुत्तमः ॥
चूर्णीकृत्य च तत्सर्वं पर्पट्याश्चानुपानकम् ।
अष्टादश च कुष्ठानि निहन्त्येव न संशयः ॥
पर्पटीरसराजस्य रोगान् हन्त्यनुपानतः ।
अपथ्यं नैव चाश्नीयाद्दोषदूष्यव्यपेक्षया ॥

शुद्ध पारद १० तोले, ताम्र भस्म १० तोले तथा शुद्ध गन्धक १० तोले ले कर प्रथम गन्धकको थोड़े घीके साथ घोटें और फिर उसे लोह पात्रमें अत्यन्त मृदु अग्नि पर पकावें। जब गन्धक अच्छी तरह पिघल जाए तो उसमें ताम्र भस्म और पारद डाल कर तीनोंको लोहेकी मूसलीसे घोटें। जब सब चीजें मिल जाएं तो उसे पिघली हुई दशामें ही गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला दें और उस पर दूसरा कदली पत्र ढक कर उसे गायके गोबरसे दबा दें एवं थोड़ी देर पश्चात् दोनों पत्तोंके बीचसे पर्पटीको निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

इसे साधारणतः त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) के चूर्ण और काली मिर्च तथा कंकोल मिर्चके चूर्णके साथ खिलाना चाहिये। विशेष अनुपान निम्न प्रकार हैं—

सन्निपात ज्वरमें---त्रिफलेके चूर्ण या त्रिकुटेके चूर्ण और शहदके साथ ।

साधारण ज्वरोंमें---पंचकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ) के चूर्ण और शहदके साथ ।

शोथमें---पीपलके चूर्ण और शहदके साथ ।

वातज संग्रहणीमें---काली निसोत और त्रिकुटेके चूर्णके साथ ।

वातरक्तमें---शुद्ध गूगल और त्रिफलाके साथ ।

वातज शूलमें---हींग और पोखरमूलके चूर्णके साथ ।

कफज रोगोंमें---त्रिकुटेके चूर्ण या घृत कुमारीके रसके साथ ।

वातज ज्वरमें---दशमूलके क्वाथके साथ ।

कण्डू और पामामें---बावचीके बीजोंके कल्कके साथ ।

सिध्म कुष्ठमें---भिलावेके साथ ।

अर्श रोगमें---गोमूत्रके साथ ।

कुष्ठमें---नवमालती, अर्जुन, चीता, भंगरा, सेंभलकी छाल, नीमका पंचांग, कल्हार (कमलभेद), गिलोय और संभालु समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । उपरोक्त पर्पटी खानेके पश्चात् यह चूर्ण (पानीमें घोल कर) पीनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(६०६७) रसपर्पटी (४)

(र. प्र. सु. । अ. ३.)

शुद्धं रसं गन्धकमेव शुद्धं
पृथक् समांशं कुरु यत्नतस्ततः ।

एरण्डमूलस्य रसेन सूतं
तथाऽद्रिकर्ण्या स्वरसेन मर्दयेत् ॥
तं काकमाच्याः स्वरसेन पिष्ट्वा
तथा च तं दाडिमबीजतोयैः ।
क्रमेण सूतं हि दिनैश्चतुर्भिः
शुद्धत्वमायाति हि निश्चयेन ॥
ततस्तु गन्धं खलु मार्कवद्रवै-
र्विभाव्यमानं कुरु लोहपात्रे ।
प्रद्रावयेत्तं बदरस्य चाग्निना
प्रक्षालयेद्भृङ्गरसे त्रिवारम् ॥
कार्या ततः कज्जलिका विमर्द्य
तां द्रावयेल्लोहमये सुपात्रे ।
प्रक्षालयेत्तां कदलीदले हि
संछाद्य चान्येन दलेन पश्चात् ॥
तस्यास्त्वधोर्ध्वं प्रददीत गोमयं
शीतीकृता गव्यघृतेन भर्जिता ।
रोगानशेषान्मलदोषजातान्
हिनस्ति चैषा रसपर्पटी हि ॥
सा जीरकेणैव तु रामठेन
वातामशूलं ग्रहणीं सकामलाम् ।
गुल्मानि चाष्टावुदराणि हन्यात्
संसेविता शुद्धरसस्य पर्पटी ॥
मयाऽपि सद्वैद्यहिताय नूनं
प्रदर्शिताऽयं खलु रोगनाशिनी ॥

(१) शुद्ध पारदको क्रमशः एरण्डमूलके रस, कोयलके स्वरस, मकोयके स्वरस और दाड़िम (अनार) के बीजोंके पानीमें एक एक दिन खरल करें ।

(२) शुद्ध गन्धकको एक दिन भंगरेके रसमें घोट कर लोहपात्रमें बेरीकी अग्नि पर पिघलावें और भंगरेके रसमें बुझा दें। इसी प्रकार पिघला पिघला कर ३ बार भंगरेके रसमें बुझावें।

अब उपरोक्त पारद और गन्धक समान भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें। और उसे लोह-पात्रमें पिघला कर गायके गोबर पर बिछे हुए केलेके पत्तेपर फैला दें तथा उसके ऊपर दूसरा कदली पत्र रख कर उसे गोबरसे दबा दें एवं थोड़ी देर पश्चात् दोनों पत्तोंके बीचसे पर्पटीको निकाल कर उसे गायके घीमें भून कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे मल सम्बन्धी समस्त रोग नष्ट होते हैं।

इसे जीरे और हींगके चूर्णके साथ सेवन करनेसे वातज आमशूल, ग्रहणी, कामला, गुल्म और ८ प्रकारके उदर रोग नष्ट होते हैं।

(६०६८) रसपर्पटी (५)

(यो. र. ; र. च. । राजयक्ष्मा. ; र. चि. म. । अ. ९; यो. त. । कासा.)

भागो रसस्य गन्धस्य द्वावेको लोहभस्मतः।
एतद् घृते द्रवीभूतं मृद्वग्नौ कदलीदले ॥
पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत्।
ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिर्मर्दयेत्सप्तधा पृथक् ॥
भार्गीमुण्डीमुनिवराजयानिर्गुण्डिकाद्रवैः।
व्योषवासककन्यार्द्रद्रवैः शुष्कं पुटेल्लघु ॥
अगन्धं खर्परे नाम्ना पर्पटीति रसो भवेत्।
सर्वरोगहरः स्वैः स्वैरनुपानैर्द्विमाषतः ॥
ताम्बूलपत्रसहिता कासश्वासहरा परा।
सकणः सुरसाक्वाथोऽनुपानं वा सगोजलम् ॥

शुद्ध पारद २ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और लोह भस्म १ भाग लेकर तीनोंकी कज्जली करके उसे घृतलिप्त लोह पात्रमें डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें और उसके अच्छी तरह पिघल जानेपर उसे गायके गोबर पर बिछे हुए केलेके पत्ते पर डाल कर उस पर दूसरा कदली पत्र ढक दें और उसे गोबरसे दबा दें। तदनन्तर थोड़ी देर पश्चात् दोनों पत्तोंके बीचसे पर्पटीको निकाल कर पीस लें और उसे क्रमशः भरंगी, मुण्डी, अगस्ती, त्रिफला, जया, संभालु, त्रिकुटा, बासा और घी कुमारके स्वरस या काथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दें और फिर उसे सुखा कर लघुपुटमें पकावें।

मात्रा--२ माशे।

इसे पानके साथ खानेसे खांसी और श्वास नष्ट होता है।

अनुपान--औषध खानेके पश्चात् तुलसीके काथमें पीपलका चूर्ण मिला कर या गोमूत्र पीना चाहिए।

(व्यवहारिक मात्रा--३ रत्ती।)

रसपर्पटी (६)

(र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

प्रयोग संख्या ४३१० "पर्पटी रसः" (१) देखिये।

र. रा. सु. में गन्धक तीन गुना लिखा है।

(६०६९) रसपोटली

(र. प्र. सु. । अ. ३)

स शुकपिच्छसमोऽपि हि पारदो
भवति खल्वतेन च कुट्टितः ।
दृढतरामुपकल्पय पर्पटीं
वसनबद्धकृतामपि पोटलीम् ॥
उपरि नागरसेन विलेपितां
रविकरेण सदा परिशोषिताम् ।
कनकपत्ररसेन च सप्तधाऽ
प्यवनिगर्ततले विनिवेशय ॥
अवनिगर्तमरत्निकमायतं
द्विदशमङ्गुलमेव सुनिम्नकम् ।
सिकतया परिपूर्य तदर्धकं
तदनु तत्र निवेशय पोटलीम् ॥
उपरि वालुकया परिपूर्यत-
च्छगणकैश्च पुटं परिदीयताम् ।
द्विदशयाममथाग्निमहो कुरु
भवति तेन महारसपोटली ॥
इति मया कथिता रसपोटली
बलकरा सुकरा सुखसिद्धिदा ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें। तदनन्तर उसे घृतलिप्त लोह पात्रमें मन्दाग्नि पर पिघला कर गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला दें और फिर उस पर दूसरा कदली-पत्र ढक कर उसे गायके गोबरसे दबा दें, एवं थोड़ी देर पश्चात् पत्तोंके बीचसे औषधको निकाल लें। तथा उसे कपड़ेमें बांध कर पोटली बना लें।

अब उसे पानके रसमें डाल कर धूपमें रक्खें और जब वह शुष्क हो जाए तो उसमें पुनः पानका रस डाल दें। इसी प्रकार सात भावना पानके रसकी और सात धतूरेके रसकी दें।

तदनन्तर भूमिमें एक १२ अंगुल गहरा और १ अरत्नि (लगभग ६ इंच) चौड़ा गढ़ा खोदकर उसमें आधी दूर तक रेत भर दें और उस पर उपरोक्त पोटली रख कर गढ़ेको रेतसे भर दें, और फिर उस पर उपले रख कर अग्नि लगा दें। यह अग्नि १२ पहर तक रहनी चाहिये । इसके पश्चात् गढ़ेकी रेतीके स्वांग-शीतल हो जाने पर उसमेंसे पोटलीको निकाल लें।

यह पोटली बलकारक और सुख सिद्धि दायक है।

मात्रा--१-२ रत्ती।

(६०७०) रसभस्मयोगः (१)

(वृ. नि. र. । अश्मरि.)

विदारीगोक्षुरुर्यष्टिकेशरं च समं भवेत् ।
तं कषायं पिबेत्क्षौद्रे रसभस्मयुतं पुनः ॥
मूत्रकृच्छ्राद्विमुच्येत साध्यासाध्यान्न संशयः ॥

विदारीकन्द, गोखरु, मुलैठी और नागकेसर १-१ तोला ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ तोले पानीमें पकावें और ८ तोले पानी शेष रहने पर छान लें।

इस क्वाथमें शहद मिलाकर उसके साथ पारद-भस्म सेवन करनेसे साध्य अथवा असाध्य हर प्रकारका मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

(६०७१) **रसभस्मयोगः** (२)

(वृ. यो. त. । त. १०४; यो. र. । मेदरोगा.)

रसभस्म वल्लमात्रं लीढ्वा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम्।
कोष्णाम्बुना समेतं स्थौल्यं मेदःकृतं जयति ॥

पारद भस्मको शहदमें मिला कर चाटनेके पश्चात् मन्दोष्ण जलमें शहद मिलाकर पीनेसे मेद-जन्य स्थूलता नष्ट होती है ।

मात्रा--३ रत्ती ।

(६०७२) **रसभस्मविधिः** (१)

(र. चि. म. । स्तबक १)

दशटङ्कावधिः सूतो गन्धकं नवसादरम् ।
सर्वंकज्जलिकां कृत्वा काचकूप्यां निधापयेत् ॥
ततोऽष्टयाम पर्यन्तं शनैरग्निंदीपनम् ।
इति सिद्धो भवेदेष पद्मरागनिभप्रभः ॥
माषमात्रः प्रदातव्यो सर्वरोगविनाशनः ।
रसः पर्पटिकाख्योयं रक्तपर्पटिकासमः ॥
सर्वत्रैव प्रदातव्यो ह्यनुपानविभेदतः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और नौसादर १०-१० टङ्क (५०-५० माशे) ले कर कज्जली बनावें और उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसे (बालुकायन्त्रमें) ८ पहरकी अग्नि दें ।

इस क्रियासे पद्मराग मणिके समान पारद-भस्म तैयार हो जायगी ।

मात्रा--१। माषा ।

इस भस्मको "पर्पटिका रस" कहते हैं और यह रक्तपर्पटीके समान होती है ।

अनुपान भेदसे यह समस्त रोगोंको नष्ट करती है ।

(व्यवहारिक मात्रा--१ रत्ती ।)

(६०७३) **रसभस्मविधिः** (२)

(रसगुटी)

(र. चि. म. । स्तब. १)

तुल्यं च शिखरीमूलं वारिणा मर्दयेद्दृढम् ।
मृण्मूषां लेपयेन्मध्ये तन्मध्ये निक्षिपेद्रसम् ॥
पञ्चटङ्कप्रमाणं तु मूषामङ्गारके क्षिपेत् ।
एवं बद्धो भवेत्सूतो मूषान्तःस्थो दृढो भवेत् ॥
मूषामध्यगतस्तिष्ठेन्मुखरोग विनाशनः ।
शरीरे क्रमते सूतो जरापलितनाशनः ॥
स्तम्भयेच्छस्त्रसम्पातं कामोत्पादनकारकः ।
पुनर्नवं वपुः कुर्यात्साधकस्य न संशयः ॥
अतिवेगो भवेत्कामे महाबलपराक्रमः ।
क्षुद्बोधो जायतेऽत्यर्थमत्यर्थं बलवान्भवेत् ॥
अत्यर्थं जनयेत्काममत्यर्थं लभते सुखम् ।
अत्यर्थं लभते पुष्टिं बलहानिर्न जायते ॥

२५ माशे अपामार्ग मूल (चिरचिटेकी जड़) को पानीमें पीस कर एक मिट्टीकी मूषाके भीतर उसका लेप कर दें और फिर उसमें २५ माशे शुद्ध पारद डाल कर मूषाको अंगारों पर रख दें । इस प्रकार पाक करनेसे पारद कठिन हो जाता है। (इस पारदकी गोली बंध सकती है ।)

यह गुटिका मुख रोग नाशक है और जरा, पलित को नष्ट करती तथा काम शक्तिको अत्यन्त प्रबल कर देती है । एवं बल, पराक्रम, क्षुधा और पुष्टिकी अत्यधिक वृद्धि करती है ।

(इसे दूधमें डाल कर थोड़ी देर बाद निकाल लेना चाहिये और वह दूध पीना चाहिये ।)

(६०७४) रसभस्मविधिः (३)

(र. चि. म. । स्तबक १)

नवप्रसूतासुरभिजरायुमिश्रितो ध्रुवम् ।
अन्धमूषागतो ध्मातो म्रियते पारदस्तराम् ॥

शुद्ध पारदको नवप्रसूता गौके जरायुके साथ घोट कर अन्धमूषामें बन्द करके उसे अंगारों पर रख कर ध्मानेसे पारद अवश्य मर जाता है ।

(६०७५) रसभस्मविधिः (४)

(र. चि. म. । स्तबक १.)

इष्टिका गैरिकं वल्मीमृत्तिका सैन्धवं समम् ।
भागत्रयमिदं श्लक्ष्णं रसो भागद्वयो द्वयम् ॥
सम्मर्द्य चैकतः कृत्वा गाढं तं मर्दितं रसम् ।
हण्डिकायां ततः क्षिप्त्वा पार्श्वे पार्श्वे च खर्परान् ॥
अन्यां च हण्डिकां दत्त्वा तदा सन्धिनिरोधनम्
चुल्लिकायास्तदा दद्यादुपरिष्टाच्च हण्डिकाम् ॥
यामषोडशपर्यन्तमग्निं कुर्यादहर्निशम् ।
अन्तरूर्ध्वं रसं तस्माल्लग्नं शीतं समुद्धरेत् ॥
कर्पूरपुलिकाकारमुज्ज्वलं दृष्टिसौख्यदम् ।
ग्रन्थिलं मृदुलं सौम्यं भक्ष्यमाणं निरामयम् ॥
पुष्ट्यारोग्यप्रदं तीक्ष्णं कामनीयं सुखावहम् ।
बलप्रदं विशेषेण दीर्घायुःकारकं परम् ॥
इदमेकमहो भस्म गृह्यतां राजवल्लभम् ।
हन्तिसर्वामयाञ्श्चैतग्रद्रद्रं तत्प्रकाशितम् ॥

ईटका चूर्ण, गेरु मिट्टी, बल्मीक मृत्तिका (बमीकी मिट्टी) और सेंधा नमक समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें । तदनन्तर ३ भाग यह चूर्ण और २ भाग शुद्ध पारद ले कर दोनोंको अच्छी तरह खरल करें और फिर उसे कपड़मिट्टी की हुई एक मज़बूत हाण्डीमें रख कर उसके (औषधके) चारों ओर मिट्टीके ठीकरे (खपर) जमा दें । अब इसके ऊपर एक दूसरी हाण्डी उल्टी रख कर दोनोंकी सन्धिको अच्छी तरह बन्द कर दें और उसे चूल्हे पर चढ़ा कर नीचे १६ पहर निरन्तर अग्नि जलावें । तत्पश्चात् हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर दोनोंकी सन्धिको खोलकर ऊपरकी हाण्डीमें लगे हुवे रसको छुड़ा कर सुरक्षित रक्खें ।

यह रस कपूरके समान उज्ज्वल श्वेत रंगका होता है ।

यह रस अत्यन्त बलकारक और आयुवर्द्धक है । तथा इसके सेवनसे अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

(६०७६) रसभस्मविधिः (५)

(र. चि. म. । स्तबक १)

निम्बूरसेन सम्मिश्र्य मीनाक्षीरससंयुतम् ।
पारदं खल्वके कृत्वा सौभाग्यं च तदर्धिकम् ॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र दिनपञ्चावधिस्तथा ।
माषप्रमाणा वटिकाः कर्तव्याः शुष्कतां गताः ॥
काष्ठभाजनमध्यस्था माषचूर्णेन वेष्टिताः ।
इष्टीचूर्णेन संलेप्य पुनः शोष्या खरातपे ॥
मूषामध्ये विनिक्षिप्य पुनरङ्गारकेषु च ।
मूषां वटीयुतां क्षिप्त्वा धम्यमाना शनैः शनैः ॥
अनेन विधिना सूतो ध्मातो भस्मत्वमाप्नुयात्।

निःसृत्य वटिकाभ्योऽसौ भवत्यतिसितप्रभः ॥
अयं मूलिकया बद्धो पारदो मुखरोगहृत् ।

१ भाग सुहागे और २ भाग पारदको एकत्र मिला कर पांच दिन तक नींबू और मत्स्याक्षी (मछेछी) के एकत्र मिश्रित रससे खरल करें और फिर उसकी उड़दके समान गोलियां बना कर सुखा लें ।

तदनन्तर इन गोलियोंको लकड़ीकी पिटारी (डिबिया) में बन्द करके उस पर पानीमें भीगा हुवा उड़दका आटा लपेट दें और फिर उस पर ईंटके चूर्णका लेप करके तेज धूपमें सुखा लें ।

अब इस पिटारीको मूषामें रख कर उसे कोयलों पर रक्खें और धीरे धीरे धमावें ।

इस क्रियासे पारद भस्म हो कर गोलियोंके भीतरसे बाहर आ जायगा । उसका रंग अत्यन्त सफेद होगा ।

यह मूलिका-बद्ध पारद मुखरोगोंको नष्ट करता है ।

(६०७७) रसभस्मविधिः (६)

(र. चि. म. । स्तबक १)

विष्णुक्रान्तामपामार्गमहिफेनेन्द्रवारुणी ।
सर्वेषां च रसैः पिष्टो म्रियते सूतकः पुटात् ॥

शुद्ध पारदको विष्णुक्रान्ता (कोयल), अपामार्ग (चिरचिटा), अफीम और इन्द्रायणके रसमें घोट घोट कर पुट देनेसे उसकी भस्म हो जाती है।

(६०७८) रसभस्मविधिः (७)

(र. चि. म. । स्तबक १)

नागार्जुनीति विख्याता दुग्धिका क्षितिमण्डले ।
तया विमर्दयेत्सूतं दिनमेकं निरन्तरम् ॥
काकमाच्या च कर्तव्यं मर्दनं दोषनाशनम् ।
पारदं दशटङ्कं स्याद्दशटङ्कं च गन्धकम् ॥
नौसादरं च सारं स्यात्त्रयमेकत्र मर्दयेत् ।
काचस्य कूपिके धृत्वा मुखं तस्य निरोधयेत् ॥
अष्टयामावधिर्यावत्तावत्सूतः प्रपाच्यते ।
एवं निष्पद्यते सम्यक्भस्मबालार्कसन्निभम् ॥
तत्सूतभस्म सञ्ज्ञं हि सर्वकार्यार्थसाधकम् ।
प्रवालकोमलच्छायं भूपतीनां हि वल्लभम् ॥
भक्षयेद्रक्तिकाः पञ्च समानमरिचैः सह ।
क्षुधोदयकरं प्रायः श्रेष्ठं कामाग्निदीपने ॥
जराद्यान्सकलान्दोषान्योगभेदेन नाशयेद् ।
येषु येषु च रोगेषु प्रयुक्तोऽयं रसोत्तमः ॥
तान्सर्वान्नाशयेत्सद्यः समर्थो रसपार्थिवः ॥

शुद्ध पारदको एक दिन नागार्जुनी (दुद्धी भेद) के स्वरसमें और १ दिन मकोयके स्वरसमें खरल करें । तदनन्तर ५० माशे यह पारद, ५० माशे शुद्ध गन्धक और ५० माशे नौसादरका फूल लेकर तीनोंको एकत्र खरल करें और फिर उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें ।

अब इस शीशीको (बालुका यन्त्रमें रखकर) आठ पहरकी अग्नि दें।

इस विधिसे पारदको बालसूर्यके समान

उज्ज्वल और विद्रुम-सदृश कोमल छवि युक्त भस्म तैयार हो जाती है।

यह भस्म राजाओंको अत्यन्त प्रिय होती है। तथा इसके सेवनसे क्षुधा और कामाग्निकी वृद्धि होती है। यह भस्म उचित अनुपानके साथ देनेसे जरा इत्यादि दोषोंको नष्ट करती है।

इसे जिस रोगको नष्ट करने वाले अनुपानके साथ दिया जाय यह उसीको नष्ट कर देती है।

मात्रा--५ रत्ती।

इसमें समान भाग काली मिर्चका चूर्ण मिला-कर खाना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा--१ रत्ती।)

(६०७९) रसमण्डूरम्

(भै. र.। शूला.; र. चं.; र. र.। परिणामशूला.)

कुडवं पथ्याचूर्णं द्वि पलं गन्धाश्म लौहकिट्टञ्च।
शुद्धरसस्यार्द्धपलं भृङ्गस्य रसं सकेशराजस्य॥
प्रस्थोन्मितञ्च दत्त्वा पात्रे लौहेऽथ दण्डसङ्घृष्टम्।
शुष्कं घृतमधुयुक्तं मृदितं स्थाप्यञ्च भाजने स्निग्धे॥
उपयुक्तमेतदचिरान्निहन्ति कफपित्तजान् रोगान्
शूलं तथाम्लपित्तं ग्रहणीञ्च कामलामुग्राम्॥

हर्रका चूर्ण २० तोले, शुद्ध गन्धक १० तोले, मण्डूर भस्म १० तोले, शुद्ध पारद २॥ तोले और भंगरे तथा काले भंगरेका रस २-२ सेर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें हर्र तथा मण्डूरभस्म मिलाकर सबको लोहेके खरलमें डाल कर उसमें थोड़ा थोड़ा उपरोक्त रस डाल कर घोटते और धूपमें सुखाते रहें। जब सब रस सूख जाए तो शीशीमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे कफ पित्तज रोग, शूल, अम्ल-पित्त, ग्रहणीविकार और उग्र कामलाका नाश होता है।

(मात्रा--१ माशा।)

(अनुपानमें--घी ३ माशे। शहद १ तोला।)

(६०८०) रसमर्दनयोगः

(धन्व.। उपदंशा.)

पीतपुष्पाबलापत्ररसैष्टङ्कमितं रसम्।
हस्ताभ्यां मर्दयेत्तावत् यावत्सूतो न दृश्यते॥
ततः संस्वेदयेद्धस्तावेवं वासरसप्तकम्।
त्यजेल्लवणमम्लं च फिरङ्गस्तस्य नश्यति॥

५ माशे शुद्ध पारदको हथेली पर रख कर उस पर पीले फूलकी खरैटीके पत्तोंका स्वरस डालें और पारदको दोनों हाथोंसे इतना मलें कि वह अदृश्य हो जाय। तदनन्तर हाथोंको आगके सामने सेक दें।

यही क्रिया सात दिन तक करें और लवण तथा अम्ल पदार्थोंका परित्याग कर दें।

इससे फिरंग (आतशक) रोग नष्ट हो जाता है।

(६०८१) रसमाणिक्यम्

(र. प्र. सु.। अ. ३.)

विमलनागवरैकविभागिकं
हरजभागचतुष्टयमिश्रितम्।

सततमेव विमर्द्य शिलातले
बलिवसां च समां कुरु तद्भिषक् ॥
दिनमितं सुविमर्द्य च कन्यका-
स्वरस ऐनकरेऽति विशोषयेत् ।
तदनु सूतवरस्य तु कज्जलीं
रुचिरकाचघटे विनिवेशय ॥
दिवसयुग्ममधः कृतवह्निना स
च भवेदरुणः कमलच्छविः ।
सकलरोगविनाशनवह्निबल-
कृद्बलकरः परमोऽपि हि कान्तिकृत् ॥
नयनरोगविनाशकरो भवेत्
सकलकामुकविभ्रमकारकः ।
स खलु कर्मविपाकजरोगहा
विशदनागयुतः खलु पारदः ॥

१ भाग शुद्ध सीसा और ४ भाग पारदको एकत्र मिला कर दोनोंको अच्छी तरह घोटें और जब सीसा पारदमें मिल जाय तो उसमें ५ भाग शुद्ध गन्धक मिला कर कज्जली बना लें और फिर उसे १ दिन घृतकुमारीके रसमें घोट कर धूपमें सुखा लें।

तदनन्तर उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसे बालुकायन्त्रमें रख कर २ दिन क्रमवर्द्धित अग्नि पर पकावें। इसके पश्चात् जब शीशी स्वांगशीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

इसका रंग लाल होगा और यह कमल सदृश शोभायमान होगी।

इसके सेवनसे अग्नि और बलकी वृद्धि होती तथा कान्ति बढ़ती है। यह नेत्ररोग-नाशक और अत्यन्त कामवर्द्धक है।

रसमाणिक्यम्

माणिक्य रस देखिये।

(६०८२) रसयोगः (१)

(आखुविषान्तकः)

(यो. र. । विषा.)

**रसं गन्धं विषञ्चैव त्र्यूषणं टङ्करोहिणी ।
पुनर्नवारसैर्मर्द्य गोमूत्रे च द्विगुञ्जकम् ॥
पिबेदाखुविषार्तानां सर्वं हरति तद्विषम् ।
विषदंष्ट्रोद्भवानन्यान्हन्यादाखुविषान्तकः ॥**

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागेकी खील और कुटकी समान भाग ले कर प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको पुनर्नवा (बिसखपरे) के रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इन्हें गोमूत्रके साथ पीनेसे चूहेका विष तथा अन्य दंष्ट्राविष नष्ट होते हैं।

(६०८३) रसयोगः (२)

(र. च. ; वृ. नि. र. । मूर्च्छा.)

**कणामधुयुतं सूतं मूर्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा पीडनं हितम् ॥**

पारदभस्म (या रससिन्दूर) को पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे मूर्च्छा नष्ट होती है।

मूर्च्छामें शीतल सेक (ठंडा पानी छिड़कना आदि) और अवगाहन तथा शरीर पीडन हितकारी है।

(६०८४) **रसराजः** (१)

(भै. र. । प्लीहा.)

गन्धकेन मृतं ताम्रं शुद्धगन्धकतुल्यकम् ।
द्वयोः पादं शुद्धरसं मर्दयेच्छूरणद्रवैः ॥
पुटेल्लघुपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
गुञ्जार्द्धं विलिहेत् क्षौद्रैः प्लीहगुल्मविनाशनम् ॥
यकृच्छूलं ज्वरं हन्ति कान्तिपुष्टिविवर्द्धनः ।
रसराज इति ख्यातो रोगवारणकेशरी ॥

गन्धक योगसे बनी हुई ताम्र भस्म २ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग और शुद्ध पारद १ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर जिमीकन्दके रसमें खरल करें और फिर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें फूंक दें। तदनन्तर पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस लें।

मात्रा—आधी रत्ती।

अनुपान—शहद।

इसके सेवनसे प्लीहा, गुल्म, यकृच्छूल और ज्वर नष्ट होता तथा कान्ति और पुष्टिकी वृद्धि होती है।

(६०८५) **रसराजः** (२)

(यो. र. ; र. रा. सु. ; वृ. नि. र. । क्षयरोगा. ; वृ. यो. त. । त. ७७)

मुक्ताप्रवालरसहेमसिताभ्रकान्त-
वङ्गं मृतं सकलमेतदहो विभाव्यम् ।
छिन्नारसेन च वरीसलिलेन सप्त-
वारं ततो मधुहविर्मरिचेन साकम् ॥
लिह्यादुरःक्षतहरं रसराजकाख्यं
माषप्रमाणमतनूद्भवहेतुमेनम् ॥

मोती भस्म, प्रवाल भस्म, पारद भस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, अभ्रक भस्म, कान्तलोह भस्म और बंग भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सात सात बार गिलोय और शतावरके रसमें घोट कर सुखा लें।

मात्रा—१ माशा।

अनुपान—शहद, घी और काली मिर्चका चूर्ण।

इसके सेवनसे उरःक्षत नष्ट होता और काम-वृद्धि होती है।

(व्यवहारिक मात्रा—१ रत्ती।)

(६०८६) **रसराजः** (३)

(भै. र. । वातव्या.)

पलैकं मूर्च्छितं सूतं व्योमसत्वञ्च कार्षिकम् ।
सुवर्णं तत्समं ज्ञेयं कन्यारसविमर्दितम् ॥
लौहं रूप्यं मृतं वङ्गं वाजिगन्धालवङ्गकम् ।
जातीकोषं तथा क्षीरकाकोलीञ्च तदर्द्धकम् ॥
काकमाचीरसेनैव सर्वं सम्मर्दयेद् दृढम् ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
क्षीरञ्च शर्करातोयमनुपानं प्रयोजयेत् ।
पक्षाघातार्दिते वाते सोद्गारे सापतानके ॥
अङ्गभङ्गे तथा कुब्जे धनुस्तम्भे तथैव च ।
शिरसो घूर्णिते स्वेदे हस्तपादादिशीतले ॥
मनोविभ्रमकम्पे च आध्माने नेत्रवैकृते ।

दापयेत् रसराजोऽयं वातव्याधिकुलान्तकृत् ॥
नातः परतरं श्रेष्ठं विद्यते रसकर्मणि ॥

रससिन्दूर ५ तोले, अभ्रक सत्वकी भस्म १। तोला और स्वर्ण भस्म १। तोला ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर १ दिन घीकुमारके रसमें घोटें और फिर उसमें आधा आधा कर्ष (प्रत्येक ७॥ माशे) लोह भस्म, चांदी भस्म, बंग भस्म, असगन्धका चूर्ण, लौंगका चूर्ण, जावत्रीका चूर्ण और क्षीर काकोलीका चूर्ण मिलाकर सबको मकोयके रसमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—दूध या खांडका शरबत।

इसके सेवनसे पक्षाघात, अर्दित, उद्गार, अपतानक, अङ्गभङ्ग, कुब्जता, धनुस्तम्भ, शिर चकराना, पसीना अधिक आना, हाथ पैरोंका शीतल हो जाना, मनोविभ्रम, कम्प, आध्मान और नेत्रोंका विकृत हो जाना आदि विकार नष्ट होते हैं।

(६०८७) रसराजः (४)

(वृ. यो. त. । त. १४७, ४२)

नागाहिफेनफलिनीविषमुष्टिविलेपिते ।
वस्त्रे निर्बध्य विधिवद्रसगन्धकखर्परम् ॥
गौर्या पचेल्लावपुटे शतेन च नियोज्य तु ।
ऊर्ध्वाधो हेमबीजानि पेषयेद्दशतः क्रमात् ॥
तेषां तोयैः पुनः कृत्वा पूपिकामर्कशोषिताम् ।
तत्कर्दमैः प्रतिपुटं दिग्धां कृत्वा पुटेच्छतम् ॥
रसराजो भवत्येष सर्वरोगहरो रसः ।
जम्बूवर्णोऽतिकठिनो रूक्षो वीर्यबली भवेत् ॥
जातीफललवङ्गाभ्यां रतौ वीर्यं निरोधयेत् ।
पटुदीप्यशिवाविश्वैर्वैश्वानरविवर्धनः ॥
क्षयग्रस्तु तथाऽर्शोग्रस्तकृष्णाभयान्वितः ।
ग्रहण्यां जातिकोशेन रेके कुटजवारिणा ॥
प्रमेहे शाल्मलीद्रावैर्बदर्याऽक्षिगदे हितः ।
सामे वाऽपि निरामे वा समे वा विषमे ज्वरे ॥
देयो नताब्दकटुकाकारविश्वभृतेन वै ।
रास्नाम्भसा वातरोगे पित्तरोगे सितात्रुटिः ॥
अक्षत्वचा कफव्याधौ पाण्डुरोगेऽजमूत्रकैः ।
अश्मर्यामश्मभेदेन कुष्ठे वल्गुजवार्यसैः ॥
भगन्दरे गुडेनैव व्रणे पौनर्नवायुतः ।
मेदोरोगेऽम्बुमधुना प्रदरेऽशोकवारिणा ॥
शूले हिङ्गुकरञ्जाभ्यामरुचौ रुचकेन वा ।
छर्द्यां धात्रीरसेनैव क्षैण्ये पर्णेन दापयेत् ॥
द्राक्षारसेन शोषे च संज्ञानाशे किरातकैः ।
मूर्छायां चन्दनाम्भोभिर्विद्रधौ वरणाम्बुना ॥
सर्वेष्वन्येषु रोगेषु ताम्बूलोदलयोगतः ॥

पान, अफीम, फूलप्रियङ्गु और कुचला समान भाग लेकर सबको पानीके साथ एकत्र पीसकर उसका एक स्वच्छ कपड़े पर लेप करके सुखा लें।

तदनन्तर समान भाग शुद्ध पारद, गन्धक और खपरियाकी कज्जली करके उसे उपरोक्त (पान इत्यादि) के रसमें घोट कर गोला बनावें और फिर उसे धूपमें सुखा कर उसके ऊपर नीचे धतूरेके १० बीज रख कर उपरोक्त वस्त्रमें बांधकर पोटली बनावें।

तत्पश्चात् एक शरावमें उपरोक्त (पान इत्यादि) के कल्कका लेप करके उसमें उपरोक्त पोटली रख

कर उसके ऊपर दूसरा शराव रख दें और दोनोंके जोड़को बन्द करके सम्पुट बना लें तथा उस पर दो ३ कपड़ मिट्टी करके सुखा लें और फिर लाव-पुटमें फूंक दें। इसी प्रकार १०० पुट दें। हर बार नवीन वस्त्र लेकर उस पर उक्त औषधोंका लेप करना तथा शरावके भीतर भी उन्हींके कल्कका लेप करना एवं हर बार औषधको उक्त ओषधियोंके रसमें खरल करना चाहिये और हर बार धतूरेके बीजोंका चूर्ण भी डालना चाहिये।

इस क्रियासे जामनके रंगवाली, अत्यन्त कठिन और रूक्ष औषध तैयार होगी, जिसे "रसराज" कहते हैं।

(मात्रा—१ रत्ती।)

इसे—

वीर्यस्तम्भनके लिये—जायफल और लौंगके चूर्णके साथ;

अग्निवर्द्धनार्थ—सेंधा नमक, अजवायन, हर्र और सोंठके चूर्णके साथ;

क्षय तथा अर्शमें—पीपल और हर्रका चूर्ण मिले हुवे तक्रके साथ;

ग्रहणीमें—जावित्रीके साथ;

अतिसारमें—कुड़ेकी छालके स्वरस या काथके साथ;

प्रमेहमें—सेंभलकी छालके रसके साथ;

नेत्ररोगोंमें—बेरीकी छालके स्वरस या काथके साथ;

साम, निराम, विषम और समज्वरमें—तगर, नागरमोथा, कुटकी, अकरकरा और सोंठके काथके साथ;

वातज रोगोंमें—रास्नाके काथके साथ;

पित्तज रोगोंमें—मिश्री और छोटी इलायची के चूर्णके साथ;

कफ रोगोंमें—बहेड़ेकी बकलीके साथ;

पाण्डुमें—बकरेके मूत्रके साथ;

अश्मरिमें—पखानभेदके साथ;

कुष्ठमें—बाबची और मकोयके साथ;

भगन्दरमें—गुड़के साथ;

व्रणमें—पुनर्नवा (बिसखपरे) के साथ;

मेदरोगमें—शहदके शरबतके साथ;

प्ररदमें—अशोकके काथके साथ;

शूलमें—हींग और करञ्जके काथके साथ;

अरुचिमें—बिजौरेके रसके साथ;

छर्दिमें—आमलेके रसके साथ;

क्षीणतामें—पानके साथ;

शोषमें—द्राक्षाके रसके साथ;

संज्ञानाशमें—चिरायतेके काथके साथ

मूर्च्छामें—चन्दनके पानीके साथ;

विद्रधीमें—बरनेकी छालके काथके साथ;

और अन्य रोगोंमें—ताम्बूल (पान) के साथ खिलाना चाहिये।

(६०८८) **रसराजः** (५)

(र. चि. म. । स्तब. ४; र. का. धे. । कुष्ठा.)

पारदं गन्धकाङ्कोलमूलवल्कलमाक्षिकम् ।
विषतिंदुकतालं च समङ्गा दुग्धिका तथा[1] ॥

---

१ "समङ्गा मेषदुग्धिका" इति पाठान्तरम्।

अर्को गन्धर्वहस्तश्च [२]जयन्ती कटुचिञ्चिका ।
पलं पलं समादाय पलमात्रा[३] च पिप्पली ॥
अर्कसेहुण्डमेषीनां दुग्धैः कुर्याच्च भावनाः ।
तिस्रो वापि चतस्रो वा चूर्णे सूक्ष्मे विचक्षणः ॥
देवदालीरसैः पश्चात्तिस्रो देयास्तु भावनाः ।
सर्वं विमर्द्य संशोष्य छागीमूत्रेण गोलकम् ॥
कारयेन्मूषिकामध्ये कुक्कुटाख्यपुटे पुटेत् ।
रक्तिकैका प्रदातव्या गुडेन परिवेष्टिता ॥
श्वित्रे तेन भवेयुश्च विस्फोटास्तदनन्तरम् ।
स्फुटन्ति स्फोटास्ते सर्वे बिन्दवस्तिलसन्निभाः॥
निष्पद्यन्तेऽथ कृष्णास्ते रसराजप्रभावतः ।
माषास्तिला प्रयोगेऽत्र भोक्तव्यास्तिलभोजनम्॥
कुलित्थं चापि वार्ताकं पुण्डरीकं प्रयोजयेत् ।
नश्यन्ति सर्वकुष्ठानि संख्यान्यष्टादशैव हि ॥
यकृद्गुल्मोदरप्लीहविद्रधीनपि नाशयेत् ।
अग्निं च कुरुते दीप्तं वृद्धिं तेजो बलस्य च ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अङ्कोल वृक्षकी जड़की छाल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध कुचला, हरताल (शुद्ध या भस्म), मजीठ, दूधी, आककी जड़की छाल, अरण्डमूल, जयन्ती, कुटकी, इमली और पीपल ५-५ तोले लेकर प्रथम पारद गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओष-धियोंका चूर्ण मिलाकर सबको आकके दूध, सेंड (थूहर-सेहुण्ड) के दूध और भेड़के दूधकी पृथक् पृथक् ३-३ या ४-४ भावना दे कर सुखा लें और फिर उसे देवदाली (बिंडाल) के रसकी ३ भावना देकर सुखावें। तदनन्तर बकरीके मूत्रमें घोट कर गोला बनावें; एवं उसे सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके कुक्कुट पुटमें पकावें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे गुड़में लपेट कर खिलाना चाहिये ।

इसके सेवनसे श्वेत कुष्ठके स्थान पर छाले पड़ जाते हैं एवं उनके फूटनेके पश्चात् वहां तिलके समान काले बिन्दु हो जाते हैं ।

पथ्य--इस रसके सेवन कालमें उड़द, तिल, कुलथ, बैंगन और कमल अधिक सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे समस्त कुष्ठ, यकृत्, गुल्म, प्लीहा और विद्रधि नष्ट होती तथा अग्नि, तेज और बलकी वृद्धि होती है ।

२ " जटात्वक्चन्द्रबिम्बिका " इति पाठभेदः।

३ "टङ्कमात्रा" इति पाठभेदः

(६०८९) रसराजेन्द्रः

(भै. र. । वृद्धिरो.)

हिङ्गुलोत्थं रसं गन्धं केशराजाम्बुशोधितम् ।
रसार्धं हेम तारञ्च नागं हेमार्द्धकं तथा ॥
क्षिप्त्वा खल्लतले पश्चाद् वासाक्वाथेन भावयेत्
काकमाच्याश्चित्रकस्य निर्गुण्ड्याः कुटजस्य च॥
स्थलपद्मस्योत्पलस्य सप्तकृत्वो द्रवैः पृथक् ।
ततो रक्तिमिताः कुर्याद् वटीश्चण्डांशु शोषिताः
अन्त्रजान् निखिलान् रोगान् सर्वदोषोद्भ-वांस्तथा ।
हन्त्ययं रसराजेन्द्रो मृगराजो यथा मृगान् ॥

हिङ्गुलोत्थ (शिंगरफसे निकाला हुवा) पारद १ भाग, भंगरेके रसमें शुद्ध किया हुवा गन्धक १

भाग, स्वर्ण भस्म और चांदी भस्म आधा आधा भाग, तथा सीसा भस्म चौथाई भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर वासा, काकमाची (मकोय), चीता, संभाल, इन्द्रजौ, स्थलपद्म और नीलोत्पलके स्वरस या क्वाथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें और उन्हें धूपमें सुखाकर सुरक्षित रक्खें ।

इनके सेवनसे सर्व दोषज समस्त प्रकारके अन्त्ररोग नष्ट होते हैं ।

(६०९०) रसविकारशमनोपायः

(यो. र. । रसविकारचिकि.)

जनितविविधदाहे शीततोयाभिषेको
मलयजघनसारो लेपनं मन्दवातः ।
तरुणदधिसितार्क्तं नारिकेलीफलाम्भो
मधुरशिशिरपानं शीतमन्यच्च शस्तम् ॥

सौभाग्यमेघनादाङ्घ्रिसितामधुकचन्दनम् ।
तुषोदकेन पातव्यं सर्वस्मिन् रसवैकृते ॥

छर्द्यां चेक्षुरसो देयः कपित्थं वा सितान्वितम्।

कुमारीगिललेपश्च सर्वाङ्गेण प्रशस्यते ॥
रसदाहे भवेत्सर्वं पित्तज्वरभिषग्जितम् ॥

सर्वस्मिन् रसवैकृते हि शिशिरं स्वेच्छाम्बुपानादिकम्
देयं तापशमाय दाडिमतरोरग्राणि दूर्वाशिफाः ।
सम्पेष्यामलया ददीत च तदा स्वेच्छावशेन त्यजेद्यावत्पूर्वबलं भवेत्पटुतरं तावत्स्त्रियं न स्पृशेत् ॥

यदि रस खानेसे दाह उत्पन्न हो गई हो तो शरीर पर शीतल जल डालना और चन्दन तथा कपूरका लेप करना, मन्द पवन सेवन करना, मिश्री युक्त ताज़ा दही खाना, नारियलका पानी पीना और मधुर तथा शीतल पदार्थ सेवन करने एवं अन्य शीतल उपचार करने हितकारी हैं ।

सुहागा, चौलाईकी जड़, मिश्री, मुलैठी और सफेद चन्दन समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे कांजीके साथ पीनेसे समस्त रसविकार शान्त होते हैं ।

यदि रसविकारके कारण छर्दि होने लगे तो ईखका रस पिलाना या कैथके गूदेमें मिश्री मिलाकर खिलाना चाहिये ।

रसजन्य दाहमें समस्त शरीर पर जम्बीरीके रसमें घीकुमारके गूदेको पीस कर लेप करना तथा पित्तज्वरकी चिकित्सा करनी चाहिये ।

समस्त रसविकारोंमें इच्छानुसार शीतल जलादि पिलाना और दाड़िम (अनार) वृक्षकी कोंपल तथा दूब घासकी जड़को आमलेके रसमें पीस कर देना चाहिये ।

रसविकार शान्त होने पर जब तक पूर्ववत् बल न आ जाए तब तक स्त्री-समागम न करना चाहिये ।

(६०९१) रसवीरमहारसः

(र. र. रसा. खं. । उपदेश २)

त्रिगुणं शुद्धसूतस्य योजयेच्छुद्धगन्धकम् ।
लोहपर्पटिकाचूर्णं सूततुल्यं विनिक्षिपेत् ॥
स्नुह्यर्कपयसा मर्द्यं तत्सर्वं दिवसत्रयम् ।
तच्छुष्कं चान्धितं पच्यात्करीषाग्नौ दिवा निशम् ॥
ततश्च टङ्कणं काचं दत्त्वा रुद्ध्वा धमेद्दृढम् ।
गुञ्जैकं मधुना खादेद्रसवीरो महारसः ॥
अब्दैकेन जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
मुशलीमूलचूर्णं तु गुञ्जापत्रद्रवैः पिबेत् ॥
छागीमूत्रेण वा तं वै कर्षैकं क्रामकं परम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग और गन्धक ३ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर उसमें १ भाग लोहपर्पटीका चूर्ण मिला कर सबको ३-३ दिन स्नुही (सेंड-थूहर) और आकके दूधमें खरल करें और फिर उसे सुखाकर अन्धमूषामें बन्द करके १ दिन रात कण्डोंकी अग्निमें पकावें। तत्पश्चात् उसमें १-१ भाग सुहागे और कांचका चूर्ण मिलाकर सबको एकत्र घोट कर शरावसम्पुटमें बन्द करें, और उसे तीव्राग्नि पर धमावें ।

इसे १ वर्ष तक सेवन करनेसे जरा (वृद्धावस्था) नष्ट होती और अत्यन्त आयुवृद्धि होती है ।

मात्रा—१ रत्ती ।

अनुपान—शहदके साथ दवा खा कर ऊपरसे मूसलीका चूर्ण चौंटलीके पत्तोंके रस या बकरीके मूत्रके साथ पीना चाहिये ।

(६०९२) रसशार्दूलरसः (१)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । सूतिका.)

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं राजपट्टं रसन्तथा ।
गन्धटङ्कमरीचञ्च यवक्षारं समांशकम् ॥
तथात्र तालकञ्चैव त्रिफलायाश्च तोलकम् ।
तोलकञ्चामृतञ्चैव षड्गुञ्जा प्रमिता वटी ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्यापि नागवल्लीरसेन च ।
भावयेत्सप्तधा हन्ति ज्वरकासाङ्गसङ्कहम् ॥
सूतिकातङ्कशोथादिस्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥

अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म, राज पट्ट (कान्त पाषाण—चुम्बक) भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, काली मिर्चका चूर्ण, जवाखार, हरताल (शुद्ध या भस्म), हर्र, बहेड़ा, आमला और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंको चूर्ण मिलाकर सबको गूमा और पानके रसकी पृथक् पृथक् सात सात भावना देकर ६-६ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे ज्वर, खांसी, शरीरकी जकड़ाहट, सूतिका रोग और शोथादि स्त्री-रोगोंका नाश होता है ।

(६०९३) रसशार्दूलरसः (२) (वृहद्)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । सूतिका.)

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद्दिनम् ।
प्रतिलौहं सूततुल्यमष्टलौहं मृतं क्षिपेत् ॥
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी मधुयष्टिः पुनर्नवा ।

नलिका गिरिकर्ण्यर्ककृष्णधूत्तूरालभाः ॥
अटरूषं काकमाची द्रवैरेषां विमर्दयेत् ।
गुञ्जात्रयं चतुर्थं वा सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
रोगोक्तमनुपानं वा कवोष्णं वा जलं पिबेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग, रौप्य भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग, बंग भस्म १ भाग, सीसा भस्म १ भाग, मुण्डलोह भस्म १ भाग, तीक्ष्ण लोह भस्म १ भाग और कान्त लोह भस्म १ भाग लेकर प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको १-१ दिन ब्राह्मी, जयन्ती, निर्गुण्डी (सम्भालु), मुलैठी, पुनर्नवा, नाली शाक, कोयल, आक, काला धतूरा, धमासा, बासा और मकोयके रसमें खरल करके ३-३ या ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें रोगोचित अनुपान या मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त सूतिकारोग नष्ट होते हैं।

रसशार्दूलरसः (३) (महा)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । सूतिका.)

"महा शार्दूल रसः" प्रयोग संख्या ५५८७ देखिये।

(६०९४) रसशेखरः

(भै. र. । उपदंशा. ; धन्व.)

पारदश्चाहिफेनश्च द्विद्वांदशरक्तिकम् ।
अयः पात्रे निम्बकाष्ठैर्मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥
तस्मिन् सम्मूर्च्छिते दद्याद्दरदं रससम्मितम् ।
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत् ॥
जातीकोषफले चैव पारसीकयमानिकाम् ।
आकारकरभं चैव द्वात्रिंशद्रक्तिकां प्रति ॥
मर्दयेत्तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम् ।
दद्यात् खदिरसत्वश्च वटिका चणकप्रभा ॥
सायं द्वे द्वे प्रयोज्ये च लवणाम्लश्च वर्जयेत् ।
गलत्कुष्ठं तथा स्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि॥
ये स्युर्व्रणा नृणामन्ये उपदंशपुरःसराः ।
तान् सर्वान्नाशयत्याशु सिद्धोऽयं रसशेखरः ॥

शुद्ध पारद २ रत्ती और अफीम १२ रत्ती लेकर दोनोंको लोह पात्रमें डालकर नीमके डंडेसे, थोड़ा थोड़ा तुलसीका रस डालते हुवे घोटें। जब दोनों एक जीव हो जाएं तो उसमें २ रत्ती शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ़) मिला कर उपरोक्त विधिसे तुलसीका रस डाल डाल कर नीमके डंडेसे घोटें। जब सब अच्छी तरह मिल जाएं तो उसमें जावत्री, जायफल, पारसी अजमायन (खुरासानी अजवायन) और अकरकरेका बारीक चूर्ण ३२-३२ रत्ती मिला कर पुनः तुलसीका रस डालकर नीमके डंडेसे घोटें और अन्तमें सबसे २ गुना कत्था मिलाकर चनेके बराबर गोलियां बना लें।

मात्रा---२ गोली।

इन्हें सायंकालके समय खिलाना चाहिये।

अपथ्य---नमक और खटाईसे परहेज़ करना चाहिये।

इनके सेवनसे गलत्कुष्ठ विस्फोटक, गर्दभिका और उपदंशके व्रण नष्ट होते हैं।

(६०९५) **रससाररसः**

(र. चं.; । रसविकार चि. ; यो. र.)

मुक्ताविद्रुमवङ्गभूतिसहितं बल्लं पृथक् स्वर्णकम्।
छिन्नासत्त्वतुगासितानवनितं चालोड्य सम्भक्षयेत् ॥
संजाते तृषि नारिकेलसलिलं तत्कालिकं प्राशयेत्।
सर्वस्मिन्रसवैकृते च गदितं ह्येतद्धि योगामृते ॥

मोती भस्म, विद्रुम (मूंगा) भस्म, बंग भस्म और स्वर्ण भस्म तथा गिलोयका सत और बंसलोचन समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे मिश्रीयुक्त नवनीत (नौनी घी) के साथ चाटनेसे रसजनित विकार शान्त होते हैं।

रस सेवनसे यदि तृषा उत्पन्न हो जाय तो नारियलका ताज़ा पानी पिलोना चाहिये।

(६०९६) **रससिन्दूरम्** (१)

(रसे. सा. स. ; यो. र.)

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम् ।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा न्यग्रोधाङ्कुरवारिभिः ॥
भावना त्रितयं दत्त्वा स्थालीमध्ये निधापयेत् ।
विरच्य कवचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम् ।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्य सन्निभम् ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान्गुणान् ॥

५ तोले शुद्ध पारद और ५ तोले शुद्ध गन्धककी कज्जली करके उसे बड़के अंकुरोंके रसकी ३ भावना दे कर सुखा लें और फिर उसे ३-४ कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर बालुका यन्त्रमें रख कर ४ पहरकी मन्दाग्नि दें।

तदनन्तर शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसे सावधानी पूर्वक ताड़ कर उसमेंसे बालसूर्यके समान लाल रंगके रसको निकाल लें। इसीका नाम रस-सिन्दूर है।

रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे यह अनेक रोगोंको नष्ट करता है।

(६०९७) **रससिन्दूररम्** (२)

(योग त. । त. १७; आ. प्र. । अ. १)

सूतः पञ्चपलः स्वदोषरहितस्तत्तुल्यभागो बलिर्द्वौ टङ्कौ नवसादरस्य तुवरीकर्षश्च संमर्दितः ।
कूप्या काचभुवि स्थितश्च सिकतायन्त्रे त्रिभिर्वासरैः
पक्को वह्निभिरुद्भवत्यरुणाभाः सिन्दूरनामा रसः

शुद्ध पारद २५ तोले, शुद्ध गन्धक २५ तोले, नौसादर १० माशे और फटकी १। तोला लेकर कज्जली बनावें और फिर उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर ३ दिन तक बालुका यन्त्रमें पकावें। और तत्पश्चात् शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसे तोड़कर उसके गलेमें लगेहुवे लाल रंगके रससिन्दूरको निकाल लें।

(६०९८) **रससिन्दूरम्** (३)

(आ. वे. प्र. । अ. १)

कूपी सप्तमृदंशुकैः परिवृता शुष्काऽत्र गन्धेश्वरौ
तुल्यौ तौ नवसारपादकलितौ सम्मर्द्य तस्यां न्यसेत्।

सा यन्त्रे सिकताख्यके तलबिले पक्त्वाऽर्कयामं हिमं
भित्वा कुङ्कुमपिञ्जरं रसवरं भस्मादद्देहिव्यराट् ॥
पाके रुद्धं मुखं कूप्या नवसारेण जायते ।
ततः शलाकया कुर्यात्कूपिकानाशशान्तये ॥
अनेन विधिना पाका यावन्तोऽस्य भवन्ति हि
तावन्तो हि गुणोत्कर्षा जायन्ते रसभस्मनः ॥

शुद्ध पारद और गन्धक ४-४ भाग तथा नौसादर २ भाग ले कर यथा विधि कज्जली बनावें और उसे सात कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर १२ पहर तक बालुका-यन्त्रमें पकावें। बालू वाली हाण्डीकी तलीमें १ छेद कर देना चाहिये ।

पाकके समय नौसादर उड़कर शीशीके मुख पर आ लगेगा और उसे बन्द कर देगा, जिससे शीशीके फूट जानेका भय है; अतः जब जब शीशीका मुख नौसादरसे बन्द हो जाय तब तब उसे लोहेकी शलाकासे खोलते रहना चाहिये ।

१२ पहर पश्चात् शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसे तोड़ कर उसके गलेमें लगे हुवे रस सिन्दूरको निकाल लें ।

उक्त विधिसे जितनी बार अधिक पाक किया जायगा, रस, उतना ही अधिक गुणदायक बनेगा ।

(६०९९) रससिन्दूरम् (४)

(आ. वे. प्र. । अ. १; रसे. सा. स. ; यो. र.)

भागो रसस्य त्रय एव भागा
गन्धस्य माषः पवनाशनस्य ।
संमर्द्य गाढं सकलं सुभाण्डे
तां कज्जलीं काचकृते निदध्यात् ॥
संवेष्टय मृत्कर्पटकैर्घटीं तां
मुखे सचूर्णां गुटिकां च दत्त्वा ।
क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा
तां वालुकायन्त्रगतां, ततः स्यात् ॥
बन्धूकपुष्पारुणमीशजस्य
भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ।
निजानुपानैर्मरणं जरां च
निहन्ति वल्लक्रमसेवनेन ॥

'गन्धस्य भागो नवसादरस्य' इति मुख्यः पाठः । 'भागशब्दस्तु कर्षत्रयवाची' इति वृद्धाः । केचन पवनाशनशब्देन सीसकं व्याचक्षते; तत्तु धातुवादे उपयुज्यत इति ज्ञेयम् । आरुण्योत्पत्त्यै कूपीमुखे मुद्रा कार्या इति केचिद्वदन्ति, अन्ये मुद्रामदत्त्वैव रसभस्म संपादयन्ति; यथासंप्रदायं व्यवस्था ॥

शुद्ध पारद १ भाग (१। तोला) और गन्धक ३ कर्ष (३॥। तोले) तथा शुद्ध शीशा १। माशा लेकर प्रथम शीशेको गला कर पारदमें डाल कर खरल करें और जब शीशा उसमें मिल जाए तो उसमें गन्धक डाल कर कज्जली बनावें । तदनन्तर इस कज्जलीको कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसके मुख पर खिरिया मिट्टीका डाट लगा कर उसे गुड़ चूनेसे बन्द कर दें और बालुका-यन्त्रमें रख कर ३ दिन तक क्रमवर्धित अग्नि जलावें ।

इसके पश्चात् शीशीके स्वांगशीतल होने पर उसको तोड़कर गलेमें लगे हुवे दुपहरियाके फूलके समान लाल रंगके रससिन्दूर को निकाल लें।

यह रस उचित अनुपानके साथ देनेसे अनेक रोगों और जरा तथा (अकाल) मृत्युको भी नष्ट कर देता है ।

मात्रा—३ रत्ती ।

नोट—कुछ लोग शीशीका मुख खुला रखते हैं ।

(६१००) **रससिन्दूरम्** (५)

(यो. र.)

पलद्वयं शुद्धरसं पलार्धं शुद्धगन्धकम् ।
कर्षार्धं नवसारं च जम्बीरेण विमर्दयेत् ॥
काचकूप्यां क्षिपेच्चैव सप्तधा मृदकर्पटैः ।
विलेप्य काचकूपीं तामातपे शोषयेद् दृढम् ॥
छिद्रभाण्डे ततः कूपीं न्यसेत्सिकतयन्त्रके ।
कूपिकां कण्ठमानेन पूजयेदिष्टदेवताः ॥
पञ्च पूज्याः कुमार्यश्च ततश्चुल्ल्यां विनिक्षिपेत् ।
पचेद्यामाष्टकं चैव कूपिकां च क्षणे क्षणे ॥
संशोध्य पाचयेद्यन्त्रे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
ग्राह्यं च दरदाकारं देवदानवदुर्लभम् ॥
सेवयेद्रोगनाशाय तत्तद्रोगानुपानतः ।
वल्लं वा वल्लयुग्मं वा कणया मधुना सह ॥
सेवितं कामिनीकामं दर्शयेद्रतिकौतुकम् ।
वीर्यबन्धकरं शीघ्रं योषामदविनाशनम् ॥
सिन्दूरं हरवीर्यसंभवमिदं रूक्षाग्निमान्द्यापहं
यक्ष्मादिक्षयपाण्डुशोफमुदरं गुल्मप्रमेहापहम् ।
शूलप्लीहविनाशनं ज्वरहरं दुष्टव्रणान्नाशये-
दर्शांसि ग्रहणीभगन्दरहरं छर्दित्रिदोषापहम् ॥

शुद्ध पारद १० तोले, शुद्ध गन्धक २॥ तोले और नौसादर ७॥ माशे लेकर तीनोंकी कज्जली बना कर उसे नीबू के रसमें घोट कर सुखा लें और फिर उसे सात कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशी में भर दें ।

तदनन्तर एक हाण्डीके पेंदेमें छेद करके उस पर कपरमिट्टी कर के सुखा लें और उसमें शीशी रख कर शीशीके गले तक हाण्डीको बालू रेतसे भर दें ।

इसके पश्चात् इष्टदेव और ५ कन्याओंका पूजन करके उक्त हाण्डी को चूल्हे पर चढ़ा दें और उसके नीचे ८ पहर तक अग्नि जलावें ।

अग्नि तापसे नौसादर उड़ उड़ कर शीशी के मुखको बन्द करेगा अतएव लोहेकी सलाई से शीशी के मुखको बार बार खोलते रहना चाहिये ।

आठ पहर अग्नि जलाने के पश्चात् जब शीशी स्वांग शीतल हो जाय तो उसे तोड़ कर उसके गले में लगे हुवे रससिन्दूरको निकाल लें ।

मात्रा—३ से ६ रत्ती तक ।

साधारण अनुपान—पीपलका चूर्ण और शहद ।

यह अत्यन्त वाजीकरण, वीर्यस्तम्भक, और कामिनी-मद-भंजक है ।

इसे रोगोचित अनुपान के साथ देनेसे अनेक रोग नष्ट होते हैं।

यह रस रूक्ष, अग्निमांद्य-नाशक तथा क्षय, पाण्डु, शोथ, उदर, गुल्म, प्रमेह, शूल, प्लीहा, ज्वर, दुष्ट व्रण, अर्श, संग्रहणी, भगन्दर, छर्दि और त्रिदोषको नष्ट करता है।

रससिन्दूरम् (६)

(रसे. सा. स.)

प्र. स. ४३५१ " पारदभस्म-विधिः " (१४) देखिये।

रससिन्दूरानुपानानि

(यो. र.)

पिप्पलीमधुना सार्धं वातमेहं हिनस्ति च।
त्रिफलाशर्करासार्धं पित्तमेहहरा स्मृता॥
पिप्पली मरिचं शुण्ठी भार्गी च मधुना सह।
कासश्वासप्रशमनः शूलस्य च विनाशनः॥
हरिद्राशर्करासार्धं रुधिरस्य विकारनुत्।
त्र्यूषणं त्रिफला वासा कामलापाण्डुमान्द्यहृत्॥
पिप्पली चित्रकं पथ्या तथा सौवर्चलं क्षिपेत्।
अग्निमान्द्यबद्धकोष्ठहृद्व्यथानाशनं परम्॥
शिलाजतु तथैला च सितोपलसमन्वितम्।
मूत्रकृच्छ्रे प्रशस्तोऽयं सत्यं नागार्जुनोदितम्॥
लवङ्गं कुङ्कुमं पत्री हिङ्गुलं करहाटिका।
पिप्पली विजया चैव समानीमानि कारयेत्॥
कर्पूरादहिफेनाच्च नागाद्भागार्धकं क्षिपेत्।
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य धातुवृद्धौ प्रदापयेत्॥
सौवर्चलं लवङ्गं च भूनिम्बश्च हरीतकी।
अस्यानुपानयोगेन सर्वज्वरविनाशनः॥
तथा रेचकरः प्रोक्तः सौवर्चलफलत्रिकात्।
लवङ्गं कुङ्कुमं चैव दरदेन च संयुतः॥
ताम्बूलेन समं भक्ष्यो धातुवृद्धिकरः परः।
विदारीचूर्णयोगेन धातुवृद्धिकरो मतः।
विजयादीप्यसंयुक्तो वमनस्य विकारनुत्॥
सौवर्चलं हरिद्रा च विजया दीप्यकस्तथा।
अनेनोदरपीडां च सद्योजातां विनाशयेत्॥
चतुर्वल्लं पलाशस्य बीजाच्च द्विगुणं गुडात्।
अस्यानुपानयोगेन कृमिदोषविनाशनः॥
अहिफेनं लवङ्गं च दरदं विजया तथा।
अस्यानुपानतः सद्यः सर्वातीसारनाशनः॥
सौवर्चलेन दीप्येन चाग्निमान्द्यहरः परः।
क्षुद्बोधजनकश्चैव सिद्धनागेश्वरोदितः॥
गुडूचीसत्त्वयोगेन सर्वपुष्टिकरः स्मृतः।
युक्तानुपानसहितः सर्वान्रोगान्विनाशयेत्॥

रससिन्दूरके अनुपान

वातज प्रमेहमें—पीपलके चूर्ण और शहद के साथ चटावें।

पित्तज प्रमेहमें—त्रिफले के काथमें खांड मिला कर उसके साथ खिलावें।

खांसी, श्वास, शूलमें—पीपल, काली मिर्च सोंठ और भरंगीके चूर्ण तथा शहदके साथ दें।

रक्तविकारमें—हल्दी के चूर्ण और खांड के साथ दें।

कामला, पाण्डु, अग्निमांद्यमें—त्रिकुटा, त्रिफला और बासेके क्वाथ के साथ सेवन करावें।

अग्निमांद्य, हृद्रोग, कोष्ठबद्ध में--पीपल, चीता, हर्र और सञ्चल (काले नमक) के साथ दें।

मूत्रकृच्छ्में--शिलाजीत, इलायची, और बंसलोचन के चूर्ण के साथ सेवन करावें ।

धातुवृद्धि के लिये--लौंगका चूर्ण, केसर, जावत्री, शुद्ध हिंगुल, अकरकरा, पीपल और भांग १-१ भाग तथा कपूर, अफीम और सीसाभस्म आधा आधा भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें एवं इस चूर्ण के साथ यथोचित मात्रामें रस सिन्दूर सेवन करावें ।

हर प्रकारके ज्वरमें--सञ्चल (काला नमक), लौंग, चिरायता और हर्र के साथ दें।

विरेचन के लिये--सौवर्चल (सञ्चल) युक्त त्रिफलाक्वाथके साथ दें।

धातु वृद्धिके लिये--लौंग, केसर और शुद्ध हिंगुल (शिंगरफ) के चूर्ण में मिलाकर पानमें रख कर खाना चाहिये । या विदारी कन्दके चूर्ण के साथ सेवन करें ।

वमनमें--भांग और अजवायनके चूर्ण के साथ दें।

नवीन उदरपीड़ामें--सञ्चल (काला नमक), हल्दी, भांग और अजवायन के चूर्ण के साथ खिलावें ।

कृमि विकारमें--१॥ माशा पलाशपापड़ा (ढाक के बीज) का चूर्ण और ३ माशे गुड़ एकत्र मिलाकर उसके साथ खिलावें ।

हर प्रकारके अतिसारमें--अफीम, लौंग, शुद्ध हिंगुल और भांग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें तथा उसके साथ रससिन्दूर सेवन करावें।

अग्निमांद्यमें--सञ्चल (काला नमक) और अजवायनके साथ दें। इसी अनुपानके साथ देने से क्षुधावृद्धि भी होती है ।

पुष्टिके लिये--गिलोयके सतके साथ दें ।

अन्य रोगोंमें रोगोचित अनुपानके साथ देना चाहिये ।

(६१०१) रससिन्दूरयोगः

(भै. र. । मूत्राघाता.)

वराम्ललवणोपेतं सूतं यश्च पिबेन्नरः ।
तस्य नश्यन्ति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥

रस सिन्दूरको त्रिफला और सेंधा नमकके चूर्ण में मिलाकर कांजीके साथ सेवन करनेसे १३ प्रकारके मूत्राघात नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**--१-१॥ रत्ती ।)

(६१०२) रसाञ्जनादिचूर्णम्

(ग. नि. । कासा. १०)

रसाञ्जनं हरिद्रा च पिप्पली लोहचूर्णकम् ।
मूर्वाचित्रकमञ्जिष्ठाः पाठा च क्षयकासजित् ॥

रसौत, हल्दी, पीपल, लोह भस्म, मूर्वा, चीता, मजीठ और पाठा; सबका समान भाग चूर्ण लेकर एकत्र मिला कर खरल करें ।

यह चूर्ण क्षय की खांसीको नष्ट करता है ।

(मात्रा--१ माशा ।)

(६१०३) **रसादिगुटिका**

(र. रा. सु. । वातरोगा.)

पारदस्तालको गन्धस्त्रयः शुद्धाः समाः स्मृताः।
जातिफलं जातिकोशं भङ्गाबीजं लवङ्गकम् ॥
यवानीतुत्थकं शुद्धं शुद्धं त्र्यूषं समं पृथक् ।
नागवल्लीदलरसैर्मर्दयेत् प्रहरद्वयम् ॥
सोसनस्य शिफानीरैर्मर्दयेत्तु तथाविधम् ।
अष्टगुञ्जामिता कार्या गुटिका च भिषग्वरैः ॥
प्रभाते चैव सायाह्ने वटी देया विशेषतः ।
मधुना नीरयुक्तेन गिलेच्चां वै वटीं शुभाम् ॥
पक्षाघातं निहन्त्याशु रसादिगुटिका त्वियम् ।
चन्द्रटेन समाख्याता योगरत्नसमुच्चये ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक १-१ भाग लेकर कज्जली बनावें और फिर उसमें १ भाग शुद्ध हरताल तथा १-१ भाग जायफल, जावत्री, भांगके बीज, लैंग, अजवायन, तूतियाकी भस्म, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण मिलाकर २-२ पहर पानके रस और सैासन (एक यूनानी औषध) की जड़के रस या क्वाथ में खरल करके ८-८ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

अनुपान---शहदका शर्बत ।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातः सायं सेवन करनेसे पक्षाघात रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(६१०४) **रसादिगुटी** (१)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । तृष्णा., वृ. यो. त. । त. ८४)

रसरजतगुटीं पटीयसीं यो
वदनसरोरुहमध्यगां दधाति ।
स जयति तृषितस्तृषां मनुष्यो
भृशमघमिव त्रिमार्गगाम्भः ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध चांदीके चूर्ण या वरकों को एकत्र घोट कर गोली बनावें ।

इसे मुखमें रखनेसे तृषा नष्ट होती है ।

(६१०५) **रसादिगुटी** (२)

(वृ. नि. र. । स्पर्शवाता.)

अष्ट भागो रसः शुद्धो विषतिन्दोर्दशैव तु ।
गन्धकस्य दशद्वौ त्रिकटुत्रिफलयोस्त्रयः ॥
वह्निचित्रकमुस्तानां वचाश्वगन्धयोरपि ।
रेणुकाविषकुष्ठानां पिप्पलीमूलनागयोः ॥
एकैकस्तु भवेद्भाग इति ग्राह्याः क्रमेण च ।
गुडश्चतुर्विंशतिः स्याद्वटिका बदराकृतिः ॥
क्रमेण वानुसेवेत स्पर्शवातापनुत्तये ॥

शुद्ध पारद ८ भाग, शुद्ध कुचला १० भाग, शुद्ध गन्धक १२ भाग; सोंठ, मिर्च और पीपल १-१ भाग; हर्र, बहेड़ा, आमला १-१ भाग, चीता २ भाग तथा नागरमाथा, बच, असगन्ध, रेणुका, शुद्ध बछनाग, कूठ, पीपलामूल और सीसा-भस्म १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर अन्तमें २४ भाग गुड़ मिलावें और बेरके समान गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे स्पर्शवातका नाश होता है ।

(६१०६) **रसादिगुटी** (३)

(वै. र. ; वृ. नि. र. । दाह. ; र. रा. सु. ; यो. र. । दाह. ; वृ. यो. त. । त. ८७)

रसबलिघनसारचन्दनानां
सनलदसैन्धपयोदजीवनानाम् ।

अपहरति गुटी मुखस्थितेयं
सकलसमुत्थितदाहमाश्रयेत्ताम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, सफेद चन्दनका चूर्ण, दो प्रकारकी खस, नागरमोथा और सुगन्धबालाका चूर्ण समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको पानीमें घोटकर गोलियां बना लें।

इन्हें मुखमें रखनेसे हर प्रकारकी दाह नष्ट होती है।

(६१०७) रसादिचूर्णम्

(यो. र. । तृषा. , वृ. नि. र. । तृष्णा.)

रसगन्धककर्पूरैः शैलोशीरमरीचकैः ।
ससितैः क्रमवृद्धैश्च सूक्ष्मं कृत्वा त्वहर्मुखे ॥
त्रिगुञ्जाप्रमितं खादेत्पिबेत्पर्युषिताम्बु च ।
भृशं तृषां निहन्त्येवमश्विभ्यां च प्रकाशितम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, कपूर ३ भाग, शिलाजीत ४ भाग, खस ५ भाग, काली मिर्च ६ भाग, और मिश्री ७ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह खरल करें।

प्रातःकाल इसमेंसे ३ रत्ती चूर्ण खा कर ऊपरसे बासी पानी पीनेसे प्रवृद्ध तृषा भी शान्त हो जाती है।

(६१०८) रसादिवटी (१)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

रसं गन्धं च दरदं जैपालं क्रमवर्द्धितम् ।
दन्तीरसेन सम्पिष्य वटी गुञ्जामिता कृता ॥
प्रभाते सितया सार्धमशिता शीतवारिणा ।
एकेन दिवसेनैषा नवज्वरहरा भवेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्ध हिंगुल ३ भाग और शुद्ध जमालगोटा ४ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको दन्तीमूलके क्राथमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १ गोली प्रातःकाल मिश्रीमें मिला कर ठण्डे पानीके साथ सेवन करनेसे नवीन ज्वर एक ही दिनमें नष्ट हो जाता है।

(६१०९) रसादिवटी (२)

(वृ. नि. र. । ज्वरा.)

रसो गन्धो विषं शुण्ठी पिप्पली मरिचानि च।
पथ्या विभीतकं धात्री दन्तीबीजं च शोधितम्॥
चूर्णमेषां समांशानां द्रोणपुष्पीरसैर्भवेत् ।
वटी माषनिभां कुर्याद्भक्षयेन्नूतनज्वरे च ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, हर्र, बहेड़ा, आमला और शुद्ध जमालगोटा समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको गूमाके रसमें घोट कर उड़दके बराबर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे नवीन ज्वर नष्ट होता है।

(६११०) रसाद्युद्धूलनम्

(यो. र. । सन्निपात.)

रसविषमरिचमहेशप्रियफलभस्मैकभूचतुर्वसुभिः।
भागैर्मितमुद्धूलनमिदमतिस्वेदशैत्यहरम् ॥

पारद १ भाग, बछनागका चूर्ण १ भाग, काली मिर्चका चूर्ण ४ भाग और धतूरेके फलकी भस्म ८ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके बारीक चूर्ण बनावें ।

सन्निपात ज्वरमें अत्यधिक स्वेद आने लगे या शरीर शीतल हो जाए तो शरीर पर इस चूर्णकी मालिश करनी चाहिये ।

(६१११) रसाभ्रकम्

(र. चि. म. । स्तबक १०)

भुवने विप्रगेहेषु पत्रिका देवकन्दली ।
पवित्रा सर्वदेवानां मस्तकादिमनोहरी ॥
शुद्धसूतकमानीय सममभ्रेन मेलयेत् ।
तस्या रसं विनिक्षिप्य मर्दयेत्सूतमभ्रकम् ॥
याममात्रेण तत्सर्वं मिलत्येकत्र निश्चितम् ।
पिण्डरूपमिदं सर्वं घृष्यन्ते दिवसत्रयम् ॥
काचकूप्ये विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रमध्यगम् ।
देवकन्दलयष्टीनां ज्वालयेद्याममात्रकम् ॥
पश्चादपरकाष्ठानि ज्वालनीयानि यत्नतः ।
द्वादशप्रहरस्यान्ते शीतीभूतं तदुद्धरेत् ॥
रक्तिकात्रितयं दत्त्वा मधुना सह भक्षणे ।
अत्यग्निं कुरुते दीप्तमतिपाकं करोति च ॥
अक्षीणाङ्गश्च जायेत कल्पजीवी भवेन्नरः ।
जराजर्जरदेहानां पलितानि विनाशयेत् ।
यामादपि भवेच्छ्रीमान्मतिमांश्च भवेद्ध्रुवम् ॥

शुद्ध पारद और अभ्रक भस्म समान भाग लेकर दोनोंको १ पहर तक खरल करें और फिर उसमें देवकन्दलीका रस डाल कर तीन दिन खरल करें। तदनन्तर उसे कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशमें भर कर उसे १२ पहर बालुका-यन्त्रमें पकावें। प्रथम १ पहर देवकन्दलीकी लकड़ीकी आग जलानी चाहिये और फिर ११ पहर अन्य चाहे जिस लकड़ीकी आग जलाई जा सकती है ।

१२ पहर अग्नि देनेके पश्चात् जब शीशी स्वांग-शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

अनुपान—शहद

इसके सेवनसे जठराग्नि और पाचन शक्तिकी अत्यधिक वृद्धि होती और आयु बढ़ती है। वृद्धावस्थाके कारण श्वेत हुवे केश इसके सेवनसे काले हो जाते हैं तथा शरीर क्षीण नहीं होता ।

(६११२) रसाभ्रगुग्गुलुः

(भै. र. । वातरक्त.)

कर्षद्वयं पारदस्य लौहं गन्धश्च तत्समम् ।
लौहगन्धसमं चाभ्रं गुग्गुलुं कुडवद्वयम् ॥
अमृताया रसप्रस्थे रसप्रस्थे फलत्रिके ।
सान्द्रीभूते रसे तस्मिन् गर्भं दत्त्वा विचक्षणः ॥
त्रिकटु त्रिफला दन्ती गुडूची चेन्द्रवारुणी ।
विडङ्गं नागपुष्पश्च त्रिवृता च सुचूर्णितम् ॥
प्रत्येकं कर्षमादाय सर्वमेकत्र कारयेत् ।
भक्षयेत् माषमात्रन्तु छिन्नाक्वाथानुपानतः ॥
वातरक्तं महाघोरं स्फुटितं गलितं जयेत् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं क्रिमिरोगाश्मरीं तथा ॥
भगन्दरं गुदभ्रंशं श्वेतकुष्ठं सकामलम् ।
अपचीं गण्डमालाञ्च पामाकण्डूविचर्चिकाः ॥

चर्मकीलं महादद्रुं नाशयेन्नात्र संशयः।
वातरक्तविनाशाय धन्वन्तरिकृतः पुरा ॥
रसाभ्रगुग्गुलुः ख्यातो वातरक्तेऽमृतोपमः ॥

शुद्ध पारद, लोह भस्म और शुद्ध गन्धक २॥-२॥ तोले; अभ्रक भस्म ५ तोले; शुद्ध गूगल ४० तोले तथा गिलोयका रस या क्काथ २ सेर और त्रिफलाका क्काथ २ सेर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर समस्त द्रव्यों को एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पाक लगभग तैयार हो जाय तो उसमें निम्न लिखित द्रव्योंका चूर्ण मिला कर सबको एक जीव करके सुरक्षित रक्खें।

चूर्ण द्रव्य—सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, गिलोय, इन्द्रायणकी जड़, बायबिड़ंग, नागकेसर और निसोत; इनका चूर्ण १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र मिला लें।

मात्रा—१ माषा।

अनुपान—गिलोयका क्काथ।

इसके सेवनसे गलित और स्फुटित भयंकर वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ठ, कृमिरोग, अश्मरी, भगन्दर, गुदभ्रंश, श्वेत कुष्ठ, कामला, अपची, गण्डमाला, पामा, कण्डु (खाज), विचर्चिका, चर्मकील और महा दद्रुका नाश होता है।

यह प्रयोग वातरक्तके लिये तो अमृतके समान गुणकारी है।

(क्काथार्थ—गिलोय १ सेर, पानी ८ सेर, शेष क्काथ २ सेर। त्रिफला १ सेर, पानी ८ सेर, शेष क्काथ २ सेर।)

(६११३) रसाभ्रगुटिका

(र. र.; धन्व. । रसायना.)

सहदेवी बला चैव सूर्यावर्त्तोऽथ मारिषः।
अपामार्गोऽमृता चैव सम्यक् सम्पादयेद् भिषक्
एषां पलानि चत्वारि प्रत्येकं कुट्टयेत्ततः।
अत ऊर्ध्वं च तद्दत्त्वा मण्डूरं यत्पुरातनम् ॥
गोमूत्रेण पचेत्तावद् यावद् गोमूत्रशोषणम्।
तस्मादुद्धृत्य तच्चूर्णं कुर्यात्पलचतुष्टयम् ॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्तगुडूची चित्रकं त्रिवृत्।
दन्ति विडङ्गमेकैकं कर्षमेषां तु चूर्णयेत् ॥
एकपत्रीकृतस्याथ वज्रकाभ्रस्य यत्पलम्।
वार्यन्नाम्भस्त्रिरात्रस्थं वारिपर्णीरसाप्लुतम् ॥
आतपे शोषयेत्तीक्ष्णे दिनमेकं सुरक्षया।
सूरणस्य रसैः पिष्ट्वा तत्र टङ्कणकस्य च ॥
दत्त्वाष्टौ माषकांस्तत्र पुटपाकेन पाचयेत्।
मृण्मये सुदृढे पात्रे मृदुना गोमयाग्निना ॥
रसाद्द्वादशमाषाश्च कर्षं गन्धकतः पृथक्।
रसे मण्डूकपर्ण्याश्च मूर्छितौ कज्जलीकृतौ ॥
घृतस्य मधुनश्चापि पृथक् पलचतुष्टयम्।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥
ततोऽष्टौ माषकान् खादेदथवा द्वादशैव च।
कर्षं वापि तथा कुर्यात् बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥
दुग्धं चापि पिबेद्रोगी वह्नौ मन्दभवे ततः।
तप्तोदकानुपानं च सेवेच्च ग्रहणीगदे ॥
अजाक्षीरानुपानं च श्वासकासे प्रयोजयेत् ॥

(१) सहदेवी, बला (खरैटी), सूर्यावर्त (हुलहुल), मरसा, अपामार्ग और गिलोय २०-२० तोले तथा गोमूत्रमें पकाया हुवा पुराने मण्डूरका चूर्ण २० तोले एवं सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र,

बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, गिलोय, चीता, निसात, दन्तीमूल और बायबिड़ंग; इनका चूर्ण १।-१। तोला लें।

(२) ५ तोले वज्राभ्रकका एक पत्र लेकर उसे ३ दिन तक चावलोंके पानीमें भिगोए रक्खें और फिर तेज़ धूपमें सुखा लें। तदनन्तर उसे ३ दिन तक शैवाल (सिरवाल) के रसमें भिगो कर उसी प्रकार तेज़ धूपमें सुखावें। इसके पश्चात् उसे जिमीकन्दके रसमें घोटें और फिर उसमें १० माशे सुहागा मिला कर टिकिया बना कर सुखा लें और यथा विधि सम्पुटमें बन्द करके उपलोंकी मृदु अग्निमें पकावें। (इसी प्रकार बार बार सुहागेके योगसे पुट देकर अभ्रककी निश्चन्द्र भस्म बनानी चाहिये।)

(३) १५ माशे शुद्ध पारद और १५ माशे शुद्ध गन्धककी कज्जली बनाकर उसे मण्डूकपर्णीके रसमें घोट कर सुखा लें।

अब उपरोक्त सहदेवी आदि ६ ओषधियोंको कूट कर बारीक कर लें और फिर उसमें उपरोक्त मण्डूर, सोंठ आदि काथ्यादि ओषधियां, उपरोक्त वज्राभ्रक, कज्जली तथा २०-२० तोले घी और शहद मिला कर सबको स्निग्ध पात्रमें भर कर रख दें।

इसे ८ माशेसे १। तोला तक अग्नि बलोचित मात्रानुसार सेवन करना चाहिये।

अनुपान—

अग्निमांद्यमें—दूध;

ग्रहणी रोगमें—उष्ण जल तथा

श्वास खांसीमें—बकरीका दूध।

(६११४) रसाभ्रमण्डूरम्

(भै. र. । शोथा.)

गन्धकाम्बरसूतानां प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम्।
संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरं मुष्टिकद्वयम्॥
प्रसृतश्च हरीतक्या पाषाणजतुनः पिचुम्।
तोलकं कान्तलौहस्य सर्वं रौद्रे विभावयेत्॥
भृङ्गराजरसप्रस्थे केशराजरसे तथा।
निर्गुण्डीमानकन्दानामार्द्रकस्य रसेऽपि॥
त्रिकटुत्रिफलाचव्यमुस्तकानां पृथक् पृथक्।
कर्षं कर्षं क्षिपेच्चूर्णं मर्दयेन्मधुसर्पिषा॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय मात्रया युक्तितः पुमान्।
निहन्ति सर्वजं शोथं सर्वाङ्गैकाङ्गसंश्रयम्॥
कासश्वासतृषादाहमोहच्छर्दियुतं तथा।
अम्लपित्तं निहन्त्येव शूलमष्टविधं जयेत्॥
अग्निवृद्धिकरं वृष्यं हृद्यं वातानुलोमनम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्लेष्मकुष्ठारुचिज्वरम्॥
प्लीहगुल्मोदरं हन्ति ग्रहणीं सप्रवाहिकाम्॥

शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म और शुद्ध पारद, २॥-२॥ तोले, मण्डूर भस्म १० तोले; हर्रका चूर्ण १० तोले, शिलाजीत १। तोला और कान्त लोह भस्म ७॥ माशे लेकर प्रथम पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर उसमें २-२ सेर काले और सफेद भंगरे तथा संभालु, मानकन्द और अदरकका रस डाल कर धूपमें रख दें। जब रस सूख जाए तो उसमें १।-१। तोला सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव और नागरमोथेका चूर्ण मिला कर खरल करें।

इसे घी और शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे सर्व दोषज एकाङ्ग तथा सर्वांगगत शोथ; खांसी, श्वास, तृषा, मोह और छर्दि आदि उपद्रव युक्त शोथ एवं अम्लपित्त और आठ प्रकारका शूल कामला, पाण्डु, कफ, कुष्ठ, अरुचि, ज्वर, प्लीहा, गुल्म, उदर रोग, ग्रहणी विकार और प्रवाहिकाका नाश तथा वायु अनुलोम होता और अग्निकी वृद्धि होती है।

(**मात्रा**--१ रत्ती।)

(६११५) रसाभ्रवटी

(रसें. सा. सं. । ग्रहण्य.)

शुद्धसूतस्य कर्षैकं कर्षैकं गन्धकस्य च।
द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा तुल्यं व्योम प्रदापयेत्॥
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च।
ग्रीष्मसुन्दरमण्डूकीजयन्तीन्द्राशनस्य च॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम्।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्च मरिचोद्भवम्॥
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम्।
सम्मर्द्य वटिकां कुर्य्यात्कलायसदृशीं बुधः॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवं रुजम्।
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट्॥
चातुर्थके ज्वरे श्रेष्ठो ग्रहण्यातङ्कनाशनः।
दधि चावश्यकं देयं प्राह नागार्जुनो मुनिः॥

शुद्ध पारद १। तोला, शुद्ध गन्धक १। तोला, अभ्रक भस्म २॥ तोले, काली मिर्चका चूर्ण ७॥ माशे और सुहागेकी खील ७॥ माशे लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर थोड़ी देर मर्दन करें। तदनन्तर उसमें सफेद और काले भंगरे तथा संभालु, चीता, गूमा, मण्डूकपर्णी, जयन्ती, भांग और सफेद कोयलके पत्तोंका १।-१। तोला रस मिलाकर खरल करें और मटरके समान गोलियां बनाकर सुखा लें।

इनके सेवनसे खांसी, श्वास, क्षय, वातकफज रोग, ज्वर, अतिसार, चातुर्थिक ज्वर और ग्रहणी विकार नष्ट होता है।

इस पर दही अवश्य पीना चाहिये।

(६११६) रसामृतचूर्णम्

(यो. त. । त. ६४; व. से. । अम्लपि. ; यो. र. । अम्लपि. ; वृ. यो. त. । त. १२२.)

त्रिकटु त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा।
एषां सञ्चूर्णितानान्तु प्रत्येकन्तु पलं भवेत्॥
कर्षद्वयं गन्धकस्य तदर्द्धं पारदस्य च।
विडालपदमात्रन्तु लिह्यात्तन्मधुसर्पिषा॥
शीतोदकं चानु पिबेत्क्रमाद्गव्यं पयस्तथा।
अम्लपित्तमग्निमान्द्यं परिणामरुजं तथा॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्यादेतद्रसामृतम्॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, वायबिड़ंग, और चीता; इनके चूर्ण ५-५ तोले तथा शुद्ध गन्धक २॥ तोले और शुद्ध पारद १। तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंके चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करें।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार घी और शहदके साथ सेवन करनेसे अम्लपित्त, अग्निमांद्य, परिणाम शूल, कामला और पाण्डुका नाश होता है।

इसे खानेके पश्चात् शीतल जल पीना तथा गोदुग्ध सेवन करना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा—१॥ माशा)

(६११७) रसामृतम्

(र. रा. सु. । मूर्च्छा.)

मातुलुङ्गद्रवैः सूतं भावितं वासरावधि ।
गन्धकश्च पलान्यष्टौ नागं तत्पादसंयुतम् ॥
एकीकृत्याथ सम्भाव्य हस्तिशुण्डीरसैस्तथा ।
धूमसारैस्त्र्यहं भाव्यं रामठेन त्र्यहं त्र्यहम् ॥
शुष्कं काचघटे न्यस्य यामानष्टौ प्रदीपयेत् ।
सिकताख्येन यन्त्रेण वैद्यो बुद्धिविशारदः ॥
रक्तिका द्वितयं सेव्यं मदात्यय निवृत्तये ।
मधुनामलकैर्नित्यं राजार्हन्तु रसामृतम् ॥

१ दिन बिजौरेके रसमें खरल किया हुवा पारद तथा शुद्ध गन्धक ४०-४० तोले और शुद्ध सीसा १० तोले लेकर प्रथम सीसेको पिघला कर पारदमें मिलावें और फिर उसमें गन्धक मिलाकर कज्जली बना लें एवं उसे पृथक पृथक ३-३ दिन हाथीसुण्डीके रस, घरके धुवेंके पानी और हींगके पानीकी भावना देकर, सुखाकर कपड़मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भरें । तदनन्तर उसे बालुका यन्त्रमें रख कर ८ प्रहरकी अग्नि दें । तत्पश्चात् शीशीके स्वांग-शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

अनुपान—आमलेका रस और शहद ।

इसके सेवनसे मदात्यय नष्ट होता है ।

(६११८) रसामृतरसः

(र. चं. ; र. रा. सु. । रक्तपित्ता. ; धन्व. ; रसे. सा. सं.)

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकं च शिलाजतु ।
चन्दनं गुडूची द्राक्षा मधुपुष्पं च धान्यकम् ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं धातकी निम्बपत्रकम् ।
यष्टिमधुसमायुक्तं मधुशर्करयाऽन्वितम् ॥
विधिना मर्दयित्वा तु कर्षमात्रं च भक्षयेत् ।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥
पित्तं तथाम्लपित्तं च रक्तपित्तं विशेषतः ।
निहन्ति सर्वदोषं च ज्वरान्सर्वान्न संशयः ॥
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग तथा स्वर्ण माक्षिक भस्म, शिलाजीत, सफेद चन्दन, गिलोय, मुनक्का, महुवेके फूल, धनिया, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, धायके फूल, नीमके पत्ते और मुलैठी १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें शिलाजीत तथा अन्य औषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको अच्छी तरह मर्दन करके रक्खें ।

मात्रा—१। तोला ।

अनुपान—औषधको खांड और शहदमें मिलाकर चाटनेके पश्चात् धारोष्ण दूध पीना चाहिये ।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये । इसके सेवनसे पित्त विकार, अम्लपित्त और विशेषतः रक्तपित्त एवं हर प्रकारके ज्वरका नाश होता है ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—६ रत्ती ।)

(६११९) रसायनामृतरसः

(मध्यमनायिकाचूर्णम्)

(र. र.; र. चं. । अतिसारा.)

कर्षं गन्धकमर्धपारद-
शुभे कुर्याच्छुभां कज्जलीम् ।
त्र्यक्षं त्र्यूषणकं च पञ्च
लवणात्सार्धं च कर्षं पृथक् ॥
सार्धाक्षं द्विपलं विचूर्ण्य
सकलं शक्राशनान्मिश्रयेत् ।
खादेच्छाणमतोऽनुकाञ्जि-
कपलं मन्दाग्निसन्दीपनम् ॥
स्वेच्छाभोजनतो रसाय-
नमिदं घूर्णादिकोपज्वरे ।
पेयं चात्र तु काञ्जिकं
वहति सा नारी महायोगिनी ॥
हन्याद्वातं च पित्तं कफ
कृतमतिसारं च दोषं ग्रहण्याः ।
श्वासं कासं च शूलं ज्वर-
मुदररुजो राजयक्ष्माणमुग्रम् ॥
प्लीहानं चामवातं षडपि
च गुदजां कुष्ठरोगं समग्रम् ।
वातास्रं कण्ठरोगानिदमिह
कथितं दीपनं जाठराग्नेः ॥
दीर्घायुः काममूर्तिर्जितवलि-
पलितो घोरगम्भीरनादः ।
मेधावी सत्ववीर्यस्मृतिवल-
सहितो मानवोऽस्य प्रसादात् ॥

शुद्ध पारद ७॥ माशे, शुद्ध गन्धक १। तोला तथा सेंठ, मिर्च और पीपल १।-१। तोला एवं पांचों लवण (सेंधा नमक, काला नमक, विड लवण, समुद्र लवण और उद्भिद् लवण) १॥-१॥ कर्ष (प्रत्येक २२॥ माशे) और भांग ११ तोले १०॥ माशे लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर मर्दन करें ।

मात्रा—४ माशे ।

अनुपान—५ तोले काञ्जी ।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती और भयंकर ज्वर, वातज पित्तज तथा कफज अतिसार, ग्रहणी-विकार, श्वास, खांसी, शूल, ज्वर, उदर-विकार, उग्र राजयक्ष्मा, प्लीहा, आमवात, समस्त प्रकारकी अर्श, कुष्ठ, वातरक्त और कण्ठ रोगोंका नाश होता है । तथा इसे सेवन करनेसे आयु बढ़ती, बलि-पलितका नाश होता, स्वर घोर और गम्भीर होता एवं मेधा, बल, वीर्य और स्मृतिकी वृद्धि होती है ।

(६१२०) रसायनामृतलौहम्

(भै. र. । गुल्मा. ; धन्व. । गुल्मा.)

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं जीरकद्वयम् ।
यमानीद्वयभूनिम्बं त्रिवृद्दन्ती च निम्बकम् ॥
सर्वेषां कार्षिकं भागं सैन्धवं कर्षमभ्रकम् ।
खण्डस्य षोडशपलं प्रस्थश्च त्रिफलाजलम् ॥
जम्बीराणां रसं दद्यात् पलं षोडशकं तथा ।
पाच्यं सर्वं प्रयत्नेन लौहं दत्त्वा पलद्वयम् ॥

सिद्धे पाके पुनर्देयं घृतं पलचतुष्टयम् ।
सर्वरोगेषु संयोज्यं महामृतरसायनम् ॥
गुल्मं पञ्चविधं हन्ति यकृत्प्लीहोदराणि च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं जीर्णज्वरं तथा ॥
रोगान् सर्वान्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिड़ंग, सफेद जीरा, काला जीरा, अजवायन, अजमोद, चिरायता, निसोत, दन्तीमूल, नीमकी छाल और सेंधा नमक; इनका चूर्ण तथा अभ्रक भस्म १।-१। तोला, लोह भस्म १० तोले एवं खांड १ सेर (८० तोले), त्रिफलाका क्काथ २ सेर और जम्बीरीका रस २ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्निपर पकावें और जब पाक तैयार हो जाय तो उसमें आधा सेर घृत मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे ५ प्रकारका गुल्म, यकृतोदर, प्लीहोदर, कामला, पाण्डु, शोथ, जीर्णज्वर और अन्य अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**—१।-२ माशे ।)

(६१२१) रसेन्द्रः

(भै. र. । छर्दि.)

अजाजीधान्यकृष्णाभिः
सक्षौद्राभिः कटुत्रिकैः ।
एभिः सार्द्धं भस्मसूतः
सेव्यो वान्ति प्रशान्तये ॥

जीरा, धनियां, सोंठ और मिर्च १-१ भाग तथा पीपल २ भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर १ भाग यह चूर्ण और १ भाग पारद भस्मको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे वमन नष्ट होती है ।

(**मात्रा**—२ रत्ती ।)

(६१२२) रसेन्द्रगुटिका (१)

(भै. र. । राजय.)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य स्वरसेन जयार्द्रयोः ।
शिलायां खल्लयेत्तावद्यावत्पिण्डं घनं भवेत् ॥
जलकर्णाकाकमाचीरसाभ्यां भावयेत् पुनः ।
सौगन्धिकपलं भृङ्गस्वरसेन सुभावितम् ॥
चूर्णितं रससंयुक्तमजाक्षीरपलद्वये ।
खल्लितं घनपिण्डन्तु गुटीः स्विन्नकलायवत् ॥
सर्वरूपं क्षयं कासं रक्तपित्तमरोचकम् ।
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति ॥

१। तोला शुद्ध पारदको पत्थरके खरलमें डालकर जयन्ती और अदरकके रसमें इतना घोटें कि वह पिण्डाकार हो जाय । तदनन्तर उसे जलकर्णा और मकोयके रसकी १-१ भावना दें । फिर भंगरेके रसमें घुटा हुवा ५ तोले शुद्ध गन्धक लेकर उपरोक्त पारदमें डालें और दोनोंकी कज्जली बनाकर उसमें २० तोले बकरीका दूध मिलाकर इतना घोटें कि वह गोली बनाने योग्य हो जाय । तत्पश्चात् उसकी उबली हुई मटरके समान गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे सम्पूर्ण लक्षण युक्त क्षय, खांसी, रक्तपित, अरुचि और सैकड़ों वैद्योंसे त्यक्त अम्लपित्त रोग नष्ट होता है ।

(६१२३) **रसेन्द्रगुटिका** (२) (बृहत्)

(भै. र. । राजय.)

कुमार्या त्रिफलाचूर्णैश्चित्रकस्य रसैः क्रमात् ।
शोधयित्वा पुना राजीगृहधूमहरिद्रया ॥
पक्वेष्टकारजोभिश्च वोह्लापत्ररसेन च ।
शृङ्गवेररसेनापि शोधयित्वा पुनः पुनः ॥
प्रक्षालनात्पुनः पश्चाच्छानयेद्रसने घने ।
कर्षद्वयं रसेन्द्रस्य भावयेद्विजयारसे ॥
शिलायां खल्लयेच्चापि यावच्चूर्णत्वमागतम् ।
जलकर्णाकाकमाचीरसाभ्यां भावयेत् पुनः ॥
सौगन्धिकपलं शुद्धमर्द्धं मरिचटङ्कणम् ।
माक्षिकञ्च शिखिग्रीवं तालकं चाभ्रकं तथा ॥
एतांस्तु मिलितान् दत्वा भावयेदार्द्रकद्रवैः ।
रक्तिकैकप्रमाणेन कारयेद्गुटिकां भिषक् ॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तमरोचकम् ।
पाण्डुक्रिमिज्वरहरं कृशानां पुष्टिवर्द्धनम् ।
वाजीकरणमुद्दिष्टमम्लपित्तहरं परम् ॥

पारदको (१ दिन) घृतकुमारीके रसमें खरल करके मोटे कपड़ेसे छान लें और फिर उसे इसी प्रकार त्रिफलाके चूर्ण, चीतेके स्वरस या काथ, राईके काथ, घरके धुंवेके काथ, हल्दी, पक्की ईंटके चूर्ण, धतूरके पत्तोंके रस और अदरकके रसमें पृथक् पृथक् खरल करें । हरेक वस्तुके साथ खरल करनेके पश्चात् मोटे कपड़ेसे छान लेना चाहिये । अन्तमें धोकर स्वच्छ कर लें ।

अब उपरोक्त विधिसे शुद्ध पारद २॥ तोले लेकर उसे पत्थरके खरलमें डालकर जयन्तीके रसके साथ इतना घोटें कि उसका चूर्ण हो जाय।

तदनन्तर उसे जलकर्णा और मकोयके रसकी १-१ भावना देकर उसमें ५ तोले शुद्ध गन्धक और २॥-२॥ तोले काली मिर्चका चूर्ण, सुहागेकी खील, स्वर्णमाक्षिक भस्म, तुत्थ भस्म, शुद्ध हरताल (या भस्म) और अभ्रक भस्म मिला कर अच्छी तरह मर्दन करें और फिर उसे अदरकके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे खांसी, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, अरुचि, पाण्डु, कृमि, ज्वर और अम्लपित्तका नाश होता तथा कृशता दूर होकर शरीर पुष्ट हो जाता है । यह रस वाजीकरण भी है ।

(रसेन्द्र सार संग्रहमें "माक्षिकञ्च शिखी .... " इससे पूर्वका पाठ नहीं है अर्थात् स्वर्ण माक्षिकसे पहिलेकी सम्पूर्ण ओषधियों और क्रियाओंका अभाव है ।)

(६१२४) **रसेन्द्रगुटिका** (३) (बृहद्)

(र. र. । कासा. ; रसें. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । कासा.)

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च ।
लौहचूर्णस्य ताम्रस्य तालकस्य विषस्य च ॥
मनःशिलायाः क्षाराणां बीजं धुस्तूरकस्य च ।
मरिचस्यापि सर्वेषां चूर्णतुल्यं प्रदापयेत् ॥
जयन्ती चित्रको मानघण्टाकर्णोऽथ मण्डुकी ।
शक्राशनं केशराजभृङ्गापामार्गकस्य च ॥
सिन्धुवारस्य च रसैः कर्षमात्रैश्च मर्दयेत् ।
हन्ति पञ्चविधं कासं श्वासञ्चैव सुदारुणम् ॥
कफवातमयं रोगमानाहं विड्विबन्धताम् ।

अग्निमान्द्यारुचिश्चैव उदरं पाण्डुकामलाम् ॥
रसायनी च वृष्या च बलवर्णप्रदायिनी ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), शुद्ध मनसिल, सुहागा, जवाखार, सज्जी, धतूरेके शुद्ध बीज और काली मिर्चका चूर्ण १।-१। तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिलाकर थोड़ी देर खरल करें । तदनन्तर उसमें जयन्ती, चीता, मानकन्द, घण्टकर्ण, ब्राह्मी (मण्डूकपर्णी), भांग, भंगरा, काला भंगरा, अपामार्ग (चिरचिटा) और संभालु; इनमेंसे प्रत्येकका स्वरस या क्वाथ १।-१। तोला मिलाकर खरल करें ।

इसके सेवनसे पांच प्रकारकी खांसी, भयंकर श्वास, कफवातज रोग, अफारा, मलावरोध, अग्निमांद्य, अरुचि, उदर रोग, पाण्डु और कामलाका नाश होता तथा बलवर्णकी वृद्धि होती है ।

यह गुटिका रसायनी और वृष्या भी है ।

रसेन्द्रगुटिका (४)

(भै. र. । मुखरोगा.)

रसेन्द्रवटी प्र. सं. ६१२८ देखिये।

(६१२५) रसेन्द्रचूडामणिरसः

(र. र. स. । उ. खं. अ. २७ ; र. चं. । वाजीकरणा.)

सूतहेमभुजगाभ्रवङ्गकाः
कान्ततार्प्यविमलाः समाक्षिकाः ।
भागवृद्धिमिलिता विमर्दिता
धूर्तपत्रविजयासलिलेन ॥

सप्त सप्त चपलाऽमृतवल्ली-
भार्गिकासुरलताजलतोयैः ।
वारिवाहमृतयष्टिकावरी-
वानरीभुजगदष्टच्युदकेन ॥
अर्धभागमहिफेनकं न्यसे-
न्मर्दयेत्सुरसपुष्परसेन ।
चन्दनार्ककरहाटपिप्पली
श्रावणीकृतरसैः पृथगेव ॥
कुङ्कुमेन च ततो विभावये-
न्नाभिजद्रवयुतं विभावयेत् ।
सिद्धिमेति रसराडयं शुभः
कामिनीमदविधूननदक्षः ॥
शर्करामधुयुतो द्विमाषकः
स्तम्भकृन्निधुवने वनितानाम् ।
संसेव्य सूतं न च रात्रिभोज्यं
कुर्वीत पेयं पय एव केवलम् ॥
तृतीययामे रससेवनं तु
कृत्वा निशायाः प्रहरे व्यतीते ।
सेवेत कान्तां कमनीयगात्रां
घनस्तनीमुज्ज्वलचारुवस्त्राम् ॥
रत्युत्सुकां कातरलोलनेत्रां
विलोलहारावलिमादधानाम् ।
किं कामे तनुकामिनां मलयजेनावश्यजेनाशु किं
किं चन्द्रेण परोपकारजनिनां पुंस्कोकिलिनापि किम् ॥

सहस्रशः सन्ति यदा तरुण्यो
मदालसाः पीनपयोधरा दृढाः ।
तदा रसेन्द्रः परिषेवणीयो
विकारकारी भवतीह नान्यथा ॥

रससिन्दूर १ भाग, स्वर्ण भस्म २ भाग, सीसा भस्म ३ भाग, अभ्रक भस्म ४ भाग, बंग भस्म ५ भाग, कान्त लोह भस्म ६ भाग, स्वर्ण माक्षिक भस्म ७ भाग और रौप्य माक्षिक भस्म ८ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर थोड़ी देर खरल करें और फिर उसे धतूरेके पत्तोंके रस, भांगके रस, पीपलके काथ, गिलोयके रस, भरंगीके काथ, बड़ी मालकंगनीके रस, सुगन्धबालाके रस, नागरमोथेके काथ, शुद्ध बछनागके काथ, मुलैठीके काथ, शतावरके रस, कौंचकी जड़के काथ और सर्पाक्षीके रसकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दें। तत्पश्चात् उसमें उससे आधी अफ़ीम मिलाकर तुलसीकी मंजरीके रस या काथ, चन्दनके काथ, आककी जड़के काथ, अकरकरेके काथ, पीपलके काथ तथा गोरखमुण्डीके रस या काथकी १-१ भावना देकर अन्तमें १-१ भावना केसर और कस्तूरीके पानीकी दें।

मात्रा—२॥ माशे।

इसे खांड और शहदमें मिलाकर चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे कामशक्ति इतनी प्रबल हो जाती है कि पुरुष अनेकों रत्युत्सका मदमत्त तरुणियोंका मान मर्दन कर सकता है। इसकी विद्यमानतामें मलय-पवन, चन्द्र, कोकिला आदि कामोत्तेजक पदार्थोंकी आवश्यकता नहीं रहती।

यह रस अत्यन्त स्तम्भक है।

इसे तीसरे पहर (दोपहर बाद लगभग ३ बजे) खाना चाहिये और फिर रात्रिको भोजन न करके केवल दुग्ध पान करना चाहिये, तथा १ पहर रात्रि बीत जाने पर स्त्री-समागम करना चाहिये।

(६१२६) रसेन्द्रचूर्णम्

(भै. र. । ग्रहणी.)

पलैकं रससिन्दूरमाददीताथ शाणकम् ।
प्रत्येकं वंशजा मुक्ता निरुत्थहेमभस्मनाम् ॥
द्रावयेदहिफेनस्य शाणं क्षीरे निमज्जितम् ।
वस्त्रपूतेन तेनैव तत्सर्वं मर्दयेद्भृशम् ॥
छायायामातपे वाथ शोषयेच्चूर्णयेत्ततः ।
चतुर्गुञ्जामितं चूर्णं क्षीरेण सह सेवयेत् ॥
सक्षीरमन्नमश्नीयान्नाश्नीयाल्लवणाम्भसी ।
यावज्जीर्येत् तावदाद्यं पक्कमाज्येन मोदकम् ॥
शौचमाचमनं कार्यमग्निपूतेन वारिणा ।
वाससाच्छादयेद्देहं न स्नायादस्य सेवकः ॥
अत्रानुवर्त्तयेत्सर्वान् नियमान् रससेविनाम् ।
चूर्णं रसेन्द्रनामेदं रसे श्रेष्ठं रसायनम् ॥
नाशयेद् ग्रहणीं कृत्स्नां रक्तातीसारसूतिके ।
अग्निमान्द्यादिकं जित्वा दीपयेज्जठरानलम् ॥
पुष्टं हृष्टं बलिष्ठञ्च नरः कुर्याद्धिताशनः ॥

रससिन्दूर ५ तोले तथा बंसलोचन, मोतीभस्म (या पिष्टी) और निरुत्थ स्वर्ण भस्म १-१ शाण (प्रत्येक ३॥ माशे) ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर ३॥ माशे अफीमको थोड़े दूधमें घोलकर कपड़ेसे छान कर उसमेंसे थोड़ा थोड़ा दूध उपरोक्त औषधमें डालते हुवे उसे खरल करें और जब सब दूध समाप्त हो जाय तो उसे धूप या छायामें सुखा कर चूर्ण कर लें।

मात्रा—४ रत्ती ।

अनुपान—दूध ।

इसके सेवन कालमें दूध भात खाना और लवण तथा पानीका त्याग करना चाहिये ।

पाचन शक्तिके अनुसार घृतसे बने हुवे मोदकादि भी सेवन किये जा सकते हैं ।

इसके सेवन कालमें शौच क्रिया और आचमन भी उष्ण जलसे ही करना चाहिये । स्नान न करना चाहिये। तथा रोगीको अपना शरीर सदैव कपड़ेसे ढके रहना चाहिये ।

रस सेवनके साधारण नियम इसमें भी पालन करने चाहियें ।

इसके सेवनसे ग्रहणी, रक्तातिसार, सूतिका रोग और अग्निमांद्यका नाश होकर जठराग्नि दीप्त होती और शरीर हृष्ट पुष्ट तथा बलवान हो जाता है ।

(६१२७) रसेन्द्रनागररसः

(र. चं. ; र. र. स. । प्रमेहा.)

नागं कपालमध्ये कृत्वा चाग्निं विशोधयेत्क्रमशः
निश्चाकत्वचक्षारं स्वल्पं स्वल्पं विकीर्य कुन्तेन ॥
पारदभागं शीसं घृष्ट्वा घृष्ट्वा विचूर्णितं सम्यक् ।
तिलयुक् खादन्मधुना तरवटबीजेन मिश्रितं क्रमशः ॥
मेहगणार्तिविशेषं सपिटीकं कुष्ठमनिलं च ।
हन्त्यल्पदिनाभ्यासात्सुपथ्ययोगाद्रसेन्द्रनागोऽयम् ॥

१ भाग शुद्ध सीसेको कढ़ाईमें डालकर पिघलावें और फिर उसमें इमलीके छिलकोंका क्षार थोड़ा थोड़ा डालते हुवे घोटते रहें । जब सीसेकी भस्म हो जाय तो उसमें १ भाग शुद्ध पारद मिला कर घोटें और जब दोनों एक जीव हो जाएं तो शीशीमें भर कर रक्खें ।

इसमेंसे १ रत्ती भर रस ले कर उसमें तिल और तरवटके बीजोंका चूर्ण मिलाकर शहदके साथ खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके प्रमेह, प्रमेहपिडिका, कुष्ठ और वातव्याधि थोड़े दिनोंमें ही नष्ट हो जाती है ।

(६१२८) रसेन्द्रवटी

(भै. र. । मुखरोगा.)

रसेन्द्रगन्धाश्मजतुप्रवाल-
लौहानि वैद्यः समभागिकानि ।
रसेन्द्रपादप्रमितश्च हेम
विभाव्य निम्बाशनवह्नितोयैः ॥
ततो वटीर्वल्लमिता विमर्द्य
विधाय बुद्ध्या बहुबारवारा ।
फलत्रिकक्वाथजलेन वापि
प्रातः प्रयुञ्ज्यात् प्रकराम्बुना वा ॥
रसेन्द्रवट्यास्यगदान् निहन्ति
वातामयान् मेहगणान् ज्वरांश्च ।
करोति वह्नेर्बलवीर्ययोश्च
पुष्टिं विशेषेण रसायनीयम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शिलाजीत, मूंगा भस्म और लोह भस्म ४-४ भाग तथा स्वर्ण भस्म १ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें

और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको नीमकी छाल, असना और चीतेके क्वाथमें पृथक् पृथक् घोटकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनावें।

अनुपान—हिंसोड़ेका क्वाथ या त्रिफलेका क्वाथ अथवा अगरका क्वाथ।

इन्हें प्रातः काल सेवन करना चाहिये।

इनके सेवनसे मुख रोग, वात रोग, प्रमेह और ज्वर नष्ट होता तथा बल वीर्यकी वृद्धि होती है।

विशेषतः यह वटी रसायनी है।

राजचण्डेश्वररसः

(र. च. ; र. रा. सु. ; र. का. धे.[1] । ज्वरा.)

चण्डेश्वर रस प्र. सं. १८७८ देखिये।

(६१२९) राजतालेश्वररसः

(र. सा. सं. । कुष्ठा.)

नागस्य भस्म शाणैकं तोलकं गन्धकस्य च ।
द्विनिष्कं शुद्धतालस्य समुद्भूतं गवां जलैः ॥
विपचेत्षोडशगुणैः पात्रे ताम्रमये शनैः ।
घर्म्मे द्विघस्रं जम्बीरकुमारीवज्रकन्दजैः ॥
रसैर्भङ्गस्य चाम्भोभिर्युतं वल्लद्वयं भजेत् ।
कुष्ठे चास्थिगते चापि शाखानासाविभुग्नके ॥
स्वरभङ्गे क्षतक्षीणे मण्डलेषु महत्स्वपि ॥
औदुम्बरं हन्ति शिवामधुभ्यां कृच्छ्रञ्च कुष्ठं त्रिफलाजलेन ।
गुडार्द्रकाभ्यां गजचर्म्मसिध्मविचर्चिकास्फोटविसर्पकण्डूम् ॥
निहन्ति पाण्डुं विविधां विपादीं सरक्तपित्तं कटुकासिताभ्याम् ।
खादेद्द्विजीरममृतायुतश्च समुद्गयूषं सघृतश्च दद्यात् ॥
रोहितकजटाक्वाथमनुपानं प्रयच्छति ।
चतुर्दशदिनस्यान्ते कुष्ठं शुष्यति यत्नतः ॥
क्षुद्बोधो जायतेऽत्यर्थमत्यर्थं सुभगं वपुः ।
वर्जयेत्सततं कुष्ठी मत्स्यमांसादिभोजनम् ॥

सीसा भस्म ३॥ माशे, शुद्ध गन्धक ७॥ माशे और शुद्ध हरताल १० माशे लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें और फिर ताम्रपात्रमें ३२ गुने गोमूत्रमें पकावें। जब गोमूत्र शुष्क हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर पृथक् पृथक् २-२ दिन जम्बीरी नीबूके रस, घीकुमारके रस और बनसूरण (जंगली जिमीकन्द) के रस एवं भांगके रसमें धूपमें भावना दें।

मात्रा—६ रत्ती।

साधारण **अनुपान**—पानी।

इसके सेवनसे अस्थिगत कुष्ठ, हस्तभंग, नासाभंग, स्वरभंग, क्षतक्षीणता और मण्डल कुष्ठ नष्ट होता है।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ रत्ती।)

विशेष अनुपान.

औदुम्बर कुष्ठमें—हर्रके चूर्ण और शहदके साथ दें।

कष्टसाध्य कुष्ठमें—त्रिफला क्वाथके साथ दें।

इसे अदरक और गुड़के साथ सेवन करानेसे

[1] र. का. धे. में ताम्रके स्थान पर मनसिल है।

गजचर्म, सिध्म, विचर्चिका, विस्फोटक, विसर्प और कण्डूका नाश होता है ।

कुटकी और मिश्रीके साथ देनेसे पाण्डु, विपादिका और रक्तपित्तका नाश होता है ।

औषध खानेके पश्चात् सफेद और काले जीरेका चूर्ण डालकर गिलोयका काथ या घृतयुक्त मूंगका यूष अथवा, रुहेड़ेकी छालका काथ पीना चाहिये ।

इसे १४ दिन तक सेवन करनेसे कुष्ठ नष्ट हो कर खूब भूख लगती है और शरीर अत्यन्त सुन्दर हो जाता है ।

कुष्ठीको मत्स्य मांसादिका सर्वथा त्याग कर देना चाहिये ।

राजतालेश्वररसः

(र. का. धे. । कुष्ठा. ; र. चि. म. । स्तबक २)

प्र. सं. २६५३ "तालकेश्वरो रसः (१४)" देखिये ।

(६१३०) राजमृगाङ्करसः (१)

(रस. र. स. । उ. ख. अ. १७; र. रा. सु. । प्रमेहा.)

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रं त्रपुससीसकम् ।
भस्मीकृत्वा च तत्सर्वं क्रमवृद्ध्या कृतांशकम् ॥
व्योमसत्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशिकाम् ॥
प्रद्राव्य लोहभस्माथ पूर्वभस्म विनिःक्षिपेत् ।
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं सद्रवं हि समाहरेत् ॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तवारं विभावयेत् ।
आकुलीबीजसम्भूतक्काथलेहेन यत्नतः ॥
रुद्धं तन्मल्लमूषायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः ।
इति सिद्धो रसेन्द्रोयं चूर्णितः पटगालितः ॥
कान्तपात्रस्थितो रात्रौ जलैस्त्रिफलसंयुतैः ।
वल्लद्वयमितः प्रातर्दातव्यो मेहरोगिणाम् ॥
मृगचारिमुनीन्द्रेण मेहव्यूहविनाशनः ।
निर्दिष्टोयं रसो राजमृगाङ्क इति कीर्तितः ॥
दीपनः पाचनो वृष्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः ।
तापघ्नो रुचिकृत्सर्वरोगघ्नो योगसंयुतः ॥

सुवर्ण भस्म १ भाग, चांदी भस्म २ भाग, कान्त लोह भस्म ३ भाग, ताम्र भस्म ४ भाग, बंग भस्म ५ भाग, सीसा भस्म ६ भाग, अभ्रक सत्वकी भस्म २१ भाग, शुद्ध पारद २१ भाग और शुद्ध गन्धक २१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनाकर उसे लोहपात्रमें मन्दाग्नि पर पिघलावें और फिर उसमें प्रथम लोहभस्म डालें और फिर अन्य समस्त भस्में डाल कर लकड़ीके डंडेसे मिला कर अग्निसे नीचे उतार लें; एवं ठंडा करके चूर्ण कर लें और फिर उसे आकुली के बीजोंके लेह (गाढ़ा किये हुवे काथ) की सात भावना देकर गोला बनावें और उसे सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्द करके (लघुपुटमें) स्वेदित करें । तदनन्तर शरावसम्पुटके शीतल हो जानेपर उसमेंसे औषधको निकाल कर, खरल करके कपड़ेसे छान लें ।

इसमेंसे ६ रत्ती रस रातको कान्तलोहके पात्रमें त्रिफलेके काथमें भिगो दें और दूसरे दिन प्रातः काल त्रिफला काथ समेत प्रमेह रोगीको पिलावें ।

यह रस प्रमेह नाशक, दीपन, पाचन, वृष्य और रुचि वर्द्धक है तथा इसके सेवनसे ग्रहणी, पाण्डु और तापका नाश होता है।

रोगोचित अनुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

(व्यवहारिक मात्रा—१, २ रत्ती।)

(६१३१) राजमृगाङ्करसः (२)

(र. प्र. सु. । अ. ८)

पलैकमानं रसभस्मकं हि
स्याद्धेमभस्म प्रभवं पलं च।
शुद्धस्य वङ्गस्य पलं च तद्व-
त्तथा च मुक्ता द्विपलं प्रदद्यात् ॥
पादांशतष्टङ्कणमेव सम्यक्
खल्वे विमर्द्याथ सहाम्लवेतसा।
तद्भावयेद्वै यवकाञ्जिकेन
प्रमर्द्य सर्वं दिन सप्तकेन ॥
गोलं विधायाथ विशोषयित्वा
मूषागतं तं खलु पाचयेद्धि।
शीतं समुद्धृत्य ततो रसेन्द्रं
विचूर्ण्य धार्यः स तु हेमपात्रे ॥
हेम्नस्त्वभावे रजतस्य पात्रे
नान्यस्य पात्रेषु निवेशनीयः ॥
अयं राजमृगाङ्काख्यो रोगराजस्य घातकः।
पथ्यं पूर्वोक्तविधिना कारयेन्मतिमान् भिषक्॥

पारद भस्म ५ तोले, स्वर्ण भस्म ५ तोले, बङ्ग भस्म ५ तोले, मोती भस्म (या पिष्टी) १० तोले और सुहागा १। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर १ दिन अम्लवेतके क्वाथमें घोटें और फिर उसे सात दिन तक जौकी कांजीमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखा कर मूषामें बन्द करके (लघुपुटमें) पकावें।

जब मूषा स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस कर स्वर्ण या चांदीके पात्रमें रक्खें। अन्य प्रकारके पात्रमें न रक्खें।

इसके सेवनसे राजयक्ष्माका नाश होता है।

(मात्रा—१ रत्ती)

(६१३२) राजमृगाङ्करसः (३)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. । राजयक्ष्मा. ; र. म. । अ. ६; र. का. धे. ; र. र. । यक्ष्मा. ; यो. र. ; वृ. नि. र.; वै. जी. । राजयक्ष्मा. ; र. चि. म. । स्तबक ११; र. चं. ; धन्व. । राजयक्ष्मा. ; यो. त. । त. २७; यो. चि. म. । अ. ७; वृ. यो. त. । त. ७६; रसे. चि. म. । अ. ९; र. प्र. सु.[1] । अ. ८; र. र. स. । उ. खं. अ. १४; शा. सं. । खं. २ अ. १२)

रसभस्म त्रयो भागाः भागैकं हेमभस्मकम्।
मृतताम्रस्य भागैकं शिलातालकगन्धकम् ॥
प्रतिभागद्वयं तत्राप्येकी कृत्य निधापयेत्।
वराटीं पूरयेत्तेन चाजाक्षीरेण टङ्गणम् ॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृदः भाण्डे निधापयेत्।
शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम् ॥
रसो राजमृगाङ्कोऽयं गुञ्जैकं च क्षयापहम्।
गुञ्जाद्वयमितैः कृष्णामरिचैः क्षौद्रसंयुतः ॥
घृतेन दापयेद्वातपित्त श्लेष्मोद्भवे क्षये ॥

---

१ र. प्र. सु. में ताम्र भस्मकी जगह अभ्रक भस्म तथा गजपुटके स्थान पर वाराहपुट है।

पारद भस्म ३ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग तथा शुद्ध मंसिल, हरताल और गन्धक २-२ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कौड़ीमें भर दें और फिर सुहागेको बकरीके दूधमें घोट कर उससे कौड़ी के मुखको बन्द करके सुखा कर उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करें और उसे सुखा कर गजपुटमें क दें।

मात्रा—१ रत्तीसे २ रत्ती तक।

अनुपान--पीपल और काली मिर्चका चूर्ण तथा शहद और घी।

इसके सेवनसे हर प्रकारका क्षय नष्ट होता है।

(६१३३) **राजमृगाङ्करसः** (४)

(नवरत्नराजमृगाङ्कः)

(यो. र., र. रा. सु. । यक्ष्मा.)

सूतं गन्धकहेमताररसकं वैक्रान्तकान्तायसम्।
वङ्गं नागपविप्रबालविमलामाणिक्य-गारुत्मतम् ॥
तार्घ्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैडूर्यकं शुल्वकम्।
शुक्तिस्तालकमभ्रहिङ्गुलशिला गोमेदनीलं समम् ॥
गोक्षुरैः फणिवल्लिसिंहवदना मुण्डीकणा-चित्रकै-
रिक्षुच्छिन्नरुहाहरप्रियजयाद्राक्षा-वरीजद्रवैः ॥
शोफघ्नीशतपत्रिकामधुजलैः सच्छाल्मली धातकी।
जातीसस्यबलाचतुष्टयजलत्वग्देवपुष्पद्रवैः ॥
कक्कोलैर्मदनागकेसरजलैर्भाव्यं पृथक्सप्तधा।
भाण्डे सिन्धुभृते मृगाङ्कवदयं पाच्यः क्रमाग्नौ दिनम्
भूयः प्राक्समुदाहृतैर्द्रवचयैस्तं भावयेत्पूर्ववत्।
पश्चात्तुल्यविभागशीतलरजः कस्तूरिका-भावना ॥
गोप्याद्गोप्यतरं रसायनमिदं श्री शङ्करे-णोदितम्।
गुञ्जासिन्धुयुतं कणामधुयुतं शोफे सपाण्ड्वामये ॥
वातव्याधिमुपद्रवैश्च सहितं मेहांस्तथा विंशतिम्।
संयोज्यं च हरीतकी गुडयुतं वातास्रके दुर्जये ॥
गम्भीरे च गुडूचिसत्वचपलाक्षौद्रैस्तु संयोजित-
स्त्वाध्मानारुचिशूलमान्द्यकसनापस्मारवातो-दरान् ॥
श्वासानसृग्ग्रहणीं हलीमकमथो सर्वज्वरान्ना-शयेत्।
धातून्पोषयति क्षयं क्षपयति श्यामाशतं यौवनम् ॥
प्रौढाटोपयुतं करोति सहसा तारुण्यगर्वोज्झितम्।
सिद्धो राजमृगाङ्क एष जयति स्वस्वानुपानै-र्गदान् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, खपरिया, वैक्रान्त भस्म, कान्त लोह भस्म, बंग भस्म, सीसा भस्म, हीरा भस्म, प्रवाल भस्म, विमल (स्वर्ण-माक्षिक भेद) भस्म, माणिक्य भस्म, मरकत मणि भस्म (पन्ना भस्म), स्वर्ण माक्षिक भस्म, मोती भस्म, पुखराज भस्म, शंख भस्म, वैडूर्यमणि भस्म, ताम्र भस्म, शुक्ति भस्म, शुद्ध हरताल, अभ्रक भस्म, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध मन-

सिल, गोमेदमणि भस्म और नीलम भस्म १-१ भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर उसे निम्न लिखित ओषधियोंके स्वरस या क्वाथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दें।

भावना द्रव्य—गोखरु, पान, अडूसा, गोरखमुण्डी, पीपल, चीता, ईख, गिलोय, धतूरा, भांग, द्राक्षा, शतावर, पुनर्नवा, गुलाब (सेवती), मुलैठी, सैंभल, धाय, जायफल, बला (खरैटी), अतिबला (कंघी), महाबला, नागबला, सुगन्धबाला, दालचीनी, लौंग, कंकोल, कस्तूरी, और नागकेसर। इनमेंसे जिनके स्वरस मिल सकें उनके स्वरस और कस्तूरीका पानी तथा शेष द्रव्योंका क्वाथ लेना चाहिये।

इन सबकी पृथक् पृथक् सात सात भावना देनेके पश्चात् उसका एक गोला बनावें और उसे सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके १ दिन लवणयन्त्रमें (सैंधा नमकसे भरी हुई हाण्डीके बीचमें रख कर) क्रमवर्द्धित अग्नि पर पकावें।

तदनन्तर यन्त्रके स्वांगशीतल हो जाने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे पुनः उपरोक्त द्रव्योंकी सात सात भावना दें और अन्तमें कपूर और कस्तूरी समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिलाकर उसके पानीकी एक भावना देकर सुरक्षित रक्खें।

यह शंकर महादेव कथित रस अत्यन्त गोपनीय है।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे सेंधा नमक और पीपलके चूर्ण तथा शहदके साथ सेवन करनेसे शोथ, पाण्डु, उपद्रव युक्त वातव्याधि, और २० प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं।

दुर्जय और गम्भीर वातरक्तमें इसे हर्रके चूर्ण और गुड़के साथ देना चाहिये।

यदि इसे गुडूची सत्व, पीपलके चूर्ण और शहदके साथ दिया जाय तो आध्मान, अरुचि, शूल, अग्निमांद्य, खांसी, अपस्मार और वातोदरका नाश होता है।

इसके अतिरिक्त यह रस श्वास, संग्रहणी, हलीमक, हर प्रकारके ज्वर, और क्षयको नष्ट करता, धातुओंको पोषण देता और काम शक्तिको अत्यन्त प्रवृद्ध करता है। इसे सेवन करनेसे इतनी शक्ति आ जाती है कि मनुष्य यौवनमदगर्विता बहुतसी स्त्रियोंके गर्वको सहसा नष्ट कर देता है।

रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे यह रस और भी बहुतसे रोगोंको नष्ट करता है।

राजमृगाङ्करसः (५)

यो. र. । क्षय.

प्रयोग संख्या ५६३५ "मृगाङ्क रसः" (३) देखिये।

सूचना

मृगाङ्क तथा महामृगाङ्क रस

मकारादि रस प्रकरणमें देखिये।

(६१३४) राजराजेश्वररसः

(रसे. सा. सं. । कुष्ठ. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. । अ. ९.)

आतपे मर्दयेत्सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥
भृङ्गराजद्रवं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।
त्रिफला खादिरं सारममृता वागुजीफलम् ॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चूर्णीकृत्य विमर्दयेत् ।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षाभ्यां भक्षयेत्ततः ॥
दद्रुकिटिभकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुञ्जोपि निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म और शुद्ध हरताल १-१ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको एक दिन भंगरेके रसमें धूपमें बैठकर खरल करें और फिर उसमें १-१ भाग हर्र, बहेड़ा, आमला, कत्था, गिलोय और बाबचीके बीजोंका चूर्ण मिलाकर एकत्र खरल करके रक्खें ।

मात्रा---२ रत्ती ।

इसे २॥ तोले शहद और घीमें लोहपात्रमें मिला कर खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे दाद, किटिभ कुष्ठ और मण्डल कुष्ठका नाश होता है ।

(६१३५) राजवल्लभगुटिका.

(र. का. धे. । आनाह.)

सूतगन्धकजैपालदन्तीबीजानि टङ्कणम् ।
श्योनाकैरण्डबीजानि राजवृक्षभवानि च ॥
पलाशस्य च बीजानि भागवृद्धोत्तराणि च ।
स्नुहीक्षीरेण सम्पिष्य भावयेत् त्रिदिनं च तत् ॥
नारिकेलफले क्षिप्त्वा महागाढातपे स्थितम् ।
ततस्तैलं तु जायेत गृहीत्वा नाभिमण्डले ॥
अणुमात्रं प्रलेपेन दशवारान् विरेचयेत् ।
ततः शीतोदकेनैव शीघ्रं प्रक्षालयेद् बुधः ॥
गुटिकाऽऽघ्राणमात्रेण सप्तवारान् विरेचयेत् ।
राज्ञे च दापयेदम्लमभ्यङ्गं च विवर्जयेत् ॥
एतत्तैलेन पथ्यादिफलं युक्तिविभावितम् ।
निष्पीड्य हस्ते विधृतं विरेचनकरं परम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्ध जमालगोटा ७ भाग, सुहागा ५ भाग, श्योनाकके बीज ६ भाग, अरण्डके बीज ७ भाग, अमलतासके बीज ८ भाग और पलाशके बीज ९ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको ३ दिन थोहरके दूधमें घोटें और फिर उसे नारियल (गोले) के भीतर भर कर उसे तेज़ धूपमें रक्खें । इससे उसमेंसे जो तेल निकले उसे पृथक् कर लें और शेष किट्टकी बड़ी बड़ी गोलियां बना लें ।

इस तेलमेंसे ज़रासा नाभिमें लगा देने मात्रसे १० बार विरेचन होता है । विरेचन होनेके बाद तेलको तुरन्त ठण्डे पानीसे धो डालना चाहिये ।

उपरोक्त गोलीको सूंघने मात्रसे ही सात दस्त आ जाते हैं ।

इस तैलसे हर्र आदिके फलोंको भावित करके रख लेना चाहिये । इस प्रकारकी हर्र आदिको हाथ पर रखनेसे ही विरेचन हो जाता है ।

ये प्रयोग राजाओंके योग्य हैं ।

इन प्रयोगोंके सेवन कालमें अम्ल पदार्थ और तैलादिकी मालिशसे परहेज करना चाहिये ।

(६१३६) राजवल्लभरसः (१)
(प्रदीपनरसः)

(र. रा. सु. ; र. का. धे. ; र. सा. सं. । अजीर्णा. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. मं.)

रसनिष्कं गन्धनिष्कं निष्कमात्रं प्रदीपनम् ।
मानमर्द्धं प्रदातव्यं चुल्लिकालवणं भिषक् ॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमथास्य माषमात्रकम् ।
अजीर्णे चाग्निमान्द्ये च दातव्यो रसवल्लभः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और चीतेका चूर्ण ५-५ माशे तथा चुल्हिका लवण (नौसादर) २॥ माशे लेकर सबको एकत्र पीस कर रक्खें ।

इसके सेवनसे अजीर्ण और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

मात्रा—१ माशा ।

(६१३७) राजवल्लभरसः (२)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. । ग्रहण्या.)

जातीफललवङ्गाब्दत्वगेलाटङ्करामठम् ।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानी विश्वसैन्धवम् ॥
लौहमभ्रं सताम्रञ्च रसगन्धमेव च ।
मरिचं त्रिवृतं रूप्यं प्रत्येकं द्विपलोन्मितम् ॥
धात्रीरसे वटीं कुर्याद्द्विगुञ्जा फलमानतः ।
हन्ति शूलं तथा गुल्ममामवातं सुदारुणम् ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च चक्षुःशूलं हलीमकम् ।
शिरःशूलं कटीशूलमानाहमङ्घ्रिशूलकम् ॥
क्रिमिकुष्ठानि दद्रूंश्च वातरक्तं भगन्दरम् ।
उपदंशमतीसारं ग्रहण्यर्शः प्रवाहिकाम् ॥
नृपवल्लभराजोयं महेशेन प्रकाशितः ॥

जायफल, लौंग, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, सुहागेकी खील, हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सैंधा नमक, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, निसोत और चांदी भस्म १०-१० तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर सबको आमलेके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे शूल, गुल्म, भयंकर आमवात, हृदयशूल, पसलीशूल, नेत्रशूल, हलीमक, शिर-शूल, कटिशूल, अफारा, कृमि, कुष्ठ, दाद, वात-रक्त, भगन्दर, उपदंश, अतीसार, ग्रहणीविकार, अर्श और प्रवाहिकाका नाश होता है ।

(६१३८) राजशेखरवटी (१)

(र. का. धे. । पाण्डु. ; र. चि. म. । स्त. ९.)

भागो मृतरसस्यैको वत्सनाभांशकद्वयम् ।
गन्धकं च शिला तालं कटुकं त्र्यूषणं तथा ॥
क्रियन्ते वटिकाः सर्वा एकमाना विमर्दिताः
मुखस्थाः कुर्वते नित्यं न मुखादपसर्पते ॥
उष्णाम्भोऽनु च राजशेखरवटी मन्दाग्नि-निर्णाशिनी
नानाकारमहाज्वरप्रशमनी निःशेष पित्तापहा ।
पाण्डुव्याधिमहोदरादिशमनी शूलान्तकृत्-पाचनी
श्लेष्मघ्नी पवनाशनी बलकरी दुष्टामयोत्सादनी ॥

पारद भस्म (अभावमें रससिन्दूर) १ भाग, शुद्ध बछनाग (मीठा विष) २ भाग और शुद्ध गंधक, शुद्ध मनसिल, शुद्ध हरताल, कुटकीका चूर्ण तथा सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

अनुपान--उष्ण जल।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, अनेक प्रकारका ज्वर, समस्त पित्त-विकार, पाण्डु, उदरवृद्धि, शूल, कफ, वायु और अनेक दुष्ट रोग नष्ट होते तथा अग्नि और बलकी वृद्धि होती है।

(६१३९) राजशेखरवटी (२)

(र. च. ; र. रा. सु. । अजीर्णा. ; र. र. स. । अ. १८)

भागो मृतरसस्यैको वत्सनाभांशकद्वयम्।
रसतुल्यं शिवाचूर्णं गन्धकं त्र्यूषणं तथा ॥
विचूर्ण्यातिप्रयत्नेन भावयेत्सप्तवासरम्।
ताम्बूलीपत्रतोयेन स्वर्णधत्तूरजैर्द्रवैः ॥
पिष्ट्वा चणमिताः कुर्याच्छायाशुष्कास्तु गोलिकाः।
उष्णाम्भोयुत राजशेखरवटी मन्दाग्निनिर्णाशिनी ॥
नानाकारमहाज्वरार्तिशमनी निःशेषमूलापहा।
पाण्डुव्याधि महोदरार्तिशमनी शूलान्तकृत्पाचनी ॥
शोफघ्नी पवनार्तिनाशनपटुः श्लेष्मामयध्वंसिनी॥

पारद भस्म (अभाव में रससिन्दूर) १ भाग, शुद्ध बछनाग (मीठा विष) २ भाग, हर्रका चूर्ण १ भाग तथा शुद्ध गंधक, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके सात सात दिन पान और धतूरेके रसमें पृथक् पृथक् घोट कर चनेके बराबर गोलियां बनावें और छायामें सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

अनुपान—उष्ण जल।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, अनेक प्रकारका ज्वर, अर्श, पाण्डु, महोदर, शूल, शोफ, वायु और कफ का नाश होता है। यह वटी पाचक भी है।

(६१४०) राजावर्तभस्मविधिः

(र. र. स. । पू. खं. अ. ३)

राजावर्तोऽल्परक्तोरुनीलिमामिश्रितप्रभः।
गुरुश्च मसृणः श्रेष्ठस्तदन्यो मध्यमः स्मृतः ॥

प्रमेहक्षयदुर्नामपाण्डुश्लेष्मानिलापहः।
दीपनः पाचनो वृष्यो राजावर्तो रसायनः ॥

निम्बूद्रवैः सगोमूत्रैः सक्षारैः स्वेदिताः खलु।
द्वित्रिवारेण शुद्ध्यन्ति राजावर्तादिधातवः ॥

शिरीषपुष्पार्द्ररसै राजावर्तं विशोधयेत् ॥

लुङ्गाम्बुगन्धकोपेतो राजावर्तः सुचूर्णितः।
पुटनात्सप्तवारेण राजावर्तो मृतो भवेत् ॥

राजावर्त (लाजवर्द) ज़रा ललाश लिये हुवे निलिमा--मिश्रित रंगका होता है।

जो राजावर्त भारी और चिकना होता है वह श्रेष्ठ और अन्य प्रकारका मध्यम होता है।

राजावर्त प्रमेह, क्षय, अर्श, पाण्डु, कफ और पवनको नष्ट करता है तथा दीपन, पाचन, वृष्य और रसायन होता है।

नीबूके रस और गोमूत्रमें जवाखार मिला कर उसमें स्वेदित करनेसे राजावर्त शुद्ध हो जाता है।

इसी प्रकार सिरसके फूलोंके रस और अदरकके रसमें भी राजावर्त शुद्ध हो जाता है।

राजावर्तमें समान भाग शुद्ध गन्धक मिला कर दोनोंको बिजौरे नीबूके रसमें घोट कर गज-पुटकी अग्नि देनेसे सात पुटमें राजावर्तकी भस्म हो जाती है।

(६१४१) राजावर्तसत्वपातनम्

(र. र. स. । पू. ख. अ. ३.)

राजावर्तस्य चूर्णं तु कुनटीघृतमिश्रितम् ।
विपचेदायसे पात्रे महिषीक्षीरसंयुतम् ॥
सौभाग्यपञ्चगव्येन पिण्डीबद्धं तु कारयेत् ।
ध्मापितं खदिराङ्गारैः सत्वं मुञ्चति शोभनम् ॥
अनेन क्रमयोगेन गैरिकं विमलं भवेत् ।
क्रमात्पीतं च रक्तं च सत्वं पतति शोभनम् ॥

राजावर्तके चूर्णमें मनसिल मिला कर दोनोंको घीके साथ खरल करें और फिर उसे भैंसके दूधमें लोह पात्रमें पकावें। जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें सुहागा और पंचगव्य (गायका दूध, दही, घी, गोमूत्र, गोबर) मिलाकर गोलियां बनावें और उन्हें सुखाकर मूषामें रख कर खैरके अंगारों पर धमावें। इससे राजावर्तका सुन्दर शोभनीय सत्व निकल आता है।

इसी विधिसे गेरुका सत्व भी निकल आता है; जो पीला और लाल होता है।

(६१४२) राजावर्त्तरसः (१)

(र. र. स. । उ. खं. अ. १४; र. चं. ; र. रा. सु. । मदात्यय.)

राजावर्तो रसः शुल्वं[1] माक्षिकं घृतपाचितम् ।
मध्वाज्यशर्करायुक्तं हन्ति सर्वान्मदात्ययान् ॥

राजावर्तकी भस्म, पारद भस्म (या रस सिन्दूर), ताम्र भस्म और स्वर्णमाक्षिक भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके थोड़े घीमें मिला कर ज़रा देर मन्दाग्नि पर पकावें।

इसे शहद, घी और खांडमें मिला कर सेवन करनेसे समस्त प्रकारके मदात्यय रोग नष्ट होते हैं।

(६१४३) राजावर्त्तरसः (२)

(र. का. धे. ; र. रा. सु. । ग्रहण्या.)

मृतसूतं मृतं स्वर्णं[1] यष्टीकं राजवर्तकम् ।
तुल्यांशं मर्दयेदाज्यैः क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥
सितामध्वाज्यसंयुक्तं निष्कार्धं चैव लेहयेत् ।
राजावर्तो रसो नाम ग्रहणीरोगनाशकः ॥

---

१ शुल्वमिति पाठान्तरम् ।

पारद भस्म, स्वर्ण भस्म (पाठान्तरके अनुसार ताम्र भस्म), मुलैठीका चूर्ण और राजावर्त भस्म समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें और फिर उसमें थोड़ासा घी मिला कर ज़रा देर धीमी आग पर गर्म करें।

इसे मिश्री, शहद और घीमें मिलाकर चाटनेसे ग्रहणी रोगका नाश होता है।

मात्रा—२॥ माशा।

(व्यवहारिक मात्रा १ रत्ती।)

(६१४४) **राजावर्त्तावलेहः**

(र. रा. सु. । प्रमेहा.)

राजावर्तश्च वैक्रान्तं ताम्रमभ्रं पृथक् पृथक्।
शुक्तिमात्रं कृष्णलोहं पार्वतश्च पलद्वयम्॥
मण्डूरं कुडवश्चैव शुद्धमञ्जनसन्निभम्।
त्रिकत्रयं तालमूली तथैव करिकेशरम्॥
श्वेतोच्चटा नागबला प्रत्येकं कर्षमात्रकम्।
शुभ्रं शाल्मलिनीरस्य प्रस्थं च छागदुग्धतः॥
मत्स्यण्डिकायाः प्रस्थार्द्धमेभिः कुर्याच्च लेहकम्।
लिहेद्विधिज्ञः सुदिने ह्यनुपानं पिबेदनु॥
चण्डामूलं शुक्तिमात्रं सर्वमेहप्रशान्तये।
गुल्महृद्रोग वध्मार्शमुष्कपीडाप्रशान्तये॥
शुक्राश्मरीमूत्रघातरेतोदोषापनुत्तये॥

राजावर्त भस्म, वैक्रान्त भस्म, ताम्र भस्म और अभ्रक भस्म, २॥-२॥ तोले; तीक्ष्ण लोह भस्म १० तोले, शिलाजीत १० तोले, शुद्ध और सुरमेके समान काला मंडूर २० तोले तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग, नागरमोथा, चीता, तालमूली, नागकेसर, सफेद चौंटली और नागबलाका चूर्ण १।-१। तोला एवं सेंभलका स्वच्छ स्वरस और बकरीका दूध २-२ सेर तथा मत्स्यण्डिका (पतली राब) आधा सेर लेकर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और अवलेह तैयार हो जाने पर ठण्डा करके सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह, गुल्म, हृद्रोग, वर्ध्म, अर्श, वृषणपीड़ा, शुक्राश्मरी, मूत्राघात, और वीर्यविकार नष्ट होते हैं।

अनुपान—रस खानेके पश्चात् २॥ तोले कौंचकी जड़ पानीमें पीस कर पीनी चाहिये।

(**रसकी मात्रा**—१-२ रत्ती।)

(अनुपानकी व्यवहारिक मात्रा-१ माशा।)

(६१४५) **रामज्वरापहारी रसः**

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

रसेन्द्रगन्धौ विषटङ्कणौ च
सहंसपाकं कटुकत्रयं च।
सर्वैः समं तज्जयपालबीजं
विमर्दयेदार्द्रकजद्रवेण॥
संशोष्य सम्पेष्य भवेत्सुसिद्धो
रसस्तु धत्तूरसितार्द्रतोयैः।
ददीतवल्लं विषमज्वरे वा
जीर्णज्वरे वाथ नवज्वरे वा॥
वनान्निवृत्ताय रघूत्तमाय
पुरा सुषेणेन स्वयं प्रदिष्टः।
तदा प्रभृत्येव च रामनाम
ज्वरापहारीति रसः प्रसिद्धः॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, सुहागेकी खील, शुद्ध शिंगरफ, तथा सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण १-१ भाग और शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर (८ भाग) लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिलाकर सबको अदरकके रसमें खरल करके सुखा लें।

मात्रा--२ रत्ती।

अनुपान--धतूरेके रस, अदरकके रस और मिश्रीके साथ मिला कर खिलाना चाहिये।

इसके सेवनसे विषम ज्वर, जीर्ण ज्वर और नवीन ज्वर नष्ट होता है।

यह प्रयोग प्राचीन कालमें सुषेण वैद्यने श्री रामचन्द्रजीको बनसे लौटनेके समय बतलाया था।

(व्यवहारिक मात्रा--१ रत्ती।)

(६१४६) रामबाणरसः (१)

(र. मं. । अ. ६)

सूतकं गन्धकं चैव शाणं शाणं च गृह्यते।
दरदं टङ्कणं चैव मरिचं च विषं तथा ॥
चत्वारौषधयः सर्वे द्विद्विटङ्कं च कथ्यते।
जैपालबीजं संयोज्यं टङ्कं च दिक्प्रमाणतः ॥
तिन्तिडीरससम्मर्द्य गुञ्जामात्रवटी कृता।
तुलसीपत्रसंयुक्ता सर्वे च विषमज्वराः ॥
एकाहिकं द्व्याहिकं च त्र्याहिकं च चतुर्थकम्।
शीतदाहादिकं सर्वं नाशयति च वेगतः ॥
पथ्यं दुग्धौदनं देयं दधिभक्तं च भोजनम्।
धन्वन्तरिकृतो योगो निजपुत्रेण हेतुना ॥
रामबाणरसो नाम सर्वरोगप्रणाशकः ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक १-१ शाण (प्रत्येक ३॥। माशे); शुद्ध हिंगुल, सुहागा, काली मिर्चका चूर्ण और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) १०-१० माशे तथा शुद्ध जमालगोटा ५० माशे लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको तिन्तडीकके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें तुलसी पत्रके रसके साथ सेवन करनेसे हर प्रकारका विषम ज्वर एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक, शीतपूर्व तथा दाहपूर्व ज्वर नष्ट होता है।

पथ्य--दही भात और दूध भात।

(६१४७) रामबाणरसः (२)

(र. चं. ; र. रा. सु. । प्रमेहा; र. र. स. । उ. खं. अ. १७.)

त्रपुणा निहतं तारं स्वर्णं नागहतं तथा।
मृतं सूतं तयोस्तुल्यं मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥
आकुलीमूलजैः क्वाथैः शोषयित्वा मुहुर्मुहुः।
ताप्यवैक्रान्तराड्वर्तभस्म सर्वसमं क्षिपेत् ॥
विमर्द्य बलिना सर्वं षोढा तुषपुटैः पचेत्।
आकुलीबीजबर्बूरकथितैर्भावयेत् त्रिधा ॥
तद्रसं परिचूर्ण्याथ स्थापयेत्कूपिकोदरे।
गुडूचीसत्वसंयुक्तो बल्लमात्रो रसस्त्वयम् ॥
निहन्ति सकलं मेहं मोहध्वान्तमिवेश्वरः।
बाणवद्रामचन्द्रस्य सज्जनस्येव भाषितम् ॥
न याति जातु मोघत्वं रामबाणो रसोत्तमः ॥

बंगके संयोगसे मारित चांदी और सीसेके योगसे मारित स्वर्ण १-१ भाग तथा पारद भस्म २ भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर तीन दिन

तक आकुली मूलके क्काथमें बार बार घोटते और सुखाते रहें। तदनन्तर उसमें समान भाग मिश्रित स्वर्णमाक्षिक भस्म, वैक्रान्त भस्म और राजावर्त भस्म उस सब रसके बराबर मिलाकर घोटें और फिर उसमें १ भाग गन्धक मिला कर (उसे आकुली मूलके क्काथसे घोट कर गोला बना कर) शराव सम्पुटमें बन्द करके तुषाग्निमें फूंक दें। इसी प्रकार गन्धक योगसे ६ पुट दें। अन्तमें उसे आकुलीके बीज और बबूलकी छालके क्काथकी पृथक् पृथक् ३-३ भावना दे कर सुखा लें।

मात्रा—३ रत्ती।

इसे गिलोयके सतके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

जिस प्रकार रामके बाण और सत्पुरुषोंके वचन व्यर्थ नहीं जाते उसी प्रकार यह रस भी कभी निष्फल नहीं होता।

(६१४८) रामबाणरसः (३)

(वै. र. । ज्वरा.)

हरबीजकटुत्रयटङ्कणकं
जयपालकहंसकगन्धयुतम् ।
गरलं च समं सह शर्करया
सहसा जयति ज्वरमष्टविधम् ॥

शुद्ध पारा, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण, सुहागेकी खील, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध शिंगरफ (हिंगुल), शुद्ध गन्धक और शुद्ध बछनाग (मीठा विष) समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करें।

यह रस आठ प्रकारके ज्वरोंको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

इसे खांडमें मिला कर खिलाना चाहिये।

(मात्रा—१ रत्ती।)

(६१४९) रामबाणरसः (४)

(भै. र. । अग्निमांद्या.; वृ. नि. र. । अजीर्णा.; र. चं. । अग्निमांद्या; धन्व ; रसे. चि. म. । अ. ^ ; र. का. धे. । अरोचका.; रसे. सा. सं. ; वै. र.. । अजीर्णा.; वृ. यो. त. । त. ७१)

पारदामृतलवङ्गगन्धकं
भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम् ।
जातिकाफलमथार्द्धभागिकं
तिन्तिडीफलरसेन मर्दितम् ॥
माषमात्रमनुपानयोगतः
सद्य एव जठराग्निदीपनः ।
सङ्ग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं
सामवातखरदूषणं जयेत् ॥
वह्निमान्द्यदशवक्त्रनाशनो
रामबाण इति विश्रुतो रसः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), लौंगका चूर्ण और शुद्ध गन्धक १-१ भाग, काली मिर्चका चूर्ण २ भाग और जायफलका चूर्ण आधा भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको इमलीके फलोंके रसमें घोट कर उड़दके समान गोलियां बना लें।

इन्हें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे

शीघ्र ही अग्नि दीप्त होती और संग्रहणी तथा आमवातका नाश हो जाता है।

यह रस संग्रहणी रूपी कुम्भकर्ण, आमवात रूपी खरदूषण और अग्निमांद्य रूपी दशाननके लिये रामबाणके समान है।

(६१५०) रामरसः (श्रीरामरसः)

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचं च त्रिभिः समम् ।
बीजं नैकुम्भकं मर्द्यं दन्तीक्वाथेन यामकम् ॥
द्विवल्लं शूलविष्टम्भानिलमामज्वरं जयेत् ।
श्री शिवेन स्वयं प्रोक्तं रसं श्रीराम सञ्ज्ञकम् ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग तथा शुद्ध जमालगोटा ३ भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको १ पहर दन्तीमूलके क्वाथमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

मात्रा—६ गोली।

इसके सेवनसे शूल, विष्टम्भ, वायु और आमज्वर नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा---१ रत्ती।)

(६१५१) रास्नादिचूर्णम्
(रास्नादिलौहम्)

(बृ. नि. र. । क्षय. ; धन्व.; रसें. सा. सं. ; र. र. । रा. य. ; र. रा. सु. । क्षय.)

रास्नाकर्पूरतालीसभेकपर्णीशिलाजतु ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्ताविडङ्गदहनाः समाः ॥
चतुर्दशायसो भागास्तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।
लीढं कासं ज्वरं श्वासं राजयक्ष्माणमेव च ॥
बलवर्णाग्निपुष्टिं च वर्धनं दोषनाशनम् ॥

रास्ना, कपूर, तालीस पत्र[1] मण्डूकपर्णी, शिलाजीत, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग और चीतेका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म १४ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे कास, ज्वर, श्वास और राजयक्ष्माका नाश होता तथा बल वर्ण अग्नि और पुष्टिकी वृद्धि होती है।

(६१५२) रुक्मिशरसः

(रसे. सा. सं. । रेचना.)

अभयाचूर्णमादाय नूतनैर्जयपालकैः ।
पञ्चमांशेन मिलितैः स्नुहीदुग्धेन मर्दिताः ॥
गुडिकास्तस्य कर्तव्या वर्तुलाश्चणकप्रभाः ।
एकैकस्यास्य टङ्कस्य रेचनैश्च रसैस्तदा ॥
रुक्मिशो न च दाहः स्यान्न च मूर्छाभ्रमः ।
वेगतः सारयेदेषा विशेषादामनाशिनी ॥
निरूहेन तथा नैव तथा बिन्दुघृतेन च ।
त्रिवृता न तथा रेच्या यथा स्याद्गुडिकोत्तमा ॥
अतिशुद्धं भवेदेवमतिप्रबलमुत्तमम् ।
अतिरूपमतिप्रौढमत्यायुष्करमुत्तमम् ॥
विष्टम्भे गुडिका देया चोदरे दारुणामये ।
अधोदेशेषु सर्वेषु गदेषु च महौषधिः ॥
दीयते क्षीयते सामः कामकायविवर्द्धनः ॥

उत्तम हर्रका चूर्ण ५ भाग और शुद्ध नवीन जमालगोटा १ भाग लेकर दोनोंको एकत्र मिला

[1] पाठान्तरके अनुसार असगन्ध.

कर थोहर (सेंड) के दूधमें खरल करके चनेके बराबर गोलियां बना लें।

इसे ५ माशेकी मात्रा तक रेचन रसोंके साथ प्रयुक्त कर सकते हैं।

(व्यवहारिक मात्रा---४–५ रत्ती।)

इसे खानेसे दाह, मूर्च्छा, भ्रम, क्लम, आदि उपद्रव नहीं होते और वेग पूर्वक विरेचन हो जाता है।

यह रस विशेषतः आमनाशक है।

इस वटीसे जितना उत्तम विरेचन होता है उतना न तो निरुहबस्तिसे होता है और न ही बिन्दु घृत या निसोतसे होता है।

इसे खानेसे कोठा अत्यन्त शुद्ध होकर शरीर कोमल हो जाता है; बुद्धि बढ़ती है और आयु दीर्घ होती है।

इसे विष्टम्भ, भयंकर उदर रोग और समस्त अधः शरीरस्थ दोषोंमें दे सकते हैं।

(साधारण अनुपान---शीतल जल।)

(६१५३) रुजादलनवटी

(र. रा. सु. । प्रमेह. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसबलिविषमग्नित्रैफलव्योषयुक्तम् ।
समलवमिति सर्वं द्वै गुणो स्याद्गुडोथ ॥
जठरगुदसमीरश्लेष्ममेहान् सगुल्मान् ।
हरति झटिति पुंसां वल्लमात्रावटीयम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग (मीठा विष), चीतामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल १–१ भाग तथा पुराना गुड़ सबसे २ गुना (२० भाग) लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करके गुड़में मिलावें और अच्छी तरह कूट कर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे उदर और गुदाका वायु, कफ, गुल्म और प्रमेह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(६१५४) रुद्रपर्पटी

(वृ. नि. र. ; र. का. धे. । कासा. ; र. र. । कासा.)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं सम्मर्द्यैषां द्रवैः पुनः ।
वातारिरार्द्रकं भृङ्गी काकमाच्यादिकर्णिका ॥
दिनैकं मर्दयेत् खल्वे पाचयेत्पर्पटी यथा ।
द्वयोः पादं मृतं ताम्रं क्षिप्त्वा मृद्वग्निना पचेत् ॥
रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत् ।
प्रक्षिपेत्कदलीपत्रेऽथवा स्निग्धपुटे पुनः ॥
आच्छाद्य तेन योगेन अधश्चोर्ध्वं च गोमयम् ।
देयं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विषं क्षिपेत् ॥
रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुञ्जाद्वयं द्वयम् ।
चूर्णितं कटुनिर्गुण्ड्या मूलनिष्कद्वयं पिबेत् ॥
भृङ्गराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह ।
वातकासान्निहन्त्याशु सर्वथैव न संशयः ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गन्धककी कज्जली बना कर उसे अरण्डमूल, अदरक, अतीस, मकोय और कोयलके स्वरस या क्वाथमें पृथक् पृथक् एक एक दिन घोट कर सुखा लें।

तदनन्तर उसमें दोनोंसे चौथाई (पौन भाग) ताम्र भस्मका चूर्ण मिला कर घृतलिप्त लोह–पात्रमें

मन्दाग्नि पर पिघलावें। जब पिघल कर उसका रंग लाल हो जाय तो उसे लोहेकी सलाई आदिसे अच्छी तरह चला कर एक जीव करें और गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्ते पर फैला दें तथा उसके ऊपर दूसरा कदली-पत्र रख कर उसे गायके गोबरसे दबा दें। इसके पश्चात् उसके शीतल हो जाने पर दोनों पत्तोंके बीचसे पर्पटीको निकाल लें; और पीस कर उसमें उससे चौथाई शुद्ध बछनाग (मीठा विष) का चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल करके रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् कड़वे संभालूकी जड़का १० माशे चूर्ण पीना चाहिये। अथवा उसे भंगरेके रस और शहदके साथ मिला कर चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे वातज कास शीघ्र ही समूल नष्ट हो जाती है।

(६१५५) रुद्ररसः

(र. रा. सु. । राजयक्ष्मा.)

तीक्ष्णशुल्बं नागतारं स्वर्णञ्च मरिचं पृथक्।
एक द्वि त्रि चतुष्पञ्चक्रमात्षट्शुद्धसूतकम् ॥
चाङ्गेरी द्रवसम्मर्द्य दिनैकं तच्च गोलकम्।
गोलकं लेपयेत्तेन ततो वस्त्रेण वेष्टयेत् ॥
मृगाङ्कवत्पचेत्स्थाल्यां वालुकाभि प्रपूरयेत्।
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं हरतुल्यो रसोत्तमः ॥
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तथा मात्रानुपानकम् ॥

तीक्ष्ण लोह (फौलाद) भस्म १ भाग, ताम्र भस्म २ भाग, सीसा भस्म ३ भाग, चांदी भस्म ४ भाग, स्वर्ण भस्म ५ भाग, काली मिर्चका चूर्ण ६ भाग और रससिन्दूर ७ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके १ दिन चांगेरी (तिपतिया) के रसमें खरल करके गोला बनावें और (उसे सुखा कर) उस पर चांगेरीके रसका लेप करके ऊपर कपड़ा लपेट दें और फिर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके मृगाङ्क रसके समान बालुका यन्त्रमें पकावें। तदनन्तर यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस पर सुरक्षित रक्खें।

यह रस क्षय रोगमें मृगाङ्क के समान ही गुणकारी है।

इसकी मात्रा अनुपान आदि भी मृगाङ्कके समान है।

रुद्ररसः

रौद्र रस देखिये।

(६१५६) रुद्रवटी

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

कान्तलोहं मृतं चाभ्रं सूतं ताप्यं च गन्धकम्।
तालकं गुग्गुलुं शुद्धं विडङ्गं त्रिफलाकुलम् ॥
व्योषाग्नि देवदारुं च नागफेनं निशाद्वयम्।
गिरिकर्णी पुनर्नव्या मूलचूर्णं समं समम् ॥
भृङ्गराजद्रवैर्मर्द्यं दिनान्ते वटकी कृतम्।
माषमात्रं निहन्त्याशु सर्वकुष्ठं न संशयः ॥
इयं रुद्रवटी नाम्नाऽनुपानं चण्डभैरवः।

कान्त लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, शुद्ध गूगल, बायबिड़ंगका चूर्ण, हर्र, बहेड़ा,

आमला, बेर. सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, देवदारु, अफीम, हल्दी, दारुहल्दी, कोयल और पुनर्नवाकी जड़ १–१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला कर सबको १ दिन भंगरेके रसमें खरल करके गोलियां बना लें।

मात्रा—१। माशा।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं।

अनुपान—"चण्डभैरवरस" के समान। (देखो प्रयोग सं. १८७४).

रुद्रेश्वररसः (महा)

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

महा रौद्रेश्वररसः प्रयोग सं. ५५६८ देखिये।

(६१५७) रूपराजरसः

(वृ. यो. त. । त. ११६; यो. त. । त. ६१; र. का. धे. । भगन्दरा.)

रसेन्द्रभागद्वितयं म्लेच्छक्षारं चतुर्गुणम् ।
काकजङ्घारसैर्मर्द्य खल्वे दिवसपञ्चकम् ॥
ताम्रसम्पुटके रुद्ध्वा सच्छिद्रे हण्डिकान्तरे ।
निवेश्य वालुकां दत्त्वा देयोऽग्निः प्रहराष्टकम् ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य मधुटङ्कणसंयुतम् ।
धमेन्मूषागतं तावद्यावद्भ्रमति तारवत् ॥
रूपराजरसः सोऽयं भगन्दरकुलान्तकः ।
वल्लमात्रममुं लीढ्वा मधुना सह पथ्यभुक् ॥
त्रिफलायाः पिबेत्क्वाथं पश्चात्पथ्यं हितं चरेत् ।
मुक्तः स्वल्पैरहोभिः स्याद्भगन्दरमहागदात् ॥

रससिन्दूर २ भाग और ताम्र भस्म ४ भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके ५ दिन काकजंघाके रसमें मर्दन करें। तदनन्तर उसका गोला बना कर सुखा कर उसे शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करें और फिर एक कपरमिट्टी की हुई हाण्डीके पेंदेमें एक छोटासा छिद्र करके उसमें वह सम्पुट रख दें तथा हाण्डीमें गले तक रेत भर कर चूल्हे पर चढ़ा दें और उसके नीचे ८ पहर तक निरन्तर अग्नि जलावें।

तदनन्तर हाण्डीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस लें और फिर उसमें शहद तथा सुहागा मिला कर खुली हुई मूषामें रख कर इतना धमावें कि औषध चक्कर खाने लगे। तत्पश्चात् ठण्डा करके पीस कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती।

अनुपान—औषधको शहदके साथ चाट कर त्रिफला-क्वाथ पीना चाहिये।

इसे सेवन करने और पथ्य पूर्वक रहनेसे भगन्दर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

रोगहररसः

(र. चं. । ज्वरा. ; शा सं. । खं. २ अ. १२)

प्रयोग संख्या ९४४ "कनकसुन्दरो रसः" देखिये।

(६१५८) रोगेभसिंहश्रीखण्डवट्यौ

(र. रा, सु. । वाता. ; ध. ; र. का. धे. । वातव्या.)

सूताद्द्वयो घनवरानलवेल्लभार्ङ्गी
तिक्ताकटुत्रयवरैः सवचैः समांशैः ।

रोगेभसिंह इति वातकफामयघ्नः
सान्द्रोयमल्पपटुतो विहितो द्विगुञ्जः ॥
एतैर्गुडप्रमृदितै रसवर्जितैः स्या-
च्छ्रीखण्डनाम गुटिका विहिता द्विगुञ्जा ।
शैत्याद्य जीर्णकफवातभवान् विकारान्
हन्त्यार्द्रकेन नियुताप्यथ केवला वा ॥

रससिन्दूर २ भाग तथा नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, बायबिड़ंग, भरंगी, कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल और बचका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे ज़रासे सेंधा नमकके साथ सेवन करनेसे वातकफज रोग नष्ट होते हैं।

मात्रा--२ रत्ती।

इसका नाम " **रोगेभसिंहरस** " है।

यदि रससिन्दूरके अतिरिक्त उपरोक्त समस्त ओषधियोंके चूर्णको सबके बराबर गुड़में मिलाकर गोलियां बना ली जायं तो उसका नाम " **श्रीखण्डवटी** " हो जाता है।

इनके सेवनसे शीत, अजीर्ण और वातकफज रोग नष्ट होते हैं।

मात्रा--२ रत्ती

(व्यवहारिक मात्रा--२--३ माशे।)

अनुपान--इसे अद्रकके रसके साथ या बिना ही किसी अनुपानके खिलाना चाहिये।

(६१५९) रोमवेधरसः

(र. का. धे. । सन्निपाता.)

भृङ्गीविषं भोगिमहाविषं स्या-
च्छुद्धं समं सूतकगन्धकं च ।
एकाधिका विंशतिर्वासराणां
मध्ये निधायाथ जलप्रदेशे ॥
गुञ्जैकमानः सघृतः सुपिष्टो
नवज्वरं सन्ततमादिकं च ।
अभ्यङ्गमात्रेण निहन्ति सर्वा-
न्यथा भुजङ्गं गरुडो गरीयान् ॥
रोमादि वेधस्तु सुसिद्धनामा
राजा रसानां कथितो भिषग्भिः ।
राज्ञां पुरः कौतुकमद्भुतार्थं
सङ्कीर्तितो वैद्य कुमारकाभ्याम् ॥

शुद्ध बछनाग, सर्प-विष और शुद्ध पारद तथा गन्धक समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके कांचकी शीशीमें भर कर किसी ऐसी जगह दबा दें जहां हमेशा पानी जाता हो और फिर २१ दिन पश्चात् निकाल कर काममें लावें।

इसमेंसे १ रत्ती रस घीमें घोट कर शरीर पर मलनेसे सन्ततादि समस्त नवीन ज्वर नष्ट हो जाते हैं।

(६१६०) रोहीतकलौहम्

(भै. र. ; र. का. धे. । प्लीहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. ; धन्व. । उदररोगा. ; र. र. । प्लीह.)

रोहीतकसमायुक्तं त्रिकत्रययुतन्त्वयः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च शोथं हन्ति न संशयः ॥

रुहेड़ेकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, नागरमोथा और बायबिड़ंग; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर खरल करें।

इसके सेवनसे प्लीहा, अग्रमांस और शोथ अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(६१६१) **रौद्ररसः**

(रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. । अर्बुदा ; धन्व. ; वृ. नि. र. ; र. का. धे. । अर्बुदा. रसे. चि. म. । अ. ९; र. म. । अ. ६)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मर्द्यं यामचतुष्टयम् ।
नागवल्लीरसैर्युक्तं मेघनादपुनर्नवैः ॥
गोमूत्रपिप्पलीयुक्तं मर्द्यं रुद्ध्वा पुटेल्लघु ।
लिह्यात्क्षौद्रे रसो रौद्रो गुञ्जामात्रोऽर्बुदं जयेत् ॥

शुद्ध पारद और गन्धक समान भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर उसे पानके रस, चौलाईके रस, पुनर्नवा (बिसखपरा) के रस, गोमूत्र और पीपलके काथमें पृथक् पृथक् चार चार पहर घोट कर गोला बनावें और उसे सुखाकर शराव-सम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे अर्बुद नष्ट होता है ।

रौद्रेश्वररसः

प्र. सं. ५५६८ " महारौद्रेश्वर रसः " देखिये ।

(६१६२) **रौप्यभस्मविधिः (१)**

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

लकुचद्रवमूताभ्यां तारपत्रं प्रलेपयेत् ।
ऊर्ध्वाधो गन्धकं दत्त्वा मूषामध्ये निरुध्य च ॥
स्वेदयेद्वालुका यन्त्रेण दिनमेकं दृढाग्निना ।
स्वाङ्गशीतां च तां पिष्टीं साम्लतालेन मर्दितम् ॥
पुटेद्दशवाराणि भस्मी भवति रूप्यकम् ॥

शुद्ध पारदको बढलके रसमें घोट कर शुद्ध चांदीके बारीक पत्रों पर लेप कर दें और फिर उन पत्रोंके ऊपर नीचे शुद्ध गन्धकका चूर्ण बिछा कर उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करें । तदनन्तर उस सम्पुटको बालुका यन्त्रमें रख कर १ दिन तीव्राग्नि पर पकावें ।

इसके पश्चात् जब वह स्वांगशीतल हो जाय तो उसमेंसे चांदीको निकाल कर उसमें (उसके बराबर) शुद्ध हरताल मिलाकर दोनोंको नीबूके रसमें घोटें और शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें ।

इसी प्रकार १० पुट देनेसे चांदीकी भस्म हो जाती है ।

(६१६३) **रौप्यभस्मविधिः (२)**

(यो. त. । त. १७)

विधाय पिष्टिं सूतस्य रजतस्याथ मेलयेत् ।
तालगन्धं समं पश्चात् मेलयेन्निम्बुक द्रवैः ॥
द्वित्रिः पुटैर्भवेद्भस्म योज्यमेतद्रसादिषु ॥

१ भाग शुद्ध पारदमें १ भाग शुद्ध चांदीके वर्क मिला कर दोनोंको खरल करें । जब दोनोंकी पिट्ठीसी बन जाय तो उसमें १-१ भाग हरताल और गन्धक मिला कर सबको नीबूके रसमें घोटें और यथा-विधि सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इसी प्रकार २-३ पुट देनेसे चांदीकी भस्म हो जाती है ।

सूचना

रौप्य भस्मकी अन्य विधियां तारमारण तथा तारभस्मके नामसे आ चुकी हैं ।

(६१६४) रौप्यमाक्षिकशोधनमारणे.

(र. र. स. । पू. खं. अ. २)

विमलस्त्रिविधः प्रोक्तो हेमाद्यस्तारपूर्वकः ।
तृतीयः कांस्यविमलस्तत्तत्कान्त्या च लक्ष्यते ॥
वर्तुलः कोणसंयुक्तः स्निग्धश्च फलकान्वितः ।
मरुत्पित्तहरो वृष्यो विमलोऽति रसायनः ॥
पूर्वो हेमक्रियासूक्तो द्वितीयो रौप्यकृन्मतः ।
तृतीयो भेषजे तेषु पूर्वं पूर्वं गुणोत्तरः ॥
आटरूषजले स्विन्नो विमलो विमलो भवेत् ।
जम्बीरस्वरसे स्विन्नो मेषशृङ्गीरसेऽथ वा ॥
आयाति शुद्धिं विमलो धातवश्च यथापरे ।
गन्धाश्मलकुचाम्लैश्च म्रियते दशभिः पुटैः ॥

माक्षिक ३ प्रकारकी होती है; एक स्वर्ण-माक्षिक, दूसरी रौप्य-माक्षिक, और तीसरी कांस्य-माक्षिक ।

स्वर्णमाक्षिकमें सोनेकी, रौप्यमाक्षिकमें चांदीकी, और कांस्यमाक्षिकमें कांसेकी झलक होती है ।

उत्तम माक्षिक गोल, बहुतसे कोनों वाली, स्निग्ध और फलकान्वित (बहुतसे पहलू वाली) होती है ।

माक्षिक वातपित्त नाशक; वृष्य और रसायन है । तीनों प्रकारकी माक्षिकोंमें प्रथम (स्वर्ण माक्षिक) सर्व श्रेष्ठ, द्वितीय मध्यम और तृतीय (कांस्य माक्षिक) अधम मानी जाती है ।

स्वर्ण माक्षिक, स्वर्ण निर्माणमें; रौप्य माक्षिक चांदी बनानेमें और कांस्य माक्षिक केवल औषधोंमें प्रयुक्त होती है ।

माक्षिकको बासेके क्वाथ या जम्बीरीके रस अथवा मेढासिंगीके रसमें स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाती है ।

इस विधिसे अन्य धातु भी शुद्ध हो जाती हैं ।

माक्षिकमें शुद्ध गन्धक मिलाकर दोनोंको बढलके रस या नीबूके रसमें घोट करे टिकिया बनावें और उन्हें सुखाकर, शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें । इसी प्रकार १० पुट देनेसे माक्षिककी भस्म तैयार हो जाती है ।

(६१६५) रौप्यमाक्षिकसत्वपातनम् (१)

विमलं शिग्रुतोयेन कांक्षी कासीसटङ्कणम् ।
वज्रकन्दसमायुक्तं भावितं कदलीरसैः ॥
मोक्षकक्षारसंयुक्तं ध्मापितं मूकमूषगम् ।
सत्त्वं चन्द्रार्कसंकाशं पतते नात्र संशयः ॥

फिटकी, कसीस, सुहागा, जंगली जिमीकन्द (सूरण), मोखा (छोंकरा) वृक्षका क्षार और माक्षिक समान भाग लेकर सबको सहंजनेके रस और केलेके पानीके साथ खरल करके मूषामें रख कर ध्मानेसे माक्षिकका अत्यन्त उज्ज्वल सत्व निकल आता है ।

(६१६६) रौप्यमाक्षिकसत्वपातनम् (२)

सटङ्कलकुचद्रावैर्मेषशृङ्ग्याश्च भस्मना ।
पिष्टो मूषोदरे लिप्तः संशोष्य च निरुध्य च ॥

षट्प्रस्थकोकिलैर्ध्मातो विमलः शशिसन्निभम् ।
सत्त्वं मुञ्चति तद्युक्तो रसः स्यात्स रसायनः ॥

सुहागे और मेढासिंगीकी भस्मको बढलके रसमें खरल करें और फिर उसके साथ माक्षिकको घोट कर मूषाके भीतर इसका लेप करदें तथा सुखा कर उसका मुख बन्द करके उसे ६ सेर कोयलोंकी अग्निमें धमावें । इससे विमलका अत्यन्त स्वच्छ श्वेत चन्द्रमाके समान उज्ज्वल सत्व निकल आता है । यह सत्व रसायन होता है ।

(६१६७) रौप्यरसवटी

(रूपरसवटिका.)

(र. चं. । प्रमेहा.)

पारदं चन्द्रिकाचूर्णं समं शुद्धं विमर्दयेत् ।
गोलं कृत्वा च संस्थाप्य दिनमेकं करण्डके ॥
द्वितीये दिवसेऽङ्गारे लोहपात्रे विनिक्षिपेत् ।
लोहदण्डेन संघर्ष्य शुभ्रं भस्म च कारयेत् ॥
तद्रौप्यभस्म निष्कैकं द्विनिष्कं कुङ्कुमं शुभम् ।
जातिकोषफले चैव लवङ्गं शङ्खजीरकम् ॥
प्रति कर्षं तथा नारिकेलमज्जा च भूपला ।
भल्लातकाच्च निर्बीजात्पलं ग्राह्यं प्रयत्नतः ॥
तिन्तिडीफलमांसं च योजयेत्पलपञ्चकम् ।
विधिवत्सर्वमेकत्र मर्दयेत्सुदृढं भिषक् ॥
कोलमाना च वटिका तिलतैलेन योजयेत् ।
किंवा कौसम्भतैलेन सद्यो निष्कासितेन वा ॥
धेनुदध्नाऽथ वाऽऽज्येन सायं प्रातःप्रयोजयेत् ।
आम्रचाचारकरसं कर्षं चैवानु पाययेत् ॥
वटिका रूपरसका सर्वमेहविनाशिनी ।
पूतिमेहं विशेषेण पथ्यं सामान्यमाचरेत् ॥
वर्जयेद्वर्षपर्यन्तं पनसं तुम्बिजं फलम् ।
अन्या च वटिका नास्ति पूतिमेहविनाशिनी ॥

समान भाग शुद्ध पारद और शुद्ध चांदीका चूर्ण ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर खरल करें । जब दोनों मिल जायं तो सबका एक गोला बना कर उसे शीशीमें भर कर रख दें । फिर २४ घण्टे पश्चात् उसे लोहेकी कढ़ाईमें डालकर चूल्हे पर चढ़ावें और उसके नीचे तीव्राग्नि जलावें तथा उसको लोहेकी करछीसे चलाते रहें । जब चांदीकी सफेद भस्म तैयार हो जाय तो आग देनी बन्द करदें और कढ़ाईके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे भस्मको निकाल लें ।

तदनन्तर यह चांदी भस्म १ निष्क (५ माशे), केसर २ निष्क, तथा जावत्री, जायफल, लौंग और संगजराहतका चूर्ण १।-१। तोला एवं नारियलकी गिरी और बीज रहित शुद्ध भिलावे ५-५ तोले तथा इमलीके फलका गूदा २५ तोले लेकर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करके आधे आधे तोलेकी गोलियां बना लें ।

अनुपान—तिलका तेल या ताजा निकाला हुवा कुसुम्भ (कैड़) का तेल, अथवा गायका दही या घी।

इसे प्रातः सायं सेवन करना चाहिये । दवा खानेके पश्चात् १। तोला आम या चिरौंजी (प्रियाल) का रस पीना चाहिये ।

यह वटिका समस्त प्रमेहोंको और विशेषतः पूतिमेहको नष्ट करती है ।

पूतिमेह (सूजाक) के लिये इससे उत्तम अन्य औषध नहीं है ।

परहेज़—१ वर्ष तक कटहल और तूंबी न खावें ।

(६१६८) रौप्यरसायनम्

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समौ व्योमभानू ।
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटुकवरं सारधाज्येन युक्तम् ॥
लीढं प्रातः क्षपयति तरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः ।
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥

चांदी भस्म १ भाग, अभ्रक भस्म १ भाग, ताम्र भस्म १ भाग और सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण १-१ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करें ।

इसे शहद और घीके साथ प्रातःकाल सेवन करनेसे क्षय, पाण्डु, उदर रोग, अर्श, श्वास, खांसी, नेत्ररोग और पित्तज रोगोंका नाश होता है ।

(मात्रा—२-३ रत्ती ।)

रौप्यराजरसः

रूपराजरस देखिये ।

इति रकारादिरसप्रकरणम्



अथ रकारादिमिश्रप्रकरणम्



(६१६९) रक्तचन्दनादियोगः

(यो. र. । रक्तातिसा.)

चन्दनं विमलतण्डुलाम्बुना
संयुतं मधुयुतं सितान्वितम् ।
तृड्विखण्डनमसृग्विखण्डनं
खण्डनं प्रचुरदाहमोहयोः ॥

लालचन्दनको चावलोंके पानीमें पीसकर उसमें शहद और मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे तृषा, रक्तस्राव और दाह तथा मोहका नाश होता है।

(६१७०) रक्तपित्ते कतिपययोगाः

(ग. नि. । रक्तपित्ता.)

छागं पयः स्यात्परमं प्रयोगे
गव्यं शृतं पञ्चगुणे जले वा ।
सशर्करं माक्षिकसम्प्रयुक्तं
विदारिगन्धादिगणे शृतं वा ॥
पक्वोदुम्बरकाश्मर्यपथ्याखर्जूरगोस्तनाः ।
मधुना घ्नन्ति संलीढा रक्तपित्तं पृथक् पृथक् ॥

रक्तपित्तमें बकरीका दूध पिलाना अत्यन्त हितकारी है । अथवा—

गायके दूधमें पांच गुना पानी मिला कर पकावें और जब पानी जल जाए तो उसे ठण्डा कर लें। यह दूध भी रक्तपित्तको नष्ट करता है। अथवा—

गोदुग्धको विदारीगन्धादि गणके साथ पका कर, ठण्डा करके उसमें खांड और शहद मिला कर पिलाना भी हितकारी है।

गूलरके पके फल, खम्भारीके फल, हर्र, खजूरके फल और मुनक्का को पृथक् पृथक् (इनमेंसे चाहे जिसे) पीस कर शहदमें चाटनेसे भी रक्तपित्त नष्ट होता है।

(६१७१) रक्तशाल्यादियोगः

(यो. र. । छर्दि.)

अथ रक्तशालिभक्तं गोदधिशर्कराविमिश्रं च।
कुर्याद्भोजनमेतत्कफच्छर्दिच्छिदं जन्तोः॥

लाल चावलोंके भातमें गायका दही और खांड मिला कर भोजन करनेसे कफज छर्दि नष्ट होती है।

(६१७२) रक्तापामार्गमूलयोगः

(र. र. रसा. खं. । उप. ७)

रक्तापामार्गमूलं तु सोमवारेऽभिमन्त्रयेत्।
भौमे प्रातः समुद्धृत्य बन्धेत्कटयां च वीर्यधृक्॥

लाल अपामार्ग (चिरचिटे) की जड़को सोमवारके दिन आमन्त्रित करके मंगलवारके दिन प्रातः काल उखाड़ लाएं। इसे कमरमें बांध कर स्त्रीसमागम करनेसे वीर्यस्तम्भन होता है।

(६१७३) रजनीचूर्णयोगः

(वृ. नि. र. । अर्शो.)

भावितं रजनीचूर्णं स्नुहिक्षीरैः पुनः पुनः।
बन्धयेत्सुदृढं सूत्रं छिनत्यर्शो भगन्दरम्॥

हल्दीके चूर्णको स्नुही (सेंड—थोहर) के दूधकी बहुतसी भावनाएं देकर एक मज़बूत डोर पर उसका लेप करके सुखा लें।

अर्शके मस्सों पर यह डोरा कसकर बांध देनेसे मस्से कट जाते हैं।

(६१७४) रम्भाक्षारसिद्धविलेपी

(रा. मा. । उदररो. ८)

विस्राव्य रम्भादलभस्ममध्यात्
तोयं ततस्तेन कृता विलेपी।
स्याद्भक्षिता सत्युदरामयानां
नाशाय नूनं दिवसत्रयेण॥

केलेके पत्तोंकी राखको एक कपड़ेमें डालकर उसके चारों कोने किसी घड़ौंचीके चारों पायेंमें बांध दें और उसके नीचे पात्र रखकर कपड़ेमें (राखसे ६ गुना) पानी डाल कर अच्छी तरह मिला दें। नीचेके पात्रमें जो पानी छने उसे पुनः वस्त्रमें डाल दें। इसी प्रकार कई बार छानें। जब पानी स्वच्छ हो जाए तो उसमें चावल पकाकर विलेपी (खीर) तैयार करें।

इसे केवल ३ दिन तक खानेसे उदर रोग नष्ट होते हैं।

(६१७५) रम्भाफलयोगः (१)

(धन्व. । सोमरोगा.)

कदलीनां फलं पक्वं धात्रीफलरसं मधु।
शर्करा पयसा पीतमपां धारणमुत्तमम्॥

केलेकी पक्की फलीको मथकर उसमें आमलेका रस और शहद मिला कर पिलावें तथा ऊपरसे खांडयुक्त दूध पिलावें।

यह प्रयोग सोम रोगमें अत्यन्त गुणकारी है।

(६१७६) रम्भाफलयोगः (२)

(धन्व. । सोमरोगा.)

कदलीनां फलं पक्वं विदारीं च शतावरीम् ।
क्षीरेण पाययेत्प्रातरपां धारणमुत्तमम् ॥

केलेकी पक्की फली तथा विदारीकन्द और शतावरका चूर्ण समान भाग लेकर तीनोंको एकत्र मिला कर एकजीव कर लें।

इसे प्रातःकाल दूधके साथ सेवन करनेसे स्त्रियोंका सोमरोग नष्ट हो जाता है।

(६१७७) रसाञ्जनयोगः

(वृ. मा., यो. र.; वं. से. । बालरोगा.)

गुदपाके तु बालानां पित्तघ्नीं कारयेत्क्रियाम् ।
रसाञ्जनं विशेषेण पानाभ्यञ्जनयोर्हितम् ॥

बालकोंकी गुदा पक जाए तो पित्तनाशक उपचार करना चाहिये और विशेषतः रसौत लगाना और वही पिलाना चाहिये।

(६१७८) रसाञ्जनादियोगः

(यो. र. ; बं. से. ; वृ. नि. र. । कर्णरो.)

घृष्टं रसाञ्जनं नार्याः क्षीरेण क्षौद्रसंयुतम् ।
प्रशस्यते चिरोत्थे तत्स्रावे पूतिकर्णके ॥

स्त्रीके दूधमें रसौतको घिसकर उसमें (उसके बराबर) शहद मिला लें।

इसे स्रावयुक्त पुराने पूतिकर्ण रोगमें कानमें डालना चाहिये।

(६१७९) रसाला

(वृ. यो. त. । त. १४७; व. से. ; यो. र. । वाजीकरणा.)

दध्नोऽर्धाढकमीषदम्लमधुरं
खण्डस्य चन्द्रद्युतेः ।
प्रस्थं क्षौद्रपलं पलं च हविषः
शुण्ठ्याश्चतुर्माषकाः ॥
अक्षार्धं मरिचाद्विडङ्गत इह
द्वौ माषकावेकतः ।
कृत्वा शुक्लपटे शनैः करतले-
नोन्मथ्य विस्रावयेत् ॥
मृद्भाण्डे मृगनाभिचन्दनरस-
स्पृष्टेऽगुरुधूपिते ।
सत्कर्पूररजोरजस्पृशि भृशं
दिव्या रसाला भवेत् ॥
या पीता परमेश्वरेण सुरसा
सेयं रसाला तथा ।
राज्ञां मन्मथदीपनी सुरुचिरा
कान्ता च नित्य प्रिया ॥

मधुराम्ल (खटमिट्ठा) दही २ सेर, स्वच्छ सफेद खांड (मिश्री) १ सेर, शहद १० तोले, घी १० तोले तथा सोंठका चूर्ण ५ माशे, काली मिर्चका चूर्ण ७॥ माशे, और बायबिड़ंगका चूर्ण २॥ माशे ले कर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह मथें और फिर सफेद वस्त्रसे छान लें। तथा अन्तमें सुगन्ध योग्य कपूर मिला दें।

इसे कस्तूरी और चन्दन लिप्त तथा अगरसे धूपित मृत्पात्रमें रखना चाहिये।

यह रसाला रोचक, अत्यन्त स्वादिष्ट और कामोत्तेजक है।

यह राजाओंके सेवन करने योग्य पदार्थ है।

(६१८०) रसोनवटकः

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

रसोनगुलिकां माषविदलं परिपेष्य च ।
योजयेत्पिष्टिकां कान्तां सैन्धवार्द्रकहिङ्गुभिः ॥
ततस्तु वटकान्कृत्वा तिलतैले पचेच्छनैः ।
भक्षयेत्तान्यथावह्नि हनुस्तम्भी सुखी भवेत् ॥

लहसनकी गुली और उर्दकी दाल समान भाग लेकर दोनोंकी पिट्ठी बनावें और उसमें स्वाद योग्य सेंधानमक, अदरक तथा हींग मिला कर वटक (बरे) बना लें और उन्हें मन्दाग्नि पर तिलके तेलमें तल लें।

इन्हें यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे हनुस्तम्भ नष्ट होता है।

(६१८१) राजिकादिशिखरिणीयोगः

(वृ. नि. र. । अरुचि.)

राजिका जीरको कुष्ठो भृष्टहिङ्गु च नागरम् ।
सैन्धवं दधि गोः सर्व वस्त्रपूतं प्रकल्पयेत् ॥
तावन्मानं क्षिपेत्तत्र यथा स्याद्रुचिरुत्तमा ।
तक्रमेतद्भवेत्सद्यो रोचनं वह्निदीपनम् ॥

राई, जीरा, कूठ (मीठा), भुनी हुई हींग, सोंठ और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। तदनन्तर कपड़ेसे छने हुवे गायके दहीमें यथारुचि यह चूर्ण मिला लें।

इसे पीनेसे रुचि बढ़ती और अग्नि दीप्त होती है।

(६१८२) रामठाद्या वर्तिः

(व. से. । गुल्मा.)

रामठधूमविड्व्योषगुडमूत्रविपाचिता ।
गुदेऽङ्गुष्ठसमा वर्तिर्विधेयानाहशूलनुत् ॥

हींग, घरका धुंवा, बिड नमक; सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण और गुड़ समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर (८ गुने) गोमूत्रमें पकावें और गुड़के समान गाढ़ा हो जाने पर उसकी अंगूठेके समान मोटी बत्तियां बना लें।

इनमेंसे एक एक बत्ती गुदामें रखनेसे अफारे और शूलका नाश होता है।

(६१८३) रास्नादिपयः (१)

(वृ. मा. । योनि.)

रास्नाश्वदंष्ट्रावृषकैः शृतं शूलहरं पयः ।

रास्ना, गोखरु, और बासेके साथ दूध सिद्ध करके पीनेसे योनिशूल नष्ट होता है।

(प्रत्येक ओषधि १ तोला। दूध २४ तोले। पानी ९६ तोले। सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाए तो दूधको छान लें।)

(६१८४) रास्नादिपयः (२)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । स्त्रीरोगा.)

रास्नाश्वगन्धावृषकैर्योनिशूलहरं पयः ।
गुडूचीत्रिफलादन्तीक्वाथैश्च परिषेचनम् ॥

रास्ना, असगन्ध और बासेके साथ दूध पकाकर पीनेसे योनिशूल नष्ट होता है।

(प्रत्येक ओषधि १ तोला; दूध २४ तोले, पानी ९६ तोले; सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो दूधको छान लें।)

योनिशूलमें गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, और दन्तीके काथसे योनिको धोना भी हितकर है।

(६१८५) रास्नादिबस्तिः

(सुश्रुत स. । चि. अ. ३८)

रास्नारग्वधवर्षाभूकटुकोशीरवारिदैः ।
त्रायमाणामृतारक्तापञ्चमूलविभीतकैः ॥
सबलैः पालिकैः क्वाथः कल्कस्तुमदनान्वितः ।
यष्ट्याह्वमिसिसिन्धूत्थफलिनीन्द्रयवाह्वयैः ॥
रसाञ्जनरसक्षौद्रद्राक्षासौवीरसंयुतैः ।
युक्तो बस्तिः सुखोष्णोऽयं मांसशुक्रबलौजसाम्॥
आयुषोऽग्नेश्चसंस्कर्त्ताहन्तिचाशु गदानिमान् ।
गुल्मासृग्दरवीसर्पं मूत्रकृच्छ्रक्षतक्षयान् ॥
विषमज्वरमर्शांसि ग्रहणीं वातकुण्डलीम् ।
जानुजङ्घाशिरोबस्तिग्रहोदावर्त्तमारुतान् ॥
वातासृक्शर्कराष्ठीलाकुक्षिशूलोदरारुचीः ।
रक्तपित्तकफोन्मादप्रमेहाध्मानहृद्ग्रहान् ॥

रास्ना, अमलतास, पुनर्नवा, कुटकी, खस, नागरमोथा, त्रायमाना, गिलोय, मजीठ, पञ्चमूल, बहेड़ा और खरैटी ५-५ तोले; इनका काथ तथा मदनफल (मैनफल), मुलैठी, सौंफ, सेंधानमक, फूलप्रियंगु, इन्द्रजौ और रसौतका कल्क एवं ईखका रस, शहद, मुनक्काका रस और सौवीरक काञ्जी एकत्र मिला कर मन्दोष्ण करके उसकी बस्ति देनेसे मांस, शुक्र, बल, ओज, आयु और अग्निकी वृद्धि होती तथा गुल्म, प्रदर, वीसर्प, मूत्रकृच्छ्र, क्षतक्षय, विषम ज्वर, अर्श, ग्रहणी, वातकुण्डली, जानुग्रह, जङ्घाग्रह, शिरोग्रह, बस्तिग्रह, उदावर्त, वायु, वातरक्त, शर्करा, अष्ठीला, कुक्षिशूल, उदर रोग, अरुचि, रक्तपित्त, कफ, उन्माद, प्रमेह, आध्मान और हनुग्रहका नाश होता है।

(६१८६) रास्नादिमर्दनम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

रास्ना विशाला च सुराह्वकुष्ठं
शिग्रूवचानागरकं शताह्वम् ।
अम्लेन पिष्टा वपुषं विमर्द्य
खल्लीं विषूचीषु निवारयन्ति ॥

रास्ना, इन्द्रायण, देवदारु, कूठ, सहंजनेकी छाल, बच, सोंठ और सोया समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर सबको कांजीके साथ पीस लें।

इसकी मालिश करनेसे विषूचिकाका खल्ली-शूल* नष्ट होता है।

(६१८७) रास्नाद्यङ्गमर्दनम्

(ग. नि. । अजीर्णा. ६)

रास्ना पत्रागुरू मांसी कुष्ठं शिग्रुत्वचो वचा।
श्रेष्ठमम्लेन सम्पिष्टं विषूच्यामङ्गमर्दनम् ॥

रास्ना, तेजपात, अगर, जटामांसी, कूठ, सहंजनेकी छाल, बच और सफेद खदिर (खैरसार) समान भाग ले कर सबको कांजीमें पीस लें।

हैजेमें शरीर पर इसकी मालिश करनी चाहिये।

(यह योग खल्लीशूलमें उपयोगी है।)

(६१८८) रास्नाद्युद्वर्त्तनम्

(व. से. । शोथा.)

---

*खल्ली—हैजेमें होने वाली हाथ पैरों आदिकी ऐंठन और शिराओंके तनावको "खल्ली" कहते हैं।

रास्नावृषार्कत्रिफलाविडङ्गं
शिग्रुत्वङ्मूषिककर्णिका च ।
निम्बार्कजो व्याघ्रनखः समूर्वा
सुवर्चिका तिक्तकरोहिणी च ॥
सकाकमाची बृहती सकृष्णा
पुनर्नवा नागरचित्रकैश्च ।
उद्वर्त्तनं शोथिषु मूत्रपिष्टं
शस्तं तथा गोसलिलेन सेकः ॥

रास्ना, बासा, आककी जड़की छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग, सहंजनेकी छाल, चूहाकन्नी, नीमकी छाल, आककी छाल, नख नामक सुगन्ध द्रव्य, मूर्वा, सज्जी, कुटकी, मकोय, कटेली, पीपल, पुनर्नवाकी जड़, सोंठ और चीता समान भाग लेकर सबको गोमूत्रमें पीस लें।

इसे शोथ वाले रोगीके शरीर पर मलना चाहिये।

शोथस्थान पर गोमूत्रका सेचन भी करना हितकारी है।

(६१८९) रास्नाद्युपनाहः

(ग. नि. । अर्शो.)

रास्नामेरण्डमूलं च मधुकं देवदारु च ।
यवचूर्णेन युक्तानि क्षीरेणालोड्य साधयेत् ॥
तेनोपनाहं कुर्वीत स्वेदयेच्च पुनः पुनः ।
तेनार्शांसि शमं यान्ति वेदना विनिवर्तते ॥

रास्ना, अरण्डकी जड़, मुलैठी, देवदारु और जौ; इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला लें और उसे दूधमें पकाकर पुलटिस बना लें।

इससे अर्शके मस्सोंको बार बार स्वेदित करनेसे वेदना शान्त होती और मस्से नष्ट हो जाते हैं।

(६१९०) रोचनादिचूर्णम्

(वं. से. । नेत्र रो.)

रोचनाक्षारतुत्थानि पिप्पल्यः क्षौद्रमेव च ।
प्रतिसारणमेकैकं भिन्ने लगण इष्यते ॥

गोरोचन, जवाखार, नीलाथोथा, और पीपल मेंसे किसी एकके चूर्णको शहदमें मिला लें।

जब लगण* फूट जाय तो उस पर इसे मलना चाहिये।

(६१९१) रोध्राद्याश्चोतनम्

(वा. भ. । उ. अ. १४)

रोध्रसैन्धवमृद्वीकामधुकैश्छागलं पयः ।
शृतमाश्चोतनं योज्यं रुजाराग विनाशनम् ॥

लोध, सेंधा नमक, मुनक्का और मुलैठीके साथ बकरीका दूध पकाकर आंखमें डालनेसे पीड़ा और लाली नष्ट होती है।

(प्रत्येक ओषधि १ तोला, दूध ६४ तोले, पानी २५६ तोले; एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावें और छान लें।)

*लगण—नेत्रोंके पलकमें बेरके बराबर एक गांठ हो जाती है, उसमें पीड़ा नहीं होती, परन्तु खाज आती है तथा वह कठिन होती है और स्वयं नहीं पकती।

इति रकारादिमिश्रप्रकरणम्





अथ लकारादिकषायप्रकरणम्

(६१९२) **लक्ष्मणामूलयोगः**

(यो. र. ; ग. नि. । वन्ध्या. ; यो. त. । त. ७५)

क्षीरेण लक्ष्मणायास्तु शिफां सम्यग्दिनत्रयम् ।
पीत्वा ऋतुमती नारी वन्ध्या शब्दं जहाति सा ॥

यदि ऋतुमती स्त्री ३ दिन तक लक्ष्मणाकी जड़को दूधमें पीस कर पिये तो बन्ध्यत्व नष्ट हो जाता है ।

(६१९३) **लघुपञ्चमूलयोगः**

(वै. म. र. । पटल ७)

ज्वरेषु मूत्रकृच्छ्रं चेत् कुमारीस्वरसं पिबेत् ।
कनीयः पञ्चमूलं वा गुह्यमेतच्चिकित्सितम् ॥

यदि ज्वरमें मूत्रकृच्छ्र हो जाय तो घृतकुमारीका रस या लघुपञ्चमूलका काथ पिलाना चाहिये ।

यह एक गुप्त प्रयोग है ।

(६१९४) **लघुपञ्चमूलादिक्काथः**

(यो. र. । विसर्पा.)

कनीयः पञ्चमूलस्य यववल्कलस्य वा ।
कषायः पित्तवीसर्पे पाने सेकेऽपि शस्यते ॥

लघु पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेली, बड़ी कटेली, गोखरु) का या जौकी भूसीका काथ पिलाने और उसीका अवसेक करनेसे पित्तज वीसर्प नष्ट होता है ।

लघुपुनर्नवादिक्काथः

(वृ. यो. त. । त. १५०)

प्र. स. ३८५० "पुनर्नवादि काथः" (६) देखिये ।

(६१९५) **लघुमञ्जिष्ठादिक्काथः (१)**

(वै. र. । वातरक्ता. ; वृ. यो. त. । त. ९१ ; यो. त. । त. ४१)

मञ्जिष्ठोग्रावरातिक्तानिशानिम्बामृतामरैः ।
सत्रिवृत्खदिरैः क्काथः सर्वकुष्ठानिलासृजे ॥

मजीठ, बच, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, हल्दी, नीमकी छाल, गिलोय, देवदारु, निसोत, और खैरसार समान भाग लेकर काथ बनावें ।

यह काथ हर प्रकारके कुष्ठ और वातरक्तको नष्ट करता है ।

लघुमञ्जिष्ठादिक्काथः (२)

(वै. र. । कुष्ठा.; वृ. यो. त. । त. १२०; यो. र. । वातरक्ता.)

प्र. सं. ४९८१ "मञ्जिष्ठादि काथः (लघु)" (६) देखिये ।

लघुमधुकादिफाण्टः

(यो. र. । तृष्णा.)

प्र. सं. ४९९९ "मधुकादि फाण्टः" (२) देखिये ।

लघुमाषादिक्वाथः

(ग. नि. । वाता. २४)

प्र. सं. ५०३४ "माषादिक्वाथः" देखिये ।

(६१९६) लघुरास्नादिक्वाथः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

रास्नात्रिकण्टशतपर्वमहौषधैश्च
भार्गीसपुष्करघनसुरदारुधान्यैः ।
क्काथो हितः सकलमारुतजिज्ज्वरेषु
स्यात् सन्निपात प्रभवेश्वतिदारुणेषु ॥

रास्ना, गोखरु, बांस, सोंठ, भरंगी, पोखरमूल, नागरमोथा, देवदारु और धनिया समान भाग लेकर क्काथ बनावें ।

यह क्काथ वातज और अति दारुण सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है ।

लघुरास्नादिक्वाथः (२)

(यो. चि. म. । अ. ४ ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

प्र. सं. ५८९० "रास्नापञ्चकम्" देखिये ।

(६१९७) लज्जालुयोगः (१)

(ग. नि. । अपस्मारा.)

प्रातरौषधकाले तु संपिबेन्नियमस्थितः ।
आजेन पयसा पिष्टां कृताञ्जलिशिफां बुधः ॥
अपस्मारविनाशाय निरभिष्यन्दि भोजनम् ॥

प्रातः काल बकरीके दूधमें लज्जावन्तीकी जड़ पीसकर पीने और अनभिष्यन्दि आहार करनेसे अपस्मार नष्ट हो जाता है ।

(६१९८) लज्जालुयोगः (२)

(यो. त. । त. ७६)

लज्जालुधातकी पुष्पमुत्पलं मधुलोध्रकम् ।
जलस्थया स्त्रिया पीतं गर्भपातं निवारयेत् ॥
पततं स्तम्भयेद्गर्भं कुलालकरमृत्तिका ॥

लज्जावन्तीकी जड़, धायके फूल, नीलोफर, मुलैठी और लोध समान भाग लेकर क्काथ बनावें ।

यदि स्त्री जलमें खड़ी हो कर इसे पिये तो गिरता हुवा गर्भ रुक जाता है ।

बरतन बनाते हुवे कुम्हारके हाथोंमें जो मिट्टी लग जाती है उसे पीनेसे भी गर्भपात रुक जाता है ।

(६१९९) लज्जावत्यादियोगः

(रा. मा. । स्त्रीरोगा.)

लज्जावतीशाल्मलीधातकीभि-
र्नीलाम्बुजक्षौद्रपयोन्विताभिः ।
पीताभिरन्तर्जलमास्थितायाः
स्त्रियो न गर्भस्य भवेन्निपातः ॥

लज्जावन्तीकी जड़, सेंभलकी छाल, धायके फूल और नील कमलको दूधमें पीस कर शहद मिला कर जलमें खड़े हो कर पीनेसे गर्भपात रुक जाता है ।

(६२००) लवङ्गादिक्वाथः

(यो. र.; वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

लवङ्गपथ्ययोः क्वाथः सैन्धवेनावधूलितः ।
पीतः प्रशमयत्याशु त्वजीर्णं रेचयत्यपि ॥

लौंग और हर्र समान भाग (१-१ तोला) ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें सेंधा नमकका चूर्ण मिलाकर पीनेसे विरेचन होता और अजीर्ण शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(६२०१) **लशुनयोगः** (१)

(व. से. । वातव्या.)

पिष्ट्वा सुसूक्ष्मं लशुनस्य कन्दं
घृतेन लिह्याद्घृतभोजनाशी।
तस्य प्रणश्यन्ति हि वातरोगाः
संस्कारहीनात्पुरुषादिवार्थः ॥

लहसनको अत्यन्त बारीक पीसकर घृतमें मिलाकर खाने और घृतयुक्त भोजन करनेसे वातज रोग नष्ट होते हैं।

(६२०२) **लशुनयोगः** (२)

(व. से. । अपस्मारा.)

तैलेन लशुनं सेव्यं पयसा च शतावरी।
ब्राह्मीरसश्च मधुना सर्वापस्मारभेषजम् ॥

तेलके साथ लहसन या दूधके साथ शतावर अथवा ब्राह्मीके रसमें शहद मिलाकर सेवन करनेसे अपस्मार नष्ट होता है।

(६२०३) **लशुनादिक्वाथः** (१)

(वै. म. र. । पट. १२)

लशुनबर्बरगुग्गुलुनागरै-
र्विबुधदारुयुतैः शृतमम्बु यत्।
ज्वलयति ज्वलनं कफकोपहृत्
पवनमाशु जयत्यतिगर्वितम् ॥

लहसन, भरंगी, गूगल, सोंठ और देवदारु समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ कफ और वायुको नष्ट करता तथा जठराग्निको बढ़ाता है।

(६२०४) **लशुनादिक्वाथः** (२)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

लशुनं तिक्तकं काण्डं भार्गी चातिविषा तथा।
नरमूत्रेण च क्वाथः सन्निपाते सुदारुणे ॥

लहसन, चिरायता, भरंगी और अतीस समान भाग लेकर सबको मनुष्यके मूत्रमें पकाकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ घोर सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है।

(६२०५) **लशुनादिस्वरसः**

(व. से. ; वृ. नि. र. । कर्णा.)

लशुनार्द्रकशिग्रूणां सुरङ्ग्या मूलकस्य च।
कदल्याः स्वरसः श्रेष्ठः कदूष्णः कर्णपूरणे ॥

लहसन,, अदरक, सहंजना, मकोय, मूली और केला; इनमेंसे किसी एकके स्वरसको मन्दोष्ण करके कानमें भरनेसे कर्णशूल नष्ट होता है।

(६२०६) **लाक्षाकूष्माण्डकल्कः**

(वृ. नि. र. । क्षयरोगा.)

कूष्माण्डकगिरोत्थेन रसेन परिपेषितम्।
लाक्षाकर्षद्वयं पीत्वा जयेद्रक्तक्षयं तथा ॥

पेठे (कुम्हेड़े) के गूदेके रसमें २॥ तोले लाखको पीस कर पीनेसे रक्तक्षय नष्ट होता है।

(६२०७) **लाक्षादिगणः**

(सु. सं. । सू. अ. ३८)

लाक्षारेवतकुटजाऽश्वमारकट्फलहरिद्रा-द्वयनिम्बसप्तच्छदमालत्यस्त्रायमाणा चेति ।
कषायस्तिक्तमधुरः कफपित्तार्तिनाशनः ।
कुष्ठक्रिमिहरश्चैव दुष्टव्रणविशोधनः ॥

लाख, अमलतास, इन्द्रजौ, कनेर, कायफल, हल्दी, दारुहल्दी, नीम, सतौना, मालती और त्रायमाणा; इन ओषधियोंके समूहको लाक्षादिगण कहते हैं ।

लाक्षादिगण कषाय, तिक्त, मधुर, कफ पित्त नाशक, कुष्ट और कृमिहर तथा दुष्ट व्रण-शोधक है ।

(६२०८) **लाजादिक्वाथः**

(वृ. नि. र. । दाहा.)

लाजाह्वचन्दनोशीरक्वाथोन्तः शर्करान्वितः ।
शीतः पीतो निहन्त्याशु दाहं पित्तज्वरं नृणाम् ॥

धानकी खील, लाल चन्दन और खस समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसे ठण्डा करके खांड मिला कर पीनेसे दाह और पित्तज्वर नष्ट होता है ।

(६२०९) **लेखनीयमहाकषायः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

मुस्तकुष्ठहरिद्रादारुहरिद्रावचातिविषा-कटुरोहिणीचित्रकचिरबिल्वहैमवत्य इति दशेमानि लेखनीयानि भवन्ति ।

नागरमोथा, कूठ, हल्दी, दारुहल्दी, बच, अतीस, कुटकी, चीता, करञ्ज और सफेद बच । ये दश ओषधियां लेखनीय हैं ।

(६२१०) **लोध्रादिक्वाथः**

(च. सं. । प्रमेहा. ३४)

लोध्राभयाकट्फलमुस्तकानां
विडङ्गपाठार्जुनधन्वनानाम् ।
कदम्बशालार्जुनदीप्यकानां
विडङ्गदार्वीधवशल्लकीनाम् ॥
चत्वार एते मधुना कषायाः
कफप्रमेहेषु निषेवणीयाः ॥

(१) लोध, हर्र, कायफल और नागरमोथा;
(२) बायबिड़ंग, पाठा, अर्जुन और धामन;
(३) कदम्बकी छाल, शाल, अर्जुन और अजवायन;
(४) बायबिड़ंग, दारुहल्दी, धव और शल्लकी;

उपरोक्त चारों प्रयोग कफज प्रमेहको नष्ट करते हैं । इनके काथमें शहद मिला कर सेवन करना चाहिये ।

(६२११) **लोध्रादियोगः**

(व. से. । अतिसारा.)

क्षीरपिष्टं पिबेल्लोध्रं यष्टयाह्वोत्पलमिश्रितम् ।
रक्तातिसारशमनं शर्करामधुयोजितम् ॥

लोध, मुलैठी और नीलोत्पलको दूधमें पीस कर उसमें खांड और शहद मिला कर पीनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है ।

इति लकारादिकषायप्रकरणम्



अथ लकारादिचूर्णप्रकरणम्

लघुगङ्गाधरचूर्णम्

(यो. र. । अतिसारा. ; वृ. यो. त. । त. ६४)

प्र. सं. १२३१ "गङ्गाधरचूर्णम्" देखिये ।

लघुगङ्गाधरचूर्णम्

(शा. सं. । खं. २ अ. ६)

प्रयोग संख्या १२३२ "गंगाधरचूर्णम्" देखिये ।

(६२१२) लघुचित्रकादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

दहनाजमोदसैन्धवनागरमरिचाम्लतक्रेण ।
सप्ताहादग्निकरं यदर्शोनाशनं परं कथितम् ॥

चीतामूल, अजमोद, सेंधा नमक, सोंठ, और मिर्च समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे खट्टी छाछके साथ सेवन करनेसे १ सप्ताहमें जठराग्नि दीप्त हो जाती है और अर्शका नाश होता है ।

(**मात्रा**--३ माशे ।)

(६२१३) लघुचेतकीयोगः

(यो. र. । रक्ताति.)

लघुचेतकिजीरके समे
मृदुभृष्टे च सुचूर्णितेऽर्पिते ।
सहतण्डुलवारिणा मतेऽति
सृतिघ्ने इति सिद्धयोग एषः ॥

छोटी चेतकी (काली) हर्र और जीरा समान भाग लेकर दोनोंको ज़रा भून कर चूर्ण बना लें ।

इसे चावलोंके पानीके साथ सेवन करनेसे अतिसार नष्ट होता है । यह एक सिद्ध योग है ।

(६२१४) लघुतालीसादिचूर्णम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

तालीसपत्रं मरिचं च विश्वा
श्यामायुतं चोत्तरभागवृद्ध्या ।
त्वक्पत्रकेणापि लवङ्गमेला
क्षौद्रं कणा चाष्टगुणा सिता च ॥
लिह्यात् प्रभाते श्वसने च कासे
प्लीहारुचिपीनसछर्दिहिक्काम् ।
शोफातिसारं ग्रहणीं च पाण्डुं
क्षयं निहन्यात् क्षतजं च यक्ष्मम् ॥

तालीसपत्र १ भाग, काली मिर्च २ भाग, सोंठ ३ भाग, काली निसोत ४ भाग, दालचीनी ५ भाग, तेजपात ६ भाग, लौंग ७ भाग, इलायची ८ भाग, पीपल ९ भाग और मिश्री सबसे आठ गुनी लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदमें मिलाकर प्रातःकाल चाटनेसे श्वास, खांसी, प्लीहा, अरुचि, पीनस, छर्दि, हिक्का, शोथ, अतिसार, ग्रहणी, पाण्डु, क्षय और क्षतज राजयक्ष्माका नाश होता है ।

(**मात्रा**--१। तोला)

लघुतालीसाद्यं चूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा.)

प्रयोग संख्या २३१० "तालीसादिचूर्णम्" देखिये ।

(६२१५) लघुवृद्धदारुकसमं चूर्णम्

(ग. नि. । श्लीपदा. २)

पिप्पलीत्रिफलादारुनागरं सपुनर्नवम् ।
भागैर्द्विपालिकैरेषां तत्समं वृद्धदारुकम् ॥
काञ्जिकेन पिबेच्चूर्णं कर्षमात्रप्रमाणतः ।
जीर्णे चापरिहारं स्याद्भोजनं सार्वकामिकम् ॥
श्लीपदं वातरोगांश्च हन्यात्प्लीहानमेव च ।
अग्निं च कुरुते घोरं भस्मकं च नियच्छति ॥

पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, सोंठ और पुनर्नवा १०-१० तोले तथा विधारामूल सबके बराबर लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

मात्रा—१। तोला ।

इसे कांजीके साथ सेवन करनेसे श्लीपद, वातरोग, प्लीहा और भस्मक रोग नष्ट होता तथा अग्नि दीप्त होती है ।

औषध पचने पर यथेच्छ आहार करना चाहिये किसी विशेष परहेजकी आवश्यकता नहीं है ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—३ माशे ।)

(६२१६) लघुवैश्वानरचूर्णम्

(वृ. यो. त. । त. ७१)

सिन्धूत्थपथ्यामगधोद्भववह्निचूर्ण-
मुष्णाम्बुना पिबति यः खलु नष्टवह्निः।
तस्याऽऽमिषेण सघृतेन सहान्नपानं
भस्मी भवत्यशितमात्रमपि क्षणेन ॥

सेंधा नमक, हर्र, पीपल और चीतामूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्य नष्ट होता और जठराग्नि इतनी प्रबल हो जाती है कि आमिष तथा घृतादि गुरु अन्न पान भी शीघ्र ही पच जाता है ।

(६२१७) लघुसुदर्शनचूर्णम्

(यो. र. ; वृ. नि. र. ; वै. र. । ज्वरा. ; वृ. यो. त. । त. ५९)

गुडूची पिप्पलीमूलं कणा तिक्ता हरीतकी ।
नागरं देवकुसुमं निम्बत्वक् चन्दनं तथा ॥
सर्वचूर्णस्य चार्धांशं कैरातं प्रक्षिपेत्सुधीः ।
एतत्सुदर्शनं नाम्ना लघु दोषत्रयापहम् ॥
ज्वरांश्च निखिलान्हन्यान्नात्र कार्या विचारणा॥

गिलोय, पीपलामूल, पीपल, कुटकी, हर्र, सोंठ, लौंग, नीमकी छाल और सफेद चन्दन १-१ भाग तथा चिरायता सबसे आधा लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण त्रिदोषनाशक है और समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(**मात्रा**— ३ माशे ।)

(६२१८) लघुहिङ्ग्वादिचूर्णम्

(यो. र.; वृ. नि. र. । उदररोगा.)

हिङ्गु त्रिकटुकं कुष्ठं यवक्षारोऽथ सैन्धवम् ।
मातुलुङ्गरसेनैव प्लीहशूलहरं परम् ॥

हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, कूठ, जवाखार और सेंधा नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे बिजौरे नीबूके रसके साथ सेवन करनेसे प्लीहा और शूलका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१॥ माशा ।)

(६२१९) लघ्वीमाईचूर्णम्

(वृ. नि. र. । अतिसारा.)

लघ्वीमाईमोचरसमाम्रबीजाश्मभेदकम् ।
धातकी पुष्पकं चैव तथातिविषकं स्मृतम् ॥
सर्वाणि शाणमानानि पृथक् ग्राह्याणि पण्डितैः।
अहिफेनं द्विशाणं स्याद्गैरिकं च द्विशाणकम् ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायाथ माषमानं तु दापयेत् ।
तण्डुलानां जले नैव ह्यामशूलातिसारके ॥
रक्तजेपि विशेषेण देयं सर्वातिसारके ।
प्रेमाख्य पण्डितेनैव ह्यनुभूतं पुनः पुनः ॥

छोटी माई, मोचरस, आमकी गुठलीकी गिरी, पखानभेद, धायके फूल और अतीस १-१ शाण (प्रत्येक ३॥। माशे), तथा अफीम और गेरु २-२ शाण ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

मात्रा—१। माषा ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—४ रत्ती ।)

इसके सेवनसे आमशूल, अतिसार और विशेषतः रक्तातिसार नष्ट होता है ।

यह प्रयोग अनेक बारका अनुभूत है ।

अनुपान—चावलोंका पानी ।

(६२२०) लवङ्गचतुःसमम्

(भै. र. । बाल रोगा., ज्वराति.)

जातीफलं त्रिदशपुष्पसमन्वितञ्च
जीरञ्च टङ्कणयुतं चरकैः प्रयुक्तम् ।
चूर्णानि माक्षिकसितासहितानि लीढ्वा
सामातिसारमखिलं गुरु हन्ति शूलम् ॥

जायफल, लौंग, जीरा और सुहागा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और खांडके साथ सेवन करनेसे आमातिसार और शूल नष्ट होते हैं ।

(६२२१) लवङ्गादिचूर्णम् (१)

(भै. र. । राजयक्ष्मा. ; र. र. ; यो. र. । राजयक्ष्मा. ; वै. र. । अरोचका. ; च. द. । राज; वृ. यो. त. । त. ८५; शा. सं. । खं. २ अ. ६; यो. चि. म. । अ. २, ग. नि. । चूर्णा. ३)

लवङ्गकक्कोलमुशीरचन्दनं
नतं सनीलोत्पलजीरकं समम्[1] ।
[2]त्रुटिः सकृष्णागुरुभृङ्गकेशरं
कणा सविश्वा नलदं सहाम्बुदम्[3] ॥
अहीन्द्रजातीफल[4]वंशलोचना
सिताष्टभागा[5] समसूक्ष्मचूर्णितम् ।
सुरोचनं तर्पणमग्निदीपनं
बलप्रदं वृष्यतमं त्रिदोषनुत् ॥
उरोविबन्धं तमकं गलग्रहं
सकासहिक्कारुचियक्ष्मपीनसम् ।
ग्रहण्यतीसारभगन्दरार्बुदं
प्रमेहगुल्मांश्च निहन्ति सत्वरम् ॥

---

१ कृष्णजीरकमिति पाठभेदः । १ जीरकद्वयमिति च पाठः ।

२ ' जलं स कृष्णा ' इति पाठान्तरम् ।

३ सहैलया इति पाठान्तरम् ।

४ तुषारजातीफलमिति पाठान्तरम् । ४ कर्पूरजातीफलमिति च पाठः ।

५ " सितार्द्धभागा " इति पाठान्तरम् ।

लौंग, कंकोल, खस, सफेद चन्दन, तगर, नीलोत्पल, सफेद जीरा, छोटी इलायची, अगर, दालचीनी, नागकेसर, पीपल, सोंठ, जटामांसी, नागरमोथा, अनन्तमूल, जायफल और बंसलोचन १-१ भाग तथा मिश्री ८ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण रोचक, तर्पण, अग्निदीपन, बलकारक, अत्यन्त वृष्य और त्रिदोषनाशक है तथा उरोविबन्ध (छातीकी जकड़ाहट), तमक श्वास, गलग्रह, खांसी, हिचकी, अरुचि, यक्ष्मा, पीनस, ग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, अर्बुद, प्रमेह, और गुल्मको शीघ्रही नष्ट कर देता है।

(६२२२) लवङ्गादिचूर्णम् (२)

(धन्व.; र. र. । ग्रहण्य.)

लवङ्गातिविषामुस्तं बिल्वं पाठाथ शाल्मली ।
जीरकं धातकीपुष्पं लोध्रेन्द्रयवबालकम् ॥
धान्यकं सर्जकं शृङ्गी पिप्पली विश्वभेषजम् ।
समङ्गा यावशूकं च सैन्धवं सरसाञ्जनम् ॥
समभागानि चैतानि भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
शमयेदग्निमान्द्यश्च सङ्ग्रहग्रहणीगदम् ॥
नानावर्णमतीसारं सशोथं पाण्डुकामलम् ।
इदमष्ठीलिकां हन्ति कुष्ठं कोष्ठगतं ज्वरम् ॥

लौंग, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, पाठा, सेंभलकी छाल, जीरा, धायके फूल, लोध, इन्द्रजौ, सुगन्धबाला, धनिया, राल, काकड़ासिंगी, पीपल, सोंठ, मजीठ, जवाखार, सेंधा नमक और रसौत समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे अग्निमांद्य, संग्रहणी, नानावर्ण का अतिसार, शोथ, पाण्डु, कामला, अष्ठीलिका, कुष्ठ और ज्वरका नाश होता है।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये।

(६२२३) लवङ्गादिचूर्णम् (३)

(भै. र. । गुल्मा.)

लवङ्गदन्तीत्रिवृता यमानी
शुण्ठीवचाधान्यक चित्रकाणि ।
फलत्रयं मागधिका च कट्वी
द्राक्षा चवी गोक्षुरयावशूकम् ॥
एलाजमोदा कुटजस्य बीजं
विधाय चूर्णानि समान्यमीषाम् ।
खादेत्ततो माषत्रयं हिताशी
कोष्णं जलं चानु पिबेत् प्रयत्नात् ॥
निहन्ति गुल्मं सरुजं सदाह-
मर्शांसि शोथांश्च तथामवातम् ।
सर्वोदराण्येव चिरोत्थितानि
चूर्णं लवङ्गादिकमाशु हन्ति ॥

लौंग, दन्तीमूल, निसोत, अजवायन, सोंठ, बच, धनिया, चीता, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल, कुटकी, मुनक्का, चव, गोखरु, जवाखार,, इलायची, अजमोद और इन्द्रजौ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

मात्रा—३ माशा।

अनुपान—उष्ण जल।

इसके सेवनसे पीड़ा और दाहयुक्त गुल्म, अर्श, शोथ, आमवात और समस्त पुराने उदरविकार शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(६२२४) **लवङ्गादिचूर्णम्** (४)

(यो. चि. म. । अ. २)

लवङ्गकङ्कोलकणामहौषधं
सचन्दनैला घनवंशलोचनम् ।
उशीरकृष्णागरुनागकेसरैः
पलानि जातीफलचन्द्रमांसिका ॥
शतावरीगोक्षुरकाश्वगन्धा
सत्वं गुडूच्यास्तगरं समांशम् ।
सशर्करं चूर्णमिदं प्रमेहान्
संसेव्यतं विंशतिरत्र हन्ति ॥

लौंग, कंकोल, पीपल, सोंठ, सफेद चन्दन, इलायची, नागरमोथा, बंसलोचन, खस, अगर, नागकेसर, जायफल, कपूर, जटामांसी, शतावर, गोखरु, असगन्ध, गिलोयका सत और तगर समान भाग तथा खांड सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे २० प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(६२२५) **लवङ्गादिचूर्णम्** (५)

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

शाणद्वयं स्यात्तु लवङ्गमेला
जातीफलं कोलं सुनागफेनम् ।
माषप्रमाणं सकलं विचूर्ण्य
शाणं कवोष्णेन जलेन पीतम् ॥
विषूचिकां हन्ति सुदारुणां च
शूलातिसारौ वमथुः प्रसक्तः ॥

लौंग और छोटी इलायची २-२ शाण (प्रत्येक ७॥ माशे), जायफल ७॥ माशे और अफीम १। माशा लेकर चूर्ण बनावें ।

मात्रा--३॥ माशे ।

अनुपान--मन्दोष्ण जल ।

इसके सेवनसे भयंकर विसूचिका तथा शूल, अतिसार और वमनका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा— १ से २ माशे तक)

लवङ्गादिचूर्णम् (वृद्ध) (६)

(यो. चि. म. । अ. २)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६२२६) **लवङ्गाद्यं चूर्णम्** (१)

(ग. नि. । चूर्णा.)

लवङ्गकङ्कोलकणावराङ्ग
तालीसचव्यत्रुटिग्रन्थिकौन्त्यः ।
शृङ्ग्येलवालुं लवली तुरङ्गी
सकेसरा सोषण पत्रिका च ॥
द्विदाडिमं तिन्तिडिकोलमम्लं
रोध्रत्वचा तृणभवं च तैलम् ।
कर्षांशमानानि पलं च शुण्ठ्याः
सिता समांशा कलचन्द्रसञ्ज्ञः ॥
लवङ्गनामा रुचिपक्तिदाता
सुगन्धी हृद्यः क्षयरोगहन्ता ।
बलाग्निसंवर्धन एष चूर्णो
वरः प्रयोज्यो नृपतेर्हिताय ॥

लौंग, कंकोल, पीपल, दालचीनी, तालीसपत्र, चव, छोटी इलायची, पीपलामूल, रेणुका, काकड़ा-सिंगी, एलबालुक, लवली (हरफारेवड़ी), असगन्ध, नागरमोथा, काली मिर्च, जावत्री, अनारदाना, अनारकी छाल, तिन्तड़ीक, खट्टे बेर, लोध और

तुनका तेल १।-१। तोला, सोंठ ५ तोले और मिश्री सबके बराबर लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण रोचक, अग्निवर्द्धक, सुगन्धी, हृद्य, क्षयनाशक, और बलवर्द्धक है। यह राजाओंको सेवन कराने योग्य औषध है।

(६२२७) लवङ्गाद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । चूर्णा.)

लवङ्गजातीफलपिप्पलीनां
भागं समं कर्षमितं प्रकुर्यात् ।
पलार्धमेकं मरिचस्य दद्या-
त्पलानि चत्वारि महौषधस्य ॥
सितासमं चूर्णमिदं प्रयोजये-
त्प्रसह्य रोगान्प्रबलान्निहन्यात् ।
कासक्षयारोचकमेहगुल्म-
मर्शांसि चोग्रान्ग्रहणीप्रदोषान् ॥
हृत्कण्ठनासावदनप्रबोधं
करोति सन्दीपयते च वह्निम् ॥

लौंग, जायफल और पीपल, १।-१। तोला, मिर्च २॥ तोले; सोंठ २० तोले और मिश्री सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे खांसी, क्षय, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, अर्श, और संग्रहणीका नाश होता तथा हृदय, कण्ठ और मुख शुद्ध हो जाता है एवं अग्नि दीप्त होती है।

(**मात्रा**—३-४ माशे।)

(६२२८) लवणत्रितयादिचूर्णम्.

(शा. सं. । खं. २ अ. ६)

लवणत्रितयं क्षारौ शतपुष्पाद्वयं वचा ।
अजमोदाजगन्धा च हपुषा जीरकद्वयम् ॥
मरिचं पिप्पलीमूलं पिप्पली गजपिप्पली ।
हिङ्गुश्च हिङ्गुपत्री च सटी पाठोपकुञ्चिका ॥
शुण्ठीचित्रकचव्यानि विडङ्गं चाम्लवेतसम् ।
दाडिमं तिन्तिडीकं च त्रिवृद्दन्ती शतावरी ॥
इन्द्रवारुणिका भार्गी देवदार्वर्यवानिका ।
कुस्तुम्बरुस्तुम्बरुणी पौष्करं बदराणि च ॥
शिवा चेति समांशानां चूर्णमेकत्र कारयेत् ।
भावयेदार्द्रकरसैर्बीजपूररसैस्तथा ॥
तत्पिबेत्सर्पिषा जीर्णमद्येनोष्णोदकेन वा ।
कोलाम्भसा वा तक्रेण दुग्धेनौष्ट्रेण मस्तुना ॥
यकृत्प्लीहकटीशूलगुदकुक्षिहृदामयान् ।
अर्शोविष्टम्भमन्दाग्निगुल्माष्ठीलोदराणि च ॥
हिक्काध्मानश्वासकासाञ्जयेदेतन्न संशयः ।
एतैरेवौषधैः सम्यग् घृतं वा साधयेद्भिषक् ॥

सेंधा नमक, काला नमक, बिड नमक, जवाखार, सज्जीखार, सौंफ, सोया, बच, अजमोद, बनतुलसी, हपुषा, सफेद और काला जीरा, काली मिर्च, पीपलामूल, पीपल, गजपीपल, हिंगुपत्री, हींग, कचूर, पाठा, कलौंजी, सोंठ, चीतामूल, चव, बायबिड़ंग, अम्लवेत, अनारदाना, तिन्तड़ीक, निसोत, दन्तीमूल, शतावर, इन्द्रायणकी जड़, भरंगी, देवदारु, अजवायन, कुस्तुम्बरु, धनिया, पोखरमूल, बेर और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे अदरक तथा बिजौरे नीबूके रसकी एक एक भावना देकर सुखा लें।

इसे घी, पुराने मद्य, उष्ण जल, बेरके क्वाथ, तक्र, ऊंटनीके दूध और मस्तुमें से किसी एकके साथ सेवन करना चाहिये।

(मात्रा—२-३ माशे।)

यह चूर्ण यकृत, प्लीहा, कमरका दर्द, गुद-रोग, उदर रोग, हृद्रोग, अर्श, विष्टम्भ, अग्निमांद्य गुल्म, अष्ठीला, हिचकी, अफारा, श्वास और खांसीको नष्ट कर देता है।

नोट—इन्हीं ओषधियोंसे घृत सिद्ध करके भी सेवन कराया जा सकता है।

लवणभास्करं चूर्णम्

(यो. त. । त. २४; ग. नि. । चूर्णा. ; वृ. यो. त. । त. ७१; यो. चि. म. । अ. २; वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

प्रयोग संख्या ४८३३ "भास्करलवण चूर्णम्" देखिये।

(६२२९) लवणयोगः

(वृ. मा. । शूला. ; वृ. नि. र. । शूला.)

लवणत्रयसंयुक्तं पञ्चकोलं सरामठम्।
सुखोष्णेनाम्बुना पातुं कफशूले प्रदापयेत् ॥

सेंधा नमक, काला नमक, बिड नमक, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफज शूल नष्ट होता है।

लवणादिक्षारः

(व. से. । अर्शो.)

प्रयोग सं. ७८ 'अर्कक्षार' देखिये।

(६२३०) लवणादियोगः (१)

(ग. नि. । उदरा. ३२)

लवणं राजिकामिश्रं समं गोमूत्रमिश्रितम्।
त्रिशाणं हन्ति पीतं हि यकृत्प्लीहोदराण्यपि॥

सेंधा नमक और राई समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे यकृत, प्लीहा और उदर रोगोंका नाश होता है।

मात्रा—३ शाण।

(६२३१) लवणादियोगः (२)

(व. से. । विषरोगा.)

लवणानि त्रिवृद्दन्ती विशाला त्र्यूषणं निशा।
मञ्जिष्ठा मधुकं भृङ्गं ह्यगदः सर्वकर्म्मकृत् ॥

पांचों नमक, निसोत, दन्तीमूल, इन्द्रायणकी जड़, सोंठ, मिर्च, पीपल, हल्दी, मजीठ, मुलैठी और अगर समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह अगद हर प्रकारके विषको नष्ट करता है।

(इसे पान, लेप, नस्य, आदि द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।)

(६२३२) लवणोत्तमादिचूर्णम्

(वृ. नि. र. ; भै. र. । अर्शो.; च. द. । अर्शो.; हा. सं. । स्था. ३ अ. ११)

लवणोत्तमवह्निकलिङ्गयवान्।
चिरबिल्वमहापिचुमर्दयुतान्।
पिब सप्तदिनं मथितालुलितान्
यदि मर्दितुमिच्छसि पायुगदान् ॥

सेंधा नमक, चीता, इन्द्रजौ, जौ, करञ्जकी गिरी, और बकायनके बीज समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे सात दिन तक तक्रके साथ सेवन करनेसे अर्श नष्ट हो जाती है।

(मात्रा—२-३ माशे।)

(६२३३) **लशुनयोगः**

(ग. नि.। उदररोगा.)

लशुनं पिप्पलीमूलमभयां चैव भक्षयेत्।
पिबेद्गोमूत्रगण्डूषं प्लीहरोगविमुक्तये ॥

ल्हसन, पीपलामूल और हर्र समान भाग लेकर सबको एकत्र पीस लें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे प्लीहा रोग नष्ट होता है।

(६२३४) **लशुनाद्यं चूर्णम्**

(वृ. नि. र.। अजीर्णा.)

लशुनजीरकसैन्धवसञ्चलं
त्रिकटुरामठचूर्णमिदं समम्।
सपदि निम्बुरसेन विषूचिकां
हरति भो रतिभोगविचक्षणे ॥

ल्हसन, जीरा, सेंधा, सञ्चल (काला नमक), सोंठ, मिर्च, पीपल और हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे नीबूके रसके साथ सेवन करनेसे विसूचिकाको तुरन्त आराम होता है।

लाईचूर्णम्

रसप्रकरणमें देखिये।

(६२३५) **लाक्षादिचूर्णम्** (१)

(वा. भ.। चि. अ. १८)

लाक्षादन्तीमधुरसावरादीपिपाठाविडङ्गं
मत्यक्पुष्पीत्रिकटुरजनीसप्तपर्णाटरूषम्।
रक्तानिम्बं सुरतरुकृतं पञ्चमूल्यौ च चूर्णं
पीत्वा मासं जयति हितभुग्गव्यमूत्रेण कुष्ठम् ॥

लाख, दन्तीमूल, मूर्वा, हर्र, बहेड़ा, आमला, चीता, पाठा, बायबिडंग, चिरचिटा (अपामार्ग), सोंठ, मिर्च, पीपल, हल्दी, सतौना, बासा, मजीठ, नीम, देवदारु और दशमूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करने और पथ्यपूर्वक रहनेसे १ मासमें कुष्ठ नष्ट हो जाता है।

(६२३६) **लाक्षादिचूर्णम्** (२)

(यो. र.। उरःक्षत; व. से.। क्षतक्षय.)

लाक्षाचूर्णं सुष्ठुकृतं क्षौद्राज्येनान्वितं क्षीरम्।
शमयति शोषोद्भूतं वमनं रक्तस्य सिद्धमिव ॥

दूधमें शहद और घी मिलाकर उसके साथ लाखका चूर्ण सेवन करनेसे शोषजनित रक्तकी वमन नष्ट होती है।

(६२३७) **लाक्षादियोगः** (१)

(यो. र.। रक्तपित्ता.; वृ. नि. र. ; व. से.। रक्तपित्ता.)

क्षीरेण लाक्षां मधुमिश्रितेन
प्रपीय जीर्णे पयसाऽन्नमद्यात्।
सद्या निहन्याद्रुधिरं क्षतोत्थम्
कान्तार्जुनानामथवापि कल्कः ॥

दूधमें शहद मिलाकर उसके साथ लाखका चूर्ण फांकने और औषध पचने पर दूध भात खानेसे क्षतज रक्तस्राव शीघ्र ही बन्द हो जाता है।

सफेद दूब और अर्जुन (के बीजों) का कल्क सेवन करनेसे भी रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

(६२३८) **लाक्षादियोगः (२)**

(ग. नि. । अर्शो.)

लाक्षा हरिद्रा मञ्जिष्ठा मधुकं नीलमुत्पलम् ।
अजाक्षीरेण पीतानि रक्तजानां विनाशनम् ॥

लाख, हल्दी, मजीठ, मुलैठी और नीलोत्पल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे बकरीके दूधके साथ पीनेसे रक्तार्शका नाश होता है ।

(६२३९) **लाङ्गल्यादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । वातरक्त.)

लाङ्गल्याः कन्दचूर्णं त्रिकटुक-
लवणो योगराजोभिमिश्रं
गव्येनालिह्य चूर्णं मधुघृत-
सहितं चाक्षमात्रं हिताशी ।
नानारुक्पाददोषस्फुटन-
विमथनैर्मर्मजं तत्प्रकृष्टं-
दुःसाध्यं वातरक्तं जयति स
नियतं कुष्ठमप्युग्ररूपम् ॥

लाङ्गली (कलियारी) की जड़, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे योगराजगूगलमें मिला कर उसे गायके घी और शहदके साथ खाने और पथ्यपूर्वक रहनेसे अनेक प्रकारकी व्यथा, पैरोंका फटना, मर्मगत पीड़ा आदि उपद्रवों युक्त घोर वातरक्त और कुष्ठका नाश होता है ।

चूर्णकी मात्रा—१। तोला । (व्यवहारिक मात्रा १॥-२ माशे ।)

(६२४०) **लाजादिचूर्णम्**

(वृ. मा. । बालरोगा.)

लाजा सयष्टिमधुकं शर्करा क्षौद्रमेव च ।
तण्डुलोदकसंयुक्तं क्षिप्रं हन्ति प्रवाहिकाम् ॥

धानकी खील, मुलैठी और खांड समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ खिला कर अनुपानमें चावलोंका पानी पिलानेसे बालकोंकी प्रवाहिका शीघ्रही नष्ट हो जाती है ।

लाविकाचूर्णम्

(र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६२४१) **लोध्रादिचूर्णम्**

(वृ. मा. । अतिसारा. ; वृ. नि. र. ; व. से. ; यो. र. ; भा. प्र. । अतिसा.)

सलोध्रधातकीबिल्वं मुस्ताम्रास्थिकलिङ्गकम् ।
पिबेन्माहिषतक्रेण पक्वातीसारनाशनम् ॥

लोध, धायके फूल, बेलगिरी, नागरमोथा, आमकी गुठली और इन्द्रजौ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे भैंसके तक्रके साथ सेवन करनेसे पक्वातिसार नष्ट होता है ।

(६२४२) **लोध्रादियोगः (१)**

(यो. र.; वृ. नि. र. । बालरोगा.)

लोध्रेण पिप्पली बाला बालकातिसृतौ हितः ।
क्षीरसो माक्षिकयुतो धातकी कुसुमैः समम् ॥

(१) लोध्र और छोटी पीपल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण बालकोंके अतिसारको नष्ट करता है।

(२) श्रीवेष्ट (धूपसरल) और धायके फूल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिला कर चटानेसे बालकोंका अतिसार नष्ट होता है।

(६२४३) लोध्रादियोगः (२)

(यो. र. । अतिसारा.)

लोध्रेन्द्रयवधान्याकधात्रीह्रीबेरमुस्तकम् ।
मधुना लेहयेद्बालं ज्वरातीसारनाशनम् ॥

लोध, इन्द्रजौ, धनिया, आमला, सुगन्धबाला और नागरमोथा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिला कर चटानेसे बालकोंका ज्वरातिसार नष्ट होता है।

(६२४४) लोलिम्बराजचूर्णम्

(वै. र. । अग्निमांद्या.)

शुण्ठीबाणमिता कणार्णवमिता
दीप्यायवान्योः क्रमाद्भागानां त्रितयं
द्वयं च लवणाद्भागः शिवैतत्समा ।
कोष्ठाटोपरुगामगुल्ममलहृल्लोलिम्ब
राजोदितश्चूर्णोऽद्रीनपि भस्मसात्प्रकुरुते
किं भोजनं भोजनाः ॥

सोंठ ५ भाग, पीपल ४ भाग, अजमोद ३ भाग, अजवायन २ भाग, सेंधा नमक १ भाग तथा हर्र १ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण पेटके अफारे, शूल, आम, गुल्म और मलको नष्ट करता है।

इसके प्रभावसे पर्वत भी पच जाता है फिर साधारण आहारकी तो बात ही क्या है।

लौहाभयाचूर्णम्

(रसें. चि. म. । अ. ९)

रस प्रकरणमें देखिये।

इति लकारादिचूर्णप्रकरणम्



अथ लकारादिगुटिका-प्रकरणम्

लघुकामेश्वरगुटी

(यो. चि. म. । अ. ३)

रस प्रकरणमें देखिये।

लघुकामेश्वरमोदकः

(धन्व. । वाजीक.)

रस प्रकरणमें देखिये।

लघुपानीयभक्तवटी

(र. रा. सु. । अग्निमां)

प्र. सं. ४३२६ पानीयभक्तवटी (४) देखिये।

(६२४५) लघुसूरणमोदकः (१)

(यो. र. । अर्शो.)

कणामरिचविश्वाग्निसूरणैस्तु गुडैः क्रमात् ।
द्विगुणैर्मोदकोऽर्शोघ्नः परं पाचनदीपनः ॥

पीपल १ भाग, काली मिर्च २ भाग, सोंठ ४ भाग, चीतामूल ८ भाग, शूरण (जिमीकन्द) १६ भाग और गुड़ ३२ भाग लेकर गुड़में समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर (६-६ माशेके) मोदक बना लें।

ये मोदक अर्शनाशक और अत्यन्त दीपन पाचन हैं।

लघुसूरणमोदकः (२)

(वृ. मा. । अर्श. ; यो. र.)

प्र. सं. ५१६३ "मरिचादिमोदक" देखिये

लघुसौभाग्यवटी

(र. रा. सु. । सन्निपा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(६२४६) लवङ्गादिगुटिका

(लवङ्गामृतवटी)

(वै. र. । अग्निमांद्य. ; वृ. नि. र. । अजीर्ण.)

सर्वार्धं देवपुष्पं मरिच-
मगधयोस्त्रिस्त्रिकर्षं यवान्यो-
रष्टावष्टाग्नितोपि त्रिपटुरथ
पलं ग्रन्थिकं सप्तकर्षम् ।
शुण्ठीपथ्यादशाक्षामलक-
कलिफलाजाजिचव्यानि
षट् षट् सुत्राममीतिपात्रं नख-
मितमखिलं चूर्णितं वस्त्रपूतम् ॥
त्रिर्भाव्यं चार्द्रकस्य द्रवम-
भिविधिवन्माषयुग्मप्रमाणा
बद्धा चुक्रेण सिद्धा प्रभवति
गुटिकासौ लवङ्गामृताख्या ।
भुक्ता नक्ताम्बुयुक्ता सकल-
सुखकरी दीप्तिमग्निं विधत्ते
वृष्यायुष्यावपुष्यामयनिचय
हृति ख्याति मुख्या विभाति ॥

काली मिर्च ३॥। तोले, पीपल ३॥। तोले, अजवायन १० तोले, चीतामूल १० तोले, सैंधा नमक ५ तोले, संचल ५ तोले, विड लवण ५ तोले, पीपलामूल ८॥। तोले, सोंठ १२॥ तोले, हर्र १२॥ तोले, आमला ७॥ तोले, बहेड़ा ७॥ तोले, जीरा ७॥ तोले, चव ७॥ तोले और भांग २५ तोले तथा लौंग सबसे आधी (६५ तोले ७॥ माशे) ले कर सबका कपड़छन चूर्ण बनावें और उसे अदरक तथा तिन्तड़ीक (या अम्लबेत) के रसकी ३-३ भावना देकर २॥-२॥ माशेकी गोलियां बनालें।

इन्हें बासी पानीके साथ सेवन करनेसे अग्नि-दीप्त होती है।

ये गोलियां वृष्य, आयुष्य वर्द्धक और अनेक रोग नाशक हैं।

(६२४७) लवङ्गादिगुटी (१)

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

लवङ्गत्रिकटूनागभृङ्गीक्षुद्राबिभीतकैः ।
कन्यारसेन गुटिका कार्या श्वासनिवारिणी ॥

लौंग, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध बछनाग, भंगरा, कटेली और बहेड़ा समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे घृतकुमारीके रसमें घोटकर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे श्वास नष्ट होता है।

(६२४८) लवङ्गादिगुटी (२)

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

लवङ्गमरिचे तुल्ये त्रिफलारसभाविते ।
बब्बूलत्वचया कार्या गुटी श्वासकफापहा ॥

लौंग और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर त्रिफलाके क्वाथ तथा कीकर (बबूल) की छालके रसमें एक एक दिन घोट कर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे श्वास और कफका नाश होता है।

(६२४९) लवङ्गादिवटी (१)

(रसे. सा. सं. । अग्निमांद्या. ; र. चं. ; भै. र. ; र. रा. सु. । अग्निमान्द्या.)

लवङ्गशुण्ठीमरिचानि भृष्ट-
सौभाग्यचूर्णानि समानि कृत्वा ।
भाव्यान्यपामार्गहुताशवारा
प्रभूतमांसादिकजारणाय ॥

लौंग, सोंठ, मिर्च और सुहागेकी खील समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर उसे १-१ दिन अपामार्ग (चिरचिटे) और चीतेके क्वाथमें घोट कर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे जठराग्नि दीप्त होती है।

(६२५०) लवङ्गादिवटी (२)

(वै. जी. । विलास ३)

तुल्या लवङ्गमरिचाक्षफलत्वचः स्युः
सर्वैः समो निगदितः खदिरस्य सारः ।
बब्बूलवृक्षजकषाययुतं च चूर्णं
कासान्निहन्ति गुटिका घटिकाष्टकान्ते ॥

लौंग, काली मिर्च और बहेड़ेके फलकी बकली १-१ भाग तथा खैरसार (कत्था) सबके बराबर लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें और उसे बबूलकी छालके रसमें घोट कर गोलियां बना लें।

ये गोलियां केवल ८ घड़ीमें ही खांसीको नष्ट कर देती हैं।

लवङ्गादिवटी (३) (बृहत्)

(रसे. सा. सं. । अग्निमां.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(६२५१) लवङ्गाद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

पलार्धं तु लवङ्गस्य तालीसत्रुटिवल्कलम् ।
यवानीचव्यकाजाजीधान्यकं च पलोन्मितम् ॥
द्विपलं मरिचं कृष्णा वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ।
कृष्णायाश्च जटा शुण्ठी पथ्या च कुडवोन्मिता ॥
एतत्सर्वं समाहृत्य त्रिगुणेन गुडेन तु ।
ततोऽर्धपलिकाः कार्या गुटिकास्तु भिषग्वरैः ।
एकैकशस्तास्तु पिबेन्मद्यतक्ररसासवैः ।
भक्षिता येन तस्यार्शः पाण्डुहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥
कासगुल्मारुचिश्वासहिक्कामयगलग्रहान् ।
ज्वरातिसारं तन्द्रां च सेविता हन्ति वेगतः ॥

लौंग, तालीसपत्र, छोटी इलायची और दालचीनी २॥-२॥ तोले; अजवायन, चव, जीरा और धनियां ५-५ तोले; काली मिर्च, पीपल, तिन्तड़ीक और अम्लबेत १०-१० तोले तथा पीपलामूल, सोंठ और हर्र २०-२० तोले लेकर चूर्ण बनावें एवं उसे सबसे ३ गुने गुड़में मिला कर २॥-२॥ तोलेकी गुटिका बना लें।

(व्यवहारिक मात्रा —१–१॥ तोला ।)

इनके सेवनसे अर्श, पाण्डु, हृदयशूल, पार्श्व-शूल, कास, गुल्म, अरुचि, श्वास, हिचकी, गल-ग्रह, ज्वरातिसार और तन्द्राका नाश होता है।

अनुपान—मद्य, तक्र अथवा आसव ।

लवङ्गाद्यं मोदकम्

(भै. र. । अग्निमांद्या.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६२५२) लवणवटी.

(वा. भ. । चि. अ. १० ग्रहण्य.)

पटूनि पञ्च द्वौ क्षारौ मरिचं पञ्चकोलकम् ।
दीप्यकं हिङ्गु गुलिका बीजपूररसे कृता ।।
कोलदाडिमतोये वा परं पाचन दीपनी ॥

पांचों नमक (सेंधा नमक, संचल, बिड नमक, सामुद्र नमक, काच लवण), जवाखार, सज्जीखार, काली मिर्च, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, अजवायन और हींग समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसे बिजौरे नीबूके रस या बेर अथवा अनारके रसमें घोट कर गोलियां बनालें ।

ये गोलियां अग्नि दीपनी और पाचनी हैं ।

(६२५३) लाक्षादिवटी

(रसे. सा. स. ; र. रा. सु. । कृम्य. ; र. चं. । कृमि.)

लाक्षाभल्लातश्रीवासश्वेतापराजिताशिफा ।
अर्जुनस्य फलं पुष्पं विडङ्गमजगुग्गुलुः ।।
एभिः कीटाश्च शाम्यन्ते तिष्ठतापि गृहे सदा ।
भुजङ्गा मूषका दंशाः सङ्गनामा मतङ्गजाः ॥
दूरादेव पलायन्ते किन्न कीटाश्च येऽपराः ॥

लाख, भिलावा, श्रीवास (धूपसरल-राल), सफेद कोयलकी जड़, अर्जुनके फल और फूल, बायबिड़ंग, मेंढासिंगी और गूगल समान भाग ले कर यथा विधि गोलियां बनावें।

इन्हें घरमें रखनेसे (इनकी गंधसे) सांप, चूहे और डांस आदि कीट भाग जाते हैं ।

(६२५४) लाङ्गल्यादिमोदकः

(वृ. नि. र. । अर्शो.)

लाङ्गलीन्द्रयवाकृष्णावह्न्यपामार्गतण्डुलाः ।
भूनिम्बसैन्धवं तुल्यं सर्वस्य द्विगुणं गुडः ।।
भक्षयेत्कर्षमात्रं तु श्लेष्मोद्भूतार्शसाञ्जये ।।

लाङ्गली (कलियारी), इन्द्रजौ, पीपल, चीता, चिरचिटेके चावल, चिरायता और सेंधा नमकका चूर्ण १–१ भाग तथा गुड़ सबसे २ गुना लेकर सबको एकत्र मिलाकर कूट लें।

मात्रा—१। तोला ।

इसके सेवनसे कफज अर्शका नाश होता है ।

लीलावतीवटी

(र. रा. सु. ; वै. र. । ज्वरा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

इति लकारादिगुटिकाप्रकरणम्



अथ लकारादि-गुग्गुलु-प्रकरणम्

(६२५५) लाक्षागुग्गुलुः

(भै. र. । भग्ना. ; वृ. मा. ; च. द. । भग्ना. ४८; वृ. यो. त. । त. ११४; व. से. ; यो. र. ; ग. नि. ; धन्व. । भग्ना.)

लाक्षास्थिसंहृत्ककुभाश्वगन्धा-
श्चूर्णीकृता नागबला पुरश्च ।
सम्भग्नमुक्तास्थिरुजं निहन्या-
दङ्गानि कुर्यात्कुलिशोपमानि ॥
(अत्रान्यत्रोपदृष्टत्वात्तुल्यश्चूर्णेन गुग्गुलुः ।)

लाख, हड़संहारी, अर्जुनकी छाल, असगन्ध और नागबला समान भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर गूगलमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह कूटें ।

इसके सेवनसे अस्थिभग्न और सन्धिच्युत (जोड़से उतरी हुई) अस्थिकी पीड़ा नष्ट हो कर वह अङ्ग दृढ़ हो जाता है ।

लोहगुग्गुलुः (१)

(वृ. यो. त. । त. ९५; यो. र. ; र. चं. । परिणामशूला.)

प्र. सं. २४२२ "त्रिफलागुग्गुलु" देखिये ।

(६२५६) लोहगुग्गुलुः (२)

(यो. र. ; व. से. ; र. चं. । रसायना.)

अयः पलं गुग्गुलुरत्र योज्यः
पलत्रयं व्योष पलानि पञ्च ।
पलानि चाष्टौ त्रिफलारजश्च
कर्षं लिहन्यात्यमरत्वमेव ॥

लोह भस्म ५ तोले, शुद्ध गूगल १५ तोले, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) २५ तोले, और त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) ४० तोले ले कर सबको एकत्र मिला करे अच्छी तरह कूटें ।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे अकाल मृत्यु नहीं होती ।

(६२५७) लोहादिगुग्गुलुः

(यो. र. । नेत्ररोगा.)

अयश्च यष्टीत्रिफलाकणानां
चूर्णानि तुल्यानि पुरेण नित्यम् ।
सर्पिर्मधुभ्यां सह भक्षितानि
सर्वाणि शुक्राणि निहन्ति शीघ्रम् ॥

लोह भस्म, मुलैठी, हर्र, बहेड़ा, आमला और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिला कर कूटें ।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे नेत्र-शुक्रका नाश होता है ।

(६२५८) लोहगुग्गुलुः

(र. र. । गुल्मा.)

स्नुहीत्वक्खादिरं काष्ठं काष्ठोदुम्बरजं फलम् ।
वल्कलञ्च पृथक्पञ्चपलमष्टगुणे जले ॥
पक्त्वा पादावशेषेण लौह पञ्च पलं पचेत् ।
पिण्डी भावे द्रवे किञ्चिदवशिष्टे तु निक्षिपेत् ॥
शोभाञ्जनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम् ।
करीषाग्नौ समुद्धृत्य हरितालं पलद्वयम् ॥

चूर्णितं द्विपलं तच्च गुग्गुलोर्घृतपिट्टितम् ।
एकीकृत्य पचेद्भूयो यावल्लेहत्वमागतम् ॥
गुल्मे कुष्ठे क्षये स्थौल्ये शोथे शूले च पाकजे ।
पाण्डुरोगे प्रमेहे च वातरोगे तथैव च ॥
सिद्धमेतत्प्रयुञ्जीत वलीपलितनाशनम् ॥

स्नुही (थूहर-सेंड) की छाल, खैरकी लकड़ी, कठूमरके फल और कठूमरकी छाल २५-२५ तोले लेकर सबको एकत्र कूट कर ८ गुने (१६ गुने) पानीमें पकावें । जब चतुर्थांश जल शेष रहे तो छान कर उसमें २५ तोले लोहभस्म मिला कर पुनः पकावें । जब वह गाढ़ा हो जाय तो उसमें सहंजनेकी जड़के कल्कमें लपेट कर पुटपाक विधिसे कण्डोंकी अग्निमें पकाई हुई पीली तबकी हरताल १० तोले और घी मिला कर कूटा हुवा शुद्ध गूगल १० तोले मिला कर पकावें। जब वह अवलेहके समान हो जाय तो उतार कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे गुल्म, कुष्ठ, क्षय, स्थूलता, शोथ, शूल, पाण्डु, प्रमेह, वातरोग और बलि-पलितका नाश होता है ।

इति लकारादि-गुग्गुलु-प्रकरणम्

अथ लकाराद्यवलेहप्रकरणम्

लघुलशुनपिण्डः

(ग. नि. । वाता.)

प्र. सं. ५८६० "रसोनसप्तकम्" देखिये।

लशुनपाकः

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

प्र. सं. ५९३५ "रसोनपाकः (१)" देखिये ।

(६२५९) लशुनयोगः

(यो. र. । शूला.)

एरण्डतैलं षड्भागं लशुनस्य तथाऽष्टकम् ।
एकं हिङ्गु त्रिसिन्धूत्थं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥
त्रिनिष्कं भक्षयेच्चानु ह्यामशूलप्रशान्तये ।

अरण्डका तेल ६ भाग, ल्हसन ८ भाग, भुनी हुई हींग १ भाग और सेंधा नमक ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर घोटें ।

मात्रा--१। तोला

इसके सेवनसे आमशूल नष्ट होता है ।

(६२६०) लाक्षाद्योऽवलेहः

(ग. नि. । कासा. १०)

लाक्षा शृङ्गी बला द्राक्षा व्याघ्री यष्टी शतावरी।
पिप्पली चेति तुल्यानि शर्करा च चतुर्गुणा ॥
त्वक्क्षीरीं द्विगुणां दत्त्वा लेहयेन्मधुसर्पिषा ।
क्षतकासं जयत्येष लेहः पित्तोल्बणं तथा ॥

लाख, काकड़ासिंगी, खरैटी, मुनक्का, कटेली, मुलैठी, शतावर, और पीपल १-१ भाग, खांड सबसे ४ गुनी और बंसलोचन इन सबसे २ गुना (८० भाग) ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीमें मिला कर चाटनेसे पित्त प्रधान क्षतज कास नष्ट होती है।

(६२६१) लाजसक्त्ववलेहिका

(वृ. यो. त. । त. ८३)

सर्पिः क्षौद्रसितोपेताल्लाजसक्तूंल्लिहेत्तथा।
पित्तच्छर्दिरनेनाऽशु प्रशाम्यति सुदुस्तरा॥

धानकी खीलोंके सत्तूमें घी, शहद और मिश्री मिला कर चाटनेसे दुस्साध्य पित्तज छर्दि शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(६२६२) लाजादियोगः

(वृ. यो. त. । त. ८३ ; वृ. मा. । छर्दि. ; यो. र. । छर्दि. ; यो. चि. म. । अ. २)

लाजाकपित्थमधुमागधिकोषणानां
क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजीरकाणाम्।
पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां
लेहास्त्रयः सकलवम्यरुचिप्रशान्त्यै॥

(१) धानकी खील, कैथ, मुलैठी, पीपल और काली मिर्च। (२) हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया और जीरा तथा शहद। (३) हर्र, गिलोय, काली मिर्च, पीपल और शहद। उपरोक्त तीनों अवलेह हर प्रकारकी वमन और अरुचिको नष्ट करते हैं।

(कूटने योग्य चीजोंका समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिला कर उसमें आवश्यकतानुसार शहद मिला लें।)

(६२६३) लौहरसायनम्

(भै. र. । स्थौल्या.)

गुग्गुलुस्तालमूली च त्रिफला खदिरं वृषम्।
त्रिवृतालम्बुषा चैव निर्गुण्डी चित्रकं स्नुही॥
एषां दशपलान् भागान् तोये पञ्चाढके पचेत्।
पादशेषं ततः कृत्वा कषायमवतारयेत्॥
पलद्वादशकं देयं तीक्ष्णलोहस्य चूर्णितम्।
पुराणसर्पिषः प्रस्थं शर्कराष्टपलानि च॥
पचेत्ताम्रमये पात्रे सुशीते चावतारिते।
प्रस्थार्द्धं माक्षिकं देयं शिलाजतु पलद्वयम्॥
एलात्वचोःपलार्द्धञ्च विडङ्गानि पलद्वयम्।
मरिचञ्चाञ्जनं कृष्णा द्विपलं त्रिफलान्वितम्॥
पलद्वयन्तु काशीशं श्लक्ष्णचूर्णीकृतं बुधैः।
चूर्णं दत्त्वाथ मथितं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्॥
ततः संशुद्धदेहस्तु भक्षयेन्माषमात्रकम्।
वातश्लेष्महरं श्रेष्ठं कुष्ठमेहज्वरापहम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्वयथुं सभगन्दरम्॥
मूर्च्छामोहविषोन्मादं गराणि विविधानि च।
स्थूलानां कर्षणं श्रेष्ठं मेदुरे परमौषधम्॥
कर्षयेच्चातिमात्रेण कुक्षिं पातालसन्निभम्।
बल्यं रसायनं मेध्यं वाजीकरणमुत्तमम्॥
श्रीकरं पुत्रजननं वलीपलितनाशनम्।
नाश्नीयात् कदली कन्दं काञ्जिकं करमर्दकम्॥
करीरं कारवेल्लञ्च षट् ककारादि वर्जयेत्॥

मूसली, हर्र, बहेड़ा, आमला, खैरकी छाल, बासा, निसोत, मुण्डी, संभालु, चीतामूल और सेंड (थोहर) की जड़ ५०-५० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ४० सेर पानीमें पकावें और जब १० सेर पानी शेष रहे तो छान कर उसमें ५० तोले शुद्ध गूगल तथा ६० तोले तीक्ष्ण लोह भस्म एवं २ सेर पुराना घी और ४० तोले खांड मिला कर ताम्रके पात्रमें पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर ठण्डा करके

उसमें १ सेर शहद, १० तोले शिलाजीत, तथा २॥-२॥ तोले इलायची और दारचीनीका चूर्ण, १० तोले बायबिड़ंगका चूर्ण, एवं १०-१० तोले काली मिर्च, सुरमा, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और कसीसका चूर्ण मिला कर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे शरीर शुद्धिके पश्चात् १। माशेकी मात्रानुसार सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे वात, कफ, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर, कामला. पाण्डु, शोथ, भगन्दर, मूर्च्छा, मोह, विष, उन्माद, स्थूलता, मेद, और बलिपलितका नाश होता है।

यह बल्य, रसायन, मेध्य और उत्तम बाजीकरण है।

अपथ्य--इसके सेवन कालमें केला, कन्द, कांजी, करौंदा, करीर और करेला न खाना चाहिये।

(६२६४) लोध्राद्यवलेहः

(वृ. यो. त. । त. १४४)

लोध्रेन्द्रयवधान्याक धात्रीह्रीबेरमुस्तकम् ।
मधुना लेहयेद्बालं ज्वरातीसारनाशनम् ॥

लोध, इन्द्रयव, धनिया, आमला, सुगन्धबाला, और नागरमोथा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें तथा उसे शहदमें मिला लें।

इसे चटानेसे बालकोंका ज्वरातिसार नष्ट होता है।

इति लकाराद्यवलेहप्रकरणम् ॥



अथ लकारादिघृतप्रकरणम्

(६२६५) लघु अश्वगन्धाघृतम्

[लघुवाजिगन्धाद्यं घृतम्]

(यो. र. । वाजीकरणा.)

कल्केन वाजिगन्धाया विपचेद् घृतमुत्तमम् ।
चतुर्गुणमजाक्षीरं दत्त्वोद्धृत्याथ शीतले ॥
सितां समां प्रदायाद्याद्बलपुष्टिविवृद्धये ॥

असगन्धके कल्क और चार गुने बकरीके दूधके साथ घृत सिद्ध करें और फिर उसे ठण्डा करके उसमें समान भाग मिसरी मिला लें।

इसे सेवन करनेसे बल पुष्टिकी वृद्धि होती है। (असगन्धका कल्क २० तोले, घी २ सेर, दूध ८ सेर। मिसरी २ सेर)

(६२६६) लघुकण्टकारीघृतम्

(वृ. मा. । कासा.)

घृतं रास्नाबलाव्योषश्वदंष्ट्राकल्कपाचितम् ।
कण्टकारीरसे पानात्पञ्चकासनिषूदनम् ॥

कल्क--रास्ना, खरैटी, सोंठ, मिर्च, पीपल और गोखरु ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—६ सेर कटेलीको ४८ सेर पानीमें पकावें और १२ सेर शेष रहने पर छान लें।

३ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला कर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत पांच प्रकारकी खांसीको नष्ट करता है।

(६२६७) लघुचव्यादिघृतम्

(यो. र. । अर्शो.)

चव्यतिक्ताकलिङ्गानि शताह्वा लवणानि च।
सर्पिरर्शोविकारघ्नं ग्रहणीदीपनं परम् ॥

कल्क—चव, कुटकी, इन्द्रजौ, सोया और पांचों नमक (सेंधा, सञ्चल, सामुद्र लवण, काच लवण, बिड लवण) ५–५ तोले।

क्वाथ—उपरोक्त द्रव्य १–१ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा करें और ७२ सेर पानीमें पकावें। जब १८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

४॥ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो घृतको छान लें।

यह घृत अर्शको नष्ट और ग्रहणीको दीप्त करता है।

लघुपञ्चगव्यं घृतम्

(ग. नि. ; वृ. मा. । अपस्मारा.)

प्र. सं. ४०४८ "पञ्चगव्यं घृतम्" देखिये।

लघुफलघृतम्

(शा. सं. । खं. २ अ. ९)

प्र. सं. ४५३० "फलघृतम्" देखिये।

(६२६८) लघुषट्पलं घृतम्

(वृ. यो. त. । त. ५८)

विश्वाग्निचव्यमगधामगधाजटाभि-
राभिः पलप्रमितिभिः सयवाग्रजाभिः।
सर्पिः शृतं पयसि षट्पलमेतदर्शः
प्लीहोदरज्वरिषु गुल्मिषु पथ्यमुक्तम् ॥

सोंठ, चीता, चव, पीपल, पीपलामूल और जवाखार ५–५ तोले ले कर कल्क बनावें। तदनन्तर यह कल्क, १ सेर घी और ४ सेर दूध एकत्र मिला कर पकावें। जब दूध जल जाए तो घीको छान लें।

यह घृत अर्श, प्लीहोदर, ज्वर और गुल्ममें उपयोगी है।

(६२६९) लशुनघृतम् (१)

(ग. नि. । घृता १)

प्रस्थं लशुनबीजानां कण्टकार्यास्तथैव च।
आटरूषकप्रस्थं च जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
द्राक्षाया गोस्तनायाश्च कुडवं चात्र मिश्रयेत्।
तत्र दद्याद्घृतप्रस्थं गोक्षीरप्रस्थमेव च ॥
लशुनस्य तु पिष्टस्य पलं निष्पीड्य योजयेत्।
आटरूषकपत्राणां पेषयित्वा पलं तथा ॥
एतन्मृद्वग्निना सिद्धं शीतं पूतमथापि वा।
द्विपलं शर्कराचूर्णं क्षीरार्धकुडवं तथा ॥
त्वक्क्षीर्याश्च पलार्धं हि तत्सर्वं खजमूर्च्छितम्।
निदध्याद्भाजने शुद्धे काञ्चने राजतेऽपि वा ॥
एतत्प्रायोगिकं सर्पिरिमान् व्याधीन् व्यपोहति।
कासं श्वासं ज्वरं गुल्मं कार्श्यं छर्दिमरोचकम् ॥
हृद्रोगं पार्श्वशूलं च क्षतक्षीणं प्लीहोदरम्।
जीवनं बृंहणं वृष्यं पाण्डुश्वयथुनाशनम् ॥

ल्हसनकी गिरी, कटेली और बासा १-१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। तदनन्तर २ सेर घीमें २० तोले बीज रहित मुनक्का और २ सेर गायका दूध तथा ५-५ तोले ल्हसनका स्वरस और बासेके पत्तोंका कल्क एवं उपरोक्त क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाए तो घृतको छान लें और ठण्डा होने पर उसमें १० तोले खांड, २० तोले दूध और २॥ तोले बंसलोचनका चूर्ण मिला कर सबको मथनीसे मथ कर सोने या चांदीके पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत खांसी, श्वास, ज्वर, गुल्म, कृशता, छर्दि, अरुचि, हृद्रोग, पार्श्वशूल, क्षतक्षीणता, प्लीहोदर, पाण्डु और शोथको नष्ट करता है तथा जीवन, बृंहण और वृष्य है।

(६२७०) लशुनघृतम् (२)

(ग. नि. । परि. घृता. १)

तुलां लशुनकन्दानां पृथक्पञ्चपलांशकम् ।
पञ्चमूलं महच्चाम्बुभारार्द्धे तद्विपाचयेत् ॥
पादशेषं तदर्द्धेन दाडिमस्वरसं सुराम् ।
धान्याम्लं दधि चादाय पिष्टांश्चार्द्धपलांशकान् ॥
त्र्यूषणत्रिफलाहिङ्गुयवानीचव्यदीप्यकान् ।
साम्लवेतससिन्धूत्थदेवदारूनपचेद्घृताद् ॥
तैः प्रस्थं तत्परं सर्ववातगुल्मविकारजित् ॥

ल्हसन ६। सेर तथा बेलछाल, स्योनाक छाल, खम्भारी छाल, पाढलछाल और अरणी २५-२५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ८ सेर अनारका रस, ८ सेर शराब, ८ सेर कांजी, ८ सेर दही और २॥-२॥ तोले सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हींग, अजवायन, चव, अजमोद, अम्लबेत, सेंधा और देवदारुका कल्क एवं २ सेर घी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत वातज गुल्मको नष्ट करता है।

(६२७१) लशुनाद्यं घृतम् (१)

(च. सं. । चि. अ. १४ उन्मा.)

लशुनानां शतं त्रिंशदभयात् त्र्यूषणात्पलम् ।
गवां चर्ममसीप्रस्थं द्व्याढकं क्षीरमूत्रयोः ॥
पुराणसर्पिषः प्रस्थमेभिः सिद्धं प्रयोजयेत् ।
हिङ्गुचूर्णपलं शीते दत्त्वा च मधुमानिकाम् ॥
तद्दोषागन्तुसम्भूतानुन्मादान् विषमज्वरान् ।
अपस्मारांश्च हन्त्याशु पानाभ्यञ्जननावनैः ॥

कुटी हुई ल्हसनकी गांठ १०० नग, गुठली रहित पिसी हुई हर्र ३० नग, समान भाग मिलित सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण ५ तोले, गायके चमड़ेकी राख १ सेर, गोदुग्ध ८ सेर, गोमूत्र ८ सेर और पुराना घी २ सेर ले कर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें। तदनन्तर उसके शीतल होने पर उसमें ५ तोले हींगका चूर्ण और १ सेर शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

यह घृत दोषज और आगन्तुक उन्माद, विषमज्वर और अपस्मारको नष्ट करता है।

इसे पान, अभ्यंग और नस्य द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

(६२७२) लशुनाद्यं घृतम् (२)

(च. सं । चि. अ. १४; च. द. ; वृ. नि. र. । उन्मादा.)

लशुनस्याविनष्टस्य तुलार्धं निस्तुषीकृतम् ।
तदर्द्धं दशमूलस्य[1] द्व्याढकेऽपां विपाचयेत् ॥
पादशेषे घृतप्रस्थं लशुनस्य रसं तथा ।
कोलमूलकवृक्षाम्लमातुलुङ्गार्द्रकै रसैः[2] ॥
दाडिमाम्बु सुरामस्तु काञ्जिकाम्लैस्तदर्द्धकैः ।
साधयेत् त्रिफलादारुलवणव्योषदीप्यकैः ॥
यवानीचव्यहिङ्ग्वम्लवेतसैश्च पलार्द्धिकैः ।
सिद्धमेतत् पिबेच्छूलगुल्मार्शो जठरापहम् ॥
वध्मपाण्ड्वामयप्लीहयोनिदोषज्वरक्रिमीन् ।
वातश्लेष्मामयान्सर्वानुन्मादं चापकर्षति ॥

छिलके रहित उत्तम ल्हसन ३ सेर १० तोले और दशमूल १ सेर ४५ तोले लेकर दोनोंको एकत्र कूट कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें २ सेर घी, २ सेर ल्हसनका रस और १-१ सेर बेर, मूली, तिन्तड़ीक, बिजौरे, अदरक और अनारका रस तथा सुरा, मस्तु और कांजी एवं २॥-२॥ तोले हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, सेंधा, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, अजवायन, चव, हींग और अम्लवेतका कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो छान लें।

यह घृत शूल, गुल्म, अर्श, उदर रोग, वध्म, पाण्डु, प्लीहा, योनिदोष, ज्वर, कृमि, वातकफज रोग और उन्मादको नष्ट करता है।

(६२७३) लाक्षाद्यं घृतम्

(व. से. । बालरोगा.)

लाक्षाकुष्ठविडङ्गानि सरलं रजनीद्वयम् ।
सूक्ष्मैला पद्मकं लोध्रं पद्मकं नागकेशरम् ॥
दधित्थतुत्थशैरीषशैरेयोद्दालपत्रकम् ।
घृतप्रस्थं पचेदेतैर्यावत्पाकश्च गच्छति ॥
कीटाखुसर्पदष्टेषु स्फोटेषु विविधेषु च ।
विसर्पेषु कुमाराणां लूतामूत्रकृतेषु च ॥
गण्डमालासु नारीषु सर्पिरेतद्यथामृतम् ॥

लाख, कूठ, बायबिडंग, चीड़, हल्दी, दारुहल्दी, छोटी इलायची, पद्माख, लोध, कमल, नागकेसर, कैथ, तूतिया, सिरसकी छाल, कटसरैया और ल्हिसोड़ेके पत्ते; इनके क्वाथ और कल्कके साथ घृत सिद्ध करें।

यह घृत कीट, मूषक और सर्पदंश; अनेक प्रकारके विस्फोटक और मकड़ीके मूत्रसे उत्पन्न बच्चोंके विसर्प तथा गण्डमालामें अमृतके समान गुणकारी है।

(६२७४) लाक्षारसादिघृतम्

(हा. स. । स्था. ३ अ. ४३)

लाक्षारसं चन्दनयष्टिकानां ।
पटोलधात्रीफलशर्कराणाम् ॥

---

१. ग. नि. में दशमूलके स्थानपर पंचमूल लिखा है।

२. ग. नि. में बेर, मूली, तिन्तड़ीक, बिजौरा और अदरकके रसका अभाव है।

दधि सदुग्धं नवनीतकं च ।
विपाचिते नस्यविधौ प्रयुज्यते ॥
भ्रूदोषशङ्खक्षतजक्षये वा ।
दिनाभिवृद्धिप्रभवेऽपि दोषे ॥

लाखका रस, दही और दूध २-२ सेर, नवनीत १॥ सेर तथा चन्दन, मुलैठी, पटोल, आमला और खांडका कल्क १५ तोले (प्रत्येक ३ तोले) ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे भ्रूशूल, शंखशूल, क्षतज और क्षय जन्य शूल तथा दिनवृद्धिके साथ बढ़ने वाला शूल नष्ट होता है।

(६२७५) लाङ्गलाघृतम्

(यो. र. ; र. र.; वृ. नि. र. ; व. से. । अग्निदग्ध व्रणा. ; वृ. यो. त. । त. ११३)

उभे हरिद्रे मञ्जिष्ठा मधुकं लोध्रकट्फलम् ।
कम्पिल्लकमुभे मेदे लाङ्गलीमूलमेव च ॥
पिप्पली त्रिफला चैव निम्बपत्रं च कार्षिकम् ।
कपिलाया घृतं प्रस्थ पचेत्तद्द्विगुणं पयः ॥
पलद्वयं च सिक्थस्य सिद्धे पूते च दापयेत् ।
लाङ्गलीकं घृतं नाम व्रणानां रोपणं परम् ॥
अग्निदग्धे विसर्पे च कीटलूता व्रणेषु च ।
चिरोत्थेषु च दुष्टेषु नाडीमर्माश्रितेषु च ॥

हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, मुलैठी, लोध, कायफल, कमीला, मेदा, महामेदा, कलियारीकी जड़, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला और नीमके पत्ते १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

तदनन्तर २ सेर गायके घीमें ४ सेर दूध और उपरोक्त कल्क (तथा ४ सेर पानी) मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान कर उसमें १० तोले मोम मिला दें।

इसे लगानेसे अग्निदग्ध व्रण, विसर्प, जहरीले कीड़ों और मकड़ीका व्रण, पुराना दुष्ट नाडी व्रण और मर्माश्रित व्रण तथा अन्य सब प्रकारके व्रण नष्ट होते हैं।

इति लकारादिघृतप्रकरणम्



अथ लकारादितैलप्रकरणम्

(६२७६) लक्ष्मीविलासतैलम्

(यो. र. । क्षय.)

एलाश्रीखण्डरास्नाजतुनख-
शशिनः कोलकं चाथ मुस्ता
बालत्वग्दारुकृष्णागुरुतग-
रजटाकुष्ठमेतत्समांशम् ।
त्रैगुण्यं कालरालं सुदृढ-
डमरुकायन्त्रतः सिद्धमेत-
त्तैलं पुष्पैश्च भाव्यं परिमल-
मिलितं नामतो गन्धतैलम् ॥
एतल्लक्ष्मीविलासं जनयति
जगती नायकैः सम्प्रयुक्तं
युक्त्या नाना च रोगान्निखिल-
गदहरं वातसङ्घातहन्तृ ।
पीतं ताम्बूलवल्लीदलमिलि-
तमलं जाठरं वह्निमिदं
कुर्यादुर्नामदद्रुक्षयमपि
नितरामङ्गसम्मर्दनेन ॥

छोटी इलायची, सफेद चन्दन, रास्ना, लाख, नखी, कपूर, कंकोल, नागरमोथा, सुगन्धबाला, दालचीनी, देवदारु, अगर, तगर, जटामांसी और कूठ १-१ भाग तथा काला राल सबसे ३ गुनी ले कर सबको एकत्र कूट कर डमरुयन्त्र (अथवा पाताल यन्त्र) द्वारा तैल निकालें और उसमें सुगन्धित फूलोंको बसा लें।

यह तैल वातजन्य अनेक रोगोंको नष्ट करता है।

इसे पानमें खानेसे अग्नि दीप्त होती है और इसकी मालिशसे अर्श, दाद और क्षयका नाश होता है।

(६२७७) लघुकासीसाद्यं तैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

काशीसलाङ्गलीदन्तीकरवीरामलैः पचेत् ।
तैलमर्कपयोन्मिश्रमभ्यङ्गात्पायुकीलजित् ॥

कसीस, लाङ्गलीमूल, दन्तीमूल, करवीर (कनेर) की जड़ और आमला; इनके कल्क और आकके दूधके साथ तैल सिद्ध करें।

इसकी मालिशसे अर्शके मस्से नष्ट होते हैं। (कल्ककी प्रत्येक वस्तु १ तोला, सरसोंका तेल ४० तोले, आकका दूध २ सेर।)

(६२७८) लघुक्षारतैलम्

(यो. त. । त. ७०)

शुष्कमूलकशुण्ठीनां क्षारो हिङ्गु सनागरम् ।
शुक्तं चतुर्गुणं दद्यात्तैलमेतद्विपाचयेत् ॥
बाधिर्यं कर्णशूलं च पूयस्रावं च कर्णयोः ।
कृमयश्चापि नश्यन्ति तैलस्यास्य च पूरणात् ॥

सूखी मूलीका क्षार, सोंठका क्षार, हींग और सोंठ; इनके कल्क तथा ४ गुणे शुक्तके साथ तैल सिद्ध करें।

इसे कानमें डालनेसे बधिरता, कर्णशूल, पीप निकलना और कृमि नष्ट होते हैं।

(कल्ककी प्रत्येक वस्तु १। तोला; शुक्त २ सेर; तिलका तेल आधा सेर।)

(६२७९) लघुनारायणतैलम्

(यो. र. । वाता. ; वृ. यो. त. । त. ९०)

एलाबलानतकुचन्दनदारुसौम्या-
शैलेयकुष्ठकुडिलावरुण श्रृतेन ।
तैलं सदुग्धमिति सिद्धमभीरुकन्द-
तोयेन तेन तुलितेन समीरणघ्नम् ॥

इलायची, खरैटी, तगर, लाल चन्दन, देवदारु, शालपर्णी, भूरिछरीला, कूठ, स्पृक्का (असवरग) और बरनेकी छाल; इनके काथ तथा दूध और शतावरके रसके साथ तेल सिद्ध करें।

यह तैल वातज रोगोंको नष्ट करता है।

(कल्ककी प्रत्येक वस्तु १ तोला, तिलका तेल १ सेर, दूध २ सेर, शतावरका रस २ सेर)

लघुमरिचादितैलम्

(यो. र. ; र. का. धे. । कुष्ठा.; यो. त. । त. ६२; वृ. नि. र. । त्वग्दोष. ; वृ. यो. त. । त. १२०)

प्र. सं. ५२८६ मरिचाद्यं तैलम् देखिये।

(६२८०) लघुमाषतैलम् (१)

(ग. नि. । तैला. २)

कपिकच्छुवाटचालकशतावरीसित-
पुनर्नवामूलैः ।
सैन्धवजिङ्गिणिकातरुनिर्यासाभ्यां च
कटुतैलम् ॥
माषकाथेन पचेद् द्विगुणेन पूर्वकल्कसंयुक्तम् ।
सकृदुपयुक्तमिदं नस्येन निहन्ति बाहुरुजम् ॥

कौंचके बीज, खरैटी, शतावर, सफेद पुनर्नवाकी जड़, सेंधा नमक और जिंगनी वृक्षका गोंद; इनके कल्क और दो गुने उड़दके काथके साथ सरसोंका तेल पकाकर रक्खें।

इसकी नस्य लेनेसे बाहुकी पीड़ा नष्ट होती है।

(तेल ४८ तोले, कल्ककी प्रत्येक वस्तु १ तोला; उड़दका काथ ९६ तोले—४८ तोले उड़दको ३८४ तोले पानीमें पका कर ९६ तोले शेष रक्खें।)

लघुमाषतैलम् (२)

प्र. सं. ५३१३ "माषतैलम्" (२) देखिये।

(६२८१) लघुमाषादितैलम्

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

माषसिन्धुबलारास्नादशमूलकहिङ्गुभिः ।
वचाशतजटाख्याभिः सिद्धं तैलं सनागरम् ॥

उड़द, सेंधा नमक, खरैटी, रास्ना, दशमूल, हींग, बच, शतावर और सोंठके कल्क तथा काथके साथ तेल सिद्ध करें।

यह तेल वातव्याधिको नष्ट करता है।

लघुविषगर्भतैलम्

"विषगर्भतैलम् (लघु)" देखिये।

(६२८२) लज्जालुमूलतैलम्

(रा. मा. । व्रणा. २५)

आर्द्रेण लज्जालुकिनीभवेन
मूलेन तैलं परिपाचितं यत् ।

तत्स्वेदितः पाकविवर्जितो द्राक्
संरोहमागच्छति शस्त्रघातः ॥

हरी (ताज़ी) लज्जावन्तीकी जड़के कल्कसे तैल पका कर रक्खें।

इस तेलसे पाकरहित शस्त्राघातको स्वेदित करनेसे वह शीघ्र ही भर जाता है।

(तिलका तेल ८० तोले (१ सेर), कल्क १० तोले, पानी ४ सेर।)

(६२८३) लशुनतैलम्

(व. से. । उदररोगा.)

लशुनस्य तुलामेकां जलद्रोणे विपाचयेत् ।
चतुर्भागावशेषन्तु कषायमवतारयेत् ॥
तत्क्वाथश्च परिस्राव्य विशाले ताम्रभाजने ।
चित्रतैलाढकं दद्याद्भेषजानि प्रदापयेत् ॥
त्रिकटुत्रिफलादन्तीहिङ्गुसैन्धवचित्रकम् ।
देवदारुवचाकुष्ठं मधुशिग्रुपुनर्नवम् ॥
सौवर्चलविडङ्गानि दीप्यकं हस्तिपिप्पलीं ।
एतेषां पलिकान्भागांस्त्रिवृतार्द्धपला तथा ॥
पिष्ट्वा कषायेणानेन शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
तत्पिबेत्प्रातरुत्थाय यथाग्निबलमात्रया ॥
निहन्ति सर्वरोगाणि जठराणि विशेषतः ।
मूत्रकृच्छ्रमुदावर्त्तमन्त्रवृद्धिं गुदकृमीन् ॥
पार्श्वकुक्षिभवं शूलमामशूलमरोचकम् ।
यकृदष्ठीलिकानाहान्प्लीहानश्चाङ्गवेदनम् ॥
मासमात्रेण नश्यन्ति चार्शांसि वातजा गदाः ॥

क्वाथ—६। सेर ल्हसनको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—सोंठ; मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, हींग, सेंधानमक, चीता, देवदारु, बच, कूठ, मुलैठी, सहंजनेकी छाल, पुनर्नवा, काला नमक, बायबिड़ंग, अजवायन और गजपीपल ५-५ तोले तथा निसोत २॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

८ सेर अरण्डीके तैलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला कर ताम्र पात्रमें मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाए तो तेलको छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार प्रातः काल पीनेसे अनेकों रोग और विशेषतः उदर रोग नष्ट होते हैं।

यह तेल मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, अन्त्रवृद्धि, गुदकृमि, पार्श्व शूल, कुक्षिशूल, आमशूल, अरुचि, यकृत, अष्ठीलिका, आनाह, प्लीहा और अङ्गपीड़ा को नष्ट करता है।

यह तेल अर्श और वातज रोगोंको १ मासमें नष्ट कर देता है।

(६२८४) लशुनाद्यं तैलम्

(धन्व; भै. र. । कर्ण.)

लशुनामलकं तालं पिष्ट्वा तैले चतुर्गुणे ।
तैलाच्चतुर्गुणं क्षीरं पाच्यं तैलावशेषकम् ॥
तत्तैलं पूरयेत्कर्णे बाधिर्यं परिनाशयेत् ॥

कल्क—ल्हसन, आमला और हरताल ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

१२० तोले (१॥ सेर) तिलके तैलमें यह कल्क और ६ सेर गायका दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे कानमें डालनेसे बधिरता नष्ट होती है।

(६२८५) लाक्षादितैलम् (१)

(वृ. नि. र. । विषमज्वरा.)

लाक्षा दशाक्षा अरुणा तदर्धा
सचन्दनं लोहितचन्दनं च ।
त्वक्पत्रकं वारि मुरा समुस्ता
प्रत्येकमेतानि पलोन्मितानि ॥
किराततिक्तस्त्रिवृता सविश्वाऽ
मृता कणापर्पटकण्टकार्यः ।
विडङ्गविश्वामलकानि वासा
रसा निशावारुणसिन्धुवाराः ॥
एतानि देयानि पृथक्पलार्ध-
मानानि सर्वाणि च औषधानि ।
कल्का ह्यमीषां विदधीत गव्य-
दुग्धेन वै सार्धतुलोन्मितेन ॥
तैलं तिलानां तु तुलानुमानं
तेनैव कल्केन शनैः पचेत्तत् ।
हन्याज्ज्वरांस्तैलमिदं समस्ता-
न्कुर्याद्बलं वीर्यमतीव पुष्टम् ॥
विमर्दनादाशु परिश्रमं भ्रमं
शमं नयेत्सञ्जनयेत् द्युतिं तनोः ।
तथा व्यथामस्थिसमुद्भवामपि
प्रहृत्य निद्रां समुपार्जयेत्सुखम् ॥

कल्क—लाख १२॥ तोले, मजीठ ६। तोले तथा सफेद चन्दन, लाल चन्दन, दालचीनी, तेजपात, सुगन्धबाला, मुरामांसी और नागरमोथा ५-५ तोले एवं चिरायता, निसोत, सोंठ, गिलोय, पीपल, पित्तपापड़ा, कटेली बायबिड़ंग, सोंठ, आमला, बासा, काकोली, हल्दी, बरनेकी छाल और सम्भालु २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

१२॥ सेर तिलके तेलमें १८॥। सेर गोदुग्ध और उपरोक्त कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो तेलको छान लें ।

यह तेल समस्त ज्वरोंको नष्ट और बल वीर्य की वृद्धि करता है ।

इसकी मालिशसे थकान और भ्रम शीघ्र ही नष्ट होता तथा शरीरकी कान्ति बढ़ती है । यह तेल अस्थियोंकी वेदनाको भी नष्ट कर देता है और इसकी मालिशसे गहरी नींद आ जाती है ।

(६२८६) लाक्षादितैलम् (२)

(भै. र.; धन्व; वृ. नि. र. ; व. से. । बालरोग; यो. तं. । त. ७०; ग. नि. । बालरोगा. ११; ग. नि. । परिशि. तैला. २; वा. भ. । उ. अ. २; वं. से. । ज्वरा; वृ. नि. र. । सर्वज्वरा.)

लाक्षारससमं सिद्धं तैलं मस्तु चतुर्गुणम् ।
रास्नाचन्दनकुष्ठाब्दवाजिगन्धानिशायुगैः ॥
शताह्वादारुयष्ट्याह्वमूर्वातिक्ताहरेणुभिः ।
बालानां ज्वररक्षोघ्नमभ्यङ्गाद्बलवर्णकृत् ॥

कल्क—रास्ना, सफेद चन्दन, कूठ, नागरमोथा, असगन्ध, हल्दी, दारुहल्दी, सोया, देवदारु-मुलैठी, मूर्वा, कुटकी और रेणुका १-१ तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

१०४ तोले तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क, १०४ तोले लाखका रस और ४१६ तोले मस्तु

(दहीसे दो गुना पानी मिलाकर बनाया हुवा तक्र) मिलाकर मदाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे बालकोंका ज्वर नष्ट होता और बल, वीर्यकी वृद्धि होती है।

(६२८७) लाक्षादितैलम् (मध्यम) (३)

(यो. र. । ज्वरा., राजय.; वृ. यो. त. । त. ५६, ७६; वृ. नि. र. । विषमज्वरा.; भै. र. ज्वरा.; यो. चि. म. । अ. ६; यो. त. । त. २०; वृ. नि. र. । विषमज्वरा.)

तैलं प्रस्थमितं चतुर्गुणजतुक्वाथं चतुर्मस्तुरुग्-यष्टीदारुनिशाब्दमूर्वाकटुकामिश्यश्च कौन्ती-हिमैः ।
रास्नाद्यैः पिचुसम्मितैः कृतमिदं शस्तं तु जीर्णज्वरे
सर्वस्मिन्विषमेऽपि यक्ष्मणि शिशौ वृद्धे सग-र्भासु च ॥

तिलका तेल २ सेर, लाखका क्वाथ ८ सेर, मस्तु ८ सेर तथा निम्न लिखित कल्क एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—कूठ, मुलैठी, देवदारु, हल्दी, नागरमोथा, मूर्वा, कुटकी, सौंफ, रेणुका, सफेद चन्दन और रास्ना १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

यह तेल जीर्णज्वर, विषमज्वर और यक्ष्माको नष्ट करता तथा बालक, वृद्ध और गर्भिणीके लिये विशेष हितकारी है।

(**मस्तु**—दहीमें उससे दो गुना पानी मिला कर बनाया हुवा तक्र।)

टिप्पणी—कुछ ग्रन्थोंमें ४ गुना गायका दही, और कल्क में असगन्ध अधिक लिखा है। इसका नाम भी कई पुस्तकों में "महा लाक्षादि" लिखा है तथा गुण इस प्रकार वर्णित हैं।

विषमाख्यान् ज्वरान् सर्वान् आश्वेव प्रशमं नयेत् ।
कासं श्वासं प्रतिश्यायं कण्डूदौर्गन्ध्यगौरवम् ॥
त्रिकपृष्ठकटीशूलं गात्राणां कुट्टनं तथा ।
पापालक्ष्मीप्रशमनं सर्वग्रहनिवारणम् ॥
अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं तैलं लाक्षादिकं महत् ॥

अर्थात्—यह तेल समस्त विषमज्वरोंको शीघ्र ही नष्ट कर देता है। इसके अतिरिक्त यह खांसी, श्वास, प्रतिश्याय, कण्डू, दुर्गन्ध, शरीरका भारीपन, त्रिकदेश पीठ और कमरका दर्द, शरीरकी हडफूटन, पाप, अलक्ष्मी और समस्त ग्रह-दोषोंको नष्ट करता है।

(६२८८) लाक्षादितैलम् (महा) (४)

(वृ. नि. र. । सर्वज्वरा.)

लाक्षाहरिद्रामञ्जिष्ठाफेनिलं मधुकं बला ।
लामज्जकं चन्दनं च चम्पकनीलमुत्पलम् ॥
प्रत्येकमेषां षण्मुष्टीः पक्त्वा तोये चतुर्गुणे ।
चतुर्भागावशेषे तु गर्भे चैतत्समावपेत् ॥
रेणुकापद्मकं चैव वाजिगन्धा तथैव च ।
वेतसं चोरकं कुष्ठं देवदारु नखं त्वचं ॥
शतपुष्पां पुण्डरीकं मांसीमधुकमेव च ।
एभिरक्षमितैः कल्कैः कषायेणैव पेषितैः ॥

मस्तुसूक्तारनालानामाढकाढकमावपेत् ।
क्षीराढकसमायुक्तं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
अभ्यङ्गात्तैलमेतद्धि शीघ्रं दाहमपोहति ।
व्यपोहति तथा वातपित्तश्लेष्मभवं ज्वरम् ॥
सप्रलापं सतृष्णं च तालुशोषभ्रमान्वितम् ।
ग्रहोपसृष्टा ये बाला रक्षःसंदूषिताश्च ये ॥
तेषां कष्टं शमयते तैलं लाक्षादिकं महत् ॥

क्वाथ--लाख, हल्दी, मजीठ, रीठा, मुलैठी, खरैटी, लामज्जक (पीली खस), लालचन्दन, चम्पाके फूल और नीलोत्पल ३०-३० तोले लेकर सबको अधकुटा करके ३० सेर पानीमें पकावें और ७॥ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क--रेणुका, पद्माक, असगन्ध, बेत, चोरक (स्पृक्का-असवरग), कूठ, देवदारु, नख, दालचीनी, सोया, कमल, जटामांसी और मुलैठी १।-१। तोला लेकर सबको उपरोक्त क्वाथसे गीला करके एकत्र पीस लें।

तदनन्तर २ सेर तिलके तेल में उपरोक्त क्वाथ, कल्क तथा ८-८ सेर मस्तु, सूक्त, आरनाल और गायका दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे दाह और वातज, पित्तज तथा कफज ज्वर एवं प्रलाप, तृष्णा, तालुशोष और भ्रम युक्त ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

यह ग्रहदोष और राक्षसोंसे पीड़ित बालकोंके कष्टको भी नष्ट करता है।

(नोट--सूक्त आदि बनानेकी विधि भा. भै. र. प्रथम भाग के परिशिष्ट में देखिये।)

(६२८९) लाक्षादितैलम् (लघु) (५)

(भै. र.; वृ. नि. र.; यो. र.; च. द. । ज्वरा.; यो. त. । त. २०; वृ. यो. त. । त. ५९)

लाक्षाहरिद्रामञ्जिष्ठाकल्कैस्तैलं विपाचितम् ।
षड्गुणेनारनालेन दाहशीतज्वरापहम् ॥

लाख, हल्दी और मजीठ ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें। तदनन्तर १२० तोले (१॥ सेर) तेलमें यह कल्क और ९ सेर आरनाल मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल दाह, शीत और ज्वरको नष्ट करता है।

(आरनाल बनानेकी विधि भा. भै. र. भाग १ के परिशिष्ट में देखिये।)

(६२९०) लाक्षाद्यं तैलम् (मध्यम)

(भै. र. । मुखरोगा.; वृ. यो. त. । त. ५९; ग. नि. । मुखरोगा. ५; च. द. । मुख. ५५; र. र.; व. से. । मुख.; वृ. नि. र. । ज्वर.; यो. र. । ज्वर., दन्त., धन्व. ; । मुख रोगा.)

तैलं लाक्षारसं क्षीरं पृथक् प्रस्थं समं पचेत् ।
चतुर्गुणे रिमक्वाथे द्रव्यैश्च पलसम्मितैः ॥
लोध्रकट्फलमञ्जिष्ठापद्मकेशरपद्मकैः[१] ।
चन्दनोत्पलयष्टयाह्वैस्तैलं गण्डूषधारणम् ॥
दालनं दन्तचालञ्च दन्तमोक्षं कपालिकाम् ।
शीतादं पूतिवक्त्रञ्च अरुचिं विरसास्यताम् ॥
हन्यादाशु गदानेतान् कुर्य्याद्दन्तानपि स्थिरान् ॥

१ मञ्जिष्ठामुस्तकेशरपद्मकैः इति पाठान्तरम्।

क्वाथ—४ सेर दुर्गन्धित खैरकी छालको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—लोध, कायफल, मजीठ, कमलकेसर (पाठान्तरकेअनुसार नागरमोथा और नागकेसर), पद्माक, सफेद चन्दन, नीलोत्पल और मुलैठी ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तिलके तेलमें २ सेर लाखका रस, २ सेर गायका दूध, उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसके गण्डूष धारण करनेसे दालन, दन्तचालन, दन्तमोक्ष, कपालिका, शीताद, पूतिवक्त्र, अरुचि और मुखकी विरसता नष्ट होती है तथा दांत मज़बूत हो जाते हैं।

(६२९१) लाङ्गल्याद्यं तैलम्

(ग. नि. । परि. तैला. २)

लाङ्गली कुष्ठमरिचं शुण्ठी मागधिका घनम् ।
सरसाञ्जनकासीसं जतुसैन्धवगुग्गुलुः ॥
मनःशिलाले निर्गुण्डी बिल्वं भल्लातकं तथा ।
कार्षिकैर्देवदारुत्थतैलस्य द्विपलेन च ॥
कुडवं तिलतैलस्य पचेन्मूत्रे चतुर्गुणे ।
तत्कर्णपूरणात्क्षिप्रं पूयस्रावनिवारणम् ॥
कृमिघ्नं दुष्टनाडीघ्नं व्रणानां चैव रोपणम् ॥

कल्क—कलियारी, कूठ, काली मिर्च, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, रसौत, कसीस, लाख सेंधानमक गूगल, मनसिल, हरताल, संभालु, बेलकी छाल और भिलावा १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२० तोले देवदारुका तेल, ४० तोले तिलका तेल, ३ सेर गोमूत्र और उपरोक्त कल्क एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गोमूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे कानमें डालनेसे कानसे पीप बहना, कानके कृमि, कानका दुष्ट नाडीव्रण और व्रण शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(६२९२) लिकुचादितैलम्

(वै. म. र. । पटल १६)

स्वरसे मूत्रे च शृतं लिकुच-
निशाभ्यां च सुरभिपुरुषाभ्याम् ।
तलं लवणांशयुतं व्रणशुद्धिं
विरोपणं च तत् कुरुते ॥

बढल और हल्दीका स्वरस आधा आधा सेर लें। यदि स्वरस न मिले तो बढल और हल्दी २०-२० तोले ले कर दोनोंको अधकुटा करके ४ सेर पानीमें पकावें और जब १ सेर पानी शेष रहे तो छान लें।

२० तोले तिलके तेलमें १ सेर गोमूत्र, उपरोक्त स्वरस या क्वाथ और १।-१। तोला राल, गूगल और सेंधानमक मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छानलें।

यह तेल घावोंको शुद्ध करता और भरता है।

(६२९३) लोध्राद्यं तैलम्

(वृ. यो. त. । त. १२८)

लोध्रखादिरमञ्जिष्ठायष्ट्याह्वैश्चापि साधितम् ।
तैलं संशोधनं हन्याद्दन्तनाडीगतिं क्रमात् ॥

कल्क—लोध, खैरसार, मजीठ और मुलैठी २॥-२॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त ओषधियां ४०-४० तोले लेकर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

१ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तैल दन्त नाड़ी (दांतके नासूर) को नष्ट करता है।

(६२९४) लोमनाशकतैलम्

(भै. र. । स्त्री रोगा.)

कुसुम्भतैलाभ्यङ्गो वा रोम्णामुत्पाटितेऽन्तकृत्॥

बालोंको उखाड़नेके पश्चात् कुसुम्भ (कैड़) के तेलकी मालिश करनेसे पुनः बाल नहीं निकलते।

(६२९५) लोहकिट्टाद्यं तैलम्

(रा. मा. शिरो रोगा.)

यल्लोहकिट्टोत्पलसारिवाभ्यां
समार्कवाभ्यां त्रिफलान्विताभ्याम् ।
विपच्यते तैलमपास्यति द्राक्
शीर्षामयान्दारुणकादिकांस्तत् ॥

मण्डूर, अनन्तमूल, काला भंगरा और त्रिफलाके कल्कसे तैल पाक करके रक्खें।

इसकी मालिशसे दारुणक इत्यादि शिरो रोग नष्ट होते हैं।

(प्रत्येक ओषधि ५ तोले—मिलित ३० तोले। तिलका तेल ३ सेर। पानी १२ सेर। एकत्र मिला कर पानी जलने तक पकावें।)

इति लकारादितैलप्रकरणम्



अथ लकाराद्यासवारिष्ट-प्रकरणम्

(६२९६) लक्ष्मणारिष्टः

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

लक्ष्मणायाः पलशतं चतुर्द्रोणजले पचेत् ।
पादशेषे कषायेऽस्मिन् क्षिपेद् गुडतुलाद्वयम् ॥
धातकीं षोडशपलां मुस्तकं मधुकं बलाम् ।
फलत्रयं निशाद्वन्द्वं जीरकं चन्दनद्वयम् ॥
अजमोदां यमानीश्च बिल्वश्च पलमानतः ।
मासादूर्ध्वन्तु सिद्धोऽयमरिष्टः स्त्रीगदान्तकृत् ॥

६। सेर लक्ष्मणाको १२८ सेर पानीमें पकावें और जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो छान लें। तदनन्तर उसमें १२॥ सेर गुड़ और १ सेर धायके फूलोंका चूर्ण तथा ५-५ तोले नागरमोथा, मुलैठी, खरैंटी, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, दारुहल्दी, जीरा, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, अजमोद, अजवायन और बेलगिरी का चूर्ण मिलाकर सबको मज़बूत और घृतसे चिकने किये हुवे मृत्पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द कर दें और फिर १ मास पश्चात् निकाल कर छान लें।

यह अरिष्ट स्त्रीरोगोंका नष्ट करता है।

लघुचुक्रसन्धानम्

(ग. नि. । आसवा. ६)

प्र. सं. १८१६ "चुक्रसन्धानम् (स्वल्प)" देखिये

(६२९७) लवङ्गासवः (१)

(ग. नि. । आसवा. ६)

लवङ्गपिप्पलीलोहमरिचं सैलवालुकम् ।
द्विपलांशं जलस्यैतच्चतुर्द्रोणे विपाचयेत् ॥
द्रोणशेषे रसे तस्मिन्पूते शीते प्रदापयेत् ।
गुडस्य द्विशतं तिष्ठेत्तत्सर्वं घृतभाजने ॥
पक्षादूर्ध्वं जातरसे दद्यान्मात्रां यथाबलम् ।
अस्याभ्यासादरिष्टस्य गुदजा यान्ति संक्षयम् ॥
ग्रहणीपाण्डुहृद्रोगप्लीहगुल्मोदरापहः ।
कुष्ठशोफारुचिहरो बलवर्णाग्निवर्धनः ॥
सद्यः क्षयहरोऽरिष्टः कामलाश्वित्रनाशनः ।
कृमिग्रन्थ्यर्बुदव्यङ्गराजयक्ष्मज्वरान्तकृत् ॥

लौंग, पीपल, अगर, काली मिर्च और एलवालुकका चूर्ण १०-१० तोले लेकर सबको १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसके ठण्डा होने पर उसमें १२॥ सेर गुड़ मिलाकर यथा विधि घृतलिप्त मृत्पात्रमें सन्धान करके रक्खें और १५ दिन पश्चात् छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अर्श, संग्रहणी, पाण्डु, हृद्रोग, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, कुष्ठ, शोथ, अरुचि, क्षय, कामला, श्वित्र, कृमि, ग्रन्थि, अर्बुद, व्यङ्ग और ज्वरका नाश होता तथा बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

(६२९८) लवङ्गासवः (२)

(गदनिग्रह । आसवा ६)

देवपुष्पं वराङ्गं च केशरं पृथुकां तथा ।
कलौंजी मर्कटीबीजं मूसलीद्वयगोक्षुरम् ॥
बलाबीजानि पोस्तत्वग्बीजं च करहाटकम् ।
पृथक् पृथक् प्रकुर्वीत पलानां पञ्चकं तथा ॥

चतुर्द्रोणेऽम्भसः पक्त्वा कुर्यात्पादावशेषितम् ।
शटी च पिप्पलीमूलं मरिचं साश्वगन्धकम् ॥
शुण्ठी जातिफलं चापि कुङ्कुमं जातिपत्रिका ।
आकल्लकं कबावं च ह्येला कृष्णागुरुस्तथा ॥
तालीसं चन्दनं चैव विजया क्षीरकन्दका ।
वृद्धदारुभवं बीजं क्रमुकं वंशरोचना ॥
धत्तूरस्य च बीजानि पलमात्राणि कारयेत् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पूते शीते विनिक्षिपेत् ॥
द्वात्रिंशत्पलिकं क्षौद्रं धातक्याश्च पलाष्टकम् ।
तुलार्धं तु गुडाज्जीर्णाद् घृतभाण्डे विनिक्षिपेत् ॥
मासादूर्ध्वं पिबेदेनं प्रमेहं हन्ति दुर्जयम् ।
धातुक्षयं जयेच्छीघ्रं लवङ्गाद्यासवस्त्वयम् ॥

लौंग, दालचीनी, नागकेसर, कालाजीरा, कलौंजी, कौंचके बीज, दोनों मूसली, गोखरु, खरैटीके बीज (बीजबन्द), पोस्तका छिलका, पोस्तके दाने और मैनफल २५-२५ तोले लेकर सबको अधकुटा करके १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

तदनन्तर इस काथके ठण्डा होनेपर इसमें कचूर, पीपलामूल, काली मिर्च, असगन्ध, सोंठ, जायफल, केसर, जावत्री, अकरकरा, कबाबचीनी, इलायची, काला अगर, तालीसपत्र, सफेद चन्दन, भांग, क्षीरविदारी, विधारेके बीज, सुपारी, बंसलोचन और धतूरेके बीज, इनका ५-५ तोले चूर्ण तथा ४ सेर शहद, आधा सेर धायके फूलों का चूर्ण और ३ सेर १० तोले पुराना गुड़ मिलाकर सबको घृतसे चिकने किये हुवे मृत्पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें; और १ मास पश्चात् निकालकर छान लें।

यह आसव दुर्जय, प्रमेह और धातुक्षीणताको शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

लोध्रासवः

(वृ. नि.; यो. र. । प्रमेहा.)

प्र. सं. ५९६९ "रोध्रासव" देखिये।

(६२९९) लोहारिष्टः

(सु. सं. । चि. अ. १२; र. का. धे.; व. से. । मेदरोगा.)

शालसारादिनिर्यूहे चतुर्थांशावशेषिते ।
परिस्रुते ततः शीते मधुना मधुरीकृते ॥
फाणितीभावमापन्नं गुडशोधितमेव च ।
श्लक्ष्णपिष्टानि चूर्णानि पिप्पल्यादेर्गणस्य च ॥
ऐकध्यमावपेत्कुम्भे संस्कृते घृतभाविते ।
पिप्पलीचूर्णमधुभिः प्रलिप्ते चान्तरे शुचौ ॥
श्लक्ष्णानि तीक्ष्णलोहस्य तनुपत्राणि बुद्धिमान् ।
खदिरांगारतप्तानि बहुशः प्रक्षिपेद्बुधः ॥
सुपिधानं ततः कृत्वा यवपल्ले निधापयेत् ।
मासांस्त्रींश्चतुरो वापि यावद्वा लोहसंक्षयात् ॥
ततो जातरसं तत्तु सेवेत्प्रातर्यथाबलम् ।
उपयुञ्ज्याद्यथायोगमाहारं चास्य कल्पयेत् ॥
एष स्थूलं समाकर्षेन्नष्टस्याग्नेः प्रसादनः ।
शोफहृद्गुल्मजित्कुष्ठमेहपाण्ड्वामयापहः ॥
अभिष्यन्दामयान् सर्वान् नाशयेद् विषमज्वरान्

शालसारादि गणकी ओषधियां समान भाग मिश्रित ६। सेर लेकर सबको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रहे तो

छान लें और फिर उसके ठण्डा होने पर उसमें इतना शहद डालें कि वह मीठा हो जाए। तत्पश्चात् उसमें उचित मात्रामें शुद्ध राब और पिप्पल्यादिगणका चूर्ण एवं खैरके अंगारोंमें अनेक बार तपाये हुए शुद्ध लोहके बारीक पत्र मिलाकर सबको शुद्ध और घृतभावित मृत्पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करदें और उसे जौके ढेरमें दबा दें। इस पात्रमें औषध भरनेसे पूर्व शहदमें मिले हुए पीपलके चूर्णका लेप कर देना चाहिए।

२-३ मास या जब तक लोह न गल जाए तब तक मटकेको अनाजके ढेरमें ही रहने देना चाहिये और फिर उसे निकालकर छानकर बोतलोंमें भरलें।

इसे प्रातःकाल यथोचित मात्रानुसार सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे स्थूलता नष्ट और अग्नि दीप्त होती है।

इसके अतिरिक्त यह अरिष्ट शोथ, हृद्रोग, गुल्म, कुष्ठ, प्रमेह, पाण्डु, अभिष्यन्द और विषमज्वरको भी नष्ट करता है।

(राब १ सेर ४५ तोले; पिप्पल्यादिगणका चूर्ण तथा लोह समान भाग मिश्रित ६४ तोले।)

(६३००) लोहासवः (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. १०; र. का. धे. । पाण्डु., गुल्मा.; यो. चि. म. । अ. ७)

लोहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफलां च यवानिकाम्।
विडङ्गं मुस्तकं चित्रं चतुः सङ्ख्यापलं पृथक्॥
धातकीकुसुमानां तु प्रक्षिपेत्पलविंशतिः।
चूर्णीकृत्य ततः क्षौद्रं चतुः षष्टिपलं क्षिपेत्॥
दद्याद्गुडतुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा।
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य निदध्यान्मासमात्रकम्॥
लोहासवममुं मर्त्यः पिबेदग्निकरं परम्।
पाण्डुश्वयथुगुल्मानि जठराण्यर्शसां रुजम्॥
कुष्ठं प्लीहामयं कण्डूं कासं श्वासं भगन्दरम्।
अरोचकं च ग्रहणीं हृद्रोगं च विनाशयेत्॥

लोहचूर्ण, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजवायन, वायबिडंग, नागरमोथा और चीतामूल २०-२० तोले, धायके फूल १। सेर, शहद २ सेर, गुड़ ६। सेर और शुद्ध जल ६४ सेर लेकर कूटने योग्य चीजोंको कूटकर सबको घृतसे चिकने किये हुवे पात्रमें भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें, और १ मास पश्चात् निकाल कर छान लें।

यह आसव अग्निवर्धक है एवं पाण्डु, शोथ, गुल्म, उदररोग, अर्श, कुष्ठ, प्लीहा, कण्डु, खांसी, श्वास, भगन्दर, अरुचि, ग्रहणी और हृद्रोगको नष्ट करता है।

(६३०१) लोहासवः (२)

(गदनिग्रह । आसवा. ६)

फलत्रिकं निम्बपटोलमुस्ता-
पाठामृताचन्दनचित्रकं च।
वेल्लं समङ्गा च मधूकसार-
कर्चूरवासात्रिवृताहरिद्राः॥
दुरालभापर्पटकण्टकारी-
शक्रासनं यासकचर्मरङ्गे।

शशाङ्कलेखाकपिकच्छु मूलं
मेथी च बिल्वं कुटजश्च तिक्ता ॥
त्रायन्तिका पुष्करस्य मूलं
पलैकमानानि महौषधानि ।
षष्टिः पलानां खदिरस्य सारो
ह्ययोरजः स्यात् पलयुग्ममानम् ॥
स्याल्लोहकिट्टं च तुलाप्रमाणं
तत्पश्चकं केबुकजीवनीयम् ।
प्रक्षिप्य भाण्डे शशियुग्मपक्षान्
सूर्यातपे स्थाप्य ततस्तु योज्यः ॥
लोहासवोऽयं भिषजोपदिष्टः
सर्वोत्तमो रोगविनाशहेतुः ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, पटोलपत्र, नागरमोथा, पाठा, गिलोय, सफेद चन्दन, चीता-मूल, बायबिड़ंग, मजीठ, महुवेका सार, कचूर, बासा, निसोत, हल्दी, धमासा, पित्तपापड़ा, कटेली, इन्द्रजौ, जवासा, चर्मरङ्गा, बाबची, कौंचकी जड़, मेथी, बेलकी छाल, कुड़ेकी छाल, कुटकी, त्राय-माना और पोखरमूल ५-५ तोले तथा खैरसार ३॥। सेर एवं लोह चूर्ण १० तोले, लोहकिट्ट (मण्डूर) ६। सेर और केबुक तथा जीवनीय गणकी प्रत्येक ओषधि २५-२५ तोले लेकर सबका चूर्ण करके यथा विधि सन्धान करके २१ दिन धूपमें रक्खें। तत्पश्चात् छान कर बोतलोंमें भर कर रख दें।

(पानी ३ मन ३५ सेर, गुड़ ३० सेर)

सूचना—लोहारिष्ट और लोहासवमें लोह चूर्णके स्थानमें लोह भस्म डाली जाय तो उत्तम है। लोह भस्मको प्रथम जलमिश्रित हर्रके चूर्णमें भिगो दें और तीन दिन पश्चात् उसमें आमले और बहेड़ेका चूर्ण मिला दें। इसके चार दिन पश्चात् इस मिश्रणको आसवके घड़ेमें डालना चाहिये। इस क्रियासे लोह आसवमें विलीन हो जाता है।

इति लकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्



अथ लकारादिलेपप्रकरणम्

(६३०२) लशुनादिलेपः

(वृ. नि. र. । व्रणा.)

लशुनेनाथवा दद्याल्लेपनं कृमिनाशनम् ॥

घाव पर ल्हसनका लेप करनेसे कृमि नष्ट होते हैं।

(६३०३) लाक्षादिलेपः (१)

(वृ. मा. । क्षुद्ररोगा.)

लाक्षाकरञ्जपल्लवचक्रमर्दफललेपः ।
शिरसि कृतो बहुदृष्टो दारुणकशान्तिकरः परमः ॥

लाख, करञ्जके पत्ते और पंवाड़के बीज समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर लेप बनावें।

इसे शिरमें लगानेसे दारुणक नामक शिरो रोग नष्ट होता है।

(६३०४) **लाक्षादिलेपः** (२)

(वृ. नि. र. । वृद्ध्य.)

लाक्षाकरञ्जबीजं च शुण्ठी दारु च गैरिकम् ।
कुन्दरं च समं कृत्वा चूर्णयेन्मतिमान् भिषक् ॥
काञ्जिकेन तु सम्पेष्य तथा श्वयथुनाशनः ।

लाख, करञ्ज बीज, सोंठ, देवदारु, गेरु और कुन्दरु समान भाग लेकर सबको एकत्र पीस कर चूर्ण बनावें।

इसे काञ्जीमें पीस कर लेप करनेसे अन्त्रवृद्धि और शोथका नाश होता है।

(६३०५) **लाक्षादिलेपः** (३)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

लाक्षा कुष्ठं सर्षपाः श्रीनिकेतं
रात्रिव्योषं चक्रमर्दस्य बीजम् ।
कृत्वैकस्थं तक्रपिष्टः प्रलेपो
दद्रूघ्नो मूलकाद्बीजयुक्तः ॥

लाख, कूठ, सरसों, श्रीवास (धूप सरल), हल्दी, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, पवांड़के बीज और मूलीके बीज समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे छाछ (तक्र) में पीस कर लेप करनेसे दादका नाश होता है।

(६३०६) **लाक्षाद्युद्वर्त्तनम्**

(व. से. । कुष्ठा.; यो. र. । कुष्ठा.; वा. भ. । चि. अ. १९; वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

लाक्षाश्रीवेष्टकं कुष्ठं हरिद्रे गौरसर्षपाः ।
व्योषं मूलकबीजानि प्रपुन्नाटफलानि च ॥
एतान्यम्ल प्रपिष्टानि कुष्ठेषूद्वर्त्तनं परम् ।
सिध्मानां किटिभानाञ्च दद्रूणाञ्च विशेषतः ॥

लाख, श्रीवेष्ट, कूठ, हल्दी, दारुहल्दी, सफेद सरसों, सोंठ, मिर्च, पीपल, मूलीके बीज और पंवाड़के बीज समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे खट्टी कांजी या नीबूके रसमें पीस पर कुष्ठ पर मसलनेसे सिध्म, किटिभ और दादका नाश होता है।

(६३०७) **लाङ्गलीकन्दलेपः**

(रा. मा. । व्रणा. २५)

पिष्टेन लाङ्गलक्याः कन्देन विलेपिते व्रणस्य मुखे ।
सद्यो निर्याति क्षताच्छल्यं चिरकालनष्टमपि ॥

लांगली (कलियारी) की जड़को पीस कर व्रणके मुख पर लेप करनेसे बहुत दिनोंका भीतर रहा हुवा शल्य (कांटा इत्यादि) भी शीघ्र ही निकल आता है।

(६३०८) **लाङ्गलीलेपः**

(रा. मा. । मुख रोगा. ५)

यस्याङ्गुष्ठस्य नखो भवति
सघृतपिष्टलाङ्गलीलिप्तः ।

तदितरदिग्भवदशनकृमि-
रचिरात् पतति निर्जीवः ॥

जिस ओरके दांतमें कृमि हों उससे दूसरी ओरके (पैरके) अंगूठेके नख पर लांगलीकी जड़का लेप करनेसे कृमि मर कर गिर पड़ते हैं।

(६३०९) **लाङ्गल्यादिलेपः** (१)

(वृ. मा. । स्त्रीरोगा.)

तुषाम्बुपरिपिष्टेन मूलेन परिलेपयेत् ।
लाङ्गल्याश्चरणौ सूते क्षिप्रमापन्नगर्भिणी ॥

यदि बच्चा उत्पन्न होनेके समय अधिक विलम्ब हो रहा हो तो लांगली (कलियारी) की जड़को कांजीमें पीस कर पैरोंके तलुवोंमें लेप करनेसे शीघ्र प्रसव हो जाता है।

(६३१०) **लाङ्गल्यादिलेपः** (२)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११; व. से. । विषा.)

लाङ्गल्यतिविषालाबुजालिनीबीजमूलकैः ।
लेपो धान्याम्बु सम्पिष्टः कीटविस्फोटनाशनः॥

कलियारी, अतीस, कड़वी तूंबीके बीज, कड़वी तोरीके बीज और मूलीके बीज समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर चूर्ण बनावें।

इसे कांजीमें पीस कर लेप करनेसे विषैले कीटोंके काटनेसे उत्पन्न हुवे विस्फोटक नष्ट हो जाते हैं।

(६३११) **लामज्जकाद्युद्वर्तनम्**

(वृ. मा. । दाहा.)

लामज्जेनाथ शुक्तेन चन्दनेनानुलेपयेत् ।

लामज्जक (पीली खस) और लाल चन्दनको शुक्त (कांजी भेद) में पीसकर लेप करनेसे दाह शान्त होती है।

(६३१२) **लूताविषहरो लेपः**

(यो. त. । त. ७८)

कटभ्यर्जुनशैरीषशेलुक्षीरद्रुमत्वचः ।
कषायकल्कचूर्णाः स्युः कीटलूताव्रणापहाः ॥

कोयल, अर्जुनकी छाल, सिरसकी छाल, लिहसोड़ेकी छाल और पीपलकी छाल; इनमें से किसी एकका क्वाथ बना कर पीने और उससे धोनेसे, अथवा कल्क या चूर्ण बना कर खाने और लेप करनेसे विषैले कीड़े और मकड़ीके व्रणको आराम होता है।

(६३१३) **लोध्रादिलेपः** (१)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

बहिरवलिप्तं लोचनमभि-
कुपितमपि प्रसीदति क्षिप्रम् ।
लोध्ररसाञ्जनचन्दन-
मनःशिलाकुष्ठपथ्याभिः ॥

लोध, रसौत, लाल चन्दन, मनसिल, कूठ और हर्र समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

आंखोंके बाहर चारों ओर इसका लेप करनेसे नेत्राभिष्यन्द (आंखोंका दुखना) नष्ट होता है।

(६३१४) **लोध्रादिलेपः** (२)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११; वृ. मा. । क्षुद्ररोगा.)

लोध्रधान्यवचालेपस्तारुण्यपिटिकापहः ।

तद्वद्गोरोचना युक्तं मरीचं मुखलेपनात् ॥
सिद्धार्थकवचालोध्रसैन्धवैश्च प्रलेपनम् ॥

नीचे लिखे तीनों लेप तारुण्यपिडिका (मुहासों) को नष्ट करते हैं।

(१) लोध, धनिया और बच।

(२) गोलोचन और काली मिर्च।

(३) सफेद सरसों, बच, लोध और सेंधा-नमक। सब ओषधियां समान भाग लेनी चाहियें।

(६३१५) **लोध्रादिलेपः** (३)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

तथा शावरकं लोध्रं घृतभृष्टं विडालकः।
काय्र्यो हरीतकी तद्वद् घृतयुक्ता रुजापहा ॥

सावरलोध (पठानी लोध) को या हर्रको घीमें भून कर नेत्रोंके बाहर लेप करनेसे नेत्रपीड़ा शान्त होती है।

(६३१६) **लोध्रादिलेपः** (४)

(व. से. । उपदंशा.)

तिरीटाञ्जनवक्राह्वकोविदारेभकेशरैः।
लेपनं पुरुषव्याधौ जलपिष्टैः प्रशस्यते ॥

लोध, रसौत, तगर, कचनारकी छाल और गजकेसर समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे पानीमें पीस कर लेप करनेसे उपदंशके व्रण नष्ट होते हैं।

(६३१७) **लोमनाशनयोगः** (१)

(ग. नि. । अधि. १०)

गोदन्तं शङ्खचूर्णं क्षारेण युतं पलाशवृक्षस्य।
हरति जलेन तु पिष्टं प्रलेपनं योनिलोमानि ॥

गायका दांत, शंखचूर्ण और पलाशक्षार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे पानीमें पीस कर लेप करनेसे योनिके बाल गिर जाते हैं।

(६३१८) **लोमनाशनयोगः** (२)

(यो. त. । त. ७६; ग. नि. । अधि. १०)

हरितालभागपञ्चमेको भागः पलाशभस्मभवः।
भागश्च यवक्षारः स्याल्लेपाद्योनिलोमहरः ॥

पीली हरताल ५ भाग, पलाशक्षार १ भाग और जवाखार १ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे पानीमें पीसकर लेप करनेसे योनिके बाल गिर जाते हैं।

(६३१९) **लोमनाशनयोगः** (३)

(ग. नि. । अधि. १०)

समभागाद्धरितालादेको भागश्च किंशुकक्षारात्।
तद्वच्च शङ्खचूर्णादिति शातनमुत्तमं लोम्नाम् ॥

शुद्ध हरताल, पलाशक्षार और शंखचूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें।

इसे पानीमें मिला कर लेप करनेसे बाल गिर जाते हैं।

(६३२०) **लोहादियोगः**

(व. से. । क्षुद्र रोगा. ; वा. भ. । उ. अ. २४)

अयोरजो भृङ्गराजस्त्रिफलाकृष्णमृत्तिका।
स्थितमिक्षुरसे मासं समूलं पलितं जयेत् ॥

लोह चूर्ण, भंगरा, हर्र, बहेड़ा, आमला और काली मिट्टी समान भाग ले कर चूर्ण करके १ मास तक ईखके रसमें भिगोए रक्खें।

इसका लेप करनेसे सफेद बाल जड़से काले हो जाते हैं।

(६३२१) लोहादिलेपः

(र. र. । उपदंशा)

अयोरजस्ताम्ररजस्त्रिफलागैरिकस्तथा ।
उपदंशं निहन्त्येतद्दृष्टमिन्द्राशनिर्यथा ॥

लोह चूर्ण, ताम्र चूर्ण, हर्र, बहेड़ा, आमला और गेरु समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे (पानीमें) पीस कर लेप करनेसे उपदंश नष्ट होता है।

(लोह और ताम्रकी भस्म लेनी चाहिये।)

इति लकारादिलेपप्रकरणम्



अथ लकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

लघुभानुमतिवर्तिः

प्र. सं. ४९२३ " भानुमती वर्तिः (१) (लघु) देखिये ।

(६३२२) लशुनाद्यञ्जनम् (१)

(ग. नि. । ज्वरा. १; वृ. नि. र.)

लशुनं पिप्पली राजी वचा पथ्या समांशकाः।
एतच्चूर्णं जले पिष्टं चक्षुःस्थं ज्वरनाशनम् ॥

ल्हसन, पीपल, राई, बच और हर्र समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे पानीमें पीस कर आंखोमें लगानेसे ज्वर नष्ट होता है।

(६३२३) लशुनाद्यञ्जनम् (२)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

लशुनमरिचकृष्णामाणिमन्थोग्रगन्धा-
शुकतरुफलबीजैर्विश्वगोमूत्रपिष्टैः ।
कफपवनविकारे रक्तपित्तप्रभेदे
गदितमगदविद्भिर्नेत्रयोरञ्जनं स्यात् ॥

ल्हसन, काली मिर्च, पीपल, सेंधानमक, बच, सिरसके बीज और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे गोमूत्रमें पीस कर आंखोंमें लगानेसे कफ वातज और रक्तपित्त तथा अतिसार युक्त सन्निपात नष्ट होता है।

(६३२४) लाक्षादियोगः

(व. से. । नेत्र रोगा.)

लाक्षानिर्गुण्डीभृङ्गदार्वीरसेन
श्रेष्ठं कार्पासं भावितं सप्तकृत्वः ।
दीपाः प्रज्वाल्याः सर्पिषी तत्समुत्था
श्रेष्ठा पिल्लानां रोपणार्थं मषी सा ॥

रुईको लाख, संभालु, भंगरा और दारुहल्दीके स्वरस या काथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दे कर सुखा लें और फिर उसकी बत्ती बनाकर उसे घीके दीपकमें जलाकर स्याही इकट्ठी कर लें।

इसे आंखमें लगानेसे पिल्ल (पलकोंके भीतरके शोथ) का नाश होता है।

(६३२५) लामज्जकाद्यञ्जनम्

(यो. र. ; व. से.; वृ. नि. र. । नेत्ररोगा.)

लामज्जकोत्पलसितासारिवाचन्दनद्वयैः ।
कार्षिकैः सारिवा प्रस्थं क्वाथयेत्सलिलाढके ॥
पादशेषं परिस्राव्य पचेदादर्विलेपनात् ।
भाजने लौहशैले वा प्रातस्तत्सायमञ्जनम् ॥
प्रधानमेतच्छुक्रघ्नं व्रणशुक्रं शमं नयेत् ॥

लामज्जक (खस भेद), नीलोत्पल, मिसरी, सफेद सारिवा, सफेद चन्दन और लाल चन्दन १।-१। तोला तथा कृष्ण सारिवा १ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उसे पुनः पका कर गाढ़ा करें। जब करछीको लगने लगे तो अग्निसे नीचे उतार कर ठण्डा करके लोहे या पत्थरके बरतनमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे सुबह शाम आंखमें लगानेसे नेत्र शुक्र और सव्रण शुक्र नष्ट होता है। यह एक प्रधान औषध है।

(६३२६) लोहभस्माञ्जनम्

(र. चं.; वृ. नि. र. । सन्निपाता. ; भा. प्र. । म. खं. २ सन्निपाता.)

अयोरजः श्वेतलोध्रमञ्जनं मरिचं तथा ।
गोरोचनसमायुक्तं तन्द्रानाशनमुत्तमम् ॥

लोह चूर्ण, सफेद लोध, रसौत, काली मिर्च और गोरोचन समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें।

इसे आंखमें लगानेसे सन्निपातकी तन्द्रा नष्ट होती है।

इति लकाराद्यञ्जनप्रकरणम्



अथ लकारादिनस्य-प्रकरणम्

(६३२७) लक्ष्मणामूलयोगः

(ग. नि. । वन्ध्या.; रा. मा. । स्त्रीरोगा. ३०)

गृह्णाति लिङ्गाङ्कितलक्ष्मणाया
मूलेन नस्यं सघृतेन या स्त्री ।
अवामनासाविवरे ऋतुस्था
सा पुत्रिणी स्यात्पतिसंप्रयोगात् ॥

यदि ऋतुमती नारी उत्तम लक्ष्मणाकी जड़को घीमें पीसकर दहिने नसकोरेसे सूंघे और फिर यथा समय पतिसमागम करे तो उसको पुत्र प्राप्ति होती है।

(६३२८) लाङ्गल्यादिनस्यम् (१)

(रा. मा. । मुखरोगा. ४)

लाङ्गलीकन्दसुरसाव्योषकुष्ठैः सकट्फलैः ।
नस्यं तु पीनसं हन्यात्पूतिनासं च दारुणम् ॥

कलियारी की जड़, तुलसी, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, कूठ और कायफल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसको नस्य लेनेसे पीनस और दारुण पूतिनासा रोग नष्ट होता है ।

(६३२९) लाङ्गल्यादिनस्यम् (२)

(वृ. नि. र. । विषरोगा.)

जलेन लाङ्गलीकन्दनस्यं सर्पविषापहम् ।
वारिणा टङ्कणं पीतमथवार्कस्य मूलकम् ॥

जलमें कलियारीकी जड़को पीसकर उसकी नस्य देनेसे सर्पविष नष्ट होता है ।

सुहागे या आककी जड़को पानीमें पीसकर पिलानेसे भी सर्पविष नष्ट होता है ।

इति लकारादिनस्यप्रकरणम्



अथ लकारादिरसप्रकरणम्

(६३३०) लक्ष्मणालौहम् (१)

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

लक्ष्मणायाः पलशतं क्वाथयित्वा यथाविधि ।
क्वाथे पूते पुनः पक्वे घनीभूते च निक्षिपेत् ॥
अशोकं कुशमूलञ्च मधूकं मधुकं बलाम् ।
पाठां बिल्वं पलोन्मानं लौहं सर्वसमं तथा ।
लक्ष्मणालौहनामेदं भेषजं स्त्रीगदापहम् ।
जगतामुपकाराय दस्राभ्यां परिनिर्मितम् ॥

६। सेर लक्ष्मणा के पञ्चाङ्गको अधकुटा करके ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उसे पुनः पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें अशोककी छाल, कुशाकी जड़, महुवेका सार, मुलैठी, खरैटीकी जड़, पाठा और बेलगिरीका चूर्ण, ५-५ तोले तथा लोह भस्म ३५ तोले मिला कर ठण्डा करके सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे स्त्रियोंके समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा— २-३ रत्ती ।)

(६३३१) लक्ष्मणालौहम् (२)

(लक्ष्मणादिचूर्णम्)

(भै. र. । वाजीकरणा. ; न. मृ. । त. ३. ; र. रा. सु. । वाजीकर.)

लक्ष्मणाहस्तिकर्णाभ्यां त्रिकत्रयसमन्वयात् ।
अश्वगन्धा समायोगाल्लौहं पुंसवनं मतम् ॥
पुत्रोत्पत्तिकरं वृष्यं कन्याप्रसूतिनिवर्त्तकम् ।
कृशस्य बलदं श्रेष्ठं सर्वामयहरं परम् ॥

लक्ष्मणा, हस्तिकर्ण पलाश, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, चीतामूल, बायबिड़ंग और असगन्ध; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र खरल करें।

यह लौह वृष्य वाजीकरण, कृश मनुष्योंके लिये बलदाता और सर्व रोग नाशक है।

यदि कन्या ही कन्याएं उत्पन्न होती हों तो इसके सेवनसे पुत्रोत्पत्ति हो सकती है।

(**मात्रा**—३-४ रत्ती।)

(६३३२) लक्ष्मीनारायणरसः

(भै. र. । स्त्रीरोगा. ; र. चं. । वाता.)

शुद्धगन्धकमेतच्च टङ्कणं विषहिंगुलम् ।
रोहिण्यतिविषा कृष्णा वत्सकाभ्रकसैन्धवम् ॥
एतानि समभागानि खल्वमध्येविनिक्षिपेत् ।
दन्तिद्रावैः फलद्रावैर्मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥
वल्लद्वयां वटिं कृत्वा ह्यार्द्रकस्य जलैर्ददेत् ।
दोषज्वरे सन्निपाते विषूच्यां विषमज्वरे ॥
अतिसारे ग्रहण्यां च रक्तामे मेहशूलजित् ।
सूतिकावातदोषघ्नो लंकेशमिव राघवः ॥
इष्टान्नं भोजयेत्पथ्यमभ्यङ्गं स्नानमाचरेत् ।
कर्पूरमिश्रताम्बूलं प्रसूनं हरिचन्दनम् ॥
नारिकेलोदकं पीत्वा नारीणां संगमेव च ।
लक्ष्मीनारायणो नाम रसानामुत्तमो रसः ॥

शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, शुद्ध हिंगुल, कुटकी, अतीस, पीपल, इन्द्रजौ, अभ्रक भस्म और सेंधा नमक समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके दन्तीमूल और त्रिफलाके रसमें पृथक् पृथक् ३-३ दिन घोट कर ६-६ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—अदरकका रस।

इसके सेवनसे दोषज्वर, सन्निपात, विषूचिका, विषमज्वर, अतिसार, संग्रहणी, रक्तातिसार, आम, प्रमेह, शूल, सूतिका रोग और वातव्याधिका नाश होता है।

इसके सेवन कालमें यथेच्छ पथ्य भोजन, अभ्यंग, स्नान, कर्पूरयुक्त ताम्बूल भक्षण, पुष्पमाल धारण, हरिचन्दन लेपन और नारीकेलोदक पान करना चाहिये। स्त्रीसहवासका भी निषेध नहीं है।

(६३३३) लक्ष्मीविलासः (१)

(भै. र.; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. ; धन्व. ; र. र. । रसायना.; रसे. चि.म.। अ. ८; वृ. यो. त. । त. १४७; धन्व. । ज्वरा. ; न. मृ. । त. ५)

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ ।
तदर्द्धं चन्द्रसंज्ञस्य जातीकोषफले तथा ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं धुस्तूरकस्य च ।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूलमेव च ॥
नारायणी तथा नागबला चातिबला तथा ।
बीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं बीजमेव च ॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसैः पुनः ।
निष्पिष्य वटिका कार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान् घोरान् चतु-
र्विधान् ।

वातोत्थान् पैत्तिकांश्चैव नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥
कुष्ठमष्टादशाख्यश्च प्रमेहान् विंशतिं तथा।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम् ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसाश्रितश्च यत्।
मेदोगतं धातुगतं चिरजं कुलसम्भवम् ॥
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥
उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैकृत्यमेव च।
कासपीनसयक्ष्मार्शस्थौल्यदौर्गन्ध्यनाशनः ॥
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिसूदनम्।
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥
वारितक्रसुरासीधुसेवनात्कामरूपधृक् ॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः।
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्वताम् ॥
नित्यं स्त्रीणां शतं गच्छेन्मत्तवारणविक्रमः।
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकः परः ॥
प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना।
रसो लक्ष्मीविलासस्तु वासुदेवे जगत्पतौ ॥
अभ्यासाद् यस्य भगवान् लक्षनारीषु वल्लभः ॥

कृष्णाभ्रक भस्म ५ तोले; शुद्ध गन्धक; शुद्ध पारद, २॥-२॥ तोले, कपूर, जावत्री, जायफल, विधारेके बीज, धतूरेके बीज, भांगके बीज, विदारीकन्द, शतावर, नागबला (गंगेरन), अतिबला (कंघी), गोखरुके फल और हिज्जल बीज १-१ तोला लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिलाकर सबको पानके रसमें घोट कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे भयंकर सन्निपात, वातज और पैत्तिक रोग, अठारह प्रकारके कुष्ठ, बीस प्रकारके प्रमेह, नाड़ी व्रण, दुष्ट व्रण, अर्श, भगन्दर; तथा रक्तगत, मांसगत, मेदोगत, धातु गत, पुराना और वंशानुगत कफवातज श्लीपद; गलशोथ, अन्त्रवृद्धि, दारुण अतिसार, आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कर्ण विकार, नासा विकृति, मुखविकृति खांसी, पीनस, राजयक्ष्मा, स्थूलता, दुर्गन्धि, समस्त प्रकारके शूल, शिरपीड़ा और स्त्रीरोगोंका नाश होता है।

इस औषधकी १-१ गोली प्रति दिन प्रातः काल पानी, तक्र, सुरा या सीधुके साथ खानी चाहिये।

इसके सेवनसे वृद्ध पुरुष कामदेव सदृश रूपवान और तरुणस्पर्द्धी हो जाता है।

इसके प्रभावसे न तो शुक्रक्षय होता है, न लिङ्गशैथिल्य और न ही केश सफेद होते हैं।

इस रसके सेवनसे दृष्टि शक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है और कामशक्ति इतनी प्रबल हो जाती है कि मनुष्य बहुतसी स्त्रियोंसे मदमत्त हाथीके समान समागम कर सकता है।[1]

[1] भै. र.; रसे. सा. सं. आदि कई ग्रंथोंमें वातरोगाधिकारमें लक्ष्मी विलासका एक अन्य पाठ भी है जिसमें अष्टमांश (सम्पूर्ण औषधोंका अष्टमांश अथवा १ भागका अष्टमांश-१५ रत्ती) स्वर्ण भस्म अधिक लिखी है। शेष प्रयोग इसके समान ही है।

(६३३४) **लक्ष्मीविलासरसः (२)**

(रसे. सा. सं. ; धन्व. ; भै. र.; र. रा. सु. । कासा.)

शुद्धसूतं सतालश्च तालार्द्धं रसखर्परम् ।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं[1] पलं पलम्॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ।
कुलत्थस्य रसेनैव भावयेच्च पुनः पुनः ॥
एलाजातीफलाख्यश्च तेजपत्रं लवङ्गकम् ।
यमानीजीरकश्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमौषधम् ।
छायाशुष्का वटी कार्य्या चणकप्रमिता शुभा
शीताम्बुना पिबेद्धीमान्सर्वकासनिवृत्तये ।
क्षयकासं तथा श्वासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् ।
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ॥
अर्शोनाशं करोत्येव बलवृद्धिश्च कारयेत् ।
वर्जयेच्छाकमम्लश्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध हरताल ५-५ तोले, खपरिया २॥ तोले, बंग भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कान्त लोह भस्म, कांस्य भस्म और शुद्ध गन्धक ५-५ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियां मिला कर सबको काले भंगरेके रस और कुलथीके काथमें ३-३ दिन घोटें । तदनन्तर इलायची, जायफल, तेजपात, लौंग, अजवायन, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग ले कर सबको एकत्र कूटकर काथ बनावें और उसमें उपरोक्त औषधको ३ दिन खरल करके चनेके बराबर गोलियां बना कर छायामें सुखा लें ।

अनुपान—शीतल जल ।

इसके सेवनसे हर प्रकारकी खांसी, क्षयज खांसी, ज्वर युक्त तथा ज्वर रहित श्वास, हलीमक, पाण्डु, शोथ, शूल, प्रमेह और अर्शका नाश तथा बलवृद्धि होती है ।

अपथ्य—शाक, अम्ल पदार्थ और भृष्ट पदार्थोंसे परहेज़ करना चाहिये ।

[1] भै. र. में गन्धकका अभाव है तथा "नतं भृङ्गं वंशगर्भं कर्षमात्रन्तु कारयेत् ।"

पाठ अधिक है । अर्थात इस प्रयोगमें १।-१। तोला तगर, भांग और बंसलोचन भी डालना चाहिये ।

(६३३५) **लक्ष्मीविलासरसः (३)**

(र. चं. ; यो. र.; र. रा. सु. ; वृ. नि. र. । राजयक्ष्मा.)

सुवर्णताराभ्रकताम्रवङ्ग-
त्रिलोहनागामृतमौक्तिकानि ।
एतत्समं योज्य रसस्य भस्म
खल्वे कृतं स्यात्कृतकज्जलीकम् ॥
सुमर्दयेन्माक्षिकसम्प्रयुक्तं
तच्छोषयेद्द्वित्रिदिनं च घर्मे ।
तत्कल्कमूषोदरमध्यगामि
यत्नात्कृतं तार्क्ष्यपुटेन पक्वम् ॥
यामाष्टकं पावकमर्दितं च
लक्ष्मीविलासो रसराज एषः ।
क्षये त्रिदोषप्रभवे च पाण्डौ
सकामला सर्वसमीरणेषु ॥
शोफप्रतिश्याय प्रनष्टवीर्ये

मूलामयं चैव सशूलकुष्ठम् ।
हत्वाग्निमांद्यं क्षयसन्निपातं
श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ।
तारुण्यलक्ष्मीप्रतिबोधनाय
श्रीमद्विलासो रसराज एषः ॥

सुवर्ण भस्म, चांदी भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, बंग भस्म, तीन प्रकारका लोह (तीक्ष्ण लोह भस्म, मुण्ड लोह भस्म, कान्त लोह भस्म), सीसा भस्म, शुद्ध बछनाग और मोती भस्म १-१ भाग तथा पारद भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र करके बारीक करें और फिर शहद मिला कर खरल करें तथा २-३ दिन धूपमें सुखाकर उसका गोला बनालें और उसे मूषामें बन्द करके कुक्कुट पुटमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर रसको निकाल कर आठ पहर चीतेके काथमें घोट कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे क्षय, त्रिदोषज पाण्डु, कामला, समस्त वातज रोग, शोथ, प्रतिश्याय, शुक्रक्षय, अर्श, शूल, कुष्ठ, अग्निमांद्य, सन्निपात, श्वास और खांसीका नाश तथा यौवनका विकास होता है ।

(६३३६) लक्ष्मीविलासरसः (४)

(र. चं. । वाजीकरणा.)

सुवर्णमुक्ताफलमभ्रकञ्च
रसेन्द्रभस्मायसविद्रुमं च ।
कस्तूरिकाकुङ्कुम जातिपत्री-
लवङ्ग एला त्वक् तुल्यभागिकम् ॥
सम्मर्दयेत्ताम्बुलिकारसेन
घृष्ट्वा त्र्यहं वल्लमितं च दद्यात् ।
सितामधुभ्यां सह सेवनीयः
सर्वामयं हन्ति न संशयोऽत्र ॥
कामस्य वृद्धिं प्रकरोति सम्य-
ग्नारी शतं गच्छति नित्यमेव ।
षण्ढोऽल्पवीर्यो बहुमूत्रमेही
यथानुपानेन च सेवयेत
क्षयापहं धातुविवर्द्धनं च
लक्ष्मीविलासो रसराज एषः ॥

सुवर्ण भस्म, मोती भस्म, अभ्रक भस्म, पारद भस्म, लोह भस्म, प्रवाल भस्म, कस्तूरी, केसर, जावत्री, लौंग, इलायची और दालचीनी समान भाग लेकर सबको ३ दिन पानके रसमें घोटकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा— ३ रत्ती । इसे मिश्री और शहदके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे समस्त रोग नष्ट होते और पुरुषत्व शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि मनुष्य नित्य प्रति सौ सौ स्त्रियोंके साथ समागम कर सकता है ।

इसे नपुंसक, अल्पवीर्य और बहुमूत्र रोगीको यथोचित अनुपानके साथ सेवन कराना चाहिये ।

यह रस क्षयनाशक और धातुवर्द्धक है ।

(६३३७) लक्ष्मीविलासरसः (५)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

शुद्धसूतं समं गन्धं दिनं शुष्कं विमर्दयेत् ।
जम्बीरनीरेण दिनं मर्दयेन्मतिमान्भिषक् ॥
निक्षिपेद्दृढमूषायां वासोभिर्मुनिसंज्ञकैः ।
वेष्टयेत्सिकतायन्त्रे यामैर्द्वादशभिः पचेत् ॥
स्वांगशीतं समुद्धृत्य श्लक्ष्णे खल्वे विमर्दयेत् ।

ताम्रभस्म कणा कुष्ठं प्रत्येकं सूतभागतः ॥
प्रक्षिप्य मर्दयेद् गाढं त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
प्रदद्यादस्य सूतस्य शृङ्गवेरसितायुतम् ॥
वल्लयुग्मं दीर्घतापे वातरोगे महत्यपि ।
निरामं नाशयेदाशु पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥
विषमज्वरजीर्णार्शः क्षयमेहहलीमकाः ।
स्वानुपानाच्छमं यान्ति रसराजप्रभावतः ॥
सेवितो मधुसर्पिर्भ्यां वर्षमेकं जितेन्द्रियैः ।
जरामरणरोगादीन्कुष्ठरोगान्सुदारुणान् ॥
लक्ष्मीविलासनामायं शङ्करेण कृतो हरेत् ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक १-१ भाग लेकर दोनोंको एक दिन खरल करके कज्जली बनावें और फिर उसे १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर दृढ़ मूषामें बन्द करें और उस पर ७ कपरमिट्टी करके सुखा लें। तदनन्तर इस मूषाको बालुकायन्त्रमें रख कर १२ पहरकी अग्नि दें और यन्त्रके स्वांग-शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकालकर खरल करें एवं उसमें १-१ भाग ताम्र भस्म; पीपल और कूठका चूर्ण मिला कर सबको ३ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें अच्छी तरह खरल करें।

मात्रा—६ रत्ती।

इसे अदरकके रस और मिश्रीके साथ देनेसे जीर्णज्वर और भयङ्कर वातज रोग नष्ट होते हैं।

पीपल और शहदके साथ खिलानेसे निरामज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

इसके अतिरिक्त यह रस उचितानुपानके साथ देनेसे विषमज्वर, अर्श, क्षय, प्रमेह और हलीमकको भी नष्ट करता है।

यदि जितेन्द्रिय पुरुष इसे शहद और घीके साथ १ वर्ष तक सेवन करे तो दारुण कुष्ठ और अन्य समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं तथा जरा और अकालमृत्यु नहीं आती।

लक्ष्मीविलासरसः (६)

(रसे. सा. सं. ; र. चि. ; रसे. चि. म.)

प्र. सं. ५५६९ "महा लक्ष्मी विलास रसः" देखिये.

लक्ष्मीविलासरसः (७)

(रसे. सा. सं. ; भै. र. । शिरो रोगा.)

प्र. सं. ५५७० महा लक्ष्मी विलास रसः (२) देखिये।

(६३३८) लघुकामेश्वरगुटी

(यो. चि. म. । अ. ३)

शतावरी गोक्षुरश्च कपिकच्छु उटीङ्गणम् ।
गाङ्गेरुकी बला मुस्ता मुशली खुरसाणकम् ॥
समुद्रशोषो हि खराश्चविकं शाल्मली शठी ।
मकुष्ठस्य जटा माषा वाजिगन्धा च रेणुका ॥
विदारी ग्रन्थिकं गुन्दं विडङ्गं जीरकं शणम् ।
मांसी सिता वा धान्याकं विजया तूर्यभागिका ॥
जातीपत्रं जातिफलं चातुर्जातं कटुत्रिकम् ।
कर्पूरं गगनं लोहं रससिन्दूरकं सिता ॥
गुटिका द्विगुणखण्डेन वृद्धकोलप्रमाणतः ।
वीर्यवृद्धिबलं पुष्टिं कामदीप्तिं करोत्यलम् ॥

शतावर, गोखरु, कौंचके बीज, उटीङ्गणके बीज, गंगेरन, खरैटीके बीज (बीजबन्द), नागरमोथा, मूसली, खुरासानी अजवायन, समुद्रशोष,

अजमोद, चव, सेंभलकी छाल, (या फल), कचूर, मौटकी जड़, उड़द, असगन्ध, रेणुका, विदारीकन्द, पीपलामूल, गोंद, बायबिड़ंग, जीरा, सनके बीज, जटामांसी, आमला और धनिया १-१ भाग; भांग, इन सबसे चौथाई तथा जावित्री, जायफल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, सोंठ मिर्च, पीपल, कपूर, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, रस सिन्दूर और चांदी भस्म, १-१ भाग तथा खांड सबसे २ गुनी लेकर खांडकी चाशनी बनाकर उसमें समस्त औषधोंका चूर्ण मिलावें और बड़े बेरके बराबर गोलियां बना कर छायामें सुखालें।

इनके सेवनसे बल, वीर्य और कामकी वृद्धि होती है।

(६३३९) लघुकामेश्वरो मोदकः

(धन्व. वाजीकरणा.)

चूर्णांशं गगनं घनार्द्धविमलं कुष्ठं च गन्धामृता मेथी मोचरसो विदारि मूसली गोक्षूरकं क्षूरकम्।
भीरुश्चैव कशेरुकं यवनिका तालाङ्कुर धान्यकं यष्टी नागबला बला मधुरिका जातीफलं सैन्धवम् ॥
भृङ्गी कर्कटशृङ्गकं त्रिकटुकं जीरद्वयं चित्रकं चातुर्जातपुनर्नवं गजकणा द्राक्षा शठी कट्फलम्।
शाल्मल्यङ्घ्रि फलत्रिकं
कपिभवं बीजं समं चूर्णयेत्
चूर्णार्द्धा विजया सिता द्विगुणिता
मध्वाज्य मिश्रं नयेत् ॥
कर्षार्द्धं गुडकं निधाय
विधिना राजा सदा सेवयेत्
पेया क्षीरसिता च वीर्यकरणे
स्तम्भोऽप्ययं कामिनाम्।
वामावश्यकरः सुखातिसुखदः सर्वाङ्गनाद्रावकः क्षीणे पुष्टिकरः क्षयक्षयकरो नानामयध्वंसकः ॥ कासश्वासमहातिसारशमनो मन्दानलो दीपको दृष्टः सिद्धिफलो रसायनवरः कामेश्वरो दुर्लभः॥

कूठ, शुद्ध गन्धक, गिलोय, मेथी, मोचरस, विदारी कन्द, मूसली, गोखरु, तालमखाना, शतावर, कसेरु, अजवायन, तालाङ्कुर, धनिया, मुलैठी, गंगेरन, बला (खरैंटीके बीज), सौंफ, जायफल, सेंधानमक, अतीस, काकड़ासिंगी, सोंठ, मिर्च, पीपल, सफेद जीरा, काला जीरा, चीतामूल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, पुनर्नवा, गजपीपल, मुनक्का, कचूर, कायफल, सेंभलकी मूसली, हर्र, बहेड़ा, आमला और कौंचके बीज; इनका चूर्ण १-१ भाग, अभ्रक भस्म इन सबसे चौथाई और भांग आधी, तथा विमल भस्म अभ्रकसे आधी और खांड सबसे २ गुनी लेकर प्रथम खांडकी चाशनी बनावें और फिर उसमें समस्त ओषधियां मिलाकर आधे आधे कर्ष (७॥ माशे) के मोदक बनावें।

इन्हें शहद और घीमें मिलाकर सेवन करना और ऊपरसे मिश्रीयुक्त दूध पीना चाहिये।

इनके सेवनसे वीर्यवृद्धि होती और स्तम्भन शक्ति बढ़ती है। यह कामिनी वशीकरण, स्त्रीद्रावक, पौष्टिक और अनेक रोग नाशक है।

यह मोदक क्षय, खांसी, श्वास, अतिसार, और अग्निमांद्यको नष्ट करता है ।

(६३४०) **लघुक्रव्यादरसः**

(र. चं.; यो. र. । क्रव्य. ; वृ. यो. त. । त. ७१)

पारदाद्द्विगुणं गन्धं गन्धांशं मृतलोहकम् ।
पिप्पली पिप्पलीमूलमग्निशुण्ठी लवङ्गकम् ॥
लोहसाम्यं पृथक्कुर्याद्रससाम्यं सुवर्चलम् ।
टङ्कणं मरिचं चापि गन्धतुल्यं प्रदापयेत् ॥
एतद्विचूर्ण्य यत्नेन भावयेत्सप्तधाऽम्लकैः ।
एतद्रसायनं श्रेष्ठं माषमात्रं प्रदापयेत् ॥
तक्रेण केवलं वाऽपि दद्याद्भोजनपाचने ।
क्षिप्रं तज्जीर्यते भुक्तं भवति ध्रुवम् ॥
सर्वाजीर्णप्रशमनं लघुक्रव्यादसञ्ज्ञितम् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग, लोह भस्म २ भाग, पीपल, पीपलामूल, चीता, सोंठ और लौंगका चूर्ण २–२ भाग, सञ्चल (काला नमक) १ भाग, सुहागेकी खील २ भाग और काली मिर्चका चूर्ण २ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको नीबूके रसकी सात भावना दे कर १–१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इन्हें तक्रके साथ या बिना ही अनुपानके सेवन करनेसे भोजन शीघ्र पच जाता है । यह रस हर प्रकारके अजीर्ण रोगको नष्ट करता है ।

(६३४१) **लघुचन्द्रोदयरसः**

(न. मृ. । त. ५)

जातीफलं लवङ्गं च कर्पूरं मरिचं तथा ।
प्रत्येकं तोलकं दत्त्वा सुवर्णस्य च माषकम् ॥
अण्डजं माषमानं च सर्वतुल्यमथेश्वरम् ।
यत्नतो मर्दयेत्खल्वे चतुर्गुञ्जावटीं चरेत् ॥
एष चन्द्रोदयो नाम रसो वाजीकरः परः ।
हन्ति रोगानशेषांश्च बलवीर्याग्निवर्द्धनः ॥

जायफल, लौंग, कपूर और काली मिर्चका चूर्ण १–१ तोला, सुवर्ण भस्म १ माषा, कस्तूरी १ माषा और रससिन्दूर सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करके (पानके रसमें घोट कर) ४–४ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

यह रस अत्यन्त वाजीकरण है तथा बल वीर्य और अग्निकी वृद्धि एवं समस्त रोगोंको नष्ट करता है ।

(अनुपान—मिश्रीयुक्त दूध ।)

लघुतालेश्वररसः

(र. चि. म. । स्त. २ ; र. का. धे.)

प्र. सं. २६८५ "तालेश्वरो रसः" लघुः (८) देखिए ।

लघुपुष्पधन्वारसः

(यो. र.)

प्र. सं. ४४२५ पुष्पधन्वारस (२) देखिये।

(६३४२) **लघुपोटलीरसः**

(र. चि. म. । स्त. ७)

शुद्धगन्धस्य सूतस्य मृतश्वेताभ्रकस्य च ।
चत्वारश्च पृथग्ग्राह्या गद्याणाश्च भिषग्वरैः ॥
एवं द्वादशगद्याणा मधुना पेषयेत्त्र्यहम् ।
चूर्णं पीतकपर्देषु क्षिप्त्वा सर्वं प्रयत्नतः ॥
लिप्त्वा दग्धाश्मचूर्णेन पिधायाथ शरावके ।
ततो वस्त्रमृदा लिप्त्वा देयस्तस्य करीपुटः ॥

द्विवेलं तत्पुटो देयः शीते सूक्ष्मं च मर्दयेत् ।
तच्चूर्णं कूप्यके क्षेप्यं रसोऽयं लघुपोटलो ॥
सार्धवल्लद्वयो ग्राह्यो द्वात्रिंशन्मरिचैः सह ।
मरिचानि च देयानि चैकवृद्ध्या दिनं दिनम् ॥
घोरेषु सन्निपातेषु समस्तेषु च वायुषु ।
अतिसारेषु सर्वेषु पित्तश्लेष्मादिकेष्वपि ॥
अष्टादशप्रमेहेषु समस्तेषु ज्वरेषु च ।
बलक्षीणेषु मन्दाग्नौ दातव्यः प्रत्यहं रसः ॥
ज्वरेषु नैव देयानि घृताक्तमरिचानि च ।
तैलक्षाराम्लवर्ज्यं च भोजनं मधुरं वरम् ॥
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते नित्यं संसेविते रसे ॥

शुद्ध पारद ४ गद्याण (२४ माशे), शुद्ध गंधक ४ गद्याण, श्वेत अभ्रक भस्म, ४ गद्याण और शहद १२ गद्याण लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको ३ दिन खरल करके पीली कौड़ियोंमें भर दें और उनके मुखको पत्थरके चूनेसे बन्द करके सुखा लें। तदनन्तर उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें। जब एक बारकी अग्नि शान्त हो जाय तो पुनः पुट लगावें। इस प्रकार दो पुट देनेके पश्चात् जब सम्पुट स्वांग-शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकाल कर (कौड़ी समेत) पीस लें।

इसे ७॥ रत्तीकी मात्रानुसार ३२ नग काली मिर्चोंके चूर्णके साथ सेवन कराना चाहिये और प्रतिदिन १-१ मिर्च बढ़ाते जाना चाहिये।

इसके सेवनसे घोर सन्निपात, समस्त वातज रोग, बल क्षीणता और अग्निमांद्यका नाश होता है।

ज्वरमें लाल मिर्च, घी, तेल, क्षार और अम्ल पदार्थोंसे परहेज़ करना तथा मधुर रस युक्त (हल्का) भोजन करना चाहिये।

लघुप्राणेश्वररसः

(र. का. धे. । ज्वरा.)

प्र. सं. ४४८० " प्राणेश्वर रसः " (२) लघु देखिये।

लघुमालिनीवसन्तरसः

वसन्तमालिनी रसः (लघु) देखिये।

लघुमृगाङ्करसः

(र. का. धे. । क्षय.)

प्र. सं. ५६३९ "मृगाङ्क रसः (७) (स्वल्प) देखिये।

लघुमृत्युञ्जयो रसः

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

प्र. सं. ५६५६ " मृत्युञ्जयरसः " (४) देखिये।

लघुवङ्गेश्वररसः

वङ्गेश्वर रसः (लघु) देखिये।

(६३४३) लघुशङ्खभस्मयोगः

(ग. नि. । शूला. २३)

शूलोदये शूलशान्त्यै लघुशम्बूकभस्म च ।

छोटे शंख (घोंघों) की भस्म खिलानेसे शूल शान्त हो जाता है।

(**मात्रा**—१ माशा ।

अनुपान—उष्ण जल ।)

(६३४४) लघुशिवगुटिका

(यो. र. । क्षय. ; वृ. यो. त. । त. ७६)

कौटजत्रिफलानिम्बपटोलघननागरैः ।
भावितानि दशाहानि रसैर्द्वित्रिगुणानि च ॥
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ।
त्वक्क्षीरिपिप्पलीधात्रीकर्कटाख्यान्पलोन्मितान् ॥
निदिग्धिफलमूलाभ्यां पलं युञ्ज्यात्त्रिजातकात् ।
मधुत्रिपलसंयुक्तान्कुर्यादक्षसमान्गुडान् ॥
दाडिमाम्रपयःक्षीररसयूषसुरासवान् ।
तं भक्षयित्वाऽनुपिबेन्निरन्नो हितभक्ष्यभुक् ॥
पाण्डुकुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगन्दरम् ।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि मूत्रस्थानविबन्धनात् ॥
यद्यत्र योजितं येन कान्तलोहं तथाऽभ्रकम् ।
पलं पलं च मिलिते तदा स्यात्किमतः परम् ॥
तीव्रदुःखप्रदं पाण्डुं प्रमेहं सपरिग्रहम् ।
राजरोगं च व्याधींश्च जयेदिति किमद्भुतम् ॥

इन्द्रजौ, त्रिफला, नीमकी छाल, पटोल, नागरमोथा और सोंठ समान भाग लेकर क्काथ बनावें। तदनन्तर ४० तोले शिलाजीतको इस क्काथकी १० भावना दें। तत्पश्चात् यह शिलाजीत, ४० तोले सफेद खांड, तथा ५-५ तोले बंसलोचन, पीपल, आमला और काकड़ासिंगीका चूर्ण; २॥-२॥ तोले कटेलीकी जड़ और फलोंका चूर्ण एवं दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण ५ तोले लेकर सबको एकत्र खरल करके १५ तोले शहदमें मिलाकर १।-१। तोलेके मोदक बना लें।

अनुपान—अनारका रस, आमका रस, दूध, मूंगका यूष, सुरा अथवा आसव।

इसे प्रातःकाल निरन्न (खाली पेट) खाना और पथ्य पूर्वक रहना चाहिये।

इसके सेवनसे पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीह, तमक श्वास, अर्श, भगन्दर और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है।

यदि इस योगमें ५-५ तोले कान्त लोह भस्म और अभ्रक भस्म मिला ली जाय तो यह अत्यन्त दुःखप्रद पाण्डु, प्रमेह और राजयक्ष्मामें अत्युत्तम फलदायक औषध हो जाती है।

(६३४५) लघुसिद्धाभ्रकरसः

(र. र. स. । उ. अ. १६; र. चं. ; र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

समांशं रसगन्धाभ्रदरदं च विशोधितम् ।
लोहखल्वे विनिक्षिप्य गव्याज्येन समन्वितम् ॥
द्रोणीचुल्ल्यां न्यसेत्खल्वं साङ्गारायां प्रयत्नतः ।
मर्दकेनापि लौहेन मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं लघु सिद्धाभ्रको मतः ।
वल्लतुल्यो रसो जीरवारिणा सहितः प्रगे ॥
पीतो हरति वेगेन ग्रहणीमतिदुर्धराम् ।
अतिसारं महाघोरं सातिसारं ज्वरं तथा ॥
पाचनो दीपनो हृद्यो गात्रलाघवकारकः ।
नागार्जुनेन कथितः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म और शुद्ध हिंगुल समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको थोड़े गोघृतमें मिलाकर लोह-खरलमें डालकर उसे अंगारोंपर रक्खें और २ दिन

तक लोहेकी मूसलीसे घोटते रहें। तदनन्तर निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती।

अनुपान—जीरेका क्वाथ।

यह अत्यन्त कष्ट साध्य संग्रहणीको भी शीघ्र ही नष्ट कर देता है। इसके अतिरिक्त यह रस भयंकर अतिसार तथा ज्वरातिसारको नष्ट और शरीरको हल्का करता है एवं पाचन, दीपन और हृद्य है।

लघुसूचिकाभरणरसः

(शा. सं. । खं. २ अ. १२)

सूचिकाभरणरस लघु देखिये।

लघ्वानन्दो रसः

(र. चं. । पाण्डु., वाता.; रसे. सा. सं. । पाण्डु., वाता.; र. रा. सु.; धन्व । पाण्डु.; रसे. चि. म. । अ. ९)

प्रयोग सं. ४४२ "आनन्दोदय रसः" देखिये।

(६३४६) लङ्केश्वररसः (१)

(भै. र.; रसे. सा. सं.; र. रा. सु. । कुष्ठा.; रसे. चि. म. । अ. ९; र. र.; र. का. धे. । कुष्ठा.)

भस्मसूताभ्रशुल्वानि गन्धं ताल[1] शिलाजतु।
अम्लवेतस्य[2] तुल्यांशं त्र्यहं दत्त्वा विमर्दयेत्॥
मध्वाज्याभ्यां वटीं कुर्य्याद् द्विगुञ्जां भक्षयेत्सदा।
कुष्ठं हन्ति गजं सिंहो रसो लङ्केश्वरो महान्॥
त्रिफलानिम्बमञ्जिष्ठा वचा पाटलमूलकम्।
कटुकारजनीक्वाथं चानुपानं प्रयोजयेत्॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल (पाठान्तरके अनुसार स्वर्ण माक्षिक भस्म), शिलाजीत और अम्लवेत (पाठान्तरके अनुसार अम्लवेत और शुद्ध बछनाग) समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर ३ दिन तक शहद और घीमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे कुष्ठ नष्ट होता है।

अनुपान—त्रिफला, नीमकी छाल, मजीठ, बच, पाढलकी जड़, कुटकी और हल्दी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें। औषध खानेके पश्चात् यह क्वाथ पीना चाहिये।

(६३४७) लङ्केश्वररसः (२)

(र. र.; र. का. धे. । कुष्ठा.)

भस्मसूतार्कलोहानां कृष्णा गन्धकटङ्कणम्।
कुष्ठतुत्थकतुल्यांशं मर्द्यं धुस्तूरजैर्द्रवैः॥
दिनैकं तद्वटीं कुर्यान्माषमात्रश्च भक्षयेत्।
रसो लङ्केश्वरो नाम्ना प्रसुप्तिमण्डलप्रणुत्॥
गन्धकं त्रिफलाचूर्णं निर्विषीं गुग्गुलुं समम्।
लिहेदेरण्डतैलेन कर्षकमनुपानकम्॥

पारद भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म, पीपल का चूर्ण; शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, कूठका चूर्ण और शुद्ध तूतिया समान भाग ले कर सबको १ दिन धतूरेके रसमें घोट कर १-१ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे सुप्ति और मण्डल कुष्ठ नष्ट होता है।

[1] गन्धताप्यमिति पाठान्तरम्।
[2] अम्लवेतं विषमिति पाठान्तरम्॥

अनुपान—शुद्ध गंधक, त्रिफलाका चूर्ण निर्बिसी और शुद्ध गूगल समान भाग लेकर सबको एकत्र खरल कर लें। औषध खानेके पश्चात् इसमें से १। तोला अनुपान अरण्डीके तेलमें मिलाकर चाटना चाहिये।

(६३४८) **लङ्केश्वररसः** (३)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

तालकं माक्षिकं तुत्थं हरबीजं सगन्धकम् ।
कर्कोटीपत्रतोयेन मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥
चुल्यां पाच्यं चतुर्यामं सशर्करज्वरापहः ।
अयं लङ्केश्वरो नाम शीतमातङ्गकेशरी ॥

शुद्ध हरताल, सोनामक्खी भस्म, शुद्ध तूतिया, शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिलाकर सबको सात दिन ककोड़ेके पत्तोंके रसमें घोट कर (आतशी शीशीमें भरेकर) ४ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें और फिर उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकालकर सुरक्षित रक्खें।

इसे मिश्रीके साथ देनेसे शीतज्वर नष्ट होता है।

(**मात्रा**—१-२ रत्ती)

(६३४९) **लवङ्गादिचूर्णम्**

(भै. र. । स्त्रीरोगा.)

लवङ्गं टङ्कणं मुस्तं धातकीं बिल्वधान्यकम् ।
जातीफलं सर्जकश्च शताह्वा दाडिमं तथा ॥
जीरकं सैन्धवं मोचं नीलोत्पलरसाञ्जनम् ।
अभ्रकं वङ्गकश्चैव समङ्गा रक्तचन्दनम् ॥
चव्यं चातिविषा शृङ्गी खदिरं बालकं समम् ।
भृङ्गराजरसैः प्लाव्यं भावयित्वा दिनत्रयम् ॥
छागीदुग्धेन मतिमान् गर्भिणीमनुपानतः ।
एतच्चूर्णं प्रदातव्यं सङ्ग्रहग्रहणीहरम् ॥
नानावर्णमतीसारं ज्वरं चैव नियच्छति ।
आमरक्तातिसारघ्नं शूलशोथनिषूदनम् ॥

लौंग, सुहागा, नागरमोथा, धायके फूल, बेलगिरी, धनिया, जायफल, राल, सौंफ, अनारदाना, जीरा, सेंधा, मोचरस, नीलोत्पल, रसौत, अभ्रक भस्म, बंग भस्म, मजीठ, लाल चन्दन, चव, अतीस, काकड़ासिंगी, खैरसार और सुगन्धबाला समान भाग लेकर यथाविधि चूर्ण बनावें और फिर उसे ३ दिन भंगरेके रसकी भावना दे कर सुखा लें।

(**मात्रा**—१-१॥ माशा)

अनुपान—बकरीका दूध।

इसके सेवनसे गर्भिणीकी संग्रहणी, नानावर्णवाला अतीसार, ज्वर, आमातिसार, रक्तातिसार, शूल और शोथादिका नाश होता है।

(६३५०) **लवङ्गादिचूर्णम् (वृद्ध)**

(यो. चि. म. । अ. २)

लवङ्गमेलातजपत्रजोत्पलं
उशीरमांसीतगरं सबालकम् ।
कङ्कोलकृष्णागरुनागकेशरं
जातीफलं चन्दनजातिपत्रिका ॥
द्वयाजाजिकात्र्यूषणपुष्करं शठी
फलत्रिकं कुष्ठविडङ्गचित्रकम् ।
तालीसपत्रं सुरदारु धान्यकं
यवानियष्टीखदिराम्लवेतसम् ॥

तुगाजमोदाघनसारमभ्रकं
भृङ्गीवृषाग्रन्थिकमग्निमन्थिकम् ।
प्रियङ्गुमुस्तातिविषाशतावरी
सत्वं गुडूच्यास्तृवृतादुरालभा ॥
समानि सर्वैश्च समा सिता भवेत्
बृहल्लवंगादिरयं निगद्यते ।
सायं प्रभे खादति कर्षसंमितं
भवन्ति देहे बलवीर्यपुष्टयः ॥
निहन्ति दीपयत्यग्निं तनुवर्णकरं परम्
वातघ्नं लोचनं हृद्यं कण्ठजिह्वाविशोधनम्॥
प्रमेहकासारुचियक्ष्मपीनसं
क्षयार्शदाघाग्रहणीत्रिदोषनुत् ।
हिक्कातिसारप्रदरं गलग्रहं
निहन्ति पाण्डुस्वरभङ्गमश्मरीम् ॥

लौंग, इलायची, दालचीनी, तेजपात, नीलोत्पल, खस, जटामांसी, तगर, सुगन्धबाला, कंकोल, पीपल, अगर, नागकेसर, जायफल, सफेद चन्दन, जावत्री, सफेद और काला जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, पोखरमूल, कचूर, हर्र, बहेड़ा, आमला, कूठ, बायबिडंग, चीता, तालीसपत्र, देवदारु, धनिया, अजवायन, मुलैठी, खैरसार, अम्लबेत, बंसलोचन, अजमोद, कपूर, अभ्रक भस्म, काकड़ासिंगी, बासा, पीपलामूल, अरणी, फूल प्रियंगु, नागरमोथा, अतीस, शतावर, गिलोयका सत, निसोत और धमासा समान भाग तथा मिश्री सबके बराबर ले कर यथाविधि चूर्ण बनावें ।

मात्रा--१। तोला

यह चूर्ण बलवीर्य वर्द्धक, पौष्टिक, अग्निदीपक, वातनाशक, नेत्रोंके लिये हितकारी हृद्य, कण्ठ और जिह्वा शोधक है । इसके सेवनसे प्रमेह, खांसी, अरुचि, राजयक्ष्मा, पीनस, क्षय, अर्श, ग्रहणी, त्रिदोष, हिचकी, अतिसार, प्रदर, गलग्रह, पाण्डु स्वरभंग और अश्मरीका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—४-६ माशे)

(६३५१) लवङ्गादिवटी (बृहत्)

(रसे. सा. सं. । अग्निमान्द्या.)

लवङ्गजातीफलधान्यकुष्ठं
जीरद्वयं त्र्यूषणत्रैफलञ्च ।
एलात्वचं टङ्कवराटमुस्तं
वचाजमोदा विडसैन्धवञ्च ॥
तदर्द्धकं पारदगन्धमभ्रं
लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम् ।
तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं
वल्लप्रमाणां वटिकाञ्च कृत्वा ॥
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोयै-
रियं निहन्याद्ग्रहणीविकारम् ।
आमानुबन्धं सरुजं प्रवाहं
ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम् ॥
कुष्ठाम्लपित्तं प्रबलं समीरं
मन्दानलं कोष्ठगतञ्च वातम् ।
वटी लवङ्गाद्या वसुप्रणीता
तथा सवातं विनिहन्ति शीघ्रम् ॥

लौंग, जायफल, धनिया, कूठ, सफेद जीरा, काला जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची, दालचीनी, सुहागेकी खील, कौड़ी भस्म, नागरमोथा, बच, अजमोद, विडलवण और सेंधा नमकका चूर्ण १-१ भाग (२-२ तोले) तथा शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म और

लोह भस्म समान भाग मिश्रित उक्त समस्त औषधोंसे आधी (प्रत्येक ५। तोले) ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको पानके रसमें घोट कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—उष्ण जल।

इनके सेवनसे ग्रहणी विकार, आम और पीड़ायुक्त अतिसार (प्रवाहिका), कफज ज्वर, शूल, कुष्ठ, अम्लपित्त, प्रबल वायु, अग्निमांद्य और कोष्ठगत वायुका नाश होता है।

(६३५२) लवङ्गाद्यं चूर्णम् (बृहत्)

(भै. र. । ग्रहण्य.)

लवङ्गातिविषा मुस्तं पिप्पली मरिचानि च ।
सैन्धवं हवुषा धान्यं कट्फलं पुष्करं तथा ॥
जातीकोषफलाजाजीसौवर्चलरसाञ्जनम् ।
धातकी मोचकं पाठा पत्रं तालीशकेशरम् ॥
चित्रकश्च बिडश्चैव तुम्बुरु बिल्वमेव च ।
त्वगेला पिप्पलीमूलमजमोदा यमानिका ॥
समङ्गा वत्सकं शुण्ठी दाडिमं यावशूकजम् ।
निम्बं सर्जरसं क्षारं सामुद्रं टङ्कणं तथा ॥
ह्रीबेरं कुटजश्चैव जम्ब्वाम्रं कटुरोहिणी ।
अभ्रकं पुटितं लौहं शुद्धगन्धकपारदम् ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
मधुना वा लिहेच्चूर्णं पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥
सर्वदोषहरश्चैव ग्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ।
वातिकीं पैत्तिकीश्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ॥
पक्वापक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ।
कृष्णोरुणश्च पीतश्च मांसधावनसन्निभम् ॥
ज्वरारोचकमन्दाग्निं कासं श्वासं वमिं तथा ।
अम्लपित्तं तथा हिक्कां प्रमेहश्च हलीमकम् ॥
पाण्डुरोगश्च विष्टम्भमर्शांसि विविधानि च ।
प्लीहगुल्मोदरानाहशोथातीसारपीनसान् ॥
आमवातं तथा जीर्णं सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ।
उदरं प्रदरश्चैव लवङ्गाद्यमिदं शुभम् ॥

लौंग, अतीस, मोथा, पिप्पली, काली मिर्च, सैन्धवलवण, हपुषा (हाऊबेर), धनिया, कायफल, पुष्करमूल, जावित्री, जायफल, कालाजीरा, सौवर्चलनमक, रसौत, धायके फूल, मोचरस, पाठा, तेजपत्र, तालीशपत्र, नागकेसर, चित्रक, बिड्लवण, धनियां, बेलगिरी, दारचीनी, छोटी इलायची, पिप्पलीमूल, अजमोद, अजवाइन, मजीठ, कुड़ेकी छाल, सोंठ, अनारका छिलका, यवक्षार, नीमकी छाल, राल, सर्जिक्षार, सामुद्रलवण, सुहागा, सुगन्धबाला, इन्द्रजौ, जामुनकी छाल, आमकी छाल, कटुकी, अभ्रक भस्म, लौहभस्म, गन्धक और पारद समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावें। यह चूर्ण ग्रहणी, अतीसार, ज्वर, अरुचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन, अम्लपित्त, हिक्का, प्रमेह, हलीमक, पाण्डु, विष्टम्भ, अर्श, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, आध्मान, शोथ, प्रतिश्याय, आमवात, अजीर्ण, प्रदर आदि रोगोंको नष्ट करता है।

मात्रा—१ माशा।

अनुपान—शहद या तण्डुलोदक।

(६३५३) लवङ्गाद्यं चूर्णम् (बृहत्)

(भै. र. । ग्रहण्य.)

लवङ्गं जीरकं कौन्ती सैन्धवं त्रिसुगन्धिकम् ।
अजमोदा यमानी च मुस्तकं सकटुत्रयम् ॥

त्रिफला शतपुष्पा च पाठा भूनिम्बगोक्षुरम् ।
जातीकोषफले दार्वी नलदं चन्दनं मुरा ॥
शटी मधुरिका मेथी टङ्कणं कृष्णजीरकम् ।
क्षारद्वयं वालकश्च बिल्वं पौष्करं तथा ॥
चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं सधनीयकम् ।
रसाभ्रगन्धकं लौहं समं सर्वं विचूर्णितम् ॥
उष्णोदकानुपानेन मन्दाग्नेर्दीपनं परम् ।
शीततोयानुपानैर्वा बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥
आमातीसारं ग्रहणीं चिरकालोत्थितामपि ।
शूलं विष्टम्भमानाहं विसूचीं शोथकामले ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं हन्ति कासं विशेषतः ।
लवङ्गाद्यं महच्चूर्णं शर्करासहितं पिबेत् ॥
आध्मानं शमयेच्छीघ्रं लवङ्गस्यानुपानतः ।
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतल्लोकानुग्रहहेतवे ॥

लौंग, जीरा, रेणुका, सैन्धव लवण, दारचीनी, तेजपत्र, छोटी इलायची, अजमोद, अजवायन, मोथा, सोंठ, पिप्पली, काली मिर्च, हरड़, बहेड़ा, आमला, सोया, पाठा, चिरायता, गोखरु, जावित्री, जायफल, दारुहल्दी, जटामांसी, लाल चन्दन, मुरामांसी, कचूर, सौंफ, मेथी, सुहागा, कालाजीरा, यवक्षार, सर्जिक्षार, सुगन्धबाला, बिल्व, पुष्करमूल, चित्रक, पिप्पलीमूल, बायविडङ्ग, धनिया, पारद, अभ्रकभस्म, गन्धक और लौहभस्म समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

मात्रा—१ माशा ।

अनुपान—वातादि दोषोंके अनुसार उष्ण तथा शीतजलके साथ सेवन करानेसे मन्द हुई २ अग्नि प्रदीप्त होती है तथा आमातीसार, ग्रहणी, शूल, विष्टम्भ, आनाह, विषूचिका, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डु, कास, आदि रोगोंमें खांडके साथ सेवन करावें । यह चूर्ण लौंगके अनुपानसे आध्मानको शान्त करता है ।

(६३५४) लवङ्गाद्यं मोदकम्

(भै. र. । अग्निमांद्य.)

लवङ्गं पिप्पली शुण्ठी मरिचं जीरकद्वयम् ।
केशरं तगरश्चैव एला जातीफलं तुगा ॥
कट्फलं तेजपत्रश्च पद्मबीजं सचन्दनम् ।
कक्कोलमगुरुश्चैव उशीरमभ्रकं तथा ॥
कर्पूरं जातीकोषश्च मुस्तं मांसी यवस्तथा ।
धान्यकं शतपुष्पा च लवङ्गं सर्वतुल्यकम् ॥
सर्वचूर्णद्विगुणितां शर्करां विनियोजयेत् ।
सर्वरोगं निहन्त्याशु अम्लपित्तं सुदारुणम् ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णश्च कामलापाण्डुरोगनुत् ।
बलपुष्टिकरश्चैव विशेषात् शुक्रवर्द्धनम् ॥
ग्रहणीं सर्वरूपाश्च अतीसारं सुदुर्जयम् ।
अश्विभ्यां निर्मितं हन्ति लवङ्गाद्यमिदं शुभम् ॥

लौंग, पीपल, सोंठ, काली मिरच, सफेद जीरा, काला जीरा, नागकेसर, इलायची, जायफल, बंसलोचन; कायफल, तेजपात, कमलगट्टा, सफेद चन्दन, कक्कोल, अगर, खस, अभ्रक भस्म, कपूर, जावत्री, नागरमोथा, जटामांसी, इन्द्रजौ, धनिया और सौंफका चूर्ण १-१ भाग और लौंगका चूर्ण सबके बराबर (२६ भाग) लेकर सबसे दो गुनी (१०४ भाग) खांडकी चाशनीमें मिला कर (३-३ माशेके) मोदक बना लें ।

इनके सेवनसे भयंकर अम्लपित्त, अग्निमांद्य, अजीर्ण, कामला, पाण्डु, हर प्रकारकी संग्रहणी और कष्ट साध्य अतीसार नष्ट होता है ।

ये मोदक बल पुष्टिकारक और विशेषतः शुक्रवर्द्धक हैं।

लवणमण्डूरम्

(ग. नि. । पाण्डु.)

मण्डूर लवण प्रयो. सं. ५४८२ देखिये।

(६३५५) लहरीतरङ्गो रसः

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

मृतायोभ्रार्कवङ्गानां शुद्धपारदगन्धयोः ।
पञ्चविंशतिभागाः स्युः पृथक् पञ्च विषस्य च॥
नवसादरतः पञ्चभागा द्वादश टङ्कणात् ।
भावनोवरमुख्याश्च भावयेत्कन्यकाद्रवैः ॥
एकविंशतिवारं च तावदार्द्रकजै रसैः ।
सप्तधाधूर्त्ततैलेन तथा कन्यारसेन च ॥
काचकुप्यां च संरुध्य बालुकायन्त्रगं पचेत् ।
यामद्वात्रिंशकं यावत् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वापि यथायोग्यं च भक्षयेत् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु राजयक्ष्माणमुद्धतम् ॥
योगो ब्रह्मास्त्रलहरी तरङ्गोयं महारसः ॥

लोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, बंग-भस्म, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक २५–२५ भाग; शुद्ध बछनाग ५ भाग, नौसादर ५ भाग और सुहागा १२ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धक-की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको घृतकुमारी और अदरकके रसकी २१–२१ भावना देकर ७ भावना धतूरके तेलकी दें और फिर पुनः घृतकुमारीके रसकी सात भावना देकर आतशी शीशीमें भर दें तथा उसे बालुकायन्त्रमें रख कर ३२ पहरकी अग्नि दें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर खरल कर लें।

मात्रा—२–३ रत्ती।

इसे उचित अनुपानके साथ देनेसे सन्निपात और प्रचण्ड राजयक्ष्माका नाश होता है।

(६३५६) लाईचूर्णम् (१)

(वै. मृ.; वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

त्रिजातकव्योषवरारसेन्द्र-
गन्धाजमोदामिशिवेल्लरात्र्यः ।
बिल्वानलाजाजिलवङ्गधान्य-
गजोपकुल्यामधुकं पटूनि ॥
हिङ्गुः कुबेराह्वयमोचसारौ
क्षारौ जया सर्वचतुर्थभागाः ।
इदं हि चूर्णं विनिहन्ति तूर्णं
प्रसूतिकासङ्ग्रहणीविकारम् ॥
समस्तरोगान्तकमग्निकारि
भ्राजिष्णुताकारिसुतक्रपीतम् ।
इमं प्रयोगं बहुधानुभूतं
चकार धात्री किल कापि लाही ॥

दालचीनी, तेजपात, इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अजमोद, सौंफ, बायबिड़ंग, हल्दी, बेल-गिरी, चीतामूल, जीरा, लौंग, धनिया, गजपीपल, मुलैठी, पांचो नमक (सेंधा, काला नमक (संचल), बिड लवण, काच लवण, समुद्र लवण), हींग, तुन वृक्षका सार, मोचरस, जवाखार और सज्जीखार १–१ भाग तथा भांग सबसे चौथाई ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर

उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

यह चूर्ण सूतिका रोग और संग्रहणीको शीघ्र ही नष्ट करता और अग्निकी वृद्धि करता है। यह अनेक बारका अनुभूत प्रयोग है।

(मात्रा—१ माशा)

अनुपान—तक्र।

(६३५७) लाईचूर्णम् (२) (मध्यम)

(र. रा. सु. । संग्रहण्य.)

शाणं शाणं रसं गन्धं तयोः कुर्य्याच कज्जलीम्।
मृताभ्रं भ्रष्टबाल्हीकं त्रिसुगन्धं च वालुकम्॥
जातीफलं लवङ्गं च कुष्ठं जीरं कुलिञ्जनम्।
व्योषं मोचरसं बिल्वं कारवी षट् पटूनि च॥
एतानि शाणमात्राणि भ्रष्टभङ्गाखिलैः समाः।
लाईचूर्णमिति ख्यातं रुच्यं दीपनपाचनम्॥
प्रातस्तक्रेण शाणन्तद्द्वयं शाणार्द्धकं निशि।
सतक्रं हन्त्यतीसारं ग्रहणीं च प्रवाहिकाम्॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, भुनी हुई हींग, दालचीनी, इलायची, तेजपात, एलवालुक, जायफल, लौंग, कूठ, जीरा, कुलिंजन, सोंठ, मिर्च, पीपल, मोचरस, बेलगिरी, कलौंजी और छः लवण (सेंधा, संचल, विड नमक, सामुद्र लवण, काच लवण और मृत्तिका लवण) १-१ शाण तथा भुनी हुई भांग सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

यह चूर्ण रोचक, दीपन और पाचन है। इसके सेवनसे अतिसार, ग्रहणी और प्रवाहिकाका नाश होता है।

इसमेंसे १ शाण (३॥ माशे) प्रातः और आधी शाण सायंकालको तक्रके साथ सेवन करना चाहिये।

लाईचूर्णम् (३) (मध्यम)

(भै. र. । ग्रहण्य. ; वृ. यो. त. । त. ६४)

" रसायनामृत रसः " प्र. सं. ६११९ देखिये।

(६३५८) लाईचूर्णम् (४) (लघु)

(यो. र.; र. चं. । ग्रहण्य.; यो. त. । त. २१.)

सूतं गन्धं त्रिकटुकं दीप्यकं जीरकद्वयम्।
सौवर्चलं सैन्धवं च रामठं बिडमेव च॥
शक्राह्वयस्य चूर्णं तु चूर्णतुल्यं प्रदापयेत्।
सङ्ग्रहं शूलमानाहं हन्यान्नानातिसारजित्॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, सफेद और काला जीरा, सञ्चल (काला नमक), सेंधा नमक, घीमें भुनी हुई हींग और बिड नमक १-१ भाग तथा भांग सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे संग्रहणी, शूल, अफारा और अनेक प्रकारका अतिसार नष्ट होता है।

(मात्रा—१ माशा । अनुपान—तक्र।)

(६३५९) लाईचूर्णम् (५) (लघु)
(नायिकाचूर्णम्)

(भै. र. ; र. का. धे. । ग्रहण्य.)

त्रिशाणं पञ्चलवणं प्रत्येकं त्र्यूषणं पिचुः।
गन्धकात् माषकानष्टौ चत्वारो माषका रसात्॥

इन्द्राशनात्पलं शाणत्रितयाधिकमिष्यते ।
खादेत् मिश्रकृतान्माषमनुपेयश्च काञ्जिकम् ॥
माषकादि क्रमेणैवमनुयोज्यं रसायनम् ।
अत्यन्ताग्निकरश्चैतद्भोजनं सर्वकामिकम् ॥
प्रसिद्धा योगिनी नारी तया प्रोक्तं रसायनम् ।
ग्रहणीनाशनं ह्येतदग्निसन्दीपनं परम् ॥

सेंधानमक ३ शाण (११। माशे), काला नमक ३ शाण, बिड नमक ३ शाण, सामुद्र लवण ३ शाण, काच लवण ३ शाण; सोंठ १। तोला, काली मिर्च १। तोला, पीपल १। तोला, शुद्ध गन्धक १० माशे, शुद्ध पारद ५ माशे और भांग ५ तोले ११। माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ माशा ।

अनुपान—काञ्जी ।

इसके सेवनसे संग्रहणीका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है ।

(६३६०) लाईचूर्णम् (६) (लघु)
(नायिकाचूर्णम्)

(र. रा. सु.; वृ. नि. र.; भा. प्र. । ग्रहण्य.)

कर्षं गन्धकमर्द्धपारदमुभेकुर्याच्छुभां कज्जलीम् ।
त्र्यक्षं[1] त्र्यूषणतश्च पञ्चलवणं सार्द्धं च कर्षं पृथक् ॥
भृष्टं हिङ्गु च जीरकद्वययुतं सर्वार्द्धभङ्गायुतम् ।
खादेद् टङ्कमितं प्रवृत्ति गदवांस्तक्रेण बिल्वेन वा ॥

१ द्व्यक्षमिति पाठान्तरम्

शुद्ध गन्धक १। तोला, शुद्ध पारद ७॥ माशे, सोंठ, मिर्च, पीपल १।-१। तोला, पांचों नमक (सेंधा, संचल, विड लवण, सामुद्र लवण और काच लवण) तथा भुनी हुई हींग और दोनों जीरे १॥-१॥ कर्ष (प्रत्येक २२॥ माशे) लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलावें एवं इस समस्त चूर्णसे आधी भांग मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे तक्र या बेलके क्वाथके साथ सेवन करनेसे अतिसार नष्ट होता है ।

(६३६१) लाईचूर्णम् (७) (बृहत्)
(बृहन्नायिकाचूर्णम्)

(भै. र.; र. का. धे. ; र. रा. सु. ; र. र. ; धन्व. । ग्रहण्य. ; वृ. यो. त. । त. ६४; वृ. नि. र.)

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं रजनीद्वयम्[1] ।
भल्लातकं यमानी च हिङ्गु लवणपञ्चकम्[2] ॥
गृहधूमो वचा कुष्ठं घनमभ्रञ्च गन्धकम् ।
क्षारत्रयश्चाजमोदा पारदो गजपिप्पली[3] ॥
अमीषां चूर्णकं यावत्तावच्छक्राशनस्य च ।
अभ्यर्च्य नायिकां प्रातर्योगिनीं कामरूपिणीम् ॥
गुञ्जाष्टमितं चापि भक्षयेदस्य गुण्डकम् ।
मन्दाग्निकासदुर्नामप्लीहपाण्डुचिरज्वरान् ॥

१ जीरकद्वयमिति पाठान्तरम्

२ हिङ्गुलं लवणत्रयमिति पाठान्तरम्

३ कुछ ग्रन्थोंमें मोचरस, पाठा, लौंग और जावित्री अधिक लिखी है ।

प्रमेहशोथविष्टम्भसङ्ग्रहग्रहणीं जयेत् ।
सर्वातीसारहरणः सर्वशूलनिषूदनः ॥
आमवातगदोच्छेदी सूतिकातङ्कनाशनः ।
न च ते व्याधयः सन्ति वातपित्तकफोद्भवाः ॥
यान्न हन्यादसौ सिद्धो गुण्डको नायिकाकृतः।
काष्ठमप्युदरे तस्या भक्षणाद्याति जीर्णताम् ॥

चीतामूल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, हल्दी, दारुहल्दी, (पाठान्तरके अनुसार हल्दी और दारुहल्दीके स्थानमें सफेद और काला जीरा), शुद्ध भिलावा, अजवायन, हींग (पाठान्तरके अनुसार शुद्ध हिंगुल), पांचो नमक[४] (सेंधा, संचल, बिड लवण, काच लवण और सामुद्र लवण), घरका धुवां, बच, कूठ, नागरमोथा,[५] अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, अजमोद, शुद्ध पारद और गजपीपल १-१ भाग तथा भांग सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ माशा ।

इसके सेवनसे अग्निमांद्य, खांसी, अर्श, प्लीहा, पाण्डु, जीर्ण ज्वर, प्रमेह, शोथ, विष्टम्भ, संग्रहणी, हर प्रकारका अतीसार, शूल, आमवात और सूतिका रोग आदि अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

इसके प्रभावसे काष्ठ भी पच सकता है ।

४ पाठान्तरके अनुसार ३ लवण ।

५ वृ. यो. त. में नागरमोथेके स्थान पर त्रिफला पाठ है ।

(६३६२) लाङ्गलीगुटिका (१)
(लाङ्गल्यादिगुग्गुलुवटिका)

(भा. प्र. ; र. चं. । वातरक्ता. ; ग. नि. । वात. २० ; वृ. मा. । वातरक्तो.)

लाङ्गल्यास्त्वमृतातुल्यं कन्दमुद्धृत्य यत्नतः ।
योजयेत् त्रिफलालोहरजस्त्रिकटुकैः समैः ॥
गुग्गुल्वमृतवल्लीभिर्द्राक्षालुङ्गरसेन वा ।
त्रिफलाया रसैर्युक्ता गुटिकाः कोलसम्मिताः ॥
भक्षयेन्मधुनालोड्य शृणु कुर्वन्ति यत्फलम् ।
पादस्फुटितदुर्भग्नं जानुप्राप्तं च यद्भवेत् ॥
यच्च देहोद्गतं रक्तं यच्चासाध्यं प्रकीर्तितम् ।
हन्तीयं भक्ष्यमाणस्य प्रबलं वातशोणितम् ॥

गिलोय, कलियारीकी जड़, त्रिफला, लोह भस्म, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल), शुद्ध गूगल और बीज रहित मुनक्का समान भाग लेकर सबको जम्बीरी नीबूके रस और त्रिफलाके काथमें खरल करके बेरके समान गोलियां बना लें ।

इन्हें शहदमें मिलाकर सेवन करना चाहिये ।

जिस वातरक्तमें पैरोंमें घाव हो गये हों, जो जानु तक पहुंच गया हो और जिसे असाध्य समझा जाता हो वह भी इसके सेवनसे नष्ट हो जाता है ।

(६३६३) लाङ्गलीगुटिका (२)

(ग. नि. । गुटिका. ४)

लाङ्गली त्रिवृता लोहचूर्णं दशपलं पृथक् ।
त्रिंशत्तु गुटिकाः पथ्याः कुर्याद्भृङ्गरसप्लुताः ॥

छायाशुष्कां च तत्रार्धां गुटिकां भक्षयेत्ततः ।
जीर्णे रसेन रूक्षेण पेयां पूर्वं न भोजयेत् ॥
यन्त्रितो ब्रह्मचर्याद्यैः क्रमेण गुटिकामपि ।
खादेत्प्रातस्तु मासैकं भवेत्कामचरः क्रमात् ॥
एवं सर्वाणि कुष्ठानि जयत्यातबलान्यपि ।
धीमेधास्मृतियुक्तस्तु नित्यं जीवेत्समाः शतम् ॥

कलियारीकी जड़, निसोत और लोह चूर्ण (भस्म) ५०—५० तोले ले कर सबका चूर्ण करके उसे भंगरेके रसमें घोटें और सम्पूर्ण औषधकी ३० गोलियां बनाकर छायामें सुखा लें।

इनमेंसे प्रथम आधी आधी गोली नित्य प्रति प्रातः काल सेवन करावें और औषध पचने पर रूक्ष पदार्थोंके रससे पेया बनाकर खिलावें । औषध पचनेके पहिले भोजन न देना चाहिये ।

इसके सेवन कालमें संयम पूर्वक रहना और ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये ।

कुछ दिन बाद मात्रा बढ़ाकर एक गोली तक खिला सकते हैं ।

इनके सेवनसे १ मासमें सम्पूर्ण कुष्ठ नष्ट हो कर धी, मेधा और स्मृतिकी वृद्धि होती है ।

(६३६४) लाङ्गल्याद्यं लौहम्

(र. रा. सु. । वातरक्ता. ; धन्व.; रसे. सा. सं.; र. र. । वातरक्ता.)

विशुद्धलाङ्गलीमूलत्रिकटुत्रिफलैस्तथा ।
लाक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत् ॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च ।
विमृद्य यत्नतः पश्चात् गुटिकां कोल सम्मिताम्
भक्षयेन्मधुना सार्धं शृणु कुर्वन्ति यान् गुणान् ।
आजानुस्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा ॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्यासाध्यं च शोणितम् ॥

शुद्ध कलियारी मूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, लाख, और गूगल १—१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिला कर जम्बीरी नीबूके रस और त्रिफलाके क्वाथमें घोट कर बेरके समान गोलियां बना लें।

इन्हें शहदमें मिलाकर सेवन करना चाहिये ।

इनके सेवनसे जानु तक तथा सर्वांगमें फूटे हुवे साध्यासाध्य हर प्रकारके वातरक्तका नाश होता है ।

(६३६५) लाविकाचूर्णम् (१) (मध्यम)

(र. रा. सु. ; र. का. धे. । ग्रहण्य.)

अभ्रं पारदगन्धकं करिकणा भल्लातजातीफलम्
क्षारं हिङ्गु विडङ्गपञ्चलवणं धूमश्च कुष्ठं वचा ॥
द्वे जीरे त्रिफलाजमोदमरुणाव्योषं यवानी ।
ततश्चूर्णं सर्वमिदं समेन रजसा शक्राशनेना-न्वितम् ॥
मन्दाग्निं ग्रहणीं प्रमेहहरणं दुर्नामकासापहम् ।
शोथानीकवमित्वशूलनि-
चयं नानातिसारं ज्वरम् ॥
हन्यादामसमीरणमरुचि-
गदान् लूतामयं पाण्डुताम् ।
सर्वेऽन्येपि शमं प्रयान्ति
नियतं रोगास्तु वातादयः ॥
प्रातश्चाक्षमितारनाल
सहिता भुक्ता च सा लाविका ।

कुर्यात्कान्तिमयं वपुश्च
मतिदं गम्भीरनादं तथा ॥
अम्भोभिस्त्वथवानुपान-
विधिना भक्षेच्च तां मस्तुभिः ।
स्वेच्छा भक्षणतो भवेत्
प्रमुदितो सद्वैद्यनिदर्शनात् ॥

अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, गजपीपल. शुद्ध भिलावा, जायफल, जवाखार, हींग, बायबिड़ंग, पांचो लवण, घरका धुंवा, कुष्ठ, बच, सफेद और काला जीरा, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजमोद, अतीस, सोंठ, मिर्च, पीपल और अजवायन १-१ भाग तथा भांग सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे मन्दाग्नि, ग्रहणी, प्रमेह, अर्श, खांसी, शोथ, वमन, शूल, अनेक प्रकारका अतिसार, ज्वर, आमवात, अरुचि, मकड़ीका विष, पाण्डु और अन्य अनेक रोगोंका नाश होता तथा शरीरकी कान्ति और बुद्धि बढ़ती एवं स्वर गम्भीर होता है ।

मात्रा—१। तोला ।

(व्यवहारिक मात्रा—१॥ माशा ।)

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

अनुपान—आरनाल, जल, अथवा मस्तु ।

(६३६६) लाविकाचूर्णम् (२) (महत्)

(र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

पारदं गन्धकं लौहं त्र्यूषणं लवणानि च ।
क्षारत्रयं यमान्यौ च मुस्तकं गजपिप्पली ॥
कुटजेन्द्रयवौ हिङ्गु शतपुष्पाहिफेनकम् ।
गृहधूमवचाकुष्ठं विडङ्गं जीरकद्वयम् ॥
अभ्रकं चित्रकं पाठा लवङ्गं त्रिफला शुभा ।
जातीफलं सकर्पूरं त्वगेला पत्रकेशरम् ॥
एतानि समभागानि शक्राशनसमानि च ।
यथाव्याधिबलं खादेद्दीपयेज्जठरानलम् ॥
अवश्यं जारयत्याशु भक्ष्यं चैवातिभोजनम् ।
नाशयेद्ग्रहणीं शोथमामं चैवामवातकम् ॥
कामलां पाण्डुरोगं च कासं श्वासं जलोदरम् ॥
प्लीहानं पीनसं शूलं कुष्ठं कृमिगदं तथा ॥
सेव्यमाने भवेत्कांक्षा सगच्छेत्प्रमदाशतम् ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं वलीपलितनाशनम् ॥
वातश्लेष्मविकारेषु शस्यते च तुषोदकैः ।
अलावी महती चैव सर्वरोगविनाशिनी ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, पांचों नमक, सुहागा, सज्जीखार, जवाखार, अजवायन, अजमोद, नागरमोथा, गजपीपल, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, हींग, सोया, अफीम, घरका धुवां, बच, कूठ, बायबिड़ंग, सफेद और काला जीरा, अभ्रक भस्म, चीतामूल, पाठा, लौंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, बंसलोचन, जायफल, कपूर, दारचीनी, इलायची, तेजपात और नागकेसर १-१ भाग तथा भांग सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे जठराग्नि अत्यन्त प्रबल हो जाती और ग्रहणी, शोथ, आम, आमवात, कामला, पाण्डु, खांसी, श्वास, जलोदर, प्लीहा, पीनस, शूल, कुष्ठ और कृमि रोगका नाश होता है ।

यह चूर्ण कामोत्तेजक भी है; तथा बलिपलितका नाश करके आयुवृद्धि करता है ।

इसे वातकफज रोगोंमें कांजीके साथ देना चाहिये ।

(मात्रा—१ माशा ।)

लीलावतीवटी

(र. रा. सु. ; वै. र. । ज्वरा.)

प्र. सं. २१२२ " जीर्णज्वरारि रसः " देखिये ।

(६३६७) लीलाविलासरसः (१)

(यो. र. ; र. र. स. । अ. १८)

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्ररोचनम् ।
तुल्यांशं मर्दयेद्यामं रुद्ध्वा लघुपुटे पचेत् ॥
अक्षधात्रीहरीतकीः क्रमवृद्ध्या विपाचयेत् ।
जलेनाष्टगुणेनैव ग्राह्यमष्टावशेषकम् ॥
अनेन भावयेत्पूर्वं पक्वसूतं पुनः पुनः ।
पञ्चविंशतिवारं च तावता भृङ्गजद्रवैः ॥
शुष्कं तच्चूर्णितं खादेत्पञ्चगुञ्जमधुप्लुतम् ।
रसो लीलाविलासोऽयमम्लपित्तं नियच्छति॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म और अनारदानेका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करके शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें । तदनन्तर १ भाग बहेड़ा, २ भाग आमला और ३ भाग हर्र लेकर सबको एकत्र कूट कर आठ गुने पानीमें पकावें और आठवां भाग रहनेपर छान कर उस काथकी उपरोक्त रसको २५ भावना दें और फिर २५ भावना भांगरेके रसकी दे कर सुखा लें ।

मात्रा—५ रत्ती ।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करनेसे अम्लपित्त नष्ट होता है ।

(६३६८) लीलाविलासरसः (२)

(र. च. । वाजीकरणा.)

रसेन्द्रभस्माभ्रककाञ्चनं च
कस्तूरिकाकुङ्कुमजातिपत्री ।
लवङ्गएलातजतुल्यभागं
भागार्धमेकं कनकस्य बीजम् ॥
सम्मर्दयेत्तण्डुलिकारसेन
वल्लैकमात्रं मधुसम्प्रयुक्तम् ।
भक्षेद्द्विकालं शृतशीतदुग्धं
पिबेन्सदा सर्वगदान्निहन्ति ॥
षण्ढोऽल्पवीर्यो बहुमूत्रमेहो
नारीशतं गच्छति कामतुल्यः ।
कामस्य वृद्धिं प्रकरोति पुष्टिं
लीलाविलासो रसराज एषः ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, कस्तूरी, केसर, जावत्री, लौंग, इलायची और दालचीनी १—१ भाग तथा धतूरेके शुद्ध बीज आधा भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर चौलाईके रसमें घोट कर सुखा लें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे प्रातः सायं शहदके साथ खा कर ऊपरसे पका कर ठण्डा किया हुवा दूध पीना चाहिये ।

यह अत्यन्त कामवर्द्धक और पौष्टिक है ।

इसके सेवनसे नपुंसक, अल्पवीर्य और प्रमेहग्रस्त तथा बहुमूत्र रोगसे पीड़ित रोगी भी स्वस्थ हो कर सौ सौ स्त्रियोंके साथ समागम करनेमें समर्थ हो जाता है ।

(६३६९) लीलाविलासरसः (३)

(भै. र. ; र. चं. ; र. का धे. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । अम्लपित्ता. वृ. यो. त. । त. १२२; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसो बलिर्व्योमरविस्तु लौहं
धात्र्यक्षनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य ।
तदल्पघृष्टं मृदुमार्कवेण
सम्मर्दयेदस्य हि रक्तिमात्रम् ॥
हन्त्यम्लपित्तं विविधप्रकारं
लीलाविलासो रसराज एषः ।
छर्दिं सशूलां हृदयस्य दाहं
निवारयेदेष न संशयोऽत्र ॥
दुग्धं सकूष्माण्डरसं सधात्री-
फलं समेतं ससितं भजेद्वा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म और लोह भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको आमले और बहेड़ेके रस या काथसे ३-३ दिन मर्दन करें और फिर थोड़ी देर भंगरेके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे विविध प्रकारके अम्लपित्त, छर्दि, शूल और हृदयकी दाहका नाश होता है ।

दूधमें पेठे (कुम्हड़े) का रस, आमलेका चूर्ण और मिश्री मिला कर पीनेसे भी अम्लपित्त नष्ट होता है ।

(६३७०) लोकनाथपोटलीरसः

(र. का. धे. । प्रमेह.)

मृतरसयुगभागौ हाटकं चन्द्रभागं
वसुगुणितकपर्दं टङ्कणं भागमेकम् ।
सितविषशशिभागं सर्वतुल्यं सुगन्धं
तिथिदिनमनलाद्भिर्वज्रदुग्धेन घृष्ट्वा ॥
तदनु च कृतगोलं पक्वभाण्डे स्थितं त-
द्गजपुटविधिसिद्धः पोटली लोकनाथः ।
घृतमरिचसमेतं वल्लमात्रं प्रदद्या-
द्विजयति भयदारी श्वासहारी त्रिरात्रात् ॥
मधुकणयुतमेनं भोजयेद्युक्तपथ्यं
घृतपचितसुशाकं वर्जयेत्तैलम् ।
हरति सकलरोगान्सर्वमेहान्निहन्या-
ज्जनयति बहुवीर्यं कान्तिपुष्टिं करोति ॥

पारद भस्म २ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग, कौड़ी भस्म ८ भाग, सुहागेकी खील १ भाग, शुद्ध सफेद विष (संखिया) १ भाग और शुद्ध गन्धक १३ भाग (सबके बराबर) ले कर सबको एकत्र पीस कर १५-१५ दिन चीतेके काथ और थोहर (सेंड) के दूधमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखा कर शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें । एवं जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे काली मिर्चके चूर्णमें मिला कर घृतके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे श्वास रोग ३ दिनमें ही नष्ट हो जाता है ।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करने तथा तैलवर्जित, घृतपक्व शाक और पथ्य भोजन खानेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते और अत्यन्त वीर्य वृद्धि होती तथा कान्ति और पुष्टि बढ़ती है।

(६३७१) लोकनाथपोटली

(वृ. नि. र. । कासा.)

कृत्वा जम्भरसेन गन्धरसयोस्तत्तुल्यं ताम्राहृतं,
गोलं लावणयन्त्रगर्भनिहितं रुध्वा पचेत्तं शनैः।
यामानष्ट कपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्भस्मना,
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत्॥
संशुद्धामिति पोटलीं सहविषां मारीचचूर्णेन ता-
मश्नीयादिति लोकनाथविधिना दौर्बल्यका-
सादिषु।
शोफामानिलगुल्मशूलकसनश्वासग्रहण्यर्शसि,
प्रौढे यक्ष्मणि पाण्डुरोगसहिते सन्तापमान्द्या-
रुचौ॥

१-१ भाग शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धककी कज्जली बनाकर उसे १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखा कर २ भाग शुद्ध ताम्रके सम्पुटमें बन्द करके उस पर ३-४ कपरमिट्टी कर दें एवं उसे सुखाकर ८ पहर लवण यन्त्रमें पकावें। तदनन्तर स्वांग शीतल होने पर सम्पुटमेंसे औषधको निकाल कर पीस लें और उसमें उसके बराबर कौड़ी भस्म मिला कर सबको चीतेके क्वाथमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखा कर शराव सम्पुटमें बन्द करके लघु पुटमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस कर रख लें।

(मात्रा—२ रत्ती।)

इसे समान भाग अतीस और काली मिर्चके चूर्णके साथ सेवन करना चाहिये।

इसके सेवनसे निर्बलता, खांसी, शोथ, आम, वायु, गुल्म, शूल, श्वास, ग्रहणी, अर्श, राजयक्ष्मा, पाण्डु, ज्वर, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता है।

इस पर लोकनाथ रसके समान पथ्यादि पालन करना चाहिये।

(६३७२) लोकनाथरसः (१)

(यो. चि. म. । अ. ७)

भागौ दग्ध कपर्दकस्य च
तथा शङ्खस्य भागद्वयम्।
भागौ गन्धकसूतयोर्मिलि-
तयोः पिष्टान्मरीचादपि॥
भागानां त्रितयं नियोज्य
सकलं निम्बूरसैश्चूर्णितम्।
पीतस्तक्रमनुग्रहण्यप-
हरःश्रीलोकनाथो रसः॥

कौड़ी भस्म २ भाग, शंख भस्म २ भाग, शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक १ भाग और काली मिर्चका चूर्ण १ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर नीबूके रसमें खरल करके सुखा लें।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी रोग नष्ट होता है।

(मात्रा—१ माशा।)

(६३७३) **लोकनाथरसः** (२)

(वृ. नि. र.; र. चं. । राजय. ; शा. सं. । खं. २ अ. १२; यो. चि म. । मिश्रा. ; र. प्र. सु. । अ. ८)

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत् ।
तथा गन्धस्य भागौ द्वौ कुर्यात्कज्जलिकां तयोः
सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिक्षिपेत् ।
भागैकं टङ्कणं दत्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥
तथा शंखस्य खण्डानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् ।
क्षिप्तं सर्वं पुटस्यान्तश्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥
गर्ते हस्तोन्मितं धृत्वा पुटेद्गजपुटेन च ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥
षड्गुञ्जासंमितं चूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः ।
घृतेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ॥
क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतिसारे क्षये तथा ।
अरुचौ ग्रहणीरोगे कार्श्ये मन्दानले तथा ॥
कासश्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः ।
तस्योपरि घृतान्नं च भुञ्जीत कवलत्रयम् ॥
मंचे क्षणैकमुत्तानः शयीतानुपधानके ।
अनम्लमन्नं सघृतं भुञ्जीत मधुरं दधि ॥
सदुग्धभक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ सांध्यभोजने ।
सघृतान्मुद्गवटकान् व्यंजनेष्ववचारयेत् ॥
तिलामलककल्केन स्नापयेत्सर्पिषाऽथ वा ।
अभ्यञ्जयेत्सर्पिषा च स्नानं कोष्णोदकेन च ॥
कचित्तैलं न गृह्णीयान्न बिल्वं कारवेल्लकम् ।
वार्ताकं शफरीं चिञ्चां त्यजेद्व्यायाममैथुने ॥
मद्यसन्धानकं हिंगुशुण्ठीन्माषान्मसूरकान् ।
कूष्माण्डं राजिकां कोपं काञ्जिकं चैव वर्जयेत् ॥
त्यजेदयुक्तनिद्रां च कांस्यपात्रे च भोजनम् ।
ककारादियुतं सर्वं त्यजेच्छाकफलादिकम् ॥
पथ्योऽयं लोकनाथस्तु शुभनक्षत्रवासरे ।
पूर्णातिथौ शुक्लपक्षे जाते चन्द्रबले तथा ॥
पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीं भोजयेत्ततः ।
दानं दत्वा द्विघटिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ॥
रसाच्चेज्जायते तापस्तदा शर्करया युतम् ।
सत्त्वं गुडूच्या गृह्णीयाद्वंशरोचना युतम् ॥
खर्जूरं दाडिमं द्राक्षामिक्षुखण्डानि चारयेत् ॥
अरुचौ निस्तुषं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ।
दद्यात्तथा ज्वरे धान्यगुडूचीक्वाथमाहरेत् ॥
उशीरवासकक्वाथं दद्यात्समधुशर्करम् ।
रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये ॥
अग्निभृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ।
निद्रानाशे तिसारे च ग्रहण्यां मन्दपावके ॥
सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्णमुष्णोदकैः पिबेत् ।
शूलेऽजीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता ॥
प्लीहोदरे वातरक्ते छर्द्यां चैव गुदाङ्कुरे ।
नासिकादिषु रक्तेषु रसं दाडिमपुष्पजम् ॥
दूर्वायाः स्वरसं नस्ये प्रदद्याच्छर्करायुतम् ।
कोलमज्जाकणाबर्हिपक्षभस्म सशर्करम् ॥
मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्य शान्तये ।
विधिरेष प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन्पोटलीरसे ॥
मृगाङ्के हेमगर्भे च मौक्तिकाख्ये रसेषु च ।
इत्ययं लोकनाथाख्यो रसः सर्वरुजं जयेत् ॥

शुद्ध बुभुक्षित पारद २ भाग और शुद्ध गन्धक २ भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे ८ भाग कौड़ियोंमें भर दें । तदनन्तर १ भाग सुहागेको गायके दूधमें पीस कर उससे उन कौड़ियों

का मुख बन्द कर दें और फिर भीतरकी तरफ चूना पुते हुवे शरावोंमें ८ भाग शंखके टुकड़े और ये कौड़ियां भर कर उस पर उसी प्रकारका दूसरा शराव रख कर दोनोंकी सन्धि बन्द कर दें और कपड़मिट्टी करके सुखा लें। तत्पश्चात् इस सम्पुटको १ हाथ गहरे गढ़ेमें रख कर गजपुटकी अग्नि दें और उसके स्वांगशीतल होने पर सम्पुट मेंसे औषधको निकाल कर कौड़ियों और शंख समेत पीस लें।

इसमेंसे ६ रत्ती चूर्ण २८ काली मिर्चके साथ मिलाकर वातज रोगोंमें घृतके साथ, पित्तज रोगोंमें नवनीत (मक्खन) के साथ और कफज रोगोंमें शहदके साथ खिलाना चाहिये।

इसके सेवनसे अतिसार, क्षय, अरुचि, संग्रहणी, कृशता, अग्निमांद्य, खांसी, श्वास और गुल्मका नाश होता है।

यह रस खिलानेके पश्चात् ३ ग्रास घृतयुक्त भात खिलाना और रोगीको बिना तकिया लगाए थोड़ी देर तक चित्त लिटाए रखना चाहिये।

इस पर अम्लरहित घृतयुक्त अन्न और मीठा दही खिलाना चाहिये। सायंकालको भूख लगने पर दूध भात और घीमें तले हुवे मूंगके बरे देने चाहियें।

पिसे हुवे तिल और आमलेका, या घृतका अभ्यङ्ग करनेके पश्चात् मन्दोष्ण जलसे स्नान कराना चाहिये। शरीर पर घृतकी मालिश करानी चाहिये।

अपथ्य—इस रसके सेवन कालमें तेल, बेल, करेला, बैंगन, मछली, इमली, व्यायाम, मैथुन, मद्य, हींग, सोंठ, उड़द, मसूर, कुम्हड़ा (पेठा), राई, क्रोध करना, कांजी, असमय सोना, कांसीके पात्रमें भोजन करना, और ककारादि वर्गके[1] फल तथा शाकोंका परित्याग करना चाहिये।

इसे सेवन करनेसे पूर्व शुभ नक्षत्र, शुभ वार और पूर्णा तिथि (पंचमी, दशमी, पूर्णिमा) को लोकनाथका पूजन करके, कुमारी कन्याको भोजन कराना और दान देना चाहिये। तदनन्तर इसका सेवन आरम्भ करना चाहिये।

यदि रस खानेके पश्चात् दाह हो तो मिश्री, गिलोयका सत और बंसलोचन एकत्र मिला कर देना तथा खजूर, अनार, किशमिश और ईख (गन्ने) की गण्डीरी खिलानी चाहियें।

इस रसके सेवन कालमें विशेष उपद्रवोंकी चिकित्सा इस प्रकार करनी चाहिये।

अरुचिमें—धनियेके चावलोंको घीमें भूनकर मिश्रीमें मिलाकर खिलाना चाहिये।

ज्वरमें—धनिये और गिलोयका क्काथ पिलाना चाहिये।

रक्तपित्त, कफ, श्वास, खांसी और स्वरक्षयमें—खस और बासेके क्काथमें शहद और खांड मिलाकर पिलाना चाहिये।

निद्रानाश, अतिसार, ग्रहणी और अग्निमांद्यमें—रातके समय भुनी हुई भांगका चूर्ण शहदमें मिलाकर चटाना चाहिये।

---

१. **ककारादि वर्ग—**कुम्हेड़ा (पेठा), ककड़ी, कलिङ्ग (तरबूज), करेला, कुसुम्भ, ककोड़ा, कलम्बी और काकमाची (मकोय)।

शूल और अजीर्णमें—संचल (काला नमक), हर्र और पीपलका चूर्ण उष्ण जलके साथ दें।

ज्वर, प्लीहा, वातरक्त, छर्दि और अर्शमें—पीपलका चूर्ण शहदमें मिला कर चटाना चाहिये।

नासादिसे रक्तस्राव होनेमें—अनारके फूलोंके स्वरस या दूर्वा घासके रसमें खांड मिला कर उसकी नस्य देनी चाहिये।

छर्दि और हिक्कामें—बेरकी गुठलीकी गिरी, पीपल और मोरके पंखकी भस्मका यथा विधि चूर्ण बना कर शहदके साथ चटाना चाहिये।

मृगाङ्क पोटली, हेमगर्भ पोटली और मुक्ता पोटली आदिमें भी यही विधि काममें लानी चाहिये।

(६३७४) **लोकनाथरसः** (३) (**बृहद्**)

(भै. र. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । प्लीहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्ले कृत्वा तु कज्जलीम्।
सूततुल्यं जारिताभ्रं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ॥
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लौहं प्रयत्नतः।
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥
सूताच्च द्विगुणं गन्धं वराटीसम्भवं रजः[1]।
***पिष्ट्वा जम्बीरनीरेण मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥**
तन्मध्ये गोलकं क्षिप्त्वा यत्नेन छादयेद्भिषक्।
शरावसम्पुटं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥
शरावसन्धिमालिप्य चातपे शोषयेत्क्षणम्*।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥
पिष्ट्वा तु सर्वमेकत्र स्थापयेद्भाजने शुभे।
खादेद्वल्लद्वयश्चास्य मूत्रश्चानु पिबेन्नरः ॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुडां वा हरीतकीम्।
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेत्तुल्ययोगतः।
यकृत्प्लीहोदरोगश्च श्वयथुश्च विनाशयेत् ॥
वाताष्ठीलाश्च कमठीं प्रत्यष्ठीलां तथैव च।
कांस्यक्रोडाग्रमांसश्च शूलश्चैव भगन्दरम्।
वह्निमान्द्यश्च कासश्च लोकनाथरसोत्तमः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, और शुद्ध गन्धक २ भाग ले कर कज्जली बनावें और फिर उसमें १ भाग अभ्रक भस्म मिलाकर १ दिन घीकुमारके रसमें घोटें। तदनन्तर उसमें २-२ भाग ताम्र भस्म और लोह भस्म मिला कर सबको मकोयके रसमें घोट कर गोला बनाकर सुखा लें। तत्पश्चात् २ भाग शुद्ध गन्धक और २ भाग कौड़ीका चूर्ण ले कर दोनोंको एकत्र मिलाकर नीबूके रसमें खरल करके उससे २ मूषा बना कर सुखा लें और उनमें उपरोक्त गोला बन्द करके उसे २ शरावोंमें बन्द कर दें और जोड़को मिट्टी, राख और सेंधा नमकके पानीमें पिसे हुवे चूर्णसे बन्द करके धूपमें सुखा लें। एवं उस पर कपड़ मिट्टी करके, सुखा कर गजपुटमें पकावें। जब स्वांग शीतल हो जाय तो सम्पुटमेंसे औषधको निकाल कर (कौड़ीकी मूषासमेत) पीसकर सुरक्षित रक्खें। (भैषज्य

१ "सूतान्नवगुणं देयं वराटी सम्भवं रजः" इति पाठान्तरम्।

* भै. र. में. "पिष्ट्वा.....शोषयेत् क्षणम्" यह पाठ नहीं है।

रत्नावलीके अनुसार गन्धक और कौड़ीकी मूषा न बनाकर ८ भाग कौड़ीका चूर्ण डालना और साधारण शरावोंमें बन्द करना चाहिये ।)

मात्रा— ६ रत्ती ।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके, या हर्रके चूर्ण और गुड़के साथ अथवा जीरेके चूर्ण और गुड़के साथ खाकर गोमूत्र पोना चाहिये ।

इसके सेवनसे यकृत्, प्लीहा, शोथ, वाताष्ठीला, कमठी, प्रत्यष्ठीला, कांस्यक्रोड, अग्रमांस, शूल, भगन्दर, अग्निमांद्य और खांसीका नाश होता है ।

(६३७५) **लोकनाथरसः** (४)

(रस. चि. म. । स्त. ७)

रसगन्धौ समौ कृत्वा हस्तिशुण्डीरसैर्भृशम् ।
हिङ्गुपत्रीरसैश्चापि मर्दयेद्दिनपञ्चकम् ॥
विघृष्य वालुकायन्त्रे कूपिकायां निवेश्य तम् ।
दिनमेकं भवेदग्निर्मन्दं मन्दं निशावधि ॥
एवं निष्पद्यते सूतः पीतः शीतस्तु गृह्यते ।
पर्णखण्डेन गुञ्जैकं मरिचेन समन्वितम् ॥
क्षुद्बोधं कुरुतेऽत्यर्थमुदरं च विनाशयेत् ।
ज्वरापनयनं कुर्यात्परां पुष्टिं करोति च ॥
हृदयोत्साहजननः सुरूपं वपुषो भवेत् ।
मधुरस्वर एवायं नीलकेशोऽतिनिर्भयः ॥
निकामं कामयेयुश्च स्त्रियो हृदयहारिणम् ।
सेवनादस्य सूतस्य मानवः कामितं लभेत् ॥
वनितानां शतं गच्छेन्न स्वेदो जायते तनौ ।
शर्करेक्षुपयः पानं पौष्टिकान्नस्य भक्षणात् ॥
रोगनाशं ध्रुवं कुर्याद्रसोयं परमौषधम् ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर कज्जली बनावें और फिर उसे पांच पांच दिन हाथीसूंडी और हिंगुपत्रीके रसमें घोट कर सुखा कर आतशी शीशीमें भर दें और उसे बालुका यन्त्रमें रख कर १ दिन मन्दाग्नि पर पकावें । तदनन्तर जब शीशी स्वांगशीतल हो जाय तो उसमेंसे रसको निकाल कर खरल कर लें । इसका रंग पीला होगा ।

इसे काली मिर्चके चूर्णके साथ मिला कर पानमें रख कर खाना चाहिये ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसके सेवनसे अत्यन्त अग्निवृद्धि होती और उदर रोग तथा ज्वरका नाश होता है । यह अत्यन्त पौष्टिक और अत्यन्त कामोत्तेजक है । इसे सेवन करनेसे हृदयमें उत्साह बढ़ता, शरीर सुन्दर होता, और स्वर मधुर हो जाता है । बाल अत्यन्त काले हो जाते हैं । इसके प्रभावसे मनुष्य सौ सौ स्त्रियोंके साथ समागम करने पर भी नहीं थकता ।

इसके सेवन कालमें खांड, ईख, दूध और पौष्टिक अन्न सेवन करना चाहिये ।

(६३७६) **लोकनाथरसः** ((५)

(लघुलोकेश्वररसः)

(भै. र. ; र. र. ; रसे. सा. स. । अतिसारा. ; र. र. स. । उ. अ. १६)

भस्मसूतस्य[1] भागैकं चत्वारः शुद्धगन्धकात् ।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टङ्कणेन निरुध्य च ॥

१ शुद्ध सूतस्येति पाठान्तरम् ।

भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाद्वयं मितम् ॥
नागरातिविषामुस्तं देवदारुवचान्वितम् ।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनः ॥

पारद भस्म (या शुद्ध पारद) १ भाग और शुद्ध गंधक ४ भाग लेकर दोनोंको एकत्र घोट कर कौड़ीयोंमें भरें और उनके मुखको (दूधमें पिसे हुवे) सुहागेसे बन्द कर दें; एवं उन्हें शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें । इसके पश्चात् उसके स्वांग शीतल होने पर कौड़ियोंको निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

अनुपान—इसे शहदके साथ चाट कर सोंठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु और बचका क्वाथ पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं ।

(६३७७) लोकनाथरसः (६) (लघु)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२; र. र. । क्षय.)

वराटभस्ममण्डूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत् ।
तत्समं मरिचं चूर्णं नागवल्या विभावितम् ॥
तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः ।
माषमात्रं क्षयं हन्ति यामे यामे च भक्षितम् ॥
लोकनाथरसो ह्येष मण्डलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥

कौड़ी भस्म, और मण्डूर भस्म समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके समान भाग घीमें पकावें और जब घी शुष्क हो जाय तो उसमें उसके बराबर काली मिर्चका चूर्ण मिला कर सबको पानके रसमें खरल करके सुखा लें ।

मात्रा—१ माषा ।

इसे शहद या नवनीतके साथ खानेसे ४० दिनमें राजयक्ष्माका नाश हो जाता है ।

इसकी १-१ मात्रा हरएक पहरके बाद देनी चाहिये ।

(६३७८) लोकनाथरसः (७)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. । प्लीहा.; धन्व. । उदरा.; रसे. चि. म. । अ. ९)

पारदं गन्धकश्चैव समभागं विमर्दयेत् ।
मृताभ्रं रसतुल्यश्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत् ॥
रसद्विगुणलौहश्च लौहतुल्यश्च ताम्रकम् ।
वराटिकाया भस्माथ पारदात्त्रिगुणं[1] कुरु ॥
नागवल्लीरसेनैव मर्दयेद्यत्नतो भिषक् ।
पुटेल्लघुपुटे[2] विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुडां वा हरीतकीम् ।
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेदनुपानतः ॥
यकृद्गुल्मोदरहरः प्लीहश्वयथुनाशनः ।
जीर्णज्वरं तथा पाण्डुकामलाश्च विनाशयेत् ॥
अग्निमान्द्यश्च शमयेल्लोकनाथो रसोत्तमः ॥

१-१ भाग शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बना कर उसमें १ भाग अभ्रक भस्म, २ भाग लोह भस्म, २ भाग ताम्र भस्म और ३ भाग (पाठान्तरके अनुसार ६ भाग) कौड़ी भस्म ले कर सबको एकत्र खरल करके पानके रसमें घोट कर गोला बनावें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द

१ ताम्रतस्त्रिगुणमिति पाठान्तरम्

२ "पुटेद्गजपुटे" इति पाठान्तरम्

कई ग्रन्थोंमें अनुपानमें गोमूत्र भी लिखा है ।

करके लघुपुट (पाठान्तरके अनुसार गजपुट) में पकावें और स्वांगशीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

(मात्रा—२-३ रत्ती)

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् पीपलका चूर्ण शहदमें मिला कर चाटना, या गुड़में हर्र अथवा जीरेका चूर्ण मिला कर खाना चाहिये।

इसके सेवनसे यकृत्, गुल्म, उदररोग, प्लीहा, शोथ, जीर्णज्वर, पाण्डु, कामला और अग्निमान्द्यका नाश होता है।

(६३७९) **लोकनाथरसः** (८)

(र. चि. म. । स्त. ९)

भागाः सप्त कपर्दिभस्म मरिचं पादाधिकांशं विषं।
चैकांशं रसभस्म विंशतिमिताः स्युर्गन्धकांशा दश॥
चत्वारो ह्यहिफेनकस्य कनकः पादोनभागः स्मृतः।
चूर्णं तन्मृदितं च सर्वगदहा स्याल्लोकनाथो रसः॥
ग्रहण्यां कफजे व्याधौ वातोद्रेके च पैत्तिके।
प्रमेहे मूत्रकृच्छ्रे च कासे श्वासे भ्रमे तथा॥
सिताज्यमोचामरिचैः संयुतो दीयते रसः।
क्रोधं न कुर्यान्न च तैलसेवां
न राजिकां पित्तकरं न किञ्चित्।
न मैथुनं जागरणं न रात्रौ
न कामचारं क्रियते कदाचित्॥

कौड़ी भस्म ७ भाग, काली मिर्चका चूर्ण १। भाग, शुद्ध बछनाग १ भाग, पारद भस्म २० भाग, शुद्ध गन्धक १० भाग, अफीम ४ भाग और स्वर्ण भस्म पौन ¾ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें।

इसके सेवनसे संग्रहणी, कफज रोग, वात और पित्त प्रकोप, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्, खांसी, श्वास और भ्रमका नाश होता है।

अनुपान—मिश्री, घी, मोचरस और काली मिरचका चूर्ण।

(**मात्रा**—२ रत्ती।)

अपथ्य—इस रसके सेवन कालमें क्रोध, तेल, राई, पित्तकारक पदार्थ, मैथुन और रात्रि-जागरणसे परहेज़ करना चाहिये।

(६३८०) **लोकनाथरसः** (९)

(लोकेश्वररसः) (लोकेश्वरपोटली)

(र. र. स. । उ. अ. १४; यो. र. । क्षय; र. चं.; र. रा. सु.; रसे. सा. सं. । राजय.)

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्रकल्पयेत्।
गन्धकं द्विगुणं दत्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना॥
चराचरास्ये सम्पूर्य टङ्कणेन निरुध्य च।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा रुन्धीत मृत्स्नया॥
शोषयित्वा पुटेद्गर्तेऽरत्निमात्रेऽपराह्णके।
स्वांगशीतलमुद्धृत्य चूर्णयित्वाऽथ विन्यसेत्॥
एष लोकेश्वरो नाम पुष्टिवीर्यविवर्धनः।
गुञ्जाचतुष्टयं साज्यं मरिचैश्च समन्वितम॥
खादेत्परमया भक्त्या लोकेशे सर्वदर्शिनि।
अंगकार्श्येऽग्निमांद्ये च रसोऽयं कासहिक्कयोः॥

मरिचैर्घृतसंयुक्तैः प्रदातव्यो दिनत्रयम् ।
लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं सदधि भोजनम् ॥
एकविंशद्दिनं यावन्मरिचं सघृतं पिबेत् ॥
पथ्यं मृगाङ्कवद्देयं शयीतोत्तानपादतः ।
वमने संप्रवृत्ते तु गुडूचीद्रवमाहरेत् ॥
मधुना पाययेत्सार्धं दग्धवृन्ताकमाशयेत् ।
स्नानं शीतलतोयेन मूर्ध्नि धारां विनिक्षिपेत् ॥
जाते श्लेष्मविकारे तु कदलीफलमाहरेत् ।
भृष्ट्वा तन्मरिचैः सार्धं भोजयेच्छ्लेष्मनुत्तये ॥
आर्द्रकं मधुमिश्रं वा गुडार्द्रकमथापि वा ॥
भृष्ट्वा कुस्तुंबुरूनीषन्निस्तुषांश्चूर्णयेत्ततः ।
शर्कराघृतमिश्रान्ददीताऽरुचिशान्तये ॥
भृष्ट्वा कुस्तुंबरीं सम्यग्घृते शर्करया पिबेत् ।
एलां मरिचसंयुक्तां यावद्वांतिः प्रशाम्यति ॥
अजमोदां विडङ्गं च पिष्ट्वा तक्रेण पाययेत् ।
कृमिकोपप्रशांत्यर्थं क्वाथं वातघ्नमुस्तयोः ॥
संस्कृत्य दुग्धिकां वह्नौ विरेके च प्रयोजयेत् ।
ईषद् भृष्ट्वा जयाचूर्णं मधुना खादयेन्निशि ॥
अङ्गतोदे घृतेनाङ्ग मर्दयित्वोष्णवारिणा ।
स्नापयेद्रोगिणं वैद्यो लोकनाथं रसं स्मरन् ॥

पारद भस्म ४ भाग, स्वर्ण भस्म १ भाग और शुद्ध गन्धक ८ भाग ले कर तीनोंको एकत्र घोट कर १ दिन चीतेके क्वाथमें खरल करें और फिर उसे कौड़ियोंमें भर कर उनका मुख (दूधमें पिसे हुवे) सुहागेसे बन्द कर दें एवं उन्हें चूना पुते हुवे शरावोंके सम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें और स्वांग शीतल होने पर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

यह रस पौष्टिक और वीर्यवर्द्धक है ।

मात्रा—४ रत्ती ।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे कृशता, अग्निमांद्य, खांसी और हिचकीका ३ दिनमें ही नाश हो जाता है ।

इसके सेवन कालमें लवणका त्याग करके घी और दहीके साथ पथ्य भोजन करना चाहिये; एवं २१ दिन तक काली मिर्चका चूर्ण मिला कर घी पीना चाहिये ।

इसमें मृगाङ्कके समान पथ्य पालन करना और चित सोना चाहिये ।

यदि इसके सेवन कालमें वमन हो तो गिलोय के रसमें शहद मिला कर पिलाना और बैंगनका भुरता खिलाना चाहिये; तथा शीतल जलसे स्नान कराना और शिर पर शीतल जलकी धारा छोड़नी चाहिये ।

यदि कफ प्रकोप हो तो केलेकी फलीको मन्दाग्निमें सेक कर उसमें पीपलका चूर्ण मिला कर खिलाना चाहिये । अथवा अदरकको शहद या गुड़के साथ खिलाना चाहिये ।

यदि अरुचि हो तो धनियेको ज़रा सेक कर कूट कर उसके चावल निकालें और उन्हें खांड तथा घीके साथ खिलावें ।

वमनके लिये भी भुने हुवे धनियेके चावल खांड और घीके साथ खिलाने चाहियें अथवा इलायची और काली मिर्चका चूर्ण (शहदके साथ) चटाना चाहिये ।

यदि कृमि रोगका उपद्रव हो तो अजमोद और बायबिड़ंगका चूर्ण तक्रके साथ देना या

अरण्डमूल और नागरमोथेका काथ पिलाना चाहिये ।

यदि दस्त आने लगें तो दुग्धिका (दुद्धी) को अग्निमें सेक कर सेवन कराना चाहिये अथवा भांगके चूर्णको ज़रा भूनकर रात्रिके समय शहदके साथ देना चाहिये ।

यदि अङ्गपीड़ा होती हो तो शरीर पर घीकी मालिश कराके उष्ण जलसे स्नान कराना चाहिये ।

लोकेश्वरपोटलीरसः

(रसे. सा. सं.; र. रा. सु. ; यो. र. ; र. चं. । राजयक्ष्मा. ; रसे. चि. म. । अ. ९; वृ. यो. त. । त. ७६; र. का. धे. । राजय. ; धन्व.)

प्र. सं. (६३८०) लोकनाथ रसः देखिये ।

लोकेश्वररत्नगर्भपोटलीरसः

(धन्व. । राजयक्ष्मा.)

प्र. सं. ६०४१ रत्नगर्भपोटली रसः देखिये ।

(६३८१) लोकेश्वररसः (१)

(र. रा. सु. । अतिसारा. ; र. र. स. । अ. १६)

द्वौ भागौ गन्धकस्याष्टौ शङ्खचूर्णस्य योजयेत् ।
एकमेव रसस्यांशमर्कक्षीरेण मर्दयेत् ॥
चित्रकस्य द्रवेणैव शोषयित्वा पुनः पुनः ।
एकीकृत्य रसेनाथ क्षारं दत्त्वा तदर्धकम् ॥
अर्कक्षीरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत् ।
निरुध्य चूर्णलिप्तेथ भाण्डे दद्यात्पुटं ततः ॥
लोकनाथ रसो ह्येष सर्वातीसारनाशनः ।
गोतक्रेण निहन्त्याशु ग्रहणीगदमुत्कटम् ॥
गुञ्जा चतुष्टयं चास्य मरिचाज्यसमन्वितम् ।
ददीत दधिभक्तं च ग्रहण्यां च विशेषतः ॥

शुद्ध गन्धक २ भाग, शंख चूर्ण ८ भाग और शुद्ध पारद १ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें शंख मिला कर सबको आकके दूध और चीतामूलके काथकी पृथक् पृथक् कई कई भावना देकर सुखा लें और फिर उसमें सबसे आधा सुहागा मिला कर पुनः आकके दूधमें खरल करके गोलियां बनावें और उन्हें सुखाकर चूनेसे पुते हुवे शरावोंमें बन्द करके (वराहपुटमें) पकावें ।

यह रस समस्त प्रकारके अतिसारोंको नष्ट करता है । इसे गोतक्रके साथ सेवन करनेसे प्रवृद्ध संग्रहणी शीघ्रही नष्ट हो जाती है ।

मात्रा—४ रत्ती ।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और घीके साथ सेवन करना तथा दही भात खाना चाहिये ।

(६३८२) लोकेश्वररसः (२)

(र. रा. सु. ; रसे. सा. सं.; धन्व. । यक्ष्मा. ; वृ. यो. त. । त. ७६; रसे. चि. म. । अ. ९; यो. र. । क्षय.)

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।
माषश्च टङ्कणस्यैव जम्बीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥
पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथरसोत्तमः ।
ऋते कुष्ठं रक्तपित्तमन्यान्रोगान्बलाज्जयेत् ॥
पुष्टिवीर्य्यं प्रसादोज कान्तिलावण्यदः परः ।
कोस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शम्भुमुखोद्गतः ॥

कौड़ीका चूर्ण ५ तोले, शुद्ध पारद ५ तोले, शुद्ध गन्धक ५ तोले और सुहागा १। माशा लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके वराहपुटमें पकावें ।

यह रस कुष्ठ और रक्तपित्तके अतिरिक्त अन्य समस्त रोगोंको नष्ट और पुष्टि, वीर्य, ओज, कान्ति तथा लावण्यकी वृद्धि करता है ।

(६३८३) लोबानसत्वयोगः

(र. चं. ; र. रा. सु. । श्वासा.)

विषं पलमितं प्रोक्तं लोबानं कुडवं मतम् ।
सितं सोमलकं चैव पलमानमुदीरितम् ॥
वितस्तिमात्रे सेहुण्डकाष्ठे चैव विनिक्षिपेत् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य हण्डिकायां निधापयेत् ॥
डमरुयन्त्रविधिना सत्त्वं निष्कासयेद्बुधः ।
तर्जनीप्रतिमावर्तिं दीपे धृत्वा तु ज्वालयेत् ॥
यन्त्रस्याधो वेदयामं दीप्ताग्निं तत्र दापयेत् ।
ऊर्ध्वलग्नं शुद्धसत्त्वं स्थापयेच्च करण्डके ॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वाऽपि चतुर्गुञ्जमथापि वा ।
श्वासकासनिवृत्त्यर्थं बलं ज्ञात्वा प्रयोजयेत् ॥
राजयोग्यमिदं सत्त्वं विख्यातं रससागरे ॥

शुद्ध बछनाग ५ तोले, कौड़िया लोबान २० तोले और शुद्ध सफेद संखिया ५ तोले लेकर सबको एकत्र खरल करके १ बालिश्त लम्बे थोहर (सेंड) के टुकड़ेके भीतर भर दें और फिर उसे कुचल कर एक हाण्डीमें रक्खें तथा उसके ऊपर दूसरी हाण्डी ढककर दोनोंके जोड़को अच्छी तरह बन्द कर दें और उसके सूखने पर इस डमरु-यन्त्रको चूल्हे पर रख कर उसके नीचे तर्जनी उंगलीके समान मोटी बत्तीका दीपक जलावें और ऊपरके पात्र पर भीगा हुवा कपड़ा रखते रहें । तदनन्तर ४ पहर बाद दीपक बुझा दें और हाण्डीके स्वांग-शीतल होने पर सावधानी पूर्वक जोड़को खोल कर ऊपरकी हाण्डीमें लगे हुवे सत्वको निकाल लें ।

मात्रा—२ से ४ रत्ती तक ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे श्वास और खांसीका नाश होता है । यह राजाओंके योग्य औषध है ।

लोहगर्भरसः

(र. का. धे. ; र. रा. सु. ; र. र. स. । पाण्डु.)

प्र. सं. ४४०२ " पितपाण्डुवारिरसः " देखिये ।

(६३८४) लोहगुटिका (१)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

त्रिफलामृतलोहं च भृङ्गराजं च चूर्णितम् ।
चूर्णमर्जुनपत्रस्य त्रिजातकशिलाजतू ॥
त्र्यूषणं तुल्यतुल्यांशं सर्वेषां च समांशतः ।
क्षौद्रेण वटिका कार्याः माषमात्रं भक्षयेत् ॥
वातपित्तज्वरं हन्यादनुपानं विना गुटी ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, लोह भस्म, भंगरा, अर्जुनके पत्ते, दालचीनी, तेजपात, इलायची, शिलाजीत, और सोंठ, मिर्च तथा पीपल; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर

खरल करके शहदमें मिला कर १-१ माशेकी गोलियां बनावें ।

इन्हें अनुपान बिनाही सेवन करनेसे वात-पित्त ज्वर नष्ट होता है ।

(६३८५) **लोहगुटिका** (२)

(च. द. ; र. का. धे. । परिणाम शूला, ; र. र. । शूला. ; वृ. नि. र. ; वं. से. । परिणा.)

लोहस्य रजसो भागास्त्रिफलायास्तथा त्रयः ।
गुडस्याष्टौ तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् ॥
एतत्सर्वं च विपचेद्गुडपाकविधानवित् ।
लिहेच्च तद्यथाशक्ति क्षये शूलेऽन्नपाकजे ॥

लोह भस्म ३ भाग, त्रिफलाका चूर्ण ३ भाग, गुड़ ८ भाग और गोमूत्र ६४ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर पकावें । जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो उतार कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे क्षय और परिणाम शूलका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१-१॥ माशा ।)

(६३८६) **लोहचूर्णप्रकारः**

(आ. वे. प्र. । अ. ११)

संशुद्धं लोहजं पत्रं तप्तं तप्तं वराजले ।
गोजले वा मुहुः क्षिप्तं क्षिप्रं चूर्णत्वमाप्नुयात् ॥

शुद्ध लोहपत्रोंको तपा तपा कर बार बार त्रिफलाके क्वाथ या गोमूत्रमें बुझानेसे लोहका शीघ्र ही चूर्ण हो जाता है ।

(६३८७) **लोहचूर्णम्**

(रसे. चि. म. । अ. ९.; रसे. सा. सं. । अश्मरी. वृ. मा. । मूत्रकृच्छ्रा.; वृ. यो. त. । त. १००; ग. नि. । मूत्रकृच्छ्रा २७; वं. से. । मूत्रकृच्छ्रा.)

अयोरजः सूक्ष्मपिष्टं मधुना सह योजितम् ।
मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्याशु त्रिभिर्लेहैर्न संशयः ॥

लोह भस्मको शहदमें मिला कर सेवन करनेसे ३ बारमें ही मूत्रकृच्छ्र नष्ट हो जाता है ।

(६३८८) **लोहचूर्णवटकः**

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ८)

त्र्यूषणं त्रिफलामुस्तविडङ्ग-
श्चित्रकं तु समभागत एव ।
भावयेच्च खलु सप्तदिनानि
लोहचूर्णमपि चेक्षुरसेन ॥
खल्लितं पुनरपि प्रवरं स्यात्
शीलितं तु मधुनापि घृतेन ।
पाण्डुरोगहृदयामयकुष्ठ-
कामलार्शः सहलीमकहारि ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिडंग और चीता; इनका चूर्ण तथा लोह भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सात दिन तक ईखके रसमें घोटें ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे पाण्डु, हृदय रोग, कुष्ठ, कामला, अर्श और हलीमकका नाश होता है ।

(६३८९) **लोहत्रिफलायोगः**

(यो. र. । शूला.)

तीक्ष्णायश्चूर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।
प्रयोज्यं मधुसर्पिर्भ्यां सर्वशूलनिवारणम् ॥

तीक्ष्ण लोह भस्म और त्रिफला चूर्ण समान भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके रक्खें ।

इसे शहद और घीके साथ देनेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**—४ रत्ती ।)

(६३९०) **लोहद्रुतिः** (१)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

त्रिःसप्तकृत्वो गोमूत्रे जालिनीभस्मभावितम् ।
शोषयेत्तस्य वापेन तीक्ष्णं मूषागतं द्रवेत् ॥

कड़वी तोरीकी भस्मको गोमूत्रकी २१ भावना दे कर सुखा लें ।

तीक्ष्ण लोहको मूषामें तपा कर लाल करके उसमें इस भस्मका प्रक्षेप देनेसे लोह द्रवित हो जाता है ।

(६३९१) **लोहद्रुतिः** (२)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

सुरदालिभस्मगलितं त्रिसप्त-
कृत्वाऽथ गोजले शुष्कम् ।
वापेन सलिलसदृशं
करोति मूषागतं तीक्ष्णम् ॥

देवदाली (बिंडाल) की भस्मको गोमूत्रकी २१ भावना दे कर सुखा लें ।

तीक्ष्ण लोहको मूषामें तपा कर लाल करनेके पश्चात् उसमें इसका प्रक्षेप देनेसे लोह पानीके समान द्रवित हो जाता है ।

(६३९२) **लोहद्रुतिः** (३)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

सुरदालिभवं भस्म नरमूत्रेण गालितम् ।
त्रिःसप्तवारं तत्क्षारवापात्कान्तद्रुतिर्भवेत् ॥

देवदाली (बिंडाल) की भस्मको मनुष्यके मूत्रकी २१ भावना दे कर सुखा लें ।

कान्त लोहको तपा कर लाल करके उसमें इसका प्रक्षेप देनेसे लोह द्रुत हो जाता है ।

(६३९३) **लोहद्रुतिः** (४)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

गन्धकं कान्तपाषाणं चूर्णयित्वा समं समम् ।
द्रुते लोहे प्रतीवापो देयो लोहाष्टकं द्रवेत् ॥

गन्धक और कान्तपाषाण बराबर बराबर ले कर एकत्र पीस लें ।

लोहको पिघला कर उसमें यह चूर्ण डालनेसे लोह (आठों धातु) द्रवित हो जाते हैं ।

(६३९४) **लोहद्रुतिः** (५)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

देवदाल्या द्रवैर्भाव्यं गन्धकं दिनसप्तकम् ।
तेन प्रवापमात्रेण लोहं तिष्ठति सूतवत् ॥

देवदाली (बिंडाल) के रससे सात दिन तक गन्धकको भावित करके सुखा लें ।

लोहेको तपाकर लाल करके उसमें यह गंधक डालनेसे लोहा पारदके समान द्रवित हो जाता है ।

(६३९५) लोहनिरुत्थिकरणम्

(आ. वे. प्र. । अ. ११)

सर्वमेव मृतं लोहं ध्मातव्यं मित्रपञ्चकैः ।
यद्येवं स्यान्निरुत्थं तु सेव्यं वारितरं हि तत् ॥
मधुघृतगुग्गुलुगुञ्जाटङ्कणमेतत्तु मित्रपञ्चकं नाम।
मेलयति सप्तधातूनङ्गाराग्नौ प्रधमनेन ॥
गन्धकेनोत्थितं लोहं तुल्यं खल्वे विमर्दयेत् ।
दिनैकं कन्यकाद्रावै रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥
इत्येवं सर्वलोहानां कर्तव्येयं निरुत्थितिः ॥

लोह (धातुओंकी) भस्मोंको मित्रपञ्चकके साथ घोट कर अंगारों पर धमाना चाहिये, यदि इससे वह धातु जी उठे तो उसे कच्ची और न जिये तो पक्व समझना चाहिये । इस प्रकार परीक्षा करनेके पश्चात् वारितर पक्व लोहको ही सेवन करना चाहिये ।

शहद, घी, गूगल, गुंजा (चौंटली) और सुहागा; इन पांच चीज़ोंको मित्रपञ्चक कहते हैं। इनके योगसे सातों धातु अंगारों पर तपानेसे परस्पर मिल कर एक जीव हो जाती हैं ।

यदि मित्रपञ्चकसे धातु जी उठे तो उसे समान भाग गन्धकके साथ मिला कर एक दिन घृतकुमारीके रसमें घोट कर यथा विधि गजपुटमें पकावें । इसी प्रकार जब तक वह धातु निरुत्थ न हो जाय बराबर पुट देते रहें ।

(६३९६) लोहपर्प्पटी

(भै. र. ; र. चं. ; र. र. ; र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

समौ गन्धरसौ कृत्वा कज्जलीकृत्य यत्नतः ।
शुद्धलोहस्य चूर्णन्तु रसतुल्यं प्रदापयेत् ॥
एकीकृत्य ततो यत्नात् लोहपात्रे प्रमर्दितम् ।
घृतप्रलिप्तदर्व्यान्तु स्वेदयेन्मृदुनाग्निना ॥
द्रवीभूतं समाहृत्य ढालयेत् कदलीदले ।
चूर्णीकृत्य सुखार्थाय पथ्यभुग्भिः प्रसेव्यते ॥
शीतोदकानुपानं वा क्वाथं वा धान्यजीरयोः ।
लौहेन पर्पटी ह्येषा भक्ष्या लोकस्य सिद्धिदा ॥
रक्तिकैकां समारभ्य वर्द्धयेद्रक्तिकां क्रमात् ।
सप्ताहं वा द्वयं वापि यावदारोग्यदर्शनम् ॥
सूतिकाञ्च ज्वरञ्चैव ग्रहणीमतिदुस्तराम् ।
आमशूलातिसारांश्च पाण्डुरोगं सकामलम् ॥
प्लीहानमग्निमान्द्यञ्च भस्मकञ्च तथैव च ।
आमवातमुदावर्त्तं कुष्ठान्यष्टादशैव तु ॥
एवमादींस्तथा रोगान् गराणि विविधानि च।
हन्त्यनेन प्रयोगेण वपुष्मान् निर्मलः सुखी ॥
जीवेद्वर्षशतं पूर्णं वलीपलितवर्जितः ।
भोजनं रक्तशालीनां त्यक्त्वा शाकं विदाहि च॥
वातमातपकोपञ्च चिन्तनं मैथुनं तथा ।
प्रातरुत्थाय संसेव्या विधिनायुः प्रवर्द्धिनी ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक १–१ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और फिर उसमें १ भाग लोह भस्म मिला कर सबको लोहेके खरल में घोटें । तदनन्तर उसे घृतलिप्त लोहेकी करछीमें डाल कर मन्दाग्नि पर पिघलावें और फिर उसे गायके गोबर पर बिछे हुवे केलेके पत्तेपर फैलाकर उस पर दूसरा कदलीपत्र फैला कर उसे गोबरसे दबा दें और थोड़ी देर बाद दोनों पत्तोंके बीचसे पर्पटीको निकाल कर पीस लें ।

अनुपान—शीतल जल, अथवा धनिये और जीरेका क्वाथ ।

इसे १ रत्तीसे प्रारम्भ करके प्रतिदिन १-१ रत्ती बढ़ाते हुवे १ सप्ताह, दो सप्ताह या आरोग्य लाभ होने तक सेवन करना चाहिये। (जिस प्रकार प्रति दिन एक एक रत्ती मात्रा बढ़ाई जाय उसी प्रकार घटानी चाहिये।

इसके सेवनसे सूतिकारोग, ज्वर, कष्टसाध्य संग्रहणी, आम, शूल, अतिसार, पाण्डु, कामला, प्लीहा, अग्निमांद्य, भस्मक रोग, आमवात, उदावर्त, १८ प्रकारके कुष्ठ, अनेक प्रकारके विषविकार इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

पथ्यापथ्य—इसके सेवन कालमें लाल चावलोंका भात खाना और शाक, विदाही पदार्थ, वात (पवन) में रहना, धूपमें जाना, क्रोध, चिन्ता और मैथुनसे परहेज करना चाहिये।

इसे प्रातः काल विधिवत् सेवन करना और पथ्य पूर्वक रहना चाहिये।

इसे अधिक काल तक निरन्तर सेवन करनेसे वलिपलितका नाश होता और आयु बढ़ती है।

लोहपर्पटीरसः

(र. चि. म. । अ. ८ ; र. रा. सु. । श्वासा. ; रसे. सा. सं.; धन्व. । हिक्का श्वासा.)

प्र. सं. ६०६८ " रसपर्पटी " (५) देखिये।

(६३९७) लोहभस्मयोगः (१)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

निरुत्थं लोहजं भस्मसेवेतात्र पुमान् सुधीः।
व्योषवेल्लाज्यमधुना टङ्कमानेन मिश्रितम् ॥
जरां च मरणं व्याधिं हन्यात्पुत्रप्रदं सदा।
गरदोषकृता रोगा न भवन्ति शरीरिणाम् ॥

निरुत्थ लोह भस्मको सोंठ, मिर्च, पीपल और बायबिडंगके समान भाग मिश्रित ४ माशे चूर्णमें मिला कर घी और शहदके साथ सेवन करनेसे जरा, व्याधि और अकालमृत्युका नाश होता तथा पुत्रकी प्राप्ति होती है।

लोह भस्म सेवन करने वालेको गर (संयोग-जनित विष) हानि नहीं पहुंचा सकते।

(६३९८) लोहभस्मयोगः (२)

(वृ. मा. । पाण्डु. ; व. से. । पाण्डु.)

तुल्यां वाऽयोरजः पथ्यां हरिद्रां क्षौद्रसर्पिषा।
चूर्णितां कामली लिह्याद्गुडक्षौद्रेण चाभयाम् ॥

लोह भस्म, हर्रका चूर्ण और हल्दीका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर शहद और घीके साथ सेवन करनेसे कामलाका नाश होता है।

कामलामें हर्रके चूर्णको गुड़में मिला कर शहदके साथ सेवन करना भी हितकारी है।

(६३९९) लोहभस्मयोगः (३)

(वृ. मा ; च. द. । परिणाम शूला. २७; ग. नि. । शूला. २३)

लोहचूर्णं वरायुक्तं विलीढं मधुसर्पिषा।
पक्तिशूलं च शमयेत्तन्मलं वा प्रयोजितम् ॥

लोह भस्म या मण्डूर भस्मको समान भाग त्रिफला चूर्णमें मिला कर शहद और घीके साथ चाटनेसे पक्तिशूल नष्ट होता है।

(६४००) लोहभस्मयोगः (४)

(व. से. ; वृ. मा. । पाण्डु. ; वृ. नि. र. । कामला. ; यो. र. । पाण्डु.)

लोहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफला कटुरोहिणी ।
प्रलिह्य सर्पिर्भ्यां कामलार्तः सुखी भवेत् ॥

लोह भस्म, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, और कुटकी; इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिला कर शहद और घीके साथ सेवन करनेसे कामला रोग नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—१-१॥ माशा ।)

(६४०१) लोहभस्मविधिः (१)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

जम्बीररससंयुक्ते दरदे तप्तमायसम् ।
बहुवारं विनिक्षिप्तं म्रियते नात्र संशयः ॥

नीबूके रसमें हिंगुल मिला कर उसमें शुद्ध लोहको तपा तपाकर अनेक बार बुझानेसे उसकी भस्म हो जाती है ।

(६४०२) लोहभस्मविधिः (२)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

समगन्धमयश्चूर्णं कुमारीवारिभावितम् ।
पुटीकृतं कियत्कालमवश्यं म्रियते ह्ययः ॥

शुद्ध लोह चूर्णमें उसके बराबर गन्धक मिला कर दोनोंको कुमारीके रसमें घोट कर यथा विधि शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी आंच दें ।

इसी प्रकार कई पुट देनेसे लोह अवश्य मर जाता है ।

(६४०३) लोहभस्मविधिः (३)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

यद्वा तीक्ष्णदलोद्भूतं रजश्च त्रिफलाजलैः ।
पिष्ट्वा दत्वौदनं किञ्चिच्चक्रिकां प्रविधाय च ॥
शोषयित्वाऽतियत्नेन प्रपचेत्पञ्चभिः पुटैः ।
रक्तवर्णं हि तद्भस्म योजनीयं यथातथम् ॥

शुद्ध तीक्ष्ण लोहके चूर्णको त्रिफलाके क्वाथमें घोट कर उसमें थोड़ासा भात मिला कर टिकिया बनाकर सुखा लें और फिर उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी आग दें ।

इसी प्रकार ५ पुट देनेसे समस्त कार्योंमें व्यवहार करने योग्य लाल रंगकी लोह भस्म तैयार हो जाती है ।

(६४०४) लोहभस्मविधिः (४)

(र. र. स. । पू. खं. अ. ५)

अथ पूर्वोदितं तीक्ष्णं वसुभल्लकवासयोः ।
पुटितं पत्रतोयेन त्रिंशद्वाराणि यत्नतः ॥
शोणितं जायते भस्म कृतसिन्दूरविभ्रमम् ॥

तीक्ष्ण लोह चूर्णको सफेद पुनर्नवा और बासेके पत्तोंके रसमें घोट घोट कर यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इसी प्रकार ३० पुट देनेसे इतनी लाल भस्म हो जाती है कि उसे देख कर सिन्दूरका भ्रम होने लगता है ।

(६४०५) लोहभस्मविधिः (५)

(र. र. स. । पू. ख. अ. ५)

हिङ्गुलस्य पलान्पञ्च नारीस्तन्येन पेषयेत् ।
तेन लोहस्य पत्राणि लेपयेत्पलपञ्चकम् ॥

रुध्वा गजपुटैः पच्यात्कषायैस्त्रैफलैः पुनः ।
जम्बीरैरारनालैश्च विंशत्यंशेन हिङ्गुलम् ॥
पिष्ट्वा रुध्वा पचेल्लोहं तद्द्रवैः पाचयेत्पुनः ।
चत्वारिंशत्पुटैरेवं कान्तं ताक्ष्णं च मुण्डकम्+ ॥
म्रियते नात्र सन्देहो दत्वा दत्वैव हिङ्गुलम् ॥

२५ तोले हिंगुलको स्त्रीके दूधमें घोट कर २५ तोले शुद्ध लोह पत्रों पर उसका लेप कर दें और उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

तदनन्तर पुटके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे लोहको निकाल कर कूट लें और फिर उसमें १। तोला हिंगुल मिला कर त्रिफलाके क्वाथमें घोटें और यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी अग्नि दें । इसी प्रकार हर बार १। तोला हिंगुल मिलाकर और त्रिफलाके क्वाथमें घोट कर १३ पुट दें । तदनन्तर १३ पुट जम्बीरीके रसमें घोट कर और फिर १३ पुट आरनालमें घोट कर दें । हर बार १। तोला हिंगुल मिला लेना चाहिये । इस प्रकार कुल ४० पुट देनेसे कान्त लोह, तीक्ष्ण लोह और मुण्ड लोहकी भस्म हो जाती है ।

+लोहलक्षणानि

(आ वे. प्र. । अ. ११)

मुण्डात्कटाहपात्रादि जायते तीक्ष्णलोहतः ।
खड्गादि शस्त्रभेदाः स्युः, कान्तलोहं तु दुर्लभम्॥
मुण्डाच्छतगुणं तीक्ष्णं तीक्ष्णात्कान्तं शताधिकम्
तस्मान्मुण्डं परित्यज्य तीक्ष्णं वा कान्तमुत्तमम्॥
कासीसामलकल्काक्ते लोहेऽङ्गं दृश्यते स्फुटम् ।
तीक्ष्णं लाहं तदुद्दिष्टं मारणायोत्तमं विदुः ॥

मुण्ड लोहसे कढ़ाई पात्रादि बनते हैं; तीक्ष्ण लोहसे तलवार इत्यादि शस्त्र बनाये जाते हैं और कान्त लोह मिलना दुर्लभ है ।

मुण्ड लोहसे सौ गुना गुणकारी तीक्ष्ण लोह और तीक्ष्णसे १०० गुना कान्त लोह होता है, अतएव मुण्ड लोहको छोड़ कर औषधोंमें तीक्ष्ण या कान्त लोहही प्रयुक्त करना चाहिये ।

यदि लोहेपर कसीस और आमलेके कल्कका लेप करनेसे उसमें मुख दीखने लगे तो उसे भस्म करने योग्य उत्तम कान्त लोह समझना चाहिये ।

कान्तलोहलक्षणम्

(यो. र.)

यत्पात्रस्थः प्रसरति जले तैलबिन्दुर्न दत्तो
हिङ्गुर्गन्धं विसृजति निजं तिक्ततां निम्बकल्कः।
पाच्यं दुग्धं भवति शिखराकारकं नैति भूमिं
दग्धाङ्गाः स्युः सजलचणकाः कान्तलोहं तदुक्तम् ॥

कान्त लोहके पात्रमें पानी भर कर उसमें तेलकी बूंद डालनेसे वह फैलती नहीं; तथा उसमें हींग रख देनेसे उसकी गन्ध नष्ट हो जाती है और नीमके पत्तोंके कल्कका लेप करनेसे उसकी कड़वाहट चली जाती है ।

कान्त लोहके पात्रमें दूध पकानेसे वह शिखराकार ऊंचा हो जाता है परन्तु बाहर नहीं निकलता । एवं भीगे हुवे चने रखनेसे वे जले हुवेसे हो जाते हैं ।

(६४०६) **लोहमलादियोगः**

(व. से. । पाण्डु.)

अयोमलन्तु सन्तप्तं भूयो गोमूत्रसाधितम् ।
मधुसर्पियुतं लीढ्वा पाण्डुरोगी सुखी भवेत् ॥
दीपनं चाग्निजननं शोथपाण्ड्वामयापहम् ।

पुराने मण्डूरको तपा तपाकर बार बार गोमूत्रमें बुझावें, यहां तक कि उसका चूर्ण हो जाय।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे पाण्डु और शोथ नष्ट होता तथा जठराग्नि दीप्त होती है ।

(मात्रा---३-४ रत्ती ।)

(६४०७) **लोहमारणम्** (१)

(यो. र.)

एकभागं लोहचूर्णं तत्समो नवसागरः ।
किञ्चित्तप्तोदकं ग्राह्यं सर्वं वस्त्रे निबध्य च ॥
यामान्ते घर्षयेत्पाणौ सद्यो वारितरं भवेत् ।
योजयेत्सर्वरोगेषु सर्वरोगापनुत्तये ॥

१ भाग लोह चूर्ण और १ भाग नौसादरको एकत्र मिला कर उसमें थोड़ासा गरम पानी डालें और सबको कपड़ेमें बांध कर पोटली बनावें । तत्पश्चात् उसे १ पहर बाद दोनों हाथोंसे मलें । इस प्रकार लोह वारितर हो जाता है जिसे (लोहसाध्य) समस्त रोगोंमें प्रयुक्त कर सकते हैं ।

(६४०८) **लोहमारणम्** (२)

लोहानां मारणं श्रेष्ठं सर्वेषां रसभस्मना ।
मध्यमं मूलिकाभिश्च कनिष्ठं गन्धकादिभिः॥

× × × ×

दाडिमीपत्रजरसैर्लोहचूर्णं च भावितम् ।
आतपे सप्तधा तेन पुनर्गजपुटद्वयम् ॥
इत्थं कृतं च तद्भस्म शुद्धं वारितरं भवेत् ।
योजयेत्सर्वरोगेषु सत्यं गुरुवचो यथा ॥

समस्त लोहों (धातुओं) का मारण पारद भस्मके साथ करना श्रेष्ठ, केवल बनौषधियोंसे करना मध्यम और गन्धकादिके योगसे करना कनिष्ठ है ।

× × × ×

शुद्ध लोह चूर्णको अनारके पत्तोंके रसकी धूपमें सात भावना दें और फिर यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुट दें । इसी प्रकार २ पुट देनेसे लोहकी उत्तम वारितर भस्म हो जाती है । इसे समस्त रोगोंमें प्रयुक्त कर सकते हैं ।

(६४०९) **लोहमारणम्** (३)

(यो. र.)

गृहीत्वा तीक्ष्णजं चूर्णं तथैव च गवां दधि ।
एकत्र कारयेद्भाण्डे यावच्छोषत्वमाप्नुयात् ॥
उद्धृत्य गालयेदग्नौ त्रिफलायाः पुटत्रयम् ।
देयं वारितरं सद्यो जायते नात्र संशयः ॥

तीक्ष्ण लोहका शुद्ध चूर्ण और गायकी दही समान भाग ले कर दोनोंको किसी बरतनमें भर कर रख दें । जब दही सूख जाय तो उसे त्रिफलाके क्वाथमें खरल करके यथा विधि गजपुटकी अग्नि दें । इसी प्रकार त्रिफला क्वाथके साथ खरल करके ३ पुट देनेसे लोहकी वारितर भस्म हो जाती है ।

(६४१०) लोहमारणम् (४)

(शा. सं. । खं. २ अ. ११ ; भा. प्र. । प्र. खं. ; रसे. चि. म. । अ. ६)

शिलागन्धार्कदुग्धाक्ताः स्वर्णाद्याः सर्वधातवः।
म्रियन्ते द्वादशपुटैः सत्यं गुरुवचो यथा ॥

समान भाग मनसिल और गन्धकको आकके दूधमें खरल करके उसका स्वर्णादि किसी भी धातुके पत्रों पर लेप करके गजपुटमें पकानेसे १२ पुटमें हरेक धातुकी भस्म हो जाती है ।

(स्वर्ण और चांदीको प्रारम्भमें गजपुटमें न पकाना चाहिये बल्कि लघुपुट देनी चाहिये और फिर ज्यों ज्यों वे अग्नि सहन करते जायं त्यों त्यों अग्निका प्रमाण बढ़ाते रहना चाहिये ।

जब पुट लगानेसे पत्रोंका चूर्ण हो जाय तो उसे मनसिल और गन्धकके चूर्णमें मिला कर आकके दूधमें घोट कर टिकिया बना कर शराव-सम्पुटमें बन्द करना चाहिये ।)

(६४११) लोहमारणम् (५)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

अथापरः प्रकारोऽत्र कथ्यते लोहमारणे ।
लोहचूर्णसमं गन्धं मर्दयेत्कन्यकारसैः ॥
पिण्डीकृतं लोहपात्रे छायायां स्थापयेच्चिरम् ।
म्रियते नात्र सन्देहो ह्यनुभूतं मयैव हि ॥

समान भाग लोहचूर्ण और गन्धकको एकत्र मिला कर घी कुमारके रसमें खरल करें और फिर उसका गोला बना कर उसे लोहपात्रमें रख कर दीर्घ काल तक छायामें रक्खा रहने दें ।

इस क्रियासे लोहकी भस्म अवश्य बन जाती है । यह अनुभूत विधि है ।

(६४१२) लोहमारणम् (६)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

लोहचूर्णं पलद्वन्द्वं गुडगन्धौ समांशकौ ।
खल्वे विमर्द्य नितरां पुटेद्विंशति वारकम् ॥
पेषणं तु प्रकर्तव्यं पुटः पश्चात्प्रदीयते ।
अनेन विधिना सम्यग्भस्मीभवति निश्चितम ॥
सर्वरोगान्निहन्त्येव नात्र कार्या विचारणा ॥

लोह चूर्ण १० तोले, गुड़ ५ तोले और शुद्ध गन्धक ५ तोले ले कर तीनोंको एकत्र खरल करके शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें । इसी प्रकार २० पुट देनेसे लोह अवश्य मर जाता है । इसे समस्त रोगोंमें दे सकते हैं ।

(६४१३) लोहमारणम् (७)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

श्वेता पुनर्नवापत्रतोयेन दशसङ्ख्यकाः ।
पुटास्तत्र प्रदेयाश्च सिन्दूराभं प्रजायते ॥

लोह चूर्णको सफेद पुनर्नवाके पत्तोंके रसमें खरल करके टिकिया बना कर सुखा लें और उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी अग्नि दें । इसी प्रकार १० पुट देनेसे लोहकी सिन्दूरके समान लाल भस्म बन जाती है ।

(६४१४) लोहमारणम् (८)

(र. प्र. सु. । अ. ४)

लोहचूर्ण घृताक्तं हि क्षिप्त्वा लोहस्य खर्परे ।
अग्निवर्णप्रमं यावत्तावद्दर्व्या प्रचालयेत् ॥
खल्वे पिष्ट्वा च विपचेत्पञ्चवारमतः परम् ।
वरोदकैः पुटेल्लोहं चतुर्वारमिदं खलु ॥

सुपेषितं वारितरं जायते नात्र संशयः ।
अनेन विधिना कार्यं सर्वलोहस्य साधनम् ॥
जायते सर्वरोगघ्नं सेवितं पलितापहम् ॥

शुद्ध लोहचूर्णको घीसे चिकना करके लोहेकी कढ़ाईमें इतना तपावें कि वह आगके समान लाल हो जाय । इस बीचमें उसे निरन्तर लोहेके करछेसे चलाते रहना चाहिये । तदनन्तर उसे लोहेके खरलमें डाल कर घोटें और फिर पुनः घीसे चिकना करके कढ़ाईमें पकावें । इसी प्रकार ५ बार पाक करनेके पश्चात् उसे त्रिफलाके काथमें घोट कर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें । इसी प्रकार त्रिफला काथमें खरल करके ४ पुट देनेसे लोहकी वारितर भस्म हो जाती है ।

इसी विधिसे समस्त प्रकारके लोहोंकी सर्वरोग हर और पलितनाशक भस्म तैयार हो जाती है ।

(६४१५) **लोहमारणम्** (९)

(र. म. ; यो. र. ; र. र. स. । अ. ५ ; रसें. सा. सं. ; आ. वे. प्र. । अ. ११; शा. सं. । ख. २ अ. ११; भा. प्र. ; रसें. चि. म. । अ. ६. ; वृ. यो. त. । त. ४१)

शुद्धस्य सूतराजस्य भागो भागद्वयं बलेः ।
द्वयोः समं सारचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाम्बुना ॥
यामद्वयं तस्य गोलं संवेष्ट्यैरण्डपत्रकैः ।
ततः सूत्रेण संबध्य स्थापयेत्ताम्रसम्पुटे ॥
संमुद्र्य वदनं तस्य मृदा संशोष्य तत्पुनः ।
त्रिदिनं धान्यराशिस्थं तत उद्धृत्य मर्दयेत् ॥
रजस्तद्वस्त्रगलितं नीरे तरति हंसवत् ।
सोमामृताभिधमिदं लोहभस्म प्रकीर्तितम् ॥

१ भाग शुद्ध पारद, २ भाग शुद्ध गन्धक और तीन भाग शुद्ध लोह चूर्णको एकत्र मिलाकर २ पहर घृतकुमारीके रसमें घोटें और फिर उसका गोला बना कर उसे अरण्डके पत्तोंमें लपेट कर उस पर सूतका डोरा लपेट दें और फिर उसे ताम्रसम्पुटमें बन्द करके उसकी सन्धिको मिट्टीसे बन्द कर दें, एवं उसे सुखाकर अनाजके ढेरमें दबा दें । तीन दिन पश्चात् सम्पुटमेंसे लोहको निकालकर पीस कर कपड़ेसे छान लें ।

यह लोह भस्म हंसके समान पानी पर तैरती है । इसका नाम "**सोमामृत लोह भस्म**" है ।

नोट—कई ग्रन्थोंमें उक्त गोलेको अनाजके ढेरमें दबानेसे पूर्व, ताम्र पात्रमें रख कर २ पहर तक धूपमें रखनेके लिये लिखा है ।

(६४१६) **लोहमारणम्** (१०)

(र. म. ; यो. र. ; रसें. सा. सं. ; आ. वे. प्र. । अ. ११; शा. सं. । ख. २ अ. ११; भा. प्र. । प्र. खं. ; वृ. यो. त. । त. ४१)

द्वादशांशेन दरदं तीक्ष्णचूर्णस्य मेलयेत् ।
कन्यानीरेण संमर्द्य यामयुग्मं तु तत्पुनः ॥
शरावसम्पुटे कृत्वा पुटेद्गजपुटेन वै ।
सप्तधैवं कृतं लोहरजो वारितरं भवेत् ॥

१२ भाग तीक्ष्ण लोहके शुद्ध चूर्णमें १ भाग हिंगुल मिला कर उसे २ पहर घृतकुमारीके रसमें घोटें और फिर टिकिया बना कर, उन्हें सुखा कर यथा विधि शराव-सम्पुटमें बन्द करें और गजपुटकी अग्नि दें ।

इसी प्रकार सात पुट देनेसे लोहकी वारितर भस्म हो जाती है।

(६४१७) **लोहमारणम्** (११)

(र. म. ; वृ. यो. त. । त. ४१.)

काकोदुम्बरिकानीरैर्लोहपत्राणि सेचयेत् ।
वह्नितप्तानि षड्वारं कुट्टयेत्तदुलूखले ॥
तत्पञ्चमांशं दरदं क्षिप्त्वा सर्वं विमर्दयेत् ।
कुमारीनीरतः श्लक्ष्णं पुटेद्गजपुटेन तु ॥
त्रिवारं त्रिफलाक्वाथैस्तत्संख्यैरपि तत्त्ववित् ।
निरुत्थं जायते लोहं त्रिधाऽप्यत्र न संशयः ॥

लोहेके बारीक पत्रोंको तपा तपाकर ६ बार कठूमरके रसमें बुझा कर कूट लें और फिर उसमें उसका पांचवां भाग हिंगुल मिला कर घीकुमारके रसमें घोट कर खूब बारीक करें एवं टिकिया बना कर सुखा कर उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करें और उसे सुखा कर गजपुटमें फूंक दें । इसी प्रकार ३ पुट दें और फिर ३ पुट त्रिफलाके क्वाथमें घोट कर दें । हर बार पांचवां भाग हिंगुल मिला लेना चाहिये ।

इस विधिसे तीक्ष्ण लोह, कान्त लोह और मुण्ड लोहकी निरुत्थ भस्म हो जाती है।

(६४१८) **लोहमारणम्** (१२)

(वृ. यो. त. । त. ४१)

निम्बूफलस्य पानीयैः सकासीसैः प्रपूरिते ।
कांस्यपात्रे क्षिपेत्खड्गखण्डांश्चण्डातपे स्थिते ॥
दिनैकेन स्फुटन्त्येते दिनान्ते तांस्तु पेषयेत् ।
त्रिफलाक्वाथपिष्टं तच्चूर्णं गजपुटे पचेत् ॥
पुनः पिष्टेन यावत्स्यात्तद्वारितरमुत्तमम् ।
ततः पारदगन्धाभ्यां तत्समाभ्यां सम्मर्दयेत् ॥
पूर्ववद्धान्यराशिस्थं तीक्ष्णं सर्वोत्तमं भवेत् ॥

कांसीके पात्रमें नीबूका रस भर कर उसमें (आठवां भाग) कसीसका चूर्ण मिला कर उसमें तलवारके टुकड़े डाल दें और १ दिन तेज़ धूपमें रक्खें । तदनन्तर उन्हें पीस कर त्रिफला क्वाथके साथ खरल करें और यथा विधि गजपुटमें पकावें। इसी प्रकार वारितर भस्म होने तक त्रिफला क्वाथमें घोट घोट कर पुट देते रहें ।

तदनन्तर १ भाग शुद्ध पारद और २ भाग गन्धककी कज्जली करके उसमें समान भाग उपरोक्त भस्म मिला कर दोनोंको २ पहर घीकुमारके रसमें खरल करें और फिर उसका गोला बनाकर उसे अरण्डके पत्तोंमें लपेट कर तांबेके शरावसम्पुटमें बन्द करें और अनाजके ढेरमें दबा दें तथा तीन दिन पश्चात् निकालकर पीस लें। यह लोहकी सर्वोत्तम भस्म है ।

(६४१९) **लोहमारणम्** (१३)

(यो. र. ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; वृ. यो. त. । त. ४१)

लोहचूर्णं पलं खल्वे सोरकस्य पलं तथा ।
अच्छगन्धपलं चापि सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥
कुमार्यद्भिर्दिनं पश्चाद्गोलकं रुबुपत्रकैः ।
संवेष्ट्य च मृदा लिप्त्वा पुटेद्गजपुटे भिषक् ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सिन्दूराभमयोरजः ।
मृतं वारितरं ग्राह्यं सर्वकार्यकरं परम् ॥
पाण्डुं पीडयति क्षयं क्षपयति क्लैण्यं क्षिणोति क्षणात्कासं नाशयति भ्रमं नमयति श्लेष्मामयान्खादति ।

अर्शोगुल्मसशूलपीनसवमिश्वासप्रमेहारुचि-
राशून्मूलयति प्रकम्पनहरं लौहं हिमं चाक्षुषम् ॥

× × × ×

ये गुणा मृतरूप्यस्य ते गुणाः कान्तभस्मनः ।
कान्ताभावे प्रदातव्यं रूप्यमित्याह भैरवः ॥

× × × ×

कूष्माण्डं तिलतैलं च माषान्नं राजिकां तथा ।
मद्यमम्लं रसं चैवं त्यजेल्लोहस्य सेवकः ॥

शुद्ध लोह चूर्ण ५ तोले, शोरा ५ तोले और शुद्ध गन्धक ५ तोले ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर खरल करें और फिर उसे १ दिन घृतकुमारी-के रसमें घोट कर गोला बनावें तथा उसे अरण्ड-के पत्तोंमें लपेट कर उस पर मिट्टीका (१ अंगुल मोटा) लेप कर दें और सुखा कर गजपुटमें पकावें ।

इस विधिसे लोहकी सिन्दूरके समान वारितर भस्म हो जाती है ।

× × × ×

लोह भस्म पाण्डु, क्षय, क्षीणता, खांसी, भ्रम, कफज रोग, अर्श, गुल्म, शूल, पीनस, वमन, श्वास, प्रमेह, अरुचि और कम्पनको नष्ट करती है । यह शीतल और नेत्रोंके लिये हितकारी है ।

× × × ×

जो गुण चांदी भस्ममें हैं वही कान्त लोह भस्ममें हैं अत एव कान्त लोहके अभावमें चांदी भस्म प्रयुक्त की जा सकती है ।

× × × ×

लोह सेवन कालमें पेठा, तिलका तेल, उड़द, राई, मद्य और अम्ल रस (खटाई) से परहेज़ करना चाहिये ।

सूचना

लोहशोधनम्

लोहनिरुत्थिकरणम्

इसी ग्रन्थमें यथास्थान मिलेंगे ।

(६४२०) लोहमृत्युञ्जयरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु । प्लीहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; धन्व. । उदरा.)

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटी मृतताम्रकम् ।
विषमुष्टिवराटश्च तुत्थं शङ्खं रसाञ्जनम् ॥
जातीफलश्च कटुकी द्विक्षारं कानकन्तथा ।
व्योषं हिङ्गु सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वमेकत्र भावयेत्ततः ।
सूर्यावर्त्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च ॥
सूर्यावर्त्तेन मतिमान्वटिकां कारयेत्ततः ।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममष्ठीलाञ्च विनाशयेत् ॥
अग्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वोदराणि च ।
वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रधिमेव च ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध मनसिल,ताम्र भस्म, शुद्ध कुचला, कौड़ी भस्म, शुद्ध तूतिया, शंख भस्म, रसौत, जायफल, कुटकी, यवक्षार, सज्जीखार, धतूरके बीज, सोंठ, मिर्च, पीपल, भुनी हुई हींग, और सेंधा नमक १–१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको हुलहुल, बेलपत्र और पुनः

हुलहुलके रसकी १-१ भावना दे कर (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अष्ठीला, अग्रमांस, शोथ, उदर रोग, वातरक्त, कमठ और अन्तर्विद्रधिका नाश होता है।

(६४२१) **लोहयोगः**

(ग. नि. । रसायना.)

तीक्ष्णायस्त्रिफलाचूर्णं घृतक्षौद्रविमिश्रितम् ।
खादतः प्रशमं याति जरा मृत्युश्च निश्चितम् ॥

तीक्ष्ण लोह भस्म और त्रिफलाका चूर्ण समान भाग ले कर एकत्र मिलावें।

इसे घृत और शहदके साथ सेवन करनेसे वृद्धावस्था और अकाल मृत्यु नहीं आती।

(६४२२) **लोहरसायनम्** (१)

(च. स. । चि. अ. १ ; ग. नि. । रसायना.)

त्रिफलाया रसे मूत्रे गवां क्षारे च लावणे ।
क्रमेण चेङ्गुदीक्षारे किंशुकक्षार एव च ॥
तीक्ष्णायसस्य पत्राणि वह्निवर्णानि वापयेत् ।
चतुरङ्गुलदीर्घाणि तिलोत्सेधतनूनि च ॥
ज्ञात्वा तान्यञ्जनाभानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
तानि चूर्णानि मधुना रसेनामलकस्य च ॥
युक्तानि लेहवत् कुम्भे स्थितानि घृतभाविते ।
संवत्सरं निधेयानि यवपल्ले तथैव च ॥
दद्यादालोडनं मासे सर्वत्रालोडयन् बुधः ।
संवत्सरात्यये तस्य प्रयोगो मधुसर्पिषा ॥
प्रातः प्रातर्बलापेक्षी सात्म्यं जीर्णे च भोजनम्।
एष एव च लोहानां प्रयोगः संप्रकीर्त्तितः ॥
नाभिघातैर्न चातंकैर्जरया न च मृत्युना ।
स धृष्यः स्याद्गजप्राणः सदा चातिबलेन्द्रियः ॥
धीमान् यशस्वी वाग्मी च श्रुतधारी महाबलः ।
भवेत् समां प्रयुञ्जानो नरो लोहरसायनम् ॥
अनेनैव विधानेन हेम्नश्च रजतस्य च ।
आयुःप्रकर्षकृत् सिद्धः प्रयोगः सर्वरोगनुत् ॥

तीक्ष्ण लोहेके चार चार अंगुल लम्बे और तिलके समान मोटे पत्रोंको अग्निमें तपा कर लाल करें और त्रिफलाके क्वाथमें बुझा दें। इसी प्रकार गोमूत्र, यवक्षारके पानी, सेंधा नमकके पानी, इंगुदी (हिंगोट) के क्षारके पानी और पलाशक्षारके पानीमें बुझावें।

तदनन्तर उन्हें कूट कर सूक्ष्म चूर्ण कर लें और उसमें शहद तथा आमलेका रस मिला कर अवलेहके समान बना लें, एवं उसे घृतभावित मृत्पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और हर महीने निकाल कर (लोहे या लकड़ी आदिके डण्डेसे) उसे अच्छी तरह चला दिया करें। इस प्रकार जब एक वर्ष हो जाय तो उसे निकाल कर घी और शहदके साथ नित्य प्रति प्रातः काल सेवन करें। जब औषध पच जाय तब सात्म्य आहार करना चाहिये।

लोहके समान ही स्वर्ण, रौप्यादि अन्य धातुओंका भी प्रयोग करना चाहिये।

इस रसायनके सेवनसे मनुष्य रोग, जरा और मृत्यु (अकाल मृत्यु) के हमलेसे सुरक्षित रहता है; उस पर अभिघातका कोई प्रभाव नहीं पड़ता; उसका शरीर हाथीके समान बलशाली हो जाता है तथा समस्त इन्द्रियां भी अत्यन्त बलवान हो जाती हैं। इसे सेवन करने वाला मनुष्य धीमान,

यशस्वी, वाग्मी, श्रुतधारी और महा बलशाली हो कर दीर्घायु प्राप्त करता है ।

(६४२३) लोहरसायनम् (२)

(व. से. । रसायना.)

विडङ्गसारो मेघाख्यो रक्तवह्निररुष्करः ।
हस्तिकर्णः सितार्कस्तु श्वेतवर्षासमुद्भवम् ॥
वाकुचीमुण्डिकाभृङ्गो राजको वृद्धदारकः ।
गुडूच्यतिबलारास्ना तालमूली शतावरी ॥
पिण्डारकश्चैडगजो वैडालः केशराजकः ।
एकैकं पलमेतेषां ग्राह्यं समधुना घृतम् ॥
रसस्यैकं पलं ग्राह्यं लोहस्य पलविंशतिः ।
चत्वारिंशत्तथाभ्रस्य शुल्वं चापि चतुष्पलम् ॥
गन्धकस्य पलान्यष्टौ षट्पलानि मनः शिला ।
स्वर्णमाक्षिकचत्वारि षट्पलानि शिलाजितोः॥
त्रिफलात्रिकटुनाञ्च प्रत्येकञ्च पलत्रयम् ।
सर्वाण्येतानि सञ्चूर्ण्य घृतेन मधुना सह ॥
स्निग्धे भाण्डे समालोड्य स्थापयित्वा विचक्षणः
भक्षयेत् क्रमयोगेन लोहं सर्वरसायनम् ॥

बायबिड़ंगके चावल, नागरमोथा, लाल चीता, शुद्ध भिलावे, हस्तिकर्ण पलाश, सफेद आककी जड़की छाल, सफेद पुनर्नवा, बाबची, मुण्डी, भंगरा, अमलतासका गूदा, विधारा, गिलोय, कंघीकी जड़, रास्ना, तालमूली, शतावर, पिण्डारक, पंवाड़, वैडाल और काला भंगरा; इनका चूर्ण ५–५ तोले तथा शुद्ध पारा ५ तोले, लोह भस्म १०० तोले, अभ्रक भस्म २० तोले, ताम्र भस्म २० तोले, शुद्ध गन्धक ४० तोले, शुद्ध मनसिल ३० तोले, स्वर्ण माक्षिक भस्म २० तोले, शिलाजीत ३० तोले, एवं हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण ५–५ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करके उसमें (सबके बराबर) घी और शहद मिला कर सबको घृतसे चिकने किये हुए पात्रमें भर कर रख दें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे जरा व्याधिका नाश और आयुकी वृद्धि होती है ।

(६४२४) लोहरसायनम् (३)

(व. से. । रसायना.)

लोहं पूर्वं पुटेच्छुद्धं गृहीत्वा पलपञ्चकम् ।
पुनर्नवावरीमूलं त्रिफला पुटितं पुनः ॥
वरा चतुर्गुणं लोहात्पचेदष्टगुणे जले ।
सप्तभागावशेषेण द्विशरावं पयः क्षिपेत् ॥
शतावरीरसञ्चापि लोहतुल्यं प्रदापयेत् ।
पलानि दश चाज्यस्य मृदुपाकेऽवतारिते ॥
द्विजीरकं विडङ्गञ्च पलाशबीजमेव च ।
त्र्यूषणं त्रिफला चव्यं चूर्णमेषां पयःसमम् ॥
वातपित्तोत्तरं हन्ति ग्रहणीगदमुल्कटम् ॥

५ पल शुद्ध लोह–भस्मको पुनर्नवा, शतावर और त्रिफलाके रसमें पृथक् पृथक् घोट कर १–१ पुट दें । तदनन्तर २० पल त्रिफलेको आठगुने (१६ गुने) पानीमें पकाकर सप्त भागावशेष रक्खें और फिर उसमें उपरोक्त लोह भस्म, १ प्रस्थ (२ प्रस्थ) दूध, ५ पल (१० पल) शतावरका रस और १० पल (२० पल) घी मिला कर पकावें एवं मृदु पाक तैयार होने पर अग्निसे नीचे उतार कर उसमें दोनों जीरे, बायबिड़ंग, पलाशके

बीज, त्रिकुटा, त्रिफला और चवका चूर्ण १ प्रस्थ मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे वातपित्तज ग्रहणी नष्ट होती है।

(६४२५) लोहरसायनम् (४)

(व. से. । रसायना.)

विभीतकाभयाधात्री प्रत्येकं तु पलाष्टकम्।
वारिण्यष्टगुणे साध्यं षडङ्गेनावतारिते॥
अयः पलानि पञ्चैव पयसोष्टौ शरावकान्।
सर्पिषो दशपलान्यत्र दद्याल्लोहं विपाचयेत्॥
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं तु द्विकार्षिकम्।
विडङ्गं भद्रमुस्तञ्च जीरकं द्वयमेव च॥
पृथगर्धपलं ग्राह्यं कुर्य्यात्पाकन्तु मध्यमम्।
पैत्तिके ग्रहणीरोगे योजयेन्मतिमान् भिषक्॥

बहेड़ा, हर्र और आमला ४०-४० तोले ले कर २४ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें २५ तोले लोह भस्म, ८ सेर दूध और १। सेर घी मिला कर पकावें। जब मध्यम पाक तैयार हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार कर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, वायबिड़ंग, नागरमोथा, सफेद जीरा, और काला जीरा; इनका २॥-२॥ तोले चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे पैत्तिक संग्रहणी नष्ट होती है।

(६४२६) लोहरसायनम् (५)

(व. से. । रसायना.)

प्रत्येकं षट्पलं धात्री शिवा वैभीतकत्वचम्।
उदकानां शरावैस्तु षड्विंशत्या विपाचयेत्॥
पञ्चभागावशिष्टेन लोहं पञ्चपलानि च।
तावद्दत्वा दधि तस्मिन् खरपाकं विपाचयेत्॥
त्रिकटुत्रिफलावह्निविडङ्गं भद्रमुस्तकम्।
चूर्णं लोहसमं चात्र प्रक्षिपेदवतारिते॥
श्लैष्मिकं ग्रहणीदोषं हन्यादेतद्रसायनम्॥

आमला, हर्र और बहेड़ा ३०-३० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर अधकुटा करें और उसमें २६ सेर पानी मिला कर पकावें। जब पांचवां भाग पानी शेष रहे तो उसे छान कर उसमें २५ तोले लोहभस्म और २५ तोले दही मिला कर पुनः पकावें। जब खरपाक हो जाय तो अग्निसे नीचे उतारकर उसमें त्रिकुटा, त्रिफला, चीता, बायबिड़ंग और नागरमोथेका चूर्ण २५ तोले मिला कर खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे कफज संग्रहणी नष्ट होती है।

(६४२७) लोहरसायनम् (६)

(व. से. । रसायना.)

अष्टादशपलान्यत्र त्रिफलाया विपाचयेत्।
सलिले द्व्याढके चास्मिन्नवभागावशेषितम्॥
विपचेत्पूर्ववल्लोहं पुटितं वक्ष्यमाणकैः।
वरायाः केशराजस्य चार्द्रकस्य रसेन च॥
एतत्पञ्चपलं ग्राह्यं सर्पिर्दशपलानि च।
शतावरीरसस्याष्टौ नारिकेलोदकस्य च॥
पलार्द्ध मरिचं कृष्णा नागरं पलसम्मितम्।
षड्विंशमाषकं चूर्णं त्रिफलायाः प्रकल्पयेत्॥
त्रिचत्वारिंशता माषैरधिकं चूर्णितं पलम्।
चित्रकस्य विडङ्गस्य पचेत्पाकवरं ततः॥
वातश्लेष्मोत्तरे चैव कुक्षिरोगे तथा हितम्॥

१८ पल (९० तोले) त्रिफलाको १६ सेर पानीमें पकावें और नवां भाग शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें त्रिफला, भंगरा और अदरकके रसमें भावित लोहभस्म २५ तोले, घी १०० तोले, शतावरका रस ८० तोले, नारियलका पानी ८० तोले, काली मिर्च और पीपलका चूर्ण २॥-२॥ तोले, सोंठ ५ तोले, त्रिफलाका चूर्ण ३२॥ माशे, चीते और बायबिडंगका चूर्ण प्रत्येक ९ तोले ५॥। माशे मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें।

इसके सेवनसे वात कफज उदर रोग नष्ट होते हैं।

(६४२८) लोहरसायनम् (७)

(व. से. । रसायना.)

त्रिफलायाः प्रकुर्वीत प्रत्येकं पलसप्तकम् ।
वारिण्यष्टगुणे पक्त्वा पञ्चभागेन शेषयेत् ॥
षट्शरावास्तु दुग्धस्य हविषः पलपञ्चकम् ।
पुटितादायसः पञ्च शुद्धाभ्रस्य पलद्वयम् ॥
विडङ्गं त्रिफला जीरं द्वयं त्रिकटु चूर्णितम् ।
लोहचूर्णं समं ग्राह्यं गुणवृद्धं ततः पचेत् ॥
ग्रहणीगदमत्युग्रं हन्त्येतद्वातसम्भवम् ॥

हर्र, बहेड़ा और आमला ३५-३५ तोले ले कर सबको एकत्र अधकुटा करके २१ सेर पानीमें पकावें और पांचवां भाग शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ६ सेर दूध, ५० तोले घी, २५ तोले लोह भस्म और १० तोले अभ्रक भस्म तथा बायबिडंग, त्रिफला, दोनों जीरे और त्रिकुटेका चूर्ण २५ तोले मिलाकर पुनः पकावें और गाढ़ा हो जाने पर उतार कर सुरक्षित रक्खें।

यह अत्युग्र वातज ग्रहणीको नष्ट करता है।

लोहरसायनम् (८)

(व. से. । रसायना.)

प्र. सं. ३०२४ दासरसायन देखिये।

लोहरसायनम् (९)

(व. से. । रसायना.)

प्र. सं. ३०२३ "**दासलोहरसायन**" देखिये।

(६४२९) लोहविकारशमनोपायः

(आ. वे. प्र. । अ. ११)

कृमिरिपु लीढं सहितं स्वरसेन बङ्गसेनस्य ।
क्षपयत्यचिरान्नियतं लोहाजीर्णोद्भवं शूलम् ॥
आरग्वधस्य मज्जाभी रेचनं किट्टशान्तये ।
भवेद्यद्यतिसारश्च पीत्वा दुग्धं तु तं जयेत् ॥

बायबिडंगके चूर्णको अगस्तिके स्वरसके साथ मिला कर चाटनेसे लोहाजीर्णसे उत्पन्न हुवा शूल अवश्य शीघ्र ही शान्त हो जाता है।

यदि लोह सेवनसे कब्ज़ हो जाय तो अमलतासके गूदेसे विरेचन देना चाहिये और दस्त आने लगें तो दूध पिलाना चाहिये।

(६४३०) लोहशोधनम् (१)

(र. म. ; यो. र. ; रसे. सा. सं ; र. र. स. । अ. ५)

त्रिफलाष्टगुणे तोये त्रिफला षोडशोन्मिताम् ।
तत्क्वाथे पादशेषे तु लोहस्य पलपञ्चकम् ॥
कृत्वा पत्राणि तप्तानि सप्तवारं निषेचयेत् ।
एवं प्रलीयते दोषो गिरिजो लोहसम्भवः ॥

१ सेर त्रिफलाको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें। २० तोले

लोहेके बारीक पत्रोंको अग्निमें तपा तपा कर सात बार इस क्वाथमें बुझानेसे उसके गिरि सम्भव दोष नष्ट हो जाते हैं।

(६४३१) लोहशोधनम् (२)

(रसे. सा. सं.)

तप्तानि सर्वलोहानि कदलीमूलवारिणि।
सप्तधा त्वभिषिक्तानि शुद्धिमायान्त्यनुत्तमाम्॥

सब प्रकारके लोहोंको तपा तपा कर केलेकी जड़के रसमें सात बार बुझानेसे वे शुद्ध हो जाते हैं।

(६४३२) लोहशोधनम् (३)

(र. प्र. सु. । अ. ४ ; र. र. स. । पू. अ. ५)

सामुद्रलवणैस्तद्वल्लेपितं त्रिफलाजले।
निर्वापितं भवेच्छुद्धं सत्यं गुरुवचो यथा॥

लोहेके पत्रों पर समुद्र लवणका लेप करके उन्हें अग्निमें तपा तपा कर त्रिफलाके क्वाथमें बुझानेसे लोह शुद्ध हो जाता है।

(६४३३) लोहसारकल्पः

(र. का. धे. । रसायना.)

आलिप्य तापीकरवीरकाभ्यां
वैश्वानरे प्रज्वलिते निधाय।
तप्तं सुतप्तं विनियोज्य तक्रे
निर्वाप्य वारान्बहुशः सुलोहम्॥
एभिः प्रकारैः सुमृताच्च लोहा-
च्चूर्णीकृताच्चापि पलानि चाष्टौ।
सर्पिः पलं तैलपलं पलानि
चत्वारि चाष्टौ हि वरारसस्य॥
तक्रस्य चाम्लस्य चतुःपलानि
कर्षं च कर्षं पृथगौषधानाम्।
व्योषाजमोदा चविकाऽनलानां
मूलं प्रदद्यादपि पिप्पलीनाम्॥
सिन्धुप्रसूतं सविडङ्गचूर्णं
तक्रेण हन्याद् ग्रहणीं समस्ताम्।
अर्शांसि शोथं परिणामशूलं
शूलं च दीप्तं तु करोति वह्निम्॥

शुद्ध लोहेके बारीक पत्रों पर सोनामक्खी और कनेरकी जड़का लेप करके उन्हें अग्निमें तपा तपा कर बार बार तक्रमें बुझावें। इस प्रकार भस्म किया हुवा लोह ४० तोले, घी ५ तोले, तिलका तेल ५ तोले, त्रिफलेका क्वाथ ६० तोले, खट्टी छाछ २० तोले एवं सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, चव, चीता, पीपलामूल, सेंधा नमक और बायबिडंगका चूर्ण १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसे तक्रके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारका संग्रहणी रोग, अर्श, शोथ, शूल, परिणामशूल नष्ट होता और अग्नि दीप्त होती है।

(६४३४) लोहसुन्दरः

(र. रा. सु. ; र. का. धे. ; वृ. नि. र. । पाण्डुवा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

सूतभस्म मृतलोहगन्धकौ
भागवर्द्धितमिदं विनिःक्षिपेत्।
दीर्घनालदृढकूपिकोदरे
मृत्स्नया च परिवेष्ट्य तां क्षिपेत्॥
चुल्लिकोपरि च कूपिकामुखे
प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलीद्रवम्।

त्रैफलश्च सगुडूचिकारसं
पाचयेत्तु मृदुवह्निना दिनम् ॥
स्वाङ्गशीतलमिदं प्रगृह्य च
त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत् ।
लोहसुन्दररसोऽयमीरितः
शुष्कपाण्डुविनिहृत्तिदः परः ॥

पारद भस्म १ भाग, लोह भस्म २ भाग, और शुद्ध गन्धक ३ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कपरमिट्टी की हुई लम्बी नाल वाली आतशी शीशीमें भर दें एवं उसे बालुका यन्त्रमें रख कर चूल्हे पर चढ़ावें और उसके नीचे एक दिन तक मन्दाग्नि जलावें । पाकके समय शीशीमें थोड़ा थोड़ा सेंभलका रस, त्रिफलेका क्वाथ और गिलोयका रस डालते रहना चाहिये । (ये तीनों द्रव समान भाग मिश्रित लेने चाहियें ।)

एक दिनकी अग्निके पश्चात् शीशीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर उसे त्रिकुटाके क्वाथ और अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे शुष्क पाण्डु नष्ट होता है ।

(६४३५) लोहादिचूर्णम्

(ग. नि. । प्रमेहा. ३०; रा. मा. । प्रमेहा.)

चूर्णानि लोहत्रिफलाशिलानां[1]
क्षौद्रेण लीढानि पृथक्समं वा ।
मेहान् समस्तानपि नाशयन्ति
पीतः कदाचित्स्वरसो गुडूच्याः ॥

लोह भस्म, त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) और शुद्ध मनसिलका चूर्ण पृथक् पृथक् या एकत्र करके शहदमें मिला कर गिलोयके रसके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रमेह नष्ट हो जाते हैं ।

[1] शिवानामिति पाठान्तरम् ।

(६४३६) लोहादिमोदकः

(वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

मृतलोहमिन्द्रयवं शुण्ठीभल्लातचित्रकम् ।
बिल्वमज्जाविडङ्गानि पथ्यातुल्यं विचूर्णयेत् ॥
सर्वतुल्यो गुडो योज्यः कर्षं भुक्त्वार्शसाञ्जयेत् ॥

लोह भस्म, इन्द्रजौ, सोंठ, भिलावा, चीता, बेलगिरी, बायबिड़ंग, और हर्र समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें और उसे सबके बराबर गुड़में मिलाकर १।-१। तोलेके मोदक बना लें ।

इनके सेवनसे अर्शका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—३-४ माशे ।)

(६४३७) लोहादियोगः (१)

(ग. नि. । नेत्ररोगा. ३)

अयोरजस्ताम्ररजः सुपिष्टं
सपिप्पलीकाम्लकवेतसं च ।
क्षौद्रेण युक्तं लवणेन चैव
पूयालसं हन्त्यचिरेण युक्तम् ॥

लोह भस्म, ताम्र भस्म, पीपल और अम्लबेत-का चूर्ण तथा सेंधा नमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ प्रयुक्त करनेसे पूयालसका शीघ्र ही नाश हो जाता है ।

(६४३८) लोहादियोगः (२)

(वृ. यो. त. । त. १४७)

लोहं ताम्राभ्रसूतं सुरकुसुमजलं चन्द्रसंजाति-
पत्रं

पत्रं जातीफलैला समरिचकरहाटाजमोदाहिफेनम् ।
सामुद्रं सिन्धुशोषावपि घृतमधुना मर्दयित्वाऽस्य टङ्कं
खादेदग्नेऽतिजीर्णे नियतमिह रतौ स्तम्भनं रेतसः स्यात् ॥

लोह भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, पारद भस्म, लौंग, सुगन्धबाला, कपूर, जावित्री, तेजपात, जायफल, छोटी इलायची, काली मिर्च, करहाट (अकरकरा), अजमोद, अफीम, समन्दर झाग, और समन्दर सोख समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

इसे घी और शहदके साथ मिला कर ४ माशेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे स्त्रीसमागमके समय वीर्यस्तम्भन होता है ।

व्यवहारिक मात्रा—१ माशा ।

(६४३९) लोहाद्यो मोदकः

(ग. नि. । पाण्डु. ७)

अयस्तिलत्र्यूषणकोलभागैः
सर्वैः समं माक्षिकधातुचूर्णम् ।
तैर्मोदकः क्षौद्रयुतोऽनुतक्रं
पाण्ड्वामये दूरगतेऽपि शस्तः ॥

लोह भस्म, तिल, सोंठ, मिर्च और पीपल, १।-१। तोला और स्वर्णमाक्षिक भस्म सबके बराबर ले कर, यथा विधि चूर्ण बना कर उसे शहदमें मिला कर गोलियां बना लें ।

इन्हें तक्रके साथ सेवन करनेसे पाण्डुका नाश होता है ।

(**मात्रा**— २-३ रत्ती)

(६४४०) लोहाद्यो रसायनः

(रा. मा. । रसायना ३३)

लोहाभ्रसूतकशिलाजतुकान्तलोह-
चक्राङ्गचूर्णसहितं विषचूर्णमत्ति ।
यः सन्ततं घृतमधूपहितं मनुष्यः
स स्याज्जरामरणरोगभयैर्विमुक्तः ॥

तीक्ष्ण लोह भस्म, अभ्रक भस्म, पारद भस्म, शिलाजीत, कान्त लोह भस्म, चक्राङ्ग (सुदर्शन) का चूर्ण एवं शुद्ध बछनाग समान भाग ले कर एकत्र खरल करें ।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करते रहनेसे जरा व्याधिका नाश होता है ।

(६४४१) लोहामृतम् (१)

(र. र. । पाण्डुवा.)

मुस्तामृताकणायष्टिर्वह्निशुण्ठीफलत्रयम् ।
विडङ्गं च समं चूर्णं सर्वांशं मृतलोहकम् ॥
मधुना भक्षयेन्निष्कं पाण्डुरोगहरं परम ।
अयं लोहामृतं नाम स्वयमग्नि रसोपि वा ॥

नागरमोथा, गिलोय, पीपल, मुलैठी, चीता, सोंठ, त्रिफला और बायबिड़ंगका चूर्ण १-१ भाग एवं लोह भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें ।

मात्रा—१ निष्क ।

व्यवहारिक मात्रा—३-४ रत्ती ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे पाण्डु रोग नष्ट होता है ।

(६४४२) लोहामृतम् (२)

(च. द. । परि. शूला. २८)

तनूनि लोहपत्राणि तिलोत्सेधसमानि च ।
कशिकामूलकल्केन सम्लिप्य सर्षपेण वा ॥
विशोष्य सूर्यकिरणैः पुनरेवावलेपयेत् ।
त्रिफलाया जले ध्मातं वापयेच्च पुनः पुनः॥
ततः सञ्चूर्णितं कृत्वा कर्पटेन तु छानयेत् ।
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यां यथाग्न्येतत्प्रयोजयेत् ॥
माषकं त्रिगुणं वाथ चतुर्गुणमथापि वा ।
छागस्य पयसः कुर्यादनुपानमभावतः ॥
गवां घृतेन दुग्धेन चतुः षष्टिगुणेन च ।
पक्तिशूलं निहन्त्येतन्मासेनैकेन निश्चितम् ॥
लोहामृतमिदं श्रेष्ठं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।
ककारपूर्वकं यत्र यच्चाम्लं परिकीर्तितम् ॥
सेव्यं तन्न भवेदत्र मांसं चानूपसम्भवम् ॥

तिलके समान मोटे लोह पत्रोंको सफेद आककी जड़ या सरसोंके कल्कसे लिप्त करके धूपमें सुखावें। सूख जाने पर पुनः लेप करके सुखा लें और फिर उन्हें अग्निमें तपा कर त्रिफलाके क्वाथमें बुझावें । इसी प्रकार बार बार लेप करके उस समय तक बुझावें जब तक कि लोहका चूर्ण न हो जाय। तदनन्तर उसे लोह खरलमें घोट कर कपड़ेसे छान लें।

(इस चूर्णको आककी जड़के क्वाथमें घोट कर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटकी अग्नि दे कर भस्म कर लेना विशेष उत्तम है।)

मात्रा—१ से ४ माशे तक

(**व्यवहारिक मात्रा—१** से २ रत्ती।)

अनुपान—बकरीका दूध । उसके अभावमें गायका दूध । दूध दवासे ६४ गुना लेना चाहिये ।

इसे घी और शहदके साथ मिला कर खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे पक्तिशूल केवल १ मासमें ही नष्ट हो जाता है ।

इसके सेवन कालमें ककारादि वर्गके फल और शाक,* अम्ल पदार्थ तथा आनूपदेशीय जीवोंके मांससे परहेज़ करना चाहिये ।

लोहामृतम् (३)

(र. र. ; र. का. धे. । राजयक्ष्मा.)

प्र. सं. ५८३० "यक्ष्मारि लौहम्" देखिये ।

(६४४३) लोहामृतरसः

(वृ. नि. र. । संग्रहण्य.)

सङ्ग्राह्य मृतलोहस्य पलान्यष्टादशानि च ।
त्रिकटु त्रिफला दार्वी वह्निर्मुस्ता दुरालभा ॥
किराततिक्तकोनिम्बपटोलकटुकामृता ।
देवदारुविडङ्गानि पर्पटं प्रातकर्षकम् ॥
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षमर्शांसि ग्रहणीं जयेत् ।
वातपित्तकफं रक्तं नाशयेद्रोगसञ्चयं ॥
ख्यातो लोहामृतो नामदेहदार्ढ्यकरः परः ॥

लोह भस्म ९० तोले; सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दारुहल्दी, चीता, नागर-

---

*ककारादि वर्ग—कुष्माण्ड, कर्कटी, कलिंग, कारवेल्ल, कुसुम्भिका, कर्कोटी, कलम्बी, काकमाची ।

मोथा, धमासा, चिरायता, नीमकी छाल, पटोल, कुटकी, गिलोय, देवदारु, बायबिड़ंग, और पित्त-पापड़ा; इनका चूर्ण १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे वातज, पित्तज, कफज और रक्तज संग्रहणीका नाश होता है।

मात्रा—१। तोला

व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।

लोहरसायनम्

(र. र.; र. का. धे.; व. से. । मेद.; च. द. । स्थौल्या. ३५)

प्र. सं. ६२६३ "लोह रसायनम्" देखिये।

(६४४४) लोहाभयाचूर्णम्

(रसे. चि. म. । अ. ९)

मूत्राम्भः पाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम्।
सगुडामभयां दद्यात् सर्वशूलप्रशान्तये ॥

हर्रके चूर्णको गोमूत्रमें पका कर सुखा लें और फिर उसमें समान भाग लोह भस्म मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसे गुड़में मिलाकर सेवन करनेसे शूल नष्ट होता है।

(**मात्रा**—३ रत्ती।)

इति लकारादिरसप्रकरणम्



अथ लकारादिमिश्रप्रकरणम्

(६४४५) लघुपञ्चमूलादिसिद्धान्नम्

(व. से. । अतिसारा.)

लघुना पञ्चमूलेन पिप्पल्या सह धान्यया।
आहारो भिषजा योज्यः सर्वदा हितमिच्छता ॥

अतिसार रोगमें लघु पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेली, बड़ी कटेली, गोखरु), पीपल और धनियेके क्वाथके साथ अन्न सिद्ध करके देना चाहिये।

(६४४६) लज्जालुमूलयोगः

(रा. मा. । विषा. २८)

लज्जावतीमूलविलिप्तपाणि-
र्बद्ध्वाऽथवा तत्र तदीयमूलम्।
गृह्णाति सर्पान् भ्रमतोऽतिघोरान्
पुमान् सुपर्णप्रतिमप्रभावः ॥

हाथमें लज्जावतीकी जड़का लेप करके या उसकी जड़ हाथमें बांध कर भयंकर सर्पको भी पकड़ लिया जाय तो वह कुछ भी हानि नहीं पहुंचा सकता।

(६४४७) लशुनक्षीरम्

(च. सं. । चि. अ. ५)

साधयेत् सिद्धशुष्कस्य लशुनस्य चतुष्पलम्।
क्षीरे जलाष्टगुणिते क्षीरशेषश्च पाययेत् ॥
वातगुल्ममुदावर्तं गृध्रसीं विषमज्वरम्।

हृद्रोगं विद्रधिं शोथं नाशयत्याशु तत्पयः ॥
एवन्तु साधिते क्षीरे स्तोकमेवात्र दीयते ॥

२० तोले सूखे हुवे ल्हसनमें ४ सेर दूध और ३२ सेर पानी मिला कर पकावें, और जब पानी जल जाय तो दूधको छान लें।

इसे यथोचित मात्रानुसार थोड़ा थोड़ा सेवन करानेसे वातज गुल्म, उदावर्त, गृध्रसी, विषमज्वर, हृद्रोग, विद्रधि और शोथका नाश होता है।

(६४४८) लाक्षादियोगः

(व. से. । नेत्ररोगा.)

लाक्षामधुकमञ्जिष्ठा लोध्रकालानुशारिवा ।
प्रपुण्डरीकसंयुक्तः सेको रोगहरो हितः ॥

लाख, मुलैठी, मजीठ, लोध, तगर और पुण्डरिया समान भाग ले कर सबको पानीके साथ पीस कर कपड़ेसे निचोड़ कर रस निकालें।

इसे आंखमें डालनेसे रक्ताभिष्यन्द नष्ट होता है।

(६४४९) लाङ्गलीशोधनम्

(वृ. यो. त. । त. ४३)

लाङ्गली शुद्धिमायाति दिनं गोमूत्रसंस्थिता ।

लांगली (कलियारी) की जड़को १ दिन गोमूत्रमें रखनेसे वह शुद्ध हो जाती है।

(६४५०) लाजमण्डः

(यो. त. । त. १८ ; शा. सं. । खं. २ अ. २)

लाजैर्वा तण्डुलैर्भृष्टैर्लाजमण्डः प्रकीर्तितः ।
श्लेष्मपित्तहरो ग्राही पिपासाज्वरजिन्मतः ॥

धानकी खीलों या भुने हुवे चावलोंसे जो मण्ड बनाया जाता है उसे लाजमण्ड कहते हैं।

लाजमण्ड कफपित्त नाशक, ग्राही तथा पिपासा और ज्वर नाशक होता है।

(१४ गुने पानीमें पका कर तैयार किये हुवे कणरहित माण्डको ' मण्ड ' कहते हैं।)

(६४५१) लाजादियूषः

(यो. र. । छर्दि; वृ. यो. त. । त. ८१)

लाजामसूरयवमुद्गकृता यवागू-
श्छर्द्यां हिता मधुयुता बहुपित्तजायाम् ।

धानकी खील, मसूर, जौ और मूंगके यवागू-में शहद मिला कर पीनेसे पित्तज छर्दि नष्ट होती है।

(६४५२) लाजोदकयोगः

(वृ. मा.; व. से. । तृष्णा.; ग. नि. । तृष्णा. १५)

लाजोदकं मधुयुतं घृतं गुडविमिश्रितम् ।
काश्मर्यशर्करायुक्तं पिबेत्तृष्णार्दितो नरः ॥

धानकी खीलोंके पानीमें शहद मिला कर पीनेसे या गुड़में घी मिला कर खानेसे अथवा खम्भारीके फलोंके पानीमें खांड मिला कर पीनेसे तृष्णा शान्त हो जाती है।

(६४५३) लालादियोगः

(वै. म. र. । पट. १६)

व्रणेष्वपित्सु सदा लालां सिञ्चेन्मुहुर्मुहुः ।
कुष्ठेष्वपि जगत्यस्माद्विद्यते न महौषधम् ॥

नवीन घाव (व्रण) पर और कुष्ठ पर बार बार लाला (थूक) लगाना चाहिये।

संसारमें इससे उत्तम अन्य कोई योग नहीं है।

(६४५४) लोचनशूलघ्नीपोटली

(यो. र. । नेत्र रोगा.)

कृतलाजसुराष्ट्रजाहिफेनं
रुचिरं नागजगालवोत्थचूर्णम् ।
सुकुमार्युदकेन शुल्बपात्रे
मृदितं दृष्टिरुजं जयेत्पटस्थम् ॥

फटकीकी खील, अफीम, केसर, सीसेकी भस्म और पठानी लोध समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे तांबेके खरलमें घीकुमारके रसमें घोट कर कपड़ेमें बांध कर पोटली बनावें।

इसे आंखों पर फिरानेसे नेत्रपीड़ा नष्ट होती है।

(६४५५) लोध्रादिगुटिका

(वृ. मा. । नेत्ररोगा.)

पिष्टैर्निम्बस्य पत्रैरतिविमल-
तरैर्जातिसिन्धूत्थमिश्रै-
रन्तर्गर्भे दधाना पटुतर-
गुटिका पिष्टलोध्रेण भृष्टा ।
तूलैः सौवीरसान्द्रैरतिशय-
मृदुभिर्वेष्टिता सा समन्ता-
च्चक्षुष्कोपोपशान्ति चिर-
मुपरि दृशा भ्राम्यमाणा करोति ॥

नीमके स्वच्छ पत्ते, चमेलीके फूल और सेंधा नमक समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर लुगदी बनावें और फिर लोधको बारीक पीस कर उसकी गोली बना कर उसे उक्त लुगदीके बीचमें रख कर एक बड़ीसी गोली बना लें और उसे घीमें भून लें। तदनन्तर बहुत मुलायम रुइको कांजीमें भिगो कर उसमें उक्त गुटिका लपेट कर नेत्रोंके ऊपर चारों ओर फिरानेसे नेत्र कोप (नेत्र दुखना रोग) नष्ट होता है।

(६४५६) लोध्रादियोगः (१)

(व. से. । नेत्ररोगा.)

श्वेतलोध्रं घृते भृष्टं चूर्णितं ताप्य तुत्थकम् ।
उष्णाम्बुना विमृदितं सेकः शूलहरः परः ॥

घीमें भुना हुवा सफेद लोध, स्वर्णमाक्षिक और नीला थोथा समान भाग ले कर सबको उष्ण जलमें घिस कर आंखमें डालनेसे नेत्र शूल नष्ट होता है।

(६४५७) लोध्रादियोगः (२)

(यो. र. । नेत्ररोगा.)

शावरं मधुकं तुल्यं घृतभृष्टं सुचूर्णितम् ।
छागक्षीरोत्थितं सेकः पित्तरक्ताभिघातजित् ॥

साबर लोध और मुलैठी समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे घीमें भून कर बकरीके दूधमें पीस लें एवं उसे कपड़ेमें निचोड़ कर रस निकालें। इसे आंखमें डालनेसे पित्तरक्तज नेत्राभिघात नष्ट होता है।

(६४५८) लोध्रादिसेकः (१)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

लोध्रचूर्णं घृते भृष्टं रुजमाश्च्योतनं हरेत् ।
शर्करात्रिफलाचूर्णमिदमाश्च्योतनं परम् ॥

घीमें भुने हुवे लोधके चूर्णको पानीमें पीस कर कपड़ेसे उसका रस निचोड़ कर आंखमें डालनेसे रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

इसी प्रकार खांड और त्रिफलाका पानी डालनेसे भी रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

(६४५९) लोध्रादिसेकः (२)

(ग. नि. । नेत्र रोगा. ३)

तिरीटत्रिफलायष्टिशर्कराभद्रमुस्तकैः ।
पिष्टः शीताम्बुना सेको रक्ताभिष्यन्दनाशनः ॥

लोध, त्रिफला, मुलैठी, खांड और नागरमोथा समान भाग ले कर सबको एकत्र पानीमें पीस कर कपड़ेमें बांध कर उसका रस निचोड़ें।

इसे आंखमें डालनेसे रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

(६४६०) लोध्राद्याश्च्योतनम् (१)

(च. द; यो. र. ; वं. से. । नेत्र.)

निम्बस्य पत्रैः परिलिप्य लोध्रं
स्वेद्याग्निना चूर्णमथापि कल्कम् ।
आश्च्योतनं मानुषदुग्धयुक्तं
पित्तास्रवातापहमग्र्यमुक्तम् ॥

लोधको नीमके पत्तोंकी लुगदी (कल्क) के बीचमें रख कर उस पर कपड़ा लपेट कर उसके ऊपर मिट्टीका लेप कर दें। इस गोलेको कण्डोंकी मन्दाग्निमें दबा दें, जब ऊपरकी मिट्टीका रंग लाल हो जाय तो उसके भीतरसे लोधको निकाल कर पानीके साथ या सूखाही पीस कर स्त्रीके दुग्धमें मिला कर छानकर उसकी बूंदें आंखोंमें टपकावें। इससे पित्तज, वातज और रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

(६४६१) लोध्राद्याश्च्योतनम् (२)

(वं. से. ; वृ. मा. । नेत्र रोगा.)

लोध्रं सर्पिषि सम्पक्वं खदिराजाजिसर्षपैः ।
नागरारिष्टसिन्धूत्थैर्युक्तं दृषदि चूर्णितम् ॥
सिते वाससि तद्बद्धं न्यसेत्स्वच्छाम्लकाञ्जिके ।
तेनाक्ष्णोः पूरणं कार्यं कण्डूरोगाश्रुघर्षजित् ॥

घीमें पकाया हुवा लोध, खैरसार (कत्था), जीरा, सरसों, सोंठ, नीमके पत्ते और सेंधा नमक समान भाग लेकर सबको पत्थरपर एकत्र पीस लें। तदनन्तर उसे सफेद कपड़ेमें बांध कर पोटली बनावें। इसे स्वच्छ काञ्जीमें भिगो कर आंखोंमें निचोड़नेसे कण्डु (खाज), अश्रु और आंखोंकी किरकराहट नष्ट होती है।

(६४६२) लोमनाशनयोगः

(ग. नि. । अधि. १०)

उत्पाट्य योनिप्रभवाणि रोमा-
ण्यभ्यञ्जनं तत्र ततो विधेयम् ।
कोशातकीबीजसमुद्भवेन
तैलेन रोम्णामपुनर्भवाय ॥

योनिके बालोंको उखाड़ कर उस जगह कड़वी तोरीके बीजोंका तेल मलनेसे पुनः बाल नहीं निकलते।

(६४६३) लोहादियोगः

(व. से. । क्षुद्ररोगा. ; वृ. मा.)

लोहमलामलकल्कैः सजपाकुसुमैर्नरः सदा स्नायी ।
पलितानीह न पश्यति गङ्गास्नायीव नरकानि ॥

मण्डूरका चूर्ण, आमला और जवाकुसमके फूल समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

इसे पानीमें मिला कर शिर पर लेप करें और थोड़ी देर पश्चात् स्नान कर लें ।

नित्य प्रति इसी प्रकार स्नान करनेसे पलित रोग नष्ट हो जाता है ।

इति लकारादिमिश्रप्रकरणम्





अथ वकारादिकषायप्रकरणम्

(६४६४) **वंशत्वगादिक्काथः**

(यो. र.; वृ. मा. ; वृ. नि. र. ; वं. से. । आगन्तुव्रणा.)

क्वाथो वंशत्वगेरण्डश्वदंष्ट्राश्मभिदा कृतः ।
हिङ्गुसैन्धवसंयुक्तः कोष्ठस्थं स्रावयेदसृक् ॥

बांसकी छाल, अरण्डमूल, गोखरु और पाषाणभेदके काथमें हींग और सेंधा नमक मिला कर सेवन करनेसे कोष्ठस्थित रक्त निकल जाता है।

(६४६५) **वचादिकषायः** (१)

(ग. नि. । ऊरुस्त. २१ ; वृ. नि. र. । ऊरुस्तंभा.)

वचा सातिविषा कुष्ठं चित्रको देवदारु च ।
पाठा तेजोवती मुस्ता स्वर्णक्षीरी निदग्धिका ॥
वत्सको नक्तमालश्च मूर्वा च कटुरोहिणी ।
तर्कारी प्रग्रहश्चैव पीलूनि निचुलानि च ॥
असनः सप्तपर्णश्च त्रिफला मरिचानि च ।
एतानि समभागानि कषायमुपसाधयेत् ॥
मधुयुक्तं कषायं तं प्रयोगेण पिबेन्नरः ।
ऊरुस्तम्भं नुदत्येष वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
एतान्येव तु चूर्णानि माक्षिकेण तु कल्पयेत् ।
अनेनैव कषायेण भोजयेत्सिद्धमोदनम् ॥

बच, अतीस, कूठ, चीता, देवदारु, पाठा, चव, नागरमोथा, चोक (सत्यानाशीकी जड़), कटेली, कुड़ेकी छाल, करञ्ज छाल, मूर्वा, कुटकी, अरनी, छोटा अमलतास, पीलु, हिज्जलवृक्ष, असना, सतोना, हर्र, बहेड़ा, आमला और काली मिर्च समान भाग लेकर काथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भ नष्ट होता है ।

ऊरुस्तम्भमें इन्हीं ओषधियोंका चूर्ण बनाकर शहदके साथ सेवन करना तथा इन्हींके कषायसे चावल बना कर खाना चाहिये ।

(६४६६) **वचादिकषायः** (२)

(वा. भ. । चि. अ. १)

कफवाते वचा तिक्ता पाठारग्वधवत्सकाः ।
पिप्पलीचूर्णयुक्तो वा क्वाथश्छिन्नोद्भवोद्भवः ॥

कफ वातज ज्वरमें बच, कुटकी, पाठा, अमलतास और कुड़ेकी छालके काथमें अथवा गिलायके काथमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीना चाहिये ।

(६४६७) **वचादिकषायः** (३)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

वचागुडूची सुरदारु शुण्ठी
किरातकं मुस्तकमाटरूषः ।

सकाकजङ्घा लघुकण्टकारी
क्वाथोऽयमित्युद्धतसन्निपाते ॥

बच, गिलोय, देवदारु, सोंठ, चिरायता, नागरमोथा, बासा, काकजंघा और छोटी कटेली समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ प्रबल सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है।

(६४६८) वचादिकषायः (४)

(हा. सं। स्था. ३ अ. २)

वचायवानी त्रिफला सविश्वा
क्वाथो निशायां कफजे ज्वरे वा ।
सम्पाचनं स्यान्मनुजस्य दोषे
शूले प्रतिश्यायकपीनसेषु ॥

कफज ज्वर, शूल, प्रतिश्याय, और पीनसमें पाचनके लिये बच, अजवायन, हर्र, बहेड़ा, आमला और सोंठका क्वाथ बना कर रात्रिके समय पीना चाहिये।

(६४६९) वचादिकषायः (५)

(वृ. मा. । मुख रोगा. ; व. से.)

वचामतिविषां पाठां रास्नां कटुकरोहिणीम् ।
निष्क्वाथ्य पिचुमन्दं च केवलं तत्र योजयेत् ॥

बच, अतीस, पाठा, रास्ना और कुटकी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ अथवा केवल नीमकी छालका क्वाथ पिलानेसे गलशुण्डिका नष्ट होती है।

(६४७०) वचादिकषायः (६)

(वृ. नि. र. । वातातिसा. ; व. से. । अति.)

वचाचातिविषामुस्तं बीजानि कुटजस्य च ।
श्रेष्ठः कषाय एतेषां वातातीसार शान्तये ॥

बच, अतीस, नागरमोथा और इन्द्रजौ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ वातातिसारमें उत्तम है।

(६४७१) वचादिक्वाथः (१)

(व. से. । नेत्र रोगा.)

वचात्रिवृचन्दनकुण्डली च
भूनिम्बनिम्बे रजनी सवासा ।
प्रस्थं जलस्य क्वथिताष्टभागं
पिबेत्सुजीर्णे नकुलान्ध्यरोगे ॥
काचं निशान्ध्यं तिमिरं तथाऽन्या-
न्नेत्रामयांस्तस्य च वर्त्मसन्धौ ।
चिरप्रवृत्तानचिरेण हन्ति
वज्रो यथाद्रीन्सुरराजमुक्तः ॥

बच, निसोत, लाल चन्दन, गिलोय, चिरायता, नीमकी छाल, हल्दी और बासा, १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र कूट कर ८० तोले पानीमें पकावें और १० तोले पानी शेष रहनेपर छान लें।

इसके सेवनसे पुराना नकुलान्ध्य, काच, नक्तान्ध्य (रतौंधा), तिमिर और अन्य वर्त्म तथा सन्धिगत रोग शीघ्रही नष्ट हो जाते हैं।

(६४७२) **वचादिक्वाथः** (२)

(भा. प्र. ; वृ. नि. र. । सन्निपाता.)

वचाकवचकच्छुरासहचरामृताभङ्गुरा-
सुराह्वघननागरातरुणदारुरास्नापुराः ।
वृषातरुणभीरुभिः सह भवन्ति सन्धिग्रह-
व्यथोरुजडिमक्लमभ्रमणपक्षघातापहाः ॥

बच, पित्तपापड़ा, जवासा, कटसरैया, गिलोय, अतीस, देवदारु, नागरमोथा, सोंठ, विधारामूल, रास्ना, गूगल, बड़ी दन्तीकी जड़, अरण्डमूल और शतावर समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ सन्धिक सन्निपात, जांघोंकी जड़ता क्लम, भ्रम और पक्षाघातको नष्ट करता है।

(६४७३) **वचादिगणः**

(सु. सं. । सू. अ. ३८)

वचामुस्तातिविषाभयाभद्रदारूणि नागकेशर-श्चेति ।
एतौ वचा हरिद्रादी गणौ स्तन्यविशोधनौ
आमातीसारशमनौ विशेषाद्दोषपाचनौ ॥

बच, नागरमोथा, अतीस, हर्र, देवदारु और नागकेसर; इनके समूहको "वचादिगण" कहते हैं।

वचादि गण तथा हरिद्रादि गण स्तन्य शोधक, आमातिसार नाशक और विशेषतः दोष पाचक हैं।

(६४७४) **वचादियोगः**

(यो र. ; व. से. । नेत्र रोगा.)

वचाद्यैः स्नानमिच्छन्ति श्लेष्मघ्नं तिमिरापहम् ।

वचादि गणके क्वाथसे स्नान करनेसे कफ और तिमिर रोग नष्ट होता है।

(६४७५) **वज्रकाञ्जिकम्**

(भै. र. । स्त्रीरोगा. ; ग. नि. । सूतिका. ७; वृ. मा. ; व. से. ; र. र. ; यो. र. । स्त्रीरोगा. ; वृ. यो. त. । त. १४३; यो. त. । त. ७६)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यं शुण्ठी यमानिका ।
जीरके द्वे हरिद्रे द्वे बिडं सौवर्चलं तथा ॥
एतैरेवौषधैः पिष्टैरारनालं विपाचयेत् ।
एतदामहरं वृष्यं कफघ्नं वह्निदीपनम् ॥
काञ्जिकं वज्रकं नाम स्त्रीणामग्निविवर्द्धनम् ।
मक्कलशूलशमनं परं क्षीराभिवर्द्धनम् ॥
क्षीरपाकविधानेन काञ्जिकस्यापि साधनम् ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, सोंठ, अजवायन, जीरा, काला जीरा, हल्दी, दारुहल्दी, बिड नमक और काला नमक, समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर आरनालमें पकावें।

यह आमनाशक, वृष्य, कफनाशक, और अग्निदीपक है।

इसके सेवनसे स्त्रियोंकी जठराग्नि तीव्र होती और मक्कल शूल नष्ट होता है एवं दूध बढ़ता है।

वज्रकाञ्जीका पाक क्षीरपाक विधिसे करना चाहिये।

(औषधोंका अधकुटा चूर्ण ५ तोले, कांजी १ सेर, पानी ४ सेर।)

(६४७६) **वटजटाप्रयोगः**

(रा. मा. । अतिसारा. १३)

गव्येन तक्रेण सह प्रपिष्य
न्यग्रोधपादः परिपीयमानाः ।
नवोद्गतं हन्त्यतिसारमाशु
यथा तमिस्राणि हिमांशुमाली ॥

बड़की जड़को गायके तक्रमें पीस कर पीनेसे नवीन अतिसार शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(६४७७) **वटशुङ्गादियोगः**

(व. से. ; ग. नि. । तृषा.)

वटशुङ्गं सितालोध्रं दाडिमं मधुकं मधु ।
पिबेत्तण्डुलतोयेन छर्दितृष्णानिवारणम् ॥

बड़के अंकुर, सफेद दूब, लोध, अनारकी कली या पत्ते और मुलैठी समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर शहदमें मिलाकर चावलेंाके पानीके साथ सेवन करनेसे छर्दि और तृष्णाका नाश होता है ।

(६४७८) **वत्सकादिकषायः**

(भा. प्र. । म. खं. २)

वत्सकातिविषाशुण्ठी बिल्वहिङ्गुयवाम्बुदाः ।
चित्रकेण युतः क्वाथ आमातीसारनाशनः ॥

इन्द्रजौ, अतीस, सोंठ, बेलगिरी, हींग, नागरमोथा और चीता समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसे पीनेसे आमातिसार नष्ट होता है ।

(६४७९) **वत्सकादिक्वाथः** (१)

(वृ. मा. । ज्वरातिसा. ; ग. नि. । ज्वराति १ ; वृ. नि. र. । ज्वराति. ; व. से. । अतिसारा.)

वत्सकस्य फलं दारु रोहिणी गजपिप्पली ।
श्वदंष्ट्रा पिप्पली धान्यं बिल्वं पाठा यवानिका ॥
द्वावप्येतौ सिद्धयोगौ श्लोकार्धेनाभिभाषितौ ।
ज्वरातिसारशमनौ विशेषाद्दाहनाशनौ ॥

(१) इन्द्रजौ, देवदारु, कुटकी और गजपीपल ।

(२) गोखरु, पीपल, धनिया, बेलगिरी, पाठा और अजवायन ।

ये दोनों काथ ज्वरातिसार और विशेषतः दाह नाशक हैं ।

(६४८०) **वत्सकादिक्वाथः** (२)

(व. से. । ज्वरा.)

वत्सकं पद्मकाष्ठं च नागरं चन्दनामृते ।
पटोलं धान्यकं चैव क्वाथो मधुसमायुतः ॥
कफपित्तज्वर शूलं दाहं हन्त्यङ्घ्रिपाणिषु ॥

इन्द्रजौ, पद्माक, सोंठ, चन्दन, गिलोय, पटोल और धनिया, समान भाग ले कर काथ बनावें ।

यह काथ पित्त ज्वर, शूल और दाहको नष्ट करता है ।

(६४८१) **वत्सकादिक्वाथः** (३)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

वत्सकश्च सुरदारुरोहिणी
धान्यबिल्वमगधात्रिकण्टकम् ।

निम्बबीजगजपिप्पलीयुक्ती
क्वाथ एष सरणज्वरापहः ॥

इन्द्रजौ, देवदारु, कुटकी, धनिया, बेलगिरी, पीपल, गोखरु, नीमके बीज, गजपीपल और पाठा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें । इसके सेवनसे ज्वरातिसार नष्ट होता है ।

(६४८२) वत्सकादिक्वाथः (४)

(च. द. । अति. ३; शा. सं. । खं. २ अ. २ ; वृ. मा.; भै. र. ; धन्व. । अतिसा. ; ग. नि. । अति. २ ; यो. चि. म. । अ. ४ : भा. प्र. । म. ख. २ ; वृ. नि. र. । रक्ताति. ; वृ. यो. त. । त. ६४ ; हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

सवत्सकः सातिविषः सबिल्वः
सोदीच्यमुस्तैश्च कृतः कषायः ।
सामे सशूले सह शोणिते च
चिरप्रवृत्तेऽपि हितोऽतिसारे ॥

इन्द्रजौ, अतीस, बेलगिरी, सुगन्धबाला और नागरमोथा ×समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसके सेवनसे शूलयुक्त पुराना रक्तातिसार नष्ट होता है ।

(६४८३) वत्सकादिगणः

(वा. भ. । सू. अ. १५)

वत्सकमूर्वाभार्ङ्गीकटुका-
मरिचं घुणप्रिया च गण्डीरम् ।

× भा. प्र. में कचूर अधिक लिखा है ।

एलापाठाजाजीकट्वङ्ग-
फलाजमोदासिद्धार्थवचाः ॥
जीरकहिङ्गुविडङ्गं पशुगन्धा पञ्चकोलकं हन्ति ।
चलकफमेदः पीनसगुल्मज्वरशूलदुर्नाम्नः ॥

इन्द्रजौ, मूर्वा, भरंगी, कुटकी, काली मिर्च, अतीस, मजीठ, इलायची, पाठा, जीरा, सोनापाठा, त्रिफला, अजमोद, सरसों, वच, जीरा, हींग, बायबिडंग, बनतुलसी और पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ) समान भाग ले कर क्वाथ बनावें । अथवा इनका चूर्ण करके रक्खें ।

इसके सेवनसे, वायु, कफ, मेद, पीनस, गुल्म, ज्वर, शूल और अर्शका नाश होता है ।

(६४८४) वत्सादन्यादिकषायः (१)

(वृ. मा. । वातरक्ता. ; वृ. नि. र.)

वत्सादन्युद्भवः क्वाथः पीतो गुग्गुलुसंयुतः ।
समीरणसमायुक्तं शोणितं सम्प्रसाधयेत् ॥

गिलोयके काथमें गूगल मिला कर पीनेसे वातरक्त नष्ट हो जाता है ।

(६४८५) वत्सादन्यादिक्वाथः (२)

(भा. प्र. । म. खं. २ ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

वत्सादनीवत्सकवारिवाह
विश्वम्भरानिम्बविषाः सविश्वाः
ज्वराऽतिसारं त्वरितं जयन्ति
विश्वामृतावत्सकवारिवाहाः ॥

गिलोय, इन्द्रजौ, नागरमोथा, चिरायता, नीमकी छाल, अतीस और सोंठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ ज्वरातिसारको अति शीघ्र नष्ट कर देता है।

सोंठ, गिलोय, इन्द्रजौ और नागरमोथेका काथ भी ज्वरातिसारको नष्ट करता है।

(६४८६) **वमनोपगकषायदशकः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

मधुमधुककोविदारकर्व्वुदारनीपविदुलविम्बीशणपुष्पी दापुष्पी प्रत्यक्पुष्पा इति दशेमानि वमनोपगानि भवन्ति ॥

शहद, मुलैठी, लाल कचनार, सफेद कचनार, कदम्ब, जलवेतस, कन्दूरी, सणपुष्पी, आक और अपामार्ग। ये दश ओषधियां वमनोपयोगी हैं।

(६४८७) **वयःस्थापनकषायदशकः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

अमृताभयाधात्रीयुक्ताश्रेयसी
जीवन्त्यतिरसामण्डूकपर्णी-
स्थिरा पुनर्नवा इति दशेमानि
वयःस्थापनानि भवन्ति ॥

गिलोय, हर्र, आमला, रास्ना, श्रेयसी (रास्ना भेद), जीवन्ती, शतावर, मण्डूकपर्णी, शालपर्णी, और पुनर्नवा; ये दश ओषधियां वयःस्थापक हैं।

(६४८८) **वरादिक्वाथः**

(वृ. नि. र. । जीर्ण ज्वरा.)

वराप्यजाजीवृहती हरिद्रा
घेण्वाटरूषप्रभवः कषायः ।
जहाति दूरं मधुना विमिश्रितो
रक्तोद्भवं दारुणजूर्तिवेगम् ॥

त्रिफला, जीरा, बड़ी कटेली, हल्दी, बांस और अडूसेका काथ शहद मिला कर पीनेसे रक्तदोषज भयंकर ज्वर नष्ट होता है।

(६४८९) **वरुणमूलक्वाथः**

(ग. नि. । ग्रन्थ्य. ; व. से. । गण्डमाला.)

मधुनाऽऽढ्योऽसकृत्पीतः क्वाथो वरुणमूलजः।
गण्डमालां निहन्त्याशु चिरकालानुबन्धिनीम् ॥

बरनेकी जड़के काथमें शहद मिला कर पीनेसे पुरानी गण्डमाला भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

(६४९०) **वरुणादिकषायः** (१)

(भै. र. । अश्मर्य. ; वृ. मा. ; ग. नि. । अश्मर्य. २९; च. द. । अश्मर्य. ३२ ; व. से.)

वरुणत्वक्शिलाभेदशुण्ठीगोक्षुरकैः कृतः ।
कषायः क्षारसंयुक्तः शर्कराश्च भिनत्त्यपि ॥

बरनेकी छाल, पाषाण भेद, सोंठ और गोखरु समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें जवाखार मिला कर पीनेसे अश्मरी और शर्कराका नाश होता है।

(६४९१) **वरुणादिकषायः** (२)

(ग. नि. । अश्मर्य. २९; वृ. यो. त. । त. १०२; ; वृ. मा. ; वै. र. ; च. द. । अश्मर्य. ३२ ; यो. र. ; व. से.)

वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठां शुण्ठीगोक्षुरसंयुताम् ।
यवक्षारगुडं दत्त्वा क्वाथं कृत्वा पिबेद्धितम् ॥
अश्मरीं वातजां हन्ति चिरकालानुबन्धिनीम् ॥

बरनेकी छाल, त्रिफला, सोंठ और गोखरु समान भाग ले कर काथ बनावें।

इसमें गुड़ और जवाखार मिला कर पीनेसे चिरकालीन वातज अश्मरी नष्ट होती है।

(६४९२) **वरुणादिकषायः** (३)

(वृ. मा. ; ग. नि. । अश्मर्य. २९; वै. र. । अश्मरी ; च. द. । अश्मर्य. ३३; र. र. । अश्मर्य.)

पिबेद्वरुणमूलत्वक्कषायं गुडसंयुतम् ।
अश्मरीं पातयत्याशु बस्तिशूलविनाशनम् ॥

बरनेकी जड़की छालके काथमें गुड़ मिलाकर पीनेसे अश्मरी निकल जाती है तथा बस्तिशूल नष्ट होता है।

(६४९३) **वरुणादिकषायः** (४)

(ग. नि. । विद्रध्य. ; यो. र. ; व. से. । विद्रधि. ; वृ. यो. त. । त. ११०)

कासीससैन्धवशिलाजतुहिङ्गुचूर्ण-
मिश्रीकृतो वरुणवल्कलजः कषायः ।
अभ्यन्तरोत्थितमपक्वमतिप्रमाणं
नृणामयं जयति विद्रधिमुग्रशोथम् ॥

बरनेकी छालके क्वाथमें कसीस, सेंधा, शिलाजीत और हींगका चूर्ण मिला कर पीनेसे प्रवृद्ध अपक्व अन्तर्विद्रधि नष्ट हो जाती है।

(६४९४) **वरुणादिक्वाथः** (१)

(वृ. मा. । अश्मरी. ; ग. नि. । अश्मर्य. २९ ; वै. म. र. । पटल ७; च. द. । अश्मर्य. ३३ ; व. से. ; वृ. नि. र.)

पिबेद्वरुणमूलत्वक्क्वाथं तत्कल्कसंयुतम् ।
क्वाथश्च शिग्रुमूलोत्थः कदुष्णोऽश्मरिपातनः ॥

बरनेकी जड़की छालके क्वाथमें उसीका कल्क मिला कर पीने या सहंजनेकी जड़का मन्दोष्ण क्वाथ सेवन करनेसे अश्मरी निकल जाती है।

(६४९५) **वरुणादिक्वाथः** (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३५)

वरुणा वृक्षादनी चैव दशमूली शतावरी ।
क्वाथपानं वातिके च मुष्कवृद्धौ हितावहम् ॥

बरनेकी छाल, बन्दा, दशमूल और शतावर समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसके सेवनसे वातज अण्डवृद्धि नष्ट होती है।

(६४९६) **वरुणादिक्वाथः** (३)

(भै. र. । गुल्मा. ; शा. सं. । खं. २ अ. २ ; यो. र. ; वृ. नि. र. । गुल्मा.)

वरुणो बकपुष्पश्च बिल्वापामार्गचित्रकाः ।
अग्निमन्थद्वयं शिग्रुद्वयश्च बृहतीद्वयम् ॥
सैरेयकत्रयं मूर्वा मेषशृङ्गी किरातकः ।
अजशृङ्गी च बिम्बी च करञ्जश्च शतावरी ॥
वरुणादिगणक्वाथः कफमेदोहरः स्मृतः ।
हन्ति गुल्मं शिरःशूलं तथाभ्यन्तरविद्रधीन् ॥

बरनेकी छाल, अगस्तिके फूल, बेलकी छाल, चिरचिटा (अपामार्ग), चीतामूल, दोनों प्रकारकी अरणीकी छाल, दोनों सहंजनेकी छाल, छोटी और बड़ी कटेली; सफेद, पीली और नीली कटसरैया, मूर्वा, मेढासिंगी, चिरायता, अजशृंगी, कन्दूरी, करञ्जुवा और शतावर समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसके सेवनसे कफ, मेद, गुल्म, शिरशूल और अन्तर्विद्रधिका नाश होता है।

(६४९७) **वरुणादिक्वाथः** (४)

(व. से. । अश्मरी.)

वरुणकभस्मपरिश्रुतसलिलं तच्चूर्णं यावशूक-युतम् ।
क्वथनीयं तत्तावद्यावच्चूर्णत्वमायाति ॥
तद्गुडयुक्तं हन्यात्तदुदारामश्मरीं घोराम् ।
वह्निसदनं सुकष्टमश्ममयीमश्मरीं चाशु ॥

बरनेकी छालकी राखको पानीमें घोल कर कई बार छान कर स्वच्छ पानी निकालें । (जिस प्रकार क्षार बनानेके लिये पानी तैयार करते हैं) तदनन्तर उसमें बरनेकी छालका चूर्ण और जवाखार मिला कर पुनः पकावें । जब शुष्क चूर्ण हो जाय तो निकाल लें ।

इसे गुड़में मिलाकर सेवन करनेसे घोरतर, पत्थरके समान कठिन और पीड़ादायक अश्मरी तथा अग्निमांद्यका नाश होता है ।

(६४९८) **वरुणादिस्वेदः**

(ग. नि. । वाता. २०)

वरुणैरण्डवातारिमुण्डयः शिग्रुः शतावरी ।
गोक्षुरः सर्षपश्चैषां स्वेदो वातगदापहः ॥

बरनेकी छाल, दोनों प्रकारके अरण्डकी छाल, मुण्डी, सहंजनेकी छाल, शतावर, गोखरु और सरसों; इनके क्वाथकी भाप लेनेसे वातव्याधि नष्ट होती है ।

(६४९९) **वर्ण्यकषायदशकः**

(च. सं. । सू. अ. ४)

चन्दनतुङ्गपद्मकोशीरमधुकमञ्जिष्ठासारिवापयस्यासितालता इति दशेमानि वर्ण्यानि भवन्ति ।

लाल चन्दन, पुन्नाग (सुल्तानचम्पा), पद्माक, खस, मुलैठी, मजीठ, सारिवा, क्षीरकाकोली, सफेद दूर्वा और नील दूर्वा; ये दश ओषधियां वर्ण्य हैं ।

(६५००) **वर्द्धमानपिप्पलीयोगः**

(भै. र. । प्लीह. ; च. द. । प्लीहा. ३८ ; ग. नि. । सा. रसा. १ ; यो. चि. म. । अ. ७)

प्र. सं. ३८२८ " **पिप्पली वर्द्धमानम्** " देखिये ।

(६५०१) **वर्षाभ्वादिक्वाथः**

(वृ. नि. र. । अन्तर्विद्रधि.)

वर्षाभूवरुणाङ्घ्रिभ्यां क्वाथो विद्रधिनाशनः ।

पुनर्नवा और बरनेकी जड़का क्वाथ विद्रधिको नष्ट करता है ।

(६५०२) **वासकादिकषायः** (१)

(व. से. ; च. द. ; भै. र. । नेत्र रोगा. ; वृ. यो. त. । त. १३१ ; यो. त. । त. ७१)

आटरूषाभयानिम्बधात्रीमुस्ताक्षकूलकैः ।
रक्तस्रावं कफं हन्ति चक्षुष्यं वासकादिकम् ॥

बासा, हर्र, नीमकी छाल, आमला, नागरमोथा, बहेड़ा और पटोलपत्र समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसके सेवनसे नेत्रोंसे होने वाला रक्तस्राव और कफ नष्ट होता है । यह क्वाथ नेत्रोंके लिये विशेष हितकारी है ।

(६५०३) **वासकादिकषायः** (२)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

वासकाऽतिविषा कुष्ठं देवदारु महौषधम् ।
मुस्ता समांशतः पीतः श्लेष्मज्वरापहः ॥

बासा (अडूसा), अतीस, कूट, देवदारु, सोंठ और नागरमोथा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कफज ज्वरको नष्ट करता है ।

(६५०४) **वासकादियोगः**

(व. से. । रक्तपित्ता.)

वासकस्य रसे पथ्या सप्तधा परिभाविता ।
कृष्णा वा मधुना पीता रक्तपित्तं द्रुतं जयेत् ॥

हर्रोको अथवा पीपलको बासेके रसकी सात भावना दे कर सुखा लें ।

इन्हें शहदके साथ पीनेसे रक्तपित्त शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(६५०५) **वासाकषायः**

(शा. सं. । खं. २ अ. २)

रक्तपित्तक्षयं कासं श्लेष्मपित्तज्वरं तथा ।
केवलो वासकक्वाथः पीतः क्षौद्रेण नाशयेत् ॥

केवल बांसेके क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे रक्तपित्त, क्षय, खांसी और कफ पित्तज ज्वरका नाश होता है ।

(६५०६) **वासादिकषायः** (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. २ ; भा. प्र. । म. खं. २)

वासाक्षुद्रामृताक्वाथः क्षौद्रेण ज्वरकासहा ॥

बासा, कटेली और गिलोयके क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे ज्वर और कासका नाश होता है ।

(६५०७) **वासादिकषायः** (२)

(शा. सं. । खं. २ अ. २ ; यो. चि. म. । अ. ४; यो. र. ; ग. नि. । रक्तपित्ता. ८; वृ. मा. । रक्तपित्ता. ; च. सं. । चि. अ. ४ ; हा. सं. । स्था. ३. अ. १०)

आटरूषकमृद्वीका पथ्याक्वाथः सशर्करः ।
क्षौद्राढ्यः कसनश्वासरक्तपित्तनिबर्हणः ॥

बासा, मुनक्का और हर्र समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें खांड और शहद मिला कर पीनेसे खांसी, श्वास और रक्तपित्तका नाश होता है ।

(६५०८) **वासादिकषायः** (३)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । कासा.)

वासाहरिद्राधनिकागुडूची
भार्गीकणानागररिङ्गणीनाम् ।
क्वाथेन मारीचरजोन्वितेन
श्वासः शमं याति न कस्य पुंसः ॥

वासा, हल्दी, धनिया, गिलोय, भरंगी, पीपल, सोंठ और कटेली समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें काली मिर्चका चूर्ण मिला कर पीनेसे श्वास नष्ट होना है ।

(६५०९) **वासादिकषायः** (४)

(व. से. । अम्लपित्ता. ; वृ. मा. ; ग. नि. । अम्लपित्ता. ३८)

वासानिम्बपटोलत्रिफलासनयासयोजितो जयति
अधिककफमम्लपित्तं प्रयोजितो गुग्गुलुः क्रमशः॥

बासा, नीमकी छाल, पटोल, त्रिफला, असना और जवासा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें गूगल मिला कर पिलानेसे कफ प्रधान अम्लपित्त नष्ट होता है ।

(६५१०) **वासादिकषायः** (५)

(वृ. मा. । ज्वरा. ; ग. नि. । ज्वरा. १ ; हा. सं. । स्था. ३ अ. २; यो. र. । विषमज्वरा. ; र. र. । ज्वरा.)

वासाधात्रीस्थिरा[1] दारुपथ्या[2] नागरसाधितः ।
सितामधुयुतः क्वाथश्चातुर्थिकनिवारणः ॥

बासा (अडूसा), आमला, शालपर्णी, देवदारु, हर्र और सोंठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें मिश्री और शहद मिला कर पीनेसे चातुर्थिक ज्वर नष्ट होता है ।

(६५११) **वासादिकषायः** (६)

(वृं. मा. । रक्तपित्ता. ; हा. सं. । स्था. ३. अ. १० ; यो. र. ; वृ. नि. र.)

वासाकषायोत्पलमृत्प्रियङ्गु-
लोध्राञ्जनाम्भोरुहकेसराणि ।
पीत्वा सिताक्षौद्रयुतानि जह्या-
त्पित्तासृजो वेगमुदीर्णमाशु ॥

बासेके क्वाथमें नीलोत्पल, सौराष्ट्र मृत्तिका, फूल प्रियंगु, लोध, सुरमा और कमलकेसरका चूर्ण तथा मिश्री और शहद मिला कर पीनेसे प्रबल रक्तपित्तभी नष्ट हो जाता है ।

१ फला इति पाठान्तरम्

२ धान्येति पाठान्तरम्

(६५१२) **वासादिकषायः** (७)

(वृ. मा. । रक्तपित्ता. ; हा. सं. । स्था. ३ अ. १० ; यो. र.; ग. नि. । रक्तपित्ता. ८)

वासायां विद्यमानायामाशायां जीवितस्य च ।
रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति ॥

यदि रोगीके जीवनकी आशा हो और बासा (अडूसा) मौजूद हो तो रक्तपित्त, क्षय और खांसीके रोगीको कष्ट उठानेकी क्या आवश्यकता है । इन रोगोंमें बासा अवश्य लाभ पहुंचाता है ।

(६५१३) **वासादिकषायः** (८)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

वासागुडूचीत्रिफला पटोली
सठी च तिक्ता मधुना कषायम् ।
श्लेष्मप्रभूतेषु रुजेषु सम्यक्-
ज्वरं निहन्यात् कफजं च शीघ्रम् ॥

बासा (अडूसा), गिलोय, त्रिफला, पटोल, कचूर और कुटकी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे कफज ज्वर शीघ्रही नष्ट हो जाता है ।

(६५१४) **वासादिकषायः** (९)

(यो. र. । विषमज्वरा.)

वासापटोलत्रिफला द्राक्षाशम्पाकनिम्बजः ।
समधु ससितः क्वाथो हन्यादैकाहिकं ज्वरम् ॥

बासा, पटोल, त्रिफला, मुनक्का, अमलतास और नीमकी छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद और मिश्री मिला कर पीनेसे इकतरा ज्वर नष्ट होता है।

(६५१५) **वासादिकषायः** (१०)

(वृ. नि. र. । कफज्वरा.)

वासाविशालादशमूलगौरी
महौषधं पुष्करभार्गियुक्ता ।
एषां कषायो विनिहन्ति कासं
कफज्वरं शूलनिवर्त्तनं च ॥

बासा, इन्द्रायणकी जड़, दशमूल, हल्दी, सोंठ, पोखरमूल और भरंगी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ खांसी, कफज्वर और शूलको नष्ट करता है।

(६५१६) **वासादिकषायः** (११)

(व. से. । अम्लपित्ता. ; र. र. ; वृ. मा. ; च. द. । अम्लपित्ता. ५८)

वासामृतापर्पटकनिम्बभूनिम्बमार्कवैः ।
त्रिफलाकुलकैः क्वाथः सक्षौद्रश्चाम्लपित्तहा ॥

बासा, गिलोय, पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, चिरायता, भंगरा, त्रिफला और पटोल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे अम्लपित्त नष्ट होता है।

(६५१७) **वासादिक्वाथः** (१)

(यो. चि. म. । अ. ४)

वासाक्षुद्रामृतामुस्ता शुण्ठीधात्री समाक्षिका ।
पिप्पली चूर्णसंयुक्ता विषमज्वरनाशनम् ॥

बासा (अडूसा), कटेली, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ और आमला समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें पीपलका चूर्ण और शहद मिला कर पीनेसे विषमज्वर नष्ट होता है।

(६५१८) **वासादिक्वाथः** (२)

(यो. त । त. ७०)

वासामृतावचाव्याघ्रीपटोलत्रिफलादलैः ।
मतिमान्पाययेत्क्वाथं सर्वाभिष्यन्दनाशनम् ॥

बासा, गिलोय, बच, कटेली, पटोल, त्रिफला और तेजपातका क्वाथ पीनेसे समस्त नेत्राभिष्यन्द नष्ट होते हैं।

(६५१९) **वासादिक्वाथः** (३)

(वृ. यो. त. । त. ९१ ; ग. नि. । वातरक्ता. २० ; वृ. मा. ; व. से. ; वृ. नि. र. । वातरक्ता.)

वासागुडूचीचतुरङ्गुलाना-
मेरण्डतैलेन पिबेत्कषायम् ।
क्रमेण सर्वाङ्गजमप्यशेषं
जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥

वासा, गिलोय और अमलतासका गूदा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें अण्डीका तेल मिला कर पीनेसे सर्वाङ्गमें व्याप्त वातरक्तका नाश होता है।

(६५२०) **वासादिक्वाथः** (४)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४२)

वासाविडङ्गपिचुमन्दपटोलपाठा
शुण्ठीसुरेन्द्रतरुभिर्दशमूलपथ्याः ।
क्वाथो निहन्ति च मरुत्प्रभवं च कुष्ठम्

वासा [अडूसा), बायबिड़ंग, नीमकी छाल, पटोल, पाठा, सोंठ, देवदारु, दशमूल और हर्रका काथ वातज कुष्ठको नष्ट करता है ।

(६५२१) **वासादिक्वाथः** (५)

(ग. नि. । श्वयथु. ३३ ; र. र. । अम्लपित्ता.)

सिंहास्यामृतभण्टाकीक्वाथं
पीत्वा समाक्षिकम् ।
कृच्छ्रशोथं जयेज्जन्तुः
कासं श्वासं ज्वरं वमिम् ॥

बासा (अडूसा), गिलोय और बड़ी कटेली समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र, शोथ, खांसी, श्वास, ज्वर और वमनका नाश होता है ।

वासादिक्वाथः (६) (महा)

(यो. त. । त. ७१)

प्र. सं. ५०१३ "**महा वासादि काथः**" देखिये ।

(६५२२) **विडङ्गादिक्वाथः** (१)

(भै. र. । प्रमेहा. ; हा. सं. । स्था. ३ अ. ३१)

विडङ्गसर्जार्जुनकट्फलानां
कदम्बरोध्रासनवृक्षकाणाम् ।
जलेन क्वाथश्च हितो नराणां
कफप्रमेहेण सदातुराणाम् ॥

बायबिड़ंग, शालवृक्षकी छाल, अर्जुनकी छाल, कायफल, कदम्ब, लोध और असनावृक्षकी छाल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह काथ कफज प्रमेहको नष्ट करता है ।

(६५२३) **विडङ्गादिक्वाथः** (२)

(भै. र. । अर्शा.)

विडङ्गपत्रकेशरशुण्ठीसमैला
कुस्तुम्बुरुधान्यकतिलानाम् ।
क्वाथो हरीतकीसर्पिर्गुडेन
पीतो निहन्ति गुदे गुदजानि ॥

बायबिड़ंग, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, इलायची, नेपाली धनिया, धनिया और तिल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें हर्रका चूर्ण, गुड़ और घी मिला कर पीनेसे अर्शका नाश होता है ।

(६५२४) **विडङ्गादिक्वाथः** (३)

(वृ. नि. र. । अतिसारा. ; व. से. ; वृ. मा.)

विडङ्गातिविषामुस्ता दारुपाठाकलिङ्गकम् ।
मरीचेन समायुक्तं शोथातीसारनाशनम् ॥

बायबिड़ंग, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, पाठा, इन्द्रजौ और काली मिर्च समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ शोथातिसारको नष्ट करता है ।

(६५२५) **विडङ्गादिक्वाथः** (४)

(यो. र. । प्रमे.)

विडङ्गरजनीयष्टीनागरगोक्षुरैः कृतः ।
कषायो मधुना हन्ति प्रमेहान्दुस्तरानपि ॥

बायबिड़ंग, हल्दी, मुलैठी, सोंठ और गोखरु समान भाग ले कर काथ बनावें ।

इसमें शहद मिला कर पीनेसे भयंकर प्रमेह भी नष्ट हो जाते हैं ।

(६५२६) विडङ्गादियोगः

(वृ. नि. र. । आमातिसारा.)

दीप्ताग्निर्बहुदोषो योविबद्धमतिसार्यते ।
विडङ्गत्रिफलाकृष्णाकषायैस्तं विरेचयेत् ॥

यदि अतिसारके रोगीकी अग्नि दीप्त हो और दोष अधिक हों तो उसे बायबिड़ंग, त्रिफला और पीपलके क्वाथसे विरेचन देना चाहिये ।

(६५२७) विज्जलस्वरसः

(वृ. मा. । अतिसारा.)

दलोत्थः स्वरसः पीतो विज्जलस्य समाक्षिकः।
जयत्याममतीसारं क्वाथो वा कुटजत्वचः ॥

पीले फूलकी खरैंटीके पत्तोंके रसमें अथवा कुड़ेकी छालके क्वाथमें शहद मिला कर पीनेसे आमातिसार नष्ट होता है ।

(६५२८) विदारीगन्धादिगणः

(सु. सं. । अ. ३८)

विदारीगन्धाविदारी सहदेवा विश्वदेवा श्वदंष्ट्रा पृथक्पर्णी शतावरी सारिवा कृष्ण-सारिवाजीवकर्षभकौ महासहाक्षुद्रसहा वृहत्यौ पुनर्नवैरण्डो हंसपादीवृश्चिकाल्यृषभीचेति ।
विदारीगन्धादिरयं गणः पित्तानिलापहः ।
शोषगुल्माङ्गमर्दोर्ध्वश्वासकासविनाशनः ॥

शालपर्णी, विदारीकन्द, खरैंटी, गंगेरन, गोखरु, पृष्ठपर्णी, शतावर, सारिवा, कृष्णसारिवा, जीवक, ऋषभक, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, कटेली, कटेला, पुनर्नवा, अरण्डमूल, हंसपादी, वृश्चिकाली और कौंच ।

यह विदारीगन्धादि गण पित्त, वायु, शोष, गुल्म, अङ्गमर्द, उर्ध्वश्वास और खांसीको नष्ट करता है ।

(६५२९) विदार्यादियोगः

(र. र. । शूला.)

विदारीदाडिमरसः सव्योषलवणान्वितः ।
क्षौद्रयुक्तो जयत्याशु शूलं दोषत्रयोद्भवम् ॥

विदारीकन्द और अनारके रसमें त्रिकुटे (सोंठ, मिर्च, पीपल) और सेंधा नमकका चूर्ण मिला कर पीनेसे त्रिदोषज शूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(६५३०) विरेचनोपगकषायदशकः

(च. । सू. अ. ४)

द्राक्षाकाश्मर्य्यपरूषकाभयामलकबिभीतककुवलवदरकर्कन्धूपीलूनीति दशेमानि विरेचनोपगानि भवन्ति ।

मुनक्का, खम्भारी, फालसा, हर्र, आमला, बहेड़ा, कुवल (मध्यम आकारका बेर), बदर (बड़ा बेर), कर्कन्धू (छोटा बेर) और पीलु । ये दश ओषधियां विरेचनमें प्रयुक्त होती हैं ।

(६५३१) विशालादिक्वाथः

(ग. नि. । श्वयथु. ३३)

विशाला त्रिफला तिक्ता गवाक्षी रजनी त्रिवृत्।
पटोलमूलं त्रायन्ती तुल्या द्व्यंशं महौषधम् ॥
क्वाथोऽयं पित्तशोफघ्नः पीतो वाऽऽमलका-द्रसः ॥

इन्द्रायन, त्रिफला, कुटकी, महाबला, हल्दी,

निसोत, पटोलकी जड़ और त्रायमाणा १-१ भाग तथा सोंठ २ भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ अथवा आमलेका रस पीनेसे पित्तज शोथ नष्ट होता है।

(६५३२) **विश्वादिकषायः** (१)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । आमातिसारा. ; यो. त. । त. २१)

विश्वाभयाघनवचातिविषासुराह्व-
क्वाथोऽथ विश्वजलदातिविषाभृतो वा।
आमातिसारशमनः कथितः कषायः
शुण्ठीघनाप्रतिविषामृतवल्लिजो वा॥

(१) सोंठ, हर्र, नागरमोथा, बच, अतीस और देवदारु।

(२) सोंठ, नागरमोथा, और अतीस।

(३) सोंठ, नागरमोथा, अतीस और गिलोय।

ये तीनों क्वाथ आमातिसारको नष्ट करते हैं।

नोट—गदनिग्रहमें क्काथ नं. २ और ३ संग्रहणी रोगमें लिखे हैं।

(६५३३) **विश्वादिकषायः** (२)

(व. से. । शूला.)

विश्वैरण्डयवक्वाथः सद्यः शूलनिवारणः।
तद्वदिन्द्रयवक्वाथो हिङ्गुसौवर्चलान्वितः॥

सोंठ, अरण्डमूल और इन्द्रजौका काथ शूलको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है।

इन्द्रजौके क्वाथमें हींग और काला नमक मिला कर पीनेसे भी शूल नष्ट होता है।

(६५३४) **विश्वादिकषायः** (३)

(ग. नि. । शूला. २३; भै. र. ; वृ. नि. र. ; व. से. । शूला.)

विश्वामेरण्डजं मूलं क्वाथयित्वा जलं पिबेत्।
हिङ्गुसौवर्चलोपेतं सद्यः शूलनिवारणम्॥

सोंठ, और अरण्डकी जड़ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें हींग और काला नमक मिलाकर पीनेसे शूल नष्ट होता है।

(६५३५) **विश्वादिकषायः** (४)

(व. से. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

विश्वामृताब्दभूनिम्बैः पञ्चमूलीसमन्वितैः।
कृतः कषायो हन्त्याशु वातपित्तभवं ज्वरम्॥

सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, चिरायता और पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेली, कटेला, गोखरु) समान भाग ले कर क्काथ बनावें।

इसके सेवनसे वातपित्त ज्वर नष्ट होता है।

(६५३६) **विश्वादिकषायः** (५)

(भै. र. ; वृ. मा. । ज्वरा. ; वृ. नि. र. ; व. से. । ज्वरा.)

विश्वाम्बुपर्पटोशीरघनचन्दनसाधितम्।
दद्यात्सुशीतलं वारि तृट्छर्दिज्वरदाहनुत्॥

सोंठ, सुगन्धबाला, पित्त पापड़ा, खस, नागरमोथा, और लाल चन्दन समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसे ठण्डा करके पिलानेसे पिपासा, छर्दि, ज्वर और दाहका नाश होता है।

(६५३७) विश्वादिकषायः (६)

(वृ. मा. । अजीर्णा.)

विश्वाभयागुडूचीनां कषायेण षडूषणम् ।
पिबेच्छ्लेष्मणि मन्देऽग्नौ त्वक्पत्रसुरभी कृतम्॥

सोंठ, हर्र और गिलोय के क्वाथमें पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और मरिचका चूर्ण मिला कर और उसे तेजपात तथा दालचीनीके चूर्णसे सुगन्धित करके पीनेसे कफज अग्निमांद्य नष्ट होता है ।

(६५३८) विश्वादिकषायः (७)

(भै. र. । ज्वरा.)

विश्वामृताग्रन्थिकसिद्धतोयं
मरुज्ज्वरः स्यात् पिबतः कुतोऽयम् ।
क्वाथोऽथ कुस्तुम्बुरुदेवदारु-
क्षुद्रौषधैः पाचनमत्र चारु ॥

सोंठ, गिलोय और पीपलामूलका अथवा धनिया, देवदारु, कटेली और सोंठका क्वाथ वातज्वरको नष्ट करता है ।

(६५३९) विश्वादिकषायः (८)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

सर्वज्वरप्रशमनार्थमुदाहरन्ति
विश्वौषधेन सह पर्पटकं मुनीन्द्राः ।

सोंठ और पित्त पापड़ा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ समस्त ज्वरोंको नष्ट करता है ।

(६५४०) विश्वादिकषायः (९)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४)

विश्वोपकुल्यामरिचं शठीनां
यवानिकाचित्रहरीतकीनाम् ।
क्वाथो यकृत्पाचनकेपि शस्तः
आनाहगुल्मार्तिविषूचिकानाम् ॥

सोंठ, पीपल, काली मिर्च, कचूर, अजवायन, चीता और हर्र समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ यकृत्गुल्मको पचानेमें उपयोगी है तथा अफारा, गुल्म और विषूचिकाको नष्ट करता है ।

(६५४१) विश्वादिकषायः (१०)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

विश्वौषधच्छिन्नरुहाकिरात-
तिक्तैः समुस्तैः क्वथितं जलं यः ।
पिबत्यसौ न ज्वरसम्भवाना-
माधारतामेति रुजां कदाचित् ॥

सोंठ, गिलोय, चिरायता और नागरमोथा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ ज्वरको नष्ट करता है ।

(६५४२) विश्वादिकषायः (११) (बृहद्)

(वृ. मा. । शूला. ; च. द. ; र. र. । शूला.)

विश्वोरुबूकदशमूलयवाम्भसा च
द्विक्षारहिङ्गुलवणत्रयपुष्कराणाम् ।
चूर्णं पिबेद्धृदयपार्श्वकटीग्रहाम-
पक्वाशयां स भृशरुग्ज्वरगुल्मशूली ॥

सोंठ, अरण्डमूल, दशमूल और इन्द्रजौके क्वाथमें जवाखार, सज्जीखार, हींग, सेंधानमक,

काला नमक, बिड नमक और पोखरमूलका चूर्ण मिला कर पीनेसे हृदय और पसलीका शूल कटीग्रह, आमाशय शूल, पक्वाशय शूल, ज्वर और गुल्मका नाश होता है।

(६५४३) विश्वादिद्वादशाङ्गक्वाथः

(ग. नि. । वाता. १९)

विश्वैरण्डशिफादारुवचाः शुण्ठी दुरालभा
अभयाऽतिविषा मुस्ता शतमूली वृषोऽमृता ।
अमीषां क्वाथपानेन मांसामश्लेषसन्धिगः
मज्जास्थिस्नायुसर्वाङ्गवायुर्नश्यति निश्चितम् ॥

सोंठ, अरण्डमूल, देवदारु, बच, सोंठ, धमासा, हर्र, अतीस, नागरमोथा, शतावर, बासा और गिलोय समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ मांसगत, सन्धिगत, मज्जागत, अस्थिगत, स्नायुगत और सर्वाङ्गगत वायुको नष्ट करता है।

(६५४४) विष्णुप्रियादिक्वाथः

(ग. नि. । कृम्य. ६)

विष्णुप्रियारात्रिफणिज्जकार्क-
कुठेरकासारिकसिन्दुवारैः ।
कृतः कषायः क्रिमिनाशनाय
पलाशबीजप्रतिवापयोगात् ॥

तुलसी, हल्दी, फणिज्जक (तुलसी भेद—मरवा), आककी जड़की छाल, कुठेरक (बन तुलसी), कासारि (कसौंदी) और संभालु समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें ढाकके बीजोंका चूर्ण मिला कर पीनेसे कृमि नष्ट हो जाते हैं।

(६५४५) वीरतर्वादिक्वाथः

(शा. सं. । खं. २ अ. २ ; वृ. नि. र. । मूत्रा ; यो. र.)

वीरतरुर्वृक्षद्वन्दा कासः सहचरत्रयम् ।
कुशद्वयं नलो गुन्द्रा बकपुष्पोऽग्निमन्थकः ॥
मूर्वापाषाणभेदश्च श्योनाको गोक्षुरस्तथा ।
अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणो वरः ॥
वीरतर्वादिरित्युक्तः शर्कराश्मरीकृच्छ्रहा ।
मूत्राघातं वायुरोगान्नाशयेन्निखिलानपि ॥

अर्जुन वृक्षकी छाल, तुलसी, कांसकी जड़, सफेद, पीले और नीले फूलका पियाबांसा, दो प्रकारकी कुश, नल, दाभ, अगस्ति पुष्प, अरनी, मूर्वा, पाषाणभेद, अरलुकी छाल, गोखरु, चिरचिटे (अपामार्ग) की जड़, कमल और ब्राह्मी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ शर्करा, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और समस्त वायु रोगोंको नष्ट करता है।

(६५४६) वृषादिक्वाथः (१)

(वैद्यामृत)

वृषदारुनिशाकिरातभल्ली
रसजाम्भोधरबिल्वजः कषायः ।
मधुना मधुरी कृतो निहन्ति
विविधानि प्रदराणि कामिनीनाम् ॥

बासा, देवदारु, हल्दी, चिरायता, भिलावा, रसौत, नागरमोथा और बेलगिरी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसे शहदसे मीठा करके पीनेसे स्त्रियोंका अनेक प्रकारका प्रदर रोग नष्ट होता है।

(६५४७) वृषादिक्वाथः (२)

(वृ. नि. । जीर्णज्वरा.)

वृषो दुरालभा श्यामा पर्पटः कटुरोहिणी ।
किरातमथ एतेषां क्वाथः पीतः सितायुतः ॥
रक्तोद्भवं महादाहं तृष्णां मूर्छां मतिभ्रमम् ।
पित्तज्वरं हरत्याशु पापमीशो यथास्मृतः ॥

बासा, धमासा, गिलोय, पित्त पापड़ा, कुटकी और चिरायता समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसमें मिश्री मिला कर पीनेसे भयंकर रक्त-दाह, तृष्णा, मूर्च्छा, मतिभ्रम और पित्तज्वर नष्ट होता है।

(६५४८) वृहच्चन्दनादिक्वाथः

(यो. चि. म. । अ. ४)

मलयजपिचुविश्वाश्रीफलं पद्मकं च
जलरुहकटुमुस्ता सारिवा हारहूरा ।
अतिविषयवयष्टीकल्पितस्तुल्यभागै-
र्हरति गुरु विबाधां पित्तसन्तापमूर्छाम् ॥

लाल चन्दन, नीमकी छाल, सोंठ, बेलकी छाल, पद्माक, कमल, कुटकी, नागरमोथा, सारिवा, मुनक्का, अतीस, इन्द्रजौ और मुलैठी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ पित्तज ज्वर और मूर्च्छाको नष्ट करता है।

(६५४९) वृहच्छठ्यादिक्वाथः

(वृ. मा.; व. से. । ज्वरा.)

शठी पुष्करमूलं च गुडूची विश्वभेषजम् ।
तिक्तकं[1] त्रायमाणं च पिप्पली च दुरालभा ॥
व्याघ्रीपर्पटकौ रास्ना अभया कटुरोहिणी ।
देवदारु च भार्गी च समभागानि कारयेत् ॥
वृहच्छठ्यादिको वर्गः सन्निपातज्वरापहः ।
कासं श्वासं दिवा निद्रां रात्रौ जागरणं तथा ॥
मुखशोषं च तृष्णां च दाहं च शमयत्यपि ॥

कचूर, पोखरमूल, गिलोय, सोंठ, पटोल (पाठान्तरके अनुसार गोखरु), त्रायमाणा, पीपल, धमासा, कटेली, पित्तपापड़ा, रास्ना, हर्र, कुटकी, देवदारु और भरंगी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ सन्निपात, खांसी, श्वास, दिनमें नींद आना, रातको नींद न आना, मुखशोष, तृष्णा और दाहको नष्ट करता है।

(६५५०) वृहच्छठ्यादिक्वाथः

(यो. चि. । अ. ४)

सठी पटोलद्विनिशोग्रगन्धा
वासा किरातं दशमूलधारा ।
सहाचरी भार्गिवरी सभृङ्गी
रास्नेन्द्रबीजं सुरदारुशिग्रुः ॥
दुरालभाधान्यकशुण्ठीपाठा-
सुरेन्द्रकन्दं सहरीतकीभिः ।
त्रायन्तिकैन्द्री कटुकागदे च
कषायमेषां विहितः सवायौ ॥
श्लेष्मज्वरे काससश्वासशूले
वाताधिके रोगिणि शीतके च ।
चिरज्वरेदुष्टमलग्रहेऽपि नूनं
हितोयं सततं सठ्यादि ॥

कचूर, पटोल, हल्दी, दारुहल्दी, बच, बासा, चिरायता, दशमूल, गिलोय, कटसरैया,

[1] १. त्रिकण्टकमिति पाठान्तरम्।

भरंगी, शतावर, काकड़ासिंगी, रास्ना, इन्द्रजौ, देवदारु, सहंजनेकी छाल, धमासा, धनिया, सोंठ, पाठा, कटुसूरण, हर्र, त्रायमाणा, बड़ी इलायची, कुटकी और कूठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ वातकफज ज्वर, खांसी, श्वास, शूल, वात प्रधान रोग, शीत, जीर्णज्वर और दुष्ट मलग्रहको नष्ट करता है।

(६५५१) बृहच्छालिपर्ण्यादिक्वाथः

(वृ. यो. त. । त. ६४)

शालिपर्णी पृश्निपर्णी बृहती कण्टकारिका।
बलाश्वदंष्ट्रा बिल्वाग्नि पाठानागरधान्यकम् ॥
एतदाहारसंयोगो हितं सर्वातिसारिणाम्।

शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, छोटी और बड़ी कटेली, खरैटी, गोखरु, बेलछाल, चीता, पाठा, सोंठ, और धनिया इनके क्वाथसे आहार बना कर देना अतिसारमें हितकारी है।

(६५५२) बृहत् कट्फलादिक्वाथः

(भै. र. । ज्वरा.)

कट्फलाब्दवचापाठापुष्कराजाजिपर्पटैः।
भृङ्गीकलिङ्गधन्याकं शटीभृङ्गकणाह्वयम् ॥
तिक्ताभयाम्बुकैरातं भार्गी रामठकं बला।
दशमूली कणामूलं निःक्वाथ्य क्वाथमुत्तमम् ॥
हिङ्ग्वार्द्रकरसोपेतं सन्निपातविनाशनम्।
गलगण्डं गण्डमालां स्वरभेदं गलामयान् ॥
कर्णमूलोद्भवं शोथं हन्याद्धनुमुखामयान्।
कफवातज्वरं कासं तथा हन्ति शिरोगदान् ॥
शिरोगुरुत्वं बाधिर्यं निहन्ति कफवातिकम् ॥

कायफल, नागरमोथा, बच, पाठा, पोखरमूल, जीरा, पित्तपापड़ा, काकड़ासिंगी, इन्द्रजौ, धनिया, कचूर, दालचीनी, पीपल, कुटकी, हर्र, सुगन्धबाला, चिरायता, भरंगी, हींग, खरैटी, दशमूल, और पीपलामूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसमें हींग और अदरकका रस मिलाकर पिलानेसे सन्निपात नष्ट होता है।

इसके अतिरिक्त यह क्वाथ गलगण्ड, गण्डमाला, स्वरभेद, गलरोग, कर्णमूलकी सूजन, हनु रोग, मुख रोग, कफवात ज्वर, कास, शिरो रोग, शिरका भारीपन और कफ वातज बधिरताको भी नष्ट करता है।

(६५५३) बृहत्क्षुद्रादिक्वाथः

(वै. र. । ज्वर.)

क्षुद्राधान्यकशुण्ठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः।
रक्तचन्दनभूनिम्बपटोलवृषपौष्करैः ॥
कटुकेन्द्रयवारिष्टभार्ङ्गीपर्पटकैः समैः।
क्वाथं मातर्निषेवेत सर्वशीतज्वरापहम् ॥

कटेली, धनिया, सोंठ, गिलोय, नागरमोथा, पद्माक, लाल चन्दन, चिरायता, पटोल, बासा, पोखरमूल, कुटकी, इन्द्रजौ, नीमकी छाल, भरंगी और पित्तपापड़ा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें।

इसे प्रातः काल पीनेसे समस्त शीत ज्वर नष्ट होते हैं।

बृहत्त्रायमाणादिक्वाथः

(यो. चि. म. । अ. ४)

प्र. सं. २२४६ "त्रायमाणादि क्वाथः" (बृहद्) देखिये।

(६५५४) बृहत्पञ्चमूल्यादिक्वाथः

(भै. र. । ज्वरातिसारा.)

पञ्चमूलीभृङ्गवेरशृङ्गाटकश्चटं घनम्।
जम्बूदाडिमपत्रञ्च बला बालं गुडूचिका ॥

पाठा बिल्वं समङ्गा च कुटजत्वक् फलं तथा ।
धान्यकं धातकीक्वाथं विषा जीरकसंयुतम् ॥
पिबेत् ज्वरातीसारे च सरक्ते वाप्यरक्तके ।
अपि योगशतैस्त्यक्ते चासाध्ये सर्वरूपके ॥

पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल, अरणी), सोंठ, सिंघाड़ा, कश्चट (जल चौलाई), नागरमोथा, जामनके पत्ते, अनारके पत्ते, खरैटी, सुगन्धबाला, गिलोय, पाठा, बेलगिरी, मजीठ, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, धनिया और धायके फूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें अतीस और जीरेका चूर्ण मिला कर पीनेसे रक्तसहित तथा रक्तरहित ज्वरातिसार नष्ट हो जाता है ।

सैकड़ों योगोंसे आराम न होने वाला असाध्य ज्वरातिसार भी इससे नष्ट हो जाता है ।

बृहत्पञ्चमूल्यादिक्वाथः

(भा. प्र. । ज्वरा.)

प्रयोग संख्या ३६९८ देखिये ।

(६५५५) बृहत्पटोलादिक्वाथः

(यो. र. । मसूरि; वृ. यो. त. । त. १२६)

पटोलं सारिवा मुस्तं पाठाकटुकरोहिणी ।
खदिरः पिचुमन्दश्च बला धात्री विकङ्कतः ॥
एषां कषायपानं तु हन्ति वातमसूरिकाम् ॥

पटोल, सारिवा, नागरमोथा, पाठा, कुटकी, खैरकी छाल, नीमकी छाल, खरैंटी, आमला और विकङ्कत (कण्टाई) समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वातज मसूरिकाको नष्ट करता है ।

(६५५६) बृहत्पिप्पल्यादिक्वाथः

(भा. प्र. । ज्वर. ; वृ. नि. र. । वातकफज्वर.)

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ।
वचा सातिविषाजाजी पाठावत्सकरेणुका ॥
किराततिक्तको मूर्वा सर्षपा मरिचानि च ।
कट्फलं पुष्करं भार्ङ्गी विडङ्गं कर्कटाह्वयम् ॥
अर्कमूलं बृहतिंसही श्रेयसी सदुरालभा ।
दीप्यकश्चाजमोदा च शुकनासा सहिङ्गुका ॥
एतानि समभागानि गण एकोऽष्टविंशतिः ।
एषां क्वाथो निपीतः स्याद्वातश्लेष्मज्वरापहः ॥
हन्ति वातं तथा शीतं प्रस्वेदमति वेपथुम् ।
प्रलापश्चाति निद्राश्च रोमहर्षारुची तथा ॥
महावातेऽपतन्त्रे च शून्यत्वे सर्वगात्रजे ।
पिप्पल्यादि महाक्वाथो ज्वरे सर्वत्र पूजितः ॥

पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, बच, अतीस, जीरा, पाठा, इन्द्रजौ, रेणुका, चिरायता, मूर्वा, सरसों, काली मिर्च, कायफल, पोखरमूल, भरंगी, बायबिडंग; काकड़ासिंगी, आककी जड़, बड़ी कटेली, गजपीपल, धमासा, अजवायन, अजमोद, कौंच और हींग समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वातकफ, ज्वर, शीत, प्रस्वेद, अत्यन्त कम्पन, प्रलाप, अति निद्रा, रोमहर्ष, अरुचि, महावात, अपतन्त्रक, समस्त शरीरकी शून्यता और हर प्रकारके ज्वरको नष्ट करता है ।

बृहद्गुडूच्यादिक्वाथः

(वै. र. ; भा. प्र. म. खं. । ज्वरातिसार.)

प्रयोग संख्या ११७४ देखिये ।

बृहद्गुडूच्यादिक्वाथः

(भै. र. । ज्वरा.)

प्रयोग-संख्या ११८४ देखिये ।

(६५५७) बृहद्धात्र्यादिक्वाथः

(भै. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

धात्री द्राक्षा च यष्ट्याह्वं विदारी सत्रिकण्टका।
दर्भेक्षु मूलमभया क्वाथयित्वा जलं पिबेत् ॥
ससितं मूत्रकृच्छ्रघ्नं रुजादाहहरं परम् ॥

आमला, मुनक्का, मुलैठी, बिदारीकन्द, गोखरु, दाभ, ईखकी जड़ और हर्र समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें मिश्री मिला कर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र दाह और पीड़ा नष्ट होती है ।

(६५५८) बृहद्भार्ग्यादिक्वाथः

(भै. र. । ज्वरा.)

भार्गी पथ्या कटुः कुष्ठं पर्पटं मुस्तकं कणा ।
अमृता दशमूलश्च नागरं क्वाथयेद्भिषक् ॥
हन्ति धातुगतं सर्वं बहिःस्थं शीतसंयुतम् ।
सतताद्यं ज्वरं घोरं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं श्वयथुश्च विनाशयेत् ।
एष भार्ग्यादिको नाम सर्वज्वरहरः परः ॥

भरंगी, हर्र, कुटकी, कूठ, पित्तपापड़ा, नागरमोथा, पीपल, गिलोय, दशमूल और सोंठ समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ समस्त धातुगत और बहिःस्थ सन्ततादि शीत ज्वर, अग्निमांद्य, अरुचि, प्लीहा, यकृत, गुल्म और शोथको नष्ट करता है ।

(६५५९) बृहद्रास्नादिक्वाथः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

रास्ना गुडूची घनपर्पटकं पटोली
भूनिम्बवत्सकसठीयुतनागराणाम् ।
तिक्तासुराह्वगजमागधिका यवास-
वासाबला गजबला कथितः समांशः ॥
क्वाथो निहन्ति मरुतप्रभवामयानां
सश्वासकासजठरार्तिविषूचिकानाम् ।
श्रेष्ठो नृणां भवति दारुणसन्निपाते
रोगेऽथवा कफसमीरणके प्रदेयः ॥

रास्ना, गिलोय, नागरमोथा, पित्त पापड़ा, पटोल, चिरायता, इन्द्रजौ, कचूर, सोंठ, कुटकी, देवदारु, गजपीपल, जवासा, बासा, खरैंटी और नागबला समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ वातव्याधि, श्वास, खांसी, उदर-शूल, विसूचिका, भयंकर सन्निपात और कफ-वातज रोगोंको नष्ट करता है ।

बृहद्रास्नादिक्वाथः

(वै. र. । वाता.)

प्र. सं. ५८८४ रास्नादि क्वाथः (१८) देखिये ।

(६५६०) बृहद्वरुणादिक्वाथः

(भै. र. । अश्मर्य.)

वारुणं वल्कलं शुण्ठी बीजं गोक्षुरसम्भवम् ।
तालमूली कुलत्थश्च कुशादि पञ्चमूलकम् ॥
शर्करा क्षारसंयुक्तं क्वाथयित्वा जले पिबेत् ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नं वस्तिमेहनशूलनुत् ॥

बरनेकी छाल, सोंठ, गोखरु, तालमूली, कुलथी और कुशादि पञ्चमूल (कुश, कांस, शर, दाभ और ईखकी जड़) समान भाग ले कर काथ बनावें ;

इसमें खांड और जवाखार मिला कर पीनेसे अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र और बस्ति तथा मूत्रनलीकी पीड़ा नष्ट होती है ।

बृहन्नागरादिक्काथः

(ग. नि. । ज्वरा.)

प्रयोग संख्या ३३५९ देखिये ।

(६५६१) बृहन्निम्बादियोगः

(व. से. । वातव्या.)

बृहन्निम्बतरोर्मूलं वारिणा परिपेषितम् ।
पीतस्तन्नाशयेत्क्षिप्रमसाध्यामपि गृध्रसीम् ॥

बकायनकी जड़की छालको पानीके साथ पीस कर पीनेसे असाध्य गृध्रसी भी नष्ट हो जाती है ।

बृहन्मुस्तादिक्काथः

(यो. चि. म. । अ. ४)

प्र. सं. ५०५१ मुस्तादि क्वाथः (५) देखिये।

(६५६२) वेदनास्थापनकषायदशकः

(च. सं. । चि. अ. ४)

शालकट्फलकदम्बपद्मकतुङ्गमोचरसशिरीषवञ्जुलैलवालुकाशोका इति दशेमानि वेदनास्थापनानि भवन्ति ।

शाल, कायफल, कदम्ब, पद्माक, पुन्नाग, मोचरस, सिरस, बेत, एलवालुक और अशोक; ये दश ओषधियां वेदनास्थापक हैं ।

(६५६३) व्याघ्र्यादिकषायः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

तद्वद्व्याघ्री गुडूची च रोध्रं कुष्ठं पटोलकम् ।
ज्वरे कफात्मजे चैतत् पाचनं स्यात्तदुत्तमम् ॥

कटेली, गिलोय, लोध, कूठ और पटोल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कफज ज्वरमें दोषोंको पकाता है ।

(६५६४) व्याघ्र्यादिकषायः (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

व्याघ्रीग्रन्थिकं चव्यं सुरसा शुण्ठी
सदाडिमं रजनी ।
घनचित्रकमेवं हि क्वाथो ग्रहणीकफं हन्ति ॥

कटेली, पीपलामूल, चव, तुलसी, सोंठ, अनारकी छाल, हल्दी, नागरमोथा और चीता समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ संग्रहणी और कफको नष्ट करता है ।

(६५६५) व्याघ्र्यादिकषायः (३)

(वा. भ. । चि. अ. १)

व्याघ्री शुण्ठ्यमृता क्वाथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
वातश्लेष्मज्वरश्वासकासपीनसशूलजित् ॥

कटेली, सोंठ और गिलोय समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें पीपलका चूर्ण मिला कर पीनेसे वातकफ, ज्वर, श्वास, खांसी, पीनस और शूल नष्ट होता है ।

(६५६६) व्याघ्र्यादिकषायः (४)

(वा. भ. । चि. अ. १)

सन्निपातज्वरे व्याघ्रीदेवदारुनिशाघनम् ।
पटोलपत्रनिम्बत्वक्त्रिफलाकटुकायुतम् ॥

कटेली, देवदारु, हल्दी, नागरमोथा, पटोल-पत्र, नीमकी छाल, त्रिफला और कुटकी समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ सन्निपात ज्वरको नष्ट करता है।

(६५६७) व्याघ्र्यादिकषायः (५)

(व. से. । श्वासा.)

व्याघ्रीदुरालभाभृङ्गीबिल्वमध्यत्रिकण्टकैः ।
सामृताग्निमृतैरेतैर्यूषः स्याच्छ्वासनुत्परः ॥

कटेली, धमासा, काकड़ासिंगी, बेलगिरी, गोखरु और गिलोय समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह काथ पीनेसे श्वास नष्ट होता है ।

(६५६८) व्याघ्र्यादिकषायः (६)

(व. से. । शूला.)

व्याघ्री ससिंहीफलबिल्वमूलं
शिलोद्भवं गोक्षुरकश्च तुल्यम् ।
एरण्डमूलं द्विगुणं च पक्त्वा
पिबेद्यवक्षारयुतं कषायम् ॥
हृत्कुक्षिपार्श्वानुगतं निहन्या-
च्छूलं नराणां कफजं प्रवृद्धम् ॥

कटेली, कटेलीके फल, बेलकी जड़की छाल, छरीला और गोखरु १-१ भाग तथा अरण्डमूल २ भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसमें जवाखार मिला कर पीनेसे हृदय, कुक्षि और पसलीका कफज शूल नष्ट होता है ।

(६५६९) व्याघ्र्यादिकषायः (७)

(वृ. नि. र. । विषमज्वरा.)

व्याघ्रीविश्ववितुन्नपुष्कर-
रजोभूनिम्बवासामृताभार्गी-
निम्बपटोलपद्मकघनै-
स्तिक्ताकलिङ्गैः कृतः ।
क्वाथो हन्ति सचन्दनः
कफमरुत्पित्तं सदाहं तृषां
कासं पञ्चविधं ज्वरं कृमि-
रुजं पाण्डुं वमिं कामलाम् ॥

कटेली, सोंठ, धनिया, पोखरमूल, चिरायत, बासा, गिलोय, भरंगी, नीमकी छाल, पटोल, पद्माक, नागरमोथा, कुटकी, इन्द्रजौ और लाल चन्दन समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ कफ, वायु, पित्त, दाह, तृषा, ५ प्रकारकी खांसी, ज्वर, कृमि, पाण्डु, वमन और कामलाको नष्ट करता है ।

(६५७०) व्याघ्र्यादिकषायः (८)

(व. से. । ज्वरा. ; वृ. नि. र.)

व्याघ्रीदुरालभाभार्गी शठी भृङ्गी सपौष्करम् ।
पक्वाम्बुश्लेष्महृद्देयमभिन्यासप्रशान्तये ॥

कटेली, धमासा, भरंगी, कचूर, काकड़ासिंगी और पोखरमूल समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह काथ कफ और अभिन्यास ज्वरको नष्ट करता है ।

(६५७१) व्याघ्र्यादिकषायः (९)

(रा. मा. । ज्वरा. २०)

व्याघ्रीपटोलत्रिफलानिशाब्दैः
सरोहिणीकैः पिचुमर्दयुक्तैः ।
सदेवकाष्ठैश्च जलं नराणां
सर्वज्वरान् हन्ति निपीयमानम् ॥

कटेली, पटोल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, नागरमोथा, कुटकी, नीमकी छाल और देवदारु समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

इसे पीनेसे समस्त ज्वर नष्ट होते हैं ।

(६५७२) व्योषादिकषायः

(व. से. । ज्वरा.)

व्योषाह्वत्रिफलारिष्टपटोलीतिक्तवत्सकैः ।
सभूनिम्बामृतापाठैस्त्रिदोषज्वरजिज्जलम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, पटोल, पित्तपापड़ा, इन्द्रजौ, चिरायता, गिलोय और पाठा समान भाग ले कर क्वाथ बनावें ।

यह क्वाथ त्रिदोषज ज्वरको नष्ट करता है ।

इति वकारादिकषायप्रकरणम्



अथ वकारादिचूर्णप्रकरणम्

(६५७३) वचादिचूर्णम् (१)

(व. से. । अतिसारा.)

वचाबिल्वकणा विश्वाकुलकं कुष्ठदीप्यकम् ।
सविडङ्गं जयेत्पीतमाममुष्णाम्बुना समम् ॥

बच, बेलगिरी, पीपल, सोंठ, पटोल, कूठ, अजमोद और बायबिड़ंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ पीनेसे आमातिसार नष्ट होता है ।

(मात्रा— ३ माशे ।)

(६५७४) वचादिचूर्णम् (२)

(च. सं । चि. अ. १९ ग्रहण्य.)

वचामतिविषां पाठां सप्तपर्णरसाञ्जनम् ।
श्योनाकोदीच्यकट्वङ्गवत्सकत्वग्दुरालभाः ॥
दार्वीं पर्पटकं मूर्वां यवानीं मधुशिग्रुकम् ।
पटोलपत्रं सिद्धार्थान्यूथिकं जातिपल्लवान् ॥
जम्ब्वाम्रबिल्वमध्यानि निम्बपत्रफलानि च ।
तद्रोगशममन्विच्छन्भूनिम्बाद्येन योजयेत् ॥

बच, अतीस, पाठा, सतौना वृक्षकी छाल, रसौत, अरलुकी छाल, सुगन्धबाला, अरलुकी छाल, कुड़ेकी छाल, धमासा, दारुहल्दी, पित्तपापड़ा, मूर्वा, अजवायन, लाल संहजनेकी छाल, पटोलपत्र, सफेद सरसों, जूहीके पत्ते, चमेलीके पत्ते, जामनकी गुठली, आमकी गुठली, बेलगिरी, नीमके पत्ते और फल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे भूनिम्बादिके साथ देनेसे संग्रहणी रोग नष्ट होता है।

(६५७५) **वचादिचूर्णम्** (३)

(वृ. मा. । स्त्री. ; व. से.)

वचोपकुञ्चिकाजाजीकृष्णावृषकसैन्धवम् ।
अजमोदायवक्षारचित्रकं शर्करान्वितम् ॥
पिष्ट्वा प्रसन्नयालोड्य खादेत्तद् घृतभर्जितम् ।
योनिपार्श्वार्तिहृद्रोग गुल्मार्शो विनिवृत्तये ॥

बच, काला जीरा, सफेद जीरा, पीपल, बासा, सेंधा, अजमोद, जवाखार, चीता और खांड समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे प्रसन्ना सुरामें मिला कर घीसे छौंक कर पीनेसे योनि शूल, पार्श्व पीड़ा, हृद्रोग, गुल्म और अर्शका नाश होता है।

(मात्रा—३ माशे ।)

(६५७६) **वचादिचूर्णम्** (४)

(व. से. । अपस्मारा. ; वृ. मा.)

यः खादेत् क्षीरभक्ताशी माक्षिकेन वचारजः ।
अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद् ध्रुवम् ॥

बचके चूर्णको शहदमें मिला कर सेवन करने और दूध भातका आहार करनेसे पुराना और भयंकर अपस्मार भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

(६५७७) **वचादिचूर्णम्** (५)

(ग. नि. । शूला. २३ ; वृ. नि. र.)

वचा सुवर्चला हिङ्गु कुष्ठमिन्द्रयवाः समम् ।
चूर्णमुष्णाम्भसा पीतं सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥

बच, सञ्चल (काला नमक), हींग, कूठ और इन्द्रजौ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके शूल नष्ट होते हैं।

(मात्रा—२ माशे ।)

(६५७८) **वचादिचूर्णम्** (६)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. २)

वचा यवानी च महौषधं च
शुष्कं च चूर्णं तनुलेपनाय ।
शस्तं वदन्ति ज्वरघर्मशान्तिं
करोति नूनं परिमर्दनेन ॥

बच, अजवायन और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

ज्वरमें अधिक पसीना आता हो तो वह इसकी मालिशसे अवश्य शान्त हो जाता है।

(६५७९) **वचादिचूर्णम्** (७)

(वा. भ. । उ. अ. १)

वचायष्टयाह्वसिन्धूत्थपथ्यानागरदीप्यकैः ।
शुद्धयते वाग्घविर्लीढैः सकुष्ठकणजीरकैः ॥

बच, मुलैठी, सेंधानमक, हर्र, सोंठ, अजमोद, कूठ, पीपल और जीरा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे वाणी शुद्ध होती है।

(६५८०) **वचादिचूर्णम्** (८)

(भै. र. । गुल्मा. ; ग. नि. । शूला. २३, गुल्मा. २५ ; वृ. मा. ; व. से. ; वृ. नि. र.)

वचाऽभया बिडं शुण्ठी हिङ्गु कुष्ठाग्निदीप्यकाः ।
द्वित्रिषट्चतुरेकाष्टसप्तपञ्चांशकाः क्रमात् ॥

चूर्णं मध्वादिभिः पीतं शूलानाहोदरापहम् ।
गुल्मार्शः श्वासकासघ्नं ग्रहणीपाण्डुरोगहृत् ॥

बच २ भाग, हर्र ३ भाग, बिड नमक ६ भाग, सोंठ ४ भाग, हींग १ भाग, कूठ ८ भाग, चीता सात भाग और अजमोद ५ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद आदि उचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे शूल, आनाह, उदर रोग, गुल्म, अर्श, श्वास, खांसी, ग्रहणी और पाण्डु नष्ट होता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(६५८१) वचादिचूर्णम् (९)

(भै. र. । गुल्मा. ; वृ. मा. ; व. से. ; धन्व. ; र. र.)

वचा हरीतकी हिङ्गु सैन्धवं साम्लवेतसम् ।
यवक्षारं यमानीश्च पिबेदुष्णेन वारिणा ॥
एतद्धि गुल्मनिचयं सशूलं सपरिग्रहम् ।
भिनत्ति सप्तरात्रेण वह्नेर्वृद्धिं करोति च ॥

बच, हर्र, हींग, सेंधानमक, अम्लबेत, जवाखार और अजवायन समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे गुल्म और उपद्रव युक्त शूल नष्ट होता तथा अग्नि दीप्त होती है ।

(मात्रा—१॥ माशा)

(६५८२) वचादिचूर्णम् (१०)

(यो. र । अतिसारा.)

वचा प्रतिविषा मुस्ता बीजानि कुटजस्य च ।
श्रेष्ठो वातातिसारे च योगोऽयं वैद्यपूजितः ॥

बच, अतीस, नागरमोथा और इन्द्रजौ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण वातातिसारमें उत्तम काम करता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(६५८३) वचादिचूर्णम् (११)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५; यो. चि. म. । अ. २)

वचाजमोदाक्रिमिजित् पलाश-
बीजं सठी रामठकं त्रिवृच्च ।
उष्णोदके तत् परिपिष्य पेयं
पाताय शीघ्रं शतधा कृमीणाम् ॥

बच, अजमोद, बायबिड़ंग, पलाशके बीज, कचूर, हींग और निसोत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलमें पीस कर पीनेसे कृमि मर कर निकल जाते हैं ।

(६५८४) वचादिचूर्णम् (१२)

(व. से. । बालरोगा.)

उत्सादनं वचाहिङ्गुयुक्तं स्कन्दग्रहे हितम् ।

बच और हींग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे मर्दन करनेसे स्कन्द ग्रह विकार नष्ट होते हैं ।

(६५८५) वचाद्यं चूर्णम् (१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

वचा वत्सकबीजं च कुष्ठं चित्रकमेव च ।
पिप्पली शृङ्गवेरं च पाठा कटुकरोहिणी ॥

यवानी च पटोलं च सैन्धवातिविषे तथा ।
हपुषा चाजगन्धा च शठी पौष्करमेव च ॥
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
ततो बिडालपदकं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥
गुल्मान् पञ्च च हृद्रोगान् कुक्षिशूलं च नाशयेत् ॥

बच, इन्द्रजौ, कूठ, चीता, पीपल, सोंठ, पाठा, कुटकी, अजवायन, पटोल, सेंधानमक, अतीस, हपुषा, बनयवानी, कचूर और पोखरमूल समान भाग ले कर सूक्ष्म चूर्ण बनावें ।

इसे १। तोलेकी मात्रानुसार उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे गुल्म, हृद्रोग और कुक्षिशूलका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा---३ माशे)

(६५८६) वचाद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । अतिसारा. २)

वचा त्रिकटुकं पाठा कुष्ठं च कटुरोहिणी ।
एतत्सोष्णजलं चूर्णं पिबेच्छ्लेष्मातिसारजित् ॥

बच, सोंठ, मिर्च, पीपल, पाठा, कूठ और कुटकी समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफातिसार नष्ट होता है ।

(मात्रा---३ माशे ।)

(६५८७) वचारसायनः

(वृ. मा. । रसायना.)

मासं वचामप्युपसेवमानाः
क्षीरेण तैलेन घृतेन वाऽपि ।
भवन्ति रक्षोभिरधृष्यरूपा
मेधाविनो निर्मलस्पष्टवाचः ॥

१ मास तक दूध, तेल या घीके साथ बचका चूर्ण सेवन करनेसे मेधावृद्धि होती और वाणी स्पष्ट हो जाती है तथा फिर राक्षस भी हानि नहीं पहुंचा सकते ।

(६५८८) वज्रक्षारः (१)*

(रसें. सा. सं. । गुल्मा. ; र. र. स. । उ. अ. १९ ; यो. र. । गुल्मा. ; यो. चि. म. । अ. २; र. रा. सु. । यकृ. ; वै. र. । गुल्म. ; यो. र. । यकृ. ; वृ. यो. त. । त. १०५ ; र. का. धे. । गुल्मा.)

सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् ।
टङ्कणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैर्भावयेदातपे त्र्यहम् ।
वेष्टयेदर्कपत्रेण रुद्ध्वा भाण्डपुटे पचेत् ॥
तं क्षारं चूर्णयित्वाथ त्र्यूषणं त्रिफला तथा ।

* इस प्रयोगके बहुतसे पाठान्तर हैं । किसी किसी ग्रन्थमें---(१) अजवायनके स्थानमें हल्दी पाठ है ।

(२) चूर्ण तैयार होने पर उसमें १ भाग नीबूका रस मिलानेको लिखा है ।

(३) अजवायन, जीरा और चीतेके स्थानमें चव, राई, बायबिड़ंग और हींग लिखा है ।

(४) आकके पत्तों पर अर्क मूलके रसका लेप करनेके लिये लिखा है ।

(५) त्रिकुटे आदि ९ द्रव्योंका चूर्ण क्षारसे आधा लिखा है ।

यमानी जीरको वह्निश्चूर्णमेषाञ्च कारयेत् ॥
सर्वचूर्णसमं क्षारं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
तच्चूर्णं मासयुगलं सलिलेन प्रयोजयेत् ॥
गुल्मे शूले तथाजीर्णे शोथे सर्वोदरेषु च ।
मन्दे वह्नावुदावर्ते प्लीह्नि चापि परं हितम् ॥
वातेऽधिके जलैः कोष्णैर्हितं पित्ताधिके घृतैः ।
गोमूत्रेण कफाधिक्ये काञ्जिकेन त्रिदोषजे ॥
वज्रक्षार इति ख्यातः प्रोक्तः पूर्वं पिनाकिना ।
सेवितो हरतेऽजीर्णं तथाजीर्णभवान् गदान् ॥

समुद्र नमक, सेंधा नमक, काच लवण, जवाखार, सञ्चल (काला नमक), सुहागा और सज्जीखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और फिर उसे आक तथा सेहुंड (थोहर) के दूधकी धूपमें ३-३ भावना दे कर सबका एक गोला बना कर सुखा लें। अब इस गोलेको आकके पत्तोंमें लपेट कर हाण्डीमें बन्द करके पुट दें और उसके स्वांग शीतल होने पर निकाल कर पीस लें।

तदनन्तर इस क्षारमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजवायन, जीरा और चीतेका समान भाग मिश्रित चूर्ण इस क्षारके बराबर मिला कर खरल करके रक्खें।

मात्रा--२ माशे।

साधारण अनुपान--पानी।

यह चूर्ण गुल्म, शूल, अजीर्ण, शोथ, हर प्रकारके उदर रोग, अग्निमांद्य, उदावर्त और प्लीहाको नष्ट करता है।

विशेष अनुपान--इसे वातकी अधिकतामें उष्ण जलके साथ, पित्तकी प्रधानतामें घृतके साथ, कफज रोगोंमें गोमूत्रके साथ और सन्निपातज रोगोंमें कांजीके साथ देना चाहिये।

यह चूर्ण अजीर्ण और उससे होने वाले समस्त विकारोंको नष्ट करता है।

(६५८९) **वज्रक्षारः** (२)

(वृ. यो. त. । त. ९८ ; र. का. धे. । गुल्मा. ; यो. त. । त. ४६)

क्षीरं वज्रतरूद्भवं दशपलं तावत्पयोऽप्यर्कजं
प्रत्येकं पलपञ्चकं च लवणं क्षारं च पञ्चात्मकम् ।
विंशत्यर्कदलैर्युतं पवितरोर्भिन्नैश्चतुर्भिः पलै-
र्मृद्भाण्डे गुरुमार्गतो गजपुटे वह्नौ विपक्वीकृतम् ॥
सञ्चूर्ण्याथ कटुत्रयं त्रिपलमप्येकं पलं रामठं
सर्वं वस्त्रपुनीतमेतदमले पात्रे सुखं स्थापयेत् ।
वज्रक्षार इति प्रणाशयति वै गुल्मानुदर्यान्नृणां
पीतस्तक्रयुतः प्रभातसमये कर्षप्रमाणं क्रमात् ॥
मन्दाग्निं सविषूचिकामरुचितामापाण्डुतां क्षीणतां
श्वासं कासमजीर्णशैत्यपवनव्याधीन्बलासो-
द्भवान् ।
वज्रक्षार इमान्निवार्य भिषजां कीर्त्तिं विधत्ते परां
मांसं द्रवयति स्फुटं घटिकयोर्द्वन्द्वे किमन्नं पुनः॥

थूहर (सेहुंड) का दूध ५० तोले, आकका दूध ५० तोले; सेंधा नमक, काला नमक, बिड नमक, काच नमक और समुद्र लवण तथा जवाखार, पलाश क्षार, सज्जी खार, तिल क्षार, और मुष्कक (मोखावृक्ष) का क्षार २५-२५ तोले, आकके पत्ते १०० तोले और थूहरके पत्ते २० तोले ले कर कूटने योग्य चीज़ोंको कूट कर सबको मृत्पात्रमें बन्द करके गजपुटमें पकावें और फिर

उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकालकर पीस कर उसमें १-१ पल (५-५ तोले) सोंठ, मिर्च, पीपल और हींगका चूर्ण मिला कर कपड़ेसे छान लें।

यह चूर्ण गुल्म, अग्निमांद्य, विसूचिका, अरुचि, पाण्डु, क्षीणता, श्वास, खांसी, अजीर्ण, शीत, वातव्याधि और कफ रोगोंको नष्ट करता है। यह चूर्ण वैद्योंकी कीर्तिमें वृद्धि करने वाला है।

यह मांस जैसे दुर्जर पदार्थको भी दो घड़ीमें ही गला देता है फिर अन्नकी तो बात ही क्या है।

मात्रा--१। तोला।

(**व्यवहारिक मात्रा**--१ माशा।)

अनुपान--तक्र।

(६५९०) वटशुङ्गादियोगः

(व. से. । विषा.)

वटशुङ्गं समञ्जिष्ठं जीवकर्षभकौ सिता ।
काश्मर्य्यमुदकं चैवं पानं मण्डलदष्टके ॥

बड़के अंकुर, मजीठ, जीवक, ऋषभक, मिश्री और खम्भारी समान भाग ले कर एकत्र पीस लें। इसे पानीके साथ खिलानेसे मण्डल सर्पका विष नष्ट हो जाता है।

(६५९१) वडवानलक्षारः

(र. चं. । उदरा.)

हिंगु त्रिकटु त्रिफला देवदारु निशाद्वयम् ।
भल्लातकं शिग्रुफलं कटुकीं चविकां वचाम् ॥
शुण्ठी तुल्यं पञ्चपटु तुल्यं दध्ना विपेषयेत् ।
अन्तर्धूमगतो दग्धः क्षारोऽयं वडवानलः ॥
त्रिदिनं मदिरायुक्तं पिबेद्वा काञ्जिकैः सह ।
मन्दोष्णेनाथवा पेयमुदरं गुल्मशूलनुत् ॥

हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, भिलावा, सहंजनेकी फली, कुटकी, चव, बच और सोंठ १-१ भाग तथा पांचो नमक (सेंधा, संचल, बिड नमक, काच लवण, सामुद्र लवण) सबके बराबर ले कर सबको कूट कर दहीमें पीसें और उसे हाण्डीमें बन्द करके (गजपुटमें) पकावें। तदनन्तर जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस लें।

इसे ३ दिन तक मदिरा, कांजी या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे उदर रोग, गुल्म और शूलका नाश हो जाता है।

(**मात्रा**---१ माशा।)

(६५९२) वडवानलचूर्णम् (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. ६; ग. नि. । चूर्णा. ३; व. से. । अजीर्णा.)

सैन्धवं पिप्पलीमूलं पिप्पली चव्यचित्रकम् ।
शुण्ठी हरीतकी चेति क्रमवृद्धानि चूर्णयेत् ॥
वडवानलनामैतच्चूर्णं स्यादग्निदीपनम् ॥

सेंधा १ भाग, पीपलामूल २ भाग, पीपल ३ भाग, चव्य ४ भाग, चीता ५ भाग, सोंठ ६ भाग और हर्र सात भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसके सेवनसे अग्नि दीप्त होती है।

(**मात्रा**--२-३ माशे।

अनुपान--उष्ण जल।)

(६५९३) **वडवानलचूर्णम् (२)**

(वै. र. । ज्वरा.)

हरीतकीमेषशृङ्गी पिप्पली त्रिवृता शिवा ।
सैन्धवं चित्रकं बीजं दाडिमस्य समं मतम् ॥
चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यं कासे श्वासे च विड्ग्रहे ।
वडवानलमेतद्धि बद्धकोष्ठज्वरापहम् ॥

हर्र, मेढासिंगी, पीपल, निसोत, आमला, सेंधा, चीता और अनारदाना समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, मलावरोध और ज्वर नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—४–५ माशे ।
अनुपान—उष्ण जल ।)

(६५९४) **वडवानलचूर्णम् (३)**

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

शिवाकरञ्जचित्रकं कणाजटाकटुत्रिकम् ।
सशर्करं समांशकं त्विदं हि वाडवाग्निकम् ॥

हर्र, करञ्ज बीज, चीता, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और खांड समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अजीर्णनाशक और अग्निवर्द्धक है ।

(**मात्रा**—२ माशे ।)

वडवानलचूर्णम् (४)
(वडवामुखचूर्णम्)

(व. से. । अजीर्णा. ; ग. नि. । चूर्णा. ३ ; वा. भ. । चि. अ. ८)

प्र. सं. ३९०१ पथ्यादि चूर्णम् (८) देखिये ।

(६५९५) **वत्सकादिचूर्णम्**

(व. से. । अजीर्णा.)

वत्सकं सप्तपर्णश्च करञ्जश्च दुरालभाम् ।
पाठामारग्वधं मूर्वां षड्ग्रन्थां मदनं दहेत् ॥
गोमूत्रेणोपयुक्तस्तु क्षारोऽयं वह्निदीपनः ।
शूले निरन्नकोष्ठेऽद्भिः कोष्णाभिश्चूर्णितं पिबेत् ॥

इन्द्रजौ, सतौनेकी छाल, करञ्ज, धमासा, पाठा, अमलतास, मूर्वा, बच और मैनफल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें एवं उसे हाण्डीमें बन्द करके भस्म कर लें ।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे अग्नि दीप्त होती है ।

इसे प्रातः काल निरन्न [खाली पेट] मन्दोष्ण जलके साथ सेवन करनेसे शूल नष्ट होता है ।

(मात्रा—१ माशा ।)

(६५९६) **वनकार्पासयोगः**

(व. से. । स्त्री रोगा.)

वनकार्पासिकेक्षूणां मूलं सौवीरकेण च ।
विदारीकन्दस्वरसं पिबेद्वा स्तन्यवर्द्धनम् ॥

बन कपासकी जड़ और ईखकी जड़ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे सौवीर कांजीके साथ पिलाने या विदारीकन्दका स्वरस पिलानेसे स्त्रियोंके स्तनोंमें दुग्धवृद्धि होती है ।

(६५९७) **वरादिचूर्णम्**

(वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

वरावेल्लकणाचूर्णं लीढं सन्माक्षिकैः सदा ।
हन्ति कुष्ठान् कृमीन्मेहान्नाडीव्रणभगन्दरान् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ, कृमि, प्रमेह, नाड़ीव्रण और भगन्दरका नाश होता है।

(६५९८) वरुणादिचूर्णम्

(व. से. । अश्मर्य.)

पलान्यष्टौ तु कुर्वीत क्षाराणां वरुणत्वचः ।
तदर्द्धं यावशूकात्तु ततोऽप्यर्धं गुडाद्घृतम् ॥
एकीकृत्य विमृद्यैतत्खादेत्कर्षप्रमाणतः ।
घर्माम्बुना सहावश्यं कृच्छ्राश्मरिविनाशनम् ॥

बरनेकी छालका क्षार ४० तोले, जवाखार २० तोले और गुड़ १० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर १० तोले घृतमें मिलावें।

मात्रा—१। तोला ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कठिन अश्मरी भी नष्ट हो जाती है।

(६५९९) वर्षाभ्वादिचूर्णम्

(वा. भ. । चि. अ. ३)

वर्षाभूशर्करारक्तशालितण्डुलजं रजः ।
रक्तष्ठीवी पिबेत्सिद्धं द्राक्षारसपयोघृतैः ॥

पुनर्नवा, खांड और लाल चावल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे द्राक्षाके रस, दूध और घीमें पकाकर पीनेसे रक्तष्ठीवी [खून थूकने वाले] खांसीके रोगीको लाभ होता है।

(६६००) वाराहीकन्दचूर्णम्

(न. मृ. । त. ३)

वाराहीकन्दभृङ्गाभ्यां पलं षोडशचूर्णितम् ।
किञ्चिदाज्येन भृष्टं च सितायुक्तं च कारयेत् ॥

वाराहीकन्द और भंगरेका चूर्ण १—१ भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर ज़रा घीमें भून लें और फिर उसमें समान भाग मिश्री मिलाकर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे वीर्यवृद्धि होती है।

(मात्रा—१ तोला । अनुपान—दूध ।)

(६६०१) वाराहीकन्दयोगः

(ग. नि. । सा. रसा. १)

वाराहीमूलचूर्णस्य शतं मधुयुतं क्रमात् ।
युवा स्यात्पयसा पीत्वा क्षीरान्नाज्यभुगाहतः ॥

वाराहीकन्दके १०० पल चूर्णको यथोचित मात्रानुसार शहदमें मिला कर दूधके साथ सेवन करने और दूध भात तथा घीका आहार करनेसे वृद्ध पुरुष भी युवाके समान हो जाता है।

(६६०२) वालकादियोगः

(ग. नि. । ज्वरा. १)

पिबति योऽम्बुयवासकवासकान्
सकटुकान् समहौषधधान्यकान् ।
क्वथितवारियुतान् ज्वरितस्य ते
व्यपनयन्त्यमलं च वितन्वते ॥

सुगन्धबाला, जवासा, बासा [अडूसा], कुटकी सोंठ और धनिया समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे पके हुवे पानीके साथ पीनेसे ज्वर नष्ट होता है।

(६६०३) विजयचूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. ३; च. द. ; भै. र. ; व. से. । अर्शा.)

त्रिकत्रयवचाहिङ्गुपाठाक्षारनिशाद्वयम् ।
चव्यतिक्ताकलिङ्गाग्निशताह्वालवणानि च ॥
ग्रन्थिबिल्वाजमोदा च गणोऽष्टाविंशतिर्मतः ।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥
ततो द्विमाषप्रमितं पिबेदुष्णेन वारिणा ।
एरण्डतैलयुक्तन्तु सदा लिह्यात्ततो नरः ॥
कासं हन्यात्तथा शोथमर्शांसि च भगन्दरम् ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च वातगुल्मं तथोदरम् ॥
हिक्काश्वासप्रमेहांश्च कामलां पाण्डुरोगताम् ।
आमान्वयमुदावर्त्तमन्त्रवृद्धिं गुदं कृमीन् ॥
अन्ये च ग्रहणीदोषा ये मया परीकीर्त्तिताः ।
महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥
अप्रजानान्तु नारीणां प्रजावर्द्धनमेव च ।
विजयो नाम चूर्णोऽयं कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, इलायची, तेजपात, बच, हींग, पाठा, जवाखार, हल्दी, दारुहल्दी, चव्य, कुटकी, इन्द्रजौ, चीता, सोया, पांचों नमक [सेंधा, सञ्चल, बिड नमक, काच लवण, सामुद्र लवण], पीपलामूल, बेलगिरी और अजमोद; ये २८ ओषधियां समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

मात्रा—२ माशे ।

अनुपान—उष्ण जल

इसे अण्डीके तेलमें मिला कर चाटना चाहिये। इसके सेवनसे खांसी, शोथ, अर्श, भगन्दर, हृच्छूल, पार्श्वशूल, वातगुल्म, उदररोग, हिक्का, श्वास, प्रमेह, कामला, पाण्डु, आम, उदावर्त, अन्त्रवृद्धि, कृमि, ग्रहणी विकार, महा ज्वर, भूतोन्माद और बन्ध्यत्व रोग नष्ट होता है ।

(६६०४) विजयायोगः

(वृ. नि. र. । वातज्वरा.)

भ्रष्टं तु विजयाचूर्णं मधुना निशि भक्षयेत् ।
निद्रानाशेतिसारे च ग्रहण्यां पावकक्षये ॥

भुनी हुई भांगके चूर्णको रात्रिके समय शहदमें मिला कर सेवन करनेसे निद्रानाश, अतिसार, संग्रहणी और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

(६६०५) विडङ्गतण्डुलचूर्णम्

(वा. भ. । कल्प. अ. २)

विडङ्गतण्डुलवरायावशूककणात्रिवृत् ।
सर्वेभ्योऽर्द्धन तल्लीढं मध्वाज्येन गुडेन वा ॥
गुल्मं प्लीहोदरं कासं हलीमकमरोचकम् ।
कफवातकृतांश्चान्यान्परिमार्ष्टि गदान्बहून् ॥

बायबिड़ंगके चावल, त्रिफला, जवाखार और पीपल १-१ भाग तथा निसोत सबसे आधा ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहद और घीके अथवा गुड़के साथ सेवन करनेसे गुल्म, प्लीहा, कास, हलीमक, अरुचि और कफ वातज अनेक रोग नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**—३ माशे ।)

(६६०६) **विडङ्गादिक्षारः**

(वृ. यो. त. । त. १०५ ; व. से. । उदरा. ; च. सं. । चि. अ. १८)

विडङ्गं चित्रकं सक्तून्सघृतं[1] सैन्धवं वचाम् ।
दग्ध्वा कपाले पयसा गुल्मप्लीहापहं पिबेत् ॥

बायबिडंग, चीता, सत्तू, घी, सेंधा, और बच समान भाग ले कर मृत्पात्रमें जला कर भस्म करें ।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे गुल्म और प्लीहाका नाश होता है ।

(६६०७) **विडङ्गादिचूर्णम्** (१)

(व. से. । उदरा.)

विडङ्गानि यवानी च चित्रकं चेति तत्समम् ।
द्विगुणं देवदारु च नागरं सपुनर्नवम् ॥
अथ चैतानि चूर्णानि गवां मूत्रेण पाययेत् ।
उदरीभूतमप्येवं प्लीहानं संप्रणाशयेत् ॥

बायबिडंग, अजवायन और चीता १-१ भाग, तथा देवदारु, सोंठ और पुनर्नवा २-२ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे प्रवृद्ध प्लीहा नष्ट हो जाती हैं ।

(**मात्रा**--३ माशे ।)

(६६०८) **विडङ्गादिचूर्णम्** (२)

(वृ. मा. ; व. से. । अजीर्णा. ; वृ. नि. र.)

विडङ्गभल्लातकचित्रकामृता[2]
सनागरा तुल्यगुडेन सर्पिषा ।
लिहन्ति ये मन्दहुताशना
नरा भवन्ति ते वाडवतुल्यवह्नयः ॥

बायबिडंग, शुद्ध भिलावा, चीता, गिलोय और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे समान भाग गुड़में मिला कर घीके साथ सेवन करनेसे अग्नि अत्यन्त दीप्त हो जाती है ।

(**मात्रा**--३ माशे ।)

(६६०९) **विडङ्गादिचूर्णम्** (३)

(र. र. । हिक्काश्वासा.)

विडङ्गपिप्पली चैलात्वचश्च प्रतिकार्षिकम् ।
त्रिकर्षं मरिचस्यापि नागराच्चतुष्पलम् ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या कर्षमात्रं च भक्षयेत् ।
कासश्वासज्वरप्लीहपाण्डुरोगक्षयापहम् ॥

बायबिडंग, पीपल, इलायची और दालचीनी १।-१। तोला, काली मिर्च ३।। तोले और सोंठ २० तोले तथा मिश्री सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें ।

मात्रा--१। तोला ।

इसके सेवनसे कास, श्वास, ज्वर, प्लीहा, पाण्डु और क्षयका नाश होता है ।

(**मात्रा**--४-५ माशे ।)

(६६१०) **विडङ्गादिचूर्णम्** (४)

(व. से. । कृम्य.)

लिह्यात्क्षौद्रेण वैडङ्गं चूर्णं कृमिविनाशनम् ।
सुरसादिगणं वापि सर्वथैवोपयोजयेत् ॥

शहदके साथ बायबिडंगका चूर्ण अथवा सुरसादिगण सेवन करनेसे कृमि रोग नष्ट होता है ।

---

१ शुण्ठीं सघृतामिति पाठान्तरम् ।

१ ग. नि. में घृतके स्थानमें अर्कमूल लिखा है (ग. नि. । उदरा ३२)

२ चित्रकाभयाः इति पाठान्तरम्

(६६११) **विडङ्गादिचूर्णम्** (५)

(ग. नि. । छर्दि. १४ ; व. से. ; वृ. मा.)

विडङ्गत्रिफलाविश्वचूर्णं मधुयुतं जयेत् ।
विडङ्गप्लवशुण्ठीनामथवा श्लेष्मजां वमिम् ॥

बायबिड़ंग, त्रिफला और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे, अथवा बायबिड़ंग, नागरमोथा और सोंठके चूर्णको शहदके साथ सेवन करनेसे कफज छर्दि नष्ट होती है ।

(६६१२) **विडङ्गादिचूर्णम्** (६)

(वृ. नि. र. । संग्रहण्य.)

विडङ्गयवानी विष्टम्भे पिबेदुष्णेन वारिणा ।

बायबिड़ंग और अजवायन समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे ग्रहणी रोगान्तर्गत विष्टम्भ नष्ट होता है ।

(६६१३) **विडङ्गादिचूर्णम्** (७)

(वा. भ. । चि. अ. १९)

"माणिभद्र मोदकः" प्रयोग सं. ५१७४ देखिये।

(६६१४) **विडङ्गादिचूर्णम्** (८)

(यो. र. । बाल.)

विडङ्गान्यजमोदा च पिप्पलीतण्डुलानि च ।
एषामालिह्य चूर्णानि सुखतप्तेन वारिणा ॥

बायबिड़ंग, अजमोद और पीपलके चावल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करानेसे बालकोंका अतिसार नष्ट होता है ।

(६६१५) **विडङ्गादिचूर्णम्** (९)

(व. से. । हृद्रोगा.)

कृमिजे च पिबेन्मूत्रं विडङ्गामयसंयुतम् ।
हृदि स्थिताः पतन्त्येव ह्यधस्तात्कृमयो नृणाम् ॥

कृमिजन्य हृद्रोगमें बायबिड़ंग और कूठका चूर्ण गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे निम्न मार्गसे कृमि निकल जाते हैं ।

(६६१६) **विडङ्गादिचूर्णम्** (१०)

(यो. र. । कृम्य.)

विडङ्गं पारिभद्राग्रं ब्रह्मबीजं पृथक्पिबेत् ।
मधुना कृमिनाशाय निम्बं वा हिङ्गुना युतम् ॥

बायबिड़ंग, नीमकी कोंपल और ढाक (पलाश) के बीजोंका चूर्ण पृथक् पृथक् शहदके साथ सेवन करनेसे या नीमकी पत्ती और हींग मिला कर सेवन करनेसे कृमि नष्ट हो जाते हैं ।

(६६१७) **विडङ्गादिचूर्णम्** (११)

(व. से. । शोथा.)

विडङ्गातिविषादारुनागरेन्द्रयवावचाः ।
उष्णाम्बुना पिबेच्छोथी ह्यक्षमात्रं सहोषणम् ॥

बायबिड़ंग, अतीस, देवदारु, सोंठ, इन्द्रजौ, बच और काली मिर्च समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे शोथ नष्ट होता है ।

मात्रा—१ तोला ।

(व्यवहारिक मात्रा—३–४ माशे । **)**

(६६१८) **विडङ्गादिचूर्णम्** (१२)

(वृ. यो. त. । त. ६४)

विडङ्गातिविषामुस्तादारुपाठाकलिङ्गकम् ।
मरिचेन समायुक्तं शोफातिसारनाशनम् ॥

बायबिड़ंग, अतीस, नागरमोथा, देवदारु पाठा, इन्द्रजौ और काली मिर्च समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण शोथातिसारको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—३-४ माशे।)

(६६१९) **विडङ्गादिचूर्णम्** (१३)

(भै. र. । नाडीव्रणा. ; ग. नि. । कुष्ठा. ३६; यो. र. ; वृ. नि. र. ; वृ. मा.)

विडङ्गत्रिफलाकृष्णाचूर्णं लीढं समाक्षिकम् ।
हन्ति कुष्ठक्रिमीन् मेहनाडीव्रणभगन्दरान् ॥

बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला और पीपल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ, कृमि, प्रमेह, नाड़ीव्रण और भगन्दरका नाश होता है।

(**मात्रा**—३-४ माशे।)

(६६२०) **विडङ्गादियोगः**

(ग. नि. । सा. रसा. १)

बिडङ्गभल्लातकनागराणि
येऽश्नन्ति सर्पिर्मधुसंयुतानि ।
जरानदीं रोगतरङ्गिणीं ते
लावण्ययुक्ताः पुरुषास्तरन्ति ॥

बायबिड़ंग, शुद्ध भिलावा और सोंठ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे जरा व्याधिका नाश हो कर सौन्दर्यकी वृद्धि होती है।

(६६२१) **विडङ्गाद्यं चूर्णम्** (१)

(ग. नि. । चूर्णा. ३)

विडङ्गं चित्रकं मुस्ता ग्रन्थिकं देवदारु च ।
वराङ्गचविकाजाजीबिभीतकफलानि च ॥
शुण्ठी खदिरसारश्च मेषशृङ्गी सपिप्पली ।
भार्गी शृङ्गी तथा छत्रा कर्चूरं मरिचानि च ॥
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
उष्णेन वारिणा पीतं हन्ति श्लेष्मगलामयान् ॥
हृद्रोगांश्चैव कासांश्च कण्ठरोगांश्च दारुणान् ।
अन्ये च कफजा रोगा विलयं यान्ति तत्क्षणात् ॥

बायबिड़ंग, चीता, नागरमोथा, पीपलामूल, देवदारु, दालचीनी, चव, जीरा, बहेड़ा, सोंठ, खैरसार (कत्था), मेढासिंगी, पीपल, भरंगी, काकड़ासिंगी, सौंफ, कचूर और काली मिर्च समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कफज गल रोग, हृद्रोग, खांसी, भयंकर कण्ठ रोग और अन्य कफ रोग नष्ट होते हैं।

(६६२२) **विडङ्गाद्यं चूर्णम्** (२)

(ग. नि. । चूर्णा. ३; वा. भ. । चि. अ. ३; च. सं. । चि. अ. १२)

विडङ्गं नागरं रास्ना पिप्पली हिङ्गु सैन्धवम् ।
भार्गी क्षारश्च तच्चूर्णं पिबेद्धि घृतमात्रया ॥
सकफेऽनिलजे कासे हिक्कायामनिलार्तिषु ॥

बायबिड़ंग, सोंठ, रास्ना, पीपल, हींग, सेंधानमक, भरंगी और जवाखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे कफवातज कास, हिचकी और वातव्याधिका नाश होता है।

(६६२३) विदार्यादिचूर्णम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५०)

विदारिका गोक्षुरमूसलीनां
धात्रीफलं स्यात्सहसैन्धवानाम् ।
समानि चैतानि च मागधीनां
युक्तं सिताढ्यं पयसा पिबेच्च ॥

विदारीकन्द, गोखरु, मूसली, आमला, सेंधा-नमक और पीपल समान भाग तथा खांड सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे वीर्य वृद्धि होती है ।

(**मात्रा**—९ माशे ।)

(६६२४) विदार्यादियोगः (१)

(ग. नि. । वाजीकरणा.)

चूर्णं विदार्या बहुशः स्वरसेनैव भावितम् ।
कृष्णाधात्रीफलरजो द्राक्षामधुकसंयुतम् ॥
शर्करामधुसर्पिर्भ्यां लीढ्वा योऽनु पयः पिबेत् ।
स नरोऽशीति वर्षोऽपि युवेव परिहृष्यति ॥

पीपल, आमला, मुनक्का और मुलैठी समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे बिदारीकन्दके रसकी बहुतसी भावनाएं दे कर सुखा लें । तद-नन्तर उसमें उसके बराबर मिश्री मिला कर रक्खें ।

इसे शहद और घीके साथ चाटकर दूध पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे ८० वर्षका वृद्ध पुरुष भी तरुणके समान स्त्रीसमागममें समर्थ हो जाता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(६६२५) विदार्यादियोगः (२)

(ग. नि. । वाजीकरणा. ; यो. त. । त. ८० ; वृ. मा.)

विदारीकन्दचूर्णं तु घृतेन पयसा नरः ।
उदुम्बरसमं खादन्वृद्धोऽपि तरुणायते ॥

विदारी कन्दके चूर्णको घीमें मिला कर दूधके साथ सेवन करनेसे वृद्ध पुरुष भी तरुणके समान हो जाता है ।

मात्रा—१। तोला ।

(६६२६) विशालादिचूर्णम् (१)

(यो. र. ; व. से. । उदरा.)

विशालाशङ्खिनीदन्तीत्रिवृन्नीलीफलत्रयम् ।
निशा विडङ्गं कम्पिल्लं मूत्रेणोदरवान्पिबेत् ॥

इन्द्रायणकी जड़, शंखाहोली, दन्तीमूल, निसोत, नील, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, बाय-बिड़ंग और कमीला समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे गोमूत्रके साथ पीनेसे उदर रोग नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—२-३ माशे ।)

(६६२७) विशालादिचूर्णम् (२)

(वा. भ. । चि. अ. १६ ; च. द. । पाण्डु. ८; ग. नि. । पाण्डु. ७)

विशालां कटुकां मुस्तां कुष्ठं दारुकलिङ्गकः ।
कर्षांशा द्विपिचुर्मूर्वा कर्षार्द्धांशा घुणप्रिया ॥
पीत्वा तच्चूर्णमम्भोभिः सुखैर्लिह्यात्ततो मधु ।
पाण्डुरोगं ज्वरं दाहं कासं श्वासमरोचकम् ॥
गुल्मानाहामवातांश्च रक्तपित्तं च तज्जयेत् ॥

इन्द्रायणकी जड़, कुटकी, नागरमोथा, कूट, देवदारु और इन्द्रजौ १।-१। तोला; मूर्वा २॥ तोले और अतीस ७॥ माशे ले कर चूर्ण बनावें।

इसे जलके साथ पी कर थोड़ा शहद चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे पाण्डु, ज्वर, दाह, खांसी, श्वास, अरुचि, गुल्म, आनाह, आमवात और रक्तपित्तका नाश होता है।

(मात्रा—३-४ माशे।)

(६६२८) विशालादियोगः (१)

(व. से. । विषा.)

विशालाङ्कोटमूलञ्च तिलमूलं सिता मधु।
घृतेनाखुविषं हन्ति पीतमात्रञ्च दुस्तरम् ॥

इन्द्रायणकी जड़, अङ्कोटकी जड़, तिलकी जड़ और खांड समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहद और घीमें मिला कर पीनेसे दुस्तर मूषकविष नष्ट होता है।

(६६२९) विशालादियोगः (२)

(व. से. । वृद्धच.)

गन्धर्वतैलसम्मिश्रं विशालामूलजं रजः।
क्षीरेण पीतं सप्ताहाद्वृद्धिं हन्ति न संशयः ॥

इन्द्रायणकी जड़के चूर्णको अरण्डीके तेलमें मिला कर दूधके साथ पीनेसे १ सप्ताहमें वृद्धि रोग (अन्त्रवृद्धि) का नाश हो जाता है।

(मात्रा—१-१॥ माशा।)

(६६३०) विश्वभेषजचूर्णम्

(वृ. नि. र. । अजीर्णा.)

विश्वभेषजं हिङ्गुटङ्कणं मागधी च सौवर्चलं त्विदम्।
शिग्रुपादजैर्भावितं रसैः शूलनाशनं क्षुत्प्रबोधनम् ॥

सोंठ, हींग, सुहागा, पीपल और काला नमक (सञ्चल) समान भाग ले कर चूर्ण बनावें, एवं उसे सहंजनेकी जड़के रसकी भावना दे कर सुखा लें।

इसके सेवनसे शूल नष्ट होता और क्षुधावृद्धि होती है।

(मात्रा—१॥-२ माशे।)

(६६३१) विश्वादिचूर्णम् (१)

(व. से. । अजीर्णा.)

शुण्ठीचूर्णसमायुक्तं यवक्षारं समालिहेत्।
सर्पिषा प्रातरुत्थाय ततो वह्निप्रदीपनम् ॥

सोंठका चूर्ण और जवाखार समान भाग लेकर एकत्र मिलावें।

इसे प्रातःकाल घीमें मिला कर चाटनेसे अग्नि दीप्त होती है।

(मात्रा—१ माशा।)

(६६३२) विश्वादिचूर्णम् (२)

(वै. जी. । वि. ४)

विश्वाकणाशिवाचूर्णः ससितः समधुः स्मृतः।
नस्यवद्विश्वगुडयोर्हिक्काधिकारकारकः ॥

सोंठ, पीपल और आमला १-१ भाग तथा मिश्री ३ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे शहदमें मिलाकर चाटनेसे हिचकी नष्ट होती है।

सोंठ और गुड़की नस्य लेनेसे भी हिचकी रुक जाती है।

(६६३३) विश्वादिचूर्णम् (३)

(यो. र. । स्त्री रोगा.)

पीतं विश्वमजाक्षीरैर्नाशयेद्विषमज्वरम्।

सेंठका चूर्ण बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे विषम ज्वर नष्ट होता है ।

(मात्रा—२ माशे ।)

(६६३४) विश्वादिचूर्णम् (४)

(वृ. नि. र. । शूला.)

शुण्ठी सुवर्चलं हिङ्गुपाठामूलोष्णकं जलम् ।
निपीतं नाशयत्येव सर्वशूलानि देहिनाम् ॥

सेंठ, सञ्चल (काला नमक), हींग, पाठाकी जड़, काली मिर्च और सुगन्ध बाला समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण समस्त प्रकारके शूलोंको नष्ट करता है ।

(मात्रा—२–३ माशे ।)

(६६३५) विश्वादिचूर्णम् (५)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १२)

विश्वदुःस्पर्शभृङ्गीसठीपुष्करं
दारुभार्गीकणामुस्तरास्नायुतम् ।
शर्करायुक्तमेतं हितं चूर्णितं
कासनिःश्वासवातोद्भवं हन्ति वै ॥

सेंठ, धमासा, काकड़ासिंगी, कचूर, पोखरमूल, देवदारु, भरंगी, पीपल, नागरमोथा और रास्ना १–१ भाग तथा खांड सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण वातज खांसी और श्वासको नष्ट करता है ।

(मात्रा—६ माशे ।)

(६६३६) विश्वाद्यं चूर्णम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ८८)

विश्वाजमोदरजनीद्वयसैन्धवोग्रा-
यष्ट्याह्वकुष्ठमगधोद्भवजीरकाणाम् ।
चूर्णं प्रभातसमये लिहतः ससर्पि-
र्वाग्देवता निवसति स्वयमेव वक्त्रे ॥

सेंठ, अजमोद, हल्दी, दारुहल्दी, सेंधानमक, बच, मुलैठी, कूठ, पीपल और जीरा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे प्रातः काल घीमें मिलाकर चाटनेसे बुद्धि बढ़ती है ।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(६६३७) विश्वाद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । ग्रहण्य. ३)

विश्वा वचा चित्रकदेवदारु-
विडङ्गकुष्ठातिविषं च पथ्या ।
सपिप्पलीमूलमिदं समुस्त-
मुष्णाम्बुपीतं ग्रहणीगदघ्नम् ॥

सेंठ, बच, चीता, देवदारु, बायबिडंग, कूठ, अतीस, हर्र, पीपलामूल और नागरमोथा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(६६३८) विष्णुक्रान्तायोगः

(ग. नि. । रक्तपित्ता. ८)

क्षीरान्नभुक् पिबेद्यत्नाद्विष्णुक्रान्तां सशर्कराम् ।
ऊर्ध्वरक्तार्दितः सम्यग्गव्येन पयसा सह ॥

विष्णुक्रान्ता (कोयल) के चूर्णमें खांड मिलाकर गोदुग्धके साथ सेवन करने और दूध भातका आहार करनेसे ऊर्ध्वगत रक्तपित्त नष्ट होता है।

वृद्धगङ्गाधरचूर्णम्

प्र. सं. १२३४ गङ्गाधर चूर्णम् (वृद्धम्) देखिये।

(६६३९) वृद्धदारुकरसायनः

(वृ. मा. । रसायना. ; च. द. । रसायना. ६५ ; न. मृ. । त. ३)

वृद्धदारुकमूलानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
शतावर्या रसेनैव सप्तवारांश्च भावयेत् ॥
अक्ष मात्रं तु तच्चूर्णं सर्पिषा सह योजयेत् ।
मासमात्रोपयोगेन मतिमाञ्जायते नरः ॥
मेधावी स्मृतिमांश्चैव वलिपलितवर्जितः ॥

विधारेकी जड़के चूर्णको शतावरके रसकी सात भावना दे कर रक्खें।

इसे १ मास तक शहदके साथ सेवन करनेसे मति, मेधा और स्मृतिकी वृद्धि तथा बलिपलितका नाश होता है।

मात्रा—१। तोला।

(६६४०) वृद्धदार्वादिचूर्णम्

(ग. नि. । ऊरुस्तम्भा. २१)

पिबेदुष्णाम्बुना वृद्धदारुनागरचूर्णकम् ।
ऊरुस्तम्भसमुद्भूतविकारव्यथयाऽन्वितः ॥

विधारकी जड़ और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे।

इसे उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भकी पीड़ा शान्त होती है।

(मात्रा—३ माशे।)

(६६४१) वृषद्वादशकचूर्णम्

(व. से. । अजीर्णा.)

पिप्पल्यतिविषा हिङ्गुर्नागरेन्द्रयवावचा ।
पाठाजमोदकटुकावृषसौवर्चलाभयाः ॥
वृषद्वादशकं चूर्णमजीर्णानाहगुल्मनुत् ।
भगन्दरश्वासकासमूत्रकृच्छ्रार्शसां हितम् ॥

पीपल, अतीस, हींग, सोंठ, इन्द्रजौ, बच, पाठा, अजमोद, कुटकी, बासा, सञ्चल (काला नमक) और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे सेवन करनेसे अजीर्ण, आनाह, गुल्म, भगन्दर, श्वास, खांसी, मूत्रकृच्छ्र और अर्शका नाश होता है।

(मात्रा—२ माशे।)

(६६४२) वृषादिचूर्णम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ५०)

वृषं बृहत्यौ मगधात्रिकण्टाः
तथात्मगुप्ता स शतावरी च ।
सशर्करं गोपयसा घृतेन
पानं नराणां प्रकरोति बीजम् ॥

ऋषभक, कटेली, बड़ी कटेली, पीपल, गोखरु, कौंचके बीज और शतावर १-१ भाग तथा खांड सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घीमें मिला कर गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे वीर्यवृद्धि होती है।

(मात्रा—६ माशे।)

(६६४३) बृहच्छर्करासमचूर्णम्

(व. से. । कासा.)

लवङ्गजातीफलपिप्पलीनां
भागान् प्रकल्प्याक्षसमानमीषाम् ।
पलार्धमात्रं मरिचस्य दद्या-
त्पलानि चत्वारि महौषधस्य ॥
सितासमं चूर्णमिदं प्रसह्य
रोगानिमानाशु बलान्निहन्यात् ।
कासज्वरारोचकमेहगुल्म-
श्वासाग्निमान्द्यं ग्रहणीप्रदोषान् ॥

लौंग, जायफल और पीपल १।-१। तोला; काली मिर्च २॥ तोले और सोंठ २० तोले तथा खांड सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें।

यह चूर्ण खांसी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, श्वास, अग्निमांद्य और ग्रहणी-विकारको नष्ट करता है।

(मात्रा—५ माशे)

(६६४४) बृहत्तालीसादिचूर्णम्

(हा. स. । स्था. ३ अ. १२)

तालीशं त्रिफला प्रियङ्गु मगधामूलं च मुस्ता सठी
दार्व्येलादलनागकेसरलवङ्गानां तथा नागरा ।
कृष्णा कोलकबालकं सचविका मूर्वा विषा कर्कटं
द्राक्षा कुष्ठनिशाग्निवत्सकत्रयं गोकण्टतिक्ता तथा ॥
वृक्षाम्लं च सदाडिमाम्लकरसं पक्वानि बद-
राणि च
एतेषां समभागचूर्णविहितं योज्या समा शर्करा।
योज्यं चार्धपलं निहन्ति क्षतजं कासं तथा
श्वासकं
पाण्डौ कामलामेहशोषगुदजे शस्तं सदा यक्ष्मि-
णाम् ॥

तालीस पत्र, हर्र, बहेड़ा, आमला, फूल-प्रियंगु, पीपलामूल, नागरमोथा, कचूर, दारुहल्दी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, लौंग, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, सुगन्धबाला, चव, मूर्वा, अतीस, काकड़ासिंगी, मुनक्का, कूठ, हल्दी, चीता, इन्द्रजौ, बासा, गोखरु, कुटकी, इमली, खट्टे अनारका रस तथा पके बेर समान भाग एवं खांड सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें।

मात्रा—२॥ ताले।

(व्यवहारिक मात्रा—६ माशे)

इसके सेवनसे क्षतज खांसी, श्वास, पाण्डु, कामला, प्रमेह, शोष, अर्श और यक्ष्माका नाश होता है।

(६६४५) बृहदग्निमुखचूर्णम्

(भै. र.; च. द.; र. र. । अग्निमान्द्या.; भा. प्र.; वृ. मा.; व. से. । अजीर्णा.; ग. नि. । चूर्णा.)

द्वौ क्षारौ चित्रकं पाठा करञ्जं, लवणानि च ।
सूक्ष्मैला पत्रकं[2] भार्गी क्रमिघ्नं[3] हिङ्गु पुष्करम् ॥
शठी दार्वी त्रिवृन्मुस्तं वचा चेन्द्रयवास्तथा ।

१. विडङ्गमिति पाठान्तरम् ।
२. तगरमिति पाठान्तरम्
३. कारवीति पाठान्तरम् ।

धात्री जीरकवृक्षाम्लं श्रेयसी चोपकुञ्चिका ॥
अम्लवेतसमम्लीका यवानी सुरदारु च[१] ।
अभयातिविषे श्यामा[२] हपुषारग्वधं समम् ॥
तिलमुष्ककशिग्रूणां कोकिलाक्षपलाशयोः ।
क्षाराणि लोहकिट्टञ्च तप्तं गोमूत्रसेचितम् ॥
समभागानि सर्वाणि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
मातुलुङ्गरसेनैव भावयेच्च दिनत्रयम् ॥
दिनत्रयन्तु शुक्तेन आर्द्रकस्वरसेन च ।
अत्यग्निकारकं चूर्णं प्रदीपाग्निसमप्रभम् ॥
उपयुक्तं विधानेन नाशयत्यचिराद्गदान् ।
अजीर्णकमथोगुल्मं प्लीहानं गुदजानि च ॥
उदराण्यन्त्रवृद्धिश्च अष्ठीलां वातशोणितम् ।
प्रणुदत्युल्बणान्रोगान्नष्टवह्निश्च दीपयेत् ॥
समस्तव्यञ्जनोपेतं भक्तं दत्त्वा सुभाजने ।
दापयेदस्य चूर्णस्य बिडालपदमात्रकम् ॥
गोदोहमात्रात्तत्सर्वं द्रवीभवति सोष्मकम् ॥

यवक्षार, सज्जीखार, चीता, पाठा, करञ्ज (पाठान्तरके अनुसार बायबिड़ंग), पांचों नमक, (सेंधा नमक, काला नमक, सामुद्र लवण, बिड लवण, काच लवण), छोटी इलायची, तेजपात (पाठान्तरके अनुसार तगर), भरंगी, बायबिड़ंग, (पाठान्तरके अनुसार काला जीरा), हींग, पोखरमूल, कचूर दारुहल्दी, निसोत, नागरमोथा, बच, इन्द्रजौ, आमला, जीरा, तिन्तड़ीक, गजपीपल, काला जीरा, अम्लबेत, इमली, अजवायन, देवदारु (पाठान्तरके अनुसार अनार, त्रिकुटा, भिलावा और अजमोद भी), हर्र, अतीस, फूलप्रियंगु, (पाठान्तरके अनुसार चव), हपुषा, अमलतासका गूदा; इनका चूर्ण तथा तिल, मुष्कक (मोखा वृक्ष), सहंजना, तालमखाना, और पलाशका क्षार एवं गोमूत्रमें शुद्ध किया हुवा मण्डूर समान भाग लेकर चूर्ण बनावें तथा उसे बिजौरेके रस, शुक्त और अदरकके रसमें ३-३ दिन घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

यह अत्यन्त अग्नि दीपक है और इसके सेवनसे अजीर्ण, गुल्म, प्लीहा, अर्श, उदर, अन्त्रवृद्धि, अष्ठीला, वातरक्त और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

मात्रा—१। तोला ।

(व्यवहा. मा.—१॥ माशा)

वृहद्गङ्गाधरचूर्णम्

(भै. र. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. १२३३ गङ्गाधर चूर्णम् (मध्यम) तथा प्र. सं. १४९८ गङ्गाधर चूर्णम् (वृहद्) देखिये ।

वृहद्दाडिमाष्टकचूर्णम्

(शा. सं. । खं. २ अ. ६; वृ. नि. र. । अति.)

प्र. सं. २९५८ देखिये ।

(६६४६) वृहद्वाराहीकन्दचूर्णम्

(न. मृ. । त. ३)

वाराहीकन्दं शृङ्गाटं कन्दं मार्जारमेव च ।
चूर्णं सूक्ष्मं कृतं सर्वं पलमानं पृथक् पृथक् ॥

---

१. अम्लबेतसमम्लीका दाडिमं सकटुत्रयमिति पाठान्तरम् ।

इसके पश्चात् कई ग्रन्थोंमें यह पाठ अधिक है "भल्लातकाजमोदं च यवानी सुरदारु च ।"

२. 'चव्या' इति पाठभेदः ।

घृतभृष्टं तु तच्चूर्णं पश्चादेतन्महौषधम् ।
चातुर्जातं लवङ्गं च पिप्पली नागरं तुगा ॥
एतान्द्विकर्षकान्भागान्सिता सर्वसमानिका ।
पलार्द्धं भक्षयेन्नित्यंससितं महिषी पयः ॥
दिनान्ते च पिबेन्नित्यं क्लीवत्वनाशनं परम् ।
प्रमेहव्याधिशमनं वीर्यस्तम्भनकारकम् ॥

बाराहीकन्द, सिंघाड़ा और बिलाईकन्द; इनका चूर्ण ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर घीमें भूनें और फिर उसमें दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, लौंग, पीपल, सोंठ और बंसलोचनका चूर्ण २॥-२॥ तोले तथा मिश्री सबके बराबर मिला कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२॥ तोले ।

इसे सायंकालको मिश्रीयुक्त भैंसके दूधके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे क्लीवता और प्रमेह नष्ट हो कर स्तम्भनशक्ति बढ़ती है ।

(६६४७) बृहद्वृद्धदारुकसमं चूर्णम् (वृद्धदारचूर्णम्)

(च. द. ; व. से. ; भै. र. ; ग. नि. । श्लीपदा. २; र. र. ; वृ. मा. । श्लीपदा. ; वृ. यो. त. । त. १०९)

त्रिकटुत्रिफलाचव्यदार्वीवरुणगोक्षुरम् ।
अलम्बुषां गुडूचीं च समभागानि चूर्णयेत् ॥
सर्वेषां चूर्णमाहृत्य वृद्धदारस्य तत्समम् ।
काञ्जिकेन तु तत्पेयं कर्षमात्रप्रमाणतः ॥
जीर्णे चापरिहारं स्याद्भोजनं सार्वकामिकम् ।
नाशयेच्छ्लीपदं स्थौल्यमामवातं च दारुणम् ॥
कुष्ठगुल्मारुचिहरं वातश्लेष्मरुजापहम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव, दारुहल्दी, बरनेकी छाल, गोखरु, मुण्डी और गिलोय, समान भाग तथा बिधारामूल सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें ।

मात्रा—१। तोला ।

(व्यवहा. मा.—५-६ माशे ।)

अनुपान—कांजी ।

इसके सेवनसे श्लीपद, स्थूलता, आमवात, कुष्ठ, गुल्म, अरुचि और वातकफज रोग नष्ट होते हैं ।

औषध पच जाने पर बिना किसी विशेष परहेज़के यथारुचि आहार कर सकते हैं ।

बृहन्नवायसचूर्णम्

(ग. नि. । चूर्णा. ; यो. त. । त. २७ ; यो. र. । क्षय)

प्र. सं. ३६०९ देखिये ।

(६६४८) बृहन्नागरादिचूर्णम्

(यो. र. । वात गुल्मा.)

नागरार्धपलं पिष्टं द्वे पले लुञ्चितस्य च ।
तिलस्यैकं गुडपलं क्षीरेणोष्णेन पाययेत् ॥
वातगुल्ममुदावर्तं योनिशूलं च नाशयेत् ॥

सोंठका चूर्ण २॥ तोले, छिलके रहित तिल १० तोले और गुड़ ५ तोले ले कर सबको एकत्र मिला लें।

इसे गरम दूधके साथ सेवन करनेसे वातज गुल्म, उदावर्त और योनिशूल नष्ट होता है।

(मात्रा—१। तोला।)

वृहन्नायिकाचूर्णम्

प्र. सं. ६३६१ लाई चूर्णम् (७) देखिये।

वृहल्लवङ्गाद्यं चूर्णम्

प्र. सं. ६३५२ तथा ६३५३ लवङ्गाद्यं चूर्णम् (वृहद्) देखिये।

वृद्धलवङ्गाद्यं चूर्णम्

(वृ. नि. र.। अतीसारा.)

प्र. सं. ६३५० लवङ्गादि चूर्णम् (वृद्ध) देखिये।

वृहल्लाई चूर्णम्

प्र. सं. ६३६१ लाई चूर्णम् (७) देखिये।

(६६४९) वैश्वानरचूर्णम् (१)

(भै. र. ; वृ. मा. ; व. से.। आमा. ; धन्व.। आमा. ; यो. त.। त. २४ ; च. द.। आमा. २५ ; वृ. यो. त.। त. ९२ ; ग. नि.। चूर्णा. ३)

माणिमन्थस्य भागौ द्वौ यमान्यास्तद्वदेव हि।
भागास्त्रयोऽजमोदाया नागराद् भागपञ्चकम्॥
दश द्वौ च हरीतक्याः श्लक्ष्णचूर्णीकृताः शुभाः।
मस्त्वारनालतक्रेण सर्पिषोष्णोदकेन वा॥
पीतं जयत्यामवातं गुल्मं हृद्बस्तिजान् गदान्।
प्लीहानं ग्रन्थिशूलादीनर्शांस्यानाहमेव च॥
विबन्धं वातजान् रोगांस्तथैव हस्तपादजान्।
वातानुलोमनमिदं चूर्णं वैश्वानरं स्मृतम्॥

सेंधा नमक २ भाग, अजवायन ५ भाग, सोंठ ५ भाग और हर्र १२ भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे मस्तु, आरनाल, तक्र, घी या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे आमवात, गुल्म, हृद्रोग, बस्तिरोग, प्लीहा, ग्रन्थि, शूल, अर्श, अफारा, मलावरोध, वातजरोग, एवं हाथ और पैरोंके रोग नष्ट होते हैं। यह चूर्ण वातानुलोमन है।

(मात्रा—३ माशा।)

(इस योगमें अजमोदके स्थानमें भी अजवायन ही डाली जाती है। इसी लिये ५ भाग अजवायन लिखी गई है।)

नोट—गदनिग्रहके मतानुसार इसमें ४ भाग पीपल और होनी चाहिये। (ग. नि.। चूर्णा. ३)

(६६५०) वैश्वानरचूर्णम् (२)

(ग. नि.। चूर्णा. ३)

लवण यवानी दीप्यक
कणनागरमुत्तरोत्तरं वृद्धम्।
सर्वसमांशा पथ्या चूर्णो वैश्वानरः साक्षात्॥

सेंधा नमक १ भाग, अजवायन २ भाग, लाल चित्रक ३ भाग, पीपल ४ भाग और सोंठ ५ भाग एवं हर्र १५ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

यह चूर्ण अत्यन्त अग्निवर्धक है ।

(मात्रा—५-६ माशे । अनुपान उष्ण जल ।)

वैश्वानरचूर्णम् (३)

(यो. त. । त. २४)

प्र. सं ६२१६ "लघु वैश्वानर चूर्णम्" देखिये ।

(६६५१) व्योषादिचूर्णम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ६५ ; भै. र. । ज्वराति.; यो. र. । अतिसारा. ; धन्व.; व. से. ; वृ. नि. र. ; च. द.)

व्योषं वत्सकबीजञ्च निम्बभूनिम्बमार्कवम् ।
चित्रकं रोहिणीं पाठां दार्वीमतिविषां समाम् ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं तत्तुल्या वत्सकत्वचः ।
सर्वमेकत्र संयोज्य पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥
सक्षौद्रं लिहेदेतत् पाचनं ग्राहिभेषजम् ।
तृष्णारुचिप्रशमनं ज्वरातीसारनाशनम् ॥
प्रमेहं ग्रहणीदोषं गुल्मं प्लीहानमेव च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च श्वयथुञ्च विनाशयेत् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, इन्द्रजौ, नीमकी छाल, चिरायता, भंगरा, चीता, कुटकी, पाठा, दारु हल्दी और अतीस १-१ भाग तथा कुड़ेकी छाल सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ चाटकर तण्डुल जल (चावलोंका पानी) पीना चाहिये ।

यह चूर्ण पाचन और ग्राही है ।

इसके सेवनसे तृष्णा, अरुचि, ज्वरातिसार, प्रमेह, संग्रहणी, गुल्म, प्लीहा, कामला, पाण्डु और शोथका नाश होता है ।

(६६५२) व्योषादिचूर्णम् (२)

(ग. नि. । स्वरभंगा. १३)

व्योषं हरीतकी क्षारश्चव्यं भार्गी सचित्रका ।
लिह्याच्चूर्णं च मधुना मद्यं तीक्ष्णं च शीलयेत् ॥

स्वरभंग रोगमें सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, जवाखार, चव, भरंगी और चीता समान भाग ले कर, चूर्ण बनाकर शहदके साथ सेवन करना तथा तीक्ष्ण मद्य पीना चाहिये ।

(६६५३) व्योषादिचूर्णम् (३)

(ग. नि. । छर्द. १४)

व्योषं त्रिफला दुरालभा
जम्ब्वाम्रास्थि यवाग्रजं त्रिवृत् ।
लीढ्वा मधुना निवारये-
च्छर्दिं श्लेष्मविकारजां नरः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, धमासा, जामन और आमकी गुठली, जवाखार और निसोत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे शहदके साथ चाटनेसे कफज छर्दि नष्ट होती है ।

(आधा आधा माशा चूर्ण थोड़ी थोड़ी देर बाद चाटना चाहिये ।)

(६६५४) व्योषादिचूर्णम् (४)

(वृ. मा. । मुख. ; भै. र. । नासा. ; च. द. । नासा. ५७; ग. नि. । चूर्णा. ३, नासा. ४; व. से. ; धन्व.)

व्योषचित्रकतालीसतिन्तिडीकाम्लवेतसम् ।
सचव्यजाजितुल्यांशमेलात्वक्पत्रपादिकम् ॥
व्योषादिकमिदं चूर्णं पुराणगुडसंयुतम् ।
पीनसश्वासकासघ्नं रुचिस्वरकरं परम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, तालीसपत्र, तिन्तड़ीक, अम्लबेत, चव और जीरा ४–४ भाग तथा इलायची, दालचीनी और तेजपात १–१ भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे पुराने गुड़में मिला कर सेवन करनेसे पीनस, श्वास और खांसीका नाश तथा रुचि और स्वरकी वृद्धि होती है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(६६५५) व्योषादिचूर्णम् (५)

(वृ. मा. । मुखरोगा. ; व. से.)

व्योषक्षाराभयावह्निचूर्णमेतत्प्रघर्षणम् ।
उपजिह्वोपशान्त्यर्थमेभिस्तैलं विपाचयेत् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, हर्र और चीता समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उपजिह्वा पर मलना लाभदायक है ।

इन्हीं ओषधियोंसे तेल सिद्ध करके प्रयुक्त करना भी हितकारी है ।

(६६५६) व्योषादिचूर्णम् (६)

(व. से. ; धन्व. ; यो. र. ; वृ. मा. । अर्शो. ; च. द. । अर्शो. ५ ; वृ. यो. त. । त. ६९)

व्योषाग्न्यरुष्करविडङ्गतिलाभयानां
चूर्णं गुडेन सहितं तु सदोपयोज्यम् ।
दुर्नामशोफगरकुष्ठशकृद्विबन्धा-
नग्नेर्जयत्यबलतां कृमिपाण्डुतां च ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, शुद्ध भिलावा, बायबिड़ंग, तिल और हर्र समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे गुड़में मिलाकर सेवन करनेसे अर्श, शोथ, गरविष, कुष्ठ, मलावरोध, अग्निमांद्य, कृमि और पाण्डुका नाश होता है ।

(मात्रा—३–४ माशे ।)

(६६५७) व्योषादिचूर्णम् (७)

(व. से. । ग्रहण्य.)

व्योषं साम्रत्वचं वत्सं चूर्णयेत्तण्डुलाम्बुना ।
निपीतं ग्रहणीदोषकामलापाण्डुरोगजित् ॥
प्रमेहारुच्यतीसारगुल्मशोथज्वरापहम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, आमकी छाल और कुड़ेकी छाल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे तण्डुलोदक (चावलोंके पानी) के साथ सेवन करनेसे संग्रहणी, कामला, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, अतिसार, गुल्म, शोथ और ज्वरका नाश होता है ।

(६६५८) व्योषादिचूर्णम् (८)

(यो. त. । त. ७)

व्योषवरैला मुस्तविडङ्गं
पत्रमखिलसममत्र लवङ्गम् ।

सर्वेभ्यो द्विरस्त्रिवृताकन्दं
प्रबलमलहरमुष्णकबन्धम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, इलायची, नागरमोथा, बायबिड़ंग और तेजपात १–१ भाग तथा लौंग सबके बराबर एवं निसोत इन सबसे २ गुनी ले कर चूर्ण बनावें।

इसे उष्ण जलके साथ पीनेसे विरेचन हो कर पेट साफ़ हो जाता है।

(मात्रा—६ माशे।)

(६६५९) व्योषादिचूर्णम् (९)

(यो. र. । ग्रहण्य. ; वृ. नि. र.)

व्योषं दीप्याजमोदाकृमि-
रिपुदहनं रामठं चाश्वगन्धं
सिन्धूत्थं जीरके द्वे रुचक-
फलयुतं धान्यकं तुल्यभागम् ।
भृङ्गीचूर्णं लवङ्गं घृतमधु-
सहितं शाणमात्रं च दद्या-
द्दीप्तिं पुष्टिं च कान्तिं बल-
मपि कुरुते नाशयेत्सङ्ग्रहण्याम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, अजवायन, अजमोद (इसके स्थानमें भी अजवायन), बायबिड़ंग, चीता, हींग, असगन्ध, सेंधा, सफेद और काला जीरा, बिजौरे नीबूका गूदा, धनिया, अतीस और लौंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

मात्रा—५ माशे।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे संग्रहणी नष्ट होती और अग्नि, पुष्टि, कान्ति तथा बलकी वृद्धि होती है।

(६६६०) व्योषादिचूर्णम् (१०)

(ग. नि. । राजय. ९)

व्योषचव्यविडङ्गानि चूर्णीकृत्वा लिहेन्नरः ।
सर्पिर्मधुभ्यां मुच्येत क्षयरोगाज्जितेन्द्रियः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चव और बायबिड़ंग समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे जितेन्द्रिय रोगीका क्षय रोग नष्ट हो जाता है।

(६६६१) व्योषाद्यं चूर्णम् (१)

(व. से. । बालरो.)

गुडोदकश्च क्वथितं व्योषसैन्धवसंयुतम् ।
सुखोष्णं पाययेद्बालं कासरोगप्रशान्तये ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

गुड़को पानीमें पकाकर उसमें यह चूर्ण मिलाकर मन्दोष्ण करके बालकको पिलानेसे खांसी नष्ट होती है।

(६६६२) व्योषाद्यं चूर्णम् (२)

(ग. नि. । चूर्णा. ३; यो. चि. म. । अ. २)

सव्योषं क्रिमिजित्सपञ्चलवणं साजाजिकं साभयं
सक्षारं सहुताशनं सचविकं सग्रन्थिकं सत्रिवृत् ।
एतच्चूर्णमुदश्विता प्रपिबतामुष्णेन वा वारिणा
वह्निर्वृद्धिमुपैति सर्वगदजिद्भ्राजिष्णुतामावहेत् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, पांचों नमक (सेंधा, संचल, बिड नमक, सामुद्र लवण, काच लवण), जीरा, हर्र, जवाखार, चीता, चव, पीप-

लामूल और निसोत समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे उदश्वित (आधे पानी वाले तक्र) या उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे अग्नि दीप्त होती और समस्त रोगोंका नाश हो कर तेजोवृद्धि होती है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

(६६६३) व्योषाद्यं चूर्णम् (३)

(यो. र. । अजीर्णा.)

व्योषैलाहिङ्गुभार्गीविड
लवण यवक्षारपाठायवानी-
चिञ्चात्वग्भस्मचव्यं दहन-
करिकणात्वक्पटुग्रन्थ्यजाजी ।
एतच्चूर्णं घृताढ्यं त्रिदिव-
समशनाद्धन्यते रोगजातं
विश्वं वैश्वानरोऽसौ दहति
सरभसं किं पुनर्भुक्तमन्नम ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, इलायची, हींग, भरंगी, बिडलवण, जवाखार, पाठा, अजवायन, इमलीकी छालकी भस्म, चव, चीता, गजपीपल, दालचीनी, सेंधा नमक, पीपलामूल और जीरा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे घीमें मिला कर केवल तीन दिन सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट हो कर जठराग्नि अत्यन्त प्रबल हो जाती है ।

(मात्रा—३ माशे ।)

इति वकारादिचूर्णप्रकरणम्



अथ वकारादिगुटिकाप्रकरणम्

वचादिवटी

(वृ. नि. र. । शूला.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

वज्रकगुटिका

(ग. नि. ; र. का. धे. । पाण्डु)

रस प्रकरणमें देखिये ।

वज्रवटी

(भै. र. ; र. रा. सु. । कुष्ठा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६६४) वटप्ररोहादिगुटिका (१)

(यो. चि. म. । अ. २ ; यो. र. । तृष्णा. ; वृ. मा. ; ग. नि. । तृष्णा. १६)

वटप्ररोहं मधुकुष्ठमुत्पलं
सलाजचूर्णैर्गुटिका प्रकल्पयेत् ।
सशर्करा सा वदने च धारिता
तृषां प्रवृद्धामपि हन्ति सत्वरम् ॥

बड़के अंकुर, मुलैठी, कूठ, नीलोत्पल और धानकी खील तथा खांड; इनका चूर्ण समान भाग

ले कर सबको पानीके साथ एकत्र पीसकर गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली मुंहमें रखनेसे प्रवृद्ध तृषा भी शीघ्रही नष्ट हो जाती है।

(६६६५) वटप्ररोहादिगुटिका (२)

(यो. र. । तृष्णा.)

वटप्ररोहयष्ट्याह्वकणामधुकृता वटी ।
मुखस्था चिरकालोत्थां तृष्णां हन्यात्सुदुस्तराम् ॥

बड़के अंकुर, मुलैठी और पीपल समान भाग ले कर सबके चूर्णको शहदमें मिला कर गोलियां बनावें।

इनमेंसे १-१ गोली मुंहमें रखनेसे चिरकालीन तृषा भी नष्ट हो जाती है।

वडवामुखीगुटी

(र. र. स. । उ. अ. १६)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६६६) वत्सकाद्या गुटिका

(ग. नि. । अतिसारा. २; व. से.)

वत्सकस्यामृताश्च द्वे पले प्रस्थमौदकम् ।
श्रपयित्वा रसे तस्मिन् पादशेषेऽवतारिते ॥
अष्टौ पलानि शक्रस्य यावच्चूर्णीकृतानि च ।
मुद्रापाकं विदित्वा तु यथा चाग्न्यवतारितम् ॥
सद्यः सर्वातिसारांश्च सर्वांश्च ग्रहणीगदान् ।
नाशयेद्दीपयेच्चाग्निं कृष्णात्रेयस्य शासनात् ॥

कुड़ेकी छाल और गिलोय १०-१० तोले ले कर दोनोंको एकत्र कूट कर २ सेर पानीमें पकावें और आधा सेर शेष रहने पर छान कर उसमें ४० तोले (आधा सेर) इन्द्रजौका चूर्ण मिला कर पुनः पकावें। जब उंगलीसे दबानेसे उस पर उंगलीका निशान पड़ने लगे तो औषधको निकाल कर गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे हर प्रकारका अतिसार और ग्रहणी रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। ये वटी अग्निको भी दीप्त करती हैं।

(**मात्रा**—२-२॥ माशे)

वत्सनाभाद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटिका ४)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६६७) वल्लभा गुटिका

(न. मृ. । त. ५)

बहुफली मोचरसं मुसल्यौ करहाटकम् ।
तुगा च मर्कटीबीजं कोकिलाक्षमुटङ्गणम् ॥
गोक्षुरं ह्यमृतासत्त्वं जपापुष्पं लिसोरकम् ।
मस्तगी जातिकोशं च लवङ्गं वंशजातकम् ॥
एतानि समभागानि सिता च द्विगुणा भवेत् ।
पाकं कृत्वा गुटीर्बद्ध्वा कोलमात्रप्रमाणतः ॥
सायंकाले भक्षयित्वा पिबेद्दुग्धं तदोपरि ।
नपुंसकत्वरोगघ्नं वाजीकरणमुत्तमम् ॥

बहुफली, मोचरस, दो प्रकारकी (सफेद और काली) मूसली, अकरकरा, बंसलोचन, कौंचके बीज, तालमखाना, उटङ्गणके बीज, गोखरु, गिलोयका सत, जपापुष्प, लिसौड़ा, मस्तगी, जावत्री, लौंग और बंसलोचन समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। तदनन्तर सबसे २ गुनी खांडकी

चाशनी बनाकर उसमें यह चूर्ण मिला कर साढे सात सात माशेकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली सायंकालके समय खा कर दूध पीना चाहिये।

यह गुटिका नपुंस्कता-नाशक और उत्तम वाजीकरण है।

(६६६८) वाजीकरणगुटिका

(न. मृ. । त. ५)

करवीरस्य बीजानि बृहतीफलमेव च ।
वृद्धदारस्य बीजानि वानरीबीजमूलकम् ॥
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
सम्मर्द्य ताम्बूलरसे वटी वल्लयुगं कृतम् ॥
एकैकं भक्षितं पुंसां नपुंसकगदापहम् ।
वीर्यवृद्धिकरं पुष्टं बलवाजीकरं परम् ॥

अर्जुनके बीज, कटेलीके फल, विधारेके बीज, कौंचके बीज और कौंचकी जड़, समान भाग ले कर बारीक चूर्ण बनावें और उसे पानके रसमें घोट कर ६-६ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे नपुंसकताका नाश और बल, वीर्य तथा पुष्टिकी वृद्धि होती है। यह गुटिका वाजीकरण भी है।

वाजीकरो वटकः

(र. र. रसा. ख. । उप. ६)

रस प्रकरणमें देखिये।

वाजीकरो वटकः

मिश्र प्रकरणमें देखिये।

वातनाशिनी वटी

(र. चि. । स्त. ९)

रस प्रकरणमें देखिये।

(६६६९) वानरी गुटिका

(न. मृ. । त. २; यो. र.)

बीजानि हि कपिकच्छोःकुडव-
मितानि तु स्वेदयेच्छनकैः ।
प्रस्थे गोभवदुग्धे दुग्धं यावद्भवेद्गाढम् ॥
त्वग्रहितानि च कृत्वा सूक्ष्मं सम्पेषयेत्तानि ।
पिष्टिकायाश्च वटिकाः कृत्वा गव्ये पचेदाज्ये ॥
द्विगुणितशर्करया ता वटिकाः सपक्कया लेप्याः।
वटिका माक्षिकमध्ये मज्जनयोगेऽखिलाः स्था-
प्याः ॥
पञ्चटङ्कमितास्तास्तु प्रातः सायं च भक्षयेत् ।
अनेन शीघ्रद्रावी यो यश्च स्यात्पतितो ध्वजः ॥
सोपि प्राप्नोति सुरते सामर्थ्यमतिवाजिवत् ।
नानेन सदृशं किंञ्चिद्द्रव्यं वाजीकरं परम् ॥

२० तोले कौंचके बीजोंको २ सेर गोदुग्धमें मन्दाग्नि पर पकावें; जब दूध गाढा हो जाय तो बीजोंको बारीक पीस लें। तदनन्तर उस पिट्ठीकी छोटी छोटी (१-१ तोलेकी) टिकिया बना कर उन्हें गायके घीमें तल लें एवं उन्हें दो गुनी खांडकी चाशनीमें डाल दें (बालूशाहीकी भांति टिकियों पर चाशनी चढ़ावें) जब उन पर खांड अच्छी तरह चढ़कर सूख जाय तो उन्हें पत्थर, कांच आदिके पात्रमें शहदमें डुबा कर रक्खें।

इनमेंसे २-२ टिकिया नित्य प्रति प्रातः

सायम् सेवन करनेसे शीघ्रपतन और नपुंस्कता नष्ट होती है ।

इनके समान वाजीकर अन्य पदार्थ नहीं है ।

वारिभक्तवटिका

(र. र. । अग्निमां)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६७०) वार्त्ताकुगुटिका

(धन्व. ; व. से. ; च. द. ; भै. र. । ग्रहण्य. ; वृ. मा. । अजीर्णा. ; ग. नि. । गुटिका. ४)

चतुः पलं स्नुहीकाण्डात् त्रिपलं लवणत्रयात् ।
वार्त्ताकुकुडवश्चार्कादष्टौ द्वे चित्रकात्पले ॥
दग्धानि वार्त्ताकुरसे गुटिकाः भोजनोत्तराः ।
भक्तं भुक्तं पचन्त्याशु कासश्वासार्शसां हिताः ॥
विसूचिकाप्रतिश्यायहृद्रोगघ्नाश्च ताः मताः ॥

स्नुही (थूहर) का डंडा २० तोले, सेंधा, संचल और बिड लवण १५-१५ तोले, बैंगन २० तोले, अर्कमूलकी छाल ४० तोले और चीतामूल १० तोले ले कर सबको एकत्र जलाकर बैंगनके रसमें खरल करके (१॥-१॥ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें भोजन करनेके पश्चात् खाना चाहिये ।

इनके सेवनसे भोजन शीघ्र पचता और खांसी श्वास, अर्श, विसूचिका, प्रतिश्याय और हृद्रोगका नाश होता है ।

विजयवटी

(रसें. सा. सं. । हिकाश्वासा. ।)

रस प्रकरणमें देखिये ।

विजया गुटिका

रस प्रकरणमें देखिये ।

विजया वटिका (बृहद्)

(र. चं. । पाण्ड्वा)

रस प्रकरणमें देखिये ।

विजया वटिका

(रसे. सा. । ग्रहण्य)

रस प्रकरणमें देखिये ।

विडङ्गसाराद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

प्र. सं. ५१७४ " माणिभद्रमोदकः " देखिये ।

(६६७१) विडङ्गादिमोदकः (१)

(व. से. । कुष्ठा.)

विडङ्गं बाकुची कृष्णा पथ्या वाराही लाङ्गली ।
त्रिफला सगुडा चैषां मोदकाः कुष्ठनाशकाः ॥

बायबिडंग, बाबची, पीपल, हर्र, बाराही कन्द, कलियारीकी जड़, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग ले कर सबके चूर्णको समान भाग गुड़में मिलाकर (६-६ माशेके) मोदक बनालें ।

इनके सेवनसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(६६७२) विडङ्गादिमोदकः (२)

(ग. नि. । शूला. २३ ; वृ. नि. र. । शूला. ; व. से. ; वृ. मा. । परिणाम शूला.; यो. र.; वृ. यो. त. । त. ९५)

विडङ्गतण्डुलव्योषं त्रिवृद्दन्ती[1]च चित्रकः ।

---

[1] बृहद्दन्तीति पाठान्तरम्

सर्वाण्येतानि चाहृत्य सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥
गुडेन मोदकान् कृत्वा भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ।
उष्णोदकानुपानं तु दद्यादग्निविवर्धनम् ॥
जयेत्त्रिदोषजं शूलं परिणामसमुद्भवम् ॥

बायबिडंगके चावल, सोंठ, मिर्च, पीपल, निसोत, दन्तीमूल और चीता; इनके समान-भाग मिश्रित चूर्णको सबके बराबर गुड़में मिलाकर (६-६ माशेके) मोदक बना लें ।

अनुपान—उष्ण जल ।

इनके सेवनसे अग्निकी वृद्धि होती और त्रिदोषज परिणाम शूल नष्ट होता है ।

(६६७३) विडङ्गादिवटिका

(धन्व. । व्रणा.)

विडङ्गं त्रिफला व्योषचूर्णं गुग्गुलुना सह ।
सर्पिषा वटिकां कृत्वा खादेत् वा हितभोजनः॥

बायबिडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर लेकर सबको एकत्र मिलाकर घी डालकर कूटें और (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

ये गोलियां व्रणमें हितकारी हैं ।

विरेचनीगुटिका

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६७४) विश्वादिवटी

(वैद्या. । विषय २२)

विश्वावचाहिङ्गुमरीचजीरा-
मृतानलैर्मार्कवतोयपिष्टैः ।
कृता वटीयं चणकप्रमाणा
शूलाग्निमान्द्यानिलरोगहन्त्री ॥

सोंठ, बच, हींग, काली मिर्च, जीरा, गिलोय और तालीसपत्र; इनका समान भाग चर्ण लेकर सबको एकत्र मिला कर भंगरेके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे शूल, अग्निमांद्य और वातज रोगोंका नाश होता है ।

विश्वादिवटी

(यो. र. । अतिसा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

विषगुटिका

(ग. नि. । गुटिका ४)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६७५) वीर्यस्तम्भकरी वटिका

(र. प्र. सु. । अ. १३)

लवङ्गं शुद्धकर्पूरं जातीपत्रं फलं तथा ।
कुङ्कुमं स्वर्णबीजं च धूर्तपर्णं प्रसूनकम् ॥
मूलं त्वक् चाब्धिशोषस्य सर्वाण्येकत्र मर्दयेत् ।
गोदुग्धे शोधनीयं च भागमेकं प्रकल्पयेत् ॥
भृङ्गीपत्रभवं चूर्णं भागैकं स्वर्णगैरिकम् ।
भावनां पोस्ततोयेन एकविंशतिसङ्ख्यया ॥
कारयेन्मतिमान् वैद्यो वीर्यस्तम्भकरा वटी ॥

लौंग, शुद्ध कपूर, जावत्री, जायफल, केसर, धतूरेके बीज, धतूरेके पत्ते, धतूरेके फूल एवं समन्दर सोखकी जड़ और छाल १-१ भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे गोदुग्धमें घोटकर सुखा लें

तदनन्तर एक भाग यह चूर्ण, और १-१ भाग भांगके पत्तों और सेनागेरुका चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर उसे पोस्तके रसकी २१ भावना दें और (१-१ माशेकी) गोलियां बनालें।

इनके सेवनसे वीर्यस्तम्भन होता है।

(६६७६) वीर्यस्तम्भकवटिका

(र. चं. । वाजीकरणा.)

नागफेनयुता जातीपत्री नागलता समा ।
सम्मर्द्य यामयुग्मं तु कारयेद् गुटिकोत्तमा ॥
सुगन्धैर्मिश्रिता देया दुग्धं तदनुपाययेत् ।
नरः स दशनारीणां भवेत्तृप्तिकरो रतौ ॥

अफीम, जावत्री, और पानोंका चूर्ण समान भाग ले कर सबको २ पहर एकत्र घोटकर (चनेके बराबर) गोलियां बना लें।

इनमेंसे एक गोली (कस्तूरी या कपूरसे) सुगन्धित करके दूधके साथ खानेसे पुरुष १० स्त्रियोंको तृप्त कर सकता है।

(६६७७) वीर्यस्तम्भकवटी

(यो. र.)

जातीफलं लवङ्गं च जातीपत्रं सुकुङ्कुमम् ।
सूक्ष्मैला चाहिफेनं त्वाकारकरभं तथा ॥
प्रत्येकं कर्षमात्राणि कर्पूरं शाणमात्रकम् ।
नागवल्लीदलरसैर्वटा चणकसन्निभा ॥
वीर्यस्तम्भिनी ह्येषा बलवर्णाग्निदीपनी ।

जायफल, लौंग, जावत्री, केसर, छोटी इलायची, अफीम और अकरकरा १।-१। तोले तथा कपूर ३॥। माशे ले कर सबको पानोंके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलियां बना लें।

ये गोलियां वीर्यस्तम्भक और बल, वर्ण तथा अग्निकी वृद्धि करने वाली हैं।

वीर्यस्तम्भनी गुटिका

(न. मृ. । त. ५ ; वृ. यो. त. । त. १४७ ; र. चं. । वाजीकरणा.)

प्र. सं. २०१७ " **जाती फलादि वटी** " देखिये।

वृकोदरी वटी

रस प्रकरणमें देखिये।

(६६७८) वृद्धदारुमोदकम्

(वै. र. । अर्शो. ; शा. सं. । खं. २ अ. ७ वृ. नि. र. । ग्रहण्य.)

वृद्धदारुकभल्लातं शुण्ठी चूर्णेन योजयेत् ।
सगुडो मोदको हन्यात् षड्विधार्शः कृतां रुजम् ॥

बिधारा, भिलावा, और सोंठका चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ सबके बराबर लेकर एकत्र मिलाकर (६-६ माशेके) मोदक बनावें।

इनके सेवनसे ६ प्रकारका अर्श रोग नष्ट होता है।

वृद्धिवाधिकावटिका

(भै. र. ; भा. प्र. । वृद्ध्य.]

रस प्रकरणमें देखिये।

(६६७९) वृष्यगुटिका

(च. सं. । चि. अ. २ वाजीकर.)

घृतपात्रं शतगुणे विदारीस्वरसे पचेत् ।
सिद्धं पुनः शतगुणे गव्ये पयसि साधयेत् ॥
शर्करायास्तुगाक्षीर्य्याः क्षौद्रस्येक्षुरकस्य च ।
पिप्पल्याः साजडायाश्च भागैः पादांशिकैर्युतम् ॥

गुटिकाः कारयेद्वैद्यो यथा स्थूलमुदुम्बरम् ।
तासां प्रयोगात् पुरुषः कुलिङ्ग इव हृष्यति ॥

८ सेर घीको १०० गुने विदारीकन्दके रसमें पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें। तदनन्तर उसे १०० गुने गायके दूधके साथ पकावें और फिर उसमें खांड, बंसलोचनका चूर्ण, शहद, तालमखानेका चूर्ण, पीपलका चूर्ण और कौंचके बीजोंका चूर्ण घीसे चौथाई मिलाकर बड़े गूलरके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे कामशक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है।

बृहज्जीरकादिमोदकः

(भै. र. । ग्रहण्य.)

रस प्रकरणमें देखिये।

बृहत्कामेश्वरमोदकः

(र. र. । वाजी.)

रस प्रकरणमें देखिये।

बृहत् खदिरवटिका

(भै. र.; र. र.; वृ. मा.; च. द. । मुखरोगा.)

प्र. सं ५१७० "**महा खदिरवटिका**" देखिये।

(६६८०) बृहदङ्कोलवटकः

(ग. नि. । गुटिका.)

सदार्व्यङ्कोलपाठानां मूलं तु कुटजस्य च ।
शाल्मलेरथ निर्यासो धातकीरोध्रदाडिमम् ॥
पिष्टाऽक्षसम्मितान् कृत्वा वटकांस्तण्डुलाम्भसा ।
तानेव मधुसंयुक्तानेकैकान् प्रातरुत्थितः ॥
पिबेदत्यन्तमापन्नो विधिसर्गेण मानवः ।
अङ्कोलवटका नाम्ना सर्वातीसारनाशनाः ॥

दारुहल्दी, अङ्कोलकी जड़, पाठामूल, कुड़ेकी जड़की छाल, मोचरस, धायके फूल, लोध और अनारदाना समान भाग ले कर पानीके साथ पीस कर १।-१। तोलेके वटक बना लें।

इनमेंसे एक एक वटक प्रातःकाल शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके अतिसार नष्ट होते हैं।

अनुपान—चावलोंका पानी।

बृहद्रसेन्द्रगुटिका

प्र. सं. ६१२३ तथा ६१२४ देखिये

बृहद्रसोनपिण्डः

(वृ. यो. त. । त. ९३.)

प्र. सं. ५१७३ महा रसोनपिण्डः देखिये।

बृहन्महोदधिवटी

महोदधि वटी (बृहत्) देखिये।

बृहन्माणकादिगुटिका

प्र. सं. ५१७६ मानकादि गुटिका (बृहद्) देखिये।

बृहन्मेथीमोदकः

प्र. सं. ५१८५ मेथी मोदकः (बृहत्) देखिये।

बृहल्लवङ्गादिवटी

प्र. स. ६३५१ लवङ्गादिवटी देखिये।

(६६८१) बृंहणी गुटिका

(च. । चि. स्था. अ २)

शरमूलेक्षुमूलानि काण्डेक्षुं सेक्षुवालिकाम् ।
शतावरीं पयस्यां च विदारीं कण्टकारिकाम् ॥
जीवन्तीं जीवकं मेदां वीराञ्चर्षभकं बलाम् ।
ऋद्धिं गोक्षुरकं रास्नामात्मगुप्तां पुनर्नवाम् ॥
पृथक् त्रिपलिकान् कृत्वा माषाणामाढकं नवम् ।
विपाचयेज्जलद्रोणे चतुर्भागञ्च शेषयेत् ॥
तत्र पेष्याणि मधुकं द्राक्षा फल्गु च पिप्पली ।
आत्मगुप्ता मधूकं च खर्ज्जूरं च शतावरी ॥
विदार्यामलकेक्षूणां रसस्य च पृथक् पृथक् ।
सर्पिषश्चाढकं दद्यात् क्षीरद्रोणञ्च तद्भिषक् ॥
साधयेद् घृतशेषञ्च सुपूतं योजयेत् पुनः ।
शर्करायास्तुगाक्षीर्य्याश्चूर्णैः प्रस्थोन्मितैर्भिषक् ॥
पलैश्चतुर्भिर्मागध्याः पलेन मरिचस्य च ।
त्वगेलाकेशराणाञ्च चूर्णैरर्द्धपलोन्मितैः ॥
मधुनः कुडवाभ्याञ्च द्वाभ्यां तत् कारयेद्भिषक् ।
पलिका गुडिकाः कृत्वा ता यथाग्नि प्रयोजयेत् ॥
एष वृष्यः परं योगो बृंहणो बलवर्द्धनः ।
अनेनाश्व इवोदीर्णो लिङ्गमर्पयते स्त्रियाम् ॥

शर (सरकण्डे) की जड़, ईखकी जड़, काण्डेक्षु (ईख भेद) की जड़, ईक्षुबाबिका (कांस भेद) की जड़, शतावर, क्षीरकाकोली, विदारीकन्द, कटेलीकी जड़, जीवन्ती, जीवक, मेदा, शालपर्णी, ऋषभक, खरैटीकी जड़, ऋद्धि, गोखरु, रास्ना, कौंचके बीज और पुनर्नवा (साठी) की जड़, १५–१५ तोले एवं नवीन उड़द ४ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

तदनन्तर ८. सेर गायके घीमें यह क्वाथ और मुलैठी, द्राक्षा (मुनक्का), कठूमर, पीपल, कौंचके बीज, महुवेके फूल, खजूर, और शतावरका कल्क (सब चीजें समान भाग मिश्रित, पत्थर पर पिसी हुई १ सेर), एवं ८–८ सेर बिदारीकन्दका रस, आमलेका रस और ईखका रस तथा ३२ सेर गायका दूध मिला कर पुनः पकावें ।

जब जलांश शुष्क हो जाय तो घीको छान लें और उसमें १–१ सेर खांड और बंसलोचनका चूर्ण, २० तोले पीपलका चूर्ण, ५ तोले काली मिर्चका चूर्ण; २॥–२॥ तोले दालचीनी, इलायची और नागकेसरका चूर्ण एवं १ सेर शहद मिलाकर ५–५ तोलेके मोदक बनावें ।

इन्हें अग्नि बलोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे बल वीर्यकी अत्यन्त वृद्धि होती है । यह अत्यन्त वृष्य है और इसे सेवन करनेसे मनुष्य घोड़ेके समान स्त्रीसमागम कर सकता है ।

वेदविद्यावटी

रस प्रकरणमें देखिये ।

वैद्यनाथवटिका

रस प्रकरणमें देखिये ।

वैद्यनाथवटी

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६६८२) व्योषादिगुटिका (१)

(वै. र, ; वृ. नि. र. । कासा. ; शा. सं. । खं. २ अ. ७ ; यो. चि. म. । अ. ३)

व्योषाम्लवेतसं चव्यं तालीसं चित्रकं तथा ।
जीरकं तिन्तिडीकं च प्रत्येकं कर्षभागिकम् ॥

त्रिसुगन्धं त्रिशाणं स्याद् गुडः स्यात्कर्षविंशतिः।
सर्वमेकत्र सङ्कुट्य वटिका कर्षसम्मिता ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वान्कासान् व्यपोहति ।
पीनसं श्वासमरुचिं स्वरभेदं नियच्छति ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, अम्लबेत, चव, तालीसपत्र, चीता, जीरा और तिन्तड़ीकका चूर्ण १।-१। तोला, दालचीनी, तेजपात और इलायचीका चूर्ण ३-३ शाण (प्रत्येक ३॥ माशे) और गुड़ २५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर १।-१। तोलेके मोदक बनावें।

इनमेंसे १-१ मोदक प्रातःकाल (उष्ण जलके साथ) सेवन करनेसे हर प्रकारकी खांसी, पीनस, श्वास, अरुचि और स्वरभेदका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—६ माशे।)

(६६८३) व्योषादिगुटिका (२)

(यो. र. । अर्शो.)

गुडव्योषवरावेल्लतिलारुष्करचित्रकैः ।
अर्शांसि हन्ति गुटिका त्वग्विकारं च शीलिता ॥

सोंठ, मिर्च, पिपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग, तिल, शुद्ध भिलावा और चीतेका चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ सबके बराबर ले कर [६-६ माशेकी] गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे अर्श और त्वग्दोषोंका नाश होता है।

(६६८४) व्योषादिवटी

(वा. भ. । कल्प अ. २)

व्योषत्रिजातकाम्भोदकृमिघ्नामलकैस्त्रिवृत् ।
सर्वैः समा समसिताः क्षौद्रेण गुटिकाः कृताः ॥
मूत्रकृच्छ्रज्वरच्छर्दिकासशोषभ्रमक्षये ।
तापे पाण्ड्वामयेऽल्पेऽग्नौ शस्ताः सर्वविषेषु च॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागरमोथा, बायबिड़ंग और आमला १-१ भाग तथा निसोत सबके बराबर ले कर चूर्ण बनावें और उसमें उसके बराबर खांड मिला कर आवश्यकतानुसार शहद डालकर घोट कर (६-६ माशेके) मोदक बना लें।

इनके सेवनसे मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, छर्दि, कास, शोष, भ्रम, क्षय, ताप, पाण्डु, अग्निमांद्य और विषविकार नष्ट होता है।

(६६८५) व्योषान्तिकागुटिका

(ग. नि. । कासा. १०; वृ. मा.; र. र. । कासा.)

तालीसवह्निदीप्यमुस्ताचविकाम्लवेतसव्योषैः ।
तुल्यैस्त्रिसुगन्धियुतैर्गुडेन गुटिका प्रकर्तव्या ॥
कासश्वासारोचकपीनसहृत्कण्ठवाग्विरोधेषु ।
ग्रहणीगुदोद्भवेषु च शस्ता व्योषान्तिकानाम ॥

तालीसपत्र, चीता, अजवायन, नागरमोथा, चव, अम्लबेत और सोंठ, मिर्च, पीपल एवं दालचीनी, तेजपात और इलायचीका चूर्ण १-१ भाग तथा गुड़ सबके बराबर लेकर सबको एकत्र कूट कर (६-६ माशेकी) गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे खांसी, श्वास, अरुचि, पीनस, हृदय कण्ठ और वाणीका अवरोध, ग्रहणीविकार, और अर्शका नाश होता है।

इति वकारादिगुटिकाप्रकरणम्



अथ वकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

(६६८६) वज्रगुग्गुलुः

(र. र. । वातरक्ता.)

त्रिकटु त्रिफला दन्ती चित्रकं त्रिवृता शठी ।
विडङ्गं मुस्तकं रात्रि बाकुचीन्द्रयवं वचा ॥
अङ्कोठमूलं कुष्ठश्च राजवृक्षस्य मूलकम् ।
एतेषां पलिकं ग्राह्यं तत्समं गुग्गुलुं कुरु ॥
भल्लाततैलं द्विपलं गोघृतेन जडीकृतम् ।
तत्र ताम्रहरितालं द्वयोःकुर्यात् पलद्वयम् ॥
सर्वमेकीकृतं यत्नात् पेषयित्वा सुपिण्डितम् ।
घृतभाण्डे तु संस्थाप्य खादेन्मासचतुष्टयम् ॥
गुग्गुलुर्वज्र नामायं गहनानन्दभाषितः ।
देशकालवयोवह्निं दृष्ट्वा वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥
वातरक्तं निहन्त्याशु नानादोषसमुद्भवम् ।
श्लीपदं शोथशूलानि मेहमेदोगलामयान् ॥
प्लीहगुल्मोदराष्ठीलाकासश्वासमरोचकम् ।
जीर्णज्वरञ्च सानाहं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥
संग्रहग्रहणीं दुष्टां पाण्ड्वादित्रितयं जयेत् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, चीता, निसोत, कचूर, वायबिड़ंग, नागरमोथा, हल्दी, बाबची, इन्द्रजौ, बच, अङ्कोठमूल, कूठ और अमलतासकी जड़; इनका चूर्ण ५–५ तोले, शुद्ध गूगल सबके समान, भिलावेका तेल २० तोले, गायका घी २० तोले, ताम्र भस्म ५ तोले और शुद्ध हरताल (या हरताल भस्म) ५ तोले ले कर समस्त ओषधियोंके चूर्ण और गूगलको एकत्र मिलाकर कूटें और उसमें थोड़ा थोड़ा घी तथा भिलावेका तेल डालते रहें । जब सब चीज़ें मिल कर एकजीव हो जाएं तो उसे चिकने पात्रमें भरकर सुरक्षित रक्खें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे विविध दोषोंसे उत्पन्न वातरक्त, श्लीपद, शोथ, शूल, प्रमेह, मेद, गलरोग, प्लीह, गुल्म, उदररोग, अष्ठीला, खांसी, श्वास, अरुचि, जीर्णज्वर, आनाह, संग्रहग्रहणी और पाण्डु, हलीमक तथा कामलाका नाश और बलवर्णाग्निकी वृद्धि होती है ।

(६६८७) वज्रवल्ल्यादिगुग्गुलुः

(र. र. । भग्न.)

वज्रवल्ल्यर्जुनो वासा विशाला लोहटङ्कणौ ।
रसगन्धकसिन्धूत्थाः समभागेन चूर्णयेत् ॥
चूर्णाद्गुणत्रयं ग्राह्यं गुग्गुलुं घृतपिट्टितम् ।
वज्रवल्ल्यादिको नामगुग्गुलुः परिनिर्मितः ॥
गहनानन्दनाथेन भग्नरोगविनाशनः ।
नाना भग्नं निहन्त्याशु बलवर्णाग्निवर्द्धनः ॥
कृमिकुष्ठाक्षिरोगाणां हन्ता ग्रन्थिव्यथापहः ।
कटिहृद्रोगशमन आमवातनिषूदनः ॥

हड़जोड़ी, अर्जुनकी छाल, बासा, इन्द्रायनकी जड़, लोहभस्म, सुहागेकी खील, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और सेंधा नमक समान भाग एवं शुद्ध गूगल सबसे ३ गुना ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर गूगलमें थोड़ा थोड़ा घृत डाल कर कूटें । जब गूगल पतला हो जाय तो

उसमें समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह कूट कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे अनेक प्रकारका भग्न रोग नष्ट हो कर बल, वर्ण, और अग्निकी वृद्धि होती है।

इसके अतिरिक्त यह गूगल कृमि, कुष्ठ, नेत्ररोग, ग्रन्थि, कटि रोग, हृद्रोग और आमवातको भी नष्ट करता है।

(मात्रा—१ माशा)

(६६८८) वरादिगुग्गुलुः

(भा. प्र. । म. खं. २ उपदंशा.)

वरानिम्बार्जुनाश्वत्थखदिरासनवासकैः।
चूर्णितैर्गुग्गुलुसमैर्वटका अक्षसम्मिताः॥
कर्त्तव्या नाशयन्त्याशु सर्वाल्लिङ्गसमुत्थितान्।
उपदंशानसृग्दोषांस्तथा दुष्टव्रणानपि॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, अर्जुनकी छाल पीपल, वृक्षकी छाल, खैर और असनाकी छाल तथा बांसा; इनका चूर्ण १-१ भाग एवं शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिलाकर (आवश्यकतानुसार घी डाल कर) कूटें और सबके अच्छी तरह मिल जाने पर १।-१। तोलेके वटक बना लें।

इनके सेवनसे उपदंश जन्य लिङ्गके व्रण और रक्तदोषोंका नाश होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—२ माशे।)

(६६८९) वातारिगुग्गुलुः

(भै. र. ; र. र. । आमवाता.)

वातारितैलसंयुक्तं गन्धकं पुरसंयुतम्।
फलत्रययुतं कृत्वा पिष्टयित्वा चिरं रुजि॥
भक्षयेत्प्रत्यहं प्रातरुष्णतोयानुपानतः।
दिने दिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरन्तरम्॥
सामवातं कटीशूलं गृध्रसीं खञ्जपङ्गुताम्।
वातरक्तं सशोथश्च सदाहं क्रोष्टुशीर्षकम्॥
शमयेद्बहुशो दृष्टमपि वैद्यविवर्जितम्॥

अण्डीका तेल, शुद्ध गन्धक, शुद्ध गूगल, हर्र, बहेड़ा और आमला समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर अच्छी तरह कूटें।

इसे नित्य प्रति प्रातःकाल १ मास तक उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे आमवात, कटिशूल, गृध्रसी, खञ्जता, पङ्गुता, वातरक्त, शोथ और दाहयुक्त क्रोष्टुशीर्ष नष्ट हो जाता है।

यह अनेक बारका अनुभूत प्रयोग है और वैद्योंसे त्यक्त रोगी भी इससे स्वस्थ हो जाते हैं।

(मात्रा—३ माशे।)

(६६९०) विडङ्गादिवटिकागुग्गुलुः

(वृ. मा.; वै. र. । व्रणशोथ. ; व. से. । आगन्तु व्रण ; धन्व. । व्रणा. ; र. र. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । व्रणशोथा. ; वृ. यो. त. । त. १११)

विडङ्गत्रिफलाव्योषचूर्णं गुग्गुलुना समम्।
सर्पिषा वटकी कृत्वा खादेद्वा हितभोजनम्॥
दुष्टव्रणापचीमेहकुष्ठनाडीविशोधनः॥

बायबिडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपलका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिलाकर थोड़ा थोड़ा घृत डालकर कूटें और सबके अच्छी तरह मिल जाने पर (३-३ माशेकी) गोलियां बना लें।

इसके सेवनसे दुष्ट व्रण, अपची, प्रमेह, कुष्ठ और नाडी व्रणका नाश होता है।

(६६९१) **विश्वादिगुग्गुलुः** (१)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

विश्वैरण्डशिफाशुण्ठीदारुकुष्ठं ससैन्धवम् ।
रास्नामृतोद्भवं चूर्णं गुग्गुलुर्द्विगुणस्तथा ॥
एकैका गुटिका तस्य प्रत्यहं भक्षिता सती ।
पथ्याशिनोतिवेगेन हन्ति विभ्रममारुतम् ॥

सोंठ, अरण्डमूल, सोंठ, देवदारु, कूठ, सेंधा, रास्ना और गिलोयका चूर्ण १-१ भाग एवं शुद्ध गगल सबसे २ गुना ले कर सबको एकत्र मिला कर (आवश्यकतानुसार घी डाल कर) कूटें। जब सब अच्छी तरह मिल जाएं तो (३--३ माशेकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे विभ्रम वायु नष्ट होता है।

(सोंठ दो बार आई है इस लिये २ भाग लेनी चाहिये)

(६६९२) **विश्वादिगुग्गुलुः** (२)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

शुण्ठी कणा कणामूलं विडङ्गं दारु सैन्धवम् ।
रास्ना वह्निर्यवानी च मरिचोग्राभया समम् ॥
द्विगुणं गुग्गुलोश्चूर्णमाज्ययुक्तं निहन्ति तान् ।
वातं विषूचिकां गुल्मं शूलं कम्पं च गृध्रसीम् ॥

सोंठ, पीपल, पीपलामूल, बायबिड़ंग, देवदारु, सेंधा, रास्ना, चीता, अजवायन, काली मिर्च, बच और हर्रका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबसे दो गुना लेकर सबको एकत्र मिला कर थोड़ा थोड़ा घी डालकर अच्छी तरह कूटें।

इसके सेवनसे वातरोग, विषूचिका, गुल्म, शूल, कम्प वायु और गृध्रसीका नाश होता है।

(मात्रा—३ माशे।)

वृहद्योगराजगुग्गुलुः

प्र. सं. ५७८२ " योगराज गुग्गुलुः (६) वृहद् " देखिये।

(६६९३) **व्याधिशार्दूलो गुग्गुलुः**

(वै. र. । आमवाता.)

पिण्डितं गुग्गुलोःप्रस्थं कटुतैलं पलाष्टकम् ।
प्रत्येकं त्रिफला प्रस्थं सार्द्धद्रोणे जले पचेत् ॥
पादशेषं ततः पूतं पुनरग्नावधिश्रयेत् ।
त्रिकटुत्रिफलामुस्तं विडङ्गं सुरदारुच ॥
गुडूच्यग्नित्रिवृद्दन्ती वचा सूरणमानकम् ।
पारदं गन्धकं चैव प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ॥
शुद्धं सहस्रं प्रत्यग्रं जयपालफलं बुधः ।
त्वगङ्कुरविनिर्मुक्तं सिद्धे सञ्चूर्ण्य निक्षिपेत् ॥
ततो माषद्वयं जग्ध्वा पिबेत्तप्तजलादिकम् ।
अग्निं च कुरुते दीप्तं वडवानलसन्निभम् ॥
धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलं सुविपुलं तथा ।
आमवातं शिरोवातं ग्रन्थिवातं भगन्दरं ॥
जानुजङ्घाश्रितं वातं कटीवातं तथैव च ।
शोथं वृद्धिं च शूलादिगुदजानि विनाशयेत् ॥

हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण १-१ सेर ले कर सबको ४८ सेर पानीमें पकावें और १२ सेर पानी शेष रहने पर छानकर उसमें १ सेर शुद्ध गूगल और १ सेर सरसोंका तेल मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित औषधोंका चूर्ण मिला दें—

सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, बायबिड़ंग, देवदारु, गिलोय, चीता, निसोत, दन्तीमूल, बच, सूरण (जिमीकन्द) और मानकन्द; इनका चूर्ण २॥-२॥ तोले; एवं २॥-२॥ तोले शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली तथा छिलके और भीतरकी पत्ती रहित १००० जमालगोटे। इन सबका बारीक चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ माशे।

इसे खा कर उष्ण जलादि पीना चाहिये।

इसके सेवनसे जठराग्नि, धातु, आयु और बलकी वृद्धि होती है। यह गूगल आमवात, शिरोगतवायु, ग्रन्थिवात, भगन्दर, जानु और जंघास्थित वायु, कटीगत वायु, शोथ, शूल, वृद्धिरोग, और अर्श आदिको नष्ट करता है।

(६६९४) व्योषादिगुग्गुलुः

(वृ. मा. । मेदोवृद्धय. ; र. र. । स्थौल्य. ; वैद्य.)

व्योषाग्निमुस्तत्रिफलाविडङ्गैर्गुग्गुलुं समम्।
खादन्सर्वाञ्जयेद्व्याधीन्मेदः श्लेष्मामवातजान्॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला और बायबिड़ंगका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिला कर कूटें।

यह गूगल मेद और कफ तथा आमवातज समस्त रोगोंको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—३ माशा।)

(६६९५) व्योषादिगुग्गुलुः

(वृ. नि. र. । गण्डमाला.)

षट्पलं व्योषचूर्णं च त्रिफला च पलत्रयम्।
काञ्चनारत्वचश्चूर्णं योजयेद्द्वादशं पलम्॥
गुग्गुलुः सर्वतुल्यः स्यात्सर्वमेकत्र कुट्टयेत्।
क्षौद्रं पलशतं देयं गुटिकां कर्षसम्मिताम्॥
भक्षयेद्गण्डमालार्तो गलग्रन्थींश्च नाशयेत्॥

सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर्ण ३०-३० तोले, हर्र, बहेड़े और आमलेका चूर्ण १५-१५ तोले, कचनारकी छालका चूर्ण ६० तोले तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिला कर कूटें और सबके एक जीव हो जाने पर उसे १०० पल (६। सेर) शहदमें मिला कर १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें।

इसके सेवनसे गण्डमाला और गलग्रन्थियां नष्ट होती हैं।

(६६९६) व्योषाद्या गुटिकागुग्गुलुः

(ग. नि. । गुटिका. ४)

व्योषं सग्रन्थिकं पथ्यां चित्रकं जीरकद्वयम्।
अजमोदां यवानीं च वचां चैवमवल्गुजम्॥
लवणत्रितयं क्षारं समभागानि चूर्णयेत्।
यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्तं गुग्गुलुं शुभम्॥
पलार्धसम्मितं चात्र योजयेच्चाम्लवेतसम्।
गुटिकैषा हिता वाते सामे सन्ध्यस्थिमज्जगे॥
नवं करोति भग्नं च जठरानलदीपनम्।
पूजिता देवदेवेन कालपादेन शम्भुना॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, हर्र, चीता, जीरा, काला जीरा, अजवायन, अजमोद (इसके स्थानमें भी अजवायन), बच, बाबची, सेंधा नमक, काला नमक, बिड नमक और जवाखार समान भाग ले कर चूर्ण बनावें।

तदनन्तर इस सबके बराबर शुद्ध गूगल और आधा भाग अम्लबेतका चूर्ण ले कर समस्त पदार्थोंको एकत्र मिला कर कूटें।

इसके सेवनसे सन्धि, अस्थि और मज्जागत आमवात तथा भग्नरोगका नाश और जठराग्निकी वृद्धि होती है।

(मात्रा—३ माशे ।)

इति वकारादिगुग्गुलुप्रकरणम्

अथ वकाराद्यवलेहप्रकरणम्

वङ्गावलेहः

(रसें. सा. सं. । प्रमेहा.)

रस प्रकरणमें देखिये।

(६६९७) वटाद्यवलेहः (१)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १०)

वटप्रवालान् ककुभस्य नीप-
जम्ब्वाम्रकाणां खदिरस्य वापि ।
यथा प्रपन्नो मधुनावलेह
आस्यास्रजं वारयते क्षणेन ॥

बड़, अर्जुन, कदम्ब, जामन, आम और खैर-मेंसे किसी एककी कोंपलोंको पीस कर शहदमें मिला कर चाटनेसे मुखसे होने वाला रक्तस्राव तुरन्त बन्द हो जाता है।

(मात्रा—६ माशे ।)

(६६९८) वटाद्यवलेहः (२)

(वृ. नि. र. । तृष्णा.)

वटबाला शिवा कृष्णा मधुकं मधुना सह ।
अवलेहः कृतोमीषां तृषारोगो विनश्यति ॥

बड़, सुगन्धबाला (अथवा छोटी इलायची) हर्र, पीपल और मुलैठीका चूर्ण समान भाग ले कर सबको शहदमें मिला कर अवलेह बनावें।

यह अवलेह तृषाको नष्ट करता है।

(मात्रा-चूर्ण ३ माशे । शहद १ तोला ।)

(६६९९) वत्सकावलेहः

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ३)

वत्सकातिविषानागराभया
पेषितं च मधुमस्तुसंयुतम् ।
लेह एष नियतं च मानवं
रक्तवाहमतिवारयत्यपि ॥

इन्द्रजौ, अतीस, सोंठ और हर्र समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर शहदमें मिलावें। इसमें मस्तु मिला कर चाटनेसे रक्तातिसार नष्ट होता है।

(६७००) **वरुणकगुडः**

(भा. प्र. । म. खं. २ अश्मरी. ; व. से. ; वृ. नि. र. । अश्मरी.)

नो जग्धं कृमिभिर्घनं
सुतरुणं स्निग्धं शुचिस्थानजं
घस्रे पुण्यनिरीक्षिते
वरुणकं छित्त्वा तुलां ग्राहयेत् ।
सङ्गृह्याशु चतुर्गुणासु विपचेत्पादावशेषं
जलं तत्तुल्येन गुडेन वै दृढतरे भाण्डे पचेत्पुनः॥
ज्ञात्वैवं घनतां गुडे परिणते प्रत्येकमेषां पलं
शुण्ठ्येर्वारुकबीजगोक्षुरकणापाषाणभिच्छीतलाः
कूष्माण्डत्रपुसाक्षबीज
कुनटी वास्तूक शोभाञ्जनै-
र्द्राक्षाशिलागिरिजाभया कृमि-
हृतां चूर्णीकृतानां क्षिपेत् ॥
पथ्याशी प्रतिवासरं गुड-
ममुं युञ्ज्यात्प्रमाणं नरः
खादेत्तस्य समस्तदोष-
जनिताऽश्मर्यः पतन्ति द्रुतम् ॥

उत्तम स्थानमें उत्पन्न हुवे, कृमियोंसे न खाये हुवे तरुण और स्निग्धतायुक्त बरनेकी छाल ६। सेर ले कर कूट कर ५० सेर पानीमें पकावें और १२॥ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ६। सेर गुड़ मिला कर पकावें। जब वह गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो उसमें निम्न लिखित ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें।

चूर्ण द्रव्य—सोंठ, ककड़ीके बीज, गोखरु, पीपल, पाषाणभेद, दूर्वा, पेठेके बीज, खीरेके बीज, कमलगट्टे, धनिया (अथवा शुद्ध मनसिल), बथुवा, सहंजनेकी छाल, मुनक्का, छोटी इलायची, शिलाजीत, हर्र और बायबिड़ंग; प्रत्येक ५-५ तोला ले कर चूर्ण बनावें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे अश्मरी शीघ्र ही निकल जाती है।

(६७०१) **वाजीकरो लेहः** (१)

(र. प्र. सु. । अ. १२)

शतावरीं क्षीरविदारिकां च
प्रस्थार्धमानां पृथगेव कुर्यात् ।
रसं तथा शाल्मलिमध्यमूलात्
प्रस्थं सितार्धाढकमत्र देयम् ॥
सुपाचितं वै मृदुवह्निना तथा
दर्वीप्रलेपोऽपि हि जायते यथा ।
त्वक्पत्रकैलाः सह केशरेण
पलप्रमाणा हि ततो विदध्यात् ॥
लेहे सुशीते मधु बिल्वमात्रं
प्रातः प्रभक्षेदिह कर्षमात्रम् ॥

शतावर और क्षीरविदारीका चूर्ण ४०-४० तोले; सेंभलकी जड़के बीचकी मूसलीका रस २ सेर और मिश्री २ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर पकावें। जब गाढ़ा हो कर करछीको लगने लगे तो उसमें तेजपात, दालचीनी, इलायची और नागकेसरका चूर्ण ५-५ तोले मिला दें। जब वह ठंडा हो जाय तो उसमें ५ तोले शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१। तोला ।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये । इसके सेवनसे कामशक्ति बढ़ती है ।

(६७०२) **वाजीकरो लेहः** (२)

(र. प्र. सु. । अ. १२)

शृङ्गाटकस्यापि पलं विधेयं
वाराहिकन्दश्च पलप्रमाणः ।
चूर्णीकृतं गालितमेव वस्त्राद्
भृष्टं तथाज्येन सितासमेतम् ॥
लवङ्गकृष्णागरुकेशराणां
पलंप्रदद्यादृशभागदुग्धम् ।
लेहं सुजातं खलु भक्षयेत
कर्षप्रमाणं नितरां प्रगे वै ॥
कामस्य बोधं कुरुते हि शीघ्रं
नारीं रमेद्वै चटकायतेऽसौ ॥

सिंघाड़े और बाराहीकन्दका कपड़छन चूर्ण ५–५ तोले ले कर धीमें भून लें और उसमें १। सेर दूध तथा आवश्यकतानुसार मिश्री मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें १।–१। तोला लौंग, पीपल, अगर और नागकेसर-का चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे प्रातःकाल १। तोलेकी मात्रानुसार सेवन करनेसे शीघ्र ही कामोत्तेजित हो कर मनुष्य चिड़ेके समान बार बार स्त्रीसमागम कर सकता है ।

(६७०३) **वाजीकरो लेहः** (३)

(र. प्र. सु. । अ. १२)

शतावरीगोक्षुरदर्भमूलं
शृङ्गाटकं नागबलात्मगुप्ते ।
सञ्चूर्ण्य सर्वं पृथगेव पालि-
कं क्षीरेण पाच्यं दशभागकेन ॥
सिता प्रदेया दशपालिका च
पाकं विदध्यादपि चाग्नियोगतः ।
मधुप्लुतं भक्षितमर्धयामा-
त्कामप्रदीप्तिं कुरुते सदैव ॥
वीर्यस्य वृद्धिं हि तथाऽग्निवृद्धिं
बलप्रवृद्धिं सहसैव कुर्यात् ॥

शतावर, गोखरु, दाभकी जड़, सिंघाड़ा, नागबला (गंगेरन) और कौंचके बीजोंका चूर्ण ५–५ तोले तथा दूध १। सेर एवं मिश्री ५० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर ठण्डा करके उसमें (५ तोले) शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे खानेसे आधा पहर पश्चात् ही काम प्रदीप्त हो जाता है ।

यह पाक वीर्य, अग्नि और बलकी वृद्धि भी करता है ।

(**मात्रा**—१ तोला)

(६७०४) **वाजीकरो लेहः** (४)

(र. प्र. सु. । अ. १२)

माषाणामात्मगुप्तानां बीजानामाढकं नवम् ।
जीवकर्षभकौ जीवां मेदां वृद्धिं शतावरीम् ॥
मधुकं चाश्वगन्धां च साधयेत्प्रसृतोन्मितान् ।
रसे तस्मिन् घृतप्रस्थं गव्यं दशगुणं पयं ॥
विदारीस्वरसप्रस्थं प्रस्थमिक्षुरसस्य च ।
दत्त्वा मृद्वग्निना साध्यं सिद्धं सर्पिर्निधापयेत् ॥

शर्करायास्तुगाक्षीर्याः क्षौद्रस्य च पृथक् पृथक् ।
भागांश्चतुष्पलान् तत्र पिप्पल्याश्चावपेत् पलम् ॥
पलं पूर्वमतो लीढ्वा ततोऽन्नमुपयोजयेत् ।
यदीच्छेदक्षयं शुक्रं शेफसश्चोत्तमं बलम् ॥

नवीन उड़द और कौंचके बीज ४-४ सेर तथा जीवक, ऋषभक, जीवन्ती, मेदा, वृद्धि, शतावर, मुलैठी और असगन्ध १०-१० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर आठ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें ।

तदनन्तर २ सेर गोघृतमें यह काथ और २० सेर गोदुग्ध तथा २-२ सेर विदारीकन्द और ईखका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाय तो छान लें । और फिर उसमें २०-२० तोले खांड और बंसलोचनका चूर्ण, ४० तोले शहद और ५ तोले पीपलका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसमेंसे ५ तोले औषध खाकर फिर अन्नाहार करना चाहिये ।

इसके सेवनसे लिंगकी शक्ति बढ़ती और शुक्र क्षय नहीं होता ।

(६७०५) वासाखण्डकूष्माण्डावलेहः
(वासाखण्डः)

(र. र. ; व. से. ; वृ. नि. र. । कासा. ; वं. से. । रक्तपित्ता. ; वृ. मा. । रक्तपित्ता ; भै. र. ; च. द. । रक्तपि.)

पञ्चाशच्च पलं स्विन्नं कूष्माण्डात्प्रस्थमाज्यतः ।
ग्राह्यं पलशतं खण्डं वासा क्वाथाढके पचेत् ॥
मुस्ताधात्रीशुभाभार्गीत्रिसुगन्धैश्च कार्षिकैः ।
शैलेय[1]विश्वधन्याकमरिचैश्च पलांशिकैः ॥
पिप्पलीकुडवश्चैव मधु मानी प्रदापयेत् ।
कासं श्वासं क्षयं हिक्कां रक्तपित्तं हलीमकम् ॥
हृद्रोगमम्लपित्तञ्च पीनसं च व्यपोहति ॥

छिलके और बीज रहित उसीजे हुवे पेठेके टुकड़े ३ सेर १० तोले ले कर उन्हें २ सेर घीमें मन्दाग्नि पर पकावें । जब भुन कर लाल हो जाएं तो उनमें ८ सेर बासेका काथ और ६। सेर खांड मिला कर पकावें । जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें नीचे लिखी ओषधियोंका चूर्ण और १ सेर शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

चूर्ण द्रव्य—नागरमोथा, आमला, बंसलोचन, भरंगी, दालचीनी, तेजपात और इलायचीका चूर्ण १।-१। तोला; शिलाजीत तथा सोंठ, धनिया और मिर्चका चूर्ण ५-५ तोले, एवं पीपलका चूर्ण २० तोले ।

इसके सेवनसे खांसी, श्वास, क्षय, हिक्का, रक्तपित्त, हलीमक, हृद्रोग, अम्लपित्त और पीनसका नाश होता है ।

(६७०६) वासावलेहः (१) (वृहद.)
(भै. र. । राजय.)

तुलामादाय वासाया जलद्रोणे विपाचयेत् ।
पादशेषे रसे तस्मिन् खण्डं पलशतं न्यसेत् ॥
शनैर्मृद्वग्निना सम्यक् सिद्धे तत्र प्रदापयेत् ।
त्रिकटु त्रिसुगन्धश्च कट्फलं मुस्तमेव च ॥

१ ऐलेयमिति पाठान्तरम् ।

कुष्ठं कम्पिल्लकं श्वेतजीरश्च कृष्णजीरकम् ।
त्रिवृता पिप्पलीमूलं चव्यं कटुकरोहिणी ॥
शिवा तालीशधन्याकं प्रत्येकश्च द्विकार्षिकम् ।
चूर्णयित्वा क्षिपेत्तत्र शीते मधु पलाष्टकम् ॥
अस्य मात्रां ततो लीढ्वा तोयमुष्णं पिबेदनु ।
सर्वकासविकारेषु स्वरभङ्गे विशेषतः ॥
राजयक्ष्मणि दुःसाध्ये वातश्लेष्माश्रये ।
आनाहे वह्निमान्द्ये च हृद्रोगे च क्षतक्षये ॥
मूत्रकृच्छ्रे च कृच्छ्रे च शस्तोऽयं लेह उत्तमः ॥

६। सेर वासाको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उसमें ६। सेर मिश्री मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, कायफल, नागरमोथा, सूंठ, कमीला, सफेद जीरा, काला जीरा, निसोत, पीपलामूल, चव्य, कुटकी, हर्र, तालीस पत्र और धनियेका चूर्ण २॥-२॥ तोले मिला दें तथा ठण्डा होने पर १ सेर शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे हर प्रकारकी खांसी, विशेषतः स्वरभंग, राजयक्ष्मा, अफारा, अग्निमांद्य, हृद्रोग, क्षतक्षय और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ से २ तोले तक।)

अनुपान—उष्ण जल।

नोटः—भै. र. में वासावलेहका एक अन्य पाठ भी हैजिसमें प्रक्षेप द्रव्योंमें बंसलोचन अधिक है तथा कालेजीर और निसोतका अभाव है। प्रक्षेप द्रव्योंका परिमाण १।-१। तोला है।

(६७८७) वासावलेहः (२)
(वासाहरीतक्यवलेहः)

(वृ. यो. त. । त. ७५; भै. र. । रक्तपित्त. ; यो. र. । क्षय. ; वृ. नि. [1]र. । श्वासा. ; ग. नि. । लेहा. ५ ; यो. त. । त. २६ ; वृ. मा. ; वं. से. । रक्तपि.; च. द. । रक्तपि. ; यो. चि. म. । अ. १)

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले ।
तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥
चूर्णानामभयानां तु खण्डात्पलशतं तथा ।
द्वे पले पिप्पलीचूर्णात्सिद्धे शीते च माक्षिकात् ॥
कुडवं पलमानं तु चातुर्जातं सुचूर्णितम् ।
क्षिप्त्वाऽवलोडितं खादेद्रक्तपित्तक्षतक्षयी ॥
कासश्वासगृहीतश्च यक्ष्मणा च विशेषेण ॥

६। सेर बासेको १०० सेर पानीमें पकावें और २५ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उसमें ४ सेर हर्रका चूर्ण तथा ६। सेर खांड मिला कर पुनः पकावें। जब लेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें १० तोले पीपलका चूर्ण और ५-५ तोले दालचीनी, तेजपात, इलायची तथा नागकेसरका चूर्ण मिलावें। जब वह ठण्डा हो जाय तो ४० तोले शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

---

१ वृ. नि. र. में. पीपल आधापल तथा २ पल वंशलोचन लिखी है।

यो. त. तथा गदनिग्रहमें ४ पल बंसलोचन और ८ पल शहद लिखा है पीपल दोनोंमें आधा पल ही है।

इसके सेवनसे रक्तपित्त, क्षत, क्षय, कास, श्वास और विशेषतः यक्ष्मामें लाभ पहुंचता है।

(६७०८) **वासावलेहः** (३)

(भै. र. । कासा. ; भा. प्र. । म. खं. २ राजयक्ष्मा. ; भै. र.; व. से.; र. र. । राजय. ; यो. त. । त. २७)

वासकस्वरसप्रस्थे माणिका सितशर्करा ।
पिप्पली द्विपलं दत्त्वा सर्पिषश्च पचेच्छनैः ॥
लेहीभूते ततः पश्चाच्छीते क्षौद्रपलाष्टकम् ।
दत्त्वावतारयेद्वैद्यो मात्रया लेहमुत्तमम् ॥
निहन्ति राजयक्ष्माणं कासं श्वासं सुदारुणम् ।
पार्श्वशूलञ्च हृच्छूलं रक्तपित्तं ज्वरन्तथा ॥

बासेका स्वरस २ सेर, सफेद खांड ४८ तोले; घी १० तोले और पीपलका चूर्ण १० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार लें और ठण्डा होने पर उसमें १ सेर शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे राज यक्ष्मा, खांसी, दारुण श्वास, पार्श्व शूल, हृदय शूल, रक्तपित्त और ज्वरका नाश होता है।

(६७०९) **वासिष्ठहरीतक्यवलेहः**

(ग. नि. । लेहा. ५; व. से. । कासा.)

यवाढकं सप्त जलाढकानि
हरीतकीनां च शतं गुरूणाम् ।
दन्त्यश्वगन्धाचिरिबिल्वमूलं
भल्लातकांश्चापि च पक्वबिल्वम् ॥
उभे हरिद्रे गजपिप्पली च
मूलानि पत्राणि च चित्रकस्य ।
पिप्पल्यपामार्गमथात्मगुप्ता
सर्वाणि कुर्यात्पलसम्मितानि ॥
लौहे समादाय पचेत्कटाहे
द्विपञ्चमूलं च यवप्रमाणम् ।
मृद्वग्निसिद्धांश्च यवान्विदित्वा
शनैः प्रयत्नादवतारयेच्च ॥
निःस्राव्य तेनैव जलेन सम्यक्
सार्धं पुराणस्य शतं गुडस्य ।
भूयो गुरूणामथ तत्र दद्या-
द्धरीतकीनां च सहस्रमन्यत् ॥
प्रस्थं पुराणस्य घृतस्य चैव
नवस्य तैलस्य च तावदेव ।
शीते मधु स्नेहसमं च दद्या-
त्पलानि चाष्टावथ पिप्पलीनाम् ॥
पथ्ये सलेहे त्वथ भक्ष्यमाणे
सर्वा रुजो नाशयतो हि मासात् ।
मासद्वयेनैव च नेत्ररोगान्-
निहन्ति गार्ध्रं लभते च चक्षुः ॥
मासैस्त्रिभिर्नाशयतो हि कुष्ठं
विशीर्णतां चाङ्गुलिनासिकानाम् ।
भगन्दरश्लीपदवातगुल्मा-
नर्शांस्यथो मासचतुष्टयेन ॥
केशान्घनान्कुञ्चितदीर्घनीलान्
स पञ्चभिश्चैव करोति मासैः ।
सहस्रसङ्ख्यां च तथोपयुज्य
बलं लभेदुत्तमकुञ्जरस्य ॥

स्वरं मयूरस्य जवं हयस्य
शरच्छशाङ्कस्य तथैव कान्तिम् ।
सौभाग्यमेधास्मृतिसत्वतेजः
शोभान्वितः पद्मसमानगन्धः ॥
जीवेत्समानां च सहस्रमन्य-
त्प्रयोगकालादिति सिद्धवाक्यम् ।
न चान्नपानेऽध्वनि मैथुने वा
नरेण किंचित्परिहार्यमस्मिन् ॥
समीक्ष्य कल्पं तु रसायनानां
चकार योगं भगवान्वसिष्ठः ॥

जौ ४ सेर, दशमूल ४ सेर, बड़ी बड़ी हर्रें १०० नग, तथा दन्तीमूल, असगन्ध, करञ्जकी जड़, भिलावा, पक्के बेलकी गिरी, हल्दी, दारुहल्दी, गजपीपल, चीतेकी जड़, चीतेके पत्ते, पीपल, अपामार्ग और कौंचके बीज ५-५ तोले ले कर (जौके अतिरिक्त) सब चीज़ोंको अधकुटा करके ५६ सेर पानीमें लोहेकी कढ़ाईमें मन्दाग्नि पर पकावें। जब जौ उसीज जाएं तो काथको छान कर उसमें ६। सेर पुराना गुड़, १ हजार बड़ी बड़ी हर्रें, २ सेर पुराना घी, और २ सेर नवीन तिलका तेल मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें ४० तोले पीपलका चूर्ण मिला दें और फिर ठण्डा होने पर ४ सेर शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसमेंसे नित्य प्रति २ हर्र और (२ तोले) अवलेह खाना चाहिये।

इसके सेवनसे १ मासमें शरीर रोग-रहित हो जाता है। २ मासमें समस्त नेत्ररोग नष्ट हो कर दृष्टि गृध्रके समान तीव्र हो जाती है। ३ मास तक सेवन करनेसे वह कुष्ठभी नष्ट हो जाता है कि जिसमें उंगलियां और नासिका तक गल गई हों। ४ मासमें भगन्दर, श्लीपद, वातगुल्म और अर्शका नाश हो जाता है। पांच मास तक सेवन करनेसे केश घने, कुञ्चित, काले और दीर्घ हो जाते हैं।

ये १ हज़ार हर्रें सेवन करनेसे हाथीके समान बल, मोरके समान स्वर, घोड़ेके समान गति और शरदेन्दुके समान कान्ति हो जाती है।

इसको सेवन करनेसे सौभाग्य, मेधा, स्मृति, सत्व, तेज और शोभाकी वृद्धि होती और शरीरसे पद्मके समान सुगन्ध आने लगती है एवं आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है।

इसके सेवनमें अन्नपान, मार्ग गमन, और मैथुनादिका कोई परहेज़ नहीं है।

(६७१०) विजयायोगः

(व. से. । रसायना.)

पञ्चाङ्गमिन्द्राशनश्लक्ष्णचूर्णं
पलाष्टकं सप्त सिता पलानि ।
सितार्धमानं मधु तस्य चार्द्धं
घृतं क्षिपेत्सर्वमिदं विमिश्रम् ॥
कृत्वा नरो मासचतुष्टयं यत्
पयोन्नभक्षी पयसा च भुंक्ते ।
विहाय रोगान् समलान्मनीषी
जीवेच्चिरं यौवनसंस्थितश्रीः ॥

भांगके पंचांगका चूर्ण ४० तोले, मिश्री ३५ तोले, शहद १७॥ तोले और घी ८॥ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर रक्खें।

इसे ४ मास तक दूधके साथ सेवन करने और दूध भातका आहार करनेसे समस्त रोग नष्ट हो कर यौवनयुक्त दीर्घायु प्राप्त होती है ।

(६७११) **विजयावलेहः**

(भा. प्र. म. खं. २ । अतिसारा.)

त्रैलोक्यविजयाजातीफले तुल्ये कलिङ्गकम् ।
गृहीत्वा द्विगुणं श्रेष्ठो लेहः सर्वातिसारनुत् ॥

भांग और जायफलका चूर्ण १-१ भाग तथा इन्द्रजौका चूर्ण २ भाग ले कर शहदमें मिला कर चाटनेसे हर प्रकारका अतिसार नष्ट होता है ।

(**मात्रा**—१॥-२ माशे ।)

(६७१२) **विडङ्गादिलेहः**

(वा. भ. । चि. अ. १८)

विडङ्गाद्रिजतु क्षौद्रं सर्पिष्मत्खादिरं रजः ।
किटिभश्वित्रदद्रुघ्नं खादेन्मितहिताशनः ॥

बायबिड़ंगका चूर्ण, शिलाजीत, शहद, घी और खैरसार-(कत्था) समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें ।

इसे सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे किटिभ कुष्ठ, श्वित्र और दादका नाश होता है ।

(६७१३) **विडङ्गाद्यवलेहः** (१)

(च. सं. । चि. अ. १)

विडङ्गतण्डुलचूर्णानामाढकमाढकं पिप्पली तण्डुलानामध्यर्द्धाढकं सितोपलायाः सर्पिस्तैलमध्वाढकैः षड्भिरेकीकृतं घृतभाजनस्थं प्रावृषि भस्मराशाविति सर्वं समानं पूर्वेण ॥

बायबिड़ंगके चावलोंका चूर्ण ४ सेर, पीपलके चावलोंका चूर्ण ४ सेर, मिश्री ६ सेर, घी ८ सेर, तेल ८ सेर, और शहद ८ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर घृतके पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें और उसे राखके ढेरमें दबा दें।

यह प्रयोग प्रावृट ऋतुमें बनाना चाहिये और औषधके पात्रको वर्षाके अन्त तक राखमें रहने देना चाहिये । एवं वर्षा ऋतु बीतने पर निकालकर सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे १०० वर्षकी जरा रहित आयु प्राप्त होती है ।

(नोट—औषध पात्रको खुले स्थान पर राखमें दबाना चाहिये कि जहां उस पर वर्षाका पानी गिरता रहे)

(६७१४) **विडङ्गाद्यवलेहः** (२)

(वा. भ. । उ. अ. २८)

मधुतैलयुता विडङ्गसार-
त्रिफलामागधिकाकणाश्च लीढाः ।
कृमिकुष्ठभगन्दरप्रमेह-
क्षतनाडीव्रणरोहणा भवन्ति ॥

बायबिड़ंगकी गिरी, हर्र, बहेड़ा, आमला और पीपलके चावल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसमें १-१ भाग शहद तथा तेल मिला लें ।

इसे चाटनेसे कृमि, कुष्ठ, भगन्दर, प्रमेह, क्षत और नाड़ीव्रणका नाश होता है ।

(**मात्रा**—५-६ माशे ।)

(६७१५) विश्वादिलेहः

(यो. र. । कासा. ; वृ. यो. त. । त. ७८)

विश्वाभार्गीकणासोमवल्कं द्राक्षा सटी सिता ।
लिह्यात्तैलेन वातोत्थं कासं जयति दुस्तरम् ॥

सोंठ, भरंगी, पीपल, कायफल, द्राक्षा, कचूर और मिश्री समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे तेलमें मिला कर चाटने योग्य कर लें ।

इसके सेवनसे दुस्साध्य वातजकास भी नष्ट हो जाती है ।

(६७१६) विश्वाद्यवलेहः

(वृ. मा । कासा.)

चूर्णिता विश्वदुःस्पर्शा शृङ्गी द्राक्षा शठी सिता ।
लीढ्वा तैलेन वातोत्थं कासं जयति दुस्तरम ॥

सोंठ, धमासा, काकड़ासिंगी, द्राक्षा, कचूर और मिश्री, समान भाग ले कर सबको पीस कर तेलमें मिला कर चाटनेसे कष्टसाध्य वातजकास भी नष्ट हो जाती है ।

(६७१७) वृष्ययोगः

(च. सं. । चि. अ. २ पाद ४ वाजीकर.)

शर्करायास्तुलैका स्यादेका गव्यस्य सर्पिषः ।
प्रस्थो विदार्याश्चूर्णस्य पिप्पल्याः प्रस्थ एव च॥
अर्द्धाढकं तुगाक्षीर्याः क्षौद्रस्याभिनवस्य च ।
तत् सर्वं मूर्च्छितं तिष्ठेन्मार्त्तिके घृतभाजने ॥
मात्रामग्निसमां तस्य प्रातः प्रातः प्रयोजयेत् ।
एष वृष्यः परं योगो बल्यो बृंहण एव च ॥

खांड ६। सेर, गोघृत १२॥ सेर, विदारीकन्दका चूर्ण १ सेर, पीपलका चूर्ण १ सेर, बंसलोचनका चूर्ण २ सेर और नवीन शहद ४ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर मथनीसे मथें और फिर घृतसे चिकने किये हुवे मृत्पात्रमें भर कर रख दें ।

इसे अग्निबलोचित मात्रानुसार प्रातःकाल सेवन करनेसे बलवीर्य बढ़ता और कामोत्तेजित होता है ।

(६७१८) बृहत्कुलत्थगुडः

(र. र. । हिक्काश्वासा.)

चतुष्पलं मूलकशुण्ठिकाया-
स्तथैव शुद्धस्य कुलत्थकस्य ।
तुलां प्रदद्याद्दशमूलकस्य
द्रोणेम्भसः सर्वमिदं पचेच्च ॥
पूते रसे पादचतुर्थशेषे
प्रस्थप्रमाणं रसमार्द्रकस्य ।
दत्त्वा हविस्तैलपलाष्टकञ्च
गुडस्य शुद्धस्य तुलां पचेच्च ॥
चूर्णैर्युतं जीरकचव्यशृङ्गी-
भार्गीत्रिसौगन्धिककट्फलैश्च ।
मुस्तायवानीशठीपुष्करैश्च
सव्योषकैरर्द्धपलप्रमाणैः ॥
अर्द्धां क्षिपेन्माक्षिक प्रस्थमात्रां
पथ्याशिनः स्यादुपयोगकाले ।
कफोद्भवा ये च विकारजाताः
श्वासः सकासो हृदयक्षतश्च ॥
हृत्पार्श्वशूलज्वरवान्तितृष्णा-
स्वरक्षयारोचकवह्निसादाः ।
ते नाशमायान्त्युपयोगकाले
कुलत्थसञ्ज्ञस्य गुडस्य शीघ्रम ॥

मूली, सोंठ और शुद्ध कुलत्थ २०, २० तोले और दशमूल ६। सेर ले कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें २ सेर अदरकका रस, १ सेर घी, १ सेर तेल और ६। सेर शुद्ध गुड़ मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतारकर उसमें जीरा, चव, काकड़ासिंगी, भरंगी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, कायफल, नागरमोथा, अजवायन, कचूर, पोखरमूल, सोंठ, मिर्च और पीपलका २॥-२॥ तोले चूर्ण मिलावें। एवं जब वह ठण्डा हो जाय तो १ सेर शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने और पथ्य पूर्वक रहनेसे कफज श्वास, कास, हृदयक्षत, हृदय शूल, पार्श्व शूल, ज्वर, वमन, तृष्णा, स्वरक्षय, अरुचि और अग्निमांद्यका नाश होता है।

वृहत्कूष्माण्डावलेहः

(भा. प्र.। म. खं. २. रक्तपित्ता.)

प्र. सं. ८०४ कूष्माण्डकावलेहः देखिये।

वह वृ. नि. र. का पाठ है उसमें दूध २ तुला लिखा है परन्तु भा. प्र. के पाठानुसार १ तुला और प्रक्षेप द्रव्योंमें जीरेके स्थान पर क्षीरी (वंशलोचन) होना चाहिये।

(६७१९) वृहदगस्त्यहरीतकी

(व. से.। कासा.)

अभयानां शतं दारु शङ्खपुष्पी मधूलिकाम्।
स्वयं गुप्तां पञ्चमूल्यौ द्वे शठी पुष्कराह्वयम्॥
पञ्चकोलबला हस्तिपिप्पली साश्मभेदकान्।
भार्गीं पुनर्नवाश्चैव द्विपलांशां यवाढकम्॥
पचेत्पश्चाढके तोये पादशेषं तथोद्धरेत्।
विनीय चाभयां तत्र पुनश्चाग्नावधिश्रयेत्॥
दत्त्वा गुडतुलां तत्र कषाये कुडवं पृथक्।
तैलात् पिप्पलिचूर्णाच्च घृतात् क्षौद्रात्तथैव च॥
पक्त्वा तल्लेहवत् स्थाप्यं घृतभाण्डे विधानतः।
पथ्यभुङ् नियताहारः खादेद् द्वे द्वे हरीतकी॥
हन्याच्च ग्रहणीगुल्मपाण्ड्वर्त्तिविषमज्वरान्।
यक्ष्मार्शः प्लीहवैस्वर्य्यश्वासकासारुचिक्षयान्॥
बलवर्णाग्निजननं वलीपलितनाशनम्।
रसायनमिदं सिद्धमगस्त्यविहितं मतम्॥

हर्रे १०० नग, तथा देवदारु, शंखपुष्पी, मुलैठी, कौंचके बीज, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, कचूर, पोखरमूल, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, खरैटी, गजपीपल, पाषाणभेद, भरंगी और पुनर्नवा (बिसखपरा) १०-१० तोले एवं जौ ४ सेर ले कर हर्रेके अतिरिक्त सब चीजोंको कूट कर और हर्रेको कपड़ेमें बांध कर सबको ४० सेर पानीमें पकावें। जब १० सेर पानी शेष रह जाय तो छान कर उसमें उपरोक्त हर्रे तथा ६। सेर गुड़, ४० तोले तेल, २० तोले पीपलका चूर्ण, ४० तोले घी और ४० तोले शहद मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो ठण्डा करके घृतसे चिकने किये हुवे पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इनमेंसे नित्य प्रति २-२ हर्रे सेवन करने तथा नियमित पथ्य आहार करनेसे संग्रहणी, गुल्म, पाण्डु, विषमज्वर, राजयक्ष्मा, अर्श, प्लीहा, स्वरभंग,

श्वास, कास, अरुचि, और वलिपलितका नाश तथा बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है ।

(साधारणतः मधुको गरम करना निषिद्ध है परन्तु इस प्रयोगमें अन्य द्रव्योंके साथ उसका पाक करना लिखा है ।)

बृहद्गुडपिप्पली

(रसे. चि. म । अ. ९ ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । प्लीहा.)

प्र. सं. १३०७ "गुड पिप्पली मोदकः" देखिये ।

बृहद्गोक्षुराद्यवलेहः

(वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

रस प्रकरणमें देखिये ।

(६७२०) बृहद्भल्लातकलेहः

(यो. र. ; वृ. यो. त. । त. ७०)

सुपक्वभल्लातकफलानि सम्यग्-
द्विधा विधायाऽऽढकसम्मितानि ।
विपाच्य तोयेन चतुर्गुणेन
चतुर्थशेषे व्यपनीय तानि ॥
पुनः पचेत्क्षीरचतुर्गुणेन
घृतांशयुक्तेन घनं यथा स्यात् ।
सितोपला षोडषभिः पलैश्च
विमर्द्य संस्थाप्य दिनानि सप्त ॥
ततः प्रयोज्याग्निबलेन मात्रां
जयेद्विकारानखिलान्गुदोत्थान् ।
कचान्सुनीलान्घनकुञ्चिताग्रान्-
सुपर्णदृष्टिं च शशाङ्ककान्तिम् ॥
जवं हयानां बलमुत्तमं च
स्वरं मयूरस्य हुताशदीप्तिम् ।
स्त्रीवल्लभत्वं विविधप्रभावं
नीरोगतां द्वित्रिशतायुषं च ॥
न चान्नपाने परिहार्यमस्ति
न चाऽऽतपे नाध्वनि मैथुने च ।
प्रयोगकाले सकलामयानां
राजाधिराजश्च रसायनानाम् ॥

उत्तम पके हुवे शुद्ध भिलावे ४ सेर ले कर उनके दो दो टुकड़े कर लें और फिर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें । जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान कर उसमें ३२ सेर दूध और २ सेर घी मिला कर पुनः पकावें । जब गाढ़ा हो जाय तो १ सेर मिश्री मिला कर सबको अच्छी तरह आलोडित करके चिकने पात्रमें भर कर सुर-क्षित रक्खें, और सात दिन पश्चात् काममें लावें ।

इसके सेवनसे समस्त गुद रोग नष्ट होते और बाल खूब काले घने तथा घुंघराले हो जाते हैं । दृष्टि अत्यन्त तीव्र हो जाती है, तथा शरीरकी कांति चन्द्रमाके समान, गति घोड़ेके समान, स्वर मयूरके समान, और तेज अग्निके समान हो जाता है ।

इसके सेवनसे रोग रहित २-३ सौ वर्षकी आयु प्राप्त हो सकती है ।

इसके सेवन कालमें अन्न पान, धूप, मार्ग-गमन और मैथुनादिके परहेज़की आवश्यकता नहीं है ।

(६७२१) **व्याघ्रीजीरकावलेहः**

(वृ. नि. र. । श्वासा.)

व्याघ्रीजीरकधात्रीणां चूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।
ऊर्ध्ववातमहाश्वासतमकैर्मुच्यते क्षणात् ॥

कटेली, जीरा और आमला समान भाग ले कर चूर्ण बनावें और उसे शहदमें मिला कर चाटने योग्य बना लें ।

इसके सेवनसे ऊर्ध्व वात, महा श्वास और तमक श्वास शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

व्याघ्रीहरीतकी

(वृ. यो. त. । त. ७८; ग. नि. । लेहा. ५; भै. र. ; यो. र. ; व. से. ; र. र. ; च. द. । कासा.)

प्र. सं. ४८६७ "भृगुहरीतकी" देखिये ।

(मात्रा—१ हर्र, और ६ माशे लेह ।)

(६७२२) **व्याघ्रीहरीतक्यवलेहः**

(ग. नि. । लेहा. ५)

व्याघ्रीशतं हरीतक्यो दत्त्वा च शतसम्मिताः ।
जले चतुर्गुणे पक्त्वा चतुर्भागावशेषिते ॥
आलोड्यार्धतुलां तस्मिन् गुडस्य त्वभयाश्च ताः
प्रक्षिप्यास्मिन् घनीभूते त्वगेलापत्रकेसरम् ॥
मगधोषणसंयुक्तं पालिकं चार्धकार्षिकम् ।
यवक्षारं च सञ्चूर्ण्य तस्मिंस्तत्प्रक्षिपेत्पुनः ॥
मधुनः पलषट्केन युक्तः कासामयापहः ।
स्वरवर्णावहः पुंसामग्नेर्दीप्तिकरः परम् ॥

६। सेर अधकुटी कटेली और कपड़ेमें बंधी हुई १०० हर्रोंको ८ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान कर उसमें ३ सेर १० तोले गुड़ और उपरोक्त हर्रें डाल कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, पीपल और काली मिर्चका चूर्ण ५-५ तोले तथा जवाखार ७॥ माशे मिला दें और जब वह ठंडा हो जाय तो ६० तोले शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे खांसीका नाश तथा स्वर, वर्ण, और अग्निकी वृद्धि होती है ।

(६७२३) **व्याघ्र्याद्यवलेहः**

(यो. र. ; वृ. नि. र. ; व. से. । बालरोगा. ; भा. प्र. । म. खं. २ बालरो.)

व्याघ्री कुसुमसञ्जातकेशरैरवलेहिका ।
मधुना चिरसञ्जाताच्छिशोः कासान्व्यपोहति ॥

शहदमें कटेलीके फूलकी केसर मिला कर चटानेसे बालकोंकी पुरानी खांसी भी नष्ट हो जाती है ।

(६७२४) **व्योषादिलेहः**

(व. से. । कासा.)

व्योषपुष्करमृद्वीकात्रिफलाशठिचित्रकैः ।
मधुतैलयुतो लेहः श्लेष्मकासनिबर्हणः ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, पोखरमूल, मुनक्का, हर्र, बहेड़ा, आमला, कचूर और चीतामूल; इनका चूर्ण समान भाग ले कर शहद और तेलमें मिला कर चाटनेसे कफज खांसी नष्ट हो जाती है ।

इति वकाराद्यवलेहप्रकरणम्



अथ वकारादिघृतप्रकरणम्

(६७२५) वचादिघृतम् (१)

(ग. नि. । बालरोगा. ११ ; व. से. ; वा. भ. । उ. अ. २)

वचा द्विबृहती पाठातिविषाकटुकाघनैः ।
मरिचैश्च[1] घृतं सिद्धं शस्तं दशनजन्मनि ॥

क्काथ—बच, छोटी और बड़ी कटेली, पाठा, अतीस, कुटकी, नागरमोथा और काली मिर्च २०—२० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—उपरोक्त ओषधियां १।—१। तोला ले कर पानीके साथ पीस लें ।

१ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर पकावें । जब पानी जल जाए तो घृतको छान लें ।

इसे सेवन करानेसे बच्चोंके दांत आसानीसे निकल आते हैं और दांत निकलनेके समय होने वाले रोग शान्त हो जाते हैं ।

(**मात्रा**—३ माशे ।)

(६७२६) वचादिघृतम् (२)

(वा. भ. । उ. अ. १)

वचामृताशठीपथ्याशङ्खिनीवेल्लनागरैः ।
अपामार्गेण च घृतं साधितं पूर्ववद्गुणैः ॥

क्वाथ—बच, गिलोय, कचूर, हर्र, शंखपुष्पी, बायबिडंग, सोंठ और अपामार्ग (चिरचिटा) २०—२० तोले ले कर सबको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—उपरोक्त ओषधियां १।—१। तोला ले कर सबको पानीके साथ पीस लें ।

१ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे वाचा शक्ति, मेधा, स्मृति और अग्निकी वृद्धि होती है ।

(**मात्रा**—१ तोला ।)

(६७२७) वचाद्यं घृतम् (१)

(व. से. ; र. र. । गण्डमाला.)

वचा शठी हरिद्रे द्वे देवदारु महौषधम् ।
हरीतकी चातिविषा मुस्तकेन्द्रयवाः समाः ॥
एतान्दशपलान्भागांश्चतुर्द्रोणेऽम्भसः पचेत् ।
पादशेषे जले तस्मिन्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
कल्कं दत्त्वा पलोनमानैः क्वाथ्यद्रव्यैः सुपेषितैः।
प्रक्षिप्य त्रिगुणं क्षौद्रं व्योषचूर्णात्पलानि षट् ॥
यथा कालं पिबेन्मात्रां यथेष्टाहारमेव च ।
गण्डमालां निहन्त्याशु बहुवर्षसमुद्भवाम् ॥
कासं श्वासं प्रतिश्यायं गलगण्डं मुखामयम् ॥

क्वाथ—बच, कचूर, हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, सोंठ, हर्र, अतीस, नागरमोथा और इन्द्रजौ

[1] मधुरैश्चेति पाठान्तरम् ।

५०-५० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—क्वाथकी समस्त ओषधियोंका चूर्ण ५-५ तोले, शहद ६ सेर और सोंठ, मिर्च तथा पीपलका चूर्ण १०-१० तोले।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसे सेवन करने और पथ्य पूर्वक रहनेसे बहुत वर्षोंकी पुरानी गण्डमाला भी नष्ट हो जाती है।

इसके अतिरिक्त यह घृत खांसी, श्वास, प्रतिश्याय, गलगण्ड और मुखरोगोंमें भी हितकारी है।

(मात्रा—१ तोला।)

(६७२८) **वचाद्यं घृतम्** (२)

(वृ. यो. त. । त. ८९ ; व. से. । वातव्या.)

वचाशम्पाककैडर्य्यवयस्थाहिङ्गुचोरकैः।
सिद्धं पलङ्कषायुक्तं घृतं हन्यादपस्मृतिम् ॥

बच, अमलतासका गूदा, कैडर्य (बकायन भेद), आमला, हींग और चोरक तथा गूगल ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

३॥ सेर घीमें यह कल्क और २८ सेर पानी मिला कर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत अपस्मारको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(६७२९) **वज्रकघृतम्** (१)

(च. द. । कुष्ठा. ४९ ; वृ. मा. ; र. र.)

वासागुडूचीत्रिफलापटोल-
करञ्जनिम्बाशनकृष्णवेत्रम्।
तत्क्वाथकल्केन घृतं विपक्वं
तद्वज्रकं कुष्ठहरं प्रदिष्टम् ॥
विशीर्णकर्णाङ्गुलिहस्तपादः
क्रिम्यर्दितो भिन्नगलोऽपि मर्त्यः।
पौराणिकीं कान्तिमवाप्य जीवे-
दव्याहतो वर्षशतं च कुष्ठी ॥

क्वाथ—बासा, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, करञ्ज, नीमकी छाल, असना वृक्षकी छाल और कृष्णबेत १६-१६ तोले ले कर सबको १६ सेर पानीमें पकावें। जब ४ सेर पानी रह जाय तो छान लें।

कल्क—क्वाथकी ओषधियां १-१ तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

१ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसे सेवन करनेसे कुष्ठ रोग नष्ट होता है। जिस कुष्ठीके कर्ण, अंगुली और हाथ पैर गल गये हों तथा जिसके कृमि पड़ गए हों वह भी इसके प्रभावसे पूर्ववत् कान्तियुक्त हो जाता है तथा १०० वर्ष तक रोग रहित जीवित रहता है।

वज्रकघृतम् (२)

(वा. भ. । चि. अ. १८)

प्र सं. ५२४६ महावज्रकघृतम् (१) देखिये ।

वज्रकघृतम् (३)

प्र. सं. ५२४७ महावज्रकघृतम् (२) देखिये ।

(६७३०) **वज्रकघृतम्** (४)

(वा. भ. । चि. अ. १९)

वासामृतानिम्बवरापटोल-
व्याघ्रीकरञ्जोदककल्कपक्वम् ।
सर्पिर्विसर्पज्वरकामलासृक्-
कुष्ठापहं वज्रकमामनन्ति ॥

कल्क—वासा (अडूसा), गिलोय, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा, आमला, पटोल, कटेली और करञ्ज ५–५ तोले ले कर सबको पानीके साथ पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त कल्क वाली ओषधियां १–१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ७२ सेर पानीमें पकावें और १८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

४॥ सेर घीमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे विसर्प, ज्वर, कामला, रक्तदोष और कुष्ठका नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला)

(६७३१) **वत्सकादिघृतम्** (१)

(वृ. नि. र. । अतिसारा.)

वत्सकस्य च बीजानि दार्व्याश्चैव त्वगुत्तमा ।
पिप्पली शृङ्गवेरं च लाक्षा कटुकरोहिणी ॥
षड्भिरेतैर्घृतं सिद्धं पेयं मण्ड विमिश्रितम् ॥

कल्क—इन्द्रजौ, दारु हल्दीकी छाल, पीपल, अदरक, लाख और कुटकी ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—उपरोक्त कल्क वाली ओषधियां १–१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ४८ सेर पानीमें पकावें और १२ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

३ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

इसे मण्ड (चावलोंके मांड) में मिला कर पीनेसे अतिसार नष्ट होता है।

(मात्रा—१ तोला)

(६७३२) **वत्सकादिघृतम्** (२)

(वृ. नि. र. । अतिसारा.)

पलं वत्सकसंसिद्धं चतुर्गुणजले घृतम ।
पित्तातिसारे भिषजा देयं दीपनपाचनम् ॥

कल्क—५ तोले कुड़ेकी छालको पानीके साथ बारीक पीस लें।

आधा सेर घीमें यह कल्क और २ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

यह पित्तातिसारको नष्ट करता तथा दीपन और पाचन है।

(मात्रा—१ तोला)

(६७३३) **वरुणादिघृतम्** (१)

(वृ. मा. । अश्मर्य. ; ग. नि. । अश्मर्य. २९ ; भा. प्र. । म. खं. २ ; र. र. ; धन्व. ; व. से. । अश्मर्य. ; वृ. यो. त. । त. १०२; यो. र.)

वरुणस्य तुलां क्षुण्णां जलद्रोणे विपाचयेत् ।
पादशेषं परिस्राव्य घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
वरुणः कदली बिल्वं तृणजं पञ्चमूलकम् ।
अमृतां चाश्मजं देयं बीजं च त्रपुषस्य च ॥
शतपर्वा तिलक्षारः पलाशक्षारमेव च ।
यूथिकायास्तु मूलानि कार्षिकाणि समावपेत् ॥
अक्षमात्रां पिबेज्जन्तुर्देशकालाद्यपेक्षया ।
जीर्णे चास्मिन्पिबेत्पूर्वं गुडं जीर्णे तु मस्तुना ॥
अश्मरीं शर्करां चैव मूत्रकृच्छ्रं विनाशयेत् ॥

क्वाथ—६। सेर बरनेकी छालको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छान लें।

कल्क—बरनेकी छाल, केलेकी जड़, बेलकी छाल, तृणपञ्चमूल (कुशकी जड़, कासकी जड़, सरकण्डेकी जड़, दाभकी जड़, ईखकी जड़), गिलोय, शिलाजीत, खीरेके बीज, बांसकी जड़, तिलक्षार, पलाशक्षार और जूहीकी जड़ १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसमेंसे नित्य प्रति १। तोला घी सेवन करनेसे अश्मरी शर्करा और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है।

औषध पच जाने पर अन्य किसी पदार्थके खानेसे पहले मस्तुके साथ पुराना गुड़ खाना चाहिये।

(६७३४) **वरुणादिघृतम्** (२)

(भै. र. । व्रणशोथा. ; व. से. ; यो. र. । विद्रधि. ; वृ. नि. र. । अन्तर्विद्र. ; वृ. यो. त. । त. ११०)

सिद्धं वरुणादिगणे विधिना
तत्कल्कपाचितं सर्पिः ।
अन्तर्विद्रधिमुग्रं मस्तकशूलं हुताशमान्द्यञ्च ॥
गुल्मानपि पञ्चविधान् नाश-
यतीदं यथाम्बु वायुसखम् ।
एतत्प्रातः प्रपिबेद् भोजनसमये निशास्येऽपि ॥

वरुणादिगणके कल्क और क्वाथके साथ घृत सिद्ध करके रक्खें।

इसके सेवनसे दुःसाध्य अन्तर्विद्रधि, मस्तक शूल, अग्निमांद्य और पांच प्रकारके गुल्म रोगका नाश होता है।

इसे प्रातःकाल, भोजनके समय और रात्रिको सेवन करना चाहिये ।

(मात्रा १ तोला)

(६७३५) वरुणाद्यं घृतम्

(भै. र. । अश्मर्य. । वृ. मा. ; ग. नि. । अश्मर्य. २९ ; च. द. ; व. से. ; सु. सं. । चि. अ. ७)

गणे वरुणकादौ च गुग्गुल्वेलाहरेणुभिः ।
कुष्ठमुस्ताह्वमरिचचित्रकैः ससुराह्वयैः ॥
एतैः सिद्धमजासर्पिरूषकादि गणेन च ।
भिनत्ति कफसम्भूतामश्मरीं क्षिप्रमेव तु ॥

कल्क—वरुणादि गणकी ओषधियां, गूगल, इलायची, रेणुका, कूठ, नागरमोथा, काली मिरच, चीता और देवदारु समान भाग मिश्रित १ सेर ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

८ सेर बकरीके घीमें यह कल्क और इन्हीं ओषधियोंका ३२ सेर क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

इसके सेवनसे कफज अश्मरी नष्ट होती है ।

ऊषकादिगणके साथ सिद्ध घृत भी अश्मरीको नष्ट करता है ।

(६७३६) वर्णकघृतम्

(भै. र. । क्षुद्र रोगा. ; च. द. । क्षुद्र. ५४)

मधुकं चन्दनं कङ्गुं सर्षपं पद्मकं तथा ।
कालेयकं हरिद्रा च लोध्रमेभिश्च कल्कितैः ॥
विपचेद्धि घृतं वैद्यस्तत्पक्वं वस्त्रगालितम् ।
पादांशं कुङ्कुमं सिक्थं क्षिप्त्वा मन्दानले पचेत्॥
तत्सिद्धं शिशिरे नीरे प्रक्षिप्याकर्षयेत्ततः ।
तदेतद्वर्णकं नाम घृतं वक्त्रप्रसादनम् ॥
अनेनाभ्यासलिप्तं हि वलीभूतमपि क्रमात् ।
निष्कलङ्केन्दुबिम्बाभं स्याद्विलासवती मुखम् ॥

कल्क—मुलैठी, सफेद चन्दन, कङ्गु (कंगनीके चावल या फूल प्रियंगु), सरसों, पद्माक, केसर, हल्दी और लोध १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१ सेर घीमें यह कल्क और ४ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें और फिर उसमें २०-२० तोले केसर तथा मोम मिला कर पुनः मन्दाग्नि पर रक्खें । जब मोम आदि अच्छी तरह मिल जाय तो उसे ठण्डे पानीमें डाल दें और जब घी जम जाय तो निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे मलनेसे मुख मण्डलका रंग निखर आता है । यदि गालोंमें झुर्रियां पड़ गइ हों तो वे भी इसके कुछ दिनोंके प्रयोगसे नष्ट हो कर मुख निष्कलङ्क चन्द्रमाके समान शोभायमान हो जाता है ।

(६७३७) वल्लभकं घृतम्

(भै. र. । हृद्रोगा. ; वृ. यो. त. । त. ९९ ; ग. नि. । वाता. १९, हृद्रोगा. २७; वृ. मा. ; धन्व. ; र. र. ; वृ. नि. र. ; यो. र. । हृद्रोगा.)

मुख्यं शतार्द्धञ्च हरीतकीनां
सौवर्चलस्यापि पलद्वयञ्च ।

पक्वं घृतं वल्लभकेति नाम्ना
हृल्लासशूलोदरमारुतघ्नम् ॥

बड़ी बड़ी ५० हर्रोंकी बकली और १० तोले काला नमक ले कर दोनोंको एकत्र पीस लें और फिर (८ सेर) घीमें यह कल्क और ३२ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे हृल्लास (जी मिचलाना) शूल और वायुका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१ तोला)

(६७३८) **वह्निषट्प्रस्थघृतम्**

(व. से. । उदरा.)

चिरबिल्वत्वचः क्वाथमार्द्रकस्वरसं घृतम् ।
मस्तु भल्लातकक्वाथं शुक्तञ्चैवाम्लकाञ्जिकम् ॥
एतैस्तुल्यैर्घृतं धृत्वा कल्कैरेतैस्तु पादिकैः ।
ग्रन्थिकव्योषहपुषा हिङ्गुव्यजाजीद्वयं तथा ॥
चव्याजमोदे सक्षारे तथा लवणपञ्चकम् ।
श्रेयसी चेति मृदुना तत्साध्यमनलेन वा ॥
वह्निषट्प्रस्थमेतत्तु जठरानलदीपनम् ।
प्लीहोदराध्मानहरं वातोदरदकोदरम् ॥
कफवातकृते चैव शूलेऽतीव प्रशस्यते ।
अर्शांसि नाशयत्याशु कृमींश्चैव विशेषतः ॥
सर्पाण्डुराणि कुष्ठानि दद्रुकुष्ठानि यानि च ।
अन्यान्यपि च कुष्ठानि तानि हन्यादिदं घृतम् ॥

क्वाथ—(१) करञ्जकी छाल आधा सेर ले कर ४ सेर पानीमें पकावें और १ सेर शेष रहने पर छान लें ।

(२) आधा सेर भिलावेको ४ सेर पानीमें पकावें और १ सेर शेष रहने पर छान लें ।

अन्य द्रव पदार्थ—अदरकका स्वरस १ सेर, मस्तु १ सेर, शुक्त १ सेर, और खट्टी कांजी १ सेर ।

कल्क—पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हपुषा, हींग, जीरा, काला जीरा, चव, अजमोद, सज्जीखार, जवाखार, पांचों नमक और गजपीपल सब समान भाग मिश्रित १० तोले ।

१ सेर घीमें उपरोक्त दोनों क्वाथ, चारों द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे जठराग्नि दीप्त होती और प्लीहा, आध्मान, वातोदर, जलोदर, कफ वातज शूल, अर्श और विशेषतः कृमि रोग, पाण्डु, कुष्ठ और दाद आदिका नाश होता है ।

(६७३९) **वासाघृतम्** (१)

(ग. नि. । कासा. १०)

वासाकषायकल्काभ्यां घृतसमधुशर्करम् ।
सिद्धं तत्पित्तकासघ्नं सर्वपित्तविकारनुत् ॥

१ सेर घीमें ४ सेर बासेका क्वाथ और १० तोले बासेका कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें ।

इसमें शहद और खांड मिला कर सेवन करनेसे पित्तज खांसी और समस्त पित्तज विकार नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१ तोला)

(६७४०) **वासाघृतम्** (२)

(ग. मि. । घृता. १ ; च. सं. । चि. स्था. ६ अ. ५ ; भै. र. ; वृ. मा. ; च. द. ; धं. से. ; यो. र. । रक्त पित्ता. ; वृ. यो. त. । त. ७५)

समूलपत्रशाखस्य तुलां कुर्याद्वृषस्य च ।
जलद्रोणे विपक्तव्यमष्टभागावशेषितम् ॥
कल्केन वृषपुष्पाणामाढकं सर्पिषः पचेत् ।
तत्सिद्धं पाययेद्युक्त्या मधुपादसमायुतम् ॥
श्वासं प्रतिश्यायं तृतीयक चतुर्थकम् ।
रक्तपित्तं क्षयं चैव विषं सर्पिर्नियच्छति ॥

क्वाथ—मूल, पत्र और शाखा समेत ६। सेर बासे (अडूसे) को कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

४ सेर घीमें यह काथ और आधा सेर बासेके फूलोंका कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाए तो घीको छान लें ।

इसमें चौथाई शहद मिला कर सेवन करनेसे श्वास, खांसी, प्रतिश्याय, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर, रक्तपित्त, क्षय और विषविकार नष्ट होते हैं ।

(**मात्रा**—१ तोला ।)

(६७४१) **वासादिघृतम्**

(च. द. । विसर्पा. ५२; धन्व. ; वृ. मा. ; वृ. नि. र. ; यो. त. । त. ६५ ; यो. र. ; ग. नि. । विस्फोटा. ४० ; वृ. यो. त. । त. १२३)

वृषखदिरपटोलपत्रनिम्बा-
मृतमामलकीकषायकल्कैः ।
घृतमभिनवमेतदाशुपक्वं
जयति सदास्रविसर्पकुष्ठान् ॥

क्वाथ—बासा, खैरसार, पटोलपत्र, नीमकी छाल, गिलोय, और आमला १-१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ४८ सेर पानीमें पकावें और ६ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—क्वाथकी प्रत्येक ओषधि ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१॥ सेर ताजे घीमें उपरोक्त काथ तथा कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे रक्तविकार, विसर्प और कुष्ठका नाश होता है ।

(**मात्रा**—१ तोला ।)

(६७४२) **वासाद्यं घृतम्** (१)

(वृ. नि. र. । क्षय. ; व. से. । राजयक्ष्मा.)

वासामृतारिष्टनिदिग्धकानां
रसेश्वगन्धेभबलार्जुनानाम् ।
सिद्धं स पञ्चोषणपुष्कराणां
कल्कैर्घृतं छागपयस्तु शोषे ॥

क्वाथ—बासा (अडूसा), गिलोय, नीमकी छाल, कटेली, असगन्ध, नागबला और अर्जुनकी छाल १-१ सेर ले कर सबको ५६ सेर पानीमें पकावें और १४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ और पोखरमूल समान भाग मिश्रित ३५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

३॥ सेर घीमें उपरोक्त क्काथ, कल्क और ३॥ सेर बकरीका दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे शोष रोग नष्ट होता है।

(**मात्रा**--१ तोला।)

(६७४३) **वासाद्यं घृतम्** (२)

(च. द. ; व. से. । ज्वरा. ; धन्व.)

वासां गुडूचीं त्रिफलां त्रायमाणां यवासकम् ।
पक्त्वा तेन कषायेण पयसा द्विगुणेन च ॥
पिप्पलीमूलमृद्वीकाचन्दनोत्पलनागरैः ।
कल्कीकृतैश्च विपचेद् घृतं जीर्णज्वरापहम् ॥

क्काथ--बासा, गिलोय, हर्र, बहेड़ा, आमला, त्रायमाणा और जवासा आधा आधा सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर २८ सेर पानीमें पकावें और ७ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क--पीपलामूल, मुनक्का, सफेद चन्दन, नीलोत्पल और सोंठ ७-७ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

३॥ सेर घीमें उपरोक्त कल्क, क्काथ और ७ सेर गोदुग्ध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ और दूध जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे जीर्ण ज्वर नष्ट होता है।

(**मात्रा**--१ तोला)

(६७४४) **वासाद्यं घृतम्** (३) बृहद्

(व. से. । ज्वरा.)

वासामृतारिष्टभार्ङ्गी पञ्चमूलफलत्रिकैः ।
सपायसमधुद्राक्षाकाश्मीरैरक्षसम्मितैः ॥
घृतप्रस्थं विपक्तव्यमेभिर्मात्रामतः पिबेत् ।
बृहद्वासाघृतं प्रोक्तमेतत्सर्वज्वरापहम् ॥

कल्क--बासा (अडूसा), गिलोय, नीमकी छाल, भरंगी, पञ्चमूल (बेल, अरलु, खम्भारी, पाढल और अरनी), त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला), शहद, मुनक्का, और पोखरमूल १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब दूध जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं।

(मात्रा--१ तोला)

वासाद्यं घृतम् (४) **(बृहद्)**

(व. से. । रक्तपित्ता.)

प्र. सं. ५२४८ महावासाद्यं घृतम् देखिये।

(६७४५) **वासामृतागुग्गुलुघृतम्**

(र. र. । नेत्ररोगा.)

वासामृतानिम्बपटोलपत्रं
फलत्रयाणां विधिवत्कषाये ।
भिषक् पचेद्गुग्गुलुकल्कमाज्यं
जेतुं नराणां नयनोत्थदोषान् ॥
नेत्रामयान्सर्वसमुद्भवांश्च
निहन्ति शीघ्रं नयनाश्रुपातम् ।
रोगाश्रुशोथं पटलार्बुदश्च
मलं सकण्डूं तिमिरं च काचम् ॥

महद्रुजं चैव तथामवातं
सर्वाणि कुष्ठानि च वातरक्तम् ।
रसायनं सर्पिरनुत्तमश्च
यथानुपानं भिषजा प्रयोज्यम् ॥

क्वाथ—वासा (अडूसा), गिलोय, नीमकी छाल, पटोलपत्र, और त्रिफला (हर्र, बहेड़ा, आमला) १-१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ५६ सेर पानीमें पकावें और १४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

३॥ सेर घीमें यह काथ और ३५ तोले गूगल मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे आंखोंसे पानी जाना, नेत्रोंकी सूजन, पटल, नेत्रार्बुद, आंखोंका मैल, नेत्रकण्डू, तिमिर, और काच आदि समस्त नेत्ररोग तथा आमवात, कुष्ठ और वातरक्तका नाश होता है। यह घृत उत्तम रसायन है।

(मात्रा—१ तोला।)

विडङ्गघृतम्

(च. द.। कृम्य. ७ ; वृ. मा. ; व. से.। कृम्य.)
प्र. सं. २४५२ त्रिफलाद्यं घृतम् देखिये।

(६७४६) विडङ्गाद्यं घृतम्

(ग. नि.। ज्वरा. १ ; वा. भ.। चि. अ. १)

विडङ्गसौवर्चलचव्यवह्नि-
व्योषाग्निसिन्धूद्भवयावशूकैः ।
पलांशकैः क्षीरसमं घृतस्य
प्रस्थं पचेज्जीर्णकफज्वरघ्नम् ॥

कल्क—बायबिड़ंग, सञ्चल, चव्य, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, सेंधानमक और जवाखार ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क, २ सेर दूध और ८ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध और पानी जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत जीर्ण कफज ज्वरको नष्ट करता है।

(मात्रा—१ तोला)

(६७४७) विजयाघृतम्

(धन्व.। वाजीकरणा.)

गोदुग्धे विजयाकल्कं संसिद्धं गोघृतं नवम् ।
रतिवर्द्धनकूष्माण्डखण्डादौ तद्विनिःक्षिपेत् ॥
नातः परतरं वृष्यं शुक्रस्तम्भकरं भवेत् ॥

पत्थर पर पीसी हुई भांगकी पत्ती २० तोले, गायका ताज़ा घी २ सेर और गोदुग्ध ८ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाय तो घीको छान लें।

यह घृत अत्यन्त वाजीकरण, वृष्य और शुक्रस्तम्भक है।

इसे कूष्माण्डखण्डादि कामवर्द्धक अवलेह और पाकादिमें डालना चाहिये।

(६७४८) विदारीघृतम् (१)

(व. से.। भस्मकरो. ; वृ. यो. त.। त. ७२)

विदारीस्वरसक्षीरे पचेदष्टगुणे घृतम् ।
माहिषं जीवनीयेन कल्केनात्यग्निनाशनम् ॥

विदारीकन्दका रस और दूध ४-४ सेर, भैंसका घृत १ सेर और जीवनीय गणका कल्क

१० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो घृतको छान लें।

इसे सेवन करनेसे भस्मक रोग नष्ट होता है।

(६७४९) **विदारीघृतम्** (२)

(भै. र. ; व. से. ; भा. प्र. । म. ख. २ । मूत्राघाता.)

विदारी वृषको यूथी मातुलुङ्गी च भूस्तृणम् ।
पाषाणभेदः कस्तूरी वसुको वशिरोऽनलः ॥
पुनर्नवा वचा रास्ना बला चातिबला तथा ।
कशेरुबिसशृङ्गाटतामलक्यः स्थिरादयः ॥
शरेक्षुदर्भमूलश्च कुशः काशस्तथैव च ।
पलद्वयन्तु संहृत्य जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
पादशेषे रसे तस्मिन् घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
शतावर्यास्तथा धात्र्याः स्वरसो घृतसम्मितः ॥
षट्पलं शर्करायाश्च कार्षिकाण्यपराणि च ।
यष्ट्याह्वं पिप्पली द्राक्षा काश्मर्यं सपरूषकम् ॥
एला दुरालभा कौन्ती कुङ्कुमं नागकेशरम् ।
जीवनीयानि चाष्टौ च दत्वा च द्विगुणं पयः ॥
एतत्सर्पिर्विपक्तव्यं शनैर्मृद्वग्निना बुधैः ।
मूत्राघातेषु सर्वेषु विशेषात्पित्तजेषु च ॥
शर्कराश्मरिशूलेषु शोणितप्रभवेषु च ।
हृद्रोगे पित्तगुल्मे च वातासृक्पित्तजेषु च ॥
कासश्वासक्षतोरस्के धनुःस्त्रीभारकर्षिते ।
तृष्णाच्छर्दिमनःकम्पशोणितच्छर्दिने तथा ॥
रक्ते यक्ष्मण्यपस्मारे तथोन्मादे शिरोग्रहे ।
योनिदोषे रजोदोषे शुक्रदोषे स्वरामये ॥
एतत्स्मृतिकरं वृष्यं वाजीकरणमुत्तमम् ।
पुत्रदं बलवर्णाढ्यं विशेषाद्वातनाशनम् ॥
पानभोजननस्येषु न क्वचित्प्रतिहन्यते ।
विदारीघृतमित्युक्तं रसायनमनुत्तमम् ॥

क्वाथ—विदारीकन्द, बासा (अडूसा), जूहीकी जड़, बिजौरेकी जड़, गन्धतृण, पाषाणभेद, कस्तूरी, आककी जड़, गजपीपल, चव, पुनर्नवा (बिसखपरा), बच, रास्ना, बला (खरैटी), अतिबला (कंघी), कसेरु, भिसण्डा (कमलकी जड़), सिंघाड़ा, भुई आमला, शालपर्ण्यादि पञ्चमूल (शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेली, बड़ी कटेली, गोखरु), शर (सरकण्डे) की जड़, ईखकी जड़, दाभकी जड़, कुशकी जड़ और कासकी जड़ १०—१० तोले ले कर सबको ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

अन्य द्रव पदार्थ—शतावरका रस २ सेर; आमलेका रस २ सेर, दूध ४ सेर।

कल्क—खांड ३० तोले तथा मुलैठी, पीपल, द्राक्षा, खम्भारी, फालसा, इलायची, धमासा, रेणुका,केसर, नागकेसर, जीवक, ऋषभक, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महा मेदा, काकोली और क्षीरकाकोली १।—१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, समस्त द्रव पदार्थ, और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके मूत्राघात और विशेषतः पैत्तिक मूत्राघात एवं शर्करा, अश्मरी, शूल, रक्तज रोग, हृद्रोग, पित्तज गुल्म, वातरक्त, पित्त विकार, कास, श्वास, उरःक्षत, तृष्णा, छर्दि, रक्तकी वमन, क्षय, अपस्मार, उन्माद, शिरोग्रह,

योनिदोष, रजविकृति, शुक्रदोष और स्वरभंग आदि रोग नष्ट होते हैं।

यह घृत स्मरणशक्तिवर्द्धक, वृष्य, वाजीकरण, पुत्रोत्पादक, बल वर्ण वर्द्धक और वातनाशक है।

अति व्यायाम और अति स्त्रीप्रसंग द्वारा कृश मनुष्योंको इसे सेवन करना चाहिये। यह उत्तम रसायन है।

इसे पान, भोजन और नस्य द्वारा प्रयुक्त करना चाहिये।

(६७५०) विन्दुघृतम् (१)

(ग. नि. । घृता. १)

श्यामात्रिवृद्वह्निपलत्रयं हि
हरीतकीनां तु शतार्धमन्यत् ।
तोयार्मणाऽर्धेन विपाचितेन
प्रस्थं पचेद्गव्यघृतस्य वैद्यः ॥
कम्पिल्लकस्यापि पलप्रमाणं
सनीलिनी बीजपलद्वयं च ।
चतुष्पलं स्नुक्पयसश्च दत्वा
गुल्मापहं विन्दुघृतं विरेकात् ॥

क्वाथ—काली निसोत, सफेद निसोत और चीता १५-१५ तोले तथा हर्र ३ सेर १० तोले ले कर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—कमीला ५ तोले, नीलके बीज १० तोले और थोहर (स्नुही-सेंड) का दूध २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे विरेचन हो कर गुल्म नष्ट हो जाता है।

(यह तीव्र रेचक है अतः चिकित्सकके परामर्शसे योग्य मात्रामें पीना चाहिये।)

(६७५१) विन्दुघृतम् (२)

(भै. र. । उदरा. ; ग. नि. । घृता. ; यो. र. ; र. र. ; वृ. मा. ; व. से. ; च. द. । उदरा. ; यो. चि. म. । अ. ५; र. चि. म. । स्त. ९)

अर्कक्षीरपले द्वे च स्नुहीक्षीरपलानि षट् ।
पथ्या कम्पिल्लकं श्यामा शम्पाकं गिरिमल्लिका ॥
नीलिनी त्रिवृता दन्ती शङ्खिनी चित्रकं तथा ।
एतेषां पलिकैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
अथास्य मलिने कोष्ठे विन्दुमात्रं प्रदापयेत् ।
यावतोस्य पिबेद्विन्दून् तावद्वारान् विरिच्यते ॥
कुष्ठगुल्ममुदावर्त्तं श्वयथुं सभगन्दरम् ।
शमयत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
एतद्विन्दुघृतं नाम येनाभ्यक्तो विरिच्यते ॥

आकका दूध १० तोले, स्नुही (सेंड-थूहर) का दूध ३० तोले तथा हर्र, कमीला, काली निसोत, अमलतास, कुड़ेकी छाल, नीलके बीज, निसोत, दन्तीमूल, शंखिनी और चीतामूल ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त समस्त ओषधियां तथा ८ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके जितने बिन्दु पिये जायं उतनेही दस्त होते हैं।

इसके सेवनसे मलिन कोष्ठ स्वच्छ हो जाता है। यह घृत कुष्ठ, गुल्म, उदावर्त, शोथ, भगन्दर और आठ प्रकारके उदर रोगोंमें उपयोगी है।

इसका (नाभि पर) लेप करनेसे भी विरेचन हो जाता है।

(६७५२) **विन्दुघृतम्** (३)

(यो. त. । त. ५३)

त्रिवृता त्रिफला पाठा दन्ती कटुकरोहिणी।
चतुरङ्गुलमज्जा च तथा च कटुत्रयम् ॥
चित्रकं च बृहत्यौ च तथा च गजपिप्पली।
स्नुहीक्षीरं पलं दद्याद् घृतस्याष्टौ प्रदापयेत् ॥
यावत्पिबति तद्बिन्दूंस्तावद्वेगान्विरिच्यते।
एतद्बिन्दुघृतं सिद्धमृषिभिः समुदाहृतम् ॥

निसोत, हर्र, बहेड़ा, आमला, पाठा, दन्तीमूल, कुटकी, अमलतासके फलोंका गूदा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, छोटी और बड़ी कटेली, गजपीपल तथा स्नुही (सेहुंड--थोहर)का दूध ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें और १ सेर घीमें यह कल्क तथा ४ सेर पानी मिला कर मन्दाग्निपर पकावें।

इसके जितने बिन्दु पिये जाएं उतनेही दस्त हो जाते हैं।

(६७५३) **विन्दुघृतम्** (४)

(शा. सं. । खं. २ अ. ९ ; वृ. नि. र.)

चित्रकः शङ्खिनी पथ्या कम्पिल्लस्त्रिवृतायुगम्।
वृद्धदारुश्च शम्पाको दन्ती दन्तीफलं तथा ॥
कोशातकी देवदाली नीली च गिरिकर्णिका।
सातला पिप्पलीमूलं विडङ्गं कटुकी तथा ॥
हेमक्षीरी च विपचेत् कल्कैरेतैः पिचून्मितैः।
घृतप्रस्थं स्नुहीक्षीरे षट्पले तु पलद्वये ॥
अर्कक्षीरस्य मतिमांस्तत्सिद्धं कुष्ठगुल्मनुत्।
हन्ति शूलमुदावर्त्तं शोथाध्मानं भगन्दरम् ॥
शमयत्युदराण्यष्टौ निपीतं विन्दुसङ्ख्यया।
गोदुग्धेनोष्ट्रदुग्धेन कौलत्थेन शृतेन वा ॥
उष्णोदकेन वा पीत्वा विन्दुवेगैर्विरिच्यते।
एतद्बिन्दुघृतं नाम नाभिलेपाद् विरेचयेत् ॥

कल्क—चीतामूल, शंखिनी, हर्र, कमीला, सफेद और काली निसोत, विधारा, अमलतासकी फलीका गूदा, दन्तीमूल, शुद्ध जमालगोटा, कड़वी तूंबी, बिंडालका डोढ़ा, नीलके बीज, कोयल, सातला, पीपलामूल, बायबिड़ंग, कुटकी और सत्यानाशीकी जड़ (चोक) १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें ६० तोले स्नुही (सेंड-थूहर) का दूध, २० तोले आकका दूध, उपरोक्त कल्क और ८ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें।

यह घृत कुष्ठ, गुल्म, शूल, उदावर्त, शोथ, अफारा, भगन्दर और आठ प्रकारके उदर रोगोंको नष्ट करता है।

इसके जितने बिन्दु पिये जाएं उतने ही दस्त होते हैं।

नाभि पर इसका लेप करनेसे भी विरेचन हो जाता है।

इसे गोदुग्ध, ऊंटनीके दूध, कुलथीके क्वाथ या उष्ण जलके साथ पीना चाहिये ।

विन्दुघृतम् (५) (महा)

प्र. सं. ५२४९ महा विन्दुघृतम् देखिये ।

(६७५४) विन्दुसाराद्यं घृतम्

(ग. नि. । घृता. १)

शतावरीबलारास्नादशमूलीत्रिकण्टकान् ।
अश्वगन्धासमायुक्तान् कुशकाससमन्वितान् ॥
दर्भेक्षुमूलसंयुक्तान् शरमूलविमिश्रितान् ।
मण्डूक्या च समायुक्तान् द्विपञ्चपलिकान् भिषक् ॥
पुनर्नवायाः श्वेतायाः शिफां पलशतोन्मिताम् ।
जलद्रोणे प्रयत्नेन पचेत्सम्यक् चतुर्गुणे ॥
पादावशेषे निःस्राव्य क्वाथमग्नावधिश्रयेत् ।
यवानीपिप्पलीद्राक्षाशुण्ठीयष्ट्याह्वसैन्धवान् ॥
द्विपालिकान् विनिःक्षिप्य श्लक्ष्णं पिष्ट्वा विधानतः ।
घृतप्रस्थं पचेत्सम्यक् क्षीरप्रस्थद्वयान्वितम् ॥
एरण्डतैलप्रस्थाढ्यं त्रिंशद्गुडपलैर्युतम् ।
एतदीश्वरपुत्राणां राज्ञां चैव विशेषतः ॥
स्त्रीसंभोगरतानां च प्राग्भोजनमनिन्दितम् ।
ऊरुशूले कटिस्तम्भे योनिशूले च दारुणे ॥
बस्तिवाते प्रवृद्धे च वातरोगे सुदुःसहे ।
घृतमेतत्प्रशंसन्ति सुकुमारं रसायनम् ॥

क्वाथ—शतावर, बला (खरैटी), रास्ना, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, गोखरु, असगन्धकी जड़, कुशकी जड़, कासकी जड़, दाभकी जड़, ईखकी जड़, शर (सरकण्डे) की जड़ और मण्डूकपर्णी (ब्राह्मी भेद) ५०–५० तोले; एवं सफेद पुनर्नवाकी जड़ ६। सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—अजवायन, पीपल, द्राक्षा (मुनक्का), सोंठ, मुलैठी और सेंधानमक १०–१० तोले ले कर सबको एकत्र बारीक पीस लें ।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क, ४ सेर दूध और २ सेर अरण्डीका तेल एवं १५० तोले गुड़ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें ।

यह घृत धनवानों, राजाओं और कामी पुरुषोंको भोजनके पहिले खिलाना चाहिये ।

इसके सेवनसे उरुशूल, कटिस्तम्भ, दारुण योनि शूल, बस्तिवात और वातज रोगोंका नाश होता है ।

(६७५५) विश्वादिघृतम्

(ग. नि. । घृता. १)

पलांशैर्विश्वचव्याग्निपिप्पलीक्षारसैन्धवैः ।
क्वाथेन चिरबिल्वस्य घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥
गुल्मोदावर्तपाण्डुत्वग्रहणीश्वासकासजित् ।
कुष्ठज्वरप्रतिश्यायप्लीहार्शः शमनं परम् ॥

कल्क—सोंठ, चव, चीता, पीपल, जवाखार और सेंधा नमक ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

क्वाथ—४ सेर करञ्जकी छालको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

२ सेर घीमें यह कल्क और क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे गुल्म, उदावर्त, पाण्डु, संग्रहणी, श्वास, खांसी, कुष्ठ, ज्वर, प्रतिश्याय, प्लीहा, और अर्शका नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

(६७५६) **विश्वौषधाद्यं घृतम्**

(वृ. मा. । ग्रहण्य. ; ग. नि. । ग्रहण्य. ३)

विश्वौषधस्य गर्भेण दशमूलजले भृतम्।
घृतं निहन्याच्छ्वयथुं ग्रहणीमामतामयम्॥

क्वाथ—२ सेर दशमूलको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

१ सेर घीमें यह क्वाथ और १० तोले सोंठका कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे शोथ और आमयुक्त ग्रहणी नष्ट होती है।

(**मात्रा**—१-१॥ तोला।)

(६७५७) **वृद्धदारकघृतं तैलञ्च**

(व. से. ; र. र. । श्लीपदा.)

घृतप्रस्थं विपक्तव्यं सव्योषं वृद्धदारकैः।
कल्कैः सौवीरसिद्धं स्याच्छ्लीपदानां निवृत्तये॥
अग्निं च कुरुते दीप्तमामवाते च शस्यते।
एतैः कटु पचेत्तैलं पानाच्छ्लीपदनाशनम्॥
सौवीरं सन्धानविशेषः तदभावे काञ्जिकम्॥

कल्क—सोंठ, मिरच, पीपल और विधारेकी जड़ ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर सौवीरक कांजी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब कांजी जल जाय तो घीको छान लें।

इसे सेवन करनेसे श्लीपद और आमवातका नाश होता तथा अग्नि दीप्त होती है।

इन्हीं ओषधियोंसे सरसोंका तेल सिद्ध करके पीनेसे भी श्लीपद नष्ट हो जाता है।

(६७५८) **वृद्धदारकाद्यं घृतम्**

(र. र. । श्लीपदा.)

द्विपलं वृद्धदारस्य तदर्द्धञ्च महौषधम्।
पिप्पली त्रिफलादार्वी चित्रकं सपुनर्नवम्॥
एभिश्चार्द्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
श्लीपदं नाशयत्याशु गृध्रसीशोथशूलनुत्॥
पाण्डुरोगामवातघ्नं बलवर्णाग्निवर्द्धनम्॥

कल्क—विधारेकी जड़ १० तोले, सोंठ ५ तोले और पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दारुहल्दी, चीता तथा पुनर्नवा (बिसखपरे) की जड़ २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और ८ सेर पानी मिला कर मन्दाग्निपर पकावें। जब पानी जल जाय तो घृतको छान लें।

यह घृत श्लीपद, गृध्रसी, शोथ, शूल, पाण्डु और आमवातको नष्ट तथा बल, वर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है।

(६७५९) वृद्धदारुकघृतम्

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

वृद्धदारुकमूलेन घृतं पक्वं पयोन्वितम् ।
एतद्वृष्यतमं सर्पिः पुत्रकामः पिबेन्नरः ॥

१ सेर घीमें १० तोले विधारेकी जड़का कल्क और ४ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाए तो घृतको छान लें ।

यह घृत अत्यन्त वृष्य है । इसे पुत्रकी अभिलाषा वाले स्त्री पुरुषोंको सेवन कराना चाहिये ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक)

वृहच्चाङ्गेरीघृतम् (१)

(व. से. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. १७६९ चाङ्गेरी घृतम् देखिये ।

वृहच्चाङ्गेरीघृतम् (२)

(व. से. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. १७७३ चाङ्गेरी घृतम् देखिये ।

वृहत्कण्टकारीघृतम्

(ग. नि. । परि. घृता. ; र. र. ; वृ. मा. । कासा. : च. द. । कासा. ११)

प्र. सं. ८२१ कण्टकारी घृतम् देखिये ।

(६७६०) वृहत्कल्याणघृतम्

(व. से. । स्त्री.)

मुस्ता कुष्ठं हरिद्रे द्वे पिप्पली कटुरोहिणी ।
काकोली क्षीरकाकोली विडङ्गं त्रिफला वचा ॥
मेदारास्नाश्वगन्धा च विशाला च प्रियङ्गुका ।
द्वे शारिवे शताह्वा च दन्तीमधुकमुत्पलम ॥
अजमोदा महामेदा चन्दनं रक्तचन्दनम ।
जातीपुष्पन्तुगाक्षीरीशर्कराहिङ्गुकट्फलम् ॥
चतुर्गुणेन पयसा विपचेद्गोमयाग्निना ।
नक्षत्रे पुष्यसम्पन्ने भाण्डे ताम्रमये दृढे ॥
कलिशे वापि कल्याणे कृतकौतुकमङ्गलः ।
सर्पिरेव नरः पीत्वा स्त्रीषु नित्यं वृषायते ॥
एतद्वन्ध्या पिबेन्नारी या च कन्या प्रजायिनी ।
या चैवास्थिरगर्भा स्याद्या च सूता पुनः स्थिता॥
अनायुषं वा जनयेद्या वा जनयते मृतम् ।
सा नारी जनयेत्पुत्रं वेदवेदाङ्गपारगम् ॥
रूपलावण्यसम्पन्नमजरश्च शतायुषम् ।
वृहत्कल्याणकं सर्पिर्भारद्वाजेन भाषितम् ॥
अनुक्तं लक्ष्मणामूलं क्षिपन्त्यत्र चिकित्सकाः

कल्क—नागरमोथा, कूठ, हल्दी, दारुहल्दी, पीपल, कुटकी, काकोली, क्षीर काकोली, बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, बच, मेदा, रास्ना, असगन्ध, इन्द्रायणकी जड़, फूल प्रियङ्गु, दो प्रकारकी सारिवा, सोया, दन्तीमूल, मुलैठी, नीलोत्पल, अजमोद, महामेदा, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, चमेलीके फूल, बंसलोचन, खांड, हींग और कायफल १-१ तोला ले कर सबको पत्थरपर पीस लें ।

३ सेर २४ तोले घीमें यह कल्क और चार गुना (१३ सेर १६ तोले) दूध मिला कर गायके गोबरके कण्डोंकी अग्नि पर तांबेकी कढ़ाईमें पकावें। जब दूध जल जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत अत्यन्त वृष्य है । वन्ध्या स्त्री या जिसके कन्या ही कन्या होती हों अथवा जिसका गर्भ स्थिर न रहता हो या जिसके अल्पायु अथवा मृत सन्तान उत्पन्न होती हों; इसके सेवनसे उसे भी अत्यन्त बुद्धिमान्, रूप लावण्य सम्पन्न और दीर्घ जीवी पुत्रकी प्राप्ति हो सकती है ।

इस प्रयोगमें कुछ वैद्य लक्ष्मणाकी जड़ भी डालते हैं ।

(मात्रा—१ से २ तोले तक)

बृहत्रिफलाद्यं घृतम्

(र. र. ; ग. नि. । नेत्र.)

प्र. सं. २४५७ त्रिफलादि घृतम् (महा) देखिये ।

बृहत्पञ्चगव्यं घृतम्

(भै. र. । उन्मादा. ; र. र. ; बृ. मा, । अपस्मार. ; च. द. । अपस्मा. २१)

प्र. सं. ४०५१ पञ्चगव्यं घृतम् देखिये ।

बृहदग्निघृतम्

(व. से. । अर्श. ; च. द. । अग्निमान्द्या. ६)

प्र. सं. १५७ " अग्निघृतम् " देखिये ।

(६७६१) बृहद्दन्तीघृतम्

(भै. र. । वृद्धि रोगा.)

जलद्रोणे पचेत्सम्यक् दन्त्याः पलशतं भिषक् ।
पादशिष्टं गृहीत्वेमं क्वाथं सर्पिः पयस्तथा ॥
दन्तीमूलं बलां द्राक्षां सहदेवीं शतावरीम् ।
सरलं शारिवां श्यामां प्रत्येकं कुडवोन्मितम् ॥
विदार्यास्तालमूल्याश्च शालमल्यां कुटजस्य च ।
रसाढकं परिक्षिप्य साधयेन्मृदुनाग्निना ॥
अन्त्रवृद्धिमन्त्ररोधमन्त्रदाहं सुदारुणम् ।
मुष्कवृद्धिं तथा ब्रध्नं व्रणशोथं भगन्दरम् ॥
आमवातं वातरक्तं मुखनासाशिरोरुजः ।
रेतःशोणितदोषाश्च हन्ति दन्तीघृतं बृहत् ॥

क्वाथ—६। सेर दन्तीमूलको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—दन्तीमूल, बला (खरैटी), द्राक्षा, सहदेवी, शतावर, चीर, शारिवा और काली निसोत २०-२० तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

८ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क, ८ सेर दूध और विदारीकन्द, तालमूली, सेंभलकी मूसली एवं कुड़ेकी छालका ८-८ सेर रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें ।

इसके सेवनसे अन्त्रवृद्धि, अन्त्ररोध, दारुण अन्त्रदाह, वृषणवृद्धि, ब्रध्न, व्रणशोथ, भगन्दर, आमवात, वातरक्त एवं मुख, नासिका और शिरकी पीड़ा तथा वीर्यविकार नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—१ तोला)

(६७६२) बृहद्दाडिमाद्यं घृतम्

(भै. र. । प्रमेहा.)

चतुःषष्टिपलं पक्वदाडिमस्य सुकुट्टितम् ।
चतुर्द्रोणं जलं दत्त्वा चतुर्भागावशेषितम् ॥
क्वाथेन वस्त्रपूतेन घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
दाडिमं चविकाजाजी क्रिमिघ्नं रजनीद्वयम् ॥
द्राक्षाखर्जूरयुञ्जातमुत्पलं गजपिप्पली ।
अजमोदा महाद्राक्षा काकोली नागरं वचा ॥
देवाह्वा चविका कुष्ठं काश्मरी मधुयष्टिका ।
श्यामेन्द्रवारुणी मूर्वा शुभा भृङ्गी धनीयकम् ॥
कुलत्थश्च महामेदा निम्बश्च बृहतीद्वयम् ।
दण्डोत्पलं वरा वासा समला सिन्धुवारकम् ॥
कल्कश्चैषां युक्तियोगाद् ग्राह्यो हि परिभाषया ।
प्रमेहं वातिकं हन्ति पैत्तिकं श्लैष्मिकं तथा ॥

हृच्छूलं बस्तिजं शूलं मूत्राघातास्त्रयोदश ।
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च यक्ष्माणं सर्वरूपिणम् ॥
स्वरक्षयमुरोरोगं रक्तपित्तमरोचकम् ।
ये च प्रमेहजा रोगास्तान् सर्वान्नाशयत्यपि ॥
दाडिमाद्यमिदं सर्वप्रमेहानां निसूदनम् ।
अश्विभ्यां निर्मितं ह्येतत्प्रमेहकरिकेशरी ॥

क्वाथ--४ सेर पके दाड़िमको अच्छी तरह कूट कर १२८ सेर पानीमें पकावें और चौथा भाग (३२ सेर) शेष रहने पर छान लें।

कल्क--अनार, चव, जीरा, बायबिड़ंग हल्दी, दारुहल्दी, द्राक्षा, खजूर, मुञ्जातक, नीलोत्पल, गजपीपल, अजमोद, बकायन, काकोली, सोंठ, बच, देवदारु, चव्य, कूट, गम्भारीकी छाल, मुलैठी, अनन्तमूल, इन्द्रायणकी जड़, मूर्वा, बंसलोचन, काकड़ासिंगी, धनिया, कुलथी, महामेदा, नीमकी छाल, छोटी और बड़ी कटेली, दण्डोत्पल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बासा, सप्तला (स्नुही भेद) और संभालु समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त काथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे वातज, पित्तज और कफज प्रमेह, हृदयशूल, बस्तिशूल, १३ प्रकारके मूत्राघात, हिक्का, श्वास, कास, समस्त लक्षणों युक्त राजयक्ष्मा, स्वरक्षय, उरो रोग, रक्तपित्त, अरुचि और समस्त प्रमेहजन्य विकार नष्ट होते हैं।

(**मात्रा**---१ तोला ।)

बृहद्धात्रीघृतम्

(भै. र. । बहुमूत्रा.)

प्र. सं. ३२९० धात्रीघृतम् (बृहत्) देखिये।

(६७६३) बृहद्धान्वन्तरं घृतम्

(र. र. । प्रमेह.)

दन्तीचित्रकमूलानामष्टावष्टौ पलानि च ।
अभयाविंशतिर्देया षट्पलं देवदारु च ॥
कदम्बनीपवरुणपम्पाकाम्रपुनर्नवाः ।
चिरबिल्वश्च सर्वेषां षट्पलानि पृथक् पृथक् ॥
द्वे पञ्चमूल्यौ संकुट्य पृथगाढकसम्मिते ।
पक्वा चतुर्गुणे तोये पादशेषे घृताढकम् ॥
विपचेत्पञ्चलवणैः पञ्चकोलैश्च कार्षिकैः ।
बृहद्धान्वन्तरमिदं घृतं विंशतिमेहनुत् ॥
गुल्मश्वयथुकुष्ठार्शः श्वासहिक्कोदरापहम् ।
आग्नेयं बृंहणं चैव हन्ति नानाव्यथा नृणाम् ॥
रसायनमिदं सर्पिः श्रेष्ठं ब्रह्माभिपूजितम् ॥

क्वाथ---दन्तीमूल और चीतामूल ४०-४० तोले; हर्र १०० तोले, तथा देवदारु, कदम्ब, अशोककी छाल, बरनेकी छाल, अमलतास, आमकी छाल, पुनर्नवा (बिसखपरा) और करञ्जकी छाल ३०-३० तोले एवं दशमूल ८ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ८ गुने पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

कल्क---सेंधा नमक, सामुद्र नमक, काला नमक (संचल), काच लवण, बिड लवण, पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

८ सेर घीमें उपरोक्त क्राथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, शोथ, कुष्ठ, अर्श, श्वास, हिक्का और उदर रोगोंका नाश होता है।

(मात्रा—१ तोला।)

बृहद्वासाद्यं घृतम्

(व. से. ; रे. र. । रक्तपित्ता.)

प्र. सं. ५२४८ महावासाद्यं घृतम् देखिये।

बृहन्नाराचकं घृतम्

(भै. र. । उदर.)

प्र. सं. ३४८३ नाराचघृतम् (बृहद्) देखिये।

(६७६४) बृहन्मसूराद्यं घृतम्

(व. से. । ग्रहण्य.)

मसूरस्य तुला क्वाथे घृतप्रस्थं विपाचयेत्।
पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरम् ॥
तत्सिद्धं द्विगुणे क्षीरे ग्रहणीघ्नं त्रिदोषनुत्।
दुर्नामानिलविष्टम्भं जयेच्चैव प्रवाहिकम् ॥
बलवर्णकरं हृद्यमग्निसन्दीपनं परम् ॥

क्वाथ—३ सेर १० तोले मसूरको कूट कर २५ सेर पानीमें पकावें और ६। सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—पीपल, पीपलामूल, चव, चीता और सोंठ ४-४ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें उपरोक्त क्राथ, कल्क और ४ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और जलांश शुष्क हो जाने पर घीको छान लें।

इसके सेवनसे त्रिदोषज ग्रहणी, अर्श, मलावरोध, वायु और प्रवाहिकाका नाश होता तथा बलवर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है।

यह घृत हृदयके लिये भी हितकारी है।

(मात्रा—१ तोला।)

(६७६५) व्याघ्रीघृतम्

(यो. र. ; भै. र. । स्वरभेदा. ; ग. नि. । स्वरभंगा. ; वृ. मा. । स्व. ; व. से. । अरोचका. ; वृ. यो. त. । त. ८१)

व्याघ्रीस्वरसविपक्वं रास्नावाट्यालगोक्षुर-व्योषैः।
सर्पिः स्वरोपघातं हन्यात् कासञ्च पञ्चविधम् ॥
शुष्कद्रव्यमुपादाय स्वरसानामसम्भवे।
वारिण्यष्टगुणे साध्यं ग्राह्यं पादावशेषितम् ॥

कल्क—रास्ना, पीले फूलकी खरैटी, गोखरु, सोंठ, मिर्च और पीपल ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर घीमें यह कल्क और १२ सेर कटेली का स्वरस डाल कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घीको छान लें।

इसके सेवनसे स्वरभंग और पांच प्रकारकी खांसी नष्ट होती है।

(मात्रा—१ तोला)

यदि कटेलीका रस न मिले तो ६ सेर कटेली को ४८ सेर पानीमें पकावें और १२ सेर रहने पर छान लें।

(६७६६) **व्योषादिघृतम्**

(वृ. मा. । गुल्मा. ; ग. नि. । गुल्मा. २५ ; व. से.)

सव्योषक्षारलवणं दशमूलशृतम् घृतम् ।
कफगुल्मं हरत्याशु सहिङ्गुबिडदाडिमम् ॥

क्वाथ——२ सेर दशमूलको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें ।

कल्क——सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, सेंधानमक, हींग, बिड नमक और अनारदाना १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१ सेर घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और पानी जल जाने पर घीको छान लें ।

इसके सेवनसे कफज गुल्म नष्ट होता है ।

(मात्रा——१ तोला ।)

(६७६७) **व्योषाद्यं घृतम्** (१)

(व. से. । कासा. ; वृ. यो. त. । त. ७८ ; वृ. नि. र. ; यो. र.)

व्योषाजमोदचित्रकजीरकषड्-
ग्रन्थिकचव्यकल्कितम् ।
सर्पिः कफकासहरं वासकरससाधितं समधु ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, चीता, जीरा, पीपलामूल और चव १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१ सेर घीमें ४ सेर बासेका रस और यह कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसमें शहद मिला कर सेवन करनेसे कफज कास नष्ट होती है ।

(मात्रा——१ तोला ।)

(६७६८) **व्योषाद्यं घृतम्** (२)

(भै. र. । अर्शो. ; च. द.)

व्योषगर्भं पलाशस्य त्रिगुणे भस्मवारिणि ।
साधितं पिबतः सर्पिः पतन्त्यर्शांस्यसंशयम् ॥

पलाश छालकी भस्मका (क्षार निर्माण विधिसे बना हुवा) पानी ३ सेर, घी १ सेर और त्रिकुटे का कल्क १० तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

यह घृत अर्शके मस्सोंको नष्ट कर देता है ।

(६७६९) **व्योषाद्यं घृतम्** (३)

(भै. र. । पाण्डु. ; च. द. ; वृ. मा. ग. नि ; व. से. । पाण्डु. ; च. सं. । चि. अ. २०)

व्योषं बिल्वं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्नवम् ।
मुस्तान्ययोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥
वृश्चिकाली च भार्गी च सक्षारैस्तैः शृतं घृतम्
सर्वान् प्रशमयत्येतद् विकारान् मृत्तिका-कृतान् ॥

कल्क——सोंठ, मिर्च, पीपल, बेलकी छाल, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, सफेद और लाल पुनर्नवा, नागरमोथा, लोहचूर्ण, पाठा, बायबिडंग, देवदारु, वृश्चिकाली और भरंगी १-१ तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१४४ तोले (डेढ़ सेर २४ तोले) घीमें उपरोक्त कल्क और ४ गुना (७ सेर १६ तोले)

दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध जल जाय तो घीको छान लें ।

इसके सेवनसे मृत्तिकाभक्षण-जन्य समस्त विकार नष्ट होते हैं ।

(६७७०) व्योषाद्यं नावनं घृतम्

(ग. नि. । स्वरभङ्गा. १२)

व्योषक्षाराग्निचविकाभार्गीपथ्यावधूशिवा-
बलाविदारिगन्धाभिर्विदार्या मधुकेन च ।
सिद्धं सलवणं सर्पिर्नस्यं स्वर्यमनुत्तमम् ॥

कल्क--सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, चीतामूल, चव, भरंगी, हर्र, कचूर, सोंठ, खरैटी, शालपर्णी, विदारीकन्द, मुलैठी और सेंधा नमक १-१ तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१॥ सेर घीमें यह कल्क और ६ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो घीको छान लें ।

इसकी नस्य लेनेसे स्वर सुधरता है ।

इति वकारादिघृतप्रकरणम्



अथ वकारादितैलप्रकरणम्

(६७७१) वचादितैलम् (१)

(वा. भ. । उ. अ. ३०)

वचाहरीतकीलाक्षाकटुरोहिणीचन्दनैः ।
तैलं प्रसाधितं पीतं समूलामपचीं जयेत् ॥

कल्क--बच, हल्दी, लाख, कुटकी और सफेद चन्दन ४-४ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

क्वाथ--बच, हल्दी, लाख, कुटकी और लाल चन्दन ६४-६४ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसे पीनेसे अपची (कण्ठमाला भेद) समूल नष्ट हो जाती है ।

(**मात्रा**--६ माशे ।)

(६७७२) वचादितैलम् (२)

(रा. मा. । स्त्री रोगा ६)

वचाहरिद्राकटुकाप्रियङ्गु-
कृताञ्जलीभिः सहितं विपक्वम् ।
तैलं घृतं गोमहिषीभवं च
नस्येन वृद्धिं स्तनयोर्विधत्ते ॥

क्वाथ--बच, हल्दी, कुटकी, फूल प्रियंगु और लज्जावती १-१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ४० सेर पानीमें पकावें और १० सेर पानी शेष रहने पर छान लें ।

कल्क--क्वाथकी समस्त ओषधियां ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

२॥ सेर तेल अथवा गाय या भैंसके घीमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे स्त्रियोंके स्तन बढ़ते हैं।

(६७७३) वचादिसूर्यपाकतैलम्

(रा. मा. । बालरोगा. ११)

वचाबलामूलकृतेन चूर्ण-
नोन्मिश्रितं सूर्यकरप्रतप्तम्।
प्राहुः शिशूनां सकलामयघ्न-
मभ्यञ्जनात्पुष्टिकरं च तैलम् ॥

१ सेर तिलके तेलमें बच और खरैटीकी जड़का ५–५ तोले बारीक चूर्ण मिला कर धूपमें रख दें। जब वह खूब गरम हो जाय तो छान लें।

इसकी मालिशसे बालकोंके समस्त रोग नष्ट होते और वे पुष्ट होते हैं।

(औषधें मिला कर तेलको कांच पात्रमें भर कर, उसका मुख बन्द करके ७ दिन तक धूपमें रखना चाहिये।)

(६७७४) वचाद्यं तैलम् (१)

(ग नि. । बालरो. ११)

वचावयःस्थातगरकायस्थाचोरकैः शृतम्।
बस्तमूत्रसुराभ्यां च तैलमभ्यञ्जने हितम् ॥

कल्क—बच, आमला, तगर, काकोली और चोरक ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२॥ सेर तिलके तेलमें यह कल्क और ५–५ सेर बकरेका मूत्र तथा सुरा (शराब) मिला कर धीमी अग्नि पर पकावें। जब शराब और मूत्र जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे बालकोंका शोष रोग नष्ट होता है।

(६७७५) वचाद्यं तैलम् (२)

(व. से. । गुल्मा. ; सु. सं. । अ. ३७)

वचापुष्करकुष्ठैलामदनामरसिन्धुजैः।
काकोलीद्वययष्ट्याह्वमेदायुग्मकुटन्नटैः ॥
पाठाजीरकजीवन्तीभार्गीचन्दनकट्फलैः।
सरलागुरुबिल्वाम्रवाजिगन्धाग्निवृद्धिभिः ॥
विडङ्गारग्वधश्यामात्रिवृन्मागधिकादिभिः।
पिष्टैस्तैलं पचेत्क्षीरे पञ्चमूलीरसान्विते ॥
गुल्मानाहाग्निमान्द्यार्शोग्रहणीमूत्रसङ्गिनाम्।
अनुवासनविधौ युक्तं शस्यतेऽनिलरोगिषु ॥

कल्क—बच, पोखरमूल, कूठ, इलायची, मैनफल, देवदारु, सेंधा नमक, काकोली, क्षीरकाकोली, मुलैठी, मेदा, महामेदा, नागरमोथा, पाठा, जीरा, जीवन्ती, भरंगी, सफेद चन्दन, कायफल, चीर, अगर, बेलकी छाल, आमकी छाल, असगन्ध, चीता, वृद्धि, बायबिडंग, अमलतास, काली निसोत, निसोत और पीपल १–१ तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—बेलछाल, अरलुकी छाल, खम्भारीकी छाल, पाढलकी छाल और अरनी ६ सेर १६ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ८ गुने (४९॥ सेर ८ तोले) पानीमें पकावें और १२ सेर ३२ तोले शेष रहने पर छान लें।

३ सेर ८ तोले तिलके तेलमें उपरोक्त कल्क, क्वाथ और ३ सेर ८ तोले दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तैलको छान लें।

इसकी बस्ती लेनेसे गुल्म, आनाह, अग्निमांद्य, अर्श ग्रहणी और मूत्रावरोधका नाश होता है।

(६७७६) वज्रकं तैलम् (१)

(वृ. मा. ; वृ. नि. र. ; र. र. ; व. से. ; च. द. । कुष्ठा. ; वृ. यो. त. । त. १२०)

सप्तपर्णकरञ्जार्कमालतीकरवीरजम् ।
मूलं स्नुहीशिरीषाभ्यां चित्रकास्फोतयोरपि ॥
विषलाङ्गलवज्राख्यकाशीसालं मनःशिलाम् ।
करञ्जबीजं त्रिकटुं त्रिफलां रजनीद्वयम् ॥
सिद्धार्थकं विडङ्गं च प्रपुन्नाटं च संहरेत् ।
मूत्रपिष्टैः पचेत्तैलमेभिः कुष्ठविनाशनम् ॥
अभ्यङ्गाद्वज्रकं नाम नाडीदुष्टव्रणापहम् ॥

कल्क—सतौनेकी जड़की छाल, करञ्जमूल, आककी जड़, मालतीकी जड़, कनेरकी जड़, स्नुही (थोहर) की जड़, सिरसकी जड़की छाल, चित्रक-मूल, कोयलकी जड़, बछनाग, कलियारीकी जड़, वज्री (सेंड-सेहुंडकी जड़), कसीस, हरताल, मनसिल,[1] करञ्जबीज, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हल्दी, दारुहल्दी, सरसों, बाय-बिड़ंग और पंवाड़के बीज समान भाग मिश्रित १ सेर ले कर सबको गोमूत्रमें पीस लें।

८ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ३२ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गोमूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे सब प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं। इसके अतिरिक्त यह नाड़ीव्रण (नासूर) और दुष्ट व्रणोंको भी नष्ट करता है।

[1] कई ग्रन्थोंमें बछनागसे मनसिल तककी ओषधियोंका अभाव है।

(६७७७) वज्रकं तैलम् (२)

(ग. नि. । तैला. २)

मूलं शताह्वाश्वकशिरीषाश्वमारा-
दर्कान्मालत्याश्चित्रकास्फोतनिम्बात् ।
बीजं कारञ्जं सार्षपं प्रापुनाटं
श्रेष्ठं जन्तुघ्नं त्र्यूषणं द्वे हरिद्रे ॥
तैलं पक्वं साधितं तैः समूत्रै-
स्त्वग्दोषाणां कुष्ठनाडीव्रणानाम् ।
अभ्यङ्गेन श्लेष्मवातोद्भवानां
नाशायालं वज्रकं वज्रतुल्यम् ॥

कल्क—सोयेकी जड़, सिरसकी छाल, कनेरकी छाल, आककी जड़की छाल, चमेलीकी जड़, चीतेकी जड़, कोयलकी जड़, नीमकी छाल, करञ्ज-बीज, सरसों, पवांड़के बीज, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हल्दी और दारु-हल्दी समान भाग मिश्रित १ सेर ले कर सबको गोमूत्रमें पीस लें।

८ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ३२ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गोमूत्र जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल त्वग्दोष, कुष्ठ, नाड़ीव्रण और वात-कफज चर्म रोगोंमें उपयोगी है।

इसकी मालिश करनी चाहिये।

(६७७८) **वज्रकं तैलम्** (३) (**महा**)

(ग. नि. । तैला २ ; वा. भ. । चि. अ. १९ ; व. से.)

एरण्डताक्ष्यघननीपकदम्बभार्गी-
कम्पिल्लवेल्लफलिनीसुरवारिणीभिः ।
निर्गुण्डयरुष्करमुराह्वसुवर्णदुग्धा-
श्रीवेष्टगुग्गुलुशिलापटुतालविश्वैः ॥
तुल्यं स्नुगर्कदुग्धं सिद्धं तैलं महावज्रकाह्वम् ।
अतिशयति वज्रकगुणान् श्वित्रार्शोग्रन्थि-
मालाघ्नम् ॥

अरण्डमूल, रसौत, नागरमोथा, अशोककी छाल; कदम्बकी छाल, भरंगी, कमीला, बायबिड़ंग, कलियारीकी जड़, इन्द्रवारुणी (इन्द्रायण) की जड़, संभालु, भिलावा, मुरामांसी, चोक (सत्यानाशीकी जड़), श्रीवेष्ठ (धूप सरल), गूगल, मनसिल, सेंधा नमक, हरताल और सोंठ समान भाग मिश्रित १ सेर ले कर सबको एकत्र पास लें ।

८ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क, ३२ सेर पानी और ८-८ सेर सेहुंड (थूहर) और आकका दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब दूध और पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल श्वित्र, अर्श और गण्डमालाको नष्ट करनेमें अत्यन्त प्रभावशाली है ।

(६७७९) **वज्रीतैलम्**

(शा. सं. । खं २ अ. ९ ; यो. चि. म. । अ. ६ ; र. र. स. । उ. अ. २० ; र. र.)

वज्रीक्षीरं रविक्षीरं द्रवं धत्तूरचित्रजम् ।
महिषीविट्भवं द्रावं सर्वांशं तिलतैलकम् ॥
पचेत्तैलावशेषं च गोमूत्रेऽथ [1] चतुर्गुणे ।
तैलावशेषं पक्त्वा च तत्तैलं प्रस्थमात्रकम् ॥
गन्धकाग्निशिलातालं विडङ्गातिविषा विषम् ।
तिक्तकोशातकी कुष्ठं वचा मांसी कटुत्रयम् ॥
पीतदारु च यष्ट्याह्वं सर्जिकाक्षारजीरकम् ।
देवदारु च कर्षांशं चूर्णं तैले विनिक्षिपेत् ॥
वज्रतैलमिति ख्यातमभ्यङ्गात् सर्वकुष्ठनुत् ॥

स्नुही (सेंड-थूहर) का दूध १ सेर, आकका दूध १ सेर, धतूरे और चीतेका रस १-१ सेर, भैंसके गोबरका रस १ सेर, तिलका तैल ५ सेर और गोमूत्र २० सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब तेल मात्र शेष रह जाय तो छान लें ।

यह तेल १ सेर ले कर उसमें गन्धक, चीता, मनसिल, हरताल, बायबिड़ङ्ग, अतीस, बछनाग, कड़वी तूंबी, कूठ, बच, जटामांसी, सोंठ, मिर्च, पीपल, दारुहल्दी, मुलैठी, सज्जी, जवाखार, जीरा और देवदारुका १।-१। तोला बारीक चूर्ण मिला कर अच्छी तरह घोट कर रक्खें ।

इसकी मालिशसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(६७८०) **वटावरोहादितैलम्**

(वृ. मा. । क्षुद्र रोगा. ; यो. त. । त. ७३)

वटावरोहकेशिन्योश्चूर्णेनादित्यपाचितम ।
गुडूची स्वरसे तैलमभ्याङ्गात्केशरोहणम् ॥

बड़के अङ्कुर और जटामांसीका चूर्ण ५-५ तोले, तिलका तेल १ सेर और गिलोयका स्वरस ४ सेर ले कर सबको एकत्र मिला कर धूपमें रख दें । जब पानी सूख जाय तो तेलको छान लें ।

[1] र. र. स. में गोमूत्रका अभाव है ।

इसकी मालिशसे इन्द्रलुप्तके स्थान पर बाल निकल आते हैं।

(६७८१) वरुणादितैलम्

(वृ. मा. । कर्ण रोगा.)

वरुणार्ककपित्थाम्रजम्बूपल्लवसाधितम् ।
पूतिकर्णापहं तैलं जातीपत्ररसोऽथ वा ॥

क्वाथ—बरना, आक, कैथ, आम और जामनके पत्ते १-१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ४० सेर पानीमें पकावें और १० सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—उपरोक्त पांचों ओषधियां ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२॥ सेर तेलमें यह काथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल अथवा चमेलीके पत्तोंका रस कानमें डालनेसे पूतिकर्ण रोग नष्ट होता है।

(६७८२) वरुणाद्यं तैलम्

(भै. र. ; च. द. ; व. से. । अश्मर्य. ; भा. प्र. । म. खं. २ अश्मर्य.)

त्वक्पत्रपुष्पमूलस्य वरुणात् सत्रिकण्टकात् ।
कषायेण पचेत्तैलं वस्तिनास्थापनेन च ॥
शर्कराश्मरीशूलघ्नं मूत्रकृच्छ्रविनाशनम् ॥

बरनेकी छाल, पत्र, पुष्प और जड़ मिलित ४ सेर, एवं गोखरु ४ सेर ले कर दोनोंको एकत्र कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर शेष रहने पर छान लें।

४ सेर तेलमें यह काथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी आस्थापन बस्ति देनेसे शर्करा, अश्मरी, शूल और मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है।

(६७८३) वंशावलेखादितैलम्

[वृ. मा. । कर्ण रोगा.)

वंशावलेखासंयुक्तं मूत्रे वाऽजाविके भिषक् ।
तैलं पचेत्तेन कर्णं पूरयेत्कर्णशूलिनः ॥

१ सेर तेलमें १० तोले बांसकी छालका कल्क और ४ सेर बकरी या भेड़का मूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होता है।

(६७८४) वाजिगन्धादि तैलम्

(यो. र. । वातव्या. ; वृ. मा. । वाता. ; ग. नि. । वाता. १९)

वाजिगन्धाबलाबिल्वदशमूल्यम्बुसाधितम् ।
गृध्रस्यां तैलमैरण्डं बस्तौ पाने च शस्यते ॥

असगन्ध, खरैंटी, बेलकी छाल और दशमूलकी प्रत्येक ओषधि आधा आधा सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ५२ सेर पानीमें पकावें और १३ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

४। सेर अरण्डीके तेलमें यह काथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब काथ जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी बस्ति लेने और इसे पीनेसे गृध्रसी नष्ट होती है।

(**मात्रा**—१ तोला।)

(६७८५) वातकुलान्तकं तैलम्

(र. र. । वाता.)

मूलञ्चैवाश्वगन्धाया गृहीत्वा खण्डशः शतम् ।
पञ्चाशत् पलमानन्तु जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
पादशेषे हरेत्क्वाथं क्वाथांशं तिलतैलकम् ।
तैलाच्चतुर्गुणं क्षीरं गव्यं वा माहिषन्तथा ॥
शतपुष्पा कणा चैला कुष्ठञ्च कण्टकारिका ।
शुण्ठी यष्टी देवदारु शालपर्णी पुनर्नवा ॥
मञ्जिष्ठा पत्रकं रास्ना वचा पुष्करमूलकम् ।
यवानी भूतिकं मांसी निर्गुण्डी पयस्या बला ॥
वह्निगोक्षुरकश्चैव मृणालं बहुपुत्रिका ।
प्रतिकर्षमिदं योज्यं सर्वमेकत्र पाचयेत् ॥
तैलशेषं समुद्धृत्य सिद्धं वातकुलान्तकम् ।
अभ्यङ्गे योजयेत् पाने नस्यकर्मणि सर्वदा ॥
भग्नानां खञ्जपङ्गूनां शान्तिमाप्नोति नान्यथा॥

क्वाथ—३ सेर १० तोले असगन्धको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—सोया, पीपल, इलायची, कूट, कटेली, सोंठ, मुलैठी, देवदारु, शालपर्णी, पुनर्नवा (बिसखपरा), मजीठ, तेजपात, रास्ना, बच, पोखरमूल, अजवायन, कायफल, जटामांसी, संभालू, क्षीरकाकोली, खरैटी, चीता, गोखरु, कमलनाल और शतावर १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तिलके तेलमें उपरोक्त क्वाथ तथा ८ सेर गाय या भैंसका दूध और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिश करने या नस्य लेने अथवा इसके पीनेसे भग्न, खञ्ज और पङ्गुता आदि वात-रोगोंका नाश होता है।

(६७८६) वातारितैलम् (१)

(ग. नि. । प.र. तैला. २)

शतावर्यास्तुलामेकां तुलां गोक्षुरकस्य च ।
तुलार्धं तिलतैलस्य चैरण्डस्य पलानि षट् ॥
एरण्डपत्रस्वरसपलानि नव कारयेत् ।
बुकशिग्रुकतर्कारी सिन्दुवारसुवर्णकात् ॥
नीलिकाग्रन्थिपर्णाभ्यां करञ्जकेशरञ्जकात् ।
षट्पलं गुग्गुलोर्दत्त्वा तैलं मृद्वग्निना पचेत् ॥
कौब्ज्याक्षेपकपाङ्गुल्यसुप्तत्वङ्मन्दगामिताः ।
पक्षाघातहनुस्तम्भसन्धिरोगादिकानपि ॥
नाशयेत्तत्क्षणादेव तमः सूर्योदये यथा ।
तैलं वातारिनामेदं सर्ववातहरं परम् ॥

क्वाथ—६। सेर शतावर और ६। सेर गोखरुको एकत्र कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर पानी शेष रहने पर छान लें।

कल्क—अरण्डकी जड़, संहजनेकी जड़, अरणी, सफेद संभालू धतूरा, नीलिका, गठीवन, करञ्ज और भंगरा तथा गूगल ६-६ पल ले कर सबको एकत्र पीस लें।

६। सेर तिलका तेल और ६० तोले अरण्डका तेल, ६० तोले अरण्डके पत्तोंका स्वरस एवं उप-

रोक्त क्वाथ और कल्क एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल कुब्जता, आक्षेपक, पङ्गुता, सुप्तता, गमनशक्तिकी मन्दता, पक्षाघात, हनुस्तम्भ, सन्धिगत पीड़ा आदि समस्त वातज रोगोंको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है।

(इसकी मालिशके साथ साथ इसे पीना भी चाहिये। मात्रा— ३ से ६ माशे तक)

(६७८७) **वातारितैलम्** (२) **(महा)**

(र. सं. क. । उल्ला. ५; र. का. धे. । नाडीव्रणा.)

सूतेन्द्रं बलितालकं च कुनटी खल्वे समांशं दिनं
सौवीरेण विमर्द्य तेन वसनं वर्त्तीकृतं लेपयेत् ॥
तैलेन प्रविलेपितं च बहुशो वह्निं ततो दीपये-
त्तस्माद्यद्गलितं च तैलमसितं तेनाङ्गलेपः कृतः॥
जङ्घाबाहुकराग्रपादशिरसां कम्पानशेषाञ्जये-
त्कुष्ठं तीव्रभगन्दरं व्रणगणान्रोगान्महागृध्रसीम् ।
अन्यान् रोगगणांश्च वातजनितान्नाडीव्रणान्दुस्तरान्
विख्यातं भुवनत्रये गदहरं वातारितैलं महत् ॥

पारा, गन्धक, हरताल और मनसिल समान भाग ले कर सबको १ दिन एकत्र घोट कर कज्जली बनावें और फिर उसे कांजीमें घोटकर कपड़ेकी बत्तीपर उसका लेप करके सुखा लें। तत्पश्चात् इस बत्तीको बार बार तेलमें भिगोवें और फिर उसका एक सिरा चिमटेसे पकड़कर दूसरेमें आग लगा दें; इससे जो काला तेल टपके उसे चीनी या काच आदिके पात्रमें एकत्रित कर लें।

इसका लेप करनेसे जंघा, बाहू, हाथोंकी उंगलियोंके पोरवों तथा पैर और सिरका कम्पन; कुष्ठ, तीव्र भगन्दर, अनेक प्रकारके व्रण, गृध्रसी आदि अनेक वातज रोग और कष्टसाध्य नाड़ीव्रण आदिका नाश होता है।

(६७८८) **वायुच्छायासुरेन्द्रतैलम्**

(भै. र. ; धन्व. । वातव्या.)

वाट्यालकं पलशतं तत्समं दशमूलकम् ।
जलषोडशांशके पक्त्वा पादशेषं समुद्धरेत् ॥
एतत्क्वाथे पचेत्तैलं द्वात्रिंशत्पलमेव च ।
कल्कार्थं दीयते तत्र मञ्जिष्ठा रक्तचन्दनम् ॥
कुष्ठमेला देवदारु शैलजं सैन्धवं वचा ।
कक्कोलं पद्मकाष्ठञ्च भृङ्गी तगरपादिका ॥
गुडूची मुद्गपर्णी च माषपर्णी शतावरी ।
नागजिह्वा श्यामलता शतपुष्पा पुनर्नवा ॥
एषां तोलद्वयं भागं दत्त्वा तैलन्तु पाचयेत् ।
एतत्तैलवरं नाम्ना वायुच्छायासुरेन्द्रकम् ॥
सर्ववातविकारेषु हितं पुंसाञ्च योषिताम् ।
हीनशुक्रार्त्तवानाञ्च नारीणाञ्च विशेषतः ॥
चेतो विकारं हन्त्याशु वायुमाक्षेपसम्भवम् ।
मर्मवातं श्रमकृतं गात्रकम्पादिकं तथा ॥
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च वातपित्तसमुद्भवम् ।
अपस्मारे महोन्मादे हितं लेपे च भक्षणे ॥
श्रीमद्गहननाथेन रचितं विश्वसम्पदे ॥

क्वाथ—(१) ६। सेर बला (खरैटी) को २०० सेर पानीमें पकावें और ५० सेर शेष रहने पर छान लें।

(२) ६। सेर दशमूलको २०० सेर पानीमें पकावें और ५० सेर रहने पर छान लें।

कल्क—मजीठ, लाल चन्दन, कूठ, इलायची, देवदारु, भूरि छरीला, सेंधानमक, बच, कंकोल, पद्माक, काकड़ासिंगी, तगर, गिलोय, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, शतावर, अनन्तमूल, काली सारिवा, सोया और पुनर्नवा २–२ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

४ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तैल स्त्री और पुरुषोंके समस्त वातज रोगोंमें हितकारी है विशेषतः शुक्रक्षीणता और आर्तवकी हीनतामें अत्यन्त उपयोगी है। इसकी मालिश करने और इसे पीनेसे चित्त विकृति, आक्षेपक, मर्मगत वायु, श्रम जनित गात्रकम्पन, हिक्का, श्वास, वात पित्तज कास, अपस्मार और महा उन्माद, आदिका नाश होता है।

(**मात्रा**—३ से ६ माशे तक।)

(६७८९) वासाचन्दनाद्यतैलम्

(भै. र.। कासरो.)

चन्दनं रेणुका पूतिर्हयगन्धा प्रसारणी।
त्रिसुगन्धि कणामूलं नागकेशरमेव च ॥
मेदे द्वे च त्रिकटुकं रास्ना मधुकशैलजम्।
शटी कुष्ठं देवदारु वनिता च विभीतकम् ॥
एतेषां पलिकैर्भागैः पचेत्तैलाढकं भिषक्।
वासायाश्च पलशतं जलद्रोणे विपाचयेत् ॥
लाक्षारसाढकश्चैव तथैव दधिमस्तुकम्।
चन्दनश्चामृता भार्गी दशमूलं निदिग्धिका ॥
एतेषां विंशतिपलं जलद्रोणे विपाचयेत्।
पादशेषे स्थिते क्वाथे तैलं तेनैव साधयेत् ॥
कासान् ज्वरान् रक्तपित्तं पाण्डुरोगं हलीमकम्।
कामलाश्च क्षतक्षीणं राजयक्ष्माणमेव च ॥
श्वासान् पञ्चविधान् हन्ति बलवर्णाग्निपुष्टिकृत्।
तैलं वासाचन्दनादि कृष्णात्रेयेण भाषितम् ॥

कल्क—सफेद चन्दन, रेणुका, खट्टाशी (जुन्दबेदस्तर), असगन्ध, प्रसारणी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, पीपलामूल, नागकेसर, मेदा, महामेदा, सोंठ, मिर्च, पीपल, रास्ना, मुलैठी, भूरि छरीला, कचूर, कूठ, देवदारु, फूलप्रियंगु और बहेड़ा ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ—(१) ६। सेर बासेको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर रहने पर छान लें।

(२) लाल चन्दन, गिलोय, भरंगी, दशमूल, और कटेली २०–२० पल (१।–१। सेर) ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

८ सेर तिलके तैलमें उपरोक्त कल्क और दोनों क्वाथ तथा ८ सेर लाखका रस और ८ सेर दहीका पानी (दहीसे २ गुना पानी मिला कर बनाया हुवा तक्र) मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल कास, ज्वर, रक्तपित्त, पाण्डु, हलीमक, कामला, क्षत क्षीणता, राजयक्ष्मा और श्वासमें उपयोगी है। इसकी मालिशसे बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि भी होती है।

(६७९०) वासारुद्रतैलम्

(भै. र. । कुष्ठा.)

त्रिफला निम्बभण्टाकी वृहत्यौ सपुनर्नवा ।
हरिद्रे वृषनिर्गुण्ड्यौ पटोलकनकाह्वयौ ॥
हरितालं शिलाकुष्ठौ लाङ्गलीदाडिमाह्वयौ ।
अपामार्गविषं चैव जयन्ती पूतिकट्फलौ ॥
एषां कर्षद्वयैः कल्कैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ।
चतुर्गुणे गुडूच्याश्च रसे वैद्यः समाहितः ॥
चतुर्गुणन्तु गोक्षीरं वृषपत्ररसं तथा ।
दत्त्वावतारयेद्वैद्यो रुद्रमन्त्रं समाजपेत् ॥
दद्रुकुष्ठं दुष्टव्रणं विसर्पं विद्रधिं तथा ।
नाडीव्रणं व्रणं घोरं वातरक्तं सुदुर्जयम् ॥
सन्निपातज्वरं चैव शिरोरोगं सुदारुणम् ।
शोथश्च गलगण्डश्च श्लीपदन्त्वर्बुदं तथा ॥
वातरोगानशेषांश्च अन्त्रवृद्धिं सुदारुणम् ।
पीनसश्वासकासञ्च सुदारुणभगन्दरम् ॥
उपदंशं महाघोरं चक्षु शूलञ्च नाशयेत् ।
चर्मोत्थान् सर्वरोगांश्च तैलमेतद्विनाशयेत् ॥
रुद्रतैलमिदं नाम्ना स्वयं रुद्रेण भाषितम् ॥

कल्क—हर्र, बहेड़ा, आमला, नीमकी छाल, भण्टाकी (बड़ी कटेली), छोटी और बड़ी कटेली, पुनर्नवा (बिसखपरा), हल्दी, दारुहल्दी, बासा (अडूसा), संभालु, पटोल, धतूरा, हरताल, मनसिल, कूठ, कलियारीकी जड़, अनारकी छाल, अपामार्ग (चिरचिटा), मीठा विष (बछनाग), जयन्ती, खट्टासी (जुन्दबेदस्तर) और कायफल २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क, ८ सेर गिलोयका रस, ८ सेर गोदुग्ध और ८ सेर बासेके पत्तोंका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल दाद, कुष्ठ, दुष्ट व्रण, विसर्प, विद्रधि, नाड़ीव्रण, भयंकर वातरक्त, सन्निपात ज्वर, दारुण शिरोरोग, शोथ, गलगण्ड, श्लीपद, अर्बुद, समस्त वातजरोग, दारुण अन्त्रवृद्धि, पीनस, श्वास, कास, भगन्दर, भयंकर उपदंश, चक्षुशूल और समस्त चर्म रोगोंको नष्ट करता है ।

(६७९१) विचर्चिकारितैलम्

(भै. र. । कुष्ठा.)

जातीनिम्बार्ककुटजद्राणपुष्पाम्भसा समम् ।
कल्कैर्निशाविषव्योषकुपीलुककलिङ्गकैः ॥
अश्वमारशिलातालकासीसैश्च सनागरैः ।
पचेत्कोलमितैर्वैद्यः कटुतैलशरावकम् ॥
एतत्तैलं निहन्त्याशु विचर्चीमतिदारुणाम् ।
नाडीव्रणश्चोपदंशं चिरोत्थश्च भगन्दरम् ॥

कल्क—हल्दी, मीठा विष (बछनाग), सोंठ, मिर्च, पीपल, कुचला, इन्द्रजौ, कनेरकी जड़, मनसिल, हरताल, कसीस और सोंठ साढ़े सात सात माशे ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

४० तोले सरसोंके तेलमें ४०-४० तोले चमेलीके पत्तोंका रस, नीमके पत्तोंका रस, आकका स्वरस, कुड़ेकी छालका रस और द्रोणपुष्पी (गूमा) का रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे अत्यन्त दुखदायी विचर्चिका

नाड़ीव्रण (नासूर), उपदंश और पुराना भगन्दर नष्ट होता है ।

विजयभैरवतैलम्
(सूततैलम्)

(र. चं. ; यो. र. ; वृ. नि. र. ; वै. र. ; र. का. धे. । वातव्या ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. र. स. । उ. अ. २१ ; भै. र. । आमवाता.)

प्र. सं. ६७८७ " वातारि तैलम् " देखिये ।

(६७९२) विजयभैरवतैलम् (महा)

(भै. र. । आमवाता.)

फणिफेनयुतश्चैतन्महद्विजयभैरवम् ॥

यदि विजय भैरव तेलमें अफीम मिला दी जाय तो उसीका नाम " **महा विजय भैरव** " हो जाता है ।

(६७९३) विडङ्गतैलम्

(भै. र. । कृम्य. ; ग. नि. । शिरो रोगा. १ ; यो. र. ; रा. मा. ; र. र. ; व. से. । कृम्य.; यो. त. । त. २४)

सविडङ्गगन्धकशिलासिद्धं
सुरभीजलेन कटुतैलम् ।
आजन्म नयति नाशं
लिक्षासहितांश्च यूकांश्च ॥

कल्क—बायबिड़ंग, गन्धक[१], और मनसिल ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१॥ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ६ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसे लगानेसे यूका (जू) और लिक्षा (लीख) हमेशाके लिये नष्ट हो जाती हैं ।

१. यो. र. में. गन्धकका अभाव है ।

(६७९४) विडङ्गादितैलम् (१)

(भै. र. । श्लीपदा. ; यो. र. ; वृ. मा. ; धन्वं. ; र. र. ; व. से. ; यो. त. । त. ५८ ; वृ. यो. त. । त. १०९)

विडङ्गमरिचार्केषु[१] नागरे चित्रके तथा ।
भद्रदार्वेलकाह्वे च सर्वेषु लवणेषु च ॥
तैलं पक्वं पिबेद्वापि श्लीपदानां निवृत्तये ॥

कल्क—बायबिड़ंग, काली मिर्च, आककी जड़की छाल, सोंठ, चीता, देवदारु, एलकाह्व (एलवालुक), सेंधा, काला नमक (संचल), बिड लवण, सामुद्र लवण और काच लवण १–१ तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

९६ तोले तेलमें यह कल्क और चार गुना पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसे पीनेसे श्लीपद रोग नष्ट होता है ।

(६७९५) विडङ्गादितैलम् (२)

(ग. नि. । शिरो रोगा. ; यो. र. ; व. से. । शिरो. ; यो. त. । त. ७३ ; वृ. यो. त. । त. १३२)

विडङ्गस्वर्जिकादन्तीहिङ्गुगोमूत्रसंयुतम् ।
सम्पक्वं सार्षपं तैलं कृमिघ्नं नस्यमुत्तमम् ॥

१ सारिवार्केषु इति पाठभेदः

कल्क--बायबिड़ंग, सज्जी, दन्तीमूल और हींग ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे शिरोगत कृमि नष्ट होते हैं।

(६७९६) विडङ्गाद्यं तैलम् (१)

(ग. नि. । नासा. ४)

विडङ्गसिन्धुयष्टयाह्वदेवदारुकटुत्रिकैः।
पचेन्नासामयार्तिघ्नं तैलं नस्यप्रयोगतः॥

कल्क--बायबिड़ंग, सेंधा नमक, मुलैठी, देवदारु, सोंठ, मिर्च और पीपल ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

क्वाथ--उपरोक्त ओषधियां १-१ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ५६ सेर पानीमें पकावें और १४ सेर शेष रहने पर छान लें।

३॥ सेर तेलमें यह क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी नस्य लेनेसे नासा रोग नष्ट होते हैं।

(६७९७) विडङ्गाद्यं तैलम् (२)

(ग. नि. । तैला. २)

विडङ्गानि स्नुहीक्षीरमर्कक्षीरं तथैव च।
गुञ्जाफलानि गण्डीरं श्यामा निर्दहनी तथा॥
एतैर्गोमूत्रसम्पिष्टैस्तैलं मूर्ध्नि निधापयेत्।
कृमयः पूरणादेव नश्यन्त्यपि विमार्गगाः॥

कल्क--बायबिड़ंग, स्नुही (सेंड) का दूध, आकका दूध, गुञ्जा (चौंटलीके फल), मजीठ, बाबची और मूर्वा ५-५ तोले ले कर सबको गोमूत्रके साथ पीस लें।

३॥ सेर सरसोंके तेलमें यह कल्क (और १४ सेर गोमूत्र) मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो तेलको छान लें।

इसे शिरमें लगानेसे कृमि नष्ट हो जाते हैं।

(६७९८) विद्रावणतैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

मनःशिलाले सिन्दूरं सौराष्ट्री गन्धकस्तथा।
ससिक्थकं सर्जरसं कासीसं पुरकुन्दरू॥
श्याह्वः शल्लकिकम्पिल्लं कङ्कुष्ठं चाप्यरुष्करम्।
गवां मूत्रेण संसिद्धं कटुतैलं प्रयोजयेत्॥
पामाविचर्चिकादद्रूकण्डूकुष्ठक्रिमीन् व्रणान्।
अभ्यङ्गाच्छमयत्येतन्नाम्ना विद्रावणं मतम्॥

कल्क--मनसिल, हरताल, सिन्दूर, सौराष्ट्री (सोरठी मिट्टी), गन्धक, मोम, राल, कसीस, गूगल, कुन्दरु गोंद, कमल, शल्लकी (शिलारस), कमीला, कंकुष्ट (मुरदासिंह अथवा उसारे रेवन्द), और भिलावा १-१ तोला ले कर पीसने योग्य चीजोंको एकत्र पीस लें।

१॥ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त समस्त ओषधियां और ६ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब मूत्र जल जाए तो तेलको छान लें।

यह तेल पामा, विचर्चिका, दाद, खुजली, कुष्ठ, कृमि और व्रणोंको नष्ट करता है।

इसकी मालिश करनी चाहिये।

(नोट--मोम तेल तैयार होने पर छान कर मिलाना चाहिये ।)

(६७९९) **विपरीतमल्लतैलम्**

(भै. र. । व्रणशोथा. ; भा. प्र. ; च. द. ; धन्व. ; यो. र. । व्रण. ; यो. त. । त. ६० ; वृ. यो. त. । त. १२२.)

सिन्दूरकुष्ठविषहिङ्गुरसोनचित्र-
बालाङ्घ्रिलाङ्गलिककल्कविपक्वतैलम् ।
प्रासादमन्त्रयुतफूत्कृतनुन्नफेनं
क्लिन्नव्रणप्रशमने विपरीतमल्लः ॥
खड्गाभिघातगुरुगण्डमहोपदंश-
नाडीव्रणव्रणविचर्चिककुष्ठपामाः ।
एतान्निहन्तिविपरीतकमल्लनाम
तैलं यथेष्ट शयनासनभोजनस्य ॥

कल्क--सिन्दूर, कूठ, मीठा विष (बछनाग), हींग, ; ल्हसन, चीता, सुगन्धबालाकी जड़ और कलियारीकी जड़ १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

१ सेर तेलमें यह कल्क और ४ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल व्रण, शस्त्रघात, फोड़े, उपदंश, नाड़ीव्रण, विचर्चिका, कुष्ठ और पामाको नष्ट करता है ।

(६८००) **विषतैलम्**

(भै. र. ; धन्व. ; यो. र. ; च. द. । कुष्ठा. ; ग. नि. । कुष्ठा. ३६ ; वृ. मा. ; व. से. ; वृ. नि. र. ; र. र. । कुष्ठा. ; वृ. यो. त. । त. १२०)

नक्तमालं हरिद्रे द्वे अर्कं तगरमेव च [1] **।**
करवीरं वचाकुष्ठमास्फोता रक्तचन्दनम् ॥
मालतीसिन्धुवारश्च मञ्जिष्ठां सप्तपर्णकम् ।*
एषामर्द्धपलान् भागान् विषस्यापि पलं तथा ॥
चतुर्गुणे गवां मूत्रे तैलं प्रस्थं विपाचयेत् ।
श्वित्रविस्फोटकिटिभकीटलूताविचर्चिकाः ॥
कण्डूकच्छुरिकायाश्च ये व्रणा विषदूषिताः ।
ते सर्वे नाशमायान्ति तमः सूर्योदये यथा ॥
विषतैलमिदं नाम्ना सर्वव्रणविशोधनम् ॥

कल्क--करंजबीज, हल्दी, दारुहल्दी, आककी जड़की छाल, तगर, कनेर, बच, कूठ, कोयल, लाल चन्दन, चमेलीके पत्ते, संभालु, मजीठ और सतौनेकी छाल २॥-२॥ तोले तथा मीठा विष (बछनाग) ५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

२ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिला कर मन्दाग्निपर पकावें जब गोमूत्र जल जाय तो तेलको छान लें । यह तैल श्वेत कुष्ठ, विस्फोटक, किटिभ कुष्ठ, मकड़ी आदि विषैले कृमियोंके दंश या स्पर्शसे उत्पन्न पिटिका, विचर्चिका, कण्डु, कच्छुरिका और विष-दूषित व्रणोंको नष्ट करता है ।

१ अर्कस्नुकपय एव चेति पाठान्तरम् ।

* रसकामधेनुमें कल्क द्रव्योंमें मनसिल, हरताल, सिन्दूर और रसौत अधिक हैं ।

यह तेल समस्त प्रकारके व्रणोंको शुद्ध करता है।

(६८०१) **विषगर्भतैलम्** (१) **(महा)**

(वृ. नि. र. । वातव्या. ; यो. र. । वातव्या.)

कनकं तु च निर्गुण्डी तुम्बिनी च पुनर्नवा ।
वातारिश्चाश्वगन्धा च प्रपुन्नाटं सचित्रकम् ॥
सौभाञ्जनं काकमाची कलिकारी च निम्बकम् ।
महानिम्बेश्वरी चैव दशमूलं शतावरी ॥
कारवेल्ली सारिवा च श्रावणी च विदारिका ।
वज्रयर्कौ मेषशृङ्गी च करवीरद्वयं वचा ॥
काकजङ्घा त्वपामार्गबला चातिबलाद्वयम् ।
व्याघ्री महाबला वासा सोमवल्ली प्रसारिणी ॥
पलोन्मितानि चैतानि द्रोणेऽम्भसि विनिःक्षिपेत् ।
पचेत्पादावशेषेस्मिन्कल्कस्य कुडवं क्षिपेत् ॥
त्रिकटुं विषतिन्दुं च रास्ना कुष्ठं विषं घनम् ।
देवदारुर्वत्सनाभो द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥
तुत्थकं कट्फलं पाठा भार्ङ्गी च नवसागरम् ।
त्रायन्ती धन्वयासं च जीरकं चेन्द्रवारुणी ॥
तैलप्रस्थं समादाय पाचयेन्मृदुवह्निना ।
विषगर्भमिदं नाम्ना सर्वान्वातान्व्यपोहति ॥
वक्षोरुकटिजङ्घानां सन्धानं श्रेष्ठमेव च ।
गृध्रसीं च महावातान्सर्वाङ्गग्रहणं तथा ॥
दण्डापतानकं चैव कर्णनादं च शून्यताम् ।
वनमध्ये यथा सिंहात्पलायन्ते यथा मृगाः ॥
तथाऽश्वगजभग्नानां नराणां च चतुष्पदाम् ।
नाशयेन्नात्र सन्देहो विषगर्भप्रलेपनात् ॥

क्वाथ—धतूरा, संभालु, कड़वी तूंबी, पुनर्नवा (बिसखपरा), अरण्डमूल, असगन्ध, पंवाड़, चीतामूल, सहंजनेकी छाल, मकोय, कलियारीकी जड़, नीमकी छाल, बकायनकी छाल, बांझ ककोड़ेकी जड़, दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, शतावर, करेला, सारिवा, गोरखमुण्डी, विदारीकन्द, सेहुंड (सेंड-थोहर), आककी जड़, मेढासिंगी, लाल और सफेद कनेर, बच, काकजंघा, अपामार्ग (चिरचिटा), बला (खरैटी), अतिबला (कंघी), नागबला, कटेली, महाबला, बासा, गिलोय और प्रसारणी ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, कुचला, रास्ना, कूठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, मीठा विष (बछनाग,) जवाखार, सज्जीखार, सेंधानमक, काला नमक (संचल), सामुद्र लवण, काच लवण, बिड लवण, तूतिया, कायफल, पाठा, भरंगी, नौसादर, त्रायमाणा, धमासा, जीरा और इन्द्रायणकी जड़ समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे समस्त वातज रोग; वक्ष, ऊरु, जंघा, कटि और सन्धिगत वायु, गृध्रसी, सर्वांगग्रह, दण्डापतानक, कर्णनाद और शून्यता आदि रोग नष्ट होते हैं।

(६८०२) **विषगर्भतैलम्** (२)

(यो चि. म. । अ. ६)

कनकं तु च निर्गुण्डी तुम्बिनी च पुनर्नवा ।
वातारिश्चाश्वगन्धा च प्रपुन्नाटः सचित्रकः ॥

सोभाञ्जनं काकमाची कलिहारी तु निम्बकैः।
महानिम्बेश्वरी चैव दशमूली शतावरी ॥
कारेल्ली सारिवे द्वे च श्रीपर्णी च विदारिका।
वज्रार्कमेषशृङ्गी च करवीरद्वयं तथा ॥
काकजङ्घा त्वपामार्गं तथा स्यात्संप्रसारिणी।
त्रिफला तत्समांशेन रसं तैलं समानि च ॥
कृष्णस्य तिलतैलं च तैलमेरण्डसार्षपम्।
पचेदेकत्र सर्वं तत्तैलं सिद्धं च बुद्धिमान् ॥
त्रिकटून्यश्वगन्धा च रास्ना कुष्ठं च निम्बकम्।
देवदारु कलिङ्गं च द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥
तुत्थं कट्फलं पाठा भार्ङ्गी च नवसादरम्।
गन्धकं पुष्करं मूलं शिलाजतु सठी वचा ॥
एतानि कर्षमात्राणि तैलशेषे विनिक्षिपेत्।
प्रसृतं च विषं दद्यात् सूक्ष्मचूर्णं विनिक्षिपेत् ॥
विषगर्भमिदं तैलं सर्वव्याधीन् व्यपोहति।
कुक्षिभू षष्टिशङ्खेषु सन्धीनां शोफ एव च ॥
गृध्रसी च शिरोवायुः सर्वाङ्गस्फुटनं तथा।
दण्डापतानकश्चैव कर्णनादं च शून्यता ॥
कम्पनं चार्द्धवातं च बाधिर्यं पलितं तथा।
गण्डमालापचीग्रन्थिशिरःकम्पापतन्त्रकम् ॥
अनेन सर्ववाताश्च सन्निपातास्त्रयोदश।
वनमभ्यागते सिंहे पलायन्ते यथा मृगाः ॥
तथा वातेषु सर्वेषु योजनीयं भिषग्वरैः ॥

क्वाथ—धतूरा, संभालु, कड़वी तूंबी, पुनर्नवा (बिसखपरा), अरण्डमूल, असगन्ध, पंवाड़, चीतामूल, सहंजनेकी छाल, मकोय, कलियारी, नीमकी छाल, बकायनकी छाल, बांझ ककोड़ेकी जड़, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, शतावर, करेला, दो प्रकारकी सारिवा, कायफल, विदारीकन्द, स्नुही (सेंड—सेहुंड), आककी जड़, मेढासिंगी, दो प्रकारके कनेरकी जड़की छाल, काकजंघा, अपामार्ग (चिरचिटा), प्रसारिणी और हर्र, बहेड़ा तथा आमला समान भाग मिश्रित ६। सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और आठ सेर शेष रहने पर छान लें।

काले तिलका तेल, अरण्डका तेल और सरसोंका तेल समान भाग मिश्रित २ सेर ले कर उसमें उपरोक्त क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान कर उसमें निम्न लिखित ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला दें—

सोंठ, मिर्च, पीपल, असगन्ध, रास्ना, कूठ, नीमकी छाल, देवदारु, इन्द्रजौ, जवाखार, सज्जीखार, पांचों नमक (सेंधा, संचल, बिड नमक, काच लवण, सामुद्र लवण), नीला थोथा, कायफल, पाठा, भरंगी, नौसादर, गन्धक, पोखरमूल, शिलाजीत, कचूर और बच १।—१। तोला तथा विष (बछनाग) १० तोले।

इसकी मालिशसे सन्धियोंकी सूजन, गृध्रसी, शिरोवायु, सर्वाङ्गस्फुटन, दण्डापतानक, कर्णनाद, शून्यता, कम्पन, अर्द्धांगवात, बधिरता, पलित, गण्डमाला, अपची, ग्रन्थि, शिरका कांपना, अपतन्त्रक और सन्निपातादिका नाश होता है।

(६८०३) विषगर्भतैलम् (३)

(यो. चि. म. । अ. ६)

विषं च पुष्करं कुष्ठं वचा भार्ङ्गी शतावरी।
शुण्ठी हरिद्रे लशुनं विडङ्गं देवदारु च ॥

अश्वगन्धाजमोदा च मरीचं ग्रन्थिकं बला।
रास्ना प्रसारिणी शिग्रु गुडूची हपुषाभया॥
दशमूलानि निर्गुण्डी मसी पाठा च वानरी।
विशाला शतपुष्पा च प्रत्येकं पलिकान् मितान्॥
चतुर्गुणैर्जलैः पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत्।
तिलतैलं क्षिपेत्प्रस्थं तथैरण्डं च सार्षपम्॥
धत्तूरैरण्डभृङ्गार्करसान् प्रस्थमितान् क्षिपेत्।
पाचयेद्गोमयरसैस्तैलशेषं समुद्धरेत्॥
पलमेकं विषं चात्र सूक्ष्मं कृत्वा विनिक्षिपेत्।
सर्वेषु वातरोगेषु सदाभ्यङ्गे विधीयते॥
सन्धिवाते सन्निपाते त्रिकपृष्ठकटिग्रहे।
पक्षाघाते तथार्द्धाङ्गे गात्रकम्पे च दारुणे॥
कुब्जके च धनुर्वाते गृध्रस्यां च प्रतानके।
विषगर्भमिदं तैलं योजनीयं सदाबुधः॥

क्वाथ—विष (बछनाग), पोखरमूल, कूठ, बच, भरंगी, शतावर, सोंठ, हल्दी, दारुहल्दी, ल्हसन, बायबिड़ंग, देवदारु, असगन्ध, अजमोद, काली मिर्च, पीपलामूल, खरैटी, रास्ना, प्रसारणी, सहंजनेकी छाल, गिलोय, हाऊबेर, हर्र, दशमूलकी प्रत्येक वस्तु, संभालु, शेफालिका (सफेद संभालु), पाठा, कौंचकी जड़, इन्द्रायणकी जड़ और सोया ५–५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ८ गुने (१९॥ सेर) पानीमें पकावें और चौथा भाग शेष रहने पर छान लें।

२ सेर तिलका तेल, २ सेर सरसोंका तेल और २ सेर अरण्डीका तेल तथा उपरोक्त क्वाथ एवं २–२ सेर धतूरे, अरेण्ड, भंगरे और आकके पत्तोंका रस एवं २ सेर गायके गोबरका रस एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें और जब पानी जल जाय तो तेलको छान कर उसमें ५ तोले बछनाग का अत्यन्त बारीक चूर्ण मिला दें।

इसकी मालिशसे सन्धिगत वायु, त्रिकग्रह, पृष्ठग्रह, कटिग्रह, पक्षाघात, अर्द्धांग वात, भयंकर शरीर कम्पन; कुब्जता, धनुर्वात, गृध्रसी और प्रतानक आदि समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं।

(६८०४) **विषगर्भतैलम्** (४)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

निर्गुण्डिकारसप्रस्थं प्रस्थमार्कवजाद्रसात्।
रसो धत्तूरजः प्रस्थो गोमूत्रं प्रस्थ सम्मितम्॥
वचा कुष्ठं हेमबीजं तेजोह्वा कट्फलं तथा।
पलार्धांशानि सर्वैस्तु वत्सनागः समो मतः॥
तैलप्रस्थं पचेद्युक्त्या वातरोगेषु शस्यते।
हेमन्ते हरिणाक्षीणां गाढमालिङ्गनं तथा॥

कल्क—बच, कूठ, धतूरेके बीज, बड़ी मालकंगनी और कायफल २॥–२॥ तोले तथा बछनाग (मीठा विष) १२॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें यह कल्क और २–२ सेर संभालु, भंगरे और धतूरका रस एवं गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं।

(६८०५) **विषगर्भतैलम्** (५)

(व. से. । कर्णरोगा.)

अर्कस्य पत्रस्वरसं निर्गुण्डीस्वरसं तथा।
राजवृक्षादितोयेन सूर्य्यावर्त्तरसं तथा॥

चित्रकोद्भवसम्मिश्रं वज्रक्षीरं तथैव च ।
तथा हुलहुलतोयेन प्रस्थैकेन क्रमेण तु ॥
तैलप्रस्थं पचेत्तस्मिन् हरितालपलद्वयम् ।
सैन्धवश्च पलं योज्यं विषं पादांशकं तथा ॥
एतत्तैलं हरेत् क्षिप्रं कर्णशूलञ्च दुस्तरम् ॥

आकके पत्तोंका रस २ सेर, संभालुका रस २ सेर, अमलतासके पत्तोंका रस २ सेर, हुलहुलका रस ४ सेर, चीतेका क्वाथ २ सेर तथा सेहुंड (सेंड–थूहर) का दूध २ सेर एवं तिलका तेल २ सेर ले कर सबको एकत्र मिला लें तथा उसमें १० तोले हरताल, ५ तोले सेंधा नमक तथा २० तोले बछनाग मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें ।

इसे कानमें डालनेसे दुस्साध्य कर्णशूल भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(६८०६) विषगर्भतैलम् (६) (लघु)

(यो. र. । कुष्ठा. ; वृ. यो. त. । त. ८०.)

तैलाढके समतुषाम्बु हयारिहेम-
निर्गुण्डिभास्करशिफाभृतया तु सिद्धम् ।
धत्तूरकुष्ठफलिनीविषहेमदुग्धा-
रास्नाहयारिकटभीमरिचोपचित्राः ॥
मांसी वचा दहनसर्षपदेवदारु-
दार्वीनिशारुबुजतुत्रिफलासमङ्गाः ।
पिष्ट्वा क्षिपेत्पलमिता विषगर्भमेत-
त्तैलं समस्तपवनामयनाशनं स्यात् ॥

द्रव पदार्थ—कांजी ८ सेर, कनेरकी जड़का क्वाथ ८ सेर, धतूरका रस ८ सेर, संभालुका रस ८ सेर और आककी जड़का क्वाथ ८ सेर ।

कल्क—धतूरा, कूठ, कलियारीकी जड़, विष (बछनाग), चोक (सत्यानाशीकी जड़), रास्ना, कनेरकी जड़की छाल, मालकंगनी, काली मिर्च, बड़ी दन्तीकी जड़, जटामांसी, बच, चीता, सरसों, देवदारु, दारुहल्दी, हल्दी, अरण्डमूल, शिलाजीत, हर्र, बहेड़ा, आमला और मजीठ ५–५ तोले ले कर बारीक पीस लें ।

८ सेर तेलमें उपरोक्त समस्त द्रव पदार्थ और कल्क मिला कर मंदाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी मालिशसे समस्त वातजरोग नष्ट होते हैं ।

(६८०७) विषगर्भतैलम् (७) (लघु)

(यो. र. । वातव्या.)

धत्तूरस्य रसस्य पञ्चकुडवं तैलं तथा काञ्जिकं
प्रस्थानां च चतुष्टयं गदवचात्रिंशत्परं शाणकाः ।
हृद्धात्रीमरिचात्पृथङ् नव विषात्षट् स्वर्णबीजा-
त्पटोः
स्युः सप्ताधिकविंशतिः परिमितं तीव्रानिल-
ध्वंसनम् ॥
पक्षाघातं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं कटिग्रहम् ।
पृष्ठत्रिकशिरःकम्पं सर्वाङ्गग्रहणं तथा ॥

धतूरेका रस और तेल २॥–२॥ सेर तथा कांजी ८ सेर और निम्न लिखित कल्क एकत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें ।

कल्क—कूठ और बच ३०–३० शाण (प्रत्येक ९ तोले ४॥ माशे), हृद्धात्री (हियावली)

और काली मिर्च, प्रत्येक २ तोले ९॥। माशे, बछनाग २२॥ माशे, एवं धतूरेके बीज और सेंधा-नमक २७-२७ शाण (प्रत्येक ८ तोले ५। माशे) ले कर सबको एकत्र पीस लें।

यह तेल पक्षाघात, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, कटिग्रह, पृष्ठ त्रिक और शिरःकम्पन तथा सर्वाङ्ग-ग्रह आदि वातज रोगोंको नष्ट करता है।

विषगर्भतैलम् (८) (लघु)

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

मरिचाद्यं तैलम् प्र. सं. ५२८६ देखिये।

(६८०८) विषतिन्दुकतैलम्

(भै. र. ; धन्व. । वातरक्ता.)

विषतरुफलमज्जप्रस्थयुग्मश्च शिग्रु-
स्वरसलकुचवारि प्रस्थमेकैकशश्च ।
कनकवरुणचित्रापत्रनिर्गुण्डिकास्नुक्-
स्वरसतुरगगन्धावैजयन्तीरसश्च ॥
पृथगिति परिकल्प्य प्रस्थयुग्मेन युग्मं
विषतरुफलमज्जातुल्यतैलं विपक्वम् ।
लशुनसरलयष्टीकुष्ठसिन्धूत्थयुग्मं
दहनतिमिरकृष्णाकल्कयुक्तं सुसिद्धम् ॥
हरति सकलवातान् घोररूपानसाध्यान्
प्रतिदिनमुपलेपात् सुप्तवातस्य जन्तोः ।
कुष्ठमष्टादशविधं द्विविधं वातशोणितम्
वैवर्ण्यं त्वग्गतान् दोषान् नाशयत्याशु मर्दनात् ॥

क्वाथ—(१) कुचलेके छिलके रहित बीज २ सेर ले कर कूट कर १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

(२) १ सेर सहंजनेकी छालको कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें।

(३) लकुच (बढल) की छाल १ सेर ले कर कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें।

(४) धतूरेके पत्तोंका रस या क्वाथ २ सेर।

(५) १ सेर बरनेकी छालको कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें।

(६) बृहद्दन्तीके पत्तोंका रस या क्वाथ २ सेर।

(७) संभालुके पत्तोंका रस २ सेर।

(८) सेहुंड (स्नुही—सेंड) का स्वरस २ सेर।

(९) १ सेर असगन्धको कूट कर ८ सेर पानीमें पकावें और २ सेर शेष रहने पर छान लें।

(१०) अरणीका क्वाथ या पत्तोंका रस २ सेर।

कल्क—लहसन, धूपसरल, मुलैठी, कूठ, सफेद और लाल सेंधा नमक, चीता, हल्दी और पीपल समान भाग मिश्रित ४० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

४ सेर तेलमें उपरोक्त समस्त क्वाथ और स्वरस तथा कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे भयंकर वातव्याधि, सुप्त-वात, अठारह प्रकारके कुष्ठ, द्विविध वातरक्त, विव-र्णता और त्वग्विकार नष्ट होते हैं।

(६८०९) विषादनं तैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

कम्पिल्लकनिशायुग्मैः शालनिर्यासचित्रकैः ।
पुरकीटारिसंयुक्तैः पालिकैः सुविचूर्णितैः ॥
एकीकृत्य समैरेभिर्विषस्य च पलद्वयम् ।
आतपे स्थापयेद्धीमान् कटुतैलपरिप्लुतम् ॥
विषादनमिदं तैलं लेपात्सिध्मविचर्चिके ।
हन्ति पामापचीव्यङ्गदुष्टव्रणभगन्दरान् ॥

कमीला, हल्दी, दारुहल्दी, राल, चीता, गूगल और बायबिड़ंगका चूर्ण ५-५ तोले तथा विष (बछनाग) का चूर्ण १० तोले ले कर सबको सरसोंके तेलमें मिला कर धूपमें रख दें।

(४॥ सेर तेलमें उपरोक्त ओषधियां और १८ सेर पानी मिला कर धूपमें रक्खें। जब पानी सूख जाय तो तेलको छान लें।)

इसकी मालिशसे सिध्म, विचर्चिका, पामा, अपची, व्यङ्ग, दुष्ट ब्रण और भगन्दरका नाश होता है।

(६८१०) विष्णुतैलम् (१)

(भै. र. ; धन्व. । वातव्या; वृ. यो. त. । त. ९०)

शालपर्णी पृश्निपर्णी बला च बहुपुत्रिका ।
एरण्डस्य च मूलानि बृहत्योः पूतिकस्य च ॥
गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च ।
एतेषां पलिकैर्भागैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
आजं वा यदि वा गव्यं क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ।
अस्य तैलस्य पक्कस्य शृणु वीर्यमतः परम् ॥
अश्वानां वातभग्नानां कुञ्जराणां तथैव च ।
अपुमांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन पुमान भवेत् ॥
हृच्छूले पार्श्वशूले च तथैवार्द्धावभेदके ।
कामलापाण्डुरोगेषु शर्करास्वश्मरीषु च ॥
क्षीणेन्द्रिया नरा ये च जरया जर्जरीकृताः ।
येषाञ्चैव क्षयो व्याधिरन्त्रवृद्धिश्च दारुणा ॥
अर्दितं गलगण्डञ्च वातशोणितमेव च ।
स्त्रियो या न प्रसूयन्ते तासाञ्चैव प्रदापयेत् ॥
गर्भमश्वतरी विन्द्यान्न च मृत्युवशं व्रजेत् ।
एतत्तैलवरं चैव विष्णुना परिकीर्त्तितम् ॥

कल्क—शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, खरैटी, शतावर, अरण्डकी जड़, छोटी और बड़ी कटेलीकी जड़, गवेधुक (नागबला) की जड़ और कटसरैयाकी जड़ ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें यह कल्क और ८ सेर बकरी या गायका दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब दूध जल जाए तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे वातव्याधि-पीड़ित घोड़े और हाथी भी स्वस्थ हो जाते हैं। पौरुषहीन व्यक्तियोंमें पुरुषत्व आ जाता है। इसके अतिरिक्त यह तेल हृच्छूल, पार्श्वशूल, अर्द्धावभेदक, पाण्डु, कामला, शर्करा, अश्मरी, क्षय, भयंकर अन्त्रवृद्धि, अर्दित, गलगण्ड और वातरक्तको भी नष्ट करता है।

जो पुरुष वृद्धावस्थाके कारण क्षीण हो गये हैं और जिन स्त्रियोंके सन्तान नहीं होती उन्हें यह तेल सेवन करना चाहिये।

(६८११) विष्णुतैलम् (२) (मध्यम)

(भै. र. ; धन्व. । वात.)

शतावरी चांशुमती पृश्निपर्णी शटी बला ।
एरण्डस्य च मूलानि बृहत्योः पूतिकस्य च ॥

गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च ।
एषां द्विपलिकान् भागान् जलद्रोणे विपाचयेत्॥
पादशेषे च पूते च गर्भश्चैनं समावपेत् ।
पुनर्नवा वचा दारु शताह्वा चन्दनागुरुः ॥
शैलेयं तगरं कुष्ठमेलामांसी स्थिरा बला ।
अश्वाह्वा सैन्धवं रास्ना पलार्द्धानि च पेषयेत् ॥
गव्याजपयसोः प्रस्थौ द्वौ द्वावत्र प्रदापयेत् ।
शतावरीरसप्रस्थं तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
अस्य तैलस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम् ।
अश्वानां वातभग्नानां कुञ्जराणां तथा नृणाम् ॥
तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत् ।
अपुमांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन पुमान भवेत् ॥
गर्भमश्वतरी विन्द्यात्किं पुनर्मानुषी तथा ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च तथैवार्द्धावभेदकम् ॥
अपचीं गण्डमालाञ्च वातरक्तगलग्रहम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च अश्मरीञ्चैव नाशयेत् ॥
तैलमेतद्भगवता विष्णुना परिकीर्त्तितम् ।
विष्णुतैलमिदं ख्यातं वातान्तकरणं शुभम् ॥

क्वाथ—शतावर, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कचूर, खरैटी, अरण्डकी जड़, छोटी और बड़ी कटेलीकी जड़, करञ्जुवेकी जड़, नागबलाकी जड़ और कटसरैयाकी जड़ १०-१० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—पुनर्नवा (बिसखपरा), बच, देवदारु, सोया, सफेद चन्दन, अगर, भूरि छरीला, तगर, कूठ, इलायची, जटामांसी, शालपर्णी, बला (खरैटी), असगन्ध, सेंधा नमक और रास्ना २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

२ सेर तेलमें उपरोक्त क्काथ और कल्क तथा ४-४ सेर गाय और बकरीका दूध एवं २ सेर शतावरका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल हाथी, घोड़ों और मनुष्योंके समस्त वातज रोगोंको नष्ट करता है ।

इसे पीनेसे नपुंसक पुरुषमें अवश्यही पुरुषातन आ जाता है । इसके प्रभावसे मानुषी (स्त्री) तो क्या अश्वतरी भी गर्भ धारण कर लेती है ।

इसके अतिरिक्त यह तैल हृदयशूल, पार्श्वशूल, अर्धावभेदक, अपची, गण्डमाला, वातरक्त, गलग्रह, कामला, पाण्डु और अश्मरीको भी नष्ट करता है ।

(६८१२) विष्णुतैलम् (३) (बृहद्)

(भै. र. ; धन्व. । वातव्या.)

अश्वगन्धाजलधरौ जीवकर्षभकौ शटी ।
काकोली क्षीरकाकोली जीवन्ती मधुयष्टिका ॥
मधूरिका देवदारु पद्मकाष्ठञ्च शैलजम् ।
मांसी चैला त्वचं कुष्ठं वचाचन्दनकुङ्कुमम् ॥
मञ्जिष्ठा मृगनाभिश्च श्वेतचन्दनरेणुकम् ।
पर्णिनी कुन्दखोटिश्च ग्रन्थिकश्च नखी तथा ॥
एतेषां पलिकैर्भागैस्तैलस्यापि तथाढकम् ।
शतावरीरससमं दुग्धश्चापि समं पचेत् ॥
विष्णुतैलमिदं श्रेष्ठं सर्ववातविकारनुत् ।
ऊर्ध्ववातं तथा वातं अंगुलिग्रहमेव च ॥
शिरोमध्यगतं वातं मन्यास्तम्भगलग्रहम् ।
हन्ति नानाविधं वातं सन्धिमज्जगतं तथा ॥

यस्य शुष्यति चैकाङ्गं गतिर्यस्य च विह्वला ।
ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवा ॥
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥

कल्क—असगन्ध, नागरमोथा, जीवक, ऋषभक, कचूर, काकोली, क्षीर काकोली, जीवन्ती, मुलैठी, सौंफ, देवदारु, पद्माक, भूरिछरीला, जटामांसी, इलायची, दालचीनी, कूठ, बच, लाल चन्दन, केसर, मजीठ, कस्तूरी, सफेद चन्दन, रेणुका, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, कुन्दरु, गूगल और नखी ५—५ तोले ले कर सबको बारीक पीस लें ।

८ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क, ८ सेर शतावरका रस और ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल ऊर्ध्ववात, उंगलीग्रह, शिरोगत वायु, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, सन्धिगत वायु, मज्जागत वायु और अन्य वातज तथा पित्तज रोगोंको नष्ट करता है ।

जिसका कोई अंग सूखता जाता हो या जो लड़खड़ाकर चलता हो उसके लिये यह तेल उपयोगी है ।

(६८१३) विष्यन्दनतैलम्

(भै. र. । भगन्दरा. ; वृ. मा. ; यो. र. ; व. से., ग. नि. । भगन्दरा. ७; वृ. यो. त. । त. ११६)

चित्रकार्कौ त्रिवृत्पाठे मलपूहयमारकौ ।
सुधां वचां लाङ्गलिकीं हरितालं सुवर्चिकाम् ॥
ज्योतिष्मतीञ्च संहृत्य तैलं धीरो विपाचयेत् ।
एतद्विष्यन्दनं नाम तैलं दद्याद्भगन्दरे ॥
शोधनं रोपणं चैव सवर्णकरणं परम् ॥

कल्क—चीतेकी जड़, आककी जड़, निसोत, पाठा, कठगूलर, कनेरकी जड़की छाल, थूहर (सेंड) की जड़, बच, कलियारी, हरताल, सज्जी और मालकंगनी १।—१। तोला ले कर सबको बारीक पीस लें ।

१॥ सेर तेलमें यह कल्क और ६ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल भगन्दरको शुद्ध करके भर देता है तथा उस स्थानके रंगको भी सवर्ण कर देता है ।

(६८१४) विसर्पनाशनतैलम्

(र. र. स. । उ. खं. अ. २०)

एरण्डतुम्बिनीनिम्बबाकुचीचक्रमर्दकम् ।
तिक्तकोशातकीबीजमङ्कोल्लश्चञ्चुबीजकम् ॥
गोमूत्रदधिदुग्धैस्तु भावयेत्तिलजेन च ।
मूत्रेणाजाप्रसूतेन तैलं पातालयन्त्रजम् ॥
विसर्पं नाशयत्याशु श्वेतकुष्ठं च तत्क्षणात् ॥

अरण्डके बीज, कड़वी तूंबीके बीज, नीमके बीज, बाबची, पंमाड़के बीज, कड़वी तोरीके बीज, अंकोलके बीज और चोंचके बीज समान भाग ले कर सबको एकत्र करके गोमूत्र, दही, दूध और बकरीके मूत्रकी १—१ भावना दे कर तिलके तेलमें भिगो लें और फिर पाताल यन्त्रसे तेल निकालें ।

इसकी मालिशसे विसर्प और श्वेत कुष्ठ अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है ।

(६८१५) विसर्पहरतैलम्

(र. र. स. । उ. अ. २०)

एरण्डतुम्बीकटुनिम्बचक्र-
मर्दोन्थबीजानि च सोमराजी ।
अङ्कोलबीजानि समानि कृत्वा
पातालयन्त्रेण सुतैलमेषाम् ॥
प्रगृह्य तेनाऽथ विमर्दयीत
विसर्पकादीनि मृतिं प्रयान्ति ॥

अरण्डके बीज, कड़वी तूंबीके बीज, नीमके बीज (निबौली), पंमाड़के बीज, बावची और अंकोलके बीज समान भाग ले कर पाताल यन्त्रसे तेल निकालें ।

इसकी मालिशसे विसर्पादि नष्ट होते हैं ।

(६८१६) वीरतर्वादितैलम्

(भा. प्र. । म. खं. २ ; व. से. । अश्मर्य.)

वीरवृक्षाश्मभेदाग्निमन्थश्योनाकपाटलाः ।
वृक्षादनी सहैरण्डभल्लूकोशीरपद्मकम् ॥
कुशकाशशरेक्षुणामास्फोताकोकिलाक्षयोः ।
शतावरी श्वदंष्ट्रा च सोत्कटाद्वयवञ्जुलाः ॥
कपोतवङ्का श्रीपर्णी काश्मरीमूलसंयुता ।
एतैः कषायैः कल्कैश्च तैलं धीरो विपाचयेत् ॥
वातपित्तविकारेषु वस्तिं दद्याद्विचक्षणः ।
शर्कराश्मरिशूलघ्नं मूत्रकृच्छ्रविनाशनम् ॥

क्वाथ—अर्जुनकी छाल, पाषाण भेद, अरणी, अरलुकी छाल, पाढलकी छाल, विदारीकन्द, अरण्डमूल, श्योनाक (अरलु) की छाल, खस, पद्माक, कुशाकी जड़, कासकी जड़, शर (सरकण्डे) की जड़, ईखकी जड़, अपराजिता (कोयल), तालमखानेका पंचांग, शतावर, गोखरु, दो प्रकारका उंटकटारा, बेत, ब्राह्मी, शालपर्णी और खम्भारीकी जड़की छाल २०-२० तोले ले कर सबको एकत्र कूटकर ४८ सेर पानीमें पकावें और १२ सेर शेष रहने पर छान लें ।

कल्क—उपरोक्त ओषधियां १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

३ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

वातपित्त-प्रधान विकारोंमें इसकी वस्ति देनी चाहिये ।

यह तेल शर्करा, अश्मरी, शूल और मूत्र कृच्छ्रको नष्ट करता है ।

वृद्धमरिचाद्यं तैलम्

(यो. चि. म.)

मरिचाद्यं तैलम् (३) प्र. सं. ५२८८ देखिये ।

(६८१७) वृषमूलादितैलम्

(च. सं. । चि. अ. ६ अ. २८)

वृषमूलगुडूच्योश्च द्विशतस्य शतस्य च ।
अश्वगन्धाचित्रकयोः क्वाथे तैलाढकं पचेत् ॥
सक्षीरं वायुना भग्ने दद्याज्जर्जरिते तथा ॥

बासेकी जड़, गिलोय, असगन्ध और चीता ६।-६। सेर ले कर सबको पृथक् पृथक् कूट कर ३२-३२ सेर पानीमें पकावें और ८-८ सेर शेष रहने पर छान लें ।

८ सेर तेलमें उपरोक्त समस्त क्वाथ और ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्निपर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

वायुसे भग्न अंगों पर इस तेलकी मालिश करनी चाहिये।

बृहज्जातिकाद्यं तैलम्

(भै. र. ; धन्व. । व्रणशोथा.)

प्र. सं. २०५३ जात्यादि तैलम् देखिये।

(६८१८) बृहत्कासीसाद्यं तैलम्

(भै. र; भा. प्र. ; व. से. । अर्शो.)

कासीसं सैन्धवं कृष्णा शुण्ठी कुष्ठश्च लाङ्गली।
शिलाभिदश्वमारश्च दन्तीजन्तुघ्नचित्रकम् ॥
तालकं कुनटी स्वर्णक्षीरी चेतैः पचेद्भिषक् ।
तैलं स्नुह्यर्कपयसा गवां मूत्रं चतुर्गुणम् ॥
एतदभ्यङ्गतोऽर्शांसि क्षारेणेव पतन्ति हि ।
क्षारकर्म्मकरं ह्येतन्न च सन्दूषयेद्वलिम् ॥

कल्क—कसीस, सेंधा, पीपल, सोंठ, कूठ, कलियारी, पाषाणभेद, कनेर, दन्तीमूल, बायबिडंग, चीता, हरताल, मनसिल और चोक (सत्यानासीकी जड़) समान भाग मिश्रित २० तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और ८-८ सेर स्नुही (थोहर) और आकका दूध एवं गोमूत्र मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसके लगानेसे अर्शके मस्से गिर जाते हैं। यह तेल क्षारके समान मस्सोंको काट देता है और हानि नहीं पहुंचाता।

(६८१९) बृहत्किङ्किणीतैलम्

(भै. र. । शिरोरोगा.)

किङ्किणीप्रस्थमेकञ्च प्रस्थं सहचरस्य च ।
कृष्णधुस्तूरकप्रस्थं प्रस्थञ्च सिन्धुवारकम् ॥
पचेत् पात्रे जलं दत्त्वा पादशेषं समुद्धरेत् ।
तैलप्रस्थं विपक्तव्यं द्रव्याणिमानि दापयेत् ॥
यष्टी कणा पयोदश्च गन्धकं कुष्ठमेव च ।
समुद्रान्ता तथा शृङ्गी किङ्किणी राजस्वर्णकम् ॥
रास्ना मधुरिका झिण्टीमूलमीश्वरीमेव च ।
विषमाधूकमञ्जिष्ठा शोभाञ्जनत्वचं तथा ॥
एषां कर्षद्वयञ्चैव पिष्ट्वा चैव समावपेत् ।
निहन्ति पूतिकर्णञ्च कर्णस्रावं सकण्डुकम् ॥
कर्णनादं कर्णशोथं बाधिर्यं दारुणं तथा ।
शिरोरोगं नेत्ररोगं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ॥
एतान् रोगान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

क्वाथ—१-१ सेर कण्टाई, कटसरैया, काला धतूरा और संभालूको पृथक् पृथ कूट कर ८-८ सेर पानीमें पकावें और २-२ सेर शेष रहने पर छान कर सबको एकत्र मिला लें।

कल्क—मुलैठी, पीपल, नागरमोथा, गन्धक, कूठ, धमासा, काकड़ासिंगी, कंटाई, कनक धतूरा, रास्ना, सौंफ, कटसरैयाकी जड़, बांझ ककोड़ेकी जड़, विषमाधूक (बिगमा), मजीठ और सहंजनेकी छाल २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

यह तेल पूतिकर्ण, कर्णस्राव, कानकी खुजली, कर्णनाद, कर्णशोथ, भयंकर बधिरता, शिरोरोग, नेत्र रोग, मन्यास्तम्भ और गलग्रहको शीघ्रही नष्ट कर देता है।

(६८२०) बृहत्किरातादितैलम्

(धन्व. । ज्वरा.)

कैरातस्य तुलामानं जलद्रोणे विपाचयेत्।
कटुतैलस्य पात्रार्द्धं तेनैव साधयेद्भिषक् ॥
मूर्वा लाक्षा द्वयोः क्वाथो काञ्जिकं दधि
मस्तु च।
एतानि तैलतुल्यानि कल्कानेतांश्च सम्पचेत् ॥
भूनिम्बः श्रेयसी रास्ना कुष्ठं लाक्षेन्द्रवारुणी।
मञ्जिष्ठा च हरिद्रे द्वे मूर्वामधुकमुस्तकम् ॥
वर्षाभूः सैन्धवं मांसी बृहती च तथा बिडम्।
ह्रीबेरं शतमूली च चन्दनं कटुरोहिणी ॥
हयगन्धा शताह्वा च रेणुका सुरदारु च।
उशीरं पद्मकं धान्यं पिप्पली च वचा शठी ॥
फलत्रिकं यवान्यौ द्वे भृङ्गी गोक्षुर एव च।
पर्ण्यौ द्वे तरुणीमूलं विडङ्गं जीरकद्वयम् ॥
महानिम्बश्च हवुषा यवक्षारो महौषधम्।
एषां कर्षद्वयं क्षिप्त्वा साधयेन्मृदुवह्निना ॥
यथाहिवर्गं विनिहन्ति तार्क्ष्यो
यथा च भास्वांस्तिमिरस्य सङ्घम्।
तथैव सर्वं ज्वरवर्गमेतद-
भ्यङ्गमात्रेण निहन्ति तैलम् ॥
सन्ततं सततादींश्च निखिलान् विषमज्वरान्।
प्लीहाश्रितान् सशोथान् वा प्रमेहज्वरमेव च ॥
अग्निं च कुरुते दीप्तं बलवर्णकरं परम्।
पाण्ड्वादीन् हन्ति रोगांश्च किराताद्यमिदं
बृहत् ॥

क्वाथ—(१) ६। सेर चिरायतेको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

(२) २ सेर मूर्वाको १६ सेर पानीमें पका कर ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

(३) २ सेर लाखको १६ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—चिरायता, गजपीपल, रास्ना, कूठ, लाख, इन्द्रायणकी जड़, मजीठ, हल्दी, दारुहल्दी, मूर्वा, मुलैठी, नागरमोथा, पुनर्नवा (बिसखपरा), सेंधा, जटामांसी, कटेली, बिड नमक, सुगन्धबाला, शतावर, सफेद चन्दन, कुटकी, असगन्ध, सोया, रेणुका, देवदारु, खस, पद्माक, धनिया, पीपल, बच, कचूर, हर्र, बहेड़ा, आमला, अजवायन, अजमोद, काकड़ासिंगी, गोखरु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दन्तीमूल, बायबिड़ंग, सफेद और काला जीरा, बकायनकी छाल, हपुषा, जवाखार और सोंठ २॥-२॥ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

४ सेर सरसोंके तेलमें उपरोक्त तीनों काथ, ४-४ सेर दही, मस्तु, कांजी और उपरोक्त कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाए तो तेलको छान लें।

जिस प्रकार गरुड़ सर्पोंको और सूर्य अन्धकारको नष्ट कर देता है इसी प्रकार यह तेल समस्त ज्वरोंको नष्ट कर देता है। ज्वरमें इसकी मालिश करनी चाहिये।

यह सन्तत, सतत आदि विषमज्वर, प्लीहादोषके कारण रहने वाला ज्वर, शोथयुक्त ज्वर,

प्रमेहयुक्त ज्वर और पाण्डुको नष्ट करके बल वर्ण और अग्निकी वृद्धि करता है।

(६८२१) बृहत्पिप्पल्याद्यतैलम्

(भै. र. । ज्वरा. ; धन्व.)

पिप्पली मुस्तकं धान्यं सैन्धवं त्रिफला वचा।
यमानी चाजमोदा च चन्दनं पुष्कराह्वयम् ॥
शटी द्राक्षा गवाक्षी च शालपर्णी त्रिकण्टकम्।
भूनिम्बारिष्टपत्राणि महानिम्बं निदिग्धिका ॥
गुडूची पृश्निपर्णी च बृहती दन्तिचित्रकौ।
दार्वी हरिद्रा वृक्षाम्लं पर्पटं गजपिप्पली ॥
एतेषां कार्षिकैः कल्कैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत्।
दधिकाञ्जिकतक्रैश्च मातुलुङ्गरसैस्तथा ॥
स्नेहमात्रासमैरेभिः शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
सिद्धमेतत् प्रयोक्तव्यं जीर्णज्वरमपोहति ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव दोषत्रयसमुद्भवम्।
सन्ततं सततान्येद्युस्तृतीयकचतुर्थकान् ॥
मासजं पक्षजञ्चैव चिरकालानुबन्धिनम्।
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु पिप्पल्याद्यमिदं महत् ॥

कल्क—पीपल, नागरमोथा, धनिया, सेंधा-नमक, हर्र, बहेड़ा, आमला, बच, अजवायन, अज-मोद, सफेद चन्दन, पोखरमूल, कचूर, मुनक्का, इन्द्रायणकी जड़, शालपर्णी, गोखरु, चिरायता, नीमके पत्ते, बकायनकी छाल, कटेली, गिलोय, पृष्ट-पर्णी, बड़ी कटेली, दन्तीमूल, चीतामूल, दारुहल्दी, हल्दी, तिन्तड़ीक, पित्तपापड़ा और गजपीपल १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त कल्क और २-२ सेर दही, कांजी, तक्र तथा बिजौरेका रस मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे समस्त प्रकारके जीर्णज्वर; एकदोषज, द्विदोषज और सन्निपातज ज्वर, सन्तत, सतत, अन्येद्युः, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर तथा महीना महीना भर या १५-१५ दिन पश्चात् आने वाला जीर्ण ज्वर आदि समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं।

(६८२२) बृहदङ्गारकतैलम्

(भै. र. । ज्वरा.)

शुष्कमूलादिकस्याङ्गैरङ्गैरङ्गारकस्य च।
पक्वं तैलं ज्वरहरं शोथपाण्डामयापहम् ॥
बृहदङ्गारकं तैलं जलमत्र चतुर्गुणम् ॥

शुष्क मूलादि तैल और अंगारक तैल[1] के कल्क तथा चार गुने पानीके साथ तैल सिद्ध करें।

इसकी मालिशसे ज्वर, शोथ और पाण्डुका नाश होता है।

(६८२३) बृहद्गुडूचीतैलम्

(भै. र. ; धन्व. । वातरक्ता.)

शतं छिन्नरुहायाश्च जलद्रोणे विपाचयेत्।
तेन पादावशेषेण तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥
क्षीरं चतुर्गुणं दद्यात् कल्कानेतान् प्रयत्नतः।
अश्वगन्धा विदारी च काकोल्यौ हरिचन्दनम्।

---

१. अङ्गारक तैलका कल्क—मूर्वा, लाख, हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, इन्द्रायणकी जड़, कटेली, सेंधा, कूठ, रास्ना, जटामांसी और शतावर।

शुष्कमूलादि तैल (श) में देखिये।

शतावरी चातिबला श्वदंष्ट्रा बृहतीद्वयम् ।
कृमिघ्नं त्रिफला रास्ना त्रायमाणा च शारिवा।
जीवन्ती ग्रन्थिकं व्योषं बाकुची भेकपर्णिका।
विशाला ग्रन्थिपर्णं च मञ्जिष्ठा चन्दनं निशा।
शताह्वा सप्तपर्णी च कार्षिकाण्युपकल्पयेत् ।
पानाभ्यञ्जननस्येषु वातरक्ते प्रयोजयेत् ॥
वातरक्तमुदावर्तं कुष्ठान्यष्टादशैव तु ।
हनुस्तम्भं प्रमेहं च कामलां पाण्डुतां जयेत् ॥
विस्फोटं च विसर्पं च नाडीव्रणभगन्दरम् ।
विचर्चिकां गात्रकण्डुं पाददाहं विशेषतः ॥
एतत्तैलवरं श्रेष्ठं बलीपलितनाशनम् ।
आत्रेयनिर्मितं चैव बलवर्णकरं स्मृतम् ॥

क्वाथ—६। सेर गिलोयको कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—असगन्ध, विदारीकन्द, काकोली, क्षीर काकोली, सफेद चन्दन, शतावर, अतिबला (कंघी), गोखरु, कटेली, बड़ी कटेली, बायबिडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, रास्ना, त्रायमाना, सारिवा, जीवन्ती, पीपलामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, बाबची, मण्डूकपर्णी, इन्द्रायणकी जड़, गठीवन (गठौना), मजीठ, लाल चन्दन, हल्दी, सोया और लज्जालु १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें उपरोक्त क्वाथ, कल्क और ८ सेर दूध मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलांश शुष्क हो जाय तो तेलको छान लें।

इसे पिलाना चाहिये तथा शरीर पर इसकी मालिश करनी और नस्य देनी चाहिये।

यह तेल वातरक्त, उदावर्त, १८ प्रकारके कुष्ठ, हनुस्तम्भ, प्रमेह, कामला, पाण्डु, विस्फोटक, विसर्प, नाड़ीव्रण (नासूर), भगन्दर, विचर्चिका, कण्डू, पाददाह और बलि पलितको नष्ट तथा बल वर्णकी वृद्धि करता है।

(६८२४) बृहद्ग्रहणीमिहिरतैलम्

(भै. र. । ग्रहण्य.)

तैलं प्रस्थमितं ग्राह्यं तक्रं दद्याच्चतुर्गुणम् ।
कुटजं धान्यकश्चैव ग्राह्यं पलशतं पृथक् ॥
तयोः क्वाथं पचेद् द्रोणे ह्यम्बुपादावशेषितम् ।
एकीकृत्य पचेद्वैद्यः कल्कं कर्षमितं पृथक् ॥
धान्यकं धातकी लोध्रं समङ्गातिविषा शिवा ।
लवङ्गं बालकश्चैव शृङ्गाटकरसाञ्जने ॥
नागपुष्पं पद्मकश्च गुडूचीन्द्रयवं तथा ।
प्रियङ्गु कटुकी पद्मकेशरं तगरं तथा ॥
शरमूलं भृङ्गराजः केशराजः पुनर्नवा ।
आम्रजम्बूकदम्बानां वल्कलानि च दापयेत् ॥
ग्रहणीं हन्ति तच्छीघ्रं वलीपलितनाशनम् ।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥
ज्वरं तृष्णां तथा श्वासं कासं हिक्कां वमिं भ्रमिम् ।
सोपद्रवं कोष्ठरुजं नाशयेत् सद्य एव हि ॥
वशीकरणमेतद्धि पुष्ययोगेन पाचयेत् ।
ग्रहणीमिहिरं नाम तैलं भुवनमङ्गलम् ॥

क्वाथ-(१) कुड़ेकी छाल ६। सेर; पाकार्थ जल ३२ सेर। शेष क्वाथ ८ सेर।

(२) धनिया ६। सेर। पाकार्थ जल ३२ सेर। शेष क्वाथ ८ सेर।

कल्क—धनिया, धायके फूल, लोध, मजीठ, अतीस, हर्र, लौंग, सुगन्धबाला, सिंघाड़ा, रसौत, नागकेसर, पद्माक, गिलोय, इन्द्रजौ, फूलप्रियंगु, कुटकी, कमलकेसर, तगर, शर (सरकण्डे)की जड़, भंगरा, काला भंगरा, पुनर्नवा, आमकी छाल, जामनकी छाल और कदम्बकी छाल १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र पीस लें।

२ सेर तेलमें ८ सेर तक्र तथा उपरोक्त दोनों क्वाथ और कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

इसकी मालिशसे समस्त प्रकारके ग्रहणी रोग, अतिसार, बलि, पलित, ज्वर, तृष्णा, श्वास, कास, हिचकी, वमन, भ्रम और उपद्रव सहित उदर-पीड़ाका नाश होता है।

इसे पुष्य नक्षत्रमें बनाना चाहिये।

बृहद्दशमूलतैलम्

प्र. सं. ३०८३ दशमूल तैलम् (बृहद्) देखिये।

बृहद्बलातैलम् (१)

प्र. सं. ४६८२ बला तैलम् (२) (बृहत्) देखिये।

बृहद्बलातैलम् (२)

प्र. सं. ४६८४ "बलातैलम्" (४) देखिये।

(६८२५) बृहद् भृङ्गराजतैलम्

(र. र. । क्षुद्र रोगा.)

भृङ्गराजरसे कंसे केशराजरसे तथा।
त्रिफलाया रसे कंसे क्षीरकंसे सुसाधितम्॥
कंसं च तिलतैलस्य लौहपात्रे तु पाकवित्।
कल्कं मृणालशालूकमञ्जिष्ठापीतशालकम्॥
नीलिका पद्मबीजञ्च शटी मुस्तं पुनर्नवा।
वरा वाट्यालकं केशी केशराजं सकेशरम्॥
मण्डूरं चाम्रबीजञ्च श्यामानन्ता प्रियङ्गुका।
पाकलं मधुकं झिण्टा देवदारु सपद्मकम्॥
ह्रीवेरं चन्दनं पत्रं मेथी मधुरिका वरी।
न्यग्रोधो रोचना तुत्थं माहेन्द्रो केतकी केशी॥
उत्पलं चौण्ड्रपुष्पं च नीलीलताक्षबीजकम्।
रास्ना च गैरिकं दार्वी पुण्डरीकं रसाञ्जनम्॥
जीवनीयगणो लाक्षा श्रीखण्डं भद्रमुस्तकम्।
त्वक्पत्रं वावुषामूलं (?) कृष्णागुरु च लोध्रकम्॥
दत्वा पलोन्मितैर्भागैः शनैर्मृद्वग्निना पचेत्।
शिरोमध्यगतान्रोगान्नेत्ररोगांश्च सर्वशः॥
हन्ति वातश्च पित्तं च पलितमकालसम्भवम्।
खालित्यमिन्द्रलुप्तञ्च हन्यादेतन्न संशयः॥
कचान्नीलतरान्कुर्यात्सुस्निग्धान्कुटिलांस्तथा।
नस्याभ्यञ्जनपाने च तैलमेतत्प्रयोजयेत्॥
यत्र तैलरसस्यास्य पतन्ति बिन्दवः शुभाः।
तत्र केशाः प्रजायन्ते नृणां पाणितलेष्वपि॥
अजाते केशे मस्ते च जाते नष्टे च वा पुनः।
तत्रोपजायते केशं हन्ति दारुणकं तथा॥

८ सेर तिलके तेलमें ८-८ सेर भंगरे और काले भंगरेका रस, ८ सेर त्रिफलाका क्वाथ, ८ सेर दूध और निम्न लिखित कल्क मिला कर लोह पात्रमें मन्दाग्निपर पकावें। जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें।

कल्क—मृणाल (कमलनाल), शालूक (कमलकन्द), मजीठ, पीतशाल, नीलिका (काला

संभालू), कमलगट्टे, कचूर, नागरमोथा, पुनर्नवा, त्रिफला, वाटयालक, (पीले फूलकी खरैटी), केशी (जटामांसी), भंगरा, केसर, मण्डूर, आमकी गुठली, काली सर (श्यामा), अनन्तमूल, फूलप्रियङ्गु, कूठ, मुलैठी, झिण्टी, (कटसरैया), देवदारु, पद्माक, सुगन्धबाला, सफेद चन्दन, तेजपात, मेथी, सौंफ, शतावर, बड़की छाल, गोरोचन, नीलाथोथा, इन्द्रायणकी जड़, केतकीकी जड़, कौंचकी जड़, नीलोत्पल, जवाकुसुमके फूल, नीलका पौदा, बहेड़ेके बीज, रास्ना, गेरू, दारुहल्दी, कमल, रसौत, जीवनीय गणकी प्रत्येक ओषधि, लाख, श्रीखंड-चन्दन, लालचन्दन, नागरमोथा, दालचीनी, तेजपात, काला अगर और लोध ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें।

यह तेल शिरोरोग, नेत्र रोग, वात, पित्त, अकाल पलित, खालित्य, इन्द्रलुप्त और दारुणक नामक शिरोरोगको नष्ट करता है।

इसके व्यवहारसे बाल काले, स्निग्ध और घुंघराले हो जाते हैं।

इसकी नस्य लेनी, मालिश करनी और इसे पिलाना चाहिये। यदि सिरमें बाल उत्पन्न न हुवे हों या उत्पन्न हो कर नष्ट हो गये हों तो इसके व्यवहारसे वे पुनः निकल आते हैं।

बृहद् भृङ्गराजाद्यं तैलम्

(ग. नि. । तैला. २)

प्र. सं. ४८९९ " भृङ्गराज तैलम् " (१०) (बृहद्) देखिये।

(६८२६) बृहन्मन्दारतैलम्

(भै. र. । वृद्धि.)

यन्मध्यनारायणनाम तैलं
तस्याङ्गसङ्घैस्तिलजं हि तैलम्।
मन्दारपुष्पस्वरसेन सार्द्धं
पचेद्विधिज्ञः कमलाम्भसा च ॥
मन्दारतैलं बृहदेतदाशु
बलं च शुक्रं परिवर्द्धयेद्धि।
अन्त्रोत्थरोगान् निखिलान् निहन्ति
पित्तोत्थवातोत्थकफोत्थितांश्च ॥

मध्यम नारायण तैलके कल्क और (४-४ गुने) मन्दार (आक या पारिभद्र) के फूलोंके रस एवं कमलके रसके साथ तिल तैल सिद्ध करें

यह तैल वातज, पित्तज और कफज अन्त्र-वृद्धिको नष्ट और बल तथा शुक्रकी वृद्धि करता है।

बृहन्मरिचाद्यं तैलम्

(यो. त. । त. ४१ ; यो. र.; र. का. धे. । कुष्ठा. वृ. यो. त. । त. १२०)

प्र. सं. ५२८८ मरिचाद्यं तैलम् (बृहत्) देखिये।

बृहन्मरिचाद्यं विषगर्भतैलम्

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

प्र. सं. ५२८८ मरिचाद्यं तैलम् (बृहद्) (३) देखिये।

बृहन्माषतैलम् (१)

(बृ. मा. । वाता.)

प्र. सं. ५३०५ महामाष तैलम् (२) देखिये।

बृहन्माषतैलम् (२)

(ग. नि.)

प्र. सं. ५३१४ माषतैलम् (बृहत्) (३) देखिये ।

बृहल्लाक्षादितैलम् (१)

(ग. नि. । तैला. २)

प्र. सं. ६२८८ लाक्षादि तैलम् (महा) (४) देखिये ।

बृहल्लाक्षादितैलम् (२)

प्र. सं. ६२९० "लाक्षाद्यं तैलम्" (मध्यम) देखिये ।

(६८२७) व्याघ्रीतैलम् (१)

(भै. र. । बालरोगा.)

व्याघ्रीवासकबिल्वानां केशराजस्य चाम्बुना ।
काञ्जिकेन तथा कल्कैर्मुस्तमोचरसाञ्जनैः ॥
शताह्वादारुयष्ट्याह्वबलारास्नानिशायुगैः
चन्दनद्वयमञ्जिष्ठाप्रियङ्गूत्पलकेशरैः ॥
शालपर्णीपृश्निपर्णीचातुर्जातकबालकैः ।
मृदः पात्रे पचेत्तैलमरिष्टेन्धनवह्निना ॥
श्वासं कासञ्च बालानां ज्वरं वह्नेश्च वैकृतम् ।
व्याघ्रीतैलमिदं हन्यात् त्वग्दोषान् निखिलानपि॥

२ सेर तिलके तेलमें २-२ सेर कटेली, बासे, बेलके पत्ते और भंगरेका रस तथा कांजी एवं निम्न लिखित कल्क मिला कर मृत्पात्रमें नीमकी लकड़ीकी अग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

कल्क—नागरमोथा, मोचरस, रसौत, सोया, देवदारु, मुलैठी, खरैटी, रास्ना, हल्दी, दारुहल्दी, सफेद और लाल चन्दन, मजीठ, फूलप्रियंगु, नीलोत्पल, केसर, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर और सुगन्धबाला समान भाग मिश्रित २० तोले ।

यह तैल बालकोंकी खांसी, श्वास, ज्वर, अग्निविकार और समस्त त्वग्विकारोंको नष्ट करता है ।

(६८२८) व्याघ्रीतैलम् (२)

(भै र. ; व. से. ; वृ. नि. र. ; यो. र. ; वृ. मा. ; वै. र. । नासा. ; वृ. यो. त. । त. १३० ; ग. नि. । नासा. ४ ; भा. प्र. । म. खं. २)

व्याघ्रीदन्तीवचाशिग्रुसुरसाव्योषसैन्धवैः ।
पाचितं नावनं तैलं पूतिनासागदापहम् ॥

कटेली, दन्तीमूल, बच, सहंजनेकी छाल, तुलसी, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमकके कल्क तथा ४ गुने पानीके साथ तेल सिद्ध करें ।

इसकी नस्यसे पूतिनासा रोग नष्ट होता है ।

(६८२९) व्योषादितैलम्

(भै. र. : धन्व. ; च. द. ; र. र. । गंडमाला. ; व. से. ; यो. र. ; वृ. मा. ; वृ. यो. त. । त. १०८; यो. त. । त. ५७)

व्योषं विडङ्गं मधुकं सैन्धवं देवदारु च ।
तैलमेभिः समं नस्यात्सकृच्छ्रामपचीं जयेत् ॥

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिडंग, मुलैठी, सेंधा नमक और देवदारु ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीस लें ।

३॥ सेर तेलमें यह कल्क और १४ सेर पानी मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

इसकी नस्य लेनेसे कृच्छ्रसाध्य अपची (गण्ड-माला भेद) का भी नाश होता है ।

(६८३०) **व्योषाद्यं तैलम्** (१)

(यो. र. । मुख रोगा. ; ग. नि. । मुख रोगा. ५)

व्योषक्षाराभयावह्निचूर्णमेतत्प्रघर्षणम् ।
उपजिह्वा प्रशान्त्यर्थमेभिस्तैलं च पाचयेत् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, हर्र और चीता समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । इसे मलने-से उपजिह्वा रोग नष्ट हो जाता है । अथवा इन्हीं ओषधियोंसे तेल पका कर व्यवहृत करना चाहिये ।

तेल पकानेके लिये उपरोक्त ओषधियोंका चूर्ण ५-५ तोले, तेल ३ सेर, पानी १२ सेर ।

(६८३१) **व्योषाद्यं तैलम्** (२)

(व. से. । नासा.)

व्योषं धान्यककुसुमं गण्डीरकमवल्गुजम् ।
एभिस्तैलं पक्वं नासार्शो नाशनं सिद्धम् ॥

कल्क—सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, लौंग, स्नुही (सेंड-सेहुंड) की जड़ और बाबची ५-५ तोले ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

३॥ सेर तेलमें यह कल्क और १४ सेर पानी या इन्हीं ओषधियोंका क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें ।

यह तेल नासार्शको नष्ट करता है ।

(६८३२) **व्रणराक्षसतैलम्** (१)

(भै. र. । व्रणा.)

सूतकं गन्धकं तालं सिन्दूरश्च मनःशिला ।
रसोनश्च विषं ताम्रं प्रत्येकं कर्षमाहरेत् ॥
कुडवं सार्षपं तैलं साधयेत्सूर्यतापतः ।
नाडीव्रणश्च विस्फोटमांसवृद्धिं विचर्चिकाम् ॥
दद्रुकुष्ठापचीकण्डूमण्डलानि व्रणांस्तथा ।
व्रणराक्षसनामेदं तैलं हन्ति गदान् बहून् ॥

कल्क—पारद, गन्धक, हरताल, सिन्दूर, मनसिल, ल्हसन, मीठा विष (बछनाग) और ताम्र चूर्ण १।-१। तोला ले कर पारे गन्धककी कज्जली बनावें और अन्य ओषधियोंको बारीक पीस लें ।

४० तोले सरसोंके तेलमें यह कल्क और २ सेर पानी मिला कर धूपमें रख दें और जब पानी सूख जाय तो तेलको छान लें ।

इसे लगानेसे नाड़ीव्रण, विस्फोटक, मांसवृद्धि, विचर्चिका, दाद, कुष्ठ, अपची, कण्डू, मण्डल और व्रणोंका नाश होता है ।

(६८३३) **व्रणराक्षसतैलम्** (२) **(बृहद्)**

(भै. र. ; धन्व. । व्रण.)

कुडवं सार्षपं तैलं तदर्द्धं गोघृतस्य च ।
एकीकृत्य पचेत्तत्तु सूर्यावर्त्तरसेन तु ॥
चित्रपत्रपलं कल्कं दत्त्वा तत्र विपाचयेत् ।
तत्कल्कं स्रावयित्वा तु चूर्णमेषां विनिक्षिपेत् ॥

गन्धकं शुद्धसिन्दूरं हरितालं मनःशिला ।
हरिद्रा गैरिकं राजी कर्षार्द्धं प्रतिभागिकम् ॥
भागार्द्धं पारदश्चापि कज्जलीकृत्य मिश्रयेत् ।
सुतप्ते मिश्रयित्वा तु तप्तं कृत्वा प्रलेपयेत् ॥
कण्डूं विचर्चिकां पामां क्लेदं कुष्ठं सुदुस्तरम् ॥
वातरक्तं व्रणान् सर्वान् विषविस्फोटदद्रुकम् ।
निहन्त्याशु महाश्वित्रं तैलन्तु व्रणराक्षसम् ॥

४० तोले सरसोंका तेल और २० तोले गोघृत एकत्र मिला कर उसमें ६ सेर हुलहुलका रस और ५ तोले भोजपत्रका कल्क मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें । जब पानी जल जाय तो तेलको छान लें और फिर उसके गर्म रहते ही उसमें निम्न लिखित ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला दें ।

गन्धक, शुद्ध सिन्दूर, हरताल, मनसिल, हल्दी, गेरु और राईका चूर्ण ७॥-७॥ माशे तथा पारद ३॥। माशे । प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बना कर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको खरल कर लेना चाहिये ।

इस तेलको गर्म करके लगानेसे कण्डू, विचर्चिका, पामा, क्लेद, कष्ट साध्य कुष्ठ, वातरक्त, समस्त प्रकारके व्रण, विषजन्य विस्फोटक, दाद और श्वित्रका नाश होता है ।

इति वकारादितैलप्रकरणम्



अथ वकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्

(६८३४) वरुणासवः

(ग. नि. । आसवा. ६)

शतं पलानां वरुणस्य मूलं
त्वक् शिंशपायाश्च तदर्धमात्रा ।
तावत्तथा पुष्करमूलमुक्तं
तदर्धमग्निश्च तदर्धमात्रः ॥
कुरण्टको रोहीतकत्वचश्च
तावच्च शिग्रुर्दशमूलकं च ।
पलानि विंशत्खलु देवदारोः
क्षुद्रा च तुल्या सुरदारुणा च ॥
दर्भस्य मूलानि पलानि पञ्च
हिंस्रातरोस्त्रीणि च कण्टकार्याः ।
राजादनस्यापि पलानि सप्त
शतावरीमूलपलत्रयं च ॥
तत्तुल्यकाश्मर्यकमर्जुनश्च
भृङ्गीशताह्वा गजपिप्पली च ।
बलाशठीनागबलाकरञ्ज-
त्रायन्तिकाकेबुकमेषशृङ्ग्यः ॥
कुष्ठं च वासासितकर्बुकं च
विडङ्गकृष्णातिविषाश्च जीरकम् ।
चव्यं च रास्नोत्पलसारिवा च
स्यात्कौटजश्चाऽप्यथ दीप्यकं च ॥
वातार्यरिष्टारुरनार्यतिक्तं
रक्ताऽमृता तेजनीवल्कलं च ।

सव्याधिघाता हपुषा च भृङ्गी
 प्रत्येकमेषां हि पलद्वयं तु ॥
पचेज्जलद्रोणचतुष्टये च
 तत्पादशेषे पलषट्शतं च ।
क्षिपेद्गुडं माक्षिकधातकीनां
 पलानि त्रिंशत्सकलं पुनस्ततः ॥
निधापयेच्चागरुमांसीधूपिते
 भाण्डे ततः कुङ्कुमचन्दनद्वयम् ।
पलं क्षिपेद्वै कतकं सचन्द्रं
 लवङ्गमाकल्लकवंशरोचनम् ॥
भार्गी सुराष्ट्री तगरं कबाबकं
 जातीफलं पत्रकजातिपत्रिके ।
लोहं चतुर्जातकबालकं च
 प्रत्येकमेषां हि पलं विनिक्षिपेत् ॥
मासं निधेयो यवमध्यतस्ततः
 पेयो यथाव्याधिबलं समीक्ष्य ।
प्लीहोदरं विद्रधिगुल्मकासं
 श्वासं तथा रक्तविकारहिक्के ॥
शूलामवातार्बुदपाण्डुरोगं
 कुष्ठं तथा छर्दिमरोचकं च ।
शोफं तथाध्मानभगन्दरं च
 शुक्राश्मरीं ग्रन्थिमनेकभेदम् ॥
शोषापतानार्दितपक्षघात-
 सन्धिग्रहार्तीश्च हलीमकं च ।
निहन्ति वन्ध्यासुतदोऽथ वृष्यः
 प्राणप्रदोऽयं वरुणासवो हि ॥
पित्तानिलश्लेष्मरुजापहश्च
 वैतालरक्षोग्रहभीतिहन्ता ।
ग्रन्थान् समालोक्य चिकित्सकानां
 हिताय नूनं रचितश्च रोगिणाम् ॥

बरनेकी जड़की छाल ६। सेर, शीशमकी छाल ३ सेर १० तोले, पोखरमूल ३ सेर १० तोले, चीता १ सेर ४५ तोले एवं पीली कटसरैया, रुहेड़ेकी छाल, सहंजनेकी छाल और दशमूल प्रत्येक ६२॥ तोले; देवदारु और कटेली १।-१। सेर, दाभकी जड़ २५ तोले, बालछड़ तथा बड़ी कटेली १५-१५ तोले, खिरनी ३५ तोले, शतावर १५ तोले तथा खम्भारीकी छाल, अर्जुनकी छाल, काकड़ासिंगी, सोया और गजपीपल, १५-१५ तोले एवं खरैटी, कचूर, नागबला, करञ्जुवा, त्रायमाणा, केवटी मोथा, मेढासिंगी, कूठ, बासा, कच्ची हल्दी, बायबिड़ंग, पीपल, अतीस, जीरा, चव रास्ना, अनन्तमूल, इन्द्रजौ, अजवायन, अरण्डमूल, नीमकी छाल, रक्त खदिर, चिरायता, मजीठ, गिलोय, मूर्वा, दालचीनी, अमलतास, हपुषा और अतीस १०-१० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर १२८ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ६ सेर ५० तोले गुड़ और ३०-३० पल (प्रत्येक १५० तोले) शहद और धायके फूल एवं ५-५ तोले केसर, सफेद और लाल चन्दन, निर्मलीके फल, कपूर, लौंग, अकरकरा, बंसलोचन, भरंगी, सोरठी मिट्टी, तगर, कबाबचीनी, जायफल, तेजपात, जावित्री, लोहभस्म, चातुर्जात (दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर) और सुगन्धबालाका चूर्ण मिला कर अगर और मांसीसे धूपित किये हुवे मटकेमें भर कर उसका मुख बन्द कर दें और

जौके ढेरमें दबा दें एवं एक मास पश्चात् आसवको छान कर बोतलोंमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

यह आसव प्लीहोदर, विद्रधि, गुल्म, खांसी, श्वास, रक्तविकार, हिचकी, शूल, आमवात, अर्बुद, पाण्डु, कुष्ठ, छर्दि, अरुचि, शोथ, आध्मान, भगन्दर, शुक्राश्मरी, ग्रन्थि, शोष, अपतानक, अर्दित, पक्षाघात, सन्धिग्रह, हलीमक और वन्ध्यत्व एवं अन्य बहुतसे वातज, पित्तज और कफज रोगोंको नष्ट तथा वीर्यकी वृद्धि करता है।

(६८३५) **वासकासवः**

(यो. र. ; वृ. नि. र. । शोथा; गद निग्रह। आसवा. ६)

वासकस्य तुले द्वे तु द्विद्रोणेऽपां विपाचयेत्।
कृत्वा द्रोणार्धशेषं तु पूते शीते प्रदापयेत् ॥
गुडस्यैकां तुलां तत्र धातक्यास्तु पलाष्टकम्।
क्षिपेच्चूर्णीकृतं तस्मिन् त्वगेलापत्रकेसरम् ॥
कङ्कोलव्योषतोयानि पलिकान्युपकल्पयेत्।
सम्यक् पक्वं ततो ज्ञात्वा पक्षादूर्ध्वं पिबेदमुम् ॥
वासकासव इत्येष सर्वश्वयथुनाशनः ॥

१२॥ सेर बासेको कूट कर ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ६। सेर गुड़, ४० तोले धायके फूल, एवं ५–५ तोले दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, कंकोल, सोंठ, मिर्च, पीपल और सुगन्ध बालाका चूर्ण मिला कर यथा विधि मृत्पात्र में भरकर उसका मुख बन्द करके रख दें और १५ दिन पश्चात् निकाल कर छान लें।

यह आसव समस्त प्रकारके शोथोंको नष्ट करता है।

(६८३६) **विडङ्गासवः**

(विडङ्गारिष्टः)

(ग. नि. । आस. ६; भै. र. ; यो. र. । व्रणशो. ; शा. ध. । खं. २ अ. १०)

विडङ्गं ग्रन्थिकं रास्ना कुटजत्वक्फलानि च।
पाठैलवालुकं धात्री भागान् पञ्चपलान् पृथक् ॥
अष्टद्रोणेऽम्भसः पक्त्वा कुर्याद् द्रोणावशेषितम्।
पूते शीते क्षिपेत्तत्र क्षौद्रं पलशतत्रयम् ॥
धातकी विंशतिपलं त्रिजातं द्विपलं तथा।
प्रियङ्गुकाञ्चनाराणां सलोध्राणां पलं पलम् ॥
व्योषस्य च पलान्यष्टौ चूर्णीकृत्य प्रदापयेत्।
घृतभाण्डे विनिक्षिप्य मासमेकं विधारयेत् ॥
ततः पिबेद्यथार्हं तु जयेद्विद्रधिमुच्छ्रितम्।
ऊरुस्तम्भाश्मरीमेहान् प्रत्यष्ठीलाभगन्दरान् ॥
गण्डमालां हनुस्तम्भं विडङ्गारिष्टसञ्ज्ञितः ॥

बायबिड़ंग, पीपलामूल, रास्ना, कुड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, पाठा, एलवालुक और आमला २५–२५ तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर २५६ सेर पानीमें पकावें और ३२ सेर शेष रहने पर छान लें। जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमें १८॥ सेर शहद तथा १०० तोले धायके फूलोंका चूर्ण १०–१० तोले दालचीनी, इलायची और तेजपातका चूर्ण एवं ५–५ तोले फूलप्रियंगु, कचनारकी छाल और लोधका चूर्ण तथा ४० तोले त्रिकुटे (समान भाग मिश्रित सोंठ, मिर्च, पीपल) का चूर्ण मिला कर घृतके चिकने पात्रमें भर कर

उसका मुख बन्द करके रख दें और १ मास पश्चात् निकाल कर छान लें।

यह आसव विद्रधि, ऊरुस्तम्भ, अश्मरी, प्रमेह, प्रत्यष्ठीला, भगन्दर, गण्डमाला और हनुस्तम्भको नष्ट करता है।

नोट—गदनिग्रहमें काथ्य द्रव्योंमें भरंगी अधिक है।

(६८३७) वृश्चीवाद्योऽरिष्टः

(ग. नि. । गुल्मा. २५ ; वृ. मा. ; च. द. । गुल्मा.)

वृश्चीवमुरुबूकं च वर्षाभूर्बृहतीद्वयम् ।
चित्रकं च जलद्रोणे पचेत्पादावशेषितम् ॥
मागधी चित्रकक्षौद्रलिप्ते कुम्भे निधापयेत् ।
मधुनः प्रस्थमावाप्य पथ्याचूर्णार्धसंयुतम् ॥
संस्थापितं दशाहं तु जीर्णभक्तः पिबेन्नरः ।
अरिष्टोऽयं जयेद्गुल्मविपक्वं सुदुस्तरम् ॥

श्वेत पुनर्नवा, अरण्डमूल, लाल पुनर्नवा, छोटी कटेली, बड़ी कटेली और चीता समान भाग मिश्रित ६। सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर मधुमिश्रित पीपल और चीतेके चूर्णसे लिप्त मटकेमें यह काथ और २ सेर शहद तथा आधा सेर हर्रका चूर्ण डालकर सबको अच्छी तरह मिला कर मटकेका मुख बंद कर दें। एवं दश दिन पश्चात् निकाल कर छान लें।

इसके सेवनसे कष्ट साध्य गुल्म नष्ट होता है।

बृहच्चुक्रसन्धानम्

(च. द. । ग्रहण्य. ; वृ. मा. । अजीर्णा.)

प्र. सं. १८१५ "चुक्रसन्धानम्" (बृहद्) देखिये।

(६८३८) बृहन्मूलासवः

(ग. नि. । आसवा. ६)

महावृक्षवटार्काणां विनामूलैः परैः शुभैः ।
अष्टोत्तरशतैरम्भस्त्रिंशद्घटमितं पचेत् ॥
तुलात्रयप्रमाणं च दशमूल्यास्तथैव च ।
अष्टावशेषमुत्तार्य गुडस्यानु दिनद्वयम् ॥
पलानां विंशतिशतं क्षिपेत्तच्च दृढे घटे ।
आतपे तं विनिक्षिप्य धारयेत्त्रिदिनं ततः ॥
उद्धृत्य धूपिते पात्रे वस्त्रपूतं क्षिपेद्भिषक् ।
धातकीं विंशतिपलां हरीतक्याः पलाष्टकम् ॥
पूगानां विंशतिपलं पिप्पल्याः पलपञ्चकम् ।
एलालवङ्गकङ्कोलजातीत्वक्पत्रकेसरम् ॥
पलं पलं समरिचं चूर्णीकृत्य भिषग्वरः ।
आसवे निक्षिपेत्तत्र मधुनः कुडवद्वयम् ॥
संजातेऽष्टदिने तस्मादुद्धृत्यान्यत्र तं न्यसेत् ।
आसवे सकषाये तु गुडमन्यं प्रदापयेत् ॥
निष्कास्य पूर्वं चूर्णं तु नवं तत्र नियोजयेत् ।
नाम्ना मूलासवो ह्येष रोगराजनिकृन्तनः ॥
श्वासामवातविध्वंसी पाण्डुप्लीहोदरापहः ।
कृमिगुल्मप्रमेहाणां नाशनो वह्निदीपनः ॥

स्नुही (थूहर—सेंड), बड़ और आकके मूलके अतिरिक्त समस्त अंग (छाल, पत्रादि) पौने सात सात सेर तथा दशमूल १८॥ सेर ले कर सबको एकत्र कूट कर २४ मन पानीमें पकावें

और ३ मन शेष रहने पर छान कर रख दें और २ दिन पश्चात् उसमें ३ मन ५ सेर गुड़ मिला कर दृढ मृत्पात्रमें भर कर धूपमें रख दें एवं ३ दिन पश्चात् उसे छान कर अगर इत्यादिसे धूपित पात्रमें भर दें तथा उसमें निम्न लिखित प्रक्षेप मिलाकर पात्रका मुख बन्द कर दें —

प्रक्षेप—शहद १ सेर तथा धायके फूल १०० तोले, हर्र ४० तोले, सुपारी १०० तोले, पीपल २५ तोले, इलायची, लौंग, कंकोल, जावत्री, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर और काली मिर्च ५-५ तोले ले कर सबका बारीक चूर्ण कर लें।

आठ दिन पश्चात् आसवको छान कर उसमें पुनः गुड़ और प्रक्षेप द्रव्योंका चूर्ण मिला कर दूसरे पात्रमें भर कर उसका मुख बन्द करके रख दें। (एवं १ मास पश्चात् निकाल कर छान लें।)

यह आसव राजयक्ष्मा, श्वास, आमवात, पाण्डु, प्लीहोदर, कृमि, गुल्म और प्रमेहको नष्ट तथा अग्निको दीप्त करता है।

इति वकाराद्यासवारिष्टप्रकरणम्



अथ वकारादिलेपप्रकरणम्

(६८३९) वचादियोगः

(यो. त. । त. ५४ ; वृ. मा. ; वृ. नि. र. । शोथा.)

वचासर्षपतैलेन प्रलेपः शोथनाशनः ।

बचके चूर्णको सरसोंके तेलमें मिला कर लेप करनेसे शोथ नष्ट होता है।

(६८४०) वज्रवल्लीलेपः

(धन्व. । वाजीकर.)

किमत्र चित्रं हि वज्रवल्ली
वचाश्वगन्धाजलशूकचूर्णम् ।
हेमप्रकाशं बृहतीफलं च
क्रमेण कुर्यान्मुसलप्रमाणम् ॥

हड़जोड़ी, बच, असगन्ध, सिरवाल और कटेलीके पके फलोंका चूर्ण समान भाग ले कर सबको पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे लिङ्ग अत्यन्त स्थूल हो जाता है।

(६८४१) वटपत्रादिलेपः (१)

(रा. मा. । मुख रोगा. ५)

परिणतवटपत्रं स्वर्णगन्धा प्रियङ्गु-
मधुकमथ सरोजं रोध्रकाश्मीरलाक्षाः ।
सलिलयुतमितीदं चित्रवल्लीप्रपिष्टं
जनयति वदनानां कान्तिमय्र्यं प्रलेपात् ॥

बड़के पके हुवे पत्ते, रेणुका, फूलप्रियंगु, मुलैठी, कमल, लोध, केसर, लाख और इन्द्रायणकी जड़का चूर्ण समान भाग ले कर सबको पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे मुख कान्तिमान हो जाता है।

(६८४२) **वटपत्रादिलेपः** (२)

(वृ. मा. । भगन्दरा. ; वृ. नि. र. ; व. से. । भगन्दरा.)

वटपत्रेष्टिकाशुण्ठीगुडूच्यः सपुनर्नवाः ।
सुपिष्टा पिटिकावस्थे लेपः शस्तो भगन्दरे ॥

बड़के पत्ते, ईंट, सोंठ, गिलोय और पुनर्नवा-की जड़ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसे पानीमें पीस कर भगन्दर पर पिडिका-वस्थामें (घाव होनेसे पहिले) लेप करना चाहिये ।

(६८४३) **वटप्ररोहादिलेपः**

(र. र. । उपदंशा. ; यो. र.)

वटप्ररोहार्जुनजम्बुपथ्या-
लोध्रो हरिद्रा च हितः प्रलेपः ।
सर्वोपदंशेषु च रोहणार्थं
चूर्णश्च तज्जं विमलाञ्जनेन ॥

बड़के अंकुर, अर्जुनकी छाल, जामनकी छाल, हर्र, लोध और हल्दी समान भाग ले कर पानीमें पीस कर लेप लगानेसे उपदंशके व्रण नष्ट होते हैं ।

इन्हीं औषधियोंके चूर्णमें १-१ भाग रौप्य-माक्षिक और रसौतका चूर्ण मिला कर लगानेसे भी उपदंश व्रण नष्ट होते हैं ।

(६८४४) **वटाङ्कुरादिलेपः**

(भा. प्र. म. खं. २ । क्षुद्ररोगा. ; वृ. नि. र.)

वटाङ्कुरा मसूराश्च प्रलेपाद्व्यङ्गनाशनम् ।

बड़के अंकुर और मसूरके चूर्णको पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे व्यङ्ग (मुखकी झांई) का नाश होता है ।

(६८४५) **वटादिलेपः** (१)

(व. से. । अर्बुदा.)

वटदुग्धकुष्ठरोमकलिप्तं बद्धं वटस्य कल्केन ।
अध्यस्थि सप्तरात्रान्महदपि शमयेत्सिद्धमिदम् ॥

कूठ और रोमक लवणके चूर्णको बड़के दूधमें घोट कर लेप करके ऊपरसे बड़के अंकुरोंका कल्क बांध देनेसे सात दिनमें प्रवृद्ध अर्बुद भी नष्ट हो जाता है । यह एक सिद्ध प्रयोग है ।

(६८४६) **वटादिलेपः** (२)

(शा. सं. । खं. ३ अ. ११ ; व. से. । क्षुद्र. ; भा. प्र. म. खं. २)

वटस्य पाण्डुपत्राणि मालती रक्तचन्दनम् ।
कुष्ठं कालीयकं लोध्रमेभिर्लेपं प्रयोजयेत् ॥
तारुण्यपिटिका व्यङ्गनीलिकादिविनाशनम् ॥

बड़के पीले (पके हुवे) पत्ते, चमेलीके फूल, लाल चन्दन, कूठ, काला चन्दन और लोध समान भाग ले कर सबको पानीमें पीस कर लेप बनावें ।

इसे लगानेसे तारुण्य पिटिका (मुंहासे), व्यङ्ग (झांई) और नीलिकाका नाश होता है ।

(६८४७) **वत्सनाभलेपः**

(वृ. नि. र. । गण्डमाला.)

वत्सनाभं निम्बुनीरलेपाद्गण्डं विनश्यति ।

बछनागको नीबूके रसमें घिस कर लेप करने-से गण्डमालाकी गांठें नष्ट हो जाती हैं ।

(६८४८) **वरुणादिलेपः**

(भा. प्र. म. खं. २. । क्षुद्र.)

व्यङ्गहृद्वरुणत्वक्स्यादजामूत्रेण पेषिता ।

बरनेकी छालको बकरीके मूत्रमें पीस पर लेप करनेसे व्यङ्ग (चेहरेकी झांई) का नाश होता है ।

(६८४९) **वल्मीकमृत्तिकाद्युद्वर्त्तनम्**

(रा. मा. । वाता. २१)

वल्मीकमृन्मूलकबीजयुक्ता
तुरङ्गगन्धा सहिता प्रलेपात् ।
उन्मर्दनेनापि च घोरमूरु-
स्तम्भं विनाशं नयति प्रसह्य ॥

बमीकी मिट्टी, मूलीके बीज और असगन्धका चूर्ण समान भाग ले कर सबको पानीमें पीस कर लेप करने या इस चूर्णका मर्दन करनेसे घोर ऊरुस्तम्भ रोग भी अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(६८५०) **वल्मीकादिलेपः**

(यो. र. । उदावर्त्ता.)

वल्मीकमृत्करञ्जस्य त्वङ्मूलफलपल्लवम् ।
सिद्धार्थं चेति पिष्टानां मूत्रेणाऽऽलेपनं हितम् ॥
उदावर्तेषु सर्वेषु सम्यग्वातानुलोमनम् ॥

बमीकी मिट्टी, करञ्जवेकी छाल, मूल, फल और पत्ते तथा सफेद सरसों समान भाग ले कर सबको गोमूत्रमें पीस कर पेट पर लेप करनेसे वायु अनुलोम हो कर उदावर्त नष्ट हो जाता है ।

(६८५१) **वसुकादिलेपः**

(व. से. । व्रण.)

वसुकार्जुनविक्रान्ता मांसीलोध्रनिशायुगैः ।
तिलबर्हिशिखारिष्टैर्लेपो दुष्टव्रणापहः ॥

काला अगर, अर्जुनकी छाल, अपराजिता (कोयल), जटामांसी, लोध, हल्दी, दारुहल्दी, तिल, मोरशिखा और नीमके पत्ते समान भाग ले कर पानीके साथ पीस कर लेप करनेसे दुष्ट व्रण नष्ट होता है ।

(६८५२) **वातनाशकलेपः**

(वृ. मा. । वाताधि.)

शतपुष्पा देवदारुनागरैरण्डसैन्धवैः ।
अम्लपिष्टैः समैः कोष्णैर्लेपो वातार्तिनाशनः॥

सोया, देवदारु, सोंठ, अरण्डमूल और सेंधानमकका चूर्ण समान भाग ले कर सबको कांजीमें पीस कर मन्दोष्ण करके लेप करनेसे वातजनित पीड़ा नष्ट होती है ।

(६८५३) **वायस्यादिगुटिका**

(वृ. मा. । कुष्ठा. ; च. द. ; ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

वायस्येडगजाकुष्ठकृष्णाभिर्गुटिका कृता ।
बस्तमूत्रेण संपिष्टा प्रलेपाच्छ्वित्रनाशिनी ॥

मकोय, पंमाड़के बीज, कूठ और पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको बकरीके मूत्रमें पीस कर गोलियां बना लें ।

इन्हें बकरीके मूत्रमें घिस कर लगानेसे श्वित्र (श्वेत कुष्ठ) नष्ट हो जाता है ।

(६८५४) वार्ताकमूलादिलेपः

(यो. र. । स्नायुक.)

वार्ताकमूलं पुंमूत्रैः पत्रैर्वाऽश्वत्थजैश्च वा ।
सुतप्तैर्बन्धयेच्छीघ्रं शमयेत्स्नायुकं गदम् ॥

बैंगनकी जड़को मनुष्यके मूत्रमें पीस कर गरम करके स्नायुक (नहरवे) पर रक्खें और ऊपरसे पीपलका पत्ता रख कर बांध दें ।

इस उपचारसे नहरुवा शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

(६८५५) वासादिलेपः (१)

(वृ. मा. । मेदोवृद्धय. ; यो. र. ; व. से. । उदरा. ; वृ. नि. र. । मेदोरोगा.)

वासादलरसो लेपाच्छङ्खचूर्णेन संयुतः ।
बिल्वपत्ररसो वाऽपि गात्रदौर्गन्ध्यनाशनः ॥

बासे (अडूसे) के पत्तोंके रसमें शंखका बारीक चूर्ण मिला कर लेप करनेसे अथवा बेलके पत्तोंका लेप करनेसे शरीरको दुर्गन्ध नष्ट हो जाती है ।

(६८५६) वासादिलेपः (२)

(वृ. मा. । कुष्ठा.)

कोमलसिंहास्यदलं सनिशं
सुरभीजलेन सम्पिष्टम् ।
दिवसत्रयेण नियतं क्षपयति
कच्छूं विलेपनतः ॥

बासे (अडूसे) के कोमल पत्ते और हल्दीका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे ३ दिनमें कच्छू (खुजली भेद) का नाश हो जाता है ।

(६८५७) विकङ्कतादिलेपः

(वृ. मा. । गलगण्डा. ; च. द. । गलगण्डा. ४०)

विकङ्कतारग्वधकाकणन्ती
काकादनी तापस वृक्षमूलैः ।
आलेपयेदेनमलाम्बुभार्गी
करञ्जकालामदनैश्च विद्वान् ॥

विकङ्कत (कंटाई), अमलतास, काकणन्ती (गुंजा) की जड़, काकादनी (सफेद गुंजा) की जड़, इंगुदीकी जड़, कड़वी तुंबी, भरंगी, करञ्जकी जड़, मजीठ और मैनफलका चूर्ण समान भाग ले कर सबको बारीक पीस कर कफज ग्रन्थि पर लेप करना चाहिये ।

(६८५८) विडङ्गादिलेपः

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६; वृ. नि. र. । त्वग्दोषा.)

विडङ्गैडगजाकुष्ठनिशा सिन्धूत्थसर्षपैः ।
धान्याम्लपिष्टैर्लेपोऽयं दद्रुकुष्ठविनाशनः ॥

बायबिडंग, पमाड़के बीज, कूठ, हल्दी, सेंधानमक और सरसोंका चूर्ण, समान भाग ले कर सबको कांजीमें पीस कर लेप करनेसे दाद नष्ट हो जाता है ।

(६८५९) विदार्यादिलेपः

(वृ. मा. । ज्वरा. ; ग. नि. ; हा. सं. । स्था. ३ अ. २; वृ. नि. र. । विषम ज्वरा.)

विदारी दाडिमं लोध्रं दधित्थं बीजपूरकम् ।
एभिः प्रदिह्यान्मूर्धानं तृड्दाहार्तस्य देहिनः ॥

विदारीकन्द, अनार दाना, लोध, कैथ और बिजौरे नीबूका गूदा समान भाग ले कर सबको

पीस कर शिर पर (तालु पर) लेप करनेसे दाह और तृषाका नाश होता है ।

(६८६०) **विशालादिलेपः**

(व. से. ; वृ. नि. र. । स्त्रीरोगा.)

लेपो विशालामूलस्य हन्ति पीडां स्तनोत्थिताम् ।
निशावल्कलकल्काभ्यां[1] लेपः प्रोक्तः स्तनार्तिहा ॥

इन्द्रायणकी जड़को पानीमें पीस कर लेप करनेसे या हल्दी और दालचीनी (पाठान्तरके अनुसार धतूरेके बीज) को पीस कर लेप करनेसे स्तनकी पीड़ा नष्ट होती है ।

(६८६१) **विषादिलेपः (१)**

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

विषधूमव्योषवह्निरजनीसर्षपैः ससिन्धूत्थैः ।
क्षारद्वयगोमूत्रैः प्रसुप्तिकुष्ठापहो लेपः ॥

मीठा विष (बछनाग), गृहधूम, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, हल्दी, सरसों, सेंधा नमक, जवाखार और सज्जीखारका चूर्ण समान भाग ले कर सबको गोमूत्रमें पीस कर लेप करनेसे प्रसुप्ति कुष्ठ नष्ट होता है ।

(६८६२) **विषादिलेपः (२)**

(ग. नि. । कुष्ठा. ३६)

विषवरुणहरिद्राचित्रकागारधूमं
दहनमरिचदूर्वाः क्षीरमर्कस्नुहीभ्याम् ।
दहति पतति मात्रं कुष्ठजातीरशेषाः
कुलिशमिव सरोषाच्छक्रहस्ताद्विमुक्तम् ॥

१. निशाकनककल्काभ्यामिति पाठान्तरम् ।

मीठा विष (बछनाग), बरनेकी छाल, हल्दी, चीता, गृहधूम, भिलावा, काली मिर्च और दूर्वा, इनका चूर्ण तथा आक और सेहुंड (सेंड–थोहर) का दूध समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

इसका लेप करनेसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

(६८६३) **वृश्चिकदंशहरो लेपः**

(यो. त. । त. ७८)

अजाक्षीरेण सम्पिष्टा शिरीषफलमिश्रिता ।
उपकुल्या विषं हन्ति वृश्चिकस्य प्रलेपतः ॥

पीपल और सिरसके बीजोंको बकरीके दूधमें पीस कर लेप करनेसे बिच्छूका विष नष्ट होता है ।

(६८६४) **वृषमूलादियोगः**

(वै. मृ. । अल. ४)

वृषस्य मूलं यदि नाभि योनौ
प्रलेपितं स्त्री झटिति प्रसूते ।
तथा कटिस्थः कदलीसुकन्दो
वेगात्प्रसूतिं कुरुतेऽङ्गनानाम् ॥

बासे (अडूसे) की जड़को पीस कर नाभि और योनि पर लेप करनेसे प्रसव शीघ्र हो जाता है ।

केलेका जड़को कमरमें बांधनेसे भी प्रसवमें विलम्ब नहीं होता ।

(६८६५) **वेतसाद्यलेपः**

(व. से. । शोथा.)

सवेतसाः क्षीरवतां द्रुमाणां
त्वचः समञ्जिष्ठलतामृणालाः ।

सचन्दनं पद्मकवालकौ च
पैत्ते प्रदेहस्तु सतैलपाकः ॥

बेत, क्षीरीवृक्ष (बड़, गूलर, पीपल, पिलखन, सिरस) की छाल, मजीठ, कमलनाल, लाल चन्दन, पद्माक और सुगन्ध बाला समान भाग ले कर सबको महीन पीस कर तेलमें पका कर पित्तज शोथमें लेप करना चाहिये।

(६८६६) व्रणहरो लेपः (१)

(यो. चि. म. । अ. ७)

मदनं मस्तकी तुत्थं रालसिन्दूरटङ्कणम् ।
गुग्गुलुं मुरदाशृङ्गं वेरजं रङ्गपत्रिका ॥
कम्पिल्लं कुङ्कुमं काथं माजूमदनकैफलम् ।
मरीचं हिङ्गुलं जाङ्गी एला चेति समाः समाः ॥
लोहपात्रे घृते तप्ते यथायोग्यमिमान् क्षिपेत् ।
प्रक्षिप्य च जलं पश्चात्मथित्वा जलमुत्सृजेत् ॥
तत्सिद्धं स्थापयेद्भाण्डे व्रणादौ विनियोजयेत् ।
नासूरचन्दनादुष्टव्रणशोधनरोपणम् ॥

मोम, मस्तगी, नीला थोथा, राल, सिन्दूर, सुहागा, गूगल, मुरदासिंग, बिरोजा, मेंहदीके पत्ते, कबीला, केसर, कत्था, माजूफल, मैनफल, काली मिर्च, हिंगुल, जंगी हर्र और इलायची समान भाग ले कर चूर्ण योग्य चीजोंका चूर्ण बनावें। तदनन्तर (सबसे ८ गुने) घीको गर्म करके उसमें प्रथम गूगल और मोम मिलावें और फिर अन्य समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिला कर उसे पानीमें डाल दें तथा अच्छी तरह फेंट कर (मथकर) पानी निकाल दें।

यह मल्हम नासूर, चांदी (घाव) और दुष्ट व्रणोंको शुद्ध करके भर देता है।

(६८६७) व्रणहरो लेपः (२)

(यो. चि. म. । अ. ७)

तप्ते घृते क्षिपेदालमुत्तार्य च जलं क्षिपेत् ।
मथित्वा निर्जलं कृत्वा व्रणादौतत्प्रयोजयेत् ॥

घृतको गर्म करके उसमें (आठवां भाग) हरतालका चूर्ण मिलावें और फिर उसमें पानी मिला कर अच्छी तरह मथें तथा पानीको निकाल कर फेंक दें।

यह मल्हम घावोंको नष्ट करता है।

(६८६८) व्रणहरो लेपः (३)

(यो. चि. म. । अ. ७)

तप्ते घृते क्षिपेत्तुत्थं उत्तार्य च क्षिपेदिमान् ।
कम्पिल्लं मुरदाशृङ्गं खदिरं रङ्गपत्रिका ॥
क्षिप्त्वा जलं मथित्वा तत्सर्वव्रणं विरोहणम् ॥

घीको तपा कर उसमें १ भाग नीलेथोथेका चूर्ण मिलावें और फिर उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें कमीला, मुरदासिंग, कत्था और मेंहदीके पत्तोंका चूर्ण १-१ भाग मिला दें एवं उसमें पानी डाल कर अच्छी तरह मथें और फिर पानी निकाल दें।

यह मल्हम समस्त प्रकारके व्रणोंको नष्ट करता है।

(घी समस्त ओषधियोंसे ८ गुना लेना चाहिये।)

इति वकारादिलेपप्रकरणम्



अथ वकारादिधूपप्रकरणम्

(६८६९) **वचादिधूपः**

(वृ. नि. र. । विषम ज्वरा. ; ग. नि.)

वचाहरीतकीसर्पिर्धूपः स्याद्विषमज्वरे ।

बच और हर्रके चूर्णको घीमें मिला कर धूप देनेसे विषम ज्वरमें लाभ पहुंचता है ।

(६८७०) **विशालादिधूपः**

(यो. र. । कृम्य.)

विशालायाः फलं पक्वं तप्तलोहे परिक्षिपेत् ।
तद्धूमो दन्तलग्नश्चेत्कीटानां पातनः परः ॥

इन्द्रायणके पके फलके चूर्णको तप्त लोहे पर डालनेसे जो धुवां निकले वह कृमि वाले दांतको लगानेसे कृमि निकल जाते हैं ।

वेणुत्वगादिधूपः

(यो. र. । मसूरिका. ; वृ. यो. त. । त. १२६)

प्र. सं. ५४३१ " मसूरिकान्तक धूपः " देखिये ।

(६८७१) **व्रणधूपनयोगाः**

(ग. नि. । व्रणशोथा. ४)

वाताभिभूतान् सास्रावान् धूपयेदुग्रवेदनान् ।
यवाज्यभूर्जमदनश्रीवेष्टकसुराह्वयैः ॥
श्रीवासगुग्गुल्वगुरुशालनिर्यासधूपिताः ।
कठिनत्वं व्रणा यान्ति नश्यन्त्यास्राववेदनाः ॥

जौ, जंगली तुलसी, भोजपत्र, मैनफल, श्रीवेष्ट, देवदारु, श्रीवास, गूगल, अगर और राल समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस लें ।

वातदोष प्रधान तथा स्राव और तीव्र वेदना वाले व्रणोंको इसकी धूनी देनेसे वेदना और स्राव नष्ट हो कर व्रण शुष्क हो जाते हैं ।

इति वकारादिधूपप्रकरणम् ॥

अथ वकारादिधूम्रप्रकरणम्

(६८७२) **वारुणीपत्रधूमः**

(वृ. नि. र. । कासा.)

उत्तरावारुणिपत्रं शालितण्डुलतालकम् ।
सम्पेष्य गुटिका कार्या बदराण्डप्रमाणका ॥
मुखीतण्डुलपिष्टेन कर्तव्या छिद्रसंयुता ।
दीप्ताङ्गारे वटीं क्षिप्त्वा मुखमाच्छाद्य यत्नतः ॥
धूममेरण्डनालेन पिबेद्भुक्तोत्तरं शनैः ।
ताम्बूलपूरितमुखं पथ्यं क्षीरोदनं हितम् ॥
तत्क्षणान्नाशयेत्कासं सिद्ध योग उदाहृतः ॥

इन्द्रायणके पत्ते, शाली चावल और हरताल समान भाग ले कर सबको एकत्र पीस कर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें ।

चावलोंकी पिट्ठीकी चिलम बनाकर उसमें अग्नि रख कर उस पर एक गोली रक्खें और अर-

ण्डकी नालसे उसका धुवां पियें। धूम्रपान करते समय चिलमके मुखको भली भांति ढक देना चाहिये। यह धूम्र पान भोजनके पश्चात् करना चाहिये।

इससे खांसी तुरन्त नष्ट हो जाती है। यह एक सिद्ध प्रयोग है। धूम्रपान करनेके पश्चात् पान खाना चाहिये।

पथ्य—दूध भात।

(६८७३) **विदुलीदलयोगः**

(वै. म. र. । पटल ३)

विदुलीदलहरितालव्योषशिलाः केशराजरस-पिष्टाः।
गुटिकीकृता निहन्युः कासरुजं धूमपानेन॥

दुर्गन्धित खैरके पत्ते, हरताल, सोंठ, मिर्च, पीपल और मनसिलका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको भंगरेके रसमें पीस कर गोलियां बना लें।

इनका धूम पान करनेसे खांसी नष्ट होती है।

इति वकारादिधूम्रप्रकरणम्



अथ वकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

(६८७४) **वचाद्यञ्जनम्**

(व. से. । विषरोगा.)

वचोषणशिलादारुनक्ताह्वद्विनिशाञ्जनम्।
शिरीषपिप्पलीयुक्तं गरदोषनिसूदनम्॥

बच, काली मिर्च, मनसिल, देवदारु, करञ्ज-बीज, हल्दी, दारुहल्दी, रसौत, सिरसके बीज और पीपल; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र घोट कर बारीक करें।

इसे आंखमें लगानेसे गर विष नष्ट होता है।

(६८७५) **वटक्षीराद्यञ्जनम्**

(व. से. । नेत्ररोगा.; शा. स. । ख. ३ अ. १३; वृ. यो. त. । त. १३१; वृ. नि. र.; यो. र. । नेत्र.)

वटक्षीरेण संयुक्तो मुख्यः कर्पूरजः कणः।
क्षिप्रमञ्जनतो हन्ति कुसुमं च द्विमासिकम्॥

कपूरके चूर्णको बडके दूधमें घोट कर अंजन बनावें।

इसे आंखमें लगानेसे २ मासका फूला शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(६८७६) **वातारिपत्रयोगः**

(यो. त. । त. ७१)

वातारिपत्रे पुटपाचितानां
द्रवं दलानां वरमल्लिकायाः।
सम्मर्दयेत्सिन्धुफलेन कांस्ये
तेनाञ्जनेनाञ्जितलोचनस्य॥
सद्योऽक्षिनिष्पन्दमकाण्डकण्डू-
मथाधिमन्थादिगदान्निहन्ति॥

चमेलीके पत्तोंको अरण्डके पत्तोंमें लपेट कर उस पर मिट्टीका एक अंगुल मोटा लेप करके पुट

पाक करें और फिर उसमेंसे चमेलीके पत्तोंको निकाल कर उनका रस निकालें और उसे कांसीके पात्रमें डाल कर उसमें समुद्र फलको घिसें ।

इसे आंखोंमें आंजनेसे आंखका फरकना, आंखोंकी खुजली और अधिमन्थादि रोग नष्ट होते हैं ।

(६८७७) **विडङ्गाद्यञ्जनम्**

(व. से. । बालरोगा.)

कृमिघ्नालशिलादार्वीलाक्षागैरिककाञ्जिकैः ।
चूर्णाञ्जनं कुकूणे स्याच्छिशूनां पोथकीषु च ॥

बायबिडंग, हरताल, मनसिल, दारुहल्दी, लाख और गेरु; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको कांजीमें घोटें और सूख जाने पर बारीक करके रक्खें ।

इसे आंखोंमें लगानेसे बालकोंका कुकूणक और पोथकी नामक नेत्र रोग नष्ट होता है ।

(६८७८) **विषमज्वरान्तकाञ्जनम्**

(र. प्र. सु. । अ. ८)

तालकं निम्बतैलेन मर्दितं वटकीकृतम् ।
अञ्जने क्रियमाणे च ज्वरः शान्तिमुपैति हि ॥

हरतालको नीमके तेलमें घोट कर गोली बना लें ।

इसका अंजन लगानेसे ज्वर शान्त होता है ।

(६८७९) **विषहरिवर्तिः**

(रसे. चि. म. । अ. ९)

जयपालभवां मज्जां भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
एकविंशतिवारं तु ततो वर्त्तिं प्रकल्पयेत् ॥
मनुष्यलालया घृष्टा ततो नेत्रं तथाञ्जयेत् ।
सर्पदष्टविषं जित्वा सञ्जीवयति मानवम् ॥

जमाल गोटेकी गिरीको नीबूके रसकी २१ भावना दे कर बत्तियां बना लें ।

इसे मनुष्यके थूकमें घिस कर आंखमें लगानेसे सांपका विष उतर जाता है ।

(६८८०) **विषूचिकानाशनगुटिका**

(यो. चि. म. । अ. ३)

फलत्रिकं व्योषकरञ्जबीजं
रसं तथा दाडिममातुलिङ्गयोः ।
निशायुगं पिष्य कृता च वर्त्ति-
स्तदञ्जनं हन्ति विषूचिकां च ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, करंजुवेकी गिरी, हल्दी और दारु हल्दी; इनका चूर्ण तथा अनार और बिजौरे नीबूका रस समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके बत्तियां बना लें ।

इसका अंजन लगानेसे विषूचिकाका नाश होता है ।

बृहच्चन्द्रोदयावर्तिः

(भै. र. । नेत्र रोगा.)

प्र. सं. १८५८ चन्द्रोदया वर्तिः (लघु) देखिये ।

(६८८१) **वैदेहिवर्त्तिः**

(वृ. यो. त. । त. १३१)

कतकं चन्दनं लाक्षा मरिचं मधुकोत्पलम् ।
तुत्थाक्षामलकाद्बीजं मनोह्वा सुमनः सिता ॥

विडङ्गोदधिफेनैला शङ्खनाभिरसाञ्जनम् ।
एषा दृष्टिप्रदा वर्तिर्विदेहेन विनिर्मिता ॥
नित्योपयोगात्पटलं तिमिरं शुक्तिराजिके ।
शुष्काक्षिरोगौ तोदं च विवृद्धिं चार्ममेव च ॥
निहन्ति रोगानेतांश्च त्रिदोषानपि दुस्तरान् ॥

निर्मलीके फल, लाल चन्दन, लाख, काली मिर्च, मुलैठी, नीलोत्पल, नीलाथोथा, बहेड़ेकी गिरी, आमलेकी गिरी, मनसिल, जावत्री, मिश्री, बायबिड़ंग, समुद्र फेन, इलायची, शंखनाभि और रसौत समान भाग ले कर यथा विधि वर्ति बनावें ।

इसे नित्यप्रति आंखमें लगानेसे पटल, तिमिर, शुक्ति, राजिका, शुष्काक्षिपाक, तोद और अर्मादि त्रिदोषज नेत्र रोग भी नष्ट हो जाते हैं ।

(६८८२) व्योषाद्यञ्जनम् (१)

(यो. र. । बालरो. ; व. से.)

व्योष सभृङ्गं[1] च मनःशिलालं
करञ्जबीजं च सुपिष्टमेतत् ।
कण्डूवर्दितानामथ वर्त्मनां तु
श्रेष्ठं शिशूनां नयने विदध्यात् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, भंगरा, मनसिल, हरताल और करञ्जवेकी गिरी; इनका समान भाग चूर्ण ले कर सबको एकत्र पीस कर सुरमेकी भांति बारीक कर लें ।

१ सभृङ्गमिति पाठान्तरम् ।

इसे आंखमें लगानेसे बालकोंकी आंखोंकी खाज नष्ट होती है ।

(६८८३) व्योषाद्यञ्जनम् (२)

(यो. र. ; वै. र. । अग्निमांद्या. ; वृ. मा. । अजीर्णा. ; व. से. । विषूचिका.)

व्योषं करञ्जस्य फलं हरिद्रां
मूलं समावाप्य च मातुलुङ्गयः ।
छायाविशुष्का गुटिकाः कृतास्ता
हन्युर्विषूचीं नयनाञ्जनेन ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, करञ्जुवेकी गिरी, हल्दी और बिजौरेकी जड़; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको पानीमें पीस कर गोलियां बना कर छायामें सुखा लें ।

इन्हें आंखमें लगानेसे विसूचिकाका नाश होता है ।

(६८८४) व्योषाद्यावर्तिः

(वृ. मा. ; व. से. । नेत्र रोगा.)

व्योषोत्पलाभयाकुष्ठताक्ष्यैर्वर्तिः कृता हरेत् ।
अर्बुदं पटलं काचं तिमिरार्म्माश्रुनिस्रुतिम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, नीलोत्पल, हर्र, कूठ और रसौत समान भाग ले कर यथा विधि वर्ति बनावें ।

इन्हें आंखमें लगानेसे नेत्रार्बुद, पटल, काच, तिमिर, अर्म और अश्रुस्रावका नाश होता है ।

इति वकाराद्यञ्जनप्रकरणम्

अथ वकारादिनस्यप्रकरणम्

(६८८५) वन्ध्याककोटकीमूलयोगः

(ग. नि. । सर्प विषा. ३; यो. र. । विषा. ; यो. त. । त. ७८)

वन्ध्याकर्कोटजं मूलं छागमूत्रेण भावितम् ।
नस्यं काञ्जिकसम्पिष्टं विषोपहतचेतसः ॥

बांझ ककोड़ेकी जड़को बकरीके मूत्रकी भावना दे कर खरल करके रक्खें ।

सर्प विषसे मूर्छित पुरुषको, कांजीमें पीस कर इसकी नस्य देनेसे होश आ जाता है ।

(६८८६) वासादिनस्यम्

(र. रे. । रक्तपित्ता.)

वासादाडिमपुष्पस्य दूर्वारससमन्वितः ।
अलक्तकरसोपेतः पथ्यारससमन्वितः ॥
योजितो नस्यतः क्षिप्रं त्रिदोषमपि देहिनाम् ।
नासारक्तप्रवृत्तन्तु हन्यादिति किमद्भुतम् ॥

बासे (अडूसे) और अनारके फूलोंका रस, दूर्वाका रस, लाखका रस और हर्रका रस समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर नस्य देनेसे त्रिदोषज नासा प्रवृत्त रक्त (नकसीर) भी बन्द हो जाता है ।

(६८८७) विडङ्गादिचूर्णम्

(व. से. । नासा.)

विडङ्गं सैन्धवं हिङ्गु गुग्गुलुः समनःशिलाः ।
प्रतिश्यायो वचायुक्तं चूर्णमाघ्राय नश्यति ॥

बायबिड़ंग, सेंधा नमक, हींग, गूगल, मनसिल और बच समान भाग ले कर चूर्ण बनावें ।

इसकी नस्य लेनेसे प्रतिश्याय नष्ट होता है ।

(६८८८) विडङ्गादिनस्यम्

(भा. प्र. म. खं. २; व. से. । शिरोरोगा. ; वृ. नि. र.)

विडङ्गानि तिलान्कृष्णान्समं कृत्वा तु पेषयेत् ।
नस्यकर्म्मणि दातव्यमर्द्धभेदं व्यपोहति ॥

बायबिड़ंग और काले तिल समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र पीस लें ।

इसकी नस्य लेनेसे अर्द्धावभेदक (आधाशीशी) का नाश होता है ।

(६८८९) विश्वादिनस्यम्

(वृ. मा. । शिरोरोगा.)

नावनं सगुडं विश्वं पिप्पली वा ससैन्धवा ।
भुजस्तम्भादिरोगेषु सर्वेषूर्ध्वगदेषु च ॥

सोंठके चूर्ण और गुड़को एकत्र मिला कर उसकी, अथवा समान भाग मिश्रित पीपलके चूर्ण और सेंधा नमककी नस्य भुजस्तम्भ और शिरोरोगोंमें लाभदायक है ।

(६८९०) व्योषादिनस्यम्

(यो. र. । विषूचिका.)

व्योषं करञ्जस्य फलं हरिद्रानिम्बुकद्रवैः ।
नस्याञ्जने प्रयोक्तव्ये कुर्याच्च जलसेवनम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, करञ्जकी गिरी और हल्दी; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको नीबूके रसमें खरल करें । विषूचिकामें इसकी नस्य देनी और इसीका अंजन लगाना तथा इन्हीं ओषधियोंसे पकाया हुवा पानी पिलाना चाहिये ।

इति वकारादिनस्यप्रकरणम्



अथ वकारादिकल्पप्रकरणम्

(६८९१) वृद्धदारुककल्पः

(ग. नि. । ओषधि कल्पा.)

वसन्ते सङ्गृहीतानि शोषितानि तथाऽऽतपे ।
वृद्धदारुकमूलानि सञ्चूर्ण्य सर्पिषा सह ॥
आप्लाव्य घृतपात्रस्थं धान्ये पक्षमुपेक्षितम् ।
लिह्यादनुपिबन् क्षीरं जीर्णे क्षीरघृताशनः ॥
तत्प्रयोगाज्जराजीर्णो वृद्धो दारुकतामियात् ।
भग्नास्थिगद्गदशिशुः स्थूलोऽप्यास्यान्यरूपताम् ॥
निरस्ताशेषदोषास्रनखभेदाद्युपद्रवः ।
अपस्मारग्रहोन्मादपापालक्ष्मीविवर्जितः ॥
दीप्ताग्निर्बलवान् वाग्मी जीवेद्वर्षशतानि षट् ।

चूर्णितैरश्वगन्धायाः संयुतं त्रिशता पलैः ॥
तत्तुल्यं दारुकं प्राश्य पयसा सर्पिषाऽथवा ।
जीर्णे पूर्ववदश्नीयात् स जीवेच्छरदां शतम् ॥
वाजिवेगो गजप्राणः सुरूपो भास्करद्युतिः ।

यो लिह्यात्सर्पिषा चूर्णं वृद्धदारुकमूलजम् ॥
सप्ताहं यूषभक्ताशी स्यात्स किन्नरतुल्यवाक् ।

लिहन् वा मधुसर्पिर्भ्यां धात्रीस्वरसभावितम् ॥
क्षीरेण वा पिबेन्मासं शतं जीवेदरुक् सुखी ।

वृद्धदारुकमूलानां रसं क्षीरेण यः पिबेत् ॥
तत्कल्कसिद्धं सर्पिषा स जीवेन्निरुजः शतम् ।

पिप्पलीत्रिफलादार्वीमहौषधपुनर्नवाः ॥
पृथग्दशपलाः सर्वैस्तुल्यांशो वृद्धदारुकः ।
धान्याम्लपीतं तच्चूर्णं जीर्णे स्वच्छन्दभोजिनः ॥
सदुष्टवातान् हन्त्याशु गुल्मोदरगरादिकान् ।

वृद्धदारुक (विधारे) की जड़को वसन्त ऋतुमें उखाड़ कर धूपमें सुखा कर चूर्ण करें और उसे घीसे तर करके घृतपात्रमें भर कर उसका मुख बन्द करके अनाजके ढेरमें दबा दें और १५ दिन पश्चात् निकाल कर काममें लावें ।

इसे खा कर ऊपरसे दूध पीना और औषध पच जाने पर घृतयुक्त दूधका आहार करना चाहिये ।

इस प्रयोगसे जरा जर्जरित वृद्ध भी तरुणके समान हो जाता है तथा बालकोंकी कुरूपता दूर हो कर उनका स्वर सुधर जाता है; टूटी हुई अस्थि जुड़ जाती है एवं रक्तदोष, नख भेदादि, अपस्मार, ग्रह, उन्माद और कान्ति हीनता आदिका नाश और अग्नि बल तथा वाणीकी वृद्धि हो कर १०० वर्षकी आयु प्राप्त होती है ।

३० पल असगन्ध और ३० पल विधारा मूलके चूर्णको एकत्र मिला कर रक्खें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार दूध या घीके साथ सेवन और घी दूधका आहार करनेसे मनुष्य अत्यन्त बलशाली, एवं सुरूप और कान्तिमान हो कर १०० वर्ष तक जीवित रहता है ।

विधारेकी जड़का चूर्ण घीके साथ १ सप्ताह तक सेवन करने और मूंगका यूष तथा भात खानेसे स्वर किन्नर सदृश मधुर हो जाता है ।

विधारा मूलके चूर्णको आमलेके रसकी (बहुत सी) भावना दे कर रक्खें । इसे शहद और घीके या दूधके साथ १ मास तक सेवन करनेसे १०० वर्षकी रोगरहित आयु प्राप्त होती है ।

दूधमें विधारा मूलका स्वरस मिला कर सेवन करने या विधारा मूलके कल्कसे सिद्ध घृत सेवन करनेसे १०० वर्षकी रोग रहित आयु प्राप्त होती है ।

पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, दारुहल्दी, सोंठ और पुनर्नवामूल; इनका चूर्ण ५०–५० तोले तथा विधारामूलका चूर्ण सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिला कर रक्खें ।

इसे कांजीके साथ सेवन करनेसे दुष्ट वायु, गुल्म, उदर रोग और गरविषादिका नाश होता है।

औषध पच जाने पर यथेच्छ आहार करना चाहिये ।

इति वकारादिकल्पप्रकरणम्

अथ वकारादिरसप्रकरणम्

(६८९२) वङ्गभस्मयोगः (१)

(यो. र. । प्रमेहा.)

शाल्मलित्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।
वङ्गभस्म हरेन्मेहान्पञ्चानन इव द्विपान् ॥

बंग भस्म और हल्दीका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर (४ रत्तीकी मात्रानुसार) शहद और सेंभलकी छालके रसमें मिला कर सेवन करनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(६८९३) वङ्गभस्मयोगः (२)

(यो. र. । प्रमेहा.)

पयो गवां सखण्डकं त्रिकण्टवङ्गवल्लकम् ।
प्रमेहभल्लकं परं बुधा वदन्ति सादरम् ॥

बंग भस्म और गोखरुका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर ३–३ रत्तीकी मात्रानुसार मिश्रीयुक्त गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(६८९४) वङ्गभस्मयोगः (३)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । प्रमेहा.)

गुडूचीरसमधुना वङ्गभस्म प्रमेहनुत् ।
नागभस्म तथैवापि सर्वमेहनिवारणम् ॥

बंग भस्म अथवा नागभस्मको गिलोयके रस और शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—२ रत्ती)

(६८९५) **वङ्गभस्मयोगः** (४)

(यो. र. ; वृ. नि. र. । प्रमेहा.)

वङ्गं शिलाजतुयुतं तु मतं प्रमेहे
धातुक्षये दुर्बलनष्टशुक्रयोः ।
अभ्रेण युक्तं तु सुतप्रदं स्या-
ज्जातीफलार्ककरहाटलवङ्गयुक्तम् ॥

बंग भस्म शिलाजीतमें मिला कर सेवन करना प्रमेह, धातुक्षय, दुर्बलता और शुक्रनाशमें हितकारी है ।

बंग भस्म, अभ्रक भस्म, जायफलका चूर्ण, ताम्र भस्म, स्वर्ण भस्म और लौंगका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर सेवन करनेसे पुत्र प्राप्ति होती है ।

(**मात्रा**—३ रत्ती ।)

(६८९६) **वङ्गमारणम्** (१)

(भा. प्र. । पू. खं. १ ; शा. सं. । खं. २ अ. ११ ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; यो. चि. म. । अ. ७)

मृत्पात्रे द्राविते वङ्गे चिञ्चाश्वत्थत्वचो रजः ।
क्षिप्त्वा वङ्गचतुर्थांशमयोदर्व्या प्रचालयेत् ॥
ततो द्वियाममात्रेण वङ्गभस्म प्रजायते ।
अथ भस्मसमं तालं क्षिप्त्वाम्लेन विमर्दयेत् ॥
ततो गजपुटे पक्त्वा पुनरम्लेन मर्दयेत् ।
तालेन दशमांशेन याममेकं ततः पुटेत् ॥
एवं दशपुटैः पक्वं वङ्गं भवति मारितम् ॥

बंगको मृत्पात्रमें पिघला कर उसमें समान भाग मिश्रित इमली और पीपल वृक्षकी छालका चूर्ण ज़रा ज़रासा डालते और लोहेकी करछीसे रगड़ते रहें । इस विधिसे दो पहरमें बंगकी भस्म हो जाती है । उक्त दोनों छालोंका चूर्ण बंगसे चतुर्थांश लेना चाहिये और उसमेंसे ज़रा ज़रासा डालते हुवे दो पहरमें (बंग भस्म होने तक) वह सम्पूर्ण चूर्ण समाप्त करना चाहिये ।

तदनन्तर भस्मके स्वांगशीतल होने पर उसमें उसके बराबर हरताल मिला कर दोनोंको नीबूके रसमें घोट कर टिकिया बनावें । और उन्हें सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इसके पश्चात् उसमें पुनः दसवां भाग हरताल मिला कर नीबूके रसमें १ पहर मर्दन करके टिकियां बनावें और शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इस प्रकार दस पुट देनेसे सेवन करने योग्य भस्म तैयार हो जाती है । (हरबार दसवां भाग हरताल मिला कर नीबूके रसमें घोटना चाहिये ।)

नोट—आ. वे. प्र. में. वंग भस्मके समान अथवा चौथा भाग या अष्टमांश हरताल मिला कर नींबू या घृतकुमारीके रसमें घोटनेके लिये लिखा है । एवं उसके मतानुसार हरताल केवल प्रथम पुटमें ही डालनी चाहिये और शेष ६ पुट बिना हरताल मिलाये ही नींबू या घी कुमारके रसमें घोट घोट कर देनी चाहियें ।

(६८९७) **वङ्गमारणम्** (२)

(रसे. सा. सं. ; वृ. यो. त. । त. ४१ ; यो. त. । त. १७ ; आ. वे. प्र. । अ. ११ ; र. मं.)

वङ्गं सतालमर्कस्य पिष्ट्वा दुग्धेन सम्पुटेत् ।
शुष्काश्वत्थभवैर्वल्कैः सप्तधा भस्मतां नयेत् ॥

हरतालको आकके दूधमें घोट कर शुद्ध वंगके पत्रों पर लेप करके सुखा लें और उन्हें पीपल वृक्षकी सूखी छालके चूर्णके बीचमें रख कर शराव-सम्पुट करके उस पर कपरमिट्टी करके सुखा लें और गजपुटमें फूंक दें । इसी प्रकार सात पुट देनेसे वंगकी भस्म तैयार हो जाती है ।

(हरताल वंगके बराबर लेनी चाहिये ।)

(६८९८) वङ्गमारणम् (३)

(रसे. सा. सं । पूर्व खं.)

विशुद्धवङ्गपत्राणि द्रावयेद्धण्डिकान्तरे ।
अपामार्गोद्भवं चूर्ण तत्तुल्यं तत्र मेलयेत् ॥
स्थूलाग्रया लोहदर्व्या शनैस्तदभिमर्दयेत् ।
यावद्भस्मत्वमाप्नोति तावन्मर्द्यन्तु पूर्ववत् ॥
ततस्त्वेकीकृतं चूर्ण कृत्वा चाङ्गारवर्जितम् ।
नूतनेन शरावेण रोधयेच्च भिषग्वरः ॥
पश्चात्तीव्राग्निना पक्वं वङ्गभस्म भवेद् ध्रुवम् ॥

शुद्ध वंगके पत्रोंको कढ़ाईमें गला कर उसमें उसके बराबर अपामार्ग (चिरचिटे) का चूर्ण मिला कर लोहेकी करछीसे धीरे धीरे घोटते रहें । जब तक भस्म न हो जाय तब तक निरन्तर घोटते रहें और फिर उसे कढ़ाईके बीचमें एकत्रित करके उसमेंसे अपामार्गकी राख (जितनी निकल सके उतनी) निकाल दें और फिर उसे एक नवीन शरावसे ढक दें तथा उसके नीचे (१ पहर तक) तीव्राग्नि जलावें तो वंगभस्म तैयार हो जायगी ।

(नोट—यह भस्म खाने योग्य नहीं होती। इसे प्रथम पानीसे धोना चाहिये कि जिससे अपामार्गकी राख निकल जाए और फिर घीकारमें घोट कर गजपुटमें पकाना चाहिये ।)

(६८९९) वङ्गमारणम् (४)

(रसे. सा. सं । पूर्व खं.)

वङ्गं खर्परके कृत्वा चुल्ल्यां संस्थापयेत्सुधीः ।
द्रवीभूते पुनस्तस्मिञ्चूर्णान्येतानि दापयेत् ॥
प्रथमं रजनीचूर्णं द्वितीये च यमानिका ।
तृतीये जीरकश्चैव ततश्चिञ्चात्वगुद्भवम् ॥
अश्वत्थवल्कलोत्थश्च चूर्णं तत्र विनिःक्षिपेत् ।
एवं विधानतो वङ्गं म्रियते नात्र संशयः ॥

शुद्ध वंगको कढ़ाईमें डाल कर चूल्हे पर चढ़ावें । जब वह पिघल जाय तो उसमें ज़रा ज़रा सा हल्दीका चूर्ण डाल कर लोहेकी करछीसे घोटें । जब (वंगसे चतुर्थांश) हल्दीका चूर्ण समाप्त हो जाय तो उसी प्रकार अजवायनका चूर्ण डाल कर घोटें एवं उसके समाप्त होने पर क्रमशः जीरे, इमलीकी छाल और पीपलकी छालका चूर्ण डाल कर घोटें ।

इस क्रियासे वंग अवश्य मर जाता है ।

(नोट—प्रत्येक औषधिका चूर्ण वंगसे चतुर्थांश होना चाहिये । और ज़रा ज़रासा डालते हुवे निरन्तर चलाते रहना चाहिये। अन्तमें भस्मको कढ़ाईके बीचमें एकत्रित करके शरावसे ढक देना चाहिये और उसके नीचे १ पहर तक तीव्राग्नि जलानी चाहिये । तदनन्तर जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो उसे कई बार पानीसे धो कर घीकुमार-के रसमें घोट कर कमसे कम तीन बार गज-पुटमें पकाना चाहिये । जितनी अधिक पुट दी जाएं उतना ही उत्तम है ।)

(६९००) **वङ्गमारणम्** (५)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

सतालेनार्कदुग्धेन लिप्त्वा वङ्गदलानि च ।
बोधिचिञ्चात्वचः क्षारैर्दद्याल्लघुपुटानि च ॥
मर्दयित्वा चरेद्भस्म तद्रसादिषु शस्यते ॥

हरतालको आकके दूधमें घोट कर बंगके पत्रों पर लेप करके सुखा लें और उन्हें पीपल तथा इमलीके क्षारके बीचमें रख कर शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें। जब तक भस्म न हो जाय इसी प्रकार पुट देते रहें।

(हरताल वंगके बराबर लेनी चाहिये ।)

(६९०१) **वङ्गमारणम्** (६)

(र. प्र, सु. । अ. ४)

छाणोपरि कृते गर्ते चिञ्चात्वक्चूर्णकं क्षिपेत् ।
कर्षमानां वङ्गचक्रीं तत्रोपरि निधापयेत् ॥
चक्रीं चतुर्गुणेनैव वेष्टितां धारयेत्ततः ।
छगणेन विशुष्केण पुटाग्निं दापयेत्ततः ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सर्वकार्येषु योजयेत् ।
अनेन विधिना शेषमपक्वं मारयेद्ध्रुवम् ॥

एक बड़ेसे उपले (कंडे) में गढ़ासा बना कर उस पर २॥ तोले इमलीकी छालका चूर्ण बिछा दें और फिर उस पर शुद्ध वंगका १। तोलेका पतरा रख कर उसके ऊपर पुनः २॥ तोले इमलीकी छालका चूर्ण रख कर उसके ऊपर दूसरा कण्डा रख कर दोनोंको सुतलीसे बांध दें । अब इसे (शराव सम्पुटमें बन्द करके) पुट लगादें और उसके स्वांग शीतल होने पर राखमेंसे वंग भस्मको सावधानी पूर्वक निकाल लें । जो भाग कच्चा रह गया हो उसे पुनः उसी प्रकार पुट लगा कर भस्म कर लें ।

(६९०२) **वङ्गमारणम्** (७)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

पलाशद्रवयुक्तेन वङ्गपत्रं प्रलेपयेत् ।
तालेन पुटितं पश्चान्म्रियते नात्र संशयः ॥

हरतालको पलाश (ढाक) की जड़के रसमें घोट कर शुद्ध वंगके पत्रों पर लेप करें और उन्हें सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके पुट लगा दें । इस विधिसे वंग अवश्य मर जाता है।

(६९०३) **वङ्गमारणम्** (८)

(र. र. स. । पू. अ. ५)

प्रद्राव्य खर्परे वङ्गं षोडशांशं रसं क्षिपेत् ।
स्वल्पस्वल्पाऽऽलकं दत्त्वा भारद्वाजस्य काष्ठतः॥
मर्दयित्वा चरेद्भस्म तद्रसादिषु शस्यते ॥

शुद्ध वंगको कढ़ाईमें पिघला कर उसमें उसका सोलहवां भाग पारद मिलावें और फिर उसमें ज़रा ज़रासा हरतालका चूर्ण डाल कर कंघी (अतिबला) की गीली लकड़ीसे चलाते रहें । इस क्रियासे (४—५ पहरमें) वंग भस्म तैयार हो जाती है।

(हरताल वंगके बराबर लेनी चाहिये ।)

(६९०४) **वङ्गमारणम्** (९)

(वृ. यो. त. । त. ४१ ; आ. वे. प्र. । अ. ११)

वन्योत्पलोपरिस्थे तु गोणीखण्डे क्षिपेद्रजः ।
तिन्तिणीवल्कलस्याथ तिलांस्तत्र विनिक्षिपेत् ॥

अङ्गुलार्धप्रमाणेन तत्र वङ्गदलं न्यसेत् ।
खण्डीकृतं पुनस्तेन क्रमेणैवात्र विन्यसेत् ॥
तिलं तिन्तिणीवल्कं च गोमयांश्चाग्निना दहेत् ।
स्वाङ्गशीतं ततो ग्राह्यं युक्त्या वङ्गस्य भस्म तत्॥

अरण्य (अरने) कण्डे पर कपड़ेका टुकड़ा बिछा कर उस पर इमलीकी छालका चूर्ण बिछावें और उस पर तिलोंकी आध अंगुल ऊंची तह जमा दें । तदनन्तर उस पर शुद्ध वंगके (चावलके समान छोटे) टुकड़े बिछा कर उन पर क्रमशः तिल और इमलीकी छालके चूर्णकी आध आध अंगुल मोटी तह जमा दें और (उस पर दूसरा उपला रख कर, सुतलीसे लपेट कर उसे शराव सम्पुटमें बन्द करके) कण्डोंकी अग्निमें फूंक दें । एवं सम्पुटके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे सावधानी पूर्वक वंग भस्मको निकाल लें ।

(६९०५) वङ्गमारणम् (१०)

(वृ. यो. त. । त. ४१ ; आ. वे. प्र. । अ. ११)

रजनीरजसा वह्निस्थायां हण्ड्यां तु पूर्ववत् ।
वङ्गभस्म विधायाथ सोरकं तत्र निक्षिपेत् ॥
वङ्गं तुर्यांशमथ तच्छरावेण पिधापयेत् ।
मन्दमग्निं घटीमेकां दत्त्वाऽथ स्वाङ्गशीतलम् ॥
कुन्देन्दुधवलं वङ्गभस्म ग्राह्यं स्वकार्यकृत् ।

× × × ×

वङ्गं तिक्तोष्णरूक्षं कफकृमि-
वमिजिन्मेहमेदोनिलघ्नम्
कासश्वासक्षयार्तिप्रशमित-
हुतभुग्मान्द्यमाध्मानदारि ।
बल्यं वृष्याङ्गभाक्रुन्मनसिज-
जनकं स्वप्नमेहप्रणाशि
प्रज्ञाकृद्वीर्यमुच्चैरलघु
रतिरसस्याऽऽस्पदं बृंहणं च ॥
अशुद्धममृतं वङ्गं प्रमेहादिगदप्रदम् ।
गुल्महृद्रोगशूलार्शः कासश्वासवमिप्रदम् ॥

(वृ. यो. त.)

शुद्ध वंगको कढ़ाईमें पिघला कर उसमें ज़रा ज़रासा हल्दीका चूर्ण डालते हुवे लोहेकी करछीसे चलाते रहें । जब भस्म हो जाय तो उसमें वंगसे चतुर्थांश शोरा डाल कर शरावसे ढकदें और १ घड़ी तक उसके नीचे मन्दाग्नि जला कर स्वांग शीतल होने पर निकाल लें ।

यह भस्म अत्यन्त श्वेत होती है ।

* * * *

वङ्ग भस्म तिक्त, उष्ण तथा रूक्ष है । यह कफ, कृमि, वमन, प्रमेह, मेद वायु, कास, श्वास, क्षय, अग्निमांद्य, आध्मान और स्वप्नदोषको नष्ट करती है । इसके सेवनसे बल, वीर्य, तेज, कामशक्ति और बुद्धिकी वृद्धि होती है ।

वंग भस्मके सेवनसे वीर्य वृद्धि और कामोत्तेजना विशेष रूपसे होती है ।

अशुद्ध और कच्चा बंग प्रमेह, गुल्म, हृद्रोग, शूल, अर्श, कास, श्वास और वमन आदि रोगोंको उत्पन्न करता है ।

वङ्गभस्मानुपानानि

कर्पूरसार्द्धं मुखगन्धनाशं जातीफलैः पुष्टिकरं नराणाम् ।

तुलसीपत्रसंयुक्तं प्रमेहं नाशयेद्ध्रुवम् ॥
घृतेन पाण्डुरोगं च टङ्कणैर्गुल्मनाशनम् ।
हरिद्रया रक्तपित्तघ्नी मधुना बलबुद्धिकृत् ॥
पिप्पल्या चाग्निमान्द्यत्वं निशया चोर्ध्वश्वासहृत्
चम्पकस्वरसेनैव दुर्गन्धिं नाशयेद् ध्रुवम् ॥
निम्बकस्वरसेनाढ्यं देहे दहनशान्तये ।
कस्तूरी वङ्गसंयुक्तं भक्षणाद्वीर्यरोधकृत् ॥
खदिरक्वाथयोगेन चर्मरोगान् जयेदसौ ।
पूगीफलस्य सार्द्धेनाजीर्णं नाशयते क्षणात् ॥
दुग्धसार्द्धं भवेत्तुष्टिर्विजया स्तम्भनं भवेत् ।
लशुनैर्वातजां पीडां नाशयेन्नात्र संशयः ॥
समुद्रफलसंयोगान्निर्गुण्ड्या सह भक्षणात् ।
कुष्ठं नाशयते क्षिप्रं सिंहनादे मृगा इव ॥
देवपुष्पस्य संयोगे समुद्रफलयोगतः ।
नागपत्ररसैर्लेप्याल्लिङ्गवृद्धि प्रजायते ॥
कौब्जेऽपामार्गमूलेन प्लीहे टङ्कणसंयुतम् ।
रसोनतैलयुङ्नस्यमपस्मारनिषूदनम् ॥
यवानिकायुतं वाते वाजिगन्धा युतं तु वा ।
जलोदरे त्वजाक्षीरसंयुतं गुणकृद्भवेत् ॥
जातीफलाश्वगन्धाभ्यां कटिपीडानिवारणम् ॥

वंग भस्म कपूरके साथ सेवन करनेसे मुखकी दुर्गन्धको नष्ट करती है; जायफलके साथ देनेसे शरीरको पुष्ट करती है; तुलसी पत्रके साथ देनेसे प्रमेहको; घृतके साथ पाण्डुको; सुहागेके साथ गुल्मको और हल्दीके साथ सेवन करनेसे रक्त पित्तको नष्ट करती है ।

इसे शहदके साथ सेवन किया जाय तो बल बुद्धिकी वृद्धि होती है ।

वंग भस्मको पीपलके चूर्णके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्य, हल्दीके चूर्णके साथ सेवन करनेसे ऊर्ध्व श्वास; चम्पाके फूलोंके स्वरसके साथ सेवन करनेसे शरीरकी दुर्गन्धि और नीमके पत्तोंके रसके साथ खानेसे दाहका नाश होता है ।

वीर्यस्तम्भनके लिये वंग भस्ममें कस्तूरी मिला कर सेवन करना चाहिये ।

यदि वंग भस्मको खैरके क्वाथके साथ सेवन किया जाय तो चर्म रोगोंका और सुपारीके चूर्णके साथ खानेसे अजीर्णका नाश होता है ।

दूधके साथ वंग भस्म सेवन करनेसे तुष्टि प्राप्त होती है; भांगके साथ सेवन करनेसे वीर्यस्तम्भन होता है ।

यदि वंग भस्मको ल्हसनके कल्कके साथ खाया जाय तो वातज पीड़ा अवश्य नष्ट हो जाती है ।

समुद्रफलके चूर्णमें वंगभस्म मिला कर संभालुके रसके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है ।

वंग भस्म, लौंगका चूर्ण और समुद्र फलका चूर्ण समान भाग ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर पानके रसमें घोट कर लेप करनेसे लिङ्ग वृद्धि होती है ।

वंग भस्मको कुब्जतामें अपामार्गकी जड़के साथ; प्लीहावृद्धिमें सुहागेके साथ; वातव्याधिमें अजवायन या असगन्धके साथ; जलोदरमें बकरीके दूधके साथ और कमरके दर्दमें जायफल तथा असगन्धके चूर्णके साथ सेवन करना चाहिये ।

यदि ल्हसनके स्वरससे सिद्ध तेलके साथ वंग भस्म मिला कर नस्य ली जाय तो अपस्मार नष्ट हो जाता है ।

(६९०६) **वङ्गयोगः**

(रसे. सा. सं । प्रमेहा. ; र. चं.)

वङ्गाभ्रमथ नागाभ्रं नागं वङ्गञ्च केवलम् ।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतु समन्वितम् ॥

वंग भस्म, अभ्रक भस्म और शिलाजीत; अथवा, नागभस्म, अभ्रक भस्म और शिलाजीत; अथवा नाग भस्म और शिलाजीत या वंग भस्म और शिलाजीत सेवन करनेसे प्रमेह रोग नष्ट होता है ।

(मात्रा—३ रत्ती ।)

(६९०७) **वङ्गरसायनम्**

(र. र. स. । पू. अ. ५)

वङ्गभस्मसमं कान्तं व्योमभस्म च तत्समम् ।
मर्दयेत्कनकाम्भोभिर्निम्बपत्ररसैरपि ॥
दाडिमस्य मयूरस्य रसेन च पृथक् पृथक् ।
भूपालावर्तभस्माथ ।विनिक्षिप्य समांशकम् ॥
गोमूत्रकशिलाधातुजलैः सम्यग्विमर्दयेत् ।
ततो गुग्गुलुतोयेन मर्दयित्वा दिनाष्टकम् ॥
विशोष्य परिचूर्ण्याथ समभागेन योजयेत् ।
घृष्टं बन्धुकनिर्यासैर्नाकुलीबीजचूर्णकैः ॥
ततः क्षिपेत्करण्डान्तर्विधाय पटगालितम् ।
गोतक्रपिष्टरजनीसारेण सह पाययेत् ॥
चतुर्भिर्वल्लकैस्तुल्यं रम्यं वङ्गरसायनम् ।
निश्चितं तेन नश्यन्ति मेहा विंशतिभेदकाः ॥
शालयो मुद्गसूपं च नवनीतं तिलोद्भवम् ।
पटोलं तिक्ततुण्डीरं तक्रं पथ्याय शस्यते ॥

वंग भस्म, कान्त लोह भस्म और अभ्रक भस्म १—१ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके धतूरे, नीमके पत्ते, अनार और अपामार्ग (चिरचिटे) के रसकी १—१ भावना दे कर सुखा लें । तदनन्तर उसमें उसके बराबर राजावर्त भस्म मिला कर गोमूत्र, शिलाजीतके पानी और गूगलके पानीमें पृथक् पृथक् ८—८ दिन खरल करें और उसे सुखा कर उसमें उसके बराबर नाकुलीकन्दके बीजोंका चूर्ण मिला कर पीत शाल (विजय सार) के रसमें खरल करके, सुखा कर कपड़ेसे छानकर शीशीमें भर लें ।

हल्दीके सतको गोतक्रमें पीस कर उसके साथ १२ रत्तीकी मात्रानुसार यह रसायन सेवन करनेसे २० प्रकारके प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं ।

पथ्य—शाली चावल, मूंगकी दाल, नवनीत, तिलका तेल, पटोल, कड़वी कन्दूरी और तक्र ।

(व्यवहारिक मात्रा—४ रत्ती)

(६९०८) **वङ्गविकारशमनोपायः**

(र. रा. सु.)

मेषशृङ्गीसितायुक्तां यः सेवति दिनत्रयम् ।
वङ्गदोष विमुक्तोसौ सुखं जीवति मानवः ॥

मेढासिंगीका चूर्ण और मिश्री एकत्र मिला कर ३ दिन सेवन करनेसे वंग सेवनसे उत्पन्न विकार नष्ट हो जाते हैं ।

(६९०९) **वङ्गशोधनम्** (१)

(र. र. स. । पू. अ. ५ ; र. रा. सु.)

खुरकं मिश्रकं चेति द्विविधं वङ्गमुच्यते ।
खुरं तत्र गुणः श्रेष्ठं मिश्रकं न हितं मतम् ॥
धवलं मृदुलं स्निग्धं तद्रावं सगौरवम् ।
निःशब्दं खुरवङ्गं स्यान्मिश्रकं श्यामशुभ्रकम् ॥
द्रावयित्वा निशायुक्ते क्षिप्ते निर्गुण्डिकारसे ।
विशुद्ध्यति त्रिवारेण खुरवङ्गं न संशयः ॥

वंग दो प्रकारकी होती है; एक खुरक (हिरनखुरी) और दूसरी मिश्रक । इन दोनोंमें खुरवंग श्रेष्ठ होती है और मिश्रक त्याज्य ।

खुरवंग रंगमें सफेद, कोमल, स्निग्ध, जल्दी गल जाने वाली, भारी और शब्द रहित होती है । मिश्रक वंगका रंग स्याही लिये हुवे सफैद होता है ।

खुरवङ्गको (तैल, तक्रादिमें बुझानेके पश्चात्) गला, गला कर हल्दीका चूर्ण मिले हुवे संभालुके रसमें ३ बार बुझानेसे वह शुद्ध हो जाती है ।

(६९१०) **वङ्गशोधनम्** (२)

(भा. प्र. । पू. खं १)

वङ्गं विधत्ते खलुशुद्धिहीन-
माक्षेपकम्पौ च किलासगुल्मौ ।
कुष्ठानि शूलं किल वातशोथं
पाण्डुं प्रमेहश्च भगन्दरश्च ॥
विषोपमं रक्तविकारवृन्दं
क्षयश्च कृच्छ्राणि कफज्वरश्च ।
मेहाश्मरीविद्रधिमुष्करोगा-
न्नागोऽपि कुर्यात्कथितान्विकारान् ॥
वङ्गनागौ प्रतप्तौ च गलितौ तौ निषेचयेत् ।
त्रिधात्रिधा विशुद्धिः स्याद्रविदुग्धेऽपि च त्रिधा॥

अशुद्ध वंगकी भस्म सेवन करनेसे आक्षेपक, कम्प, किलास, गुल्म, कुष्ठ, शूल, वातव्याधि, शोथ, पाण्डु, प्रमेह, भगन्दर, रक्त विकार, विष समान उपद्रव, क्षय, कफ ज्वर, अश्मरि, विद्रधि और मुष्क (अण्डकोष) सम्बन्धी रोग उत्पन्न होते हैं । अशुद्ध नाग भस्मसे भी यही रोग उत्पन्न होते हैं अतः वंग अथवा नागको शुद्ध किये बिना इनकी भस्म कदापि न बनानी चाहिये ।

वंग और नागको तपा तपा कर (गला गला कर) (तेल, तक्र, गोमूत्र, कांजी और कुलथीके काथमें ३-३ बार बुझानेके पश्चात्) ३ बार आकके दूधमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाती है ।

(६९११) **वङ्गावलेहः**

(रसे. सा. सं. । प्रमेहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९; र. का. धे. ; र. रा. सु. ; धन्व. । प्रमेहा.)

वङ्गभस्म द्विवल्लश्च लेहयेन्मधुना सह ।
ततो गुडसमं गन्धं भक्षयेत्कर्षमात्रकम् ॥
गुडूचीसत्त्वमथ वा शर्करासहितं तथा ।
सर्वमेहहरो ज्ञेयो वङ्गावलेह उत्तमः ॥

६ रत्ती (आजकल २ रत्ती) वंग भस्मको शहदके साथ चाट कर १। तोला (व्य. मात्रा २ रत्ती) शुद्ध गंधकको गुड़में मिला कर खाने या गिलोयके सतको खांडमें मिला कर खानेसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

(६९१२) वङ्गाष्टकम्

(भै. र. । प्रमेहा.)

रसं गन्धं मृतं लौहं मृतरूप्यश्च खर्परम् ।
मृताभ्रकं मृतं ताम्रं सर्वतुल्यश्च वङ्गकम् ॥
पुटेद् लघुपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
रक्तिद्वयप्रमाणेन मधुना लेहयेन्नरम् ॥
निशाचूर्णं क्षौद्रयुतं पिबेद्धात्रीरसं ह्यनु ।
वङ्गाष्टकमिदं ख्यातं महादेवप्रकाशितम् ॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति आमदोषं विषूचिकाम् ।
विषमज्वरगुल्मार्शोमूत्रातिसारपित्तजित् ॥
वीर्यवृद्धिं करोत्याशु सोमरोगनिबर्हणम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, चांदी भस्म, खपरिया, अभ्रक भस्म और ताम्र भस्म १-१ भाग तथा वंग भस्म ७ भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर खरल करके सबको शराव-सम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें और फिर उसके स्वांग शीतल होने पर निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसे शहदमें मिला कर चाटनेके बाद (३ माशे) हल्दीका चूर्ण शहदमें मिला कर चाटना चाहिये और फिर आमलेका रस पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे बीस प्रकारके प्रमेह, आमदोष, विषूचिका, विषमज्वर, गुल्म, अर्श, मूत्रातिसार, पित्त और सोमरोगका नाश तथा वीर्यवृद्धि होती है ।

(६९१३) वङ्गेश्वररसः (१)

(र. रा. सु. । प्रमेहा.)

शुद्धं तालं शुद्धसूतं वङ्गं गन्धकशुद्धकम् ।
ग्राहयेत्समभागानि अर्कक्षीरे विमर्दयेत् ॥
दिनसप्तकपर्यन्तं मर्दयेच्च निरन्तरम् ।
काचकुप्यां क्षिपेन्मुद्रां दत्त्वा चैव भिषग्वरः ॥
द्वादशप्रहरं देयं मन्दाग्निं च न संशयः ।
पुनरेव प्रकर्त्तव्यो विधिरेष न संशयः ॥
रसो ग्राह्यो प्रयत्नेन रक्तिकार्द्धं प्रदीयते ।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं वातव्याधिं विनाशयेत् ॥
उन्मादे नष्टशुक्रे च अग्निहीने च दीयते ।
कुष्ठं व्रणं ज्वरं चैव नाशयेच्च किमद्भुतम् ॥

शुद्ध हरताल, शुद्ध पारद, वंग भस्म और शुद्ध गंधक समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धक-की कज्जली बनावें और फिर सबको एकत्र मिला कर सात दिन तक आकके दूधमें घोट कर कपर मिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसका मुख बन्द करके (वालुका यन्त्रमें रख कर) १२ पहर मन्दाग्नि पर पकावें । तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस कर पुनः आकके दूधमें ७ दिन खरल करके उपरोक्त विधिसे १२ पहर पाक करें । तत्पश्चात् औषधको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसे पानमें रख कर खानेसे वात व्याधि, उन्माद, शुक्रह्रास, अग्निमांद्य, कुष्ठ, व्रण और ज्वरका नाश होता है ।

(६९१४) वङ्गेश्वररसः (२)

(वृ. नि. र. । प्रमेहा.)

शुद्धसूतं समं गन्धं वङ्गं च द्विगुणं भवेत् ।
एकत्र मर्दयेत्सर्वं वल्लमेकं प्रमेहिणाम् ॥
शर्करामधुसंयुक्तं पथ्यं च क्षारवर्जितम् ।
एष वङ्गेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृन्तनः ॥

शुद्ध पारद और गंधक १-१ भाग तथा बंग भस्म २ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

इसे खांड और शहदमें मिला कर सेवन करना तथा लवण रहित पथ्य आहार करना चाहिये ।

(६९१५) वङ्गेश्वररसः (३)

(र. चि. म. । स्तबक ११)

भागचतुष्कं वङ्गं मृतं हि शङ्खं रसं विभागैकम् ।
पृथग् द्विकं हरितालं काञ्जिकपिष्टं शरावसम्पुटके ॥
पुटेद्गजाख्ये यन्त्रे वङ्गेश्वरनामतः प्रसिद्धरसः ।
वङ्गेश्वरोऽयमबले बलदो नृणां हि रसिकानाम् ॥

वंग भस्म ४ भाग, शंख भस्म और रस सिन्दूर १-१ भाग तथा शुद्ध हरताल २ भाग ले कर सबको कांजीमें घोट कर टिकिया बना कर सुखा लें और विधि पूर्वक शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूंक दें ।

यह निर्बल कामी पुरुषोंमें बलकी वृद्धि करता है ।

(मात्रा—१ रत्ती ।)

(६९१६) वङ्गेश्वररसः (४)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । शोथा. ; र. र. स. । उ. अ. १८; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे. । उदररो. ; र. म. ; वृ. यो. त. । त. ९८, १०५ ; धन्व. । शोथा. ; र. र. । यकृत्प्ली.)

सूतभस्म वङ्गभस्म भागैकैकं प्रकल्पयेत् ।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुर्गुणम् ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वन्तद्गोलकी कृतम् ।
रुद्ध्वा तु भूधरे पक्त्वा पुटैकेन समुद्धरेत् ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम्ना प्लीहगुल्मोदराञ्जयेत् ।
घृतैर्गुञ्जाद्वयं लिह्यान्निष्कां श्वेतपुनर्नवाम् ॥
गवां मूत्रैः पिबेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥

रस सिन्दूर और वंग भस्म १-१ भाग और शुद्ध गन्धक तथा ताम्र भस्म ४-४ भाग ले कर सबको एक दिन आकके दूधमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखा कर यथा विधि भूधर पुटमें पकावें ।

यह रस प्लीहा, गुल्म और उदर रोगको नष्ट करता है ।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार घीमें मिलाकर चाटना और बादको ३॥ माशे सफेद पुनर्नवाकी जड़ या हल्दीको पीस कर गोमूत्रके साथ पीना चाहिये ।

(६९१७) वङ्गेश्वररसः (५)

(र. चं. । प्रमेहा. ; वैद्या.)

समानभागे शुचिताम्रवङ्गे
तयोः समानं लवणं प्रसिद्धम् ।
शरावयोः स्थाप्य विधाय मुद्रां
ददेत्पुटं तस्य गजाभिधेयम् ॥
ततो भवेद्भस्म विशेषसौम्यं
यथानुपानं ननु सेवनीयम् ।
समस्तमेहान्तकमग्निदायि
कासापहारि श्वसनापहारि ॥
शुक्रस्य दार्ढ्यप्रविधानदक्षं
प्रमत्तनारी सुखदानबीजम् ।
इदं हि तत्वं जटिलस्य सेवां
विधाय वैद्येन मया प्रलब्धम् ॥

ताम्र भस्म और वंग भस्म १-१ भाग तथा सेंधा नमक २ भाग ले कर तीनोंको एकत्र घोट कर शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इसे यथोचित अनुपानके साथ देनेसे समस्त प्रकारके प्रमेह, अग्निमांद्य, कास और श्वासका नाश होता तथा वीर्य और कामशक्तिकी वृद्धि होती है ।

(६९१८) वङ्गेश्वररसः (६)

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे. । प्रमेहा.)

रसेन वङ्गं द्विगुणं प्रगृह्य
विद्राव्य निक्षिप्य समुद्रजञ्च ।
विमर्दयेदम्लजलेन गोलं
कृत्वा सुसंवेष्ट्य पुटेत तीव्रम् ॥
ततः क्षिपेत् तज्जलपात्रमध्ये
नीरं तु सन्त्यज्य गृहाण सूतम् ।
तद्वल्लयुग्मं मधुना समेतं
ददीत पथ्यं मधुरं समुद्गम् ॥
बिल्वोत्थपिण्डं च विपाच्यतक्रे
ददीत हिङ्गुं दधिवर्जयेच्च ।
वङ्गं विना रसभस्मेदं लवणस्या-
त्र विंशतिभागः सर्वरोगोपकारकम् ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध वंग ले कर प्रथम वंगको पिघला कर उसमें पारद मिलावें और फिर उसमें २० वां भाग सामुद्र लवण मिला कर सबको कांजीमें घोट कर टिकिया बना कर सुखा लें और उन्हें शरावसम्पुटमें बन्द करके गज पुटमें पकावें । (जब तक भस्म तैयार न हो इसी प्रकार पुट देते रहें ।)

तदनन्तर उसे पानीमें घोल कर थोड़ी देर रक्खा रहने दें । जब भस्म नीचे बैठ जाय तो ऊपरसे पानीको नितार दें । इसी प्रकार कई बार धो कर सम्पूर्ण नमक निकाल दें और भस्मको सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे ४ रत्ती मात्रानुसार शहदके साथ सेवन करनेसे प्रमेह नष्ट होता है ।

औषध खानेके पश्चात् बेलगिरीके कल्कको तक्रमें पका कर खाना चाहिये ।

इस पर मूंगका यूष और मधुर रसयुक्त आहार देना चाहिये । तथा हींग और दहीसे परहेज़ करना चाहिये ।

(६९१९) वङ्गेश्वररसः (७)

(यो. र. । वाजीकरणा.)

रसं वङ्गं समं कृत्वा चतुर्भागं च गन्धकम् ।

कुमारीरससंयुक्तं दिनमेकं तु मर्दयेत् ॥
मन्दमध्यतीव्राग्नौ वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
अश्वगन्धामृतासारमोचारसशतावरीः ॥
गोक्षुरधात्री कूष्माण्डी वाराहीपत्रमागधी ।
त्रिफलाकर्कटीमुस्तायष्टीमधुसमन्वितम् ॥
सर्वसाम्यसितायुक्तं चूर्णं कर्षार्धसंयुतम् ।
गुञ्जाचतुष्टयां मात्रां गोक्षीरमनुपानतः ॥
प्रातरुत्थाय सेवेत लवणाम्लं च वर्जयेत् ।
बहुमूत्रं मूत्रकृच्छ्रं रक्तमूत्रप्रमेहकम् ॥
मधुमेहं नष्टशुक्रं नष्टलिङ्गं च नाशयेत् ।
सर्वमेहप्रशमनो वङ्गेश्वर इति स्मृतः ॥

(१) शुद्ध पारद और वंग भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक ४ भाग ले कर कज्जली बना कर उसे १ दिन घृतकुमारीके रसमें घोट कर सुखा लें और कपरमिट्टी की हुई आतशी शीशीमें भर कर उसे बालुका यन्त्रमें रख कर क्रमशः मृदु मध्यम और तीव्राग्नि दें । तदनन्तर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

(२) असगन्ध, गिलोयका सत, मोचरस, शतावर, गोखरु, आमला, कुम्हड़ा (पेठा), बाराहीकन्द, तेजपात, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, सेंभल के फल, नागरमोथा और मुलैठीका चूर्ण १-१ भाग तथा मिश्री सबके बराबर ले कर सबको एकत्र मिला कर रक्खें ।

प्रातः काल ४ रत्ती उपरोक्त रस और ७॥ माशे यह चूर्ण गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रके साथ रक्त आना, प्रमेह, मधुमेह, शुक्रह्रास और गुप्त इन्द्रीकी शिथिलता आदि रोगोंका नाश होता है ।

इस पर लवण और अम्ल पदार्थोंसे परहेज़ करना चाहिये ।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

(६९२०) वङ्गेश्वररसः (८)

(यो. र. । प्रमेहा. ; नपुंसका. । त. ७; बृ. नि. र. । प्रमेहा.)

वङ्गं कान्तं च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ।
कुमारीरसतो भाव्यं सप्तवारं भिषग्वरैः ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्रमेहान्विंशतिं जयेत् ।
मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पाण्डुरोगं महाश्मरीम् ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं नागार्जुन विनिर्मितम् ॥

वंग भस्म, कान्त लोह भस्म, अभ्रक भस्म और धतूरेके फूलोंका चूर्ण समान भाग ले कर सबको घृत कुमारीके रसकी सात भावना दे कर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोम रोग, पाण्डु रोग और अश्मरीका नाश होता है ।

वङ्गेश्वररसः (९) (लघु)
(वङ्गभस्मयोगः)

(धन्व. ; र. र. ; भै. र. ; र. चं. । प्रमेहा. ; यो. त. । त. ५१ ; बृ. यो. त. । त. १०३ ; रसे. चि. म. ; र. रा. सु. । प्रमेहा. ; नपुसका. । त. ७)

प्र. सं. ५६७९ " मेहानलो रसः " (मेहारि रसः) (१) देखिये ।

(६९२१) वङ्गेश्वररसः (१०) (बृहद्)

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. ; भै. र. । प्रमेहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; धन्व । प्रमेहा.)

वङ्गभस्मरसं गन्धं रौप्यं कर्पूरमभ्रकम् ।
कर्षं कर्षं मानमेषां सूताङ्घ्रिहेममौक्तिकम् ॥
केशराजरसैर्भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः ।
प्रमेहान्विंशतिश्चैव साध्यासाध्यमथापि वा ॥
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डुं धातुस्थश्च ज्वरं जयेत् ।
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम् ॥
ग्रहणीमामदोषश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
बृहद्वङ्गेश्वरोनाम सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
बहुमूत्रं बहुविधं मूत्रमेहं सुदारुणम् ॥
मूत्रातिसारं कृच्छ्रश्च क्षीणानां पुष्टिवर्द्धनः ।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्यग्वृषायते ॥
बलवर्णकरो रुच्यः शुक्रसञ्जननः परः ।
छागं वा यदि गव्यं पयो वा दधि निर्म्मलम् ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्धा दोषगतिं भिषक् ।
दद्याच्च बाले प्रौढे च सेवनार्थं रसायनम् ॥

वंग भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, चांदी भस्म, कपूर और अभ्रक भस्म १।-१। तोला तथा स्वर्ण भस्म और मोती भस्म पौने चार चार माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको भंगरेके रसमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे साध्य अथवा असाध्य २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुस्थ ज्वर, हलीमक, रक्तपित्त, वात पित्त और कफ जन्य ग्रहणी रोग, आमदोष, अग्निमांद्य, अरुचि, सोमरोग, बहुमूत्र, अनेक प्रकारका मूत्रमेह, मूत्रातिसार और मूत्रकृच्छ्र आदि रोगोंका नाश होता तथा क्षीण पुरुष पुष्ट हो जाते हैं।

यह रस ओज, तेज, कामशक्ति, बल, वर्ण, रुचि और शुक्रकी वृद्धि करता है।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् दोषोंके अनुसार बकरी या गायका दूध अथवा निर्मल दही पीना चाहिये।

यह औषध बालकसे ले कर प्रौढ़ मनुष्यों तकको सेवन कराई जा सकती है।

(६९२२) वङ्गेश्वररसः (११)

(भै. र. । प्रमेहा.)

सूतं गन्धं मृतं लौहं मृतमभ्रं समांशिकम् ।
हेम वङ्गश्च मुक्ता च ताप्यमेवं समं समम् ॥
सर्वेषां चूर्णितं कृत्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ॥
बृहद्वङ्गेश्वरो ह्येष रक्तमूत्रे प्रशस्यते ।
श्वेतमूत्रं बृहन्मूत्रं कृच्छ्रमूत्रं तथैव च ॥
सर्वप्रकारमेहांस्तु नाशयेदविकल्पतः ।
अग्निवृद्धिं वयोवृद्धिं कान्तिवृद्धिं करोति च ॥
क्षयरोगं निहन्त्याशु कासं पञ्चविधं तथा ।
कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
शूलं श्वासं ज्वरं हिक्कां मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
क्रमेण शीलितो हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, बंग भस्म, मोती भस्म और

स्वर्ण माक्षिक भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको घृतकुमारीके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह रस रक्तमूत्रमें अत्यन्त उपयोगी है। इसके सेवनसे श्वेत मूत्र (उदकमेह), मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, क्षय, पांच प्रकारका कास, १८ प्रकारका कुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, शूल, श्वास, ज्वर, हिचकी, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता तथा अग्नि आयु और कान्तिकी वृद्धि होती है।

वङ्गेश्वररसः (१२)

(र. चं. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । प्रमेहा.)

प्र. सं. ६०६० "रस चण्डांशु" देखिये।

(६९२३) वङ्गेश्वरादिवटी

(वृ. यो. त. । त. १४७)

वङ्गं मृतं मृतं लोहं मृगनाभिश्च कुङ्कुमम्।
अभ्रकं पारदश्चैव हिङ्गुलुर्गन्धकस्तथा॥
मस्तकी नागफेनश्च कवाबाजातिपत्रकम्।
जातीफलं च त्वक्चारं शुण्ठीमर्कटिबीजकम्॥
बला तुगा च कर्पूरो लवङ्गं पिप्पली तथा।
आकल्लकरभश्चैव नागो भुजगवल्लरी॥
नागकेसरमुस्ताग्नि चन्दनं चव्यकं शठी।
मरिचं पत्रकं यष्टी शाल्मलीत्वक् च कट्फलम्॥
वर्षाभूर्मुसली चैव क्षीरकन्दः शतावरी।
कृष्णाश्वगन्धा कनकं मांसी मोचरसो बला॥
भृङ्गराजश्च गोकण्टः कङ्कोलः सयवानिकः।
समुद्रशोषबीजानि त्रिपञ्चाशद्भिरौषधैः॥
योजयेत्समभागैश्च सूक्ष्मचूर्णीकृतैर्भिषक्।
अष्टांशां विजयां शुद्धां सितां सर्वसमां क्षिपेत्॥
गुटिका मधुसर्पिर्भ्यां कर्षमात्रा विधीयते।
प्रभाते वाऽथ मध्याह्ने संध्यायां वा विशेषतः॥
एकां खादेदनु पिबेत्पयः शर्करया युतम्।
बलवृद्धिमवाप्नोति रेतोवृद्धिं विशेषतः॥
रेतःस्तम्भं वयःस्तम्भं वलीपलितनाशनम्।
क्षैण्यज्वरातिसारांश्च ग्रहणीं नाशयेदपि॥
नारीवश्यकरं चैव नारीद्रवकरं तथा।
कान्तिदं मतिभादं च बुद्धिमेधाविवर्धनम्॥
संवत्सरप्रयोगेण सर्वव्याधिविनाशनम्॥

वंग भस्म, लोह भस्म, कस्तूरी, केसर, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गन्धक, रूमी मस्तगी, अफीम, कबाबचीनी, जावित्री, जायफल, दारचीनी, चिरौंजी, सोंठ, कौंचके बीज, खरैटीके बीज (बीजबन्द), बंसलोचन, कपूर, लौंग, पीपल, अकरकरा, सीसा भस्म, पान, नागकेसर, नागरमोथा, चीता, चन्दन, चव्य, कचूर, काली मिर्च, तेजपात, मुलैठी, सेंभलकी छाल, कायफल, पुनर्नवाकी जड़, मूसली, क्षीरविदारी, शतावर, पीपल, असगन्ध, धतूरेके बीज, जटामांसी, मोचरस, खरैटीकी जड़, भंगरा, गोखरु, कंकोल, अजवायन और समन्दर सोखके बीज; इनका चूर्ण १-१ भाग, शुद्ध भांगका चूर्ण सबका अष्टमांश और खांड सबके बराबर ले कर सबको शहद और घीमें घोट कर १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें।

इन्हें सुबह, दोपहर या शामको मिश्री मिले हुए दूधके साथ सेवन करना चाहिये।

इनके सेवनसे बल, वीर्यकी वृद्धि होती है; वीर्यस्तम्भन होता और आयु स्थिर रहती है तथा

बलि, पलित, क्षीणता, ज्वर, अतिसार और प्रहणीका नाश होता है ।

इसके सेवनसे स्त्रियां वशीभूत हो जाती हैं और कान्ति प्रतिभा बुद्धि तथा मेधाकी वृद्धि होती है ।

यह स्त्री द्रावक भी है यदि इसे एक वर्ष तक सेवन किया जाय तो शरीर समस्त रोगोंसे मुक्त हो जाता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—२-३ माशे ।)

(६९२४) वचादिवटी

(वृ. नि. र. । शूला.)

वचाविश्वाजीरोषणगरलबाल्हीक दहनत्वचा
कार्या वटयश्चणतुलिता मार्कवरसैः ।
यथा भानोर्भासस्तिमिरनिकरं कामिनि
तथा हरन्त्येताः शूलान्यनिलमनलं ग्लानि-
मपि च ॥

बच, सोंठ, जीरा, काली मिर्च, शुद्ध बछनाग, हींग, चीता और दालचीनी; इनके समान भाग चूर्णको एकत्र मिला कर भंगरेके रसमें घोट कर चनेके बराबर गोलिया बना लें ।

इनके सेवनसे शूल, वायु, और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

(६९२५) वज्रकगुटिका (१)

(ग. नि. । गुटिका. ४)

शैलस्य धातो रजसां शिलाभ्यः
सूर्यप्रतापाज्जतु संनिकाशम् ।
कृष्णं स्रवेन्मूत्रसमानगन्धि
शिलाजतु प्राज्ञतमास्तमाहुः ॥
रूप्यादिधातोर्गलितं द्दषद्भ्य-
स्तेभ्यः प्रशस्तं प्रवदन्ति पूर्वम् ।
विशोधयेत्तत्सुदिने सुपूते
द्विपश्चमूली सलिले कटाहे ॥
लौहे समालोडय दिवाकरस्य
संतापनं रश्मिभिरेव कुर्यात् ।
प्रणीततापात्सरवदूगृहीत्वा
पुनः पुनस्तप्तमथोद्धरेच्च ॥
तावत्प्रदेयं सलिलं क्रमेण
गाढस्य संदर्शनमेव यावत् ।
तावच्छिलाजत्वभिसन्निविष्टं
समुद्धृतं यावदशेषतश्च ॥
अष्टौ पलानस्य विशोधितस्य
ततः क्रमाद्भावयितुं यतेत ।
द्विपश्चमूल्यौ चिरबिल्वमुस्ता-
पटोलनिम्बत्रिफलाः पलांशाः ॥
सपिप्पलीरोहिणिजीरकं च
द्रोणेऽम्भसस्तान्द्विपलान्यथोक्तान् ।
प्रकाथ्य चैवाष्टमभागशेषं
तस्मात्सृजेद्भावनमल्पमल्पम् ॥
पात्रेऽथ लौहे परिशोषयेत्तत्
पुनः पुनर्भावितमेव यावत् ।
पलद्वयं मागधिकर्कटाख्ये
चूर्णीकृते लोहरजःसमांशे ॥
पलं बृहत्याः सनिदिग्धिकायाः
सितोपलामष्टपलोन्मितां तु ।

पलत्रयं वेणुजरोचनाया
मधुत्रयं तद्विनिवेश्य कृत्वा ॥
त्रिषष्टिसंख्यान्वटकान्विधिज्ञः
खादेत्सुरावारिपयोनुपानात् ।
भुक्तैस्तथाऽभुक्तवति प्रदेया
रोगार्दिते निष्परिहारिणी च ॥
कुष्ठोदरश्वासगलामयांश्च
भगन्दरान्मूत्रविबन्धगुल्मान् ।
यक्ष्माणमर्शांसि सकासहिक्कां
प्लीहां च हन्याद्विषमज्वरांश्च ॥
वह्नेश्च दीप्तिं परमां करोति
वलींश्च हन्यात्पलितानि चैव ।
सेव्या त्वियं वज्रकनामधेया
मुनिप्रदिष्टा वटिका प्रधाना ॥
वर्ज्याः कुलत्थाश्च सकाकमाच्यः
कपोतमांसं च सदा प्रयोगे ॥

सूर्यके प्रखर तापसे पिघलकर पर्वतोंसे लाखके समान जो पदार्थ निकलता है उसे शिलाजीत कहते हैं। इसका रंग काला होता है और इसमें गोमूत्रके समान गन्ध आती है यह स्वर्ण, रौप्यादि धातुओंका योग होनेके कारण चार प्रकारका होता है और उनमेंसे लोह संयोग वाला श्रेष्ठ माना जाता है, जिसका रंग बिल्कुल काला होता है।

लोहेकी कढ़ाईमें दशमूलका क्वाथ भर कर उसमें उक्त लोह वाले शिलाजीतको अच्छी तरह मिला देना चाहिये तथा उसे तेज़ धूपमें इस विधिसे रख देना चाहिये कि जिससे उसमें धूल आदि न गिरे तदनन्तर सूर्यके तापसे उस पर जो मलाईसी जमे उसको एकत्रित करते रहें जब पानी गाढ़ा हो जाय तो और क्वाथ डाल दें एवं यह क्रिया उस समय तक करते रहें कि जब तल मलाई जमनी बिल्कुल बन्द न हो जाय।

अब दशमूलकी प्रत्येक ओषधि, करञ्जुवेकी जड़, नागरमोथा, पटोल, नीमकी छाल, हर्र, बहेड़ा और आमला ५–५ तोले तथा पीपल, कुटकी और जीरा १०–१० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ४ सेर शेष रहने पर छान लें तथा उसे बोतलोंमें भर कर कार्क लगा कर रख दें तदनन्तर एक लोहखरलमें ४० तोले उपरोक्त शिलाजीत डाल कर उसमें थोड़ा थोड़ा यह क्वाथ डालते हुवे घोटें और जब सम्पूर्ण क्वाथ शुष्क हो जाय तो उसमें १०–१० तोले पीपल और काकड़ासिंगीका चूर्ण, १० तोले लोह भस्म, ५–५ तोले कटेली और बड़ी कटेलीका चूर्ण, ४० तोले मिश्री और १५ तोले बंसलोचनका चूर्ण तथा आवश्यकतानुसार घी, शहद और मिश्री मिला कर सबकी ६३ गोलियां बना लें। (घी और शहद इतना मिलाना चाहिये कि जिससे औषध गोलियां बनने लायक हो जाय)

इन्हें मद्य, पानी या दूधके साथ, २ भोजनोंके मध्यमें सेवन करनेसे कुष्ठ, उदर रोग, श्वास, गलरोग, भगन्दर, मूत्रविबन्ध, गुल्म, राजयक्ष्मा, अर्श, कास, हिक्का, प्लीहा, विषमज्वर और वली पलितादिका नाश तथा अग्निकी वृद्धि होती है।

इसके सेवन कालमें कुलथी, मकोय और कपोत मांससे परहेज करना चाहिये।

(व्यवहारिक मात्रा–३ माशे)

(६९२६) वज्रकगुटिका (२)

(ग. नि. । गुटिका. ४ ; र. का. धे. । पाण्डु.)

रोहिणी चिरबिल्वं च कुटजं च फलत्रिकम् ।
मुस्तकं पिप्पलीमूलं यष्ट्याह्वं निम्बनागरम् ॥
पक्त्वैषां कषायेण भावयेच्च शिलाजतु ।
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥
वांश्याः कर्कटशृङ्ग्याश्च मागध्याश्च पलं पलम् ।
धात्रीफलपलार्धं च व्याघ्रीमूलत्वचं तथा ॥
पत्रत्वगेला गन्धार्थे दत्त्वा चूर्णानि कारयेत् ।
तं विमर्द्य यथान्यायं दद्यान्मधुपलत्रयम् ॥
वर्तयेद्वटकानेतानुदुम्बरफलोपमान् ।
तत्रैव भक्षयेत्कल्के सानुपानं यथाबलम् ॥
विडङ्गरसयूषैश्च सुरारिष्टासवादिभिः ।
क्षीरैर्वा दाडिमाम्लैर्वा पथ्यभोजी पिबेन्नरः ॥
स जयेत्पाण्डुरोगास्रदुष्टमेहगलग्रहान् ।
यक्ष्मकासांश्च वातादीन् श्वासशोषोदरामयान् ॥
रोगानीकप्रणाशार्थं सृष्टा भगवता पुरा ।
वज्रकेति समाख्याता वटिकेऽयं महागुणा ॥
नैव दद्यात्कृतघ्नाय नास्तिकायोद्धताय च ।
इष्टाय संप्रयोक्तव्या ब्राह्मणाय विशेषतः ॥

४० तोले शुद्ध शिलाजीतको कुटकी, करञ्जुवा, कुड़ेकी छाल, त्रिफला, नागरमोथा, पीपलामूल, मुलैठी, नीमकी छाल और सोंठके क्काथकी भावना दे कर उसमें ४० तोले सफेद खांड; ५—५ तोले बंसलोचन, काकड़ासिंगी और पीपलका चूर्ण एवं २॥—२॥ तोले आमले और कटेलीकी जड़की छालका चूर्ण तथा सुगन्ध योग्य तेजपात, दालचीनी और इलायचीका चूर्ण मिला कर १५ तोले शहदमें घोट कर गूलरके फलके समान वटक बना लें ।

इसे बायबिड़ंगके क्काथ, मूंगके यूष, मद्य, अरिष्ट, आसव, दूध और अनारके रस आदिके साथ सेवन करनेसे पाण्डु, रक्तविकार, प्रमेह, गलग्रह, राजयक्ष्मा, खांसी, वात विकार, श्वास, शोष और उदर विकार इत्यादि रोग नष्ट होते हैं ।

(६९२७) वज्रकपाटरसः (१)

(शा. सं. । खं. २ अ. १२ ; र. प्र. सु. । अ. ८ ; वृ. नि. र. । संग्रहणी. ; र. र. स. । अ. १६; र. रा. सु. । संग्रहण्य. ; र. मं.)

मृतं सूताभ्रकं गन्धं यवक्षारं सटङ्कणम् ।
अग्निमन्थं वचां कुर्यात्[1] सूततुल्यानिमान्सुधीः ॥
ततो जयन्ती जम्बीरभृङ्गद्रावैर्विमर्दयेत् ।
त्रिवासरं ततो गोलं कृत्वा संशोष्य धारयेत् ॥
लोहपात्रे शरावं च दत्त्वोपरि विमुद्रयेत् ।
अधो वह्निं शनैः कुर्याद्यामार्द्धं[2] तत उद्धरेत् ॥
सर्वतुल्यां प्रतिविषां दद्यान्मोचरसं[3] तथा ।
***कपित्थविजयाद्रावैर्भावयेत्सप्तधा भिषक् ॥**

* र. रा. सु. तथा र. र. स. में केवल भांगकी सात भावना लिखी हैं । कैथ, धातकी आदिकी भावनाका अभाव है ।

र. प्र. सुधाकरमें

(१) १ भाग विष अधिक है ।

(२) १॥ पहरकी अग्नि देनेके लिये लिखा है ।

(३) अग्नि देनेके पश्चात् रसमें उसके बराबर केवल अतीस डालनेको लिखा है; मोचरसको भावना द्रव्योंमें ग्रहण किया है ।

धातकीन्द्रयवामुस्तालोध्रं बिल्वं गुडूचिका ।
एतद्रसैर्भावयित्वा वेलैकैकं च शोषयेत् ॥
रसं वज्रकपाटाख्यं शाणैकं मधुना लिहेत् ।
वह्निं शुण्ठीं विडं बिल्वं लवणं चूर्णयेत्समम् ॥
पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वजां ग्रहणीं जयेत् ॥

पारद भस्म (अभावमें रससिन्दूर), अभ्रक भस्म, शुद्ध गन्धक, जवाखार, सुहागा, अरणी और वच १-१ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके ३-३ दिन जयन्ती, जम्बीरी नीबू और भांगके रसमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखा कर लोह पात्रमें रख कर उसके मुखको शरावसे ढक दें और सन्धिको गुड़ चूने आदिसे मज़बूत बन्द करके आधा पहर तक मन्दाग्नि पर पकावें । तत्पश्चात् उसके स्वांग शीतल होने पर निकाल कर उसमें उसके बराबर अतीस और उतनाही मोचरसका चूर्ण मिला कर, कैथ और भांगके रसकी सात सात भावना दें तथा धायके फूल, इन्द्रजौ, नागरमोथा, लोध, बेल और गिलोयके रसकी १-१ भावना दे कर सुखा कर रक्खें ।

मात्रा—३॥ माशे ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—१ माशा ।)

इसे खानेके पश्चात् चीता, सोंठ, बायबिडंग, बेलगिरी और सेंधा नमकका समान भाग मिश्रित चूर्ण (२ माशे) उष्ण जलके साथ पीना चाहिये।

यह सर्व दोषज ग्रहणीको नष्ट करता है ।

---

(४) भावना द्रव्योंमें मोथा, लोध और गिलोयकी भावनाका अभाव है ।

(६९२८) वज्रकपाटरसः (२)

(भै. र. ; र. चं. ; रसे. सा. सं. । ग्रहण्य.)

पारदं गन्धकं चैव अहिफेनं समोचकम् ।
खल्लयेत्तु शिलाखण्डे क्रमशो वक्ष्यमाणकैः ॥
त्रिकटुं त्रैफलं चैव सममेकत्र कारयेत् ।
भृङ्गभृङ्गद्रवैश्चैतद्भावयेच्च पुनः पुनः ॥
रक्तित्रयं ततश्चास्य मधुना सह भक्षयेत् ।
असाध्यां ग्रहणीं हन्ति रसो वज्रकपाटकः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अफीम, मोचरस, त्रिकुटा और त्रिफलाका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको भंगरे और भांगके रसकी अनेक भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे असाध्य ग्रहणी रोग भी नष्ट हो जाता है ।

(६९२९) वज्रघनरसः

(र. का. धे. । उदरा.)

कण्टकारीरसैः सप्तदिनं भाव्यं तु सोमलम् ।
एवं वारत्रयं काचकूप्यां सत्त्वं च पातयेत् ॥
एतत्सत्वे पादसूतं सगन्धं कज्जलीकृतम् ।
कण्टकारीमूषिकायां शरावे पाचयेत्पुनः ॥
यामाष्टकं वज्रघनो रसः सर्वोदरार्तिजित् ॥

सोमल (संखिये) को कटेलीके रसमें सात दिन खरल करके कपड़मिट्टीकी हुई आतशी शीशीमें डाल कर (उसका मुख बन्द करके) बालुका यन्त्रमें (मन्दाग्नि पर) पकावें । जब समझें कि सोमल उड़ कर ऊपर आ गया होगा तब अग्नि

शान्त कर दें और सोमलके फूलको निकाल कर पुनः सात दिन कटेलीके रसमें घोट कर इसी प्रकार उड़ावें। इस विधिसे ३ बार उड़ावें।

तदनन्तर उसमें उसके चतुर्थांश पारद और गंधककी कज्जली मिला कर घोटें तथा कटेलीके कल्ककी मूषा बना कर उसमें रख कर उसे शराव सम्पुटमें बन्द कर दें और बालुकायन्त्रमें रख कर ८ पहर (मन्दाग्नि पर) पकावें।

यह रस समस्त उदर रोगोंको नष्ट करता है।

(**मात्रा**—½ चावलसे १ चावल भर। इसे बहुत सावधानी पूर्वक योग्य चिकित्सककी देखरेख-में सेवन करना चाहिये।)

(६९३०) वज्रधररसः

(र. र. स. । उ. अ. १६)

रसगन्धकताम्राभ्रं क्षारांस्त्रीन्वरुणा त्रुषम् ।
अपामार्गस्य च क्षारं लवणं द्वि द्वि माषकम् ॥
चाङ्गेर्या हस्तिशुण्ड्याश्च रसे पिष्टं पचेत्पुटे ।
भक्षयित्वा ततो गुञ्जां ग्रहण्यां काञ्जिकं पिबेत् ॥
पक्तिशूले च कासे च मन्दाग्नावार्द्रकद्रवम् ।
अम्लपित्ते च धारोष्णं क्षीरं वज्रधरो ह्ययम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, बरनेकी छाल, बासा (अडूसा) की जड़की छाल, अपामार्ग (चिरचिटे) का क्षार और सेंधा नमक २–२ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको चांगेरी और हस्तिशुण्डी (हाथी सुंडी) के रसकी १–१ भावना दे कर गोला बना कर सुखा लें और उसे यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे ग्रहणीमें काञ्जीके साथ; पक्तिशूल, कास और मन्दाग्निमें अदरकके रसके साथ तथा अम्ल-पित्तमें धारोष्ण दूधके साथ सेवन करना चाहिये।

(६९३१) वज्रधाररसः

(र. र. स. । उ. अ २० ; र. का. धे. । कुष्ठा.)

वज्रसूताभ्रहेम्नां च भस्म योज्यं समं समम् ।
सर्वांशं तालकं तुल्यं शिग्रुधत्तूरजद्रवैः ॥
मर्द्यः स्नुह्यर्कजैः क्षीरैर्दिनैकं चाथ भावयेत् ।
सप्ताहं बाकुचितैलैस्तन्माषैकं तु भक्षयेत् ॥
वज्रधारो रसः ख्यातः सर्वकुष्ठनिकृन्तनः ॥

हीरा भस्म, पारद भस्म (रससिन्दूर), अभ्रक भस्म और स्वर्ण भस्म १–१ भाग तथा शुद्ध हरताल (या हरताल भस्म) सबके बराबर ले कर सबको १–१ दिन सहंजने और धतूरेके रस तथा स्नुही (सेंड-थूहर) और आकके दूधमें घोटनेके पश्चात् सात दिन बाबचीके तेलमें खरल करें।

मात्रा—१ माशा।

यह समस्त प्रकारके कुष्ठोंको नष्ट करता है।

(मात्राका निर्णय रोगीके बलाबलका विचार करके करना चाहिये।)

(६९३२) वज्रपञ्जररसः

(र. र. । रसा. खं. उप. २)

वज्रपारदयोर्भस्म समभागं प्रकल्पयेत् ।
सूतपादं मृतं स्वर्णं सर्वं मर्द्यं दिनावधि ॥

हंसपाद्या द्रवैरेव तद्गोलं चान्धितं पुटेत् ।
अर्कक्षीरैः पुनर्मर्द्य तद्वद्गजपुटे पचेत् ॥
भक्षयेत्सर्षपवृद्धं यावन्माषं विवर्धयेत् ।
शरण्यः साधकानां तु रसोऽयं वज्रपञ्जरः ॥
चित्रकार्द्रकसिन्धूत्थमृततीक्ष्णसुवर्चलम् ।
समं सर्वं सदा चानु भक्ष्यं स्यात्क्रामणे हितम्॥
मासषट्कप्रयोगेण जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकायो महाबलः॥

हीरा भस्म और पारद भस्म ४-४ भाग तथा स्वर्ण भस्म १ भाग ले कर सबको १ दिन हंसपादीके रसमें घोट कर गोला बनावें और उसे सुखा कर शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें। तदनन्तर उसे १ दिन आकके दूधमें घोट कर, गोला बना कर सुखावें और शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इसे १ सर्षप भरकी मात्रासे सेवन करना प्रारम्भ करें और प्रतिदिन (१-१ सर्षप भर) बढ़ा कर १ माशेकी मात्रा तक पहुंच जाएं।

चीता, अदरक, सेंधानमक, और सञ्चल नमक; इनका चूर्ण तथा लोह भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल कर लें। उपरोक्त रस खानेके पश्चात् (आधा माशा) यह चूर्ण खाना चाहिये ।

इसे ६ मास तक सेवन करनेसे बलिपलितका नाश हो कर बल और आयुकी वृद्धि होती है ।

वज्रपाणिरसः (महा)

(र. का. धे. । कुष्ठा.; वृ. नि. र. । त्वग्दो.)

प्र. सं. ५५७१ महा वज्रपाणि रसः देखिये।

(६९३३) वज्रमारणम्

(वृ. यो. त. । त. ४३)

त्रिवर्षारूढकार्पासमूलमादाय पेषयेत् ।
त्रिवर्षनागवल्ल्या वा निजद्रावैः प्रपेषयेत् ॥
तद्गोलके क्षिपेद्वज्रं रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
एवं सप्तपुटैर्नूनं कुलिशं मृतिमृच्छति ॥

तीन वर्षके पुराने कपासके वृक्षकी जड़ या इतनीही पुरानी पानकी बेलकी जड़को अपनेही स्वरसमें पीस कर छोटीसी मूषा बनावें और उसमें हीरेको बन्द करके गजपुटमें पकावें ।

इसी प्रकार सात पुट देनेसे हीरा अवश्य मर जाता है ।

(६९३४) वज्रशोधनम् (१)

(वृ. यो. त. । त. ४३)

व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं मृदा लिप्तं पुटे पचेत् ।
अहोरात्रात्समुद्धृत्य हयमूत्रेण सेचयेत् ॥
वज्रीक्षीरेण वा सिञ्च्यात्कुलिशं विमलं भवेत् ॥

हीरेको कटेलीकी जड़के अन्दर रख कर उस पर मिट्टीका (२-३ अंगुल मोटा) लेप कर दें और सुखा कर पुट पाक करें । १ दिन रात तक पाक करनेके पश्चात् उसे घोड़ेके मूत्रमें या थूहर (सेंड) के दूधमें बुझावें । इस विधिसे हीरा शुद्ध हो जाता है ।

(६९३५) वज्रशोधनम् (२)

(वृ. यो. त. । त. ४३)

व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं दोलायन्त्रेण पाचयेत् ।
सप्ताहं कोद्रवक्वाथे कुलिशं विमलं भवेत् ॥

हीरेको कटेलीकी जड़के अन्दर रखकर दोलायन्त्र विधिसे १ सप्ताह तक कोदों (कोद्रव) के क्वाथमें पकानेसे वह शुद्ध हो जाता है।

वज्रवटकमण्डूरम्

(भै. र. । पाण्डु; हा. सं. । स्था. ३ अ. ८)

प्र. सं. ५४८५ मण्डूर वज्रवटकः देखिये।

(६९३६) वज्रवटी

(भै. र. । कुष्ठा. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. ।)

शुद्धसूताग्निमरिचं सूताद् द्विगुणगन्धकम् ।
काकोदुम्बरिकाक्षीरैर्दिनं मर्द्य प्रयत्नतः ॥
वराव्योषकषायेण वटीश्चास्य समाचरेत् ।
लिह्याद्वज्रवटी ह्येषा पामारोगविनाशिनी ॥

शुद्ध पारद, चीतेका चूर्ण और काली मिर्चका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गंधक २ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियां मिला कर सबको काकोदुम्बरिका (कठूमर) के दूध तथा त्रिफले और त्रिकुटे के क्वाथमें १-१ दिन घोट कर (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे पामा रोग नष्ट होता है।

(६९३७) वज्रशेखररसः

(र. र. स. । उ. अ. २०)

विष्णुक्रान्ता घनरसः सर्पाक्षी शंखपुष्पिका ।
गोजिह्वा क्षीरिणी नीली ब्रह्मवृक्षो रुदन्तिका ॥
निचुलः काकमाची च रसैरेषां विमर्दितम् ।
पक्वं तुषकरीषाग्नौ रसद्विगुणगन्धकम् ॥
पर्पटीरसवत्पक्वं खसत्वेनारुणेन च ।
पृथग्गंधकतुल्येन ताप्येन च रसांघ्रिणा ॥
कृतावापं वरीमुण्डीहस्तिकर्ण्यमृतालिकाः ।
मूर्वाविदार्योश्च रसैर्मर्दितं घृतमिश्रितम् ॥
कषाये दशमूलस्य विपक्वं लेहतां गतम् ।
रसतुल्यत्रिजाताग्निव्योषयष्ट्याह्वसंयुतम् ॥
स्निग्धभाण्डगतं कुष्ठी क्षयी च कृतशोधनः ।
मञ्जिष्ठादिकषायस्य कृत्वा मासं निषेवणम् ॥
माषप्रमाण सेवेत रसोऽयं वज्रशेखरः ॥

१ भाग शुद्ध पारद और २ भाग शुद्ध गंधककी कज्जली बना कर उसे कोयल, नागरमोथा, सर्पाक्षी, शंखाहोली, गोजिह्वा (गोजिया), दूधी, नील, पलाश, रुदन्ती, जलवेत और मकोयके रसकी १-१ भावना दे कर घृत लिप्त लोह पात्रमें तुषाग्नि पर पिघलावें—जिस प्रकार पर्पटी बनानेके लिये पिघलाते हैं—और फिर उसमें २ भाग अभ्रक सत्वकी भस्म, २ भाग अतीस और ½ भाग स्वर्णमाक्षिक भस्म मिला कर शतावर, मुण्डी, हस्तिकर्णी, गिलोय, पाटला, मूर्वा और विदारीकन्दके रसकी १-१ भावना दे कर सुखा कर उसमें थोड़ासा घी मिला कर चिकना कर लें और उससे (आठ गुना) दशमूलका क्वाथ मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें १-१ भाग दालचीनी, तेजपात, इलायची, चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल और मुलैठीका चूर्ण मिला कर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

शरीर संशुद्धिके पश्चात् इसे सेवन करनेसे कुष्ठ और क्षयका नाश होता है।

इसे मंजिष्ठादि क्वाथके साथ १ मास तक सेवन करना चाहिये।

(६९३८) वज्रेश्वररसः (१)

(र. र. । रसा. खं. । उप. २)

मृत सूताद् द्वादशांशं मृतं वज्रं कल्पयेत् ।
द्वाभ्यां तुल्यं मृतं कान्तं कान्ततुल्यं मृताभ्रकम् ॥
तत्सर्वं भृङ्गजैद्रावैर्मर्दितं भावयेत्त्र्यहम् ।
त्र्यहं गोक्षुरकद्रावैः क्षौद्रैर्माषं ततो लिहेत् ॥
रसो वज्रेश्वरो नाम वज्रकायकरो नृणाम् ।
चतुर्मासैर्जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं किल ॥
भृङ्गराजस्य पञ्चाङ्गं चूर्णयेत्त्रिफलासमम् ।
पलैकं मधुना लेह्यं क्रामकं परमं रसे ॥

पारद भस्म १२ भाग और हीरा भस्म १ भाग तथा कान्त लोह भस्म और अभ्रक भस्म १३-१३ भाग ले कर सबको ३-३ दिन भंगरे और गोखरुके क्काथमें खरल करके रक्खें ।

मात्रा--१ माशा ।

(**व्यवहारिक मात्रा**--१ से २ रत्ती तक)

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे शरीर वज्रके समान दृढ़ हो जाता है ।

इसे चार मास तक सेवन करनेसे जराका नाश हो कर आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है ।

अनुपान--भंगरेका पंचांग और त्रिफला समान भाग ले कर चूर्ण करके रक्खें ।

इसमेंसे ५ तोले चूर्ण शहदमें मिला कर उपरोक्त रस खानेके पश्चात् सेवन करना चाहिये ।

(**व्यवहारिक मात्रा**--३-४ माशे ।)

(६९३९) वज्रेश्वररसः (२)
(वज्ररसः)

(र. च. ; र. रा. सु. ; र. र. । रा. य. ; र. र. स. । अ. १४;)

कर्षं खर्परसत्त्वस्य षण्माषे हेम्नि विद्रुते ।
षण्निष्कसूतं गन्धाश्मन्यष्टनिष्के प्रवेशितम् ॥
प्रवालमुक्ताफलयोश्चूर्णं हेमसमांशयोः ।
क्रमाद्द्वित्रिचतुर्निष्कं मृतायःसीसभास्करम् ॥
शार्ङ्गेर्यम्लेन यामांस्त्रीन्मर्दितं चूर्णितं पृथक् ।
द्वौ निष्कौ नीलकटुकीव्योमायस्कान्ततालकात् ।
अङ्कोलकङ्गुणीवीजतुत्थेभ्यश्चतुरः पृथक् ॥
अष्टौ च टङ्कणक्षाराद्वराटानां च विंशतिः ।
महाजम्बीरनीरस्य प्रस्थद्वन्द्वेन पेषयेत् ॥
एतदिष्टशरावस्थं शुद्धं खार्यास्तुषस्य च ।
करीषभारे च पचेदथ माषद्वयं ततः ॥
एतावद्गन्धकात्पादं मरिचाद्भावितादपि ।
मधुनाऽऽलोडितं लिह्यात्ताम्बूलीपत्रलेपितम् ॥
गतेऽस्य घटिकामात्रे प्रतियामं च पथ्यभुक् ।
नो चेदुद्दीपितो वन्हिः क्षणाद्धातून्पचत्यतः ॥
दिनमेकं निषेव्यैनं त्याज्यान्यामण्डलं त्यजेत् ।
ततः परं यथेष्टाशी द्वादशाब्दं सुखी भवेत् ॥
एकमेकं दिनं भुक्त्वा वर्षे वर्षे महारसम् ।
वर्षादौ च त्यजेत्त्याज्यं द्वादशाब्दाज्जरां जयेत् ॥
एष वज्ररसो नाम क्षयपर्वतभेदनः ॥

(१) ७॥ माशे शुद्ध स्वर्णको गला कर उसमें १। तोला खपरियाका सत्व (जस्त भस्म) मिलावें ।

(२) ३० माशे पारद और ४० माशे गन्धक की कज्जली बनावें ।

(३) उक्त दोनों योगोंको एकत्र मिला कर उसमें ७॥-७॥ माशे प्रवाल और मोतीका चूर्ण मिला दें।

(४) १० माशे लोह भस्म, १५ माशे शीशा भस्म और २० माशे ताम्र भस्मको पृथक् पृथक् ३-३ दिन चाङ्गरी (चूके) के रसमें खरल करें और फिर सबको उपरोक्त योगमें मिला दें। तदनन्तर उसमें १०-१० माशे नीलकी जड़, कुटकी अभ्रक भस्म, लोह भस्म, कान्त लोह भस्म, शुद्ध हरताल और २०-२० माशे अंकोलके बीज, कंगनीके बीज तथा शुद्ध तूतिया; ४० माशे सुहागा तथा सौ माशे कौड़ी भस्म मिला कर सबको २ सेर बड़े जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करें।

जब रस सूख जाए तो सबका गोला बना कर सुखा लें और उसे यथाविधि शराव-सम्पुटमें बन्द करके ६४ सेर तुषोंकी अग्निमें पुट दें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल हो जाने पर पुनः २ सेर जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर उपरोक्त विधिसे शरावसम्पुटमें बन्द करें और ६४ सेर उपलोंमें पुट लगा दें। तदनन्तर स्वांगशीतल होने पर खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ माशे। इसमें आधा आधा माशा शुद्ध गन्धक और काली मिर्चका चूर्ण मिला कर उसे शहदमें मिलावें और फिर ताम्बूल पत्र (पान) पर इसका लेप करके खावें।

यह औषध खानेके घड़ी भर पश्चात् ही क्षुधा प्रतीत होगी तब पथ्य भोजन करें और फिर १-१ पहर पश्चात् पथ्याहार (दूधादि) लेते रहें। यदि इस प्रकार भोजन नहीं किया जायगा तो प्रज्वलित जठराग्नि धातुओंको भस्म कर डालेगी।

इसे केवल १ दिन खा कर ४० दिन तक पथ्य पालन करना चाहिये। इसके पश्चात् इच्छानुसार आहार कर सकते हैं।

इस प्रकार इस औषधको केवल १ बार सेवन करनेसे ही मनुष्य १२ वर्ष तक स्वस्थ रहता है।

यदि १२ वर्ष तक, प्रति वर्ष एक दिन यह औषध सेवन करके उपरोक्त विधिसे पथ्य पालन किया जाय तो वृद्धावस्थाका भय नहीं रहता।

यह रस क्षय रोगको अत्यन्त शीघ्र नष्ट कर देता है।

(६९४०) वटशुङ्गादियोगः

(व. से. । स्त्रीरोगा.)

न्यग्रोधशुङ्गासनकं प्रवालचूर्णञ्च सवर्णवत्साया:।
गोक्षीरं परिपीतं पुत्रं प्रकरोति पुष्यर्क्षे ॥

बड़के अंकुर, असना वृक्षकी छाल, और प्रवालका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें।

इसे अपनेही समान रंगवाले बछड़े वाली गायके दूधके साथ पुष्य नक्षत्रमें सेवन करनेसे पुत्र प्राप्ति होती है।

(६९४१) वटेश्वररसः

(र. र. रसा. खं. । उप. २)

वटक्षीरैस्त्र्यहं मर्द्यं गन्धं शुद्धरसं समम्।
वटकाष्ठाग्निना पच्यान्मृत्पात्रे यामपञ्चकम् ॥

क्षिपन् क्षिपन् वटक्षीरं तत्काष्ठेनैव चालयेत् ।
समुद्धृत्य त्र्यहं भाव्यं देवदालीदलद्रवैः ॥
उष्णकाले तु गुञ्जैकं ताम्बूलपत्रसंयुतम् ।
चन्द्रवृद्धया सदा भक्ष्यं यावत् षोडशगुञ्जकम् ॥
चूर्णमुत्तरवारुण्या बाकुच्या देवदालिजम् ।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षं क्रामकं ह्यनुपानकम् ॥
वर्षमात्राज्जरां हन्ति जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
रसो वटेश्वरो नाम वज्रकायकरो नृणाम् ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धककी कज्जली करके उसे ३ दिन बड़के दूधमें खरल करें और फिर मिट्टीकी कढ़ाईमें डाल कर बड़की लकड़ियोंमें ५ पहर तक पकावें । पकाते समय उसमें थोड़ा थोड़ा बड़का दूध डालते रहना और बड़के गीले (ताज़े) डंडेसे चलाते रहना चाहिये ।

तदनन्तर स्वांग शीतल हो जाने पर उसे ३ दिन बिंडालके पत्तोंके रसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

इसे उष्ण ऋतुमें १ रत्ती मात्रानुसार पानमें रख कर खाना प्रारम्भ करें और नित्य प्रति १-१ रत्ती बढ़ाते रहें । जब १६ रत्ती पर पहुंच जाएं तो फिर प्रतिदिन १-१ रत्ती घटाना आरम्भ करें। इसी प्रकार १ वर्ष तक सेवन करें ।

औषध खानेके पश्चात् इन्द्रायणकी जड़, बाबची और देवदालीका समान भाग मिश्रित चूर्ण १। तोलेकी मात्रानुसार शहद और घीमें मिलाकर चाटना चाहिये ।

इसके सेवनसे जरा व्याधिका नाश हो कर शरीर वज्र सदृश दृढ़ होता और आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है ।

(**नोट**—रस तथा अनुपानचूर्णकी मात्रा बहुत अधिक है । मात्राका निर्णय बल, प्रकृति आदिका विचार करके करना चाहिये ।)

(६९४२) वडवाग्निरसः (१)

(वडवाग्निमुखरसः)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. । स्थौल्या. ; र. र. स. । उ. स्था. अ. १८ ; रसें. चि. म. । अ. ९; यो. र. । मेदो. ; र. र. । स्थौल्या. ; र. चं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । स्थौल्या. ; वृ. नि. र. । मेदो रोगा.)

शुद्धसूतं समं गन्धं ताम्रं तालं समं समम् ।
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं क्षौद्रैर्लेह्यं द्विगुञ्जकम् ॥
वडवाग्निरसो नाम्ना स्थौल्यमाशु नियच्छति ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक[1] तथा ताम्र भस्म और शुद्ध हरताल समान भाग ले कर सबको १ दिन आकके दूधमें घोट कर रक्खें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे स्थूलता शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

मात्रा—२ रत्ती ।

(६९४३) वडवाग्निरसः (२)

(र. र. स. । उ. अ. १६)

टङ्कणं मरिचं तुत्थं पृथक् कर्षत्रयं भवेत् ।
सुन्दरं द्वादशनिष्कं त्रिंशन्निष्कमयोमलम् ॥
चूर्णान्येतानि संयोज्य स्थापयेच्छुद्धभाजने ।
शुद्धदेहो नरस्तस्य पानं यद्भोजनोत्तरम् ॥

१. यो. र. ; र. र. स. में गन्धकके स्थानमें बोल (हीरा बोल) लिखा है ।

अघ्रात्पथ्यं ततः स्वल्पं ततस्ताम्बूलभाग्भवेत् ।
उदराग्निर्नरस्यास्य वडवाग्निसमो भवेत् ॥
बहुनात्र किमुक्तेन रसायनमयं नृणाम् ।
कान्तं पद्मरसे घृष्टं पुटपक्वं वरारसे ॥
मार्कवस्वरसे घृष्टं सप्तकृत्वस्त्वयोमलम् ॥

सुहागा, काली मिर्च और शुद्ध तूतियाका चूर्ण ३।।।-३।। तोले, कान्त लोह भस्म ५ तोले और मण्डूर भस्म १२॥ तोले ले कर सबको एकत्र खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

वमन विरेचनादि द्वारा शरीर शुद्धि करके भोजनके उपरान्त इसे यथोचित मात्रामें खा कर स्वल्पाहार करके पान खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे जठराग्नि अत्यन्त तीव्र हो जाती है ।

इसमें जो कान्त भस्म डाली जाय उसे कमलके रस और त्रिफलाके क्वाथमें पृथक् पृथक् घोट कर सात सात पुट दे लेनी चाहियें । इसी प्रकार मण्डूरको भी भंगरेके रसकी सात भावना दे कर डालना चाहिये ।

(६९४४) वडवाग्निलौहम्

(भै. र. ; र. रा. सु. । स्थौल्या. ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; रसे. सा. स. । स्थौल्या.)

सूतभस्म सतालञ्च लौहं ताम्रं समं समम् ।
मर्दयेत्सूर्यपत्रेण चास्य वल्लं प्रयोजयेत् ॥
मधुना स्थूलरोगे च शोथे शूले तथैव च ।
मध्वाज्यमनुपानञ्च देयं वापि कफोल्वणे ॥

पारद भस्म, शुद्ध हरताल, लोह भस्म और ताम्र भस्म समान भाग ले कर सबको आकके पत्तोंके रसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे स्थूलता, शोथ और शूलका नाश होता है ।

यदि कफका प्रकोप हो तो इसे शहद और घीके साथ भी दे सकते हैं ।

(६९४५) वडवानलगुटिका

(र. र. स. । उ. अ. १८)

तालं ताप्यं कनककुनटीकान्तगन्धार्कसूतै-
स्तुल्यांशैस्तैररुणमधुरं दाप्यकं सर्वतुल्यम् ।
एतैः सर्वैस्त्रिकटु च समं कज्जलीकृत्य सर्वं
हिङ्ग्वम्भोभिर्मुनिमितदिनैर्भावयेत्सप्तकृत्वः ॥
जयन्त्याः काकमाच्याश्च निर्गुण्ड्याश्चार्द्रकस्य च ।
स्वरसैर्भावयेत्पिष्ट्वा सकृदेव दिने दिने ॥
कर्तव्या मरिचैस्तुल्या छायाशुष्कास्तु गोलिकाः।
हन्त्येषा वडवानलाख्यगुटिका संसेवितोष्णाम्बुना ॥
सर्वं शूलगदं कृमिं च सकलं वैषम्यवृत्तिं क्षुधः ।
मन्दाग्निं ग्रहणीगदं श्वयथुरुक्पाण्डुं च गुल्मार्शसी ॥
वातश्लेष्मगदं तथोदररुजं श्वासं च कासं ज्वरम्॥

शुद्ध हरताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म, स्वर्ण भस्म, शुद्ध मनसिल, कान्त लोह भस्म, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म और शुद्ध पारद १-१ भाग; अतीस, शुद्ध बछनाग और अजवायन ८-८ भाग तथा त्रिकटु (समान भाग मिश्रित सोंठ, मिर्च,

पीपल) ३२ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करके सात दिन हींगके पानीमें घोटें और फिर जयन्ती, मकोय, संभालु तथा अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर काली मिर्चके बराबर गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इन्हें उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे शूल, कृमि, अग्निमांद्य, क्षुधावैषम्य, ग्रहणी रोग, शोथ, पाण्डु, गुल्म, अर्श, वातकफज रोग, उदर रोग, श्वास, खांसी और ज्वरका नाश होता है।

(६९४६) **वडवानलरसः** (१)

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

कान्तश्च सूतं हरितालगन्धं
समुद्रफेनं लवणानि पञ्च ।
नीलाञ्जनं तुत्थकमेव रौप्य-
भस्मप्रवालानि वराटकाश्च ॥
वैक्रान्तशम्बूकसमुद्रशुक्तिः
सर्वाणि चैतानि समानि कुर्यात् ।
सूतं भवेद् द्वादशभागिकश्च
स्नुह्यर्कदुग्धेन विमर्दयेच्च ॥
दिनत्रयं वह्निरसैस्ततश्च
निवेशयेत्ताम्रजसम्पुटे तत् ।
मृदा च संलिप्य रसं पुटे-
त्तद्रसस्ततःस्याद्वडवानलाख्यः ॥
तत्पादभागेन विषं नियोज्य
कृशानुतोयेन पचेत् क्षणं तत् ।
वातप्रधाने च कफप्रधाने
नियोजयेत् त्र्यूषणचित्रयुक्तम् ॥
दोषत्रयोत्थेऽपि च सन्निपाते
वाताधिकत्वादिह सूतकोक्तः ॥

कान्त लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध हरताल, शुद्ध गन्धक, समुद्रफेन, पांचों नमक (सेंधा, संचल, सामुद्र लवण, विड लवण, काच लवण), शुद्ध सुरमा, शुद्ध तूतिया, रौप्य भस्म, मूंगा भस्म, कौड़ी भस्म, वैक्रान्त भस्म, शम्बूक (घोंघों) की भस्म, और समुद्रकी सीपकी भस्म १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करें। तत्पश्चात् उसमें बारहवां भाग पारद मिला कर पुनः खरल करें और फिर उसे ३-३ दिन थूहर (सेंड) और आकके दूध तथा चीतेके रसमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखाकर तांबेके सम्पुटमें बन्द करके उस पर कपरमिट्टी करके सुखा लें और पुटपाक करें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर उसमें चतुर्थांश (सबका चौथा भाग) शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर जरा देर चीतेके क्वाथमें पकावें और खरल करके रख लें।

इसे वात प्रधान तथा कफ प्रधान ज्वरमें चीते और त्रिकुटेके क्वाथके साथ देना चाहिये।

सन्निपात ज्वरम भी, वाताधिक्य होनेके कारण यह रस लाभ पहुंचाता है।

(६९४७) **वडवानलरसः** (२)

(र. चि. म. । स्त. ८)

गद्याणा दश ताम्रस्य तेषां पत्राणि कारयेत् ।
तानि कण्टकवेध्यानि द्व्यङ्गुलैकाङ्गुलानि च ॥

शुद्धसूतस्य गद्याणान् स्थाल्यान्तर्विन्यसेद्दश ।
विंशतिर्निम्बुकानां च खण्डानि शतशः क्षिपेत्॥
ततश्च ताम्रपत्राणि लवणं काञ्जिकेन च ।
आरनालभृता स्थाली ह्यारोप्य चुल्लिकोपरि ॥
हठाद्वह्निः प्रदीयेत त्रिादनं च दिवा निशम् ।
सक्षारे वह्निना दग्धे काञ्जिके प्रक्षिपेन्मुहुः ॥
जायन्ते तानि पत्राणि श्वेतरूप्यसमानि च ।
शुद्धगन्धक गद्याणशतं पिष्ट्वानुचूर्णयेत् ॥
स्थालिकायां क्षिपेच्चूर्णं ततः कर्म प्रसाधयेत् ।
एवं विचार्य दातव्यो ताम्रपत्रेषु गन्धकः ॥
पिण्डी धत्तूरकस्यैव देया मृद्वी तथोपरि ।
पिधायास्यं च ढक्कन्या दद्यात्कर्पटमृत्तिकाम् ॥
चुल्ल्यां स्थालीं निधायाग्निं षड्यामं ज्वालये-द्भगत् ।
शीताम्नुत्तारयेत्स्थालीं ताम्रमेतावता मृतम् ॥
विना धत्तूरकं पिण्डं यामयुग्मं पुनस्तथा ।
दत्त्वा हस्तिपुटं खल्वे क्षिपेत्ताम्रं रसाऽन्वितम् ॥
पिष्ट्वा चूर्णं विधायाऽथ निर्गुण्डीस्वरसेन च ।
आर्द्रककण्टकशैलस्य त्रिफलाया जलेन च ॥
शुष्के शुष्के पुनर्देयाः प्रत्येकं सप्तभावनाः ।
त्रिकट्वम्बुभवा देयाश्चैकविंशतिभावनाः ॥
सप्तेक्षोश्च रसेनैव कनकस्य रसस्य च ।
वत्सनाभविषस्यापि सप्त स्युर्भावनाः खलु ॥
सर्वं शुष्कं च तच्चूर्णं कूप्यां क्षेप्यं प्रयत्नतः ।
रक्षणीयमसौ नाम वडवानलको रसः ॥
वल्लैकः शीतनीरेण पञ्चामृतजलेन वा ।
प्रत्यहं सततं ग्राह्यः प्रातरुत्थाय रोगिणा ॥
दद्याद्विंशतिमेहेषु शूलेषु विविधेषु च ।
अष्टादशसु कुष्ठेषु ह्यशीतिवातरोगिषु ॥
अर्शःसु सकलेष्वेव गुदरोगे विशेषतः ।
मन्दाग्नौ चान्यरोगेषु देयोऽयं वडवानलः ॥
तैलक्षाराम्लवर्ज्यं च भोज्यं मधुरभोजनम् ।
क्रमाद्रोगा विलीयन्ते सेविते वडवानले ॥

दश गद्याण (५ कर्ष) शुद्ध ताम्रके कण्टक-वेधी पत्रोंके २–२ या १–१ अंगुल लम्बे चौड़े टुकड़े बना लें। तदनन्तर १ हाण्डीमें दश गद्याण शुद्ध पारा डाल कर उसके ऊपर २० नीबू छोटे छोटे टुकड़े करके डाल दें और उन पर उक्त ताम्र-पत्रके टुकड़े फैला दें। तत्पश्चात् उन पर कांजीमें पिसा हुवा (१२॥ तोले) सेंधा नमक बिछा कर हाण्डीको कांजीसे भर दें और ७२ घण्टे तक तीव्राग्नि पर पकावें। जब कांजी सूख जाए तो पुनः डाल दें। इसी प्रकार बार बार कांजी डाल कर ७२ घण्टे पकावें।

इस क्रियासे ताम्र पत्र चांदीके समान श्वेत हो जायंगे (उन पर पारदकी कलई हो जायगी।)

तत्पश्चात् १०० गद्याण शुद्ध गन्धकका बारीक चूर्ण करके उसमेंसे थोड़सा एक हाण्डीमें बिछावें और उसके ऊपर ताम्र पत्रोंकी तह जमाकर पुनः गन्धक डालें। इसी क्रमसे हाण्डीमें सम्पूर्ण ताम्र पत्र और गंधक डालकर हाण्डीके शेष भागको धतूरेके पंचांगके अत्यन्त सूक्ष्म पिसे हुवे कल्कसे भर दें और उसका मुख ढकनेसे बन्द करके उस पर ४–५ कपड़मिट्टी कर दें। अब इस हाण्डीको चूल्हे पर चढ़ा कर उसके नीचे ६ पहर तीव्राग्नि जलावें। तत्पश्चात् हाण्डीके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे धतूरेके कल्कको निकाल दें और उसका मुख बन्द करके २ पहर तीव्राग्नि पर पकावें।

तत्पश्चात् उस हाण्डीको गढ़ेमें रख कर गजपुट लगा दें और स्वांगशीतल होने पर ताम्र भस्मको निकाल कर खरल कर लें तथा उसे संभालुके रस, अदरकके रस, गोखरुके स्वरस या क्वाथ शिलाजीतके पानी, और त्रिफलाके क्वाथकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दे कर त्रिकुटेके क्वाथकी २१ भावना दें और फिर ईखके रस, धतूरेके रस तथा बछनागके क्वाथकी सात सात भावना दे कर चूर्ण करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती

अनुपान—शीतल जल या पञ्चामृत (गिलोय, गोखरु, मूसली, मुण्डी और शतावर) का क्वाथ।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे २० प्रकारके प्रमेह, अनेक प्रकारका शूल, अठारह प्रकारके कुष्ठ, ८० प्रकारके वात रोग, अर्श, गुदरोग और अग्निमांद्यादि अनेक रोग नष्ट होते हैं।

पथ्यापथ्य—इसके सेवन कालमें तेल, क्षार और अम्ल पदार्थोंका त्याग करके मधुर रस प्रधान भोजन करना चाहिये।

(६९४८) वडवानलरसः

(र. र. । कुष्ठा.)

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।
सम्यक्शुद्धं तथा कान्तं वङ्गं चापि शिलाजतुम्॥
तुत्थं रसाञ्जनं चैव तालकं शङ्खमेव च ।
वराटकं चापि तुल्यं जैपालं द्विगुणीकृतम् ॥
हवुषां पञ्चलवणं पञ्चैव कटुकानि च ।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं प्रियङ्गुरजमोदकम् ॥
द्वौ क्षारौ कुष्ठमेला च लवङ्गं जीरकद्वयम् ।
शटी दन्ती त्रिवृच्चैव त्रिफला गजपिप्पली ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य भावयेत्त्रिफलाजलैः ।
सप्तधा खल्वपाषाणे प्रचण्डातपशोषितम् ॥
हरीतकीरसेनाथ पुनः सञ्चूर्ण्य यत्नतः ।
पञ्चरक्तीप्रमाणन्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥
एकैकां खादयेत्प्रातः शृङ्गवेररसाप्लुताम् ।
हन्ति कुष्ठं तथा मेद आममारुतमेव च ॥
श्लीपदं गण्डमालाञ्च गलगण्डं भगन्दरम् ।
नाडीदुष्टव्रणञ्चैव अन्त्रवृद्धिञ्च दारुणाम् ॥
अम्लपित्तं रक्तपित्तं पक्तिशूलं हलीमकम् ।
वातरक्तं वातकफमुपदंशं सपीनसम् ॥
पञ्चगुल्मांस्तथानाहं प्लीहशोथज्वरानपि ।
उदराणि तथा कासान्रसोऽयं वडवानलः ॥

हिंगुलोत्थ पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, कान्त लोह भस्म, वंग भस्म, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध तूतिया, रसौत, शुद्ध हरताल, शंख भस्म और कौड़ी भस्म १-१ भाग; शुद्ध जमालगोटा २ भाग तथा हपुषा, पांचों नमक (सैंधा, संचल, विड नमक, काच लवण सामुद्र लवण), पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ, बायबिड़ंग, पीपलामूल, फूलप्रियंगु, अजमोद, जवाखार, सज्जीखार, कूठ, इलायची, लौंग, सफेद और काला जीरा, कचूर, दन्तीमूल, निसोत, हर्र, बहेड़ा, आमला और गजपीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको त्रिफलाके क्वाथकी सात भावना दे कर प्रचण्ड धूपमें सुखा लें तथा

हरेंके क्राथमें घोट कर ५-५ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसमें मिला कर नित्य प्रातःकाल सेवन करनेसे कुष्ठ, मेद, आमवात, श्लीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाड़ीव्रण, दुष्ट व्रण, दारुण अन्त्रवृद्धि, अम्लपित्त, रक्तपित्त, पक्तिशूल, हलीमक, वातरक्त, वात कफ, उपदंश, पीनस, पांच प्रकारके गुल्म, आनाह, प्लीहा, शोथ, ज्वर, उदर रोग और कासका नाश होता है।

(६९४९) **वडवानलरसः** (४)

(वै. र. । मेदो. ; र. स. क. । उल्लास ४)

सूतं ताम्रमयो बोलं मर्दयेत्सूर्यवारिणा ।
तद्वल्लमधुना लीढ्वा पिबेच्च सजलं मधु ॥
मेदुरत्वं जयेन्मासाद्रसोऽयं वडवानलः ॥

रस सिन्दूर, ताम्र भस्म, लोह भस्म× और बोल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर आकके पत्तोंके रसमें घोट कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२-३ रत्ती।

इसे शहदके साथ चाट कर शहदका शर्बत पीना चाहिये। इसके सेवनसे १ मासमें मेदरोग नष्ट हो जाता है।

× र. सं. क. में लोहके स्थान पर चांदी लिखी है।

(६९५०) **वडवानलरसः** (५)

(वै. मृ. । अजीर्णा. विष. ५; *र. रा. सु. । अजीर्णा.)

तालादेको रसादेक एकः सीसकभस्मनः ।
द्वौ भागौ गन्धकाच्छुद्धान्मरिचाच्छोडशांशकः॥
चूर्णं कृत्वा रक्तिकैका घृतेन सह भक्षिता ।
विषूचिं सर्वशूलानि प्लीहानमुदरं तथा ॥
गुल्मं सङ्ग्रहणीरोगं श्वासकासकफानिलान् ।
अग्निमान्द्यादिकान् रोगान् हन्त्यसौ वडवानलः॥

शुद्ध हरताल, शुद्ध पारद और शीशा भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक २ भाग और काली मिर्चका चूर्ण १६ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करके रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे विषूचिका, समस्त प्रकारके शूल, प्लीहा, उदर रोग, गुल्म, संग्रहणी, श्वास, खांसी, कफ, वायु और अग्निमांद्यादिका नाश होता है।

(६९५१) **वडवानलरसः** (६)

(**वातनाशनरसः**)

(र. र. स. । उ. अ. २१; र. र. । वातव्या.)

सूतहाटकवज्रार्ककान्तभस्म समाक्षिकम् ।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थमब्धिफेनं समांशकम् ॥
पञ्चानां लवणानां तु भागैकैकं विमर्दयेत् ।
वज्रीक्षीरैर्दिनैकं तु रुध्वा तं भूधरे पुटेत् ॥

* र. रा. सु. में हरतालके स्थान पर वङ्ग लिखी है।

माषैकं चार्द्रकद्रावैर्लेहयेद्वडवानलम् ।
पिप्पलीमूलजं क्वाथं सपिप्पल्यनुपाययेत् ॥
धनुर्वातं दण्डवातं शृङ्खलाकम्पवातनुत् ॥

रस सिन्दूर, स्वर्ण भस्म, हीरा भस्म, ताम्र भस्म, कान्त लोह भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, काला सुरमा, शुद्ध तूतिया, समन्दर फेन, सेंधा नमक, काला नमक (संचल), बिड लवण, सामुद्र लवण, और काच लवण; इनका चूर्ण १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिलाकर १ दिन सेहुंड (थूहर) के दूधमें घोट कर गोला बनावें और उसे शराव-सम्पुटमें बन्द करके भूधरपुटमें पकावें ।

मात्रा—१ माशा

इसे अदरकके रसमें मिला कर चाटनेके पश्चात् पीपलका चूर्ण मिला हुवा पीपलामूलका क्वाथ पीना चाहिये ।

इसके सेवनसे धनुर्वात दण्डापतानक और कम्पवायुका नाश होता है ।

व्यवहारिक मात्रा—४ रत्ती ।

(६९५२) वडवानलरसः (७)

(र. र. स. । उ. अ. १६, २१ ; र. चं. । अजीर्णा.)

शुल्बं तालकगन्धकौ जलनिधेः फेनाग्निगर्भाशयैः
कान्तायोलवणानि हेमवचयोर्नीलाञ्जनं तुत्थकम्
भागो द्वादशको रसस्य तदिदं वज्राम्बुघृष्टं शनैः
सिद्धोऽयं वडवानलो गजपुटे रोगानशेषाञ्जयेत् ॥
आर्द्रकस्य द्रवैश्चामुं दशवाराणि भावयेत् ।
दिनद्वयं चित्रकस्य द्रावेणैव तु भावयेत् ॥
पादांशममृतं दत्वा चित्रद्रावैः क्षणं पचेत् ।
मात्रया योजयेच्चानु दशमूलशृतं पयः ॥
वातश्लेष्मप्रधाने च दद्यात्त्र्यूषणचित्रकम् ।
स्वेदं च कटुतुम्बिन्या प्रयुञ्जीतातियत्नतः ॥

ताम्र भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध गन्धक, समुद्रफेन, अग्नि गर्भाशय (अग्निजार-अम्बर), कान्त लोह भस्म, पांचों नमक (सेंधा, संचल, बिड नमक, समुद्र लवण, काच लवण), स्वर्ण भस्म, बच, काला सुरमा और नीला थोथा १-१ भाग तथा रससिन्दूर १२ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और थूहर (सेहुण्ड) के दूधमें घोटकर यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें पकावें । तदनन्तर स्वांगशीतल होने पर निकाल कर उसे अदरकके रसकी १० भावना दें और फिर २ दिन चीतेके क्वाथमें घोट कर उसमें उसका चतुर्थांश शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर ज़रा देर चीतेके क्वाथमें पकावें और फिर सुखा कर चूर्ण करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे यथोचित मात्रानुसार दशमूल-सिद्ध दुग्धके साथ सेवन करनेसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

इसे वातकफ प्रधान रोगोंमें त्रिकुटे और चीतेके चूर्णके साथ देना चाहिये तथा कड़वी तूंबीके योगसे स्वेद देना चाहिये ।

(६९५३) वडवानलरसः (८)

(रसे. सा. सं. । अजीर्णा. ; भै. र. । अग्निमांद्या.)

शुद्धसूतस्य कर्षैकं गन्धकं तत्समं मतम् ।
पिप्पली पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम् ॥

क्षारत्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवेनैव भावयेद्दिनमेकतः ॥
वडवानलनामायं मन्दाग्निश्च विनाशयेत् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, पीपल, पांचों नमक (सेंधा, संचल, काच लवण, विड लवण, सामुद्र लवण), काली मिर्च, हर्र, बहेड़ा, आमला, सज्जीखार, जवाखार, और सुहागा समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको संभालुके रसमें घोट कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे अग्निमांधका नाश होता है।

(मात्रा—१-१॥ माशा ।)

(६९५४) वडवानलरसः (९)

(रसे. सा. सं. ; र. चं. ; धन्व. ; र. का. धे. । गुल्मा.)

पारदं गन्धकं ताप्यं यवक्षारार्कमभ्रकम् ।
अग्न्यम्बुनाऽहिपत्रेण सम्मर्द्याथ द्विगुञ्जकम् ॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिङ्गुसिन्धुसुवर्चलैः ।
दाडिमश्च तथा बिल्वं कार्षिकं भृङ्गजैर्द्रवैः ॥
पिष्ट्वा तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम् ।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलश्च परिणामजम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण माक्षिक, यवक्षार, ताम्र भस्म और अभ्रक भस्म, समान भाग ले कर प्रथम पारद और गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर सबको चीतामूलके काथ और पानके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—हींग, सेंधा, संचल, अनारदाना, और बेलगिरीका चूर्ण समान भाग ले कर सबको भंगरेके रसमें घोटें।

उपरोक्त रस पानके साथ खा कर ऊपरसे यह चूर्ण सुराके साथ पीना चाहिये।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके शूलों और गुल्मका नाश होता है।

(६९५५) वडवानलरसः (१०)

वडवामुखो रसः

(यो. र. । गुल्म. ; रसे. सा. सं. । ग्रह.; भै. र. । ग्रहण्य. ; गुल्मा.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रटङ्कणम् ।
सामुद्रश्च यवक्षारं स्वर्जिसैन्धवनागरम् ॥
अपामार्गस्य च क्षारं पलाशवरुणस्य च[1] ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यादम्लयोगेन मर्दयेत्[2] ॥
हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाग्नौ मर्दयित्वा पुटेल्लघु[3] ।
माषमात्रः प्रदातव्यो रसोयं वडवामुखः ॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति सङ्ग्रहग्रहणीं ज्वरम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, सुहागेकी खील, सामुद्र लवण, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, सोंठ, अपामार्ग (चिरचिटे)

पाठान्तराणि.

१ पालाशं वत्सनाभकम् (बरनेके क्षारकी जगह बछनाग ।)

२ स्याच्चणकाम्लेन मर्दयेत् ।

३ हस्ति कन्याद्रवैश्चाद्दो आर्द्रयुक्तं पुटेल्लघु । (घृतकुमारी और अद्रककी भावना भी)

का क्षार, पलाशक्षार, और बरनेका क्षार, १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर नीबूके रसमें घोटें और फिर हाथीसुंडीके रसमें घोट कर यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें ।

मात्रा—१ माशा ।

इसके सेवनसे विविध प्रकारका ग्रहणी रोग और ज्वर नष्ट होता है ।

(६९५६) वडवानलरसः (स्वल्पः) (११)

(रसे. सा. सं. । सन्नि. ज्वरा.)

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च ।
विषं तत्तुल्यकं दद्यात्तत्सर्वं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥
लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत् ।
रक्तिकाद्वितयं वापि त्रितयं वा प्रकल्पयेत् ॥
दोषे व्योषसमायुक्तस्त्रिदोषशमनो भवेत् ।
भक्षयेत्पवने चोग्रे वडवानलसञ्ज्ञितम् ॥

शुद्ध ताम्र भस्म १ भाग, काली मिर्चका चूर्ण १ भाग और शुद्ध बछनाग १ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कलियारीके रसमें घोट कर यथा विधि शरावसम्पुटमें बन्द करके पुट लगावें और उसके स्वांग शीतल होने पर पीस कर रख लें ।

मात्रा—२-३ रत्ती ।

इसे त्रिकुटेके चूर्णके साथ देनेसे सन्निपात और उग्र वायुका नाश होता है ।

(६९५७) वडवानलवटी

(र. का. धे. । अग्निमांद्या.)

पारदस्य त्रयो भागास्तावन्तो गन्धकस्य च ।
नागस्य भस्मनस्तद्वच्चत्वारो गगनस्य च ॥
कटुत्रयं त्रिभागं स्यादष्टौ स्युः शंखभस्मनः ।
द्वौ क्षारौ सैन्धवं हेम विडं सौवर्चलं तथा ॥
खर्परं ग्रावभेदी च पृथग्भागं समाहरेत् ।
सञ्चूर्ण्य शृङ्गवेरस्य नीरेण परिभावयेत् ॥
मातुलुङ्गस्य नीरेण शमीमूलरसेन च ।
ज्वालामुखीरसेनापि चणकक्षारवारिणा ॥
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दातव्या गुरुयुक्तितः ।
शृङ्गवेररसेनैव ग्राह्या वल्लमिता वटी ॥
अग्निमान्द्यं निहन्त्येषा वडवानलसञ्ज्ञिता ।
मन्देऽग्नावरुचौ गुल्मे अजीर्णे च जलोदरे ॥
विसूच्यां ग्रहणीरोगे तथा वै राजयक्ष्मणि ।
वैश्वानरेण विहितो वह्निदीपनकारणात् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और नाग भस्म ३-३ भाग; अभ्रक भस्म ४ भाग, त्रिकुटा (सोंठ, मिर्च, पीपल) ३ भाग, शंख भस्म ८ भाग, एवं जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, स्वर्ण भस्म, विड नमक, संचल नमक, खपरिया और पाषाणभेद १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अदरकके रस, बिजौरेके रस शमीकी जड़के काथ, कलियारीकी जड़के काथ, और चनाखारके पानीकी ३-३ भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें अदरकके रसके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्य, अरुचि, गुल्म, अजीर्ण, जलोदर, विसूचिका, संग्रहणी और राजयक्ष्माका नाश होता है।

(६९५८) वडवामुखी गुटी

(र. र. स. । उ. अ. १६)

शुल्वायोघनभस्मवेल्लहलिनीव्योषाम्बुनिम्बच्छदैः।
संयुक्तैश्च हरिद्रया समलवैः सार्धं सशुभ्रामृतैः॥
भृङ्गाम्भोविषतिन्दुकार्द्रकरसैः सम्पिष्य गुञ्जामिता।
संशुष्का वडवामुखीति गुटिका नाम्नोदिता तारया॥
क्षिप्रं क्षुत्परिबोधिनी खलु मता सर्वामयध्वंसिनी
श्लेष्मव्याधिविधूननी कसनहृच्छ्वासापहा शूलनुत्॥
क्षुद्वैषम्यहरा च गुल्मशमनी शूलार्तिमूलङ्कषा
शोफव्याधिहराऽत्र किं बहुगिरा सर्वामयोत्सादिनी॥

ताम्र भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, बायबिड़ंग, कलियारीकी जड़, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुगन्धबाला, नीमके पत्ते, हल्दी, फिटकी और शुद्ध बछनाग; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर भंगरेके रस, कुचलेके रस या क्वाथ और अदरकके रसकी एक एक भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे शीघ्रही अग्नि दीप्त हो जाती है तथा यह वटी कफ, कास, श्वास, शूल, अग्निवैषम्य, गुल्म और शोथको नष्ट करती है।

(६९५९) वत्सनाभाद्या गुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

वत्सनाभवल्लयुगं वल्लषट्कं त्रिकटुकचूर्णस्य।
चित्रकवल्लद्वितयं पिप्पलीमूलस्य वल्लयुगम्॥
अभया वल्ला द्वादश द्वादशद्विगुणा च गुग्गुलोर्वल्लाः।
गुटिका धार्या वदने क्षणदायां कफविनाशार्थम्॥

शुद्ध बछनाग २ भाग, त्रिकुटा ६ भाग, चीतामूल २ भाग, पीपलामूल २ भाग, हर्ड़ १२ भाग और गूगल २४ भाग ले कर गूगलमें अन्य समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिला कर (४-४ रत्ती) की गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली मुंहमें रख कर रस चूसनेसे कफ अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाता है।

(६९६०) वराटादियोगः

(र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

दग्ध्वा वराटकान् पीतान् त्र्यूषणं टङ्कणं विषम्।
गन्धकं शुद्धसूतं च समं जम्बीरजैर्द्रवैः॥
मर्दयेद्भक्षयेन्माषं मरिचाज्यं लिहेदनु।
निहन्ति ग्रहणीरोगान् पथ्यं तक्रोदनं हितम्॥

पीली कौड़ियोंकी भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागा, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारद समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसे खानेके पश्चात् घीमें काली मिर्चका चूर्ण मिला कर चाटना चाहिये।

इसके सेवनसे ग्रहणी रोग नष्ट होता है।

पथ्य—तक्र भात।

(६९६१) वराटिकामारणम्

(आ. वे. प्र. । अ. १०)

अङ्गाराग्नौ स्थिता ध्माता सम्यक्प्रोत्फुल्लिता यदा।
स्वाङ्गशीता मृता सा तु पिष्ट्वा सम्यक् प्रयोजयेत्॥
कपर्दिका हिमा नेत्रहिता स्फोटक्षयापहा।
कर्णस्रावाग्निमान्द्यघ्नी पित्तास्रकफनाशिनी॥
कटूष्णा दीपनी वृष्या तिक्ता वातकफापहा।
परिणामादिशूलघ्नी ग्रहणीक्षयहारिणी॥
रसेन्द्रजारणे प्रोक्ता विडद्रव्येषु शस्यते॥

कौड़ीको अंगारों पर रख कर ध्मावें। जब वह फूल जाय (उसकी खीलसी हो जायं) तो अग्निसे सावधानी पूर्वक निकाल कर स्वांगशीतल होने पर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

कौड़ी शीतल, नेत्रोंके लिये हितकारी एवं विस्फोटक और क्षयनाशक है तथा कर्णस्राव, अग्निमांद्य, रक्तपित्त और कफको नष्ट करती है।

कौड़ी कटु, उष्ण, दीपनी, वृष्य, तिक्त, वात कफ नाशक, परिणाम शूलादि नाशक, ग्रहणी नाशक और क्षयको नष्ट करने वाली है।

यह रसजारण और विडद्रव्योंमें उपयोगी है।

(**नोट**—एकही ग्रन्थमें एकही स्थान पर कौड़ीको शीतल भी लिखा है और उष्ण भी। कच्ची कौड़ीको घिस कर लेप करनेसे वह शीतल गुण करती होगी और भस्म उष्ण होगी। इसके अतिरिक्त और क्या समाधान हो सकता है?)

(६९६२) वराटिकाशोधनम्

(र. प्र. सु. । अ. ६; आ. वे. प्र. । अ. १०; र. र. स. । पू. अ. ३; रसे. सा. सं.; र. मं.)

पीता वराटिका प्रोक्ता सार्धनिष्कप्रमाणिका।
श्रेष्ठा सैव बुधैः प्रोक्ता टङ्कभारा हि मध्यमा॥
पादोनटङ्कभारा च कथ्यते सा कनिष्ठिका।
स्थूला वराटिका प्रोक्ता गुरुश्च श्लेष्मपित्तला॥
स्वेदितारनालेन यामाच्छुद्धिमवाप्नुयात्॥

पीले रंगकी ७॥ माशे वज़नी कौड़ी उत्तम, ५ माशेकी मध्यम और ३॥। माशेकी कनिष्ठ होती है।

जो कौड़ियां बहुत बड़ी और वज़नी होती हैं वे कफ पित्तकी वृद्धि करती हैं।

कौड़ियोंको १ पहर कांजीमें पकानेसे वे शुद्ध हो जाती हैं।

(६९६३) वरुणाद्यलौहम्

(भै. र.; रसे. सा. सं.; र. चं.; र. रा. सु. । मूत्रकृच्छ्रा.; रसे. चि. म. । अ. ९)

द्विपलं वरुणं धात्र्यास्तदर्द्धं धातकीकुसुमम्।
हरीतक्याः पलार्द्धञ्च पृश्निपर्णं तदर्द्धकम्॥
कर्षमानञ्च लौहाभ्रचूर्णमेकत्र कारयेत्।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय शाणमानं विधानवित्॥

मूत्राघातं तथा घोरं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम् ।
अश्मरीं विनिहन्त्याशु प्रमेहं विषमज्वरम् ॥
बलपुष्टिकरश्चैव वृष्यमायुष्यमेव च ।
वरुणाद्यमिदं लौहं चरकेण विनिर्मितम् ॥

बरनेकी छाल और आमला १०-१० तोले, धायके फूल ५ तोले, हर्र २।। तोले, पृश्निपर्णी १। तोला, लोह भस्म १। तोला और अभ्रक भस्म १। तोला ले कर सबको एकत्र खरल करें।

मात्रा—१ शाण (४ माशे)

इसके सेवनसे मूत्राघात, दारुण मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी और विषमज्वरका नाश होता तथा बल, वीर्य, पुष्टि और आयुकी वृद्धि होती है।

(६९६४) **वमनकारकरसः**

(र. स. क. । उल्ला. ४)

राठाकौं मधुकं चैकसार्धाद्वपञ्चभागकम् ।
टङ्कैकाम्बुयुतं दत्तं रसोऽयं वामकः स्मृतः ॥

मैनफलके बीज १।। भाग, आककी जड़की छाल २ भाग और मुलैठी ५ भाग ले कर यथा-विधि चूर्ण बना कर रक्खें।

मात्रा—१ टंक (४-५ माशे।)

इसे पानीके साथ देनेसे वमन हो जाती है।

(६९६५) **वमनकारको रसः**

(र. सं. क. । उल्ला. ५)

लवणं भानुदुग्धेन सकृद्भावितमातपे ।
गव्येन पयसा पीतं कर्षार्धं वान्तिकारकम् ॥

सेंधा नमकको आकके दूधकी भावना दे कर धूपमें सुखा कर रक्खें।

मात्रा—७।। माशे।

इसे गोदुग्धके साथ पीनेसे वमन हो जाती है।

(६९६६) **वमनामृतयोगः**

(र. चं. ; यो. र. । छर्दि.)

गन्धकः कमलाक्षश्च यष्टीमधु शिलाजतु ।
रुद्राक्षष्टङ्कणश्चैव सारङ्गस्य च शृङ्गकम् ॥
चन्दनं च तवक्षीरी गोरोचनमिदं समम् ।
बिल्वमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥
मात्रां चैव प्रकुर्वीत वल्लस्यैव प्रमाणतः ।
नानाविधानुपानेन छर्दिं हन्ति त्रिदोषजाम् ॥
वमनामृतयोगोऽयं कमलाकरभाषितः ॥

शुद्ध गन्धक, कमलगट्टा, मुलैठी, शिलाजीत, रुद्राक्ष, सुहागा, हरिनशृंगकी भस्म, सफेद चन्दन, तवक्षीर (तबाखीर), और गोरोचन; सबका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर बेलकी जड़के क्वाथमें १ पहर घोट कर सुखा कर रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती।

इसे उचित अनुपानके साथ देनेसे त्रिदोषज छर्दि नष्ट होती है।

(६९६७) **वसन्तकुसुमाकररसः**

(वृ. यो. त । त. ७६ ; भै. र. । रसायना.; र. रा. सु.। यक्ष्मा. ; र. चं.। राजयक्ष्मा.; यो. र. ; भै. र. । प्रमेहा. ; नपु. मृ. । त. ५ ; यो. त. । त. २७ ; वृ. नि. र. ; रसे. सा. सं. । रसायना. ; र. र. ; यो. र. ; वृ. नि. र. । यक्ष्मा. ; धन्व. । वाजीकर. , प्रमेहा. ; र. रा. सु. । रसायना. ; र. र. स. । उ. अ. १७)*

पृथग्द्वौ हाटकं चन्द्रं त्रयो वङ्गाहिकान्तजम् ।
चत्वारः सूतमभ्रं[1]च प्रवालं मौक्तिकं तथा[2] ॥
भावना गव्यदुग्धेक्षुवासाश्रीद्विजलैर्निशा[3] ।
मोचकन्दरसैः सप्त क्रमाद्भाव्यं पृथक्पृथक् ॥
शतपत्ररसेनैव मालत्याः कुसुमैस्तथा[4] ।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यः सुसिद्धो रसराड् भवेत् ॥
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ।
वल्लद्वयमितः सेव्यः सिताज्यमधुसंयुतः ॥
वलिपलितहृन्मेध्यः कामदः सुखदः सदा ।
मेहघ्नः पुष्टिदः श्रेष्ठः परं वृष्यो रसायनम् ॥
आयुर्वृद्धिकरं पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् ।
क्षयकासतृषोन्मादश्वासरक्तविषार्तिजित् ॥
सिताचन्दनसंयुक्तमम्लपित्तादिरोगजित् ।
शुक्रपाण्ड्वामयाञ्शूलान्मूत्राघाताश्मरीं हरेत् ॥
योगवाहि त्विदं सेव्यं कान्तिश्रीबलवर्धनम् ।
सुसात्म्यमिष्टभाजी च रमयेत्प्रमदाशतम् ॥
मदनं मदयेन्मदमुज्ज्वलय-
न्प्रमदानिवहानतिविह्वलयन् ।
सुरतैः सुखदैर्गतिविच्यवनै-
र्भवसारजुषामयमेव सुहृत् ॥

स्वर्ण भस्म २ भाग, चांदी भस्म २ भाग, बंग भस्म ३ भाग, नाग भस्म ३ भाग, कान्त लोह भस्म ३ भाग, रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, प्रवाल भस्म और मोती भस्म (पाठान्तरके अनुसार हीरा भस्म भी) ४-४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके गोदुग्ध, ईखके रस, बासा (अडूसे) के रस, सफेद चन्दनके क्वाथ, सुगन्ध बालाके क्वाथ, खसके क्वाथ, हल्दीके क्वाथ या स्वरस, केलेकी जड़के रस, कमलके रस और चमेलीके फूलोंके रसकी (पाठान्तरके अनुसार केसरके पानीकी भी) पृथक् पृथक् सात सात भावना दे कर अन्तमें कस्तूरीके पानीमें घोट कर ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इसे मिश्री, घी और शहदके साथ सेवन करनेसे वलिपलित, प्रमेह, क्षय, कास, तृषा, उन्माद, श्वास, रक्त दोष और विष विकारका नाश होता तथा मेधा, काम शक्ति, पुष्टि, वीर्य और आयुकी वृद्धि होती है ।

---

* र. र. स. में रौप्य और नागका अभाव है तथा अभ्रक २ भाग लिखा है ।

१ शुद्धमभ्रमिति पाठान्तरम् । (कुछ ग्रन्थोंमें पारदका अभाव है).

२ पवीति पाठान्तरम् ।

३ यो. त. में खस और सुगन्धबालाके स्थान-पर श्वेत कञ्जकी भावना लिखी है ।

४ कई ग्रन्थोंमें श्री (सफेद चन्दन) खस और हल्दीकी भावनाओंका अभाव है तथा लाक्षा-रस और केलेके फूलोंकी भावना अधिक लिखी हैं ।

५ मालत्या कुङ्कुमोदकैरिति पाठान्तरम् ।

इसके सेवनसे पुत्रप्राप्ति भी हो जाती है ।

इसे मिश्री और सफेद चन्दनके चूर्णके साथ सेवन करनेसे अम्लपित्तादि रोग नष्ट होते हैं ।

इसके अतिरिक्त यह श्वेत पाण्डु, मूत्राघात और अश्मरीको नष्ट तथा कान्तिकी वृद्धि करता है ।

यह रस योगवाही है ।

(६९६८) वसन्तकुसुमाकरो रसः

(भै. र. । बहुमूत्रा.)

वैक्रान्तस्य च भागैकं द्विभागं हेमभस्मनः ।
अभ्रकस्य च भागौ द्वौ मुक्ताविद्रुमयोस्तथा ॥
वङ्गभस्म त्रिभागं स्याद् रसस्य भस्मनस्तथा ।
चत्वारोऽस्य च भागाश्च सर्वमेकत्र मर्दितम् ॥
जम्बीराद्भिश्च गोदुग्धैरुशीरोद्भववारिभिः ।
वृषद्रवैरिक्षुनीरैः सप्तधा भावयेत्पृथक् ॥
भावितो रसराजः स्याद् वसन्तकुसुमाकरः ।
वल्लोऽस्य मधुना लीढः सोमरोगं क्षयं नयेत् ॥
मूत्रातिसारं मेहांश्च मूत्राघाताश्मरीरुजम् ।
तृष्णादाहं तालुशोषं नाशयेन्नात्र संशयः ॥
बल्यः पुष्टिकरो वृष्यः सर्वरोगनिबर्हणः ।
हन्त्यजीर्णं ज्वरं श्वासं क्षयरोगं कृशाङ्गताम् ॥
नातः परतरं किञ्चिद्रसायनमिहेष्यते ॥

वैक्रान्त भस्म १ भाग, स्वर्ण भस्म २ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, मोती भस्म २ भाग, विद्रुम (मूंगा) भस्म २ भाग, वङ्ग भस्म ३ भाग और पारद भस्म ४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके जम्बीरीके रस, गोदुग्ध, खसके क्वाथ, बासेके क्वाथ और ईखके रसकी ७-७ भावना दे कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे सोमरोग, मूत्रातिसार, प्रमेह, मूत्राघात, तृष्णा, दाह, तालुशोष, अजीर्ण, ज्वर, श्वास, क्षय और कृशता आदि रोग नष्ट होते तथा बल, वीर्यकी वृद्धि होती है । यह अत्यन्त रसायन है ।

(६९६९) वसन्ततिलकरसः (१)

(भै. र. । कासा. ; र. र. । मिश्रा. ; र. रा. सु. । रसायना. ; धन्व. । वाजीकर; रसे. सा. सं. । रसायना.)

हेम्नो भस्मकतोलकं घनयुगं लौहात्त्रयः पारदा-
चत्वारो नियतन्तु वङ्गयुगलं चैकीकृतं मर्दयेत् ।
मुक्ताविद्रुमयो रसेन समता गोक्षुरवासेक्षुणा
सर्वं वन्यकरीषकेण सुदृढं तप्तं पचेत्सप्तधा ॥
कस्तूरीघनसारमर्दितरसः पश्चात् सुसिद्धो भवेत्
कासश्वाससपित्तवातकफजित् पाण्डु क्षयादीन् हरेत् ।
शूलादिग्रहणींविषादिहरणो मेहाश्मरीविंशतिं
हृद्रोगापहरो ज्वरादिशमनो वृष्यो वयोवर्द्धनः ॥
श्रेष्ठः पुष्टिकरो वसन्ततिलको मृत्युञ्जयेनोदितः ॥

स्वर्ण भस्म १ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, लोह भस्म ३ भाग, शुद्ध पारद ४ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, वंग भस्म २ भाग, मोती भस्म ४ भाग और प्रवाल (मूंगा) भस्म ४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर गोखरूके क्वाथ, बासेके रस तथा ईखके रसकी १-१ भावना देकर

गोला बना कर उसे मूषामें बन्द करके लघुपुटमें पकावें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर पुनः उक्त रसोंमें घोट कर लघुपुट दें। इसी प्रकार सात पुट देनेके पश्चात् कस्तूरी और कपूरके पानीकी १-१ भावना दे कर सुरक्षित रक्खें।

इसे सेवन करनेसे कास, श्वास, पित्त, वायु, कफ, पाण्डु, क्षय, शूल, संग्रहणी, विष, प्रमेह, अश्मरी, हृद्रोग और ज्वरादिका नाश होता तथा बल वीर्य और आयुकी वृद्धि होती है।

(**मात्रा**—१ रत्ती।)

(६९७०) वसन्ततिलकरसः (२)

(भै. र. । प्रमेहा.)

लौहं वङ्गं माक्षिकश्च सुवर्णश्चाभ्रकस्तथा।
प्रवालतारं मुक्ता च जातिकोषफलं तथा॥
एतेषां समभागेन चातुर्जातश्च मिश्रितम्।
मर्दयेत् त्रिफलाक्काथे वटिकां कुरु यत्नतः॥
रोगांश्च भिषजा ज्ञात्वा अनुपानं यथायथम्।
वातिकं पैत्तिकश्चैव श्लेष्मिकं सान्निपातिकम्॥
वायुं नानाविधं हन्ति ह्यपस्मारं विशेषतः।
विसूचिकाक्षयोन्मादशरीरस्तब्धमेव च॥
प्रमेहान् विंशतिश्चैव नानारोगं विशेषतः॥

लोह भस्म, वंग भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म, प्रवाल (मूंगा) भस्म; चांदी भस्म, मोती भस्म, एवं जायफल, जावत्री, दालचीनी, तेजपात, इलायची और नागकेसरका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें और त्रिफलाके काथमें खरल करके (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इन्हें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करानेसे वातज, पित्तज, कफज और सान्निपातिक अनेक रोगोंका; विशेषतः वात व्याधि, अपस्मार, विसूचिका, क्षय, उन्माद, शरीरकी स्तब्धता और प्रमेहका नाश होता है।

(६९७१) वसन्तमालतीरसः

(सुवर्ण वसन्तमालती रसः)

(भै. र. ; धन्व. । ज्वरा. ; यो. त. । त. २७ ; र. चं. । ज्वरा.)

सुवर्णं मुक्ता दरदमरिचं भागवृद्ध्या प्रदिष्टं
खर्परस्याष्टौ प्रथममखिलं मर्दयेत् म्रक्षणेन।
यावत्स्नेहो व्रजति विलयं निम्बुनीरेण तावद्
गुञ्जाद्वन्द्वं मधु चपलया मालतीप्राग्वसन्तः॥
सेवितोऽयं हरेत्तूर्णं जीर्णश्च विषमज्वरम्।
व्याधीनन्यांश्च कासादीन् प्रदीप्तं कुरुतेऽनलम्॥

स्वर्ण भस्म १ भाग, मोती भस्म २ भाग, शुद्ध हिंगुल ३ भाग, काली मिर्चका चूर्ण ४ भाग और खपरिया (अभावमें यशद भस्म) ८ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर प्रथम मक्खनके साथ घोटें और फिर उसमें नीबूका रस डालते हुवे इतना खरल करें कि चिकनाई नष्ट हो जाय।

मात्रा—२ रत्ती।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे जीर्ण ज्वर और विषम ज्वर तथा कासादिका नाश हो कर अग्नि दीप्त हो जाती है।

(६९७२) वसन्तमालिनीरसः (१) (लघु)

(र. चं. ; यो. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

रसकयुगलभागं वह्निजं भागमेकम्।
द्वितीयमथ सुखल्वे मर्दयेन्म्रक्षणेन॥

भवति घृतविमुक्तो निम्बुनीरेण यावत् ।
ज्वरहरमधुकुल्या मालिनीप्राग्वसन्तः ॥
जीर्णज्वरे धातुगतेऽतिसारे
रक्तान्विते रक्तभवे विकारे ।
घोरव्यथे पित्तभवे च दोषे
वल्लद्वयं दुग्धयुतं च पथ्यम् ॥
प्रदरं नाशयत्याशु तथा दुर्नामशोणितम् ।
विषमं नेत्ररोगं च गजेन्द्रमिव केसरी ॥
वसन्तो मालिनी पूर्वो सर्वरोगहरः शिशोः ।
गर्भिण्यै तत्र देयो वै जयन्त्याः पुष्पकैः सह ॥
सर्वज्वरहरः श्रेष्ठो गर्भपोषण उत्तमः ॥

खपरिया (अभावमें यशद भस्म) २ भाग और काली मिर्चका चूर्ण १ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर मक्खनके साथ घोटें और फिर उसमें नीबूका रस डाल कर इतना खरल करें कि उसकी चिकनाई जाती रहे ।

इसे पीपलके चूर्ण और शहदके साथ देनेसे ज्वर, जीर्ण ज्वर, धातुगत ज्वर, अतिसार, रक्तातिसार, रक्त विकार और पित्तजन्य घोर पीड़ाका नाश होता है ।

मात्रा—४ रत्ती ।

पथ्यमें दूध भातादि देना चाहिये ।

यह रस प्रदर, रक्तार्श, नेत्र दोष, और बालरोगोंको भी नष्ट करता है ।

इसे गर्भिणी स्त्रीको जयन्तीके रसके साथ देनेसे गर्भ पुष्ट होता है ।

(६९७३) वसन्तमालिनीरसः (२)
(मालिनीवसन्तः)

(र. च. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

वैक्रान्तमभ्रं रवितार्प्यरौप्य-
गन्धः प्रवालं रसभस्म लौहम् ।
सटङ्कणं शम्बुकभस्म सर्वं
समस्तमेतच्च वरीरजन्योः ॥
द्रवैर्विमर्द्य मुनिसङ्ख्यया च
कस्तूरिका शीतकरेण पश्चात् ।
वल्लप्रमाणो मधुपिप्पलीभ्यां
जीर्णज्वरे धातुगते प्रदेयः ॥
छिन्नोद्भवा सत्त्वसितायुतश्च
सर्वप्रमेहेषु च योजनीयः ।
कृच्छ्राश्मरीं निहन्त्याशु मातुलुङ्गार्द्रकद्रवैः ।
रसो वसन्तनामाऽयं मालिनीपदपूर्वकः ॥

वैक्रान्त भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, रौप्य भस्म, शुद्ध गन्धक, प्रवाल भस्म, पारद भस्म (रस सिन्दूर), लोह भस्म, सुहागेकी खील और शम्बुक (घोंघों) की भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिलावें और शतावर तथा हल्दीके रस या काथकी ७—७ भावना दे कर कस्तूरी और कपूरके पानीमें घोट कर २—२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इसमें पीपलका चूर्ण मिला कर शहदके साथ सेवन करनेसे धातुगत जीर्ण ज्वरका तथा गिलोयके सत और मिश्रीके साथ देनेसे प्रमेहका एवं बिजौर या अदरकके रसके साथ देनेसे अश्मरीका नाश होता है ।

(६९७४) **वह्निकुमाररसः** (१)

(वृ. नि. र. ; र. रा. सु. । वातव्या.)

टङ्कणः पारदो गन्धशङ्खौ कपर्दः
समोवत्सनाभस्त्रिभागस्तथा ।
वल्लिजं अष्टभागं वह्निपूर्वः कुमारः
स्मृतो भृङ्गनीरेण मर्दितः ॥
वातरोगेषु सर्वेषु श्वसने वह्निमान्द्यके
कफामये प्लीहकासे शूले वाग्निकुमारकः॥

सुहागेकी खील, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शंख भस्म, और कौडी भस्म १-१ भाग, शुद्ध बछनाग ३ भाग और काली मिर्चका चूर्ण ८ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर भंगरेके काथमें खरल करें ।

यह रस वात रोग, अग्निमांद्य, कफज रोग, प्लीहा, कास और शूलको नष्ट करता है ।

(६९७५) **वह्निकुमाररसः** (२)

(र. र. । उदर रोगा.)

गुल्मरामठटङ्कानि सैन्धवं धान्यजीरके ।
यवानी मरिचं शुण्ठी लवङ्गैला विडङ्गकम् ॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं लौहचूर्णन्तु तत्समम् ।
रसस्य गन्धकस्यापि पलैकं कज्जली शुभा ॥
घृतेन मधुना खाद्यो रसो वह्निकुमारकः ।
यकृत्प्लीहोदरानाहं हन्ति गुल्मं हलीमकम् ॥
बलवर्णाग्निजननः कान्तिपुष्टिविवर्द्धनः ।
मासमेकं प्रकर्त्तव्यं युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥
श्रीमद्गहननाथेन रचितो विश्वसम्पदि ॥

गठौना, हींग, सुहागा, सेंधा नमक, धनिया, जीरा, अजवायन, काली मिर्च, सोंठ, लौंग, इलायची और बायबिडंग; इनका चूर्ण १।-१। तोला, लोहभस्म सबके बराबर तथा २॥-२॥ तोले शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे शहद और घीके साथ सेवन करनेसे यकृत, प्लीहा, उदररोग, अफारा, गुल्म और हलीमकका नाश होता तथा बल, वर्ण, अग्नि, कान्ति और पुष्टिकी वृद्धि होती है ।

मात्रा—१। माशा । आवश्यकतानुसार मात्रा में न्यूनाधिकता कर लेनी चाहिये ।

(६९७६) **वह्निचूडिकरसः**

(र. का. धे. । कुष्ठा.)

सूतमेकं त्रिधा गन्धं शुद्धत्र्यूषणचित्रकम् ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥
काकोदुम्बरिकाक्षीरैर्यामैकं मधुसंयुतम् ।
माषैकं किटिभं हन्ति रसोऽयं वह्निचूडिकः ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गन्धक ३ भाग और सोंठ, मिर्च, पीपल तथा चीतेका चूर्ण १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको १ पहर काकोदुम्बरिका (कठूमर) के दूधमें खरल करें ।

मात्रा—१ माशा ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे किटिभ कुष्ठ नष्ट होता है ।

वह्निरसः (महा)

प्र. सं. ५५७२ महावह्नि रसः (१), प्र. सं. ५५७३ महावह्नि रसः (२) तथा प्र. सं. ५५७४ महावह्नि रसः (३) देखिये ।

(६९७७) वह्निरसः

(वै. मृ. । विषय ५ ; र. रा. सु. । अजीर्णा. ; वृ. नि. र. । अजी.)

जातीजातं त्रिकर्षं मरिचमपि
पलं चार्द्धकर्षप्रमाणम्
गन्धं सूतं लवङ्गं विषमिद-
मखिलं चिञ्चिणीसस्यतोये ।
पिष्ट्वा माषैकमात्रा वितरति
दहनं वह्निमान्द्ये च सद्यो
रोगान् शूलानिलादीन् दहति
कृतगुणो वह्निनामा रसोयम् ॥

जावित्री और जायफल ३-३ कर्ष, काली मिर्च ४ कर्ष (५ तोले) तथा शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, लौंग, और शुद्ध बछनाग ७॥-७॥ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको इमलीके फलोंके पानीमें खरल करके १-१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे अग्निमांद्य, शूल और वातव्याधि-का नाश होता है ।

वह्निवीर्यो रसः

(र. र. । उदररोगा.)

प्र. सं. ५५७४ महा वह्निरसः (३) देखिये।

वह्निसूतरसः

(र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. २६२ अग्नि कुमाररसः (३) देखिये ।

(६९७८) वह्निसूतो रसः

(र. प्र. सु. । अ. ८)

भागौ द्वौ वरशङ्खकस्य
कथितौ दग्धा वराटास्तथा
गन्धस्यैव तु चार्धभाग-
सहितः सूतस्तथा योजितः ।
कृष्णाभागयुतं विचूर्ण्य
सकलं सद्वत्सनाभात्रयो
भागा निम्बुरसैर्विमर्द्य
सकलं संसेवितं चाग्निकृत् ॥

शंख भस्म २ भाग, कौड़ी भस्म २ भाग, शुद्ध गन्धक आधा भाग, शुद्ध पारद आधा भाग, पीपलका चूर्ण १ भाग, और शुद्ध बछनागका चूर्ण ३ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको नीबूके रसमें घोट कर (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे अग्नि दीप्त होती है ।

(६९७९) वाजीकरो वटकः

(र. र. रसा. खं. । उप. ६)

वानरीबीजचूर्णं तु त्वग्वर्ज्यं माषचूर्णकम् ।
नारिकेलोदकैर्भाव्यं यामान्ते पेषयेत्ततः ॥
विंशत्यंशेन पिष्टस्य मृतमभ्रं विमिश्रयेत् ।
तद्घृतैर्वटकं पक्त्वा मध्वाज्याभ्यां तु भक्षयेत् ॥
क्षीरं सितां चानु पिबेद्रामाणां रमते शतम् ॥

छिलके रहित कौंचके बीजोंका तथा छिलके रहित उड़दका चूर्ण समान भाग ले कर दोनोंको नारियलके पानीमें भिगो कर रख दें और १ पहर पश्चात् पीस कर उसमें उसका बीसवां भाग अभ्रक भस्म मिला कर ३-३ माशेके वटक बनावें और उन्हें घीमें तल लें।

इनमें शहद और घी मिला कर मिश्रीयुक्त दूधके साथ सेवन करनेसे कामशक्ति अत्यन्त प्रबल हो जाती है।

(६९८०) **वातकण्टकरसः**

(रसे. सा. सं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । वात.)

वज्रमृताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमुण्डं क्रमोत्तरम् ।
मरिचं मर्दयेदम्लवर्गेण दिवसत्रयम् ॥
द्विक्षारं पञ्चलवणं मर्दितं स्यात्समं समम् ।
ततो निर्गुण्डिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥
शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषञ्चास्याष्टमांशतः ।
टङ्कणं विषतुल्यांशं दत्त्वा तं जम्बीरद्रवैः ॥
भावयेद्दिनमेकन्तु रसोयं वातकण्टकः ।
दातव्यो वातरोगेषु सन्निपाते विशेषतः ॥
द्विगुञ्जामार्द्रकद्रावैर्घृतैर्वा वातरोगिणे ।
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु महिषाक्षञ्च गुग्गुलुम् ॥
समांशं मर्दयेदाज्ये तद्वटी कर्षसम्मिता ।
अनुयोज्यघृतैर्नित्यं स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत् ॥
मण्डलं नाशयेत्सर्वं वातरोगे विशेषतः ।
सन्निपाते पिबेच्चानु तालमूलीकषायकम् ॥

हीरा भस्म १ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, स्वर्ण भस्म ३ भाग, ताम्र भस्म ४ भाग, तीक्ष्ण लोह भस्म ५ भाग तथा मुण्ड लोह भस्म ६ भाग और काली मिर्चका चूर्ण सात भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर तीन दिन अम्ल वर्गके रसमें खरल करें और फिर उसमें समान-भाग-मिश्रित जवाखार, सज्जीखार और पांचों नमकका चूर्ण (८ भाग) मिला कर ३ दिन संभालुके रसमें घोटें। तदनन्तर जब वह सूख जाय तो उसमें उसका अष्टमांश शुद्ध बछनागका चूर्ण और उतना ही सुहागा मिला कर सबको १ दिन जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह रस वातव्याधि और सन्निपातको नष्ट करता है। इसे अदरकके रस अथवा घीके साथ सेवन करना चाहिये।

अनुपान—संभालुकी जड़का चूर्ण और शुद्ध भैंसिया गूगल समान भाग ले कर आवश्यकतानुसार घी मिला कर एकत्र कूटें और १।-१। तोलेकी गोलियां बना लें। औषध खानेके पश्चात् इनमेंसे एक एक गोली घीमें मिला कर देनी चाहिये। एवं स्निग्धोष्ण आहार कराना चाहिये। (व्य. मा.—३ माशे)

सन्निपातमें औषध खिलानेके पश्चात् मूसलीका क्राथ पिलाना चाहिये।

वातकफसङ्ग्रहणीहरलोहम्

(र. का. धे. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. ६४२७ लोहरसायनम् (६) देखिये।

× (६९८१) **वातकुलान्तकरसः**

(रसे. सा. सं. ; भै. र. ; र. चं. ; धन्व. । अपस्मारा.)

मृगनाभिशिला नागकेशरं कलिद्रुमजम् ।
पारदं गन्धकं जातीफलमेलालवङ्गकम् ॥

प्रत्येकं कार्षिकश्चैव श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत् ।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्य्याद्द्विरक्तिकाम् ॥
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः ।
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छारोगे च शस्यते ॥
वातजान्सर्वरोगांश्च हन्यादचिरसेवनात् ।
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्त्तते ॥
ब्रह्मणा निर्म्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥

कस्तूरी, शुद्ध मनसिल, नागकेसर, बहेड़ा, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, जायफल, इलायची और लौंग १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र मिला कर थोड़ा पानी डाल कर खरल करें और २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इसे यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे घोर अपस्मार, मूर्च्छा और अन्य वातज रोगोंका नाश होता है । अपस्मारके लिये इससे उत्तम कोई औषध नहीं है ।

वातगजसिंहो रसः (महा)

(र. रा. सु. । वातव्या.)

प्र. सं. ४२७४ पञ्चाननो रसः (२) देखिये।

र. रा. सु. में गुड़का अभाव है तथा भंगरेके रसकी भावना लिखी है ।

वातगजाङ्कुशरसः (१)
(वातारिरसः)

(धन्व. ; र. रा. सु. । वातव्या.)

प्र. सं. ५५७५ महा वातगजाङ्कुश रसः देखिये ।

(६९८२) वातगजाङ्कुशरसः (२)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. चं. । वाता. ; र. र. स. । उ. अ. २१ ; वृ. नि. र. ; धन्व. ; र. रा. सु. । वाता.)

मृतं सूतं मृतं लौहं ताप्यं गन्धकतालकम्[1] ।
पथ्या शृङ्गी विषं[2] व्योषमग्निमन्थश्च टङ्कणम् ॥
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः ।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ॥
कणाचूर्णयुतश्चैव जिङ्गीकाथं पिबेदनु ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजाङ्कुशः ॥
सप्ताहाद्गृध्रसीं हन्ति दारुणं सान्निपातिकम् ।
क्रोष्टुशीर्षकवातञ्चाप्यपबाहुकसंज्ञकम् ॥
मन्यास्तम्भऊरुस्तम्भं हनुस्तम्भं विनाशयेत् ।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितः परमोत्तमः ॥

पारद भस्म, लोह भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, हर्र, काकड़ासिंगी, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, अरनीकी जड़की छाल और सुहागा समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर मुण्डी और संभालुके रसमें १-१ दिन घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे साध्यासाध्य समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

यह रस दारुण सन्निपातज गृध्रसीको ७ दिनमें नष्ट कर देता है ।

इसके अतिरिक्त यह क्रोष्टुशीर्ष, अपबाहुक,

१ गन्धकं तारमाक्षिकमिति पाठान्तरम् ।

२ पथ्याभृङ्गीविषमितिपाठ भेदः ।

मन्यास्तम्भ, ऊरुस्तम्भ, हनुस्तम्भ और पक्षाघातादिमें भी अत्युत्तम गुणकारी है ।

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् पीपलका चूर्ण डाल कर जिङ्गिनीका क्वाथ पीना चाहिये ।

(६९८३) वातगजाङ्कुशरसः (३) (बृहद्)

(भै. र.; रसे. सा. सं. ; धन्व. ; र. रा. सु. । वातरोगा.)

सूताभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम् ।
स्वर्णं शुण्ठी बला धान्यं कट्फलश्चाभया विषम्॥
पथ्या शृङ्गी पिप्पली च मरिचं टङ्कणन्तथा ।
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्य मुण्डीनिर्गुण्डिजैर्द्रवैः ॥
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशान्तये ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु बृहद्वातगजाङ्कुशः ॥

शुद्ध पारद, अभ्रक भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, कान्त लोह भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध गन्धक, स्वर्ण भस्म, सोंठ, खरैटी, धनिया, कायफल, हर्र, शुद्ध बछनाग, हर्र, काकड़ासिंगी, पीपल, काली मिर्च और सुहागेकी खील समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको मुण्डी और संभालूके रसमें १-१ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(६९८४) वातगजेन्द्रसिंहः

(भै. र. । आम वाता.)

अभ्रं लोहं रसं गन्धं ताम्रं नागं सटङ्कणम् ।
विषं सिन्धुं लवङ्गञ्च हिङ्गु जातीफलं समम् ॥
तदर्द्धं त्रिसुगन्धश्च त्रैफलं जीरकं तथा ।
कन्यारसेन सम्पिष्य वटी कार्या द्विरक्तिका ॥
सेव्या पयोऽनुपानेन सदा प्रातः सुखान्वितैः ।
अशीतिं वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्॥
विंशतिं श्लैष्मिकान् रोगान् सेवनादेव नाशयेत्।
अभिघातेन ये क्षीणाः क्षीणाद्धवियवाश्च ये ॥
व्याधीक्षीणा वयःक्षीणाःस्त्रीक्षीणाश्चापि ये नराः।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा वह्निहीनाश्च मानवाः ॥
तेषां वृष्यश्च बल्यश्च वयःस्थापन एव च ।
खञ्जानां पंगुकुब्जानां क्षीणानां मांसवर्द्धनः ॥
अरोगी सुखमाप्नोति रोगी रोगाद्विमुच्यते ।
रसस्यास्य प्रसादेन नास्ति रोगाद् भयं क्वचित्॥
वातगजेन्द्रसिंहोऽयं रसो रोगविनाशकः ॥

अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म, सीसा भस्म, सुहागेकी खील, शुद्ध बछनाग, सेंधा नमक, लौंग, हींग और जायफल १-१ भाग तथा दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची, हर्र, बहेड़ा, आमला और जीरा आधा आधा भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर घृतकुमारीके रसमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें प्रातःकाल दूधके साथ सेवन करनेसे अस्सी प्रकारके वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग और २० प्रकारके कफज रोग नष्ट होते हैं ।

अभिघात, व्याधि अथवा स्त्री प्रसंग आदिसे क्षीण और क्षीणेन्द्रिय तथा निर्बलअवयव और नष्ट शुक्र पुरुष इसके सेवनसे स्वस्थ हो जाते हैं ।

यह रस वृष्य, बल वर्द्धक, अग्नि दीपक और वयःस्थापक है तथा खञ्जता, पङ्गुता, कुब्जता आदि रोगोंको नष्ट करता है।

इसके सेवनसे रोगी रोग मुक्त हो जाते हैं और स्वस्थ व्यक्तियोंका स्वास्थ्य स्थिर रहता है।

(६९८५) वातचिन्तामणिरसः (बृहद्)

(भै. र. ; धन्व. । वातव्या.)

भागत्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्यमभ्रकम्।
लौहात् पञ्च प्रवालश्च मौक्तिकं त्रयसम्मितम् ॥
भस्मसूतं सप्तकञ्च कन्यारसविमर्दितम्।
वल्लमात्रा वटी कार्या भिषग्भिः परियत्नतः ॥
यथाव्याध्यनुपानेन नाशयेद्रोगसङ्कुलम्।
वातरोगं पित्तकृतं निहन्ति नात्र चिन्तनम् ॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी कन्दर्पसमविक्रमः।
दृष्टः सिद्धफलश्चायं वातचिन्तामणिस्त्विह ॥

स्वर्ण भस्म ३ भाग, रौप्य भस्म और अभ्रक भस्म २-२ भाग, लोह भस्म ५ भाग, प्रवाल भस्म तथा मोती भस्म ३-३ भाग और पारद भस्म सात भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर घृतकुमारीके रसमें खरल करके ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे वातज और पित्तज रोग नष्ट होते हैं तथा वृद्ध पुरुष भी तरुणके समान हो जाता है।

यह सिद्ध फल अनुभूत प्रयोग है।

(६९८६) वातज्वरारि रसः

(र. का. धे । ज्वरा.)

गन्धकं दरदं सूतं खल्वे तुल्यं विमर्दयेत्।
भावयेदार्द्रकद्रावैः सप्तधा पिप्पलीजलैः ॥
मरिचस्य कषायेण विजयास्वरसेन च।
कृष्णधत्तूरनीरेण प्रत्येकं सप्तभावनाः ॥
पिप्पलीमधुना ह्येष रसो वातज्वरापहः।
वातज्वरारिनामायं प्रयुक्तो रससागरे ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल और शुद्ध पारद समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर अदरकके रस, पीपल तथा काली मिर्चके काथ, एवं भांग और काले धतूरेके स्वरसकी सात सात भावनाएं दे कर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इन्हें पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे वातज्वर नष्ट होता है।

वातनाशनो रसः

(र. रा. सु. ; धन्व. ; र. चं. ; रसे. सा. सं. । वातरोगा. ; यो. त. । त. ४० ; वृ. यो. त. । त. ९० ; शा. सं. । खं. २ अ. १२)

प्र. सं. ६९५१ वडवानल रसः (६) देखिये।

(६९८७) वातनाशिनी वटी

(र. चि. म. । स्त. ९)

दशटङ्कमिता ग्राह्या कुचिला मरिचानि च।
दशमांशानि कार्याणि वटिका माषसम्मिता ॥
कर्तव्या शोषिता दद्यात्प्रभाते वातरोगिणम्।
दण्डापतानकश्चैव पक्षाघातस्तथैव च ॥

**ऊरुस्तम्भो गृध्रसी च गलग्रहहनुग्रहौ ।
अपस्माराग्निमान्द्ये च गुटचा नश्येद्ध्रुवं गदः ॥**

शुद्ध कुचला १० भाग और काली मिर्चका चूर्ण १ भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके पानीकी सहायतासे उड़दके बराबर गोलियां बना लें ।

इन्हें प्रातःकाल सेवन करनेसे दण्डापतानक, पक्षाघात, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी, गलग्रह, हनुग्रह, अपस्मार और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

वातपित्तग्रहणीहरलोहम्

(र. का. धे. । ग्रहण्य.)

प्र सं. ६४२४ लोह रसायनम् (३) देखिये।

वातपित्तान्तकरसः

(रसे. सा. सं. ; र. चं. । ज्वरा.)

प्र. सं. ४४०८ पित्तान्तक रसः (२) देखिये ।

इसमें मुण्ड लोहकी जगह नागरमोथा लिखा है एवं भावना द्रव्योंमें शैवाल और पाठाके स्थान पर आमला तथा शतावरका रस लिखा है । शेष प्रयोग समान है ।

(६९८८) वातपित्तारि रसः

(र. र. ; र. चं. । वातरो. ; धन्व. । अम्लपित्ता.)

**मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिला तालं विषोषणम् ।
कुष्ठं नागबला पथ्या त्रिकण्टं च विदारिका ॥
एरण्डं मर्दयेत्तुल्यं द्रवैश्चाग्निपुनर्नवैः ।
निष्कमात्रां वटिं खादेद्वातपित्तहरा भवेत् ॥**

पारद भस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध मनसिल, शुद्ध हरताल, शुद्ध बछनाग, काली मिर्च, कूठ, नागबला, हर्र, गोखरु, विदारीकन्द और अरण्डमूल समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर चीते और पुनर्नवा (बिसखपरे) के रसमें खरल करके ५-५ माशेकी गोलियां बनावें ।

इनके सेवनसे वात पित्तज रोगोंका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—६ रत्ती ।)

(६९८९) वातमेहान्तकरसः

(र. चं. । प्रमेहा. ; र. प्र. सु. । अ. ८)

**सूतभस्म अपि वङ्गभस्मकं
मर्दितं हि दिवसं जया रसे ।
लेहितं च मधुना दिनत्रयं
वातमेहविकृतिं प्रणाशयेत् ॥**

पारद भस्म और वंग भस्म, समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर १ दिन जयाके रसमें खरल करें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे वातज प्रमेह ३ दिनमें ही नष्ट हो जाता है ।

(मात्रा—२ रत्ती ।)

(६९९०) वातरक्तान्तको रसः (१)

(भै. र. । वातरक्ता.; र. चं. ; रसें. सा. सं ; र. रा. सु. ; धन्व. ; र. र. । वातरक्ता.)

**पारदं गन्धकं लौहं घनं तालं मनःशिला ।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत् ॥**

विडङ्गं त्रिफलाव्योषमब्धिफेनं पुनर्नवा ।
देवदारुचित्रकश्च दार्वी श्वेतापराजिता ॥
चूर्णमेषां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र भावयेत् ।
त्रिफलाभृङ्गराजस्य रसेनैव त्रिधा त्रिधा ॥
सम्भाव्य भक्षयेत्पश्चान्माषमात्रं दिने दिने ।
कृत्वानुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥
माषमात्रं घृतैः कुर्यात् सर्ववातविकारनुत् ।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजं जयेत् ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्यासाध्यं निहन्त्ययम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध मनसिल, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध गूगल, बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, समुद्रफेन[1] पुनर्नवाकी जड़, देवदारु, चीता, दारुहल्दी और सफेद कोयल; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर त्रिफले और भंगरेके रसकी ३–३ भावना दें ।

मात्रा— १। माशा ।

अनुपान—नीमके पत्ते, नीमके फूल और नीमकी छाल समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । इसमेंसे १। माशा चूर्ण घीमें मिला कर उपरोक्त रस खानेके पश्चात् चाटना चाहिये ।

इसके सेवनसे अत्यन्त घोर, गम्भीर और सर्व दोषज असाध्य वातरक्तका भी नाश हो जाता है ।

---

[1] कई ग्रन्थोंमें समुद्रफेनके स्थान पर बाबची लिखी है ।

(६९९१) वातरक्तान्तको रसः (२)

(र. र. । वातरक्ता.)

लोहं फलत्रिकं चैव शाणमानं समाहरेत् ।
षट्शाणं बाकुचीबीजं यत्नतः परिकल्पयेत् ॥
त्रिवृच्चित्रकमूलञ्च शाणं शाणं समाहरेत् ।
शुण्ठीशाणत्रयं दद्याच्छाणैकं पिप्पलीं तथा ॥
तोलद्वयं गुडूच्याश्च तथा पौनर्नवं दलम् ।
तथा वासकवल्कश्च मुस्तं शाणद्वयं तथा ॥
शाणद्वयं घोषावती फलं दद्याद्भिषग्वरः ।
पिष्ट्वैकत्र जलं दत्त्वा शुष्कं भक्षयेत्प्रयत्नतः ॥
मासमेकं प्रयोगेण प्रातः काले दिने दिने ।
मधुना लेहपिष्टश्च वातरक्तं विनाशयेत् ॥
गम्भीरं द्वन्द्वजं चैव त्रिदोषजमथापि वा ।
नाशयेन्नात्र सन्देहः सर्वकुष्ठं तथैव च ॥
वातरक्तान्तको नामप्रयोगो मुनिसम्मतः ॥

लोह भस्म, हर्र, बहेड़ा और आमला ३॥–३॥ माशे; बाबचीके बीज २२॥ माशे; निसोत और चीतामूल ३॥–३॥ माशे; सोंठ ११। माशे, पीपल ३॥ माशे; गिलोय, पुनर्नवाके पत्ते और बासे (अडूसे) की छाल १५–१५ माशे; नागरमोथा ७॥ माशे और घोषावती (कड़वी तूंबी) का फल ७॥ माशे ले कर सबको एकत्र मिला कर पानीके साथ अच्छी तरह खरल करें और जब सूख जाय तो बारीक चूर्ण करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे प्रातःकाल शहदके साथ सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे एक दोषज, द्विदोषज और सन्निपातज गम्भीर वातरक्त तथा कुष्ठका नाश होता है।

(६९९२) **वातराक्षसरसः** (१)

(यो. र. ; र. रा. सु. । वात रोगा. ; वृ. यो. त. । × त. ९०)

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तं[1] चाभ्रकमेव च ।
ताम्रभस्मकृतं सम्यङ्मर्दयित्वा समांशकम् ॥
पुनर्नवागुडूच्यग्निसुरसात्र्यूषणं[2] तथा ।
एतेषां स्वरसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥
दत्त्वा लघुपुटं सम्यक्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं वातरोगे प्रयोजयेत् ॥
तत्तद्रोगानुपानेन द्विगुञ्जामात्रसेवनात् ।
ऊरुस्तम्भे वातरक्ते गात्रभङ्गे तथैव च ॥
आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च ।
पक्षाघातं कम्पवातं सर्वसन्धिगतं तथा ॥
सुप्तिवातं च शूलं च उन्मादं च विनाशयेत् ।
तत्तद्रोगानुपानेन वाताशीतिविनाशनः ॥

पारद भस्म, शुद्ध गन्धक, कान्त लोह भस्म, अभ्रक भस्म और ताम्र भस्म, समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर पुनर्नवा, गिलोय, चीता, तुलसी और त्रिकुटे (पाठान्तरके अनुसार बासे) के क्वाथ या स्वरस की ३-३ भावना दे कर गोला बनावें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके लघुपुटमें पकावें एवं स्वांगशीतल होने पर खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसके सेवनसे ऊरुस्तम्भ, वातरक्त, गात्रभङ्ग, आमवात, धनुर्वात, वातजनित शरीर पीड़ा, पक्षाघात, कम्पवात, सन्धि वायु, सुप्तिवात, शूल और उन्मादादि समस्त वातज रोगोंका नाश होता है।

(पाठान्तरके अनुसार इसमें १-१ भाग शुद्ध बछनाग और निरुत्थ स्वर्ण भस्म अधिक होनी चाहिये तथा कान्त लोह भस्म पारद योगसे निर्मित होनी चाहिये ।)

(६९९३) **वातराक्षसरसः** (२)

(वृ. यो. त. । त. ९०)

सूतभस्मकहिङ्गूलं वङ्गं च गगनं विषम् ।
ताम्रं टङ्कणकं कान्तं मर्दयेत्त्रिकटुद्रवैः ॥
पश्चात्कुमारिकातोयैर्वर्षाभूक्वाथभावितः ।
पक्षाघातं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं कटिग्रहम् ॥
सर्वानाक्षेपकादींश्च वातव्याधींश्च नाशयेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं सर्ववातनिकृन्तनः ॥

पारद भस्म, शुद्ध हिंगुल, वङ्ग भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध बछनाग, ताम्र भस्म, सुहागेकी खील और कान्त लोह भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर त्रिकुटेके क्वाथ, घृतकुमारीके रस और पुनर्नवाके क्वाथकी १-१ भावना दे कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे पक्षाघात, हनुस्तम्भ, मन्या-

× वृ. यो. त. में " सूतेन मारितं कान्तं शातकुम्भं निरुत्थकं " पाठ अधिक है ।

१. विषमिति पाठान्तरम् ।

२. " सुरसा चाटरूषकः " इति पाठभेदः

स्तम्भ, कटिग्रह और आक्षेपकादि समस्त वात व्याधियां नष्ट होती हैं।

(मात्रा—१-२ रत्ती।)

(६९९४) वातराजवटी (१)

(र. रा. सु. । वातव्या.)

सुशुद्धं पारदं गन्धं लोहं माक्षिकभस्मकम् ।
स्वर्णतारं ताम्रवङ्गं कान्तं तीक्ष्णन्तु तालकम् ॥
दरदं वत्सनाभं च चातुर्जातसचित्रकम् ।
त्रिकटु त्रिफला भार्ङ्गी ग्रन्थिकं गजपिप्पली ॥
कुष्ठं जातीद्वयं दारुपुष्करं चाम्लवेतसम् ।
सठी दारुहरिद्रे द्वे पद्मकं दाडिमं त्रिवृत् ॥
रास्ना दुरालभा छिन्ना दन्ती जैपालकं विषम् ।
कर्षमात्राणि सर्वाणि द्विपलं गिरिजं मतम् ॥
जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा सचव्यकम् ।
कङ्कोलमुशीरं च द्वौ क्षारौ लवणत्रयम् ॥
सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवत्सुखल्वे शोभने दिने ।
निर्गुण्डी वासकं भृङ्गं काकमाची सहार्द्रकम् ॥
तर्कारीसूरणद्रावैः ततोन्मत्तरसस्य च ।
भावना खलु दातव्या सप्त सप्त क्रमादिह ॥
ततः पर्णरसैर्भाव्यः वटिकां वल्लसम्मिताम् ।
छायाशुष्कं ततः कृत्वा ज्ञात्वा रोगबलाबलम् ॥
सुदिने शुभनक्षत्रे शिवं दुर्गां विभाकरम् ।
प्रणम्य योजयेत्सम्यक् यथारोगानुपानतः ॥
अशीतिं वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
विंशति श्लैष्मिकान् घोरान् श्वासं कासं भगन्दरम् ॥
कुष्ठं चोरःक्षतं शूलं ज्वरं पाण्डुं गलग्रहम् ।
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च गुल्मं सङ्ग्रहणीं तथा ॥
साध्यासाध्यान्निहन्त्याशु सत्यं श्रीशिवभाषितम् ।
वातराजवटी ह्येषा नन्दिना परिकीर्त्तिता ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोह भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, ताम्र भस्म, बंग भस्म; कान्त लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध बछनाग, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, इलायची, चीतामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, भरंगी, पीपलामूल, गजपीपल, कूठ, जावत्री, जायफल, देवदारु, पोखरमूल, अम्लबेत, कचूर, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, पद्माक, अनारदाना, निसोत, रास्ना, धमासा, गिलोय, दन्तीमूल, शुद्ध जमालगोटा और शुद्ध बछनाग १।-१। तोला तथा शुद्ध शिलाजीत १० तोले एवं जायफल, वंसलोचन, असगन्ध, चव्य, कंकोल, खस, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, संचल लवण और सामुद्र लवण १।-१। तोला ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य समस्त ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला कर संभालु, बासे (अडूसे), भंगरे, मकोय, अदरक, अरनी, सूरण (जिमीकंद), धतूरे और पानके रसकी सात सात भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

इन्हें यथोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे ८० प्रकारके वातज रोग, ४० प्रकारके पित्तज रोग, २० प्रकारके कफज रोग, श्वास, कास, भगन्दर, कुष्ठ, उरःक्षत, शूल, ज्वर, पाण्डु,

गलग्रह, प्रमेह, रक्तपित्त, गुल्म और संग्रहणीका नाश होता है ।

(६९९५) वातराजवटी (२)

(र. रा. सु. । वातव्या.)

पारदं गन्धकं शुद्धं चातुर्जातं कटुत्रयम् ।
जीरकं युगलं चन्द्रं पत्रं तालीसकेशरम् ॥
जातिफलं लवङ्गं च दीप्यकं वह्निवालुकम् ।
अमृता चन्दनं द्राक्षा मांसी चव्यं वरी वचा ॥
जातिकोशं विडं धान्यं त्रिफला तगरं वृषम् ।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं द्विपलं च हतायसम् ॥
शुद्धं नवाहिफेनन्तु पलमात्रं प्रकीर्तितम् ।
सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवत् मर्दयेत्खाखसद्रवैः ॥
यामद्वयं ततः कार्य्या वटिका वल्लसम्मिता ।
दद्याद्बलाबलं वीक्ष्य यथारोगानुपानकम् ॥
वातव्याधिमुरुस्तम्भं ज्वरं दाहमनिद्रताम् ।
प्रमेहं रक्तपित्तं च उरःक्षतमरोचकम् ॥
हन्ति सर्वानशेषेण तमः सूर्योदये यथा ।
अस्य प्रभावाद् मनुजो रमते रमणीशतम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, मिर्च, पीपल, सफेद और काला जीरा, कपूर, तेजपात, तालीसपत्र, नागकेसर, जायफल, लौंग, अजवायन, चीता, एलवालुक, गिलोय, सफेद चन्दन, द्राक्षा (मुनक्का), जटामांसी, चव्य, शतावर, बच, जावित्री, बिड लवण, धनियां, हर्र, बहेड़ा, आमला, तगर और बासामूलकी छाल ७॥-७॥ माशे, लोह भस्म १० तोले और शुद्ध नवीन अफीम ५ तोले ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर २ पहर पोस्तके डोढेके क्वाथमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इन्हें रोगीके बलाबलका विचार करके उचित मात्रामें उचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे वातव्याधि, उरुस्तम्भ, ज्वर, दाह, अनिद्रा, प्रमेह, रक्तपित्त, उरःक्षत और अरुचिका नाश होता है ।

(नोट—अफीमको पोस्तके डोढेके पानीमें घोल कर मिलाना चाहिये ।)

(६९९६) वातविध्वंसनरसः (१)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

रसं गन्धं विषं चैव ताम्रं लौहं समाक्षिकम् ।
एतत्सर्वं समं योज्यं विषं च द्विगुणं भवेत् ॥
जैपालं तालकं चैव रसेन सह योजयेत् ।
त्र्यूषणं च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
निर्गुण्डीसूरणद्रावैर्भानोश्च पयसस्तथा ।
तर्कारी भृङ्गराजश्च तथोन्मत्तरसस्य च ॥
भावना खलु दातव्या सप्त सप्त क्रमादितः ।
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्वितम् ॥
जानुजङ्घाकटिस्थूणपादगुल्फोष्ठशीर्षकम् ।
मन्यास्तम्भं हनुस्तम्भं त्रिकस्तम्भं च शुष्ककम्॥
जिह्वास्तम्भं बाहुभवं त्रिकस्तम्भं च पादजम् ।
अधोभागे च ये वाताः सर्वाङ्गे विचरन्ति ये ॥
सर्वान्वातान जयेदाशु दैन्यं नारायणो यथा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, लोह भस्म और स्वर्ण माक्षिक १-१ भाग, शुद्ध बछनाग २ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा और शुद्ध हरताल १-१ भाग एवं त्रिकुटेका चूर्ण सबके

बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधोंका चूर्ण मिला कर संभालु और सूरण (जिमीकन्द) के रस, आकके दूध तथा अरणीके क्काथ एवं भंगरे और धतूरेके रसकी ७-७ भावना दे कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—२ रत्ती ।

इसमें (१ माशा) काली मिर्चका चूर्ण मिला कर प्रातःकाल (शहदके साथ) सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे जानु, जंघा, कटि, पादगुल्फ, होठ और शिरोगत वात विकार, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, त्रिकस्तम्भ, गात्रशुष्कता, जिह्वास्तम्भ, बाहुस्तम्भ, पादस्तम्भ, अधः शरीरस्थ वायु और सर्वाङ्गगत वायु आदि समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं ।

(६९९७) वातविध्वंसनरसः (२)

(र. चं. ; यो. र. । वात रोगा. ; वृ. यो. त. । त. ९०)

रसं गन्धकं नागवङ्गं च लौहं
तथा ताम्रजं व्योम निश्चन्द्रकं च ।
कणा टङ्कणं त्र्यूषणं नागरं वै
पृथग्भागमेकं विमर्द्यैकयामम् ॥
ततो वत्सनाभं चतुःसार्धभागं
दृढं मर्दयेद्भावना व्योषजाभिः ।
वराचित्रकैर्मार्कवैः कुष्ठजैस्त्रि-
त्रिभिर्भावयेन्निर्गुण्डीभानुदुग्धैः॥
महाधात्रिजैश्चार्द्रकैर्निम्बुनीरैः
समं भावयेद्वातविध्वंसनोऽयम् ।
समीरे च शूले महाश्लेष्मरोगे
ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढ्ये ॥
स्त्रियः सूतिकावातरोगेषु दद्या-
न्निषेवेत गुञ्जाद्वयं सूतमेनम् ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, नाग भस्म, वंग भस्म, लौह भस्म, ताम्रभस्म, अभ्रक भस्म, पीपल, सुहागा, त्रिकुटा[१] (सोंठ, मिर्च, पीपल) और सोंठ १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको १ पहर खरल करें । तदनन्तर उसमें ४॥ भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण मिलाकर त्रिकुटेके क्काथ, त्रिफलेके क्काथ, चीतेके क्काथ, भंगरेके रस, कूठके क्काथ, संभालुके रस, आकके दूध[२], आमलेके रस[३], अदरकके रस[४] और नीबूके रसकी ३-३ भावना दे कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनां लें ।

इनके सेवनसे वातव्याधि, शूल, कफ रोग, ग्रहणी, सन्निपात, मूढवात और सूतिका रोगका नाश होता है ।

(६९९८) वातविध्वंसनरसः (३) (लघु)

(र. चं. । वातरोगा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

प्रक्षिप्य गन्धं रसतुल्यभागं
कलाप्रमाणं च विषं समस्तात् ।

पाठभेद

१ त्रिकुटेके स्थान पर काली मिर्च

२ अर्क दुग्धके स्थानमें अकरकरेका क्काथ ।

३ आमलेकी जगह मनोधात्री (हियावली) '

३ आमलेके स्थान पर भुई आमला ।

४ अदरकके स्थानमें हालो ।

कृशानुतोयेन च भावयित्वा
वल्लं ददीतास्य मरुत्प्रशान्त्यै ॥
अपस्मारे तथोन्मादे सर्वाङ्गव्यथनेऽपि च ।
देयोऽयं वल्लमात्रस्तु सर्ववातनिवृत्तये ॥

समान भाग शुद्ध पारे और गन्धककी कज्जली बना कर उसमें उसका सोलहवां भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर चीतेके काथमें घोट कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे अपस्मार, उन्माद, सर्वाङ्गव्यथा और अन्य वातज रोग नष्ट होते हैं।

(६९९९) **वातविध्वंसनरसः** (४)

(र. रा. सु.। वातरोगा.)

पारदष्टङ्कणो गन्धपाषाण-
भिद्वत्सनागो वराटस्तथा तालकः ।
त्र्यूषणं हेमनीरेण तन्मर्द-
येद्रक्तिकाभा वटी वातविध्वंसकः ॥
सन्निपातके मारुते कफे
शीतमान्द्यके श्वाससम्भवे ।
सङ्ग्रहाभिधे शूलजे गदे
कासंसंसृतौ योजयेत्सदा ॥

शुद्ध पारद, सुहागेकी खील, शुद्ध गन्धक, पखानभेद, शुद्ध बछनाग, कौड़ी भस्म, शुद्ध हरताल और त्रिकुटेका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर धतूरेके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।

इनके सेवनसे सन्निपात, वायु कफ, शीत, अग्निमांद्य, श्वास, संग्रहणी, शूल और कासका नाश होता है।

(७०००) **वातविध्वंसनरसः** (५)

(रसे. सा. सं. ; र. चं. ; धन्व. ; र. रा. सु.। वातरोगा.)

सूतमभ्रकसत्त्वञ्च कांस्यं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।
गन्धकन्तालकं सर्वं भागोत्तरविवर्द्धितम् ॥
कज्जलीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम् ।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥
निम्बुद्रवेण सम्पीड्य तिलकल्केन लेपयेत् ।
अर्द्धाङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः ।
जठरस्य रुजः सर्व्वास्तथा च मलविग्रहम् ॥
आध्मानकन्तथानाहं विसूचीं वह्निमांद्यकम् ।
आमदोषमशेषञ्च गुल्मं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च क्रिमिरोगं विशेषतः ।
हन्यात्सर्व्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भन्तथैव च ॥
ज्वरे चैवातिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे ।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन्भिषग्वरैः ।
श्रीमता नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः ॥

शुद्ध पारद १ भाग,[1] अभ्रक सत्वकी भस्म २ भाग, कांसी भस्म ३ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म ४ भाग, शुद्ध गन्धक ५ भाग और शुद्ध हरताल ६ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें। जब कज्जली हो जाय तो उसे सात दिन अरण्डीके तेलमें खरल करके गोला बनावें और उसे सुखा कर उसके ऊपर नीबूके रसमें पिसे

---

१ कई ग्रन्थोंमें पारदका अभाव है। उस दशामें अभ्रकादि ओषधियां क्रमशः १, २, ३, ४, ५ भाग ली जानी चाहियें

हुवे तिलोंका आध अंगुल मोटा लेप करके सुखा लें; एवं (उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके) १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। तदनन्तर जब वह स्वांग शीतल हो जाय तो निकाल कर पीस लें और सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे उदर पीड़ा, मलावरोध, अफारा, विसूचिका, अग्निमांध, आमदोष, गुल्म, दुर्जय छर्दि, संग्रहणी, श्वास, कास, कृमि रोग, सर्वांग-शूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार और त्रिदोषज शूलका नाश होता है।

इस पर पथ्य, रोगोचित देना चाहिये।

(७००१) **वातविध्वंसनरसः** (६)

(र. र. स. । उ. अ. २१)

मृतमभ्रकसत्वं च कांस्यं शुल्वं हि माक्षिकम्।
गन्धकं तालकं सूतं भागोत्तरविवर्धितम्॥
तत्सर्वं कज्जलीकृत्य वातारिस्नेहसंयुतम्।
मर्दयेत्सप्तदिवसं गोलीकृत्य तु यत्नतः॥
निम्बुद्रावेण सम्पिष्टतालकल्केन लेपयेत्।
अर्द्धाङ्गुलदलं चैव परिशोष्य प्रयत्नतः॥
प्रपचेद्वालुकायन्त्रे यामानां द्वादशावधि।
पटचूर्णं विधायैतद्भावयेत्तदनन्तरम्॥
पञ्चकोलकचित्राङ्घ्रिवरुणादिकषायतः।
दशमूलकषायेण शृङ्गवेररसेन च॥
रक्तामृतं कलांशेन दत्त्वा निष्पिष्य यत्नतः।
स्थूलकोलास्थितुलितां छायाशुष्कां वटीं किरेत्॥
तत्तद्रोगहरैर्द्रव्यैर्नृणां देया सदा हिता।
हन्यादशीतिधा भिन्नान्वातजातान्महागदान्॥
गुल्मानष्टविधांश्चापि शूलानष्टविधानपि।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलनिग्रहम्॥
आध्मानकमथानाहं विषूचीं मन्दवह्निताम्।
आमदोषानशेषांश्च गुल्मं छर्दिं च दुर्धराम्॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च कृमिरोगमशेषतः।
हन्यात्सर्वाङ्गसदनं मन्यास्तम्भं च वाजिनाम्॥
ज्वरे चैवाऽतिसारे च मूलरोगे त्रिदोषजे।
पथ्यं रोगानुरूपेण दापनीयं भिषग्वरैः॥
श्रीमता नन्दिना प्रोक्तो वातविध्वंसनो रसः।
क्षुधार्थिभिः सदा सेव्यः सर्वाहारपरैर्नरैः॥

अभ्रकसत्वकी भस्म १ भाग, कांसी भस्म २ भाग, ताम्र भस्म ३ भाग, स्वर्ण माक्षिक भस्म ४ भाग, शुद्ध गन्धक ५ भाग, शुद्ध हरताल ६ भाग और शुद्ध पारद सात भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें और जब कज्जली हो जाय तो उसे ७ दिन तक अरण्डीके तेलमें खरल करें। तदनन्तर उसका गोला बना कर सुखा लें और उस पर नीबूके रसमें पिसी हुई शुद्ध हरतालका आध अंगुल ऊंचा लेप करके पुनः सुखावें। जब गोला अच्छी तरह सूख जाय तो उसे (शराव-सम्पुटमें बन्द करके) १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। तत्पश्चात् उसके स्वांगशीतल होने पर औषधको निकाल कर खरल करें और उसे पंच-कोल (पीपल, पीपलामूल, चव, चीता, सोंठ), चीतामूल, वरुणादिगण और दशमूलके क्वाथ तथा अदरकके रसकी १-१ भावना दे कर उसमें उसका सोलहवां भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करके बड़े बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना कर छायामें सुखा लें।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।)

इसे रोगोचित अनुपानके साथ सेवन करनेसे समस्त वातव्याधियां, ८ प्रकारका गुल्म, ८ प्रकारका शूल, जठरपीड़ा, मलावरोध, अफारा, विसूचिका, अग्निमांद्य, आमदोष, दुर्जय छर्दि, ग्रहणी, श्वास, कास, सर्वांग पीड़ा, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार और त्रिदोषज अर्शका नाश होता है।

इस पर रोगोचित पथ्य देना चाहिये।

(७००२) **वातारि रसः** (१)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

भागैकं च विषं चैव द्विभागं टङ्कणं तथा।
चतुर्भागं च मरिचं सहैकत्र प्रयोजयेत्॥
आर्द्रकस्य रसैर्मर्द्य वल्लमेकं प्रमाणतः।
मरिचैश्च समायुक्तं सर्ववातनिकृन्तनम्॥

शुद्ध बछनाग १ भाग, सुहागेकी खील २ भाग और काली मिर्चका चूर्ण ४ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर अदरकके रसमें खरल करके ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें काली मिर्चके चूर्णके साथ सेवन करनेसे समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं।

(७००३) **वातारि रसः** (२)

(वृ. नि. र. । वातव्या.)

रसभस्म च भागैकं गन्धको द्विगुणो भवेत्।
त्रिगुणं च विषं ग्राह्यं कणा चैव चतुर्गुणा॥
वृत्ता त्रयं तथा प्रोक्तं सर्वमेकत्र कारयेत्।
गुञ्जा मात्रा प्रदातव्या सर्ववातविकारिणाम्॥

पारद भस्म १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध बछनाग ३ भाग, पीपलका चूर्ण ४ भाग और रेणुकाका चूर्ण ३ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसके सेवनसे समस्त वातज विकार नष्ट होते हैं।

(७००४) **वातारि रसः** (३)

(र. चि. । स्त. ८)

उपायैः पूर्वमाख्यातैर्यन्त्रैर्डमरुकादिभिः।
येन केनाप्युपायेन भस्मीकुर्याच्च पारदम्॥
भस्मनो दशगद्याणा दशैव नवसादरात्।
पञ्च तुर्याः स्फटक्याश्च वत्सनाभविषद्वयम्॥
मरिचस्य च गद्याणौ मर्दयेत्खल्वके दृढम्।
विधिना जायतेऽनेन रसो वातारि सञ्ज्ञकः॥
रक्तिकास्य प्रदातव्या श्लेष्मवातादिरोगिषु।
अष्टादशप्रमेहेषु प्लीहगुल्मोदरेषु च॥
आमवाते च मन्दाग्नौ गुल्मयोर्वातरक्तयोः।
बाह्याभ्यन्तरमूलेषु समस्तेषु ज्वरेषु च॥
शूलेऽप्यजीर्णे शोथे च देयो वातारिसञ्ज्ञकः।
तैलक्षाराम्लवर्ज्यं च भोज्यं मधुरभोजनम्॥
दिनाष्टकं घृतं स्तोकं भोजने ग्राह्यमुत्तमम्।
रोगाः सर्वे विलीयन्ते मासैकेन न संशयः॥

पारद भस्म १० गद्याण, नौसादर १० गद्याण, फिटकी ५ गद्याण, शुद्ध बछनाग २ गद्याण और काली मिर्चका चूर्ण २ गद्याण ले कर सबको एकत्र खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ रत्ती।

इसके सेवनसे कफ वातज रोग, १८ प्रकारके प्रमेह, प्लीहा, गुल्म, उदर रोग, आमवात, अग्नि-

मांद्य, गुल्म, वातरक्त, ज्वर, शूल, अजीर्ण और शोथका नाश होता है।

इसके प्रयोग कालमें तेल, क्षार और अम्ल पदार्थोंसे परहेज़ करना तथा मधुर रस युक्त भोजन करना चाहिये। प्रारम्भके ८ दिनोंमें घी थोड़ा खाना चाहिये।

इसे १ मास तक सेवन करनेसे समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

(७००५) वातारि रसः (४)

(र. र. स. । उ. १८, २१ ; धन्व. ; वृ. नि. र. ; वै. र. । वातव्या. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । वातव्या. ; भै. र. । वृद्धिरोगा.)

रसभागो भवेदेको द्विगुणो गन्धको मतः।
त्रिभागा त्रिफला ग्राह्या चतुर्भागश्च चित्रकः॥
गुग्गुलुः पञ्चभागः स्यादेरण्डस्नेहमर्दितः।
क्षिप्त्वात्र पूर्वकं चूर्णं पुनस्तेनैव मर्दयेत्॥
गुटिकां कर्षमात्रां तु भक्षयेत्प्रातरेव हि।
नागरैरण्डमूलानां क्वाथं तदनुपाययेत्॥
अभ्यज्यैरण्डतैलेन स्वेदयेत्पृष्ठदेशकम्।
विरेके तेन सञ्जाते स्निग्धमुष्णं च भोजयेत्॥
वातारि सञ्ज्ञको ह्येष रसो निर्वातसेवितः।
मासेन सुखयत्येव ब्रह्मचर्यपुरः सरः॥

५ भाग शुद्ध गूगलको अरण्डीके तेलमें घोट कर पतला करें और फिर उसमें १ भाग पारद और २ भाग गन्धककी कज्जली, ३ भाग त्रिफले-का चूर्ण और ४ भाग चीतेका चूर्ण मिला कर अच्छी तरह खरल करके १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२ माशे।)

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये और औषध खानेके पश्चात् सोंठ तथा अरण्डमूलका काथ पीना; शरीर पर अण्डीके तेलकी मालिश करके पीठ पर सेक करनी एवं निर्वात स्थानमें रहना चाहिये।

जब इससे विरेचन हो जाय तो स्निग्धोष्ण भोजन करना चाहिये।

इसे १ मास तक ब्रह्मचर्यव्रत पालन करते हुवे सेवन करनेसे अन्त्रवृद्धि नष्ट होती है।

(७००६) वातारि रसः (५)

(र. का. धे. । वातव्या.)

दिनत्रयं गन्धसमं रसेन्द्रं
विमर्दयेच्छ्वेतवसुद्रवेण।
ताम्रस्य चक्रेण निरुध्य वह्निं
दद्याद्वरीभृङ्गरसैर्विमर्द्य॥
कटुत्रयेणानु पिबेच्च माषं
वातारिनामेति मरुत्प्रशान्त्यै॥

समान भाग शुद्ध पारद और गंधककी कज्जली बना कर उसे ३ दिन सफेद आकके रसमें खरल करें और फिर गोला बना कर उसे ताम्रसम्पुटमें बन्द करके (भूधर पुटमें) पकावें। तदनन्तर शतावर और भंगरेके रसकी १-१ भावना देकर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१ माशा।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती।)

इसे त्रिकुटेके चूर्णमें मिला कर सेवन करनेसे वातव्याधिका नाश होता है।

(७००७) वातारि रसः (६)

(र. रा. सु. । अतीसारा.)

वात गजाङ्कुश रसः प्र. सं. ६९८२ देखिये।

इसमें हरताल और त्रिकुटा नहीं है तथा भावनाद्रव्योंमें मुण्डीकी जगह शुण्ठी पाठ है। शेष प्रयोग समान है।

वातारि रसः (७)

(र. का. धे. । वातव्या. ; र. मं. ; वृ. नि. र.)

वातनाशनो रसः देखिये।

(७००८) वान्तिहृद्रसः

(र. चं. ; यो. र. ; र. का. धे. । छर्दि.)

अयः शङ्खो बलिः सूतः खल्वे तुल्यं विमर्दयेत्।
कन्याकनकचाङ्गेरीरसैर्गोलं विधाय च ॥
सप्तमृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पुटितो वान्तिहृद्रसः।
द्विवल्लः कृमिरोगेऽपि साजमोदः सवेल्लकः॥
वान्तिहारेण मुनिना प्रोक्तोऽयं मधुना युतः।
पिप्पलक्षारपानीयं पाययेद्वान्तिहृद्भिषक् ॥

लोह भस्म, शंख भस्म, शुद्ध गंधक और शुद्ध पारद समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे घृतकुमारी, धतूरा, तथा चांगेरीके रसकी १-१ भावना दे कर गोला बनावें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके, उस पर सात कपरमिट्टी करके (भूधरपुटमें) पकावें।

मात्रा—४ रत्ती।

इसे अजमोद और बायबिड़ंगके चूर्णमें मिला-कर शहदके साथ सेवन करनेसे कृमि रोग (और उसके कारण होने वाली वमन) का नाश होता है।

वमनमें पीपलकी छालको जलाकर, पानीमें बुझाकर वह पानी पिलाना चाहिये।

(७००९) वारितांडवरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । भगन्दरा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम्।
त्र्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥
द्वयोः समं ताम्रपत्रं हण्डिकान्तर्निवेशयेत्।
तद्भाण्डं भस्मनापूर्य्य चुल्ल्यां तीव्राग्निना पचेत्॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत्स्वाङ्गशीतलम्।
जम्बीरस्य रसैः पिष्ट्वा रुद्ध्वा सप्तपुटे पचेत् ॥
गुञ्जैकं मधुनाज्येन लेह्याद्धन्ति भगन्दरम्।
मूसली लवणश्चानु आरनालयुतं पिबेत् ॥
भुञ्जीत मधुराहारं दिवास्वप्नश्च मैथुनम्।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेस्मिन्वारिताण्डवे ॥

शुद्ध पारद १ भाग और शुद्ध गंधक २ भाग ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसे ३ दिन तक घृतकुमारीके रसमें खरल करके ३ भाग शुद्ध ताम्र पत्रों पर लेप कर दें एवं उन्हें कपरमिट्टी की हुई हाण्डीमें रख कर, उन पर शराव ढक दें और सन्धिको गुड़चूनेके मिश्रण आदिसे बन्द करके हाण्डीके शेष भागको राखसे भर दें। तदनन्तर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर २ पहर तीव्राग्नि पर पकावें और फिर उसके स्वांगशीतल होने पर ताम्र पत्रोंको निकाल कर जम्बीरी नीबूके रसमें घोटकर यथा विधि गजपुटमें पकावें। इसी प्रकार जम्बीरी नीबूके रसमें घोट घोट कर सात पुट दें।

मात्रा—१ रत्ती। यह भगन्दरको नष्ट करता है।

इसे शहद और घीमें मिला कर सेवन करना तथा औषध खानेके पश्चात् मूसली और सेंधानमकका चूर्ण कांजीमें मिला कर पीना चाहिये ।

इस पर मधुर रस युक्त आहार करना और दिवानिद्रा, मैथुन तथा शीतल आहारसे परहेज़ करना चाहिये ।

(७०१०) वारिभक्तवटिका

(र. र. । अग्निमान्द्या.)

रसगन्धकमभ्रञ्च गुडूचीसत्वमेव च ।
विडङ्गं मरिचं चैव सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
आर्द्रकस्य रसेनापि गुटिकां कारयेद्बुधः ।
भक्षयेन्माससमात्रन्तु अम्लतोयानुपानतः ॥
अग्निश्च कुरुते दीप्तं सामाजीर्णं प्रणाशनम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म, गिलोयका सत, बायबिडंगका चूर्ण और काली मिर्चका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर, अदरकके रसमें घोट कर १–१ माशेकी गोलियां बना लें ।

इन्हें कांजीके साथ सेवन करनेसे आमाजीर्णका नाश होता और अग्नि दीप्त होती है ।

(व्यवहारिक मात्रा––४ रत्ती ।)

(७०११) वारिसागरो रसः

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. रा. सु. ; र. का. धे. ; धन्व. ; र. र. । ज्वरा.)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं चतुर्भागं मृताभ्रकम् ।
निर्गुण्डी काकमाची च धत्तूरार्द्रकचित्रकैः ॥
गिरीकर्णी जयन्ती च तिलपर्णी च भृङ्गजैः ।
दण्डोत्पलं शिग्रुदन्ती कदम्बं केशराजकः ॥
जयाकृष्णा महाराष्ट्री एभिर्मर्द्यं क्रमाद्द्रवैः ।
प्रतियामं तु तच्छुष्कं कटुतैलेन लोलयेत् ॥
शरावसम्पुटे रुध्वा वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
यामैकेन समुद्धृत्य चूर्णितं तं त्रिगुञ्जकम् ॥
त्र्यूषणं पञ्चलवणं क्षारत्रीणि द्विजीरकं ।
वचार्द्रकयवानी च समभागं तु चूर्णयेत् ॥
अनुपानं चतुर्माषं सन्निपातहरं हितम् ।
माहिषं दधिसंयुक्तं पथ्यं स्याद्रसवीर्यकृत् ॥
साध्यासाध्ये प्रयोक्तव्यो रसोयं वारिसागरः ॥

१ भाग शुद्ध पारद, २ भाग शुद्ध गंधक और ४ भाग अभ्रक भस्मकी कज्जली बना कर उसे १–१ पहर संभालु, मकोय, धतूरा, अदरक, चीता, कोयल, जयन्ती, चन्दन, भंगरा, दण्डोत्पल (सहदेवी), सहंजनेकी छाल, दन्तीमूल, कदम्बके पुष्प, काला भंगरा, अरणी, पीपल और महाराष्ट्री (जल पीपल) के रसमें पृथक् पृथक् खरल करें तथा सूख जाने पर सरसोंके तेलमें उसकी लुगदीसी बना कर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके १ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें और उसके स्वांग शीतल होने पर चूर्ण करके रक्खें ।

मात्रा––३ रत्ती ।

अनुपान—सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधा नमक, संचल नमक, विड लवण, सामुद्र लवण और काच लवण, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, जीरा, काला जीरा, बच, अदरक और अजवायन समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । औषध खानेके पश्चात् ४ माशे यह चूर्ण खाना चाहिये ।

इसके सेवनसे असाध्य सन्निपात भी नष्ट हो जाता है।

इस पर दही युक्त पथ्य देना चाहिये। ×

(७०१२) वासावलेहः (वृहद्)

(भै. र. । रा. य.)

पञ्चविंशत्पलं ग्राह्यं वृहत्योर्वासकस्य च।
भार्ग्याश्च पञ्चविंशच्च जलद्रोणे विपाचयेत्॥
पादशेषे रसे तस्मिन् खण्डप्रस्थं समावपेत्।
कुडवार्द्धश्च हविषो मधुनः कुडवं तथा॥
सूताभ्रकं पलश्चैकं कणाचूर्णं चतुष्पलम्।
कुष्ठं तालीशपत्रश्च मरिचं तेजपत्रकं॥
मुरामांसीमुशीरश्च लवङ्गं नागकेशरम्।
त्वग्भार्गीबालकं मुस्तं प्रत्येकं कर्षसम्मितम्॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं लेहाभूते विनिक्षिपेत्।
हन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं कासं पञ्चविधं तथा॥
रक्तपित्तं क्षयं श्वासं ज्वरं प्लीहानमेव च।
बालानामपि वृद्धानां तरुणानां विशेषतः॥
पार्श्वशूलश्च हृच्छूलमम्लपित्तं वमिं तथा।
वृहद्वासावलेहोऽयं महादेवेन निर्मितः॥

छोटी और बड़ी कटेली तथा बासा और भरंगी २५-२५ पल (प्रत्येक १२५ तोले) ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उसमें १ सेर मिसरी और २० तोले घी मिला कर पुनः पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें अभ्रक भस्म ५ तोले, पीपलका चूर्ण २० तोले, तथा कूठ, तालीस पत्र, काली मिर्च, तेजपात, मुरामांसी, खस, लौंग, नागकेसर, दालचीनी, भरंगी, सुगन्धबाला और नागरमोथा; इनका चूर्ण १।-१। तोला मिलावें एवं ठंडा हो जाने पर ४० तोले शहद मिला कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे उग्र राजयक्ष्मा, पांच प्रकारकी खांसी, रक्तपित्त, क्षय, श्वास, ज्वर, प्लीहा, पार्श्वशूल, हृच्छूल, अम्लपित्त और वमनका नाश होता है।

यह वृद्धों तथा बालकोंके लिये और विशेषतः युवकोंके लि हितकारी है।

(मात्रा--२-२॥ तोले।)

(७०१३) वासासूतरसः

(यो. र. । रक्तपित्ता. ; वृ. यो. त. । त. ७५)

आटरूषनवपल्लवद्रवे
पालिके सरसभस्मवल्लकम्।

× पाठान्तरके अनुसार.

(१) अभ्रक भस्म १ भाग लेनी चाहिये।

(२) भावनाद्रव्योंमें दण्डोत्पलाका अभाव है।

(३) अनुपानमें तीनों क्षारोंकी जगह १ भाग शणपुष्पी है तथा चीतेका अभाव है।

धन्वन्तरि तथा र. र. के अनुसार.

(१) अभ्रक, गंधक और पारद समान भाग हैं

(२) भावना द्रव्योंमें दन्ती, कदम्ब, नागकेसर और जयाके स्थानमें जातीकन्द, भंगरा और पीपलामूल लिखी है तथा पीपलका अभाव है.

(३) शराव संपुटमें बन्द करनेसे पहिले कटु तैलमें घोटनेके लिये नहीं लिखा।

कर्षसम्मितं मधुप्रयोजितं
प्राश्य नाशयति रक्तपित्तकम् ॥

२ रत्ती पारद भस्ममें ५ तोले बासेके कोमल पत्तोंका स्वरस और १। तोला शहद मिला कर सेवन करनेसे रक्तपित नष्ट होता है।

(७०१४) **वासुकिभूषणो रसः**

(भै र. । प्लीहयकृद्रो.)

सूतेन वङ्गन्तु समं नियोज्य
तत्तुल्यशुल्बेन च गन्धकेन ।
विमर्दयेदर्करसेन यामं
मृदा च संलिप्य पुटं ददीत ॥
वासारसैस्तं परिभावयेच्च
रसो भवेद्वासुकिभूषणोऽयम् ।
प्लीहश्च गुल्मस्य च शान्तयेऽस्य
गुञ्जाश्च दद्याद् वसुचूर्णयुक्तम् ॥

शुद्ध पारद, वंग भस्म, ताम्र भस्म और शुद्ध गंधक समान भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे १ पहर आकके रसमें घोट कर शरावसम्पुट-में बन्द करके लघुपुटमें पकावें। तदनन्तर उसे वासे (अडूसे) के रसकी एक भावना दे कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

इसे (२–३ रत्ती) सफेद आककी जड़की छालके चूर्णके साथ सेवन करनेसे प्लीहा और गुल्मका नाश होता है।

(७०१५) **विकरालवक्त्रभैरवरसः** (१)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसगन्धौ रविक्षीरैस्तिथिवारान्विभावयेत् ।
यामद्वादशकं वह्निर्वालुकायन्त्रतो पचेत् ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य वज्रीक्षीरेण भावयेत् ।
दद्यात्पूर्ववदग्निं च ततश्च तिथिभावनाः ॥
भावनाः स्युश्च कम्पिल्लबीजतैलेन चानलः ।
यामषोडशकं सोऽयं विकरालास्यभैरवः ॥

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर कज्जली बनावें और उसे १५ दिन आकके दूधमें खरल करके आतशी शीशीमें भर कर १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। तदनन्तर यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर १५ दिन थूहर (सेंड-सेहुंड) के दूधमें खरल करके १२ पहर बालुका यन्त्रमें पकावें। इसके पश्चात् उसे १५ दिन कमीलेके बीजोंके तेलमें खरल करके पूर्ववत् १६ पहरकी अग्नि दें और स्वांगशीतल होने पर निकाल कर रख लें।

(इसके सेवनसे ज्वर नष्ट होता है।
मात्रा—१ रत्ती।)

(७०१६) **विकरालवक्त्रभैरवरसः** (२)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

ऋतुभागं सोममलं तालं दिनमितं तथा ।
कन्याद्भिः पञ्चदश च भावनाश्छिक्किकाद्रवैः ॥
अश्वत्थत्वचमध्यस्थं षड्यामं दाहयेत्ततः ।
अरण्योपलकैः शीतमश्वगन्धाम्बुयोजितः ॥
भावयित्वा रसैस्तत्तु तालं कुष्ठहरं भवेत् ।
नित्योदितो रसः सोऽत्र रसराजीमितं भवेत् ॥

शुद्ध सोमल (संखिया) ६ भाग और शुद्ध हरताल ७ भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके घृतकुमारी और नकछिकनीके रसकी पृथक् पृथक्

१५-१५ भावना दे कर टिकिया बना लें और उन्हें सुखा कर पीपलकी छालके चूर्णमें रख कर शरावसम्पुटमें बन्द करके ६ पहर अरने उपलोंकी अग्निमें पकावें और फिर असगन्धके रसमें खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ राईके बराबर ।

इसके सेवनसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(७०१७) विक्रमकेशरी रसः

(भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

शुल्वमेकं द्विधा तारं मर्दयेद् विधिवद्भिषक् ।
पश्चाद्विषं रसं गन्धं मेलयित्वा तु भावयेत् ॥
एकविंशतिवारांश्च लिम्पाकवल्कलद्रवैः ।
रसः सिद्धः प्रदातव्यो गुञ्जामात्रो ज्वरान्तकृत् ॥
सर्वज्वरहरः ख्यातो रसो विक्रमकेशरी ॥

१ भाग ताम्र भस्म और २ भाग चांदी भस्म ले कर दोनोंको एकत्र खरल करें और फिर उसमें १-१ भाग शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक और शुद्ध बछनाग का चूर्ण मिला कर अच्छी तरह घोट कर कज्जली बनावें एवं जम्बीरी नीबूकी छालके रसकी २१ भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

(७०१८) विजयपर्पटी (१)

(भै. र. ; र. चं. । ग्रहण्य.)

रसं वज्रं हेम तारं मौक्तिकं ताम्रमभ्रकम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन कुर्याद्विजयपर्पटीम् ॥

दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ।
आमशूलमतीसारं चिरोत्थमतिदारुणम् ॥
प्रवाहिकां षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ।
शोथश्च कामलां पाण्डुं प्लीहगुल्मजलोदरम् ॥
पक्तिशूलमम्लपित्तं वातरक्तं वमिं भ्रमिम् ।
अष्टादशविधान् कुष्ठान् प्रमेहान् विषमज्वरान् ॥
चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन् वपुषा निर्मलः सुधीः ॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान वलीपलितवर्जितः ।
प्रातःकरोति नियतं सततं द्विगुजां
यस्तां स विन्दति तुलां कुसुमायुधस्य ॥
आयुश्च दीर्घमनघं वपुषः स्थिरत्वं
हानिं वलीपलितयोरतुलं बलञ्च ।
जराव्याधिसमाकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः ॥
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणः सुधाम् ॥

शुद्ध पारद, हीरा भस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, मोती भस्म, ताम्र भस्म और अभ्रक भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध गंधक ७ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके यथा विधि पर्पटी बनावें ।

इसके सेवनसे कष्ट साध्य बहुत वर्षोंकी पुरानी संग्रहणी, भयंकर पुराना आमशूल, अतिसार, प्रवाहिका, ६ प्रकारकी अर्श, उपद्रवयुक्त राजयक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त, वातरक्त, वमन, भ्रम, १८ प्रकारके कुष्ठ, प्रमेह, विषम ज्वर, ४ प्रकारका अजीर्ण, अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता है ।

यदि इसे वृद्ध पुरुष भी सेवन करे तो वह भी बलि पलित-रहित और बुद्धिमान हो कर १०० वर्षकी आयु प्राप्त करता है।

इसे २ रत्ती मात्रानुसार प्रातःकाल सेवन करनेसे काम शक्तिकी अत्यन्त वृद्धि होती और शरीर दृढ़ तथा बलवान हो कर १०० वर्षकी बलिपलित रहित आयु प्राप्त होती है।

(७०१९) **विजयपर्पटी** (२)

(भै. र. ; र. रा. सु. । ग्रहण्य.)

गन्धकं क्षुद्रितं कृत्वा भाव्यं भृङ्गरसेन तु ।
सप्तधा वा त्रिधा वापि पश्चाच्छुष्कं विचूर्णयेत् ॥
चूर्णयित्वायसे पात्रे कृत्वा वह्निगतं सुधीः ।
द्रुतं भृङ्गरसे क्षिप्तं ततः उद्धृत्य शोषयेत् ॥
तच्च गन्धं पलञ्चैकं गन्धार्द्धं शुद्धपारदम् ।
सूतार्द्धं भस्मरौप्यञ्च तदर्द्धं स्वर्णभस्मकम् ॥
तदर्द्धं मृतवैक्रान्तं मौक्तिकञ्च विनिक्षिपेत् ।
एकीकृत्य ततः सर्वं कुर्यात् पर्पटिकां शुभाम् ॥
लौहपात्रे समरसं मर्दितं कज्जलीकृतम् ।
बदराङ्गारवह्निस्थे लौहपात्रे द्रवीकृते ॥
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं वा यदि दृश्यते ।
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥
मृदौ न सम्यग् भङ्गः स्यान्मध्यभङ्गश्च रूप्यवत् ।
खरे लघु भवेद्भङ्गो रूक्षसूक्ष्मोरुणच्छविः ॥
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः ।
जराव्याधिशताकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरिः ॥
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणोऽमृतम् ।
आदौ शङ्करमभ्यर्च्य द्विजातीन् प्रणिपत्य च ॥
प्रभाते भक्षयेदेनां प्राग्रक्तिद्वयसम्मिताम् ।
रक्तिकादिक्रमाद्वृद्धिर्भक्ष्या नैव दशोपरि ॥
आरोग्यदर्शनं यावत्तावद्ह्रासस्ततः परम् ।
अजीर्णे भोजनं नैव पथ्यकाले व्यतिक्रमे ॥
घृतसैन्धवधन्याकहिङ्गुजीरकनागरैः ।
शस्यते व्यञ्जनं सिद्धं पित्ते स्वाद्वम्लमाक्षिकम् ॥
पटोलफलपत्रञ्च कृष्णवार्त्ताकुजालिका ।
सुस्विन्नपूगैस्ताम्बूलैर्लाभे कर्पूरसंयुतैः ॥
क्षुधाकाले व्यतिक्रान्ते यदि वायुः प्रकुप्यति ।
झिन्झिनीति शिरःशूले विरेके वमथौ तथा ॥
तृष्णायाश्चाधिके पित्ते नारिकेलाम्बु निर्भयम् ।
नारिकेलपयः पेयं द्विर्भक्ष्यं क्षीरमेव च ॥
स्वप्ने शुक्रच्युतौ चैव चम्पकं कदलीफलम् ।
वर्ज्यं निम्बादिकं शाकं पाकाम्लं काञ्जिकं सुराम् ॥
कदलीफलपत्रांघ्रित्रपुषालाबुकर्कटी ।
कूष्माण्डं कारवेल्लञ्च व्यायामं जागरं निशि ॥
न पश्येन्न स्पृशेद्गच्छेत् स्त्रियं जीवितुमिच्छति ।
यद्यौषधे स्त्रियं गच्छेत् कर्त्तव्या तु प्रतिक्रिया ॥
दुर्वारां ग्रहणीं हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ।
आमशूलमतीसारं सामञ्चैव सुदारुणम् ॥
अतीसारं षडर्शांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ।
शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहानञ्च जलोदरम् ॥
पक्तिशूलं चाम्लपित्तं वातरक्तं वमिं कृमिम् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं प्रमेहान् विषमज्वरान् ॥
वातपित्तकफोत्थांश्च ज्वरान् हन्ति सुदारुणान् ।
जीर्णोऽपि पर्पटीं कुर्वन् वपुषा निर्मलः सुधीः ॥
जीवेद्वर्षशतं श्रीमान् वलीपलितवर्जितः ।
प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुञ्जां
यस्तां स विन्दति तुलां कुसुमायुधस्य ।

आयुश्च दीर्घमनघं वपुषः स्थिरत्वं
हानिं वलीपलितयोरतुलं बलञ्च ॥

साधारण शुद्ध गन्धकके चूर्णको भंगरेके रसकी ७ या ३ भावना दे कर सुखावें और खरल कर लें।

तदनन्तर उसे (घृतलिप्त) लोह पात्रमें मन्दाग्नि पर पिघला कर भंगरेके रसमें बुझा दें और फिर निकाल कर सुखा लें।

यह गन्धक ५ तोले, शुद्ध पारद २॥ तोले, चांदी भस्म १। तोला, स्वर्ण भस्म ७॥ माशे, वैक्रान्त भस्म ३।। माशे और मुक्ता भस्म ३॥ माशे ले कर सबको लोहेके खरलमें डाल कर कज्जली बनावें और उसे घृतलिप्त लोहपात्रमें बेरीकी लकड़ियोंकी अग्नि पर पिघला कर यथा विधि पर्पटी बना लें। (पर्पटी बनानेकी विधि " पर्पटी रस (१) " में देखिये।)

पर्पटीका पाक करते समय जब मयूरपुच्छकी चन्द्रिकाके समान दिखलाई देने लगे तो पाक तैयार समझना चाहिये।

पर्पटीका पाक ३ प्रकारका होता है—(१) मृदु, (२) मध्यम और (३) खर। मृदु और मध्यम पाकवाली पर्पटीमें पारद दिखलाई देता है और खरपाकमें दिखलाई नहीं देता।

मृदुपाक वाली पर्पटी तोड़नेसे अच्छी तरह नहीं टूटती और मध्यम पाकवाली भली भांति टूट जाती है तथा उसे तोड़ने पर चांदीकी सी चमक मालूम होती है। खरपाक पर्पटी ज़रासा दबाव देनेसे ही अत्यन्त शीघ्र टुकड़े टुकड़े हो जाती है और उसमें रूक्षता तथा ललाई होती है।

मृदु और मध्यम पाक वाली पर्पटी सेवन करने योग्य होती है परन्तु खरपाक विष समान त्याज्य है।

पर्पटी सेवन करनेसे पूर्व शिवपूजन और द्विजोंको नमस्कार करना चाहिये।

पहिले दिन प्रातःकाल २ रत्ती पर्पटी खानी चाहिये और फिर प्रतिदिन १-१ रत्ती बढ़ानी चाहिये। जब दश रत्ती मात्रा पर पहुंच जाएं तो फिर आरोग्य होने तक नित्य १० रत्ती ही खाते रहें और इसके पश्चात् प्रतिदिन १-१ रत्ती घटा कर सेवन करें, और १ रत्ती पर पहुंचनेके पश्चात् बन्द कर दें। इसकी मात्रा १० रत्तीसे अधिक कदापि न बढ़ानी चाहिये।

इसके सेवन कालमें अजीर्ण हो जाने पर अथवा भोजनका समय बीत जाने पर भोजन न करना चाहिये।

व्यञ्जन (यूष, शाकादि) बनानेमें घी, सेंधा-नमक, धनिया, हींग, ज़ीरा, और सोंठका उपयोग करना चाहिये।

यदि पित्तकी अधिकता हो तो मधुर और अम्ल पदार्थ तथा शहद सेवन कराना चाहिये।

पथ्य—पटोल फल (परवल), पटोल पत्र, काला बैंगन, तुरई, और उबाली हुई सुपारी तथा कर्पूर युक्त पान।

यदि आहारकालमें भोजन न करनेसे वायु कुपित हो जाय और शरीरमें झनझनाहट, शिर-

शूल, अतिसार, वमन, तृषा एवं पित्तकी अधिकता आदि उपद्रव प्रकट हों तो नारियलका पानी निर्भय हो कर देना चाहिये । एवं नारियलका दूध पिलाना और दोनों समय दुग्धाहार कराना चाहिये ।

यदि स्वप्नमें वीर्यस्राव हो जाय तो सुनहरी छाल वाला केला खिलाना चाहिये ।

अपथ्य—निंबादि तिक्त शाक, अम्लपाक वाले पदार्थ, कांजी, सुरा, चम्पक (सुनहरे) केलेके फलके अतिरिक्त अन्य हर प्रकारके केलेका फल पत्र और मूल, खीरा, लौकी, ककड़ी, पेठा (कुम्हड़ा), करेला, व्यायाम और रात्रि जागरण।

यदि जीवनकी इच्छा हो तो इसके सेवन कालमें (कामवासनासे) स्त्रीको देखना या स्पर्श तक करना न चाहिये । यदि भूलसे स्त्रीप्रसंग हो जाय तो तुरन्त उसका प्रतिकार करना चाहिये ।

इसके सेवनसे बहुत वर्षोंकी पुरानी, अत्यन्त कष्ट साध्य संग्रहणी तथा दारुण आम शूल, अतिसार, ६ प्रकारके अर्श, उपद्रव युक्त राजयक्ष्मा, शोथ, कामला, पाण्डु, प्लीहा, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त; वातरक्त, वमन, कृमि रोग, कुष्ठ, प्रमेह, विषमज्वर और वातज, पित्तज तथा कफज कष्ट साध्य ज्वरका नाश होता है ।

यदि इसे वृद्ध पुरुष भी सेवन करे तो वलि पलित निर्मुक्त, बुद्धिमान और श्रीयुक्त हो कर १०० वर्ष तक जीवित रहता है ।

यदि इसे दीर्घ काल तक २ रत्ती मात्रानुसार प्रातः काल सेवन किया जाय तो काम शक्ति और बलकी अत्यन्त वृद्धि होती है; शरीर दृढ़ हो जाता है और बलि पलि-रहित दीर्घायु प्राप्त होती है ।

विजयपर्पटीरसः

(र. रा. सु. । सन्निपाता.)

प्र. सं. ५५७६ "महा विजय पर्पटी रसः" देखिये ।

(७०२०) विजयभैरवरसः (१)

(विजयानन्दः)

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । कुष्ठा.)

सप्तकञ्चुकनिर्मुक्तमूर्द्धलग्नं रसेन्द्रकम् ।
मृत्कटाहान्तरे तत्र स्थापयेच्च समन्त्रकम् ॥
सूताद्द्विगुणितं तालं कूष्माण्डद्रवशोधितम् ।
दोलायन्त्रेण तैलादौ सप्तधा परिशोधितम् ॥
दत्त्वाऽऽप्लाव्यद्रवैर्झिण्टयाः किञ्चिदाप्लाव्य युक्तितः ।
तयोर्द्विगुणितं भस्म पलाशस्योपरि क्षिपेत् ॥
पुनर्झिण्टीद्रवेणैव सर्वमाप्लाव्य यत्नतः ।
खाखशाकरसैर्भूयः परिप्लाव्य च पाकवित् ॥
पचेदवहितो वैद्यः सालाङ्गारेण यत्नतः ।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ॥
अवतार्य्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम् ।
प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्तः शोधितदेहकः ॥
सिता हरीतकीयुक्तं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ।
रक्तिकैकक्रमेणैव वर्द्धयेद्दिनसप्तकम् ॥

मधूदकं पिबेच्चानु नारिकेलजलञ्च वा ।
जिङ्गिनीसम्भवं क्राथमथवा क्षौद्रनागरम् ॥
अभ्यङ्गं सुरभिस्तैलैः कुर्यात्ताम्बूलचर्वणम् ।
पवनानलसूर्यांशुमत्स्यमांसदधीनि च ॥
शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमान्नरः ।
वातरक्तमाममिश्रमामञ्चापि सुदारुणम् ॥
सर्वकुष्ठञ्चाम्लपित्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम् ।
विजयाख्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसृग्दरान् ॥

१ भाग सप्त कंचुकी रहित और डमरुयन्त्रमें उड़ाये हुवे विशुद्ध पारदको कपरमिट्टी की हुई मिट्टीकी हांडीमें रक्खें और उसके ऊपर पेठेके रस, तेल, कांजी, त्रिफलाक्काथ और चूनेके पानीमें दोलायन्त्र विधिसे शोधित २ भाग हरतालका चूर्ण बिछा कर उस पर कटसरैयाका इतना रस डालें कि जिसमें हरताल अच्छी तरह तर हो जाय । तदनन्तर उस पर ६ भाग पलाशकी राख बिछा कर उसे पुनः कटसरैयाके क्काथसे तर कर दें और फिर उस पर पोस्तके बीजोंका रस इतना डालें कि सम्पूर्ण ओषधियां उसमें डूब जाएं। तत्पश्चात् (हाण्डीके मुखको शरावसे अच्छी तरह बन्द करके) उसे चूल्हे पर चढ़ावें और नीचे २४ पहर तक सालके कोयलोंकी अग्नि जलावें । इसके पश्चात् हांडीके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे ओषधको निकाल कर पलाशकी राखको अलग कर दें और पीस कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—४ रत्ती ।

इसे सेवन करनेसे पूर्व प्रायश्चित्त और पंचकर्मद्वारा शरीर शुद्धि कर लेनी चाहिये ।

इसे मिश्री और हर्रके चूर्णके साथ खा कर ऊपरसे शहदका शरबत या नारियलका पानी अथवा जिंगनीका क्काथ पीना या शहदमें मिलाकर सोंठका चूर्ण चाटना चाहिये ।

पहिले दिन ४ रत्ती दवा खा कर दूसरे दिनसे सात दिन तक रोज़ाना १-१ रत्ती बढ़ानी चाहिये और फिर उसी (११ रत्ती) मात्रासे सेवन करते रहना चाहिये ।

इसके सेवन कालमें शरीर पर सुगन्धित तैलकी मालिश करनी और ताम्बूल भक्षण करना चाहिये ।

अपथ्य—पवन, अग्निसे तापना, धूपमें जाना, मछली, मांस, दही और ककारादि शाक वर्ग (कुष्मांड, कर्कटी, कलिंग, कारवेल्ल, कुसुम्भिका, कर्कोटी, कलम्बी, काकमाची) से परहेज़ करना चाहिये ।

इसके सेवनसे साम वातरक्त, आमजनित अन्य कष्ट साध्य रोग, समस्त प्रकारके कुष्ठ, अम्लपित्त, विस्फोटक, मसूरिका और रक्त प्रदरका नाश होता है ।

विजयभैरवरसः (२)

(र. चं.; र. का. धे. । ग्रहण्य.; रसे. चि. म. । अ. ९)

प्र. सं. ३६६३ नीलकण्ठ रसः (५) देखिये इसमें वराङ्ग (दालचीनी) की जगह विडंग पाठ है ।

(७०२१) **विजयरसः** (१)

(रसे. सा. सं. । अजीर्णा.)

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागञ्च गन्धकं पलम् ।
क्षारत्रयं पलं देयं लवङ्गं पलपञ्चकम् ॥
दशमूलीजयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत् ।
चित्रकस्य रसेनाथ भृङ्गराजरसेन तु ॥
शिग्रुमूलद्रवैश्चापि ततो भाण्डे निरुध्य च ।
याममात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ॥
ताम्बूलीपत्रसंयुक्तं खादेन्निष्कमितं सदा ॥

शुद्ध पारद, नाग भस्म, शुद्ध गंधक, जवाखार, सज्जीखार और सुहागा ५–५ तोले तथा लौंग २५ तोले ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिला कर दशमूल, भांग, चीता, भंगरा और सहंजनेकी जड़की छालके काथकी १–१ भावना दे कर गोला बना लें और उसे सुखा कर शराव सम्पुटमें बन्द करके १ पहर भूधरयन्त्रमें पकावें और फिर उसके स्वांगशीतल होने पर निकाल कर अदरकके रसमें खरल करके सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ निष्क (५ माशे ।)

इसे पानके साथ खानेसे अजीर्णका नाश होता है ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२–३ रत्ती ।)

(७०२२) **विजयरसः** (२)

(विजयवटी)

(र. र. स. । उ. अ. २०)

रसभस्म च गन्धाश्म विशाला कुष्ठकं विषम् ।
रेणुका पिप्पलीमूलं बाकुचि विषतिन्दुकम् ॥
अश्वगन्धा पलाशास्थि व्योषादिनवकं वचा ।
गुडेन गुटिकां कुर्यात्समेन मधुमिश्रिताम् ॥
तां भक्षयेत्सितासर्पिःक्षीरशाल्यन्नभाग्भवेत् ।
यवौदनं वा भुञ्जानो ब्रह्मचर्यपरायणः ॥
खादेत्तापे सिताधान्यसर्पिर्नागबलरजः ।
वटिका विजयाख्येयं सप्त कुष्ठान्नियच्छति ॥

पारद भस्म, शुद्ध गंधक, इन्द्रायणकी जड़, कूठ, शुद्ध बछनाग, रेणुका, पीपलामूल, बाबची, शुद्ध कुचला, असगन्ध, पलाशके बीज, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, चीता, बायबिड़ंग, और बच; इनके समान भाग मिश्रित चूर्णको सबके बराबर गुड़में मिलाकर और उसमें आवश्यकतानुसार शहद डाल कर (३–३ माशेकी) गुटिका बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके कुष्ठ नष्ट होते हैं ।

पथ्य—मिश्री, घी, दूध, शाली चावल और जौ इत्यादि । इसके सेवन कालमें ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना चाहिये ।

यदि औषध खानेके पश्चात् अधिक गर्मी माळ्म हो तो मिश्री, धनिये और नागबलाके चूर्णको घीमें मिला कर चाटना चाहिये ।

(७०२३) **विजयवटी**

(र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. ; धन्व. । हिक्काश्वासा.)

सूतकं गन्धकं लौहं विषमभ्रकमेव च ।
विडङ्गं रेणुकं मुस्तमेला ग्रन्थिककेशरम् ॥

त्रिकटु त्रिफला ताम्रं शुल्वं जैपालचित्रकम् ।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।
सूतायां ग्रहणीदोषे शूले पाण्ड्वामये तथा ॥
हस्तपादादि दाहेषु वटिकेयं प्रशस्यते ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोहभस्म, शुद्ध बछनाग, अभ्रक भस्म, बायबिडंग, रेणुका, नागरमोथा, इलायची, पीपलामूल, नागकेसर, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा और आमला १–१ भाग, ताम्र भस्म २ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा और चीतामूल १–१ भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करें तथा अन्तमें सबसे दो गुना गुड़ मिला कर (१–१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे खांसी, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, प्रसूत रोग, संग्रहणी, पाण्डु और हाथ पैरोंकी दाह शान्त होती है ।

(७०२४) विजयसिन्दूररसः

(र. का. धे. । ग्रहण्य.)

रसगन्धं नागतालं सप्तधा धूर्तभावितम् ।
शुष्कं कुप्यान्तु वह्निः स्याच्चतुर्विंशतियामकम् ॥
शीतं गृहीत्वा त्रिकटुककर्चूरैरहिफेनतः ।
भृङ्गारसेन गुटिका गुञ्जा सर्वातिसारजित् ॥
रसो विजयसिन्दूरो ग्रहणीं हन्ति दुर्धराम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, नाग भस्म और शुद्ध हरताल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके धतूरके रसकी सात भावना दें और फिर उसे सुखा कर आतशी शीशीमें भर कर बालुका यन्त्रमें २४ पहर पाक करें । तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर शीशीसे रसको निकाल कर त्रिकुटा, कचूर, अफीम, और भंगके रसकी १–१ भावना दे कर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे हर प्रकारके अतिसार और कष्टसाध्य संग्रहणीका नाश होता है ।

(७०२५) विजयागुटिका (१)

(र. सं. क. । उल्ला. ५)

सूतार्कायोविषं गन्धं विडङ्गाग्न्यब्दकेसरम् ।
रेणुका ग्रन्थिकं बोलं सर्वेषां द्विगुणं गुडम् ॥
कोलप्रमाणां गुटिकां भक्षयेत्प्रातरेव हि ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥
शोफे पाण्ड्वामये कुष्ठे ग्रहण्यर्शोभगन्दरे ।
विजयागुटिका ह्येषा रुद्रप्रोक्ताऽधिका गुणैः ॥

शुद्ध पारद, ताम्र भस्म, लोह भस्म, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गन्धक, बायबिडंग, चीता, नागरमोथा, नागकेसर, रेणुका, पीपलामूल और बोल १–१ भाग तथा गुड़ सबसे दो गुना ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करें तथा अन्तमें गुड़ मिला कर ५–५ माशेकी गुटिका बना लें ।

इनमेंसे १–१ गोली प्रातः काल सेवन करनेसे कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, शोथ, पाण्डु, कुष्ठ, ग्रहणी, अर्श और भगन्दरका नाश होता है ।

(व्यवहारिक मात्रा—१–१॥ माशा ।)

(७०२६) **विजयागुटिका** (२)

(र. का. धे. । भगन्दरा.)

सूतकाद् द्वौ विषं गन्धं त्रित्र्येकांशेऽब्दकेशरम्।
रेणुकं ग्रन्थिकं वेल्लं सर्वेषां द्विगुणं गुडम् ॥
कोलप्रमाणां वटिकां खादयेत्प्रातरेव हि ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥
शोफे पाण्डवामये कुष्ठे ग्रहण्यर्शोभगन्दरे ।
विजया गुटिका ह्येषा रुद्रप्रोक्ताऽधिका गुणैः ॥

शुद्ध पारद २ भाग, बछनाग ३ भाग, शुद्ध गन्धक ३ भाग, तथा नागरमोथा, नागकेसर, रेणुका, पीपलामूल और बायबिड़ंगका चूर्ण १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य समस्त ओषधियोंका चूर्ण मिला कर खरल करें तथा अन्तमें सबसे २ गुना गुड़ मिला कर ५-५ माशेकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे खांसी, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, शोथ, पाण्डु, कुष्ठ, संग्रहणी, अर्श और भगन्दरका नाश होता है ।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—१ माशा ।)

विजयानन्दरसः

(रसे. सा. सं ; र. रा. सु. ; र. चं. । कुष्ठा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

प्र. सं. ७०२० विजय भैरव रसः देखिये ।

इस रस और विजय भैरव रसके उपादान तो समान ही हैं परन्तु निर्माण विधिमें थोड़ा अन्तर है इसमें (विजयानन्दमें) कटसरैयाके रस और पोस्तके रसका सर्वथा अभाव है तथा सेवन विधि कुछ नहीं लिखी ।

(७०२७) **विजयावटिका** (१)

(रसे. सा. सं. । ग्रहण्य.)

हाटकं रजतं ताम्रं यत्र परिदीयते ।
विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिसूदनी ॥

यदि ग्रहणी कपाट रस प्र. सं. १६०१ में स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म और ताम्र भस्म अधिक कर दी जाय तो उसीका नाम "**विजया वटिका**" हो जाता है ।

यह वटी हर प्रकारके ग्रहणी रोगको नष्ट करती है ।

(७०२८) **विजयावटिका** (२) **(बृहद्)**

(र. चं. । पाण्डु. ; र. र. स. । अ. १९ ; यो. चि. म. । गुटिका. ३; वै. र. । वातव्या.)

पलत्रयं हरीतक्याश्चित्रकस्य पलत्रयम् ।
एलात्वक्पत्रमुस्तानां भागोऽर्धपलिको मतः ॥
रेणुकार्धपला प्रोक्ता तदर्धं नागकेसरम् ।
व्योषं च पिप्पलीमूलं विषं च पलमात्रकम् ॥
रसः पलः पलो गन्धः सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
पुरातने गुडे पक्वे तुलार्धे तद्विनिक्षिपेत् ॥
हिमस्पर्शे तु मृद्नीयाद्घृतेनाक्तकरो बुधः ।
बदरास्थिप्रमाणेन विजया गुटिका मता ॥
निशायां खादयेदेनां शोफपाण्डुविनाशिनीम् ।
टङ्कणं मेघनादं च भक्षयेद्वेगशान्तये ॥

(ग. नि. परि. गुटिका. ४ में विजय गुटिका-का लगभग यही पाठ है परन्तु उसमें पारद १ पल है और गन्धकका अभाव है ।)

हर्र १५ तोले, चीतामूल १५ तोले, इलायची, दालचीनी, तेजपात और नागरमोथा २॥-२॥ तोले, रेणुका २॥ तोले, नागकेसर १। तोला, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, शुद्ध बछनाग, शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक ५-५ तोले ले कर* प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको ३ सेर १० तोले गुड़की चाशनीमें मिला दें एवं उसके ठंडा होने पर हाथोंको घी लगा कर उसे अच्छी तरह मलें और बेरकी गुठलीके बराबर गोलियां बना लें।

इन्हें रात्रिके समय सेवन करना चाहिये। यदि इसके सेवन कालमें किसी प्रकारका विकार या मनोद्वेग हो तो वह सुहागेकी खील और चौलाईके खानेसे शान्त हो जाता है।

इसके सेवनसे शोथ और पाण्डुका नाश होता है।

(७०२९) **विजयेश्वररसः**

(यो. र. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । कुष्ठा. ; र. चि. म. । स्त. ११)

शुद्धतालं मृतं सूतं तुल्यं ताभ्यां चतुर्गुणम् ।
भर्जित्वा विजया योज्या सर्वतुल्यं गुडं क्षिपेत् ॥
श्वेतकुष्ठहरं निष्कं रसोऽयं विजयेश्वरः ।
दार्वी खदिर निम्बानां क्वाथं तदनुपाययेत् ॥

शुद्ध हरताल और पारद भस्म १-१ भाग तथा भुनी हुई भांग ८ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर उसे १० भाग गुड़में मिला कर ५-५ माशेकी गुटिका बना लें।

इसे सेवन करनेसे श्वेतकुष्ठ नष्ट होता है।

अनुपान—दारुहल्दी, खैरकी छाल और नीमकी छालका काथ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—२॥ माशे।)

(७०३०) **विडङ्गलोहम्**

(रसे. सा. सं. ; धन्व. ; र. चं. ; र. रा. सु. । कृमिरो.)

रसं गन्धं च मरिचं जातीफललवङ्गकम् ।
कणा तालं शुण्ठि वङ्गं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥
सर्वचूर्णसमं लोहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम् ।
लौहं विडङ्गकं नाम कोष्ठस्य कृमिनाशनम् ॥
दुर्नामसरुचिश्चैव मन्दाग्निश्च विषूचिकाम् ।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासकासं विनाशयेत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, काली मिर्च, जायफल, लौंग, पीपल, शुद्ध हरताल, सोंठ और वङ्ग-भस्म १-१ भाग, लोह भस्म ९ भाग और बायबिडंग १८ भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिलाकर खरल करें।

इसके सेवनसे उदरकृमि, अर्श, अरुचि, अग्निमांद्य, विशूचिका, शोथ, शूल, ज्वर, हिक्का, कास और श्वासका नाश होता है।

(मात्रा—४ रत्ती)

* वै. र. में ५-५ तोले लोहभस्म और बंसलोचन अधिक लिखा है।

(७०३१) **विडङ्गादिचूर्णम्** (१)

(यो. र. । शोफा.)

विडङ्गदन्तीकटुकात्रिवृच्चित्रकदारवः ।
व्योषः सकृष्णा त्रिफला समा देया ह्ययोरजः ॥
द्विगुणं तत्पिबेच्चूर्णं पयसा शोफशान्तये ॥

बायविड़ंग, दन्तीमूल, कुटकी, निसोत, चीता, देवदारु, त्रिकुटा, पीपल और त्रिफला १-१ भाग तथा लोहभस्म सबसे दो गुनी ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

इसे दूधके साथ सेवन करनेसे शोथ नष्ट होता है ।

(**मात्रा—३** रत्ती ।)

(७०३२) **विडङ्गादिचूर्णम्** (२)

(व. से. । रसायना.)

विडङ्गासनधात्रीणां चूर्णं लोहरजो घृतम् ।
एतत्संप्राश्य वृद्धोऽपि तारुण्यमधिगच्छति ॥

बायविड़ंग, असना वृक्षकी छाल और आमला; इनका चूर्ण तथा लोह भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला लें ।

इसे घीके साथ सेवन करनेसे वृद्ध भी तरुणके समान हो जाता है ।

(**मात्रा—१** माशा)

(७०३३) **विडङ्गादिचूर्णम्** (३)

(वृ. मा. ; व. से. । राजय.)

मधुनाढ्या विडङ्गाश्मजतुलोहघृताभयाः ।
घ्नन्ति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमाना हिताशिनः ॥

बायबिड़ंगका चूर्ण, शिलाजीत, लोहभस्म और हर्रका चूर्ण समान भाग ले कर शहद और घीमें मिला कर चाटनेसे उग्र राजयक्ष्मा भी नष्ट हो जाती है ।

(७०३४) **विडङ्गादियोगः**

(ग. नि. । सा. रसा. १)

विडङ्गत्रिफलाकृष्णालोहचूर्णाज्यशर्कराः ।
सक्षौद्राः शीलिता घ्नन्ति वार्धक्यं पलितैः सह ॥

बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, पीपल और लोह भस्म समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें ।

इसे खांड, घी और शहदके साथ सेवन करनेसे वृद्धता तथा पलितका नाश होता है ।

(७०३५) **विडङ्गादिलौहम्** (१)

(रसें. सा. सं. ; धन्व. ; र. चं. । पाण्डुरो.)

विडङ्गत्रिफलाव्योषं शुद्धलोहन्तु तत्समम् ।
पुरातनगुडेनात्र लेहयेद्दिनसप्तकम् ॥
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥

बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म ७ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें ।

इसे पुराने गुड़में मिला कर सात दिन सेवन करनेसे शोथ, पाण्डु और हलीमकका नाश हो जाता है ।

(**मात्रा—३** रत्ती ।)

(७०३६) विडङ्गादिलौहम् (२)

(भै. र. । आमवा.)

वज्रपाण्ड्वादिलौहानां ग्राह्यं पञ्चपलं शुभम् ।
चूर्णं मृताभ्रकस्यापि लौहार्द्धं पारदं तथा ॥
त्रिगुणा त्रिफला ग्राह्या लौहाभ्राच्छोडषैर्जलैः ।
पक्त्वाष्टभागशेषन्तु ग्राह्यं क्काथजलं ततः ॥
तेन लौहाभ्रचूर्णञ्च पुनः पाच्यं समं घृतम् ।
शतावर्य्या रसञ्चैव क्षीरञ्च द्विगुणं रसात् ॥
लौहमय्या पचेद्दर्व्या पात्रे चायसि ताम्रके ।
पचेत्पाकविधिज्ञस्तु वह्निना मृदुना शनैः ॥
सिद्धे च प्रक्षिपेदेतान् विडङ्गादियथोदितान् ।
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडूचीसत्त्वजीरकम् ॥
पलाशबीजं मरिचं पिप्पली हस्तिपिप्पली ।
त्रिवृता त्रिफला दन्ती एला चैरण्डकं तथा ॥
चविका ग्रन्थिकं चित्रं मुस्तकं वृद्धदारकम् ।
सर्वेषां चूर्णमेतेषां लौहाभ्रकसमं भवेत् ॥
आमवातगजेन्द्रस्य केशरी विधिनिर्मितः ।
आमवातञ्च शोथञ्चाप्यग्निमान्द्यं हलीमकम् ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्याद् द्रव्यं रसायनम् ॥

३७॥-३७॥ तोले हर्र, बहेड़े और आमलेको एकत्र कूट कर ४५ सेर पानीमें पकावें और आठवां भाग शेष रहने पर छान लें। तत्पश्चात् उसमें २५ तोले लोह भस्म और १२॥ तोले अभ्रक भस्म, ७५ तोले घी, ७५ तोले शतावरका रस और १५० तोले गोदुग्ध मिला कर लोहे या क़लई की हुई ताम्रकी कढ़ाईमें मन्दाग्नि पर पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाय तो उसे अग्निसे नीचे उतार कर उसमें निम्न लिखित ओषधियोंका प्रक्षेप मिला कर सुरक्षित रक्खें।

प्रक्षेप—रस सिन्दूर १२॥ तोले, तथा बायबिड़ंग, सोंठ, धनिया, गिलोयका सत, जीरा, पलाशबीज, काली मिर्च, पीपल, गजपीपल, निसोत, हर्र, बहेड़ा, आमला, दन्तीमूल, इलायची, अरण्डमूल, चव, पीपलामूल, चीता, नागरमोथा और बायबिड़ंग; इनका समान भाग मिश्रित चूर्ण ३७॥ तोले।

इसके सेवनसे आमवात, शोथ, अग्निमांद्य, हलीमक, कामला और पाण्डु रोगका नाश होता है।

(७०३७) विडङ्गादिलौहम् (३)

(र. रा. सु. ; रसें. सा. सं. ; र. र. ; च. द. ; धन्व. ; र. च. । पाण्डुवा.)

विडङ्गमुस्तत्रिफलादेवदारुषडूषणैः ।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणेपचेत् ॥
तैरक्षमात्रां गुटिकां कृत्वा खादेद्दिने दिने ।
कामला पाण्डुरोगार्तः सुखमाप्नुतेऽचिरात् ॥

बायबिड़ंग, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, देवदारु, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, सोंठ और मिर्च इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म सबके बराबर (१२ भाग) ले कर सबको एकत्र मिला कर १६ गुने गोमूत्रमें पकावें और जब वह गाढ़ा हो जाय तो १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें।

इनके सेवनसे कामला और पाण्डु शीघ्र नष्ट होता है।

(व्यवहारिक मात्रा—१ माशा।)

(७०३८) **विडङ्गादिलौहम्** (४)

(वं. से. ; र. र. ; वृ. मा. । मेदरो.)

विडङ्गनागरक्षारकाललोहरजो मधु ।
यवामलकचूर्णन्तु योगोऽतिस्थौल्यनाशनः ॥

बायविडंग, सोंठ, जवाखार, लोह भस्म, जौ और आमला; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे अति स्थूलता नष्ट होती है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(७०३९) **विडङ्गाद्यलौहम्** (१)

(र. का. धे. ; व. से. । पाण्डु)

विडङ्गत्रिफलाव्योषं दार्वी कृष्णमयोरजः ।
कामला पाण्डुरोगघ्नं लिह्यात् क्षौद्रघृतप्लुतम् ॥

बायविडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और दारुहल्दीका चूर्ण तथा मण्डूर भस्म और लोह भस्म १—१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

इसे घी और शहदके साथ सेवन करनेसे कामला और पाण्डुका नाश होता है ।

(मात्रा—१॥ माशा ।)

(७०४०) **विडङ्गाद्यलौहम्** (२)

(भै. र. ; च. द. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. स. ; र. र. । प्रमेहा.)

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।
जीरकाभ्यां युतं हन्ति प्रमेहानतिदारुणान् ॥
लौहं मूत्रविकारांश्च सर्वानेव विनाशयेत् ॥

बायविडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ, सफेद जीरा और काला जीरा; इनका चूर्ण १—१ भाग तथा लोहभस्म ९ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें ।

इसके सेवनसे दारुण प्रमेह और मूत्रविकारोंका नाश होता है ।

(मात्रा—३ रत्ती ।)

(७०४१) **विडङ्गाद्यवलेहः**

(ग. नि. । लेहा. ५)

विडङ्गत्रिफलामुस्तमधुकं कटुरोहिणी ।
अयोरजो हरिद्रे च चित्रकं गुडशर्करा ॥
खदिरस्य कषायेण चूर्णान्येतानि साधयेत् ।
मृद्वग्निसिद्धं तं लेहं लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
स लेहः कामलां हन्यादपि सम्वत्सरोत्थिताम् ।
पाण्डुरोगं च नुदति श्वयथुं चापि पैत्तिकम् ॥

बायविडंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, मुलैठी, कुटकी, हल्दी, दारुहल्दी और चीतामूल; इनका चूर्ण तथा लोहभस्म १—१ भाग और गुड़ तथा खांड ११—११ भाग ले कर खैरके क्वाथमें चाशनी बना कर उसमें समस्त चूर्ण मिला कर ज़रा पका कर रक्खें ।

इसमें घी और शहद मिला कर सेवन करनेसे १ वर्षकी पुरानी कामला भी नष्ट हो जाती है ।

इसके अतिरिक्त यह पित्तज शोथ और पाण्डुको भी नष्ट करता है ।

(७०४२) विद्याधरमण्डूरम्

(र. का. धे. । अम्लपित्त.)

त्रिफलाव्योषजन्तुघ्नं दन्त्यग्निग्रन्थिकामृताः ।
कुष्ठतेजोवतीमुस्तत्रिवृद्भल्लातसूरणाः ॥
शताह्वा नैचुलं बीजं भार्ङ्गी च गजपिप्पली ।
शृङ्गी द्विजीरकं धान्यं वृद्धदारुकपत्रके ॥
तुम्बुरूणि भद्रदारु क्षाराश्च लवणानि च ।
अजमोदा तालमूली विशाला भूतिकवचा ॥
कोशातकी फलं चैतद् बृहत्पत्रकगन्धकौ ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं तथा ॥
गोमूत्रे त्रिफलाकाथे निषिक्तं श्लक्ष्णचूर्णितम् ।
कन्दोत्कटभृङ्गवेरश्रावणीकेशराजकः ॥
रसैः सवज्रवल्लीजैर्वन्ध्यातालस्य सस्यजैः ।
भावयित्वैव तच्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥
चतुर्गुणेन त्रिफलाकाथैर्दर्विविलेपनात् ।
उपयुञ्जीत मतीमान् खादेच्चैव यथाबलम् ॥
ये च कुक्षिगता रोगा ग्रहणीमार्दवादयः ।
एतद्विद्याधरं नाम मण्डूरं सर्वरोगनुत् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, दन्तीमूल, चीता, पीपलामूल, गिलोय, कूठ, मालकंगनी, नागरमोथा, निसोत, शुद्ध भिलावा, शूरण (जिमीकन्द), सोया, हिज्जलबीज, भरंगी, गजपीपल, काकड़ासिंगी, सफेद और काला जीरा, धनिया, विधारामूल, तेजपात, तुम्बुरु, देवदारु, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, सेंधानमक, संचल, बिड लवण, सामुद्र लवण, काच लवण, अजमोद, तालकी मूसली, इन्द्रायणकी जड़, अजवायन, बच, तोरी, लोध और शुद्ध गंधक; इनका चूर्ण १-१ भाग और गोमूत्र तथा त्रिफलेके काथमें बुझा हुवा मण्डूर सबसे दो गुना ले कर सबको एकत्र मिला कर शूरणके रस या क्काथ, लाल ईखके रस, अदरकके रस, मुण्डीके रस या क्काथ, भंगरेके रस, हड़जोड़ीके रस, बांझ ककोड़ेके रस, और ताड़के फलके रसकी १-१ भावना दे कर उसमें उससे १६ गुना गोमूत्र और ८ गुना त्रिफलाका क्काथ मिला कर पुनः पकावें। जब गाढ़ा हो कर करछीको लगने लगे तो ठण्डा करके सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे उदर विकार, ग्रहणी और अग्निमांद्यादिका नाश होता है।

(**मात्रा**— १ माशा ।)

(७०४३) विद्याधररसः
(विनोदविद्याधररसः)

(रसे. सा. सं. ; भै. र. ; र. रा. सु. । ज्वरा. ; वृ. यो. त. । त. ५९ ; धन्व. । ज्वरा.)

रसो गन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीटङ्कणवरा
त्रिवृद्दन्ती हेमद्युमणि विषमेतत्समिदम् ।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः
ततः स्नुक्क्षीरेण प्रचुरमृदितं दन्तिसलिलैः ॥
द्विगुञ्जास्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगुदकीलोद्भवरुजः ।
मरुच्छूलाजीर्णं प्रबलमथसामं क्रिमिगदं
विबद्धं प्लीहानं प्रबलमपि विद्याधररसः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, कुटकी, सुहागा, हर्र, बहे ा,

आमला, निसोत, दन्तीमूल, धतूरा, आककी जड़की छाल और शुद्ध बछनाग १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर लेकर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला कर सबको कई दिन तक स्नुही (सेंड-थूहर) के दूधमें खरल करें और फिर दन्तीमूलके काथमें घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे आम, ज्वर, पाण्डु, गुल्म, संग्रहणी, अर्श, वातपीड़ा, अजीर्ण, आमयुक्त कृमि रोग और प्लीहाका नाश होता है।

(**अनुपान—**शीतल जल। यह रस तीव्र रेचक है।)

(७०४४) विद्याधररसः

(रसें. सा. सं. ; धन्व. ; र. रा. सु. ; र. र. ; वै. र. ; र. म. ; र. चं. । गुल्मा. ; र. प्र. सु. । अ. ८ ; रसें. चि. म. । अ. ९ ; शा. ध. । खं. २ अ. १२ ; र. चि. म. । स्त. ११; वृ. यो. त. । त. ९८ ; र. का. धे. । उदर रो. ; र. र. स. । अ. १८)

गन्धकं तालकं ताप्यं मृतं ताम्रं मनःशिला।
शुद्धसूतश्च तुल्यांशं मर्दयेद्भावयेदिनम् ॥
पिप्पल्याश्च कषायेण वज्रीक्षीरेण भावयेत्।
गुञ्जार्द्धं सेवितं क्षौद्रैर्गुल्मप्लीहादिकं जयेत् ॥
रसो विद्याधरो नाम गोदुग्धश्च[१] पिबेदनु ॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध हरताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म, ताम्र भस्म, (पाठान्तरके अनुसार स्वर्ण भस्म) शुद्ध मनसिल और शुद्ध पारद समान भाग लेकर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको १-१ दिन पीपलके काथ और सेंड (थूहर) के दूधमें खरल करके आधा आधा रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे गुल्म और प्लीहादिका नाश होता है।

अनुपान—गोदुग्ध या गोमूत्र।

(७०४५) विद्याधरलोहम्

(र. र. । अर्शो.)

स्वच्छं पत्रीकृतं लोहं पलं लिप्तञ्च निर्वपेत्।
लवणैर्माक्षिकोपेतैस्त्रिफलाकार्षिकोदके ॥
सुषिक्तं लोहमादाय पूतं सञ्चूर्ण्य यत्नतः।
पुटैर्यथाव्याधिहरैर्द्रव्यैः सम्पादितैः पचेत् ॥
पिण्डेन शर्करा क्राथः कलम्ब्या बहुपत्रतः।
करिकर्णपलाशस्य लवणैरप्यरुष्करैः ॥
चतुर्गुणे फलरसे लोहार्धं घृतयोजितम्।
पाचयेन्निपुणस्तावद्यावत्सर्पिर्विमुञ्चति ॥
षोडशांशं क्षिपेत्तत्र ततः संशोधितं रसम्।
राजिकापिण्डमध्ये तु व्योषपिण्डस्य मध्यगम् ॥
गवां मले तुषाग्नौ च वस्त्रावृतश्च काञ्जिकैः।
सिद्धं सप्ताहमेवन्तु ततः सञ्चूर्णयेत्पुनः ॥
चिञ्चाकषायज्येष्ठाम्बुक्षीरनिर्वापितेन तु।
द्विगुणेन गन्धकशिलासुश्लक्ष्णरजसा पुनः ॥
पादं विडङ्गमुस्ताग्नि त्रिफलाव्योषजं रजः।
लोहादेकीकृतं पिष्टमनुगुप्तं निधापयेत् ॥

१ गोमूत्रमिति पाठान्तरम्।

ततो मात्रां प्रयुञ्जीत यथादोषं यथावयः ।
आहारपरिहारा च लोहान्तरसमानकम् ॥
कुलत्थश्च कपोतश्च करमर्दककाञ्जिके ।
करीरं कारवेल्लश्च षट् ककाराणि वर्जयेत् ॥
विद्याद्विद्याधरमतं लोहं सर्वगदापहम् ।
न सोऽस्ति रोगः कुक्षिस्थो यमिदं न निहन्ति च ॥
जलापकारानर्शांसि सर्वोपद्रववन्ति च ।
अम्लकं ग्रहणीमेहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥

स्वच्छ और शुद्ध लोहके पांच तोले पत्रों पर शहदमें पिसे हुवे सेंधानमकका लेप करके अग्निमें तपावें और खूब लाल हो जाने पर १। तोला त्रिफलाके काथमें बुझा दें। इसी प्रकार सम्पूर्ण लोहका चूर्ण होने तक बार बार बुझाते रहें। तदनन्तर उसे अर्शनाशक ओषधियोंके रसमें घोट घोट कर पुट लगावें और भस्म तैयार करें। इसके पश्चात् उस भस्ममें मैनफलका काथ, खांड, कलम्बी (कलमी शाक) का रस, पलाशका रस, स्तिकर्णपलाशका रस, सेंधा नमकका पानी, शुद्ध भिलावेका काथ और त्रिफलेका काथ लोह भस्मसे चार चार गुना तथा घृत लोहभस्मसे आधा मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। जब गाढ़ा हो जाय और घृत छोड़ दे तो उसमें लोहका सोलहवां भाग पारद भस्म मिला कर घोटें और उसका एक गोला बना कर उसे राईके कल्कमें लपेट दें तथा उसके ऊपर त्रिकुटेका कल्क लपेट कर सुखा कर उसे मज़बूत कपड़ेमें बांध कर पोटली बनावें और इस पोटलीको दोलायन्त्र विधिसे कांजीमें लटका कर १ सप्ताह तक अरने उपलों या तुषकी अग्नि पर पकावें। तत्पश्चात् स्वांगशीतल होने पर गोलेको निकाल कर (राई और त्रिकुटेके कल्कको दूर करके) पीस लें और उसमें इमलीके काथ, चावलोंके पानी और गोदुग्धमें बुझाया हुवा शुद्ध गंधक तथा मनसिलका चूर्ण उससे २-२ गुना तथा बायबिडंग, नागरमोथा, चीता, त्रिफला और त्रिकुटा; इनका समान भाग मिश्रित चूर्ण उसका चतुर्थांश मिला कर अच्छी तरह खरल करके सुरक्षित रक्खें।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करनेसे जलदोष जनित रोग, उपद्रवयुक्त अर्श, अम्लपित्त, ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म और आठ प्रकारके उदर रोगोंका नाश होता है।

ऐसा कोई उदर विकार नहीं है जिसे यह नष्ट न कर सकता हो।

(७०४६) विद्याधराभ्रम्
(श्रीविद्याधराभ्रम्)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. । शूल ; रसें. चि. म. । अ. ८ ; र. का. धे. । शूल ; धन्व. ; र. र. ; वृ. नि. र. । शूल.)

विडङ्गमुस्तत्रिफलागुडूची
दन्ती त्रिवृद्वह्निकटुत्रिकश्च ।
प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्ण
पलानि चत्वार्ययसो मलस्य ॥
गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य
यद्वायसो भस्म विशोधितस्य ।
कृष्णाभ्रकाच्चूर्णपलं विशुद्धं
निश्चन्द्रिकं श्लक्ष्णमतीव सूतात् ॥

पादोनकर्षं स्वरसेन खल्वे
शिलातले मन्युमणिद्दलस्य ।
सम्मर्द्य यत्नादतिशुद्धगन्ध-
पाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥
युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा
सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात् ।
संस्थापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे
ततः प्रयोज्योस्य रसायनस्य ॥
वल्लप्रमाणन्त्वथवा द्विवल्लं
गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा ।
पिबेदयं योगवरः प्रभूत-
कालप्रणष्टानलदीपकश्च ॥
रोगेषु हन्यात्परिणामशूलं
शूलं तथान्नद्रवसंज्ञकञ्च ।
यक्ष्माम्लपित्तं ग्रहणीं प्रदुष्टां
जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम् ॥
न सन्ति ते यान्न निहन्ति रोगान
योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥

बायबिड़ंग, नागरमोथा, हर्र, बहेड़ा, आमला, गिलोय, दन्तीमूल, निसोत, चीता, सोंठ, मिर्च और पीपल १।-१। तोला तथा गोमूत्रद्वारा शुद्ध पुराने मण्डूरकी भस्म या लोह भस्म २० तोले, अभ्रक भस्म ५ तोले, मण्डूकपर्णीके रसमें शुद्ध किया हुवा पारद ११। माशे और शुद्ध गंधक १। तोला ले कर प्रथम पारद गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका महीन चूर्ण मिला कर खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करना चाहिये ।

मात्रा—२ से ४ रत्ती तक ।

अनुपान—गोदुग्ध या शीतल जल ।

इसके सेवनसे चिरनष्ट अग्नि भी दीप्त हो जाती है । इसके अतिरिक्त यह परिणाम शूल अन्नद्रव शूल, यक्ष्मा, अम्लपित्त, ग्रहणी, जीर्ण ज्वर और उग्र रक्तपित्तको नष्ट करता है ।

(७०४७) विद्याधराभ्रम् (बृहद्)

(भै. र.; र. चं. ; धन्व.; रसे. सा. सं. । शूला.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं फलत्रयकटुत्रयम् ।
विडङ्गमुस्तकश्चैव त्रिवृता दन्तिचित्रकम् ॥
आखुपर्णी ग्रन्थिकश्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम् ।
पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य मृतायश्च चतुर्गुणम् ॥
घृतेन मधुना पिष्ट्वा वटीं गुञ्जात्रयोन्मिताम् ।
एकैकां वटिकां खादेत् प्रातरुत्थाय नित्यशः ॥
अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम् ।
सर्वशूलं निहन्त्याशु वातपित्तभवं तथा ॥
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव तथैव सान्निपातिकम् ।
परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥
कार्श्यं वैवर्ण्यमालस्यं तन्द्रारुचिविनाशनम् ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, बायबिड़ंग, नागरमोथा, निसोत, दन्तीमूल, चीतामूल, मूषाकन्नी और पीपलामूल १।-१। तोला, कृष्णाभ्रक भस्म ५ तोले और लोह भस्म २० तोले ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका बारीक चूर्ण मिला कर घी और शहदमें घोट कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे एक एक गोली नित्य प्रति प्रातः काल गोदुग्ध या नारियलके पानीके साथ सेवन करनेसे वातज और पित्तज तथा कफज और त्रिदोषज शूल, परिणाम शूल, आम जनित शूल, कृशता, विवर्णता, आलस्य, तन्द्रा और अरुचिका नाश होता है ।

(७०४८) विद्यावङ्गेश्वररसः

(विद्यावागीश्वररसः)

(र. का. धे. । प्रमेहा.)

तुल्यानि वङ्गसूताभ्रभस्मानि परिकल्पयेत् ।
सर्वतुल्यं महानिम्बबीजचूर्णं विमिश्रयेत् ॥
लिह्यात्क्षौद्रेण माषैकं पित्तमेह प्रशान्तये ।
शाणत्रयं निशाचूर्णं मधुना भक्षयेदनु ॥
विद्यावङ्गेश्वरो नाम लालामेहस्य शान्तये ॥

बंग भस्म, रस सिन्दूर और अभ्रक भस्म समान भाग ले कर एकत्र खरल करें और फिर उसमें सबके बराबर बकायनके बीजोंका चूर्ण मिला कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ माशा ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—४ रत्ती ।)

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे पित्तज प्रमेह-का नाश होता है ।

यदि इस पर १५ माशे (व्य. मा. २ माशे) हल्दीके चूर्णको शहदमें मिला कर अनु-पान रूपसे सेवन किया जाय तो लालामेह नष्ट हो जाता है ।

(७०४९) विद्यावल्लभो रसः

(भै. र. ; र. रा. सु. ; र. का. धे. । ज्वरा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

रसोम्लेच्छशिलातालाश्चन्द्रद्वयग्न्यर्कभागिकाः।
पिष्ट्वा तान् सुषवी[1]तोयैस्ताम्रपात्रोदरे क्षिपेत् ॥
न्यस्तं शरावे संरुध्य वालुकायन्त्रगं पचेत् ।
स्फुटन्ति व्रीहयो यावत्तच्छिरस्थाः शनैः शनैः ॥
सञ्चूर्ण्य शर्करायुक्तं गुञ्जार्द्धं भक्षयेत्ततः ।
विषमाख्यान् ज्वरान् हन्ति तैलाम्लादि विव-र्जयेत् ॥

शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध हिंगुल २ भाग, शुद्ध मनसिल ३ भाग और शुद्ध हरताल १२ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके करेलेके रसमें घोटें और फिर उसका गोला बना कर उसे ताम्रके पात्रमें बन्द करके यथा विधि शराव सम्पुटमें बन्द करें एवं बालुका यन्त्रमें पकावें । जब यन्त्रके रेत पर धान डालनेसे उनकी खील होने लगें तो अग्नि देनी बन्द कर दें और यन्त्रके स्वांग शीतल होने पर उसमेंसे गोलेको निकाल कर पीस लें ।

मात्रा—आधी रत्ती ।

इसे खांडमें मिला कर सेवन करनेसे विषम-ज्वर नष्ट होता है ।

अपथ्य—तेल, खटाई आदिसे परहेज़ करें ।

---

१. मुशली तोयैरिति पाठान्तरम्

१. सुरभितोयैरिति पाठान्तरम्

(७०५०) विद्यावागीशरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; र. चं. । प्रमेहा. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

मृतसूताभ्रनागञ्च स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
महानिम्बस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत् ॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहप्रशान्तये ।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयन्तथा ॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः ॥

पारद भस्म (रस सिन्दूर), अभ्रक भस्म, सीसा भस्म और स्वर्ण भस्म १-१ भाग तथा बकायनके बीजोंका चूर्ण ४ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें ।

मात्रा—१ माशा ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—४ रत्ती ।)

अनुपान—औषध खानेके पश्चात् ७॥ माशे (व्य. मा. २-३ माशे) हल्दीके चूर्णको शहदमें मिला कर चाटना चाहिये ।

इसके सेवनसे असाध्य लालामेह भी नष्ट हो जाता है ।

(७०५१) विद्यावागीश्वरीगुटिका

(र. र. रसा. खं. । उप. ३)

व्योमसत्त्वं मृतं वज्रं स्वर्णतारार्कमुण्डकम् ।
तीक्ष्णं कान्तं तालकं च शुद्धं कृत्वा विमिश्रयेत् ॥
सूक्ष्मचूर्णं समं सर्वं चूर्णांशं शुद्धपारदम् ।
त्रिदिनं चाम्लवर्गेण मर्दितं चान्धितं धमेत् ॥
विद्यावागीश्वरी ख्याता गुटिका वत्सरावधि ।
यस्य वक्त्रे स्थिता तस्य जरा मृत्युर्न विद्यते ॥
कर्षं ज्योतिष्मती तैलं क्रामणार्थं पिबेत्सदा ।
वाक्पतिर्जायते धीरो जीवेच्चन्द्रार्क तारकम् ॥

अभ्रक सत्वकी भस्म, हीरा भस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, ताम्र भस्म, मुण्ड लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, कान्त लोह भस्म और शुद्ध हरताल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें और फिर उसमें उसके बराबर शुद्ध पारद मिला कर प्रथम थोड़ी देर सूखा खरल करके ३ दिन अम्ल वर्गमें घोटें और फिर उसका गोला बना कर उसे अन्धमूषामें बन्द करके धमावें । इस क्रियासे औषधकी गोली तैयार हो जायगी ।

इसे १ वर्ष तक सदा मुखमें रखनेसे जरा और (रोगजनित) मृत्युका भय नहीं रहता तथा बुद्धि अत्यन्त प्रखर और आयु अत्यन्त दीर्घ हो जाती है ।

इसके प्रयोगकालमें नित्य प्रति १। तोला मालकंगनीका तेल पीना चाहिये ।

(बिना योग्य चिकित्सककी सम्मति लिये मालकंगनीके तेलकी इतनी बृहद् मात्रा कदापि न पीनी चाहिये ।)

विद्रुमशोधनमारणम्

प्रवाल शोधन मारण देखिये ।

(७०५२) विध्वंसरसः

(र. र. स. । उ. अ. १६ ; र. चं. । अजीर्णा.)

विमर्द्य गन्धोपलटङ्कणेन
सम्भाव्य वारानथ सप्त जात्याः ।
तोयैः फलानामथ सिद्धसूतो
विध्वंसनामा शमनो विषूच्याः ॥

अमुष्य गुञ्जा नव दापनीया
हन्तुं विषूचीं सितया समेताः ।
तक्रौदनं स्यादिह भोजनाय
पथ्यं च शाकं किल वास्तुकस्य ॥

शुद्ध गन्धक और सुहागेकी खील समान भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर जायफलके क्वाथकी सात भावना दे कर ९-९ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

इसे खांडमें मिला कर सेवन करनेसे विषूचिका-का नाश होता है ।

पथ्य—तक्र भात और बथुवेका शाक ।

(नोट) पाठान्तरके अनुसार इसमें १ भाग पारद भी डालना चाहिये ।

(७०५३) विनोदविद्याधररसः (१)

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

रसं गन्धं मृतं लोहं त्रिकटु त्रिफला तथा ।
कटुकी त्रिवृच्च बृहती हेमार्कं टङ्कणं विषम् ॥
एतानि समभागानि समांशं तिन्तिडी फलम् ।
चूर्णयित्वा ततः सम्यक्मर्दयेत्स्वर्जिकाम्बुना ॥
दन्ती क्वाथे ततः सम्यग्वटिका वल्लमात्रजा ।
विद्याधरविनोदाख्यं दद्याच्चैव नवज्वरे ॥
शूले गुल्मे तथा पाण्डौ ग्रहण्यर्शक्रमीन्हरेत् ।
अजीर्णत्याद्यामवाते च प्लीहोदरविबन्धजित् ॥
दातव्यः सर्वरोगेषु नाशयेन्नात्र संशयः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोह भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, कुटकी, निसोत, कटेली, धतूरा, आक, सुहागेकी खील और शुद्ध बछनाग १-१ भाग तथा इमलीके फल सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सज्जीके पानी और दन्तीमूलके क्वाथकी भावना दे कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे नवज्वर, शूल, गुल्म, पाण्डु, ग्रहणी, अर्श, कृमि, अजीर्ण, आमवात, प्लीहा, उदर और कोष्ठबद्धका नाश होता है ।

(७०५४) विनोदविद्याधररसः (२)

(र. र. स. । उ. अ. १९ ; र. चं. । उदर रोगा.)

रसेन्द्रबलिटङ्कणैः जयपालबीजैः समैः ।
रसः सुमृदितो भवेत्खलु विनोदविद्याधरः ॥
पयो गुडयुतो हरेत्सकलरेचनीयामया-
ञ्ज्वरं च जठरामयान्गुदगदं सशूलं नृणाम् ।
सम्यग्विरेचनाभावे मुद्गक्वाथं पिबेदनु
मेदाधिक्ये पिबेत्तक्रं बबूराणां त्वचो रसम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और सुहागेकी खील १-१ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर पानीके साथ घोट कर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इन्हें गुड़ मिश्रित दूधके साथ सेवन करनेसे ज्वर, उदर रोग, अर्श और शूलादि समस्त विरेचनीय रोगोंका नाश होता है ।

यदि इससे भली भांति विरेचन न हो तो मूंगका क्वाथ पिलाना चाहिये ।

मेदवृद्धिमें इसे सेवन करानो हो तो तक्र और बबूलकी छालका क्वाथ पिलाना चाहिये ।

विनोदविद्याधररसः (१)

" विद्याधर रसः " प्र. सं. ७०४३ देखिये ।

(७०५५) **विन्ध्यवासीयोगः**

(र. र. । राजय.; च. द. । राजय. १०)

व्योषं शतावरी त्रीणि फलानि द्वे बले तथा ।
सर्वमेहहरो योगः सोयं लोहरजान्वितः ॥
एषवक्षः क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रुजाम् ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं बाहुस्तम्भार्दितन्तथा ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, शतावर, हर्र, बहेड़ा, आमला, बला (खरैटी), अतिबला (कंघी); इनका चूर्ण और लोह भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करें ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके प्रमेह, उरःक्षत, अनेक प्रकारकी कण्ठ पीड़ा, उग्र राजयक्ष्मा, बाहुस्तम्भ और अर्दितका नाश होता है ।

(७०५६) **विमलरसायनम्**

(र. र. स. । अ. २)

तत्सत्वं सूतसंयुक्तं पिष्टं कृत्वा सुमर्दितम् ।
विलीनं गन्धके क्षिप्त्वा जायते त्रिगुणात्मकम् ॥
शिलां पञ्चगुणां चापि वालुकायन्त्रके खलु ।
तारभस्म दशांशेन तावद्वैक्रान्तकं मृतम् ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य पटेन परिगाल्य च ।
निक्षिप्य कूपिकामध्ये परिपूर्य प्रयत्नतः ॥
लीढो व्योषवरान्वितो विमलको युक्तो घृतैः ।
सेवितो हन्याद्दुर्भगकृज्ज्वरान् श्वयथुकं पाण्डु-प्रमेहाऽरुचीः ।
मूलार्तिं ग्रहणीं च शूलमतुलं यक्ष्मामयं कामलां
सर्वान्पित्तमरुद्भवान्क्रिमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥

विमल सत्व और शुद्ध पारद १-१ भाग ले कर दोनोंको एकत्र मिला कर इतना खरल करें कि जिससे दोनों एक जीव हो जायं । तदनन्तर उसमें १ भाग शुद्ध गंधक और ५ भाग शुद्ध मनसिल मिला कर सबको खरल करके आतशी शीशीमें भर कर बालुका यन्त्रमें पकावें और फिर उसमें उसका दसवां भाग चांदी भस्म तथा वैक्रान्त भस्म मिला कर अच्छी तरह खरल करें और वस्त्रसे छान कर शीशीमें भर कर सुरक्षित रक्खें ।

इसमें त्रिकुटे और त्रिफलेका चूर्ण मिला कर घीके साथ सेवन करनेसे ज्वर, शोथ, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, अर्श, ग्रहणी, शूल, क्षय, कामला और वातपित्तज समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(७०५७) **विमलाशुद्धिः**

(र. मं.)

जम्बीरस्य रसे स्विन्ना मेषशृङ्गीरसेऽथवा ।
रम्भातोयेन वा पाच्यं घस्रं विमलशुद्धये ॥

विमलमाक्षिकको १ दिन जम्बीरी, मेढासिंगी या केलेके रसमें पकानेसे वह शुद्ध हो जाती है ।

(७०५८) **विरेकीरसः**

(र. प्र. सु. । अ. ८)

तुल्यं सूतटङ्कणं पलमितं गन्धात्पलं पिप्पली-
शुण्ठीग्रन्थिकव्योषकान् द्विपलिकान् प्रत्येक-भागान् कुरु ।

सर्वै रेव समांशनिस्तुषकृतं दन्तीफलं चूर्णयेत्
गुञ्जैकः सितया समं रसवरः संभक्षितो रेचकृत्॥

शुद्ध पारद २॥ तोले, सुहागेकी खील २॥ तोले, शुद्ध गन्धक ५ तोले तथा पीपल, सोंठ, पीपलामूल और त्रिकुटा; इनका चूर्ण १०-१० तोले एवं शुद्ध जमालगोटा सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धकको कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको पानीके साथ घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनमेंसे १ गोली मिश्रीके साथ खानेसे विरेचन हो जाता है।

(**अनुपान**—शीतल जल।)

(७०५९) विरेचनी गुटिका

(र. प्र. सु. । अ. ८)

पारदं गन्धकं विश्वा टङ्कणं विषमुष्टिकम्।
स्वर्जिका मरिचं कृष्णा समभागानि कारयेत्॥
विडङ्गं चाभया दन्ती त्रिवृन्नेपालकं तथा।
पूर्वचूर्णसमान्येव भृङ्गद्रावेण भावयेत्॥
गुञ्जाप्रमाणवटिका भक्षिता शीतवारिणा।
विरेचयत्यवश्यं हि कृमिरोगान् ज्वरानपि॥
विनाशयति वै सम्यक् सत्यं गुरुवचो यथा॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, सोंठ, सुहागेकी खील, शुद्ध कुचला, सज्जीखार, काली मिर्च और पीपल १।-१। तोला तथा बायबिड़ंग, हर्र, दन्तीमूल, निसोत और शुद्ध जमाल गोटा २-२ तोले ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर भंगरेके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे विरेचन अवश्य हो जाता है और कृमि रोग तथा ज्वरका नाश होता है।

अनुपान—शीतल जल।

(७०६०) विलासिनीवल्लभरसः

(वै. जी. । विला. ५ ; र. रा. सु. । रसायना. ; र. चि. म. । स्त. ११)

समानभागे बलिशूलिबीजे
तयोः समानं कनकस्य बीजम्।
धत्तूरतैलेन विमर्द्य सम्यग्
विलासिनीवल्लभनामधेयः॥
सूतो भवेद्वल्लयुगप्रमाणः
सितायुतो मेहसमूहहारी।
वीर्यस्य बन्धं कुरुते नराणां
निहन्ति दर्पं च सुलोचनानाम्॥

शुद्ध गन्धक और पारद १-१ भाग तथा शुद्ध धत्तूरबीज २ भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें धतूरेके बीजोंका चूर्ण मिला कर धतूरेके तेलमें अच्छी तरह खरल करके ६-६ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें खांडके साथ सेवन करनेसे समस्त प्रमेह नष्ट होते और वीर्यस्तम्भन होता है। इसके प्रभावसे मनुष्य मानगर्विता कामिनियोंका मानमर्दन कर सकता है।

(७०६१) विश्वतापहरणरसः

(वै. जी. । विला. ५; र. रा. सु. ; वृ. नि. र. । ज्वरा.)

पथ्याकणार्कविषतिन्दुकदन्तिबीज-
तिक्तात्रिवृद्रसबलीन्सदृशान्विमर्द्य।

धूर्ताम्बुना सकलवासरमेष सूतः
स्याद्विश्वतापहरणाभिनवज्वरघ्नः ॥

हर्र, पीपल, ताम्र भस्म, शुद्ध कुचला, शुद्ध जमालगोटा, कुटकी, निसोत,* शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिला कर १ दिन धतूरके रसमें घोट कर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे नवीन ज्वर नष्ट होता है।

(७०६२) विश्वमूर्तिरसः

(रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे. ; र. रा. सु । ज्वरा.)

स्वर्णनागार्कपत्राणां गुञ्जाः पञ्च पृथक् पृथक् ।
त्रयाणां द्विगुणः[1] सूतो जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥
पिष्टिं तां निम्बुके क्षिप्त्वा दोलायन्त्रे दिनद्वयम् ।
पाचयेदारनालान्तस्तस्मादुद्धृत्य चूर्णयेत् ॥
ऊर्ध्वाधो गन्धकं दत्त्वा तालकं[2] च रसोन्मितम् ।
लोहसम्पुटकं कृत्वा क्षिप्त्वा चैव प्रपूरयेत् ॥
लवणस्य च चूर्णेन त्र्यहं मन्दाग्निना पचेत् ।
आदाय चूर्णयेत् श्लक्ष्णं दद्यात् गुञ्जाचतुष्टयम् ॥
आर्द्रकस्य रसोपेतं शीघ्रं पथ्यं न दापयेत् ।
विश्वमूर्ति रसो नाम्ना सन्निपातादि रोगजित् ॥

स्वर्ण, सीसा और ताम्रके कण्टकवेधी पत्र ५-५ रत्ती (५-५ भाग) और शुद्ध पारद ३० रत्ती ले कर सबको एकत्र मिला कर नीबूके रसमें खरल करें। जब सबकी पिट्ठीसी बन जाय तो उसे जम्बीरी नीबूके अन्दर रख कर उसे कपड़ेमें बांध कर दोला यन्त्र विधिसे २ दिन कांजीमें पकावें। तदनन्तर नीबूमेंसे औषधको निकाल कर पीस लें और लोहेके सम्पुटमें ऊपर नीचे ३०-३० रत्ती शुद्ध गंधक और हरताल रख कर उसे बन्द करें एवं उसे लवण यन्त्रमें रख कर ३ दिन मन्दाग्नि पर पकावें। इसके पश्चात् यन्त्रके स्वांगशीतल होने पर उसमेंसे औषधको निकाल कर बारीक पीस कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा--४ रत्ती।

इसे अदरकके रसके साथ देनेसे सन्निपातादिका नाश होता है।

इस पर आहार शीघ्र न देना चाहिये।

(७०६३) विश्वरूपरसः

(र. का. धे. । शूला.)

त्रिकटुकयवनेष्टं कारवी जीरयुग्मं
दहनजललवङ्गं पारसीका यवानी ।
सकमलकणमूलं चेतकी कलीतकानि
त्रुटिजरणविडङ्गं सैन्धवं पत्रमुस्तम् ॥
मिसित्रिवृदजमोदामेथिकात्वक् प्रपथ्या
कलीतरुफलधात्री बिल्वकालिङ्गमूलीम् ।
अतिविषबिडयुक्तं हिङ्गुनिर्यासनागं
वशीरनलदजातीकोशजातीफलानि ॥
इह दशदि समस्तं प्रक्षिपेत्सर्वतुल्या-
निह वरविषतिन्दूसाभयांस्तक्रसिद्धान् ।

* र. रा. सु. में निसोतके स्थान पर नलिका है।

१ त्रिगुणः इति पाठभेदः ।

२ तारकमिति पाठान्तरम् ।

अनु हिममदयुक्तो माषमात्रः स सूतः
प्रशमयति विकाराञ्छ्लेष्मवातामजातान् ॥
प्रबलमलविबन्धानाहमाटोपमुग्रं
ज्वरमरुचिविसूचिं शूलमन्नद्रवादीन् ।
हरति च सहसाऽयं जाठरान् सर्वरोगान्
ग्रहणिगदविमुख्यानाहयक्ष्मातिसारान् ॥
गिरीशविहिततन्त्रे मन्त्रयुक्त्या नियुक्तो
निखिलगुणनिवासो विश्वरूपो रसोऽयम् ॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, ल्हसन, कलौंजी, सफेद और काला जीरा, चीतामूल, सुगन्धबाला, लौंग, खुरासानी अजवायन, कमल, पीपलामूल, हर्र, मुलैठी, छोटी इलायची, जीरा, बायबिडंग, सेंधा-नमक, तेजपात, नागरमोथा, सौंफ, निसोत, अजमोद, मेथी, दालचीनी, छोटी हर्र, बहेड़ा, आमला, बेलकी जड़की छाल, कुड़ेकी जड़की छाल, अतीस, बिड़ नमक, हींग, नागभस्म, सफेद पुनर्नवा, खस, जावत्री और जायफल १-१ भाग तथा हर्रोंके साथ मिला कर तक्रमें पकाए हुवे कुचले सबके बराबर ले कर सबके चूर्णको एकत्र मिलावें और फिर उसमें १-१ भाग कपूर और कस्तूरी मिला कर खरल करके रक्खें ।

मात्रा—१ माशा ।

इसके सेवनसे कफ वायु और आम जनित विकार, प्रबल मलावरोध, आनाह, उग्र आटोप, ज्वर, अरुचि, विसूचिका, अन्नद्रवादि शूल, समस्त उदर रोग, ग्रहणी, यक्ष्मा और अतिसारका नाश होता है ।

(७०६४) विश्वहितरसः

(र. र. स. । उ. अ. २०)

रसेन्द्रलिप्तताम्रस्य पत्रं गन्धकमारितम् ।
तत्ताम्रं पलमात्रं हि पलमात्रं तु यावकम् ॥
पलं चूर्णितशुद्धालं मर्दयेत्तु दिनत्रयम् ।
इति सिद्धो रसः प्रोक्तो नाम्ना विश्वहितो मतः॥
वल्लाभ्यां तुलितः सेव्यो मरीचघृतसंयुतः ॥

शुद्ध ताम्र पत्रों पर (नीबूके रसमें घुटे हुवे) पारदका लेप करके उनके ऊपर नीचे (२ गुना) गंधक रख कर शरावसम्पुटमें बन्द करें और गजपुटमें पकावें । इसी प्रकार कई पुट दे कर भस्म करें ।

यह भस्म ५ तोले, जवाखार ५ तोले और शुद्ध हरतालका चूर्ण ५ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर ३ दिन खरल करके रक्खें ।

मात्रा—६ रत्ती ।

इसे काली मिर्चके चूर्ण और घृतके साथ सेवन करनेसे कुष्ठ नष्ट होता है ।

(७०६५) विश्वादिवटी

(वृ. नि. र. । अतिसारा. ; यो. र. । अतिसारा.)

विश्वजीरकसिन्धुत्थहिङ्गुजातिफलानि च ।
साम्रास्थि शङ्खं खण्डं च दध्नाम्लेन प्रपेषयेत् ॥
ईषदङ्गारकैर्भ्रष्टा वटिका कर्षसम्मिता ।
पक्वापक्वमतीसारं सशूलं ग्रहणीगदम् ॥
चिरोत्थमचिरोत्थं च नाशयेन्नात्रसंशयः ॥

सोंठ, जीरा, सेंधा नमक, हींग, जायफल, आमकी गुठली और शंख भस्म तथा मिश्री समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके खट्टी दहीमें

घोटें और फिर थोड़ी देर अंगारों पर पका कर १।-१। तोलेकी गुटिका बना लें ।

इनके सेवनसे पक्क और अपक्क, शूल युक्त एवं नवीन और पुराना अतिसार तथा संग्रहणी रोग अवश्य नष्ट हो जाता है।

(व्यवहारिक मात्रा—३ माशे ।)

(७०६६) विश्वेश्वरो रसः (१)

(भै. र. । वातर. ; रस. चि. म. । स्त. २ ; रसे. सा. सं. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; धन्व. । वातरक्ता.)

रसाद्दश विषात्पञ्च गन्धकाद्दश शोधितात् ।
तुत्थाद्दश पलाशस्य बीजेभ्यः पञ्च कारयेत् ॥
क्षुद्राश्वमारधुस्तूरकरहाटकनीलितः ।
दशकं दशकं कुर्याच्छोषयित्वा जटात्वचः ॥
दशकं दशकं दत्त्वा कुचिलाद्दश नूतनात् ।
भल्लातकाच्च दशकं चूर्णयित्वा भिषक्ततः ॥
सुदिने च बलिं दत्त्वा वैद्यः पूजापरायणः ।
रक्तिकैकमितं दद्यात् सहते यदि वा द्वयम् ॥
वातरक्तं ज्वरं कुष्ठं खरस्पर्शमसौख्यदम् ।
आजानुस्फुटितं हन्ति विषजं वास्थिनिःसृतम्॥
कुष्ठमष्टादशविधमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
विश्वेश्वरो रसो नाम विश्वनाथेन भाषितः ॥

शुद्ध पारद १० भाग, शुद्ध बछनाग ५ भाग, शुद्ध गंधक १० भाग, शुद्ध तूतिया १० भाग, ढाक (पलाश) के बीज ५ भाग, तथा कटेली, कनेर, धतूरा, अकरकरा और नील; इनकी जड़की सूखी हुई छाल दस दस भाग एवं शुद्ध नवीन कुचला और भिलावा १०-१० भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करें ।

मात्रा—१ से २ रत्ती तक ।

इसके सेवनसे वातरक्त, ज्वर, कुष्ठ, त्वचाका खुरदरापन, एवं उस वातरक्तका कि जो घुटनों तक फैल गया हो और जिसमें हड्डी निकल आई हो तथा अग्निमांद्य और अरुचिका नाश होता है।

(७०६७) विश्वेश्वरो रसः (२)

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

मृतसूतार्कतीक्ष्णञ्च तालं गन्धञ्च कट्फलम् ।
मेषशृङ्गी वचा शुण्ठी भार्गी पथ्या च बालकम् ।
धान्यकं मर्दयेत्तुल्यं पर्पटोत्थद्रवैर्दिनम् ।
मध्वे माषं लिहेत्क्षौद्रैः कफपित्तमदात्यये ॥
रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च ।
काकमाचीरसं चानु सैन्धवेन युतं पिबेत् ॥

पारद भस्म, ताम्र भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध गन्धक, कायफल, मेढासिंगी, बच, सोंठ, भरंगी, हर्र, सुगन्धबाला, और धनिया समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर एक दिन पित्तपापड़ेके रसमें खरल करें ।

मात्रा—१ माशा ।

इसे शहदके साथ सेवन करनेसे कफ पित्तज मदात्यय (और ज्वर) का नाश होता है ।

अनुपान—सेंधा नमक युक्त मकोयका क्वाथ ।

(७०६८) **विश्वेश्वरो रसः** (३)

(र. का. धे. । ज्वरा.)

रसगन्धककर्पूरत्र्यूषणं टङ्कणं विषम् ।
कपर्दिकाभस्म समं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
तुलसीरससंयुक्तं देयं शीतज्वरे ततः ।
दाहज्वरे सविषमे सन्निपाते तथैव च ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागा, शुद्ध बछनाग और कौड़ी भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर खरल करें।

इसे तुलसी पत्रके रसके साथ सेवन करनेसे शीत ज्वर, दाह ज्वर, विषम ज्वर और सन्निपात-का नाश होता है। इसका प्रभाव शीघ्रही प्रकट हो जाता है।

(**मात्रा**—४ रत्ती ।)

(७०६९) **विश्वेश्वरो रसः** (४)

(भै. र. ; र. चं. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

पारदं रसकं[1] गन्धं तुल्यांशं मर्दयेद्रसे ।
अश्वत्थजे त्र्यहं पश्चाद्रसे कोलकमूलजे ॥
निदिग्धिका रसे काकमाचिकाया रसे तथा ।
द्विगुञ्जं वा त्रिगुञ्जं वा गोक्षीरेण प्रदापयेत् ॥
रात्रिज्वरं निहन्त्याशु नाम्ना विश्वेश्वरो रसः ॥
(कोलकमूलजे इत्यत्र कानकमूलजे इत्यपि पाठः प्रचरति)

१ दरदमिति पाठान्तरम् ।

शुद्ध पारद, खपरिया (पाठान्तरके अनुसार हिंगुल) और शुद्ध गंधक समान भाग ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर ३ दिन अश्वत्थ (पीपल) की छालके रसमें खरल करें और फिर पीपला-मूलके क्वाथ, कटेलीके रस, और मकोयके रसमें घोट कर २-२ रत्ती या ३-३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे रात्रि-ज्वर नष्ट होता है।

(पीपलामूलके स्थानमें धतूरेकी जडके रसकी भावना भी प्रचलित है।)

(७०७०) **विश्वेश्वरो रसः** (५)

(भै. र. । हृद्रोगा.)

स्वर्णाभ्रलौहवङ्गानां रसगन्धकयोरपि ।
वैक्रान्तस्य च सङ्गृह्य भागांस्तोलकसम्मितान् ॥
पार्थस्य सलिलेनाथ भावयित्वा यथाविधि ।
रक्तिकैकप्रमाणेन विदध्याद्वटिकास्ततः ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम रसः फुफ्फुसजान् गदान् ।
हृद्रोगांश्च जयेत् सर्वान् संशयोऽत्र न विद्यते ॥

स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, वङ्ग भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक और वैक्रान्त भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर अर्जुनकी छालके रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे फुफ्फुस और हृदय सम्बन्धी रोग निस्सन्देह नष्ट हो जाते हैं।

(७०७१) विश्वोद्दीपकाभ्रम्

(र. रा. सु. ; भै. र. । अग्निमांद्य.)

अभ्रं निर्मलमारितं पलमितं चूर्णीकृतं यत्नत-
श्चव्यं चित्रकमिन्द्रसूरकनकं मालूरपत्रार्द्रकम् ।
मूलं पिप्पलिसम्भवं मधुरिका नीपोर्कमूलं पृथक्
चैषां सत्वपलैर्विमर्दितमिदं कर्षं क्षिपेत् टङ्कणम्॥
गुञ्जासम्मितमेतदेव वलितं तत्पारिभद्रद्रवं-
मन्दाग्निं चिरजातगुल्मनिचयं शूलाम्लपित्तं ज्वरम् ।
छर्दिं दुष्टमसूरिकामलसकं श्वासञ्च कासं तृषां
प्लीहानं यकृतं क्षयं स्वरहतिं कुष्ठमहारोचकम् ।
दाहं मोहमशेष दोषजनितं कृच्छ्रं सुदुर्नामक-
श्चामं वातविमिश्रितं नयनजं रोगं समुन्मूलयेत्॥
विश्वोद्दीपकनाम रोगहरणे प्रोक्तं पुरा शम्भुना
सर्वेषां हितकारकं गदवतां सर्वामयध्वंसनम् ॥

५ तोले अभ्रक भस्मको चव्य, चीता, इन्द्रजौ, मसूर, धतूरा, बेलपत्र, अद्रक, पीपलामूल, सौंफ, कदम्ब और आककी जड़के ५–५ तोले रसमें खरल करें और फिर उसमें १। तोला सुहागे-की खील मिला कर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

अनुपान—नीमका रस ।

इसके सेवनसे पुरानी मन्दाग्नि, गुल्म, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, छर्दि, दुष्ट मसूरिका, अलसक, श्वास, खांसी, तृषा, प्लीहा, यकृत्, क्षय, स्वरनाश, कुष्ठ, अरुचि, दाह, मोह, मूत्रकृच्छ्र, अर्श, आमवात और नेत्र रोगोंका नाश होता है ।

(७०७२) विषगुटिका

(ग. नि. । गुटिका. ४)

त्रिफला व्योषयष्ट्याह्व विषं तुल्यानि पेषयेत् ।
भृङ्गाम्बुना तु गुटिकाः कुर्याच्चणकसम्मिताः ॥
एकैकां वर्धयेत्तावदष्टावस्मान्न वर्धयेत् ।
आस्तिकेन कृतो योगो विजयेद्वातजान् गदान् ॥
अशीतिं विंशतिं श्लेष्मभवान्सप्त महाक्षयान् ।
अष्टादशैव कुष्ठानि सन्नमग्निं च दीपयेत् ॥

हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, मुलैठी और बछनाग; इनका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर भंगरेके रसमें घोट कर चनेके समान गोलियां बना लें ।

इनमेंसे प्रथम दिन एक गोली खावें और फिर प्रतिदिन १–१ गोली बढ़ाते रहें । जब ८ गोली तक पहुंच जाएं तो मात्रा न बढ़ावें और नित्य ८ गोली ही सेवन करते रहें ।

इनके सेवनसे ८० प्रकारके वातज रोग, बीस प्रकारके कफज रोग, ७ प्रकारके क्षय, १८ प्रकारके कुष्ठ और अग्निमांद्यका नाश होता है ।

(७०७३) विषमज्वरान्तकलौहम् (१)

(भै. र. ; र. रा. सुं. ; धन्व. ; रसें. सा. सं. । ज्वरा.)

पारदं गन्धकं तुल्यं सूतार्द्धं जीर्णताम्रकम् ।
ताम्रतुल्यं माक्षिकञ्च लौहं सर्वसमं नयेत् ॥
जयन्त्याः स्वरसेनैव कोकिलाक्षरसेन च ।
वासकार्द्रपर्णरसैः पञ्चधा च विमर्दयेत् ॥
पृथक्कलायमाना तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
विषमज्वरान्तनामायं विषमज्वरनाशनः ॥

वह्निदीप्तिकरं हृद्यः प्लीहगुल्मविनाशनः ।
चक्षुष्यो बृंहणो वृष्यो श्रेष्ठः सर्वरुजापहः ॥

शुद्ध पारद और गन्धक २-२ भाग, ताम्र भस्म और स्वर्ण माक्षिक भस्म १-१ भाग तथा लोह भस्म ६ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर कज्जली बनावें और फिर उसे जयन्ती, तालमखाने, बासे (अडूसे) अदरक और पानके रसकी ५-५ भावना दे कर मटरके समान गोलियां बना लें।

यह रस विषम ज्वर नाशक, अग्निदीपक, हृद्य, चक्षुंष्य, बृंहण, वृष्य, और प्लीहा तथा गुल्म नाशक है।

(७०७४) विषमज्वरान्तकलौहम् (२)

(पुट पक्व)

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. । ज्वरा.)

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलीम् ।
पर्पटीरसवत्पाच्यं सूताङ्घ्रिहेमभस्मकम् ॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं तथा ।
वङ्गकं गैरिकश्चैव प्रवालश्च रसार्द्धकम् ॥
मुक्ताशङ्खं शुक्तिभस्म प्रदेयं रसपादिकम् ।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गुससैन्धवम् ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा ॥
सन्ततं सतताख्यश्च विषमज्वरनाशनम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासं च तत्र तत् ।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं बलवर्णप्रसादनम् ।
विषमज्वरान्तकं नाम्ना धन्वन्तरिप्रकाशितम् ॥

हिङ्गुलोत्थ पारद २ तोले और शुद्ध गंधक २ तोले ले कर कज्जली बनावें और फिर रस पर्पटीके समान उसका पाक करके उसमें आधा तोला स्वर्ण भस्म; ४-४ तोले लोह भस्म, ताम्र भस्म और अभ्रक भस्म; १-१ तोला वङ्ग भस्म, गेरु और प्रवाल (मूंगा) भस्म एवं आधा आधा तोला मोती भस्म, शंख भस्म और शुक्ति (सीप) भस्म मिला कर सबको एकत्र खरल करें और पानीसे घोट कर उसका गोला बना कर उसे दो शुक्तियों में बन्द करके सम्पुट बनावें और उस पर कपर-मिट्टी करके सुखा कर लघुपुटमें स्वेदित करें। (अग्नि बहुत मन्द होनी चाहिये नहीं तो औषध निर्वीर्य हो जायगी।) तदनन्तर उसके स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२ रत्ती।

अनुपान—पीपल, हींग और सेंधानमकका चूर्ण।

इसके सेवनसे आठ प्रकारके ज्वर, प्लीहा, यकृत, गुल्म, सन्तत, सततादि विषमज्वर, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, कास, श्वास, मूत्रकृच्छ्र और अतिसारका नाश होता तथा अग्नि दीप्त एवं बल वर्णकी वृद्धि होती है।

(७०७५) विषमज्वरान्तकलोहम्

(३) (बृहद्)

(रसे. सा सं. । ज्वरा.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम् ।
मृतसूतं हेमतारं लौहमभ्रञ्च ताम्रकम् ॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम् ।
सुवर्णमाक्षिकञ्चापि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥
निर्गुण्डी नागवल्ली च काकमाची स पर्पटी ।
त्रिफला कारवेल्लश्च दशमूली पुनर्नवा ॥
गुडूची वृषकश्चापि सभृङ्गकेशराजकः ।
एतेषाञ्च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥
गुञ्जामानां वटीं कुर्याच्छास्त्रवित्कुशलो भिषक् ।
पिप्पली गुडकेनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम् ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ।
अभिघाताभिचारोत्थं जीर्णज्वरं विशेषतः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक; पारद भस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, हरताल सत्व, वंग भस्म, मोती भस्म, प्रवाल (मूंगा) भस्म और स्वर्ण माक्षिक भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर संभालु, पान, मकोय, गोपीचन्दन, त्रिफला, करेला, दशमूल, पुनर्नवा, गिलोय, बासा, भंगरा और काला भंगरा इनके स्वरस या काथकी पृथक् पृथक् ३–३ भावना दे कर १–१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इन्हें पीपलके चूर्ण और गुड़के साथ सेवन करनेसे साधारणतः समस्त प्रकारके ज्वरोंका और विशेषतः विषम ज्वरका नाश होता है ।

(७०७६) विषमज्वरारि रसः

(र. का. धे. । ज्वरा.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं ताम्रं लोहं मनःशिलाम् ।
समभागं विमर्द्याथ भावयेत्तुलसीदलैः ॥
कारवल्लीभृङ्गराजधूर्तनीरैर्विमर्दयेत् ।
अजामूत्रेण दातव्यो वल्लो विषमशान्तये ॥
विषमारीति नामायं विषमान्मूलनक्षमः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म, लोह भस्म और शुद्ध मनसिल समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे तुलसी पत्र, करेले, भंगरे और धतूरेके रसकी पृथक् पृथक् एक एक भावना दे कर ३–३ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इसे बकरीके मूत्रके साथ सेवन करनेसे विषमज्वर नष्ट होता है।

(७०७७) विषमारणम् (१)

(र. मं. ; रसे. सा. सं. ; आ. वे. प्र.)

समटङ्कणकं पिष्टं तद्विषं मृतमुच्यते ।
योजयेत् सर्व रोगेषु न विकारं करोति हि ॥

शुद्ध बछनागमें समान भाग सुहागा मिला कर खरल कर लेनेसे विष मर जाता है और हानि नहीं पहुंचाता ।

(७०७८) विषमारणम् (२)

(आ. वे. प्र. । अ. ४ ; यो. र. ; वृ. यो. त. । त. ४३)

तुल्येन टङ्कणेनैव द्विगुणेनोषणेन च ।
विषं संयोजितं शुद्धं मृतं भवति सर्वथा ॥

शुद्ध बछनागमें उसके बराबर सुहागा और २ गुना काली मिर्चका चूर्ण मिला कर खरल कर लेनेसे विष मर जाता है ।

विषमारी रसः (महा)

" महा विषमारी रसः " देखिये ।

(७०७९) विषयोगः

(वृ. यो. त. । त. १२८)

गोमूत्रेण विषं घृष्ट्वा सशूले श्रवणे क्षिपेत् ।
सद्य एव स्रवः शूलः कण्डूः पीडा च शाम्यति ॥

शुद्ध बछनागको गोमूत्रमें घिस कर कानमें डालनेसे कर्णशूल, कर्णस्राव और कानकी खाजका शीघ्रही नाश हो जाता है ।

(७०८०) विषरक्षणम्

(आ. वे. प्र. । अ. ४)

रक्तसर्षपतैलेन लिप्ते वाससि धारयेत् ।
विषं शुद्धं प्रयत्नेन नान्यत्र गुणहानितः ॥

शुद्ध विषको सरसोंके तेलमें भीगे हुवे कपड़ेमें रखनेसे उसके गुण स्थिर रहते हैं ।

(७०८१) विषवज्रपातो रसः (१)

(र. का. धे. । विषा. ; वृ. यो. त. । त. १४५)

रसो[1] निशा टङ्कणमूषणानि
तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः ।
रसेन पिष्टो विषवज्रपातो
रसो भवेत्सर्वविषोपहन्ता ॥
निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो
नृमूत्रयुक्तेन च कालजुष्टम् ।
जटाविषेणाकुलितं तथान्यै-
र्दुष्टैर्विषैश्चूर्णितमातुरं च ॥

१. रङ्गमिति पाठान्तरम् ।

पारद भस्म (पाठान्तरके अनुसार वंग भस्म), हल्दीका चूर्ण, सुहागेकी खील, काली मिर्चका चूर्ण और तूतिया समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर देवदाली (बिंडाल) के रसमें खरल करके सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३॥। माशे ।

अनुपान—मनुष्यका मूत्र ।

इसे पिलानेसे स्थावर और जङ्गम भयंकरसे भयंकर विष भी नष्ट हो जाता है ।

(७०८२) विषवज्रपातो रसः (२)

(र. चं. ; भै. र. ; धन्व. ; रसे. सा. सं. । विषा.)

निशां सटङ्कां सजातिकोषं
तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः ।
रसेन पिष्ट्वा विषवज्रपातो
रसो भवेत्सर्वविषापहन्ता ॥
निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो
नृमूत्रयोगेन च कालदष्टम् ।
जटाविषेणाकुलितं तथान्यै-
र्विषैश्च यं हन्ति तथाऽऽतुरं च ॥

हल्दी, सुहागेकी खील, जावत्री और तूतिया समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके देवदाली (बिंडाल) के रसमें घोट कर, सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—३॥। माशे ।

अनुपान—मनुष्यका मूत्र ।

इसे पिलानेसे स्थावर और जङ्गम समस्त प्रकारके भयंकरसे भयंकर विष भी नष्ट हो जाते हैं ।

(७०८३) विषशोधनम् (१)

(आ. वे. प्र. । अ. ४)

विषभागांश्चणकवत्स्थूलान् कृत्वा तु स्वेदयेत्।
गोदुग्धे घटिकाः पञ्च शुद्धिमायाति तद्विषम् ॥
न प्रोक्तं शोधनं यस्य विषस्योपविषस्य वा।
गोदुग्धे स्वेदनं तस्य कर्तव्यं शुद्धिकारकम् ॥

बछनागके चनेके समान छोटे छोटे टुकड़े करके उन्हें ५ घड़ी तक गोदुग्धमें स्वेदित करें। इस प्रकार विष शुद्ध हो जाता है।

जिस विष या उपविषका शोधन ग्रन्थोंमें न लिखा हो उसे गोदुग्धमें स्वेदित करलेना चाहिये। इससे वह शुद्ध हो जाता है।

(७०८४) विषशोधनम् (२)

(रसे. सा. सं.)

अथवा त्रैफले क्वाथे विषं शुद्ध्यति पाचितम्।
दोलायां त्रिफला क्वाथे छागीक्षीरे च पाचितम्॥

विषको दोलायन्त्र विधिसे त्रिफलाके क्वाथ और बकरीके दूधमें पकानेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(७०८५) विषशोधनम् (३)

(रसे. सा. सं.)

गोमूत्रपूर्णपात्रे च दोलायन्त्रे विषं पचेत्।
दशतोलकमानेन चादौ वैद्यो दिवानिशम् ॥

१० तोले बछनागको (टुकड़े करके) दोला यन्त्र विधिसे २४ घण्टे गोमूत्रमें स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

(७०८६) विषशोधनम् (४)

(रसे. सा. सं. ; र. मं. ; आ. वे. प्र. ; यो. र. ; बृ. यो. त. । त. ४३)

विषभागांश्चणकवत्स्थूलान्कृत्वा तु भाजने।
तत्र गोमूत्रकं दत्त्वा प्रत्यहं नित्यनूतनम् ॥
शोषयेत्त्रिदिनादूर्ध्वं धृत्वा तीव्रातपे ततः।
प्रयोगेषु प्रयुञ्जीत भागमानेन तद्विषम् ॥

बछनागके चनेके समान छोटे छोटे टुकड़े करके उन्हें (कांच, चीनी या मिट्टीके पात्रमें) गोमूत्रमें भिगो दें और ३ दिन तक प्रतिदिन मूत्र बदलते रहें। तदनन्तर उसे तेज धूपमें सुखा लें। इस प्रकार विष शुद्ध हो जाता है।

(७०८७) विषादिगुटिका

(र. र. स. । उ. अ. १९)

विषशुल्वरसव्योषगन्धकानां पलं पलम्।
पलद्वयं हरीतक्याश्चित्रकस्य पलत्रयम् ॥
कौन्ती मुस्ता चतुर्जातं कर्षांशं च विचूर्णितम्।
त्रिगुणश्च गुडः कार्यो वटिका माषसम्मिता ॥
भक्षयेत्तां जराग्रस्तो महारोगैश्च पीडितः ॥

शुद्ध बछनाग, ताम्र भस्म, शुद्ध पारद, त्रिकुटा, और शुद्ध गंधक ५-५ तोले, हर्र १० तोले, चीतामूल १५ तोले तथा रेणुका, नागरमोथा, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर एवं इलायची १।-१। तोला ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियोंका चूर्ण मिला कर उसे सबसे ३ गुने गुडकी चाशनीमें मिला कर १।-१। माशेकी गोलियां बना लें।

ये गोलियां वृद्धोंके लिये अत्यन्त उपयोगी हैं और इस अवस्थामें होने वाले महारोगोंको नष्ट करती हैं।

विषूचिकाविजयरसः

(र. चं. । अजीर्णा.)

विध्वंस रसः प्र. सं. ७०५२ देखिये।

(७०८८) **विसर्पजित् रसः**

(र. र. स. । उ. अ. २०)

कान्तगन्धकतीक्ष्णाभ्रविषताप्यसमन्वितः।
वन्ध्याकर्कोटकीकन्दे पक्वः सूतो विसर्पजित्॥

कान्त लोह भस्म, शुद्ध गंधक, तीक्ष्ण लोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध बछनाग, और स्वर्ण माक्षिक भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके बांझककोड़ेकी जड़में भर दें और उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके पुट पाक करें। तदनन्तर उसके स्वांगशीतल होने पर निकालकर (ककोड़ेकी जड़ समेत) पीस लें।

इसके सेवनसे विसर्प नष्ट होना है।

(**मात्रा**--१ रत्ती।)

(७०८९) **विसूचीविध्वंसरसः**

(भै. र. । अग्निमांद्या.)

टङ्कणं माक्षिकं शुण्ठी पारदं गन्धकं विषम्।
गरलं समभागेन सर्वेषां हिङ्गुलं समम्॥
मर्दयेज्जम्बीरद्रावैर्वटी कार्या प्रयत्नतः।
श्वेतसर्षपतुल्या च मृतसंजीवनी तथा॥
विसूचीं नाशयत्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
त्रिदोषोत्थमतीसारं सर्वोपद्रवसंयुतम्॥

सुहागेकी खील, स्वर्ण माक्षिक, सोंठ, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शुद्ध बछनाग और अफीम १-१ भाग तथा शुद्ध हिंगुल सबके बराबर (७ भाग) ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके सरसोंके समान गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे विषूचिका और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त अतिसार शीघ्रही नष्ट हो जाता है।

पथ्य---दही भात।

(७०९०) **वीरचण्डेश्वरो रसः**

(र. रा. सु. ; र. र. । कुष्ठा.)

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्मविषं तथा।
वाकुची त्रिफला चूर्णं निम्बवह्निगुडूचिका॥
दिनं भृङ्गिद्रवैर्मर्द्यं वाकुच्याश्च कषायकैः।
भक्षयेल्लोहपात्रस्थं कर्षार्द्धं जिह्वकः प्रणुत्॥
वीरचण्डेश्वरो नाम्ना षण्मासात् सर्वकुष्ठजित्॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कान्त लोह भस्म, शुद्ध बछनाग एवं बाबची, त्रिफला, नीमकी छाल, चीतामूल और गिलोयका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर १-१ दिन भंगरे और बाबचीके रसमें घोट कर सुरक्षित रक्खें।

इसके सेवनसे ६ मासमें ऋष्यजिह्वक कुष्ठ नष्ट हो जाता है।

(७०९१) वीरभद्रभैरवरसः

(र. का. धे. । ज्वरा.)

सूतटङ्कणमाकल्लनवसारं च चित्रकम् ।
त्वक्केशरकणादीप्यं सुरपुष्पं हरीतकी ॥
त्रिवृच्छम्पाकसेहुण्डज्योतिष्मत्यर्कदन्तिजाः ।
एतन्मूलरजः सर्वं प्रति पञ्चविभागिकम् ॥
सर्वचूर्णस्य तुल्यं स्याल्लोहं लोहोऽयमीरितः ।
लिङ्गीद्रवारुणीदन्तीतुम्बीशम्पाकजैः फलैः ॥
चूर्णितैः क्वथितैर्लोहचतुर्थांशावशेषितैः ।
सर्वमेनं चूर्णलोहं तैलेनानेन भावयेत् ॥
अर्कसेहुण्डकम्पिल्लभल्लातकपलाशजैः ।
पारिजातकशम्पाकजयपालातसीभवैः ॥
फलैश्च शिग्रुजैर्दीप्यविषयुक्तैः समैः सरैः ।
अजाक्षीरेण संसिक्तैः शुष्कैस्तैलं समुद्धरेत् ॥
वीरभद्रेश्वरो नाम रसोऽयं भैरवाह्वयः ।
सर्वज्वरांश्च्छूलगुल्मोदरादीन्नाशयेद्भृशम् ॥

(१) रस सिन्दूर, सुहागेकी खील, अकरकरा, नवसादर, चीतामूल, दालचीनी, नागकेसर, पीपल, अजवायन, लौंग, हर्र, निसोत, अमलतासका गूदा, सेंड (सेहुंड–थूहर) की जड़, मालकंगनी, आककी जड़, और दन्तीमूल; इनका चूर्ण ५–५ भाग तथा लोहभस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करें ।

(२) शिवलिंगी, इन्द्रायणकी जड़, दन्तीमूल, कड़वी तूंबी और अमलतासका गूदा समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर बारीक कूटें और आठ गुने पानीमें पकावें एवं चौथा भाग शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उपरोक्त चूर्णमें उसके बराबर यह क्वाथ मिला कर खरल करें ।

(३) आकका दूध, थूहरका दूध, कमीला, भिलावा, ढाकके बीज, पारिजात (हारसिंगार), अमलतासके बीज, जमालगोटा, अलसी और सहंजनेके बीज, तथा अजवायन, बछनाग और सफेद मैनफलके बीज समान भाग ले कर सबको बकरीके दूधकी भावना दे कर सुखावें और फिर (पाताल यन्त्रसे) तेल निकाल लें । उपरोक्त औषधको इस तेलकी भावना दे कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे ज्वर, शूल, और गुल्मादिका नाश होता है ।

(७०९२) वीरभद्राख्यो रसः

(वृ. यो. त. । त. ५९ ; यो. त. । त. २० ; रसे. चि. म. । अ. ९ ; र. का. धे.)

त्र्यूषणं पञ्चलवणं शतपुष्पा द्विजीरकम् ।
क्षारत्रयं समांशेन चूर्णमेषां पलत्रयम् ॥
शुद्धसूतं मृतं चाभ्रं गन्धकं च पलं पलम् ।
आर्द्रकस्य रसैः खल्वे दिनमेकं विमर्दयेत् ॥
वीरभद्रो रसः ख्यातो माषैकः सन्निपातजित् ।
चित्रकार्द्रकसिन्धूत्थमनुपानं जलैः सह ॥
पथ्यं क्षीरोदनं देयं द्विवारं च रसो हितः ।

सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानमक, संचल (काला नमक), विड नमक, सामुद्र लवण, काच लवण, सोया, काला और सफेद जीरा, सज्जीखार, जवाखार और सुहागा समान भाग ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें । तदनन्तर यह चूर्ण १५ तोले, शुद्ध पारद ५ तोले, शुद्ध गंधक ५ तोले और अभ्रक भस्म ५ तोले ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधें मिला कर १

दिन अदरकके रसमें घोट कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—१। माशा।

(**व्यवहारिक मात्रा**—३ रत्ती।)

इसके सेवनसे सन्निपात नष्ट होता है।

अनुपान—चीता, अदरक और सेंधा समान भाग ले कर चूर्ण बनावें। रस खानेके पश्चात् यह चूर्ण पानीके साथ पीना चाहिये।

(**मात्रा**—२-२॥ माशे।)

(७०९३) वीरभद्राभ्रकः

(भै. र. ; र. रा. सुं । अग्निमां.)

अभ्रकं पुटसहस्रमारितं
कर्षयुग्ममतिनिर्मलीकृतम्।
वासराणि नवतिं विमर्दितं
चित्रकस्वरससाधुसिक्तकम् ॥
शृङ्गवेररसमर्दिता वटी
कारिता सकलरोगनाशिनी।
भक्षिता भुजगवल्लिपत्रकैः
शृङ्गवेरशकलेन वा पुनः॥
वह्निमान्द्यमभिनाश्य सत्वरं
कारयेत् प्रखरपावकोत्करम्।
श्वासकासवमिशोथकामला
प्लीहगुल्मजठरारुचिभ्रमान् ॥
रक्तपित्तयकृदम्लपित्तकं
शूलकोष्ठजगदान् विसूचिकाम्।
आमवातबहुवातशोणितं
दाहशीतबलह्रासकार्श्यकम् ॥
विद्रधिं ज्वरगरं शिरोगदं
नेत्ररोगमखिलं हलीमकम्।
हन्ति वृष्यतममेतदभ्रकं
वीरभद्रमतिबल्यमुत्तमम् ॥
भक्षितं विविधभक्ष्यमागलं
काष्ठसङ्कमपि भस्मतां नयेत् ॥

२॥ तोले सहस्रपुटी अभ्रक भस्मको ९० दिन चीतेके स्वरसमें खरल करें और फिर अदरकके रसमें घोट कर (१-१ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इनमेंसे नित्य प्रति १ गोली पानमें रखकर या अदरकके टुकड़ेके साथ सेवन करनेसे अग्निमांद्यका नाश हो कर जठराग्नि शीघ्र ही अत्यन्त तीव्र हो जाती है।

इसके अतिरिक्त यह रस श्वास, कास, वमन, शोथ, कामला, प्लीहा, गुल्म, उदर रोग, अरुचि, भ्रम, रक्तपित्त, यकृत्, अम्लपित्त, शूल, विसूचिका, आमवात, वातरक्त, दाह, शीत, निर्बलता, कृशता, विद्रधि, ज्वर, गरविष, शिरोरोग, समस्त नेत्ररोग और हलीमकको भी नष्ट करता है।

यह अत्यन्त वृष्य और बलकारक है तथा गरिष्ठसे गरिष्ठ पदार्थोंकी भारी मात्राको भी शीघ्रही पचा देता है।

(७०९४) वीरविक्रमो रसः

(वृ. यो. त. । त. ११८)

पारदं च पलान्यष्टौ गन्धकं तालकं शिला।
त्रितयं पारदं साम्यं मर्दितं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥
काचकूप्यां च पूर्णेन वालुकायन्त्रपाचितम्।
त्रिदिनं तमहोरात्रं पाकशुद्धं विचक्षणः ॥

स्वाङ्गशीतलमादाय एकवारं सुपूजयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रयोक्तव्यं शर्करात्र्योषजीरकम् ॥
लवङ्गं धान्यकं चाऽऽर्द्रं निर्गुण्डी ग्रन्थिकं वरा।
तथा पत्रं नागवल्ली गुडूची माक्षिकं गुडम् ॥
अनुपानं सदा सेवेद्विषमं सान्निपातिकम् ।
रतिदोषं महाशीतं व्रणं नानाविधं हरेत् ॥
वीरविक्रमनामाऽयं काश्यपेन हि भाषितः ॥

शुद्ध पारद ४० तोले तथा शुद्ध गन्धक, हरताल और मनसिल मिलित ४० तोले ले कर सबको एकत्र खरल करके आतशी शीशीमें भरें और ३ दिन बालुका यन्त्रमें पकावें एवं स्वांग शीतल होने पर औषधको निकाल कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

अनुपान—खांड सोंठ, मिर्च, पीपल, जीरा, लौंग, धनिया, अद्रक, संभालु, पीपलामूल, त्रिफला, तेजपात, पान, गिलोय और गुड़ समान भाग ले कर चूर्ण बनावें । औषध खानेके पश्चात् यह चूर्ण शहदमें मिला कर चाटना चाहिये ।

इसके सेवनसे विषम ज्वर, सन्निपात ज्वर, रति दोष, शीत और व्रणादि रोगोंका नाश होता है ।

(७०९५) वृकोदरी वटी.

(र. र. स. । उ. अ. २१ ; र. चं. । वाता.)

सूतगन्धकतीक्ष्णाभ्रैः सताप्यैः समभागिकैः ।
रसांशमपरं सर्वं षट्कोलं जीरकद्वयम् ॥
सौवर्चलंससिन्धूत्थं विडङ्गं च हरीतकी ।
अम्लवेतसकं सर्वं बीजपूराम्बुमर्दितम् ॥
गुटिकास्तेन कल्केन कार्याः कोलास्थिमात्रकाः ।
योगिन्या बहुधातिनामयुतया त्रैलोक्यविख्यातया ॥
निर्दिष्टा हि वृकोदरीति गुटिका सोष्णाम्बुना सेविता ।
निःशेषानिल दोषशोषजरुजः श्लेष्मामरोगोद्भवम् ॥
मन्दाग्निं ग्रहणीं चतुर्विधमहाऽजीर्णं च तूर्णं जयेत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, तीक्ष्ण लोह भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल, सफेद और काला जीरा, संचल (काला नमक), सेंधा नमक, बायबिडंग, हर्र और अम्लबेत समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें घोट कर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें ।

इन्हें उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे समस्त वातज रोग, शोष, कफ रोग, आमजनित विकार, अग्निमांद्य, ग्रहणी और चार प्रकारका अजीर्ण नष्ट होता है ।

(७०९६) वृद्धचिन्तामणी रसः

(र. रा. सु. । वातव्या.)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं दरदं टङ्कणं शिवा ।
त्र्यूषणं सैन्धवं जातीफलार्ककरहाटकम् ॥
पारसीकयवानी च जीरकं चाजमोदकम् ।
शृङ्ग्यश्वगन्धा श्रीपुष्पं समभागं विचूर्णयेत् ॥

भावना त्रितयं दद्याद्भृङ्गराजरसेन च ।
नागवल्ली रसेनैव तथार्द्रकरसैस्त्रिधा ॥
ततः शुष्कं विधायाथ यथारोगे प्रयोजयेत् ।
सामं निरामं विज्ञाय दद्याद्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥
महावातेऽपतन्त्रे च सर्वगात्रेषु शून्यताम् ।
सर्वज्वरहरः श्रेष्ठः सन्निपातांस्त्रयोदश ॥
हन्ति शीतं तथा स्वेदं श्वासं च प्रबलं कफम् ।
प्रलापं चातिनिद्रां च रोमहर्षारुचिं तथा ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, शुद्ध बछनाग, शुद्ध हिंगुल, सुहागेकी खील, हर्रका चूर्ण, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधा नमक, जायफल, ताम्र भस्म, स्वर्ण भस्म, खुरासानी अजवायन, जीरा, अजवायन, काकड़ासिंगी, असगन्ध और लौंग; इनका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको भंगरे, पान और अदरकके रसकी ३-३ भावना दे कर सुखा कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा—४ रत्ती ।

इसके सेवनसे महावात, अपतन्त्रक, शरीरकी शून्यता, समस्त प्रकारके ज्वर, १३ प्रकारके सन्निपात, शीत, स्वेद, श्वास, प्रबल कफ, प्रलाप, अति निद्रा, रोम हर्ष और अरुचि आदिका नाश होता है ।

वृद्धतालेश्वररसः (१)

प्र. सं. २६५५ तालकेश्वरो रसः (१६) देखिये ।

वृद्धतालेश्वररसः (२)

(र. चि. म. । अ. ९)

प्र. सं. २६५६ "तालकेश्वरो रसः" देखिये ।

(७०९७) वृद्धदाराद्यलोहः

(रसे. सा. सं. ; र. र. ; धन्व. ; र. रा. सु. । आमवाता. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

वृद्धदारत्रिवृद्दन्ती गजपिप्पली मानकैः[१] ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकन्त्वयः ॥
सर्वानेव गदान्हन्ति केशरी करिणो यथा ॥

विधारामूल, निसोत, दन्तीमूल, गजपीपल, मानकन्द, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, बायबिड़ंग, नागरमोथा और चीता; इनका चूर्ण १-१ भाग तथा लोहभस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करें ।

इसके सेवनसे आमवात-जनित समस्त रोग नष्ट होते हैं ।

(मात्रा—३ रत्ती ।)

(७०९८) वृद्धनवरसादिगुटिका

(यो. चि. म. । अ. ३)

विडङ्गं त्रिफला व्योषं चातुर्जातकचित्रकम् ।
स्वर्णमाक्षी तवाक्षीरं जीमूतं वंशलोचनम् ॥
पक्वायसं पक्वलोहं शर्करापि समन्विता ।
गुटिका मधुसंयुक्ता प्रातरेकां तु भक्षयेत् ॥
प्रमेहशोफारुचिरामवातं सकामलं पाण्डुगदं सकुष्ठम् ।

१ दन्तीकरिकर्णाग्निमानकैरिति पाठान्तरम् ।

श्वासं च कासं च निहन्ति गुल्मं दुर्नामकं
नाशयते च सद्यः ॥

बायबिड़ंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, चीता, स्वर्णमाक्षिक भस्म, तबाखीर, नागरमोथा, बंसलोचन, तीक्ष्ण लोह भस्म, सप्त धातु भस्म, (स्वर्ण भस्म, ताम्र भस्म, पित्तल भस्म, चांदी भस्म, सीसा भस्म, बंग भस्म, जस्त भस्म) और खांड समान भाग ले कर सबके चूर्णको शहदमें मिला कर (४–४ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इन्हें नित्य प्रति प्रातःकाल सेवन करनेसे प्रमेह, शोथ, अरुचि, आमवात, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, श्वास, कास, गुल्म और अर्शका नाश होता है।

(७०९९) बृहन्नवायसचूर्णम्

(र. रा. सु. । पाण्डु.)

माक्षीकं त्रिफला त्रिकं
त्रिकटुकं मुस्ता चतुर्जातकम् ।
जन्तुघ्नं मगधाजटा
सुरतरुद्राक्षा निशे द्वे शटी ॥
कर्षांशानि यवानि वह्नि
बदराजाजीद्वयाम्भोरुहैः ।
लोहादर्द्धपलं सिता
द्विपलिकां किट्टन्तु सर्वार्द्धतः ॥
चूर्णं सूक्ष्मतमं विधाय
मथितेनालोड्य वा माक्ष्यते ।
क्षौद्रेणानिलजान् रुज-
स्तु सकलाः श्वासप्रसेकामयान् ॥
शूलश्लीपदविद्रधि-
श्च जठरामर्शोंसिमन्दाग्निताः ।
हन्यादामसमीरपाण्डु
निचयं कासं क्षयं मेहजित् ॥
एतद्बृहन्नवायसाख्य-
ममृतं श्रीभोजभेडोवदत् ॥

स्वर्ण माक्षिक भस्म, हर्र, बहेड़ा, आमला, गोखरु, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, बायबिड़ंग, पीपलामूल, देवदारु, मुनक्का, हल्दी, दारुहल्दी और कचूर; इनका चूर्ण १।–१। तोला, अजवायन, चीता, बेर, सफेद और काला जीरा तथा कमलका चूर्ण और लोह भस्म २॥–२॥ तोले एवं मिश्री १० तोले और मण्डूर भस्म सबसे आधी ले कर यथा विधि चूर्ण बनावें।

इसे मथित (कपड़ेसे छने हुवे निर्जल दही) या शहदके साथ सेवन करनेसे समस्त वातज रोग, श्वास, प्रसेक, शूल, श्लीपद, विद्रधि, उदर रोग, आम, अर्श, अग्निमांद्य, आमवात, पाण्डु, कास, क्षय और प्रमेहका नाश होता है।

(**मात्रा**—६ रत्ती ।)

बृहत्पुष्पधन्वारसः

(यो. र.)

प्र. सं. ४४२६ "**पुष्पधन्वा रसः**" देखिये।

वृद्ध विद्याधराभ्रकम्

(र. रा. सु.)

प्र. सं. ७०४७ देखिये

(७१००) वृद्धिनाशनरसः

(र. चं. । अन्त्रवृद्धि.)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं हेममाक्षिकम् ।
पथ्यारसेन त्रिदिनं रुबुतैलेन वासरम् ॥
मर्दितं सिद्धिमायाति रसेन्द्रो वृद्धिनाशनः ॥

शुद्ध पारद और गन्धक १-१ भाग और स्वर्ण माक्षिक भस्म ४ भाग, ले कर सबको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और फिर उसे ३ दिन हर्रके क्वाथमें तथा १ दिन अण्डीके तेलमें खरल करके सुरक्षित रक्खें ।

(**मात्रा**—२ रत्ती)

इसके सेवनसे वृद्धि रोग (अन्त्र वृद्धि) का नाश होता है ।

(७१०१) वृद्धिबाधिकावटिका

(भै. र. । वृद्धच. ; वै. र. । अण्डवृद्धि. ; भा. प्र.)

शुद्धसूतं तथा गन्धं मृतान्येतानि योजयेत् ।
लोहं वङ्गं तथा ताम्रं कांस्यञ्चाथ विशोधितम् ॥
तालकं तुत्थकञ्चापि तथा शङ्खवराटकम् ।
त्रिकटु त्रिफला चव्यं विडङ्गं वृद्धदारकम् ॥
कर्चूरं मागधीमूलं पाठां हबुषां वचाम् ।
एलाबीजं देवकाष्ठं तथा लवणपञ्चकम् ॥
एतानि समभागानि चूर्णयेदथ कारयेत् ।
कषायेण हरीतक्या वटिकां टङ्कसम्मिताम् ॥
एकां तां वटिकां यस्तु निर्गिलेद् वारिणा सह
अन्त्रवृद्धिरसाध्याऽपि तस्य नश्यति सत्वरम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, वंग भस्म, ताम्र भस्म, कांसी भस्म, शुद्ध हरताल, शुद्ध तूतिया, शंख भस्म, कौड़ी भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, चव्य, बायबिडंग, विधारा मूल, कचूर, पीपलामूल, पाठा, हपुषा, बच, इलायचीके बीज, देवदारु, सेंधानमक, काला नमक (संचल), विड लवण, सामुद्र लवण और काच लवण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धक-की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओष-धियोंका चूर्ण मिला कर हर्रके क्वाथमें घोट कर ५-५ माशेकी गोलियां बना लें ।

(**व्यवहारिक मात्रा**—३-४ रत्ती ।)

इन्हें पानीके साथ सेवन करनेसे असाध्य अन्त्रवृद्धि भी शीघ्रही नष्ट हो जाती है ।

(७१०२) बृहच्चन्द्रामृतरसः

(रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. ; भै. र. । राजय.)

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम् ।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणः ॥
कर्पूरं शाणकं दद्यात्स्वर्णं तोलकसम्मितम् ।
ताम्रञ्च तोलकं दद्याद्विशुद्धं मारितं भिषक् ॥
लौहं कर्षं क्षिपेत्तत्र वृद्धदारकजीरकम् ।
विदारी शतमूली च क्षुरकञ्च बला तथा ॥
मर्कटचतिबला चैव जातीकोषफले तथा ।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतस्वर्जरसन्तथा ॥

शाणभागं समादाय चैकीकृत्य प्रयत्नतः ।
मधुना मर्दयेत्तावद्यावदेकत्वमागतम् ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ।
भक्षयेद्वटिकामेकां पिप्पलीमधुना सह ॥

शुद्ध पारद और गन्धक १।-१। तोला, अभ्रक भस्म २॥ तोले, कपूर ३॥। माशे, स्वर्ण भस्म ७॥ माशे, ताम्र भस्म ७॥ माशे, लोह भस्म १। तोला तथा विधारामूल, जीरा, विदारीकन्द, शतावर, तालमखाना, खरैटी, कौंचके बीज, कंघी, जायफल, जावत्री, लौंग, भांगके बीज और सफेद राल; इनका चूर्ण ३॥।-३॥। माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर शहदके साथ अच्छी तरह खरल करके ४-४ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे प्रति दिन १-१ गोली पीपलके चूर्ण और शहदके साथ सेवन करनेसे क्षयका नाश होता है ।

बृहच्चन्द्रोदयमकरध्वजः

(पूर्णचन्द्रोदयो रसः)

प्र. सं. १९०८ चन्द्रोदयो रसः (५) देखिये ।

(७१०३) बृहच्चिन्तामणिरसः

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

रसगन्धकलोहानि ताम्रं तारं हिरण्यकम् ।
हरितालं खर्परञ्च कांस्यं वङ्गञ्च विद्रुमम् ॥
मुक्तामाक्षिककाशीशं शिला टङ्कणकं समम् ।
कर्पूरञ्च समं दत्त्वा भावना सप्तसप्तकम् ॥
भार्ङ्गी वासा च निर्गुण्डी नागवल्ली जयन्तिका ।
कारवेल्लं पटोलञ्च शक्राशनं पुनर्नवा ॥
आर्द्रकञ्च ततो दद्यात्प्रत्येकं वारसप्तकम् ।
चिन्तामणिरसो नाम सर्वज्वरविनाशनः ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ॥
कासं श्वासं तथा शोथं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, ताम्र भस्म, चांदी भस्म, स्वर्ण भस्म, शुद्ध हरताल, खपरिया, कांसी भस्म, बंग भस्म, प्रवाल (मूंगा) भस्म, मोती भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध कसीस, शुद्ध मनसिल, सुहागेकी खील और कपूर समान भाग ले कर प्रथम पारे गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर भरंगी, बासा (अडूसा), संभालु, पान, जयन्ती, करेला, पटोल (परवल), भांग, पुनर्नवा (बिसखपरा) और अदरकके रसकी पृथक् पृथक् सात सात भावना दे कर (२-२ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे वातज, पितज, कफज, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम और धातुगत आदि हर प्रकारके ज्वर तथा कास, श्वास, शोथ, पाण्डु, हलीमक, प्लीहा, अग्रमांस और यकृत् रोगोंका नाश होता है ।

बृहच्चूडामणिरसः

प्र. सं. १९४० चूडामणि रसः (बृहत्) देखिये ।

(७१०४) बृहज्जीरकादिमोदकः

(भै. र. । ग्रहणी.)

जीरकं कृष्णजीरश्च कुष्ठं शुण्ठी च पिप्पली।
मरिचं त्रिफला त्वक् च पत्रमेला च केशरम् ॥
शुभा लवङ्गं शैलेयं चन्दनं श्वेतचन्दनम् ।
काकोली क्षीरकाकोली जातीकोषफले तथा ॥
यष्टी मधूरिका मांसी मुस्तं सञ्चलकं शटी ।
धन्याकं देवताडश्च मुरा द्राक्षा नखी तथा ॥
शतपुष्पा पद्मकश्च मेथी च सुरदारु च ।
सजलं नालुका चैव सैन्धवं गजपिप्पली ॥
कर्पूरं वनिता चैव कुन्दरखोटी समांशिकम् ।
अभ्रवङ्गकलौहानां द्विभागं तत्र दापयेत् ॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
सर्वचूर्णसमं देयं भृष्टजीरस्य चूर्णकम् ॥
सिता द्विगुणिता देया मोदकं परिकल्पयेत् ।
घृतेन मधुना मिश्रं मोदकश्च भिषग्वरः ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय यथादोषबलाबलम् ।
गव्यं सशर्करश्चैव अनुपानं प्रयोजयेत् ॥
अशीतिं वातजान् रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान्
सर्वांस्तान्नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
नानावर्णमतीसारं विशेषादामसम्भवम् ।
शूलमष्टविधं हन्ति अर्शोरोगं चिरोद्भवम् ॥
जीर्णज्वरश्च सततं विषमज्वरमेव च ।
स्त्रीणाश्चैवानपत्यानां दुर्बलानाश्च देहिनाम् ॥
पुष्पकृत् पुत्रकृच्चैव बलवर्णकरं परम् ।
सूतिकारोगमत्युग्रं नाशयेन्नात्र संशयः ॥
प्रदरं नाशयत्याशु सूर्यस्तममिवोदितः ।
दाहं सर्वाङ्गिकश्चैव वातपित्तोत्थितश्च यत् ॥
अयं सर्वगदोच्छेदी जीरकाद्यो हि मोदकः ॥

ज़ीरा, काला ज़ीरा, कूठ, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, बंसलोचन, लौंग, छरीला, सफेद चन्दन, काकोली, क्षीरकाकोली, जावित्री, जायफल, मुलैठी, सौंफ, जटामांसी, नागरमोथा, सञ्चल नमक, कचूर, धनिया, देवताड़ (देवदाली) मुरामांसी, मुनक्का, नखी, सोया, पद्माक, मेथी, देवदारु, सुगन्धबाला, नालुका, सेंधा नमक, गजपीपल, कपूर, रेणुका और कुन्दखोटी (शल्लकी वृक्षका निर्यास); इनका चूर्ण १-१ भाग एवं अभ्रक भस्म, वंग भस्म और लोह भस्म २-२ भाग तथा इन सबके बराबर भुने हुवे ज़ीरेका चूर्ण ले कर सबको एकत्र मिलावें और इस समस्त चूर्णको इससे दो गुनी खांडकी चाशनीमें मिला कर उसमें थोड़ा थोड़ा घी और शहद मिलावें तथा मोदक बना कर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें प्रातःकाल मिश्रीयुक्त गोदुग्धके साथ सेवन करनेसे समस्त वातज और पित्तज रोग, नाना वर्णवाला अतिसार, विशेषतः आमातिसार, आठ प्रकारका शूल, पुरानी अर्श, सतत जीर्णज्वर, विषम ज्वर, उग्र सूतिका रोग, प्रदर और हर प्रकारकी दाहका शीघ्रही नाश हो जाता है तथा दुर्बल और सन्तान हीन स्त्रियोंको पुत्रप्राप्ति होती है।

(७१०५) बृहज्ज्वरचूडामणिरसः

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

सुवर्णसिन्दूरं स्वर्णं लोहं तारं मृगाङ्कजम् ।
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गश्च त्रिकण्टकम् ॥
कर्पूरं गगश्चैव चोचं मुसलि तालकम् ।

प्रत्येकं कर्षमानन्तु तुरङ्गश्च द्विकार्षिकम् ॥
विद्रुमं भस्मसूतञ्च मौक्तिकं माक्षिकं तथा ।
राजपट्टं शिखिग्रीवं सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ॥
खल्ले तु चूर्णमादाय भावयेत्परिकीर्तितैः ।
निर्गुण्डी फञ्जिका वासा रविमूलं त्रिकण्टकैः ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥

स्वर्ण सिन्दूर, स्वर्ण भस्म, लोह भस्म, चांदी भस्म, कस्तूरी, जायफल, जावत्री, लौंग, गोखरु, कपूर, अभ्रक भस्म, दालचीनी, मूसली और शुद्ध हरताल १।–१। तोला तथा शुद्ध गन्धक, प्रवाल भस्म, पारद भस्म, मोती भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म, राजपट्ट (चुम्बक) भस्म एवं शुद्ध तूतिया २॥–२॥ तोले ले कर सबको एकत्र खरल करके संभाल्ल, भरंगी, अडूसा, आककी जड़, और गोखरुके रसकी १–१ भावना दे कर (२–२ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट हो जाते हैं ।

बृहज्ज्वराङ्कुशरसः

(र. रा. सु. । ज्वरा.)

प्र. सं. ५५४२ महा ज्वराङ्कुशः (२) देखिये ।

(७१०६) बृहज्ज्वरान्तको रसः

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

रसं गन्धं तोलकं च जातीकोषफले तथा ।
हेमभस्म तु पादैकं तोलार्द्धं रूप्यलौहकम् ॥
अभ्रं शिलाजतु चैव भृङ्गराजं च मुस्तकम् ।
केशराजमपामार्गं लवङ्गं च फलत्रिकम् ॥
वराङ्गवल्कलञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
सैन्धवञ्च विडञ्चव गुडूचीचूर्णमेव च ॥
कण्टकारी रसोनञ्च धान्यकं जीरकद्वयम् ।
चन्दनं देवकाष्ठञ्च दार्वीन्द्रयवमेव च ॥
किराततिक्तकं वालं तोलकञ्च समाहरेत् ।
द्वितोलं मरिचं देयं भावयेदार्द्रकै रसैः ॥
माषार्द्धं भक्षयेत्प्रातर्मधुना मधुरीकृतम् ।
ज्वरं नानाविधं हन्ति शुक्रस्थं चिरकालजम् ।
साध्यासाध्यविचारोत्र नैव कार्य्यो भिषग्वरैः॥
अन्तर्धातुगतञ्चैव नाशयेन्नात्र संशयः ।
भूतोत्थं श्रमजञ्चापि सन्निपातज्वरन्तथा ॥
असाध्यञ्च ज्वरं हन्ति यथा सूर्य्योदयस्तमः
गरुडञ्च समालोक्य यथा सर्पः पलायते ।
तथैवास्य प्रसादेन ज्वरः शीघ्रं पलायते ।
बलदं पुष्टिदञ्चैव मन्दाग्निनाशनं परम् ॥
वीर्य्यस्तम्भकरञ्चैव कामलापाण्डुरोगनुत् ।
सदा तु रमते नारीं न वीर्यं क्षयतां व्रजेत् ॥
प्रमेहं विविधञ्चैव विविधां ग्रहणीं तथा ।
अनुपानविशेषेण सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, जावित्री और जायफल १–१ तोला; स्वर्ण भस्म ३ माशे; लोह भस्म और चांदी भस्म ६–६ माशे एवं अभ्रक भस्म, शुद्ध शिलाजीत, भंगरा, नागरमोथा, काला भंगरा, अपामार्ग (चिरचिटा) लौंग, हर्र, बहेड़ा, आमला, दालचीनी, पीपलामूल, सेंधा नमक, बिड नमक, गिलोय, कटेली, ल्हसन, धनिया, सफेद जीरा, काला जीरा, लाल चन्दन, देवदारु, दारु हल्दी, इन्द्रजौ, चिरायता और सुगन्धबाला १–१ तोला तथा काली मिर्च २ तोले ले कर प्रथम पारे

गंधककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको एकत्र खरल करके अदरकके रसकी भावना दें।

मात्रा—आधा माशा।

इसमें इतना शहद मिला कर खाना चाहिये कि जिससे औषध मीठी माल्म होने लगे।

इसके सेवनसे पुराने शुक्र धातुगत ज्वर, भूतोत्थ ज्वर, श्रम जनित ज्वर, सन्निपात ज्वर और अन्य सभी प्रकारके ज्वरोंका नाश हो जाता है। इसकी उपस्थितिमें ज्वरके साध्यासाध्यका विचार करना भी व्यर्थ है। जिस प्रकार सूर्योदयके होते ही अन्धकार और गरुड़के दर्शनमात्रसे सर्प पलायन कर जाता है इसी प्रकार ज्वर मात्र इसे देखते-ही अपना रास्ता नापता है।

इसके अतिरिक्त यह रस बलकारक, पौष्टिक, अग्निमांद्य नाशक, वीर्य स्तम्भक और कामला तथा पाण्डु नाशक है। यह प्रमेह और संग्रहणीको भी नष्ट करता है तथा विविध अनुपानोंके साथ अनेक रोगोंमें प्रयुक्त हो सकता है।

इसको सेवन करने वाला पुरुष अधिक स्त्री प्रसंग करे तो भी वीर्यक्षय नहीं होता। (?)

(७१०७) बृहत्कनकसुन्दरो रसः

(रसे. सा. सं. ; भै. र. । अतीसारा.)

शुद्धसूतं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा।
स्वर्णबीजं समं मर्द्यं भार्गी द्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥
सूततुल्यं मृतञ्चाभ्रं रसः कनकसुन्दरः।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति पित्तातीसारमुग्रकम् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, काली मिर्चका चूर्ण, सुहागेकी खील, धतूरेके बीजोंका चूर्ण और अभ्रक भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको भरंगीके क्वाथमें आधा दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

यह रस उग्र पित्तातिसारको नष्ट करता है।

(७१०८) बृहत्कस्तूरीभैरवो रसः (१)

(भै. र. ; र. चं. ; र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

मृगमदशशिसूर्यधातकीशूकशिम्बी
रजतकनकमुक्ता विद्रुमं लोहपाठा।
क्रिमिरिपुघनविश्वा वारिताला भ्रधात्र्यो
रविदलरसपिष्टं कस्तूरीभैरवोऽयम् ॥
कस्तूरीभैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः।
आर्द्रकस्य रसैः पेयो विषमज्वरनाशनः ॥
द्वन्द्वजं भौतिकान् वापि ज्वरान् कामादि सम्भवान्।
अभिचारकृतांश्चैव तथा शुक्रकृतान् पुनः ॥
निहन्याद्भक्षणादेव डाकिन्यादियुतांस्तथा।
बिल्वचूर्णजीरकाभ्यां मधुना सह पानतः ॥
आमातीसारं ग्रहणीं ज्वरातीसारमेव च।
अग्निदीप्तिकरः शान्तः कासरोगनिकृन्तनः ॥
क्षपयेद् भक्षणादेव मेहरोगं हलीमकम्।
जीर्णज्वरं नूतनं वा द्विकालीनाश्च सन्ततम् ॥
प्रक्षिप्तं भौतिकं वापि हन्ति सर्वान् विशेषतः।
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकं चतुराहिकम् ॥

पाञ्चाहिकं षष्ठसस्थं पाक्षिकं मासिकं तथा ।
सर्वान् ज्वरान्निहन्त्याशु भक्षणादार्द्रकद्रवैः ॥

कस्तूरी, कपूर, ताम्र भस्म, धायके फूलोंका चूर्ण, कौंचके बीजोंका चूर्ण, चांदी भस्म, स्वर्ण भस्म, मोती भस्म, प्रवाल (मूंगा) भस्म, लोहभस्म, पाठा, बायबिड़ंग, नागरमोथा, सोंठ और सुगन्धबाला; इनका चूर्ण एवं शुद्ध हरताल, अभ्रक भस्म और आमलेका चूर्ण समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला करे आकके पत्तोंके रसमें खरल करके (२–२ रत्ती) की गोलियां बना लें ।

अनुपान—अदरकका रस ।

इसके सेवनसे द्वन्द्वज ज्वर, विषम ज्वर, भूत ज्वर, काम ज्वर, अभिचार जनित ज्वर, शुक्र दोष सम्बन्धी ज्वर इत्यादि समस्त प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ।

इसे बेलगिरी और जीरेके चूर्ण तथा शहदके साथ देनेसे आमातिसार, संग्रहणी और ज्वरातिसार-का नाश होता है ।

इसके अतिरिक्त यह रस अग्निको दीप्त करता है तथा कास, प्रमेह, हलीमक, नवीन और जीर्ण-ज्वर, नित्य दो बार आने वाले ज्वर, सन्तत ज्वर, एकाहिक, तिजारी और चातुर्थिक ज्वर तथा पांचवें छठे, १५ वें दिन या महना महीना भर बाद आने वाले ज्वरको भी नष्ट करता है ।

बृहत्कस्तूरीभैरवो रसः (२)

(मध्यम कस्तूरी भैरवः)

(रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

प्र, सं. ५५०६ देखिये ।

वह र. रा. सु. का पाठ है और उसमें कस्तूरीका अभाव है तथा उसके स्थान पर हरताल लिखी है परन्तु यह भूल प्रतीत होती है वास्तवमें इसमें हरतालकी जगह कस्तूरी ही होनी चाहिये ।

(७१०९) बृहत्काञ्चनाभ्ररसः

(भै. र. ; रसे. सा. सं. ; र. रा. सु. ; धन्व. ; र. र. । राजयक्ष्मा.)

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लोहमभ्रकम् ।
विद्रुमं मृतवैक्रान्तं तारं ताम्रञ्च वङ्गकम् ॥
कस्तूरिका लवङ्गञ्च जातीकोषैलवालुकम् ।
प्रत्येकं बिन्दुमात्रञ्च सर्वं मर्द्यं प्रयत्नतः ॥
कन्यानीरेण सम्मर्द्य केशराजरसेन च ।
अजाक्षीरेण सम्भाव्यं प्रत्येकं दिवसत्रयम् ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथा दोषानुसारतः ॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ।
प्रमेहान्विंशतिञ्चैव दोषत्रयसमुद्भवान् ॥
सर्वरोगं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥

स्वर्ण भस्म, रस सिन्दूर, मोती भस्म, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, प्रवाल (मूंगा) भस्म, वैक्रान्त भस्म, चांदी भस्म, ताम्र भस्म, बंग भस्म, कस्तूरी, लौंग, जावत्री, और एलवालुक समान भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर घृतकुमारी और काले भंगरेके रस तथा बकरीके दूधमें ३–३ दिन खरल करके ४–४ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

(व्यवहारिक मात्रा—२ रत्ती ।)

इन्हें दोषोचित अनुपानके साथ सेवन करने-से क्षय, कास, यक्ष्मा, श्वास और २० प्रकारके प्रमेहोंका नाश होता है ।

(७११०) **बृहत्कामेश्वरमोदकः**

(धन्व. । वाजी. ; र. र. । वाजी.)

निश्चन्द्रिकाभ्रं पलमात्रभागं
लोहस्य वङ्गस्य तदर्द्धभागम् ।
जातीफलं कोषफलं च जीरा
यवानिका चाथ पलप्रमाणम् ॥
कर्षं द्विभागं त्रिसुगन्धि कुष्ठं
मांसी मुरा कुन्दरु देवदारु ।
चाम्पेयसिन्धूद्भवबालचव्यं
सौभाग्ययष्टिमधुग्रन्थिपर्णम् ॥
तालीशकर्पूरलवङ्गकान्ता
काकोलिकायुग्म कटुत्रिकं च ।
शैलेयपद्मं सरलं सपुष्पं
हस्तीकणावत्सकबीजधान्यम् ॥
शृङ्गी शताह्वा त्रिफलाथ मेथी
श्यामाद्वयं कृष्णतिलं कशेरु ।
शक्राशनं तत्सदृशं विभागं
सिता च शुभ्रा द्विगुणा विधेया ॥
तत्पाकवेत्ता विधिवद्विधानं
लब्ध्वाधिवासं नयनागरेण ।
मध्वाज्यमिश्रं वटकप्रमाणं
खादेन्नरः कौण्डकमङ्गलेन ॥
सर्वमयानां शमनं विधेयं
विशेषतः सङ्ग्रहकोष्ठदोषम् ॥

निश्चन्द्र, अभ्रक भस्म ५ तोले, लोह और वंग भस्म २॥-२॥ तोले तथा जायफल, कंकोल, जीरा और अजवायन ५-५ तोले, एवं दालचीनी, तेजपात, इलायची, कूठ, जटामांसी, मुरामांसी, कुन्दुरु, देवदारु, नागकेसर, सेंधानमक, सुगन्धबाला, चव, सुहागेकी खील, मुलैठी, गठीवन, तालीसपत्र, कपूर, लौंग, रेणुका, काकोली, क्षीरकाकोली, सोंठ, मिर्च, पीपल, छरीला, कमल, धूप-सरल, सुपारी, गजपीपल, इन्द्रजौ, धनिया, काकड़ासिंगी, सोया, हर्र, बहेड़ा, आमला, मेथी, सफेद सारिवा, काली सारिवा, काले तिल और कसेरु; इनका चूर्ण २॥-२॥ तोले और भांगका चूर्ण सबके बराबर एवं इन सम्पूर्ण ओषधियोंसे २ गुनी खांड ले कर यथा विधि चाशनी बना कर उसमें सम्पूर्ण ओषधियोंका चूर्ण मिला कर अन्तमें थोड़ा थोड़ा घी और शहद डाल कर (६-६ माशेके) मोदक बना लें ।

ये मोदक संग्रहणी और उदर विकारोंमें विशेष उपयोगी हैं ।

बृहत्क्रव्यादरसः

(यो. र. ; र. रा. सु. । अजीर्णा. ; वृ. यो. त. । त. ७१)

प्र. सं. १०५२ क्रव्याद रसः देखिये ।

कई ग्रन्थोंमें विड लवणके स्थान पर काला नमक लिखा है ।

(७१११) **बृहत्क्षयकेशरीरसः**

(भै. र. । राजय.)

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहञ्च ताम्रकम् ।
मृतं नागञ्च कांस्यञ्च मण्डूरं विमलं तथा ॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम् ।
वैक्रान्तं कान्तलौहञ्च स्वर्णं विद्रुममौक्तिकम् ॥

वराटं मणिरागश्च राजपट्टश्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्लमध्ये विनिक्षिपेत् ॥
मर्दयेत्त्वग्निभानुभ्यां प्रपुटेत्रिदिनं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक् पृथक् ॥
मातुलुङ्गवरावह्निस्वम्लवेतसमार्कव-
हयमारार्द्रकरसैः पाचितो लघुवह्निना ॥
वातपित्तकफोत्क्लेशान् ज्वरान् सम्मर्दितानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधी रजसा पुनः ।
मधुकार्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥
सेवितो हन्ति रोगान् हि व्याधिवारणकेशरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं कृमिं जयेत् ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः ॥

अभ्रक भस्म, पारद भस्म, लोह भस्म, ताम्र भस्म, सीसा भस्म, कांसी भस्म, मण्डूर भस्म, विमल (रौप्य माक्षिक) भस्म, वंग भस्म, खपरिया भस्म, शुद्ध हरताल, शंख भस्म, सुहागेकी खील, स्वर्ण माक्षिक भस्म, वैक्रान्त भस्म, कान्तलोह भस्म, स्वर्ण भस्म, प्रवाल भस्म, मोती भस्म, कौड़ी भस्म, शुद्ध हिंगुल और चुम्बक पत्थर भस्म तथा शुद्ध गंधक समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके चीतेके क्राथ और आकके दूधकी १-१ भावना दें और फिर उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके ३ दिन तक लघुपुटमें पकावें । तदनन्तर पुनः चीतेके काथमें और आकके दूधमें खरल करके इसी प्रकार पकावें । इसी तरह ३ बार पाक करें और फिर औषधको खरलमें डाल कर उसे मन्दाग्नि पर रक्खें तथा बिजौरेका रस डाल कर घोटें । जब रस सूख जाय तो क्रमशः त्रिफला क्राथ, चीतेके क्राथ, अम्लवेतके क्राथ, भंगरेके रस, कनेरके क्राथ और अदरकके रसकी पृथक् पृथक् १-१ भावना इसी प्रकार (मन्दाग्नि पर पकाते हुवे) दें ।

इसके सेवनसे वातज, पित्तज और कफज ज्वर, सन्निपात, सर्वाङ्ग वायु, एकाङ्ग वात, ११ प्रकारका क्षय, शोष, पाण्डु, कृमि, कास, श्वास, प्रमेह, मेद, उदरवृद्धि, अश्मरी, शर्करा, शूल, प्लीहा, गुल्म और हलीमकका नाश होता है । यह बल्य, वृष्य, मेध्य और रसायन है ।

अनुपान—मिश्री, पीपलका चूर्ण, शहद और अदरकका रस अथवा रोगोचित अन्य पदार्थ ।

(**मात्रा**—१ रत्ती ।)

(७११२) बृहत्त्रिफलाद्यं लौहम्

(र. र. । शूला.)

द्व्याढकं त्रिफलायाश्च चतुर्गुणजले पचेत् ।
पादावशिष्टं विज्ञाय कषायमवतारयेत् ॥
सुतप्तं निर्वपेल्लोहं गुडूच्यर्द्धं शतन्तथा ।
सर्पिषः षोडशपलं तच्चूर्णैः सह योजयेत् ॥
गुडूचीकन्दकदली तालमूली यवासकम् ।
चित्रकं पिप्पलीमूलं चविकाजीरकद्वयम् ॥
त्वगेलाऽरुष्करो व्योषद्विक्षारलवणत्रयम् ।
विडङ्गं टङ्कणक्षारं यवानी ह्यपलिकांशिकान् ॥
लोहं पचेत् तदैकध्यं यावत् सान्द्रत्वमागतम् ।
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्यां यथासात्म्यञ्च भोजनम् ॥

वातजं पित्तजं शूलं कफजं द्वन्द्वजं तथा।
परिणामसमुत्थञ्च सन्निपातसमुद्भवम् ॥
अष्टादशविधं कुष्ठं पाण्डुरोगं भगन्दरम्।
मन्दाग्निं गुदजञ्चैव जयेदेतन्न संशयः ॥

८ सेर त्रिफला चूर्णको ६४ सेर पानीमें पकावें और १६ सेर शेष रहने पर छान लें। तदनन्तर उसमें ५० पल (३ सेर १० तोले) लोह भस्म और ५० पल गिलोयका चूर्ण, २ सेर घी एवं १०-१० तोले गुडूचीकन्द, केलेकी जड़, तालमूली, जवासा, चीता, पीपलामूल, चव, सफेद और काला जीरा, दालचीनी, इलायची, शुद्ध भिलावा, सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, काला नमक (संचल), विड लवण, बायबिडंग, सुहागा और अजवायनका चूर्ण मिला कर पुनः पकावें। जब गुड़के समान गाढ़ा हो जाय तो अग्निसे नीचे उतार कर रख दें और ठण्डा होने पर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

इसे घी और शहदमें मिला कर सेवन करने और पथ्य पालन करनेसे वातज पित्तज, कफज और द्वन्द्वज शूल, परिणाम शूल, सान्निपातिक शूल, १८ प्रकारके कुष्ठ, पाण्डु, भगन्दर, अग्निमांद्य और अर्शका नाश होता है।

(**मात्रा**—१ माशा।)

वृहत्पूर्णचन्द्ररसः

प्र. सं. ४४३३ पूर्ण चन्द्रो रसः (४) देखिये।

वृहत्सर्वज्वरहरलोहः

सर्व ज्वर हर लोह (वृहत्) देखिये।

वृहदग्निकुमाररसः

(रसे. सा. सं.; र. चं.। अग्निमांद्य.)

प्र. सं. २६१ अग्निकुमार रस (२९) देखिये।

वृहदग्निकुमाररसः

(रसे. चि. म.। अ. ९)

प्र. सं. २५४ अग्नि कुमार रस (२२) देखिये।

वृहदग्निकुमाररसः

(रसे. सा. सं.। अग्निमांद्य.)

प्र. सं. २५९ अग्नि कुमार रस (२७) देखिये।

(७११३) वृहदिच्छाभेदीरसः

(र. चं.; रसे. सा. सं.; र. रा. सु.; धन्व.। उदावर्त्ता.; रसे. चि. म.। अ. ९)

शुद्धं पारदटङ्कणं समरिचं गन्धाश्म तुल्यं त्रिवृत्।
विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत् ॥
खल्ले दण्डयुगं विमर्द्य विधिना चार्कस्य पात्रे ततः।
स्वेद्यंगोमयवह्निना च मृदुना स्वेच्छावशाद्भेदकः ॥
गुञ्जैकप्रमितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचयेत्।
यावन्नोष्णजलं पिबेदपि वरं पथ्यं च दध्योदनम्॥
आमं सर्वभवं सुजीर्णमुदरं गुल्मं विशालं हरेत्
दद्रुर्दीप्तिकरो बलाशहरणः सर्वामयध्वंसनः ॥

शुद्ध पारद, सुहागेकी खील, काली मिर्च, शुद्ध गंधक और निसोत १-१ भाग, सोंठ २ भाग और शुद्ध जमालगोटा ९ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर पानीके साथ खरल करें और उस कल्क (लुगदी) को ताम्र पात्रमें रख कर थोड़ी देर कण्डोंकी मृदु अग्नि पर स्वेदित करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १ गोली शीतल जलके साथ खानेसे उस समय तक विरेचन होता रहता है जब तक कि उष्ण जल न पिया जाय ।

पथ्य—दही भात ।

इसे खानेसे आम, पुराने उदर रोग, प्रवृद्ध गुल्म और कफका नाश तथा अग्निकी वृद्धि होती है ।

(७११४) बृहद्गगनसुन्दररसः

(रसे. सा. सं. ; र. चं. । अतीसारा.)

पारदं गन्धकं चाभ्रलोहं चापि वराटकम् ।
रूप्यं चातिविषं कर्षं समभागं प्रकल्पयेत् ॥
धान्यशुण्ठीकृतक्काथैर्भावयेच्च पृथक् पृथक् ।
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत्कुशलो भिषक् ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
दग्धबिल्वं गुडेनैव कुर्य्यात्तदनुपानकम् ॥
अजादुग्धेन वा पेयं जम्बूत्वक्साधितं रसम् ।
अतीसारे ज्वरे घोरे ग्रहण्यामरुचौ तथा ॥
सामे सशूले रक्ते च पिच्छास्रावे भ्रमे तथा ।
शोथे रक्तातिसारे च संग्रहग्रहणीषु च ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, कौड़ी भस्म, चांदी भस्म और अतीसका चूर्ण १।-१। तोला ले कर सबको एकत्र खरल करके धनिये और सोंठके काथमें पृथक् पृथक् घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

अनुपान—अधजली, बेलगिरीका चूर्ण और गुड़ एकत्र मिला कर बकरीके दूध या जामनकी छालके रसके साथ पीना चाहिये ।

इनके सेवनसे अतिसार, घोर ज्वर, ग्रहणी, अरुचि, आमातिसार, शूलयुक्त अतिसार, रक्तातिसार, पिच्छिल (लेसदार) मलवाला अतिसार, भ्रम और शोथका नाश होता है ।

बृहद्गर्भचिन्तामणिरसः

प्र. सं. १५५६ गर्भ चिन्तामणि रसः (बृहद्) देखिये ।

(७११५) बृहद्गुल्मकालानलो रसः

(भै. र. । गुल्मरो.)

अभ्रं लौहं रसं गन्धं टङ्कणं कटुकं वचाम् ।
द्विक्षारं सैन्धवं कुष्ठं त्र्यूषणं सुरदारु च ॥
पत्रमेलां त्वचं नागं खादिरं सारमेव च ।
गृहीत्वा समभागेन श्लक्ष्णचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
जयन्तीचित्रकोन्मत्तकेशराजदलं तथा ।
निष्पीड्य स्वरसं नीत्वा भावयेत्कुशलो भिषक् ।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकाः कारयेत्ततः ।
उत्थाय भक्षयेत्प्रातरनुपानं जलं पयः ॥
गुल्मं पञ्चविधं हन्ति यकृत्प्लीहोदराणि च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथश्चैव सुदारुणम् ॥

हलीमकं रक्तपित्तं मन्दाग्निमरुचिं तथा ।
ग्रहणीमार्दवं कार्श्यं जीर्णञ्च विषमज्वरं ॥

अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुहागेकी खील, कुटकी, बच, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, कूठ, सोंठ, मिर्च, पीपल, देवदारु, तेजपात, इलायची, दालचीनी, नागकेसर और कत्था समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चर्ण मिला कर सबको जयन्ती, चीते, धतूरे और भंगरेके पत्तोंके रसमें खरल करके ४-४ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

अनुपान—जल या दूध ।

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये ।

इसके सेवनसे ५ प्रकारके गुल्म, यकृत, प्लीहा, कामला, पाण्डु, शोथ, हलीमक, रक्तपित्त, अग्निमांद्य, अरुचि, ग्रहणी, कृशता, और जीर्ण तथा विषम ज्वरका नाश होता है ।

(७११६) बृहद्गोक्षुराद्यवलेहः

(वृ. नि. र. । मूत्रकृच्छ्रा.)

गोकण्टकं पलशतं कुशमूलं तथैव च ।
पाषाणभेदोष्टपलं गुडूचीपलपञ्चकम् ॥
एरण्डो भीरुरष्टौ च मूलं दशपलं पृथक् ।
पद्ममूलं चाश्वगन्धा प्रत्येकं पलविंशतिः ॥
सर्वमेकत्र सङ्कुट्य जलद्रोणे विपाचयेत् ।
पादशेषं तु सङ्ग्राह्य वस्त्रपूतं समाक्षिपेत् ॥
गव्याज्यं प्रस्थमेकं तु शिलाजं च तथा स्मृतम् ।
घनीभूते तु सञ्जाते द्रव्याणिमानि दापयेत् ॥
तालमूली शताह्वा च त्रिकटु त्रिफला तथा ।
सूक्ष्मैला भूतकेशी च ह्रीबेरं नागकेशरम् ॥
पद्मकं जातीपत्रत्वक् मधुयष्टि सरोचना ।
जातीफलमुशीरं च त्रिवृता रक्तचन्दनम् ॥
धान्याकं कटुका क्षारौ नागवल्ली च शृङ्गिका ।
पुष्कराह्वं शठी दारु शीसं लोहं च वङ्गकम् ॥
द्रव्याणीमानि सङ्गृह्य प्रत्येकं पलमात्रकम् ।
खादेद्बलाग्निं सम्प्रेक्ष्य पथ्यं सेवेत्तु मानवः ॥
स्निग्धभाण्डे निधायाथ नित्यं लिह्यात्पलोन्मितम् ।
अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं विबन्धताम् ॥
प्रमेहं विंशतिं चैव शुक्रदोषं तथैव च ।
धातुक्षये चोष्णवाते वातकुण्डलिकादयः ॥
ते सर्वे प्रशमं यान्ति भास्करेण तमो यथा ।
नातः परतरं किञ्चित्कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

गोखरु, और कुशाकी जड़ १००-१०० पल (प्रत्येक ६। सेर); पाषाणभेद ४० तोले, गिलोय २५ तोले; अरण्डमूल और सतावर ९०-९० तोले, कमलकन्द और असगन्ध १००-१०० तोले ले कर सबको एकत्र कूट कर ३२ सेर पानीमें पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान लें । तदनन्तर उसमें २ सेर गोघृत और १ सेर शिलाजीत मिला कर पुनः पकावें और जब गाढ़ा हो जाय तो उसमें तालमूली, सोया, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, छोटी इलायची, भूतकेशी (जटामांसी), सुगन्धवाला, नागकेसर, पद्माक, जावत्री, दालचीनी, मुलैठी, बंसलोचन, जायफल, खस, निसोत, लाल चन्दन, धनिया, कुटकी, जवाखार, सज्जीखार, पान, काकड़ासिंगी,

पोखरमूल, कचूर, देवदारु, सीसा भस्म, लोह भस्म और बंग भस्म ५-५ तोले मिलाकर स्निग्ध पात्रमें भर कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—५ तोले।

(व्यवहारिक मात्रा—१-२ तोला)

इसके सेवनसे अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, २० प्रकारके प्रमेह, शुक्रदोष, धातुक्षय, उष्णवात और वातकुण्डलीका नाश होता है।

बृहद्ग्रहणीकपाटो रसः

(भै. र. । ग्रहण्य.)

प्र. सं. १५९७ ग्रहणी कपाटरसः देखिये।

बृहद्यकृदरिलोहम्

(भै. र. । प्लीहा.)

" यकृदरि लोहम् (बृहद) " प्र. सं. ५८२६ देखिये।

बृहद्रसशार्दूल रसः

प्र. सं. ६०९३ रस शार्दूल रसः बृहद् (२) देखिये

बृहद्वातगजाङ्कुशरसः

(रसे. सा. सं.)

प्र. सं. ६९८३ वातगजाङ्कुश रसः (बृहद्) देखिये।

बृहद्वातचिन्तामणि रसः

प्र. सं. ६९८५ वातचिन्तामणि रसः (बृहद्) देखिये।

बृहद्विद्याधराभ्रकम्

प्र. सं. ७०४७ विद्याधराभ्रक देखिये।

बृहद्विषमज्वरान्तकलौहम्

प्र. सं. ७०७५ विषमज्वरान्तक लौहम् (बृहद्) देखिये।

बृहन्नवायसलौहम्

(वृ. यो. त. । त. ७६)

प्र. सं. २७०९ त्रिकट्वादि लौहम् देखिये।

(७११७) बृहन्नृपवल्लभरसः

(रसे. सा. सं. । ग्रहण्य.)

रसगन्धकलौहाभ्रं नागं चित्रं त्रिवृत्समम् ।
टङ्कं जातीफलं हिङ्गु त्वगेलाब्दलवङ्गकम् ॥
तेजपत्रमजाजीं च यमानी विश्वसैन्धवम् ।
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं मरिचतारयोस्तथा ॥
निरुत्थकं मृतं हेम तथा द्वादशरक्तिकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव धात्र्याश्च स्वरसेन च ॥
भावयित्वा प्रदातव्यो माषद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पथ्यं भक्षेद्यथेप्सितम् ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च दुर्नामं ग्रहणीं जयेत् ।
आमाजीर्णप्रशमनः सर्वरोगनिसूदनः ॥
नाशयेदुदरात्रोगान्विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, सीसा भस्म, चीतामूल, निसोत, सुहागेकी खील, जायफल, हींग, दालचीनी, इलायची, नागरमोथा, लौंग, तेजपात, जीरा, अजवायन, सोंठ, सेंधा नमक, काली मिर्च और चांदी भस्म ७॥-७॥ माशे तथा निरुत्थ स्वर्ण भस्म १॥ माशा ले कर प्रथम पार गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर

अदरक और आमलेके रसमें पृथक् पृथक् खरल करके सुखा कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—२॥ माशा।

(**व्यवहारिक मात्रा**—६ रत्ती)

इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिये। इसके सेवनसे अग्निमांद्य, अजीर्ण, अर्श ग्रहणी, आमाजीर्ण और उदर रोगोंका नाश होता है।

इस पर किसी विशेष प्रकारके परहेज़की आवश्यकता नहीं है।

बृहन्मण्डूरवटकः

प्र. सं. २७८७ "त्र्यूषणादिमण्डूरवटिका" देखिये।

बृहन्महोदधिरसः

प्र. सं. ५५९२ महोदधि रसः (बृहत्) (४) देखिये।

बृहन्मालिनीवसन्तरसः

प्र. सं. ६९७३ वसन्त मालिनी रसः (२) देखिये।

बृहल्लोकनाथरसः

प्र. सं. ६३७४ लोकनाथ रसः (३) देखिये।

बृहद्वङ्गेश्वरो रसः

वङ्गेश्वर रस (बृहद्) देखिये।

(७११८) **वेतालरसः**

(भै. र.[1]; र. चं.[2]; रसे. सा. सं. । ज्वरा.)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मरिचालं समाक्षिकम्।
मर्दयेच्छिलया तावद्यावज्जायेत कज्जली॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ कारयेद्वटिका शुभाः।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं द्वादशे सन्निपातके॥
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं त्रिदोषजम्।
ईशेन कथितः शुद्धो वेतालाख्यो महारसः॥
कण्ठे ह्यपि गतैः प्राणैर्यमदूतान्निवारयेत्॥

शुद्ध पारद, शुद्ध बछनाग, शुद्ध गंधक, काली मिर्चका चूर्ण, शुद्ध हरताल और स्वर्ण माक्षिक भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य औषधियां मिला कर सबको अच्छी तरह खरल करें। तदनन्तर अदरकके रसमें घोट कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे हर प्रकारका सन्निपात ज्वर नष्ट होता है। यह रस सन्निपातके मृतप्रायः रोगीको भी जिला देता है।

(७११९) **वेदविद्यावटी** (१)

(भै. र. । प्रमेहा.)

पारदाभ्रककान्तानां नागभस्म समं समम्।
दिनं ब्रह्मीरसैर्मर्द्य वालुकायन्त्रगं पुनः॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छ्लक्ष्णं जारिताभ्रं शिलाजतु।
ताप्यं मण्डूरवैक्रान्तं काशीशं तुल्यमेव च॥

१. भै. र. में हरताल और माक्षिक नहीं है।
२. र. चं. में मरिच और माक्षिकका अभाव है।

सर्वं सर्वसमं चूर्णं कल्पयेच्च ततः पुनः ।
मुस्तचन्दनपुन्नागनारिकेलस्य मूलकम् ॥
कपित्थरजनीदार्वीचूर्णं सर्वसमं भवेत् ।
जम्बीराणां द्रवैर्मर्द्य द्वियामं वटकीकृतम् ॥
वेदविद्यावटी नाम्ना भक्षणात्सर्वमेहजित् ।
मधुधात्रीरसश्चानु क्षौद्रैर्वापि गुडूचिका ॥

रस सिन्दूर, अभ्रक भस्म, कान्त लोह भस्म और सीसा भस्म १-१ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर १ दिन ब्राह्मीके रसमें खरल करें और फिर आतशी शीशीमें भर कर बालुका यन्त्रमें पकावें । तदनन्तर उसका बारीक चूर्ण करके उसमें १-१ भाग अभ्रक भस्म, शिलाजीत, स्वर्ण माक्षिक भस्म, मण्डूर भस्म, वैक्रान्त भस्म और शुद्ध कसीस मिला कर खरल करें और फिर नागरमोथा, सफेद चन्दन, जायफल, नारियलकी जड़, कैथ, हल्दी और दारुहल्दीका चूर्ण समान भाग ले कर एकत्र मिला कर उपरोक्त तैयार औषधमें यह चूर्ण उसके बराबर मिला दें और २ पहर जम्बीरीके रसमें घोट कर (४-४ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे समस्त प्रकारके प्रमेह नष्ट होते हैं ।

अनुपान—आमलेका रस और शहद अथवा गिलोयका रस और शहद ।

(७१२०) वेदविद्यावटी (२)

(र. का. धे. । प्रमेहा.)

शुद्धस्य रसराजस्य भस्म वङ्गस्य भस्म च ।
अर्जुनस्य त्वचं सर्वसमं शाल्मलिजै रसैः ॥
मर्दयेद्वासरं घर्मे कुर्याद्गुञ्जामितां वटीम् ।
भक्षयेदनु सक्षौद्रं पिबेच्छाल्मलिजं रसम् ॥
इयं तु वेदविद्याख्या मधुमेहनिकृन्तनी ॥

पारद भस्म और वंग भस्म १-१ भाग तथा अर्जुनकी छालका चूर्ण १ भाग ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर १ दिन सेंभलकी छालके रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना कर सुखा कर रक्खें ।

इन्हें शहदके साथ सेवन करनेसे मधुमेहका नाश होता है ।

अनुपान—सेंभलकी छालका रस ।

वैक्रान्तगर्भरसः

(र. च. ; यो. र. । मूत्र कृच्छ्रा.)

प्र. सं. ५६२१ मूत्रकृच्छ्रान्तक रसः (१) देखिये ।

जिन ग्रन्थोंमें वैक्रान्त गर्भ नामसे लिखा है उनमें अनुपान रूपसे अपामार्गकी जड़को छाछमें पीस कर पीनेके लिये लिखा है ।

(७१२१) वैक्रान्तरसायनम् (१)

(र. र. स. । अ. २)

भस्मत्वं समुपागतो विकृतको हेम्ना मृतेनान्वितः ।
पादांशेन कणाज्यवेल्लसहितो गुञ्जामितः सेवितः ॥
यक्ष्माणं जरणं च पाण्डुगुदजं श्वासं च कासामयं ।
दुष्टां च ग्रहणीमुरःक्षतमुखान् रोगाञ्जयेद्देहकृत् ॥

वैक्रान्त भस्म ४ भाग और स्वर्ण भस्म १ भाग ले कर दोनोंको एकत्र खरल करके रक्खें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे बायबिडंग और पीपलके चूर्ण तथा घीके साथ सेवन करनेसे क्षय, पाण्डु, अर्श, श्वास, कास, दुष्ट ग्रहणी, और उरःक्षतादि रोगोंका नाश होता है ।

(७१२२) वैक्रान्तरसायनम् (२)

(र. र. स. । पू. अ. २)

सूतभस्मार्धसंयुक्तं नीलवैक्रान्तभस्मकम् ।
मृताभ्रसत्त्वमुभयोस्तुलितं परिमर्दितम् ॥
क्षौद्राज्यसंयुक्तं प्रातर्गुञ्जामात्रं निषेवितम् ।
निहन्ति सकलान्रोगान्दुर्जयानन्यभेषजैः ॥
त्रिसप्तदिवसैर्नृणां गङ्गाम्भ इव पातकम् ॥

पारद भस्म आधा भाग, नील वैक्रान्त भस्म १ भाग और अभ्रक सत्व भस्म १॥ भाग ले कर तीनोंको एकत्र मिला कर खरल करें ।

मात्रा—१ रत्ती ।

इसे प्रातः काल शहद और घीके साथ सेवन करनेसे ३ सप्ताहमें समस्त कष्टसाध्य रोग नष्ट हो जाते हैं ।

(७१२३) वैक्रान्तशोधनम् (१)

(र. र. स. । पू. अ. २)

वैक्रान्तकाः स्युस्त्रिदिनं विशुद्धाः
संस्वेदिताः क्षारपटूनि दत्वा ।
अम्लेषु मूत्रेषु कुलत्थरम्भा-
नीरेऽथवा कोद्रववारिपक्वाः ॥
कुलत्थक्वाथसंस्विन्नो वैक्रान्तः परिशुद्ध्यति ॥

कांजी या गोमूत्र, या कुलथीके क्वाथ अथवा कोदोंके क्वाथ या केलेके रसमें जवाखार और पांचों नमक मिला कर उसमें ३ दिन तक वैक्रान्तको पकानेसे वह शुद्ध हो जाता है ।

कुलथीके क्वाथमें स्वेदित करनेसे वैक्रान्त शुद्ध हो जाता है ।

(७१२४) वैक्रान्तशोधनम् (२)

(रसे. सा. सं. ; र. र. स. । अ. २; शा. सं. । खं. २ अ. ११)

वैक्रान्तं वज्रवच्छोध्यं मारणश्चैव तस्य तत् ।
हयमूत्रेण तत्सेच्यं तप्तं तप्तं त्रिसप्तधा ॥
ततश्चोत्तरवारुण्याः पञ्चाङ्गे गोलके क्षिपेत् ।
रुद्ध्वा मूषापुटे पाच्यं उद्धृत्य गोलके पुनः ॥
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पचेदेवं यावत्तद्भस्मतां व्रजेत् ।
भस्मीभूतश्च वैक्रान्तं वज्रस्थाने नियोजयेत् ॥

वैक्रान्तका शोधन मारण वज्रके समान करना चाहिये ।

वैक्रान्तको तपा तपा कर २१ बार घोड़ेके मूत्रमें बुझानेसे वह शुद्ध हो जाता है । तदनन्तर इन्द्रायणके पंचांगको पीस कर उसमें उस शुद्ध वैक्रान्तको लपेट कर गोला बनावें और उसे मूषामें बन्द करके पुट लगा दें । इसी प्रकार बार बार इन्द्रायणके कल्कके गोलेमें लपेट कर पुट लगा कर भस्म करें ।

वैक्रान्तको वज्रके स्थानमें प्रयुक्त करना चाहिये ।

(७१२५) वैक्रान्तशोधनमारणे

(र. प्र. सु. । अ. ५ ; आ. वे. प्र. । अ. १३)

कुलित्थक्वाथसंस्विन्नो वैक्रान्तः परिशुध्यति ।
म्रियतेऽष्ट पुटैर्गन्धनिम्बूकद्रवसंयुतः ॥

वैक्रान्तको कुलथीके क्वाथमें स्वेदित करनेसे वह शुद्ध हो जाता है।

शुद्ध वैक्रान्तको गन्धक और नीबूके रसके योगसे आठ पुट देनेसे उसकी भस्म हो जाती है।

(७१२६) वैक्रान्तसत्वपातनम्

(आ. वे. प्र. । अ. १३)

वैक्रान्तानां पलं चैकं कर्षकं टङ्कणस्य च ।
रविक्षीरैर्दिनं भाव्यं मर्द्य शिग्रुद्रवैर्दिनम् ॥
गुञ्जापिण्याकवह्नीनां प्रतिकर्षाणि योजयेत् ।
एतेन गुटिकां कृत्वा कोष्ठीयन्त्रे धमेद्दृढम् ॥
शङ्खकुन्देन्दुसंकाशं सत्त्वं वैक्रान्तजं भवेत् ॥

५ तोले वैक्रान्त और १। तोला सुहागेको एकत्र मिला कर क्रमशः आकके दूध और सहंजनेकी छालके रसमें पृथक् पृथक् १-१ दिन खरल करें और फिर उसमें १।-१। तोला गुञ्जा (चौंटली) तिलकी खल (या हींग) और चीतेका चूर्ण मिला कर गोली बनावें। इसे कोष्ठी यन्त्रमें तीव्राग्निमें धमानेसे स्वच्छ श्वेत सत्व निकल आता है।

(७१२७) वैक्रान्ताख्यरसः

(र. रा. सु. । अर्शो. ; वृ. नि. र. । अर्शो.)

मृतसूताभ्रवक्रान्तकान्तताम्रं समं समम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन मर्द्यं भल्लातकान्वितम् ॥
दिनैकं तद्द्रवैरेव वटीं कुर्यात् द्विगुञ्जकाम् ।
भक्षयेद्गुदजान्हन्ति द्वन्द्वजं च त्रिदोषजम् ॥
वैक्रान्ताख्यो रसो नाम साध्यासाध्यार्शशान्तये ॥

पारद भस्म, अभ्रक भस्म, वैक्रान्त भस्म, कान्त लोह भस्म और ताम्र भस्म १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक ५ भाग ले कर सबको एकत्र मिला कर १ दिन भिलावेके तेलमें खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें।

इनके सेवनसे हर प्रकारके अर्शका नाश होता है।

(७१२८) वैद्यनाथरसः

(र. र. स. । उ. अ. १४ ; र. चं. । राजय.)

शंखस्य वलयं निष्कं चतुर्निष्का वराटिकाः ।
कर्षांशं नीलतुत्थं च तालगन्धकटङ्कणम् ॥
तारं नागं रसं चार्धनिष्कांशं पूर्ववत् पुटेत् ।
वराटपूर्णमण्डूरकल्पितालेपने पचेत् ॥

अस्यार्धमाषं मरिचार्धमाषं
ताम्बूलवल्लीरसमर्दितं च ।
तत्पत्रलिप्तं मधुनाऽवलिह्या-
द्धैयंगवीनेन घृतेन वाऽपि ॥
नाडीमार्गे निर्गते चाल्पमल्पं
पथ्यं भोज्यं लोकनाथोपदिष्टम् ।
यामे यामे चैवमामण्डलान्तं
सेव्यः सद्यः शोषजिद्वैद्यनाथः ॥

शंख नाभिकी भस्म १ निष्क [३॥ माशे], कौड़ी भस्म ४ निष्क, नीला थोथा १। तोला, तथा शुद्ध हरताल, गंधक, सुहागा, चांदी भस्म, सीसा भस्म और शुद्ध पारद आधा आधा निष्क ले कर सबको एकत्र खरल करके कौड़ीमें भरें और

उसके मुखको (दूधमें पिसे हुवे) मण्डूरसे बन्द करके उसे (कौड़ीको) शरावसम्पुटमें बन्द कर दें एवं लोकनाथ रसके समान पुटपाक करें और स्वांग शीतल होने पर पीस कर रक्खें।

४ रत्ती यह रस और ४ रत्ती काली मिर्चका चर्ण, एकत्र मिला कर दोनोंको पानके रसमें घोट कर पान पर लगावें और उसे शहद, मक्खन या घीके साथ खावें।

इसके सेवन कालमें भी लोकनाथके समान १-१ पहरके पश्चात थोड़ा थोड़ा पथ्याहार देना चाहिये।

इसे ४० दिन तक सेवन करनेसे क्षयका नाश होता है।

(७१२९) वैद्यनाथवटिका

(र. सा. सं; र. च. । संग्रह. ; धन्व. ; र. र. ; र. रा. सु. ; । संग्र.)

रसस्य शाणं संगृह्य काञ्जिकेन तु शोधयेत् ।
चित्रकस्य रसेनापि त्रिफलायाश्च बुद्धिमान् ॥
रसार्धं गन्धकं शुद्धं भृङ्गराजरसेन वा ।
द्वाभ्यां सम्मूर्च्छनं कृत्वा स्वरसैः शाणसम्मितैः॥
निर्गुण्डीमधुकः श्वेताकुठेरग्रीष्मसुन्दरैः ।
भृङ्गाब्दकेशराजैश्च तथा चेन्द्राशनोत्कटैः ॥
सर्षपाभां वटीं कृत्वा दद्यात्तां ग्रहणीगदे ।
सामवातेऽग्निमान्द्ये च ज्वरे प्लीहोदरेषु च ॥
अम्लतक्रादिसेवां च कुर्वीत स्वेच्छया बहु ।
श्रीमता वैद्यनाथेन लोकानुग्रहकारिणा ॥
स्वप्नान्ते ब्राह्मणस्येयं भाषिता लिखिता न तु।

कांजी, चीतेके क्काथ और त्रिफलेके क्काथमें शुद्ध किया हुवा पारद पांच माशे तथा भंगरेके रसमें शुद्ध किया हुवा गन्धक २॥ माशे ले कर दोनोंकी कज्जली बनावें और उसमें संभालू, मुलैठी, अपराजिता, तुलसी, गूमा, भंगरे, नागरमोथे, काले भंगरे, भांग और ईखका ५-५ माशे रस मिलाकर खरल करें और सरसोंके समान गोलियां बनाकर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें ग्रहणी, आमवात, अग्निमांद्य, ज्वर, प्लीहा, उदर रोग आदिमें सेवन कराना चाहिये।

इसके सेवन कालमें अम्ल तक्र आदि अधिक सेवन करना चाहिये।

श्रीमान् वैद्यनाथने एक ब्राह्मणको यह प्रयोग बतलाया था।

(७१३०) वैद्यनाथवटी (१)
(दधिवटि)

(भै. र. । शोथा. धन्व. । शोथा.)

पक्वेष्टकाहरिद्राभ्यामागारधूमकेन च ।
शोधितं सूतकं ग्राह्यं तोलकं तुलया धृतम् ॥
भृङ्गराजरसे शुद्धं गन्धकं सूततुल्यकम् ।
हरितालं विषं तुत्थं एलवालुकमभ्रकम् ॥
खर्परं माक्षिकं कान्तं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
सर्वार्द्धा कज्जली ग्राह्या भावयेच्च पुनः पुनः ॥
सिन्धुवाररसे चैव ज्योतिष्मत्या रसे तथा ।
रसेऽपराजितायाश्च जयन्त्याः स्वरसे तथा ॥
रक्तचित्रकमूलोत्थे रसे च परिभावयेत् ।
वटिकां सर्षपाकारां योजयेत्कुशलो भिषक् ॥
ततः सप्तवटीर्दद्यादुष्णेन वारिणा सह ।
अनुपानश्च कर्त्तव्यं कज्जल्या कणया सह ॥

सन्निपातज्वरे चैव सशोथे ग्रहणीगदे ।
पाण्डुरोगेऽग्निमान्द्ये च विविधे विषमज्वरे ॥
शुक्रमज्जगते दद्यान्न तु कासे कदा च न ।
नित्यं दध्ना च भोक्तव्यं सितानित्यं तथैव च ।
स्नातव्यं ह्यभयान्नित्यं वयोदोषानुसारतः ।
अलवणं वारिहीनं दधि पथ्यं सदा भवेत् ॥
वैद्यनाथवटी नाम्ना वैद्यनाथेन निर्मिता ॥

पक्की ईंट, हल्दी और घरके धुंवेंमें शुद्ध किया हुवा पारद, भंगरेके रसमें शुद्ध किया हुवा गन्धक १-१ तोला तथा शुद्ध हरताल, शुद्ध बछनाग, शुद्ध तूतिया, एलवालुक, अभ्रक भस्म, खपरिया भस्म, स्वर्ण माक्षिक भस्म और कान्त लोह भस्म आधा आधा तोला ले कर पारद गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर सबको संभालु, मालकंगनी पत्र, कोयल, जयन्ती और लाल चीतेकी जडके रसकी कई कई भावनाएं दे कर सरसोंके समान गोलियां बना लें ।

मात्रा—७ गोली ।

अनुपान—कज्जली (१ रत्ती) और पीपलका चूर्ण (४ रत्ती) उष्ण जलके साथ खावें ।

इनके सेवनसे सन्निपात, शोथ युक्त ग्रहणी, पाण्डु, अग्निमांद्य और शुक्र मज्जागत विषम ज्वरका नाश होता है ।

यदि खांसी हो तो यह औषध कदापि सेवन न करानी चाहिये ।

इसके सेवन कालमें दही और मिश्री युक्त पथ्य आहार देना चाहिये तथा रोगीके स्नानकी व्यवस्था उसकी आयु और दोषोंका विचार करके करनी चाहिये ।

पथ्य—जल रहित दही ।

अपथ्य—जल और लवण ।

(७१३१) वैद्यनाथवटी (२)

(रसे. सा. सं. ; धन्व. । उदावर्त्ता. ; र. रा. सु. । उदाव. ; रसे. चि. म. । अ. ९)

पथ्या त्रिकटु सूतश्च द्विगुणं कानकन्तथा ।
थानकुनीरसैरम्ललोलिकाया रसैः कृता ॥
गुटिकोदरगुल्मादिपाण्ड्वामयविनाशिनी ।
क्रिमिकुष्ठगात्रकण्डूपिडकाश्च निहन्ति च ॥
गुडी सिद्धफला चेयं वैद्यनाथेन भाषिता ॥

हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल और रससिन्दूर १-१ भाग तथा शुद्ध जमाल गोटा २ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करके थानकूनी× और अम्ललोनियाके रसमें घोट कर (३-३ रत्तीकी) गोलियां बना लें ।

इनमेंसे १-१ गोली (शीतल जलके साथ) सेवन करनेसे विरेचन हो कर उदर रोग, गुल्म, पाण्डु, कृमि, कुष्ठ, गात्रकण्डु (खुजली), और पिडिका आदिका नाश होता है ।

(७१३२) वैद्यनाथवटी (३)

(धन्व. ; र. रा. सु. ; भै. र. । ज्वरा.)

शाणं गन्धमथो रसस्य च तथा कृत्वा द्वयोः कज्जलीं
तिक्ताचूर्णमथाक्षमेव सकलं रौद्रे त्रिधा भावयेत् ।

×थानकूनीका अर्थ कोई वैद्य मण्डूकपर्णी, कोई कौंच और कोई गोरखमुण्डी करते हैं ।

पश्चात्तत्सुषवीरसेन न तु वा क्वाथेऽमले त्रैफले संशोष्य गुटिका कलायसदृशी कार्या बुधैर्यत्नतः॥
ज्ञात्वा दोषबलं रसेन सुषवीपत्रस्य पर्णस्य वा एकद्वित्रिचतुः क्रमेण वटिकां दद्यात् कदुष्णाम्बुना।
हन्ति शूलनिचयं नवज्वरं पाण्डुतामरुचिशोथसञ्चयं रेचने च दधिभक्तभोजनं वैद्यनाथसुकुमाररेचनम्॥

१॥।-३॥। माशे शुद्ध पारद और गन्धककी कज्जली बना कर उसमें १। तोला कुटकीका चूर्ण मिला कर उसे करेलीके स्वरस या त्रिफलाके क्वाथकी धूपमें ३ भावना दें और मटरके समान गोलियां बना कर सुरक्षित रक्खें।

इन्हें दोष बलके अनुसार १ से ४ गोली तक करेलीके पत्तोंके रस या पानके रसके साथ अथवा मन्दोष्ण जलके साथ देनेसे शूल, नवीन ज्वर, पाण्डु, अरुचि और शोथका नाश होता है।

यह रस मृदुरेचक है।

रेचन होनेके पश्चात् पथ्यमें दही भात देना चाहिये।

वैरोचनरसः

(र. चं. ; र. र. । अजीर्णा.)

प्र. सं. ६३८० लोकनाथ रसः देखिये।

(७१३३) वैश्वानरपोटलीरसः

(र. र. स. । उ. अ. १६ ; र. रा. सु. । अजीर्णा.)

शुद्धौ सूतबली चराचररजः कर्षांशतः कज्जली कृत्वा गोपयसा विमर्द्य दिवसं रुध्वा च मूषोदरे॥
सिद्धं कुम्भपुटे स्वतश्च शिशिरः पिष्टः करण्डे स्थितः।
स्याद्वैश्वानरपोटलीति कथितस्तीव्राग्निदीप्तिप्रदः॥
एकोनविंशतिश्चूर्णैर्मरिचानां घृतान्वितैः।
देयोयं वल्लमानेन वयोबलमवेक्ष्य च॥
गिलेद्वलविशुद्ध्यर्थं दधिभक्तमनुत्तमम्।
कवलत्रयमानेन दुर्गन्धोद्गारशान्तये॥
मध्यंदिने ततो भोज्यं घृततक्रौदनं सिता।
रात्रौ च पयसा सार्धं यद्वा रोगानुसारतः॥
विदाही द्विदलं भूरिलवणं तैलपाचितम्।
बिल्वं च कारवेल्लं च वृन्ताकं काञ्जिकं त्यजेत्॥
इयं हि पोटली प्रोक्ता सिङ्गणेन महीभृता।
मन्दाग्निप्रभवाशेषरोगसङ्घातघातिनी॥
सिङ्गणस्य विनिर्दिष्टा भैरवानन्दयोगिना।
लोकनाथोक्तपोटल्या उपचारा इह स्मृताः॥
पोटल्यो दीपनाः स्निग्धा मन्दाग्नौ नितरां हिताः॥

पीतवर्णा गुरुस्निग्धा पृष्ठतो ग्रन्थिलामला।
चराचरेति सा प्रोक्ता वराटी नन्दिना खलु॥
सार्धनिष्कमिता श्रेष्ठा मध्यमा निष्कमानिका।
पादोननिष्कमाना च कनिष्ठात्र वराटिका॥
निष्फलाश्च ततो न्यूनाः पुंवराटाश्च पित्तलाः।
दत्वा दत्वा गुणान्भूयो विकारान्कुर्वते हि ते॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और कौडी भस्म १।-१। तोला ले कर तीनोंको एकत्र खरल करके कज्जली बनावें और उसे १ दिन गोदुग्धमें खरल करके मूषामें बन्द करके कुम्भपुटमें पकावें एवं स्वांग शीतल होने पर निकाल कर पीस कर सुरक्षित रक्खें।

यह अत्यन्त अग्निदीपक है ।

मात्रा—३ रत्ती ।

इसे १९ काली मिरचोंके चूर्ण और घीके साथ सेवन कराना चाहिये, तथा मुख शुद्धि और दुर्गन्धित डकारोंको रोकनेके लिये ३ ग्रास दही भात खाना चाहिये ।

इस पर मध्याह्नमें घी, तक्र और मिश्रीके साथ भात, तथा रातको दूध भात या रोगोचित पथ्य देना चाहिये ।

अपथ्य—विदाही पदार्थ, सब तरहकी दालें, अधिक लवण, तेलमें पकाए हुवे पदार्थ, बेल, करेला, बैंगन और कांजी ।

इसके सेवनसे अग्निमांद्य जनित समस्त विकार नष्ट होते हैं ।

" लोकनाथ पोटली " में बतलाए हुवे उपचार इसके सेवन कालमें भी उपयोगी हैं ।

इस प्रयोगमें जो कौड़ी ली जायं वे पीली, वज़नी, स्निग्ध, स्वच्छ और पीठकी ओर ग्रन्थिल (गांठों वाली) होनी चाहियें । उत्तम कौड़ीके यही लक्षण हैं ।

१॥ निष्क (७॥ माशे) की कौड़ी उत्तम, ५ माशेकी मध्यम, और ३॥। माशेकी कनिष्ठ होती हैं । इससे हल्की कौड़ी गुणहीन होती हैं और बड़े बड़े कौड़े पित्तवर्धक होते हैं ।

(७१३४) वैश्वानरयोगः

(वृ. नि. र. । शूला.)

भावितं मातुलिङ्गाम्ले ताम्रं च मरिचं दिनम् ।
आर्द्रकस्य रसे चैव विषं तुल्यं च चूर्णयेत् ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं युक्तं गुञ्जाद्वयं हितम् ।
हिङ्गु करञ्जबीजं च शुण्ठी लशुनमौषधम् ॥
एरण्डतैलसम्पिष्टं कर्षैकं भक्षयेदनु ।
योगो वैश्वानरो नाम शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥

१-१ भाग ताम्र भस्म और काली मिर्चके चूर्णको एकत्र मिला कर १-१ दिन बिजौरे और अदरकके रसमें खरल करके उसमें २ भाग शुद्ध बछनागका चूर्ण और २-२ भाग पीपल तथा पीपलामूलका चूर्ण मिलावें और २-२ रत्तीकी गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे त्रिदोषज शूल नष्ट होता है ।

अनुपान—हींग, करञ्ज बीज, सोंठ, ल्हसन और कूठका समान भाग मिश्रित चूर्ण १। तोला (व्यवहा. मा. ५ रत्ती) ले कर अण्डीके तेलमें पीस कर खाना चाहिये ।

(७१३५) वैश्वानररसः (१)

(र. र. स. । उ. अ. १९ ; र. का. धे. । उदरा.)

रसगन्धकताम्राणि शिलाजतुकान्तलौहकम् ।
त्रिकटुश्चित्रकं कुष्ठं निर्गुण्डी मुसली विषम् ॥
अजमोदा च सर्वेषां द्वौ द्वौ भागौ प्रकल्पयेत् ।
चूर्णीकृत्य ततः सर्वं निम्बक्वाथेन भावयेत् ॥
एकविंशत्प्रकारेण भृङ्गराजेन सप्तधा ।
मधुना गुटिकां शुष्कां रजन्यां तु प्रदापयेत् ॥
वैश्वानराभिधो योगो जलोदरविशोषणः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, शुद्ध शिलाजीत, कान्त लोह भस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, कूठ, संभालु, मूसली, शुद्ध बछनाग और

अजमोद समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर उसे नीमके क्वाथकी २१ और भंगरेके रसकी सात भावना दे कर सुखा लें और फिर शहदमें घोट कर (४-४ रत्तीकी) गोलियां बना लें।

इन्हें रात्रिके समय सेवन करनेसे जलोदर नष्ट होता है।

(७१३६) वैश्वानररसः (२)

(र. र. स. । उ. अ. १८)

विष्णुक्रान्ता च जेपालं लाङ्गली सुरदालिका ।
यवचिञ्चाम्बुसारेण तासां द्विगुणगन्धकम् ॥
पक्षं विमर्दितं सूतं स्वेदयेन्मृदुनाग्निना ।
गुल्मे गुञ्जात्रयं चास्य सोष्णाम्बुघृतसैन्धवम् ॥
वातजे कफजे लिह्यान्मध्वार्द्रकसमन्वितम् ।
ससितामाक्षिकं पैत्ते सोऽयं वैश्वानरो रसः ॥

कोयल, शुद्ध जमालगोटा, कलियारीकी जड़, और बिन्दाल (देवदाली) १-१ भाग तथा शुद्ध पारद और गन्धक ८-८ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको १५-१५ दिन खिरनीके रस और सुगन्ध बालाके रसमें घोट कर गोला बनावें एवं उसे शरावसम्पुटमें बन्द करके मन्दाग्निमें स्वेदित करें और फिर खरल करके सुरक्षित रक्खें।

मात्रा—३ रत्ती।

अनुपान—वातज गुल्ममें घृतमें सेंधानमक मिला कर उसमें औषध मिला कर खाना और बादमें उष्ण जल पीना चाहिये।

तथा कफज गुल्ममें शहद और अदरकके रसके साथ एवं पित्तज गुल्ममें मिश्री और शहदके साथ सेवन करना चाहिये।

(७१३७) वैश्वानररसः (३)

(र. का. धे. । अजीर्णा.)

शोधितं पारदं गन्धं यवक्षारं च जीरकम् ।
स्वर्जीक्षारं विषं कृष्णां विडङ्गं मरिचं बचा ॥
नागरं पञ्चलवणं समभागं समाहरेत् ।
विषमुष्टिं सर्वतुल्यं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥
मरिचस्य प्रमाणेन कर्तव्या वटिका शुभा ।
तामेकां वटिकां खादेत्प्रातः पथ्याजरणगुडैः ॥
अयं वैश्वानरो नाम रसो मन्दाग्निनाशनः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, जवाखार, जीरा, सज्जी, शुद्ध बछनाग, पीपल, बायबिड़ंग, काली मिर्च, बच, सोंठ, सेंधा नमक, संचल (काला नमक), विड लवण, काच लवण और सामुद्र लवण १-१ भाग तथा शुद्ध कुचला सबके बराबर ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर जम्बीरी नीबूके रसमें खरल करके काली मिर्चके बराबर गोलियां बना लें।

इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल हर्र और जीरेके चूर्ण तथा गुड़में मिला कर सेवन करनेसे अग्निमांद्यका नाश होता है।

(७१३८) वैश्वानररसः (४)

(र. का. धे. । अरोचका.)

दशटङ्कमिता शुण्ठी मरिचं पिप्पली वचा।
सौभाग्यं च तथा सूक्ष्मं सर्वमेकत्र चूर्णितम् ॥
सूतकं टङ्कमात्रेण गन्धकं तत्समं विषम् ।
एकत्र चूर्णितश्लक्ष्णं कर्तव्यं चैकभागतः ॥
एकभागमितं ग्राह्यं सर्वं पर्णेन चाम्भसा ।
कासं श्वासं हरेच्छीघ्रमरुचिं तत्क्षणादपि ॥
गुल्मादिकमहाव्याधिं यकृच्च ग्रहणीमपि ।
नववर्णमितं याति प्रभावो भूमिमण्डले ॥
खण्डवातादिकान् सर्वान् सम्यक्कृत्वा व्यपोहति
वैश्वानरमिति ख्यातं क्षेत्रं च कुरुते ध्रुवम् ॥

सोंठ, काली मिर्च, पीपल, बच और सुहागा, १०-१० भाग तथा शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग १-१ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर पानके रसमें घोट कर (१-१ माशेकी) गोलियां बना लें ।

इनके सेवनसे कास, श्वास, अरुचि, गुल्म, यकृत, ग्रहणी, और वातव्याधिका शीघ्रही नाश हो जाता है ।

(७१३९) वैश्वानररसः (५) (वृद्ध)

(र. चि. म. । स्त. ७)

रसं गन्धं मृतं शुल्वं नागं प्रत्येकं तोलकम् ।
एकत्र क्रियते मृष्ट्वा पश्चादिमानि निक्षिपेत् ॥
पिप्पली पिप्पलीक्षारं मरिचं चिञ्चिकाभवम् ।
नागरं स्वर्जिकाक्षारं यवक्षारं च टङ्कणम् ॥
प्रत्येकं माषषट्कं स्याद्गृह्यते सूरणं तथा ।
कुष्माण्डकरसं दत्वा दिनमेकं विमर्दयेत् ॥
अन्धमूषागतं कृत्वा यावद्यामचतुष्टयम् ।
उत्तार्य शीतलं नीत्वा रसं वल्लचतुष्टयम् ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे दद्यादुदरे पारदं परम् ।
अतिपुष्टिकरः सम्यग्वृद्धवैश्वानररसः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, और सीसा भस्म १-१ तोला तथा पीपल, पीपलका क्षार, काली मिर्च, इमलीका क्षार, सोंठ, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा और सूरण (जिमीकन्द) ६-६ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिलाकर सबको कुम्हड़े (पेठे) के रसमें १ दिन घोट कर अन्धमूषामें बन्द करें और ४ पहर भूधर पुटमें पकावें ।

मात्रा—१२ रत्ती ।

(व्यवहारिक मात्रा—४ रत्ती ।)

इसके सेवनसे अग्निमांद्य, ज्वर और उदर रोगोंका नाश होता है। यह अत्यन्त पौष्टिक है ।

(७१४०) वैश्वानरलौहम्

(भै. र. । शूला.)

द्विपलं तिन्तिडीक्षारं तथापामार्गसम्भवम् ।
शम्बूकभस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥
चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यश्च लौहचूर्णकम् ।
चूर्णं सम्पिष्य खल्लादौ कारयेदेकतां भिषक् ॥
शूलस्यागमवेलायां खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ।
शूलमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यं न संशयः ॥

इमलीका क्षार, अपामार्ग (चिरचिटे) का क्षार, घोंघोंकी भस्म और सेंधा नमक १-१ भाग तथा लोह भस्म ४ भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

मात्रा—४ रत्ती।

इसे शूलके दौरेके समय देनेसे हर प्रकारका साध्य अथवा असाध्य शूल नष्ट हो जाता है।

(७१४१) वैश्वानरीवटी

(र. रा. सु. ; रसे. सा. सं. ; धन्व. । उदर. ; रसें. चि. म. । अ. ९)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताकायः शिलाजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥
त्रिकटु चित्रकं कुष्ठं[1] निर्गुण्डी मुसलीरजः ।
अजमोदा विषांशेन प्रत्येकं च नियोजयेत् ॥
निम्बपञ्चाङ्गुलकाथैर्भावनाश्चैकविंशतिः ।
भृङ्गराजरसैः सप्त दत्वा क्षौद्रैर्विलोडयेत् ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभां वटिकां तां दिवानिशि ।
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ॥
देवदारुवह्निमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत् ।
भोजनं व्योषदुग्धेन कुलित्थस्य रसेन वा ॥

शुद्ध पारा, ताम्र भस्म, लोह भस्म और शुद्ध शिलाजीत, १-१ भाग तथा शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, चीतामूल, कूठ, संभालु, मूसली और अजमोद २-२ भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर नीमकी छालके रस और अरण्ड मूलके रसकी २१-२१ तथा भंगरेके रसकी सात भावना दे कर बेरकी गुठलीके समान गोलियां बना लें।

इन्हें शहदमें मिला कर सुबह शाम सेवन करनेसे कफोदर शीघ्रही नष्ट हो जाता है।

अनुपान—देवदारु और चीतामूलको दूधमें पीस कर पीना चाहिये।

इसके सेवन कालमें त्रिकुटेके साथ पका हुवा दूध और कुलथीके रसके साथ पथ्य भोजन देना चाहिये।

व्याधिगजकेशरीरसः

(यो. र. । ज्वरा.)

प्र. सं ६९७२ वसन्त मालिनी रसः (लघु) देखिये।

(७१४२) व्याधिगजकेशरीरसः

(र. चं. ; वृ. नि. र. । वातव्या.)

पारदं गन्धकं तालं विषं त्र्यूषणकं समम् ।
त्रिफला टङ्कणक्षारं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥
दन्तीबीजं च टङ्कैकं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्डीरसकैस्तथा ।
मरीचाभा वटी कार्या दोषमावेक्ष्य दापयेत् ॥
क्षीरेण सह दातव्या ज्वराष्टकनिवृत्तये ।
अशीतिं वातजान्हन्ति निर्गुण्डीवास्तुकेन वा ॥
गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।
अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हरताल, शुद्ध बछनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला

[1] वीरा इति पाठान्तरम्।

और सुहागेकी खील ३।।।–३।।। माशे तथा शुद्ध जमाल गोटा ५ माशे ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको भंगरे, मकोय और संभालुके रसमें सात सात दिन खरल करके काली मिर्चके समान गोलियां बना लें।

इन्हें दूधके साथ सेवन करनेसे आठ प्रकारके ज्वर; संभालु या बथुवेके रसके साथ सेवन करनेसे ८० प्रकारके वातज रोग और गुड़के साथ सेवन करनेसे ४० प्रकारके पैत्तिक रोग नष्ट होते हैं।

(७१४३) व्योषादिचूर्णम् (१)

(व. से. । राजयक्ष्मा.)

व्योषं शतावरी त्रिणि फलानि द्वे बले तथा।
सर्वामयहरो योगः सेव्यो लोहरजोन्वितः॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, शतावर, हर्र, बहेड़ा, आमला, बला (खरैटी) की जड़ और अतिबला (कंघी) की जड़; इनका चूर्ण १–१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

(**मात्रा**—१ रत्ती।)

इसके सेवनसे क्षय आदि रोग नष्ट होते हैं।

(७१४४) व्योषादिचूर्णम् (२)

(वै. म. र. । पटल १०)

व्योषं धात्रीं रजनीं लोहं च सिताज्यमधु-समेतानि।
उपयुज्य कामलार्तः सुखी भवेद्वासरारम्भे॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, आमला, हल्दी और लोह भस्म समान भाग ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसे मिश्री, घी और शहदके साथ प्रातःकाल सेवन करनेसे कामलाका नाश होता है।

(७१४५) व्योषादियोगः

(ग. नि. । श्वयथु. ३३ ; रसे. चि. म. । अ. ९)

व्योषं त्रिवृत्तिक्तकरोहिणी च
सायोरजस्तु त्रिफलारसेन।
पीता कफोत्थं शमयेद्धि शोथं
गव्येन मूत्रेण हरीतकी वा॥

सोंठ, मिर्च, पीपल, निसोत और कुटकी; इनका चूर्ण १–१ भाग तथा लोह भस्म सबके बराबर ले कर सबको एकत्र खरल करके रक्खें।

इसे त्रिफलाके क्वाथके साथ सेवन करनेसे अथवा हर्रके चूर्णको गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे कफज शोथ नष्ट होता है।

व्रणगजाङ्कुशः

(र. र. । व्रणा.)

प्र. सं. ३६५० नारायण रसः (१) देखिये।

(७१४६) व्रणरोपणरसः

(र. का. धे. । गण्डमाला.)

गन्धेशाहिफणा तुल्यं त्र्यहं जम्बीरमर्दितम्।
कुमार्या नरमूत्रेण चित्रकेण च हिङ्गुना॥
सौवर्चलेन च पृथग्युक्त्या च विविधैः क्रमात्।
व्रणरोगेषु संयोज्यो न योज्यः स्त्रीव्रणेषु च॥
एवं भगन्दरे गण्डमालास्वपि च योजयेत्।

क्षौद्रेण वा यथायोगं पिप्पलीपुरसंयुतम् ॥
पथ्याश्च शालयो मुद्गा गोधूमा घृतसंयुताः ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, अफीम, और पीपलका चूर्ण समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियां मिला कर उसे जम्बीरीके रस, घृतकुमारीके रस, मनुष्यके मूत्र, चातामूलके क्वाथ, हींगके पानी और काला नमकके पानीमें ३-३ दिन घोट कर सुरक्षित रक्खें ।

इसके सेवनसे समस्त प्रकारके व्रण, भगन्दर और गण्डमाला आदिका नाश होता है ।

अनुपान—इसे पीपलके चूर्ण, गूगल और शहदके साथ देना चाहिये ।

(**मात्रा**—१ रत्ती ।)

पथ्य—घृत युक्त शाली चावल, मूंग और गेहूंकी रोटी ।

(७१४७) व्रणहररसः

(र. चं. । व्रणा.)

रसं गन्धं विषं वह्निं लौहमभ्रं समं समम् ।
सप्तधा पार्थतोयेन काश्चनाराम्भसा तथा ॥
भावयित्वा वटिं कुर्याद्रक्तिका प्रमिता भिषक् ।
रसो व्रणहरो नाम व्रणान्हन्ति रसोत्तमः ॥

शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध बछनाग, चीतामूलका चूर्ण, लोह भस्म और अभ्रक भस्म समान भाग ले कर प्रथम पारे गन्धककी कज्जली बनावें और फिर उसमें अन्य ओषधियोंका चूर्ण मिला कर सबको अर्जुन और कचनारकी छालके रसकी सात सात भावना दे कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालें । इनके सेवनसे समस्त प्रकार के व्रण नष्ट होते हैं ।

इति वकारादिरसप्रकरणम्

अथ वकारादिमिश्रप्रकरणम्

(७१४८) वचादियोगः (१)

(यो. र. । प्रतिश्याया.)

सवचाचूर्णमाघ्राय वाससा पोटलीकृतम् ।
कारवी वस्त्रबद्धा वा प्रतिश्यायमपोहति ॥

कलौंजी और वचके चूर्णको कपड़ेकी पोटली में बांधकर सूंघनेसे प्रतिश्याम नष्ट होता है ।

(७१४९) वचादियोगः (२)

(हा. सं. । स्था. ३ अ. ४९)

वचायवानीसहचित्रकेण
सिन्धूत्थविश्वासहसिन्धुवारम् ।
कल्कं तथोष्णं च स दन्तरोगे
मुखे च गण्डूषशतानि पश्च ॥

बच, अजवायन, चीता, सेंधानमक, सोंठ.

और संभालु समान भाग लेकर सबको पानीके साथ पीस लें।

इसे मन्दोष्ण करके मुखमें धारण करने से अथवा इन्हीं ओषधियों के क्वाथ से ५०० कुल्ले करनेसे दन्त रोग नष्ट होते हैं।

(७१५०) **वचाद्युत्सादनम्**

(वृ. नि. र. । बाला.)

वचां वयस्थां जटिलां गोलोमीं चापि धारयेत्। उत्सादनं हितं चात्र स्कन्दापस्मारनाशनम् ॥

स्कन्दापस्मारग्रस्त बच्चे के गले में बच, हर्र, सफेद बच या गोलोमी डालनेसे अथवा उसके शरीर पर इनका चूर्ण मर्दन करनेसे लाभ होता है।

(७१५१) **वनकार्पासादियोगः**

(व. से. । गण्डमाला.)

वनकार्पासजं मूलं तण्डुलैः सह योजितम्। पक्त्वाज्ये पोलिकां खादेदपचीनाशनाय ॥

वनकपासकी जड़को पीस कर चावलोंकी पिट्ठीमें मिलाकर उसकी घीमें पूरी तल कर खानेसे अपची नष्ट होती है।

(७१५२) **वमनयोगः**

(ग. नि. । तृष्णा. १५)

वारिशीतं मधुयुतमाकण्ठाद्वा पिपासितम्। पाययेद्वामयेचापि तेन तृष्णा प्रशाम्यति ॥

ठण्डे पानीमें शहद मिलाकर कण्ठ पर्यन्त पिला कर वमन करानेसे तृषा शान्त हो जाती है।

(७१५३) **वरुणपत्रोद्वर्तनम्**

(रा. मा. । स्त्री रोगा. ३०)

घृष्टानि गव्यशकृता प्रथमं ततश्च
पिष्टैर्जले वरुणकस्य दलैः प्रकामम्।
उद्वर्तितानि सहसैव नितम्बिनीनां
नाशं प्रयान्ति सुमहान्त्यपि किक्किसानि[1]॥

प्रथम रोगस्थान पर गायका गोबर मलें और फिर वहां पानीमें पिसे हुवे बरनेके पत्ते खूब मलें तो स्त्रियों का किक्किस रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(७१५४) **वर्षाभ्वादिक्षारम्**

(वृ. नि. र. । शोथा,)

क्षीरं शोथहरं दारुवर्षाभूनागरैः शृतम्। पेयं वा चित्रकव्योषत्रिवृद्दारुप्रसाधितम् ॥

देवदारु, पुनर्नवा और सोंठसे अथवा चीता, सोंठ, मिर्च, पीपल निसोत और देवदारु से सिद्ध किया हुवा दूध शोथको नष्ट करता है।

(समान भाग मिश्रित ओषधियोंका अधकुटा चूर्ण २ तोले, दूध ३२ तोले, पानी १२८ तोले ।)

(७१५५) **वाजीकरो वटकः**

(र. प्र. सु. । अ. १२)

आत्मगुप्ताफलं शुष्कं निस्तुषं चाष्टपालिकम्। माषस्याष्टपलं तद्वज्जलेन परिपेषितम् ॥ आर्द्रत्वे चातिरुचिरं शिलापट्टेन पेषयेत्। कुङ्कुमं केशरं चैव जातीपत्रं शतावरी ॥

१ केशादिको नष्ट करनेवाले कृमि विशेष।

गोक्षुरेक्षुरबीजानि लवङ्गं मरिचं कणा ।
शृङ्गाटकं कर्षमितं कुर्यादेवं पृथक् पृथक् ॥
सूक्ष्मचूर्णं विधायाथ पूर्वपिष्टे निधापयेत् ।
वटकान् कारयेत्पश्चात् कर्षमात्रान् विपाचयेत् ॥
घृतप्रस्थत्रयेणैव सुतलस्य निमज्जयेत् ।
माक्षिके घृतमाने वै मुखं रुन्ध्यादिनत्रयम् ॥
मध्वाज्यमिश्रितं भक्षेदेकैकं वटकं प्रगे ।
सप्तकानि च पश्चैवमाहारं मधुरं भजेत् ॥
दुग्धौदनं तथा रात्रौ क्षारमम्लं च वर्जयेत् ।
रेतः क्षयी नपुंसोऽपि गच्छेच्च प्रमदा शतम् ॥
अपुत्रः पुत्रमाप्नोति षण्ढोऽपि पुरुषायते ।
दृष्टप्रत्यययोगोऽयं सत्यमेतदुदीरितम् ॥

कौंच के छिलके रहित सूखे बीज ८ पल और छिलके रहित उड़दकी दाल ८ पल (४० तोले) लेकर दोनोंको पानीमें भिगो दें और फूल कर नरम हो जाने पर अत्यन्त बारीक पिट्ठी पीस लें। तदनन्तर उसमें केसर, नागकेसर, जावित्री, शतावर, गोखरु, तालमखाना, लौंग, काली मिर्च, पीपल और सिंघाड़ेका १।—१। तोला बारीक चूर्ण मिलाकर १।—१। तोले के वटक बना लें और उन्हे ६ सेर घी में तलकर (पकाकर) पत्थर या कांचके पात्रमें ६ सेर शहद में डाल दें एवं उसका मुख बन्द करके ३ दिन तक रक्खा रहने दें; और फिर नित्य प्रति १—१ वटक थोड़े घी और शहदमें मिला कर सेवन करें।

पथ्य—मधुराहार, दूध, भात।

अपथ्य—क्षार और अम्ल।

इसके सेवन से वीर्य क्षीणता और नपुंस्कता अवश्य नष्ट हो जाती है एवं नपुंसक पुरुष भी अनेकों स्त्रियों से रमण करने और सन्तानोत्पादनमें समर्थ हो जाता है।

यह प्रयोग अनुभूत है।

(७१५६) वाराहीकन्दयोगः

(ग. नि. । सा. रसा. १)

सूक्ष्मचूर्णेन वाराह्याः शृतं क्षीरं विमन्थितम् ।
तदाज्यमधुसंयुक्तं मासमेकं रसायनम् ॥

बाराही कन्दका बारीक चूर्ण मिलाकर दूध पकावें और उसका दही जमा कर घी निकालें।

इसे शहदमें मिलाकर सेवन करना चाहिये।

यह प्रयोग रसायन है। इसे १ मास तक सेवन करना चाहिये।

(७१५७) वार्ताकयोगः

(वृ. मा. । अर्शा.)

स्विन्नं वार्ताकफलं घोषायाः क्षारजेन सलिलेन।
तद् घृतभृष्टं युक्तं गुडेन वा तृप्तितो योऽत्ति ॥
पिबति च तक्रं नूनं तस्याऽऽश्वेवातिवृद्धगुदजानि ।
यान्ति विनाशं पुंसः सहजान्यपि सप्तरात्रेण ॥

बैंगन के फलोंको सोयेके क्षारके पानी में सिजा कर घीमें भून लें।

इन्हें गुड़ में मिलाकर पेट भर खानेके पश्चात् तक्र पीने से सात दिन में अत्यन्त प्रवृद्ध सहजार्शके मस्से भी अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

(७१५८) वालुकास्वेदः

(भै. र. । ज्वरा.; भा. प्र. । म. खं. २)

खर्परभृष्टपटस्थितकाञ्जिकसंसिक्तवालुकास्वेदः।
शमयति वातकफामयशूलाङ्गभङ्गकम्पादीन् ॥
कम्पे शिरोहृदयगात्रव्यथायां जृम्भायां पाद-
सुप्ततायाम् ।
पिण्डिकोद्वेष्टनेऽङ्गसादे हनुस्तम्भे च लोमहर्षे ॥

बालुका (रेती) को ठीकरे (या कढ़ाई आदि) में खूब गरम करके कांजी में डाल दें और फिर उसे तुरन्त ही कपड़े की पोटली में बांध कर उससे पीड़ित स्थानों पर सेक करें।

इस सेकसे वायु, कफ, शूल, गात्रको टूटना (अङ्गमर्द), कम्प, शिरपीड़ा, हृदय व्यथा, गात्र व्यथा, जम्भाई, पैरोंकी सुप्तता, पिण्डलियोंका दर्द, अङ्गसाद, हनुस्तम्भ और लोम हर्षादि का नाश होता है।

(७१५९) वाष्पयोगः

(वै. म. । पटल ६)

अनलेन सुतप्तमृत्सुपिण्डा–
स्तनजात्क्षाज्जनितः सबाष्पयोगः ।
अभिघातसमुद्भवं विकारं
नयनस्याशु विनाशयेदवश्यम् ॥

मिट्टीके ढेलेको अग्नि में खूब तपाकर स्त्रीके दूधमें बुझावें; और उससे जो भाफ निकले वह आंखको लगावें। इससे नेत्रों के अभिघात जन्य विकार अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(७१६०) वासादिपानकम्

(हा. सं. । स्था. ३ अ. १०)

वासापत्ररसं विधाय मतिमान् योज्यानि चे-
मानि तु
रोध्रं चोत्पलमृत्तिकासमधुकं कुष्ठं प्रियङ्ग्व-
न्वितम् ।
चूर्णं पुष्परसेन पानकमिदं पित्ताश्रयाणां हितं
कासं कामलपाण्डुरोगक्षतजश्वासापमर्दी भवेत् ॥

लोध, सौराष्ट्री (गोपीचन्दन), मुलैठी, कूठ, और प्रियंगु समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और उसे बासे (अडूसे) के रसमें मिलाकर शहदसे मीठा कर लें।

इसे पीनेसे पित्त प्रधान कास, कामला, पाण्डु और क्षतज श्वास का नाश होता है।

(बासे का रस १ तोला, चूर्ण २–१॥ माशे।)

(७१६१) विजयायोगः

(व. से. । नासा.)

पुटपाकं जयापत्रं सिन्धुतैलसमन्वितम् ।
प्रतिश्यायेषु सर्वेषु शीलितं परमौषधम् ॥

भांग के पत्ते, सेंधा नमक और तिलका तेल समान भाग ले कर सबको हांडीमें बन्द करके पुट पाक करें।

इसे सेवन करने से समस्त प्रकारके प्रतिश्याय नष्ट होते हैं।

(**मात्रा**—१ माशा।)

(७१६२) विजयाशुद्धिः

(वै. र. । वाजीकरणा.)

त्रिःप्रक्षालितमोहिनीदलरजः संशोषितं खर्परे सम्यक् तं मृदुभर्जितं दृढपटे सञ्चूर्ण्य सङ्गालितम् । सम्यक्खाखसकोटीराम्बुनि चतुर्भागे विपक्वं गवां दुग्धे चाष्टगुणे जहाति सकलान्दोषान्नृपाणां हितम् ॥

भांग को ३ बार पानीसे धो कर मिट्टी के पात्रमें डाल कर सुखालें और फिर उसे मंदाग्नि पर थोड़ा सेक लें; तदनन्तर उसका चूर्ण करके, उसे कपड़े से छान कर ४ भाग पोस्तके डोडे के पानी और ८ भाग गायके दूधमें पका लें। इस विधिसे भांग दोष रहित और राजाओंके सेवन योग्य हो जाती है।

(७१६३) विडङ्गादियोगः

(व. से. । कृम्य.; वृ. मा.; ग. नि.)

विडङ्गव्योषसंयुक्तमन्नमण्डं पिबेन्नरः । दीपनं कृमिनाशाय वह्निश्च कुरुते भृशम् ॥

बायबिड़ंग, सोंठ, मिर्च और पीपल; इनका चूर्ण मिलाकर चावलोंका मांड पीनेसे कृमि नष्ट होते और अग्नि दीप्त होती है।

(७१६४) विदार्यादियोगः (१)

(ग. नि. । शूला. २३)

विदारीदाडिमरसः सव्योषो लवणान्वितः । क्षौद्रयुक्तो निहन्त्याशु शूलं दोषत्रयोद्भवम् ॥

बिदारी कन्द और अनारका रस (१-१ तोला), सोंठ, मिर्च पीपल और सैंधा नमकका चूर्ण आधा आधा माशा तथा शहद २ तोले ले कर सबको एकत्र मिला कर पीनेसे त्रिदोषज शूल तुरन्त नष्ट हो जाता है।

(७१६५) विदार्यादियोगः (२)

(ग. नि. । ज्वरा. १)

विदारीक्षुरसं सर्पिर्मधु तैलं शृतं पयः । पिबेच्चातुर्थकश्वासकासवातकफापहम् ॥

विदारीकन्दका रस, ईखका रस, घी, शहद और तिलका तेल (१-१ तोला) ले कर सबको एकत्र मिला कर, पकाये हुवे दूधमें डालकर पीनेसे चातुर्थिक ज्वर, श्वास, कास, वायु और कफका नाश होता है।

(७१६६) विभीतकयोगः

(भै. र. । कासा.)

विभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितम् । स्विन्नमग्नौ हरेत्कासं ध्रुवमास्यविधारितम् ॥

बहेड़ेके फलको घीसे तर करके गायके गोबर में लपेट कर अग्निमें स्वेदित करें।

इसे मुंहमें रखनेसे खांसी अवश्य नष्ट हो जाती है।

(७१६७) विशालादियोगः

(यो. र. । कामला.)

गोदुग्धेन विशालाया मुनिसङ्ख्यादलानि तु । जीरकेण युतं पेष्यं रसमेकं पलं पिबेत् ॥ अथवा तज्जटाद्रावं कर्षार्धं दुग्धमिश्रितम् । पाययेत्तु प्रतिदिनमेवमेतद्दिनत्रयम् ॥

घृतदुग्धौदनं पथ्यं कुर्याद्धि लवणं विना।
कामलां नाशयत्याशु वायुरभ्रं हरेद्यथा ॥

७ नग इन्द्रायणके पत्तों और (३ माशे) जीरेको गायके दूधमें एकत्र पीस कर ५ तोले रस निकालें। यह रस पिलानेसे अथवा इन्द्रायणकी जड़का ७॥ माशे रस दूधमें डाल कर पिलानेसे ३ दिनमें कामला अवश्य नष्ट हो जाती है।

पथ्य—घृत, दूध और भात।

अपथ्य—लवण।

(७१६८) वृद्धदारुकाश्च्योतनम्

(व. से. । बाला.)

स्वरसं वृद्धदारस्य माक्षिकेण समन्वितम्।
आश्च्योतनेन बालानां कुकूणामयनाशनम् ॥

बिधारेके स्वरसमें शहद मिला कर आंखमें डालनेसे बालकोंका कुकूणक रोग नष्ट होता है।

(७१६९) वृन्ताकयोगः

(यो. र. । स्नायु. ; वृ. नि. र.)

वृन्ताकं भर्जितं भाण्डे कृत्वा दध्ना सहोपरि।
बन्धयेत्स्नायुको बहिः पतति एवं सप्तदिनं कार्यम् ॥

बैंगनको भूनकर दहीके साथ मिला कर स्नायुक (नहरवे) पर बांधनेसे वह सात दिनमें बाहर निकल आता है।

(७१७०) वेल्लादियोगः

(यो. र. । पीनस.)

वेल्लगोधूमभोजी च निद्राकाले च शीतलम्।
जलं पिबति यो रोगी पीनसान्मुच्यते नरः ॥

सोनेसे पूर्व (नासिका द्वारा) शीतल जल पीने और गेहूंसे निर्मित आहार तथा काली मिर्च सेवन करनेसे पीनस नष्ट हो जाती है।

इति वकारादिमिश्रप्रकरणम्

इत्योश्म्



भारत-भैषज्य-रत्नाकरः



समाप्तोऽयं

चतुर्थो भागः

कार्तिक शुक्ला ११ संवत् १९९१ वै.

चिकित्सा-पथ-प्रदर्शिनी



आप

इस प्रदर्शिनीका अध्ययन उसी प्रकार कीजिये जिस प्रकार एक होमयोपैथ डाक्टर अपने मेटीरियामेडिकाका करता है।

फिर

आपकी श्री और यशवृद्धि अवश्यम्भावी है।

—चिकित्सापथप्रदर्शिनी—

पहिले आप

(१) निर्णय कीजिये कि रोगीको प्रधान रोग क्या है।

(२) रोगीकी स्थितिके अनुसार निर्णय कीजिये कि उसे सस्ता क्वाथ, चूर्णादि देना है या रस भस्म, घृतादि।

(३) रोगीके मुख्य मुख्य लक्षण कागज पर या अपने स्मृतिपट पर लिख लीजिये।

फिर आप

इस चि. प. प्र. में उस रोगका अधिकार निकाल कर सामने रखिये।

उक्त रोगाधिकारमें अपने निर्णयके अनुसार क्वाथ चूर्ण, अवलेह, घृतादिमेंसे अभीष्ट प्रकरण निकाल कर सामने रख लीजिये।

उक्त प्रकरणको ध्यानसे पढ़ते जाइये, जिस प्रयोगके सामने आपके कागज पर लिखे हुवे अधिकसे अधिक लक्षण मिलें वही प्रयोग अपने रोगीको सेवन कराइये। (यदि कोई बात रोगीकी प्रकृतिके विरुद्ध न हो तो)

इस थोड़ेसे कार्यके लिये कुछ मिनिट खर्च कर दीजिये

बस फिर आप

यश और श्री के अधिकारी हो जायंगे

यदि सावधानीसे काम लिया जाय तो यह चिकित्सा पथ प्रदर्शिनी नवीन वैद्योंके लिये सफलताकी कुंजी और पुराने अनुभवी वैद्योंके लिये श्रेष्ठ स्मारकका काम देगी।

वैद्य गोपीनाथ गुप्त

चिकित्सा-पथ-प्रदर्शिनी



१ अग्निमांद्याजीर्णविसूचिकाधिकारः



नम्बर	नाम, प्रयोग	संक्षिप्त गुण,
	कषाय-प्रकरणम्	
५०२३	मातुलुङ्गरसादि योगः	विसूचिकानाशक सरल योग ।
६२००	लवङ्गादिक्वाथः	अजीर्ण नाशक, रेचक ।
६५३७	विश्वादिकषायः	कफज अग्निमांद्य ।
६५४०	,, ,,	विसूचिका, आध्मान ।
	चूर्णप्रकरणम्	
५११५	मरिचाद्यं चूर्णम्	अग्निदीपक
५१२९	मातुलुंगाद ,,	,, ,,
५९१२	रामठाद्यं ,,	अत्यन्त अग्निवर्द्धक
६२१२	लघुचित्रकादि चूर्णम्	१ सप्ताहमें अग्नि दीप्त करके अर्शको नष्ट कर देता है ।
६२१६	लघुवैश्वानर ,,	अत्यन्त अग्निदीपक
६२२५	लवङ्गादि ,,	शूल, भयंकर विसूचिका अतिसार, वमन.
६२२६	लवङ्गाद्यं ,,	अग्निवर्द्धक, रोचक, सुगन्धित, राजाओंके योग्य, पाचक तथा पौष्टिक,
६२३४	लशुनाद्यं चूर्णम्	विसूचिकामें अत्युपयोगी
६२४४	लोलिम्बराज-चूर्णम्	अफारा, आम, शूल, गुल्म (अत्यन्त पाचक)
६५९२	वडवानल चूर्णम्	अग्निदीपक
६५९४	,, ,,	अजीर्ण नाशक, अग्नि-दीपक
६५९५	वत्सकादि ,,	अग्निदीपक, शूलनाशक
६६०८	विडंगादि ,,	अत्यन्त अग्निदीपक
६६३०	विश्वभेषज ,,	क्षुधावर्द्धक, शूलनाशक
६६३१	विश्वादि चूर्णम्	अग्नि दीपक
६६४१	वृषद्वादशक ,,	अजीर्ण, आनाह, गुल्म
६६४५	बृहदग्निमुख ,,	अजीर्ण, अग्निमांद्य, प्लीहा (अत्यन्त अग्निदीपक)
६६५०	वैश्वानर चूर्णम्	अत्यन्त अग्निवर्द्धक
६६६२	व्योषाद्यं ,,	अग्निदीपक
६६६३	,, ,,	,, सर्वरोगनाशक
	गुटिकाप्रकरणम्	
६२४६	लवङ्गादिगुटिका	अग्निदीपक, वृष्य
६२४९	,, वटी	अग्निदीपक
६६७०	वार्ताकुगुटिका	भोजनको शीघ्र पचाती तथा प्रतिश्याय और

विसूचिका आदिको नष्ट करती है ।

घृतप्रकरणम्

५२२३ मस्तुषटपलघृतम् अग्निमांद्य, कफ, गुल्म
६७४८ विदारीघृतम् भस्मक.

तैलप्रकरणम्

५३१७ मिश्याद्यं तैलम् खल्लीशूल

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३३८ मुस्तकारिष्टः भयंकर विसूचिका, अजीर्ण, अग्निमांद्य.

लेप-प्रकरणम्

५८०६ यवपिष्ट लेपः दुस्तर उदरशूल

अञ्जन-प्रकरणम्

६८८० विषूचिकानाशन गुटिका विषूचिका
६८८३ व्योषाद्यञ्जनम् ,,

नस्य-प्रकरणम्

६८९० व्योषादिनस्यम् विषूचिका

रसप्रकरणम्

५५९१ महोदधि रसः अग्निमांद्य
५५९२ ,, ,, अग्निमांद्य, अफारा, शूल
६०४५ रविसुन्दरवटी अजीर्ण, ज्वर (अग्नि-वर्द्धक)
६१३६ राजवल्लभरसः अजीर्ण, अग्निमांद्य
६१३९ राजशेखरवटी अग्निमांद्य, वायु, शूल
६१४९ रामबाण रसः अजीर्ण
६१५८ रोगेभसिंह श्री-खण्डवट्यौ अजीर्ण, शीत
६३४० लघुक्रव्याद रसः अजीर्ण
६३५४ लवङ्गाद्यंमोदकम् अग्निमांद्य, अजीर्ण,
६९४३ वडवाग्नि रसः अत्यन्त अग्निवर्द्धक
६९४५ वडवानलगुटिका क्षुधा वैषम्य, अग्निमांद्य
६९५० वडवानल रसः विषूचिका, अग्निमांद्य
६९५२ ,, ,, अग्निमांद्य
६९५३ ,, ,, ,,
६९५७ ,, वटी अग्निमांद्य, अरुचि, विसूचिका
६९५८ वडवामुखी गुटी अग्निवैषम्य (शीघ्र अग्नि दीपक)
६९७७ वह्नि रसः अग्निमांद्य, शूल
६९७८ वह्निसूतो रसः अग्नि दीपक
७०१० वारिभक्त बटिका आमाजीर्ण
७०२१ विजय रसः अजीर्ण
७०४२ विद्याधरमण्डूरम अग्निमांद्य, ग्रहणी विकार.
७०५२ विध्वंस रसः विषूचिका

७०७१	विश्वोद्दीपकाभ्रम्	पुरानी मन्दाग्नि, शूल, छर्दि
७०७२	विष गुटिका	अग्निमांद्य, क्षय
७०८९	विसूचिकाविध्वंस रसः	विषूचिका और त्रिदोषज उपद्रव युक्त अतिसारको शीघ्र नष्ट करता है।
७०९३	वीरभद्राभ्रकः	अग्निमांद्य, अरुचि, वमन आदि.
७१३३	वैश्वानरपोटली	अग्निमांद्य
७१३७	वैश्वानर पोटली	अग्निमांद्य
७१३९	,, ,,	,, ज्वर, उदर रोग

मिश्र-प्रकरणम्

५६८६	मण्ड योगः	क्षुधा तथा रक्त वर्द्धक, बस्तिशोधक
६१८६	रास्नादिमर्दनम्	खल्ली शूल
६१८७	रास्नाद्यङ्गमर्दनम्	,,



२—अतिसाराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०३९	मुद्गादिकषायः	अतिसार, दाह, छर्दिनाशक सरल योग
५०४६	मुस्तक क्वाथः	प्रवृद्ध अतिसार पर सरल योग
५०६०	मुस्तादि ,,	पित्त कफज अतिसार
५०६२	,, ,,	अतिसार, शोथ, ज्वर, हृल्लास
५०६७	,, ,,	पित्तातिसार
५०७१	,, ,,	पित्त वातज अतिसार
५०७६	,, प्रमथ्या	रक्तातिसार नाशक सरल योग
५७२८	यवान्यादि दीपन कषायः	दीपन, पाचन
५७३४	यष्ट्यादि क्वाथः	रक्तातिसार
५८९८	रोहिण्यादिपाचनः	अतिसार
६२११	लोध्रादि योगः	रक्तातिसार
६४७०	वचादि कषायः	वातातिसार
६४७३	वचादि गणः	आमातिसार नाशक, दोष पाचक
६४७६	वटजटा प्रयोगः	नवीन अतिसारको शीघ्र नष्ट करता है।
६४७८	वत्सकादिकषायः	आमातिसार
६४८२	,, क्वाथः	शूल युक्त पुराना रक्तातिसार
६५२५	विडंगादि क्वाथः	शोथातिसार
६५२६	,, योगः	आमातिसार (रेचक)
६५२७	विज्जल स्वरसः	आमातिसार
६५३२	विश्वादि कषायः	,,
६५५१	बृहच्छालिपर्ण्यादि	अतिसार मात्र

चूर्ण-प्रकरणम्

५०९८ मधुकादि योगः पित्तातिसार
५१५७ मेघनादादिचूर्णम् रक्तातिसार
५७५८ यवानी चूर्णम् शूल युक्त अत्यन्त प्रवृद्ध अतिसार
५७६८ यष्टयादि चूर्णम् पित्तातिसार
५९०५ रसाञ्जनादिचूर्णम् ,, शूल
५९१३ राल योगः पुराना अतिसार
६२१३ लघुचेतकीयोगः अतिसार पर उत्तम
६२१९ लघ्वीमाई चूर्णम् आम, शूल, विशेषतः रक्तातिसारपर अनुभूत
६२४१ लोध्रादि चूर्णम् पक्वातिसार
६५७३ वचादि ,, आमातिसार
६५८२ ,, ,, वातातिसारमें उत्तम
६५८६ वचाद्य ,, कफातिसार

गुटिका-प्रकरणम्

५१६७ मलपाचनीगुटिका अतिसार, मल, आम
६६६६ वत्सकाद्या ,, हर प्रकारके अतिसार संग्रहणीको शीघ्र नष्ट करती है। अग्नि दीपक है।
६६८० बृहदङ्कोल वटकः समस्त अतिसार

अवलेह प्रकरणम्

५१९४ मधु हरीतकी आमातिसार, शूल
६६९९ वत्सकावलेहः रक्तातिसार
६७११ विजयावलेहः समस्त प्रकारके अतिसार.

घृत-प्रकरणम्

५२३३ महाचाङ्गेरीघृतम् अतिसार, प्रवाहिका, अरुचि, शूल, ज्वर, छर्दि, अग्निमांद्य।
६७३१ वत्सकादि ,, अतिसार
६७३२ ,, ,, पित्तातिसार (दीपन, पाचन)

रस-प्रकरणम्

५५२१ मरिचादि वटी समस्त अतिसार
५५३९ महा गन्धकम् अतिसार, प्रवाहिका,
५५६३ महा रसः वातातिसार
५६०९ मुक्ताभस्मयोगः अतिसार (सरलयोग)
५६१५ मुस्तादि गुटी अतिसार, प्रवाहिका
६११९ रसायनामृतरसः अतिसार, ज्वरादि
६३५१ लवङ्गादि वटी प्रवाहिका, कोष्ठस्थ वायु
६३७६ लोकनाथ रसः समस्त अतिसार
६३८१ लोकेश्वर ,, हर प्रकारके अतीसार और प्रवृद्ध संग्रहणीको शीघ्र नष्ट करता है।
७०६५ विश्वादि वटी पक्वापक्व, नूतन, पुरातन और शूलयुक्त अतिसारको अवश्य नष्ट करता है।

७१०७ वृहत्कनकसुन्दरो रसः — उग्र पित्तातिसार

७११४ वृहद्गगनसुन्दर रसः — आमातिसार, शूल, रक्तातिसार, पिच्छलातिसार, शोथ.

मिश्र-प्रकरणम्

६१६९ रक्तचन्दनादि योगः — रक्तातिसार, दाह, मोह, तृषा

६४४५ लघुपञ्चमूल-सिद्धान्नम् — अतिसार

(३) अपस्मारोन्मादाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९८७ मदनफलादियोगः — अपस्मार, (वामक)

५००२ मध्वादि योगः — उन्माद

५०४५ मुस्तकमूलयोगः — अपस्मार

६१९७ लज्जालु योगः — ,,

६२०२ लशुन योगः — ,,

चूर्ण-प्रकरणम्

५१०४ मधुवचा योगः — पुराना अपस्मार (सरल योग)

६५७६ वचादि चूर्णम् — पुराने और भयंकर अपस्मारको भी अवश्य नष्ट करता है।

घृत-प्रकरणम्

५२१६ मधूक घृतम् — पित्तापस्मार

५२२५ महाकल्याणघृतम् — अपस्मार, उन्माद, ज्वर, अग्निमांद्य, कास

५२२६ ,, ,, — उन्माद, अपस्मार, ज्वर, कृशता

५२३४ महाचैतसघृतम् — अपस्मार, उन्माद, कास, श्वास, प्रतिश्याय

६२७१ लशुनाद्यं — दोषज तथा आगन्तुक उन्माद, अपस्मार, विषम ज्वर

६२७२ ,, ,, — उन्माद, वात कफज रोग, ज्वरादि ।

६७२८ वचाद्यं ,, — अपस्मार

अञ्जन-प्रकरणम्

५४४१ मनःशिलाद्यञ्जनम् — उन्माद, अपस्मार

५८२० यष्टयाद्यञ्जनम् — ,, ,,

(४) अम्लपित्ताधिकारः



कषाय-प्रकरणम्.

५७२२ यवादि क्वाथः — अम्लपित्तकी वमन
५७२४ „ „ — अम्मपित्त, अरुचि, वमन
६५०९ वासादिकषायः — कफोल्बण अम्लपित्त
६५१६ „ „ — अम्लपित्त

रस-प्रकरणम्

६११६ रसामृत चूर्णम् — अम्लपित्त, परिणाम शूल, अग्निमांद्य
६१२२ रसेन्द्र गुटिका — सैकड़ों वैद्योंसे न आराम होनेवाला अम्लपित्त
६१२३ „ „ — अम्लपित्त, क्षय
६३६७ लीलाविलासरसः — अम्लपित्त
६३६९ „ „ „ — अम्लपित्त, छर्दि, हृदयकी दाह

मिश्र-प्रकरणम्

५१०१ मधुपिप्पलीयोगः — अम्लपित्त (सरलयोग)

(५) अरोचकाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

५१२३ महाषाडवं चूर्णम् — अरुचि, कण्ठ रोग, मुख रोग, कृमि
५७५७ यवानी षाडवं चूर्णम् — अरुचिको अवश्य नष्ट करता, जिह्वाशोधक है।

रस-प्रकरणम्

६०५४ रस केशरी — समस्त प्रकारकी अरुचि, शूल
७१३८ वैश्वानर रसः — अरुचि, कास

मिश्र-प्रकरणम्

५७०१ मातुलुङ्गादि कवलः — अरुचि
५७०५ मुखधावन योगौ — „
५७०७ मुखधावन योगः — वातज अरुचि
६१८१ राजिकादि शिखरिणी — रोचक, दीपक

(६) अर्बुदाधिकारः

लेप-प्रकरणम्

५४१७ मूलकक्षारादिलेपः अर्बुद

५४१८ „ बीजादि „ अर्बुद, गण्डमाला

६८४५ वटादि „ सात दिनमें प्रवृद्ध अर्बुदको नष्ट करने वाला सिद्ध योग

रस-प्रकरणम्

६१६१ रौद्र रसः अर्बुद

(७) अर्शोधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६५२३ विडङ्गादिक्वाथः अर्श, शोथ, अतिसार

चूर्ण-प्रकरणम्

५१०८ मरिचादि चूर्णम् वातार्श

५१२२ महानिम्बबीज योगः रक्तार्श

५१४३ मुशल्यादि योगः अर्श

५७५१ यवक्षारादिचूर्णम् अर्शगत अग्निमांद्य

६२३२ लवणोत्तमादि चूर्णम् अर्श

६२३८ लाक्षादि योगः रक्तार्श

६६३८ विजय चूर्णम् अर्श, शोथ; कास, ज्वर

६६५६ व्योषादि चूर्णम् अर्श, शोथ, मलावरोध, अग्निमांद्य

गुटिका-प्रकरणम्

५१६३ मरिचादि मोदकः अर्श

५१६४ „ वटी रक्तार्श

५१६६ मरिचाद्या गुटिका अर्श

५९२६ रसाञ्जनादि वटी रक्तार्श

६२४५ लघुशूरण मोदकः अर्श (अत्यन्त दीपन पाचन)

६२५४ लाङ्गल्यादि „ कफज अर्श

६६७८ वृद्ध दारु „ ६ प्रकारका अर्श

६६८३ व्योषादि गुटिका अर्श, त्वग्दोष

गुग्गुलु-प्रकरणम्

५७७७ योगराजगुग्गुलुः अर्श, अरुचि, नाभिशूल, अग्निमांद्य

अवलेह-प्रकरणम्

५१८९ मधुपक्व हरीतकी त्रिदोषज अर्श

घृत-प्रकरणम्

५२१४ मधुकादि घृतम् अर्श, अतिसार, संग्रहणी, ज्वर, अरुचि, गुदभ्रंश, अफारा

६२६७ लघु चव्यादि घृतम् अर्शनाशक, ग्रहणी दीपक

६२७७	लघुकासीसाद्यं घृत	अर्शके मस्से
६७६८	व्योषाद्यं घृतम्	अर्शके मस्सोंको नष्ट करता है ।

तैल-प्रकरणम्

६७७८	वज्रकं तैलम्	अर्श तथा गण्डमालामें अत्युपयोगी है ।
६८१८	बृहत्कासीसाद्यं तैलम्	मस्सोंको गिरा देता है।

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

६२९७	लवङ्गासवः	अर्श, शोथ, अरुचि, ज्वर, पाण्डु

धूप-प्रकरणम्

६००२	रालादि धूपः	अर्शका रक्तस्राव



रस-प्रकरणम्

३४३६	लोहादि मोदकः	अर्श
५४७७	मण्डूर योगः	अर्शके मस्सों पर दबाव पड़नेसे होने वाला रक्तस्राव शीघ्र बन्द हो जाता है ।
५५५३	महा पर्पटी रसः	अर्श, गुदपीड़ा, आग्नमांद्य
५५९६	माणशूरणाद्य लौहम्	अर्श
५६२७	मूलकुठार रसः	अर्श, अग्निमांद्य
६०५९	रस गुटिका	अर्श
७०४९	विद्याधर लोहम्	सोपद्रव अर्श
७१२७	वैक्रान्ताख्य रसायनम्	हर प्रकारका अर्श



मिश्र-प्रकरणम्

६१७३	रजनीचूर्ण योगः	मस्सोंको काटने वाला डोरा
६१८९	रास्नाद्युपनाहः	वेदनाको शमन और मस्सोंको नष्ट करने वाली पुल्टिस
७१५७	वार्ताक योगः	मस्सोंको नष्ट करता है।



(८) अश्मरिशर्कराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०३२	मालतीमूल यागः	अश्मरी, मूत्र रोकनेसे उत्पन्न पीड़ा
५७४१	यूथीमूल ,,	अश्मरि, शर्करा, सशूल मूत्रकृच्छ
६४९०	वरुणादि कषायः	अश्मरि, शर्करा
६४९१	,, ,,	पुरानी वातज अश्मरि
६४९२	,, ,,	अश्मरि पातक, बस्ति शूल नाशक
६४९४	,, क्वाथः	अश्मरीपातक

६४९७	वरुणादिक्वाथः	घोरतर, पत्थरके समान कठिन और पीड़ादायक अश्मरि; अग्निमांद्य
६५६०	बृहद्वरुणादि क्वाथः	अश्मरी, बस्ति और मूत्रनलीकी पीड़ा



चूर्ण-प्रकरणम्

५९०२	रजन्यादि चूर्णम्	पुरानी और प्रवृद्ध शर्करा
६५९८	वरुणादि ,,	कठिन अश्मरीको भी नष्ट करता है ।

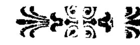


अवलेह-प्रकरणम्

६७००	वरुणक गुडः	अश्मरीको शीघ्र निकाल देता है ।

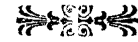
घृत-प्रकरणम्

५७९०	यवादि घृतम्	अश्मरी
६७३३	वरुणादि ,,	शर्करा, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र
६७३५	वरुणाद्यं ,,	कफज अश्मरी



तैल-प्रकरणम्

६७८२	वरुणाद्यं तैलम्	शर्करा, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र; शूल
६८१६	वीरतर्वादि ,,	,,



रस-प्रकरणम्

५४६८	मञ्जिष्ठादिचूर्णम्	अश्मरीको अवश्य निकाल देता है ।



(९) आमवाताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०१४	महौषधादिक्वाथः	सशोथ आमवात, कटि पीड़ा
५८६७	रास्नादि क्वाथः	आमवात, उरुस्तम्भ, जठररुजा
५८७३	,, ,,	अनेक प्रकारकी सन्धिपीड़ा, आमवात.
५८८०	,, ,,	आमवात
५८८१	,, ,,	,,
५८८२	,, ,,	सर्वांगगत तथा सप्तधातुगत आमवात
५८८६	रास्नादि काथः	सशूल आमवात, पार्श्वपीड़ा
५८८८	रास्नादिदशमूलम्	आमवात
५८८९	रास्नाद्वादशक-कषायः	जानुस्थित आमवात, कटि ऊरु और त्रिक पीड़ा
५८९०	रास्ना पञ्चकम	आमवात, सन्ध्यस्थि मज्जागत वायु
५८९२	रास्ना सप्तकम्	आमवात, जंघा उरु पृष्ठ पार्श्व और त्रिकशूल



चूर्ण-प्रकरणम्

६६४९ वैश्वानर चूर्णम् आमवात, मलावरोध, अफारा आदि



गुटिका-प्रकरणम्

५१७३ महारसोनपिण्डः आमवात, वातरोग, योनिशूल

५९२७ रसोन पिण्डः आमवात, समस्त वातज रोग



गुग्गुलु-प्रकरणम्

५७७८ योगराजगुग्गुलुः आमवात, वातव्याधि, अस्थि मज्जागत वायु

५७८२ „ „ (बृहद्) आमवात, सन्धिशूल, क्रोष्टुशीर्ष, कटिभग्न

६६८९ वातारि गुग्गुलुः आमवात, कटिशूल, दाहयुक्त क्रोष्टुशीर्ष, (बहुशोऽनुभूत उत्तम योग)

६६९३ व्याधिशार्दूलो-गुग्गुलुः आमवात, सन्धिवात,

६६९६ व्योषाद्या गुटिका गुग्गुलुः सन्धि अस्थि मज्जागत आमवात, भग्न, जठराग्निदीपक.

पाक-प्रकरणम्

५२०८ मेथी पाकः आमवात, वात व्याधि, शिरशूल



घृत-प्रकरणम्

५९४९ रास्नाद्यं घृतम् सर्वदोषज आमवात, पार्श्व शूल, पाद शूल, मन्या शूलादि



तैल-प्रकरणम्

५९५७ रसोनाद्यं तैलम् आमवात



आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५९९८ रसोन सुरा आमवात, आनाह, पाण्डु आदि



रस-प्रकरणम्

५६३० मृगशृंगभस्म-योगः हृदय तथा नितम्ब पीड़ा

६१४९ रामबाण रसः आमवात

७०३६ विडंगादिलौहम् आमवात, शोथ, अग्निमांद्य

७०९७ बृहद्दाराद्यलोहः आमवात जनित समस्त रोग

(१०) उदररोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०३५ माहिषक्षीर मूत्र-योगः शोथोदर

चूर्ण-प्रकरणम्

५११२ मरिचादिचूर्णम् उदररोग, प्लीहा, गुल्म, अग्निमांद्य.

५१२० महाक्षारः गुल्म, प्लीहा, आदि
५९२२ रोहित्कादियोगः प्लीहा, गुल्म, कृमि
६५९१ बडवानल क्षारः उदररोग, गुल्म, शूल.
६६२६ विशालादिचूर्णम् उदर रोग

घृत-प्रकरणम्

५७८९ यवादिघृतम् उदर रोग
६७३८ वह्निषट्प्रस्थघृतम् वातोदर, जलोदर, प्लीहा

तैल-प्रकरणम्

६२८३ लशुन तैलम् उदर रोग, यकृत्, प्लीहा, आमवात ।

रस-प्रकरणम्

५५७३ महावीर रसः समस्त उदर रोग (विरेचक)
५५७४ महावह्नि रसः उदर रोग, मूढवात (विरेचक)
५६६९ मेघनाद रसः शोथोदर, जलोदर, (विरचन होकर आम और कृमि निकल जाते हैं)
६०६७ रस पर्पटी उदर रोग, गुल्म, आम शूल, मल
६९१६ वङ्गेश्वर रसः प्लीहा, उदर रोग, गुल्म
६९२९ वज्रघन रसः समस्त उदर रोग
७१३५ वैश्वानर रसः जलोदर
७१४१ वैश्वानरी वटी कफोदर

मिश्र-प्रकरणम्

५६९७ महा द्रावकम् प्लीहा, यकृदादि
५६९८ ,, ,, गुल्म, उदर, यकृत, प्लीहा
५६९९ ,, द्रावकरसः समस्त प्रकारके पुराने उदर, गुल्म, शोथ, यकृत, प्लीहादि
५७०२ मान मण्डः वातोदर, शोथ, ग्रहणी, पाण्डु
६१७४ रम्भाक्षार सिद्ध विलेपी ३ दिनमें उदररोगको नष्ट करती है ।

(११) उदावर्ताधिकारः

घृत-प्रकरणम्

५२६५ मूलकाद्यं घृतम् उदावर्तको अवश्य नष्ट करता है ।
६७५५ विश्वादि घृतम् उदावर्त, ज्वर, गुल्म

तैल-प्रकरणम्

६२८३ लशुन तैलम् उदावर्त, उदर

लेप-प्रकरणम्

६८५० वल्मीकादि लेपः उदावर्त नाशक, वातानुलोमन

मिश्र–प्रकरणम्

५६८७	मदनादि फल वर्तिः	अफारा, गुदपीड़ा, उदावर्त, वायु
५८४४	यवक्षारादि यवागू	उदावर्त
६४४७	लशुन क्षीरम्	उदावर्त, वातज–गुल्म, शोथ



(१२) उपदंशाधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

५७२९	यवासकादि प्रक्षालनम्	उपदंशके व्रण

गुटिका–प्रकरणम्

५१६९	महाक्षारवटी	उपदंश

गुग्गुलु–प्रकरणम्

६६८८	वरादि गुग्गुलुः	उपदंश व्रण, रक्तदोष

तैल–प्रकरणम्

५२७८	मधुकादितैलम्	उपदंशके व्रण

लेप–प्रकरणम्

५४२६	मोचरसादि लेपः	उपदंशके व्रण, गर्मी
५९८१	रसाञ्जनादि „	दुर्गन्धि पीप और खाज वाले उपदंशके व्रण
५९८३	रसांजनादि लेप	उपदंशके व्रण
६३१६	लोध्रादि „	„ „
६३२१	लोहादि „	„ „
६८४३	वटप्ररोहादि „	„ „

रस–प्रकरणम्

६०४८	रसकर्पूरगुटिका	उपदंश
६०४९	„ योगः	उपदंश (मुख पाक नहीं होता)
६०५५	रस गन्धक–कज्जलीयोगः	उपदंश
६०५७	रस गुग्गुलुः	उपदंश, कुष्ठ, वातज-व्रण
६०८०	रसमर्दनयोगः	हाथों पर मलनेसे उपदंश नष्ट होता है ।
६०९४	रस शेखरः	उपदंशके व्रण, विस्फोटक

(१३) उरःक्षताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्.

५९०० रोहिषादि क्वाथः उरःक्षत सम्बन्धी रक्त-ष्ठीवन

चूर्ण-प्रकरणम्

६६३६ लाक्षादि चूर्णम् उरःक्षत, रक्तवमन

रस-प्रकरणम्

६०८५ रसराजः उरःक्षत नाशक, काम-वर्द्धक

(१४) कर्णरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५८५९ रसोनरसः- स्नुही रसश्च कर्ण पीड़ा पर सरल योग

६२०५ लशुनादिस्वरसः कर्णशूल

घृत-प्रकरणम्

५७९१ यष्टिमधुकादि घृतम् पित्तज कर्णशूल

तैलप्रकरणम्

५८०३ यष्ट्यादि तैलम् कर्णशूल, दाह

६२७८ लघुक्षार ,, बधिरता, कर्णशूल, कर्णकृमि कर्णस्राव

६२८४ लशुनाद्यं ,, बधिरता

६२९१ लाङ्गल्याद्य ,, कर्णस्राव, कर्णकृमि, और कानके दुष्ट नाड़ी व्रणको शीघ्र नष्ट करता है।

६७८१ वरुणादि तैलम् पूतिकर्ण रोग

६७८३ वंशावलेखादि,, कर्णशूल

६८०५ विषगर्भ तैलम् दुःसाध्य कर्ण शूलको शीघ्र नष्ट करता है।

६८१९ बृहत्किङ्किणी तैलम् पूतिकर्ण, कर्णस्राव, कर्णनाद, कानकी खुजली, कर्ण शोथ, भयंकर बधिरता

लेप-प्रकरणम्

५४१५ मुशल्यादि लेपः कर्णपाली वर्द्धक

रस-प्रकरणम्

७०७९ विषयोगः कर्णस्राव, शूल और कण्डूको शीघ्र नष्ट करता है।

मिश्र-प्रकरणम्

५७११ मूत्र योगः कर्णशूल

६१७८ रसाञ्जनादि योगः स्रावयुक्त पुराना पूति-कर्ण रोग

(१५) कासश्वासहिक्काधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०२१	मातुलुंगरसादि योगः	हिचकी
५८५५	रम्भादियोगः	श्वास
६५०६	वासादिकषायः	ज्वर, कास
६५०८	,, ,,	कास, श्वास
६५२८	विदारी गन्धादि गणः	कास, श्वास अङ्गमर्द
६५६७	व्याघ्र्यादिकषायः	श्वास

चूर्ण-प्रकरणम्

५०९१	मञ्जिष्ठादिचूर्णम्	क्षतज कास
५०९४	मधुकादि ,,	पित्तज ,,
५०९६	,, ,,	क्षतज ,,
५१०२	मधुयष्टिकादि ,,	,, ,, रक्तपित्त, क्षय
५१०६	मधूकादि ,,	कास, सन्धि पीड़ा, अस्थि पीड़ा.
५१०९	मरिचादि ,,	सर्वकास
५१११	,, ,,	कास श्वासपर सरल योग
५११७	मर्कटी बीजयोगः	श्वासपर सरल योग
५१२५	मागध्याद्यं चूर्णम्	हिक्का, श्वास, पीनस, कफ, ज्वर.
५१४६	मुस्तादि ,,	कास
५१४९	मुस्ताद्यं ,,	,,
५१५३	मूर्वाद्यं ,,	,,
५७६७	यष्ट्यादि ,,	हर प्रकारकी हिक्का
५९२१	रेणुकाद्यं चूर्णम्	श्वास, हिक्का, ज्वर, पार्श्व शूल
६२१४	लघुतालीसादि ,,	कास, अरुचि, छर्दि, क्षय.
६५९९	वर्षाभ्वादि ,,	रक्तष्ठीवी कास
६६०९	विडंगादि चूर्णम्	श्वास, कास, ज्वर
६६२२	विडंगाद्यं ,,	कास, हिक्का, वातव्याधि
६६३२	विश्वादि ,,	हिक्का
६६३५	विश्वादि ,,	वातजकास, श्वास
६६४३	वृहच्छर्करासम ,,	कास, अरुचि, अग्निमांद्य
६६४४	वृहत्तालीसादि ,,	क्षतजकास, श्वासादि

गुटिका-प्रकरणम्

५१६२	मरिचादिगुटिका	पीपयुक्त भयंकर कास
५१७७	मार्कण्डीपत्र ,,	कास
५९२९	राजिकादिगुटी	श्वास, कास
६२४७	लवङ्गादि गुटी	,, कफ
६२४८	,, ,,	,, ,,
६२५०	,, वटी	कासको ८ घड़ीमें नष्ट करती है।
६६८२	व्योषादिगुटिका	समस्त कास, पीनस, स्वरभेद
६६८५	व्योषान्तिका गुटिका	कास, पीनस, कण्ठावरोध

अवलेह-प्रकरणम्

५१८८	मधुकादिलेहः	क्षतज कास
५१९८	मागधिकादिलेहः	कासमें अत्युपयोगी
५१९९	मातुलुङ्गादिलेहः	पित्तज कास
६२६०	लाक्षाद्योऽवलेहः	पित्तोल्वणक्षतज कास
६७०८	वासावलेहः	कास, दारुण श्वास, पार्श्वशूल, ज्वर
६७१५	विश्वादिलेहः	दुःसाध्य वातज कास
६७१६	विश्वाद्यवलेहः	,, ,, ,,
६७१८	वृहत्कुलत्थगुडः	कफजकास, श्वास, पार्श्व शूल, ज्वर, स्वर क्षय, तृषा, वमन
६७१९	वृहदगस्त्यहरीतकी	श्वास, कास, अरुचि, ज्वर, स्वर भंग, क्षय (अग्नि वर्द्धक)
६७२१	व्याघ्री जीरकावलेहः	तमक श्वास, ऊर्ध्ववात
६७२२	व्याघ्रीहरीतक्यवलेहः	कास नाशक, स्वर अग्नि वर्द्धक ।
६७२४	व्योषादि लेहः	कफज कास

घृतप्रकरणम्

५२१७	मनःशिलादि घृतम्	हिक्का
५२५५	मातुलुङ्गादिघृत	भयंकर हिक्का
५२५६	,, ,, ,,	श्वास, कास, हिक्का, पार्श्वशूल
५७९४	यष्ट्यादि ,,	क्षतज कास
५९४५	रास्नाद्यं घृतम्	५ प्रकारकी कास, शिरोकंपन
६२६६	लघुकण्टकारी ,,	५ प्रकारकी खांसी
६७३९	वासा घृतम्	पित्तजकास
६७६७	व्योषाद्यं घृतम्	कफज कास

तैल-प्रकरणम्

६७८९	वासा चन्दनाद्यं तैलम्	कास, ज्वर, क्षय आदि

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३३७	माचिकासवः	कास, श्वास, उग्रराजयक्ष्मा, गलरोग

धूम्र-प्रकरणम्

५४३६	मनःशिलादि धूमः	सैंकड़ों योगोंसे न नष्ट होनेवाली भयंकर कास ३ दिनमें नष्ट हो जाती है ।
५४३७	,,	महाकास
६००५	राज्यादि धूमः	कास
६८७२	वारुणी पत्र ,,	कासको तुरन्त नष्ट करने वाला सिद्ध योग
६८७३	विदुली दल योगः	कास

नस्य-प्रकरणम्

५४५२	माक्षिकाविट् नस्यम्	हिक्का
५४५३	मधुकादि ,,	,,
५८२१	यवकादि ,,	,,

रस-प्रकरणम्

५५३७	महा कालेश्वरो रसः	कास, श्वास, कण्ठ रोग, ज्वर, क्षय
५५८२	महाश्वासारि लौहम्	महाश्वास, पञ्चकास
५५८६	महाहेमगर्भरसः	राजयक्ष्मा, कास
५६०७	मुक्तादि चूर्णम्	हिक्का, श्वास, कास
५६१०	मुक्ताभस्मयोगः	हिक्का
५६६४	मेघडम्बर रसः	हिक्का, श्वास, ज्वर
६०५८	रस गुटिका	श्वास, कास
६०६८	रस पर्पटी	राजयक्ष्माकी खांसी
६१०२	रसाञ्जनादिचूर्णम्	,, ,,
६१२४	रसेन्द्र गुटिका	कास, भयंकर श्वास, मलावरोध, अग्निमांद्य
६१५४	रुद्र पर्पटी	वातज कास
६३३४	लक्ष्मीविलास रसः	क्षयकी खांसी, ज्वर, श्वास
६३७०	लोकनाथपोटली रसः	श्वासको ३ दिनमें नष्ट करता है।
६३७१	लोकनाथपोटली	कास, श्वास, निर्बलता, शोथ, ज्वर, अग्निमांद्य
६३८३	लोबानसत्वयोगः	श्वास कास नाशक उत्तम
६९५९	वत्सनाभाद्या गुटिका	कफको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करती है।
७०२३	विजय वटी	कास, श्वास, दाह, ज्वर
७१६६	विभीतक योगः	कासको अवश्य नष्ट करता है।

(१६) कुष्ठ-वातरक्त-रक्तविकाराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९७६	मञ्जिष्ठादिक्वाथः	खाज, दाद, खुजली, विसर्पादि
४९७८	,, ,,	समस्त कुष्ठ
४९७९	,, ,,	कण्डू, विस्फोटक, अलसकादि
४९८०	,, ,,	वातरक्त, कण्डू, मण्डलादि
४९८१	,, ,, (लघु)	कपालिका कुष्ठ, रक्तमण्डल, वातरक्तादि
४९८२	,,	वातरक्त, वातपित्त
४९८३	मंजिष्ठादि (वृद्ध)	उपदंश, श्लीपद, वातरक्त, प्रसुप्ति, आंखोंकी गर्मी
५०१७	मांस्यादि गणः	कण्डू
५०६३	मुस्तादि क्वाथः	कफ प्रधान वातरक्त
५०६९	,, ,,	,, ,, ,, (सरलयोग)
५८६३	राज वृक्षादि पाचन क्वाथः	कुष्ठ
५८७८	रास्नादि क्वाथः	सर्वांग गत वातरक्त

६१९५	लघु मंजिष्ठादि-क्वाथः	वातरक्त, कुष्ठ
६४८४	वत्सादन्यादि-कषायः	वातरक्त
६५१९	वासादि क्वाथः	सर्वांगमें व्याप्त वातरक्त
६५२०	,, ,,	वातज कुष्ठ

चूर्णप्रकरणम्

६२३५	लाक्षादि चूर्णम्	१ मासमें कुष्ठको नष्ट करता है।
६२३९	लाङ्गल्यादिचूर्णम्	व्यथा, पादस्फुटन, मर्मपीड़ा आदि उपद्रव युक्त वातरक्त.
६५९७	वरादि ,,	कुष्ठ, कृमि, नाड़ीव्रण
६६१९	विडङ्गादि ,,	कुष्ठ, कृमि, भगन्दर

गुटिकाप्रकरणम्

५१७४	माणिभद्रमोदकः	कुष्ठ, भगन्दर, अर्श
६६७१	विडङ्गादि ,,	कुष्ठ

गुग्गुलु-प्रकरणम्

५१८६	महीषाख्यगुग्गुलुः	वातरक्त, कुष्ठ, शोथ
६६८६	वज्र ,,	विविध दोषज वातरक्त शोथ, कास, ज्वर, (बल वर्द्धक)

अवलेहप्रकरणम्

५७८६	योगसारामृतम	वातरक्त, कुष्ठ, रक्तपित्त जनित कुष्ठ
६७१२	विडङ्गादि लेहः	किटिभकुष्ठ, श्वित्र, दाद
६७१४	विडङ्गाद्यवलेहः	कुष्ठ, कृमि, भगन्दर, नाड़ीव्रण

घृतप्रकरणम्

५२३१	महाखादिरं घृ०	समस्त कुष्ठोंमें अत्युपयोगी
५२३२	,, गुडूची ,,	भयंकर वातरक्त, दाह, उरुस्तम्भ
५२३५	,, तिक्तकं ,,	कुष्ठ, विसर्प, वातरक्त, विस्फोटक, पामा, पिडिका आदि
५२३६	,, ,, ,,	कुष्ठ, विस्फोटक, किलास कुष्ठ, शोथादि
५२३७	,, ,, ,,	कुष्ठ, विसर्प, कण्डू, भयंकर रक्तस्राव
५२४०	,, नील ,,	श्वेत कुष्ठ, कृमि
५२४१	,, ,, ,,	श्वेत कुष्ठमें अत्युपयोगी
५२४२	,, ,, ,,	कुष्ठ, भगन्दर
५२४५	,, मार्कव ,,	दाद, श्वेत कुष्ठ, शीर्णाङ्ग कुष्ठ
५२४७	महावज्रकघृत	गलित कुष्ठ
६७२९	वज्रकघृतम्	कृमियुक्त भयंकर गलित कुष्ठ
६७३०	,, ,,	कुष्ठ, रक्तदोष, विसर्प, ज्वरे
६७४१	वासादि घृतम्	रक्तविकार, कुष्ठ, विसर्प



तैल-प्रकरणम्

५२६७	मञ्जिष्ठादितैल	कुष्ठ
५२७३	मजिष्ठाद्यं सूर्य-पाक तैलम्	खुजली
५२७७	मधुकादि तैलम्	वातरक्त
५२८०	मध्यम गुडूची ,,	कष्टसाध्य वातरक्त
५२८१	मनः शिलादि ,,	चित्रकुष्ठ, त्वचाकी परुषता, दाद, कष्टसाध्य विचर्चिका, सिध्म, पामा आदिको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।
५२८३	मनःशिलाद्यतैलम्	दाद, पामा, विचर्चिका किलास
५२८४	मरिचादि तैलम्	सिध्म, नवीन किलास
५२८५	,, ,,	कठिन चर्म दल, मण्डल, विसर्प, किलास, विचर्चिका, सिध्म
५२८६	मरिचाद्यं तैलम्	दाद, पामा, विचर्चिका पुराना श्वित्र
५२८८	,, ,, (वृहत्)	पामा, विचर्चिका, कण्डू
५२९३	महातृणकतैलम्	त्वग्रोग
५२९४	,, ,, ,,	समस्त कुष्ठ
५२९८	,, पिण्ड ,,	शरीरकी जकड़ाहट ज्वर (वातरक्तको अवश्य नष्ट करता है)
५३०२	,, भल्लात ,,	समस्त कुष्ठ
५३०३	,, मार्तण्ड ,,	कुष्ठ, कृमि, कण्डू, विस्फोटक
५३२३	मेध्याविकं ,,	दाद, खाज, शूकरदंष्ट्रा
५३२५	मेष श्टङ्गी तै०	वातज कुष्ठ
५८००	यष्टिमधुकाद्यं,,	उपद्रव तथा सर्वांग शूल युक्त समस्त शरीरगत वातरक्त, दाह, ज्वर.
५९६३	रुद्र गुडुची ,,	सर्वोपद्रवयुक्त वातरक्त
५९६५	रुद्र तैलम्	वातरक्त, अस्थिमज्जागत गलित कुष्ठ, अस्वेद इत्यादि.
५९६६	,, ,, (महा)	वातरक्त, कुष्ठ, दाह, कण्डू, अस्वेद, अधिक स्वेद.
६७७६	वज्रकं तैलम्	समस्त कुष्ठ, नाड़ीव्रण
६७७७	,, ,,	वातकफज चर्मरोग
६७७९	वज्री ,,	समस्त कुष्ठ
६७९०	वासा रुद्र ,,	दाद, विसर्प, वातरक्त, चर्मरोग
६७९१	विचर्चिकारि ,,	अति दुःखदायी विचर्चिका
६७९८	विद्रावण ,,	पामा, विचर्चिका, दाद, खुजली
६८००	विष ,,	श्वेत कुष्ठ, विस्फोटक, मकड़ीका विष, विचर्चिका, कण्डू आदि
६८०८	विषतिन्दुक ,,	द्विविध वातरक्त, त्वग्दोष, सुप्ति वात, विवर्णता
६८०९	विषादनं ,,	सिध्म, विचर्चिका, पामा
६८२३	वृहद् गुडूची ,,	वातरक्त, उदावर्त. कुष्ठ



आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३३१ मध्वासवः किलास कुष्ठ
५८०५ योगराजासवः वात पित्तज रोग, रक्त-विकार

लेप-प्रकरणम्

५३४५ मदनादि लेपः दाह, विपादिका
५३४७ ,, ,, विपादिका
५३५२ मधुसिक्थकादिलेप पैर फटना
५३५६ मनःशिलादिलेपः श्वेत कुष्ठ
५३५७ ,, ,, ,, ,, ,,
५३५८ ,, ,, ,, कुष्ठ
५३६६ मरिचादि लेपः सिध्म, नवीन किलास
५३८६ माहेश्वरो ,, दाद, पामा, खाज
५४१९ मूलकबीजादि ,, सिध्म
५४२० ,, ,, ,, दद्रु, सिध्म, किटिभ, पामा, कपाल कुष्ठ
५४२१ ,, ,, ,, सिध्म
५८११ यवादि लेपः विपादिकाको नष्ट करके पैरोंको अत्यन्त कोमल करता है।
५९८७ रसादि ,, कुष्ठ
५९८९ ,, ,, सिध्म
५९९० ,, ,, कुष्ठ
५९९२ राजिकादि ,, चर्मदल
५९९६ रालादि ,, दाद
५९९७ रास्नादि ,, वातरक्त
६३०५ लाक्षादि ,, दाद
६३०६ लाक्षाद्युद्वर्तनम् सिध्म, किटिभ, दाद
६८५३ वायस्यादिगुटिका श्वित्र
६८५६ वासादि लेपः कच्छूको ३ दिनमें नष्ट कर देता है।
६८५८ विडङ्गादि लेपः दाद
६८६१ विषादि ,, सुप्ति कुष्ठ
६८६२ ,, ,, समस्त प्रकारके कुष्ठ

रस-प्रकरणम्

५५३५ महाकाल रसः वैपादिक कुष्ठ
५५३६ ,, ,, गलत्कुष्ठ
५५४८ महा तालकेश्वर रसः समस्त कुष्ठ, वातरक्त, त्वग्दोष
५५५० ,, तालेश्वररसः समस्त कुष्ठ
५५५२ ,, निम्बादिचूर्णम् ,, ,,
५५५५ ,, ब्रह्म रसः गलत्कुष्ठ
५५६८ ,, रौद्रेश्वर ,, समस्त कुष्ठ
५५७१ ,, वज्रपाणि ,, किटिभ कुष्ठ
५५८३ ,, सिद्धेश्वर ,, सुप्तिकुष्ठ, मण्डल कुष्ठ
५५८४ ,, सूर्यप्रभ ,, पुण्डरीक कुष्ठ
५५९७ माणिक्य तिलक रसः कुष्ठको शीघ्र नष्ट करता है
५५९८ ,, रसः स्फुटित कुष्ठ, गलत्कुष्ठ वातरक्त, विचर्चिका, पुण्डरीक कुष्ठ, चर्म-कुष्ठादि
५६०० ,, ,, कुष्ठ, वातरक्त, शीत-पित्त, कण्डू, ज्वर
५६७१ मेदनी सार रसः श्वित्र कुष्ठ

५८३७	योगराज लौहः	कुष्ठ
५८३८	योगामृत रसः	सुप्ति कुष्ठ, मण्डलकुष्ठ
६०६२	रस तालेश्वररसः	विचर्चिका, कण्डू, कुष्ठ
६०८८	रसराजः	कुष्ठ, विद्रधि (अग्नि-बल वर्द्धक)
६११२	रसाभ्रगुग्गुलुः	गलित् स्फुटित भयङ्कर वात रक्त, कुष्ठादि
६१२९	राजतालेश्वररसः	अस्थिगत कुष्ठ, नासा-भङ्ग, हस्तभङ्ग, मण्डल कुष्ठ (कुष्ठको २ सप्ताहमें नष्ट करता है।
६१३४	राजराजेश्वर ,,	दद्रु, किटिभ कुष्ठ, मण्डल कुष्ठ
६१५६	रुद्रवटी	समस्त कुष्ठ
६३४६	लङ्केश्वर रसः	" "
६३४७	,, ,,	सुप्ति, मण्डल कुष्ठ
६३६२	लाङ्गली गुटिका	पैरोंमें घाव वाला, जानु तक फैला हुवा कष्टसाध्य वातरक्त
६३६३	,, ,,	कुष्ठनाशक, धी मेधा स्मृतिवर्द्धक
६३६४	लाङ्गल्याद्यलाहम्	जानु तक फैला और सर्वाङ्गमें फूटा हुवा वातरक्त
६९३१	वज्रधार रसः	समस्त कुष्ठ
६९३६	वज्रवटी	पामा
६९४८	वडवानलरसः	कुष्ठादि अनेकरोग
६९७६	वह्निचूडिकरसः	किटिभकुष्ठ
६९९०	वातरक्तान्तकरसः	अत्यन्त घोर गम्भीर सर्वदोषज वातरक्त
६९९१	,, ,, ,,	गम्भीर वातरक्त, कुष्ठ
७०१६	विकरालवक्त्रभैरव रसः	कुष्ठ
७०२०	विजयभैरवरसः	साम वातरक्त, समस्त कुष्ठ
७०२२	विजय रसः	समस्त कुष्ठ
७०२९	विजयेश्वर रसः	श्वेत कुष्ठ
७०६४	विश्वहित रसः	कुष्ठ
७०९०	वीरचण्डेश्वररसः	६ मासमें ऋष्य जिह्वक कुष्ठ नष्ट होता है।

मिश्र-प्रकरणम्

५७१०	मुस्ताद्योद्वर्तनम्	दाद, खाज, पामा, विचर्चिका, किटिभ कुष्ठादि

(१७) कृमिरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०२७	मातुलुङ्गादिकल्कः	कृमिरोग
५०६६	मुस्तादि क्वाथः	मुख और गुदाकी ओर जानेवाले कृमि तथा उनके समस्त उपद्रव
६५४४	विष्णुप्रियादि क्वाथः	कृमि

चूर्ण-प्रकरणम्

६५८३ वचादि चूर्णम् उदरकृमि मरकर निकल जाते हैं।
६६१० विडङ्गादिचूर्णम् कृमिरोग
६६१६ " " " "

गुटिका-प्रकरणम्

६२५३ लाक्षादि वटी डांस, मच्छर आदि कीटनाशक

तैल-प्रकरणम्

६७९३ विडङ्ग तैलम् यूका, लिक्षा
६७९७ विडङ्गाद्यं तैलम् शिरोगत कृमि

लेप-प्रकरणम्

५९८८ रसादि लेपः जू (यूका)

धूप-प्रकरणम्

५४२९ मशकहर धूपः डांस, खटमल, मच्छर, जू

रस-प्रकरणम्

५६१८ मुस्ताद्यं चूर्णम् कृमि
७०३० विडङ्गलौहम् उदरकृमि, अरुचि, अग्निमांद्य, ज्वर, शोथ

मिश्र-प्रकरणम्.

७१६३ विडङ्गादि योगः कृमिनाशक, अग्नि दीपक



(१८) क्षय राजयक्ष्माधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६२०६ लाक्षाकूष्माण्ड कल्कः रक्तक्षय

चूर्ण-प्रकरणम्

५१२१ महातालीसादि चूर्णम् क्षय, पीनस, ज्वर, स्वरभंगादि
५७५५ यवादि चूर्णम् क्षयको नष्ट कर शरीरको अति शीघ्र हृष्ट पुष्ट और बलवान बना देता है।
५७७१ यष्ट्यादि चूर्णम् राजयक्ष्माजनित कृशता
५९१६ रास्नाद्यं " राजयक्ष्मा, श्वास, कास
६२२१ लवङ्गाद्यं " क्षय, अरुचि, उरोग्रह, गलग्रह, हिक्का, अतिसार, कास आदि.
६२२७ " " क्षय, अरुचि, कास (मुखशोधक)
६६६० व्योषादि " क्षय

अवलेह-प्रकरणम्

५१९० मधुपक्क हरीतकी क्षय, कास, वमन, तृषा हिचकी आदि

६७०६	वासावलेहः (वृहद)	क्षय, स्वरभंग, अफारा, मूत्रकृच्छ

घृतप्रकरणम्

५२१३	मधुकादिघृतम्	क्षत क्षीणता
५९४२	रास्नादि घृतम्	शोष
६७४२	वासाद्यं घृतम्	शोष



आसवारिष्ट–प्रकरणम्

३८३८	वृहन्मूलासवः	राजयक्ष्मा, श्वास, प्लीहा (अग्निदीपक)



तैल–प्रकरणम्

६२७६	लक्ष्मीविलासतैलम्	क्षयादि अनेक रोग



रस–प्रकरणम्

५५०७	मध्वादि लेहः	भयङ्कर राजयक्ष्मा
५५२८	महा कनक सिन्दूर रसः	राजयक्ष्मा, श्वास, कास, शोथ, अग्निमांद्य, अरुचि, छर्दि आदि (राजयक्ष्माकी परमौषध)
५५६०	महामृत्युञ्जयरसः	क्षय, कास, अम्लपित्त, स्वरभंग (अत्यन्त बल बर्द्धक)
५५७८	महावीर रसः	क्षय, अतिसार, अग्निमांद्य.
५५८६	महाहेमगर्भरसः	राजयक्ष्मादि अनेक रोग
५५९९	माणिक्य रसः	राजयक्ष्माको शीघ्र नष्ट करता है।
५६३१	मृगाङ्कपोटली	क्षय, कफ, दाह, अरुचि, कृशता
५६३२	„ „	क्षय
५६३३	मृगाङ्क रसः	क्षय
५६३५	„ „	क्षय, अग्निमांद्य, संग्रहणी
५६३६	„ „	राजयक्ष्मा
५६३७	„ „	बहुरूप यक्ष्मा, अग्निमांद्य, स्वरभेद, अरुचि, वमन, मूर्च्छा, पित्त.
५६३८	„ „	राजयक्ष्मा
५६३९	„ „	„ „
५८२७	यक्ष्मकेसरीरसः	क्षय
५८२८	यक्ष्म हरो „	राजयक्ष्मा
५८२९	यक्ष्मान्तकलौह	स्वरभङ्ग, सर्व उपद्रवयुक्त और वैद्योंसे त्यक्त क्षय (बलवर्द्धक)
५८३०	यक्ष्मारि लौहम्	तीव्र क्षय
६०३२	रक्तवर्णहेमगर्भरसः	राजयक्ष्मा
६०३७	रजतादि लौहम्	क्षय, पित्त विकार
६०४१	रत्नगर्भपोटलीरसः	हरप्रकारका राजयक्ष्मा
६१२२	रसेन्द्र गुटिका	सम्पूर्ण लक्षणयुक्त क्षय, रक्तपित्त, अरुचि
६१२३	„ „	क्षय, श्वास, रक्तपित्त, अरुचि, कृशता (शरीरको पुष्ट करता है)
६१३१	राजमृगाङ्करसः	राज यक्ष्मा
६१३२	„ „ „	हर प्रकारका क्षय
६१३३	„ „ „	क्षय नाशक, अत्यन्त बल वर्द्धक

६१५१	रास्नादि लौहम्	राजयक्ष्मा नाशक, बलवर्णाग्नि वर्द्धक ।
६१५५	रुद्र रसः	मृगाङ्कके समान
६१६८	रौप्य रसायनम्	क्षय, पित्तरोग
६३३५	लक्ष्मीविलासरसः	राजयक्ष्मा, शुक्रक्षय, शोथ, प्रतिश्याय, अग्निमांद्य
६३५०	लवङ्गादि चूर्णम् (वृद्ध)	राजयक्ष्मा, धातुक्षय, अरुचि, हिक्का, अतिसार, स्वरभंग
६३७३	लोक नाथ रसः	क्षय, अतिसार, कृशता, अरुचि
६३७७	,, ,, ,,	क्षयको ४० दिनमें नष्ट कर देता है ।
६३८०	,, ,, ,,	कृशता नाशक, कास और हिचकीको ३ दिनमें नष्ट कर देता है ।
६३८२	लोकेश्वर रसः	पौष्टिक, अनेक रोग नाशक
६९३७	वज्रशेखर रसः	१ मासमें क्षयको नष्ट कर देता है ।
६९३९	वज्रेश्वर रसः	क्षयको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है ।
६९६९	वसन्ततिलकरसः	क्षय, प्रमेह, हृद्रोग ज्वरादि
७०१२	वासावलेहः (बृहद्)	उग्रराजयक्ष्मा, रक्तपित्त, पार्श्व शूल, वगा प्लीहा
७०३३	विडङ्गादिचूर्णम्	उग्र राजयक्ष्मा
७०५५	विन्ध्यवासीयोगः	उग्र राजयक्ष्मा, उरःक्षत, कण्ठ पीड़ा
७१०२	बृहच्चन्द्रामृतरसः	क्षय
७१०९	बृहत्काञ्चनाभ्ररसः	क्षय, श्वास, प्रमेह
७१११	बृहत्क्षयकेसरी ,,	क्षय आदि अनेक रोग
७१२१	वैक्रान्तरसायनम्	क्षय, उरःक्षत, ग्रहणी
७१२८	वैद्यनाथ रसः	क्षय
७१४३	व्योषादि चूर्णम्	क्षय

मिश्र-प्रकरणम्

५८४६	यवादि चूर्णम्	क्षय

(१९) गण्डमालागलगण्डाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६४८९	वरुणमूलक्वाथः	पुरानी गण्डमालाकोभी शीघ्र नष्ट कर देता है ।

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६६९५	व्योषादिगुग्गुलुः	गण्डमाला, गलग्रन्थियां

घृत-प्रकरणम्

६७२७	वचाद्यं घृतम्	पुरानी गण्डमाला, गलगण्ड, कास

तैल-प्रकरणम्

५२७०	मञ्जिष्ठाद्यं तैलम्	गण्डमाला
५२८९	महाअजमोदाद्यं तैलम्	पक्व अपक्व नूतन पुरातन और दुर्गन्धित स्राव वाली कष्ट साध्य अपची
५३०९	मागध्याद्यं तैलम्	गण्डमाला
६७७१	वचादि तैलम्	अपचीको समूल नष्ट करता है
६७७८	वज्रकं ,,	गण्डमाला और अर्शमें अत्युपयोगी
६८२९	व्योषादि,,	कष्ट साध्य अपची

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

६८३६	विडङ्गासवः	गण्डमाला आदि

लेप-प्रकरणम्

५४१३	मुण्डीमूल लेपः	गण्डमाला
५४१८	मूलक बीजादि लेपः	गलगण्ड, गण्डमाला
६८४७	वत्सनाभ लेपः	गण्मालाकी गांठोंको नष्ट करता है।
६८५७	विकङ्कतादि ,,	कफज गलगण्ड



रस-प्रकरणम्

५४७८	मण्डूर योगः	गलगण्ड



मिश्र-प्रकरणम्

७१५१	वनकार्पासादि योगः	अपची

(२०) गलरोगाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

५१३८	मुण्ड्यादिचूर्णम्	स्वरको मधुर करता है
६६२१	विडंगाद्यं ,,	कफज गलरोग, कास, हृद्रोग
६६५२	व्योषादि ,,	स्वर भंग



गुटिका-प्रकरणम्

५१६५	मरिचाद्या गुटिका	कण्ठ रोग
५७७३	यवाग्रजाद्या ,,	समस्त गलरोग

अवलेह-प्रकरणम्

५२०४	मृगनाभ्यादि लेहः	वाणीका स्तम्भ, स्वर भंग



घृत-प्रकरणम्

५७८७	यवक्षारादि घृतम्	वातज स्वर भंग
६७६५	व्याघ्री ,,	स्वरभङ्ग, कास
६७७०	व्योषाद्यं नावनं ,,	स्वरभङ्ग

रस-प्रकरणम्

५४९७	मदनाङ्कुशटङ्कण रसः	स्वरभङ्ग



(२१) गुल्माधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०२१	मातुलुंगरसादि योगः	वातज गुल्म
५८९५	रोध्रादि क्वाथः	रक्तगुल्म, हृत्क्लेद, यकृत
६४९६	वरुणादि क्वाथः	गुल्म, अन्तर्विद्रधि, शिरशूल.

चूर्ण-प्रकरणम्

५७४८	यवक्षारयोगः	गुल्म
५७५४	यवक्षाराद्यं-चूर्णम्	७ दिनमें पुराने गुल्म और वातज शूलको अवश्य नष्ट कर देता है
५७६१	यवान्यादि ,,	कफज गुल्म
५७६५	,, ,,	कफज गुल्म नाशक, वातानुलोमन
६२२३	लवङ्गादि ,,	पीड़ा युक्त गुल्म,(जीर्ण उदर विकारोंको शीघ्र नष्ट करता है ।)
६५८१	वचादि ,,	गुल्म, उपद्रव युक्त शूल
६५८५	वचाद्यं ,,	गुल्म, हृद्रोग, कुक्षिशूल
६५८८	वज्र क्षारः	गुल्म, शूल, उदावर्त, प्लीहा
६५८९	,, ,,	गुल्म, अजीर्ण, अग्निमांद्य
६६०५	विडङ्गतण्डुल ,,	गुल्म, प्लीहा, अरुचि
६६०६	विडङ्गादि क्षारः	गुल्म, प्लीहा
६६४८	बृहत्तगरादिचूर्णम्	वातज गुल्म, उदावर्त

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६२५८	लोह गुग्गुलुः	गुल्म, शूल, शोथ

अवलेह-प्रकरणम्

५२००	मातुलुङ्गाद्यवलेहः	वात गुल्म

घृत-प्रकरणम्

५२१९	मरिचाद्यं घृतम्	वातज गुल्म
५२४९	महा विन्दु ,,	गुल्ममें विशेष उपयोगी
५९४०	रसोनाद्यं ,,	गुल्म, ज्वर, अग्निमांद्य
६२७०	लशुन ,,	वातज गुल्म
६७६६	व्योषादि ,,	कफज गुल्म

तैल-प्रकरणम्

६७७५	वचाद्यं तैलम्	गुल्म, आनाह, मूत्रावरोध

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

६८३७	वृश्चीवाद्योऽरिष्टः	कष्टसाध्य गुल्म

रस-प्रकरणम्

६१२०	रसायनामृत-लौहम्	५ प्रकारका गुल्म, शोथ, जीर्णज्वर

६९५४	वडवानल रसः	हर प्रकारका गुल्म, शूल
७०४४	विद्याधर रसः	गुल्मप्लीहादि
७११५	वृहद्गुल्मकालानलो रसः	गुल्म, शोथ

मिश्र-प्रकरणम्

६१८२	रामठाद्या वर्तिः	अफारा तथा शूल नाशक गुदवर्तिः

(२२) ग्रहणी-रोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०४३	मुशल्यादियोगः	ग्रहणी नाशक सरल योग
६५६४	व्याघ्र्यादिकषायः	कफज संग्रहणी

चूर्ण-प्रकरणम्

५११०	मरिचाद्चूर्णम्	वातज संग्रहणी, अरुचि
५११९	महाक्षारः	ग्रहणी दीपक, अर्श, कृमिनाशक
५७६०	यवान्यादि ,,	कफज संग्रहणी
५७६२	,, ,,	पित्तज संग्रहणी, प्रवाहिका
५७६३	,, ,,	संग्रहणी, अतिसार, क्षय, अर्श
५९१०	रामठादि ,,	वातज संग्रहणी
५९१४	रास्नादि ,,	कफज ,,
५९१८	रुचकादि ,,	ग्रहणी दोष, अग्निमांद्य, अर्श
६२२२	लवङ्गादि ,,	संग्रहणी, शोथ, ज्वर, नाना वर्ण वाला अतिसार.
६५७४	वचादि ,,	संग्रहणी
६६१२	विडंगादिचूर्णम्	संग्रहणी रोगान्तर्गत विष्टम्भ
६६३७	विश्वाद्य ,,	संग्रहणी
६६५७	व्योषादि ,,	संग्रहणी, अरुचि, शोथ, ज्वर
६६५९	व्योषादि ,,	संग्रहणी नाशक, अग्नि पुष्टि कान्ति वर्द्धक

गुटिका-प्रकरणम्

५१५९	मदनमोदकः	संग्रहणी, शूल, (अग्निवर्द्धक)
५१७९	मुण्डयादिगुटिका	पित्तज संग्रहणी
५१८१	मुस्तकादिमोदकः	रक्तग्रहणी, ज्वर, अर्श
५१८२	मुस्तकाद्य ,,	ग्रहणी, अग्निमांद्य, आम, निर्बलता, अरुचि
५१८४	मेथी मोदकः	संग्रहणी, अग्निमांद्य
५१८५	,, ,, (वृहद्)	संग्रहणी, अर्श, छर्दि, अरुचि (आममें अत्युपयोगी)
५७७५	यवान्याद्यागुटिका	संग्रहणी
५७७६	योगराज ,,	,, अतिसार
६२५२	लवण वटी	दीपन, पाचन

गुग्गुलु–प्रकरणम्

५७७९	योगराज गुग्गुलुः	ग्रहणी, पाण्डु, रक्तार्श

अवलेह–प्रकरणम्

५१९१	मधुपक्व हरीतकी	पीड़ायुक्त संग्रहणी, आम, जीर्णज्वर
५१९२	मधुपाक विधिः	संग्रहणी, पुराना अतिसार, तृषा
५१९५	महाकल्याणको गुडः	ग्रहणी, मलावरोध, ज्वर निर्बलता

घृत–प्रकरणम्

५२१८	मरिचाद्यं घृतम्	ग्रहणी विकार, मलावरोध
५२२०	मसूर ,,	संग्रहणी
५२२१	मसूरादि ,,	,, प्रवाहिका, अतिसार
५२२४	महदग्नि ,,	,, अर्श, गुल्म
६७५६	विश्वौषधाद्यं ,,	शोथ युक्त आमग्रहणी
६७६४	वृहन्मसूराद्यं ,,	संग्रहणी, मलावरोध, अर्श, वायु

तैल–प्रकरणम्

६८२४	वृहद् ग्रहणी मिहिर तैलम्	ग्रहणी, अतिसार, ज्वर उदर पीड़ा

आसवारिष्ट–प्रकरणम्

५३२९	मध्वारिष्टः	ग्रहणी, शोथ, ज्वर
५३३०	मध्वासवः	कफ, पित्त, शोथ, (ग्रहणी दीपक)
५३३४	,,	समस्त ग्रहणी विकार
५३३५	मस्त्वासवः	ग्रहणी, अर्श, उदररोग

रस–प्रकरणम्

५५०३	मधुपक्वहरीतकी	संग्रहणी, कास, प्रमेह, पाण्डु
५५६४	महाराजनृपति वल्लभ रसः	प्रवृद्ध साम संग्रहणी, छर्दि, शूल, अफारा, दाह, ज्वर.
५५६५	,,	संग्रहणी, आनाह आदि
५६०३	मार्कण्डेय चूर्णम्	संग्रहणी, अग्निमांद्य
५६१६	मुस्तादि ,,	संग्रहणी
६०६३	रसपर्पटिका	संग्रहणी, शूल, शोथ, अग्निमाद्य
६०६४	रस पर्पटी	संग्रहणी
६११५	रसाभ्रवटी	ग्रहणी, ज्वर, कास
६१२६	रसेन्द्र चूर्णम्	ग्रहणी, रक्तातिसार, सूतिकारोग
६१३७	राजवल्लभ रसः	ग्रहणी, प्रवाहिका, पार्श्वशूल, अफारा
६१४३	राजावर्त ,,	ग्रहणी
६३४५	लघु सिद्धाभ्रक रसः	कष्ट साध्य संग्रहणीको शीघ्र नष्ट करता है
६३५२	लवङ्गाद्यं चूर्णम्	संग्रहणी, ज्वर, विष्टम्भ, आध्मान, अरुचि आदि

६३५३	लवङ्गाद्यं चूर्णम्	ग्रहणी, शूल, विष्टम्भ, आम, आनाह
६३५६	लाई चूर्णम्	संग्रहणी और सूतिका रोगमें अत्युत्तम्
६३५७	,, ,, (मध्यम)	ग्रहणी, प्रवाहिका
६३५८	,, ,, (लघु)	संग्रहणी, शूल, अफारा
६३५९	,, ,, (लघु)	संग्रहणीनाशक, दीपक
६३६०	,, ,, ,,	संहग्रणी, अतिसार
६३६१	,, ,, (वृहत्)	संग्रहणी, शोथ, विष्टम्भ, शूल, जीर्ण ज्वर
६३६५	लाविका चूर्णम् (मध्यम)	ग्रहणी, शोथ, वमन, शूल, अरुचि
६३६६	,, ,, (वृहत्)	ग्रहणी, आम, शोथ, शूल
६३७२	लोकनाथ रसः	संग्रहणी
६३९६	लोहपर्पटी	कष्ट साध्य संग्रहणी, आम, उदावर्त, शूल
६४२४	लोहरसायनम्	वातपित्तज ग्रहणी
६४२५	,, ,,	पित्तज ,,
६४२६	,, ,,	कफज ,,
६४२७	,, ,,	वातकफज ,,
६४२८	,, ,,	उग्र वातज ,,
६४३३	लोहसार कल्पः	हर प्रकारकी ग्रहणी, शोथ, शूल
६४४३	लोहामृत रसः	वातज, पित्तज, कफज, रक्तज ग्रहणी
६९२७	वज्रकपाट रसः	सर्व दोषज ग्रहणी
६९२८	,, ,, ,,	असाध्य ग्रहणीको भी नष्ट कर देता है
६९३०	वज्रधर रसः	ग्रहणी, पक्तिशूल, कास
६९५५	वडवानल रसः	विविध प्रकारकी संग्रहणी, ज्वर
६९६०	वराटादि योगः	संग्रहणी
७०१८	विजय पर्पटी	बहुत वर्षोंक पुरानी कष्ट साध्य संग्रहणी, भयंकर पुराना आम शल, प्रवाहिका आदि
७०१९	,, ,,	ऊपरके समान
७०२४	विजयसिन्दूररसः	कष्ट साध्य संग्रहणी
७०२७	विजया वटिका	हर प्रकारकी ग्रहणी
७११०	वृहत्कामेश्वर मोदकः	संग्रहणी, उदरविकार
७११७	वृहन्नृपवल्लभरसः	ग्रहणी, अजीर्ण उदररोग
७११९	वैद्यनाथ वटी	ग्रहणी, अग्निमांद्य, ज्वर

(२३) छर्दिरोगाधिकारः

कषाय–प्रकरणम्

५००८	मरिचादि हिम	छर्दि, तृषा
५०३८	मुद्गादि कषायः	वमनको तुरन्त रोकता है (सरल योग)
५०३९	मुद्गादि कषायः	छर्दि, अतिसार, दाह, (सरल योग)
५०४२	मुद्गामलकयूषः	छर्दि

५७३९ यष्ट्यादि योगः रक्त वमन
५८५४ रम्भाकन्द योगः छर्दि नाशक सरल योग

चूर्ण-प्रकरणम्

६६११ विडङ्गादिचूर्णम् कफज छर्दि
६६५३ व्योषादि „ „ „

अवलेहप्रकरणम्

५१९७ मक्षिकाविडवलेहः उपद्रव युक्त पित्तज छर्दि
६२६१ लाजसक्त्ववलेहिका दुःसाध्य पित्तज छर्दिको शीघ्र नष्ट करता है
६२६२ लाजादि योगः छर्दि, अरुचि

घृत-प्रकरणम्

६७३७ वल्लभकं घृतम् हृल्लास, शूल

रस-प्रकरणम्

५५०८ मनः शिलादि-चूर्णम् भयङ्कर कफज छर्दि
५५१० „ „ योगः छर्दिको शीघ्र नष्ट करता है।
६१२१ रसेन्द्रः छर्दि
६९६६ वमनामृत योगः त्रिदोषज छर्दि
७००८ वान्तिहृद्रसः कृमिरोग जनित वमन



मिश्र-प्रकरणम्

५१५१ मूर्वादि चूर्णम् भयङ्कर छर्दि, उद्गार
५६९४ मसूरसक्तुयोगः त्रिदोषज छर्दिको शीघ्र बन्द करता है।
६१७१ रक्तशाल्यादि „ कफज छर्दि „
६४५१ लाजादि यूषः पित्तज „



(२४) ज्वराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९७७ मञ्जिष्ठादिक्वाथः सन्निपातमें विशेष उपयोगी
४९९१ मधुकादिकषायः पित्तज्वर
४९९२ „ „ सन्निपात (मृदुरेचक)
४९९३ „ „ ज्वर, दाह, मूर्च्छा, तृषा, रक्तपित्त, भ्रम
४९९४ मधुकादिक्वाथः भयङ्कर वात पित्त ज्वरको भी अवश्य नष्ट कर देता है।
४९९५ „ „ घोर सन्ततादि ज्वर
४९९८ मधूकादिफाण्टः वातपित्तज ज्वर, दाह, तृषा, मूर्च्छा, बेचैनी; रक्तपित्त

५०००	मधूकादिशीतक०	पित्त ज्वर
५००१	मधूदकयोगः	शीतलाके पूर्व रूपमें देनेसे उसे रोकता है।
५००६	मरिचादिक्वाथः	उपद्रव युक्त कफज्वर
५००७	,, ,,	कर्णक सन्निपात
५००९	मरीच्यादि ,,	वात ज्वर
५०१२	महाबलादिकषायः	शीत कम्प युक्त ज्वर २, ३ दिनमें ही नष्ट हो जाता है।
५०१५	महौषधादिक्वाथः	तृतीयक
५०२०	मातुलुङ्गमूलादि कषायः	कफज्वर पाचक
५०२८	मातुलुङ्गादि क्वाथः	शीताङ्ग सन्निपात
५०२९	,, ,,	कफ ज्वर
५०३०	,, ,,	अभिन्यास, अफारा, शूल
५०४०	मुद्गादि कषायः	पित्त ज्वर
५०४७	मुस्तादि क्वाथः	ज्वरनाशक, अग्नि दीपक
५०४९	,, ,,	वात पित्त ज्वर
५०५०	,, ,,	वात ज्वर
५०५१	,, ,,	वात कफ ज्वर
५०५२	,, ,,	सन्निपात, मन्यास्तम्भ, सन्धिग्रह
५०५४	,, ,,	वात पित्त ज्वर पर अनुभूत
५०५५	,, ,,	कफ ज्वर
५०५६	,, ,,	चित्तभ्रम, दाह, छर्दि, मन्थरज्वर
५०५७	मुस्तादि क्वाथः	न्यूमोनिया
५०५८	,, ,,	रुग्दाह सन्निपात
५०६१	,, ,,	छर्दि, दाह, अरुचि ज्वर
५०६४	,, ,,	प्रबल वात पित्त ,,
५०६८	,, ,,	तीव्र कफ ,,
५०७२	,, ,,	विषम ,,
५०७३	,, ,,	चातुर्थिक ,,
५०७५	,, पाचन	आम ,,
५०७७	,, षडंगपानीय	ज्वर, दाह, तृषा
५०७८	,, ,,	,, ,, ,,
५०८०	मुस्ताद्यष्टादशांग क्वाथः	पित्त प्रधान सन्निपात, मन्यास्तम्भ, शिरोग्रह, पार्श्वग्रह.
५०८६	मृणालादि क्वाथः	ज्वर
५०८७	,, ,,	,,
५०८९	मृद्वीकादि हिमः	पित्त ज्वर
५७२१	यवादि क्वाथः	कफ पित्तज्वर, पिपासा दाह, छर्दि (अग्निदीपक)
५७२५	यवादि क्वाथः	पित्त कफ ज्वर
५७२६	,, शीतकषायः	पित्त ज्वर
५७२७	यवान्यादिक्वाथः	कफ ज्वर, कास, श्वास
५७३०	यवासादिक्वाथः	वात ज्वर
५७३३	यष्ट्यादि ,,	वात पित्त ज्वर
५७३५	,, ,,	विषम ज्वर
५७३६	,, ,,	उग्र सन्निपात, विषम ज्वर
५८५३	रजन्यादि ,,	सन्निपातमें अत्युपयोगी वमन, स्वेद, प्रलाप, शीताङ्ग, तृषा, तन्द्रा,

		दाह, पार्श्वशूल, मलावरोध, कासादि.
५८५८	रसोन योगः	मेलेरिया (विषमज्वर)
५८६२	रसोनादिकल्कः	विषमज्वर, वातरोग
५८६५	रास्नादि ,,	ज्वर, श्वास, कास, अग्निमांद्य
५८७०	रास्नादि क्वाथः	वातपित्त ज्वर
५८७१	,, ,,	,, ,, ,,
५८७२	,, ,,	वात ज्वर
५८७४	,, ,,	ज्वर, मन्यास्तम्भ, कटिपीड़ा, सन्धिपीड़ा, सर्वांग पीड़ा
५८७५	,, ,,	कर्णक सन्निपात
५८७६	,, ,,	,, ,,
५८७७	,, ,,	सन्निपात, सन्धिग्रह
५८९३	रोध्रादि क्वाथः	पित्त ज्वर
५८९७	रोहिण्यादि-कषायः	कास, दाह, तृषायुक्त ज्वर
६१९३	लघुपंचमूलयोगः	ज्वरगत मूत्रकृच्छ्र
६१९६	लघु रास्नादि-क्वाथः	वातज ज्वर, दारुण सन्निपात
६२०४	लशुनादिकाथः	घोर सन्निपात
६४६६	वचादि कषायः	सन्निपात
६४६७	,, ,,	प्रबल सन्निपात
६४६८	,, ,,	कफ, ज्वर, शूल, प्रतिश्याय
६४७२	,, क्वाथः	सन्धिक, सन्निपात, जांघोंकी जड़ता, भ्रम, पक्षाघात
६४८०	वत्सकादिक्वा०	पित्त ज्वर, शूल, दाह
६४८३	,, गणः	ज्वर, पीनस, शूल, कफ
६४८८	वरादि क्वाथः	रक्तदोषज भयंकर ज्वर
६५०३	वासकादिकषायः	कफज ज्वर
६५०५	वासा ,,	कफ पित्त ज्वर, क्षय, रक्तपित्त
६५१०	वासादि ,,	चातुर्थिक ज्वर
६५१३	,, ,,	कफज ,,
६५१४	,, ,,	इकतरा ,,
६५१५	,, ,,	कफज्वर, कास, शूल
६५१७	,, क्वाथः	विषमज्वर
६५२१	,, ,,	ज्वर, श्वास, कास, वमन, शोथ मूत्रकृच्छ्र
६५३५	विश्वादि कषायः	वातपित्त ज्वर
६५३६	,, ,,	पिपासा, छर्दि, ज्वर, दाह
६५३८	,, ,,	वात ज्वर
६५३९	,, ,,	समस्त ,,
६५४१	,, ,,	,, ,,
६५४७	वृषादिक्वाथः	पित्तज्वर, दाह, तृषा, मूर्छा, भ्रम
६५४८	बृहच्चन्दनादि काथः	पित्तज्वर, मूर्च्छा
६५४९	बृहच्छठ्यादि ,,	सन्निपात, खांसी, श्वास मुखशोष, तृषा, दाह, दिवा निद्रा, रातको नींद न आना.
६५५०	,, ,, ,,	वात कफ ज्वर, खांसी शूल, शीत, दुष्ट मलग्रह, जीर्णज्वर.

६५५२	बृहत्कटफलादि क्वाथः	सन्निपात, स्वरभेद, कर्णमूल, शिरका भारी पन, बधिरता.
६५५३	बृहत्क्षुद्रादिक्वाथः	शीत ज्वर
६५५५	बृहत्पटोलादि ,,	वातजमसूरिका
६५५६	बृहत्पिप्पल्यादि ,,	वातकफ, ज्वर, शीत, प्रस्वेद, अत्यन्त कम्पन प्रलाप, अति निद्रा, रोमहर्ष, शरीरकी शून्यता.
६५५९	बृहद्रास्नादि ,,	भयंकर सन्निपात, श्वास, कास.
६५६३	व्याघ्र्यादिकषायः	कफ ज्वर पाचक
६५६५	,, ,,	वातकफ ज्वर, श्वास, कास, शूल
६५६६	,, ,,	सन्निपात
६५६९	,, ,,	ज्वर, वमन, दाह, तृषा, कास
६५७०	,, ,,	कफ, अभिन्यास ज्वर
६५७१	,, ,,	समस्त ज्वर
६५७२	व्योषादि क्वाथः	त्रिदोषज ज्वर

चूर्णप्रकरणम्

५१००	मधुपिप्पली योगः	ज्वर, कास, हिक्का, प्लीहा (सरलयोग)
५१०५	मधूकादि चूर्णम्	ज्वर, वमन, मुंहसे लार बहना, हिक्का
५११६	मरिचाद्योद्धूलनम्	सन्निपातमें अधिक पसीना आना
५१२६	मातुलुङ्ग केसरादि योगः	ज्वर, मुखशोष, मुखकी जड़ता, अरुचि
५१३७	मुखधावनयोगः	मुखशोधक, रुचिवर्द्धक
५७५६	यवानिकाद्युद्धूलनम्	अधिक पसीना आना
६२१७	लघुसुदर्शन चूर्णम्	समस्त ज्वर, त्रिदोष नाशक
६५७८	वचादि चूर्णम्	प्रस्वेद
६५९३	वडवानल चूर्णम्	ज्वर, कास, मलावरोध
६६०२	वालकादि योगः	ज्वर
६६३३	विश्वादि चूर्णम्	विषम ज्वर (सरलयोग)

गुटिका-प्रकरणम्

६६८४	व्योषादिवटी	ज्वर, छर्दि, कास, ताप, मूत्रकृच्छ

घृतप्रकरणम्

५२१०	मञ्जिष्ठाद्यं घृतम्	दुष्ट ज्वर, हिक्का, श्वास अरुचि, उदावर्त शोथ, शोष.
५२११	मञ्जिष्ठाद्यं ,,	कफ ज्वरमें विशेष उपयोगी
५२२७	महा कल्याण ,,	ज्वर नाशक, आयुवर्द्धक
५२२८	,, ,, ,,	विषम ज्वर, शोथ, कृशता
५२५०	,, षट्पलकं ,,	विषमज्वर, प्लीहा, अग्निमांद्य
५२५१	,, ,, ,,	ज्वर, प्लीहा, शूल, दुर्बलता

६२५२	महाषट्पलकं घृ०	जीर्ण ज्वर, प्लीहा, हिक्का, प्रतिश्याय.
५९५०	रोहिण्यादिघृतम्	ज्वर, तृषा, भ्रम, मूर्च्छा, शूल
६२६२	लघुषट्पलकं ,,	ज्वर, प्लीहा
६२६९	लशुन ,,	ज्वर, कास, अरुचि, छर्दि, कृशता, पार्श्वशूल, प्लीहा, शोथ
६७४३	वासाद्यं ,,	जीर्ण ज्वर
६७४४	,, ,,	समस्त ज्वर
६७४६	विडङ्गाद्यं ,,	जीर्ण कफ ज्वर

तैल-प्रकरणम्

५७९८	यवादि तैलम्	ज्वर, प्रबल दाह, अङ्ग प्रहर्ष
६२८५	लाक्षादि ,,	ज्वर, अस्थि वेदना, निद्रा
६२८६	,, ,,	बालकोंका ज्वर, निर्बलता
६२८७	,, ,,(मध्यम)	जीर्णज्वर, विषम ज्वर, क्षय
६२८८	,, ,, (महा)	दाह, ज्वर, प्रलाप, तालु शोष
६२८९	,, ,, (लघु)	दाह, शीत, ज्वर
६८२०	वृहत्किरातादि तैलम्	सन्तत सतत आदि विषम ज्वर, प्लीहादोषज ज्वर, शोथ
६८२१	वृहत्पिप्पल्याद्यं तैलम	समस्त जीर्णज्वरे, विषमज्वर, सन्निपात, पुनरावर्तक ज्वर, बारीके ज्वर
६८२२	वृहदङ्गारक ,,	ज्वर, शोथ, पाण्डु



आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३३९	मृगमदासवः	सन्निपात ज्वर, हिक्का
५३४०	मृतसंजीवनीसुरा	सन्निपातमें शरीरका ठंडा होजाना

लेप-प्रकरणम्

५३४९	मधुकादि लेपः	शिरकी तपन, कम्प, मोह, वमन, हिक्कादि ज्वरके उपद्रव
५३५०	मधुकादि ,,	आंखोंके ऊपरकी मसूरिकाको नष्ट करता है।
५३७८	मातुलुङ्गकेसरादि योगः	जिह्वा, तालु, गले और क्लोमका सूखना
५३७९	मातुलुङ्गरसादि योगः	तालुशोष, दाह
५३८१	मातुलुङ्गादिलेपः	मसूरिकोको शीघ्र पका देता है। दाहनाशक।
५४१४	मुद्गादि लेपः	दाह
५९७६	रक्ताश्वमारपुष्पादि लेपः	शिर पीड़ा
५९९९	रास्नादि लेपः	कर्णशूल
६८५९	विदार्यादि ,,	दाह, तृषा

धूप-प्रकरणम्

५४३०	मसूर धूपः	ज्वर
५४३१	मसूरिकान्तकधूपः	मसूरिका
५४३२	मार्जारविष्ठा ,,	ज्वर सम्बन्धी कम्पन
५४३३	माहेश्वर ,,	ज्वर
५४३५	,, ,,	सुरावेश ज्वर
५८१९	यवादि ,,	ज्वर
६००३	रालादि ,,	मसूरिकामें कृमि उत्पन्न नहीं होते, हो गये हों तो नष्ट हो जाते हैं।
६००४	रुगादि धूपः	ज्वर
६८६९	वचादि ,,	विषम ज्वर

अञ्जन-प्रकरणम्

५४३९	मनःशिलाद्यञ्जनम्	सन्निपातकी तन्द्रा
५४४०	,, ,, ,,	विषम ज्वर
६०१७	राजिकाद्यञ्जनम्	ज्वर
६०१८	रास्नाद्यञ्जनम्	तन्द्रिक सन्निपात
६३२२	लशुनाद्यञ्जनम्	ज्वर
६३२३	,, ,,	कफ वातज्वर, रक्तपित्त तथा अतिसार युक्त ज्वर
६३२६	लोहभस्माद्यञ्जनम्	सन्निपातकी तन्द्रा
६८७८	विषमज्वरान्तकाञ्जनम्	विषम ज्वर

नस्य-प्रकरणम्

५४५५	मधूकादिनस्यम्	बेहोशी
५४५८	मरिचादि ,,	कर्णक सन्निपात
५४६०	,, ,,	तन्द्रिक ,,
५४६१	,, ,,	भुग्ननेत्र ,,
५४६३	मातुलुङ्गादि ,,	कफको ढीला करके निकालती है। शिर-पीड़ा, हृदयशूल तथा कण्ठ, पार्श्व और मुखकी वेदना।
५४६५	मोहान्धसूर्य ,,	सन्निपातकी मूर्च्छा
६०२४	रेचनसञ्ज्ञक ,,	तन्द्रा
६०२५	,, ,, ,,	बेहोशी

रस-प्रकरणम्

५५०६	मध्यम कस्तूरी भैरवरसः	वात प्रधान सन्निपात, कफ, शोथ
५५०९	मनःशिलादि-ज्वराङ्कुशः	विषमज्वरको अवश्य नष्ट करता है।
५५१७	मन्थानभैरवरसः	घोरनवीनज्वर, भयंकर सन्निपात, शीतज्वर, दाहपूर्वज्वर
५५१९	,, ,, ,,	सन्निपात
५५२३	मल्लचन्द्रोदयः	सन्निपात और विसूचिकामें अत्युपयोगी है।
५५२६	मसूरिकारि रसः	सर्वदोषज सर्वदेहगत मसूरिका

५५४१	महाज्वराङ्कुशः	मेलेरिया (एकाहिक, तृतीयक आदि)
५५४२	,, ,,	जीर्णज्वर, मेलेरिया, जलदोषजज्वर
५५४३	,, ,,	मेलेरिया, अन्तर्वेग, धातुगत और विषमज्वर
५५४४	,, ,,	समस्तज्वर
५५४५	,, ,,	दाहपूर्वज्वर, पित्तज्वर, शीतज्वर
५५४६	,, ,,	सन्निपातज जीर्णज्वरमें शीघ्र गुणकारी है।
५५४७	महातालकेश्वर रसः	दाहपूर्वज्वर, शीतज्वर, विषमज्वर
५५५६	महा भैरवरसः	सन्निपातमें अत्युत्तम
५५६६	महाराज वटी	धातुगत ज्वरोंको अवश्य नष्ट कर देता है।
५५७६	महाविजयपर्पटी रसः	सन्निपात
५५७७	महाविषमारीरसः	शीतपूर्व तथा दाहपूर्व ज्वर
५५८०	महाशीतज्वराङ्कुश रसः	धातुगतज्वर, चित्तभ्रम सन्निपात, पित्त
५५८१	महाश्लेष्मकालानल रसः	शीताङ्ग सन्निपात
५६०४	मार्तण्डभैरवरसः	कष्ट साध्य सन्निपात
५६०८	मुक्तापञ्चामृतरसः	जीर्णज्वर, क्षयादि
५६१३	मुद्राघोटको रसः	ज्वरको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।
५६४२	मृत्प्राणदायीरसः	नवीनज्वर, स्नायुगत वायु
५६४३	मृत्सञ्जीवनरसः	सन्निपातमें होनेवाला जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, पिच्छिलास्यता, मन्यास्तम्भ, शिरोग्रह, जिह्वाकी शुष्कता
५६४५	मृत्सञ्जीवनोरसः	सन्निपात, दाहपूर्वज्वर, शीतज्वर
५६४६	,, ,, ,,	मृत्प्रायः सन्निपात रोगी भी बच जाताहै।
५६४८	मृत्सञ्जीविनी गुटिका	ऊपरके समान
५६४९	मृत्सञ्जीविनी वटिका	सन्निपात
५६५२	मृतोत्थापनरसः	मृत्प्रायः सन्निपात रोगी भी बच जाता है।
५६५३	,, ,,	ऊपरके सामान
५६५४	मृत्युञ्जय रसः	नवीनज्वर, सन्निपात
५६५६	,, ,,	विषमज्वर
५६५७	,, ,,	सन्निपात, शूल, यकृत् मलावरोध, शोथ, हिक्का, श्वास
५६५८	,, ,,	समस्तज्वर
५६६२	,, ,,	,, ,,
५६६५	मेघनाद रसः	विषम तरुण जीर्णज्वर, दाह, तृषा
५६६७	,, ,,	समस्तज्वर
५६६८	,, ,,	विषमज्वर

५६८२	मोरेश्वर रसः	सन्निपात, कृशता
६०३६	रघुनाथ रसः	विषमज्वर, अग्निमांद्य, कास
६०४२	रत्नगिरि रसः	१ पहरमें ज्वरको उतारता है ।
६०४६	रविसुन्दरो रसः	वातज्वर, शिरका भारीपन
६०४७	„ „ „	हर प्रकारका ज्वर
६०५४(अ)	रसकेश्वररसः	धातुगतज्वर, रक्तस्राव, पित्त, भ्रम
६०६५	रसपर्पटी	कफज्वर
६०६६	„ „	सन्निपात, शोथ, कफ
६१०८	रसादि वटी	नवीन ज्वरको १ दिन में नष्ट करती है ।
६१०९	„ ,	नवीन ज्वर
६११०	रसाद्यु लनम्	अधिकस्वेद, शरीरका ठण्डा होना
६१४५	रामज्वरापहारी रसः	विषम, जीर्ण और नवीनज्वर
६१४६	रामवाण रसः	शीतपूर्व, दाहपूर्वज्वर, बारीके ज्वर
६१४८	„ „ „	८ प्रकारके ज्वरोंको शीघ्र नष्ट करता है ।
६१५०	रामरसः	आमज्वर, शूल, वायु, विष्टम्भ
६१५९	रोमबेधरसः	शरीरपर मालिश करनेसे सन्ततादि विषम ज्वर नष्ट होते हैं ।

६३३७	लक्ष्मीविलासरसः	जीर्णज्वर, निरामज्वर, वायु, विषमज्वर
६३४२	लघुपोटलीरसः	घोरसन्निपात, वायु, अग्निमांद्य, बलक्षीणता
६३४८	लङ्केश्वररसः	शीतज्वर
६३५५	लहरीतरङ्गो,,	सन्निपात, प्रचण्डराजयक्ष्मा
६३८४	लोह गुटिका	वातपित्त ज्वर
६९४६	वडवानलरसः	वात कफप्रधान ज्वर
६९५६	„ „ „	सन्निपात, उग्रवायु
६९७१	वसन्तमालतीरसः	जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर, कासादि, अग्निमांद्य
६९७२	„ „ „ (लघु)	जीर्ण ज्वर, पित्तजनित घोर पीड़ा, गर्भिणीका ज्वर
६९७३	„ „ „	धातुगत जीर्ण ज्वर, प्रमेह
६९८६	वातज्वरारिरसः	वात ज्वर
७०११	वारिसागरो „	असाध्य सन्निपात
७०१५	विकरालवक्त्रभैरव रसः	ज्वर
७०१७	विक्रमकेशरीरसः	समस्त ज्वर
७०२५	विजया गुटिका	विषम ज्वर, कास, श्वास, शोथ
७०४३	विद्याधर रसः	आमज्वर, पाण्डु, अजीर्ण, आमयुक्त कृमि, प्लीहा.
७०४९	विद्यावल्लभोरसः	विषम ज्वर

७०५३	विनोदविद्याधर-रसः	नवज्वर, शूल, अजीर्ण कोष्ठ बद्धता
७०५६	विमलरसायनम्	ज्वर, शोथ, अरुचि, शूल, वायु, पित्त
७०६१	विश्वतापहरण रसः	नवीन ज्वर
७०६२	विश्वमूर्त्ति रसः	सन्निपात
७०७३	विषमज्वरान्तक लौहम्	विषम ज्वर, प्लीहा, अग्निमांद्य
७०७४	,, ,, ,, (पुटपक्व)	ज्वर, प्लीहा, यकृत, शोथ, आम, अरुचि, कासादि
७०७५	विषमज्वरान्तक लौहम् (वृह.)	विशेषतः विषम ज्वर
७०७६	विषमज्वराररिसः	विषम ज्वर
७०९१	वीरभद्रभैरव ,,	ज्वर, शूल
७०९२	वीरभद्राख्यो ,,	सन्निपात
७०९४	वीरविक्रमो ,,	विषमज्वर, सन्निपात
७१०३	वृहच्चिन्तामणि रसः	समस्त ज्वर, कास, प्लीहा, शोथ
७१०५	वृहज्ज्वरचूड़ामणि रसः	समस्त ज्वर
७१०६	वृहज्ज्वरान्तको-रसः	शुक्र धातुगत जीर्ण ज्वर, बल्य
७१०८	वृहत्कस्तूरीभैरव रसः	विशेषतः लौट लौटकर आने वाले ज्वर
७११८	वेतालरसः	सन्निपातमें अत्युपयोगी

मिश्र-प्रकरणम्

५६९२	मधुसर्पिरादि योगः	विषम ज्वर, क्षतज कास, हृद्रोग
५७१२	मूलिकाबन्धनम्	शिर पर बांधनेसे ज्वर उतरता है
५७१७	मेघनादमूल ,,	,, ,, ,, ,,
५८४९	यवादि योगः	ज्वरकी दाह
६४५०	लाज मण्डः	ज्वर, पिपासा, कफ, पित्त
७१३२	वैद्यनाथ वटी	नवीन ज्वर
७१५८	बालुका स्वेदः	अङ्गमर्द, शिरपीड़ा, शूल
७१६५	विदार्यादियोगः	चातुर्थिक ज्वर, कास, वायु, कफ



(२५) ज्वरातिसाराधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६४७९	वत्सकादिक्वाथः	ज्वरातिसार, विशेषतः दाह
६४८१	,,	,, ,,
६४८५	वत्सादन्यादि	ज्वरातिसारको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।
६५५४	वृहत्पञ्चमूल्यादि क्वाथः	रक्त सहित या रक्त-रहित अनेक योगोंसे

न आराम होनेवाला ज्वरातिसार ।

चूर्ण-प्रकरणम्

६६५१ व्योषादिचूर्णम् ज्वरातिसार, तृषा, अरुचि, शोथ

रस-प्रकरणम्

५६४४ मृतसञ्जीवनरसः ज्वरातिसार

५६५० मृतसञ्जीवनवटी ,, विसूचिका

मिश्र-प्रकरणम्

५७०९ मुष्टियोगः ज्वरातिसार

(२६) तृषाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९९९ मधुकादिफाण्टः तृषा, दाह, मूर्च्छा, भ्रम।

६४७७ वटशुङ्गादियोगः छर्दि, तृषा

गुटिका-प्रकरणम

६६६४ वटप्ररोहादिगुटि० प्रवृद्ध तृषा

६६६५ ,, ,, ,, पुराना तृषा रोग

अवलेहप्रकरणम्

६६९८ वटाद्यवलेहः तृषा

लेप-प्रकरणम्

५९७५ रक्तचन्दनादि लेपः तृषाको अवश्य नष्ट करता है ।



रस-प्रकरणम्

५५८९ महोदधि रसः तृषा

६१०४ रसादि गुटी प्रवृद्ध तृषा

मिश्र-प्रकरणम्

६४५२ लाजोदक योगः तृषा (सरलयोग)

७१५२ वमन योगः ,,

(२७) दन्तरोगाधिकारः

तैल-प्रकरणम्

६२९० लाक्षाद्यं तैलम् दन्त चालन, दालन, शीताद आदि

६२९३ लोध्राद्यं ,, दन्त नाड़ी

लेप-करणम्

६३०८ लाङ्गली लेपः पैरके अंगूठे पर लेप करनेसे दांतके कृमि निकल जाते हैं ।

धूप-प्रकरणम्

६८७० विशालादिधूपः दन्त कृमि

गुटिका-प्रकरणम्

५१७० महाखदिर वटि० दन्त पौष्टिक

५१८० मुण्डयादिगुटि० दन्त कृमि, दन्त शूल

(२८) दाहाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६२०८ लाजादि क्वाथः दाह, पित्त ज्वर

लेप-प्रकरणम्

५१६९ मसूरादि लेपः पैरोंकी दाह

६३११ लामज्जकाद्युद्वर्तनम् दाह

रस-प्रकरणम्

६१०६ रसादि गुटी दाह

(२९) नासारोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९८४ मण्डूकपर्ण्यादि पीनस पर सरल योग

६४६८ वचादि कषायः प्रतिश्याय, पीनस, कफ ज्वर

चूर्ण-प्रकरणम्

६६५४ व्योषादि चूर्णम् पीनस, श्वास नाशक, रुचि स्वर वर्द्धक

अवलेह-प्रकरणम्

५९३७ राज रसायनम् सैंकड़ों योगोंसे आराम न होने वाली पीनस ३ दिनमें नष्ट हो जाती है।

तैल-प्रकरणम्

५९५५ रसाञ्जनाद्यं तैलम् प्रतिश्याय

६७९६ विडङ्गाद्यं तैलम् नासा रोग

६८२८ व्याघ्री " पूतिनासा रोग

६८३१ व्योषाद्यं " नासार्श

नस्य-प्रकरणम्

६०२२ रक्तकरवीरयोगः नासार्श

६०२३ रक्ताम्रस्वरसादि योगः पीनसको ३ दिनमें नष्ट करता है।

६३२८ लाङ्गल्यादिनस्यम् पीनस, पूतिनासा रोग

६८८७ विडंगादि चूर्णम् प्रतिश्याय

रस-प्रकरणम्

५४६९ मणिपर्पटी रसः समस्त नासा रोग

मिश्र-प्रकरणम्

७१४८ वचादि योगः प्रति श्याय

७१६१ विजया " " "

७१७० वेल्लादि " पीनस

(३०) निद्रानाशाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

६६०४ विजया योगः निद्रानाश, अग्निमांद्य, अतिसार

(३१) नेत्र-रोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०१३ महावासादिक्वाथः नेत्रकण्डु, तिमिर, नेत्र दाह, पिल्ल, व्रण

५७३२ यष्ट्यादिक्वाथः नेत्ररोग

५७४० यष्ट्याद्याश्च्योतनम् दाहयुक्त सव्रण नेत्रशुक्र

६४७१ वचादिक्वाथः पुराना नकुलान्ध्य, काच नक्तान्ध्य

६४७४ ,, योगः कफ, तिमिर

६५०२ वासकादिकषायः नेत्रगत रक्तस्राव, कफ

६५१८ ,, क्वाथः समस्त नेत्राभिष्यन्द,



चूर्ण-प्रकरणम्

५६०७ मुक्तादि चूर्णम् तिमिर, काच, खाज, नेत्राभिष्यन्द

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६२५७ लोहादि गुग्गुलुः नेत्रशुक्र



घृत-प्रकरणम्

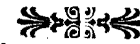
५२१५ मधुकादि घृतम् अभिघातज नेत्ररोग

५२२२ मसूरादि ,, तिमिर

५२४३ महा पटोलाद्यं घृतम् लाल रेखाएं, पटल, व्रण, शुक्र, नक्तान्ध्य, पिल्ल, दूरदृष्टि, दृष्टिकी मन्दता आदि

५९४४ रास्नाद्यं घृतम् तिमिर

६७४५ वासामृता गुग्गु. घृतम् आंखोंसे पानी जाना, नेत्रशोथ, नेत्रमल, नेत्र कण्डू, तिमिर आदि



तैल-प्रकरणम्

५२९९ महापिप्पल्याद्यं तैलम् तिमिर, नक्तान्ध्य, नेत्र-कण्डू, नेत्रस्राव, दूरदृष्टि आसन्नदृष्टि आदि



लेप-प्रकरणम्

५३६४ मरिचादि लेपः अर्म

५८१६ यष्ट्यादि ,, हर प्रकारकी नेत्रपीड़ा

५९८२ रसाञ्जनादि,, समस्त नेत्ररोग

५९८४ ,, , कफाभिष्यन्द

६३१३ लोध्रादि ,, नेत्राभिष्यन्द

६३१५ ,, ,, नेत्रपीड़ा



अञ्जन-प्रकरणम्

५४३८	मञ्जिष्ठाद्यञ्जनम्	क्लेद, रक्तजपीड़ा, अर्म, पिल्ल
५४४२	मनःशिलाद्यञ्जनम्	तिमिर
५४४३	,, ,, ,,	काच, शुक्र, अर्म, तिमिर
५४४५	मरिचादिचूर्णाञ्जनम्	आंखोंकी खुजली, काच, कफविकार
५४४६	मरिचाद्यञ्जनम्	नेत्रस्राव
५४४७	,, ,,	नक्तान्ध्य
५४४८	मालत्याद्यञ्जनम्	,,
५४४९	मुक्तादिमहा ,,	समस्त नेत्ररोग
५४५०	मेषशृङ्ग्याद्य,,	नेत्रोंको स्वच्छ करता है ।
५४५१	,, ,,	काच, नेत्रमल
६००६	रक्तचन्दनाद्या-वर्तिः	नेत्र रोग
६००७	रक्ताञ्जनम्	६ प्रकारका तिमिर
६००८	रसकेश्वरवर्ति	रूक्षता, फूला, दुर्मास, अर्जुन आदि
६००९	रसाञ्जनादिगुटि०	नक्तान्ध्य
६०१०	रसाञ्जनाद्यञ्जनम्	पित्त विदग्ध दृष्टि
६०११	,, ,,	नक्तान्ध्य
६०१२	,, ,,	अञ्जन नामिका
६०१३	,, ,,	क्लेद, कण्डू, पलकोंके बाल गिरना
६०१४	,, ,,	नेत्र पटल
६०१५	,, ,,	क्लेद, कण्डू, पिल्ल
६०१६	रसादि वर्तिः	समस्त नेत्र रोग
६०२०	रोपणीकुसुमिका-वर्तिः	तिमिर, अर्जुन, शुक्र, मांस वृद्धि
६०२१	रोहिण्यादिवटी	पित्तज, अर्म, नेत्रव्रण
६३२४	लाक्षादि योगः	पिल्ल
६३२५	लामज्जकाद्यञ्जन	सव्रण नेत्र शुक्र
६८७५	वटक्षीराद्यञ्जनम्	२ मासके फूलेको शीघ्र नष्ट करता है ।
६८७६	वातारिपत्रयोगः	आंख फरकना, नेत्र-कण्डू, अधिमंथ
६८८१	वैदेहीवर्तिः	पटल, तिमिर, शुक्ति, राजिका, शुष्काक्षि-पाक, तोद
६८८४	व्योषाद्या वर्तिः	नेत्रार्बुद, पटल, काच, तिमिर, अश्रु स्राव

रस-प्रकरणम्

५५०१	मधुकाद्यं लौहम्	समस्त नेत्र रोग
५५९५	माक्षिकादि वटी	उपद्रव युक्त समस्त नेत्र रोग

मिश्र-प्रकरणम्

५६८९	मधुकादि योगः	तिमिर
५७१८	मेघनादमूलयोगः	तीव्र नेत्र पीड़ा
६१९०	रोचनादिचूर्णम्	लगण
६१९१	रोध्राद्याश्चोतनम्	नेत्र पीड़ा, लाली
६४४८	लाक्षादि योगः	रक्ताभिष्यन्द
६४५४	लोचन शूलघ्नी पोटली	नेत्र पीड़ा

६४५५	लोध्रादिगुटिका	नेत्राभिष्यन्द
६४५६	„ योगः	नेत्र शूल
६४५७	„ „	पित्तरक्तज नेत्राभिष्यन्द
६४५८	„ सेकः	रक्तज „
६४५९	„ „	„ „
६४६०	लोध्राद्याश्च्योतन	पित्तज, वातज, रक्तज नेत्राभिष्यन्द
६४६१	„ „	नेत्रकण्डू, अश्रु, किरकिराहट

(३२) पाण्डुरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९८६	मण्डूकीरसयोगः	बालापर सरलयोग

चूर्ण-प्रकरणम्

५१०३	मधुयष्टियोगः	पाण्डु (सरलयोग)
५१५२	मूर्वाद्यं चूर्णम्	पाण्डु
६६२७	विशालादि „	पाण्डु, ज्वर, दाह, अरुचि
७१४४	व्योषादि „	कामला

घृत-प्रकरणम्

५२६४	मूर्वाद्यं घृतम्	पाण्डु, ज्वर, शोथ,
५९३९	रजनी त्रिफला घृतम्	पाण्डु
६७६९	व्योषाद्यं घृतम	मृत्तिका भक्षण जनित पाण्डु

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३२७	मण्डूरारिष्टः	पाण्डु, अर्श, शोथ
६३००	लोहासवः	पाण्डु, शोथ, अरुचि

रस-प्रकरणम्

५४७०	मण्डूर गुटिका	पाण्डु, कामला
५४८०	„ योगः	पाण्डुको ७ दिनमें नष्ट करता है ।
५४८२	„ लवणम्	पाण्डुमें अत्युत्तम
५४८३	„ वटकः	पाण्डु, शोथ, अर्श
५४८५	„ वज्रवटकः	पाण्डु अग्निमांद्य अरुचि
५४८६	मण्डूराद्यवलेहः	घोर पाण्डु भी शीघ्र नष्ट होता है ।
५५००	मदेभसिंह रसः	ज्वर, पाण्डु, तृषा, अग्निमांद्य
५५०४	मधुमण्डूरम्	पुराना पाण्डु (रक्तवर्द्धक)
५५४९	महातालेश्वररसः	पाण्डु, कामला, हलीमक
५६१७	मुस्तादि चूर्णम्	पाण्डु
५८३६	योगराजगुटिका	पाण्डु, कास, अजीर्ण, अरुचि.
६१३८	राजशेखरवटी	पाण्डु, पित्तविकार, अग्निमांद्य
६३४४	लघुशिवगुटिका	पाण्डु, ज्वर, प्लीहा
६३८८	लोहचूर्ण वटकः	पाण्डु, कामला, हलीमक

६३९८	लोह भस्म योगः	कामला
६४००	,, ,, ,,	,,
६४०६	,, मलादि ,,	पाण्डु, शोथ (अग्नि-दीपक)
६४३४	लोह सुन्दरः	शुष्क पाण्डु
६४३९	लोहाद्यो मोदकः	पाण्डु
६४४१	लोहामृतम्	,,
६९२६	वज्रक गुटिका	पाण्डु, रक्तविकार, कास
७०२८	विजया वटिका	शोथ, पाण्डु
७०३५	विडङ्गादिलोहम्	शोथ, पाण्डु, हलीमकको ७ दिनमें नष्ट करता है।
७०३७	विडङ्गादि लौहम्	कामला, पाण्डुको शीघ्र नष्ट करता है।
७०३९	विडङ्गाद्य लौहम्	पाण्डु, कामला
७०४१	,, लेहः	पुरानी कामला, पाण्डु पित्तज, शोथ
७०९८	वृद्धनवरसादि गुटिका	पाण्डु, कामला, कासादि
७०९९	,, नवायसचूर्णम्	पाण्डवादि अनेक रोग
७१६७	विशालादि योगः	कामला

मिश्र-प्रकरणम्.

५६८५	मणिबन्धदहनम्	कामला

(३३) प्रमेहाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०१०	महानिम्बबीज-योगः	प्रमेहपर उत्तम (सरल योग)
५०४४	मुष्ककादिगणः	प्रमेह, शुक्रदोष, अश्मरि
५०४८	मुस्तादि क्काथः	प्रमेह, मूत्राघात
५८९४	रोध्रादि ,,	प्रमेह
६२१०	लोध्रादि ,,	कफज मेह
६५२२	विडंगादि ,,	,, ,,
६५२५	,, ,,	भयंकर प्रमेह



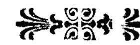
चूर्ण-प्रकरणम्

६२२४	लवङ्गादिचूर्णम्	२० प्रकारके प्रमेह



घृत-प्रकरणम्.

५२३८	महादाडिमाद्यं-घृतम्	प्रमेह, मूत्राघात, पथरी (शुक्रवर्द्धक)
६७६२	बृहद्दाडिमाद्यं	प्रमेह, बस्तिशूल, अरुचि
६७६३	बृहद्धान्वन्तरं	प्रमेह, श्वास, उदर रोग



तैल-प्रकरणम्

५३२६	मेहमिहिर तैलम्	मूत्र रोग, हाथ पैरोंकी दाह, स्त्री समागम जनित क्षीणता।



आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३३२	मध्वासवः	प्रमेह

५३३३	मध्वासवः	कफ पित्तज प्रमेह, अरुचि
५९६९	रोध्रासवः	कफज तथा पित्तज प्रमेह
६२९८	लवङ्गासवः	दुर्जय प्रमेह, धातुक्षीणता

लेप-प्रकरणम्

५८१४	यष्ट्यादि लेपः	पित्तरक्तज प्रमेहकी दाह



रस-प्रकरणम्

५५२७	मस्कमृगाङ्कोरसः	मधुमेह
५५३०	महाकल्कनामक रसः	प्रमेह, श्वास, कास, (बल वीर्यवर्द्धक)
५५३८	महा कुष्माण्ड-पाकः	प्रमेह, शुक्रदोष, अग्निमांद्य, मलावरोध शिरपीड़ा (वाजीकरण)
५५८७	महासेतु रसः	प्रमेह
५५९४	माक्षिकादिचूर्णम्	शुक्रमेह
५६२९	मृगमाला रसः	प्रमेह
५६५५	मृत्युञ्जय ,,	प्रमेह, बहुमूत्र, नपुंस्कता (अत्यन्त कामोत्तेजक)
५६६६	मेघनाद ,,	प्रमेह
५६७३	मेहकेसरी ,,	पुरानामेह, मधुमेह,(शुक्र प्रवाहको ३ दिनमें नष्ट करता है ।)
५६७४	मेहद्विरदसिंहो	प्रमेह
५६७५	मेहनाशन ,,	समस्त प्रमेह
५६७६	मेह भैरवो ,,	समस्त प्रमेह, शुक्रक्षय, शोथ
५६७७	मेहमुद्गरो रसः	साध्यासाध्य समस्त प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र
५६७८	मेहाङ्कुश रसः	प्रमेह, अतिसार
५६७९	मेहानलो ,,	पुराना प्रमेह
५६८०	मेहारि ,,	समस्त ,,
५६८१	,, ,,	,, ,, पाण्डु, पित्तज रोग
५८३९	योगीश्वरो ,,	असाध्य प्रमेहको भी नष्ट कर देता है ।
५८४१	योगेश्वररसः	प्रमेह, बहुमूत्र, अश्मरी मूत्रकृच्छ्र
६०३३	रक्तसूतशेखररसः	प्रमेह, अग्निमांद्य, अरुचि, शिरोग्रह आदि
६०६०	रसचण्डांशु	समस्त प्रमेह
६१२७	रसेन्द्रनाग रसः	प्रमेह, प्रमेह पिडिका, वातव्याधि
६१३०	राजमृगाङ्क ,,	मेहनाशक, दीपन, वृष्य, रोचक
६१४४	राजावर्तावलेहः	प्रमेह, हृद्रोग, अर्श, वृषण पीड़ा, वीर्यविकार
६१४७	रामबाण रसः	समस्त प्रमेहोंको अवश्य नष्ट करता है ।
६१५३	रुजादलन वटी	प्रमेह, कफ, गुदवायु
६१६७	रौप्य रस वटी	पूतिमेह (सूजाक)में उत्तम है ।
६३७०	लोकनाथपोटली	प्रमेह (वीर्यवर्द्धक)
६३७९	लोकनाथ रसः	प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कास

६४३५	लोहादि चूर्णम्	समस्त प्रमेह
६८९२	वङ्गभस्मयोगः	,, ,,
६८९३	,, ,, ,,	,, ,,
६८९४	,, ,, ,,	,, ,,
६८९५	,, ,, ,,	प्रमेह, धातुक्षय, शुक्रनाश (पुत्रदाता)
६९०६	वङ्गयोगः	समस्त प्रमेह
६९०७	,, रसायनम्	समस्त प्रमेहोंको अवश्य नष्ट करता है।
६९११	वङ्गावलेहः	समस्त प्रमेह
६९१२	वङ्गाष्टकम्	प्रमेह, मूत्रातिसार, पित्त, सोमरोग
६९१३	वङ्गेश्वर रसः	शुक्रस्राव, ज्वर, वात व्याधि
६९१४	,, ,,	समस्त प्रमेह
६९१५	,, ,,	निर्बल कामी पुरुषोंके लिये उत्तम
६९१७	,, ,,	प्रमेह, अग्निमांद्य (वृष्य, वाजीकर)
६९१८	,, ,,	प्रमेह
६९२०	वङ्गेश्वर रसः	प्रमेह, सोमरोग, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी
६९२१	,, ,,	साध्यासाध्य प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, धातुस्थज्वर, बहुमूत्र
६९२२	,, ,,	रक्तमूत्र, उदकमेह, मूत्रातिसार, क्षय
६९४७	वडवानल रसः	प्रमेह, अग्निमांद्य, अर्श
६९६७	वसन्तकुसुमाकर रसः	प्रमेह, क्षय, कासादि (बलवीर्य कामवर्द्धक)
६९६८	वसन्तकुसुमाकर रसः	सोमरोग, मूत्रातिसार, तृषा, दाह, ज्वर, कृषता
६९७०	,, तिलकरसः	प्रमेह, वातव्याधि
६९८९	वातमेहान्तकरसः	वातज प्रमेहको ३ दिनमें नष्ट करता है।
७०४०	विडङ्गाद्य लौहम्	दारुण प्रमेह, मूत्रविकार
७०४८	विद्यावङ्गेश्वररसः	पित्तजप्रमेह
७०५०	विद्यावागीशरसः	असाध्य लालामेह
७११९	वेदविद्या वटी	समस्त प्रमेह
७१२०	,, ,, ,,	मधुमेह

(३४) बालरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०५३	मुस्तादि क्वाथः	बालकोंका अतिसार
५०५९	,, ,,	बच्चोंकी तृषा, दाह, ज्वर
५०७९	,, हिमः	बच्चोंकी दाह, वमन, ,,

चूर्ण-प्रकरणम्

५११४	मरिचादियोगः	शोथ
५१४५	मुस्तकादिचूर्णम्	खांसी
५१४७	मुस्तादि ,,	संग्रहणी

५१५४	मूर्वाद्युद्वर्तनम्	शरीरको पुष्ट तथा ग्रहोंको नष्ट करता है।
५१५५	,, ,,	ग्रहदोष
५७६४	यवान्यादिचूर्णम्	संग्रहणी
५९०४	रजन्यादि ,,	संग्रहणी, वातज पीड़ा, पाण्डु, ज्वरातिसार
६२२०	लवङ्गचतुःसमम्	आमातिसार, शूल
६२४०	लाजादि चूर्णम्	प्रवाहिकाको शीघ्र नष्ट करता है।
६२४२	लोध्रादि योगः	अतिसार
६२४३	,, ,,	ज्वरातिसार
६५८४	वचादि चूर्णम्	स्कन्दग्रह
६६१४	विडङ्गादि ,,	अतिसार
६६६१	व्योषाद्यं ,,	कास

अवलेह-प्रकरणम्

५२०१	मिश्यादि लेहः	वमन, खांसी,
५२०३	मूर्वाद्यवलेहः	स्तन्य विकार
५७८४	यवान्यादिलेहः	छर्दि, अतिसार, ज्वर
५७८५	यष्ट्यादिलेहः	ज्वर
५९३३	रक्तप्रवाहिकान्तकलेहः	रक्त प्रवाहिका
५९३४	रजन्यादिलेहः	अतिसार, ज्वर, श्वास, पाण्डु
६२६४	लोध्राद्यवलेहः	ज्वरातिसार
६७२३	व्याघ्र्याद्यवलेहः	पुरानी खांसी



घृत-प्रकरणम्

५७९७	यष्ट्याद्यं घृतम्	बाल शोष
५९४३	रास्नादि ,,	बल वर्ण वर्द्धक, ग्रहनाशक
५९४६	रास्नाद्यं ,,	पौष्टिक
५९५१	रोहिण्यादि ,,	,,
६२७३	लाक्षाद्यं ,,	विसर्प और गण्डमालामें अत्युपयोगी
६७२५	वचादि ,,	दन्तोद्भेदगदान्तक, दांत आसानीसे निकल आते हैं।

तैल-प्रकरणम्

६७७३	वचादि सूर्यपाक तैलम्	पौष्टिक, अनेक रोग नाशक
६७७४	वचाद्यं ,,	बालशोष
६८२७	व्याघ्री ,,	बालज्वर, कास, त्वग्विकार

लेप-प्रकरणम्

५४१६	मुस्तादि लेपः	बाल शोथ
६०००	रेचन योगः	रेचक

धूप-प्रकरणम्

५४२८	मर्कटपुरीषादिधूपः	स्कन्दापस्मार
५४३४	माहेश्वर धूपः	ग्रहदोष

अञ्जन-प्रकरणम्

५४४४	मनःशिलाद्यावर्तिः	समस्त नेत्र रोग
६०१९	रोध्राद्यञ्जनम्	,, ,, ,,

६८७७ विडङ्गाद्यञ्जनम् कुकूणक, पोथकी

६८८२ व्योषाद्यञ्जनम नेत्रकण्डू



रस-प्रकरणम्

५६६३ मृद्विरेचन रसः मृत्तिका विरेचन

मिश्र-प्रकरणम्

५७१५ मृत्पिण्डप्रयोगः नाभि शोथ

५७२० मोचरसादियवागू अतिसार

६१७७ रसाञ्जनादियोगः गुद पाक

७१५० वचाद्युत्सादनम् स्कन्दापस्मार

७१६८ वृद्धदारुकाश्च्योतनम् कुकूणक

(३५) भगन्दराधिकारः

तैल-प्रकरणम्

५८०४ यष्ट्यादि तैलम् भगन्दर, कुष्ठ, प्रमेह पिडिका

६८१३ विष्यन्दन ,, भगन्दरशोधक, रोपण, सवर्णकारक

लेप-प्रकरणम्

६८४२ वटपत्रादि लेपः अपक्वभगन्दर

रस-प्रकरणम्

६१५७ रूपराजरसः भगन्दरको शीघ्र नष्ट करता है ।

७००९ वारिताण्डवरसः भगन्दर

७०२६ विजया गुटिका भगन्दर, शोथ, कासादि



(३६) भग्नरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५८६१ रसोनादि कल्कः छिन्न भिन्न स्थान च्युत अस्थि

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६२५५ लाक्षा गुग्गुलुः अस्थिभङ्ग, सन्धिच्युत अस्थिकी पीड़ा

६६८७ वज्रवल्यादि गुग्गुलुः भग्न रोग, ग्रन्थि

(३७) मदात्याधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

५०९९ मधुत्रिफलागुडार्द्रक-योगः — मद, मूर्च्छा

घृत-प्रकरणम्

५२५८ माषघृतम् — सुरापानकी गन्धको तत्काल नष्ट करता है।



तैल-प्रकरणम्

५२७४ मथित तैलम — पानात्यय

रस-प्रकरणम्

५५३२ महाकल्याणवटी — वातज तथा कफपित्तज मदात्यय
६११७ रसामृतम् — मदात्यय
६१४२ राजावर्त रसः — समस्त प्रकारके मदात्यय
७०६७ विश्वेश्वरो रसः — कफपित्तज मदात्यय

मिश्र-प्रकरणम्

५६८८ मद्यमदप्रतीकारः — शराबका नशा नहीं चढ़ता

(३८) मलावरोधाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०८८ मृद्वीकादिक्वाथः — रेचक

चूर्ण-प्रकरणम्

५११८ मलशोधनचूर्णम् — मृदुरेचक
५१५६ मृदुविरेचनयोगः — सुखविरेचक

(३९) मुखरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६४६९ वचादि कषायः — गलशुण्डिका

चूर्ण-प्रकरणम्

५१३९ मुण्ड्यादिचूर्णम् — मुखकी दुर्गन्ध
५७४७ यवक्षार योगः — तालु पाक
६५७९ वचादि चूर्णम् — वाणीशोधक
६६५५ व्योषादि ,, — उपजिह्वा

गुटिका-प्रकरणम्

५१७० महा खदिर वटिका — गले, ओष्ठ, जिह्वा और तालुके रोग (दन्त-पौष्टिक)

५१८० मुण्डयादिगुटिका दन्तकृमि, दन्त शूल

५१८३ मुस्तादि वटी मुखकी तीव्र दुर्गन्ध



घृत-प्रकरणम्

५२५७ मालत्याद्यं घृतम् समस्त मुख रोग

६७३६ वर्णक „ चेहरेके रंगको निखारता और झुर्रियोंको नष्ट करता है।

तैल-प्रकरणम्

५२६८ मञ्जिष्ठादितैलम् नीलिका, मुंहासे, पिडिका, वलि, पलित (सौन्दर्यवर्द्धक)

५२६९ „ „ स्त्रियोंके कपोलोंको पुष्ट और कान्तिमान करता है।

५२७२ मञ्जिष्ठाद्यं „ मुंहके मस्सोंको नष्ट करता और कान्ति बढ़ाता है।

५२७३ „ „ मुखपिडिका, तिल, कालक, व्यंग, श्यामता

५२७९ मधुयष्ट्यादितैलम् कान्ति वर्द्धक

५२९७ महा पद्मकं „ चेहरेको निखारता और कोमल करता है।

५८०२ यष्ट्यादि „ मुखसे लार बहना,

६८३० व्योषाद्यं तैलम् उपजिह्वा

लेप-प्रकरणम्

५३७० मसूरादि लेपः सौन्दर्य वर्द्धक

५३७७ माजूफलादिलेपः तारुण्य पिडिका

५३८२ मातुलुङ्गादि „ „ „ व्यङ्ग, कालक (वर्ण्य)

५३९१ से ५४११ मुखकान्तिकरालेपाः सौन्दर्य वर्द्धक

५९७७ रक्षोघ्नादि लेपः अत्यन्त सौन्दर्य वर्द्धक

५९९५ रालादि लेपः होठोंका तोद, परुषता, रक्तस्राव

६३१४ लोध्रादि लेपः तारुण्य पिडिका

६८४१ वट पत्रादि „ सौन्दर्य वर्द्धक

६८४४ वटाङ्कुरादि „ व्यङ्ग

६८४६ वटादि „ तारुण्य पिडिका, व्यङ्ग नीलिका

६८४८ वरुणादि „ व्यङ्ग

रस-प्रकरणम्

५६११ मुखरोगहरोरसः भयङ्कर मुखपाक

५६१२ मुख रोगारि „ मुख रोग

६१२८ रसेन्द्र वटी मुख रोग, ज्वर, वात रोग

---

(४०) मूर्च्छाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०१६ महौषधादिक्काथः मद, मूर्च्छा

अवलेहप्रकरणम्

५२०५ मृणालाद्यवलेहः मूर्च्छा

रस-प्रकरणम्

५६२४ मूर्च्छान्तक रसः मूर्च्छा

५६२५ मूर्च्छाहर ,, मूर्च्छा, दाह

६०८२ रस योगः मूर्च्छा



(४१) मूत्रकृच्छ्र मूत्राघाताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५००३ मन्थादि योगः अभिघातज मूत्रकृच्छ्र (सरल योग)

५०८२ मूत्रविरेचनीयो द. म. क. मूत्र रेचक

५७२३ यवादि क्वाथः मूत्र कृच्छ्र, गुल्म

५७३७ यष्ट्यादि क्वाथः ,, ,, दाह, तृषा, मूत्रावरोध

५७४१ यूथीमूल योगः रक्तस्राव, उष्णवात, मूत्रकृच्छ्र, शूल युक्त मूत्राघात, शर्करा, अश्मरि

५८११ रक्तनारिकेल-जलयोगः मूत्रकृच्छ्र

६१९३ लघुपंचमूलयोगः ज्वरगत मूत्रकृच्छ्र

६५६० बृहद्वरुणादिकाथः मूत्रकृच्छ्र, बस्ति तथा मूत्रनलीकी पीड़ा

६५४५ वीरतर्वादिकाथः मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात, वायु

६५५७ बृहद्धात्र्यादि ,, ,, दाह, पीड़ा

चूर्ण-प्रकरणम्

५१४४ मुष्टि योगौ मूत्राघात, अश्मरी

५७४७ यवक्षार योगः मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी

५७४८ ,, ,, ,, ,,

५७४९ ,, ,, समस्त प्रकारके मूत्रकृच्छ्र (सरल योग)

अवलेह-प्रकरणम्

७११६ बृहद् गोक्षुराद्यवलेहः मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरि

घृत-प्रकरणम्

६७४९ विदारी घृतम् पैत्तिक मूत्राघात, छर्दि शर्करा

रस-प्रकरणम्

५६१९ मूत्रकृच्छ्र हरः पित्तज मूत्रकृच्छ्रको १ सप्ताहमें नष्ट करता है।

५६२०	मूत्रकृच्छ्रहरलौहम	मूत्रकृच्छ्रको अवश्य नष्ट करता है ।
५६२१	मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः	,, ,, ,,
५६२२	,, ,, ,,	,, ,, ,,
५६२३	,, ,, ,,	,, ,, ,,
६०७०	रस भस्म योगः	साध्यासाध्य हर प्रकार का मूत्रकृच्छ्र
६१०१	रससिन्दूरयोगः	मूत्राघात
६३८७	लोहचूर्णम्	३ मात्रामें मूत्रकृच्छ्रको नष्ट करता है ।
६९८३	वरुणाद्यलौहम्	मूत्राघात, दारुण मूत्रकृच्छ्र, अश्मरि, ज्वर (बलवर्द्धक)

(४२) मेदरोगाधिकारः

गुटिका-प्रकरणम्

५१८४	मेथी मोदकः	मेदमें अत्यन्त गुणकारी

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६६९४	व्योषादिगुग्गुलुः	मेद, कफ, आमवात

अवलेह-प्रकरणम्

६२६३	लौहरसायनम्	मेदनाशक, बलवर्द्धक

तैल-प्रकरणम्

५३०६	महासुगन्धतैलम्	स्वेद, शरीरकी दुर्गन्ध आदि

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

६२९९	लोहारिष्टः	स्थूलता, विषमज्वर, हृद्रोग

लेप-प्रकरणम्

५४२५	मोचरसादिलेपः	शरीरकी दुर्गन्ध
६८५५	वासादि ,,	शरीरकी ,,

रस-प्रकरणम्

५६२६	मूर्ति रसः	मेद, कफ, अग्निमांद्य
५६७२	मेदोहर रसः	प्रवृद्ध मेद
६०७१	रसभस्मयोगः	मेद जन्य स्थूलता
६९४२	वडवाग्नि रसः	स्थूलताको शीघ्र नष्ट करता है ।
६९४४	वडवाग्नि लौहम्	स्थूलता, शोथ, शूल
६९४९	वडवानलरसः	एक मासमें मेदको नष्ट कर देता है ।
७०३८	विडङ्गादिलौहम	स्थूलता

मिश्र-प्रकरणम्

५६९०	मधु योगः	अत्यन्त मेदनाशक

(४३) यकृत्प्लीहाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

५७४५ यवानिकादिचूर्णम् प्लीहा
६२१८ लघुहिङ्ग्वादि ,, ,, शूल
६२२८ लवणत्रिफलादि,, यकृत, प्लीहा, विष्टम्भ, अग्निमांद्य
६२३० लवणादियोगः यकृत्, प्लीहा, उदर रोग
६२३३ लशुन योगः प्लीहा
६६०७ विडङ्गादिचूर्णम् प्रवृद्ध प्लीहा

गुटिका-प्रकरणम्

५१७५ मानकादिगुटिका यकृत, प्लीहा, गुल्म, अर्श
५१७६ ,, ,, ,, ,, ज्वर, अरुचि

अवलेह-प्रकरणम्

५९३८ रोहितकावलेहः प्लीहा, यकृत

घृत-प्रकरणम्

५९५२ रोहितकघृतम् यकृच्छूल, प्लीहाशूल, अरुचि
५९५३ रोहितकंघृतम् अत्यन्त प्रवृद्ध प्लीहाको शीघ्र नष्ट करता है।



आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५९७० रोहितकोरिष्टः प्लीहा, गुल्म, पाण्डु
५९७१ रोहितकासवः ,,
५९७२ ,, ,, ज्वर, पाण्डु
५९७३ ,, ,, ,, अरुचि



रस-प्रकरणम्

५५५९ महामृत्युञ्जयरसः यकृत, प्लीहा, गुल्म
५५६१ ,, ,, लौहम् तिल्ली, उग्रज्वर, खांसी
५८२२ यकृत्प्लीहारिलौहम् प्लीहा, यकृत्, गुल्म
५८२३ ,, ,, ,, ,, पुराना यकृत्
६०८४ रस राजः ,, यकृच्छूल ज्वर
६१६० रोहीतक लौहम् ,, और अग्रमांसमें अत्युपयोगी
६३७४ लोकनाथरसः ,, यकृत्, वातष्ठीला
६३७८ ,, ,, ,, ,, गुल्म
६४२० लोहमृत्युञ्जय रसः प्लीहा, यकृत्, अन्त-विद्रधि
६९७५ वह्निकुमार रसः यकृत्, प्लीहा, उदररोग
७०१४ वासुकीभूषणोरसः प्लीहा, गुल्म



(४४) रक्तपित्ताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९९० मदयन्तिकामूल कषायः रक्तपित्त नाशक सरल योग
४९९६ मधूकादि कल्कः रक्तपित्त
५०३१ मातुलुङ्गादियोगः नासागत रक्तपित्त (सरल योग)
५०४१ मुद्गादि शीत-कषायः प्रबल रक्तपित्त
५०७० मुस्तादि क्वाथः अधोगत रक्तपित्त (वामक)
५०९० मेघनादादि क्वाथः रक्तपित्त
५७३८ यष्ट्यादि क्षीरम् ,, ,,
६५०४ वासकादि योगः रक्तपित्तको शीघ्र नष्ट करता है
६५०७ वासादि कषायः रक्तपित्त, कास, श्वास
६५११ ,, ,, प्रबल रक्तपित्त
६५१२ ,, ,, रक्तपित्त, क्षय, कास

चूर्ण-प्रकरणम्

५०९७ मधुकादि योगः रक्तपित्त
६२३७ लाक्षादि ,, क्षतज रक्तस्राव
६३३८ विष्णुक्रान्तायोगः उर्ध्व गत रक्तपित

गुटिका-प्रकरणम्

५१६१ मधुकाद्यागुटिका रक्तपित्त, छर्दि, मूर्च्छा, ज्वर, तृषा

अवलेह-प्रकरणम्

५२०२ मुस्ताद्यो लेहः हर प्रकारका रक्तपित्त
६६९७ वङ्गावलेहः मुखसे होनेवाला रक्त-स्राव
६७०५ वासाखण्डकुष्माण्ड रक्तपित्त, कास, क्षय
६७०७ वासावलेहः रक्तपित्त, क्षतक्षय, राजयक्ष्मा



घृत-प्रकरणम्.

५२३९ महादूर्वाद्यघृतम् नकसीर, रक्तवमन, अर्शका रक्त तथा अन्य हरप्रकारका रक्तस्राव
५२४८ महा वासाद्यं ,, भयंकर रक्तपित्त, खांसी, स्वरभेद
५२६० माहेश्वर ,, रक्तपित्त
६७४० वासाद्य ,, ,, क्षय, कास, प्रतिश्याय

नस्य-प्रकरणम्

६८८६ वासादि नस्यम् नासा प्रवृत्त त्रिदोषज रक्तपित्त

रस-प्रकरणम्

५६२८ मृगज रसः रक्तपित्त
६०२७ रक्तपित्तकुलकण्डन रसः रक्तपित्तमें अत्यन्त गुणकारी
६०२८ रक्तपित्तहररसः रक्तपित्त

६०२९	रक्तपित्तान्तक लौहम्	रक्तपित्त
६०३०	रक्तपित्तान्तको रसः	भयंकर रक्तपित्तको भी शीघ्र नष्ट करता है ।
६११८	रसामृत रसः	रक्तपित्त, ज्वर, अम्लपित्त
७०१३	वासा सूत रसः	रक्तपित्त

मिश्र-प्रकरणम्

५७१९	मोचरस सिद्ध क्षीरम्	गुद प्रवृत्त रक्तस्राव
५८४७	यवादि मन्थ	रक्तपित्त, दाह, तृषा
६१७०	रक्तपित्ते कतिपययोगाः	कुछ सरल योग

(४५) रसायनवाजीकरणाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

४९८५	मण्डूकपर्ण्यादि-रसायनम्	रसायन

चूर्ण-प्रकरणम्

५०९२	मदनप्रकाशचूर्णम्	बल वीर्य वर्द्धक, प्रमेह नाशक, अत्यन्त कामोत्तेजक
५०९३	मधुक ,,	अत्यन्त कामवर्द्धक
५१३२	माष ,,	बल, वीर्यवर्द्धक, बलि पलित नाशक
५१३३	माषचूर्णयोगः	अत्यन्त कामवर्द्धक
५१३४	माषपर्ण्यादिचूर्णम्	,, ,, ,,
५१४२	मुषल्यादि ,,	काम वर्द्धक
५७६६	यष्टिमधुकयोगः	अत्यन्त कामोत्तेजक
५९०८	रसायन चूर्णम्	,, बल वर्द्धक,
६५८७	वचा रसायनम्	मेधा वर्द्धक वाणी शोधक
६६००	वाराहीकन्दचूर्णम्	वीर्य वर्द्धक
६६०१	,, ,, योगः	वृद्धभी युवाके समान हो जाता है ।
६६२०	विडंगादियोगः	जरा, व्याधि (सौन्दर्य वर्द्धक)
६६२३	विदार्यादिचूर्णम्	वीर्य वर्द्धक
६६२४	,, योगः	वृद्धको भी तरुणके समान स्त्री समागममें समर्थ बना देता है ।
६६२५	,, ,,	,,
६६३६	विश्वाद्यं चूर्णम्	बुद्धि वर्द्धक
६६३९	वृद्धदारुक-रसायनः	मति, स्मृति, बुद्धि वर्द्धक
६६४२	वृषादि चूर्णम्	वीर्य वर्द्धक
६६४६	बृहद्वाराहीकन्द-चूर्णम्	क्लीबता, प्रमेह, (स्तम्भक)

गुटिका-प्रकरणम्

५१६०	मदनवर्द्धनो मोदकः	काम शक्ति वर्द्धक

५१७१	महामदनमोदकः	काम वर्द्धक
५१७२	महारतिवल्लभो मोदकः	शुक्र दोष, दारुण नपुंसकतो
५१७८	माषादिमोदकः	कामाग्नि रक्षक
५७७४	यवादि वटकः	कामशक्ति वीर्य वर्द्धक
५९२५	रतिवल्लभमोदकः	कष्ट साध्य नपुंसकता, शुक्रदोष
५९२८	राज योगः	वीर्यकी कमी, नपुंसकता, प्रमेह, वायु
६६६७	वल्लभा गुटिका	नपुंसकता (उत्तम वाजीकरण)
६६६८	वाजीकरण ,,	नपुंसकता (बलवीर्य वर्द्धक, उत्तेजक)
६६६९	वानरी गुटिका	अत्युत्तम वाजीकरण
६६७५	वीर्यस्तम्भकरी वटिका	स्तम्भक
६६७६	वीर्यस्तम्भक वटिका	अत्यन्तस्तम्भक, वाजीकरण
६६७७	,, वटी	स्तम्भक, बल वर्ण तथा अग्नि वर्द्धक
६६७९	वृष्य गुटिका	अत्यन्त काम वर्द्धक
६६८१	वृंहणी गुटिका	अत्यन्त वृष्य, वाजीकरण

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६२५६	लोह गुग्गुलुः	रसायन

अवलेह-प्रकरणम्

५१९३	मधु हरीतकी	रसायन, अनेक रोग नाशक
५२०६	मलाई पाकः	वाजीकरण, वीर्यवर्द्धक
५२०७	मुशली पाकः	धातु क्षय, अग्निमांद्य, प्रमेह, नपुंस्कता (अत्यन्त कामोत्तेजक)
६७०१	वाजीकरो लेहः	कामोत्तेजक
६७०२	,, ,, ,,	अत्यन्त कामोत्तेजक
६७०३	,, ,, ,,	आधा पहर पश्चात् कामको उद्दीप्त कर देता है ।
६७०४	,, ,, ,,	लिंगकी शक्ति बढ़ती है और वीर्य क्षय नहीं होता ।
६७०९	वसिष्ठहरीतक्यवलेहः	अनेक रोग नाशक (काया कल्प)
६७१०	विजया योगः	समस्त रोग नाशक, यौवन और आयुवर्द्धक।
६७१३	विडङ्गाद्यवलेहः	रसायन
६७१७	वृष्य योगः	बल वीर्य वर्द्धक, कामोत्तेजक
६७३०	वृहत् भल्लातक लेहः	बालोंको काला, दृष्टिको तीव्र और वीर्य तथा आयुकी वृद्धि करताहै ।

घृत-प्रकरणम्

५२५९	माषादि घृतम्	लिंग शक्ति और वीर्यवर्द्धक
६२६५	लघुअश्वगंधाद्यं घृतम्	बल्य, पौष्टिक
६७२६	वचादि घृ०	मेधा, स्मृति, अग्नि और वाणी वर्द्धक ।

६७४७ विजया घृ० अत्यन्त वाजीकरण, वृष्य, स्तम्भक

तैल-प्रकरणम्

५३०७ महासुगन्धितैलम कामोत्तेजक, कपुंस्कता नाशक

५९५४ रतिवल्लभाख्य ,, पुरानी नपुंस्कताको भी नष्ट करता है। अत्यधिक काम वर्द्धक।

५९५८ राज ,, नपुंस्कता

आसवारिष्ट-प्रकरणम्

५३३६ महा द्राक्षासवः अत्यन्त कामोत्तेजक, वीर्य वर्द्धक

५३४१ मृतसंजीवनीसुरा अत्यन्त वाजीकरण, स्वास्थ्य रक्षक, वीर्य, स्मृति तथा अग्निवर्द्धक

५९६७ रसायनारिष्टः रसायन, पौष्टिक, बल्य, बलिपालत नाशक

लेप-प्रकरणम्

५३५५ मनःशिलादिलेपः स्त्री द्रावक

५३६२ मरिचादि लेपः लिंगवर्द्धक, स्तनपौष्टिक

५३७३ महाराष्ट्र्यादि स्त्री द्रावक

६८४० वज्रवल्ली लेपः लिंगको अत्यन्त स्थूल करता है।

रस-प्रकरणम्

५४६६ मकरध्वजो रसः वाजीकरण

५४६७ ,, रसायनः सर्व रोग नाशक

५४८७ मदन कामदेवो रसः रज तथा वीर्यको नष्ट और वीर्यकी वृद्धि करता है। कामोत्तेजक

५४८८ मदनकामदेवो रसः बल, सौन्दर्य, तेज और अत्यन्त कामवर्द्धक

५४८९ ,, ,, ,,

५४९० मदन कामो रसः बल, वीर्य तथा कामवर्द्धक

५४९१ मदनकामेश्वर ,, जब तक नीबूका रस न पिया जाय स्तम्भन रहता है।

५४९२ मदनमञ्जरी गुटिका अत्यन्त कामवर्द्धक

५४९३ मदनमुन्मद रसः ,, ,, ,,

५४९४ मदनसन्दीपन-चूर्णम् अत्यन्त कामोत्तेजक, स्त्री दोषसे उत्पन्न हुई क्लीवता नाशक; वीर्यहीन, प्रमेही और व्याधि पीड़ित तथा वृद्धोंकेलिये अत्युपयोगी

५४९५ मदनसुन्दररसः अत्यन्त कामोत्तेजक

५४९६ ,, ,, ,, वृष्य

५४९८ मदनानन्दमोदकम् अत्यन्त काम, वीर्य और अग्निवर्द्धक

५४९९ मदनोदय रसः अत्यन्त वीर्य वर्द्धक

५५०५ मधुयष्ट्यादि चूर्णम् वीर्य वर्द्धक, नपुंस्कता नाशक

५५२०	मन्मथाभ्र रसः	अत्यन्त बलकारक, अत्यन्त वाजीकरण, बलवर्द्धक, दुष्ट प्रयोग जनित नपुंस्कतानाशक
५५२४	मल्ल चन्द्रोदयः	वीर्य वर्द्धक
५५२९	महाकनकसुन्दर रसः	बलिपलित नाशक, आयु वर्द्धक, इन्द्रिय-विकासकारक, अत्यन्त कामोत्तेजक ।
५५३१	महाकल्प रसः	त्वचा, बाल, दांत आदि गिरकर नवीन निकल आते हैं ।
५५३३	महा कामेश्वरः	कामवर्द्धक
५५३४	महाकामेश्वरो मोदकः	अत्यन्त कामवर्द्धक, अग्निवर्द्धक तथा क्षय और प्रमेह नाशक, बुद्धि वर्द्धक
५५५४	महाबलविधानाभ्रकम्	बल वीर्य तथा बुद्धि-वर्द्धक, सब रोगनाशक
५५६७	महाराज वटी	नपुंस्कता, बलि, पलित (अत्यन्त कामवर्द्धक)
५५६९	महा लक्ष्मी विलास रसः	शुक्रक्षय, लिंगशैथिल्य, (अत्यन्त कामोत्तेजक, दृष्टिवर्द्धक)
५५८८	महेश्वर रसः	अत्यन्त वीर्यवर्द्धक, कामोत्तेजक, उत्साहवर्द्धक
५६०१	मानसोल्लास चू०	वृष्य, अग्निदीपक, कामोत्तेजक
५६०२	मानिनीमानमर्दन रसः	कामोत्तेजक, स्तम्भक, स्त्री द्रावक
५६१४	मुशली पाकः	अत्यन्त वाजीकर, बल वीर्य, पौरुष वर्द्धक
५६४०	मृतकन्दर्पजीवन रसः	अत्यधिक कामोत्तेजक
५६५९	मृत्युंजय रसः	अत्यन्त कामोत्तेजक, बल्य, पौष्टिक
५६६०	,, ,,	समस्त रोग नाशक
५६६१	,, ,,	,, ,, ,,
५६७०	मेथी पाकः	अत्यन्त कामवर्द्धक
६०३१	रक्त रसः	बल्य, अत्यन्त वाजीकरण, रसायन
६०३८	रतिकाम रसः	अत्यन्त वाजीकरण
६०३९	रतिवल्लभपूगपाकः	अत्यन्त वीर्य वर्द्धक, अग्नि बल वर्द्धक;
६०४०	रतिवल्लभोमोदकः	अत्यन्त ओज, बल, वीर्य और दृष्टि वर्द्धक, वाजीकरण
६०६९	रस पोटली	बलकारक
६०८१	रस माणिक्यम्	वाजीकरण, बलवर्द्धक, अग्निवर्द्धक
६०९१	रसवीरमहारसः	जरानाशक, आयुवर्द्धक
६१११	रसाभ्रकम्	अत्यन्त अग्निवर्द्धक. वृद्धावस्थाके कारण उत्पन्न पलित रोगको नष्ट करता है ।
६११३	रसाभ्र गुटिका	रसायन, अनेक रोग नाशक
६१२५	रसेन्द्रचूडामणि	अत्यन्त काम वर्द्धक,

	रसः	स्तम्भक
६३३१	लक्ष्मणा लौहम्	वृष्य, वाजीकरण, कृपता नाशक. जिनके कन्या ही कन्या होती हों उन्हे पुत्र प्राप्त होता है।
६३३३	लक्ष्मी विलासः	वृद्धोंको युवाके समान करता है, अत्यन्त कामोत्तेजक
६३३६	लक्ष्मीविलास रसः	अत्यन्त वाजीकरण, वीर्यवर्द्धक, नपुंस्कता तथा बहु मूत्र नाशक
६३३८	लघुकामेश्वर गुटिका	बल वीर्य कामवर्द्धक
६३३९	„ „ मोदकः	वीर्यवर्द्धक, स्तम्भक, स्त्री द्रावक
६३४१	„ चन्द्रोदयरसः	अत्यन्त वाजीकरण, बल वीर्य अग्निवर्द्धक
६३६८	लीलाविलास „	अत्यन्त वाजीकरण, पौष्टिक, नपुंस्कता तथा बहु मूत्र नाशक
६३७५	लोकनाथ रसः	अत्यन्त पौष्टिक; अत्यन्त कामोत्तेजक, उत्साह, सौन्दर्य तथा स्वर वर्द्धक ।
६३९७	लोहभस्मयोगः	जराव्याधि नाशक, गरविषके प्रभावको रोकने वाली।
६४२१	लोह योगः	रसायन
६४२२	लोह रसायनम्	रसायन (समस्त शक्तियोंको बढ़ाता है)
६४२३	„ „	रसायन
६४३८	लोहादि योगः	वीर्य स्तम्भक
६४४०	लोहाद्यो रसायनः	रसायन
६९१९	वंगेश्वर रसः	लिंग शैथिल्य, रक्त-मूत्र, मधुमेह
६९२३	वङ्गेश्वरादि वटी	स्तम्भक, बल वीर्य वर्द्धक, स्त्री द्रावक
६९३२	वज्र पञ्जर रसः	वलि पलित नाशक, बल आयु वर्द्धक
६९३८	वज्रेश्वर रसः	शरीरको दृढ करता है।
६९३९	„ „	१ दिन खानेसे १२ वर्ष तक स्वास्थ्य ठीक रहता है।
६९४१	वटेश्वर रसः	शरीरको दृढ करता है।
६९६९	वसन्ततिलक „	बल वीर्यवर्द्धक अनेक रोग नाशक
६९७८	वाजीकरोवटकः	अत्यन्त काम वर्द्धक
७०३२	विडंगादिचूर्णम्	वृद्धको तरुणके समान करता है।
७०३४	„ योगः	जरा तथा पलित नाशक
७०६०	विलासिनो वल्लभ रसः	स्तम्भक, मानिनी मान भञ्जक

कल्प-प्रकरणम्

६८९१	वृद्धदारुककल्पः	अत्यन्त बल, रूप और आयुवर्द्धक

मिश्र-प्रकरणम्

५७०३	माष पायसः	अत्यन्त वाजीकरण
५७०४	माषादि योगः	,, ,,
५७०८	मुशल्यादि ,,	,, ,,
६१७२	रक्तापामार्गयोग	स्तम्भक
६१७९	रसाला	अति स्वादिष्ट, रोचक, कामोत्तेजक
७१५५	वाजीकरो वटकः	अत्यन्त कामोत्तेजक
७१६२	विजया शुद्धिः	

(४६) वातव्याध्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५००५	मरिचादिकषायः	वात व्याधि नाशक सरल योग
५०११	महानिम्ब योगः	असाध्य गृध्रसी (सरल योग)
५०३३	माष बलादि ,,	पक्षाघात, मन्यास्तम्भ, अर्दित, कर्ण पीड़ा
५०३४	माषादि क्वाथः	पक्षाघात
५०८४	मूर्वादि ,,	उरुस्तम्भ
५८५६	रसोन कल्कः	सर्वाङ्ग एकाङ्ग वात, अर्दित, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी इत्यादि
५८६०	रसोन सप्तकम्	अपतन्त्रक, गृध्रसी, कटि पृष्ठ शूल, वातोदर
५८७९	रास्नादि क्वाथः	पक्षाघात, कुब्जता, हनुग्रह, गात्र शुष्कता, मूकता, गद्गदता इत्यादि.
५८८३	,, ,,	पक्षाघात, जानुशूल, गृध्रसी.
५८८४	रास्नादि क्वाथः (महा)	सर्वांग कम्प, श्लीपद, मेदवायु, अन्त्रवृद्धि
५८८५	,, ,, (,,)	प्रस्वेत, शीत, अंगव्यथा कम्प, सुप्ति, जिह्वास्तम्भ
५८८७	,, ,,	सन्धि अस्थि मज्जागत वायु, मन्यास्तम्भ, वातरक्तादि
६२०१	लशुन योगः	वात व्याधि
६२०३	लशुनादि क्वाथः	वात कफ
६४६५	वचादि कषायः	ऊरुस्तम्भ
६४९८	वरुणादि स्वेदः	वात व्याधि
६५४३	विश्वादिद्वादशाङ्ग क्वाथः	मांस सन्धि मज्जा स्नायु और सर्वाङ्ग गत वायु
६५६१	बृहन्निम्बादियोगः	असाध्य गृध्रसी

चूर्ण-प्रकरणम्

५९०१	रक्त चन्दनादि चूर्णम्	सर्वांगगत वायु
५९०९	रसोन पञ्चकः	वातव्याधि
५९१५	रास्नादिचूर्णम्	समस्त वातज रोग

५९१७	रास्नाद्यं ,,	त्वक, अस्थि, स्नायु और सन्धिगत वायुको शीघ्र नष्ट करता है
६६४०	वृद्धदार्वादि ,,	ऊरुस्तम्भकी पीड़ा

गुग्गुलु-प्रकरणम्

५७८०	योगराजगुग्गुलुः (महा)	समस्त वातज रोग, अर्श, अपस्मारादि
५७८१	योगराजगुग्गुलुः (महा)	समस्त वातज रोग
५९३१	रास्नादि ,,	गृध्रसी
५९३२	,, ,,	वातव्याधि, शिरोरोग, कर्णरोग, नाड़ीव्रण
६६९१	विश्वादि ,,	विभ्रम वायु
६६९२	,, ,,	कम्पवायु, गृध्रसी, शूल

पाक-प्रकरणम्

५९३५	रसोन पाकः	बहिरायाम, अन्तरायाम, अपस्मार, अपतन्त्रक, आनाह
५९३६	,, ,,	आढ्यवात, हनुग्रह, आक्षेप, सन्धिभग्न, कटि-स्तम्भ इत्यादि.



घृत-प्रकरणम्

५२६२	मुण्डयादिघृतम्	वात व्याधि
५९४१	रास्नादि ,,	समस्त वातज रोग
५९४७	रास्नाद्यं ,,	,, ,, ,,
५९४८	,, ,,	कष्ट साध्य वातव्याधि और शुक्रक्षय
६७५४	विन्दुसाराद्यं ,,	कटिस्तम्भ, दारुणयोनि शूल, बस्तिगत वायु आदि



तैल-प्रकरणम्

५२९१	महाकल्याणक तैलम्	धनुस्तम्भ, अर्दित, कम्प, कुब्जता
५३००	महा बला ,,	आमवात, गृध्रसी, आ-ढ्यवात
५३०१	महा बलाद्यं ,,	अर्दित, भग्न, आमवात, पक्ष संकोच, शरीरका सूखना, मन्यास्तम्भादि
५३०४	महा माष ,,	अर्दित, हनुग्रह, अप-बाहुक, गृध्रसी, मन्या-स्तम्भादि, व्यायाम ज-नित सन्धि शैथिल्य.
५३०५	,, ,, ,,	पक्षाघात, अपतन्त्रक, अर्दित, अपबाहुक, वि-श्वाची आदि
५३०८	महा सुगन्धि लक्ष्मीविलास तैलं	वातव्याधमें शीघ्र प्र-भावशाली, पुष्टिकान्ति मेधा, बुद्धिवर्द्धक
५३१२	माष ,,	पक्षाघात
५३१३	,, ,,	,, अर्दित, भयंकर कर्णशूल, ऊर्ध्व जत्रुगत समस्त रोग
५३१४	,, ,, (बृहद्)	अर्दित, मन्यास्तम्भ, पक्षाघात, गृध्रसी, क-र्णशूल
५३१५	माष ,,	अंगसंकोच

५३२०	मूलकाद्यं तैलम्	अत्यन्त प्रबल वातव्याधि
५३२१	,, ,,	गृध्रसी, कम्प, कटिस्तम्भ, पंगुता
५९५६	रसोन ,,	वातज रोगोंको शीघ्र नष्ट करता है।
५९५९	राल ,,	पक्षाघात
५९६०	रास्ना ,,	वातव्याधि, शिरोग्रह, अपस्मार,
५९६१	रास्नादि ,,	वातव्याधि, श्वास, कास, मूत्रावरोध
५९६२	रास्नापूतिक ,,	धनुर्वात, अन्तरायाम, गृध्रसी, अक्षिस्तम्भ, जिह्वास्तम्भ, पादहर्ष
६२७९	लघुनारायण ,,	वातव्याधि,
६२८०	लघु माष ,,	बाहुकी पीड़ा
६२८१	,, माषादि ,,	वात व्याधि
६७८४	वाजिगंधादि ,,	गृध्रसी
६७८५	वातकुलान्तक ,,	भंग, खंज, पंगुता आदि
६७८६	वातारि ,,	कुब्जता, आक्षेपक, पंगुता, सुप्तिवात, पक्षाघात आदि
६७८७	वातारि तैलम् (महा)	अंगोंका कम्पन, गृध्रसी आदि
६७८८	वायुच्छायासुरेन्द्र तैलम्	आक्षेपक, चित्तविकृति, मर्मगत वायु, अपस्मार
६८०१	विषगर्भ ,,	पक्ष, जंघा, उरु और संधिगत वायु, सर्वांगग्रह, शून्यता
६८०२	,, ,,	सन्धियोंका सूजन, ध्रसी शिरोवायु, कम्पादि
६८०३	त्रिषगर्भ तैलम्	सन्धिवात, त्रिकग्रह, कटिग्रह,
६८०६	,, ,,	समस्त वातज रोग
६८०७	,, ,,	पक्षाघात, हनुस्तम्भ, शिरो कम्पादि
६८१०	विष्णु ,,	अनेक वातज रोग
६८११	विष्णु ,,	मनुष्यों और पशुओंके समस्त वातज रोग, नपुंस्कता अर्द्धावभेदक (गर्भस्थापक)
६८१२	,, ,,	ऊर्ध्व वात, उंगलीग्रह, अंग सूखना, लड़खड़ाती चाल
६८१७	वृषमूलादि ,,	वात भंग

नस्य-प्रकरणम्

५४५७	मरिचादि नस्यम	अपतन्त्रककी बेहोशी



रस-प्रकरणम्

५५२५	मल्लपञ्चरत्नरसः	समस्त वातज तथा वातकफज रोग,
५५७२	महावह्नि रसः	मूढ वात
५५७५	,, वातगजांकुश	वातकफज रोग
५६०५	मार्तण्डेश्वर	वातादि अष्ट महा रोग, क्षय, कास
५६३४	मृगाङ्क	समस्त वातज रोग, हिक्का
५६४७	मृत सञ्जीवनो	वातव्याधि, उरुस्तम्भ, आमवात

५८४०	योगेन्द्र	अपस्मार, इन्द्रियनाश, मूर्च्छा
६०८६	रसराजः	अर्दित, उद्गार, शिर चकराना, अधिक पसीना आना, हाथ पैरोंका ठंडा रहना
६१०३	रसादि गुटिका	पक्षाघातको शीघ्र नष्ट करता है
६१०५	,, गुटी	स्पर्शवात
६९५१	वडवानल रसः	धनुर्वात, दण्डापतानक, कम्प
६९७४	वह्निकुमार रसः	वातरोग, अग्निमांद्य, कास, कफ
६९८०	वातकण्टक रसः	वातव्याधि, सन्निपात
६९८२	वातगजाङ्कुश ,	साध्यासाध्य समस्त वातज रोग, (त्रिदोषज गृध्रसीको ७ दिनमें नष्ट करता है ।)
६९८३	,, ,, ,,	समस्त वातज रोग
६९८४	वातगजेन्द्रसिंहः	अभिघात, व्याधि अथवा अधिक स्त्री प्रसंगसे उत्पन्न अंगोंकी क्षीणता
६९८५	वातचिन्तामणिरसः	वातज रोग, पित्तजरोग, (सिद्धप्रयोग)
६९८७	वातनाशिनीवटी	दण्डापतानक, पक्षाघात, गृध्रसी
६९८८	वातपित्तारिरसः	वातपित्तज रोग
६९९२	वातराक्षसरसः	कम्पवात, सुप्तिवात, धनुर्वात, गात्रभंग
६९९३	वातराक्षसरसः	पक्षाघात, कटिस्तम्भ, आक्षेपक
६९९४	वातराज वटी	वातव्याधि आदि अनेक रोग
६९९५	,, ,,	दाह, अनिद्रा, उरुस्तम्भ
६९९६	वातविध्वंसनरसः	मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, गात्रशुष्कता, जिह्वास्तम्भ
६९९७	,, ,, ,,	वात व्याधि, सूतिकारोग, कफ
६९९८	,, ,, ,,	सर्वांग व्यथा, अपस्मार
६९९९	,, ,, ,,	वायु, शीत, कफ, अग्निमांद्य
७०००	,, ,, ,,	मन्यास्तम्भ, मलावरोध, अफारा
७००१	,, ,, ,,	समस्त वातव्याधि, गुल्म, जठर पीड़ा
७००२	वातारि रसः	समस्त वातज रोग
७००३	,, ,,	,, ,, ,,
७००४	,, ,,	वात कफज रोग, प्रमेह
७००६	,, ,,	वात व्याधि
७०९५	वृकोदरीवटी	वात कफज रोग, आमविकार
७०९६	वृद्धचिन्तामणिरसः	शरीरकी शून्यता, अति निद्रा, रोमहर्ष, अपतन्त्रक
७१४२	व्याधिगजकेसरी रसः	वातपित्तज रोग, ज्वर

मिश्र प्रकरणम्

५७०० महाशाल्वणयोगः वातज पीड़ा नाशक प्रसिद्ध स्वेद

५८५० यवान्यादि पेया कमर, हृदय, पार्श्व और कोष्ठकी पीड़ा

६१८० रसोन वटकः हनुस्तम्भ

६८४९ वल्मीकमृत्तिकाद्युद्वर्तनम् घोर उरुस्तम्भको भी अवश्य नष्ट करता है।

६८५२ वातनाशक लेपः वातज पीड़ा

(४७) विद्रधि.

कषाय–प्रकरणम्

६४९३ वरुणादिकषायः प्रवृद्ध अपक्व अन्तर्विद्रधि

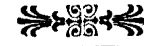
६५०१ वर्षाभ्वादिकाथः अन्तर्विद्रधि

घृत–प्रकरणम्

६७३४ वरुणादि घृतम् दुस्साध्य अन्तर्विद्रधि

लेप–प्रकरणम्

५८०९ यवादि लेपः अपक्व विद्रधि



रस–प्रकरणम्

६०५६ रसगन्धकयोगः अन्तर्विद्रधि, बाह्यविद्रधि

मिश्र–प्रकरणम्

५१३० मानक मूलादि योगः कष्ट साध्य अन्तर्विद्रधि

(४८) विरेचनाधिकारः

चूर्ण–प्रकरणम्

६६५८ व्योषादि चूर्णम् विरेचक

गुटिका–प्रकरणम्

५९३० रेचनी वटी आमनाशक

६१३५ राजवल्लभ गुटिका नाभि पर लेप करने तथा सूंघनेसे विरेचन होता है।)

घृत–प्रकरणम्

५२४६ महावज्रकघृतम् तीव्र रेचक

६७५० विन्दु घृतम् ,, ,,

६७५१ ,, ,, तीव्र रेचक (नाभिपर लेप करनेसे भी रेचन होता है।

६७५२ ,, ,, तीव्र रेचक

६७५३ ,, ,, ,, ,,



रस-प्रकरणम्

५५२२ मलभेदी रसः विरेचक
६१५२ रुक्मिश रसः कष्ट रहित रेचन, विशेषतः आमवात नाशक
७०५४ विनोदविद्याधर उत्तम रेचक
७०५८ विरेकी रसः विरेचक
७०५९ विरेचनी गुटिका कृमि, ज्वर, (रचक)
७११३ बृहदिच्छाभेदीरसः तीव्र रेचक
७१३१ वैद्यनाथ वटी उदर रोग, गुल्म, पाण्डु, कृमि, कुष्ट.



(४९) विषरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०१८ मातुल फल योगः पागल कुत्तेका विष



चूर्ण-प्रकरणम्

५११३ मरिचादि चूर्णम् सर्प विष (सरल योग)
५१५० मुस्तादि योगः दारुण कृत्रिम विष
६२३१ लवणादि ,, हर प्रकारका ,,
६५९० वटशुंगादि ,, मण्डल सर्पका ,,
६६२८ विशालादि ,, दुस्तर मूषक ,,

घृत-प्रकरणम्

५२६६ मृत्यु पाशच्छेदी घृतम् मूषक, सर्प, मकड़ी इत्यादिका विष, मूर्च्छा

लेप-प्रकरणम्

५३४३ मञ्जिष्ठादि लेपः मकड़ीका विष
५३५४ मनशिलादिगुटिका बिच्छूका विष
५३६७ मरिचोदि लेपः मक्षिका दंश
५३६८ ,, ,, बरटी (भिर्र) का विष
५९७८ रजन्यादि ,, मकड़ीके विषको शीघ्र नष्ट करता है
५९८५ रसादि लेप चूहेका विष
६३१० लाङ्गल्यादि ,, विषैले कीटोंके काटनेसे उत्पन्न विस्फोटक
६३१२ लूताविषहरोलेप मकड़ी आदिका विष
६८६३ वृश्चिकदंश ,, ,, बिच्छूका विष

अञ्जन-प्रकरणम्

५३६० मनःशिलादिवर्तिः बिच्छूका विष
६८७४ वचाद्यञ्जनम् गरविष
६८७९ विषहरी वर्तिः सर्पविष
६८८५ वन्ध्या कर्कोटकी-मूल योगः सर्प विषकी मूर्च्छा

नस्य-प्रकरणम्

६३२९ लाङ्गल्यादि न० सर्प विष

रस-प्रकरणम्

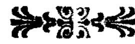
५५६२ महा मृत्युञ्जया गुटिका सर्प विष, अजीर्ण
६०८२ रस योगः चूहेका विष
७०८१ विषवज्रपातोरसः स्थावर और जंगम विष

७०८२ विषवज्रपातोरसः भयंकरसे भयंकर विष

मिश्र-प्रकरणम्

५६८४ मञ्जिष्ठाद्योऽगदः विष
५६९५ महाऽगदः सर्पादिका भयंकर विष (अत्यन्त प्रभावशाली)
५६९६ महा गन्ध हस्ती-नामागदः विषनाशक विचित्रयोग
५७१६ मृतसञ्जीवनोऽगदः ,, ,, ,, ,,
६४४६ लज्जालुमूलयोगः सर्प विषका प्रभाव नहीं होने देता

(५०) विसर्प.



कषाय-प्रकरणम्

४९८८ मदनकफलादि योगः विसर्पनाशक (वामक)
५०६५ मुस्तादि क्वाथः हर प्रकारका विसर्प
६१९४ लघुपंच मूलादि-काथः पित्त विसर्प

चूर्ण-प्रकरणम्

५९११ रामठादि योगः विसर्प

अवलेह-प्रकरणम्

५१८७ मञ्जिष्ठाभयायोगः विसर्प, रक्तविकार, खाज



तैल-प्रकरणम्

६८१४ विसर्प नाशन तैलम् विसर्प और श्वेत कुष्ठको अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है।
६८१५ विसर्प हर तैलम् विसर्पादि

लेप-प्रकरणम्

५३७१ मसूरादि लेपः विसर्प
५३८७ मांस्यादि ,, अग्नि विसर्प
५३८९ ,, ,, विसर्प
५४२४ मृणालादि ,, पित्तज विसर्प
५९९८ रास्नादि ,, वातज ,,

रस-प्रकरणम्

७०८८ विसर्पजित्रसः विसर्प

(५१) वृद्ध्यधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५८६८ रास्नादि क्काथः अन्त्रवृद्धि
५८६९ ,, ,, वृद्धि रोग
६४९५ वरुणादि ,, वातज अन्त्र वृद्धि

चूर्ण-प्रकरणम्

५१४० मुण्ड्यादि चूर्णम् अन्त्र वृद्धि
६६२९ विशालादि योगः १ सप्ताहमें अन्त्र वृद्धिको नष्ट करदेता है।



घृत-प्रकरणम्

५२६१	मांस्यादि घृतम्	अन्त्रवृद्धि, वातवृद्धि, मेदो वृद्धि, मूत्र वृद्धि, पित्तवृद्धि
६७६१	बृहद्दन्ती घृतम्	अन्त्र वृद्धि, वृषण वृद्धि अन्त्ररोध, दारुण अन्त्र दाह

तैल-प्रकरणम्

६८२६	बृहन्मदार तैलम्	अन्त्र वृद्धि, (बल शुक्र-वर्द्धक)

लेप-प्रकरणम्

५८१०	यवादि लेपः	अण्डवृद्धि
६३०४	लाक्षादि ,,	अन्त्रवृद्धि, शोथ

रस-प्रकरणम्

५५९०	महोदधि रसः	अन्त्रावरोध, अन्त्रवृद्धि आदि
७००५	वातारि रसः	अन्त्रवृद्धि
७१००	वृद्धिनाशनरसः	,, ,,
७१०१	वृद्धिबाधिकावटी	असाध्य अन्त्रवृद्धि भी शीघ्र नष्ट हो जाती है।



(५२) व्रणाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

६४६४	वंशत्वगादिक्वाथः	कोष्ठस्थ रक्तस्रावक

गुटिका-प्रकरणम्

६६७३	विडङ्गादिवटिका	व्रणमें उपयोगी

गुग्गुलु-प्रकरणम्

६६९०	विडङ्गादिवटिका-गुग्गुलः	दुष्टव्रण, अपची नाडी-व्रण

घृत-प्रकरणम्

५२१२	मञ्जिष्ठाद्यं घृतम्	अग्निदग्ध व्रण
५३५३	मधुच्छिष्टाद्यं ,,	,, ,,
५३७२	महागौर्याद्यं घृ०	शिरोव्रण, आगन्तुक-व्रण, विषमनाड़ीव्रण आदि
५७९५	यष्टयादिघृतम्	ताज़े घावको अत्यन्त शीघ्र भर देता है।
६२७५	लाङ्गली ,,	अग्निदग्ध व्रण, कीटदंश जनित व्रण, मर्माश्रित-व्रण, पुराना दुष्ट नाड़ी-व्रण



तैल-प्रकरणम्

५२९२	महाकषायतैलम्	पुराने घावको शीघ्र भर देता है।

५३२४	मेषरोममषी तै०	पुरानेसे पुराना नाड़ीव्रण
६२८२	लज्जालुमूल ,,	पाक रहित शस्त्राघातको शीघ्र भर देता है।
६२९२	लिकुचादितैलम्	व्रणशोधक, रोपण
६७९९	विपरीतमल्ल ,,	शस्त्राघात, फोड़े, उप-दंश, नाड़ीव्रण, विच-र्चिका
६८३२	व्रणराक्षस ,,	नाड़ीव्रण, खुजली, वि-स्फोटक, व्रण
६८३३	,, ,, ,,	समस्त व्रण, पामा, कण्डू, विचर्चिका

लेप-प्रकरणम्

५३५९	मनःशिलादिलेपः	सवर्णकारक
५३८३	मातुलुङ्गादिलेपः	वातज व्रणशोथ
५८०७	यवभस्मादिलेपः	अग्निदग्ध व्रणको शीघ्र नष्ट करता है।
५८०८	यवादि लेपः	व्रणको फोड़ता है।
५८१२	,, ,,	व्रणकी दाह, पीड़ा
५८१३	यष्ट्यादिलेपः	रोपण
५९८०	रसाञ्जनादिकल्कः	नाड़ीव्रण
६३०२	लशुनादि लेपः	व्रणके कृमि
६३०७	लाङ्गलीकन्दलेपः	नष्टशल्यको निकालता है
६८५१	वसुकादि लेपः	दुष्ट व्रण
६८६६	व्रणहरो लेपः	नाड़ीव्रण, दुष्टव्रण (शोधन, रोपण)
६८६७	,, ,,	व्रणनाशक
६८६८	,, ,,	समस्त प्रकारके व्रण

धूप-प्रकरणम्

५४२७	मनःशिलादिधूपः	दुर्गन्धित पीपयुक्त व्रण, भगंदर
५८१८	यवादि धूपः	वातजव्रणकी तीव्र वेदना और स्राव

रस-प्रकरणम्

६०३४	रक्तारि रसः	व्रण, नाड़ीव्रण, अभिघातसे होनेवाला रक्तस्राव
७१४६	व्रणरोपणरसः	व्रण, गण्डमाला, भगन्दर
७१४७	,, हर ,,	समस्त प्रकारके व्रण

मिश्र-प्रकरणम्

६४५३	लालादि योगः	नवीन व्रण, कुष्ठ



(५३) शिरोरोगाधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५०३६	मुण्डितिकायोगः	अर्द्धावभेदक, सूर्यावर्त
५८६४	रास्नादशमूलक्काथः	,, शिरशूल, ज्वरादि

घृत-प्रकरणम्

५७९३	यष्ट्यादिघृतम्	पित्तज शिरोरोग
६२७४	लाक्षारसादि ,,	भ्रूशूल, शंखशूल, सूर्यावर्त

तैल-प्रकरणम्

५२७१	मञ्जिष्ठाद्यंतैलम्	पलित और इन्द्रलुप्तमें अत्युपयोगी, बालोंको गिरनेसे रोकता तथा दीर्घ और घुंघराले करता है; शिरशूल तथा नेत्रशूल नाशक ।
५२७६	मधुकादि तैलम्	केश वर्द्धक
५२८७	मरिचाद्यं ,,	दारुणक रोग
५२९०	महा कनक ,,	वातकफज शिरो रोग
५२९५	,, नील ,,	समस्त शिरोरोग नाशक, नेत्र हितकारी ।
५२९६	,, ,, ,,	खिजाब (केशरंजक)
५३१०	मार्कव ,,	पलित
५३११	मालत्यादि ,,	इन्द्रलुप्त, दारुणक रोग
५३१६	मांसी ,,	अरुंषिका
५८०१	यष्टिमधु ,,	केश वर्द्धक
५९६४	रुद्र ,,	उर्ध्व जत्रुगत रोगोंको ३ दिनमें नष्ट करता है।
६२९५	लोहकिट्टाद्यं ,,	दारुणक
६७९५	विडङ्गादि ,,	शिरोगत कृमि
६८२५	वृहदभृंगराज तैलम्	अकाल पलित, इन्द्रलुप्त, (बालोंको दीर्घ, घने और काले करता है)

लेप-प्रकरणम्

५३४८	मदनादि लेपः	केश वर्द्धक
५३६१	मरिचादिगुटिका	शिर पीड़ा
५३६३	,, लेपः	,, ,,
५३६५	,, ,,	इन्द्र लुप्त
५३७५	माकन्दबीजादिलेपः	अत्यन्त केश वर्द्धक
५३७६	माजूफलादि ,,	केशरंजक (खिज़ाब)
५३८५	माषमस्यादि ,,	इन्द्रलुप्त, पलित
५३८८	मांस्यादि ,,	केशवर्द्धक
५३९०	,, ,,	बालोंकोगिरनेसे रोकता और लम्बे, काले तथा घुंघराले करता है ।
५४२२	मृणालादि ,,	शिर पीड़ा
५४२३	,, ,,	,, ,,
५८१५	यष्ट्यादि ,,	इन्द्रलुप्त (केशपौष्टिक)
५९७४	रक्तचन्दनादि ,,	शिरपीड़ा
६३०३	लाक्षादि ,,	दारुणक
६३२०	लोहादि योगः	सफेद बालोंको जड़से काले करता है ।

नस्य-प्रकरणम्

५४५४	मधुकादिनस्यम्	वात पित्तज शिर शूल
५४५६	मनःशिलादि ,,	अर्धावभेद
५४६२	महौषधादि ,,	सूर्यावर्त, अर्धावभेदक
६८८८	विडंगादि ,,	अर्धावभेदक
६८८९	विश्वादि ,,	शिरोरोग, भुजास्तम्भ

रस-प्रकरणम्

५५७०	महालक्ष्मीविलास रसः	वात कफज शिरो रोग
५६०६	मिहिरोदयवटी	अर्द्धावभेदक, अनन्तवात, सूर्यावर्त, शंखक
६०६१	रसचन्द्रिकावटी	शिरोरोग, पीनस,

मिश्र-प्रकरणम्

६४६३	लोहादि योगः	पलित

(५४) शीतपित्ताधिकारः

कषाय-प्रकरणम्

५७३१ यष्टयादि क्काथः शीतपित्त

रस-प्रकरणम्

५८३१ यवान्यादियोगः शीतपित्त

(५५) शूल

कषाय-प्रकरणम्

५०२२	मातुलुङ्गरसादि योगः	पसली और हृदयका शूल, अपान वायुका रुकना, मलावरोध
५०२४	,, ,, ,, ,,	पसली हृदय और बस्तिका शूल (सरल योग)
५०२५	,, ,, ,, ,,	कफजशूल, यकृत्क्षय जन्यशूल
५८५७	रसोनयोगः	वातकफजशूल, (अग्निदीपक)
६५२९	विदार्यादियोगः	त्रिदोषज शूल
६५३३	विश्वादिकषायः	शीघ्र शूलनाशक
६५३४	,, ,,	शूल
६५४२	,, ,,	हृदय, पार्श्व, आमाशय और पक्वाशयका शूल
६५६८	व्याघ्र्यादि ,,	हृदय, कुक्षि और पसलीका कफज शूल



चूर्ण-प्रकरणम्

५१०७	मन्दारमूलिकाद्यं	वातज शूल
५१४८	मुस्तादि चूर्णम्	कफजशूल, आम
५७४६	यमान्यादि ,,	वातजशूल
५७५३	यवक्षारादि ,,	शूल, गुल्म, अग्निमांद्य
५७५९	यवान्यादि ,,	शूल
५९१९	रुचकादि ,,	पार्श्वशूल, विसूचिका
६२२९	लवण योगः	कफजशूल,
६५७७	वचादि चूर्णम्	समस्त प्रकारके शूल
६६३४	विश्वादि ,,	,, ,, ,,

गुटिका-प्रकरणम्

६६७२	विडंगादिमोदकः	त्रिदोषज परिणामशूल
६६७४	विश्वादिवटी	शूल, अग्निमांद्य, वायु

अवलेह-प्रकरणम्

६२५९ लशुनयोगः आमशूल

लेप-प्रकरणम्

५३४४	मदनफलादिलेपः	शूल
५३४६	मदनादि ,,	,,
५८०६	यवपिष्टलेपः	दुस्तर उदर शूलको भी

		नष्ट करता है।
५९८६	रसादि लेपः	समस्त प्रकारके शूल, उदर शूल
५९९१	रसोनादिलेपः	वातज शूल
५९९३	राजिकादिलेपः	,, ,,

नस्य-प्रकरणम्

५४५९	मरिचादिनस्यम्	शूल



रस-प्रकरणम्

५४७९	मण्डूर योगः	त्रिदोषज शूल
५४८१	,, ,,	परिणाम शूलको अवश्य नष्ट करता है।
५४८४	,, वटिका	पक्तिशूल
५५५१	महात्रिपुरभैरव	परिणाम शूल
५५८१	महेश्वर रसः	शूल, अग्निमांद्य, पाण्डु
५६५१	मृतोत्थापनरसः	हृदयशूल, पार्श्वशूल, शिरशूल
६०७९	रसमण्डूरम्	शूल, अम्लपित्त
६३४३	लघुशंखभस्म	शूल
६३८५	लोहगुटिका	परिणाम शूल
६३८९	लोहत्रिफलायोगः	समस्त प्रकारके शूल
६३९९	लोहभस्म योगः	पक्तिशूल
६४४२	लोहामृतम्	,, ,,
६४४४	लोहाभयाचूर्णम्	शूल
६९२४	वचादि वटी	शूल, वायु, अग्निमांद्य
७०४६	विद्याधराभ्रम	परिणामशूल, अन्नद्रवशूल, पुराना अग्निमांद्य
७०४७	,, ,,	परिणामशूल, आमशूल, कृशता, आलस्य, अरुचि
७०६३	विश्वरूप रसः	अन्नद्रव शूल, प्रबल मलावरोध, वायु
७११२	बहत्त्रिफलाद्यं लौहम्	समस्त शूल, अग्निमांद्य
७१३४	वैश्वानर योगः	त्रिदोषज शूल
७१४०	,, लौहम्	हर प्रकारका साध्यासाध्य शूल

मिश्र प्रकरणम्

५८४५	यवशक्तुयोगः	पुराना परिणाम शूल
७१६४	विदार्यादियोगः	त्रिदोषज शूलको तुरन्त नष्ट करता है।



(५६) शोथ

कषाय-प्रकरणम्

६५२४	विडंगादिक्वाथः	शोथातिसार
६५३१	विशालादिक्वाथः	पित्तजशोथ

चूर्ण-प्रकरणम्

६६१७	विडङ्गादिचूर्णम्	शोथ
६६१८	,, ,,	शोथातिसार



घृत-प्रकरणम्

५२५३ माणक घृतम् शोथ

तैल-प्रकरणम्

५७९९ यवादि तैलम् वातज शोथ

आसवारिष्ट--प्रकरणम्

६८३५ वासकासवः समस्तशोथ

लेप-प्रकरणम्

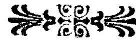
५८१७ यष्ठ्यादि लेपः भिलावेकी सूजन
६८३९ वचादि योगः शोथ
६८६५ वेतसाद्यो लेपः पित्तजशोथ

रस-प्रकरणम्

५४७१ मण्डूरचूर्णम् असाध्य शोथ
६११४ रसाभ्रमण्डूरम् सर्व दोषज एकांग सर्वांग शोथ, श्वास, कास, तृषा, छर्दि, ज्वर
७०३१ विडङ्गादिचूर्णम् शोथ
७१३० वैद्यनाथ वटी ,,
७१४५ व्योषादियोगः कफज शोथ

मिश्र-प्रकरणम्

६१८८ रास्नाद्युद्वर्तनम् शोथ
७१५४ वर्षाभ्वादिक्षीरम् ,,



(५७) श्लीपदाधिकारः

चूर्ण-प्रकरणम्

५९०३ रजन्यादिचूर्णम् पुराना श्लीपद
६२१५ लघुवृद्धदारुकसमं चूर्णम् श्लीपद, वातरोग
६६४७ वृहद्वृद्धदारुकसमं चूर्णम् श्लीपद, स्थूलता

तैल-प्रकरणम्

६७९४ विडङ्गादितैलम् श्लीपद

घृत-प्रकरणम्

६७५७ वृद्धदारुकघृतम् श्लीपद आमवात
६७५८ वृद्धदारुकाद्यं ,, श्लीपद, शोथ, आमवात

लेप-प्रकरणम्

५३४२ मञ्जिष्ठादिलेपः पित्तज श्लीपद



(५८) स्त्रीरोगाधिकारः

कषायप्रकरणम्

४९८९ मदयन्तिकादि योनि दृढीकरण
४९९७ मधूकादिकषायः गर्भिणीका ज्वर

५००४	मयूरशिखामूल योगः	गर्भस्थापक (सरल योग)
५०१९	मातुलुङ्गबीजयोगः	„ „
५०३७	मुद्गयूष योगः	सर्व सूतिका रोग
५०७४	मुस्तादि गणः	योनिशोधक, स्तन्य-शोधक, कफनाशक
५०८५	मूषिककर्णीयोगः	वन्ध्यत्व
५७४२	योनिशूलहरो योगः	योनिशल, योनि दाह
५७४३	योनिसङ्कोचक क्वाथः	योनिको वालिकाकी योनिके समान दृढ़ करता है।
५७४४	„ „ योगः	योनिसङ्कोचक
५८५२	रक्तशालि पिष्ट योगः	रक्त प्रदरके वेगवान रक्तको रोकता है।
५८९६	रोध्रादिगणः	योनिदोष, कफ, मेद
५८९९	रोहित्कादि कल्कः	३ दिनमें प्रदरको नष्ट करता है।
६१९२	लक्ष्मणामूलयोगः	वन्ध्यत्व
६१९८	लज्जालुयोगः	गर्भपात निवारक
६१९९	लज्जावत्यादियोगः	„ „ „
६४७५	वज्रकांजिकम्	मक्कल शूल नाशक, स्तन्य वर्द्धक, अग्नि-दीपक
६५४६	वृषादि क्वाथः	अनेकविध प्रदर

चूर्ण-प्रकरणम्

५०९५	मधुकादिचूर्णम्	कफज प्रदर
५१२७	मातुलुङ्गमूलादि योगः	गर्भस्थापक
५१२८	मातुलुङ्गादिचू०	सुखप्रसव कारक
५१३१	मालती योगः	प्रसूताकी उदरवृद्धि
५१३६	माषादि चूर्णम्	सोमरोग
५१४१	मुद्गपुष्पादियोगः	योनिसंकोचक, जल-स्रावशोषक
५१५८	मेथिकाद्यचूर्णम	गर्भावरोधनाशक
५७५०	यवक्षार योगः	मक्कल शूल
५७६९	यष्ट्यादिचूर्णम्	स्तनका व्रण
५७७०	„ „	गर्भिणीकी वमन, प्रसव पीड़ा
५९०६	रसाञ्जनादियोगः	रक्त प्रदर
५९०७	„ „	„ „
५९२०	रेणुकादि योगः	वन्ध्यत्व
६५७५	वचादि चूर्णम्	योनिशूल
६५९६	वनकार्पासयोगः	स्तन्यवर्द्धक

गुटिका-प्रकरणम्

५१६८	मलयूफलमोदकम्	प्रदर
५९२३	रक्तबोलादिगुटिका	मक्कलशूल, प्रसूताका, अत्यधिक रक्तस्राव
५९२४	रजःप्रवर्तिनीवटी	नष्टार्तव, कष्टार्तव, पीडितार्तव

घृत-प्रकरणम्

५२०९	मञ्जिष्ठादिघृतम्	योनिशूल, गर्भिणीके लिये हितकारी
५२३०	महाकल्याणकं घृतम	वन्ध्यत्व, गर्भसम्बन्धी समस्त विकार, कन्या ही कन्याएं अथवा मृत

		या अल्पायु सन्तान उत्पन्न होना आदि
५२५४	मातुलुङ्गमूल-घृतम्	वन्ध्यत्व
५२६३	मुद्गादिघृतम्	रक्तप्रदर
५७८८	यवादि घृतम्	सूतिका रोग
६७५९	वृद्धदारुकघृतम	पुत्रदाता, वृष्य
६७६०	वृहत्कल्याणघृतम्	नं. ५२३० के समान

तैल--प्रकरणम्

५३१८	मुण्डी तैलम्	स्तनोंको कठोर करता है
५३२२	मृणालादितैलम्	योनिकी शिथिलता, पिच्छिलता, दुर्गन्ध
६२९४	लोमनाशकतैलम्	बालोंको निकलनेसे रोकता है ।
६७७२	वचादि तैलम्	स्तनवर्द्धक

आसवारिष्ट--प्रकरणम्

६२९६	लक्ष्मणारिष्टः	वन्ध्यत्वादि



लेप--प्रकरणम्

५३५१	मधुकादि लेपः	रक्त प्रदर
५३७४	माकन्दफलादि लेपः	अत्यन्त यानिसंकोचक
५३८०	मातुलुङ्गादिलेपः	मक्कलशूलकी शिरपीड़ा
५३८४	मायाफलादिलेपः	योनिको दृढ और बलि रहित करता है
६३०९	लाङ्गल्यादिलेपः	सुखप्रसवकारक
६३१७	लोमनाशनयोगः	योनिके लोम नष्ट करता है
६३१८	,,	,,
६३१९	,,	,,
६८६०	विशालादिलेपः	स्तन पीड़ा
६८६४	वृषमूलादियोगः	सुख प्रसवकारक

नस्य--प्रकरणम्

५४६४	मुण्डीतैलनस्य	स्तनोंको दृढ करती है
६३२७	लक्ष्मणामूल-नस्यम्	पुत्रदाता

रस--प्रकरणम्

५५०२	मधुकाद्यवलेहः	वेदना युक्त अनेक प्रकारका भयंकर प्रदर, योनिशूल, दाह, रक्त स्राव
५५५७	महाभ्रवटी	सूतिका रोग
५५५८	,,	सूतिका रोग, कृशता, स्थूलता आदि
५५७९	महाशार्दूलरसः	गर्भिणीके ज्वर, दाह, छर्दि आदि अनेक रोग
६०३५	रक्तोदर कुठार	जलोदर, [तीव्र रेचक]
६०४३	रत्नप्रभावटिका	समस्त स्त्री रोग
६०४४	रत्नभागोत्तररसः	वन्ध्यत्व के लिये अत्युत्तम, गर्भिणी रोग नाशक, कामवर्द्धक

६०९२	रसशार्दूलरसः	सूतिका रोग, शोथ
६०९३	,,	सूतिका रोग
६३३०	लक्ष्मणा लौहम्	समस्त स्त्री रोग
६३३२	लक्ष्मीनारायण रसः	सूतिकारोग, शूल
६३४९	लवङ्गादिचूर्णम्	गर्भिणीकी संग्रहणी, अनेक प्रकारका अतिसार, शूल, शोथ
६९४०	वटशुङ्गादियोगः	पुत्रदाता
७१०४	बृहज्जीरकादि मोदकः	सूतिका रोग, प्रदर; निर्बल तथा सन्तान हीन स्त्रियोंको विशेष उपयोगी

मिश्र-प्रकरणम्

५६९१	मधुयोगः	गर्भिणी के रक्तस्रावको ३ दिनमें बन्द करता है।
५७१३	मूलिकादिधारण	योनि शूल, रजोरोध
५७१४	मूषकपुरीषयोगः	प्रदर
५८४८	यवादि यूषः	सूतिका रोग
६१७५	रम्भाफलयोगः	सोम रोगमें अत्युपयोगी
६१७६	,, ,,	,, ,,
६१८३	रोस्नादि पयः	योनिशूल
६१८४	,, ,,	,,
६४६२	लोमनाशनयोगः	योनि के लोम समूल नष्ट करता है।
७१५३	वरुणपत्रोद्वर्तनम्	किक्किस

(५९) स्नायुक रोगाधिकारः

चूर्ण--प्रकरणम्

५७७२	योगराजः	स्नायुकको सात दिनमें अवश्य नष्ट कर देता है

लेप- प्रकरणम्

६८५४	वार्ताकमूलादिलेपः	स्नायुकको शीघ्र नष्ट करता है।

मिश्र-प्रकरणम्

७१६९	वृन्ताक योगः	स्नायुकको सात दिनमें बाहर निकाल देता है।

(६०) हृदयरोगाधिकारः

चूर्ण--प्रकरणम्

६६१५	विडंगादिचूर्णम्	कृमिजन्य हृद्रोग, (कृमि निम्न मार्गसे निकल जाते हैं।)

रस--प्रकरणम्

७०७०	विश्वेश्वररसः	हृद्रोग, फुफ्फुस रोग

पारिशिष्ट (१)

(६१) मिश्राधिकारः



५१२४	महा सरस्वती चूर्णम्	अत्यन्त स्मृति वर्द्धक
६६८३	मृणालकल्पः	बल वीर्यवर्द्धक, पलित रोग नहीं होने देता, रोगोंसे रक्षा करता है।
५६९३	मरिचशोधनम्	
५७५२	यवक्षारादियोगः	परदेशका पानी नहीं लगता
५८३४	यशदविकारशमनोपायः	
६००१	राजवल्लभधूपः	सुगन्धित धूप
६००७	रसराजः	बहु संख्यक रोग
६०९०	रसविकारशमनोपायः	रस सेवन जन्य विकार
६०९५	रस सार रसः	,,
६१८५	रास्नादिवस्तिः	अनेक रोग
६९०८	बंगविकारशमनोपायः	अशुद्ध बंगभस्म जनित विकार
६९६४	वमनकारकरसः	वामक
६९६५	,, ,,	,,
७०८६	विषादि गुटिका	वृद्धों के लिये अत्युपयोगी वृद्धावस्था के समस्त रोगनाशक।

परिशिष्ट (२)

(६२) धातु तथा विषोपविष

शोधन मारण



५४७२	मण्डूर मारणविधिः
५४७३	,,
५४७४	,,
५४७५	,,
५४७६	,,
५५११	मनःशिलाशोधनम्
५५१२	,,
५५१३	,,
५५१४	,,
५५१५	,,

इत्योऽम्



भारत भैषज्य रत्नाकरके लिए

वैद्य सम्मेलनके सभापति, आयुर्वैदिक कालेजों के प्रिन्सिपल तथा वैद्यक पत्रों और विद्वानों की आई हुई सम्मतियों में से कुछ

निखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन इलाहाबाद और मैसूर के सभापति, अष्टांग आयुर्वेद विद्यालय कलकत्ता के भूतपूर्व प्रिन्सिपल और भारतके अग्रगण्य **वैद्यराज**

महामहोपाध्याय कविराज गणनाथ सेन सरस्वती M. A., L. M. S.

"भारत भैषज्य--रत्नाकर, एक अमूल्य संग्रह है। इसका रचनाशैली बड़ी ही उत्तम है। मैं हरेक वैद्यसे इसे खरीदनेके लिए सुफारिश करता हूं। यह ग्रन्थ तैयार करने में बहुत परिश्रम किया गया है।

निखिल भारतवर्षीय पञ्चदश वैद्य सम्मेलन हरिद्वारके अध्यक्ष; हिन्दु युनिवर्सिटी बनारसके आयुर्वैदिक कालेजके भूतपूर्व आचार्य, भारतके प्रख्यात वैद्यराज

श्रीयुक्त पं. यादवजी त्रीकमजी आचार्य, बम्बई से लिखते हैं

भारत भैषज्य रत्नाकरमें प्रयोगोंका अकारादि क्रमसे उत्तमरूपेण संग्रह किया गया है। संस्कृत पाठके साथ सरल हिन्दी भाषामें टीका भी दी गई है। इस एक ही ग्रन्थको पास रखनेसे शास्त्रीय प्रयोगोंको देखनेके लिए अन्य ग्रन्थकी आवश्यकता नहीं रहती।

भारतके स्वनामधन्य अद्वितीय चिकित्सक छठे वैद्य सम्मेलन के अधिपति

श्रीयुक्त पं. लक्ष्मीरामजी स्वामी आचार्य आयुर्वेद मारतण्ड, जयपुर स्टेट--

नवीन शैलीसे सुन्दररूपेण संगृहीत, जिसे पहिले कभी न देखा हो ऐसा ग्रन्थरत्न "भारत भैषज्य रत्नाकर" का सूक्ष्मावलोकन करनेसे प्रतीत होता है कि चिकित्सकों के लिए उपयोगी इस ग्रन्थको संग्रहीत करके कर्त्ताने सचमुच वैद्य--जगतको उपकृत किया है। भिन्न भिन्न ग्रन्थोंमें पाठभेद होनेके कारण प्रयोगों में जो विभेद देखा जाता था वह इसके द्वारा दूर हो गया है। मेरी दृष्टिमें इस ग्रन्थ के संग्रहकार अत्यन्त प्रशंसा के पात्र हैं।

अखिल भारतबर्षीय वैद्य सम्मेलन फतेहपुरके अध्यक्ष; महाराष्ट्रके अग्रगण्य **वैद्यराज**

श्रीयुक्त कृष्णशास्त्री देवधर प्राणाचार्य, नासिकसे लिखते हैं—

"भारत भैषज्य रत्नाकर" अपूर्व ग्रन्थ है और समस्त वैद्यों के लिये उपयोगी है यह एक ही ग्रन्थ पास रखनेसे चिकित्साकार्य में अनेकों ग्रन्थों का काम देता है। समस्त वैद्यों और वैद्य-विद्यार्थीयों के लिये यह एक पास रखने योग्य पुस्तक है।

निखिल भारतवर्षीय वैद्य संम्मेलन करांची के सभापति

पञ्जाब प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के प्रधान और पटियाला स्टेट के राजवैद्य

श्रीमान् पं. रामप्रसादजी वैद्यरत्न, पटियाला--

पुस्तकका संग्रहक्रम बहुत अच्छा है। विद्वानो के अतिरिक्त सुन्दर भाषा टीका होने के कारण सर्व साधारण के लिए हितकारी हैं। चिकित्सकों के लिए यह पुस्तक विशेष रूपसे संग्रह करने योग्य है।

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठके भूतपूर्व सेक्रेटरी. ओनररी फिजिशीयन प्रीन्स वेल्स हास्पिटल कानपुर, **श्रीयुक्त डा. प्रसादीलाल झा. L. M. S., आयुर्वेदनिधि, भिषग्रत्न**

भारत भैषज्य रत्नाकर अत्यन्त ही उपयोगी ग्रन्थ है। इसके तैयार करने में बहुत ही परिश्रम और व्यय किया गया प्रतीत होता हे। इसमें बहुसंख्यक पुस्तको के प्रयोगों का संग्रह होने के कारण यह वैद्यों, डाक्टरों, आयुर्वेद विद्यापीठ आयुर्वेदिक कालेजों के विद्यार्थीयों, म्युनिस्पेलिटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डो के औषधालयों, आयुर्वेदिक फार्मसीओं और केमिस्टों के लिए बड़ा ही उपयोगी है। मैं सबसे इस ग्रन्थके खरीदनेके लिए हृदयसे प्रेरणा करता हूँ। ग्रन्थ मुझे स्थायी रूपसे उपयोगी सिद्ध हुवा है।

हिन्दु युनिवर्सिटी बनारसकी आयुर्वेदिक रसायनशालाके सुपारण्टेन्डेन्ट; यू. पी. गवर्नमेन्ट के बोर्ड आफ मेडिसिनके मेम्बर कविराज **श्री प्रतापसिंहजी** भिषग्मणि, लिखते हैं—

यह लिखते अत्यन्त हर्ष होता है कि रसवैद्य नगीनदास छगनलाल शाह (उंझा) गुजरात वाले आयुर्वेदकी अत्यन्त सेवा कर रहे हैं। इनकी रसशाला तथा मासिक पत्र तो काम कर ही रहे थे, किन्तु अब आपने यह भारत भैषज्य रत्नाकर नामक ग्रन्थ सम्पादन कर परम उपयोगी कार्य किया है। ऐसे ग्रंथ के प्रकाशन और प्रचार की वैद्यसमाजमें बहुत आवश्यक्ता थी वह इसके सम्पूर्ण होनेसे पूरी हो जायगी, पुस्तक बहुत उपयोगी और उपादेय है। आशा है वैद्यसमाज इसे अपनाकर संपादकका उत्साहवर्धन करेगा।

ग्वालियर स्टेट आयुर्वेद विद्यालय, श्री–१०८ कालीकमली वाले के आयुर्वेद विद्यालय, ललित हरि आ. वैं. कालेज पीलीभीत, जगन्नाथ पुरी संस्कृत महाविद्यालय, गुरूकुल विश्वविद्यालय कागड़ी श्रीमद् दयानन्द आयुर्वेदिक कालेज लाहौर, बडोदरा स्टेट की आयुर्वेदिक कालेज, पाटण **आदि कालेजों के प्रिन्सिपलोंने मुक्त कंठसे प्रशंसा की है।**

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामण्डल की मुखपत्रिका

वैद्य सम्मेलन पत्रिका–

आयुर्वेद क्षेत्र में कार्य करनेवाले वैद्य को इस पुस्तक को अवश्य रखना चाहिये, क्यों कि इस एक ही ग्रन्थ में प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध सभी ग्रन्थों के प्रयोग प्रत्येक रोग पर लिखे हुए हैं अतएव जिन वैद्योंको चिकित्सा काम में अधिक लिप्त रहना पड़ता है उनका अन्य ग्रन्थों में विभिन्न औषधियों के अन्वेषणा से बच कर केवल इसी से अनायास सब कार्य चल सकता है।

इसके सिवाय, वैद्य, अनुभूत योगमाला, आरोग्य रत्न, चिकित्सक, आंध्र मेडीकल जनरल, कल्पद्रुम, वैद्य कल्पतरू आदि वैद्यक पत्रोने मुक्त कंठसे प्रशंसा की है—

पता–ऊंझा फार्मसी, अहमदाबाद, Ahmedabad.




Serving JinShasan
045708